Yoga Vasishtha, Book 6 — Nirvāṇa I

Liberation, part one. Sanskrit with English and Hindi.

From yogavasishtha.com — edition of 28 September 2026. The Sanskrit is in the public domain. The English and Hindi translations were made with a language model and have not been reviewed by a Sanskrit scholar: read them as a study aid, not as an authority. Each verse gives the Sanskrit in Devanagari and IAST, then the English, then the Hindi.

Chapter 1

6.1.1

श्रीवाल्मीकिरुवाच । उपशमप्रकरणादनन्तरमिदं शृणु । त्वं निर्वाणप्रकरणं ज्ञातं निर्वाणदायि यत् ॥ १ ॥

śrīvālmīkiruvāca | upaśamaprakaraṇādanantaramidaṃ śṛṇu | tvaṃ nirvāṇaprakaraṇaṃ jñātaṃ nirvāṇadāyi yat || 1 ||

Sri Valmiki said: Listen now to this, which follows directly after the Book of Peace. This is the Book of Liberation, and it grants liberation to the one who knows it.

श्री वाल्मीकि ने कहा: अब यह सुनो, जो शांति-प्रकरण के ठीक बाद आता है। यह मुक्ति का प्रकरण है, और इसे जान लेने से मुक्ति मिल जाती है।

6.1.2

कथयत्येवमुद्दामवचने मुनिनायके । श्रवणैकरसे मौनस्थिते राजकुमारके ॥ २ ॥

kathayatyevamuddāmavacane munināyake | śravaṇaikarase maunasthite rājakumārake || 2 ||

As the great sage went on speaking like this, his words flowing freely, the young prince sat in silence, giving himself wholly to listening.

जब महान ऋषि इस तरह बोलते चले जा रहे थे, उनके शब्द खुलकर बह रहे थे, तब युवा राजकुमार चुपचाप बैठा था, पूरी तरह सुनने में डूबा हुआ।

6.1.3

मुनिवागर्थनिक्षिप्तमनस्यस्ततपःक्रिये । राजलोके गतस्पन्दे चित्रार्पित इव स्थिते ॥ ३ ॥

munivāgarthanikṣiptamanasyastatapḥkriye | rājaloke gataspande citrārpite iva sthite || 3 ||

And all the people gathered in the king's court, their minds fixed on the meaning of the sage's words, had stopped every other activity; they sat motionless, still as a painted picture.

और राजसभा में बैठे सभी लोग, अपना मन मुनि के शब्दों के अर्थ पर टिकाए हुए, हर दूसरा काम छोड़ चुके थे; वे बिना हिले-डुले, मानो किसी चित्र में बने हों, वैसे बैठे थे।

6.1.4

वसिष्ठवचसामर्थं विचारयति सादरम् । लसदङ्गुलिभङ्गेन मुनिसार्थे स्फुरद्भुवि ॥ ४ ॥

vasiṣṭhavacasāmarthaṃ vicārayati sādaram | lasadaṅgulibhaṅgena munisārthe sphuradbhuv || 4 ||

That whole company of sages, seated on the shining ground, sat pondering the meaning of Vasishtha's words with deep respect, their fingers moving in a graceful, glinting way.

ऋषियों की वह पूरी मंडली, उस चमकती हुई भूमि पर बैठी हुई, वसिष्ठ के शब्दों के अर्थ पर पूरे आदर से विचार कर रही थी, उनकी उंगलियां हल्के-हल्के, चमकते हुए ढंग से हिल रही थीं।

6.1.5

विस्मयालोकनोल्लासप्रोत्फुल्लनयनालिनि । पुरन्ध्रिवर्गे गम्भीरतरुमञ्जरितां गते ॥ ५ ॥

vismayālokanollāsaprotphullanayanālini | purandhrivarge gambhīratarumañjaritāṃ gate || 5 ||

And the row of women there, their eyes wide open and sparkling with the joy of watching in wonder, looked just like a tall, stately tree that had burst into full blossom.

और वहां बैठी स्त्रियों की पंक्ति, अचरज से देखने के आनंद में उनकी आंखें पूरी तरह खुली और चमक रही थीं, बिल्कुल किसी ऊंचे, भारी वृक्ष की तरह लग रही थीं जो पूरी तरह फूलों से लद गया हो।

6.1.6

खे वासरचतुर्भागदेशे दिनकरे स्थिते किंचिज्ज्ञानोदयात्सौम्ये किंचिच्छममुपेयुषि ॥ ६ ॥

khe vāsaracaturbhāgadeśe dinakare sthite kiñcijjñānodayātsaumye kiñciśśamamupeyuṣi || 6 ||

By then the sun stood in the sky at the point of the day's last quarter, grown gentle as though a little wisdom had dawned in it, as though it too had found a little peace.

तब तक सूरज आकाश में दिन के आखिरी पहर की जगह पर आ चुका था, वह इस तरह नरम पड़ गया था मानो उसमें थोड़ा ज्ञान उदय हो गया हो, मानो उसे भी थोड़ी शांति मिल गई हो।

6.1.7

श्रवणायेव संशान्ते वितानस्पन्दमालिते मौनं मरुति मन्दारमधुरामोददायिनि ॥ ७ ॥

śravaṇāyeva saṃśānte vitānaspandamālite maunaṃ maruti mandāramadhurāmodadāyini || 7 ||

And the wind fell completely still, as if to listen, barely stirring the canopy above, breathing out the sweet fragrance of mandara flowers.

और हवा पूरी तरह थम गई, मानो सुनने के लिए, ऊपर लगे शामियाने को बस हल्का सा हिलाते हुए, मंदार के फूलों की मीठी खुशबू फैलाते हुए।

6.1.8

पुष्पदामसुषुप्तासु महाभ्रमरपंक्तिषु ज्ञातज्ञेयतया नूनं सम्यग्ध्यानवतीष्विव ॥ ८ ॥

puṣpadāmasuṣuptāsu mahābhramarapaṃktiṣu jñātajñeyatayā nūnaṃ samyagdhyānavatīṣviva || 8 ||

The long rows of bees, asleep on garlands of flowers, looked exactly like those who, having known all there is to know, now sit deep in true meditation.

फूलों की मालाओं पर सोए हुए भौंरों की लंबी पंक्तियां बिल्कुल वैसी लग रही थीं जैसे कोई व्यक्ति सब कुछ जान लेने के बाद गहरे ध्यान में डूबा बैठा हो।

6.1.9

मुक्ताजालकलापान्तर्गतास्वन्तरभूमिषु कचत्यपगतस्पन्दं तोये श्रोतुमिवास्थिते ॥ ९ ॥

muktājālakalāpāntargatāsvantarbhūmiṣu kacatyapagataspandaṃ toye śrotumivāsthite || 9 ||

And the water in the inner courtyard, gleaming within its spread of pearl-like drops, had grown perfectly still, as though it too stood there only to listen.

और भीतरी आंगन का पानी, मोतियों जैसी बूंदों के जाल के बीच चमकता हुआ, पूरी तरह स्थिर हो गया था, मानो वह भी बस सुनने के लिए वहां खड़ा हो।

6.1.10

गृहान्तरं प्रविष्टेषु गवाक्षे दूरमंशुषु विश्रामार्थमिवादीर्घं नभःपान्थेषु शीतलम् ॥ १० ॥

gṛhāntaraṃ praviṣṭeṣu gavākṣe dūramṃśuṣu viśrāmārthamivādīrghaṃ nabhaḥpāntheṣu śītalam || 10 ||

The rays of sunlight, travelers of the sky come from far away, slipped through the window into the room, cool now, as if pausing there a while to rest.

सूरज की किरणें, जो दूर आकाश की यात्री थीं, खिड़की से होकर कमरे के भीतर आ गईं, अब ठंडी पड़ चुकी थीं, मानो कुछ देर वहां आराम करने रुकी हों।

6.1.11

मुक्ताजालप्रभाजालभस्मनोद्धूलितात्मनि । शंसतीव शमं शाम्यद्दिनदेहे दिवातपे ॥ ११ ॥

muktājālaprabhājālabhasmanoddhūlitātmani | śaṃsatīva śamaṃ śāmyaddinadehe divātape || 11 ||

And the heat of day, its brightness now powdered like ash with a web of pearly light, seemed to speak of peace, as the body of the day itself grew calm.

और दिन की धूप, जिसकी चमक अब मोतियों जैसी रोशनी की जाली से मानो राख से ढकी हुई थी, जैसे शांति की बात कह रही थी, क्योंकि दिन का पूरा शरीर ही शांत पड़ता जा रहा था।

6.1.12

करे लीलासरोजेषु शेखरेषु च भूभृताम् । श्रुत्वा सुरसमामोदादवृत्तिषु मनस्स्विव ॥ १२ ॥

kare līlāsarojeṣu śekhareṣu ca bhūbhṛtām | śrutvā surasamāmodādavṛttiṣu manassviva || 12 ||

It seemed to settle on hands holding lotuses in play, and on the crowned heads of kings, as if on minds that had grown still on hearing him, filled with a joy like that of the gods.

वह मानो खेल-खेल में कमल पकड़े हाथों पर और राजाओं के मुकुट पहने सिरों पर जा टिकी, मानो उन मनों पर, जो उसे सुनकर शांत हो गए थे और देवताओं जैसे आनंद से भर गए थे।

6.1.13

बालकेष्वज्ञलोकेषु लीलापक्षिषु सादरम् । भोजनार्थं वधूलोकमुपरुन्धत्स्वनारतम् ॥ १३ ॥

bālakeṣvajñalokeṣu līlāpakṣiṣu sādaram | bhojanārthaṃ vadhūlokamuparundhatsvanāratam || 13 ||

It reached the innocent children too, and the pet birds that kept the young women endlessly and eagerly busy with feeding them.

वह मासूम बच्चों तक भी पहुंची, और उन पालतू पक्षियों तक भी जो जवान स्त्रियों को बार-बार, उत्सुकता से, खिलाने में व्यस्त रखते थे।

6.1.14

भ्रमद्भ्रमरपक्षोत्थवातधूतरजस्यलम् । कौमुदे परिविश्रान्ते चामरेष्वक्षिपक्ष्मसु ॥ १४ ॥

bhramadbhramarapakṣotthavātadhūtarajasyalam | kaumude pariviśrānte cāmareṣvakṣipakṣmasu || 14 ||

Thick now with the pollen that the whirling wings of bees had stirred into the air, it settled upon fluttering eyelashes that moved like fans, once the water-lily had folded fully to rest.

भौंरों के मंडराते पंखों से हवा में उड़े पराग-कणों से भरी हुई, वह पंखे जैसी थरथराती पलकों पर जा टिकी, जब कुमुदिनी पूरी तरह मुंद चुकी थी।

6.1.15

रश्मिष्वगगुहोन्मुक्तच्छायाजालभयादिव । गवाक्षादिष्विवोड्डीय प्रविष्टेषु गृहान्तरम् ॥ १५ ॥

raśmiṣvagaguhonmuktacchāyājālabhayādiva | gavākṣādiṣvivōḍḍīya praviṣṭeṣu gṛhāntaram || 15 ||

The rays of light, as though frightened by the web of shadows spilling out from the mountain caves, seemed to fly in through the windows and take shelter inside the house.

प्रकाश की किरणें, मानो पहाड़ की गुफाओं से फैलती परछाइयों के जाल से डरकर, खिड़कियों से उड़कर घर के भीतर शरण लेती हुई जान पड़ीं।

6.1.16

आसीद्दिनचतुर्भागसत्तावेदनतत्परः । भेरीपटहशङ्खानां दिङ्मुखापूरको ध्वनिः ॥ १६ ॥

āsīddinacaturbhāgasattāvedanatatparaḥ | bherīpaṭahaśaṅkhānāṃ diṅmukhāpūrako dhvaniḥ || 16 ||

Then there arose the sound of kettledrums, drums, and conch shells, filling every direction, announcing that the day's fourth quarter had come.

तभी नगाड़ों, ढोलों और शंखों की आवाज़ उठी, जो हर दिशा में फैल गई, यह बताते हुए कि दिन का चौथा पहर आ चुका है।

6.1.17

तेन तत्तारमप्याशु वचोऽन्तर्धानमाययौ । मौनं जलदनादेन मायूर इव निस्वनः ॥ १७ ॥

tena tattāramapyāśu vaco'ntardhānamāyayau | maunaṃ jaladanādena māyūra iva nisvanaḥ || 17 ||

Because of that sound, Vasishtha's speech, loud as it was, quickly fell silent, like a peacock's cry drowned out by the roar of thunderclouds.

उस आवाज़ के कारण वसिष्ठ के शब्द, जो ऊंचे स्वर में थे, जल्दी ही थम गए, जैसे बादलों की गड़गड़ाहट में मोर की पुकार दब जाती है।

6.1.18

आक्षुब्धा क्षुब्धपक्षालिः पञ्जरस्था खगावली । भूकम्पे तरसाऽऽतालीपल्लवेव वनावली ॥ १८ ॥

ākṣubdhā kṣubdhapakṣāliḥ pañjarasthā khagāvalī | bhūkampe tarasā'tālīpallaveva vanāvalī || 18 ||

The caged birds grew agitated, their wings fluttering wildly in rows, the way a whole forest shakes violently, like palm-fronds, in an earthquake.

पिंजरों में बंद पक्षी बेचैन हो उठे, उनके पंखों की पंक्तियां बुरी तरह फड़फड़ाने लगीं, ठीक जैसे भूकंप में पूरा जंगल ताड़-पत्तों की तरह जोर से हिलने लगता है।

6.1.19

आययुर्भयवित्रस्ता बाला धात्रीकुचान्तरम् । सारवं प्रावृषीवाब्दाः प्रोन्नतं श्रृङ्गकोटरम् ॥ १९ ॥

āyayurbhayavitrastā bālā dhātrīkucāntaram | sāravaṃ prāvṛṣīvābdāḥ pronnataṃ śṛṅgakoṭaram || 19 ||

The children, terrified, ran to hide against their nurses' breasts, like thundering rain-clouds in the monsoon rushing to a high mountain's hollow peak.

डरे हुए बच्चे भागकर अपनी धाय माताओं की छाती से जा लिपटे, जैसे वर्षा ऋतु में गरजते बादल किसी ऊंचे पर्वत की खोखली चोटी की ओर दौड़ पड़ते हैं।

6.1.20

उत्तस्थुरवतंसेभ्यो भूभृतां भ्रमरस्रजः । ईषत्करालवाहाभ्यः सरिद्भ्योऽम्बुकणा इव ॥ २० ॥

uttasthuravataṃsebhyo bhūbhṛtāṃ bhramarasrajaḥ | īṣatkarālavāhābhyaḥ saridbhyo'mbukaṇā iva || 20 ||

The garlands of bees flew up from the ear-ornaments of the kings, like droplets of spray rising off rivers whose currents had grown a little wild.

राजाओं के कानों के आभूषणों से भौंरों की मालाएं उड़ चलीं, जैसे उन नदियों से पानी की बूंदें उठती हैं जिनकी धारा थोड़ी उग्र हो चली हो।

6.1.21

एवं प्रक्षुभिते तस्मिन्गृहे दाशरथे तदा । प्राप्ते वासरवृद्धत्वे शान्तशङ्खस्वने शनैः ॥ २१ ॥

evaṃ prakṣubhite tasmingṛhe dāśarathe tadā | prāpte vāsaravṛddhatve śāntaśaṅkhasvane śanaiḥ || 21 ||

So it was, in Rama's hall, with everything thrown into commotion, that the day advanced further and the sound of the conch slowly died away.

इस तरह राम के उस सभा-भवन में जब सब कुछ हलचल में था, तब दिन और आगे बढ़ चुका था और शंख की आवाज़ धीरे-धीरे शांत हो गई थी।

6.1.22

संहरन्प्रस्तुतं वस्तु वचो मधुरवृत्तिमत् । उवाच मुनिशार्दूलः सभामध्ये रघूद्वहम् ॥ २२ ॥

saṃharanprastutaṃ vastu vaco madhuravṛttimat | uvāca muniśārdūlaḥ sabhāmadhye raghūdvaham || 22 ||

Then that tiger among sages, gathering up the matter at hand into words of sweet cadence, spoke there in the middle of the assembly, to Rama.

तब ऋषियों में श्रेष्ठ उस मुनि ने, जिस बात पर चर्चा चल रही थी उसे समेटते हुए, मीठे और सधे शब्दों में, सभा के बीच राम से कहा।

6.1.23

राघवानघ वाग्जालं मयैतत्प्रविसारितम्। तेन चित्तखगं बद्ध्वा क्रोडीकृत्यात्मतां नय ॥ २३ ॥

rāghavānagha vāgjālaṃ mayaitatpravisāritam | tena cittakhagaṃ baddhvā kroḍīkṛtyātmatāṃ naya || 23 ||

Rama, sinless one, I have spread out this net of words. Use it to catch the bird that is your mind, hold it close, and lead it into oneness with the Self.

हे राघव, हे निष्पाप, मैंने यह शब्दों का जाल फैलाया है। इससे अपने मन रूपी पक्षी को पकड़ो, उसे गोद में लेकर अपने आत्मा के साथ एक कर दो।

6.1.24

कच्चिद्गृहीतो भवता मद्गिरामर्थ ईदृशः। त्यक्त्वा दुर्बोधमक्षीणो हंसेनेवाम्भसः पयः ॥ २४ ॥

kaccidgṛhīto bhavatā madgirāmartha īdṛśaḥ | tyaktvā durbodhamakṣīṇo haṃsenevāmbhasaḥ payaḥ || 24 ||

I trust you have grasped the sense of my words in this way, taking it whole and setting aside what is hard to understand, as a swan takes only the milk from the water.

मुझे उम्मीद है कि तुमने मेरी बातों का मतलब इसी तरह समझा है, जो बात समझने में मुश्किल थी उसे छोड़कर, बाकी सारी बात को अपना लिया है, जैसे हंस पानी में से सिर्फ दूध निकाल लेता है।

6.1.25

विचार्यैतदशेषेण स्वधियैवं पुनःपुनः। अनेनैव पथा साधो गन्तव्यं भवताधुना ॥ २५ ॥

vicāryaitadśeṣeṇa svadhiyaivaṃ punaḥpunaḥ | anenaiva pathā sādho gantavyaṃ bhavatādhunā || 25 ||

Think this over completely with your own mind, again and again, in just this way. Good man, this is the very path you must walk now.

अपने मन से इस बात को बार-बार, पूरी तरह सोचो। हे अच्छे इंसान, अब तुम्हें बस इसी रास्ते पर चलना है।

6.1.26

अनयैव धिया राम विहरन्नैव बध्यसे। अन्यथाधः पतस्याशु विन्ध्यखाते यथा गजः ॥ २६ ॥

anayaiva dhiyā rāma viharannaiava badhyase | anyathādhaḥ patasyāśu vindhyakhāte yathā gajaḥ || 26 ||

With this very understanding, Rama, you can move freely in the world and not be bound. Otherwise you will fall down at once, like an elephant into a pit in the Vindhya hills.

हे राम, इसी समझ के साथ जीने से तुम बंधन में नहीं फँसोगे। नहीं तो तुम फौरन नीचे गिर जाओगे, जैसे कोई हाथी विंध्य पहाड़ के गड्ढे में गिर जाता है।

6.1.27

सुगृहीतं धिया राम मद्वचो न करोषि चेत्। तत्पतस्यवटे त्यक्तदीपो वान्धो निशास्विव ॥ २७ ॥

sugṛhītaṃ dhiyā rāma madvaco na karoṣi cet | tatpatasyavāṭe tyaktadīpo vāndho niśāsviv || 27 ||

Rama, if you do not truly take hold of my words with your mind, then you will fall into a pit, like a man who has thrown away his lamp, or a blind man, walking at night.

हे राम, अगर तुमने मेरी बातों को अपने मन से ठीक से नहीं पकड़ा, तो तुम गड्ढे में गिर जाओगे, जैसे रात में दीया फेंक देने वाला आदमी या कोई अंधा आदमी गिर जाता है।

6.1.28

असङ्गेन यथाप्राप्तो व्यवहारोऽस्य सिद्धये । इत्येव शास्त्रसिद्धान्तमादायोदारवान्भव ॥ २८ ॥

asaṅgena yathāprāpto vyavahāro'sya siddhaye | ityeva śāstrasiddhāntamādāyodāravānbhava || 28 ||

Carry on with whatever activity comes to you, without attachment, so as to accomplish this goal. Take up just this conclusion of the scriptures, and be a noble, large-hearted person.

जो भी काम सामने आए उसे बिना किसी मोह के करते जाओ, ताकि यह मकसद पूरा हो सके। शास्त्रों की इसी बात को मानकर बड़े दिल वाले, उदार इंसान बनो।

6.1.29

हे सभ्या हे महाराज रामलक्ष्मणभूमिपाः । सर्व एव भवन्तोऽद्य तावद्व्यापारमाह्निकम् ॥ २९ ॥

he sabyā he mahārāja rāmalakṣmaṇabhūmipāḥ | sarva eva bhavanto'dya tāvadvyāpāramāhnikam || 29 ||

Members of the assembly, great king, Rama and Lakshmana and the other rulers of the earth, all of you, carry out today's daily round of duties.

हे सभा के लोगों, हे महाराज, हे राम, लक्ष्मण और बाकी राजाओं, आप सब आज के दिन के अपने रोज़ के काम कर लीजिए।

6.1.30

कुर्वन्त्वयं हि दिवसः प्रायः परिणताकृतिः । शेषं विचारयिष्यामो विचार्यं प्रातरागताः ॥ ३० ॥

kurvantvayaṃ hi divasaḥ prāyaḥ pariṇatākṛtiḥ | śeṣaṃ vicārayiṣyāmo vicāryaṃ prātarāgatāḥ || 30 ||

This day has almost come to its close, so let it be done now. Tomorrow morning, once we have gathered again, we will think over what is still left to think over.

आज का दिन लगभग खत्म होने को है, इसलिए यह अभी कर लीजिए। जो भी सोचना बाकी है, उस पर हम कल सुबह फिर मिलकर सोचेंगे।

6.1.31

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्युक्ता मुनिना तेन सा सर्वैव तदा सभा । प्रोत्तस्थौ पद्मवदना सविकासेव पद्मिनी ॥ ३१ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityuktā muninā tena sā sarvaiva tadā sabhā | protastau padmavadanā savikāseva padminī || 31 ||

Sri Valmiki said: When the sage had spoken thus, that whole assembly, its faces like lotuses, then rose up, like a pond of lotuses opening into bloom.

श्री वाल्मीकि ने कहा: मुनि के ऐसा कहने पर, वह पूरी सभा, जिसके सारे चेहरे कमल जैसे थे, तब उठ खड़ी हुई, जैसे कमलों से भरा तालाब खिल उठता है।

6.1.32

राजानः स्तुतराजानः कृतराघववन्दनाः । परिष्टुते वसिष्ठे ते जग्मुरात्मनिवेशनम् ॥ ३२ ॥

rājānaḥ stutarājānaḥ kṛtarāghavavandanāḥ | pariṣṭute vasiṣṭhe te jagmurātmaniveśanam || 32 ||

The kings, those celebrated kings, bowed to Rama, paid their respects to Vasishtha, and then went to their own homes.

वे राजा, वे नामी राजा, राम को प्रणाम करके और वसिष्ठ का आदर करके अपने-अपने घर चले गए।

6.1.33

विश्वामित्रेण सहितो वसिष्ठो गन्तुमाश्रमम्। उत्तस्थावासनाच्छ्रीमान्नमस्कृतनभश्चरः॥ ३३॥

viśvāmitreṇa sahito vasiṣṭho gantumāśramam | uttasthāvāsanācchrīmānnmaskṛtanabhaścaraḥ || 33 ||

Together with Vishvamitra, the glorious Vasishtha rose from his seat to go to his hermitage, honored by the beings who move through the sky.

विश्वामित्र के साथ तेजस्वी वसिष्ठ अपने आश्रम जाने के लिए आसन से उठे, और आकाश में घूमने वाले देवताओं ने उन्हें प्रणाम किया।

6.1.34

दशरथप्रभृतयो राजानो मुनयस्तथा। यथानुरूपं वक्तारमनुगम्य मुनिं चिरम्॥ ३४॥

daśarathaprabhṛtayo rājāno munayastathā | yathānurūpaṃ vaktāramanugamya muniṃ ciram || 34 ||

Dasharatha and the other kings, and the sages as well, each in the manner fitting to them, escorted the sage who had spoken, for a long while.

दशरथ और बाकी राजा, और मुनि लोग भी, अपने-अपने ठीक तरीके से, उस बोलने वाले मुनि के साथ काफी दूर तक गए।

6.1.35

आपृच्छ्य केचिद्गगनं ययुः केचिद्वनान्तरम्। केचिद्राजगृहं सन्तो भृङ्गाः पद्मोत्थिता इव॥ ३५॥

āpṛcchya kecidgaganam yayuḥ kecidvanāntaram | kecidrājagṛhaṃ santo bhṛṅgāḥ padmotthitā iva || 35 ||

Then, having taken leave, some went off into the sky, some into the forest, and some to the royal palace, like bees rising up from a lotus.

फिर विदा लेकर कुछ लोग आकाश में चले गए, कुछ जंगल में चले गए, और कुछ राजमहल की तरफ गए, जैसे भौंरे कमल से उड़कर बिखर जाते हैं।

6.1.36

वसिष्ठपादयोस्त्यक्त्वा पुष्पाञ्जलिमनाविलम्। दारैरनुगतो राजा प्रविवेश गृहान्तरम्॥ ३६॥

vasiṣṭhapādayostyaktvā puṣpāñjalimanāvilam | dārairanugato rājā praviveśa gṛhāntaram || 36 ||

Having placed a clean handful of flowers at Vasishtha's feet, the king, accompanied by his queen, went into the inner chamber of his home.

वसिष्ठ के चरणों में साफ फूलों की अंजलि चढ़ाकर, राजा अपनी रानी के साथ अपने घर के अंदर के कमरे में गए।

6.1.37

रामलक्ष्मणशत्रुघ्नाः प्राप्तस्य स्वाश्रमं गुरोः। अभ्यर्च्य चरणौ भक्त्या त्वाजग्मुर्नृपमन्दिरम्॥ ३७॥

rāmalakṣmaṇaśatrughnāḥ prāptasya svāśramaṃ guroḥ | abhyarcya caraṇau bhaktyā tvājagmurnṛpamandiram || 37 ||

Rama, Lakshmana, and Shatrughna worshipped with devotion the feet of their guru, who had gone to his own hermitage, and then came to the royal palace.

राम, लक्ष्मण और शत्रुघ्न ने अपने गुरु के चरणों की श्रद्धा से पूजा की, जो अपने आश्रम जा चुके थे, और फिर वे राजमहल आए।

6.1.38

सदनानि समासाद्य श्रोतारः सर्व एव ते। सस्नुरानर्चुरभ्येयुर्देवान्विप्रान्पितॄंस्तथा॥ ३८॥

sadanāni samāsādya śrotāraḥ sarva eva te | sasnurānarcuhabhyeyurdevānviprānpitṛṃstathā || 38 ||

All those who had listened reached their own homes, bathed, performed worship, and paid their respects to the gods, the brahmins, and the ancestors.

सुनने वाले वे सभी लोग अपने-अपने घर पहुँचकर नहाए, पूजा की, और देवताओं, ब्राह्मणों और पितरों को प्रणाम करने गए।

6.1.39

यथाक्रमं स्वभृत्यान्तैर्विप्राद्यैश्च परिच्छदैः । समं बुभुजिरे भोज्यं वर्णधर्मक्रमोदितम् ॥ ३९ ॥

yathākramaṃ svabhṛtyāntairviprādyaiśca paricchadaiḥ | samaṃ bubhujire bhojyaṃ varṇadharmakramoditam || 39 ||

In due order, together with their whole household, from the brahmins down to their own servants, everyone ate the food prescribed for their class according to the rule of duty.

सही क्रम से, अपने पूरे घर-परिवार के साथ, ब्राह्मणों से लेकर अपने नौकरों तक, सबने अपने-अपने वर्ण के नियम के हिसाब से बना खाना खाया।

6.1.40

अस्तं गते दिनकरे समं दिवसकर्मभिः । अभ्यागते रात्रिकरे समं रजनिकर्मभिः ॥ ४० ॥

astaṃ gate dinakare samaṃ divasakarmabhiḥ | abhyāgate rātrikare samaṃ rajanikarmabhiḥ || 40 ||

The sun set, and with it the day's tasks came to an end. The moon rose, and with it the night's tasks began.

सूरज डूब गया, और उसके साथ दिन के काम खत्म हो गए। चाँद निकल आया, और उसके साथ रात के काम शुरू हो गए।

6.1.41

स्थित्वा तल्पेषु कौशेयशयनेष्वासनेषु च । भूचरा मुनिराजानो राजपुत्रा महर्षयः ॥ ४१ ॥

sthitvā talpeṣu kauśeyaśayaneṣvāsaneṣu ca | bhūcarā munirājāno rājaputrā maharṣayaḥ || 41 ||

The earthbound ones, the royal sages, the princes, and the great seers, then settled themselves on couches, on silken beds, and on seats.

धरती पर रहने वाले वे लोग, यानी राजर्षि, राजकुमार और महर्षि, तब पलंगों पर, रेशमी बिस्तरों पर और आसनों पर बैठ गए।

6.1.42

संसारोत्तरणोपायं वसिष्ठवदनेरितम् । यथावदेकाग्रधियश्चिन्तयामासुरादृताः ॥ ४२ ॥

saṃsārottaraṇopāyaṃ vasiṣṭhavadaneritam | yathāvadekāgradhiyaścintayāmāsurādṛtāḥ || 42 ||

They reflected properly, with focused minds and full respect, on the means of crossing beyond worldly existence that Vasishtha had spoken.

उन्होंने ठीक से, एक ही जगह मन लगाकर और पूरे आदर के साथ, संसार से पार जाने के उस तरीके के बारे में सोचा, जो वसिष्ठ ने बताया था।

6.1.43

ततः प्रहरमात्रेण निद्रामामुद्रिताननाः । उत्स्वप्नसुन्दरीमीयुः पद्मा इव दिनार्थिनः ॥ ४३ ॥

tataḥ praharamātreṇa nidrāmāmudritānanāḥ | utsvapnasundarīmīyuḥ padmā iva dinārthinaḥ || 43 ||

Then, after only one watch of the night, their eyes closed, and they slipped into sleep, that beauty who rises in dreams, like day-lotuses that close up at night, longing for the day.

फिर रात का बस एक पहर बीतने पर, उनकी आँखें बंद हो गईं, और वे उस नींद में चले गए जो सपनों में उठने वाली सुंदरी है, जैसे दिन में खिलने वाले कमल रात में बंद होकर दिन का इंतज़ार करते हैं।

6.1.44

रामलक्ष्मणशत्रुघ्नाः प्रहरत्रयमेव तत्। वासिष्ठमुपदेशं ते चिन्तयामासुरक्षतम्॥ ४४॥

rāmalakṣmaṇaśatrughnāḥ praharatrayameva tat | vāsiṣṭhamupadeśaṃ te cintayāmāsurakṣatam || 44 ||

But Rama, Lakshmana, and Shatrughna spent all three watches of that night pondering Vasishtha's teaching, whole and unbroken.

पर राम, लक्ष्मण और शत्रुघ्न ने उस रात के तीनों पहर वसिष्ठ की पूरी और बिना टूटी हुई शिक्षा के बारे में सोचते हुए बिताए।

6.1.45

प्रहरस्यार्धमात्रं ते तत आमुद्रितेक्षणाः। उत्स्वप्नमाययुर्निद्रां क्षणाद्विद्रावितश्रमाम्॥ ४५॥

praharasyārdhamātraṃ te tat āmudritekṣaṇāḥ | utsvapnamāyayurnidrāṃ kṣaṇādvidrāvitaśramām || 45 ||

Then, for only half a watch, their eyes closed, and they too fell into that dream-born sleep, which drives away all weariness in a moment.

फिर सिर्फ आधे पहर के लिए उनकी आँखें बंद हुईं, और वे भी उस सपनों वाली नींद में चले गए, जो पल भर में सारी थकान मिटा देती है।

6.1.46

इति शुभमनसां विवेकभाजामधिगतसारतयोदिताशयानाम्। अभजत विरतिं तदा त्रियामा मलिननिशाकरवक्रतां जगाम॥ ४६॥

iti śubhamanasāṃ vivekabhājāmadhigatasāratayoditāśayānām | abhajata viratiṃ tadā triyāmā malinaniśākaravakratāṃ jagāma || 46 ||

So it was that for those pure-hearted, discerning ones, whose minds had grown calm after grasping the essence of the teaching, the night then came to its end, while the pale moon sank low and dim toward the horizon.

इस तरह उन शुद्ध दिल वाले, समझदार लोगों के लिए, जिनका मन उस असली बात को समझकर शांत हो गया था, वह रात खत्म हो गई, और धुंधला चाँद झुकता हुआ नीचे की तरफ डूबने लगा।

Chapter 2

6.2.1

श्रीवाल्मीकिरुवाच । ततः क्लिन्नेन्दुवदना पर्याकुलतमःपदा । क्षीयमाणा बभौ श्यामा विवेक इव वासना ॥ १ ॥

śrīvālmīkiruvāca | tataḥ klinnenduvadanā paryākulatamaḥpadā | kṣīyamāṇā babhau śyāmā viveka iva vāsanā || 1 ||

Sri Valmiki said: Then the night seemed to waste away, her moon-like face grown pale and dim, the ground around her crowded with confused darkness, like an old habit of mind fading away as understanding dawns.

श्री वाल्मीकि ने कहा: तब वह रात क्षीण होती हुई दिखी, जिसका चाँद जैसा मुख फीका पड़ गया था और जिसके चारों ओर घना उलझा अंधकार भरा था, ठीक वैसे ही जैसे सही समझ आने पर मन की पुरानी आदत मिट जाती है।

6.2.2

पूर्वे ध्वस्ततयालोकं दृश्यमाने परेऽचले । शयालीकावतंसाभं तापको निकरो दधौ ॥ २ ॥

pūrve dhvastatayālokaṃ dṛśyamāne pare'cale | śayālīkāvataṃsābhaṃ tāpako nikaro dadhau || 2 ||

On the great mountain in the east, as the darkness broke and the light came into view, the sun's burning mass of rays appeared like a crest-jewel resting there.

पूरब की उस बड़ी पहाड़ी पर, जब अंधेरा टूटा और रोशनी दिखने लगी, तो सूरज की तपती किरणों का समूह वहाँ रखे किसी मुकुट-रत्न जैसा दिखा।

6.2.3

अवश्यायकणाकर्षी परामृष्टेन्दुमण्डलः । ज्योत्स्नाकवलनालोको बभौ प्राभातिकोऽनिलः ॥ ३ ॥

avaśyāyakaṇākarṣī parāmṛṣṭendumandalaḥ | jyotsnākavalanāloko babhau prābhātiko'nilah || 3 ||

The morning breeze appeared, drawing up drops of dew, brushing against the moon's disc, its light looking as if it were swallowing the moonlight.

सुबह की हवा दिखाई दी, जो ओस की बूँदों को खींच रही थी, चाँद की गोल थाली को छू रही थी, और उसकी चमक ऐसी लग रही थी मानो वह चाँदनी को निगल रही हो।

6.2.4

रामलक्ष्मणशत्रुघ्ना उत्थायानुचरैः सह । ययुर्वन्दितसंध्यास्ते पुण्यं वासिष्ठमाश्रमम् ॥ ४ ॥

rāmalakṣmaṇaśatrughnā utthāyānucaraiḥ saha | yayurvanditasandhyāste puṇyaṃ vāsiṣṭhamāśramam || 4 ||

Rama, Lakshmana and Shatrughna got up, and together with their attendants, after finishing their morning prayers, went to Vasishtha's sacred hermitage.

राम, लक्ष्मण और शत्रुघ्न उठे, और अपने साथियों के साथ सुबह की संध्या-पूजा पूरी करके वसिष्ठ के पवित्र आश्रम की ओर चल दिए।

6.2.5

तत्र वन्दितसंध्यस्य निर्गतस्यापि सद्मतः । मुनेर्ववन्दिरे पादौ पदोर्दत्वार्घ्यसंततिम् ॥ ५ ॥

tatra vanditasandhyasya nirgatasyāpi sadmataḥ | munervavandire pādau padordatvārghyasantatim || 5 ||

There, even though Vasishtha had already finished his morning prayers and had come outside his house, they all bowed at his feet, one after another offering him the guest-gift of water.

वहाँ, वसिष्ठ अपनी सुबह की पूजा पहले ही पूरी करके घर से बाहर आ चुके थे, फिर भी सबने उनके चरणों में झुककर एक के बाद एक उन्हें जल की भेंट चढ़ाई।

6.2.6

क्षणात्तत्सदनं मौनं मुनिब्राह्मणराजभिः । हस्त्यश्वरथयानैश्च शनैर्नीरन्ध्रतां ययौ ॥ ६ ॥

kṣaṇāttatsadanaṃ maunaṃ munibrāhmaṇarājabhiḥ | hastyaśvarathayānaiśca śanairnīrandhratāṃ yayau || 6 ||

In a moment, that quiet hermitage slowly filled up completely with sages, priests and kings, and with elephants, horses, chariots and carriages.

एक ही पल में वह शांत आश्रम धीरे-धीरे साधुओं, ब्राह्मणों और राजाओं से, और हाथियों, घोड़ों, रथों और गाड़ियों से पूरी तरह भर गया।

6.2.7

अथासौ मुनिशार्दूलस्तयैव सह सेनया । गृहं दाशरथं काले रामाद्यनुगतो ययौ ॥ ७ ॥

athāsau muniśārdūlastayaiva saha senayā | gṛhaṃ dāśarathaṃ kāle rāmādyanugato yayau || 7 ||

Then that tiger among sages, together with that same gathering, went at the right time to the palace of Dasharatha's son, with Rama and the others following him.

फिर वह ऋषियों में श्रेष्ठ वसिष्ठ उसी सभा के साथ सही समय पर दशरथ के पुत्र के महल की ओर गए, और राम आदि उनके पीछे-पीछे चले।

6.2.8

तत्रैनं पूर्वसंबन्धः कृतसंध्यो महीपतिः । दूरमार्गं विनिर्गत्य पूजयामास सादरम् ॥ ८ ॥

tatra enaṃ pūrvasaṃbandhaḥ kṛtasaṃdhyo mahīpatiḥ | dūramārgaṃ vinirgatya pūjayāmāsa sādaram || 8 ||

There, the king, bound to him by their old connection and having finished his own morning prayers, went far out along the road to meet him and honored him with great respect.

वहाँ राजा ने, जिसका वसिष्ठ से पुराना नाता था और जो खुद भी सुबह की पूजा कर चुका था, उनसे मिलने के लिए दूर तक सड़क पर जाकर बड़े आदर से उनका सम्मान किया।

6.2.9

पुष्पमुक्तामणिव्रातैर्भूयोऽत्यधिकभूषिताम् । सभा प्रविश्य ते सर्वे विविशुर्विष्टरालिषु ॥ ९ ॥

puṣpamuktāmaṇivrātairbhūyo'tyadhikabhūṣitām | sabhā praviśya te sarve viviśurviṣṭarāliṣu || 9 ||

They entered the assembly hall, decorated further still with heaps of flowers, pearls and jewels, and all of them took their seats in the rows set out for them.

वे उस सभा-भवन में गए, जो फूलों, मोतियों और रत्नों के ढेरों से और भी सजा हुआ था, और सब लोग अपने-अपने लिए रखी हुई पंक्तियों में बैठ गए।

6.2.10

अथ तस्मिन्नवसरे ह्यस्तनाः सर्व एव ते । श्रोतारः समुपाजग्मुर्नभश्चरमहीचराः ॥ १० ॥

atha tasminnavasare hyastanāḥ sarva eva te | śrotāraḥ samupājagmurnabhaścaramahīcarāḥ || 10 ||

Then, on that occasion, all those same listeners who had been there the day before came together again, beings who move through the sky and beings who walk the earth.

फिर उसी मौके पर, कल वाले वे सभी श्रोता फिर से इकट्ठा हो गए, आकाश में चलने वाले भी और धरती पर चलने वाले भी।

6.2.11

विवेश सा सभा सौम्या कृतान्योन्याभिवन्दनाबभौ राजसमाभोगा शान्तवातेव पद्मिनी ॥ ११ ॥

viveśa sā sabhā saumyā kṛtānyonyābhivandanābabhau rājasamābhogā śāntavāteva padminī || 11 ||

That gracious assembly filled up, and as everyone exchanged greetings with each other, it shone, crowded with kings, like a lotus pond when the wind has gone still.

वह सुंदर सभा भर गई, और जैसे ही सब एक-दूसरे का अभिवादन करने लगे, वह राजाओं से भरी हुई ऐसी चमकने लगी जैसे हवा थम जाने पर कमलों से भरा तालाब चमकता है।

6.2.12

यथाप्रदेशमेवाशु निविष्टेषु यथासुखम्तेषु तद्देशयोगेषु विप्रर्षिमुनिराजसु ॥ १२ ॥

yathāpradeśamevāśu niviṣṭeṣu yathāsukhamteṣu taddeśayogeṣu viprarṣimunirājasu || 12 ||

When the priests, seers, sages and kings had quickly taken their seats, each in his own place, sitting comfortably in the positions given to them.

जब ब्राह्मण, ऋषि, मुनि और राजा जल्दी-जल्दी अपनी-अपनी जगह पर बैठ गए, और आराम से अपने तय किए हुए स्थानों पर बैठे थे।

6.2.13

मृदुनि स्वागतरवे शनैः शममुपागतेसभाकोणोपविष्टेषु शान्तशब्देषु बन्दिषु ॥ १३ ॥

mṛduni svāgatarave śanaiḥ śamamupāgatesabhākoṇopaviṣṭeṣu śāntaśabdeṣu bandiṣu || 13 ||

When the gentle sound of welcome had gradually quieted down, and the court bards, seated in the corners of the hall, had fallen silent.

जब स्वागत की मीठी आवाज़ धीरे-धीरे शांत हो गई, और सभा के कोनों में बैठे भाट-चारण भी चुप हो गए।

6.2.14

तरसैवोदितेष्वाशु श्रोतुमभ्यागतेष्विवगवाक्षादिव जालेषु प्रविष्टेष्वर्करश्मिषु ॥ १४ ॥

tarasaivoditeṣvāśu śrotumabhyāgateṣvivagavākṣādiva jāleṣu praviṣṭeṣvarkaraśmiṣu || 14 ||

When the sun's rays, having risen up all at once, entered through the lattice windows as if they too had come to listen.

जब सूरज की किरणें एक साथ तेज़ी से उठकर, जालीदार खिड़कियों से ऐसे अंदर आईं मानो वे भी सुनने आई हों।

6.2.15

सत्वरप्रविशच्छ्रोतृहस्तस्पर्शघटोद्भवेमुक्ताजालज्झणत्कारे निद्रायामिव शाम्यति ॥ १५ ॥

satvarapraviśacchrotṛhastasparśaghaṭodbhavemuktājālajhaṇatkāre nidrāyāmiva śāmyati || 15 ||

When the jingling of pearl strings, stirred by the hands of listeners hurrying in and touching each other, died down as if falling asleep.

जब सुनने आए लोगों के हाथों के आपस में छू जाने से उठी मोतियों की झंकार धीरे-धीरे ऐसे शांत हो गई मानो वह सो गई हो।

6.2.16

कुमारः शंकरस्येव कचो देवगुरोरिव । प्रह्लाद इव शुक्रस्य सुपर्ण इव शार्ङ्गिणः ॥ १६ ॥

kumāraḥ śaṃkarasyeva kaco devaguroriva | prahlāda iva śukrasya suparṇa iva śārṅgiṇaḥ || 16 ||

As Kumara looks at Shankara, as Kacha looks at the teacher of the gods, as Prahlada looks at Shukra, as Suparna looks at the wielder of the bow.

जैसे कुमार शंकर को देखते हैं, जैसे कच देवताओं के गुरु को देखते हैं, जैसे प्रह्लाद शुक्र को देखते हैं, जैसे सुपर्ण धनुष धारण करने वाले को देखते हैं।

6.2.17

वसिष्ठस्यानने रामः शनैर्दृष्टिं न्यवेशयत्। भ्रमन्तीमम्बरोपान्ते फुल्लपद्म इवालिनीम्॥ १७॥

vasiṣṭhasyānane rāmaḥ śanairdṛṣṭiṃ nyaveśayat | bhramantīmambaropānte phullapadma ivālinīm || 17 ||

Rama slowly rested his gaze on Vasishtha's face, letting it wander over its edges, like a bee circling a lotus in full bloom.

राम ने धीरे-धीरे अपनी नज़र वसिष्ठ के मुख पर टिका दी, और वह नज़र उसके किनारों पर यूँ घूमने लगी जैसे कोई भँवरा पूरी तरह खिले कमल के इर्द-गिर्द मंडराता है।

6.2.18

मुनिस्त्वनुज्झितेनाथ तेनैव रघुनन्दनम्। क्रमेणोवाच वाक्यज्ञो वाक्यं वाक्यार्थकोविदम्॥ १८॥

munistvanujjhitenaātha tenaiva raghunandanam | krameṇovāca vākyajño vākyaṃ vākyārthakovidam || 18 ||

Then the sage, continuing in that same unbroken sequence, being skilled in speaking, spoke his words step by step to Rama, the delight of the Raghus, who was himself skilled at grasping the meaning of words.

फिर वसिष्ठ ने, उसी लगातार चलते क्रम को बनाए रखते हुए, बोलने में निपुण होने के कारण, राम से क्रम-क्रम से बातें कहीं, राम जो रघुकुल के आनंद थे और जो खुद भी बातों का मतलब समझने में निपुण थे।

6.2.19

श्रीवसिष्ठ उवाच। कच्चित्स्मरसि यत्प्रोक्तं ह्यो मया रघुनन्दन। वाक्यमत्यन्तगुर्वर्थं परमार्थावबोधनम्॥ १९॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kaccitsmarasi yatproktaṃ hyo mayā raghunandana | vākyamatyantagurvarthaṃ paramārthāvabodhanam || 19 ||

Sri Vasishtha said: Rama, delight of the Raghus, do you remember what I told you yesterday, words heavy with meaning, which bring understanding of the highest truth?

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे रघुकुल के आनंद राम, क्या तुम्हें याद है जो मैंने कल तुमसे कहा था, गहरे अर्थ वाली वे बातें, जो सबसे बड़े सत्य को समझा देती हैं?

6.2.20

इदानीमवबोधार्थमन्यच्च रिपुमर्दन। उच्यमानं मयेदं च श्रृणु शाश्वतसिद्धये॥ २०॥

idānīmavabodhārthamanyacca ripumardana | ucyamānaṃ mayedam ca śṛṇu śāśvatasiddhaye || 20 ||

Now, crusher of enemies, listen also to this further teaching I am giving you, for your understanding, so that you may reach what lasts forever.

अब, हे शत्रुओं को कुचलने वाले, यह और बात भी सुनो जो मैं तुम्हें समझाने के लिए कह रहा हूँ, ताकि तुम वह पाओ जो हमेशा के लिए बना रहता है।

6.2.21

वैराग्याभ्यासवशतस्तथा तत्त्वावबोधनात्। संसारस्तीर्यते तेन तेष्वेवाभ्यासमाहर॥ २१॥

vairāgyābhyāsavaśatastathā tattvāvabodhanāt | saṃsārastīryate tena teṣvevābhyāsamāhara || 21 ||

By practicing detachment again and again, and by understanding the truth, by these two, one crosses over this cycle of birth and death. So put your effort into just these two.

बार-बार वैराग्य का अभ्यास करने से और सत्य को समझने से ही यह जन्म-मरण का चक्र पार होता है। इसलिए बस इन्हीं दोनों में अपना प्रयास लगाओ।

6.2.22

सम्यक्तत्त्वावबोधेन दुर्बोधे क्षयमागते । गलिते वासनावेशे विशोकं प्राप्यते पदम् ॥ २२ ॥

samyaktattvāvabodhena durbodhe kṣayamāgate | galite vāsanāveśe viśokaṃ prāpyate padam || 22 ||

When, through complete understanding of the truth, this hard-to-grasp ignorance is destroyed, and the grip of old habits of mind has melted away, the sorrowless state is reached.

जब सत्य की पूरी समझ से यह मुश्किल से समझ में आने वाला अज्ञान मिट जाता है, और मन की पुरानी आदतों की पकड़ ढीली पड़ जाती है, तब वह दुख-रहित अवस्था मिलती है।

6.2.23

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नमदृष्टोभयकोटिकम् । एकं ब्रह्मैव हि जगत्स्थितं द्वित्वमुपागतम् ॥ २३ ॥

dikkālādyanavacchinnamadṛṣṭobhayakoṭikam | ekaṃ brahmaiva hi jagatsthitaṃ dvitvamupāgatam || 23 ||

That one Brahman alone, not limited by space or time or anything else, its two ends never seen, stands as the world too; it has only come to look like two things.

वही एक ब्रह्म, जो न देश से बँधा है न काल से, जिसके दोनों छोर कभी दिखाई नहीं देते, वही संसार बनकर भी खड़ा है; वह बस दो चीज़ों जैसा दिखने लगा है।

6.2.24

सर्वभावानवच्छिन्नं यत्र ब्रह्मैव विद्यते । शान्तं समसमाभासं तत्रान्यत्वं कथं भवेत् ॥ २४ ॥

sarvabhāvānavacchinnaṃ yatra brahmaiva vidyate | śāntaṃ samasamābhāsaṃ tatrānyatvaṃ kathaṃ bhavet || 24 ||

Where only Brahman exists, undivided by anything, at peace, appearing the same everywhere, how could there be any otherness there?

जहाँ सिर्फ़ ब्रह्म है, किसी चीज़ से बँटा हुआ नहीं, शांत, हर जगह एक-सा दिखने वाला, वहाँ अलगपन कैसे हो सकता है?

6.2.25

इति मत्वाहमित्यन्तर्मुक्त्वा मुक्तवपुर्महान् । एकरूपः प्रशान्तात्मा साक्षात्स्वात्मसुखो भव ॥ २५ ॥

iti matvāhamityantarmuktvā muktavapurmahān | ekarūpaḥ praśāntātmā sākṣātsvātmasukho bhava || 25 ||

Understanding this, let go of the thought I from within, and, great one, free from clinging to the body, be of one nature, your mind fully at peace, and become one whose happiness truly lies in your own self.

यह समझकर, अपने भीतर से मैं का भाव छोड़ दो, और हे महान, शरीर से मोह छोड़कर, एक-रूप बन जाओ, मन को पूरी तरह शांत रखो, और सच में अपने ही भीतर सुख पाने वाले बन जाओ।

6.2.26

नास्ति चित्तं न चाविद्या न मनो नच जीवकःएताः स्वकलना राम कृता ब्रह्मण एव ताः ॥ २६ ॥

nāsti cittaṃ na cāvidyā na mano naca jīvakaḥetāḥ svakalanā rāma kṛtā brahmaṇa eva tāḥ || 26 ||

There is no mind, no ignorance, no thinking-organ, and no separate living soul, Rama, these are just imaginings made by Brahman itself.

राम, न कोई मन है, न अज्ञान, न सोचने की शक्ति, न कोई अलग जीव है, ये सब बस ब्रह्म की अपनी बनाई हुई कल्पनाएँ हैं।

6.2.27

याः संपदो याश्च दृशो याश्चितो यास्तदेषणाःब्रह्मैव तदनाद्यन्तमब्धिवत्प्रविजृम्भते ॥ २७ ॥

yāḥ saṃpado yāśca dṛśo yāścito yāstadeṣaṇāḥbrahmaiva tadanādyantamabdhivatpravijṛmbhate || 27 ||

Whatever riches there are, whatever sights, whatever thoughts, and whatever wants for them, it is Brahman alone, without beginning or end, surging up like the ocean.

जो भी धन-दौलत है, जो भी नज़ारे हैं, जो भी विचार हैं, और उनके लिए जो भी चाहत है, वह सब एक ब्रह्म ही है, जिसका न आदि है न अंत, जो समुद्र की तरह उमड़ता रहता है।

6.2.28

पाताले भूतले स्वर्गे तृणे प्राण्यम्बरेऽपि चदृश्यते तत्परं ब्रह्म चिद्रूपं नान्यदस्ति हि ॥ २८ ॥

pātāle bhūtale svarge tṛṇe prāṇyambare'pi cadṛśyate tatparaṃ brahma cidrūpaṃ nānyadasti hi || 28 ||

In the underworld, on the earth, in heaven, in a blade of grass, in a living creature, and in the sky too, that supreme Brahman, whose nature is consciousness, is seen. Nothing else truly exists.

पाताल में, धरती पर, स्वर्ग में, घास के तिनके में, किसी जीव में, और आकाश में भी, वही सबसे बड़ा ब्रह्म दिखता है, जो चेतना के रूप में है। सच में उसके सिवा और कुछ है ही नहीं।

6.2.29

उपेक्ष्यहेयोपादेयबन्धवो विभवा वपुःब्रह्मैव विगताद्यन्तमब्धिवत्प्रविजृम्भते ॥ २९ ॥

upekṣyaheyopādeyabandhavo vibhavā vapuḥbrahmaiva vigatādyantamabdhivatpravijṛmbhate || 29 ||

What is to be ignored, what is to be rejected, what is to be accepted, one's kin, one's wealth, one's own body, it is Brahman alone, without beginning or end, surging up like the ocean.

जिसकी उपेक्षा करनी है, जिसे छोड़ना है, जिसे अपनाना है, अपने रिश्तेदार, अपना धन, अपना शरीर, यह सब एक ब्रह्म ही है, जिसका न आदि है न अंत, जो समुद्र की तरह उमड़ता रहता है।

6.2.30

यावदज्ञानकलना यावदब्रह्मभावनायावदास्था जगज्जाले तावच्चित्तादिकल्पना ॥ ३० ॥

yāvadajñānakalanā yāvadabrahmabhāvanāyāvadāsthā jagajjāle tāvaccittādikalpanā || 30 ||

As long as ignorance keeps being built up, as long as one feels something is separate from Brahman, as long as one trusts in the net of this world, so long the mind and its like keep being imagined as real.

जब तक अज्ञान बनता रहता है, जब तक यह भाव बना रहता है कि कुछ ब्रह्म से अलग है, जब तक इस संसार के जाल पर भरोसा बना रहता है, तब तक मन वगैरह की कल्पना भी बनी रहती है।

6.2.31

देहे यावदहंभावो दृश्येऽस्मिन्यावदात्मना । यावन्ममेदमित्यास्था तावच्चित्तादिविभ्रमः ॥ ३१ ॥

dehe yāvadahaṃbhāvo dṛśye'sminyāvadātmanā | yāvanmamedamityāsthā tāvaccittādivibhramaḥ || 31 ||

As long as the feeling "I" remains in the body, as long as you take this visible world to be yourself, as long as the conviction "this is mine" holds, so long the delusion of the mind and its kin goes on.

जब तक शरीर में "मैं" का भाव बना रहता है, जब तक इस दिखने वाली दुनिया को अपना आप समझा जाता है, जब तक "यह मेरा है" ऐसा विश्वास बना रहता है, तब तक मन और उससे जुड़ी हर कल्पना बनी रहती है।

6.2.32

यावन्नोदितमुच्चैस्त्वं सज्जनासङ्गसङ्गतः । यावन्मौर्ख्यं न संक्षीणं तावच्चित्तादिनिम्नता ॥ ३२ ॥

yāvannoditamuccaiḥstvaṃ sajjanaāsaṅgasaṅgataḥ | yāvanmaurkhyaṃ na saṃkṣīṇaṃ tāvaccittādinimnatā || 32 ||

As long as you have not risen high through the company of good people, and as long as foolishness has not worn away, so long the mind and its kin stay low.

जब तक तुम सज्जनों की संगति से ऊँचे नहीं उठे, और जब तक मूर्खता कम नहीं हुई, तब तक मन और उससे जुड़ी हर चीज़ नीची ही बनी रहती है।

6.2.33

यावच्छिथिलतां यातं नेदं भुवनभावनम् । सम्यग्दर्शनशक्त्यान्तस्तावच्चित्तादयः स्फुटाः ॥ ३३ ॥

yāvacchithilatāṃ yātaṃ nedaṃ bhuvanabhāvanam | samyagdarśanaśaktyāntastāvaccittādayaḥ sphuṭāḥ || 33 ||

As long as this power of imagining the world has not been loosened from within by the strength of right seeing, so long the mind and its kin stand out clearly.

जब तक सही दृष्टि की ताक़त से यह दुनिया गढ़ने वाली शक्ति भीतर से ढीली नहीं पड़ती, तब तक मन और उससे जुड़ी हर चीज़ साफ़ दिखती रहती है।

6.2.34

यावदज्ञत्वमन्धत्वं वैवश्यं विषयाशया । मौर्ख्यान्मोहसमुच्छ्रायस्तावच्चित्तादिकल्पना ॥ ३४ ॥

yāvadajñatvamandhatvaṃ vaivaśyaṃ viṣayāśayā | maurkhyānmohasamucchrāyastāvaccittādikalpanā || 34 ||

As long as ignorance, blindness and helplessness through craving for the senses remain, and foolishness keeps delusion swelling, so long the mind and its kin go on being imagined.

जब तक विषयों की चाह से अज्ञान, अंधापन और बेबसी बनी रहती है, और मूर्खता से मोह बढ़ता रहता है, तब तक मन और उससे जुड़ी हर कल्पना बनी रहती है।

6.2.35

यावदाशाविषामोदः परिस्फुरति हृद्वने । प्रविचारचकोरोऽन्तर्न तावत्प्रविशत्यलम् ॥ ३५ ॥

yāvadāśāviṣāmodaḥ parisphurati hṛdvanE | pravicāracakoro'ntarnA tāvatpraviśatyalaṃ || 35 ||

As long as the sweet poison of craving spreads through the forest of the heart, the bird of clear reflection cannot fully enter within.

जब तक चाह का मीठा ज़हर हृदय रूपी वन में फैला रहता है, तब तक विवेक का पंछी भीतर पूरी तरह नहीं आ पाता।

6.2.36

भोगेष्वनास्थमनसः शीतलामलनिर्वृतेः । छिन्नाशापाशजालस्य क्षीयते चित्तविभ्रमः ॥ ३६ ॥

bhogeṣv anāsthamanasḥ śītalāmalanirvṛteḥ | chinnāśāpāśajālasya kṣīyate cittavibhramaḥ || 36 ||

For one whose mind has no interest in pleasures, whose peace is cool and pure, and who has cut the net of desire's snares, the delusion of the mind wastes away.

जिसका मन भोगों में नहीं लगता, जिसकी शांति ठंडी और निर्मल है, और जिसने चाह के जाल को काट डाला है, उसका मन का यह भ्रम मिट जाता है।

6.2.37

तृष्णामोहपरित्यागान्नित्यशीतलसंविदः । पुंसः प्रशान्तचित्तस्य प्रबुद्धा त्यक्तचित्तभूः ॥ ३७ ॥

tṛṣṇāmohaparityāgān nityaśītalasaṃvidaḥ | puṃsaḥ praśāntacittasya prabuddhā tyaktacittabhūḥ || 37 ||

When craving and delusion are given up, in a person whose awareness stays forever cool and whose mind is fully at peace, the very ground of that mind, once left behind, awakens.

तृष्णा और मोह को छोड़ देने से, जिसकी चेतना सदा शीतल है और मन पूरी तरह शांत है, उसके मन की वह जड़ भी, जो छूट चुकी है, जाग उठती है।

6.2.38

असंस्तुतमिवानास्थमवस्तु परिपश्यतः । दूरस्थमिव देहं स्वमसन्तं चित्तभूः कुतः ॥ ३८ ॥

asanstutamivānāsthamavastu paripaśyataḥ | dūrasthamiva dehaṃ svamasantaṃ cittabhūḥ kutaḥ || 38 ||

For one who looks on his own body as unfamiliar, unconcerning, unreal, as if far away, as if it did not exist at all, how could any ground be left for a mind?

जो अपने शरीर को अनजाना, बेपरवाह और झूठा जैसा देखता है, मानो वह दूर हो, मानो वह हो ही न, उसके लिए मन की कोई ज़मीन कहाँ बचती है?

6.2.39

भावितानन्तचित्तत्त्वरूपरूपान्तरात्मनः । स्वान्तावलीनजगतः शान्तो जीवादिविभ्रमः ॥ ३९ ॥

bhāvitānanta cittatattvarūparūpāntarātmanaḥ | svāntāvalīnajagataḥ śānto jīvādivibhramaḥ || 39 ||

For one whose inmost self has come to know itself as the endless nature of pure awareness, and in whom the world has dissolved into his own being, the delusion of the individual soul and its kin falls silent.

जिसने अपने भीतर के आप को अनंत शुद्ध चेतना के रूप में जान लिया है, और जिसमें यह संसार अपने ही भीतर घुल गया है, उसके लिए जीव और उससे जुड़ी हर भ्रांति शांत हो जाती है।

6.2.40

असम्यग्दर्शने शान्ते मिथ्याभ्रमकरात्मनि । उदिते परमादित्ये परमार्थैकदर्शने ॥ ४० ॥

asamygadarśane śānte mithyābhramakarātmani | udite paramāditye paramārthaikadarśane || 40 ||

Wrong seeing, whose very nature is to breed false confusion, grows quiet, and the supreme sun of seeing the one highest truth rises.

गलत नज़रिया, जिसका स्वभाव झूठा भ्रम पैदा करना है, शांत हो जाता है, और परम सत्य को एक रूप में देखने वाला परम सूरज उदय होता है।

6.2.41

अपुनर्दर्शनायैव दग्धसंशुष्कपर्णवत् । चित्तं विगलितं विद्धि वह्नौ घृतलवं यथा ॥ ४१ ॥

apunardarśanāyaiva dagdhasaṃśuṣkaparṇavat | cittaṃ vigalitaṃ viddhi vahnau ghṛtalavaṃ yathā || 41 ||

Know that the mind has melted away, never to be seen again, like a dried-up leaf burnt to nothing, like a drop of ghee melting in fire.

जान लो कि मन इस तरह पिघल गया है कि वह फिर कभी नहीं दिखेगा, जैसे सूखा हुआ पत्ता जलकर राख हो जाए, जैसे घी की बूँद आग में पिघल जाए।

6.2.42

जीवन्मुक्ता महात्मानो ये परावरदर्शिनः । तेषां या चित्तपदवी सा सत्त्वमिति कथ्यते ॥ ४२ ॥

jīvanmuktā mahātmāno ye parāvaradarśinaḥ | teṣāṃ yā cittapadavī sā sattvamiti kathyate || 42 ||

Great souls who are free while still alive, who see both the highest and the lowest, their state of mind is, in truth, called sattva, pure being.

जो महान आत्माएँ जीते-जी मुक्त हो चुकी हैं, जो ऊँच और नीच दोनों को देखती हैं, उनके मन की जो अवस्था है, उसे सत्त्व यानी शुद्ध सत्ता कहा जाता है।

6.2.43

जीवन्मुक्तशरीरेषु वासना व्यवहारिणी । न चित्तनाम्नी भवति सा हि सत्त्वपदं गता ॥ ४३ ॥

jīvanmuktasharīreṣu vāsanā vyavahāriṇī | na cittanāmnī bhavati sā hi sattvapadaṃ gatā || 43 ||

In the bodies of those who are free while alive, the trace of habit that still carries on their daily life is no longer called mind, it has passed into the state called sattva.

जो जीते-जी मुक्त हैं, उनके शरीर में जो पुरानी आदत रोज़मर्रा का काम चलाती है, उसे अब मन नहीं कहा जाता, वह सत्त्व की अवस्था में जा चुकी है।

6.2.44

निश्चेतसो हि तत्त्वज्ञा नित्यं समपदे स्थिताः । लीलया प्रभ्रमन्तीह सत्त्वसंस्थितिहेलया ॥ ४४ ॥

niścetaso hi tattvajñā nityaṃ samapade sthitāḥ | līlayā prabhramantīha sattvasaṃsthitihelayā || 44 ||

Those who know the truth have no ordinary mind left, they stay always in a state of perfect evenness. In this world they move about as if at play, resting easily in that state of pure being.

जो सच को जान चुके हैं उनका सामान्य मन नहीं रहता, वे सदा एक-सी शांत दशा में टिके रहते हैं। वे इस संसार में मानो खेलते हुए घूमते हैं, सत्त्व की उस अवस्था में सहज बने रहकर।

6.2.45

शान्ता व्यवहरन्तोऽपि सत्त्वस्थाः संयतेन्द्रियाः । नित्यं पश्यन्ति तज्ज्योतिर्न द्वैतैक्येन वासना ॥ ४५ ॥

śāntā vyavaharanto'pi sattvasthāḥ saṃyatendriyāḥ | nityaṃ paśyanti tajjyotirna dvaitekyena vāsanā || 45 ||

Though they act in the world, they stay peaceful, resting in that pure being, their senses under control. They always see that one light, with no lingering habit of thinking in terms of two or one.

वे संसार में काम करते हुए भी शांत रहते हैं, सत्त्व में टिके रहते हैं, उनकी इंद्रियाँ वश में रहती हैं। वे सदा उस एक रोशनी को देखते हैं, बिना यह सोचे कि यह दो है या एक।

6.2.46

अन्तर्मुखतया सर्वं चिद्वह्नौ त्रिजगत्तृणम् । जुह्वतोऽन्तर्निवर्तन्ते मुनेश्चित्तादिविभ्रमाः ॥ ४६ ॥

antarmukhatayā sarvaṃ cidvahnau trijagattṛṇam | juhvato'ntarnivartante muneścittādivibhramāḥ || 46 ||

By turning inward, and offering up the three worlds like straw into the fire of pure consciousness, the sage finds every delusion of the mind and its kin dying away within him.

भीतर की ओर मुड़कर, तीनों लोकों को घास-फूस की तरह चेतना की आग में अर्पित करते हुए, मुनि के भीतर मन और उससे जुड़ी हर भ्रांति शांत हो जाती है।

6.2.47

विवेकविशदं चेतः सत्त्वमित्यभिधीयते । भूयः फलति नो मोहं दग्धबीजमिवाङ्कुरम् ॥ ४७ ॥

vivekaviśadaṃ cetaḥ sattvamityabhidhīyate | bhūyaḥ phalati no mohaṃ dagdhabījamivāṅkuram || 47 ||

The mind made clear by discernment is called sattva. It never again bears the fruit of delusion, just as a burnt seed never sends up a shoot.

विवेक से जो मन साफ़ हो गया है, उसे सत्त्व कहा जाता है। वह फिर कभी मोह का फल नहीं देता, जैसे जला हुआ बीज फिर अंकुर नहीं देता।

6.2.48

यावत्सत्त्वं विमूढान्तः पुनर्जननधर्मिणी । चित्तशब्दाभिधानोक्ता विपर्यस्यति बोधतः ॥ ४८ ॥

yāvatsattvaṃ vimūḍhāntaḥ punarjananadharmiṇī | cittaśabdābhidhānoktā viparyasyati bodhataḥ || 48 ||

As long as this being-stuff stays confused within and still carries the nature that leads to rebirth, it is called by the name mind, through true awakening it turns the other way.

जब तक यह सत्त्व भीतर से भ्रमित रहता है और पुनर्जन्म देने वाला स्वभाव रखता है, तब तक इसे मन नाम से पुकारा जाता है, सच्चे बोध से यह पलट जाता है।

6.2.49

प्राप्तप्राप्यो भवान्नाम सत्त्वभावमुपागतम् । चित्तं ज्ञानाग्निना दग्धं न भूयः परिरोहति ॥ ४९ ॥

prāptaprāpyo bhavānnāma sattvabhāvamupāgatam | cittaṃ jñānāgninā dagdhaṃ na bhūyaḥ parirohati || 49 ||

You, truly, have reached what was to be reached, your mind has come to rest in the state of pure being. Burnt by the fire of knowledge, it will never sprout again.

तुमने सच में वह पा लिया है जो पाने योग्य था, तुम्हारा मन सत्त्व की अवस्था में जा टिका है। ज्ञान की आग से जल जाने के बाद, वह फिर कभी अंकुरित नहीं होगा।

6.2.50

संरोहतीषणाविद्धं यथा परशुनाग्निना । न तु ज्ञानाग्निनिर्दग्धं प्रबोधविशदं मनः ॥ ५० ॥

saṃrohatīṣaṇāviddhaṃ yathā paraśunāgninā | na tu jñānāgninirdagdhaṃ prabodhaviśadaṃ manaḥ || 50 ||

What is still pierced by craving grows back, even if cut by an axe or burnt by fire. But the mind burnt by the fire of knowledge, made clear by true awakening, does not grow back.

जो अभी तक चाह से बिंधा हुआ है, वह कुल्हाड़ी से काटे जाने पर या आग से जलाए जाने पर भी फिर उग आता है। पर जो मन ज्ञान की आग से जल चुका है और सच्चे बोध से निर्मल हो गया है, वह फिर नहीं उगता।

6.2.51

ब्रह्मबृंहैव हि जगज्जगच्च ब्रह्मबृंहणम् । विद्यते नानयोर्भेदश्चिद्घनब्रह्मणोरिव ॥ ५१ ॥

brahmabṛṃhaiva hi jagajjagacca brahmabṛṃhaṇam | vidyate nānayorbhedaścidghanabrahmaṇoriva || 51 ||

The world is truly nothing but Brahman spread out, and this spreading out is itself Brahman becoming the world. Between the two there is no difference at all, just as there is no difference between the dense mass of pure consciousness and Brahman.

यह संसार असल में ब्रह्म का ही फैलाव है, और यह फैलाव ही ब्रह्म का संसार बनना है। इन दोनों में कोई भेद नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे सघन चेतना और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है।

6.2.52

चिदन्तरस्ति त्रिजगन्मरिचे तीक्ष्णता यथा । नातश्चिज्जगती भिन्ने तस्मात्सदसती मुधा ॥ ५२ ॥

cidantarasti trijaganmarice tīkṣṇatā yathā | nātaścijjagatī bhinne tasmātsadasatī mudhā || 52 ||

Consciousness is inside the three worlds the way sharpness is inside a peppercorn. So consciousness and the world are not two separate things, calling one real and the other unreal, as if they were different, is pointless.

चेतना तीनों लोकों के भीतर वैसे ही है जैसे तीखापन काली मिर्च के भीतर होता है। इसलिए चेतना और संसार दो अलग चीज़ें नहीं हैं, एक को सच और दूसरे को झूठ कहकर अलग बताना बेकार है।

6.2.53

शब्दशब्दार्थसंकेतवासनेह न संविदा । चिद्व्योमत्वादुभे भातस्त्यजातः सदसन्मती ॥ ५३ ॥

śabdaśabdārthasaṃketavāsanenaha na saṃvidā | cidvyomatvādubhe bhātastyajātaḥ sadasantī || 53 ||

Here, the fixed meaning that words and their conventions carry does not reach pure awareness itself. Because awareness is like open space, both existing and not existing simply appear in it, they are only ideas, never truly born.

यहाँ शब्दों और उनके तय किए हुए अर्थ शुद्ध चेतना तक नहीं पहुँचते। चेतना आकाश जैसी होने के कारण, होना और न होना, ये दोनों बस उसमें दिखाई देते हैं, ये केवल विचार हैं, असल में कभी जन्मे ही नहीं।

6.2.54

अचिन्मयत्वान्नासि त्वं स्वात्मा किमिव रोदिषि । अचिन्मयत्वे जगतामभावे कल्पनं कुतः ॥ ५४ ॥

acinmayatvānnāsi tvaṃ svātmā kimiva rodiṣi | acinmayatve jagatāmabhāve kalpanaṃ kutaḥ || 54 ||

It is not conscious, so it is not your true self, why do you weep over it as if it were you? And if everything were mere unconscious matter, with no real worlds at all, where would the very idea of a world come from?

वह चेतन नहीं है, इसलिए वह तुम्हारा असली आप नहीं है, तुम उसके लिए ऐसे क्यों रोते हो जैसे वह तुम ही हो? और अगर सब कुछ केवल जड़ पदार्थ ही होता, कोई सच्चा संसार होता ही नहीं, तो संसार का यह खयाल आता ही कहाँ से?

6.2.55

चिन्मयं चेत्सदा सर्वं तच्चित्त्वं प्रविचारय । शुद्धं सत्त्वमनाद्यन्तं तत्राङ्ग कलना कुतः ॥ ५५ ॥

cinmayaṃ cetsadā sarvaṃ taccittvaṃ pravicāraya | śuddhaṃ sattvamanādyantaṃ tatrāṅga kalanā kutaḥ || 55 ||

If everything is always made of pure consciousness, then look closely at that very nature of consciousness. It is pure being, without beginning or end, in that, dear one, how could there be any division at all?

अगर सब कुछ सदा चेतना से बना है, तो उस चेतना के स्वभाव को ध्यान से देखो। वह शुद्ध सत्ता है, जिसका न आरंभ है न अंत, उसमें, हे प्रिय, भेद कहाँ से आएगा?

6.2.56

चिदात्मासि निरंशोऽसि पारावारविवर्जितः । रूपं स्मर निजं स्फारं माऽस्मृत्या संमितो भव ॥ ५६ ॥

cidātmāsi niraṃśo'si pārāvāravivarjitaḥ | rūpaṃ smara nijaṃ sphāraṃ mā'smṛtyā saṃmito bhava || 56 ||

You are the very self of consciousness, without parts, beyond every shore, far or near. Remember your own vast true form, do not let forgetting shrink you down and measure you into limits.

तुम स्वयं चेतना हो, अखंड हो, हर किनारे से परे हो, चाहे वह दूर हो या पास। अपने असली विशाल स्वरूप को याद रखो, भूलकर अपने आप को छोटी सीमाओं में मत बांधो।

6.2.57

तां स्वसत्तां गतः सर्वमसर्वं भावयोदयी । तादृग्रूपोऽसि शान्तोऽसि चिदसि ब्रह्मरूप्यसि ॥ ५७ ॥

tāṃ svasattāṃ gataḥ sarvamasarvaṃ bhāvayodayī | tādṛgrūpo'si śānto'si cidasi brahmarūpyasi || 57 ||

Having reached your own true being, see this whole world, the everything, as not truly everything, o one who has awakened. You are of that very form, you are at peace, you are consciousness itself, you are Brahman itself.

अपने सच्चे स्वरूप को पाकर, हे जागे हुए, इस सब कुछ को सच में सब कुछ मत समझो। तुम वैसे ही स्वरूप वाले हो, तुम शांत हो, तुम चेतना हो, तुम स्वयं ब्रह्म-स्वरूप हो।

6.2.58

चिच्छिलोदरमेवासि नासि नानास्यथाप्यसि । योसि सोसि न सोसीव सदस्यसदसि स्वभाः ॥ ५८ ॥

cicchilodaramevāsi nāsi nānāsyathāpyasi | yosi sosi na sosīva sadasyasadasi svabhāḥ || 58 ||

You are indeed the solid core of consciousness itself, you are not many, and yet you are other than even that. Whatever you are, that you are, you are not what you seem to be, you are being, you are non-being, and you shine by your own light.

तुम असल में चेतना के ठोस मूल हो, तुम अनेक नहीं हो, फिर भी तुम इससे भी कुछ और हो। जो तुम हो, वही तुम हो, तुम वैसे नहीं हो जैसे दिखते हो, तुम सत् हो, तुम असत् हो, और तुम अपने ही उजाले से चमकते हो।

6.2.59

यः पदार्थविशेषोऽन्तर्न त्वं न ह्येव सोऽस्ति ते । तदस्यतदसि स्वस्थश्चिद्घनात्मन्नमोऽस्तु ते ॥ ५९ ॥

yaḥ padārthaviśeṣo'ntarnā tvaṃ na hyeva so'sti te | tadasya tadasi svasthaścidghnātmannamo'stu te || 59 ||

Whatever particular thing seems to appear within is not you, truly, none of it exists as far as you are concerned. What lies at the root of that world, that is what you are, ever resting in yourself. Salutation to you, o self who is the one dense mass of consciousness.

जो कुछ भी खास चीज़ भीतर दिखाई देती है, वह तुम नहीं हो, सच तो यह है कि तुम्हारे लिए वह है ही नहीं। उस संसार की जड़ में जो है, वही तुम हो, सदा अपने ही आप में टिके हुए। हे सघन चेतना रूप आत्मा, तुम्हें नमस्कार है।

6.2.60

आद्यन्तवर्जितविशालशिलान्तरालसंपीडचिद्घनवपुर्गगनामलस्त्वम् । स्वस्थो भवाजठरपल्लवकोशलेखा
लीलास्थिताखिलजगज्जय ते नमस्ते ॥ ६० ॥

ādyantavarjitaviśālaśilāntarālasaṃpīḍacidghnavapurgaganāmalastvam | svastho bhavājaṭharapallavakośalekhā līlāsthitākhilajagajjaya te namaste || 60 ||

You, whose very body is the dense mass of consciousness, without beginning or end, filling even the space between vast rocks, pure and stainless like the open sky. Rest in your own true self. This whole universe is but a rootless sprout within you, standing only by your play. Victory to you. Salutation to you.

तुम, जिसका शरीर चेतना का सघन रूप है, जिसका न आरंभ है न अंत, जो विशाल चट्टानों के बीच की जगह में भी भरा हुआ है, आकाश जैसा निर्मल और शुद्ध। अपने ही सच्चे आप में टिके रहो। यह पूरा संसार तुम्हारे भीतर बिना जड़ का एक अंकुर मात्र है, जो तुम्हारी लीला से ही टिका है। तुम्हारी जय हो। तुम्हें नमस्कार है।

Chapter 3

6.3.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । भाविभूरितरङ्गाणां पयोवृन्दमिवाम्बुधौ । या चिद्वहत्यनन्तानि जगन्त्यनघ सो भवान् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | bhāvibhūritaraṅgāṇāṃ payovṛndamivāmbudhau | yā cidvahatyānantāni jagantyanagha so bhavān || 1 ||

Sri Vasishtha said: Like the ocean holding within it the many waves still to rise, the awareness that carries countless worlds — O sinless one, that awareness is you.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जैसे समुद्र अपने भीतर उठने वाली अनगिनत लहरों को समेटे रहता है, वैसे ही जो चेतना असंख्य लोकों को धारण करती है, हे निष्पाप, वह चेतना तुम ही हो।

6.3.2

भव भावनया मुक्तो भावाभावविवर्जितः । चिदात्मन्संस्थिताः केव वद ते वासनादयः ॥ २ ॥

bhava bhāvanayā mukto bhāvābhāvavivarjitaḥ | cidātmansaṃsthitāḥ keva vada te vāsanādayaḥ || 2 ||

Be free through right understanding, beyond both what exists and what does not. Tell me — resting in the self which is consciousness, what are your impressions and habits really like?

सही समझ से मुक्त हो जाओ, जो है और जो नहीं है, दोनों से परे। मुझे बताओ, चेतना रूपी आत्मा में टिके रहते हुए तुम्हारे संस्कार और आदतें असल में कैसी हैं?

6.3.3

जीवोऽयं वासनादीदमिति चित्कचति स्वतः । इतरोक्त्यर्थयोरत्र कः प्रसङ्गोऽङ्ग कथ्यताम् ॥ ३ ॥

jīvo'yaṃ vāsanādīdamiti citkacati svataḥ | itaroktyarthayoratra kaḥ prasaṅgo'ṅga kathyatām || 3 ||

Consciousness itself, by its own nature, shines forth as this is a living being, and these are its impressions and so on. Dear one, what real connection is there here between that other statement and its meaning? Explain it.

चेतना अपने आप ही यह रूप लेकर चमकती है कि यह एक जीव है, और ये उसके संस्कार वगैरह हैं। प्रिय, इस दूसरी बात और उसके अर्थ के बीच यहाँ सच में क्या संबंध है? समझाओ।

6.3.4

महातरङ्गगम्भीरभासुरात्मचिदर्णवः । रामाभिधोर्मिस्तिमितः समसौम्योऽसि व्योमवत् ॥ ४ ॥

mahātaraṅgagambhīrabhāsurātmacidarṇavaḥ | rāmābhidhor mistimitaḥ samasau myo'si vyomavat || 4 ||

You are an ocean of consciousness, deep and shining with great waves, yet the wave called Rama in you has grown still. You are calm and gentle like the sky.

तुम चेतना के एक सागर हो, गहरे और बड़ी-बड़ी लहरों से चमकते हुए, फिर भी तुम्हारे भीतर राम नाम की लहर शांत हो चुकी है। तुम आकाश की तरह शांत और सौम्य हो।

6.3.5

यथा न भिन्नमनलादौष्ण्यं सौगन्ध्यमम्बुजात्। काष्ण्यं कज्जलतः शौक्ल्यं हिमान्माधुर्यमिक्षुतः ॥ ५ ॥

yathā na bhinnamanalādauṣṇyaṃ saugandhyamambujāt | kārṣṇyaṃ kajjalataḥ śauklyaṃ himānmādhuryamikṣutaḥ || 5 ||

Heat is not separate from fire. Fragrance is not separate from the lotus. Blackness is not separate from soot. Whiteness is not separate from snow. Sweetness is not separate from sugarcane.

गर्मी आग से अलग नहीं है। खुशबू कमल से अलग नहीं है। कालापन कालिख से अलग नहीं है। सफेदी बर्फ से अलग नहीं है। मिठास गन्ने से अलग नहीं है।

6.3.6

आलोकश्च प्रकाशाङ्गादनुभूतिस्तथा चितेः। जलाद्वीचिर्यथाऽभिन्ना चित्स्वभावात्तथा जगत् ॥ ६ ॥

ālokaśca prakāśāṅgādanubhūtistathā citeḥ | jalādvīciryathā'bhinnā cittasvabhāvāttathā jagat || 6 ||

Light is not separate from what shines, and felt experience is not separate from consciousness. Just as a wave is not separate from water, so the world is not separate from the nature of consciousness.

प्रकाश उस चमकती चीज़ से अलग नहीं है, और अनुभव चेतना से अलग नहीं है। जैसे लहर पानी से अलग नहीं है, वैसे ही यह जगत चेतना के स्वभाव से अलग नहीं है।

6.3.7

चितो न भिन्नोऽनुभवो भिन्नो नानुभवादहम्। न मत्तो भिद्यते जीवो न जीवाद्भिद्यते मनः ॥ ७ ॥

cito na bhinno'nubhavo bhinno nānubhavādaham | na matto bhidyate jīvo na jīvādbhidyate manaḥ || 7 ||

Felt experience is not separate from consciousness, and I am not separate from felt experience. The individual self is not separate from me, and the mind is not separate from the individual self.

अनुभव चेतना से अलग नहीं है, और मैं अनुभव से अलग नहीं हूँ। जीव मुझसे अलग नहीं है, और मन जीव से अलग नहीं है।

6.3.8

मनसो नेन्द्रियं भिन्नं पृथग्देहश्च नेन्द्रियात्। न शरीराज्जगद्भिन्नं जगतो नान्यदस्ति हि ॥ ८ ॥

manaso nendriyaṃ bhinnaṃ pṛthagdehaśca nendriyāt | na śarīrājjagadbhinnaṃ jagato nānyadasti hi || 8 ||

The senses are not separate from the mind, and the body is not separate from the senses. The world is not separate from the body, and nothing else exists apart from the world.

इंद्रियाँ मन से अलग नहीं हैं, और शरीर इंद्रियों से अलग नहीं है। जगत शरीर से अलग नहीं है, और जगत के अलावा कुछ और है ही नहीं।

6.3.9

एवं प्रवर्तितमिदं महच्चक्रमिदं चिरम्। नच प्रवर्तितं किंचिन्न च शीघ्रं च नो चिरम् ॥ ९ ॥

evaṃ pravartitamidaṃ mahaccakramidaṃ ciram | naca pravartitaṃ kiñcinna ca śīghraṃ ca no ciram || 9 ||

So this great wheel has kept turning for a long age. Yet nothing has really been set moving at all — there is no fastness in it and no long time either.

इस तरह यह बड़ा चक्र लंबे समय से घूमता आया है। फिर भी असल में कुछ भी चलाया नहीं गया है — इसमें न कोई तेज़ी है और न कोई लंबा समय।

6.3.10

स्ववेदनमनन्तं च सर्वमेवमखण्डितम्। विद्यते व्योमनि व्योम न कस्मिंश्चिन्न किंचन ॥ १० ॥

svavedanamanantaṃ ca sarvamevamakhṇḍitam | vidyate vyomani vyoma na kasmiṃścinnakiṃcana || 10 ||

One's own awareness is endless, and everything, in this way, is whole and undivided. It is like sky resting within sky — it is not located in anything, and it is not any separate thing.

अपनी चेतना अनंत है, और इस तरह सब कुछ अखंड और पूरा है। यह मानो आकाश के भीतर आकाश हो — यह न किसी में स्थित है, और न ही यह कोई अलग चीज़ है।

6.3.11

शून्यं शून्ये समुच्छूनं ब्रह्म ब्रह्मणि बृंहितम्। सत्यं विजृम्भते सत्ये पूर्णे पूर्णमिव स्थितम् ॥ ११ ॥

śūnyaṃ śūnye samucchūnaṃ brahma brahmaṇi bṛṃhitam | satyaṃ vijṛmbhate satye pūrṇe pūrṇamiva sthitam || 11 ||

Emptiness swells within emptiness. Brahman grows large within Brahman. The real unfolds within the real. Fullness stands as if full within fullness.

शून्यता शून्यता में फैलती है। ब्रह्म ब्रह्म में बड़ा होता है। सत्य सत्य में प्रकट होता है। पूर्णता मानो पूर्णता में पूर्ण होकर टिकी है।

6.3.12

रूपालोकमनस्कारान्कुर्वन्नपि न किंचन। ज्ञः करोत्यनुपादेयान्न ज्ञस्यैव हि कर्तृता ॥ १२ ॥

rūpālokamanaskārānkurvannapi na kiṃcana | jñāḥ karotyanupādeyānna jñasyaiva hi kartṛtā || 12 ||

Even while giving rise to forms, sights and thoughts, the knowing self does nothing at all. These things are not really its own to hold, for the knowing self has no true doership.

रूप, दृश्य और विचार पैदा करते हुए भी ज्ञानी आत्मा कुछ नहीं करती। ये चीज़ें असल में उसकी अपनी पकड़ने की नहीं हैं, क्योंकि ज्ञानी आत्मा में सच्चा कर्तापन है ही नहीं।

6.3.13

यदुपादेयबुद्ध्या च तद्दुःखाय सुखाय ते। भावाभावेन नादेयमकर्तृ सुखदुःखयोः ॥ १३ ॥

yadupādeyabuddhyā ca taddduḥkhāya sukhāya te | bhāvābhāvena nādeyamakartṛ sukhaduḥkhayoḥ || 13 ||

Whatever you regard as something to hold onto becomes a cause of your pain or your pleasure. But whether it exists or not, it is truly nothing to hold onto — and one who does nothing has no share in pleasure and pain.

जिस चीज़ को तुम पकड़ने लायक समझते हो, वही तुम्हारे दुख या सुख का कारण बन जाती है। पर वह चीज़ हो या न हो, असल में पकड़ने लायक है ही नहीं — और जो कुछ करता ही नहीं, उसका सुख-दुख में कोई हिस्सा नहीं।

6.3.14

यथा नानाप्यनानैव खं खे खानीति वाग्गणः। सार्थकोऽप्यतिशून्यात्मा तथात्मजगतोः क्रमः ॥ १४ ॥

yathā nānāpyanānaiva khaṃ khe khānīti vāggaṇaḥ | sārthako'pyatiśūnyātmā tathātmajagatoḥ kramḥ || 14 ||

Just as the words sky, in the sky, and skies seem to be many but are really not different — a set of words that, though meaningful, point to something with no real division in it — so it is with the relation between the self and the world.

जैसे आकाश, आकाश में, और आकाशों — ये शब्द अनेक लगते हैं पर असल में अलग-अलग नहीं हैं, यह शब्दों का समूह अर्थपूर्ण होते हुए भी ऐसी चीज़ की ओर इशारा करता है जिसमें सच में कोई भेद नहीं — वैसे ही आत्मा और जगत का रिश्ता है।

6.3.15

अन्तर्व्योमामलो बाह्ये सम्यगाचारचञ्चुरः । हर्षामर्षविकारेषु काष्ठलोष्टसमस्थितिः ॥ १५ ॥

antarvyomāmalo bāhye samyagācāracañcuraḥ | harṣāmarṣavikāreṣu kāṣṭhaloṣṭasamasthitiḥ || 15 ||

Within, he is as pure as clear space. Outwardly, he is active and moves correctly through his duties. Amid the changes of joy and anger, he stays as still as a piece of wood or a clod of earth.

भीतर से वह साफ आकाश जैसा निर्मल है। बाहर से वह अपने कर्तव्यों में सही ढंग से सक्रिय रहता है। खुशी और गुस्से के बदलावों के बीच वह लकड़ी के टुकड़े या मिट्टी के ढेले जैसा स्थिर रहता है।

6.3.16

य एवातितरां शत्रुः सत्वरं मारणोद्यतः । तमेवाकृत्रिमं मित्रं यः पश्यति स पश्यति ॥ १६ ॥

ya evātitarāṃ śatruḥ satvaraṃ māraṇodyataḥ | tamevākṛtrimam mitraṃ yaḥ paśyati sa paśyati || 16 ||

The one who looks at his very worst enemy — the one in a hurry to kill him — and sees in him a true and genuine friend, that one truly sees.

जो अपने सबसे बड़े दुश्मन को — जो उसे मार डालने की जल्दी में लगा है — उसी में एक सच्चा और असली दोस्त देख लेता है, वही सच में देखता है।

6.3.17

समूलकाषं कषति नदीतट इव द्रुमम् । यः सौहृदं मत्सरं च स हर्षामर्षदोषहा ॥ १७ ॥

samūlakāṣaṃ kaṣati nadītaṭa iva drumaṃ | yaḥ sauhṛdaṃ matsaraṃ ca sa harṣāmarṣadoṣahā || 17 ||

As a riverbank erodes a tree, roots and all, so the one who wears away both fondness and envy destroys the faults of joy and anger.

जैसे नदी का किनारा किसी पेड़ को जड़ सहित काट देता है, वैसे ही जो अपने भीतर से स्नेह और ईर्ष्या दोनों को मिटा देता है, वह खुशी और गुस्से के दोषों को भी नष्ट कर देता है।

6.3.18

रागद्वेषविकाराणां स्वरूपं चेन्न भाव्यते । ततः सन्तोऽप्यसद्रूपाः सेविता अप्यसेविताः ॥ १८ ॥

rāgadveṣavikārāṇāṃ svarūpaṃ cennabhāvyate | tataḥ santo'pyasadrūpāḥ sevitā apyasevitāḥ || 18 ||

If you do not dwell on the true nature of the disturbances of liking and disliking, then even though they are present, they are as good as unreal, and even though you act on them, it is as if you never did.

अगर तुम पसंद और नापसंद की इन उथल-पुथल की असली प्रकृति पर ध्यान नहीं दोगे, तो वे मौजूद होते हुए भी न होने के बराबर हैं, और उन पर अमल करते हुए भी ऐसा है जैसे तुमने कुछ किया ही न हो।

6.3.19

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते । हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥ १९ ॥

yasya nāhaṃkṛto bhāvo buddhiryasya na lipyate | hatvāpi sa imāṃllokānnahan ti na nibadhyate || 19 ||

The one who has no sense of I am the doer, whose intellect is never stained — even if he kills these people, he does not really kill, and he is not bound by it.

जिसके भीतर मैं कर्ता हूँ का भाव नहीं है, जिसकी बुद्धि कभी दागदार नहीं होती — वह चाहे इन लोगों को मार भी डाले, तो भी असल में वह मारता नहीं, और वह इससे बंधता भी नहीं।

6.3.20

यन्नास्ति तस्य सद्भावप्रतिपत्तिरुदाहृता । मायेति सा परिज्ञानादेव नश्यत्यसंशयम् ॥ २० ॥

yannāsti tasya sadbhāvapratipattirudāhṛtā | māyeti sā parijñānādeva naśyatyasaṃśayam || 20 ||

Taking something that does not exist to be real is called illusion. This illusion is destroyed by right understanding alone — there is no doubt about it.

जो चीज़ है ही नहीं, उसे सच मान लेना ही माया कहलाता है। यह माया सही समझ से ही मिटती है — इसमें कोई शक नहीं।

6.3.21

निःस्नेहदीपवच्छान्तो यस्यान्तर्वासनाभरः । तेन चित्रकृतेनेव जितं ज्ञेनाविकारिणा ॥ २१ ॥

niḥsnehadīpavacchānto yasyāntarvāsanābharaḥ| tena citrakṛteneva jitaṃ jñenāvikāriṇā || 21 ||

The one whose inner burden of desires has become quiet, like a lamp that has run out of oil — that unchanging knower, motionless as a painted figure, has achieved victory.

जिसके भीतर की इच्छाओं का बोझ शांत हो चुका है, जैसे तेल खत्म हो जाने पर दीया बुझ जाता है — वह अपरिवर्तनशील ज्ञानी, चित्र में बने चेहरे जैसा निश्चल, विजयी हो चुका है।

6.3.22

यस्यानुपादेयमिदं समस्तं पदार्थजातं सदसद्दशासु । न दुःखदाहाय सुखाय नैव विमुक्त एवेह सजीव एव ॥ २२ ॥

yasyānupādeyamidaṃ samastaṃ padārthajātaṃ sadasaddaśāsu| na duḥkhadāhāya sukhāya naiva vimukta eveha sajīva eva || 22 ||

The one for whom this whole mass of things, whether they seem real or unreal, is nothing to hold on to — for whom it brings neither the burning pain of sorrow nor pleasure — he is truly liberated while still alive, he alone is such.

जिसके लिए चीज़ों का यह पूरा समूह, चाहे सच लगे या झूठ, पकड़ने लायक कुछ भी नहीं है — जिसके लिए यह न दुख की जलन लाता है और न सुख — वही सच में जीते-जी मुक्त है, वही असली मुक्त पुरुष है।

Chapter 4

6.4.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । मनो बुद्धिरहंकार इन्द्रियादि तथानघ । अचेत्यचिन्मयं सर्वं क्व ते जीवादयः स्थिताः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mano buddhirahaṃkāra indriyādi tathānagha | acetyacinmayaṃ sarvaṃ kva te jīvādayaḥ sthitāḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: Rama, the mind, the intellect, the ego, the senses and the rest - all of this is unconscious, made only of matter. Then where do the individual soul and the rest actually stand?

श्री वसिष्ठ बोले: राम, मन, बुद्धि, अहंकार, इंद्रियाँ और बाकी सब चीज़ें - ये सब बिना चेतना के हैं, सिर्फ़ जड़ पदार्थ से बनी हैं। तो फिर जीव वग़ैरह असल में कहाँ ठहरते हैं?

6.4.2

एकेनैवात्मना दत्ता नानातेयं महात्मना । यथैकेनैव चन्द्रेण तिमिराप्पात्रदर्पणैः ॥ २ ॥

ekenaivātmanā dattā nānāteyaṃ mahātmanā | yathaikenaiva candreṇa timirāppātradarpaṇaiḥ || 2 ||

It is the one Self alone, the great Self, that gives rise to this diversity - just as it is the one moon alone that appears as many, through a diseased eye, through water, through a vessel, and through mirrors.

यह सारी विविधता एक ही आत्मा ने, उस महान आत्मा ने बनाई है - जैसे एक ही चाँद आँख की बीमारी से, पानी से, बर्तन से और शीशों से कई रूपों में दिख जाता है।

6.4.3

भोगतृष्णाविषावेशो यदैवोपशमं गतः । तदैवमस्तमज्ञानमान्ध्यं ध्वान्तक्षयादिव ॥ ३ ॥

bhogatṛṣṇāviṣāveśo yadaivopaśamaṃ gataḥ | tadaivamastamajñānamāndhyaṃ dhvāntakṣayādiva || 3 ||

The instant the poisonous grip of craving for pleasure calms down, the blindness of ignorance sets at once, the way darkness is destroyed.

जिस पल भोग की तृष्णा का ज़हरीला असर शांत होता है, उसी पल अज्ञान का अंधापन ऐसे मिट जाता है जैसे अंधेरा मिट जाता है।

6.4.4

अध्यात्मशास्त्रमन्त्रेण तृष्णाविषविषूचिकाक्षीयते भावितेनान्तः शरदा मिहिका यथा ॥ ४ ॥

adhyātmaśāstramantreṇa tṛṣṇāviṣaviṣūcikākṣīyate bhāvitenāntaḥ śaradā mihikā yathā || 4 ||

When the teaching of the science of the Self is cultivated within, the poisonous epidemic of craving wastes away, just as mist is dispelled by autumn.

जब आत्मा की विद्या को मन में गहराई से बसाया जाता है, तो तृष्णा की ज़हरीली बीमारी वैसे ही घुल जाती है जैसे शरद ऋतु में कोहरा छँट जाता है।

6.4.5

मौर्ख्ये क्षीणे क्षतं विद्धि चित्तं राम सबान्धवम्। विलीनाम्बुधरे व्योम्नि जाड्यं शाम्यत्यविघ्नतः ॥ ५ ॥

maurkhye kṣīṇe kṣataṃ viddhi cittaṃ rāma sabāndhavam | vilīnāmbudhare vyomni jāḍyaṃ śāmyatyavighnataḥ || 5 ||

Know this, Rama: when folly wastes away, the mind is struck down together with all its kin, the way the sky's dullness clears easily once the cloud in it has melted away.

जान लो राम, जब मूर्खता घटती है, तो मन अपने सब रिश्तेदारों समेत टूट जाता है - जैसे बादल घुल जाने पर आकाश की धुंधलाहट बिना किसी रुकावट के मिट जाती है।

6.4.6

अचित्तत्वं गते चित्ते क्षीयते वासनाभ्रमः। हारमुक्तासमावेशश्छिन्ने तन्ताविवानघ ॥ ६ ॥

acittatvaṃ gate citte kṣīyate vāsanābhraḥ | hāramuktāsamāveśaśchinne tantāviva anagha || 6 ||

When the mind reaches the state of no-mind, the confusion of its latent desires wastes away - like the pearls of a necklace coming apart when the thread is cut, Rama.

जब मन, मन न रहकर बेमन हो जाता है, तो उसकी वासनाओं का भ्रम मिट जाता है - जैसे धागा कट जाने पर हार के मोती बिखर जाते हैं, राम।

6.4.7

रघुनाथ विघाताय शास्त्रार्थं भावयन्ति ये। कृमिकीटत्वयोग्याय चेतसा संमिलन्ति ते ॥ ७ ॥

raghunātha vighātāya śāstrārthaṃ bhāvayanti ye | kṛmikīṭatvayogyāya cetasā saṃmilanti te || 7 ||

Rama, those who use the meaning of the scriptures to cause harm - their own minds bind them to a state fit only for worms and insects.

राम, जो लोग शास्त्रों के अर्थ का इस्तेमाल नुक़सान पहुँचाने के लिए करते हैं, वे अपने मन से ख़ुद को कीड़े-मकोड़ों जैसी योनि के लायक बना लेते हैं।

6.4.8

नवतामरसाकारकान्तलोचनलोलता। शान्ते मौर्ख्येऽक्षता वाते चलता सरसो यथा ॥ ८ ॥

navatāmrasākārakāntalocanalolatā | śānte maurkhye'kṣatā vāte calatā saraso yathā || 8 ||

The restlessness of your beautiful eyes, shaped like fresh lotuses, stayed even when your folly had calmed - like a lake that goes on stirring in the wind.

ताज़े कमल जैसी तुम्हारी सुंदर आँखों की चंचलता मूर्खता शांत होने पर भी बनी रही - जैसे हवा में झील हिलती ही रहती है।

6.4.9

स्थिरतामुपयातोऽसि भावाभावविवर्जितः। पदे परमविस्तारे नभसीव प्रभञ्जनः ॥ ९ ॥

sthiratāmupayāto'si bhāvābhāvavivarjitaḥ | pade paramavistāre nabhasīva prabhañjanaḥ || 9 ||

You have attained steadiness, free from both being and non-being, in the vast, supreme state - like a storm-wind stilled in the sky.

अब तुम स्थिरता को पा चुके हो, होने और न होने दोनों से मुक्त, उस परम विशाल पद में - जैसे आकाश में आँधी थम जाती है।

6.4.10

मन्ये मद्वचनैर्बोधमागतोऽसि रघूद्वह । विगताज्ञाननिद्रोऽन्तर्नृपतिः पटहैरिव ॥ १० ॥

manye madvacanairbodhamāgato'si raghūdvaha | vigatājñānanidro'ntarnṛpatiḥ paṭhairiva || 10 ||

I think, Rama, that you have come to understanding through my words - the sleep of ignorance now gone from within you, like a king woken by the drums.

मुझे लगता है राम, तुम मेरे वचनों से बोध को प्राप्त हो गए हो - जैसे ढोल की आवाज़ से राजा जाग उठता है, वैसे ही तुम्हारे भीतर अज्ञान की नींद टूट गई है।

6.4.11

सामान्ये च लगन्त्येव जने कुलगुरोर्गिरः । अत्युदारमतौ राम न लगन्ति कथं त्वयि ॥ ११ ॥

sāmānye ca lagantyeva jane kulagurorgiraḥ | atyudāramatau rāma na laganti kathaṃ tvayi || 11 ||

Even in an ordinary person, the words of the family guru do take hold - so how, Rama, could they fail to take hold in you, whose mind is so much greater and nobler?

आम आदमी में भी कुलगुरु की बातें असर कर ही जाती हैं - तो राम, तुम में, जिसका मन इतना उदार और महान है, वे असर क्यों नहीं करेंगी?

6.4.12

यत्रोपादेयवाक्यत्वं भावितं स्वेन चेतसा । मद्वचोऽन्तर्विशत्युच्चैस्तप्ते क्षेत्रे यथा पयः ॥ १२ ॥

yatropādeyavākyatvaṃ bhāvitaṃ svena cetasā | madvaco'ntarviśatyuccais tapte kṣetre yathā payaḥ || 12 ||

Where the mind itself has recognized these words as worth taking in, my words sink in deeply - the way water sinks into a sun-baked field.

जहाँ मन ने ख़ुद ही इन बातों को अपनाने लायक़ मान लिया है, वहाँ मेरे वचन गहराई तक उतर जाते हैं - जैसे तपे हुए खेत में पानी उतर जाता है।

6.4.13

वयमिह हि महानुभाव नित्यं कुलगुरवो भवतां रघूद्वहानाम् । मदुदितमिदमाशु धार्यमार्य शुभवचनं हृदि हारवत्त्वयेति ॥ १३ ॥

vayamiha hi mahānubhāva nityaṃ kulaguravo bhavatāṃ raghūdvahānām | maduditamidamāśu dhāryamārya śubhavacanaṃ hṛdi hāravattvayeti || 13 ||

Rama, we have always been the family teachers of you and your whole line of Raghu kings. Let this good word I have spoken be quickly held in your heart like a necklace, Rama.

राम, हम सदा से तुम रघुवंशियों के कुलगुरु रहे हैं। मेरे कहे इस शुभ वचन को जल्दी ही हार की तरह अपने हृदय में धारण कर लो, राम।

Chapter 5

6.5.1

श्रीराम उवाच । अहो अहं गतश्चित्त्वं भवद्वाक्यार्थभावनात् । शान्तं जगज्जालमिदमग्रस्थमपि नाथ मे ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | aho ahaṃ gataścittvaṃ bhavadvākyārthabhāvanāt | śāntaṃ jagajjālamidamagrasthamapi nātha me || 1 ||

Sri Rama said: Ah, from dwelling on the meaning of your words, I have gone beyond my own mind. This web of the world, though it stands right before me, has gone quiet for me, lord.

श्रीराम ने कहा: अहो, आपके वचनों के अर्थ पर मनन करने से मैं अपने मन के पार चला गया हूँ। यह संसार का जाल, मेरे सामने होते हुए भी, मेरे लिए शांत हो गया है, हे स्वामी।

6.5.2

परामन्तः प्रयातोऽस्मि परमात्मनि निर्वृतिम् । दीर्घावग्रहसंतप्तं वृष्ट्येव वसुधातलम् ॥ २ ॥

parāmanthaḥ prayāto'smi paramātmani nirvṛtim | dīrghāvagrahasaṃtaptaṃ vṛṣṭyeva vasudhātalam || 2 ||

I have gone within, to the highest peace, in the supreme self, the way ground scorched by a long drought turns cool under rain.

मैं भीतर की ओर जाकर परमात्मा में सबसे ऊँची शांति को प्राप्त हुआ हूँ, ठीक वैसे ही जैसे लंबे सूखे से झुलसी धरती वर्षा से शीतल हो जाती है।

6.5.3

शाम्यामि शीतलाकारः सुखं तिष्ठामि केवलम् । प्रसादमनुयातोऽहं सरो निर्वारणं यथा ॥ ३ ॥

śāmyāmi śītalākāraḥ sukhaṃ tiṣṭhāmi kevalam | prasādamanuyāto'haṃ saro nirvāraṇaṃ yathā || 3 ||

I am at peace, cool and quiet in my own being; I simply remain happy. I have come to a clear calm, the way a lake settles and turns clean.

मैं शांत हूँ, अपने आप में शीतल और स्थिर हूँ; मैं बस सुखी बना रहता हूँ। मुझे एक साफ़ शांति मिली है, ठीक वैसे ही जैसे कोई झील निथर कर साफ़ हो जाती है।

6.5.4

सम्यक्प्रसन्नमखिलं दिङ्मण्डलमिदं मुने । यथाभूतं प्रपश्यामि निर्नीहारमिवाधुना ॥ ४ ॥

samyakprasannamakhilaṃ diṅmaṇḍalamidaṃ mune | yathābhūtam prapaśyāmi nirnīhāramivādhunā || 4 ||

O sage, this whole circle of the sky has turned perfectly clear. Now I see it exactly as it is, as if the fog has lifted.

हे मुनि, यह पूरा आकाश का घेरा बिल्कुल साफ़ हो गया है। अब मैं इसे वैसा ही देखता हूँ जैसा यह सचमुच है, मानो कोहरा छँट गया हो।

6.5.5

जातोऽस्मि गतसंदेहः शान्ताशामृगतृष्णिकः । रागनीरागनिर्मुक्तो मृष्टजङ्गलशीतलः ॥ ५ ॥

jāto'smi gatasaṃdehaḥ śāntāśāmṛgatṛṣṇikaḥ | rāganīrāganirmukto mṛṣṭajaṅgalaśītalaḥ || 5 ||

I have become one whose doubt is gone, whose mirage of desire has gone still, free from both attachment and non-attachment, cool like a dry, empty land washed clean.

मैं ऐसा हो गया हूँ जिसका संदेह मिट गया है, जिसकी इच्छा का मृगजल शांत हो गया है, जो राग और अराग दोनों से मुक्त है, और जो धुली हुई बंजर भूमि जैसा शीतल है।

6.5.6

आत्मनैवान्तरानन्दं तत्प्राप्तोऽस्म्यन्तवर्जितम्। रसायनरसास्वादो यत्र नाथ तृणायते ॥ ६ ॥

ātmanaivāntarānandaṃ tatprāpto'smyantavarjitam | rasāyanarasāsvādo yatra nātha tṛṇāyate || 6 ||

By my own self I have reached that inner joy, which has no end. Lord, next to it, even the taste of the elixir of life feels like plain grass.

मैंने अपने आप से ही वह भीतरी आनंद पाया है, जिसका कोई अंत नहीं है। हे स्वामी, इसके सामने तो जीवन के अमृत रस का स्वाद भी घास जैसा लगता है।

6.5.7

अद्याहं प्रकृतिस्थोऽस्मि स्वस्थोऽस्मि मुदितोऽस्मि च। लोकारामोऽस्मि रामोऽस्मि नमो मह्यं नमोस्तु ते ॥ ७ ॥

adyāhaṃ prakṛtistho'smi svastho'smi mudito'smi ca | lokārāmo'smi rāmo'smi namo mahyaṃ namostu te || 7 ||

Today I am settled in my own true nature; I am at ease, and I am joyful. I am the joy of the world; I am Rama. Salutation to myself, and salutation to you.

आज मैं अपने सच्चे स्वभाव में स्थिर हूँ; मैं सुखी हूँ, और मैं आनंदित हूँ। मैं संसार का आनंद हूँ; मैं राम हूँ। मुझे नमस्कार, और आपको भी नमस्कार।

6.5.8

ते संशयास्ताः कलनाः सर्वमस्तं गतं मम। रात्रिवेतालसंसारः प्रभात इव भास्करे ॥ ८ ॥

te saṃśayāstāḥ kalanāḥ sarvamastam gataṃ mama | rātrivetālasaṃsāraḥ prabhāta iva bhāskare || 8 ||

Those doubts, those false ideas of mine, all have gone, the way the world of night's ghosts vanishes when the sun rises at dawn.

मेरे वे सारे संदेह, वे झूठी धारणाएँ, सब मिट गई हैं, जैसे रात के भूत-प्रेतों की दुनिया सूरज उगते ही सुबह मिट जाती है।

6.5.9

निर्मले हृदि विस्तीर्णे संपन्ने हिमशीतले। मनो निर्वृतिमायातं सरसी शरदीव मे ॥ ९ ॥

nirmale hṛdi vistīrṇe saṃpanne himaśītale | mano nirvṛtimāyātaṃ sarasī śaradīva me || 9 ||

In a heart grown clear, wide, full, and cool as snow, my mind has come to peace, like a lake in autumn.

एक ऐसे हृदय में जो निर्मल, विस्तृत, भरा हुआ और बर्फ़ जैसा शीतल हो गया है, मेरा मन शांति को प्राप्त हुआ है, जैसे शरद ऋतु में कोई झील।

6.5.10

कलङ्क आत्मनः कस्मात्कथं चेत्यादिसंशयः। नूनं निर्मूलतां यातो मृगाङ्काग्रे यथा तमः ॥ १० ॥

kalaṅka ātmanaḥ kasmātkathaṃ cetyādisaṃśayaḥ | nūnaṃ nirmūlatāṃ yāto mṛgāṅkāgre yathā tamaḥ || 10 ||

The doubt that asked why and how the self has a stain, and doubts like it, have surely been torn out by the root, the way darkness vanishes before the moon.

यह संदेह कि आत्मा पर दाग़ क्यों और कैसे है, और ऐसे सब संदेह, जड़ से उखड़ गए हैं, जैसे चाँद के सामने अंधेरा मिट जाता है।

6.5.11

सर्वमात्मैव सर्वत्र सर्वदा भावितात्कृतिः । इदमन्यदिदं चान्यदित्यसत्कलना कुतः ॥ ११ ॥

sarvamātmaiva sarvatra sarvadā bhāvitākṛtiḥ | idamanyadidaṃ cānyadityasatkalanā kutaḥ || 11 ||

Everything, everywhere, always, is the self alone, its nature now seen clearly. So how could the false idea that this is one thing and that is another ever arise?

हर जगह, हर समय, सब कुछ आत्मा ही है, अब इसका स्वरूप साफ़ दिख गया है। तो फिर यह झूठा विचार कि यह कुछ और है और वह कुछ और है, कैसे उठ सकता है?

6.5.12

कोऽभवं प्रागहं तादृक्तृष्णानिगडयन्त्रितः । अन्तरात्मानमेवेति विहसामि विकासवान् ॥ १२ ॥

ko'bhavaṃ prāgahaṃ tādṛktṛṣṇānigaḍayantritaḥ | antarātmānamevaiti vihasāmi vikāsavān || 12 ||

What had I become before, bound in the chains of such craving? Now, grown full and open, I laugh, seeing it was only the inner self all along.

पहले मैं क्या बन गया था, ऐसी तृष्णा की बेड़ियों में जकड़ा हुआ? अब पूरी तरह खिलकर, मैं हँसता हूँ, यह देखकर कि यह सब भीतर की आत्मा ही थी।

6.5.13

आ इदानीं स्मृतं सम्यग्यथैष सकलोऽस्म्यसौ । यस्त्वद्वागमृतापूरस्नातेनायमहं स्थितः ॥ १३ ॥

ā idānīṃ smṛtaṃ samyagyathaiṣa sakalo'smyasau | yastvadvāgamṛtāpūrasnātenāyamahaṃ sthitaḥ || 13 ||

Ah, now I rightly recall that I am that whole self, I who stand here bathed in the flood of the nectar of your words.

अहो, अब मुझे ठीक से याद आ गया है कि मैं वही पूर्ण आत्मा हूँ, मैं जो यहाँ आपके वचनों के अमृत की बाढ़ में नहाकर खड़ा हूँ।

6.5.14

अहो नु विततां भूमिमधिरूढोऽस्मि पावनीम् । इहस्थ एव यत्रार्को न पातालमिव स्थितः ॥ १४ ॥

aho nu vitatāṃ bhūmimadhirūḍho'smi pāvanīm | ihastha eva yatrārko na pātālamiva sthitaḥ || 14 ||

Ah indeed, I have risen onto a vast, purifying ground. Though I remain right here, it is as if I stood in the underworld, where the sun does not reach.

अहो, मैं एक विशाल, पवित्र करने वाली भूमि पर चढ़ गया हूँ। यहीं रहते हुए भी, ऐसा लगता है मानो मैं पाताल में खड़ा हूँ, जहाँ सूरज नहीं पहुँचता।

6.5.15

मह्यं सत्तामुपेताय भावाभावभवार्णवात् । नमो नित्यं नमस्याय जयाम्यात्मात्मनात्मनि ॥ १५ ॥

mahyaṃ sattāmupetāya bhāvābhāvabhavārṇavāt | namo nityaṃ namasyāya jayāmyātmātmanātmani || 15 ||

Eternal salutation to myself, who has reached true being out of the ocean of becoming made of existence and non-existence, ever worthy of salutation. The self triumphs, by the self, within the self.

मुझे सदा नमस्कार है, जो अस्तित्व और अनस्तित्व से बने संसार-सागर से निकलकर सच्चे होने को प्राप्त हुआ, जो सदा नमस्कार के योग्य है। आत्मा ही आत्मा के द्वारा आत्मा में विजयी होती है।

6.5.16

अनुभववशतो हृदब्जकोशे स्फुटमलितां समुपागतेन नाथ। तव वरवचसेह वीतशोकां चिरमुदितां च दशामुपागतोऽस्मि ॥ १६ ॥

anubhavavaśato hṛdabjakośe sphuṭamalitāṃ samupāgatena nātha | tava varavacaseha vītaśokāṃ ciramuditāṃ ca daśāmupāgato'smi || 16 ||

Through the power of direct experience, having come, in the bud of my heart's lotus, to a state grown clear and pure, lord, by your excellent words I have now reached, here, a state free of sorrow and forever joyful.

अनुभव की शक्ति से, अपने हृदय-कमल की कली में एक निर्मल और शुद्ध अवस्था को पाकर, हे स्वामी, आपके उत्तम वचनों से मैं अब यहाँ शोक-रहित और सदा आनंदित अवस्था को प्राप्त हुआ हूँ।

Chapter 6

6.6.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । भूय एव महाबाहो श्रृणु मे परमं वचः । यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | bhūya eva mahābāho śṛṇu me paramaṃ vacaḥ | yatte'haṃ prīyamāṇāya vakṣyāmi hitakāmyayā || 1 ||

Sri Vasishtha said: Listen again, mighty-armed one, to the highest teaching I have for you. I will tell it to you, glad as you are to hear it, because I wish for your good.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे महाबाहु, फिर से मेरी यह सबसे ऊँची बात सुनो। मैं तुम्हारी भलाई चाहकर यह बात तुमसे कहूँगा, क्योंकि तुम इसे सुनने के लिए उत्सुक हो।

6.6.2

भेदमभ्युपगम्यापि श्रृणु बुद्धिविवृद्धये । भवेदल्पप्रबुद्धानामपि नो दुःखिता यथा ॥ २ ॥

bhedamabhyupagamyāpi śṛṇu buddhivivṛddhaye | bhavedalpaprabuddhānāmapi no duḥkhitā yathā || 2 ||

Even if, for now, we agree that there are two separate things, listen anyway, so that your understanding grows, and so that even people of little understanding are not left confused and in pain.

भले ही अभी के लिए हम मान लें कि दो अलग चीज़ें हैं, फिर भी सुनो, ताकि तुम्हारी समझ बढ़े, और कम समझ वाले लोग भी उलझन में पड़कर दुखी न हों।

6.6.3

यस्याज्ञानात्मनोऽज्ञस्य देह एवात्मभावना । उदितेति रुषैवाक्षरिपवोऽभिभवन्ति तम् ॥ ३ ॥

yasyājñānātmano'jñasya deha evātmabhāvanā | uditeti ruṣaivākṣaripavo'bhibhavanti tam || 3 ||

For someone who is ignorant, whose very nature is ignorance, and in whom the thought I am this body has arisen, the senses are his enemies, and they overpower him out of sheer hostility.

जो व्यक्ति अज्ञानी है, जिसका स्वभाव ही अज्ञान है, और जिसमें मैं यह शरीर हूँ यह विचार उठ चुका है, उसके लिए इंद्रियाँ शत्रु हैं, और वे द्वेषवश उस पर हावी हो जाती हैं।

6.6.4

यस्य ज्ञानात्मनो ज्ञस्य सत्येवात्मनि संस्थितिः । संतुष्ट्यैवाक्षसुहृदो न घ्नन्ति तमनिन्दितम् ॥ ४ ॥

yasya jñānātmano jñasya satyevātmani saṃsthitiḥ | saṃtuṣṭyaivākṣasuhṛdo na ghnanti tamaninditam || 4 ||

But for someone who is wise, whose very nature is knowledge, and who stays firmly settled in the true self, the senses are his friends, and out of pure contentment, they do not harm this blameless person.

परन्तु जो व्यक्ति ज्ञानी है, जिसका स्वभाव ही ज्ञान है, और जो सच्चे आत्मा में स्थिर रहता है, उसके लिए इंद्रियाँ मित्र हैं, और संतोषवश वे इस निर्दोष व्यक्ति को कोई हानि नहीं पहुँचातीं।

6.6.5

पदार्थे स्फुरतो यस्य न स्तुतिर्निन्दनादृते । स देहं देहदुःखार्थमादत्ते केन हेतुना ॥ ५ ॥

padārthe sphurato yasya na stutirnindanādṛte | sa dehaṃ dehaduḥkhārthamādatte kena hetunā || 5 ||

For someone who feels the same before every object that appears, who finds no difference between praise and blame, why would he take up a body only to suffer the body's pain? For what reason at all?

जिस व्यक्ति के लिए हर वस्तु के सामने एक जैसा भाव रहता है, जिसे प्रशंसा और निंदा में कोई फ़र्क नहीं लगता, वह शरीर का दुख भोगने के लिए शरीर को क्यों अपनाएगा? आख़िर किस कारण से?

6.6.6

नात्मा शरीरसंबन्धी शरीरमपि नात्मनि । मिथो विलक्षणावेतौ प्रकाशतमसी यथा ॥ ६ ॥

nātmā śarīrasaṃbandhī śarīramapi nātmani | mitho vilakṣaṇāvetau prakāśatamasī yathā || 6 ||

The self has no connection with the body, and the body is not in the self. The two are completely different from each other, like light and darkness.

आत्मा का शरीर से कोई संबंध नहीं है, और शरीर आत्मा में भी नहीं है। ये दोनों एक-दूसरे से पूरी तरह अलग हैं, जैसे प्रकाश और अंधकार।

6.6.7

सर्वैर्भावविकारैस्तु नित्योन्मुक्तस्त्वलेपकः । नात्मास्तमेति भगवान्न चोदेति सदोदितः ॥ ७ ॥

sarvairbhāvavikāraistu nityonmuktastvalepakaḥ | nātmāstameti bhagavānna codeti sadoditaḥ || 7 ||

The self is always free from every change and untouched by anything. This glorious self never sets and never rises, it simply shines, always.

आत्मा हर तरह के बदलाव से सदा मुक्त है और किसी चीज़ से छूती नहीं। यह महान आत्मा न कभी डूबती है, न कभी उगती है, यह बस सदा चमकती रहती है।

6.6.8

जडस्याज्ञस्य तुच्छस्य कृतघ्नस्य विनाशिनः । शरीरकोपलस्यास्य यद्भवत्यस्तु तत्तथा ॥ ८ ॥

jaḍasyājñasya tucchasya kṛtaghnasya vināśinaḥ | śarīrakopalasyāsya yadbhavatyastu tattathā || 8 ||

This body is lifeless, unaware, worthless, ungrateful, and perishable, no more than a stone. Whatever happens to it, let it happen; so be it.

यह शरीर निर्जीव, अचेतन, तुच्छ, कृतघ्न और नाशवान है, बस एक पत्थर जैसा। इसके साथ जो भी हो, होने दो, जैसा हो वैसा हो।

6.6.9

आदत्ते तत्कथं नित्यं चिन्मयत्वं सदोदितम् । ययोरेकपरिज्ञाने जडतैवाऽपरस्थिता ॥ ९ ॥

ādatte tatkathaṃ nityaṃ cinmayatvaṃ sadoditam | yayorekapariñjāne jaḍataivā'parasthitā || 9 ||

Then how could the eternal, ever-shining nature of pure awareness ever take hold of such a thing? When either of these two, the self or the body, is truly known, the other is seen to be nothing but lifeless matter.

फिर यह सदा जागृत, सदा चमकती हुई चेतना ऐसी चीज़ को कैसे अपना सकती है? इन दोनों में से, आत्मा और शरीर में से, जिसे भी सच में जान लिया जाए, दूसरा केवल निर्जीव पदार्थ ही जान पड़ता है।

6.6.10

तयोः कीदृग्विधा भूता समानसुखदुःखता। यौ समौ समधर्माणौ न कदाचन तौ कथम्॥ १०॥

tayoḥ kīdṛgvidhā bhūtā samānasukhaduḥkhatā | yau samau samadharmāṇau na kadācana tau katham || 10 ||

How could these two share the same pleasure and the same pain, when they are never equal, never alike in nature? How could that be?

ये दोनों एक जैसा सुख और एक जैसा दुख कैसे भोग सकते हैं, जब वे कभी बराबर या एक जैसे स्वभाव के नहीं होते? यह कैसे हो सकता है?

6.6.11

यावप्यसक्तावन्योन्यं मिथः संनमितौ कथम्कथं स्थूलोऽणुरूपः स्यादणुः स्थूलः कथं भवेत्॥ ११॥

yāvapyasaktāvanyonyaṃ mithaḥ saṃnamitau kathamkathaṃ sthūlo'ṇurūpaḥ syādaṇuḥ sthūlaḥ kathaṃ bhavet || 11 ||

And though the two are not really joined to each other, how, then, could they still seem bound together? How could the gross become the subtle, or the subtle become the gross?

और यद्यपि ये दोनों वास्तव में एक-दूसरे से जुड़े नहीं हैं, फिर वे बँधे हुए कैसे लगते हैं? स्थूल, सूक्ष्म कैसे बन सकता है, या सूक्ष्म, स्थूल कैसे बन सकता है?

6.6.12

एकोदये द्वितीयस्य न सत्ता दिनरात्रयोःज्ञानं नाज्ञानतामेति च्छाया नायाति तापताम्॥ १२॥

ekodaye dvitīyasya na sattā dinarātrayoḥjñānaṃ nājñānatāmeti cchāyā nāyāti tāpatām || 12 ||

When one of two things rises, the other is not there at all, as with day and night. Knowledge never turns into ignorance, and shade never turns into heat.

जब दो चीज़ों में से एक होती है, तो दूसरी नहीं होती, जैसे दिन और रात। ज्ञान कभी अज्ञान नहीं बनता, और छाया कभी गर्मी नहीं बनती।

6.6.13

सद्ब्रह्म नासद्भवति विचित्रास्वपि दृष्टिषुमनागपि न संश्लेषः सर्वगस्यापि देहिनः॥ १३॥

sadbrahma nāsadbhavati vicitrāsvapi dṛṣṭiṣumanāgapi na saṃśleṣaḥ sarvagasyāpi dehinaḥ || 13 ||

Brahman, who is real, never becomes unreal, even amid all these different appearances. And though the embodied self reaches everywhere, it has not the slightest contact with anything.

ब्रह्म, जो सत्य है, इन तरह-तरह के दिखावों के बीच भी कभी असत्य नहीं बनता। और यद्यपि यह देही आत्मा सब जगह मौजूद है, फिर भी इसका किसी चीज़ से रत्ती भर भी संपर्क नहीं है।

6.6.14

देहेन देहगस्यापि कमलस्येव वारिणामनागपि न संश्लेषो ब्रह्मणो देहसत्तया॥ १४॥

dehena dehagasyāpi kamalasyeva vāriṇāmanāgapi na saṃśleṣo brahmaṇo dehasattayā || 14 ||

Though it lives within the body, Brahman has no more contact with the body's existence than a lotus has with the water it grows in, not the slightest.

यह ब्रह्म शरीर में रहते हुए भी शरीर के होने से बिलकुल वैसे ही अछूता रहता है जैसे कमल पानी में रहकर भी पानी से अछूता रहता है, रत्ती भर भी संपर्क नहीं।

6.6.15

तद्गतस्याप्यतद्वृत्तेरम्बरस्येव वायुतः जरा मरणमापच्च सुखदुःखे भवाभवौ ॥ १५ ॥

tadgatasyāpyatadvṛtterambarasyeva vāyutaḥjarā maraṇamāpacca sukhaduḥkhe bhavābhavau || 15 ||

Though it is present within the body, its own nature is not the body's nature, just as space is untouched by the wind moving through it. Old age, death, misfortune, pleasure, pain, birth and death, none of this touches it.

यह शरीर में रहते हुए भी शरीर जैसा स्वभाव नहीं रखता, ठीक जैसे आकाश में हवा चलने पर भी आकाश हवा जैसा नहीं होता। बुढ़ापा, मृत्यु, विपत्ति, सुख, दुख, जन्म और मृत्यु, इनमें से कुछ भी इसे नहीं छूता।

6.6.16

मनागपि न सन्तीह तस्मात्त्वं निर्वृतो भव । स्थितो देहतयाप्युच्चैः पातोत्पातमयो भ्रमः ॥ १६ ॥

manāgapi na santīha tasmāttvaṃ nirvṛto bhava | sthito dehatayāpyuccaiḥ pātotpātamayo bhramaḥ || 16 ||

None of this touches the self, not even slightly, so be at peace. Even the strong sense of being this body is only a delusion made of rising and falling.

इनमें से कुछ भी आत्मा को नहीं छूता, रत्ती भर भी नहीं, इसलिए शांत हो जाओ। मैं यह शरीर हूँ यह जो प्रबल भाव है, वह भी उतार-चढ़ाव से बना एक भ्रम मात्र है।

6.6.17

दृश्यते केवलं ब्रह्मण्यप्सु वीचिचयो यथा । आत्मसत्तोपजीवित्वादात्मानुभवतीह हि ॥ १७ ॥

dṛśyate kevalaṃ brahmaṇyapsu vīcicayo yathā | ātmasattopajīvitvādātmānubhavatīha hi || 17 ||

It appears only within Brahman, the way a mass of waves appears in water. Because it depends on the self's existence for its own existence, it is the self that experiences it, right here.

यह केवल ब्रह्म में ही दिखाई देता है, जैसे पानी में लहरों का समूह दिखाई देता है। चूँकि इसका होना आत्मा के होने पर टिका है, इसलिए आत्मा ही इसे यहाँ अनुभव करती है।

6.6.18

देहयन्त्रं पयःसत्तामात्रादूर्मिमिव स्थितम् । आधारस्पन्दनेनाङ्ग यथा क्षोभो न वा भवः ॥ १८ ॥

dehayantraṃ payaḥsattāmātrādūrmimiva sthitam | ādhāraspandanenāṅga yathā kṣobho na vā bhavaḥ || 18 ||

The body is only a machine, standing the way a wave stands, simply because water exists. Dear one, it is a vibration of its own base, whether one calls it a disturbance or a coming-into-being.

यह शरीर मात्र एक यंत्र है, जो वैसे ही खड़ा है जैसे पानी के होने मात्र से एक लहर खड़ी होती है। हे प्रिय, यह अपने आधार का एक कंपन मात्र है, चाहे इसे हलचल कहो या उत्पत्ति।

6.6.19

सूर्यादेः प्रतिबिम्बस्य तथा देहेन देहिनः । सम्यग्दृष्टे यथाभूते वस्तुन्येवाभिजायते ॥ १९ ॥

sūryādeḥ pratibimbasya tathā dehena dehinaḥ | samyagdṛṣṭe yathābhūte vastunyevābhijāyate || 19 ||

It is like the reflection of the sun: it appears only when the water is truly seen for what it is. In the same way, the embodied self appears through the body only when the body is truly seen for what it is.

यह सूर्य के प्रतिबिंब जैसा है: वह तभी दिखाई देता है जब पानी को सही-सही, जैसा वह वास्तव में है, वैसा देखा जाए। उसी तरह, देही आत्मा शरीर के ज़रिए तभी प्रकट होती दिखती है जब शरीर को सही-सही, जैसा वह वास्तव में है, वैसा देखा जाए।

6.6.20

स्थितिर्देहमयो ज्ञानविभ्रमो लयमेति च । देहदेहवतोर्ज्ञानाद्यथाभूतार्थयोः स्थितिः ॥ २० ॥

sthitirdēhamayo jñānavibhramo layameti ca | dēhadēhavatorjñānādyathābhūtārthayoḥ sthitiḥ || 20 ||

The mistaken idea that takes the self to be the body dissolves away. Through truly knowing the body and the self as they really are, one comes to stand firm in the truth.

मैं यह शरीर हूँ यह गलत समझ मिट जाती है। शरीर और आत्मा को जैसे वे वास्तव में हैं वैसा सही-सही जान लेने से मनुष्य सत्य में स्थिर हो जाता है।

6.6.21

सत्तासत्तात्मिकोदेति दीपाद्दीपपदार्थयोः । असम्यग्दर्शिनो देहस्यावर्तपरिवर्तनैः ॥ २१ ॥

sattāsattātmikodeti dīpāddīpapadārthayoḥ | asamyagdarśino dehasyāvartaparivartanaiḥ || 21 ||

For someone who does not see truly, a state that seems both real and unreal arises, like the relation between a lamp and the thing it lights up, through the body's turning again and again in its round.

जो व्यक्ति ठीक से नहीं देखता, उसके लिए शरीर के बार-बार चलने वाले चक्र से एक ऐसी हालत पैदा होती है जो सच भी लगती है और झूठ भी, जैसे दीये और उससे रोशन हुई चीज़ के बीच का नाता।

6.6.22

अन्तःशून्याः स्फुरन्तीह ते मोहार्जुनपादपाः । अपर्यालोचितात्मार्था अपरामृष्टसंविदः ॥ २२ ॥

antaḥśūnyāḥ sphurantīha te mohārjunapādapāḥ | aparyālocitātmārthā aparāmṛṣṭasaṃvidaḥ || 22 ||

Empty inside, they show themselves here like Arjuna trees of delusion, never having looked into their own true nature, their awareness never grasped.

अंदर से खाली होकर भी ये यहाँ भ्रम के अर्जुन वृक्षों की तरह दिखाई देते हैं, इन्होंने कभी अपने असली स्वरूप को नहीं देखा, इनकी चेतना को कभी पकड़ा नहीं गया।

6.6.23

स्पन्दन्ते चेतितोन्मुक्तास्तृणवन्मूढबुद्धयः । अनास्थादितचित्तत्वाज्जडाः सर्वे खवायुभिः ॥ २३ ॥

spandante cetitonmuktāstṛṇavatmūḍhabuddhayaḥ | anāsthāditacittatvājjḍāḥ sarve khavāyubhiḥ || 23 ||

They sway, without real awareness, dull minded like blades of grass; since their minds have no fixed footing, all of them are as lifeless as things stirred only by the wind.

बिना असली समझ के ये हिलते डुलते हैं, घास के तिनकों जैसे मंदबुद्धि; क्योंकि इनके मन को कोई ठोस आधार नहीं मिला, इसलिए ये सब हवा से हिलने वाली निर्जीव चीज़ों जैसे हैं।

6.6.24

यत्र तत्रोदिताक्रान्ता रटन्ति प्रस्फुरन्ति च । तृणकाष्ठादिकं सर्वमाहरन्ति त्यजन्ति च ॥ २४ ॥

yatra tatrauditākrāntā raṭanti prasphuranti ca | tṛṇakāṣṭhādikaṃ sarvamāharanti tyajanti ca || 24 ||

Wherever they rise up, driven by their impulses, they cry out and tremble; they gather every bit of grass and wood, then throw it all away.

जहाँ कहीं भी ये उठते हैं, अपने आवेगों के मारे ये चिल्लाते हैं और काँपते हैं; ये घास लकड़ी जैसी हर चीज़ बटोरते हैं, फिर सब फेंक देते हैं।

6.6.25

सशब्दस्पर्शरूपाढ्यास्तरङ्गतरलाङ्गकाः । जडाः सन्तः स्फुरद्रूपा भृशं स्फाररसासवाः ॥ २५ ॥

saśabdasparśarūpāḍhyāstaratataraṅgāṅgakāḥ | jaḍāḥ santaḥ sphuradrūpā bhṛśaṃ sphārarasāsavāḥ || 25 ||

Full of sound, touch and shape, their limbs restless as waves, though lifeless they seem to shine vividly, brimming over with a heady, intoxicating sweetness.

आवाज़, स्पर्श और रूप से भरपूर, इनके अंग लहरों जैसे बेचैन हैं; निर्जीव होते हुए भी ये चमकते हुए से दिखते हैं, और एक नशीली मिठास से भरपूर हैं।

6.6.26

सविहारागमापाया महौघा इव दुर्धियः । सर्वेषामेव चैतेषां स्थितैवैषा चिदव्यया ॥ २६ ॥

savihārāgamāpāyā mahaughā iva durdhiyaḥ| sarveṣāmeva caitesāṃ sthitaivaiṣā cidavyayā || 26 ||

These dull minded beings come and go, playing their part like great floods rising and falling. Yet in every one of them, one thing alone stays constant: consciousness that never perishes.

ये मंदबुद्धि प्राणी आते जाते हैं, बड़ी बाढ़ों की तरह उठते और गिरते हुए अपना खेल खेलते हैं। फिर भी इन सबमें एक ही चीज़ स्थिर रहती है: वह चेतना जो कभी नष्ट नहीं होती।

6.6.27

किंत्वबोधवशादस्याः परां कृपणतां गता । श्वाससंततयो ह्यज्ञाल्लोहकारदृतेर्यथा ॥ २७ ॥

kiṃtvabodhavaśādasyāḥ parāṃ kṛpaṇatāṃ gatā| śvāsasaṃtatayo hyajñāllohakāradṛteryathā || 27 ||

But under the sway of ignorance, this consciousness falls into utter wretchedness, reduced, through not knowing, to mere strings of breath, going in and out like a blacksmith's bellows.

पर अज्ञान के वश में आकर यही चेतना बड़ी दयनीय हालत में पहुँच जाती है, न जानने के कारण यह सिर्फ साँसों की लगातार लड़ी बनकर रह जाती है, जो लोहार की धौंकनी जैसे अंदर बाहर चलती रहती है।

6.6.28

स्पन्दमात्रार्थमेवाशु दृश्यन्ते नार्थकारिणः । तर्जनं गर्जनं मूढाद्धनुर्दण्डगुणादिव ॥ २८ ॥

spandamātrārthamevāśu dṛśyante nārthakāriṇaḥ| tarjanaṃ garjanaṃ mūḍhāddhanurdandaguṇādiva || 28 ||

They appear at once, moving only for the sake of moving, achieving nothing real, like the twang and the roar that come from a mindless bow's stick and string.

ये फौरन नज़र आते हैं, बस हिलने के लिए हिलते हैं, कुछ असली हासिल नहीं करते, जैसे बेजान धनुष की लकड़ी और डोरी से निकलने वाली धमकी भरी टंकार और गरज।

6.6.29

श्रूयते मरणायैव चिद्बोधपरिवर्जितम् । फलभोगोऽपि यो मूढात्तदरण्यतरोरिव ॥ २९ ॥

śrūyate maraṇāyaiva cidbodhaparivarjitam| phalabhogo'pi yo mūḍhāttadaraṇyataroriva || 29 ||

It is said that a life without real awareness leads only to death; even its enjoyment of fruit is like that of a senseless tree in the forest, giving fruit without knowing it.

कहा जाता है कि जिसमें असली चेतना नहीं है, वह जीवन सिर्फ मौत की ओर ले जाता है; उसका फल भोगना भी जंगल के किसी निर्जीव पेड़ जैसा है, जो बिना जाने फल देता है।

6.6.30

तस्मिन्विश्रमणं यत्तच्छिलाफलहके यथा। तेन यत्संगमः स स्यात्स्थाणुना भुवि जङ्गले ॥ ३० ॥

tasminviśramaṇaṃ yattacchilāphalahake yathā| tena yatsaṃgamaḥ sa syātsthāṇunā bhuvi jaṅgale || 30 ||

Any rest found in him is like resting on a slab of stone; any bond formed with him is like meeting a dead stump out in the wild.

उसमें मिलने वाला कोई भी आराम पत्थर की सिल पर आराम करने जैसा है; उससे बना कोई भी नाता जंगल में किसी मरे हुए ठूँठ से मिलने जैसा है।

6.6.31

तदर्थं यत्कृतं किंचित्तद्व्योम लकुटैर्हतम्। तस्मिन्यदधमे दत्तं तत्त्यक्तं किं न कर्दमे ॥ ३१ ॥

tadarthaṃ yatkṛtaṃ kiṃcittadvyoma lakuṭairhatam | tasminyadadhame dattaṃ tattyaktaṃ kiṃ na kardame || 31 ||

Whatever little is done for its sake is like beating the sky with a stick. Whatever is given to that worthless thing is as good as thrown away; is it not the same as dropping it into mud?

उसके लिए जो थोड़ा बहुत किया जाता है, वह आकाश पर डंडा मारने जैसा है। उस नाचीज़ चीज़ को जो कुछ दिया जाता है, वह फेंक देने के बराबर है; क्या यह कीचड़ में गिराने जैसा नहीं है?

6.6.32

तेन सार्धं कथा यत्तत्कौलेयाह्वानमम्बरे। अज्ञानमापदां निष्ठा का हि नापदजानतः ॥ ३२ ॥

tena sārdhaṃ kathā yattatkauleyāhvānamambare | ajñānamāpadāṃ niṣṭhā kā hi nāpadajānataḥ || 32 ||

Talking with him is like calling out to a dog in the sky. Not knowing the truth is itself the root of every misfortune; for someone who does not know, what is not a misfortune?

उससे बात करना आकाश में कुत्ते को बुलाने जैसा है। सच को न जानना ही हर मुसीबत की जड़ है; जो नहीं जानता, उसके लिए क्या चीज़ मुसीबत नहीं है?

6.6.33

इयं संसारसरणिर्वहत्यज्ञप्रमादतः। अज्ञस्योग्राणि दुःखानि सुखान्यपि दृढानि च ॥ ३३ ॥

iyaṃ saṃsārasaraṇirvahatyajñapramādataḥ | ajñasyogrāṇi duḥkhāni sukhānyapi dṛḍhāni ca || 33 ||

This road of worldly life keeps rolling on because of the fool's carelessness. For the ignorant person, sufferings are harsh, and even his pleasures grip him just as hard.

यह सांसारिक जीवन की राह मूर्ख की लापरवाही की वजह से चलती रहती है। अज्ञानी के लिए दुख कठोर होते हैं, और उसके सुख भी उतनी ही मज़बूती से उसे जकड़े रहते हैं।

6.6.34

पुनःपुनर्निवर्तन्ते युगं प्रत्यचला इव। शरीरधनदारादावास्थां समनुबध्नतः ॥ ३४ ॥

punaḥpunarnivartante yugaṃ pratyacalā iva | śarīradhanadārādāvāsthāṃ samanubadhnataḥ || 34 ||

Age after age, they come back again and again, as fixed as mountains, because they keep tying their trust to body, wealth, wife, and all such things.

युग दर युग ये बार बार लौटकर आते हैं, पहाड़ों जितने अटल, क्योंकि ये अपना भरोसा शरीर, धन, पत्नी और ऐसी ही चीज़ों से बाँधे रखते हैं।

6.6.35

इदं दुर्दुःखमज्ञस्य न कदाचन शाम्यति । अनात्मनि शठे देहे आत्मभावमुपेयुषि ॥ ३५ ॥

idaṃ durdurduḥkhamajñasya na kadācana śāmyati | anātmani śaṭhe dehe ātmabhāvamupeyuṣi || 35 ||

This bitter suffering of the ignorant person never comes to rest, because he has come to feel the deceitful body, which is not the self at all, as his own self.

अज्ञानी का यह गहरा दुख कभी शांत नहीं होता, क्योंकि उसने धोखेबाज़ शरीर को, जो बिल्कुल भी वह खुद नहीं है, अपना ही आप मान लिया है।

6.6.36

असद्बोधमयी माया कथं नामापि नश्यति । दुर्भावस्वञ्चितधियो वस्तुन्यन्धस्य दुर्मतेः ॥ ३६ ॥

asadbodhamayī māyā kathaṃ nāmāpi naśyati | durbhāvasvañcitadhiyo vastunyandhasya durmateḥ || 36 ||

How could this illusion, built entirely of wrong understanding, ever be destroyed for a person who is blind and evil minded, whose thinking is twisted toward the wrong view of what is real?

यह माया, जो पूरी तरह गलत समझ से बनी है, उस अंधे और दुष्ट बुद्धि वाले व्यक्ति के लिए कैसे नष्ट हो सकती है, जिसकी सोच असली चीज़ के बारे में गलत नज़रिए की ओर मुड़ी हुई है?

6.6.37

अवस्तुनि सनेत्रस्य लुठतश्च पदे पदे । विषमुत्पद्यते चन्द्रादामोदः कुसुमादिव ॥ ३७ ॥

avastuny sanetrasya luṭhatashcha pade pade | viṣamutpadyate candrādāmodaḥ kusumādiva || 37 ||

For someone who has eyes yet stumbles at every step chasing what is not real, poison rises from the moon, the way fragrance rises from a flower.

जिसके पास आँखें तो हैं पर जो झूठी चीज़ के पीछे हर कदम पर लड़खड़ाता है, उसके लिए चाँद से भी ज़हर निकलता है, जैसे फूल से खुशबू निकलती है।

6.6.38

कण्टकश्चैति पयसो दूर्वाङ्कुर इव स्थलात् । देहशाल्मलिभोगिन्यो मनोमातङ्गश्रृंखलाः ॥ ३८ ॥

kaṇṭakaścaiti payaso dūrvāṅkura iva sthalāt | dehaśālmalibhoginyo manomātaṅgaśṛṅkhalāḥ || 38 ||

A thorn can spring up even from water, as a shoot of durva grass springs from dry ground. Such are the she serpents wrapped round the body's silk cotton tree, the chains that hold the mind's wild elephant.

पानी से भी काँटा उग सकता है, जैसे सूखी ज़मीन से दूब की कोंपल उगती है। ऐसी ही हैं वे नागिनें जो शरीर रूपी सेमल के पेड़ पर लिपटी हैं, और वे ज़ंजीरें जो मन रूपी हाथी को बाँधे रखती हैं।

6.6.39

अज्ञस्याशाः प्रसूयन्ते सुकृष्टादिव शालयः । नरकश्रीरिहाज्ञानं दुष्कृतव्यालवेष्टितम् ॥ ३९ ॥

ajñasyāśāḥ prasūyante sukṛṣṭādiva śālayaḥ | narakaśrīrihājñānaṃ duṣkṛtavyālaveṣṭitam || 39 ||

The hopes of the ignorant person sprout like rice in a well ploughed field. Ignorance here is hell's own splendour, wound about by serpents that are his own evil deeds.

अज्ञानी की उम्मीदें अच्छी जुती हुई ज़मीन में उगे धान की तरह फूटती हैं। यहाँ अज्ञान ही नरक की शोभा है, जिसे उसके अपने बुरे कर्मों के साँप लपेटे हुए हैं।

6.6.40

परिपालयति प्रीता मयूरी वारिदं यथा । नेत्रलोलालिनीलोला स्फुरिताधरपल्लवा ॥ ४० ॥

paripālayati prītā mayūrī vāridaṃ yathā | netralolālinīlolā sphuritādhara pallavā || 40 ||

She looks after him fondly, the way a peahen dotes on a raincloud, her eyes restless as a bee, her lips trembling like tender young shoots.

वह उसकी देखभाल प्रेम से करती है, जैसे मोरनी बादल को चाहत से निहारती है, उसकी आँखें भँवरे जैसी बेचैन हैं, और उसके होंठ कोमल नई कोंपलों जैसे काँपते हैं।

6.6.41

मूर्खार्थमेव विकसत्यङ्गना विषवल्लरी । अज्ञस्य हृदि सद्भूमावेव पेलवपल्लवा ॥ ४१ ॥

mūrkhārthameva vikasatyangaṅā viṣavallarī | ajñasya hṛdi sadbhūmāveva pelavapallavā || 41 ||

This woman, a poison creeper, blossoms only for the fool. She takes root with tender shoots only in the rich soil of the ignorant person's heart.

यह स्त्री, जो एक ज़हरीली बेल है, सिर्फ मूर्ख के लिए खिलती है। वह अपनी कोमल कोंपलों के साथ सिर्फ अज्ञानी के दिल की उपजाऊ ज़मीन में ही जड़ जमाती है।

6.6.42

विद्यते पतगच्छायो रागविद्रुमदुर्द्रुमः । तरुच्छदलसद्धूमः शस्त्रजालरदोल्मुकः ॥ ४२ ॥

vidyate patagacchāyo rāgavidrumadurdrumaḥ | tarucchadalasaddhūmaḥ śastrajālaradolmukaḥ || 42 ||

There exists an evil tree of passion, red as coral, that gives shade to birds; its leaves are a shining smoke, and its fangs are a net of weapons and firebrands.

जुनून का एक खतरनाक पेड़ है, मूँगे जैसा लाल, जो पक्षियों को छाया देता है; उसके पत्ते चमकते धुएँ जैसे हैं, और उसके दाँत हथियारों और जलती लकड़ियों का जाल हैं।

6.6.43

ज्वलति द्वेषदावाग्निर्हृन्मरौ कायतापदः । अज्ञमात्सर्यमनसि परापवदनच्छदा ॥ ४३ ॥

jvalati dveṣadāvāgnirhṛnmarau kāyatāpadaḥ | ajñamātsaryamanasi parāpavadanacchadā || 43 ||

The wildfire of hatred, whose leaves are the slandering of others, blazes in the desert of the heart, burning the body, in the mind of an envious fool.

नफ़रत की आग, जिसके पत्ते दूसरों की बुराई करना हैं, दिल के रेगिस्तान में जलती है, शरीर को जलाती है, यह ईर्ष्यालु मूर्ख के मन में होती है।

6.6.44

ईर्ष्याकमलिनी चिन्ताषट्पदा विलसत्यलम् । प्रतिजन्मप्रमृष्टोग्रदुःखकल्लोलविभ्रमम् ॥ ४४ ॥

īrṣyākamalinī cintāṣaṭpadā vilasaty alam | pratijanmapramṛṣṭograduḥkhakallolavibhramam || 44 ||

The lotus pond of envy, with anxious thoughts for its bees, plays on brightly, its waves of harsh suffering rising fresh at every birth, in a bewildering swirl.

ईर्ष्या का कमल-तालाब, जिसकी मधुमक्खियाँ बेचैन ख़याल हैं, खूब चमकता है; हर जन्म में इसमें दुख की तेज़ लहरें फिर उठती हैं, एक उलझी हुई भँवर में।

6.6.45

जडमेव समभ्येति पुनर्मरणवाडवः । जन्म बाल्यं व्रजत्येतद्यौवनं युवता जराम् ॥ ४५ ॥

jaḍameva samabhyeti punarmaraṇavāḍavaḥ | janma bālyaṃ vrajatyetadyauvanaṃ yuvatā jarām || 45 ||

The fire of repeated death, again and again, turns everything to mere dullness. Birth passes into childhood, this childhood into youth, and youth into old age.

बार-बार होने वाली मौत की आग हर बार सब कुछ को बस जड़ बना देती है। जन्म बचपन में बदल जाता है, यह बचपन जवानी में, और जवानी बुढ़ापे में।

6.6.46

जरा मरणमभ्येति मूढस्यैव पुनःपुनः । जगज्जीर्णारघट्टेऽस्मिन्रज्ज्वा संसृतिरूपया ॥ ४६ ॥

jarā maraṇamabhyeti mūḍhasyaiva punaḥpunaḥ | jagajjīrṇāraghaṭṭe'sminrajjvā saṃsṛtirūpayā || 46 ||

Old age turns into death, again and again, only for the fool, in this world, a worn-out water-wheel turned by the rope of rebirth.

बुढ़ापा बार-बार मौत में बदलता है, पर सिर्फ़ मूर्ख के लिए, इस दुनिया में, जो एक पुराना घिसा हुआ रहट है, जिसे पुनर्जन्म की रस्सी घुमाती रहती है।

6.6.47

मज्जनोन्मज्जनैरज्ञो यन्त्रे कलशतां गतः । यदेव गोष्पदापूरं ज्ञधियः पेलवं जगत् ॥ ४७ ॥

majjannonmajjanairejño yantre kalaśatāṃ gataḥ | yadeva goṣpadāpūraṃ jñadhiyaḥ pelavaṃ jagat || 47 ||

Sinking and rising, again and again, the fool becomes like a pot on this wheel. Yet that very world, small as it truly is, is to the wise mind no more than a cow's hoofprint filled with water.

डूबते और उतराते हुए, बार-बार, मूर्ख इस रहट के घड़े जैसा बन जाता है। पर वही दुनिया, जो असल में बहुत छोटी है, समझदार के लिए बस गाय के खुर के गड्ढे भर पानी जितनी है।

6.6.48

तदेवापारपर्यन्तमगाधममहात्मनः । धियोऽदृश इवाज्ञस्य दीर्घं जठरकोटरात् ॥ ४८ ॥

tadevāpāraparyantamagādhamamahātmanaḥ | dhiyo'dṛśa ivājñasya dīrghaṃ jaṭharakoṭarāt || 48 ||

That same world, to the small-minded, has no far shore and no bottom, unseen by the fool's understanding, deep, going down like a hollow inside the belly.

वही दुनिया, छोटी सोच वाले के लिए, न किनारे पर खत्म होती है न उसकी थाह मिलती है, मूर्ख की समझ में यह आती ही नहीं, गहरी, जैसे पेट के अंदर का कोई गड्ढा।

6.6.49

न प्रयान्त्यपरं पारं विहङ्ग्यः पञ्जरादिव । भावमात्रपरावृत्तवासनाभारनाभयः ॥ ४९ ॥

na prayāntyaparaṃ pāraṃ vihaṅgyaḥ pañjarādiva | bhāvamātraparāvṛttavāsanābhāranābhayaḥ || 49 ||

Like female birds that never fly beyond their cage to reach the far shore, they carry at their very core the weight of old desires, a weight bound up with mere passing thought.

जैसे मादा पक्षियाँ पिंजरे से बाहर उड़कर दूसरे किनारे तक कभी नहीं जातीं, वैसे ही ये अपने बिल्कुल केंद्र में पुरानी इच्छाओं का बोझ लिए रहती हैं, एक बोझ जो बस एक पल के ख़याल से जुड़ा है।

6.6.50

स्पष्टीकर्तुं न शक्यन्ते जन्मचक्रस्य नेमयः । अज्ञेनेन्द्रियगृध्रार्थं रागान्मृगयुणा तनुः ॥ ५० ॥

spaṣṭīkartuṃ na śakyante janmacakrasya nemayaḥ | ajñenendriyagṛdhrārthaṃ rāgānmṛgayuṇā tanuḥ || 50 ||

The rim of the wheel of birth can never be fully traced out. Out of passion, the fool hunts down his own body, like a hunter after game, to feed the vultures that are his senses.

जन्म के पहिये का घेरा कभी पूरी तरह बताया नहीं जा सकता। जुनून के कारण, मूर्ख अपने ही शरीर का शिकार करता है, एक शिकारी की तरह, ताकि अपनी इंद्रियों रूपी गिद्धों का पेट भर सके।

6.6.51

संसारारण्य आस्तीर्णा दूरादामिषपिण्डवत् । भूतशैलमयी दृष्टिर्मृन्मांसलवमात्रिका ॥ ५१ ॥

saṃsārāraṇya āstīrṇā dūrādāmiṣapiṇḍavat | bhūtaśailamayī dṛṣṭirmṛnmāṃsalavamātrikā || 51 ||

In the forest of this world, spread out like a lump of meat seen from afar, is a sight that looks like a whole mountain of splendid beings, but is nothing more than bits of flesh and clay.

इस दुनिया रूपी जंगल में, दूर से मांस के टुकड़े जैसा फैला हुआ, एक ऐसा नज़ारा है जो शानदार प्राणियों के पहाड़ जैसा दिखता है, पर असल में वह बस मांस और मिट्टी के टुकड़े भर है।

6.6.52

मोहात्संलक्ष्यते चित्रपदार्थानन्तरञ्जनः । जयत्यनल्पसंकल्पकल्पनाकल्पपादपः ॥ ५२ ॥

mohātsaṃlakṣyate citrapadārthānantarañjanaḥ | jayatyanalpasāṅkalpakalpanākalpapādapaḥ || 52 ||

Through delusion, it is seen delighting endlessly in dazzling things; it stands supreme, like a wish-granting tree grown out of boundless imagination and fancy.

भ्रम के कारण, यह चमकदार चीज़ों में लगातार रमता हुआ दिखता है; यह एक कल्पवृक्ष जैसा सबसे ऊँचा खड़ा है, जो असीम कल्पना और मनगढ़ंत ख़यालों से उगा है।

6.6.53

अज्ञानात्प्रसृता यस्माज्जगत्पर्णपरम्पराः । यस्मिंस्तिष्ठन्ति राजन्ते विशन्ति विलसन्ति च ॥ ५३ ॥

ajñānātprasṛtā yasmājjagatparṇaparamparāḥ | yasmiṃstiṣṭhanti rājante viśanti vilasantī ca || 53 ||

From this tree, out of ignorance, spread the many leaves that are the worlds, one after another, and in them beings stand, shine, enter, and take their pleasure.

इस पेड़ से, अज्ञान के कारण, एक के बाद एक वे कई पत्ते फैले जो दुनियाएँ हैं, और उन्हीं में जीव टिकते हैं, चमकते हैं, अंदर आते हैं, और मौज करते हैं।

6.6.54

विचित्ररचनोपेता भूरिभोगिविहङ्गमाः । यत्र जन्मानि पर्णानि कर्मजालं च कोरकम् ॥ ५४ ॥

vicitraracanopetā bhūribhogivihāṅgamāḥ | yatra janmāni parṇāni karmajālaṃ ca korakam || 54 ||

This forest is decked out in wondrous forms, full of snakes and birds. There, births are its leaves, and the tangle of past deeds is its buds.

यह जंगल तरह-तरह के अनोखे रूपों से सजा है, साँपों और पक्षियों से भरा हुआ। वहाँ जन्म इसके पत्ते हैं, और पुराने कर्मों का उलझा जाल इसकी कलियाँ हैं।

6.6.55

फलानि पुण्यपापानि मञ्जर्यो विभवश्रियः । अज्ञानेन्दूदये नैता योषिदोषधयः स्फुटम् ॥ ५५ ॥

phalāni puṇyapāpāni mañjaryo vibhavasriyaḥ | ajñānendūdaye naitā yoṣidoṣadhayaḥ sphuṭam || 55 ||

The fruits are merit and sin; the flower clusters are the glitter of wealth. Clearly, when the moon of ignorance rises, these are not the ordinary night-blooming herbs.

इसके फल पुण्य और पाप हैं; इसके गुच्छे धन-दौलत की चमक हैं। यह साफ़ बात है कि जब अज्ञान का चाँद उगता है, तो ये कोई मामूली रात में खिलने वाले पौधे नहीं हैं।

6.6.56

संसारवनखण्डेऽस्मिन्परां शोभामुपागताः । जन्मजालकलापूर्णस्तमःकालकृतोदयः ॥ ५६ ॥

saṃsāravana khaṇḍe'smin parāṃ śobhām upāgatāḥ | janmajāla kalā pūrṇa stamaḥ kāla kṛta udayaḥ || 56 ||

In this stretch of the forest of this world, they have come to their fullest beauty, filled with the whole tangled web of birth, rising at the time of darkness.

इस दुनिया रूपी जंगल के इस हिस्से में, वे अपनी पूरी सुंदरता को पा चुके हैं, जन्म के पूरे उलझे जाल से भरे हुए, और अंधेरे के समय ही उभरते हैं।

6.6.57

शून्योदितात्मा दोषेशो जयत्यज्ञानचन्द्रमाः । अज्ञानेन्दोः प्रसादेन वासनामृतशालिना ॥ ५७ ॥

śūnyoditātmā doṣeśo jayatyajñānacandramāḥ | ajñānendōḥ prasādena vāsanāmṛtaśālinā || 57 ||

Rising out of emptiness, the moon of ignorance, lord of the night and master of every fault, reigns supreme by its own grace, rich with the nectar of desire.

शून्य से उगकर, अज्ञान का यह चाँद, रात का मालिक और हर दोष का स्वामी, अपनी ही मेहरबानी से सबसे ऊपर राज करता है, वासना के अमृत से भरपूर।

6.6.58

तर्पिताशाचकोरेण चित्तरत्नरसैषिणा । राजहंसविलासिन्यः प्रालेयशिशिराङ्गिकाः ॥ ५८ ॥

tarpi tāśā cakoreṇa citta ratna rasaiṣiṇā | rāja haṃsa vilāsinyaḥ prāleya śiśirāṅgikāḥ || 58 ||

The partridge, its longing satisfied, seeks the taste of the mind's jewel, while the playful royal swans have bodies cool as frost and dew.

चकोर पक्षी, जिसकी चाह पूरी हो चुकी है, मन के रत्न का स्वाद ढूँढ़ता है, वहीं अठखेलियाँ करते राजहंस बर्फ़ और ओस जैसे ठंडे शरीर वाले हैं।

6.6.59

भान्ति कान्ताकुमुद्वत्यो लोललोचनषट्पदाः । धम्मिल्लतिमिरोल्लासा लसत्पाण्डुपयोधराः ॥ ५९ ॥

bhānti kāntā kumudvatyo lolalocana ṣaṭpadāḥ | dhammilla timirollāsā lasat pāṇḍu payodharāḥ || 59 ||

The beloved women, like ponds of night-lotuses, shine forth, their restless eyes like bees, their braided hair a gleaming darkness, their pale breasts shining bright.

प्रिय स्त्रियाँ, रात में खिलने वाले कमलों के तालाब जैसी, चमक उठती हैं, उनकी बेचैन आँखें भँवरों जैसी, उनके गुँथे बाल चमकते अंधेरे जैसे, और उनके गोरे स्तन दमकते हुए।

6.6.60

रामारजन्यो राजन्ते तन्मौर्ख्येण विजृम्भितम् ॥ ६० ॥

rāmā rajanyo rājante tanmaurkhyeṇa vijṛmbhitam || 60 ||

These women shine like the nights themselves, and all this splendor is nothing but folly unfolding itself.

ये स्त्रियाँ खुद रातों जैसी चमकती हैं, और यह सारी शोभा मूर्खता के फैलाव के सिवा कुछ नहीं है।

6.6.61

आपातमात्रमधुरत्वमनर्थसत्त्वमाद्यन्तवत्त्वमखिलस्थितिभङ्गुरत्वम् । अज्ञानशाखिन इति प्रसृतानि राम नानाकृतीनि विपुलानि फलानि तानि ॥ ६१ ॥

āpātamātramadhuratvamanarthasattvamādyantavattvamakhilasthitibhaṅguratvam | ajñānaśākhina iti prasṛtāni rāma nānākṛtīni vipulāni phalāni tāni || 61 ||

Sweet only for a moment, harmful at heart, having both a beginning and an end, marked by the frailty of everything that exists, these, O Rama, are the many fruits of the tree of ignorance, spreading out in countless shapes.

बस पहले पल के लिए मीठे, पर दिल से नुकसानदेह, जिनका एक आरंभ है और एक अंत भी, और जो हर चीज़ की नाज़ुकता दिखाते हैं, ये ही, हे राम, अज्ञान के पेड़ के वे अनगिनत फल हैं, जो अनगिनत रूपों में फैले हुए हैं।

Chapter 7

6.7.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । यन्मुक्तावलिता रत्नभूषिता भान्ति योषितः । मदेन्दावुदिते क्षुब्धकामक्षीरार्णवोर्मयः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yanmuktāvalitā ratnabhūṣitā bhānti yoṣitaḥ | madendāvudite kṣubdhakāmakṣīrārṇavormayaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: when the moon of passion rises, women who shine with strings of pearls and jewels become the waves of the churned milky ocean of desire.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब मद का चाँद उगता है, तो मोतियों की माला और गहनों से चमकती स्त्रियाँ कामना के उमड़े हुए दूध के सागर की लहरें बन जाती हैं।

6.7.2

सौवर्णाम्भोजकोशस्थलोलालिपटलश्रियम् । धारयन्ति दृशः स्त्रीणां कपोलतलदोलिताः ॥ २ ॥

sauvarṇāmbhojakośasthalolālipaṭalaśriyam | dhārayanti dṛśaḥ strīṇāṃ kapolataladolitāḥ || 2 ||

The eyes of women, swinging over their cheeks, carry the beauty of a swarm of restless bees settled inside a golden lotus cup.

स्त्रियों की आँखें, जो गालों पर झूलती रहती हैं, सुनहरे कमल की कली के भीतर बैठे बेचैन भौंरों के झुंड जैसी सुंदरता लिए रहती हैं।

6.7.3

उद्यानवनखण्डेषु भूमौ कृतमदा मधौ । हृद्याः सुमनसो भान्ति दासा इव मनोभुवः ॥ ३ ॥

udyānavanakhaṇḍeṣu bhūmau kṛtamadā madhau | hṛdyāḥ sumanaso bhānti dāsā iva manobhuvāḥ || 3 ||

In the groves and garden thickets, on the ground, in springtime, the lovely flowers grow wild with joy and shine like the servants of Kama, the mind-born god.

बगीचों और वन-कुंजों में, ज़मीन पर, बसंत के मौसम में, मन को भाने वाले फूल आनंद से मतवाले होकर खिलते हैं और मन से जन्मे देवता काम के सेवकों जैसे चमकते हैं।

6.7.4

क्रव्यादगृध्रगोमायुकौलेयकवलाङ्गिकाः । स्त्रियः समुपमीयन्ते चन्द्रचन्दनपङ्कजैः ॥ ४ ॥

kravyādagṛdhragomāyukauleyakavalāṅgikāḥ | striyaḥ samupamīyante candracandanapaṅkajaiḥ || 4 ||

Women, whose bodies are only morsels for flesh-eating vultures, jackals, and dogs, are still compared to the moon, to sandalwood, to the lotus.

स्त्रियाँ, जिनका शरीर आख़िर मांस खाने वाले गिद्धों, गीदड़ों और कुत्तों का निवाला ही बनता है, फिर भी चाँद से, चंदन से और कमल से जोड़ी जाती हैं।

6.7.5

सौवर्णकलशाम्भोजकलिकामातुलुङ्गवत् । दृश्यते स्त्रीस्तनश्रेणी रक्तपूतिसुगन्धिका ॥ ५ ॥

sauvarṇakalaśāmbhojakalikāmātuluṅgavat | dṛśyate strīstanaśreṇī raktapūtisugandhikā || 5 ||

The row of women's breasts, seen as golden jars, lotus buds, or citrons, is blood and rot that only seems sweet-smelling.

स्त्रियों के स्तनों की पंक्ति, जो सुनहरे कलश, कमल की कली या बिजौरा नींबू जैसी दिखती है, असल में लहू और सड़ांध है जो बस सुगंधित लगती है।

6.7.7

अल्पाल्पाष्ठीवदाकारा भुजाक्रूरास्थिशङ्कवः । महाबाहुलताशब्दैर्वर्ण्यन्ते कविभिः शुभैः ॥ ७ ॥

alpālpāṣṭhīvadākārā bhujākrūrāsthiśaṅkavaḥ | mahābāhulatāśabdairvarṇyante kavibhiḥ śubhaiḥ || 7 ||

Arms that are nothing but small, knobby bones, harsh spikes of bone, are described by fine poets in the words great vine-like arms.

जो भुजाएँ बस छोटी-छोटी गाँठों वाली हड्डियाँ हैं, हड्डी के कठोर काँटे हैं, उन्हीं को अच्छे कवि बड़ी लता-सी भुजाएँ कहकर बखानते हैं।

6.7.8

कदलीस्तम्भसम्भारसुन्दरीभिस्तथा भृता । कुचशोभोचितानन्दा तोरणालिर्विराजते ॥ ८ ॥

kadalīstambhasambhārasundarībhistathā bhṛtā | kucaśobhocitānandā toraṇālirvirājate || 8 ||

A row of gateway arches, filled with beautiful women whose thighs are like banana-tree trunks, shines splendid, its joy fit for the beauty of their breasts.

सुंदर स्त्रियों से भरी हुई, जिनकी जाँघें केले के तने जैसी हैं, तोरणों की पंक्ति चमकती है, और उसका आनंद उनके स्तनों की शोभा के अनुरूप है।

6.7.9

आपातमन्दमधुरा मध्ये द्वन्द्वानुबन्धिनी । शीघ्रावसानविरला लक्ष्मीरप्यभिवाञ्छ्यते ॥ ९ ॥

āpātamandamadhurā madhye dvandvānubandhinī | śīghrāvasānaviralā lakṣmīrapyabhivāñchyate || 9 ||

Even wealth, only faintly sweet at first, bound up with pairs of opposites in the middle, and thin with a quick end, is still longed for.

धन-संपत्ति भी, जो शुरू में हल्की-सी मीठी लगती है, बीच में सुख-दुख के जोड़ों से बंधी रहती है, और जल्दी ख़त्म होकर कम पड़ जाती है, फिर भी चाही जाती है।

6.7.10

समुपैति मतिर्दुःखं सुखं च शतशाखताम् । दुःखशाखास्तु जायन्ते नानाकर्मफलाः श्रियः ॥ १० ॥

samupaiti matirduḥkhaṃ sukhaṃ ca śataśākhatām | duḥkhaśākhāstu jāyante nānākarmaphalāḥ śriyaḥ || 10 ||

The mind moves toward sorrow, and happiness too branches out a hundredfold; but what grows on these branches is sorrow, for riches are only the fruit of many different deeds.

मन दुख की ओर बढ़ता है, और सुख भी सौ शाखाओं में फूट पड़ता है; पर इन शाखाओं पर जो उगता है वह दुख ही है, क्योंकि धन-संपदा तो बस अलग-अलग कर्मों का फल है।

6.7.11

बद्धजालघनाकाराः कारार्थमिव रज्जवः । दच्छदःसदृशा वाचः प्रतानगहने स्थिताः ॥ ११ ॥

baddhajālaghanākārāḥ kārārthamiva rajjavaḥ | dacchadaḥsadṛśā vācaḥ pratānagahane sthitāḥ || 11 ||

Words are dense and knotted like a bound net, like ropes twisted for a prison; sweet as lips to look at, they lie tangled in a thick, ever-spreading thicket.

शब्द बंधे हुए जाल जैसे घने और उलझे हुए हैं, मानो जेल के लिए बटी हुई रस्सियाँ हों; देखने में होंठों जैसे मीठे लगते हुए भी, वे घने और फैलते जाते झुरमुट में उलझे रहते हैं।

6.7.12

संतता मोहमिहिका कार्यासारविसारिणी । यमुना प्रावृषीवैति तिमिरश्यामला चिरम् ॥ १२ ॥

santatā mohamihikā kāryāsāravisāriṇī | yamunā prāvṛṣīvaiti timiraśyāmalā ciram || 12 ||

The unbroken mist of delusion, spreading and making every act fruitless, comes like the Yamuna in the rainy season, dark with gloom, for a long time.

मोह का लगातार छाया कोहरा, जो हर काम को बेकार बनाते हुए फैलता है, बरसात में यमुना नदी की तरह आता है, अंधेरे से काला, और देर तक बना रहता है।

6.7.13

कटूकृतान्तःकरणो नानासुखविशारदः । वर्धते हि गतस्नेहं जन्मप्रतिविषारसः ॥ १३ ॥

kaṭūkṛtāntaḥkaraṇo nānāsukhaviśāradaḥ | vardhate hi gatasnehaṃ janmaprativiṣārasaḥ || 13 ||

He whose heart has grown bitter, skilled in every kind of pleasure, only grows more without love, his very essence poison, birth after birth.

जिसका मन कड़वा हो चुका है, जो तरह-तरह के सुखों में निपुण है, वह प्रेम-रहित होता ही जाता है, जन्म-जन्म उसके भीतर विष का रस भरा रहता है।

6.7.14

व्याधूतजर्जराकीर्णजनतापर्णराजयः । स्वकर्मपवना वान्ति नानावकररेणवः ॥ १४ ॥

vyādhūtajarjarākīrṇajanatāparṇarājayaḥ | svakarmapavanā vānti nānāvakarareṇavaḥ || 14 ||

The winds of one's own deeds blow, scattering rows of withered leaves, thick as a crowd, and raising every kind of dust and rubbish.

अपने ही कर्मों की हवाएँ चलती हैं, जो भीड़ जितनी घनी, मुरझाई पत्तियों की कतारों को उड़ा ले जाती हैं, और तरह-तरह की धूल-मिट्टी उड़ाती हैं।

6.7.15

कालः कवलितानन्तजगत्पक्वफलोऽप्ययम् । घस्मराचारजठरः कल्पैरपि न तृप्यति ॥ १५ ॥

kālaḥ kavalitānantajagatpakvaphalo'pyayam | ghasmarācārajatharaḥ kalpairapi na tṛpyati || 15 ||

Time, who swallows the ripe fruit of the endless world in one gulp, has a belly greedy by nature; it is not satisfied even after ages upon ages.

काल, जो अनंत संसार रूपी पके फल को एक ही निवाले में निगल जाता है, उसका पेट स्वभाव से ही लालची है; युगों-युगों बाद भी वह तृप्त नहीं होता।

6.7.16

मोहमारुतमापीय त्वचा विषमचारिणः । स्फुरन्तीहाहयश्चित्राः शीतलाचलदीप्तयः ॥ १६ ॥

mohamārutamāpīya tvacā viṣamacāriṇaḥ | sphurantīhāhayaścitrāḥ śītalācaladīptayaḥ || 16 ||

Having drunk in the wind of delusion through their skin, moving crookedly, strange snakes flash here, their fire cold and unmoving.

मोह की हवा को अपनी त्वचा से पीकर, टेढ़े-मेढ़े चलते हुए, विचित्र साँप यहाँ चमकते हैं, उनकी आग ठंडी और स्थिर है।

6.7.17

चिन्तापिशाचोपहता विवेकेन्दूदयं विना। तमसेव निरालोका याति यौवनयामिनी ॥ १७ ॥

cintāpiśācopahatā vivekendūdayaṃ vinā| tamaseva nirālokā yāti yauvanayāminī || 17 ||

Struck down by the ghost of worry, with no moon of good sense ever rising, the night of youth passes in darkness, as if lightless.

चिंता के भूत से मारी हुई, समझ का चाँद कभी उगे बिना, जवानी की रात अंधेरे में ही बीत जाती है, मानो उसमें कोई उजाला ही न हो।

6.7.18

जिह्वा जर्जरतामेति प्राकृतानुनयज्वरैः। पद्मकोटरकोणस्थमपि सूत्रं हिमैरिव ॥ १८ ॥

jihvā jarjaratāmeti prākṛtānunayajvaraiḥ| padmakoṭarakoṇasthamapi sūtraṃ himairiva || 18 ||

The tongue grows worn and weak from the fevers of cheap flattery, like a lotus fibre deep in the flower's hollow, withered by frost.

सस्ती चापलूसी के बुखार से जीभ घिसती और कमज़ोर होती जाती है, जैसे कमल के भीतर छिपा हुआ रेशा भी पाले से मुरझा जाता है।

6.7.19

दुःखशोकमहाष्ठीलः कष्टकण्टकसंकटः। सहस्रशाखतां याति दारिद्र्यदृढशाल्मलिः ॥ १९ ॥

duḥkhaśokamahāṣṭhīlaḥ kaṣṭakaṇṭakasaṃkaṭaḥ| sahasraśākhatāṃ yāti dāridryadṛḍhaśālmalīḥ || 19 ||

The tough silk-cotton tree of poverty, with great knots of pain and grief, thick with thorns of hardship, spreads out into a thousand branches.

गरीबी का मज़बूत सेमल का पेड़, जिसमें दुख और शोक की बड़ी-बड़ी गाँठें हैं, कठिनाई के काँटों से घना है, हज़ार शाखाओं में फैल जाता है।

6.7.20

अन्तःशून्योन्नतिध्वस्तचित्तचैत्यकृतालयः। मायाबहुलयामिन्यां लोभोलूको विवल्गति ॥ २० ॥

antaḥśūnyonnati-dhvasta-cittacaita-kṛtālayaḥ| māyābahulayāminyāṃ lobholūko vivalgati || 20 ||

The owl of greed makes its home in a ruined shrine of the mind, hollow inside yet standing tall, and flits about on a night thick with illusion.

लालच का उल्लू मन के उस उजड़े मंदिर में अपना घर बनाता है, जो भीतर से खोखला है पर ऊँचा खड़ा है, और माया से घनी रात में उड़ता-फिरता है।

6.7.21

पूर्वं गृहीत्वा कर्णाभ्यां स्फुरन्ती परिनिश्चयम्। जराजर्जरमार्जारी यौवनाखुं निकृन्तति ॥ २१ ॥

pūrvaṃ gṛhītvā karṇābhyāṃ sphurantī pariniścayam| jarājarjarāmārjārī yauvanākhuṃ nikṛntati || 21 ||

Seizing it first by both ears, darting with sure resolve, the cat of old age tears apart the mouse of youth.

पहले दोनों कानों से पकड़कर, पूरे निश्चय से झपटते हुए, बुढ़ापे की बिल्ली जवानी के चूहे को फाड़ डालती है।

6.7.22

निःसारा क्रमशः क्रान्तधराधरसमुन्नतिः। डिण्डीरपिण्डिकेवेयं सृष्टिरायाति पुष्टताम् ॥ २२ ॥

niḥsārā kramśaḥ krāntadharādharasamunnatiḥ | ḍiṇḍīrapiṇḍikeveyāṃ sṛṣṭirāyāti puṣṭatām || 22 ||

Without substance, this creation rises little by little past the height of mountains and swells full, like a lump of foam.

बिना किसी सार के, यह सृष्टि धीरे-धीरे पहाड़ों की ऊँचाई से भी आगे बढ़ती है और झाग के गोले जैसी फूलकर बड़ी हो जाती है।

6.7.23

आभासपुष्पधवला जगत्पल्लवशालिनी । सत्तालता विकसिता धर्मार्थफलधारिणी ॥ २३ ॥

ābhāsapuṣpadhavalā jagatpallavaśālinī | sattālatā vikasitā dharmārthaphaladhāriṇī || 23 ||

The vine of existence has bloomed, white with flowers that are mere appearance, decked with the world as its shoots, bearing the fruits of duty and wealth.

अस्तित्व की बेल खिल उठी है, महज़ दिखावे के फूलों से सफेद, संसार को ही अपनी नई कोंपलों की तरह सजाए हुए, और धर्म और अर्थ के फल लिए हुए।

6.7.24

सुराचलमहास्थूणं चन्द्रसूर्यगवाक्षकम् । गगनाच्छादनं चारु ध्रियते त्रिजगद्गृहम् ॥ २४ ॥

surācalamahāsthūṇaṃ candrasūryagavākṣakam | gaganācchādanaṃ cāru dhriyate trijagadgṛham || 24 ||

The house of the three worlds is held up beautifully. The mountain of the gods is its great pillar, the moon and the sun are its windows, and the sky is its roof.

तीनों लोकों का यह घर बड़ी सुंदरता से खड़ा है। देवताओं का पर्वत इसका बड़ा खंभा है, चाँद और सूरज इसकी खिड़कियाँ हैं, और आकाश इसकी छत है।

6.7.25

संसारसरसि स्फारे चरन्ति घ्राणषट्पदाः । शरीरपुष्करेष्वन्तश्चिद्रूपरसपायिनः ॥ २५ ॥

saṃsārasarasi sphāre caranti ghrāṇaṣaṭpadāḥ | śarīrapuṣkareṣvantaścidrūparasapāyinaḥ || 25 ||

In the wide lake of this world, the sense of smell moves about like a bee, drinking, inside the lotus flowers of the body, the sweetness of pure awareness.

इस संसार की विशाल झील में, गंध की इंद्रिय एक भौंरे की तरह घूमती रहती है, और शरीर रूपी कमल के फूलों के भीतर शुद्ध चेतना का रस पीती है।

6.7.26

नभोमार्गमहानीलकुट्टिमैकान्तशालिनी । भुवनौदररम्यान्तः स्फुरत्यादित्यदीपिका ॥ २६ ॥

nabhomārgamahānīlakuṭṭimaikāntaśālinī | bhuvanaudararamyāntaḥ sphuratyādityadīpikā || 26 ||

The sun is a lamp that shines alone on the sky's great blue floor, glowing beautifully inside the belly of this world.

सूरज एक दीये की तरह है, जो आकाश के विशाल नीले फर्श पर अकेला चमकता है, और इस संसार के भीतर सुंदरता से जगमगाता है।

6.7.27

आशातन्तुनिबद्धाङ्गी जागती जीर्णपक्षिणी । स्ववासनाशलाकेऽन्तर्निबद्धेन्द्रियपञ्जरे ॥ २७ ॥

āśātantunibaddhāṅgī jāgatī jīrṇapakṣiṇī | svavāsanāśalāke'ntarnibaddhendriyapañjare || 27 ||

This world is an old bird. Its body is tied with the thread of hope, and it is shut inside a cage of the senses, fastened to a perch made of its own desires.

यह संसार एक बूढ़ी चिड़िया है। इसका शरीर आशा के धागे से बँधा है, और यह इंद्रियों के पिंजरे में बंद है, अपनी ही इच्छाओं की डाल से बँधी हुई।

6.7.28

अनारतपतज्वालभूतपर्णपरम्परा । स्पन्दते मरुताऽऽमृष्टा संसृतिव्रततिश्चिरम् ॥ २८ ॥

anāratapatajvālabhūtaparṇaparamparā | spandate marutā''mṛṣṭā saṃsṛtivratatiściram || 28 ||

The vine of this world has an endless line of leaves that keep falling like flames. Touched by the wind, it trembles on and on, for a long time.

इस संसार की बेल में पत्तों की एक अंतहीन कतार है, जो आग की लपटों की तरह गिरती रहती है। हवा के छूते ही यह लंबे समय तक काँपती रहती है।

6.7.29

सृष्टेः कतिपयं कालं प्रहृष्टाः कुलशालिनः । अधःकृतोग्रनरकपङ्काः शङ्कोज्झिताः क्षणम् ॥ २९ ॥

sṛṣṭeḥ katipayaṃ kālaṃ prahṛṣṭāḥ kulaśālinaḥ | adhaḥkṛtogranarakapaṅkāḥ śaṅkojjhitāḥ kṣaṇam || 29 ||

For some time after creation, living beings feel joyful. They are proud of their family, they have put the terrible mud of hell behind them, and for a moment they are free of fear.

सृष्टि होने के कुछ समय बाद, जीव खुश रहते हैं। उन्हें अपने कुल पर गर्व होता है, वे नरक के भयानक कीचड़ को पीछे छोड़ चुके होते हैं, और कुछ पल के लिए वे डर से मुक्त रहते हैं।

6.7.30

भुक्तेन्दुखण्डकणिकानीलनीरदशैवले । स्वर्गमार्गसरस्यन्तः स्फुरन्ति सुरसा रसाः ॥ ३० ॥

bhukteindukhaṇḍakaṇikānīlanīradasaivale | svargamārgasarasyantaḥ sphuranti surasā rasāḥ || 30 ||

In the lake that is the path to heaven, the moss is made of dark clouds mixed with the crumbs of the moon that is being worn away. Inside it, sweet flavors sparkle.

स्वर्ग के मार्ग रूपी झील में, काई काले बादलों से बनी है, जिसमें घिसते हुए चाँद के टुकड़े मिले हैं। उसके भीतर मीठे रस चमकते हैं।

6.7.31

नानाफलालिमलिना वासनाजालमालिता । स्पन्दामोदमयी स्फीता क्रियाविकसिताब्जिनी ॥ ३१ ॥

nānāphalālimalinā vāsanājālamālitā | spandāmodamayī sphītā kriyāvikasitābjinī || 31 ||

This world is a lotus pond, dark with clusters of many kinds of fruit, wrapped in a net of desires, sweet-smelling with its own stirring, full, and blooming through action.

यह संसार एक कमल का तालाब है, जो कई तरह के फलों के गुच्छों से गहरा दिखता है, इच्छाओं के जाल में लिपटा है, अपनी ही हलचल से महकता है, भरपूर है, और कर्म से खिलता रहता है।

6.7.32

वराकी सृष्टिशफरी स्फुरन्ती भवपल्वले । कृतान्तवृद्धगृध्रेण शठेन विनिगृह्यते ॥ ३२ ॥

varākī sṛṣṭiśapharī sphurantī bhavapalvale| kṛtāntavṛddhagṛdhreṇa śaṭhena vinigṛhyate || 32 ||

The poor little fish that is creation glitters in the marsh of this existence, and the cunning old vulture that is death seizes it.

सृष्टि रूपी छोटी बेचारी मछली इस जीवन के दलदल में चमकती है, और मृत्यु रूपी चालाक बूढ़ा गिद्ध उसे पकड़ लेता है।

6.7.33

तरङ्गफेनमालेव सैवान्येव च भङ्गुरा । श्वःश्वोऽपरेन्दुलेखेव समुदेति विचित्रता ॥ ३३ ॥

taraṅgaphenamāleva saivānyeva ca bhaṅgurā| śvaḥśvo'parendulekheva samudeti vicitratā || 33 ||

This world's variety is fragile, like a garland of foam on a wave -- the same thing, and yet a different thing, each time. Day after day it rises new, like a fresh sliver of the moon.

इस संसार की विविधता कमज़ोर है, जैसे लहर पर झाग की माला -- हर बार वही, और फिर भी कुछ अलग। दिन-प्रतिदिन यह नए चाँद की पतली रेखा की तरह नई होकर उठती है।

6.7.34

भूरिभूतशराबाणि क्षणभङ्गानि कुर्वता । इदं कालकुलालेन चक्रं संपरिवर्त्यते ॥ ३४ ॥

bhūribhūtaśarābāṇi kṣaṇabhaṅgāni kurvatā| idaṃ kālakulālena cakraṃ saṃparivartyate || 34 ||

Time is a potter. It shapes countless things like clay pots, and breaks them in an instant, turning this wheel round and round.

काल एक कुम्हार है। वह मिट्टी के बर्तनों की तरह असंख्य चीज़ें बनाता है, और उन्हें एक ही पल में तोड़ देता है, और यह चाक लगातार घुमाता रहता है।

6.7.35

असंख्यातानि कल्पानि संजातान्यचले पदे । जगज्जङ्गलजालानि दग्धानि युगवह्निना ॥ ३५ ॥

asaṃkhyātāni kalpāni saṃjātānyacale pade| jagajjaṅgalajālāni dagdhāni yugavahninā || 35 ||

Inside the one unchanging reality, countless world-ages have come and gone. And the many forests of this world have been burnt again by the fire that ends each age.

उस एक अपरिवर्तनीय सत्य के भीतर, अनगिनत युग आए और चले गए हैं। और इस संसार के अनेक जंगल हर युग के अंत की आग से बार-बार जल चुके हैं।

6.7.36

भावाभावैरपर्यन्तैः सुखदुःखदशाशतैः । वैपरीत्यं प्रयात्येवमजस्त्रं जागती स्थितिः ॥ ३६ ॥

bhāvābhāvairaparyantaiḥ sukhaduḥkhadaśāśataiḥ| vaiparītyaṃ prayātyevamajastraṃ jāgatī sthitiḥ || 36 ||

Through endless rounds of coming to be and ceasing to be, and through hundreds of states of pleasure and pain, the condition of this world keeps turning into its opposite, without ever stopping.

बनने और मिटने के अनगिनत चक्रों से, और सुख-दुख की सैकड़ों दशाओं से, इस संसार की स्थिति बिना रुके अपने उलटे रूप में बदलती रहती है।

6.7.37

क्षुब्धैर्युगपरावर्तैर्वासनाशृंखलोम्भिता । महाशनिनिपातैश्च न भग्नाऽबुद्धधीरता ॥ ३७ ॥

kṣubdhairyugaparāvartairvāsanāśṛṅkhalombhitā | mahāśaninipātaiśca na bhagnā'buddhadhīratā || 37 ||

It is bound by the chain of its own desires, and shaken by the turning of the ages and the crash of great thunderbolts -- yet the false confidence of the person without understanding still does not break.

यह अपनी ही इच्छाओं की जंजीर से बँधा है, और युगों के बदलने और बड़ी बिजलियों के गिरने से हिलता है -- फिर भी बिना समझ वाले व्यक्ति का झूठा भरोसा नहीं टूटता।

6.7.38

शतशो विद्रुतारिध्रैर्दनुपुत्रैरमिष्टुताम् । भवभग्नतयामैन्द्रीं तनुं वहति वासना ॥ ३८ ॥

śataśo vidrutāridhrairdanuputrairamiṣṭutām | bhavabhagnatayāmaindrīṃ tanuṃ vahati vāsanā || 38 ||

Because this existence keeps breaking apart, desire puts on, then loses, the form of Indra -- the same form that the demon Danu's sons, though beaten back hundreds of times, still bring down.

क्योंकि यह जीवन बार-बार टूटता रहता है, इच्छा इंद्र का रूप धारण करती है और फिर उसे खो देती है -- वही रूप, जिसे राक्षस दनु के पुत्र, सैकड़ों बार हराए जाने पर भी, बार-बार गिरा देते हैं।

6.7.39

विशत्यविरतं भूतसर्गपांसुपरम्परा । नित्यं नियतिवात्येयं कालव्यालगलान्तरम् ॥ ३९ ॥

viśatyaviratam bhūtasargapāṃsuparamparā | nityaṃ niyativātyeyaṃ kālavyālagalāntaram || 39 ||

This storm of fate never stops. Endlessly and constantly, it drives the dust of every creature that is born into the open throat of the serpent that is time.

भाग्य का यह तूफ़ान कभी नहीं रुकता। यह लगातार और हमेशा, हर पैदा हुए जीव की धूल को समय रूपी सर्प के खुले गले में धकेलता रहता है।

6.7.40

पदार्थाम्भसि सर्वाणि फलफेनानि सर्वतः । पतन्त्यविरतापातमभाववडवामुखे ॥ ४० ॥

padārthāmbhasi sarvāṇi phalaphanāni sarvataḥ | patantyaviratāpātamabhāvavaḍavāmukhe || 40 ||

In the ocean of all things, every result appears like foam on every side, and falls without stopping into the mouth of the great fire under the sea, which is nothingness.

सभी वस्तुओं के इस सागर में, हर परिणाम चारों ओर झाग की तरह दिखाई देता है, और बिना रुके समुद्र के नीचे की उस बड़ी आग के मुँह में गिरता रहता है, जो शून्य है।

6.7.41

स्फुरन्त्याकस्मिकोद्भूता विचित्रद्रव्यशक्तयः । स्वभावमात्रसंपन्नाः स्पन्दश्रिय इवाम्भसः ॥ ४१ ॥

sphurantyākasmikoddhūtā vicitradravyaśaktayaḥ | svabhāvamātrasaṃpannāḥ spandaśriya ivāmbhasaḥ || 41 ||

The many powers hidden in things flash out all at once, arising from nothing but their own nature -- like the beauty of ripples that appear on water.

चीज़ों में छिपी अनेक शक्तियाँ अचानक एक साथ चमक उठती हैं, केवल अपने स्वभाव से पैदा होकर -- जैसे पानी पर उठने वाली लहरों की सुंदरता।

6.7.42

भूतमौक्तिकसंपूर्णान्बृहतः सुबहूनपि । जगत्कलभकानत्ति कृतान्तोद्रिक्तकेसरी ॥ ४२ ॥

bhūtamauktikasaṃpūrṇānbṛhataḥ subahūnapi | jagatkalabhakānatti kṛtāntodriktakesarī || 42 ||

Death is a fierce lion. It devours the world's elephant calves -- huge, countless, each one full of pearls -- exactly as a lion devours young elephants.

मृत्यु एक भयंकर सिंह है। वह संसार के हाथी के बच्चों को खा जाता है -- विशाल, असंख्य, हर एक मोतियों से भरा हुआ -- बिल्कुल वैसे ही जैसे एक सिंह हाथी के बच्चों को खा जाता है।

6.7.43

कुलशैलफला मेघपक्षपुञ्जाः फलामृजः । जायन्ते च म्रियन्ते च ध्रियन्ते च जगत्खगाः ॥ ४३ ॥

kulaśailaphalā meghapakṣapuñjāḥ phalāmṛjaḥ | jāyante ca mriyante ca dhriyante ca jagatkhagāḥ || 43 ||

Its fruits are the great mountains. And the birds of this world, whose wings are masses of cloud and who gather fruit to eat, are born, die, and go on existing.

इसके फल बड़े-बड़े पर्वत हैं। और इस संसार के पक्षी, जिनके पंख बादलों के समूह हैं और जो खाने के लिए फल चुनते हैं, जन्म लेते हैं, मरते हैं, और बने रहते हैं।

6.7.44

चिद्भित्तौ स्पन्दशुभ्रायां रङ्गैः पञ्चभिरिन्द्रियैः । उन्मीलयति संसारचित्राणि विधिचित्रकृत् ॥ ४४ ॥

cidbhittau spandaśubhrāyāṃ raṅgaiḥ pañcabhirindriyaiḥ | unmīlayati saṃsāracitrāṇi vidhicitrakṛt || 44 ||

On the wall of pure awareness, shining with its own movement, fate is the painter that uses the five senses as its colors to paint the pictures of this world.

शुद्ध चेतना की उस दीवार पर, जो अपनी ही हलचल से चमकती है, भाग्य वह चित्रकार है जो पाँचों इंद्रियों को रंग बनाकर इस संसार के चित्र बनाता है।

6.7.45

अजस्रगत्वरीं सर्वपरिवर्तविधायिनीम् । निमेषशतभागाङ्गीमसद्दुःसाधिताङ्कुराम् ॥ ४५ ॥

ajasragatvarīṃ sarvaparivartavidhāyinīm | nimeṣaśatabhāgāṅgīmasaddusādhitāṅkurām || 45 ||

It never stops moving. It brings about every change there is. Each of its parts happens within a hundredth part of a single blink of the eye. It sends up a shoot that is not real, yet is hard to win.

यह कभी रुकता नहीं, सदा चलता रहता है। यह हर तरह का बदलाव लाता है। इसका हर हिस्सा पलक झपकने के सौवें भाग जितने समय में घटित होता है। यह एक ऐसा अंकुर निकालता है जो असली नहीं है, फिर भी जिसे पाना आसान नहीं।

6.7.46

सूक्ष्मां कालस्य कलनां स्वसमुत्थानकारिणीम् । ध्यानेनैवान्ववेक्ष्यैताः स्थिताः स्थावरजातयः ॥ ४६ ॥

sūkṣmāṃ kālasya kalanāṃ svasamutthānakāriṇīm | dhyānenaivānvavekṣyaitāḥ sthitāḥ sthāvarajātayaḥ || 46 ||

This is the subtle working of time, which brings about its own rise. Only through deep meditation can this be seen. And so all these kinds of things that never move stay standing just as they are.

यह समय की वह सूक्ष्म क्रिया है जो स्वयं अपने उठने का कारण बनती है। इसे केवल गहरे ध्यान से ही देखा जा सकता है। और इसी तरह जो कुछ भी अपनी जगह से कभी नहीं हिलता, वह सब वैसे ही खड़ा रहता है।

6.7.47

रागद्वेषसमुत्थेन भावाभावमयेन च । जरामरणरोगेण जीर्णा जङ्गमजातयः ॥ ४७ ॥

rāgadveṣasamutthena bhāvābhāvamayena ca | jarāmaraṇarogeṇa jīrṇā jaṅgamajātayaḥ || 47 ||

The disease of old age and death, a disease born from liking and disliking and made of being and not being, wears down all the kinds of moving creatures.

बुढ़ापे और मृत्यु की यह बीमारी, जो राग और द्वेष से जन्म लेती है और होने और न-होने से बनी है, चलने-फिरने वाले हर प्राणी को घिसकर कमज़ोर कर देती है।

6.7.48

सुदुष्कृतोत्तमध्यानचारिण्यो धरणीतले । नियत्या नियतं कालं पीड्यन्ते कीटपङ्क्तयः ॥ ४८ ॥

suduṣkṛtottamadhyānacāriṇyo dharaṇītale | niyatyā niyataṃ kālaṃ pīḍyante kīṭapaṅktayaḥ || 48 ||

Rows of worms and insects, brooding endlessly over their own great misdeeds, are tormented on the face of the earth by fate, for a fixed span of time.

कीड़ों की पंक्तियाँ, अपने बड़े पापों को लेकर गहरे विचार में डूबी हुई, धरती की सतह पर नियति के हाथों एक निश्चित समय तक कष्ट भोगती हैं।

6.7.49

क्षणेनादृश्य एवेदं निगिरत्यखिलं सुखी । सुदुर्लक्ष्यविलः कालव्यालो विपुलभोगवान् ॥ ४९ ॥

kṣaṇenādṛśya evedaṃ nigiratyakhilaṃ sukhī | sudurlakṣyavilaḥ kālavyālo vipulabhogavān || 49 ||

In an instant it turns invisible and swallows all this, content. It is the serpent of time, its burrow impossible to spot, its coils enormous.

यह एक पल में अदृश्य होकर संतुष्ट भाव से यह सब कुछ निगल जाता है। यह समय का सर्प है, जिसका बिल ढूँढना असंभव है और जिसकी कुंडलियाँ विशाल हैं।

6.7.50

कालेन किंचिदालक्ष्य स्वशरीराकुलीकृताः । शीतवातातपप्रौढाः प्रोल्लसत्पुष्पदीप्तयः ॥ ५० ॥

kālena kiṃcidālakṣya svśarīrākulīkṛtāḥ | śītavātātapaprauḍhāḥ prollasatpuṣpadīptyaḥ || 50 ||

Time has marked them a little; it leaves their bodies restless. Yet they grow strong under cold, wind and heat, and shine as bright as opening flowers.

समय ने इन्हें थोड़ा-सा छुआ है, इनके शरीर को बेचैन कर दिया है। फिर भी ये सर्दी, हवा और धूप में मज़बूत होते जाते हैं, और खिलते फूलों जैसे चमकते हैं।

6.7.51

फलप्रदाश्चरन्तीह शीलिनः श्वभ्रविग्रहाः । पयःपटलविश्रान्तत्रैलोक्याम्भोजकोटरे ॥ ५१ ॥

phalapradāścarantīha śīlinaḥ śvabhravigrahāḥ | payaḥpaṭalaviśrāntatralokyāmbhojakoṭare || 51 ||

Fruit-bearing, they wander here, set in their ways, their bodies like hollow pits, resting on a bed of water inside the hollow of the lotus that is the three worlds.

फल देने वाले ये यहाँ घूमते हैं, अपने स्वभाव में बंधे हुए, इनके शरीर गड्ढों जैसे खोखले हैं, और ये तीनों लोकों रूपी कमल की खोखली जगह में पानी की एक तह पर टिके विश्राम करते हैं।

6.7.52

करोति घुंघुमं भूरि भूतभ्रमरपेटिका । ब्रह्माण्डभैक्ष्यभाण्डेयं काली भगवती क्रिया ॥ ५२ ॥

karoti ghuṃghumaṃ bhūri bhūtabhramarapeṭikā | brahmāṇḍabhaikṣyabhāṇḍeyaṃ kālī bhagavatī kriyā || 52 ||

This goddess Kali, the great power that acts, makes a loud humming sound. She is a hive full of buzzing creatures. The whole universe is her begging bowl.

यह देवी काली, कर्म करने वाली महाशक्ति, ज़ोर से भिनभिनाहट की आवाज़ करती है। वह भिनभिनाते प्राणियों से भरा एक छत्ता है। पूरा ब्रह्मांड उसका भिक्षा-पात्र है।

6.7.53

स्वयं दत्वैव दत्वैव भूतभिक्षां जिघृक्षति । तिमिरालीककबरी इन्दुर्कचपलेक्षणा ॥ ५३ ॥

svayaṃ datvaiva datvaiva bhūtabhikṣāṃ jighṛkṣati | timirālīkakabarī indvarkacapalekṣaṇā || 53 ||

Giving, and giving again, she herself wishes to take back the alms of living beings. Her braided hair is a plait of darkness; her restless eyes are the moon and the sun.

बार-बार देकर भी, वह स्वयं जीवों को दिए गए भिक्षादान को वापस लेना चाहती है। उसकी चोटी अंधकार की एक लट है; उसकी चंचल आँखें चाँद और सूरज हैं।

6.7.54

ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रादिधरागिरिवरादिका । ब्रह्मतत्त्वैकपिटका लम्बमानपयोधरा ॥ ५४ ॥

brahmopendramahendrādidadhāragirivarādikā | brahmatattvaikapiṭakā lambamānapayodharā || 54 ||

Brahma, Vishnu, Indra and all the rest, the earth and the great mountains and all the rest, all of it belongs to her. Even the one truth of Brahman is, to her, just a single basket. Her breasts hang low.

ब्रह्मा, विष्णु, इंद्र और बाकी सभी देवता, धरती और बड़े-बड़े पर्वत और बाकी सब कुछ, यह सब उसी का है। स्वयं ब्रह्म का एक सत्य भी उसके लिए बस एक टोकरी जैसा है। उसके स्तन लटके हुए हैं।

6.7.55

चिच्छक्तिमातृका स्थूला तरला घनचापला । तारकाजालदशना संध्यारुणतरा धरा ॥ ५५ ॥

cicchaktimātṛkā sthūlā taralā ghanacāpalā | tārakājāladadhanā saṃdhyāruṇatarā dharā || 55 ||

She is the mother-source of the power of consciousness, both solid and quivering, forever restless. Her teeth are a net of stars. She is the earth itself, more red than the evening sky.

वह चेतना की शक्ति का मूल स्रोत है, कभी स्थूल और कभी काँपती हुई, सदा बेचैन। उसके दाँत तारों का एक जाल हैं। वह स्वयं धरती है, संध्या के आकाश से भी अधिक लाल।

6.7.56

समस्तपद्मिनीहस्ता शतक्रतुपुरानना । सप्ताब्धिमुक्तालतिका नीलाम्बरपरीवृता ॥ ५६ ॥

samastapadminīhastā śatakratupurānanā | saptābdhimuktālatikā nīlāmbaraparīvṛtā || 56 ||

All the lotus ponds are her hands. Indra's city is her face. A string of pearls from the seven oceans hangs on her like a small vine. She is wrapped in a blue robe, the sky.

सारे कमल-तालाब उसके हाथ हैं। इंद्र की नगरी उसका मुख है। सातों समुद्रों के मोतियों की एक लता जैसी माला उस पर है। वह आकाश रूपी नीले वस्त्र में लिपटी है।

6.7.57

जम्बूद्वीपमहानाभिर्वनश्रीरोमराजिका । भूत्वा भूत्वा विनश्यन्ती त्रिलोकीवृद्धकामिनी ॥ ५७ ॥

jambūdvīpamahānābhirvanaśrīromarājikā | bhūtvā bhūtvā vinaśyantī trilokīvṛddhakāminī || 57 ||

Jambudvipa is her great navel. The beauty of the forests is the line of hair on her body. She comes into being again and again, and perishes again and again. She is the ancient woman of the three worlds.

जम्बूद्वीप उसकी बड़ी नाभि है। जंगलों की सुंदरता उसके शरीर पर बालों की रेखा है। वह बार-बार जन्म लेती है और बार-बार नष्ट होती है। वह तीनों लोकों की वृद्ध स्त्री है।

6.7.58

असकृज्जायते नष्टा भूरिविभ्रमकारिणी । मग्नमन्यैरथोन्मग्नं भीमे कालमहार्णवे ॥ ५८ ॥

asakṛjjāyate naṣṭā bhūrivibhramakāriṇī | magnamanyairathounmagnaṃ bhīme kālamahārṇave || 58 ||

Not once but again and again she is born, and destroyed, causing enormous confusion. In the terrible, vast ocean of time, one thing sinks while another rises up.

वह केवल एक बार नहीं, बल्कि बार-बार जन्म लेती है और नष्ट होती है, जिससे बड़ी उथल-पुथल मचती है। समय के भयंकर विशाल सागर में कोई चीज़ डूबती है तो कोई उभर आती है।

6.7.59

प्रतिकल्पक्षणं क्षीणैर्ब्रह्माण्डस्फुटबुद्बुदैः । कालेऽगाधरसस्यन्दे स्थित्वा स्थित्वा पुनःपुनः ॥ ५९ ॥

pratikalpakṣaṇaṃ kṣīṇairbrahmāṇḍasphuṭabudbudaiḥ | kāle'gādharasasyande sthitvā sthitvā punaḥpunaḥ || 59 ||

With whole universes bursting like bubbles and fading away moment by moment in every world-age, she stands, again and again, in that time whose current has no bottom.

पूरे ब्रह्मांड बुलबुलों की तरह हर युग में हर पल फूटकर मिटते रहते हैं, और वह उस समय में बार-बार खड़ी रहती है जिसकी धारा की कोई थाह नहीं।

6.7.60

कल्पमात्रनिमेषेणोड्डीनाः कारणसारसाः । उत्पत्त्योत्पत्त्य नाशिन्यः संतप्ताः सृष्टिविद्युतः ॥ ६० ॥

kalpamātranimēṣeṇoḍḍīnāḥ kāraṇasārasāḥ | utpattyoutpattya nāśinyaḥ saṃtaptāḥ sṛṣṭividyutaḥ || 60 ||

The cranes of cause take flight within a single blink that lasts a whole world-age. They arise again and again, and then perish, the scorching flashes of lightning that is creation.

कारण के ये सारस पक्षी एक ऐसी पलक झपकने भर में उड़ान भरते हैं जो एक पूरे युग जितनी लंबी है। वे बार-बार जन्म लेते हैं और फिर नष्ट हो जाते हैं, सृष्टि की जलती हुई बिजली की तरह।

6.7.61

कालमेघे स्फुरन्त्येताश्चित्प्रकाशवनोद्यमाः । प्रपतद्भूतविहगाः पतन्त्यविरतभ्रमाः ॥ ६१ ॥

kālameghe sphurantyetāścitprakāśavanodyamāḥ | prapatadbhūtavihagāḥ patantyaviratabhramāḥ || 61 ||

These flash like lightning in the cloud of time. Their rising is the radiant forest of consciousness. Falling like birds, these beings fall, whirling without rest.

ये समय के बादल में बिजली की तरह चमकते हैं। इनका उठना चेतना के प्रकाश-वन जैसा है। पक्षियों की तरह गिरते हुए, ये प्राणी बिना रुके, भँवर में घूमते हुए गिरते रहते हैं।

6.7.62

कालतालात्किलोत्तालाद्ब्रह्माण्डफलपालयः । उन्मेषकृतवैरिञ्चसृष्टयो देवनायकाः ॥ ६२ ॥

kālatālātkilottālādbrahmāṇḍaphalapālayaḥ | unmeṣakṛtavairiñcasṛṣṭayo devanāyakāḥ || 62 ||

From the tall palm tree of time fall the keepers of the fruit that is the universe, the great lords of the gods, in whose single blink Brahma's creation takes place.

समय के ऊँचे ताड़ के वृक्ष से ब्रह्मांड रूपी फल के रखवाले गिरते हैं, देवताओं के महान स्वामी, जिनकी एक पलक झपकने में ब्रह्मा की सृष्टि हो जाती है।

6.7.63

निमेषकृतसंहाराः सन्ति केचन कुत्रचिन्निमेषोन्मेषसंक्षीणकल्पजालाः सहस्रशः ॥ ६३ ॥

nimeṣakṛtasaṃhārāḥ santi kecana kutracitnimeṣonmeṣasaṃkṣīṇakalpajālāḥ sahasraśaḥ || 63 ||

Somewhere there are some whose destruction happens in the blink of an eye. By the thousands, whole webs of world-ages wear away with every blink, every opening of the eye.

कहीं-कहीं ऐसे भी हैं जिनका विनाश पलक झपकते ही हो जाता है। हज़ारों की संख्या में पूरे-पूरे युग-जाल हर पलक झपकने और खुलने के साथ घिसते जाते हैं।

6.7.64

रुद्राः केचन विद्यन्ते तस्मिंश्चित्परमे पुनःतेऽपि यस्य निमेषेण भवन्ति न भवन्ति च ॥ ६४ ॥

rudrāḥ kecana vidyante tasmiṃścitparame punaḥte'pi yasya nimeṣeṇa bhavanti na bhavanti ca || 64 ||

Again, within that supreme consciousness, there exist some Rudras. And even they, at the blink of one greater than themselves, come into being and go out of being.

फिर, उसी परम चेतना में कुछ रुद्र भी हैं। और वे भी किसी और की एक पलक झपकने भर से जन्म लेते हैं और मिट जाते हैं।

6.7.65

तादृशोऽप्यस्ति देवेशो ह्यनन्तेयं क्रियास्थितिः । अनन्तसंकल्पमये शून्ये च ब्रह्मणः पदे ॥ ६५ ॥

tādṛśo'pyasti deveśo hyananteyaṃ kriyāsthitiḥ | anantasaṃkalpamaye śūnye ca brahmaṇaḥ pade || 65 ||

There is a lord of gods greater still than these, for this activity of creation goes on without end, in the emptiness made of endless will, which is the very state of Brahman.

इनसे भी बड़ा एक देवताओं का स्वामी है, क्योंकि सृष्टि की यह क्रिया अनंत रूप से चलती रहती है, उस शून्य में जो अनंत संकल्प से बना है और जो स्वयं ब्रह्म की अवस्था है।

6.7.67

याः संपदो यदुत संततमापदश्च यद्बाल्ययौवनजरामरणोपतापाः । यन्मज्जनं च सुखदुःखपरम्पराभिरज्ञानतीव्रतिमिरस्य विभूतयस्ताः ॥ ६७ ॥

yāḥ saṃpado yaduta saṃtatamāpadaśca yadbālyayauvanajarāmaraṇopatāpāḥ | yanmajjanaṃ ca sukhaduḥkhaparamparābhirajñānatīvratimirasya vibhūtayastāḥ || 67 ||

Whatever good fortune there is, and the endless run of misfortune too, and the torments of childhood, youth, old age and death, and the sinking we go through in wave after wave of pleasure and pain, all of it is the power of ignorance's thick darkness.

जो भी सुख-संपत्ति है, और जो निरंतर चलने वाली विपत्तियाँ हैं, और बचपन, जवानी, बुढ़ापे और मृत्यु की जो पीड़ाएँ हैं, और सुख-दुःख की लहरों में जो डूबना होता है, यह सब अज्ञान के घने अंधकार की ही शक्तियाँ हैं।

Chapter 8

6.8.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संसारवनखण्डेऽस्मिंश्चित्पर्वततटे स्थिता । कीदृशी सृष्ट्यविद्याख्या लता विकसिता कदा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃsāravana khaṇḍe'smiṃścitparvatataṭe sthitā | kīdṛśī sṛṣṭyavidyākhyā latā vikasitā kadā || 1 ||

Sri Vasishtha said: In this stretch of the forest that is the world, standing on the slope of the mountain of consciousness, what is this creeper called the ignorance behind creation, and when did it come into bloom?

श्री वसिष्ठ ने कहा: संसार रूपी इस जंगल के हिस्से में, चेतना के पहाड़ की ढलान पर खड़ी हुई, सृष्टि की अविद्या नाम की यह बेल कैसी है, और यह कब खिली थी?

6.8.2

बृहत्पर्वतपर्वाढ्या ब्रह्माण्डत्वक्समावृता । देहयष्टिरियं यस्यास्त्रिलोकी लोककासिनी ॥ २ ॥

bṛhatparvataparvāḍhyā brahmāṇḍatvaksamāvṛtā | dehayaṣṭiriyam yasyāstrilokī lokakāsinī || 2 ||

Its stem has joints as big as great mountains, and it is wrapped in bark that is the shell of the cosmic egg. The three worlds are the very stalk of its body, visible to everyone.

इसके तने की गांठें बड़े-बड़े पहाड़ों जैसी हैं, और यह ब्रह्मांड के खोल जैसी छाल से ढकी है। तीनों लोक ही इसके शरीर का डंठल हैं, जो सबको दिखते हैं।

6.8.3

सुखं दुःखं भवो भावो ज्ञानमज्ञानमेव च । अत्रैतान्युरुवृत्तानि मूलानि च फलानि च ॥ ३ ॥

sukhaṃ duḥkhaṃ bhavo bhāvo jñānamajñānameva ca | atra etānyuruvṛttāni mūlāni ca phalāni ca || 3 ||

Pleasure and pain, becoming and being, knowledge and ignorance - all these are spread everywhere on this creeper; they are its roots, and they are its fruits.

सुख और दुख, बनना और होना, ज्ञान और अज्ञान - ये सब इस बेल पर हर तरफ फैले हुए हैं; यही इसकी जड़ें हैं और यही इसके फल भी हैं।

6.8.4

सुखादविद्योदेत्युच्चैस्तदेवान्ते प्रयच्छति । दुःखादविद्योदेत्युच्चैस्तदेवैषा फलत्यलम् ॥ ४ ॥

sukhādavidyodetyuccaiḥstadevānte prayacchati | duḥkhādavidyodetyuccaiḥstadevaiṣā phalaty alam || 4 ||

From pleasure, ignorance rises up high, and in the end this same ignorance gives back that very pleasure. From pain, ignorance rises up high in just the same way, and this creeper yields that same pain as its fruit.

सुख से अविद्या ऊँची उठती है, और आखिर में यह वही सुख लौटा देती है। दुख से भी अविद्या ठीक इसी तरह ऊँची उठती है, और यह बेल उसी दुख को अपना फल बना देती है।

6.8.5

भवादविद्योदेत्येषा तमेव फलति स्फुटम्। भावात्सत्तामवाप्नोति तमेव फलति क्षणम्॥ ५॥

bhavādavidyodetyeṣā tameva phalati sphuṭam | bhāvātsattāmavāpnoti tameva phalati kṣaṇam || 5 ||

From becoming, this ignorance arises, and it clearly bears that same becoming as its fruit. From being, it gains existence, and in a moment it yields that same being as its fruit.

बनने से यह अविद्या पैदा होती है, और यह साफ़ तौर पर फिर बनने को ही अपना फल बनाती है। होने से इसे सत्ता मिलती है, और यह पल भर में उसी होने को अपना फल बना देती है।

6.8.6

अज्ञानाद्वृद्धिमायाति तदेव स्यात्फलं स्फुटम् ज्ञानेनायाति संवित्तिस्तामेवान्ते प्रयच्छति॥ ६॥

ajñānād vṛddhimāyāti tadeva syāt phalaṃ sphuṭam jñānenāyāti saṃvittis tām evānte prayacchati || 6 ||

From ignorance it grows, and that same ignorance clearly becomes its fruit. Through knowledge, understanding arises, and in the end it gives back that same understanding.

अज्ञान से यह बढ़ती है, और वही अज्ञान साफ़ तौर पर इसका फल बनता है। ज्ञान से समझ पैदा होती है, और आखिर में यह वही समझ लौटा देती है।

6.8.7

नानाविधोल्लासवती वासना मोदशालिनी घनप्रवालतरला तनुरस्या विजृम्भते॥ ७॥

nānāvidhollāsavatī vāsanā modaśālinī ghanapravālataralā tanurasyā vijṛmbhate || 7 ||

This desire, brimming with many kinds of joy and rich delight, spreads and unfolds - its body thick and quivering with fresh new shoots.

यह वासना कई तरह की उमंग से भरी और आनंद से भरपूर है; इसका शरीर नई-नई कोंपलों से घना और कांपता हुआ फैलता और खुलता है।

6.8.8

दिवसव्यूहकुसुमा यामिनीलोलषट्पदा अजस्रं स्पन्दमानैषा प्रपतद्भूतपल्लवा॥ ८॥

divasavyūhakusumā yāminīlolaṣaṭpadā ajasraṃ spandamānaiṣā prapatadbhūtapallavā || 8 ||

Its flowers are the days, one after another; its restless bees are the nights. Ever trembling, this creeper's falling leaves are living beings.

इसके फूल एक के बाद एक आते हुए दिन हैं, और इसकी भटकती भँवरे रातें हैं। यह हमेशा कांपती रहती है, और इसकी गिरती हुई कोंपलें ही सारे जीव-जंतु हैं।

6.8.9

आगत्यागत्य पतति विवेककरिणीं क्वचित् विधूयते धूतरजाः प्रसक्तिं पुनरेति च॥ ९॥

āgatya āgatya patati vivekakariṇīṃ kvacit vidhūyate dhūtarajāḥ prasaktiṃ punareti ca || 9 ||

Coming again and again, it sometimes falls upon the elephant of discernment; it is shaken off, its pollen scattered, and yet it returns once more to clinging.

यह बार-बार आकर कभी विवेक की हथिनी पर जा गिरती है; वहाँ से झटक दी जाती है, इसका पराग बिखर जाता है, फिर भी यह दोबारा आसक्ति की ओर लौट आती है।

6.8.10

जायमानप्रवालाढ्या संजाताङ्कुरदन्तुरा सर्वर्तुकुसुमोपेता समग्ररसशालिनी ॥ १० ॥

jāyamānapravālāḍhyā saṃjātāṅkuradanturā sarvartukusumopetā samagrarasaśālinī || 10 ||

It is rich with fresh shoots always being born, rough with newly sprouted buds, decked with flowers of every season, and full of every kind of sap.

यह हमेशा नई-नई कोंपलों से भरपूर है, नए अंकुरों से खुरदरी है, हर मौसम के फूलों से सजी है, और हर तरह के रस से भरी है।

6.8.11

जन्मपर्वाहिनीरन्ध्रा विनाशच्छिद्रचञ्चुरा । भोगाभोगरसापूर्णा विचारैकघुणक्षता ॥ ११ ॥

janmaparvāhinīrandhrā vināśacchidracañcurā | bhogābhogarasāpūrṇā vicāraikaghuṇakṣatā || 11 ||

The joints of its stem, where new life is born, are hollow all through. Its budding tips are restless openings where decay pours in. It is filled to overflowing with the sap of enjoyment, and it is eaten away only by the single woodworm of inquiry.

इसके तने की गांठें, जहाँ नया जीवन जन्म लेता है, पूरी तरह खोखली हैं। इसकी कोंपलों की नोकें बेचैन दरारें हैं, जहाँ से नाश अंदर आता है। यह भोग के रस से लबालब भरी है, और इसे केवल विचार रूपी एक घुन ही खाकर खोखला करता है।

6.8.12

विकसन्त्यः प्रतिदिनं चन्द्रार्कावलयोऽभितः । व्योम्नि वातविलोलानि पुष्पाण्यस्याः किल ग्रहाः ॥ १२ ॥

vikasantyaḥ pratidinaṃ candrārkāvalayo'bhitaḥ | vyomni vātavilolāni puṣpāṇyasyāḥ kila grahāḥ || 12 ||

Its flowers are the round moon and sun, blooming everyday all around; its flowers are also the planets, trembling like blossoms in the wind of the sky.

इसके फूल हैं चाँद और सूरज के गोल मंडल, जो रोज़ चारों ओर खिलते हैं; इसके फूल आकाश में हवा में कांपते हुए ग्रह भी हैं।

6.8.13

अस्याः प्रस्फुरिताकाराः कोरकत्वमुपागताः । पूरिताकाशकोशायास्तारका रघुनन्दन ॥ १३ ॥

asyāḥ prasphuritākārāḥ korakatvamupāgatāḥ | pūritākāśakośāyāstārakā raghunandana || 13 ||

O Raghunandana, its shimmering forms have turned into buds; the stars are its bud-covers, filling the sky.

हे रघुनन्दन, इसके टिमटिमाते रूप कलियाँ बन गए हैं; आकाश को भरने वाले तारे ही इसकी कलियों के खोल हैं।

6.8.14

चन्द्रार्कदहनालोका यस्यास्तत्कौसुमं रजः । अनेनेयं हि गौराङ्गी स्त्रीव चेतांसि कर्षति ॥ १४ ॥

candrārkadahanālokā yasyāstatkausumaṃ rajaḥ | aneneyaṃ hi gaurāṅgī strīva cetāṃsi karṣati || 14 ||

The pollen of its flowers glows with the light of the moon, the sun, and fire; and because of this, this fair-bodied one draws the mind, just as a woman does.

इसके फूलों का पराग चाँद, सूरज और आग की तरह चमकता है; और इसी वजह से यह गोरे शरीर वाली बेल किसी स्त्री की तरह मन को खींच लेती है।

6.8.15

मनोमातङ्गविधुता संकल्पकलकोकिला । इन्द्रियव्यालसंबाधा तृष्णात्वगुपरञ्जिता ॥ १५ ॥

manomātaṅgavidhutā saṃkalpakalakokilā | indriyavyālasaṃbādhā tṛṣṇātvaguparañjitā || 15 ||

It is shaken by the elephant that is the mind. It holds a cuckoo that is sweet-voiced intention. It is crowded with the snakes that are the senses. And it is dyed by the bark of craving.

यह मन रूपी हाथी से हिलती है। इसमें संकल्प रूपी मीठी बोलने वाली कोयल बैठी है। यह इंद्रियों रूपी साँपों से घिरी है। और यह तृष्णा रूपी छाल से रंगी हुई है।

6.8.16

नीलाकाशतमालाङ्गसंश्रयेणोन्नतिं गता । रोदसीजानुसुस्तम्भा भुवनोद्यानभूषिता ॥ १६ ॥

nīlākāśatamālāṅgasaṅśrayeṇonnatiṃ gatā | rodasījānusustambhā bhuvanodyānabhūṣitā || 16 ||

By climbing the blue sky as if it were a dark tamala tree, it has grown very tall. Propped firmly on the knees of heaven and earth, it adorns the garden of the whole universe.

नीले आकाश का मानो तमाल वृक्ष जैसा सहारा लेकर, यह बहुत ऊँची उठ गई है। स्वर्ग और धरती के घुटनों पर मज़बूती से टिककर, यह पूरे ब्रह्मांड के बगीचे को सजाती है।

6.8.17

अधोब्रह्माण्डखण्डेषु स्वालवालेन जालिता । विधृताशेषजलधिजलक्षीरादिसेचना ॥ १७ ॥

adhobrahmāṇḍakhaṇḍeṣu svālavālena jālitā | vidhṛtāśeṣajaladhijalakṣīrādisecanā || 17 ||

In the lower reaches of the universe she has been given her own watering basin, and into it has been poured the water of every ocean, and milk, and more besides.

ब्रह्मांड के निचले हिस्सों में उसे अपनी सिंचाई की क्यारी दी गई है, और उसमें हर समुद्र का पानी, दूध और भी बहुत कुछ डाला गया है।

6.8.18

त्रयीविलोलभ्रमरा रमणीपुष्पपुञ्जिका । चित्स्पन्दवातचलिता क्रियाविपुलपुत्तिका ॥ १८ ॥

trayīvilolabhramarā ramaṇīpuṣpapuñjikā | cittaspandavātacalitā kriyāvipulaputtikā || 18 ||

The three Vedas are the restless bees that hover around her, beautiful women are the clusters of flowers on her, the stirring of consciousness is the wind that shakes her, and countless rituals are the ants that crawl over her.

तीनों वेद उसके चारों ओर मंडराते बेचैन भौंरे हैं, सुंदर स्त्रियाँ उस पर लगे फूलों के गुच्छे हैं, चेतना की हलचल वह हवा है जो उसे हिलाती है, और अनगिनत कर्मकांड उस पर रेंगती दीमकें हैं।

6.8.19

कुकर्माजगरव्याप्ता स्वर्गश्रीपुष्पमण्डपा । जीवजीवननीरन्ध्रा नानामोदमदप्रदा ॥ १९ ॥

kukarmājagaravyāptā svargasrīpuṣpamaṇḍapā | jīvajīvananīrandhrā nānāmodamadapradā || 19 ||

Pythons of evil deeds coil through her, the splendour of heaven is the flowering bower she wears, she runs on unbroken through the whole life of every living thing, and she gives every kind of delight and every kind of intoxication.

बुरे कर्मों के अजगर उसमें लिपटे रहते हैं, स्वर्ग की शोभा उसका फूलों से भरा मंडप है, वह हर जीव के पूरे जीवन में बिना टूटे फैली रहती है, और वह हर तरह का आनंद और हर तरह का नशा देती है।

6.8.20

नानोपशमवैचित्र्यनानाकुसुमभासिनी । नानाफलावलीव्याप्ता नानावर्षविकासिनी ॥ २० ॥

nānopaśamavaicitryanānākusumabhāsinī | nānāphalāvalīvyāptā nānāvarṣavikāsinī || 20 ||

She shines with flowers of every colour in every kind of stillness, she is covered with strings of every kind of fruit, and she blossoms through every kind of year.

वह हर तरह की शांति में रंग-बिरंगे फूलों से चमकती है, वह तरह-तरह के फलों के गुच्छों से लदी रहती है, और वह हर मौसम में खिलती है।

6.8.21

नानालवालवलया नानाविहगधारिणी । नानापरागपरुषा नानाभूधरजालिका ॥ २१ ॥

nānālavālavalayā nānāvihagadhāriṇī | nānāparāgaparuṣā nānābhūdharajālikā || 21 ||

She is ringed with watering basins of every kind, she holds birds of every kind, she is rough with pollen of every kind, and she is netted over with mountains of every kind.

वह हर तरह की सिंचाई-क्यारियों से घिरी है, वह हर तरह के पक्षियों को थामे रहती है, वह हर तरह के पराग से खुरदरी है, और वह हर तरह के पहाड़ों के जाल से ढकी है।

6.8.22

नानाकलाकुड्मलिनी नानावनगणोत्थिता । नानागिरितटारूढा नानादलनिरन्तरा ॥ २२ ॥

nānākalākuḍmalinī nānāvanagaṇotthitā | nānāgiritaṭārūḍhā nānādalanirantarā || 22 ||

She buds with every kind of art, she rises up out of every kind of forest, she climbs every kind of mountain slope, and she is thick with every kind of leaf.

वह हर तरह की कलाओं की कलियों से भरी है, वह हर तरह के जंगलों में से उठती है, वह हर तरह की पहाड़ी ढलानों पर चढ़ती है, और वह हर तरह के पत्तों से घनी है।

6.8.23

जाता च जायमाना च म्रियमाणा तथा मृता । अर्धच्छिन्ना तथाऽच्छिन्ना नित्यमच्छेदिनी तथा ॥ २३ ॥

jātā ca jāyamānā ca mriyamāṇā tathā mṛtā | ardhacchinnā tathā'cchinnā nityamacchedinī tathā || 23 ||

She is born, and she is being born, she is dying, and she is already dead. She is cut halfway through, and she is uncut too, and she is always the one no cut can touch.

वह जन्म लेती है, और जन्म ले रही है, वह मर रही है, और मर चुकी है। वह आधी कटी है, और वह अकटी भी है, और वह हमेशा वही है जिसे कोई काट नहीं सकता।

6.8.24

अतीता वर्तमाना च सत्येवासत्यवत्सदा । नित्यमत्यन्ततरुणी नित्यं शोषमुपेयुषी ॥ २४ ॥

atītā vartamānā ca satyevāsatyavatsadā | nityamatyantataruṇī nityaṃ śoṣamupeyuṣī || 24 ||

She is the past and she is the present, always as real as she is unreal. She is forever endlessly young, and she is always withered too.

वह भूतकाल भी है और वर्तमान भी, हमेशा उतनी ही सच्ची जितनी झूठी। वह सदा से हमेशा जवान है, और वह हमेशा मुरझाई हुई भी है।

6.8.25

महाविषलतैषा हि संसारविषमूर्च्छनाम् । ददाति रभसाश्लिष्टा परामृष्टा विनश्यति ॥ २५ ॥

mahāviṣalataiṣā hi saṃsāraviṣamūrchchanām | dadāti rabhasāśliṣṭā parāmṛṣṭā vinaśyati || 25 ||

This is indeed the great poison vine. Held in a tight embrace she gives the poisoned stupor of this world, but touched, she perishes.

यही है वह बड़ी विषबेल। कसकर जकड़ने पर वह संसार की विषैली मूर्च्छा देती है, पर छूते ही वह नष्ट हो जाती है।

6.8.26

स्फीतेऽन्तर्गलिता तस्य अज्ञेऽन्तः संस्थितान्विता । इतो जलमितः शैला इतो नागाः सुरा इतः ॥ २६ ॥

sphīte'ntargalitā tasya ajñe'ntaḥ saṃsthitānvitā | ito jalamitaḥ śailā ito nāgāḥ surā itaḥ || 26 ||

She has melted into that vastness, and she stays fixed within the unknown. From her comes water on this side, mountains on that side, serpents on this side, gods on that side.

वह उस विशालता में घुल-मिल गई है, और अनजाने के भीतर टिकी रहती है। उससे ही इधर पानी बनता है, उधर पहाड़, इधर नाग, उधर देवता।

6.8.27

इतः पृथ्वीत्वमायाता तथेतो द्युतया स्थिता । इतश्चन्द्रार्कतां प्राप्ता तथेतस्तारकाकृतिः ॥ २७ ॥

itaḥ pṛthvītvamāyātā tatheto dyutayā sthitā | itaścandrārkatāṃ prāptā tathetastārakākṛtiḥ || 27 ||

Here she has become the earth, and here she stands as light. Here she has become the moon and the sun, and here she takes the shape of the stars.

यहाँ वह पृथ्वी बन गई है, और यहाँ वह प्रकाश बनकर खड़ी है। यहाँ वह चाँद और सूरज बन गई है, और यहाँ वह तारों का रूप ले लेती है।

6.8.28

इतस्तम इतस्तेज इतः खमित उर्वरा । इतः शास्त्रमितो वेदा इतो द्वयविवर्जिता ॥ २८ ॥

itastama itasteja itaḥ khamita urvarā | itaḥ śāstramito vedā ito dvayavivarjitā || 28 ||

Here she is darkness, here she is light, here she is space, here she is fertile land. Here she is scripture, here she is the Vedas, and here she is beyond both.

यहाँ वह अंधकार है, यहाँ वह प्रकाश है, यहाँ वह आकाश है, यहाँ वह उपजाऊ धरती है। यहाँ वह शास्त्र है, यहाँ वह वेद है, और यहाँ वह इन दोनों से परे है।

6.8.29

क्वचित्खगतयोड्डीना क्वचिद्देवतयोत्थिता । क्वचित्स्थाणुतया रूढा क्वचित्पवनतां गता ॥ २९ ॥

kvacitkhagatayoḍḍīnā kvaciddevatayotthitā | kvacitsthāṇutayā rūḍhā kvacitpavanatāṃ gatā || 29 ||

Somewhere she flies as a bird, somewhere she rises up as a god, somewhere she stands fixed as a post, somewhere she turns into the wind.

कहीं वह पक्षी बनकर उड़ती है, कहीं वह देवता बनकर उठती है, कहीं वह खंभे जैसी जड़ खड़ी रहती है, कहीं वह हवा बन जाती है।

6.8.30

क्वचिन्नरकसंलीना क्वचित्स्वर्गविलासिनी । क्वचित्सुरपदं प्राप्ता क्वचित्कृमितया स्थिता ॥ ३० ॥

kvacinnarakasaṃlīnā kvacitsvargavilāsinī | kvacitsurapadaṃ prāptā kvacitkṛmitayā sthitā || 30 ||

Somewhere she lies sunk in hell, somewhere she enjoys herself in heaven, somewhere she has reached the rank of a god, somewhere she lives as a worm.

कहीं वह नरक में डूबी पड़ी है, कहीं वह स्वर्ग में मौज करती है, कहीं वह देवता का पद पा चुकी है, कहीं वह कीड़ा बनकर रहती है।

6.8.31

क्वचिद्विष्णुः क्वचिद्ब्रह्मा क्वचिद्रुद्रः क्वचिद्रविः । क्वचिदग्निः क्वचिद्वायुः क्वचिच्चन्द्रः क्वचिद्यमः ॥ ३१ ॥

kvacidviṣṇuḥ kvacidbrahmā kvacidrudraḥ kvacidraviḥ | kvacidagniḥ kvacidvāyuḥ kvaciccandraḥ kvacidyamaḥ || 31 ||

Somewhere she is Vishnu, somewhere Brahma, somewhere Rudra, somewhere the sun. Somewhere she is fire, somewhere wind, somewhere the moon, somewhere Yama.

कहीं वह विष्णु है, कहीं ब्रह्मा, कहीं रुद्र, कहीं सूर्य। कहीं वह अग्नि है, कहीं वायु, कहीं चन्द्रमा, कहीं यम।

6.8.32

यत्किंचनाङ्ग भुवनेषु महामहिम्नाव्याप्तं जरत्तृणलवत्वमुपागतं वा । दृश्यं स्फुरन्ननु हराद्यपि तामविद्यां विद्धि क्षयाय तदतीततयात्मलाभः ॥ ३२ ॥

yatkiñcanāṅga bhuvaneṣu mahāmahimnāvyāptaṃ jarattṛṇalavatvamupāgataṃ vā | dṛśyaṃ sphurannanu harādyapi tāmavidyāṃ viddhi kṣayāya tadatītatayātmalābhḥ || 32 ||

Whatever there is in the worlds, dear one, whether it fills them with great glory or has shrunk down to a scrap of withered grass, this whole visible world shining before us, Hara and the other gods included, know it to be ignorance, headed for destruction. Only by rising above it does one gain the true self.

इस संसार में जो कुछ भी है, प्रिय, चाहे वह बड़ी महिमा से भरा हो या सूखी घास के एक तिनके जैसा तुच्छ बन गया हो, यह पूरा दिखने वाला जगत जो हमारे सामने चमक रहा है, शिव और बाकी सब देवताओं समेत, इसे अज्ञान समझो, जो नष्ट होने के लिए ही है। इससे ऊपर उठकर ही सच्चे स्वयं की प्राप्ति होती है।

Chapter 9

6.9.1

श्रीराम उवाच । आकारजातमुदितं शुद्धं हरिहराद्यपि । अविद्यैवेत्यहं श्रुत्वा ब्रह्मन्भ्रममिवागतः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | ākārajātamuditaṃ śuddhaṃ hariharādyapi | avidyai veti ahaṃ śrutvā brahman bhramam ivāgataḥ || 1 ||

Sri Rama said: O Brahmin, when I heard that this whole world of forms that has arisen, pure as it is said to be, including even Hari and Hara, is nothing but ignorance, I fell into confusion.

श्रीराम ने कहा: हे ब्रह्मन, जब मैंने सुना कि यह जो रूपों का पूरा जगत प्रकट हुआ है, जिसे शुद्ध कहा जाता है, और जिसमें हरि और हर तक शामिल हैं, वह सब केवल अविद्या ही है, तो मैं उलझन में पड़ गया।

6.9.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । संवेद्येनापरामृष्टं शान्तं सर्वात्मकं च यत् । तत्सच्चिदाभासमयमस्तीह कलनोज्झितम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃvedyenāparāmṛṣṭaṃ śāntaṃ sarvātmakaṃ ca yat | tatsaccidābhāsamayamastīha kalanojjhitam || 2 ||

Sri Vasishtha said: That which no known thing can touch, which is at peace, and which is the self of everything, exists here as pure being and awareness shining out, entirely free of imagining.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: जिसे कोई जानी हुई चीज़ छू नहीं सकती, जो शांत है, और जो सबका आत्मा है, वह यहाँ शुद्ध सत्ता और चेतना की चमक के रूप में है, जिसमें कोई कल्पना नहीं है।

6.9.3

समुदेति स्वतस्तस्मात्कला कलनरूपिणी । जलादावर्तलेखेव स्फुरज्जलतयोदिता ॥ ३ ॥

samudeti svatastasmātkalā kalanarūpiṇī | jalādāvartalekheva sphurajjalatayoditā || 3 ||

From that, on its own, rises a small stir that takes the form of imagining, the way a curling swirl-line rises from water, appearing as trembling water.

उससे अपने आप एक हलचल उठती है जो कल्पना का रूप ले लेती है, जैसे पानी से भँवर की घुमावदार रेखा उठती है और काँपते पानी के रूप में दिखाई देती है।

6.9.4

सूक्ष्मा मध्या तथा स्थूला चेति सा कल्प्यते त्रिधा । पश्चान्मनस्तया तेन ज्ञातैव वपुषा पुनः ॥ ४ ॥

sūkṣmā madhyā tathā sthūlā ceti sā kalpyate tridhā | paścānmanastayā tena jñātaiva vapuṣā punaḥ || 4 ||

That stir is pictured as three kinds: fine, middling, and coarse. After that, mind comes about through it, and through that mind, it becomes known once more as a body.

उस हलचल को तीन तरह का माना जाता है: सूक्ष्म, मध्यम और स्थूल। इसके बाद उसी से मन बनता है; और उस मन के ज़रिए वह फिर से एक शरीर के रूप में जानी जाती है।

6.9.5

तिष्ठत्येतास्ववस्थासु भेदतः कल्प्यते त्रिधा । सत्त्वं रजस्तम इति एषैव प्रकृतिः स्मृता ॥ ५ ॥

tiṣṭhatyetāsvavasthāsu bhedataḥ kalpyate tridhā | sattvaṃ rajastama iti eṣaiva prakṛtiḥ smṛtā || 5 ||

It stays in these states, and by their differences it is again pictured as three: sattva, rajas, and tamas. This alone is what is called nature.

वह इन्हीं अवस्थाओं में रहती है, और उनके भेद से उसे फिर तीन रूपों में माना जाता है: सत्त्व, रज और तम। इसी को प्रकृति कहा जाता है।

6.9.6

अविद्यां प्रकृतिं विद्धि गुणत्रितयधर्मिणीम्। एषैव संसृतिर्जन्तोरस्याः पारं परं पदम्॥ ६॥

avidyāṃ prakṛtiṃ viddhi guṇatritayadharmiṇīm | eṣaiva saṃsṛtirjantorasyāḥ pāraṃ paraṃ padam || 6 ||

Know that this nature, carrying the three gunas, is ignorance itself. This itself is the living being's wandering; beyond it is the highest state.

जान लो कि तीन गुणों वाली यह प्रकृति अविद्या ही है। यही जीव का भटकना है; इसके पार ही सबसे ऊँचा पद है।

6.9.7

अत्र ते ये त्रयः प्रोक्ता गुणास्तेऽपि त्रिधा स्मृताः। सत्त्वं रजस्तम इति प्रत्येकं भिद्यते गुणः॥ ७॥

atra te ye trayāḥ proktā guṇāste'pi tridhā smṛtāḥ | sattvaṃ rajastama iti pratyekaṃ bhidyate guṇaḥ || 7 ||

Here, those three gunas just spoken of are also held to be three each: sattva, rajas, and tamas; each guna splits again in this way.

यहाँ जिन तीन गुणों की बात हुई, वे भी तीन-तीन प्रकार के माने जाते हैं: सत्त्व, रज और तम; हर गुण फिर इसी तरह बँट जाता है।

6.9.8

नवधैवं विभक्तेयमविद्या गुणभेदतः। यावत्किंचिदिदं दृश्यमनयैव तदाश्रितम्॥ ८॥

navadhaivam vibhakteyamavidyā guṇabhedataḥ | yāvatkiñcididaṃ dṛśyamanayāiva tadāśritam || 8 ||

In this way, this ignorance is divided into nine, by the dividing of the gunas. Whatever can be seen here, all of it rests on this alone.

इस तरह गुणों के बँटवारे से यह अविद्या नौ भागों में बँट जाती है। यहाँ जो कुछ भी दिखाई देता है, वह सब इसी पर टिका है।

6.9.9

ऋषयो मुनयः सिद्धा नागा विद्याधराः सुराः। इति भागमविद्यायाः सात्त्विकं विद्धि राघव॥ ९॥

ṛṣayo munayaḥ siddhā nāgā vidyādharāḥ surāḥ | iti bhāgamavidyāyāḥ sāttvikaṃ viddhi rāghava || 9 ||

Rishis, munis, siddhas, nagas, vidyadharas, and gods, know these, O Raghava, to be the sattva portion of ignorance.

ऋषि, मुनि, सिद्ध, नाग, विद्याधर और देवता, हे राघव, इन्हें अविद्या का सात्त्विक भाग जानो।

6.9.10

सात्त्विकस्यास्य भागस्य नागविद्याधरास्तमः। रजस्तु मुनयः सिद्धाः सत्त्वं देवा हरादयः॥ १०॥

sāttvikasyāsya bhāgasya nāgavidyādharāstamaḥ | rajastu munayaḥ siddhāḥ sattvaṃ devā harādayaḥ || 10 ||

Within this sattva portion itself, the nagas and vidyadharas are its tamas, the munis and siddhas are its rajas, and the gods, Hara and the rest, are its sattva.

इसी सात्त्विक भाग में से नाग और विद्याधर इसका तम भाग हैं, मुनि और सिद्ध इसका रज भाग हैं, और हर आदि देवता इसका सत्त्व भाग हैं।

6.9.11

सत्त्वजातौ देवयोनावविद्या प्राकृतैर्गुणैः। निर्मलं पदमायाताः सत्त्वं हरिहरादयः॥ ११॥

sattvajātau devayonāvavidyā prākṛtairguṇaiḥ | nirmalaṃ padamāyātāḥ sattvaṃ hariharādayaḥ || 11 ||

Even among the sattva-born, the race of the gods, ignorance still works through nature's own gunas. But Hari, Hara, and the rest have come to the stainless state; they are that sattva.

सत्त्व से जन्मी देवताओं की जाति में भी प्रकृति के गुणों के कारण अविद्या बनी रहती है। पर हरि, हर आदि निर्मल अवस्था को पा चुके हैं; वे ही असली सत्त्व हैं।

6.9.12

भाग एष त्वविद्याया एवं विद्यात्वमागतः । बीजं फलत्वमायाति फलमायाति बीजताम् ॥ १२ ॥

bhāga eṣa tvavidyāyā evaṃ vidyātvamāgataḥ | bījaṃ phalatvamāyāti phalamāyāti bījatām || 12 ||

In this way this portion of ignorance has come to the state of knowledge, just as a seed turns into a fruit, and a fruit turns into a seed.

इस तरह अविद्या का यह भाग विद्या की अवस्था को प्राप्त हो गया है, जैसे बीज फल बन जाता है, और फल बीज बन जाता है।

6.9.13

तेन रुद्रादयो ह्येते सत्त्वभागा महामते । तिष्ठन्ति मुक्ताः पुरुषा यावद्देहं जगत्स्थितौ ॥ १३ ॥

tena rudrādayo hyete sattvabhāgā mahāmate | tiṣṭhanti muktāḥ puruṣā yāvaddēhaṃ jagatsthitau || 13 ||

So, O wise one, Rudra and the rest, who are this sattva portion, remain as free men, staying in the world in the body only for as long as the body lasts.

इसलिए, हे बुद्धिमान, रुद्र आदि, जो यह सत्त्व भाग हैं, मुक्त पुरुषों के रूप में रहते हैं; जब तक शरीर है, तभी तक वे संसार में शरीर सहित रहते हैं।

6.9.14

यावद्देहं महात्मानो जीवन्मुक्ता व्यवस्थिताः । विदेहमुक्ता देहान्ते स्थास्यन्ति परमेश्वरे ॥ १४ ॥

yāvaddēhaṃ mahātmāno jīvanmuktā vyavasthitāḥ | videhamuktā dēhāntē sthāsyanti paramēśvarē || 14 ||

As long as the body lasts, these great souls remain fixed as free while still living. When the body ends, freed even of the body, they will come to rest in the supreme lord.

जब तक शरीर है, तब तक ये महात्मा जीते जी मुक्त होकर स्थिर रहते हैं। शरीर के अंत होने पर, शरीर से भी मुक्त होकर, वे परमेश्वर में जा टिकेंगे।

6.9.16

उदेत्यविद्या विद्यायाः सलिलादिव बुद्बुदः । विद्यायां लीयतेऽविद्या पयसीव हि बुद्बुदः ॥ १६ ॥

udetyavidyā vidyāyāḥ salilādiva budbudaḥ | vidyāyāṃ līyatē'vidyā payasīva hi budbudaḥ || 16 ||

Ignorance rises out of knowledge, the way a bubble rises out of water. Ignorance dissolves back into knowledge, the way a bubble dissolves back into water.

अविद्या विद्या से उठती है, जैसे पानी से बुलबुला उठता है। अविद्या विद्या में ही विलीन हो जाती है, जैसे बुलबुला पानी में विलीन हो जाता है।

6.9.17

पयस्तरङ्गयोर्द्वित्वभावनादेव भिन्नता । विद्याविद्यादृशोर्भेदभावनादेव भिन्नता ॥ १७ ॥

payastaraṅgayordvitvabhāvanādeva bhinnatā | vidyāvidyādṛśorbhedabhāvanādeva bhinnatā || 17 ||

Between water and a wave, the difference exists only because we think of them as two. Between the way of knowledge and the way of ignorance, the difference exists only because we think of them as different.

पानी और लहर में भेद केवल इसलिए है क्योंकि हम उन्हें दो मान लेते हैं। विद्या और अविद्या की दृष्टि में भेद केवल इसलिए है क्योंकि हम उन्हें अलग मान लेते हैं।

6.9.18

पयस्तरङ्गयोरैक्यं यथैव परमार्थतः । नाविद्यात्वं न विद्यात्वमिह किंचन विद्यते ॥ १८ ॥

payastaraṅgayoraikyaṃ yathaiva paramārthataḥ | nāvidyātvaṃ na vidyātvaṃiha kiṃcana vidyate || 18 ||

Just as water and its wave are, in truth, one and the same thing, so here nothing at all really exists as ignorance, and nothing at all really exists as knowledge.

जैसे जल और लहर सच में एक ही हैं, वैसे ही यहाँ न तो कोई चीज़ अज्ञान है और न ही कोई चीज़ ज्ञान है।

6.9.19

विद्याविद्यादृशौ त्यक्त्वा यदस्तीह तदस्ति हि । प्रतियोगिव्यवच्छेदवशादेतद्रघूद्वह ॥ १९ ॥

vidyāvidyādṛśau tyaktvā yadastīha tadasti hi | pratiyogivyavacchedavśādetadrghūdvaha || 19 ||

Rama, leave behind these two, knowledge and ignorance. Whatever is here simply is. We mark it off as one or the other only because each is known by ruling out its opposite.

राम, ज्ञान और अज्ञान -- इन दोनों को छोड़ दो। जो भी यहाँ है, बस है। हम इसे ज्ञान या अज्ञान इसलिए कहते हैं क्योंकि हर एक को अपने उलटे को हटाकर ही पहचाना जाता है।

6.9.20

विद्याविद्यादृशौ न स्तः शेषे बद्धपदो भव । नाविद्यास्ति न विद्यास्ति कृतं कल्पनयानया ॥ २० ॥

vidyāvidyādṛśau na staḥ śeṣe baddhapado bhava | nāvidyāsti na vidyāsti kṛtaṃ kalpanayānayā || 20 ||

Knowledge and ignorance, seen as two separate things, do not exist at all. Take your stand on what is left when both are gone. There is no ignorance, there is no knowledge -- enough of this made-up idea.

ज्ञान और अज्ञान, दो अलग चीज़ों के रूप में, हैं ही नहीं। जो इन दोनों के बाद बचता है, उसी में पैर जमाकर खड़े हो जाओ। न कोई अज्ञान है, न कोई ज्ञान है -- यह कल्पना अब बस करो।

6.9.21

किंचिदस्ति नकिंचिद्यच्चित्संविदिति तत्स्थितम् । तदेवाविदिताभासं सदविद्येत्युदाहृतम् ॥ २१ ॥

kiṃcidasti nakiṃcidyaccitsaṃviditi tatsthitam | tadevāviditābhāsaṃ sadavidyetyudāhṛtam || 21 ||

There is something that is not any particular thing and yet is not nothing -- that is awareness itself, and it alone remains real. That same real awareness, when it goes unrecognised, is what people call ignorance.

एक ऐसी चीज़ है जो कोई खास वस्तु भी नहीं है और शून्य भी नहीं है -- वह चेतना ही है, और वही सदा बनी रहती है। वही सच्ची चेतना जब पहचानी नहीं जाती, तब उसी को अज्ञान कहा जाता है।

6.9.22

विदितं सत्तदेवेदमविद्याक्षयसंज्ञितम् । विद्याभावादविद्याख्यामिथ्यैवोदेति कल्पना ॥ २२ ॥

viditaṃ sattadevedamavidyākṣayasaṃjñitam | vidyābhāvādavidyākhyāmithyaivodeti kalpanā || 22 ||

That same reality, once it is recognised, is what people call the end of ignorance. It is only because knowledge is missing that this false idea called ignorance arises at all.

वही सच्चाई जब पहचान ली जाती है, उसी को अज्ञान का नाश कहा जाता है। ज्ञान की कमी के कारण ही अज्ञान नाम की यह झूठी कल्पना उठती है।

6.9.23

मिथः स्वान्ते तयोरन्तश्छायातपनयोरिव । अविद्यायां विलीनायां क्षीणे द्वे एव कल्पने ॥ २३ ॥

mithaḥ svānte tayorantaśchāyātapanayoriva | avidyāyāṃ vilīnāyāṃ kṣīṇe dve eva kalpane || 23 ||

Knowledge and ignorance mark the end of each other, the way shade ends where sunlight begins. So when ignorance dissolves, both these ideas, ignorance and knowledge, come to an end together.

ज्ञान और अज्ञान एक-दूसरे की सीमा पर खत्म होते हैं, जैसे छाया वहीं खत्म होती है जहाँ धूप शुरू होती है। इसलिए जब अज्ञान मिट जाता है, तो ये दोनों कल्पनाएँ, अज्ञान और ज्ञान, दोनों साथ ही खत्म हो जाती हैं।

6.9.24

एते राघव लीयेते अवाप्यं परिशिष्यते । अविद्यासंक्षयात्क्षीणो विद्यापक्षोऽपि राघव ॥ २४ ॥

ete rāghava līyete avāpyaṃ pariśiṣyate | avidyāsaṃkṣayātkṣīṇo vidyāpakṣo'pi rāghava || 24 ||

Rama, both of these dissolve, and what remains is the one goal worth reaching. Once ignorance is completely destroyed, Rama, even the side called knowledge disappears with it.

राम, ये दोनों मिट जाते हैं, और जो बचता है वही पाने योग्य असली लक्ष्य है। जब अज्ञान पूरी तरह मिट जाता है, राम, तो ज्ञान नाम का पक्ष भी उसी के साथ मिट जाता है।

6.9.25

यच्छिष्टं तन्न किंचिद्वा किंचिद्वापीदमाततम् । तत्रैवं दृश्यते सर्वं न किंचन च दृश्यते ॥ २५ ॥

yacchiṣṭaṃ tanna kiṃcidvā kiṃcidvāpīdamātatam | tatraivaṃ dṛśyate sarvaṃ na kiṃcana ca dṛśyate || 25 ||

What is left is either nothing at all, or it is this very reality spread through everything. In it, all this world is seen, and yet nothing at all is really seen.

जो बचता है, वह या तो कुछ भी नहीं है, या फिर यही वह सच्चाई है जो हर जगह फैली हुई है। उसी में यह सारा जगत दिखता है, और फिर भी असल में कुछ भी नहीं दिखता।

6.9.26

वटश्च वटधानायामिव पुष्पफलादिमान् । सर्वशक्तिर्हि किंचित्त्वं सर्वशक्तिसमुद्गकम् ॥ २६ ॥

vaṭaśca vaṭadhānāyāmiva puṣpaphalādimān | sarvaśaktirhi kiṃcittvaṃ sarvaśaktisamudgakam || 26 ||

Just as a whole banyan tree, with its flowers and fruit, lies folded inside a tiny banyan seed, so this reality, which holds all power, becomes a single small thing, a little box holding every power there is.

जैसे फूल-फलों से भरा पूरा बरगद का पेड़ एक छोटे-से बरगद के बीज के भीतर समाया रहता है, वैसे ही यह सारी शक्ति रखने वाली सच्चाई एक छोटी-सी चीज़ बन जाती है, मानो सारी शक्तियों की एक छोटी डिबिया।

6.9.27

नभसोऽप्यधिकं शून्यं नच शून्यं चिदात्मकम् । सूर्यकान्ते यथा वह्निर्यथा क्षीरे घृतं तथा ॥ २७ ॥

nabhaso'pyadhikaṃ śūnyaṃ naca śūnyaṃ cidātmakam | sūryakānte yathā vahniryathā kṣīre ghṛtaṃ tathā || 27 ||

It is emptier than space itself, and yet it is not empty, for it is consciousness through and through, the way fire lies hidden in a sun-crystal, the way ghee lies hidden in milk.

यह आकाश से भी ज़्यादा खाली है, फिर भी यह खाली नहीं है, क्योंकि यह पूरी तरह चेतना ही है, जैसे सूर्यकांत मणि में आग छिपी रहती है, जैसे दूध में घी छिपा रहता है।

6.9.28

तत्रेदं संस्थितं सर्वं देशकालक्रमोदये । यथा स्फुलिङ्गा अनलाद्यथा भासो दिवाकरात् ॥ २८ ॥

tatredaṃ saṃsthitaṃ sarvaṃ deśakālakramodaye | yathā sphuliṅgā analādyathā bhāso divākarāt || 28 ||

In that reality stands this whole world, arising in its order of place and time, the way sparks fly out from a fire, the way light pours out from the sun.

उसी सच्चाई में यह सारा जगत टिका है, जो जगह और समय के क्रम में उठता रहता है, जैसे आग से चिंगारियाँ उठती हैं, जैसे सूरज से किरणें फूटती हैं।

6.9.29

तस्मात्तथेमा निर्यान्ति स्फुरन्त्याः संविदश्चितः । यथाम्भोधिस्तरङ्गाणां यथामलमणिस्त्विषाम् ॥ २९ ॥

tasmāttathema niryānti sphurantyāḥ saṃvidaścitaḥ | yathāmbhodhistaraṅgāṇāṃ yathāmalamaṇistviṣām || 29 ||

So in the same way, all these things spring out of that shining awareness which is consciousness, the way the ocean is the source of its waves, the way a flawless gem is the source of its many colours.

इसी तरह ये सब चीज़ें उस चमकती हुई चेतना से ही निकलती हैं, जैसे समुद्र से लहरें निकलती हैं, जैसे एक बेदाग़ मणि से उसकी चमकीली किरणें निकलती हैं।

6.9.30

कोशो नित्यमनन्तानां तथा तत्संविदां त्विषाम् । सबाह्याभ्यन्तरे सर्वं वस्तुन्यस्त्येव वस्तुसत् ॥ ३० ॥

kośo nityamanantānāṃ tathā tatsaṃvidāṃ tviṣām | sabāhyābhyantare sarvaṃ vastunyastyeva vastusat || 30 ||

It is forever the storehouse of consciousness's endless brightness. In every single thing, inside and out, whatever is real in it is simply this reality itself.

वह चेतना की अनंत चमक का सदा का भंडार है। हर वस्तु में, चाहे बाहर हो या भीतर, जो कुछ भी असली है, वह यही सच्चाई है।

6.9.31

सर्वदैवाविनाशात्म कुम्भानां गगनं यथा । यथा मणेरयःस्पन्दे अयस्कान्तस्य कर्तृता ॥ ३१ ॥

sarvadaivāvināśātma kumbhānāṃ gaganaṃ yathā | yathā maṇerayaḥspande ayaskāntasya kartṛtā || 31 ||

It is forever indestructible by nature, like the space enclosed inside different pots, or like the way a magnet-stone is said to make iron move.

यह सदा और सदा अविनाशी है, जैसे अलग-अलग घड़ों के भीतर का आकाश एक ही रहता है, या जैसे लोहे को हिलाने का काम चुम्बक-मणि का माना जाता है।

6.9.32

अकर्तुरेव हि तथा कर्तृता तस्य कथ्यतेमणिसंनिधिमात्रेण यथायः स्पन्दते जडमतत्सत्तया तथैवायं देहश्चेतत्यचिद्वपुः ॥ ३२ ॥

akartureva hi tathā kartṛtā tasya kathyatemaṇisaṃnidhimātreṇa yathāyaḥ spandate jaḍamatatsattayā tathaivāyaṃ dehaścetatyacidvapuḥ || 32 ||

This is how we speak of action in something that itself does nothing at all. Just as lifeless iron starts to move only because a magnet-stone is near it, and not through any power of the iron's own, so too this body, which by itself is unconscious matter, seems to think, not through any power of its own.

इसी तरह जो स्वयं कुछ नहीं करता, फिर भी उसी को करने वाला कहा जाता है। जैसे निर्जीव लोहा सिर्फ इसलिए हिलने लगता है क्योंकि पास में चुम्बक-मणि है, न कि लोहे की अपनी किसी ताक़त से, वैसे ही यह शरीर, जो खुद जड़ पदार्थ है, सोचता हुआ लगता है, अपनी किसी ताक़त से नहीं।

6.9.33

तत्र स्थितं जगदिदं जगदेकबीजे चिन्नाम्नि संविदितकल्पितकल्पनेन । लोलोर्मिजालमिव वारिणि चित्ररूपं खादप्यरूपवति यत्र न किंचिदस्ति ॥ ३३ ॥

tatra sthitaṃ jagadidaṃ jagadekabīje cinnāmni saṃviditakalpitakalpena | lolormijālamiva vāriṇi citrarūpaṃ khādapyarūpavati yatra na kiṃcidasti || 33 ||

This whole world rests in that one seed of all worlds, called consciousness, a reality more formless than empty space, where nothing at all truly exists. There it takes on its many colours, like a mesh of restless waves on water, built only by an imagining that is itself no more than imagined.

यह सारा जगत उसी एक बीज में टिका है, जिसे चेतना कहते हैं, वह सच्चाई खाली आकाश से भी ज़्यादा निराकार है, जहाँ असल में कुछ भी नहीं है। वहीं यह जगत तरह-तरह के रूप लेकर खड़ा है, जैसे पानी पर बेचैन लहरों का जाल हो, और यह सब बस एक कल्पना से बना है जो खुद भी बस कल्पना ही है।

Chapter 10

6.10.1

श्रीवसिष्ठ उवाचतस्मान्नकिंचिदेवेदं जगत्स्थावरजंगमम्नकिंचिद्भूततां प्राप्तं यत्किंचिदिति विद्धि हे ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvācatasmānnakiṃcidevedaṃ jagatsthāvarajaṃgamamnakiṃcidbhūtatāṃ prāptaṃ yatkiṃciditi viddhi he || 1 ||

Sri Vasishtha said: So understand this. This whole world, everything that stands still and everything that moves, is nothing at all. Whatever seems to be a thing has not truly become anything.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इसलिए यह समझो कि यह पूरा जगत, जो कुछ स्थिर है और जो कुछ चलता है, कुछ भी नहीं है। जो कुछ भी वस्तु जैसा दिखता है, वह सच में कुछ बना ही नहीं है।

6.10.2

यत्र काचिन्न कलना भावाभावमयात्मिकातदिदं राम जीवादि सर्वं व्यर्थं किमीहसे ॥ २ ॥

yatra kācinna kalanā bhāvābhāvamayātmikātadidaṃ rāma jīvādi sarvaṃ vyarthaṃ kimīhase || 2 ||

Rama, where no thought at all takes shape, neither it exists nor it does not exist, why do you run after all this, the living soul and everything else, for nothing?

राम, जहाँ है और नहीं है जैसा कोई विचार भी पैदा नहीं होता, वहाँ तुम जीव और बाकी सब चीज़ों के पीछे व्यर्थ ही क्यों भाग रहे हो?

6.10.3

संबंधोऽयमसावन्तर्हृदि यो व्यपदिश्यतेन तं लभामहे सर्पं रज्जुसर्पभ्रमादिव ॥ ३ ॥

saṃbandho'yamasāvantarhradi yo vyapadiśyatena taṃ labhāmahe sarpaṃ rajjusarpabhramādiva || 3 ||

This bond that people point to deep within the heart, we cannot find at all, just as we cannot find a real snake in a rope mistaken for a snake.

यह जो नाता हृदय के भीतर बताया जाता है, वह हमें कहीं नहीं मिलता, ठीक वैसे ही जैसे रस्सी को साँप समझ लेने के भ्रम में असली साँप कहीं नहीं मिलता।

6.10.4

अपरिज्ञात आत्मैव भ्रमतां समुपागतःज्ञात आत्मत्वमायाति सीमान्तः सर्वसंविदाम् ॥ ४ ॥

aparijñāta ātmaiva bhramatāṃ samupāgataḥjñāta ātmatvamāyāti sīmāntaḥ sarvasaṃvidām || 4 ||

It is the very Self that appears to confused, wandering people when it is not recognized. Once it is recognized, it is known simply as the Self, the final point that all knowledge reaches.

यही आत्मा है जो जब पहचानी नहीं जाती, तो भटकते हुए, उलझे हुए लोगों के सामने आती है। जब इसे पहचान लिया जाता है, तब यह आत्मा के रूप में जानी जाती है, यही वह आखिरी बिंदु है जहाँ सारा ज्ञान जाकर ठहरता है।

6.10.5

अविद्येत्युच्यते लोके चिच्चेत्यमलमाश्रिताचेत्यातीतात्मतामेति सर्वोपाधिविवर्जिता ॥ ५ ॥

avidyetyucyate loke ciccetyamalamāśritācetyātītātmatāmeti sarvopādhivivarjitā || 5 ||

People in the world call it ignorance when awareness clings to some pure thing it takes as an object. That same awareness, once free of every such limiting mark, becomes the Self, beyond anything that can be known as an object.

जब चेतना किसी शुद्ध वस्तु को पकड़कर उससे जुड़ जाती है, तो संसार में इसे अज्ञान कहा जाता है। वही चेतना जब हर तरह की सीमा से मुक्त हो जाती है, तब वह आत्मा बन जाती है, जो हर उस चीज़ से परे है जिसे वस्तु की तरह जाना जा सकता है।

6.10.6

चित्तमात्रं हि पुरुषस्तस्मिन्नष्टे च नश्यतिस्थिते तिष्ठति चात्मायं घटे सति घटाम्बरम् ॥ ६ ॥

cittamātraṃ hi puruṣastasminnaṣṭe ca naśyatisthite tiṣṭhati cātmāyaṃ ghaṭe sati ghaṭāmbaram || 6 ||

A person is nothing but the mind. When the mind is gone, the person is gone. When the mind stays, this self stays too, just as the space inside a pot exists as pot-space only when the pot exists.

व्यक्ति केवल मन ही है। जब मन नष्ट हो जाता है, तब वह व्यक्ति भी नष्ट हो जाता है। जब मन बना रहता है, तब यह व्यक्तित्व भी बना रहता है, ठीक वैसे ही जैसे घड़े के भीतर का आकाश तभी तक घड़े का आकाश रहता है जब तक घड़ा है।

6.10.7

गच्छन्पश्यति गच्छन्तं स्थितं तिष्ठन्चिशुर्यथाभ्रान्तमेवमिदं चेतः पश्यत्यात्मानमाकुलम् ॥ ७ ॥

gacchanpaśyati gacchantaṃ sthitaṃ tiṣṭhañchiśuryathābhrāntamevamidaṃ cetaḥ paśyatyātmānamākulam || 7 ||

Someone who is moving sees a moving thing as still, and someone standing still sees a still thing as moving, like a bewildered child. In just this way, this restless mind sees the Self as restless and confused.

जो व्यक्ति खुद चल रहा होता है, वह किसी चलती चीज़ को स्थिर देखता है, और जो खुद स्थिर खड़ा होता है, वह किसी स्थिर चीज़ को चलता हुआ देखता है, जैसे कोई उलझन में पड़ा बच्चा देखता है। ठीक इसी तरह, यह बेचैन मन आत्मा को भी बेचैन और उलझा हुआ देखता है।

6.10.8

कोशकारवदात्मानं वासनातनुतन्तुभिःवेष्टयच्चैव चेतोऽन्तर्बालत्वान्नावबुध्यते ॥ ८ ॥

kośakāravadātmānaṃ vāsanātanutantubhiḥveṣṭayaccaiva ceto'ntarbālatvānnāvabudhyate || 8 ||

Like a silkworm, the mind wraps itself up in the thin threads of its own desires, and because it is still like a child, it does not realize what it is doing.

जैसे रेशम का कीड़ा खुद को अपने ही धागों में लपेट लेता है, वैसे ही मन अपनी वासनाओं के पतले धागों से खुद को लपेट लेता है, और बच्चे जैसी नादानी के कारण यह समझ ही नहीं पाता कि वह यह क्या कर रहा है।

6.10.9

श्रीराम उवाचमौर्ख्यमत्यन्तघनतामागतं समवस्थितमस्थावरादि तनु प्राप्तं कीदृशं भवति प्रभो ॥ ९ ॥

śrīrāma uvācamaurkhyamatyantaghanatāmāgataṃ samavasthitamsthāvarādi tanu prāptaṃ kīdṛśaṃ bhavati prabho || 9 ||

Sri Rama said: Master, when foolishness becomes utterly dense and settles in fast, taking a body like a plant or a stone, what is it actually like?

श्रीराम ने कहा: हे प्रभु, जब मूर्खता बिलकुल गाढ़ी होकर जम जाती है और पेड़-पौधे या पत्थर जैसा शरीर पा लेती है, तब वह असल में कैसी होती है?

6.10.10

श्रीवसिष्ठ उवाचमनस्त्वमसंप्राप्तं मनस्त्वादपि च च्युतम्तटस्थं रूपमाश्रित्य स्थितैषा स्थावरेषु चित् ॥ १० ॥

śrīvasiṣṭha uvācaamanastvamasaṃprāptaṃ manastvādapi ca cyutamtaṭasthaṃ rūpamāśritya sthitaiṣā sthāvareṣu cit || 10 ||

Sri Vasishtha said: In unmoving things, this awareness has not reached the state of a working mind, and it has also fallen away from that same state. It stands there, resting in a state that is neither one thing nor the other.

श्री वसिष्ठ ने कहा: स्थिर चीज़ों में, जैसे पेड़-पौधे और पत्थर, यह चेतना न तो मन जैसी सक्रिय अवस्था तक पहुँच पाई है, और न ही वह उस अवस्था में टिकी रह गई है। वह मानो बीच में कहीं अटकी हुई, न इधर की न उधर की स्थिति में बनी रहती है।

6.10.11

तत्र दूरस्थिता मुक्तिर्मन्ये वेद्यविदां वर । सुप्तपुर्यष्टका यत्र चित्स्थिता दुःखदायिनी । मूकान्धजडवत्तत्र सत्तामात्रेण तिष्ठति ॥ ११ ॥

tatra dūrasthitā muktirmanye vedyavidāṃ vara | suptapuryaṣṭakā yatra cittasthitā duḥkhadāyinī | mūkāndhajaḍavattatra sattāmātreṇa tiṣṭhati || 11 ||

There, best of those who know what can be known, I think liberation is far away, where the subtle inner body lies asleep, and awareness, resting inside it, only brings suffering. There, awareness exists as nothing but bare presence, like something mute, blind and lifeless.

हे जानने योग्य को जानने वालों में श्रेष्ठ, मुझे लगता है कि वहाँ मुक्ति बहुत दूर है, जहाँ भीतर का सूक्ष्म शरीर सोया पड़ा रहता है, और वहाँ टिकी हुई चेतना केवल दुख ही देती है। वहाँ चेतना गूँगे, अंधे और जड़ जैसी किसी चीज़ की तरह बस बने रहने भर के रूप में रहती है।

6.10.12

श्रीराम उवाच । सत्ताद्वैततया यत्र संस्थिता स्थावरेषु चित् । तत्रादूरस्थिता मुक्तिर्मन्ये वेद्यविदां वर ॥ १२ ॥

śrīrāma uvāca | sattādvaitatayā yatra saṃsthitā sthāvareṣu cit | tatrādūrasthitā muktirmanye vedyavidāṃ vara || 12 ||

Sri Rama said: Best of those who know what can be known, where awareness rests in unmoving things as existence alone, without any duality, I think liberation is close by there.

श्रीराम ने कहा: हे जानने योग्य को जानने वालों में श्रेष्ठ, जहाँ स्थिर चीज़ों में चेतना केवल शुद्ध अस्तित्व के रूप में रहती है, बिना किसी दूसरेपन के, वहाँ मुझे लगता है कि मुक्ति दूर नहीं है।

6.10.13

श्रीवसिष्ठ उवाच । बुद्धिपूर्वं विचार्येदं यथावस्त्ववलोकनात् । सत्तासामान्यबोधो यः स मोक्षश्चेदनन्तकः ॥ १३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | buddhipūrvaṃ vicāryedaṃ yathāvastvavalokanāt | sattāsāmānyabodho yaḥ sa mokṣaścedanantakaḥ || 13 ||

Sri Vasishtha said: Think this through carefully with your intellect, looking at things just as they really are. Whatever understanding grasps only existence in general, that understanding, if it never ends, is liberation.

श्री वसिष्ठ ने कहा: अपनी बुद्धि से इस पर ध्यान से विचार करो, चीज़ों को जैसी वे सच में हैं वैसे ही देखते हुए। जो समझ केवल सामान्य अस्तित्व को पकड़ती है, वही समझ, अगर कभी खत्म न हो, तो वही मुक्ति है।

6.10.14

परिज्ञाय परित्यागो वासनानां य उत्तमः । सत्तासामान्यरूपत्वं तत्कैवल्यपदं विदुः ॥ १४ ॥

parijñāya parityāgo vāsanānāṃ ya uttamaḥ | sattāsāmānyarūpatvaṃ tatkaivalyapadaṃ viduḥ || 14 ||

The best way of giving up one's inner tendencies comes only after truly understanding them first. Once that giving up becomes nothing but plain, universal existence, the wise call it the state of final, solitary freedom.

अपनी वासनाओं को पहले पूरी तरह समझकर, फिर उन्हें छोड़ देना ही सबसे श्रेष्ठ त्याग है। जब यह त्याग खुद भी केवल सामान्य अस्तित्व मात्र रह जाता है, तब ज्ञानी लोग उसे ही पूर्ण और एकाकी मुक्ति की अवस्था कहते हैं।

6.10.15

विचार्यार्यैः सहालोक्य शास्त्राण्यध्यात्मभावनात् । सत्तासामान्यनिष्ठत्वं यत्तद्ब्रह्म परं विदुः ॥ १५ ॥

vicāryāryaiḥ sahālokya śāstrāṇyadhyātmabhāvanāt | sattāsāmānyaniṣṭhatvaṃ yattadbrahma paraṃ viduḥ || 15 ||

Thinking it over together with wise people, studying the scriptures, and reflecting deeply on one's own inner self, the state that rests completely in plain, universal existence, that is what the wise know as the highest reality.

बुद्धिमानों के साथ मिलकर विचार करके, शास्त्रों को देख-परखकर, और अपने भीतर की आत्मा पर गहरा चिंतन करके, जो अवस्था पूरी तरह सामान्य अस्तित्व में ही टिकी रहती है, उसे ही ज्ञानी लोग सबसे बड़ी सच्चाई यानी ब्रह्म कहते हैं।

6.10.17

अन्तः संलीनमननं परितः सुप्तवासनम् । सुषुप्तं जडधर्मापि जन्म दुःखशतप्रदम् ॥ १७ ॥

antaḥ saṃlīnamananaṃ paritaḥ suptavāsanam| suṣuptaṃ jaḍadharmāpi janma duḥkhaśatapradam || 17 ||

With its thinking dissolved inward and all its tendencies asleep, it is like deep, dreamless sleep. Yet even though it has the nature of something lifeless, such a birth still brings hundreds of sorrows.

जिसमें भीतर की सोच बिलकुल शांत हो चुकी है और सारी वासनाएँ सोई पड़ी हैं, वह गहरी नींद जैसी अवस्था है। फिर भी, जड़ जैसी होते हुए भी, ऐसा जन्म सैकड़ों दुखों को जन्म देता है।

6.10.18

स्थावरादय एते हि समस्ता जडधर्मिणः । सुषुप्तपदमारूढा जन्मयोग्याः पुनःपुनः ॥ १८ ॥

sthāvarādaya ete hi samastā jaḍadharmiṇaḥ| suṣuptapadamārūḍhā janmayogyāḥ punaḥpunaḥ || 18 ||

All of these, plants, stones and the rest, are lifeless by nature. Having reached the state of deep sleep, they remain ready to be born again and again.

पेड़-पौधे, पत्थर आदि, ये सब जड़ स्वभाव के होते हैं। ये गहरी नींद जैसी अवस्था में पहुँचकर भी बार-बार जन्म लेने के योग्य बने रहते हैं।

6.10.19

यथा बीजेषु पुष्पादि मृदो राशौ घटो यथा । तथान्तः संस्थिता साधो स्थावरेषु स्ववासना ॥ १९ ॥

yathā bījeṣu puṣpādi mṛdo rāśau ghaṭo yathā| tathāntaḥ saṃsthitā sādho sthāvareṣu svavāsanā || 19 ||

Just as a flower lies hidden inside a seed, and a pot lies hidden in a lump of clay, so too, good man, one's own inner tendencies lie hidden inside unmoving things like plants and stones.

जैसे बीज के भीतर फूल छिपा रहता है, और मिट्टी के ढेर में घड़ा छिपा रहता है, हे भले मानुष, वैसे ही स्थिर चीज़ों, पेड़-पौधों और पत्थरों के भीतर अपनी वासनाएँ छिपी रहती हैं।

6.10.20

यत्रास्ति वासनाबीजं तत्सुषुप्तं न सिद्धये । निर्बीजा वासना यत्र तत्तुर्यं सिद्धिदं स्मृतम् ॥ २० ॥

yatrāsti vāsanābījaṃ tatsuṣuptaṃ na siddhaye| nirbījā vāsanā yatra tatturyaṃ siddhidaṃ smṛtam || 20 ||

Where the seed of desire still remains, that is deep sleep, it does not lead to success. Where desire is left with no seed at all, that is known as the fourth state, the one that grants success.

जहाँ वासना का बीज अब भी बचा रहता है, वह गहरी नींद जैसी अवस्था है, उससे सिद्धि नहीं मिलती। जहाँ वासना का बीज पूरी तरह खत्म हो चुका है, उसे ही चौथी अवस्था कहा जाता है, जो सिद्धि देने वाली है।

6.10.21

वासनायास्तथा वह्नेर्ऋणव्याधिद्विषामपि । स्नेहवैरविषाणां यः शेषः स्वल्पोऽपि बाधते ॥ २१ ॥

vāsanāyāstathā vahnereṇavyādhidviṣāmapi| snehavairaviṣāṇāṃ yaḥ śeṣaḥ svalpo'pi bādhate || 21 ||

In the same way, with desire, with fire, with debt, disease and enemies, and with affection, hatred and poison, whatever is left over, even if it is very small, still causes harm.

ठीक इसी तरह, वासना का हो, आग का हो, कर्ज़, बीमारी और दुश्मन का हो, या प्रेम, बैर और ज़हर का हो, इनका जो भी हिस्सा बाकी रह जाता है, चाहे वह कितना भी छोटा हो, वह नुकसान ज़रूर पहुँचाता है।

6.10.22

निर्दग्धवासनाबीजसत्तासामान्यरूपवान् सदेहो वा विदेहो वा न भूयो दुःखभाग्भवेत् ॥ २२ ॥

nirdagdhvāsanābījasattāsāmānyarūpavān sadeho vā videho vā na bhūyo duḥkhabhāgbhavet || 22 ||

Someone whose seed of desire has been burned away, who has become nothing but plain, universal existence, whether they still have a body or not, will never again share in suffering.

जिस व्यक्ति की वासना का बीज पूरी तरह जल चुका है, और जो अब केवल सामान्य अस्तित्व मात्र रह गया है, चाहे उसका शरीर हो या न हो, वह फिर कभी दुख का भागी नहीं बनता।

6.10.23

चिच्छक्तिर्वासनाबीजरूपिणी स्वापधर्मिणी स्थिता रसतया नित्यं स्थावरादिषु वस्तुषु ॥ २३ ॥

cicchaktirvāsanābījarūpiṇī svāpadharmiṇī sthitā rasatayā nityaṃ sthāvarādiṣu vastuṣu || 23 ||

The power of consciousness, taking the form of the seed of desire and having the nature of sleep, remains always present as a kind of hidden sap inside things like plants and stones.

चेतना की शक्ति, जो वासना के बीज के रूप में होती है और सोई हुई प्रकृति की होती है, पेड़-पौधों और पत्थरों जैसी चीज़ों के भीतर हमेशा एक छिपे हुए रस की तरह बनी रहती है।

6.10.24

बीजेषूल्लासरूपेण जाड्येन जडरूपिषु द्रव्येषु द्रव्यभावेन काठिन्येनेतरेषु च ॥ २४ ॥

bījeṣūllāsarūpeṇa jāḍyena jaḍarūpiṣu dravyeṣu dravyabhāvena kāṭhinyenetareṣu ca || 24 ||

It is present in seeds as the power to sprout, in dull things as dullness itself, in substances as the very nature of a substance, and in other things as hardness.

यह बीजों में अंकुरित होने की ताक़त के रूप में है, जड़ चीज़ों में जड़ता के रूप में है, पदार्थों में पदार्थ के अपने स्वभाव के रूप में है, और बाक़ी चीज़ों में कठोरता के रूप में है।

6.10.25

भस्मन्यथानित्यरूपा पांसुष्वप्यणुरूपिणी असितेष्वसितस्थित्या सितधारतयासिषु ॥ २५ ॥

bhasmanyathānityarūpā pāṃsuṣvapyṇurūpiṇī asiteṣvasitasthityā sitadhāratayāsiṣu || 25 ||

In ash it takes a form that does not last, in dust it takes the form of a fine speck, in black things it is blackness itself, and in a sword it is the bright edge of the blade.

राख में यह एक ऐसा रूप है जो टिकता नहीं, धूल में यह बारीक कण का रूप है, काली चीज़ों में यह कालापन ही है, और तलवार में यह उसकी चमकती धार है।

6.10.26

आत्मा शक्तिः पदार्थेषु तथा घटपटादिषु सर्वत्र सत्तासामान्यरूपमाश्रित्य तिष्ठति ॥ २६ ॥

ātmā śaktiḥ padārtheṣu tathā ghaṭapaṭādiṣu sarvatra sattāsāmānyarūpamāśritya tiṣṭhati || 26 ||

This power of the self stays in every object, in a pot, in cloth, and everything else, resting everywhere on one shared form, plain existence, the same in all things.

आत्मा की यह शक्ति हर वस्तु में रहती है, घड़े में, कपड़े में, और बाक़ी सब में। और हर जगह यह एक ही साझा बुनियाद पर टिकी रहती है, वह है सिर्फ़ होना, जो हर चीज़ में एक जैसा है।

6.10.27

इतीयमखिला दृश्यदशामापूर्य संस्थिता । यथा घटापटा प्रावृडम्बरालम्बिनी तथा ॥ २७ ॥

itīyamakhilā dṛśyadaśāmāpūrya saṃsthitā | yathā ghaṭāpaṭā prāvṛḍambarālambinī tathā || 27 ||

In this way it fills the whole world we see and stands there, the way a mass of clouds hangs in the rainy season sky.

इस तरह यह पूरी दिखने वाली दुनिया को भरकर खड़ी है, जैसे बरसात के आकाश में बादलों का समूह छाया रहता है।

6.10.28

स्वरूपमस्याश्चैवैतत्कथितं प्रविचारितम् । असर्वं सर्वतो व्यापि सदिवासन्मयात्मकम् ॥ २८ ॥

svarūpamasyāścaivaitatkathitaṃ pravicāritam | asarvaṃ sarvato vyāpi sadivāsanmayātmakam || 28 ||

This, then, is its nature, told and examined closely: it is not everything, and yet it spreads through everything; it seems to exist, but at its core it is made of what does not exist.

तो यही इसका स्वरूप है, जिसे कहा और जांचा गया है: यह सब कुछ नहीं है, फिर भी यह हर जगह फैला हुआ है; यह होने जैसा लगता है, पर असल में यह उस चीज़ से बना है जो है ही नहीं।

6.10.29

आत्मदृष्टिरदृष्टैषा संसारभ्रमदायिनी । दृष्टा सती समग्राणां दुःखानां क्षयकारिणी ॥ २९ ॥

ātmadṛṣṭiradṛṣṭaiṣā saṃsārabhramadāyinī | dṛṣṭā satī samagrāṇāṃ duḥkhānāṃ kṣayakāriṇī || 29 ||

This vision of the self, as long as it goes unseen, creates the confusion of everyday life. Once it is seen, it destroys every sorrow, all of them.

आत्मा का यह दर्शन, जब तक यह ख़ुद नहीं दिखता, तब तक रोज़मर्रा की ज़िंदगी का भ्रम पैदा करता रहता है। जिस दिन यह दिख जाए, यह हर दुख को, यानी सारे दुखों को, मिटा देता है।

6.10.30

अस्यास्त्वदर्शनं यत्तदविद्येत्युच्यते बुधैः । अविद्या हि जगद्धेतुस्ततः सर्वं प्रवर्तते ॥ ३० ॥

asyāstvadarśanaṃ yattadavidyetyucyate budhaiḥ | avidyā hi jagaddhetustataḥ sarvaṃ pravartate || 30 ||

The wise call this not-seeing of it ignorance. Ignorance is indeed the cause of the world; everything arises from it.

इसी को न देख पाने को समझदार लोग अज्ञान कहते हैं। यह अज्ञान ही संसार का कारण है, इसी से सब कुछ पैदा होता है।

6.10.31

अविद्या रूपरहिता यावदेवावलोक्यते । तावदेव गलत्याशु तुहिनाणुर्यथातपे ॥ ३१ ॥

avidyā rūparahitā yāvadevāvalokyate | tāvadeva galatyāśu tuhināṇuryathātape || 31 ||

Ignorance has no real form of its own. The moment it is looked at closely, it melts away at once, the way a speck of frost melts in the heat of the sun.

अज्ञान का अपना कोई असली रूप नहीं है। जैसे ही इसे गौर से देखा जाता है, यह उसी वक़्त पिघल जाता है, जैसे धूप में बर्फ़ का एक कण पिघल जाता है।

6.10.32

यथा नरो गलन्निद्रो यावत्कलनया मनाक् । विमृशत्याशयं तावन्निद्रा तस्य विलीयते ॥ ३२ ॥

yathā naro galannidro yāvatkalanayā manāk | vimṛśatyāśayaṃ tāvannidrā tasya vilīyate || 32 ||

Take a man whose sleep is already breaking. The moment he turns his mind, even a little, and looks at his own thought, his sleep dissolves completely.

जैसे किसी आदमी की नींद पहले से टूटने लगी हो, और जैसे ही वह थोड़ा भी सचेत होकर अपने मन के भाव को परखता है, वैसे ही उसकी नींद पूरी तरह खुल जाती है।

6.10.33

यथा कीदृगवस्त्वेतदिति यावद्विकल्प्यते । अविद्या क्षीयते तावदालोकेनान्धता यथा ॥ ३३ ॥

yathā kīdṛgavastvetaditi yāvadvikalpyate | avidyā kṣīyate tāvadālokenāndhatā yathā || 33 ||

The moment someone asks, what is this unreal thing really, and looks into it, ignorance fades away then and there, the way blindness fades before light.

जैसे ही कोई पूछे कि यह असल में क्या चीज़ है जो है ही नहीं, और इस पर ग़ौर करे, उसी वक़्त अज्ञान मिट जाता है, ठीक वैसे ही जैसे रोशनी आने पर अंधापन मिट जाता है।

6.10.34

दीपहस्तो यथाभ्येति तमोरूपदिदृक्षया । तथा विलीयते सर्वं तमस्तापैर्घृतं यथा ॥ ३४ ॥

dīpahasto yathābhyeti tamorūpadidṛkṣayā | tathā vilīyate sarvaṃ tamastāpairghṛtaṃ yathā || 34 ||

Just as someone carrying a lamp walks up wanting to see what darkness looks like, all of it melts away at once, the way ghee melts in heat.

जैसे कोई हाथ में दीया लेकर यह देखने आए कि अंधेरा कैसा दिखता है, वैसे ही पास आते-आते सारा अंधेरा उसी तरह पिघल जाता है, जैसे घी गर्मी से पिघल जाता है।

6.10.35

नच संलक्ष्यते दीपे तमसो रूपनिश्चयः । उदेति केवलं ध्वान्तध्वंसो विमलमूर्तिमान् ॥ ३५ ॥

naca saṃlakṣyate dīpe tamaso rūpaniścayaḥ | udeti kevalaṃ dhvāntadhvaṃso vimalamūrtimān || 35 ||

In the light of the lamp, no clear shape of the darkness is ever seen. Only the destruction of the darkness appears, taking a clean, spotless form.

दीये की रोशनी में अंधेरे का कोई साफ़ रूप कभी नहीं दिखता। बस अंधेरे का मिट जाना ही दिखता है, वह भी एक साफ़-सुथरे रूप में।

6.10.36

एवमालोक्यमानैषा क्वापि याति पलायते । असद्रूपा ह्यवस्तुत्वाद्दृश्यते ह्यविचारणात् ॥ ३६ ॥

evamālokyamānaiṣā kvāpi yāti palāyate | asadrūpā hyavastutvāddṛśyate hyavicāraṇāt || 36 ||

In just this way, once it is looked at, this ignorance flees somewhere and is gone. It has no real form at all, since it has no true existence, and it is seen only because no one has examined it.

इसी तरह जब इस अज्ञान को ग़ौर से देखा जाता है, तो यह कहीं भाग जाता है। इसका कोई असली रूप है ही नहीं, क्योंकि इसका कोई सच्चा अस्तित्व नहीं है, और यह सिर्फ़ इसलिए दिखता है क्योंकि इसे कभी परखा नहीं गया।

6.10.37

आलोक आगते यादृक्तमस्तद्दृश्यते तथा । याऽवस्तुत्वे त्वविद्यायास्त्ववस्तुत्वं प्रतीयते ॥ ३७ ॥

āloka āgate yādṛktamastaddṛśyate tathā | yā'vastutve tvavidyāyāstvavastutvaṃ pratīyate || 37 ||

When light arrives, the darkness is seen for exactly what it is, nothing at all. In the same way, when ignorance is looked into, its unreality becomes plain.

जब रोशनी आती है, तो अंधेरा वैसा ही दिखता है जैसा वह असल में है, यानी कुछ भी नहीं। ठीक उसी तरह, जब अज्ञान को परखा जाता है, तो उसका न होना साफ़ पता चल जाता है।

6.10.38

यावन्नालोक्यते तावन्न किंचिदपि दृश्यते । आलोकिते यथाऽविद्या तत्तथा प्रतिपद्यते ॥ ३८ ॥

yāvannālokyate tāvanna kiṃcidapi dṛśyate | ālokite yathā'vidyā tattathā pratipadyate || 38 ||

As long as it is not looked at, nothing about it is seen at all. Once it is looked at, ignorance is understood for exactly what it is.

जब तक इसे ग़ौर से नहीं देखा जाता, तब तक इसके बारे में कुछ भी पता नहीं चलता। जैसे ही इसे देखा जाता है, अज्ञान ठीक वैसा ही समझ में आ जाता है जैसा वह असल में है।

6.10.39

रक्तमांसास्थियन्त्रेऽस्मिन्कः स्यामहमिति स्वयम्यावद्विचार्यते तावत्सर्वमाशु विलीयते ॥ ३९ ॥

raktamāṃsāsthiyantre'sminkaḥ syāmahamiti svayamyāvadvicāryate tāvatsarvamāśu vilīyate || 39 ||

In this machine made of blood, flesh, and bone, the moment someone asks for themselves, who am I really, everything dissolves at once.

इस खून, मांस और हड्डी के ढांचे में, जैसे ही कोई ख़ुद से पूछे कि मैं असल में कौन हूं, वैसे ही यह सब कुछ फ़ौरन मिट जाता है।

6.10.40

आद्यन्तयोरसद्रूपे नूनं परिहृते हृदा । सर्वस्मिन्नेव यः शेषस्तमविद्याक्षयं विदुः ॥ ४० ॥

ādyantayorasadrūpe nūnaṃ parihṛte hṛdā | sarvasminneva yaḥ śeṣastamavidyākṣayaṃ viduḥ || 40 ||

Once the mind truly sets aside the unreal beginning and end of a thing, what is left over in everything, that alone, is known as the end of ignorance.

जब मन सचमुच किसी चीज़ के झूठे आदि और अंत को अलग कर देता है, तो जो हर चीज़ में बचा रह जाता है, बस उसी को अज्ञान का मिट जाना कहा जाता है।

6.10.41

तन्न किंचिच्च किंचिद्वा तत्सद्ब्रह्मैव शाश्वतम् । तद्वस्तु तदुपादेयं यदविद्या निवर्तते ॥ ४१ ॥

tanna kiṃcicca kiṃcidvā tatsadbrahmaiva śāśvatam | tadvastu tadupādeyaṃ yadavidyā nivartate || 41 ||

That is nothing, and yet in a way it is something. That alone is the eternal, real Brahman. That is the one true thing, the one thing worth holding on to, because it is what makes ignorance disappear.

वह कुछ भी नहीं है, और फिर भी किसी तरह वह कुछ है भी। वही सनातन सच्चा ब्रह्म है। वही असली चीज़ है, वही एक ऐसी चीज़ है जिसे थामने लायक़ है, क्योंकि उसी से अज्ञान मिट जाता है।

6.10.42

रूपं स्वनाम्न एवास्या ज्ञायते निःस्वभावकम् । नहि जिह्वागतस्वाद्यस्वादोऽन्यस्मात्प्रतीयते ॥ ४२ ॥

rūpaṃ svanāmna evāsyā jñāyate niḥsvabhāvakam | nahi jihvāgatasvādyasvādo'nyasmātpratīyate || 42 ||

The so-called form of this ignorance is known only by its own name; it has no nature of its own at all. After all, the taste that sits on one's own tongue can never be known through someone else's tongue.

इस अज्ञान का जो रूप बताया जाता है, वह बस उसके नाम से ही जाना जाता है; उसका अपना कोई असली स्वभाव है ही नहीं। आख़िर, अपनी जीभ पर आया स्वाद कभी किसी और की जीभ से महसूस नहीं किया जा सकता।

6.10.43

नाविद्या क्वचिदप्यस्ति ब्रह्मैवेदमखण्डितम् । सदसत्कलनास्फारमशेषं येन मण्डितम् ॥ ४३ ॥

nāvidyā kvacidapyasti brahmaivedamakhṇḍitam | sadasatkalanāsphāramśeṣaṃ yena maṇḍitam || 43 ||

Ignorance does not exist anywhere at all. All this is only Brahman, whole and undivided, and every part of it, without exception, is Brahman decorated with the flickering play of the real and the unreal.

अज्ञान कहीं भी नहीं है। यह सब कुछ बस ब्रह्म ही है, अखंड और साबुत, और इसका हर हिस्सा, बिना किसी अपवाद के, वही ब्रह्म है जो सच और झूठ के खेल से सजा हुआ है।

6.10.44

एतावदेवाविद्याया नेदं ब्रह्मेति निश्चयः । एतदेव क्षयो यस्या ब्रह्मेदमिति निश्चयः ॥ ४४ ॥

etāvadevāvidyāyā nedaṃ brahmeti niścayaḥ | etadeva kṣayo yasyā brahmedamiti niścayaḥ || 44 ||

Ignorance is nothing more than this, the firm belief that this is not Brahman. And the end of that ignorance is nothing more than this, the firm knowledge that this is Brahman.

अज्ञान बस इतना ही है, यह पक्का मान लेना कि यह ब्रह्म नहीं है। और इसी अज्ञान का मिट जाना बस इतना ही है, यह पक्के तौर पर जान लेना कि यह ब्रह्म ही है।

6.10.45

घटपटशकटावभासजालं न विभुरितीत्युदितेह सा त्वविद्या । घटपटशकटावभासजालं विभुरिति चेद्गलितैव सा त्वविद्या ॥ ४५ ॥

ghaṭapaṭaśakaṭāvabhāsajālaṃ na vibhuritītyuditeha sā tvavidyā | ghaṭapaṭaśakaṭāvabhāsajālaṃ vibhuriti cedgalitaiva sā tvavidyā || 45 ||

When the thought arises here that this whole web of appearances, pot, cloth, cart, and the rest, is not the all-pervading one, that itself is ignorance. But when it is understood instead that this same web of appearances, pot, cloth, cart, and the rest, is itself the all-pervading one, then that ignorance has already melted away.

जब यहां यह ख़याल उठे कि घड़े, कपड़े, गाड़ी वगैरह का यह सारा दिखने वाला जाल उस हर जगह मौजूद तत्व से अलग है, तो यही अज्ञान है। पर जब यह समझ आ जाए कि घड़े, कपड़े, गाड़ी वगैरह का यही सारा जाल असल में वही हर जगह मौजूद तत्व है, तो वह अज्ञान पहले ही मिट चुका होता है।

Chapter 11

6.11.1

श्रीवसिष्ठ उवाच पुनःपुनरिदं राम प्रबोधार्थं मयोच्यते अभ्यासेन विना साधो नाभ्युदेत्यात्मभावना ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca punaḥpunaridaṃ rāma prabodhārthaṃ mayocyate abhyāsena vinā sādho nābhyudetyātmabhāvanā || 1 ||

Sri Vasishtha said: Rama, I tell you this again and again, so that you understand it. Good man, without practice, awareness of the self does not arise.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे राम, मैं तुम्हें यह बात बार-बार इसलिए कहता हूं ताकि तुम इसे समझ सको। हे साधु, अभ्यास के बिना आत्मा का भान नहीं जगता।

6.11.2

अज्ञानमेतद्बलवदविद्येतरनामकम् जन्मान्तरसहस्रोत्थं घनं स्थितिमुपागतम् ॥ २ ॥

ajñāname tadbalavadavidyetaranāmakam janmāntarasahasrotthaṃ ghanaṃ sthitimupāgatam || 2 ||

This ignorance is powerful; it is also called by the name avidya. Risen from a thousand past lives, it has grown dense and become fixed in place.

यह अज्ञान बहुत बलवान है; इसे अविद्या भी कहा जाता है। यह हज़ारों पिछले जन्मों से उठकर घना हो गया है और जम गया है।

6.11.3

सबाह्याभ्यन्तरं सर्वैरिन्द्रियैरनुभूयते भावाभावेषु देहस्य तेनातिघनतां गतम् ॥ ३ ॥

sabāhyābhyantaraṃ sarvairindriyairanubhūyate bhāvābhāveṣu dehasya tenātighanatāṃ gatam || 3 ||

It is felt with all the senses, outside and inside, whether the body exists or does not exist. Because of this, it has become extremely dense.

यह सारी इंद्रियों से, बाहर और भीतर, शरीर के होने और न होने दोनों हालात में अनुभव होता है। इसी वजह से यह बहुत घना हो गया है।

6.11.4

आत्मज्ञानं तु सर्वेषामिन्द्रियाणामगोचरम् सत्तां केवलमायाति मनःषष्ठेन्द्रियक्षये ॥ ४ ॥

ātmajñānaṃ tu sarveṣāmindriyāṇāmagocaram sattāṃ kevalamāyāti manaḥṣaṣṭhendriyakṣaye || 4 ||

But knowledge of the self is beyond the reach of all the senses. It comes into being only when the six senses — the five senses and the mind — subside.

परंतु आत्मज्ञान सभी इंद्रियों की पहुंच से परे है। यह तभी प्रकट होता है जब छहों इंद्रियां - पांच इंद्रियां और मन - शांत हो जाती हैं।

6.11.5

प्रोल्लङ्घ्येन्द्रियजां वृत्तिं यत्स्थितं तत्कथं किल याति प्रत्यक्षतां जन्तोः प्रत्यक्षातीतवृत्तिमत् ॥ ५ ॥

prollaṅghayendriyajāṃ vṛttiṃ yatsthitaṃ tatkathaṃ kila yāti pratyakṣatāṃ jantoḥ pratyakṣātītavṛttimat || 5 ||

Knowledge of the self stands beyond anything the senses produce. So how could it ever come within a creature's direct sight, when its very nature is to be beyond direct sight?

आत्मज्ञान इंद्रियों से पैदा हुई किसी भी क्रिया से परे खड़ा है। तो यह किसी प्राणी की सीधी नज़र में कैसे आ सकता है, जबकि इसका स्वभाव ही सीधी नज़र से परे होना है?

6.11.6

त्वमविद्यालतामेतां प्ररूढां हृदयद्रुमे । ज्ञानाभ्यासविलासासिपातैश्छिन्धि स्वसिद्धये ॥ ६ ॥

tvamavidyālatāmetāṃ prarūḍhāṃ hṛdayadruma | jñānābhyāsavilāsāsipātaiśchindhi svasiddhaye || 6 ||

Cut down this creeper of ignorance that has grown thick over the tree of your heart. Strike it with the sword-blows of joyful practice in knowledge, for your own success.

अपने हृदय रूपी वृक्ष पर उगी हुई इस अज्ञान की लता को काट डालो। ज्ञान के अभ्यास के आनंद भरे तलवार के वार से इसे काटो, ताकि तुम्हें अपनी सफलता मिले।

6.11.7

यथा विहरति ज्ञातज्ञेयो जनकभूपतिः । आत्मज्ञानाभ्यासपरस्तथा विहर राघव ॥ ७ ॥

yathā viharati jñātajñeyo janakabhūpatiḥ | ātmajñānābhyāsaparastathā vihara rāghava || 7 ||

As King Janaka lives, having known what there is to know, so you too should live, Raghava, devoted to the practice of self-knowledge.

जैसे राजा जनक जानने योग्य को जानकर भी अपना जीवन जीते रहे, वैसे ही तुम भी, हे राघव, आत्मज्ञान के अभ्यास में लगे रहकर जीवन जियो।

6.11.8

निश्चयोऽयमभूत्तस्य कार्याकार्यविहारिणः । जाग्रतस्तिष्ठतो वापि तज्ज्ञानां तेन सत्यता ॥ ८ ॥

niścayo'yamabhūttasya kāryākāryavihāriṇaḥ | jāgratastiṣṭhato vāpi tajjñānāṃ tena satyatā || 8 ||

This was the conviction that stayed with Janaka, as he moved between doing and not doing, whether he was awake and busy or sitting quite still. It was this conviction that made his knowledge real.

यही वह दृढ़ निश्चय था जो जनक के साथ रहा, चाहे वे कुछ करें या न करें, चाहे जागते हुए व्यस्त हों या बिल्कुल शांत बैठे हों। इसी निश्चय ने उनके ज्ञान को सच्चा बनाया।

6.11.9

निश्चयेन हरिर्येन विविधाचारकारिणा । योनिष्ववतरत्युर्व्यां तत्तज्ज्ञत्वमुदाहृतम् ॥ ९ ॥

niścayena hariryena vividhācārakāriṇā | yoniṣvavataratyurvyāṃ tat tajjñatvamudāhṛtam || 9 ||

By the same conviction Hari uses when, acting in many different ways, he takes birth in various wombs on this earth — that conviction itself is called true knowledge.

जिस निश्चय के सहारे हरि अनेक प्रकार के आचरण करते हुए पृथ्वी पर विभिन्न योनियों में जन्म लेते हैं, वही निश्चय सच्चा ज्ञान कहलाता है।

6.11.10

निश्चयो यस्त्रिनेत्रस्य कान्तया सह तिष्ठतः । ब्रह्मणो वाप्यरागस्य स ते भवतु राघव ॥ १० ॥

niścayo yastriNetrasya kāntayā saha tiṣṭhataḥ | brahmaṇo vāpyarāgasya sa te bhavatu rāghava || 10 ||

The conviction that the three-eyed god holds while he dwells together with his beloved — or that Brahma holds, untouched by passion — may that same conviction be yours, Raghava.

जो निश्चय तीन आंखों वाले देवता का है, जो अपनी प्रिया के साथ रहते हैं, या जो निश्चय रागरहित ब्रह्मा का है - हे राघव, वही निश्चय तुम्हें भी प्राप्त हो।

6.11.11

यो निश्चयः सुरगुरोर्वाक्पतेर्भार्गवस्य च । दिवाकरस्य शशिनः पवनस्यानलस्य च ॥ ११ ॥

yo niścayaḥ suragurorvākpaterbhārgavasya ca | divākarasya śaśinaḥ pavanasya analasya ca || 11 ||

The conviction held by the gods' teacher, who is also the lord of speech, and by Bhargava; by the Sun, the Moon, the Wind, and Fire —

देवताओं के गुरु का, जो वाणी के भी स्वामी हैं, और भार्गव का; तथा सूर्य, चंद्रमा, वायु और अग्नि का जो निश्चय है -

6.11.12

नारदस्य पुलस्त्यस्य मम चाङ्गिरसस्तथा । प्रचेतसो भृगोश्चैव क्रतोरत्रेः शुकस्य च ॥ १२ ॥

nāradasya pulastyasya mama cāṅgirasastathā | pracetaso bhṛgoścaiva kratoratreḥ śukasya ca || 12 ||

of Narada, of Pulastya, of me, and of Angiras; of Pracetas, of Bhrigu, of Kratu, of Atri, and of Shuka —

नारद का, पुलस्त्य का, मेरा और अंगिरा का; प्रचेता का, भृगु का, क्रतु का, अत्रि का और शुक का -

6.11.13

अन्येषामेव विप्रेन्द्र राजर्षीणां च राघव । यो निश्चयो विमुक्तानां जीवतां ते भवत्वसौ ॥ १३ ॥

anyeṣāmeva viprendra rājarṣīṇāṃ ca rāghava | yo niścayo vimuktānāṃ jīvatāṃ te bhavatvasau || 13 ||

And of others too, O foremost of the wise, and of the royal sages, Raghava — the conviction held by those who are liberated while still alive: may that same conviction become yours.

हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, हे राघव, और भी जो राजर्षि हैं, उन सबका भी; जो निश्चय जीते-जी मुक्त हुए लोगों का है - वही निश्चय तुम्हें भी प्राप्त हो।

6.11.14

श्रीराम उवाच । येनैते भगवन्धीरा निश्चयेन महाधियः । विशोकाः संस्थितास्तन्मे ब्रह्मन्प्रब्रूहि तत्त्वतः ॥ १४ ॥

śrīrāma uvāca | yenaita bhagavandhīrā niścayena mahādhiyaḥ | viśokāḥ saṃsthitāstanme brahmanprabrūhi tattvataḥ || 14 ||

Sri Rama said: Venerable one, tell me truly what that conviction is, by which these steady, great-minded ones remain free of sorrow.

श्रीराम ने कहा: हे भगवन्, मुझे सच-सच बताइए कि वह कौन सा निश्चय है, जिसके कारण ये सभी धीर और महान बुद्धि वाले लोग शोक से मुक्त होकर स्थित हैं।

6.11.15

श्रीवसिष्ठ उवाच । राजपुत्र महाबाहो विदिताखिलवेद्य हे । स्फुटं शृणु यथा पृष्टमयमेषां हि निश्चयः ॥ १५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rājaputra mahābāho viditākhilavedya he | sphuṭaṃ śṛṇu yathā pṛṣṭamayameṣāṃ hi niścayaḥ || 15 ||

Sri Vasishtha said: Prince, mighty-armed one, you who already know all there is to know — listen clearly, as you have asked. This, indeed, is their conviction.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे राजकुमार, हे महाबाहु, हे जानने योग्य सब कुछ जानने वाले! जैसा तुमने पूछा है, स्पष्ट रूप से सुनो - यही है उन सबका निश्चय।

6.11.16

यदिदं किंचिदाभोगि जगज्जालं प्रदृश्यते । तत्सर्वममलं ब्रह्म भवत्येतद्व्यवस्थितम् ॥ १६ ॥

yadidaṃ kiṃcidābhogi jagajjālaṃ pradṛśyate | tatsarvamamalaṃ brahma bhavatyetadvyavasthitam || 16 ||

Whatever is seen here as this whole spreading net of the world — all of it is nothing but pure Brahman. This is settled and certain.

यहां जो कुछ भी यह फैला हुआ संसार-जाल दिखाई देता है, वह सब कुछ शुद्ध ब्रह्म ही है। यह बात पक्की और तय है।

6.11.17

ब्रह्म चिद्ब्रह्म भुवनं ब्रह्म भूतपरम्पराः । ब्रह्माहं ब्रह्म मच्छत्रुर्ब्रह्म सन्मित्रबान्धवाः ॥ १७ ॥

brahma cidbrahma bhuvanaṃ brahma bhūtaparamparāḥ | brahmāhaṃ brahma macchatruḥbrahma sanmitrabāndhavāḥ || 17 ||

Brahman is consciousness, Brahman is the world, Brahman is every being through its long lineage. Brahman is I, Brahman is my enemy, Brahman is my friends and kin.

ब्रह्म ही चेतना है, ब्रह्म ही यह दुनिया है, ब्रह्म ही जीवों की यह लंबी कड़ी है। ब्रह्म ही मैं हूं, ब्रह्म ही मेरा दुश्मन है, ब्रह्म ही मेरे दोस्त और रिश्तेदार हैं।

6.11.18

ब्रह्म कालत्रयं तच्च ब्रह्मण्येव व्यवस्थितम् । तरङ्गमालयाम्भोधिर्यथात्मनि विवर्धते ॥ १८ ॥

brahma kālatrayaṃ tacca brahmaṇyeva vyavasthitam | taraṅgamālayāmbhodhiryathātmani vivardhate || 18 ||

Brahman is the three times — past, present, and future — and these rest in Brahman alone, just as the ocean swells within itself through a chain of waves.

ब्रह्म ही तीनों काल है - भूत, वर्तमान और भविष्य - और ये सब ब्रह्म में ही स्थित हैं, जैसे समुद्र लहरों की माला से अपने भीतर ही उमड़ता है।

6.11.19

तथा पदार्थलक्ष्म्येत्थमिदं ब्रह्म विवर्धते । गृह्यते ब्रह्मणा ब्रह्म भुज्यते ब्रह्म ब्रह्मणा ॥ १९ ॥

tathā padārthalakṣmyetthamidaṃ brahma vivardhate | gṛhyate brahmaṇā brahma bhujyate brahma brahmaṇā || 19 ||

In the same way, Brahman spreads out as all these many things we see. Brahman grasps Brahman, and Brahman enjoys Brahman.

उसी तरह, यह ब्रह्म दिखने वाली इन तमाम चीज़ों के रूप में फैलता है। ब्रह्म ही ब्रह्म को पकड़ता है, और ब्रह्म ही ब्रह्म को भोगता है।

6.11.20

ब्रह्म ब्रह्मणि बृंहाभिर्ब्रह्मशक्त्येव बृंहति । ब्रह्म मच्छत्रुरूपं मे ब्रह्मणोऽप्रियकृद्यदि ॥ २० ॥

brahma brahmaṇi bṛṃhābhirbrahmaśaktyeva bṛṃhati | brahma macchatru rūpaṃ me brahmaṇo'priyakṛdyadi || 20 ||

Brahman grows within Brahman through its own expansions, by the power of Brahman alone. Brahman itself takes the form of my enemy; even if he does something that displeases me, that too is Brahman's doing.

ब्रह्म अपनी ही शक्ति से अपने भीतर बढ़ता और फैलता है। मेरा शत्रु भी स्वयं ब्रह्म का ही रूप है; भले ही वह मुझे कुछ अप्रिय करे, वह भी ब्रह्म का ही किया हुआ है।

6.11.21

तद्ब्रह्मणि ब्रह्मनिष्ठं किमन्यत्कस्यचित्कृतम्। रागादीनामवस्थानं कल्पितानां खवृक्षवत्॥ २१॥

tadbrahmaṇi brahmaniṣṭhaṃ kimanyatkasyacitkṛtam | rāgādīnāmavasthānaṃ kalpitānāṃ khavṛkṣavat || 21 ||

That which rests in Brahman, fixed firmly in Brahman — what else could anyone really do? The existence of passion and its kin is imagined, like a tree growing in the sky.

जो ब्रह्म में टिका है, ब्रह्म में ही स्थिर है - उसके अलावा और कोई कुछ कर ही कैसे सकता है? राग आदि विकारों का होना केवल कल्पना है, जैसे आकाश में उगा हुआ पेड़।

6.11.22

असंकल्पेन नष्टानां कः प्रसङ्गोऽत्र वर्धते। ब्रह्मण्येव हि सर्वस्मिंश्चरणस्पन्दनादिकम्॥ २२॥

asaṃkalpena naṣṭānāṃ kaḥ prasaṅgo'tra vardhate | brahmaṇyeva hi sarvasmiṃścaraṇaspandanādikam || 22 ||

For things that vanish the moment intention stops, what real connection can grow here? All movement — even the stirring of a foot — happens in Brahman alone, in everything.

जो चीजें संकल्प न होने से मिट जाती हैं, उनसे यहां कैसा नाता बढ़े? पैर का हिलना भी, और बाकी सब कुछ भी, ब्रह्म में ही होता है, हर जगह।

6.11.23

स्फुरति ब्रह्म सकलं सुखितादुःखिते कुतः। ब्रह्म ब्रह्मणि संतृप्तं ब्रह्म ब्रह्मणि संस्थितम्॥ २३॥

sphurati brahma sakalaṃ sukhitāduḥkhite kutaḥ | brahma brahmaṇi saṃtṛptaṃ brahma brahmaṇi saṃsthitam || 23 ||

Brahman alone shines forth as everything; how, then, can an unhappy person be different from a happy one? Brahman is content in Brahman, Brahman rests in Brahman.

ब्रह्म ही समूचा प्रकट होता है; फिर सुखी से दुखी अलग कैसे हो सकता है? ब्रह्म ब्रह्म में ही तृप्त है, ब्रह्म ब्रह्म में ही स्थित है।

6.11.24

स्फुरति ब्रह्मणि ब्रह्म नाहमस्मीतरात्मकः। घटो ब्रह्म पटो ब्रह्म ब्रह्माहमिदमाततम्॥ २४॥

sphurati brahmaṇi brahma nāhamasmītarātmakaḥ | ghaṭo brahma paṭo brahma brahmāhamidamātatam || 24 ||

Brahman shines within Brahman; I am not something separate from it. The pot is Brahman, the cloth is Brahman. I am Brahman, and this whole world is filled with it.

ब्रह्म ब्रह्म में ही चमकता है; मैं उससे अलग कोई और वस्तु नहीं हूं। घड़ा भी ब्रह्म है, कपड़ा भी ब्रह्म है। मैं भी ब्रह्म हूं, और यह सब कुछ ब्रह्म से ही भरा हुआ है।

6.11.25

अतो रागविरागाणां मृषेव कलनेह का। मरणब्रह्मणि स्वैरं देहब्रह्मणि संगते॥ २५॥

ato rāgavirāgāṇāṃ mṛṣeva kalaneha kā | maraṇabrahmaṇi svairaṃ dehabrahmaṇi saṅgate || 25 ||

So what false idea is this — of attachment and detachment — when death, which is Brahman, simply meets the body, which is also Brahman?

तो फिर राग और वैराग्य की यह झूठी कल्पना यहां क्या मायने रखती है, जबकि मृत्यु - जो स्वयं ब्रह्म है - बस शरीर से, जो वह भी ब्रह्म ही है, मिल भर रही है?

6.11.26

दुःखितानाम कैव स्याद्रज्जुसर्पभ्रमोपमा संभोगादौ सुखं ब्रह्मण्यास्थिते देहब्रह्मणि ॥ २६ ॥

duḥkhitānām kaiva syādrajjusarpabhramopamā saṃbhogādau sukhaṃ brahmaṇyāsthite dehabrahmaṇi || 26 ||

So what is the sorrow of the sorrowful but the illusion of a snake mistaken for a rope? And the same is true of the pleasure in enjoyment, when the body — itself Brahman — simply rests in Brahman.

तो दुखियों का दुख भी क्या है, सिवाय रस्सी में सांप दिखने के भ्रम के? और भोग आदि में मिलने वाला सुख भी वैसा ही है, जब शरीर - जो स्वयं ब्रह्म है - बस ब्रह्म में ही टिका है।

6.11.27

संपन्नमेतन्म इति मुधा स्यात्कलना कुतः वीच्यम्भसोः स्पन्दवतोर्न त्वन्यदम्बुनो यथा ॥ २७ ॥

sampannametanma iti mudhā syātkalanā kutaḥ vīcyambhasoḥ spandavatorna tvanyadambuno yathā || 27 ||

The thought 'this has happened to me' would be pointless — how could it even arise? It is like the wave and the water: both stir and move, but the wave is nothing other than the water.

'यह मेरे साथ हुआ' - ऐसा विचार व्यर्थ ही होगा; यह आए भी तो कहां से? जैसे लहर और पानी दोनों हिलते हैं, पर लहर पानी से अलग कुछ भी नहीं है।

6.11.28

त्वत्तामत्ते तथा न स्तो ब्रह्मणि स्पन्दरूपिणि यथावर्तमृते तोये न किंचिन्म्रियते क्वचित् ॥ २८ ॥

tvattāmattetathā na sto brahmaṇi spandarūpiṇi yathāvartamṛte toye na kiṃcinmriyate kvacit || 28 ||

In the same way, 'you' and 'I' do not really exist as two, within Brahman, whose very nature is movement. Just as a whirlpool is nothing apart from the water, nothing anywhere really dies.

उसी तरह, गति-स्वरूप ब्रह्म में 'तू' और 'मैं' असल में दो अलग चीज़ें नहीं हैं। जैसे भंवर पानी से अलग कुछ नहीं है, वैसे ही कहीं भी वास्तव में कुछ मरता नहीं है।

6.11.29

मृतिब्रह्मत्वमायाते देहब्रह्मणि वै तथा यथा चलाचले तोये त्वत्तामत्ते न तिष्ठतः ॥ २९ ॥

mṛtibrahmatvamāyāte dehabrahmaṇi vai tathā yathā calācale toye tvattāmattena tiṣṭhataḥ || 29 ||

The body too is Brahman. So when what we call death comes to it, it is like this: in water that keeps moving and then goes still, no wave stays fixed forever as this one or that one.

शरीर भी ब्रह्म ही है। इसलिए जिसे हम मृत्यु कहते हैं, जब वह इस पर आती है, तो बात ऐसी है जैसे पानी में, जो कभी हिलता है और कभी थम जाता है, कोई लहर हमेशा के लिए यह या वह बनकर टिकी नहीं रहती।

6.11.30

तथा जडाजडे रूपे न स्थिते परमात्मनि कटकत्वं यथा हेम्नो यथावर्तो जलस्य च ॥ ३० ॥

tathā jaḍājaḍe rūpe na sthite paramātmani kaṭakatvaṃ yathā hemno yathāvarto jalasya ca || 30 ||

In the same way, the forms called living and lifeless do not really stand apart in the highest self, just as a bangle is nothing but gold, and a whirlpool is nothing but water.

उसी तरह, जिन्हें हम सजीव और निर्जीव रूप कहते हैं, वे सबसे ऊँचे आत्मा में अलग-अलग खड़े नहीं होते, जैसे चूड़ी सोने के सिवा कुछ नहीं है, और भँवर पानी के सिवा कुछ नहीं है।

6.11.31

तदतद्भावरूपेयं तथा प्रकृतिरात्मनः । इदं हि जीवभूतात्म जडरूपमिदं भवेत् ॥ ३१ ॥

tadatadbhāvarūpeyaṃ tathā prakṛtirātmanaḥ | idaṃ hi jīvabhūtātma jaḍarūpamidaṃ bhavet || 31 ||

In the same way, the true nature of the self shows itself as both this and not this. The very self that has become a living being also becomes this lifeless thing.

उसी तरह आत्मा का असली स्वभाव खुद को यह और यह नहीं दोनों रूप में दिखाता है। वही आत्मा जो जीव बन गई है, यह निर्जीव चीज़ भी बन जाती है।

6.11.32

इत्यज्ञानात्मनो मोहो नच ज्ञानात्मनः क्वचित् । अज्ञस्य दुःखौघमयं ज्ञस्यानन्दमयं जगत् ॥ ३२ ॥

ityajñānātmano moho na ca jñānātmanaḥ kvacit | ajñasya duḥkhaughamayaṃ jñasyānandamayaṃ jagat || 32 ||

So this confusion belongs only to the one whose mind is ignorance, never at all to the one whose mind is knowledge. For the ignorant, the world is a flood of suffering; for the one who knows, the world is made of joy.

तो यह भ्रम सिर्फ़ उसी को होता है जिसका मन अज्ञान से बना है, उसे कभी नहीं होता जिसका मन ज्ञान से बना है। अज्ञानी के लिए संसार दुख की बाढ़ है; जानने वाले के लिए संसार आनंद से बना है।

6.11.33

अन्धं भुवनमन्धस्य प्रकाशं तु सचक्षुषः । जगदेकात्मकं ज्ञस्य मूर्खस्यातीव दुःखदम् ॥ ३३ ॥

andhaṃ bhuvanamandhasya prakāśaṃ tu sacakṣuṣaḥ | jagadekātmakaṃ jñasya mūrkhasyātīva duḥkhadam || 33 ||

The world is dark for a blind man, but bright for one who has eyes. For the one who knows, the world is one single self; for the fool, it brings great suffering.

अंधे आदमी के लिए संसार अंधेरा है, पर आँखों वाले के लिए उजला है। जानने वाले के लिए संसार एक ही आत्मा है; मूर्ख के लिए वह बहुत दुख देने वाला है।

6.11.34

शिशोरिव स्फुरद्यक्षा निशा पुंसस्तु केवला । अस्मिन्ब्रह्मघटे नित्यमेकस्मिन्सर्वतः स्थिते ॥ ३४ ॥

śiśoriva sphuradyakṣā niśā puṃsastu kevalā | asminbrahmaghaṭe nityamekasmin sarvataḥ sthite || 34 ||

To a child, the night seems full of a flickering ghost, but to a grown man it is simply night, nothing more. It is the same with this one eternal vessel that is Brahman, present everywhere.

बच्चे को रात में एक भूत टिमटिमाता हुआ दिखाई देता है, पर बड़े आदमी के लिए वह सिर्फ़ रात है, और कुछ नहीं। यही बात इस एक शाश्वत बर्तन जैसे ब्रह्म के साथ है, जो हर जगह मौजूद है।

6.11.35

न किंचिन्म्रियते नाम न च किंचन जीवति । यथोल्लासविलासेषु न नश्यति न जायते ॥ ३५ ॥

na kiṃcinmriyate nāma na ca kiṃcana jīvati | yathollāsavilāseṣu na naśyati na jāyate || 35 ||

Nothing, in truth, ever dies, and nothing, in truth, ever lives, just as, in its own rising and playful movement, nothing is destroyed and nothing is born.

सच में, न तो कुछ कभी मरता है, न कुछ कभी जीता है, जैसे अपने ही उठने और खेलने की हलचल में, न कुछ नष्ट होता है, न कुछ पैदा होता है।

6.11.36

तरङ्गादिमहाम्भोधौ भूतवृन्दं तथात्मनिइदं नास्तीदमस्तीति भ्रान्तिर्नामात्मनात्मनि ॥ ३६ ॥

taraṅgādimahāmbhodhau bhūtavṛndaṃ tathātmaniidaṃ nāstīdamastīti bhrāntirnāmātmanātmani || 36 ||

Just as waves and the like appear in the great ocean, so the whole crowd of created beings appears in the self. To say this does not exist and this exists is nothing but delusion, arising in the self about the self.

जैसे बड़े समुद्र में लहरें वगैरह दिखाई देती हैं, वैसे ही आत्मा में बने हुए सभी प्राणियों की भीड़ दिखाई देती है। यह नहीं है और यह है कहना बस भ्रम है, जो आत्मा में आत्मा के बारे में उठता है।

6.11.37

शक्तिर्निर्हेतुकैवान्तः स्फुरति स्फटिकांशुवत्जगच्छक्त्यात्मनात्मैव ब्रह्म स्वात्मनि संस्थितम् ॥ ३७ ॥

śaktirnirhetukaivāntaḥ sphurati sphaṭikāṃśuvatjagacchaktyātmanātmaiva brahma svātmani saṃsthitam || 37 ||

A power with no cause of its own shines from within, like light flashing off a crystal. As the power that turns into the world, the self, which is Brahman, rests inside itself alone.

बिना किसी कारण की एक शक्ति भीतर से चमकती है, जैसे स्फटिक से चमक फूटती है। संसार बन जाने वाली इसी शक्ति के रूप में, आत्मा, जो ब्रह्म है, खुद अपने ही भीतर टिकी रहती है।

6.11.38

तरङ्गकणजालेन पयसीव पयो घनम्शरीरनाशेन कथं ब्रह्मणो मृतधीर्भवेत् ॥ ३८ ॥

taraṅgakaṇajālena payasīva payo ghanamśarīranāśena kathaṃ brahmaṇo mṛtadhīrbhavet || 38 ||

Just as water thickened by a mass of waves and droplets is still only water, so how, by the destruction of the body, could the thought Brahman has died ever arise?

जैसे लहरों और बूँदों के जमघट से घना हुआ पानी भी सिर्फ़ पानी ही रहता है, वैसे ही शरीर के नष्ट होने से यह विचार कैसे उठ सकता है कि ब्रह्म मर गया?

6.11.39

ब्रह्मणो व्यतिरिक्तं हि न शरीरादि विद्यतेपयसो व्यतिरेकेण तरङ्गादि महार्णवे ॥ ३९ ॥

brahmaṇo vyatiriktaṃ hi na śarīrādi vidyatepayaso vyatirekeṇa taraṅgādi mahārṇave || 39 ||

Indeed, the body and everything else have no existence apart from Brahman, just as, in the great ocean, waves and the rest have no existence apart from water.

सच तो यह है कि शरीर और बाकी सब कुछ ब्रह्म से अलग नहीं है, जैसे बड़े समुद्र में लहरें वगैरह पानी से अलग नहीं हैं।

6.11.40

यः कणो या च कणिका या वीचिर्यस्तरङ्गकःयः फेनो या च लहरी तद्यथा वारि वारिणि ॥ ४० ॥

yaḥ kaṇo yā ca kaṇikā yā vīciryastaraṅgakaḥyaḥ pheno yā ca laharī tadyathā vāri vāriṇi || 40 ||

Whatever is a drop, whatever is a tiny droplet, whatever is a ripple, whatever is a small wave, whatever is foam, and whatever is a big wave, all of it is simply water within water.

जो कुछ बूँद है, जो कुछ छोटी बूँद है, जो कुछ लहर की हलचल है, जो कुछ छोटी लहर है, जो कुछ झाग है, और जो कुछ बड़ी लहर है, यह सब पानी के भीतर पानी ही है।

6.11.41

यो देहो या च कलना यद्दृश्यं यौ क्षयाक्षयौ या भावरचना योऽर्थस्तया तद्ब्रह्म ब्रह्मणि ॥ ४१ ॥

yo deho yā ca kalanā yaddṛśyaṃ yau kṣayākṣayau yā bhāvaracanā yo'rthastayā tadbrahma brahmaṇi || 41 ||

Whatever is a body, whatever is a thought, whatever is seen, whatever is perishable or imperishable, whatever is the whole arrangement of things, whatever is an object, all of it, in the same way, is simply Brahman within Brahman.

जो कुछ शरीर है, जो कुछ विचार है, जो कुछ दिखता है, जो कुछ नाशवान या अनाशवान है, जो कुछ चीज़ों की पूरी बनावट है, जो कुछ कोई वस्तु है, यह सब, उसी तरह, ब्रह्म के भीतर ब्रह्म ही है।

6.11.42

संस्थानरचना चित्रा ब्रह्मणः कनकादिव नान्यरूपा विमूढानां मृषैव द्वित्वभावना ॥ ४२ ॥

saṃsthānaracanā citrā brahmaṇaḥ kanakādiva nānyarūpā vimūḍhānāṃ mṛṣaiva dvitvabhāvanā || 42 ||

Brahman's many different shapes are like things made of gold, they are nothing but gold itself. Only fools hold the false idea that there are two separate things.

ब्रह्म के अलग-अलग रूप सोने से बनी चीज़ों जैसे हैं, वे सोने के सिवा कुछ नहीं हैं। सिर्फ़ मूर्ख लोग यह ग़लत विचार रखते हैं कि दो अलग चीज़ें हैं।

6.11.43

मनो बुद्धिरहंकारस्तन्मात्राणीन्द्रियाणि च ब्रह्मैव सर्वं नानात्म सुखं दुःखं न विद्यते ॥ ४३ ॥

mano buddhirahaṃkārastanmātrāṇīndriyāṇi ca brahmaiva sarvaṃ nānātma sukhaṃ duḥkhaṃ na vidyate || 43 ||

Mind, intellect, the sense of I, the subtle elements, and the senses, all this is nothing but Brahman. There is no separate self anywhere, and pleasure and pain do not really exist.

मन, बुद्धि, मैं का भाव, सूक्ष्म तत्व, और इंद्रियाँ, यह सब ब्रह्म के सिवा कुछ नहीं है। कहीं कोई अलग आत्मा नहीं है, और सुख-दुख वास्तव में हैं ही नहीं।

6.11.44

अयं सोऽहमिदं चित्तमित्याद्यर्थोत्थया गिरा शब्दप्रतिश्रवेणाद्राविवात्मात्मनि जृम्भते ॥ ४४ ॥

ayaṃ so'hamidaṃ cittamityādyarthottayā girā śabdapratiśraveṇādrāvivātmātmani jṛmbhate || 44 ||

Through words like this, that, I, and this is the mind, by a kind of echo of sound, like an echo bouncing off a mountain, the self simply unfolds within itself.

यह, वह, मैं, और यह मन है जैसे शब्दों के ज़रिए, आवाज़ की एक तरह की गूँज से, जैसे पहाड़ से टकराकर गूँज लौटती है, आत्मा बस अपने ही भीतर फैल जाती है।

6.11.45

ब्रह्मैवाज्ञातमज्ञत्वमभ्यागतमिव स्थितम् तथा हि दृश्यते स्वप्ने चेतसात्मात्मनात्मनः ॥ ४५ ॥

brahmaivājñātamajñatvamabhyāgatamiva sthitam tathā hi dṛśyate svapne cetasātmanātmanaḥ || 45 ||

When Brahman is not known, it seems as if not-knowing has settled onto it, the same way a person's own mind shows the self things about itself in a dream.

जब ब्रह्म को नहीं जाना जाता, तो ऐसा लगता है जैसे अज्ञान उस पर आ बैठा हो, उसी तरह जैसे सपने में आदमी का अपना मन आत्मा को आत्मा के बारे में चीज़ें दिखाता है।

6.11.46

अभावितं ब्रह्मतया ब्रह्माज्ञानमलं भवेत् अभावितं हेमतया यथा हेम च मृद्भवेत् ॥ ४६ ॥

abhāvitaṃ brahmatayā brahmājñānamalaṃ bhavet abhāvitaṃ hemata yathā hema ca mṛdbhavet || 46 ||

Brahman, when not known as Brahman, seems stained by ignorance, just as gold, when not recognized as gold, seems like mere clay.

ब्रह्म को जब ब्रह्म के रूप में न जाना जाए, तो वह अज्ञान से दागदार लगता है, जैसे सोने को जब सोना न पहचाना जाए, तो वह मिट्टी जैसा लगता है।

6.11.47

स्वयं प्रभुर्महात्मैव ब्रह्म ब्रह्मविदो विदुः अपरिज्ञातमज्ञानमज्ञानामिति कथ्यते ॥ ४७ ॥

svayaṃ prabhurmahātmaiva brahma brahmavidoviduḥ aparijñātamajñānamajñānāmiti kathyate || 47 ||

Those who know Brahman know it as its own master, the great self. What has not been fully understood is called the ignorance of those who do not know.

जो लोग ब्रह्म को जानते हैं, वे उसे अपना मालिक, महान आत्मा मानकर जानते हैं। जो पूरी तरह समझा नहीं गया, उसे अनजान लोगों का अज्ञान कहा जाता है।

6.11.48

ज्ञातं ब्रह्मतया ब्रह्म ब्रह्मैव भवति क्षणात् ज्ञातं हेमतया हेम हेमैव भवति क्षणात् ॥ ४८ ॥

jñātaṃ brahmatayā brahma brahmaiva bhavati kṣaṇāt jñātaṃ hemata yā hema hemaiva bhavati kṣaṇāt || 48 ||

Brahman, once known as Brahman, becomes purely Brahman in an instant, just as gold, once recognized as gold, becomes purely gold in an instant.

ब्रह्म को जैसे ही ब्रह्म के रूप में जान लिया जाए, वह उसी पल पूरी तरह ब्रह्म बन जाता है, जैसे सोने को जैसे ही सोना पहचान लिया जाए, वह उसी पल पूरी तरह सोना बन जाता है।

6.11.49

ब्रह्मात्मा सर्वशक्तिर्हि तद्यथा भावयत्यलम् निर्हेतुकः स्वयं शक्त्या तत्तथाशु प्रपश्यति ॥ ४९ ॥

brahmātmā sarvaśaktirhi tadyathā bhāvayatyalam nirhetukaḥ svayaṃ śaktyā tattathāśu prapaśyati || 49 ||

The self that is Brahman has every power. Whatever it fully conceives, by its own power and without any outside cause, it quickly sees come about, exactly as conceived.

जो आत्मा ब्रह्म है, उसमें हर शक्ति है। वह जो कुछ भी पूरी तरह सोच ले, अपनी ही शक्ति से, बिना किसी बाहरी कारण के, वह उसे वैसे ही जल्दी घटित होते देख लेती है जैसा सोचा गया था।

6.11.50

अकर्मकर्तृकरणमकारणमनामयम् स्वयंप्रभुं महात्मानं ब्रह्म ब्रह्मविदो विदुः ॥ ५० ॥

akarmakartṛkaraṇamakāraṇamanāmayam svayaṃprabhuṃ mahātmānaṃ brahma brahmavidoviduḥ || 50 ||

The knowers of Brahman know it as having no action, no doer, no means of acting, as having no cause and no illness, as its own master, the great self.

ब्रह्म को जानने वाले उसे ऐसा जानते हैं जिसमें न कोई कर्म है, न कोई करने वाला, न करने का कोई साधन; जिसका न कोई कारण है, न कोई बीमारी; जो खुद अपना मालिक है, महान आत्मा है।

6.11.51

अपरिज्ञातमज्ञानामज्ञानमिति कथ्यते। परिज्ञातं भवेज्ज्ञानमज्ञानपरिनाशनम्॥ ५१॥

aparijñātamajñānāmajñānamiti kathyate | parijñātaṃ bhavejjñānamajñānaparināśanam || 51 ||

What has not been fully understood is called ignorance for the ignorant. What has been fully understood becomes knowledge, which completely destroys ignorance.

जो पूरी तरह समझा नहीं गया, उसे अज्ञानियों के लिए अज्ञान कहा जाता है। जो पूरी तरह समझ लिया जाए, वह ज्ञान बन जाता है, जो अज्ञान को पूरी तरह नष्ट कर देता है।

6.11.52

बन्धुरेवापरिज्ञातो ह्यबन्धुरिति कथ्यते परिज्ञातो भवेद्बन्धुरबन्धुभ्रमनाशनात्॥ ५२॥

bandhurevāparijñāto hyabandhuriti kathyate parijñāto bhavedbandhurabandhubhramanāśanāt || 52 ||

A relative, when not recognized, is indeed called not a relative. Once recognized, he becomes known as a relative, because the false idea of not a relative is destroyed.

एक रिश्तेदार को, जब पहचाना न जाए, तो सचमुच रिश्तेदार नहीं कहा जाता है। पहचान लिए जाने पर, वह रिश्तेदार जाना जाता है, क्योंकि रिश्तेदार नहीं का ग़लत विचार मिट जाता है।

6.11.54

द्वैतं त्वसत्यमित्यन्तर्ज्ञाते सोदेति भावना। तस्माद्वैताच्च वैरस्याद्यया किल विरज्यते॥ ५४॥

dvaitaṃ tvasyamityantarjñāte sodeti bhāvanā | tasmādvaitācca vairasyādyayā kila virajyate || 54 ||

When someone comes to know, deep within, that this idea of two separate things is false, that feeling rises up in him. Because of that duality, and the distaste it brings, he truly becomes free of desire.

जब कोई अपने भीतर गहराई से जान लेता है कि यह दो अलग चीज़ों का भाव झूठा है, तो यही समझ उसमें उठती है। इस द्वैत और इससे उपजी उकताहट के कारण, वह सचमुच इच्छाओं से मुक्त हो जाता है।

6.11.55

अयं नाहमिति ज्ञाते स्फुटे सोदेति भावना। मिथ्याहंकारता तस्माद्यया नूनं विरज्यते॥ ५५॥

ayaṃ nāhamiti jñāte sphuṭe sodeti bhāvanā | mithyāhaṃkāratā tasmādyayā nūnaṃ virajyate || 55 ||

When it becomes clear and known that this is not I, that feeling rises up. From it comes the sense that the idea of I was false, and through that, one truly becomes free of desire.

जब यह साफ़-साफ़ जान लिया जाता है कि यह मैं नहीं हूँ, तो यही समझ उठती है। इससे यह पहचान आती है कि मैं का भाव झूठा था, और इसी से आदमी सचमुच इच्छाओं से मुक्त हो जाता है।

6.11.56

ब्रह्मैवाहमिति ज्ञाने सत्ये सोदेति भावना। तस्मिन्सत्ये निजे रूपे यथान्तः परिलीयते॥ ५६॥

brahmaivāhamiti jñāne satye sodeti bhāvanā | tasmin satye nije rūpe yathāntaḥ parilīyate || 56 ||

When the true knowledge I am Brahman alone arises, that feeling comes up, and in that true, own nature, one dissolves completely within it.

जब यह सच्चा ज्ञान उठता है कि मैं ब्रह्म ही हूँ, तो यही समझ जागती है, और उस सच्चे, अपने ही स्वरूप में, आदमी पूरी तरह भीतर घुल जाता है।

6.11.57

सति विस्तारजे तस्मिन्ब्रह्मेदमिति वेद्म्यहम्त्वमहंत्वादिबाधे तत्सदित्यादि जगद्गतम् ॥ ५७ ॥

sati vistāraje tasminbrahmedamiti vedmyahamtvamahaṃtvādibādhe tatsadityādi jagadgatam || 57 ||

When that feeling has grown and truly settled in, I know, this is Brahman. Once the difference between you and I is set aside, all that is left, through the whole world, is simply that is real.

जब यह समझ बढ़कर सचमुच भीतर बस जाती है, तो मैं जान लेता हूँ, यह ब्रह्म है। तुम और मैं का फ़र्क़ मिट जाने पर, पूरे संसार में बस यही बचता है कि वही सत्य है।

6.11.58

सत्यं सर्वप्रकाराड्ह्यं ब्रह्मेदमिति वेद्म्यहम्न मे दुःखं न कर्माणि न मे मोहो न वाञ्छितम् ॥ ५८ ॥

satyaṃ sarvaprakārāḍhyaṃ brahmedamiti vedmyahamna me duḥkhaṃ na karmāṇi na me moho na vāñchitam || 58 ||

I know this truth, full in every way, as Brahman. I have no sorrow, no actions, no delusion, and no desire.

मैं इस सत्य को, जो हर तरह से भरपूर है, ब्रह्म के रूप में जानता हूँ। मुझमें न कोई दुख है, न कोई कर्म, न कोई मोह, और न कोई इच्छा।

6.11.59

समः स्वस्थो विशोकोऽस्मि ब्रह्माहमिति सत्यताकलाकलङ्कमुक्तोऽस्मि सर्वमस्मि निरामयः ॥ ५९ ॥

samaḥ svastho viśoko'smi brahmāhamiti satyatākalākalaṅkamukto'smi sarvamasmi nirāmayaḥ || 59 ||

I am balanced, steady, and free from sorrow — the truth is that I am Brahman. I am free of every blemish, I am everything, and I am free of all illness.

मैं सम हूँ, स्थिर हूँ, और शोक से मुक्त हूँ — सत्य यही है कि मैं ब्रह्म हूँ। मैं हर दाग-धब्बे से मुक्त हूँ, मैं सब कुछ हूँ, और मैं हर रोग से रहित हूँ।

6.11.60

न त्यजामि न वाञ्छामि ब्रह्माहमिति सत्यता अहं रक्तमहं मांसमहमस्थीन्यहं वपुः ॥ ६० ॥

na tyajāmi na vāñchāmi brahmāhamiti satyatāahaṃ raktamahaṃ māṃsamahamasthīnyahaṃ vapuḥ || 60 ||

I reject nothing and I want nothing — the truth is that I am Brahman. I am the blood, I am the flesh, I am the bones, I am the body.

मैं न कुछ त्यागता हूँ, न कुछ चाहता हूँ — सत्य यही है कि मैं ब्रह्म हूँ। मैं ही रक्त हूँ, मैं ही मांस हूँ, मैं ही हड्डियाँ हूँ, मैं ही शरीर हूँ।

6.11.61

चिदहं चेतनं चाहं ब्रह्माहमिति सत्यता द्यौरहं खमहं सार्कमहमाशा भुवोऽप्यहम् ॥ ६१ ॥

cidahaṃ cetanaṃ cāhaṃ brahmāhamiti satyatādyaurahaṃ khamahaṃ sārkamahamāśā bhuvo'pyaham || 61 ||

I am consciousness, and I am the conscious self — the truth is that I am Brahman. I am the sky, I am space, I am the sun, I am the directions, and I am the earth too.

मैं चेतना हूँ, और मैं ही चेतन तत्व हूँ — सत्य यही है कि मैं ब्रह्म हूँ। मैं आसमान हूँ, मैं अंतरिक्ष हूँ, मैं सूर्य हूँ, मैं दिशाएँ हूँ, और मैं धरती भी हूँ।

6.11.62

अहं घटपटाकारो ब्रह्माहमिति सत्यता । अहं तृणमहं चोर्वी गुल्मोऽहं काननाद्यहम् ॥ ६२ ॥

ahaṃ ghaṭapaṭākāro brahmāhamiti satyatā | ahaṃ tṛṇamahaṃ corvī gulmo'haṃ kānanādyaham || 62 ||

I am the shape of a pot, and I am the shape of a cloth — the truth is that I am Brahman. I am grass, and I am the earth, I am the bush, and I am the forest and everything else.

मैं घड़े का आकार हूँ, और मैं कपड़े का आकार हूँ — सत्य यही है कि मैं ब्रह्म हूँ। मैं घास हूँ, मैं धरती हूँ, मैं झाड़ी हूँ, और मैं जंगल और बाकी सब भी हूँ।

6.11.63

शैलसागरसार्थोऽहं ब्रह्मैकत्वं किल स्थितम् । आदानदानसंकोचपूर्विका भूतशक्तयः ॥ ६३ ॥

śailasāgarasārtho'haṃ brahmaikatvaṃ kila sthitam | ādānadānasankocapūrvikā bhūtaśaktayaḥ || 63 ||

I am the whole mass of mountains and oceans — the oneness of Brahman truly stands firm. The powers of living beings begin with taking in, giving out, and drawing back.

मैं पर्वतों और सागरों का पूरा समूह हूँ — ब्रह्म की एकता सचमुच अटल है। जीवों की शक्तियाँ लेने, देने और सिकुड़ने से शुरू होती हैं।

6.11.64

सर्वमेव चिदात्मास्मि ब्रह्मण्याततरूपधृक् । लतागुल्माङ्कुरादीनामहंसंभवनैषिणाम् ॥ ६४ ॥

sarvameva cidātmāsmi brahmaṇyātatatārūpadhṛk | latāgulmāṅkurādīnāmahaṃsaṃbhavanaiṣiṇām || 64 ||

I am indeed everything, the self that is consciousness, wearing a form spread through Brahman — the form of creepers, bushes, sprouts, and the rest, all of which long to spring up into their own being.

मैं ही सब कुछ हूँ, वह चेतन आत्मा जो ब्रह्म में फैला हुआ रूप धारण करता है — लताओं, झाड़ियों, अंकुरों आदि का रूप, जो सब अपने आप उगने की चाह रखते हैं।

6.11.65

चिदात्मान्तर्गतं शान्तं परं ब्रह्म रसात्मकम् । यस्मिन्सर्वं यतः सर्वं यत्सर्वं सर्वतश्च यत् ॥ ६५ ॥

cidātmāntargataṃ śāntaṃ paraṃ brahma rasātmakam | yasmin sarvaṃ yataḥ sarvaṃ yat sarvaṃ sarvataś ca yat || 65 ||

The self that is consciousness, gone deep within and at peace, is the supreme Brahman, the very essence of it all — the one in whom everything rests, from whom everything comes, who is everything, and who is present everywhere.

जो चेतन आत्मा भीतर समाया हुआ और शांत है, वही परम ब्रह्म है, जो हर चीज़ का सार है — जिसमें सब कुछ है, जिससे सब कुछ आता है, जो स्वयं सब कुछ है, और जो हर जगह है।

6.11.66

यो मतः सर्व एकात्मा परं ब्रह्मेति निश्चयः । चिदात्मा ब्रह्म सत्सत्यमृतं ज्ञ इति नामभिः ॥ ६६ ॥

yo mataḥ sarva ekātmā paraṃ brahmeti niścayaḥ | cidātmā brahma satsatyamṛtaṃ jña iti nāmabhiḥ || 66 ||

What is recognized as the one self in all is settled as the supreme Brahman. This same conscious self, Brahman, goes by the names Sat, Satya, Rta, and Jna — that is, Being, Truth, the Right, and the Knower.

जिसे सबका एक ही आत्मा माना जाता है, वही परम ब्रह्म ठहरता है। वही चेतन आत्मा, ब्रह्म, सत्, सत्य, ऋत और ज्ञ नामों से जाना जाता है — यानी सत्ता, सच्चाई, नियम और ज्ञाता।

6.11.67

प्रोच्यते सर्वगं तत्त्वं चिन्मात्रं चेत्यवर्जितम्। आभासमात्रममलं सर्वभूतात्मबोधकम्॥ ६७॥

procyate sarvagaṃ tattvaṃ cinmātraṃ cetyavarjitam| ābhāsamātramamalaṃ sarvabhūtātmabodhakam || 67 ||

It is called the reality that reaches everywhere, pure consciousness alone, with nothing outside it left to know. It is mere shining, without stain, and it makes known the self within every being.

उसे सर्वव्यापी तत्व कहा जाता है, केवल शुद्ध चेतना, जिसके बाहर जानने को कुछ नहीं बचता। वह केवल आभा है, निर्मल है, और वही हर प्राणी के भीतर आत्मा को जना देती है।

6.11.68

सर्वत्रावस्थितं शान्तं चिद्ब्रह्मेत्यनुभूयते। मनोबुद्धीन्द्रियव्रातसमस्तकलनान्वितम्॥ ६८॥

sarvatrāvasthitaṃ śāntaṃ cidbrahmetyanubhūyate| manobuddhīndriyavrātasamastakalanānvitam || 68 ||

Present everywhere and at peace, it is felt as consciousness that is Brahman — joined to all the working of the mind, the intellect, and the senses together.

वह हर जगह मौजूद है और शांत है, और चेतन-ब्रह्म के रूप में अनुभव किया जाता है — मन, बुद्धि और इंद्रियों के पूरे समूह की सारी क्रिया के साथ जुड़ा हुआ।

6.11.69

भेदं त्यक्त्वा स्वमाभासं चिद्ब्रह्माहमनामयम्। शब्दादीनामशेषाणां कारणानां जगत्स्थितेः॥ ६९॥

bhedaṃ tyaktvā svamābhāsaṃ cidbrahmāhamanāmayam| śabdādīnāmaśeṣāṇāṃ kāraṇānāṃ jagatsthiteḥ || 69 ||

Having let go of all distinction, I am my own shining light — I am consciousness-Brahman, free from affliction. I am the source of every unending cause — sound and the rest — by which the world goes on existing.

हर भेद छोड़कर, मैं अपनी ही चमक हूँ — मैं चेतन-ब्रह्म हूँ, हर पीड़ा से मुक्त। मैं ही उन सारे अंतहीन कारणों का स्रोत हूँ — शब्द आदि — जिनसे संसार बना रहता है।

6.11.70

तत्त्वावकाशकं स्वच्छं चिद्ब्रह्मास्मि न मे क्षयः। अनारतगलत्स्वच्छचिद्धारागहनात्मकम्॥ ७०॥

tattvāvakāśakaṃ svacchaṃ cidbrahmāsmi na me kṣayaḥ| anāratagalatsvacchaciddhārāgahanātmakam || 70 ||

I am the clear consciousness-Brahman that makes room for all reality; nothing in me ever decays. I am the dense fullness of a clear stream of consciousness, flowing without pause.

मैं ही वह स्वच्छ चेतन-ब्रह्म हूँ जो हर सच्चाई को जगह देता है; मुझमें कभी कोई क्षय नहीं होता। मैं निरंतर बहती हुई स्वच्छ चेतना की सघन धारा हूँ।

6.11.71

आलोकः सुमनोमौनं चिद्ब्रह्मास्म्यमृतं परम्। अनारतगलद्रूपं नित्यं चानुभवामृतम्॥ ७१॥

ālokaḥ sumanomauṇaṃ cidbrahmāsmyamṛtaṃ param| anāratagaladrūpaṃ nityaṃ cānubhavāmṛtam || 71 ||

The light is the silent peace of a good mind; I am consciousness-Brahman, the highest nectar of immortality — flowing on without pause, eternal, the very nectar of direct experience.

वह प्रकाश शुद्ध मन की शांत चुप्पी है; मैं ही चेतन-ब्रह्म हूँ, अमरता का परम अमृत — निरंतर बहता हुआ, नित्य, प्रत्यक्ष अनुभव का अमृत।

6.11.72

अहनिःशेषचक्राणि चिद्ब्रह्माहमलेपकम्। सुषुप्तसदृशं शान्तमालोकविमलात्मकम्॥ ७२॥

ahaniḥśeṣacakrāṇi cidbrahmāhamalepakam | suṣuptasadṛśaṃ śāntamālokavimalātmakam || 72 ||

I am consciousness-Brahman — all the unbroken cycles of days, untouched by any stain, calm like dreamless sleep, and as pure in nature as clear light.

मैं ही चेतन-ब्रह्म हूँ — दिनों के सारे अटूट चक्र, जिस पर कोई दाग नहीं लगता, गहरी बिना-सपने की नींद जैसा शांत, और स्वभाव से स्वच्छ प्रकाश जैसा निर्मल।

6.11.73

संभोगोत्तममाभासं चिद्ब्रह्मास्म्यपवासनम्। खण्डादिस्वादुसंवित्तिरीषन्मात्रा तु तिष्ठति॥ ७३॥

saṃbhogottamamābhāsaṃ cidbrahmāsmyapavāsanam | khaṇḍādisvādusaṃvittirīṣanmātrā tu tiṣṭhati || 73 ||

I am consciousness-Brahman, the finest shining of all enjoyment, free of any lingering craving. The taste of sweetness in sugar and the like remains only a faint thing.

मैं ही चेतन-ब्रह्म हूँ, भोग की सबसे उत्तम चमक, जिसमें कोई पुरानी चाह शेष नहीं। गुड़-मिठाई आदि की मिठास का अनुभव तो बस एक हल्की सी चीज़ रह जाता है।

6.11.74

चित्तादिष्ववबुद्धेषु तद्धि ब्रह्माहमच्युतः। कान्तासंसक्तचित्तस्य चन्द्रे समुदिते सति॥ ७४॥

cittādiṣvavabuddheṣu taddhi brahmāhamacyutaḥ | kāntāsaṃsaktacittasya candre samudite sati || 74 ||

When the mind and the other faculties are fully known, that itself is Brahman; I am the changeless one. A man's heart clings to his beloved, and the moon has risen in the sky.

जब मन आदि को पूरी तरह जान लिया जाता है, वही ब्रह्म है; मैं ही वह अपरिवर्तनीय हूँ। एक पुरुष का मन अपनी प्रिया में लगा है, और आकाश में चाँद उग आया है।

6.11.75

चन्द्रप्रत्ययसत्त्वात्म चिद्ब्रह्माहमनामयम्। भूमिष्ठनरदृष्टीनां लग्नानां खे निशाकरे॥ ७५॥

candrapratyayasattvātma cidbrahmāhamanāmayam | bhūmiṣṭhanaradṛṣṭīnāṃ lagnānāṃ khe niśākare || 75 ||

My own self is the very awareness that appears as the moon; I am consciousness-Brahman, free from every flaw. The eyes of men standing on the earth are fixed on the moon in the sky.

मेरा अपना स्वरूप ही वह चेतना है जो चाँद के रूप में दिखती है; मैं ही चेतन-ब्रह्म हूँ, हर दोष से रहित। धरती पर खड़े लोगों की आँखें आकाश के चाँद पर टिकी हैं।

6.11.76

या खस्था ननु चिच्छक्तिस्तच्चिद्ब्रह्मास्ति निर्मलम्। सुखदुःखादिकलनाविकलो निर्मलस्तथा॥ ७६॥

yā khasthā nanu cicchaktistaccidbrahmāsti nirmalam | sukhaduḥkhādikalanāvikalo nirmalastathā || 76 ||

That power of consciousness that stands in the sky is itself the stainless consciousness-Brahman. In the same way, I am free from the workings of pleasure and pain, and free of every stain.

आकाश में जो चेतना-शक्ति स्थित है, वही निर्मल चेतन-ब्रह्म है। उसी तरह मैं सुख-दुख आदि की हलचल से मुक्त हूँ, और हर दाग से रहित हूँ।

6.11.77

सत्यानुभवरूपात्म चिद्ब्रह्मात्मास्मि शाश्वतः। असंस्तुताध्वगालोके मनस्यन्यत्र संस्थिते ॥ ७७ ॥

satyānubhavarūpātma cidbrahmātmāsmi śāśvataḥ| asaṃstutādhvagāloke manasyanyatra saṃsthite || 77 ||

My self, whose very nature is true, direct experience, is the eternal self of consciousness-Brahman. A stranger walks along the road while the mind is fixed elsewhere.

मेरा स्वरूप सत्य, प्रत्यक्ष अनुभव ही है — मैं शाश्वत चेतन-ब्रह्म आत्मा हूँ। मन कहीं और लगा रहता है, फिर भी राह पर कोई अजनबी राहगीर चलता दिखता है।

6.11.78

या प्रतीतिरनागस्का तच्चिद्ब्रह्मास्मि सर्वगः। भूवार्यनिलबीजानां संबन्धेऽङ्कुरकर्मसु ॥ ७८ ॥

yā pratītiranāgaskā taccidbrahmāsmi sarvagaḥ| bhūvāryanilabījānāṃ saṃbandhe'ṅkurakarmasu || 78 ||

That bare perception, free of any attachment, is itself what I am — consciousness-Brahman, present everywhere. Earth, water, wind, and seed come together in the work of sprouting.

वह निर्दोष, बिना किसी लगाव का बोध — वही मैं हूँ, सर्वव्यापी चेतन-ब्रह्म। धरती, जल, वायु और बीज मिलकर अंकुर फूटने का काम करते हैं।

6.11.79

शक्तिरुद्गमनीयान्तस्तच्चिद्ब्रह्माहमाततम्। खर्जूरनिम्बबिम्बानां स्वयमात्मनि तिष्ठताम् ॥ ७९ ॥

śaktirudgamanīyāntastaccidbrahmāhamātatam| kharjūranimbabimbānāṃ svayamātmani tiṣṭhatām || 79 ||

The power within the seed that is ready to sprout is itself what I am — consciousness-Brahman, spread through everything. Date palms, neem trees, and bimba plants stand by themselves, each in its own nature.

बीज के भीतर वह शक्ति जो अंकुरित होने को तैयार है — वही मैं हूँ, सब में फैला हुआ चेतन-ब्रह्म। खजूर, नीम और बिम्बा के पौधे अपने आप, अपने ही स्वभाव में खड़े रहते हैं।

6.11.80

या स्वादसत्ता लीनान्तस्तद्ब्रह्म चिदहं समः। खेदानन्दविमुक्तान्तः संवित्तिर्मननोदया ॥ ८० ॥

yā svādasattā līnāntastadbrahma cidahaṃ samaḥ| khedānandavimuktāntaḥ saṃvittirmamanodayā || 80 ||

The sweetness hidden within them is itself Brahman; I am that same consciousness. My awareness, free within from both sorrow and joy, arises through quiet reflection.

उनके भीतर छिपी मिठास ही ब्रह्म है; मैं वही चेतना हूँ, समान। मेरा बोध, जो भीतर से सुख-दुख दोनों से मुक्त है, शांत चिंतन से उपजता है।

6.11.81

लाभालाभविधौ तुल्या चिद्ब्रह्मास्मि निरामयम्। यावद्भूम्यर्कमेतावद्दृष्टिसूत्रं यदाततम् ॥ ८१ ॥

lābhālābhavidhau tulyā cidbrahmāsmi nirāmayam| yāvadbhūmyarkametāvaddṛṣṭisūtraṃ yadātatam || 81 ||

Whether there is gain or loss, I remain the same — I am consciousness-Brahman, free from every flaw. The thread of sight stretches out exactly as far as the earth and the sun.

लाभ हो या हानि, मैं वैसा ही रहता हूँ — मैं चेतन-ब्रह्म हूँ, हर दोष से मुक्त। दृष्टि का धागा धरती से सूरज तक जितनी दूरी है, उतना ही फैला है।

6.11.82

तन्मध्यसदृशं शान्तं निर्मलं चिदहं ततम्। जाग्रत्यपि सुषुप्तेऽपि तत्स्वप्नेऽपि तथोदितम्॥ ८२॥

tanmadhyasadṛśaṃ śāntaṃ nirmalaṃ cidahaṃ tatam | jāgratyapi suṣupte'pi tatsvapne'pi tathoditam || 82 ||

Calm and stainless like the middle point of that thread, I, consciousness, stretch through the whole of it. It appears the same way in waking, in deep sleep, and in dream.

उस धागे के बीच जैसा शांत और निर्मल, मैं चेतना उसमें पूरी तरह फैला हूँ। जागने में, गहरी नींद में, और सपने में भी यह वैसा ही दिखता है।

6.11.83

तुर्यं रूपमनाद्यन्तं चिद्ब्रह्माहमनामयम्। पुंसां क्षेत्रशतोत्थानामिक्षूणां स्वादुवत्स्थितम्॥ ८३॥

turyaṃ rūpamanādyantaṃ cidbrahmāhamanāmayam | puṃsāṃ kṣetraśatottānāmikṣūṇāṃ svāduvatsthitam || 83 ||

I am the Fourth state, the form that has no beginning and no end — I am consciousness-Brahman, free from every flaw. It is present the way sweetness is present in sugarcanes grown in a hundred different men's fields.

मैं ही तुरीय अवस्था हूँ, वह रूप जिसका न आदि है न अंत — मैं चेतन-ब्रह्म हूँ, हर दोष से रहित। यह वैसे ही मौजूद है जैसे सैकड़ों लोगों के खेतों में उगे गन्नों में मिठास मौजूद रहती है।

6.11.84

सर्वेषामेकरूपं तच्चिद्ब्रह्मास्मि समः स्थितः। सर्वगा प्रकृता स्वच्छरूपा भानोरिव प्रभा॥ ८४॥

sarveṣāmekarūpaṃ taccidbrahmāsmi samaḥ sthitaḥ | sarvagā prakṛtā svaccharūpā bhānoriva prabhā || 84 ||

That single sweetness present the same in all of them is itself what I am — consciousness-Brahman, standing equal everywhere. All-pervading, natural, clear in form, like the light of the sun.

वह एक जैसी मिठास जो उन सबमें समान है — वही मैं हूँ, चेतन-ब्रह्म, हर जगह समान रूप से स्थित। सब जगह व्याप्त, स्वाभाविक, स्वच्छ रूप वाला, सूरज की रोशनी जैसा।

6.11.85

आलोककारिणी कान्ता चिद्ब्रह्मेदमहं ततम्। संभोगानन्दलववदमृतास्वादशक्तिवत्॥ ८५॥

ālokakāriṇī kāntā cidbrahmedamahaṃ tatam | saṃbhogānandalavavadamṛtāsvādaśaktivat || 85 ||

I am this consciousness and Brahman, spread through everything, lovely, the maker of light, like a drop of the joy of union, like the power to taste nectar.

मैं यही चेतन ब्रह्म हूँ, जो हर जगह फैला हुआ है, सुंदर है, प्रकाश करने वाला है, मिलन के आनंद की एक बूँद जैसा, और अमृत चखने की शक्ति जैसा है।

6.11.86

स्वानुभूत्यैकमात्रं यच्चिद्ब्रह्मास्मि तदव्ययम्। प्रोताङ्गमपि गुप्तास्यं देहे तन्तुर्बिसे यथा॥ ८६॥

svānubhūtyaikamātraṃ yaccidbrahmāsmi tadavyayam | protāṅgamapi guptāsyaṃ dehe tanturbise yathā || 86 ||

I am that imperishable consciousness and Brahman, known only through one's own experience, strung through every part of the body yet hidden at its ends, like the fibre inside a lotus stalk.

मैं वही अविनाशी चेतन ब्रह्म हूँ, जिसे केवल अपने ही अनुभव से जाना जा सकता है, जो शरीर के हर अंग में पिरोया हुआ है फिर भी छिपा रहता है, जैसे कमल की नाल के भीतर का रेशा।

6.11.87

चेदे भेदे स्फुरद्रूपं चिद्ब्रह्माहमनामयम् आक्रान्तभुवनाप्यभ्रमालेव स्पन्दशालिनी ॥ ८७ ॥

chede bhede sphuradrūpaṃ cidbrahmāhamanāmayam ākrāntabhuvanāpyabhramāleva spandaśālinī || 87 ||

I am consciousness and Brahman, free from sickness, a form that flashes out in every cutting and every division, and though it has spread over the whole world, it quivers like a line of clouds.

मैं चेतन ब्रह्म हूँ, रोग से रहित, ऐसा रूप जो हर कटाव और हर भेद में चमक उठता है, और पूरी दुनिया में फैला होने पर भी बादलों की एक पंक्ति जैसा कांपता रहता है।

6.11.88

दुर्लक्ष्याणुमयाकारा चिच्छक्तिरहमातता अनुभूतिमयान्तस्था स्नेहमात्रोपलक्षिता ॥ ८८ ॥

durlakṣyāṇumayākārā cicchaktirahamātatā anubhūtimayāntasthā snehamātropalakṣitā || 88 ||

I am the power of consciousness, hard to see, made of tiny particles in form, spread everywhere, standing within as pure experience, known only by the mark of affection.

मैं चेतना की वह शक्ति हूँ, जिसे देखना कठिन है, जो सूक्ष्म कणों के रूप में है, जो हर जगह फैली हुई है, जो अनुभव के रूप में भीतर बसी है, और जिसे केवल स्नेह के चिह्न से पहचाना जाता है।

6.11.89

क्षीराद्धृतस्य सत्तेव चिदहं क्षयवर्जिता कटकाङ्गदकेयूररचना तदतन्मयी ॥ ८९ ॥

kṣīrāddhṛtasya satteva cidahaṃ kṣayavarjitā kaṭakāṅgadakeyūraracanā tadatanmayī || 89 ||

I am consciousness, free from decay, like the being that comes out of milk as ghee, like a bracelet, an armlet and a band shaped from gold, forms that are gold and yet are not merely gold.

मैं चेतना हूँ, नाश से रहित, जैसे दूध से निकला हुआ घी होता है, जैसे कंगन, बाजूबंद और भुजबंद, जो सोने के ही बने हैं फिर भी केवल सोना नहीं हैं।

6.11.90

हेम्नीव संस्थिता देहे चिद्ब्रह्मात्मास्मि सर्वगः पदार्थौघस्य शैलादेर्बहिरन्तश्च सर्वदा ॥ ९० ॥

hemnīva saṃsthitā dehe cidbrahmātmāsmi sarvagaḥ padārthaughasya śailāderbahirantaśca sarvadā || 90 ||

I am the self that is consciousness and Brahman, present everywhere, existing in the mass of things the way gold exists in an ornament, always both outside and inside all things, mountains and the rest.

मैं वह आत्मा हूँ जो चेतन ब्रह्म है, जो हर जगह मौजूद है, जो चीज़ों में वैसे ही रहता है जैसे सोना गहने में रहता है, सदा पहाड़ों और बाकी सब चीज़ों के भीतर और बाहर दोनों जगह।

6.11.91

सत्तासामान्यरूपेण या चित्सोऽहमलेपकः सर्वासामनुभूतीनामादर्शो यो ह्यकृत्रिमः ॥ ९१ ॥

sattāsāmānyarūpeṇa yā citso'hamalepakaḥ sarvāsāmanubhūtīnāmādarśo yo hyakṛtrimaḥ || 91 ||

I am that consciousness which, as being itself, stays untouched by anything, the natural mirror of every experience.

मैं वही चेतना हूँ, जो सत्ता के सामान्य रूप में है और जो किसी भी चीज़ से लिप्त नहीं होती, हर अनुभव का वह स्वाभाविक दर्पण जो बनावटी नहीं है।

6.11.92

अगम्यो मललेखानां तच्चित्तत्त्वमहं महत् सर्वसंकल्पफलदं सर्वतेजःप्रकाशकम ॥ ९२ ॥

agamyo malalekhānāṃ taccittattvamahaṃ mahat sarvasaṃkalpaphaladaṃ sarvatejaḥprakāśakam || 92 ||

I am that great principle of consciousness, which no line of dirt can reach, the giver of the fruit of every wish, the light that lights up all brightness.

मैं वही महान चेतन तत्व हूँ, जिस तक मैल की कोई रेखा नहीं पहुँच सकती, जो हर इच्छा का फल देने वाला है, और जो हर तेज को प्रकाशित करने वाला है।

6.11.93

इदं त्वयुक्तमित्यन्तर्ज्ञाते सोदेति भावना यस्मादयुक्ताद्वैरस्याद्यया किल विरज्यते ॥ ९३ ॥

idaṃ tvayuktamityantarjñāte sodeti bhāvanā yasmādayuktādvairasyādyayā kila virajyate || 93 ||

When someone knows inside that this is wrong, that feeling arises in him, a distaste for what is wrong, by which he truly becomes detached.

जब मन के भीतर यह जान लिया जाता है कि यह गलत है, तो यही भाव उठता है, गलत के प्रति यह अरुचि, जिससे व्यक्ति सचमुच विरक्त हो जाता है।

6.11.94

अनारतकचद्रूपं चिदात्मानमुपास्महे घटे पटे तटे कूपे स्पन्दमानं सदा तनौ ॥ ९४ ॥

anāratakacadrūpaṃ cidātmānamupāsmahe ghaṭe paṭe taṭe kūpe spandamānaṃ sadā tanau || 94 ||

We meditate on the self as consciousness, the form that shines without a break, always quivering in the body, in the pot, in the cloth, on the bank, in the well.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, वह रूप जो बिना रुके सदा चमकता है, जो घड़े में, कपड़े में, किनारे पर, कुएँ में, और सदा शरीर में स्पंदित होता रहता है।

6.11.95

जाग्रत्यपि सुषुप्तस्थं चिदात्मानमुपास्महे उष्णमग्नौ हिमे शीतं मृष्टमन्ने शितं क्षुरे ॥ ९५ ॥

jāgratyapi suṣuptasthaṃ cidātmānamupāsmahe uṣṇamagnau hime śītaṃ mṛṣṭamanne śitaṃ kṣure || 95 ||

We meditate on the self as consciousness, present as if in deep sleep even while awake, hot in fire, cold in ice, tasty in food, sharp in the razor.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जो जागते हुए भी गहरी नींद जैसी स्थिति में रहता है, आग में गर्मी, बर्फ में ठंडक, भोजन में स्वाद, और उस्तरे में तीखापन है।

6.11.96

कृष्णं ध्वान्ते सितं चन्द्रे चिदात्मानमुपास्महे आलोकं बहिरन्तस्थं स्थितं च स्वात्मवस्तुनि ॥ ९६ ॥

kṛṣṇaṃ dhvānte sitaṃ candre cidātmānamupāsmahe ālokaṃ bahirantasthaṃ sthitaṃ ca svātmavastuni || 96 ||

We meditate on the self as consciousness, dark in darkness, white in the moon, the light standing both outside and inside, resting in its own true nature.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जो अंधेरे में काला और चाँद में उजला है, जो बाहर और भीतर दोनों जगह प्रकाश रूप है, और अपने ही स्वरूप में टिका हुआ है।

6.11.97

अदूरमपि दूरस्थं चिदात्मानमुपास्महे माधुर्यादिषु माधुर्यं तीक्ष्णादिषु च तीक्ष्णताम ॥ ९७ ॥

adūramapi dūrasthaṃ cidātmānamupāsmahe mādhuryādiṣu mādhuryaṃ tīkṣṇādiṣu ca tīkṣṇatām || 97 ||

We meditate on the self as consciousness, near and yet standing far away, sweetness in sweet things, sharpness in sharp things.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जो पास होकर भी दूर खड़ा जान पड़ता है, मीठी चीज़ों में मिठास और तीखी चीज़ों में तीखापन है।

6.11.98

गतं पदार्थजातेषु चिदात्मानमुपास्महे जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तेषु तुर्यातुर्यातिगे पदे ॥ ९८ ॥

gataṃ padārthajāteṣu cidātmānamupāsmahe jāgratsvapnasuṣupteṣu turyāturyātige pade || 98 ||

We meditate on the self as consciousness, present in every kind of thing, in waking, in dream, in deep sleep, and in the state that lies beyond both the fourth state and what is not the fourth state.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जो हर तरह की चीज़ में मौजूद है, जागने में, सपने में, गहरी नींद में, और उस अवस्था में भी है जो चौथी अवस्था से और जो चौथी नहीं है उससे भी आगे है।

6.11.99

समं सदैव सर्वत्र चिदात्मानमुपास्महे प्रशान्तसर्वसंकल्पं विगताखिलकौतुकम ॥ ९९ ॥

samaṃ sadaiva sarvatra cidātmānamupāsmahe praśāntasarvasaṃkalpaṃ vigatākhilakautukam || 99 ||

We meditate on the self as consciousness, equal always and everywhere, every thought fully stilled in it, all curiosity gone from it.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जो सदा और हर जगह एक-सा है, जिसमें हर विचार पूरी तरह शांत हो चुका है, और जिसमें से हर तरह की उत्सुकता जा चुकी है।

6.11.100

विगताशेषसंरम्भं चिदात्मानमुपास्महे निष्कौतुकं निरारम्भं निरीहं सर्वमेव च ॥ १०० ॥

vigatāśeṣasaṃrambhaṃ cidātmānamupāsmahe niṣkautukaṃ nirārambhaṃ nirīhaṃ sarvameva ca || 100 ||

We meditate on the self as consciousness, all agitation fully gone from it, free of curiosity, taking up nothing, wanting nothing, and yet it is everything.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जिसमें से सारी बेचैनी पूरी तरह जा चुकी है, जो जिज्ञासा से रहित है, जो कुछ शुरू नहीं करता, जिसे कुछ नहीं चाहिए, और फिर भी जो सब कुछ है।

6.11.101

निरंशं निरहंकारं चिदात्मानमुपास्महे सर्वस्यान्तःस्थितं सर्वमप्यपारैकरूपिणम ॥ १०१ ॥

niraṃśaṃ nirahaṃkāraṃ cidātmānamupāsmahe sarvasyāntaḥsthitaṃ sarvamapyapāraikarūpiṇam || 101 ||

We meditate on the self as consciousness, not made of parts, without ego, standing inside everything, and though it is everything, of one boundless form.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जो टुकड़ों में नहीं बँटा, जिसमें अहंकार नहीं है, जो सबके भीतर बसा हुआ है, और सब कुछ होते हुए भी एक ही असीम रूप है।

6.11.102

अपर्यन्तचिदारम्भं चिदात्मानमुपागतः त्रैलोक्यदेहमुक्तानां तन्तुमुन्नतमाततम् ॥ १०२ ॥

aparyantacidārambhaṃ cidātmānamupāgataḥ trailokyadehamuktānāṃ tantumunnatamātatam || 102 ||

I have reached the self that is consciousness, whose start is boundless consciousness itself, the high, far-reaching thread running through all who are freed from the bodies of the three worlds.

मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जिसका आरंभ स्वयं असीम चेतना ही है, वह ऊँचा और दूर तक फैला हुआ धागा, जो तीनों लोकों के शरीरों से मुक्त हुए सबको जोड़े हुए है।

6.11.103

प्रचारसंकोचकरं चिदात्मानमुपागतः लीनमन्तर्बहिःस्वाप्तान्क्रोडीकृत्य जगत्खगान् ॥ १०३ ॥

pracārasaṃkocakaraṃ cidātmānamupāgataḥ līnamantarbahiḥsvāptānkroḍīkṛtya jagatkhagān || 103 ||

I have reached the self that is consciousness, which makes things spread out and draw in, dissolved both inside and outside, holding to itself, as its own kind, the birds of the world.

मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो फैलाव और सिकुड़न दोनों को जन्म देता है, जो भीतर और बाहर दोनों जगह लीन है, और जिसने संसार के पक्षियों को अपनी ही जाति मानकर गोद में समेट लिया है।

6.11.104

चित्रं बृहज्जालमिव चिदात्मानमुपागतः सर्वं यत्रेदमस्त्येव नास्त्येव च मनागपि ॥ १०४ ॥

citraṃ bṛhajjālamiva cidātmānamupāgataḥ sarvaṃ yatredamastyeva nāstyeva ca manāgapi || 104 ||

I have reached the self that is consciousness, like a great, wondrous net, in which all this indeed exists, and yet does not exist even a little.

मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो एक अद्भुत बड़े जाल के समान है, जिसमें यह सब कुछ है भी, और तनिक भी नहीं है।

6.11.105

सदसद्रूपमेकं तं चिदात्मानमुपागतः परमप्रत्ययं पूर्णमास्पदं सर्वसंपदाम् ॥ १०५ ॥

sadasadrūpamekaṃ taṃ cidātmānamupāgataḥ paramapratyayaṃ pūrṇamāspadaṃ sarvasaṃpadām || 105 ||

I have reached that one self, consciousness, which has the form of both the real and the unreal, the highest certainty, complete, the resting place of every treasure.

मैं उस एक चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो सत् और असत् दोनों के रूप में है, जो परम निश्चय स्वरूप है, पूर्ण है, और जो हर संपत्ति का ठिकाना है।

6.11.106

सर्वाकारविहारस्थं चिदात्मानमुपागतः स्नेहाधारमथोऽशान्तं जडवाताहतिभ्रमैः ॥ १०६ ॥

sarvākāravihārasthaṃ cidātmānamupāgataḥ snehādhāramatho'śāntaṃ jaḍavātāhatibhramaiḥ || 106 ||

I have reached the self that is consciousness, present in play through every form, the ground of affection, yet made restless by the confusion stirred up by the blows of a mindless wind.

मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो हर रूप में विचरण करते हुए भी स्थित है, जो स्नेह का आधार है, और फिर भी एक जड़ हवा की थपेड़ों से उठी उलझन से बेचैन जान पड़ता है।

6.11.107

युक्तं मुक्तं च चिद्दीपं बहिरन्तरुपास्महे हृत्सरःपद्मिनीकन्दं तन्तुं सर्वाङ्गसुन्दरम ॥ १०७ ॥

yuktaṃ muktaṃ ca ciddīpaṃ bahirantarupāsmahe hṛtsaraḥpadminīkandaṃ tantuṃ sarvāṅgasundaram || 107 ||

We worship the lamp of consciousness, both bound and free, outside and inside, the root of the lotus in the lake of the heart, the fibre beautiful in every part.

हम चेतना के उस दीपक की उपासना करते हैं, जो बंधा हुआ भी है और मुक्त भी, बाहर भी है और भीतर भी, हृदय रूपी सरोवर की कमलिनी की जड़ जैसा, और हर अंग में सुंदर उस रेशे जैसा।

6.11.108

जनताजीवनोपायं चिदात्मानमुपागतः अक्षीरार्णवसंभूतमशशाङ्कमुपस्थितम ॥ १०८ ॥

janatājīvanopāyaṃ cidātmānamupāgataḥ akṣīrārṇavasaṃbhūtamaśaśāṅkamupasthitam || 108 ||

I have reached the self that is consciousness, the means of life for all people, arisen though not from any ocean of milk, present though it is not the moon.

मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो सारी प्रजा के जीवन का सहारा है, जो क्षीरसागर से उत्पन्न नहीं हुआ फिर भी मौजूद है, और जो चाँद नहीं है फिर भी चाँद जैसा उपस्थित है।

6.11.109

अहार्यममृतं सत्यं चिदात्मानमुपास्महे शब्दरूपरसस्पर्शगन्धैराभासमागतम ॥ १०९ ॥

ahāryamamṛtaṃ satyaṃ cidātmānamupāsmahe śabdarūparasasparśagandhairābhāsamāgatam || 109 ||

We worship the self as consciousness, never to be taken away, immortal, true, which comes into appearance as sound, sight, taste, touch and smell.

हम चेतना को ही आत्मा मानकर उसकी उपासना करते हैं, जो कभी छीना नहीं जा सकता, जो अमर है, सत्य है, और जो शब्द, रूप, रस, स्पर्श और गंध के रूप में प्रकट होता हुआ जान पड़ता है।

6.11.110

तैरेव रहितं शान्तं चिदात्मानमुपागतः आकाशकोशविशदं सर्वलोकस्य रञ्जनम ॥ ११० ॥

taireva rahitaṃ śāntaṃ cidātmānamupāgataḥ ākāśakośaviśadaṃ sarvalokasya rañjanam || 110 ||

I have reached the self that is consciousness, peaceful, free from those very things, sound, sight, taste, touch and smell, clear as the vessel of space, delighting the whole world.

मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो शांत है और उन्हीं चीज़ों से, यानी शब्द, रूप, रस, स्पर्श और गंध से रहित है, जो आकाश के आधार जैसा निर्मल है, और जो पूरी दुनिया को आनंदित करने वाला है।

6.11.111

न रञ्जनं न चाकाशं चिदात्मानमुपागतः महामहिम्ना सहितं रहितं सर्वभूतिभिः कर्तृत्वे वाप्यकर्तारं चिदात्मानमुपागतः ॥ १११ ॥

na rañjanaṃ na cākāśaṃ cidātmānamupāgataḥ mahāmahimnā sahitaṃ rahitaṃ sarvabhūtibhiḥ kartṛtve vāpyakartāraṃ cidātmānamupāgataḥ || 111 ||

I have reached the self that is consciousness, which is neither the one who delights nor space itself, which carries great glory yet has none of the powers of this world. I have reached the self that is consciousness, which is not the doer even when acting.

मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो न तो आनंद देने वाला है और न आकाश है, जो महान महिमा से युक्त होते हुए भी संसार के किसी ऐश्वर्य से रहित है। मैं उस चेतन आत्मा तक पहुँच गया हूँ, जो काम करते हुए भी करने वाला नहीं है।

6.11.112

अखिलमिदमहं ममैव सर्वं त्वहमपि नाहमत्हेतरच्च नाहम् इति विदितवतो जगत्कृतं मे स्थिरमथवास्तु गतज्वरो भवामि ॥ ११२ ॥

akhilamidamahaṃ mamaiva sarvaṃ tvahamapi nāhamathetaracca nāham iti viditavato jagatkṛtaṃ me sthiramathavāstu gatajvaro bhavāmi || 112 ||

All this is I, and everything is truly mine, yet I myself am not even I, and nothing else is I either. Knowing this, whether the world, my own making, stays fixed or not, I become free of all suffering.

यह सब कुछ मैं ही हूँ, और सब कुछ सचमुच मेरा ही है, फिर भी मैं स्वयं मैं नहीं हूँ, और इसके सिवा कुछ और भी मैं नहीं है। यह जानकर, मेरी बनाई यह दुनिया स्थिर रहे या न रहे, मैं हर दुख से मुक्त हो जाता हूँ।

Chapter 12

6.12.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति निश्चयवन्तस्ते महान्तो विगतैनसः । सत्याः सत्ये पदे शान्ते समे सुखमवस्थिताः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti niścayavantaste mahānto vigatainasaḥ | satyāḥ satye pade śānte same sukhamavasthitāḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: Thus resolved, those great souls, free from all fault, truthful, remain happily settled in the true, peaceful, and even state.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस तरह निश्चय किए हुए वे महान लोग, जो हर दोष से मुक्त और सच्चे हैं, उस सच्ची, शांत और सम स्थिति में सुखपूर्वक टिके रहते हैं।

6.12.2

इति पूर्णधियो धीराः समनीरागचेतसः । न निन्दन्ति न नन्दन्ति जीवितं मरणं तथा ॥ २ ॥

iti pūrṇadhiyo dhīrāḥ samanīrāgacetasaḥ | na nindanti na nandanti jīvitaṃ maraṇaṃ tathā || 2 ||

Thus, with full understanding, steady, their minds equal and free of passion, they neither condemn nor rejoice, not at life, and not at death either.

इस तरह पूर्ण बुद्धि वाले, धैर्यवान, जिनका मन सम और राग से मुक्त है, वे न तो निंदा करते हैं और न ही खुश होते हैं, न जीवन से, न मृत्यु से।

6.12.3

इत्यलक्ष्यचमत्कारा नारायणभुजा इव । ऋजवः स्खलिताकारा अपरा इव मेरवः ॥ ३ ॥

ityalakṣyacamatkārā nārāyaṇabhujā iva | ṛjavāḥ skhalitākārā aparā iva meravaḥ || 3 ||

In this way their brilliance stayed hidden, like the arms of Narayana. They were straight, even though they looked unsteady, standing like so many Meru mountains.

इस तरह उनकी चमक दिखाई नहीं देती थी, जैसे नारायण की भुजाएँ। वे सीधे थे, भले ही डगमगाते हुए दिखते हों, और कई मेरु पर्वतों जैसे खड़े थे।

6.12.4

रेमिरे वनखण्डेषु द्वीपेषु नगरेषु च । देवोपवनमालासु स्वर्गेषु च सुरा इव ॥ ४ ॥

remire vanakhaṇḍeṣu dvīpeṣu nagareṣu ca | devopavanamālāsu svargeṣu ca surā iva || 4 ||

They took their pleasure in forest groves, on islands, and in cities, in the garden rows of the gods, and in the heavens, like gods themselves.

वे वन के टुकड़ों में, द्वीपों में और नगरों में विहार करते थे; देवताओं के बगीचों की कतारों में और स्वर्गों में भी, जैसे देवता।

6.12.5

भ्रेमुः कुसुमपूर्णासु दोलान्दोलचलासु च । विचित्रवनलेखासु मेरुश्रृङ्गशिखासु च ॥ ५ ॥

bhremuḥ kusumapūrṇāsu dolāndolacalāsu ca | vicitravanalekhāsu meruśṛṅgaśikhāsu ca || 5 ||

They wandered in places full of flowers, on swings that rocked to and fro, along wondrous rows of forest, and on the peaks of Mount Meru.

वे फूलों से भरे स्थानों में घूमते थे, हिलते-डुलते झूलों पर, अनोखी वनपंक्तियों में, और मेरु पर्वत की चोटियों पर भी।

6.12.6

चक्रुर्विजितशत्रूणि चामरच्छत्रवन्ति च । विचित्रार्थानि राज्यानि चित्राचारमयानि च ॥ ६ ॥

cakrurvijitaśatrūṇi cāmaracchatravanti ca | vicitrārthāni rājyāni citrācāramayāni ca || 6 ||

They built kingdoms with their enemies conquered, adorned with royal fly-whisks and umbrellas, rich in wonders, and full of wondrous customs.

उन्होंने ऐसे राज्य बनाए जिनके शत्रु जीत लिए गए थे, जो चंवर और छत्रों से सजे थे, अद्भुत संपत्ति वाले और अनोखी रीतियों से भरे हुए।

6.12.7

अनुजग्मुरिमान्सर्वान्नानाचारविचेष्टितान् । श्रुतिस्मृत्युदितारम्भामितिकर्तव्यतामिति ॥ ७ ॥

anujagmurimānsarvānnānācāraviceṣṭitān | śrutismṛtyuditārambhāmitikartavyatāmiti || 7 ||

They took up all these various customs and undertakings, doing what the Veda and tradition declare, thinking, this must be done.

उन्होंने ये सब अलग-अलग रीति-रिवाज और काम अपनाए, वही किया जो वेद और स्मृति में बताया गया है, यह सोचकर कि यही करना चाहिए।

6.12.8

ईदृशीरमणीयेषु ललनाहास्यहारिषु । विहाराहाररम्येषु भोगाभोगेषु भूषिताः ॥ ८ ॥

īdṛśīramṇīyeṣu lalanāhāsyahāriṣu | vihārāhāraramyeṣu bhogābhogeṣu bhūṣitāḥ || 8 ||

Amid such delightful things, charming with the laughter of women, pleasant with play and food, they stayed adorned, in enjoyment and in abstaining alike.

ऐसी सुंदर चीज़ों के बीच, स्त्रियों की हँसी से मनोहर, खेल और भोजन से सुखद, वे गहनों से सजे रहते थे, चाहे भोग में हों या भोग से दूर।

6.12.9

विविशुश्चारुचूतासु मन्दारवलितासु च । अप्सरोगीतपूर्णासु नन्दनोद्यानभूमिषु ॥ ९ ॥

vivivśuścārucutāsu mandāravalitāsu ca | apsarogītapūrṇāsu nandanodyānabhūmiṣu || 9 ||

They entered the grounds of the Nandana garden, rich with beautiful mango trees, twined with mandara trees, and filled with the songs of the Apsaras.

वे नंदन वन की भूमि में जाते थे, जहाँ सुंदर आम के पेड़ थे, जो मंदार वृक्षों से लिपटे थे, और जो अप्सराओं के गीतों से भरे थे।

6.12.10

सचराचरभूतेषु विश्रान्ताखिलजन्तुषु । यज्ञक्रियाकलापेषु गार्हस्थ्येषु यथाक्रमम् ॥ १० ॥

sacarācarabhūteṣu viśrāntākhilajantuṣu | yajñakriyākalāpeṣu gārhasthyeṣu yathākramam || 10 ||

They entered among beings, moving and still alike, where all creatures found their rest, into the round of sacrificial rites, and into household life, each in its proper order.

वे चर और अचर सभी प्राणियों के बीच जाते थे, जहाँ सब जीव विश्राम पाते थे, यज्ञ की क्रियाओं के समूह में, और गृहस्थ जीवन में भी, क्रम से।

6.12.11

तेरुर्हतगजेन्द्रासु भ्रान्तभूरिशिवासु च । भेरीभांकारभीमासु संग्रामार्णववीथिषु ॥ ११ ॥

terurhatagajendrāsu bhrāntabhūriśivāsu ca | bherībhāṃkārabhīmāsu saṃgrāmārṇavavīthiṣu || 11 ||

They crossed the lanes of the sea of battle, terrible with the boom of war drums, where great elephants lay slain and many jackals prowled.

वे युद्ध के सागर की गलियों को पार करते थे, जो युद्ध के नगाड़ों की गड़गड़ाहट से भयानक थीं, जहाँ बड़े-बड़े हाथी मारे गए पड़े थे और गीदड़ इधर-उधर घूमते थे।

6.12.12

तस्थुः परुषचित्तासु हृतवित्तोद्धतासु च । संरम्भक्षोभरौद्रीषु सर्वासु द्वन्द्वरीतिषु ॥ १२ ॥

tasthuḥ paruṣacittāsu hṛtavittoddhataāsu ca | saṃrambhakṣobharauadrīṣu sarvāsu dvandvarītiṣu || 12 ||

They stood firm through every kind of strife, where minds turned harsh, where people grew arrogant from stolen wealth, fierce with fury and turmoil.

वे हर तरह के झगड़ों में डटे रहते थे, जहाँ मन कठोर हो जाते थे, जहाँ लोग चुराई हुई दौलत से घमंडी हो जाते थे, जो क्रोध और उथल-पुथल से भयानक थे।

6.12.13

मनस्तेषां तु नीरागमनुपाधि गतभ्रमम् । असक्तं मुक्तमाशान्तं परं सत्वपदं गतम् ॥ १३ ॥

manasteṣāṃ tu nīrāgamanupādhi gatabhramam | asaktaṃ muktamāśāntaṃ paraṃ satvapadaṃ gatam || 13 ||

But their minds were free of passion, free of all limits, and free of confusion. Unattached, liberated, and deeply at peace, their minds had reached the highest state of being.

पर उनका मन राग से मुक्त था, हर बंधन से मुक्त था, और भ्रम से मुक्त था। अनासक्त, मुक्त और पूरी तरह शांत, उनका मन सबसे ऊँची अवस्था को पा चुका था।

6.12.14

न ममज्जुः क्वचिदपि संकटेषु महत्स्वपि । महदप्युपयातेषु कुलशलाः सरस्विव ॥ १४ ॥

na mamajjuḥ kvacidapi saṃkaṭeṣu mahatsvapi | mahadapyupayāteṣu kulaśalāḥ sarasviva || 14 ||

They never sank anywhere, even amid great dangers, even when great trouble overtook them, like reeds in a lake.

वे कभी नहीं डूबे, चाहे कितनी भी बड़ी मुसीबत क्यों न हो, चाहे कितनी भी बड़ी विपत्ति आ जाए, जैसे झीलों में सरकंडे नहीं डूबते।

6.12.15

नोल्ललास विलासिन्या श्रिया परमकान्तया । परिपूर्णेन्दुलक्ष्म्येव जलराशी रघूद्वह ॥ १५ ॥

nollalāsa vilāsinyā śriyā paramakāntayā | paripūrṇendulakṣmyeva jalarāśī raghūdvaha || 15 ||

He did not glow with pride at playful, most lovely Fortune, any more than the ocean glows with pride at the beauty of the full moon, Rama.

वह चंचल और परम सुंदर लक्ष्मी पाकर भी फूला नहीं, जैसे समुद्र पूर्णचंद्र की शोभा पाकर भी फूलता नहीं, हे राम।

6.12.16

न मम्लौ दुःखशोकेन ग्रीष्मेणेव वनस्थलम् । जहर्ष च न भोगौघैरवश्यायैरिवौषधीः ॥ १६ ॥

na mamlau duḥkhaśokena grīṣmeṇeva vanasthalam | jaharṣa ca na bhogaughairavaśyāyairivauṣadhīḥ || 16 ||

He did not wither with pain and grief, the way a forest withers in the summer heat, and he did not thrill with floods of pleasure, the way herbs thrill with the dew.

वह दुःख और शोक से वैसे नहीं मुरझाया, जैसे गर्मी में वन मुरझा जाता है, और वह सुख की बाढ़ से वैसे उत्साहित नहीं हुआ, जैसे ओस से जड़ी-बूटियाँ खिल उठती हैं।

6.12.17

ते हि केवलमव्यग्राः कुर्वन्तः काममञ्जरीः । इष्टानिष्टफलं राम नाभिलेषुर्न तत्यजुः ॥ १७ ॥

te hi kevalamavyagrāḥ kurvantaḥ kāmamañjarīḥ | iṣṭāniṣṭaphalaṃ rāma nābhileṣurna tatyajuḥ || 17 ||

They, simply undisturbed, carried out the flowering buds of desire. And, Rama, they neither craved the fruit, welcome or unwelcome, nor did they refuse it.

वे बस अविचलित रहकर इच्छा की कलियों को पूरा करते थे। और हे राम, चाहे फल अच्छा हो या बुरा, न तो वे उसे चाहते थे और न ही उसे ठुकराते थे।

6.12.18

नोदगुः कार्यसंपत्तावाक्रान्ता नास्तमाययुः । जहृषुर्न सुखप्राप्तौ मम्लुर्नैव च संकटे ॥ १८ ॥

nodayuḥ kāryasaṃpattāvākrāntā nāstamāyayuḥ | jahṛṣurna sukhaprāptau mamlurnaiva ca saṃkaṭe || 18 ||

They did not rise up when their work succeeded, nor sink down when overwhelmed. They did not thrill at gaining happiness, nor wither away in trouble.

जब उनका काम सफल होता, वे उठकर इतराते नहीं थे, और जब दबाव पड़ता तो झुकते नहीं थे। सुख पाकर वे उछल कर खुश नहीं होते थे, और मुसीबत में मुरझाते नहीं थे।

6.12.19

मुमुहुर्न विमोहेषु न ममज्जुर्विपत्क्रमैः । न जहर्षुः शुभैः शोकै रुरुदुर्न भवानिव ॥ १९ ॥

mumuhurna vimohaṣu na mamajjurvipatkramaaiḥ | na jaharṣuḥ śubhaiḥ śokairurudurna bhavāniv || 19 ||

They were not bewildered by bewildering things. They did not sink beneath the weight of misfortune. They did not delight in good fortune. And they did not weep with grief, as you do.

वे उलझाने वाली बातों से नहीं उलझते थे। वे मुसीबतों के बोझ से नहीं डूबते थे। वे अच्छी बातों से खुश होकर नहीं उछलते थे। और वे दुःख से रोते नहीं थे, जैसे आप रोते हैं।

6.12.20

प्राकृताचारसंप्राप्ते कुर्वन्तः कर्म केवलम् । स्थिता विगतसंरम्भमपरा इव मेरवः ॥ २० ॥

prākṛtācārasaṃprāpte kurvantaḥ karma kevalam | sthitā vigatasaṃrambhamaparā iva meravaḥ || 20 ||

When the moment for ordinary conduct came, they simply did what needed to be done, and remained free of all excitement, like so many Meru mountains.

जब सामान्य आचरण का अवसर आता, वे केवल अपना काम करते थे, और बिना किसी उत्तेजना के स्थिर रहते थे, जैसे कई मेरु पर्वत।

6.12.21

तां त्वं दृष्टिमवष्टभ्य राघवाऽघविनाशिनीम् । अनहंकृत्यहंकारो विहरस्व यथाक्रमम् ॥ २१ ॥

tāṃ tvaṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya rāghavā'ghavināśinīm | anahaṃkṛtyahaṃkāro viharasva yathākramam || 21 ||

Hold onto that vision, Rama, the one that destroys sin, and live out your life in its due course. Keep your sense of I, but without the pride of I.

हे राम, उस दृष्टि को थामे रहो जो पाप का नाश करती है, और अपने जीवन को क्रम से जीते रहो। मैं का बोध रखो, पर मैं के अहंकार के बिना।

6.12.22

यथाभूतामिमामेव पश्यत्सर्गपरम्पराम् । मेरुस्थितोऽब्धिगम्भीरः सममास्स्व गतभ्रमः ॥ २२ ॥

yathābhūtāmimāmeva paśyatsargaparamparām | merusthito'bdhigambhīraḥ samamāssva gatabhramaḥ || 22 ||

Seeing this chain of creation exactly as it is, stand as steady as Meru, as deep as the ocean, remain even, and stay free of confusion.

सृष्टि की इस शृंखला को ठीक वैसा ही देखो जैसी वह है। मेरु पर्वत जैसे स्थिर, समुद्र जैसे गहरे बनो, सम रहो, और भ्रम से मुक्त रहो।

6.12.23

चिन्मात्रं सर्वमेवेदमित्थमाभासतां गतम् । नेह सत्यमसत्यं वा क्वचिदस्ति न किंचन ॥ २३ ॥

cinmātraṃ sarvamevedamitthamābhāsatāṃ gatam | neha satyamasatyaṃ vā kvacidasti na kiṃcana || 23 ||

All this is nothing but pure consciousness, which has come to appear in this way. Here nothing exists anywhere as real or unreal, nothing at all.

यह सब कुछ केवल चेतना है, जो इस रूप में सामने आई है। यहाँ कहीं भी न कुछ सच है, न झूठ, कुछ भी नहीं है।

6.12.24

महत्तामलमालम्ब्य त्यक्त्वेदमवहेलया । असक्तबुद्धिः सर्वत्र भव भव्य भवक्षयी ॥ २४ ॥

mahattāmalamālambya tyaktvedamavahalayā | asaktabuddhiḥ sarvatra bhava bhavya bhavakṣayī || 24 ||

Take firm hold of greatness, give up all this with indifference, and, with a mind unattached everywhere, become, good soul, one who ends all becoming.

महानता को पूरी तरह अपनाओ, इस सबको उपेक्षा के साथ छोड़ दो, और हर जगह मन को अनासक्त रखते हुए, हे भले व्यक्ति, बनो, जन्म-मरण के चक्र को समाप्त करने वाला।

6.12.25

किं रोदिषि घनोद्वेगं मूढवच्चानुशोचसि । भ्रमस्युद्भ्रान्तचित्तश्च सौम्यावर्ते तृणं यथा ॥ २५ ॥

kiṃ rodiṣi ghanodvegaṃ mūḍhavaccānuśocasi | bhramasyudbhāntacittaśca saumyāvarte tṛṇaṃ yathā || 25 ||

Why do you weep with such heavy distress, and grieve like a fool? You wander with a bewildered mind, like a blade of grass caught in a gentle whirlpool.

तुम इतनी गहरी बेचैनी से क्यों रोते हो, और मूर्ख की तरह शोक क्यों करते हो? तुम्हारा मन उलझा हुआ भटकता है, जैसे कोई तिनका किसी हल्के भँवर में घूमता है।

6.12.26

श्रीराम उवाच । अहो न भगवन्नूनं सम्यग्जातमलक्षयः । त्वत्प्रसादात्प्रबुद्धोऽस्मि सूर्यसङ्गादिवाम्बुजम् ॥ २६ ॥

śrīrāma uvāca | aho na bhagavannūnaṃ samyagjātamalakṣayaḥ | tvatprasādātprabuddho'smi sūryasaṅgādivāmbujam || 26 ||

Sri Rama said: Ah, Lord, truly my impurity has now been rightly destroyed. By your grace I have awakened, as a lotus opens at the touch of the sun.

श्रीराम ने कहा: हे भगवन्, सच में अब मेरी अशुद्धि पूरी तरह से नष्ट हो गई है। आपकी कृपा से मैं जाग गया हूँ, जैसे सूर्य के स्पर्श से कमल खिल जाता है।

6.12.27

भ्रान्तिरस्तं गता नूनं मिहिका शरदीव मे । संशान्ताखिलसंदेहः करिष्ये वचनं तव ॥ २७ ॥

bhrāntirastaṃ gatā nūnaṃ mihikā śaradīva me | saṃśāntākhilasaṃdehaḥ kariṣye vacanaṃ tava || 27 ||

My confusion has set, indeed, like the morning mist in autumn. With all my doubts now calmed, I will do as you say.

मेरा भ्रम सच में वैसे ही मिट गया है जैसे शरद ऋतु में सुबह की धुंध मिट जाती है। मेरे सारे संदेह शांत हो गए हैं, और मैं वही करूँगा जो आप कहेंगे।

6.12.28

व्यपगतमदमोहो मानमात्सर्यमुक्त श्चिरतरमुदितात्मा शान्तशोकश्चिरेण । पुनरसुखमगच्छन्स्वच्छयैकान्तबुद्ध्या यदिह वदसि साधो तत्करिष्येऽविशङ्कं ॥ २८ ॥

vyapagatamadamoho mānamātsaryamukta ściratarамuditātmā śāntaśokascireṇa | punarasukhamagacchan svacchayaikāntabuddhyā yadiha vadasi sādho tatkariṣye'viśaṅkaṃ || 28 ||

My pride and delusion are gone. I am free from arrogance and envy. My true self has awakened for good, and my grief is calmed at last. I will not fall into sorrow again. With a clear and single mind, whatever you tell me, good sage, I will do without any doubt.

मेरा नशा और मोह मिट गया है। मैं घमंड और ईर्ष्या से मुक्त हो गया हूँ। मेरा असली स्वरूप अब हमेशा के लिए जाग गया है, और मेरा दुःख आखिरकार शांत हो गया है। मैं फिर कभी दुःखी नहीं होऊँगा। एक साफ और एकाग्र मन के साथ, हे साधु, आप जो कुछ भी कहेंगे, मैं बिना किसी शंका के वही करूँगा।

Chapter 13

6.13.1

श्रीराम उवाच । सम्यग्ज्ञानविलासेन वासनाविलयोदये । जीवन्मुक्तपदे ब्रह्मन्नूनं विश्रान्तवानहम् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | samyagjñānavilāsena vāsanāvilayodaye | jīvanmuktapade brahmannūnaṃ viśrāntavānaham || 1 ||

Sri Rama said: Brahmin, through the working of complete knowledge, my desires have begun to melt away, and I have surely come to rest in the state of one who is free while still alive.

श्रीराम ने कहा: हे ब्राह्मण, पूरे ज्ञान के प्रभाव से मेरी इच्छाएँ मिटने लगी हैं, और मैं सचमुच जीते-जी मुक्त की अवस्था में टिक गया हूँ।

6.13.2

प्राणस्पन्दनिरोधेन वासनाविलयोदये । जीवन्मुक्तपदे ब्रह्मन्वद विश्रम्यते कथम् ॥ २ ॥

prāṇaspandanirodhena vāsanāvilayodaye | jīvanmuktapade brahmanvada viśramyate katham || 2 ||

By stopping the movement of the breath, when desires melt away, tell me, Brahmin, how does one come to rest in the state of one who is free while alive?

प्राण की गति को रोककर, जब इच्छाएँ मिटने लगती हैं, तो हे ब्राह्मण, बताइए, जीते-जी मुक्त की अवस्था में विश्राम कैसे मिलता है?

6.13.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । संसारोत्तरणे युक्तिर्योगशब्देन कथ्यते । तां विद्धि द्विप्रकारां त्वं चित्तोपशमधर्मिणीम् ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃsārottaraṇe yuktiryogaśabdena kathyate | tāṃ viddhi dviprakārāṃ tvaṃ cittopaśamadharmiṇīm || 3 ||

Sri Vasishtha said: The method for crossing over this world is called by the name yoga. Know that it is of two kinds, and both have the nature of calming the mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस संसार को पार करने के उपाय को योग कहा जाता है। जान लो कि वह दो प्रकार का है, और दोनों का स्वभाव मन को शांत करना है।

6.13.4

आत्मज्ञानं प्रकारोऽस्या एकः प्रकटितो भुवि । द्वितीयः प्राणसंरोधः श्रृणु योऽयं मयोच्यते ॥ ४ ॥

ātmajñānaṃ prakāro'syā ekaḥ prakaṭito bhuvi | dvitīyaḥ prāṇasaṃrodhaḥ śṛṇu yo'yaṃ mayocyate || 4 ||

Self-knowledge is one kind of it, taught in this world. The second is the control of the breath. Listen, I will tell you this now.

आत्मज्ञान इसका एक प्रकार है, जो इस संसार में बताया गया है। दूसरा है प्राण को रोकना। सुनो, अब मैं यही बताता हूँ।

6.13.5

श्रीराम उवाच । सुलभत्वाददुःखत्वात्कतरः शोभनोऽनयोः । येनावगतमात्रेण भूयः क्षोभो न बाधते ॥ ५ ॥

śrīrāma uvāca | sulabhatvādaduḥkhatvātkataraḥ śobhano'nayoḥ | yenāvagatamātreṇa bhūyaḥ kṣobho na bādhate || 5 ||

Sri Rama said: Of these two, which is the better one — the one that is easy and free of suffering, so that once it is simply understood, no disturbance troubles a person again?

श्रीराम ने कहा: इन दोनों में से कौन-सा बेहतर है — जो आसान हो और दुख से रहित हो, जिसे बस समझ लेने भर से फिर कभी कोई गड़बड़ी परेशान न करे?

6.13.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । प्रकारौ द्वावपि प्रोक्तौ योगशब्देन यद्यपि । तथापि रूढिमायातः प्राणयुक्तावसौ भृशम् ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | prakārau dvāvapi proktau yogśabdena yadyapi | tathāpi rūḍhimāyātaḥ prāṇayuktāvasau bhṛśam || 6 ||

Sri Vasishtha said: Although both kinds are called by the name yoga, still, in common use, that name has come to mean above all the practice joined with the breath.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यद्यपि दोनों प्रकारों को योग कहा जाता है, फिर भी आम बोलचाल में यह नाम मुख्यतः प्राण से जुड़े हुए साधन के लिए ही रूढ़ हो गया है।

6.13.7

एको योगस्तथा ज्ञानं संसारोत्तरणक्रमे । समावुपायो द्वावेव प्रोक्तावेकफलप्रदौ ॥ ७ ॥

eko yogastathā jñānaṃ saṃsārottaraṇakrame | samāvupāyo dvāveva proktāvekaphalapradau || 7 ||

In the work of crossing over this world, one way is yoga, and the other is knowledge. These two means alone are said to be equal, and both give the very same result.

इस संसार को पार करने के काम में एक उपाय है योग, और दूसरा है ज्ञान। ये दोनों उपाय बराबर बताए गए हैं, और दोनों का फल एक ही है।

6.13.8

असाध्यः कस्यचिद्योगः कस्यचिज्ज्ञाननिश्चयः । मम त्वभिमतः साधो सुसाध्यो ज्ञाननिश्चयः ॥ ८ ॥

asādhyaḥ kasyacidyogaḥ kasyacijjñānaniścayaḥ | mama tvabhimataḥ sādho susādhyo jñānaniścayaḥ || 8 ||

For some people, yoga is hard to achieve; for others, a settled and sure knowledge is hard to achieve. But for me, good man, a settled knowledge is what I favor, because it alone is easy to achieve.

किसी के लिए योग करना कठिन होता है, तो किसी के लिए ज्ञान की पक्की समझ पाना कठिन होता है। पर हे साधु, मुझे तो ज्ञान की पक्की समझ ही पसंद है, क्योंकि वही सहज ही पाई जा सकती है।

6.13.9

अज्ञानं पुनरज्ञातं स्वप्नेष्वपि न तद्भवेत् । ज्ञानं सर्वास्ववस्थासु नित्यमेव प्रवर्तते ॥ ९ ॥

ajñānaṃ punarajñātaṃ svapneṣvapi na tadbhavet | jñānaṃ sarvāsvavasthāsu nityameva pravartate || 9 ||

Ignorance, once it is undone, does not come back even in dreams. But knowledge goes on working, always, in every state.

अज्ञान एक बार मिट जाए तो वह सपने में भी फिर नहीं लौटता। पर ज्ञान तो हर अवस्था में हमेशा बना रहता है।

6.13.10

धारणासनदेशादिसाध्यत्वेन सुसाध्यताम् । नायाति योगो ह्यथवा विकल्पो नैव शोभनः ॥ १० ॥

dhāraṇāsanadeśādisādhyatvena susādhyatām | nāyāti yogo hyathavā vikalpo naiva śobhanaḥ || 10 ||

Because yoga must be gained through concentration, the right posture, a fitting place, and such conditions, it does not become easy. And any wavering in these is not good at all.

क्योंकि योग को एकाग्रता, सही आसन, उचित जगह जैसी शर्तों से ही पाया जा सकता है, वह आसान नहीं बनता। और इनमें जो भी ढील या भटकाव हो, वह भी अच्छा नहीं है।

6.13.11

द्वावेव किल शास्त्रोक्तौ ज्ञानयोगौ रघूद्वह । तत्रोक्तं भवते ज्ञानमन्तस्थं ज्ञेयनिर्मलम् ॥ ११ ॥

dvāveva kila śāstroktau jñānayogau raghūdvaha| tatroktaṃ bhavate jñānamantasthaṃ jñeyanirmalam|| 11 ||

Indeed, the scriptures speak of only two ways, best of the Raghus — knowledge and yoga. Of these, the knowledge I have described to you sits within you, and it is spotless about what is to be known.

हे रघुकुल के श्रेष्ठ, शास्त्रों में सचमुच केवल दो ही उपाय बताए गए हैं — ज्ञान और योग। इनमें से जो ज्ञान मैंने तुम्हें बताया है, वह तुम्हारे भीतर ही बसा है, और जो जानने योग्य है उसके बारे में वह एकदम निर्मल है।

6.13.12

प्राणापानतया रूढो दृढदेहगुहाशयः । अनन्तसिद्धिदः साधो योगोऽयं बुद्धिदः श्रृणु ॥ १२ ॥

prāṇāpānatayā rūḍho dṛḍhadehaguhāśayaḥ| anantasiddhidaḥ sādho yogo'yaṃ buddhidaḥ śṛṇu|| 12 ||

This yoga is known through the breath moving in and out; its seat is firm within the body's cave. It gives endless powers, good man, and it gives understanding too. Listen.

यह योग प्राण और अपान यानी सांस के अंदर-बाहर आने-जाने के रूप में जाना जाता है, और शरीर रूपी गुफा में दृढ़ता से बसा रहता है। हे साधु, यह अनंत सिद्धियाँ देता है और समझ भी देता है। सुनो।

6.13.13

मुखानिलस्फुरणनिरोधसंभवस्थितिं गतो नृपसुत चेतसाऽक्षये । समाहितस्थितिरिह योगयुक्तितः परे पदे प्रगलितगीर्निवत्स्यसि ॥ १३ ॥

mukhānilasphuraṇanirodhasaṃbhavasthitiṃ gato nṛpasuta cetasā'kṣaye| samāhitasthitiriha yogayuktitaḥ pare pade pragalitagīrniavatsyasi|| 13 ||

O prince, once you reach, by stilling the movement of the breath at your mouth, a steady state with your mind fixed on the imperishable, then, deeply settled here through this method of yoga, you will dwell in the highest state, where even speech falls silent.

हे राजकुमार, मुँह से बहने वाली सांस की हलचल को रोककर जब तुम्हारा मन अविनाशी पर टिक जाएगा, तब यहाँ योग की इस विधि से गहरी एकाग्रता में स्थिर होकर तुम उस परम अवस्था में रहोगे, जहाँ वाणी भी मौन हो जाती है।

Chapter 14

6.14.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अस्ति तावदनन्तस्य तस्य क्वचिदयं किल । जगद्रूपः परिस्पन्दो मृगतृष्णा मराविव ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asti tāvadanantasya tasya kvacidayaṃ kila | jagadrūpaḥ parispando mṛgatṛṣṇā marāviva || 1 ||

Sri Vasishtha said: Somewhere in that infinite being there is indeed this movement shaped like a world, the way a mirage appears in a desert.

श्री वसिष्ठ ने कहा: उस अनंत सत्ता में कहीं यह जगत के रूप वाली हलचल सच में है, जैसे रेगिस्तान में मृगतृष्णा दिखती है।

6.14.2

तत्र कारणतां यातो ब्रह्मा कमलसंभवः । स्थितः पितामहत्वेन सृष्टभूतभरभ्रमः ॥ २ ॥

tatra kāraṇatāṃ yāto brahmā kamalasaṃbhavaḥ | sthitaḥ pitāmahatvena sṛṣṭabhūtabharabhramaḥ || 2 ||

There Brahma, born from the lotus, became the cause. He remains there as the grandfather, reeling under the weight of the beings he has created.

वहाँ कमल से जन्मे ब्रह्मा कारण बने। वे वहाँ पितामह के रूप में स्थित हैं, अपने बनाए हुए प्राणियों के बोझ तले चकराते हुए।

6.14.3

तस्याहं मानसः पुत्रो वसिष्ठः श्रेष्ठचेष्टितः । ऋक्षचक्रे ध्रुवधृते निवसामि युगं प्रति ॥ ३ ॥

tasyāhaṃ mānasaḥ putro vasiṣṭhaḥ śreṣṭhaceṣṭitaḥ | ṛkṣacakre dhruvadhṛte nivasāmi yugaṃ prati || 3 ||

I am his son, born from his mind, Vasishtha, of the finest conduct. I live in the circle of stars that is held fixed by Dhruva, age after age.

मैं उनका मन से जन्मा पुत्र हूँ, वसिष्ठ, सबसे अच्छे आचरण वाला। मैं ध्रुव तारे से थमे हुए तारों के मंडल में युग-युग रहता हूँ।

6.14.4

सोऽहं कदाचिदास्थाने स्वर्गे तिष्ठञ्छतक्रतोः । श्रुतवान्नारदादिभ्यः कथां सुचिरजीविनाम् ॥ ४ ॥

so'haṃ kadācidāsthāne svarge tiṣṭhañchatakratoḥ | śrutavānnāradādibhyaḥ kathāṃ sucira jīvinām || 4 ||

Once, while I was standing in Indra's court in heaven, I heard from Narada and the others a story about those who live for a very long time.

एक बार जब मैं स्वर्ग में इंद्र की सभा में खड़ा था, तब मैंने नारद और दूसरों से बहुत लंबे समय तक जीने वालों की एक कथा सुनी।

6.14.5

कथाप्रसङ्गे कस्मिंश्चिदथ तत्राभ्युवाच ह । शातातपो नाम मुनिमौनी मानी महामतिः ॥ ५ ॥

kathāprasaṅge kasmiṃścidatha tatrābhyuvāca ha | śātātapo nāma munimauṇī mānī mahāmatiḥ || 5 ||

In the course of that story, a sage there named Shatatapa spoke up, a silent sage, a man of dignity, of great wisdom.

उस कथा के बीच में वहाँ शातातप नाम के एक मुनि बोल पड़े, वे मौन रहने वाले, स्वाभिमानी और बड़ी बुद्धि वाले मुनि थे।

6.14.6

मेरोरीशानकोणस्थे पद्मरागमये दिवि । अस्ति कल्पतरुः श्रीमाञ्छृङ्गे चूत इति श्रुतः ॥ ६ ॥

merorīśānakoṇasthē padmarāgamayē divi | asti kalpataruḥ śrīmāñchṛṅgē cūta iti śrutaḥ || 6 ||

On Mount Meru, in the northeast direction, in a sky made of ruby light, on its peak there stands a splendid wish-granting tree, known as the mango tree.

मेरु पर्वत की ईशान दिशा में, माणिक्य जैसे आकाश में, उसके शिखर पर एक तेजस्वी कल्पवृक्ष है, जो आम के वृक्ष के नाम से जाना जाता है।

6.14.7

तस्य कल्पतरोर्मूर्ध्नि दक्षिणस्कन्धकोटरे । कलधौतलताप्रोते विद्यते विहगालयः ॥ ७ ॥

tasya kalpatarormūrdhni dakṣiṇaskandhakoṭare | kaladhautalatāprotae vidyate vihagālayaḥ || 7 ||

On the top of that wish-granting tree, in a hollow of its southern branch, woven through with silver vines, there is a bird's nest.

उस कल्पवृक्ष के ऊपरी भाग में, उसकी दक्षिणी शाखा की एक खोह में, चाँदी जैसी लताओं से गुँथा हुआ एक पक्षी का घोंसला है।

6.14.8

तस्मिन्निवसति श्रीमान्भुशुण्डो नाम वायसः । वीतरागो बृहत्कोशे ब्रह्मेव निजपङ्कजे ॥ ८ ॥

tasminnivasti śrīmānbhuśuṇḍo nāma vāyasaḥ | vītarāgo bṛhatkośe brahmeva nijapaṅkaje || 8 ||

In that nest lives a glorious crow named Bhushunda, free from craving, resting in that great hollow like Brahma seated in his own lotus.

उस घोंसले में भुशुण्ड नाम का एक तेजस्वी कौआ रहता है, वह किसी लालसा से मुक्त है, उस बड़ी खोह में वैसे ही टिका है जैसे ब्रह्मा अपने ही कमल में बैठे हों।

6.14.9

स यथा जगतां कोशे जीवतीह सुराश्चिरम् । चिरंजीवी तथा स्वर्गे न भूतो न भविष्यति ॥ ९ ॥

sa yathā jagatāṃ kośe jīvatīha surāściram | cirañjīvī tathā svargē na bhūto na bhaviṣyati || 9 ||

Just as the gods live long within the shell of the worlds, so is he long-lived in heaven. The like of him has not been before, and will not be again.

जैसे देवता संसार के इस खोल में लंबे समय तक जीते हैं, वैसे ही वह स्वर्ग में लंबी आयु वाला है। उस जैसा न पहले कभी हुआ है, न आगे कभी होगा।

6.14.10

स दीर्घायुः स नीरागः स श्रीमान्स महामतिः । स विश्रान्तमतिः शान्तः स कान्तः कालकोविदः ॥ १० ॥

sa dīrghāyuḥ sa nīrāgaḥ sa śrīmānsa mahāmatiḥ | sa viśrāntamatiḥ śāntaḥ sa kāntaḥ kālakovidaḥ || 10 ||

He is long-lived, free from craving, glorious, of great wisdom. His mind is at rest, and he is at peace. He is lovely to see, and he knows all about time.

वह लंबी आयु वाला है, लालसा से मुक्त है, तेजस्वी है, बड़ी बुद्धि वाला है। उसका मन शांत है, वह स्वयं भी शांत है। वह देखने में सुंदर है, और समय के विषय में सब कुछ जानता है।

6.14.11

स यथा जीवति खगस्तथेह यदि जीव्यतेतद्भवेज्जीवितं पुण्यं दीर्घं चोदयमेव च ॥ ११ ॥

sa yathā jīvati khagastatheha yadi jīvyatetadbhavejjīvitaṃ puṇyaṃ dīrghaṃ codayameva ca || 11 ||

If a person here lived the way that bird lives, that life would be a blessed one, long, and truly a flourishing life.

अगर यहाँ कोई इंसान वैसे ही जिए जैसे वह पक्षी जीता है, तो वह जीवन पुण्यशाली होगा, लंबा होगा, और सचमुच फलता-फूलता जीवन होगा।

6.14.12

इति तेन भुशुण्डोऽसौ भूयः पृष्टेन वर्णितःयथावदेव देवानां सभायां सत्यमुक्तवान् ॥ १२ ॥

iti tena bhuśuṇḍo'sau bhūyaḥ pṛṣṭena varṇitaḥyathāvadeva devānāṃ sabhāyāṃ satyamuktavān || 12 ||

This is how Bhushunda was described by Shatatapa, when he was asked again. He spoke the exact truth, just as it was, in the assembly of the gods.

इस तरह शातातप ने भुशुण्ड का वर्णन किया, जब उनसे फिर से पूछा गया। उन्होंने देवताओं की सभा में ठीक वैसा ही सच बोला जैसा वह था।

6.14.13

कथावसरसंशान्तावथ याते सुरव्रजेभुशुण्डं विहगं द्रष्टुमहं यातः कुतूहलात् ॥ १३ ॥

kathāvasarasaṃśāntāvatha yāte suravrajebhuśuṇḍaṃ vihagaṃ draṣṭumahaṃ yātaḥ kutūhalāt || 13 ||

Then, when that telling of the story was over and the gods had gone their way, I went out of curiosity to see the bird Bhushunda.

फिर, जब कथा कहने का यह अवसर समाप्त हो गया और देवता अपने-अपने रास्ते चले गए, तब मैं जिज्ञासावश भुशुण्ड पक्षी को देखने गया।

6.14.14

भुशुण्डः संस्थितो यत्र मेरोः शृङ्गं तदुत्तमम्संप्राप्तवान्क्षणेनाहं पद्मरागमयं बृहत् ॥ १४ ॥

bhuśuṇḍaḥ saṃsthito yatra meroḥ śṛṅgaṃ taduttamamsaṃprāptavānkṣaṇenāhaṃ padmarāgamayaṃ bṛhat || 14 ||

In an instant I reached that great, finest peak of Meru, made of ruby light, where Bhushunda lived.

एक ही क्षण में मैं मेरु के उस बड़े और सबसे उत्तम, माणिक्य जैसे शिखर पर पहुँच गया, जहाँ भुशुण्ड रहता था।

6.14.15

रत्नगैरिककान्तेन तेजसा वह्निवर्चसामध्वासवरसेनेव रञ्जयत्ककुभां गणम् ॥ १५ ॥

ratnagairikakāntena tejasā vahnivarcasāmadhvāsavaraseneva rañjayatkakubhāṃ gaṇam || 15 ||

Its glow was as lovely as ruby and red ochre, blazing like fire, reddening the circle of directions all around, like the redness of a strong drink poured for travelers.

उसकी चमक माणिक्य और गेरू जैसी सुंदर थी, आग जैसी दहकती थी, चारों दिशाओं को वैसे ही लाल कर रही थी जैसे राहगीरों के लिए दी गई किसी मादक पेय की लाली।

6.14.16

कल्पान्तज्वलनोज्ज्वालापिण्डाद्रिमिव संचितमिन्द्रनीलशिखाधूममालोकारुणिताम्बरम् ॥ १६ ॥

kalpāntajvalanojjvālāpiṇḍādrimiva saṃcitamindranīlaśikhādhūmamālokāruṇitāmbaram || 16 ||

It looked as if it were a mountain made of the blazing flames of the fire that burns at the end of an age of the world, its glow, like sapphire-colored smoke, reddening the sky.

वह ऐसा लगता था मानो कल्प के अंत में जलने वाली आग की धधकती लपटों से बना एक पर्वत हो, और नीलम जैसे धुएँ की उसकी चमक आकाश को लाल कर रही हो।

6.14.17

सर्वेषामेव रागाणां राशिमद्राविव स्थितम्सर्वसंध्याभ्रजालानां घनमेकमिवाकरम् ॥ १७ ॥

sarveṣāmeva rāgāṇāṃ rāśimadrāviva sthitamsarvasaṃdhyābhrajālānāṃ ghanamekamivākaram || 17 ||

It stood as though it were a whole mountain heaped up out of every color there is, a single dense store, as it were, of all the clouds of every twilight.

वह मानो हर रंग के ढेर से बना एक पूरा पर्वत खड़ा था, मानो हर संध्या के सारे बादलों का एक ही घना भंडार हो।

6.14.18

उत्क्रान्तिं कुर्वतो मेरोर्ब्रह्मनाड्येव निर्गतम्मूर्धानमागतं कान्तं वाडवं जठरानलम् ॥ १८ ॥

utkrāntiṃ kurvato merorbrahmanāḍyeva nirgatammūrdhānamāgataṃ kāntaṃ vāḍavaṃ jaṭharānalam || 18 ||

It looked as if Mount Meru, rising up out of itself, had sent its own inner fire, the fire that burns at the bottom of the sea, up through its central channel to its summit, lovely to see.

ऐसा लगता था मानो मेरु पर्वत ऊपर उठते हुए अपनी भीतरी आग को, वही आग जो समुद्र के तल में जलती है, अपनी मुख्य नाड़ी से होते हुए अपने शिखर तक ले आया हो, देखने में सुंदर।

6.14.19

सुमेरुवनदेव्येव नवालक्तकरञ्जितम्लीलयादातुमिन्दुं खे नीतं हस्तशिखाङ्गुलिम् ॥ १९ ॥

sumeruvanadevyeva navālaktakarañjitamlīlayā''dātuminduṃ khe nītaṃ hastaśikhāṅgulim || 19 ||

It looked as if the forest-goddess of Sumeru, her fingertips freshly reddened with lac-dye, had lifted her hand into the sky, fingers raised, playfully, to catch hold of the moon.

ऐसा लगता था मानो सुमेरु की वन-देवी ने, जिसकी उँगलियों के सिरे ताज़ी लाख से लाल थे, खेल-खेल में अपना हाथ आकाश में उठाया हो, उँगलियाँ ऊपर किए हुए, चाँद को पकड़ने के लिए।

6.14.20

ज्वालाभिरिव मालाभिररुणाभिः पयोमुखम्खं गन्तुमिव सस्पन्दं शैलस्थमिव वाडवम् ॥ २० ॥

jvālābhiriva mālābhiraruṇābhiḥ payomukhamkhaṃ gantumiva saspandaṃ śailasthamiva vāḍavam || 20 ||

With what looked like garlands of red flames, its opening turned toward the water, trembling as if about to rise into the sky, as if the fire from the bottom of the sea had come to rest on that mountain.

लाल लपटों की मालाओं जैसा दिखता हुआ, उसका मुख जल की ओर खुला हुआ, मानो आकाश में उठने के लिए काँप रहा हो, मानो समुद्र के तल की वही आग उस पर्वत पर आकर टिक गई हो।

6.14.21

ताराः स्प्रष्टुमिवाकाशमङ्गुलीभिरिव त्रिभिः । कचदंशुनखाग्राभिः परिचुम्बदिवोन्नतम् ॥ २१ ॥

tārāḥ spraṣṭumivākāśamaṅgulībhiriva tribhiḥ | kacadaṃśunakhāgrābhiḥ paricumbadivonnatam || 21 ||

It rose so high it seemed to kiss the sky all around, as if it reached out with three fingers to touch the stars, their nail-tips glittering with light.

वह इतना ऊँचा उठा हुआ था कि लगता था चारों ओर आकाश को चूम रहा हो, मानो तीन उँगलियों से तारों को छूने के लिए हाथ बढ़ाया हो, जिनके नाखूनों की नोकें चमक से जगमगा रही हों।

6.14.22

गर्जज्जीमूतमुरजं भूभृतानां तु मण्डपम्। हसत्कुसुमगुच्छाढ्यं ध्वनत्षट्पदपेटकम्॥ २२॥

garjajjīmūtamurajaṃ bhūbhṛtānāṃ tu maṇḍapam | hasatkusumagucchāḍhyaṃ dhvanatṣaṭpadapeṭakam || 22 ||

With roaring clouds for its drums, it was like a festival pavilion for the mountains, rich with bunches of flowers as bright as laughter, and humming with swarms of bees.

गरजते बादल उसके ढोल थे, वह पर्वतों के लिए मानो एक उत्सव-मंडप हो, हँसी जैसे उजले फूलों के गुच्छों से भरपूर, और भिनभिनाती भौंरों की टोलियों से गूँजता हुआ।

6.14.23

दन्ततालदलावल्या परिहासादिव स्फुरत्। दोलालोलाप्सरोवृन्दमुदारमदमन्मथम्॥ २३॥

dantatāladalāvalyā parihāsādiva sphurat | dolālolāpsarovṛndamudāramadamanmatham || 23 ||

It seemed to shine as if laughing, with rows of teeth like petals of the palm leaf, crowded with heavenly women swaying on swings, full of a rich, playful passion.

वह ऐसे चमकता था मानो हँस रहा हो, ताड़ के पत्तों की पंखुड़ियों जैसी दाँतों की पंक्तियों के साथ, झूलों पर झूलती अप्सराओं की भीड़ से भरा हुआ, एक भरपूर, चंचल मोह से युक्त।

6.14.24

शिलाविश्रान्तविबुधमिथुनाश्रितकन्दरम्। वराम्बराजिनं शुभ्रगङ्गायज्ञोपवीति च॥ २४॥

śilāviśrāntavibudhamithunāśritakandaram | varāmbarājinaṃ śubhragaṅgāyajñopavīti ca || 24 ||

Pairs of gods rested on its rocks and sheltered in its caves. It wore fine cloth and deerskin as its garment, and the shining Ganga as its sacred thread.

देवताओं के जोड़े उसकी चट्टानों पर विश्राम करते थे और उसकी गुफाओं में शरण लेते थे। उसने बढ़िया वस्त्र और हिरन की खाल पहन रखी थी, और चमकती हुई गंगा को अपने जनेऊ की तरह धारण किया था।

6.14.25

तापसं पिङ्गलमिव वेणुदण्डधरं स्थितम्। गङ्गानिर्झरनिर्ह्रादि लतागृहगतामरम्॥ २५॥

tāpasaṃ piṅgalamiva veṇudaṇḍadharaṃ sthitam | gaṅgānirjharanirhrādi latāgṛhagatāmaram || 25 ||

It stood there like a reddish-brown ascetic holding a bamboo staff, echoing with the roar of the Ganga's waterfalls, with gods living inside its bowers of vines.

वह वहाँ भूरे रंग के एक तपस्वी की तरह खड़ा था, हाथ में बाँस का डंडा लिए, गंगा के झरनों की गर्जना से गूँजता हुआ, जिसकी लता-कुंजों में देवता रहते थे।

6.14.26

गन्धर्वगीतसुभगमामोदमधुरानिलम्। फुल्लहेमाम्बुजोत्तंसं तारारत्नविभूषितम्। व्योम्नः पारमिव प्राप्तं पिङ्गलं मैरवं शिरः॥ २६॥

gandharvagītasubhagamāmodamadhurānilam | phullahemāmbujottansaṃ tārāratnavibhūṣitam | vyomnaḥ pāramiva prāptaṃ piṅgalaṃ mairavaṃ śiraḥ || 26 ||

That tawny peak of Meru, lovely with the songs of heavenly musicians, its breeze sweet with fragrance, crowned with blooming golden lotuses, adorned with jewel-like stars, seemed to have reached the far shore of the sky.

मेरु का वह भूरा शिखर, गंधर्वों के गीतों से मनोहर, जिसकी हवा सुगंध से मीठी थी, खिले हुए सोने के कमलों से मुकुटित, तारों रूपी रत्नों से सजा हुआ, ऐसा लगता था मानो आकाश के उस पार पहुँच गया हो।

6.14.27

सितहरितपीतपाटलधवलैर्वनकुसुमराशिनवरङ्गैः । दिवि विहितामलचित्रं लीलाचलममरयुवतिवर्गस्य ॥ २७ ॥

sitaharitapītapāṭaladhavalairvanakusumarāśinavaraṅgaiḥ | divi vihitāmalacitraṃ
līlācalamamarayuvativargasya || 27 ||

White, green, yellow, pink, and pure white, with fresh-colored heaps of forest flowers, it was a flawless picture set in the sky, a mountain of play for the young women of the gods.

सफेद, हरे, पीले, गुलाबी और शुद्ध सफेद रंगों में, ताज़े रंगों वाले वन के फूलों के ढेरों से सजा हुआ, वह आकाश में बना एक निर्दोष चित्र था, देवताओं की युवतियों के खेलने का एक पर्वत।

Chapter 15

6.15.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । कुसुमापूर्णकल्पाभ्रकुन्तले तस्य मूर्धनि । कल्पाङ्गमहमद्राक्षं शाखाचक्रमिव स्थितम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kusumāpūrṇakalpābhra-kuntale tasya mūrdhani | kalpāṅgamahamadrākṣaṃ śākhācakramiva sthitam || 1 ||

Sri Vasishtha said: On its peak, thick with flowers like banks of cloud, I saw a wish-granting tree standing, its branches spread out in a ring like a wheel.

श्री वसिष्ठ ने कहा: उसकी चोटी पर, जो बादलों के गुच्छों जैसे फूलों से भरी हुई थी, मैंने एक कल्पवृक्ष को खड़ा देखा, जिसकी शाखाएँ पहिये की तरह गोल घेरे में फैली हुई थीं।

6.15.2

पुष्परेण्वभ्रवलितं रत्नस्तबकदन्तुरम् । उत्सेधनिर्जिताकाशं शृङ्गे शृङ्गमिवार्पितम् ॥ २ ॥

puṣpareṇvabhravalitaṃ ratnastabakadanturam | utsedhanirjitākāśaṃ śṛṅge śṛṅgamivārpitam || 2 ||

It was wrapped in clouds of flower-pollen, bristling with clusters of gems, its height rising above the sky, and it stood on the mountain peak like a second peak.

वह फूलों के पराग की धुंध में लिपटा हुआ था, रत्नों के गुच्छों से जड़ा हुआ था, उसकी ऊँचाई आकाश से भी ऊपर उठी हुई थी, और वह पहाड़ की चोटी पर एक और चोटी की तरह खड़ा था।

6.15.3

तारादिगुणपुष्पौघं मेघद्विगुणपल्लवम् । रश्मिद्विगुणरेण्वभ्रं तडिद्विगुणमञ्जरीम् ॥ ३ ॥

tārādviguṇapuṣpaughaṃ meghadviguṇapallavam | raśmidviguṇareṇvabhraṃ taḍiddviguṇamañjarīm || 3 ||

Its mass of flowers outshone the stars twice over, its young leaves outdid the clouds twice over, its cloud of pollen was twice as bright as sunbeams, and its clusters of blossom were twice as bright as lightning.

उसके फूलों का ढेर तारों से दुगना चमकता था, उसकी कोंपलें बादलों से दुगनी थीं, उसके पराग के बादल सूरज की किरणों से दुगने चमकीले थे, और उसके फूलों के गुच्छे बिजली से दुगने चमकीले थे।

6.15.4

स्कन्धेषु किन्नरीगीतद्विगुणभ्रमरस्वनम् । दोलालोलाप्सरोलोकद्विगुणीकृतपल्लवम् ॥ ४ ॥

skandheṣu kinnarīgītadviguṇabhramarasvanam | dolālolāpsarolokadviguṇīkṛtapallavam || 4 ||

On its branches, the humming of bees was doubled by the songs of kinnari women, and its young leaves were made twice as lovely by the sight of apsaras swinging restlessly on swings.

उसकी शाखाओं पर भौंरों की गुनगुनाहट किन्नरी स्त्रियों के गीतों से दुगनी हो जाती थी, और उसकी कोंपलें झूलों पर बेचैनी से झूलती अप्सराओं को देखकर दुगनी सुंदर हो जाती थीं।

6.15.5

सिद्धगन्धर्वसंघातद्विगुणोत्थविहंगमम्। रत्नकान्त्यच्छनीहारद्विगुणत्वग्वृतांशुकम्॥ ५॥

siddhagandharvasaṅghātadviguṇotthavihangamam | ratnakāntyacchanīhāradviguṇatvagvṛtāṃśukam || 5 ||

The birds rising up from it were matched by crowds of siddhas and gandharvas also rising there, and its bark, wrapped like fine cloth, was made twice as bright by the clear mist glowing with the light of gems.

उसमें से उड़ते पक्षी सिद्धों और गंधर्वों की भीड़ के साथ होड़ लेते थे, और उसकी छाल, जो एक बारीक वस्त्र की तरह लिपटी हुई थी, रत्नों की चमक से दमकती साफ धुंध से दुगनी चमकीली हो जाती थी।

6.15.6

चन्द्रबिम्बसमाश्लेषद्विगुणाङ्गबृहत्फलम्। मूलसंलीनकल्पाभ्रद्विगुणीकृतपर्वकम्॥ ६॥

candrabimbasamāśleṣadviguṇāṅgabṛhatphalam | mūlasaṃlīnakalpābhradviguṇīkṛtaparvakam || 6 ||

Its huge fruits, round like the moon's disk, shone twice as bright for that likeness, and its joints were made twice as beautiful by the clouds of blossom gathered at its root.

उसके बड़े-बड़े फल चाँद की गोल थाली जैसे दिखते थे और इसी वजह से दुगने चमकते थे, और उसकी गाँठें जड़ में इकट्ठे फूलों के बादल जैसे गुच्छों से दुगनी सुंदर हो जाती थीं।

6.15.7

सुरसंवलितस्कन्धं पत्रविश्रान्तकिन्नरम्। निकुञ्जकुञ्जजीमूतं कच्छसुप्तसुरादिकम्॥ ७॥

surasaṃvalitaskandhaṃ patraviśrāntakinnaram | nikuñjakuñjajīmūtaṃ kacchasuptasurādikam || 7 ||

Gods were wrapped around its boughs, kinnaras rested on its leaves, clouds gathered in its bowers and thickets, and gods and others lay sleeping on the ground beneath it.

देवता उसकी शाखाओं से लिपटे हुए थे, किन्नर उसके पत्तों पर आराम करते थे, उसकी झाड़ियों और कुंजों में बादल इकट्ठे होते थे, और देवता तथा अन्य लोग उसके नीचे ज़मीन पर सोए हुए थे।

6.15.8

स्वाकारविपुलं भृङ्गानुत्सार्य वलयस्वनैः। अप्सरोभ्रमरीभिश्च गृहीतकुसुमान्तरम्॥ ८॥

svākāravipulaṃ bhṛṅgānutsārya valayasvanaiḥ | apsarobhramarībhiśca gṛhītakusumāntaram || 8 ||

Vast in its own form, it had its bees driven off by the jingling of bangles, as apsaras, themselves like swarms of bees, chased the real bees away and took the hearts of its flowers for themselves.

वह अपने आप में बहुत विशाल था; उसके भौंरे कंगनों की झंकार से भगा दिए जाते थे, क्योंकि अप्सराएँ, जो खुद भौंरों के झुंड जैसी थीं, असली भौंरों को भगाकर उसके फूलों के भीतरी हिस्से को खुद ले लेती थीं।

6.15.9

सुरकिंनरगन्धर्वविद्याधरवरान्वितम्। जगज्जालमिवानन्तदशाशाकाशपूरकम्॥ ९॥

surakiṃnaragandharvavidyādharavarānvitam | jagajjālamivānantadaśāśākāśapūrakam || 9 ||

It was full of the finest gods, kinnaras, gandharvas and vidyadharas, and like a net cast over the whole world, it filled the sky in all ten directions without end.

वह देवताओं, किन्नरों, गंधर्वों और विद्याधरों में सबसे श्रेष्ठ लोगों से भरा हुआ था, और पूरी दुनिया पर फैले जाल की तरह, वह दसों दिशाओं के आकाश को अंत तक भर देता था।

6.15.10

नीरन्ध्रकलिकाजालं नीरन्ध्रमृदुपल्लवम्। नीरन्ध्रविकसत्पुष्पं नीरन्ध्रवनमालितम्॥ १०॥

nīrandhrakalikājālaṃ nīrandhramṛdupallavam | nīrandhravikasatpuṣpaṃ nīrandhravanamālitam || 10 ||

Its clusters of buds were packed so dense there was no gap between them, its soft young leaves left no gap, its blooming flowers left no gap, and it was garlanded thick, without a gap, by its own grove.

उसकी कलियों के गुच्छे इतने घने थे कि बीच में कोई जगह नहीं बचती थी, उसकी मुलायम कोंपलें बिना किसी अंतर के घनी थीं, उसके खिले फूल भी बिना किसी अंतर के घने थे, और वह अपने ही घने कुंज से बिना कोई जगह छोड़े लदा हुआ था।

6.15.11

नीरन्ध्रमञ्जरीपुञ्जं नीरन्ध्रमणिगुच्छकम्। नीरन्ध्रांशुकरत्नाढ्यं लताविलसनाकुलम्॥ ११॥

nīrandhramañjarīpuñjaṃ nīrandhramaṇigucchakam | nīrandhrāṃśukaratnāḍhyaṃ latāvilasanākulam || 11 ||

Its sprays of blossom were packed dense, without a gap, its clusters of gems were packed dense, without a gap, it was rich everywhere with fine cloth and jewels, and it was crowded with the shimmer of its creepers.

उसके फूलों के गुच्छे बिना कोई जगह छोड़े घने थे, उसके रत्नों के गुच्छे भी बिना कोई जगह छोड़े घने थे, वह हर जगह बारीक वस्त्रों और रत्नों से भरपूर था, और वह अपनी लताओं की चमक से भरा हुआ था।

6.15.13

तस्य कक्षेषु कुञ्जेषु लतापत्रेषु पर्वसु। पुष्पेष्वालयसंलीनान्विहगान्दृष्टवानहम्॥ १३॥

tasya kakṣeṣu kuñjeṣu latāpatreṣu parvasu | puṣpeṣvālayasaṃlīnānvihagāndṛṣṭavānaham || 13 ||

In its hollows, in its bowers, in the leaves of its creepers, at its joints, and in its flowers, I saw birds settled in their nests.

उसकी खोहों में, उसके कुंजों में, उसकी लताओं के पत्तों में, उसकी गाँठों में और उसके फूलों में, मैंने पक्षियों को अपने घोंसलों में बसा हुआ देखा।

6.15.14

निशानाथकलाखण्डमृणालशकलैधितान्। अर्जुनाम्भोजिनीकन्दकवलान्ब्रह्मसारसान्॥ १४॥

niśānāthakalākhaṇḍamṛṇālaśakalaidthitān | arjunāmbhojinīkandakavalānbrahmasārasān || 14 ||

They had grown plump on scraps of moonlight and shreds of lotus-fibre, and they ate mouthfuls of the roots of white lotus plants - and there were sacred cranes too.

वे चाँदनी के टुकड़ों और कमल-रेशों के टुकड़ों को खाकर मोटे हो गए थे, वे सफेद कमल के पौधों की जड़ों के कौर खाते थे - और वहाँ पवित्र सारस पक्षी भी थे।

6.15.15

विरंचेरथ हंसानां पोतकान्सामगायिनः। ॐकारवेदसुहृदो ब्रह्मविद्यानुशासनान्॥ १५॥

virañcera atha haṃsānāṃ potakānsāmagāyinaḥ | oṃkāravedasuhṛdo brahmavidyānuśāsanān || 15 ||

And there were the goslings of Brahma's swans too, singers of the Sama chant, friends of the sacred syllable Om and of the Vedas, well versed in the knowledge of the Absolute.

और वहाँ ब्रह्मा के हंसों के बच्चे भी थे, जो साम-गान गाते थे, ॐकार और वेदों के मित्र थे, और ब्रह्म के ज्ञान में निपुण थे।

6.15.16

उद्गीर्णमन्त्रनिचयान्स्वाहाकारनिभस्वनान्। अस्थिनैकतडित्पुञ्जनीलमेघसमोपमान्॥ १६॥

udgīrṇamantranicayānsvāhākāranibhasvanān | asthinaitakaṭitpuñjanīlameghasamopamān || 16 ||

They poured out streams of sacred chants, their sound echoing the call svaha, and they were like blue clouds massed with many flashes of lightning.

वे मंत्रों की धाराएँ उँडेलते थे, उनकी आवाज़ स्वाहा की पुकार जैसी गूँजती थी, और वे बिजली की कई लपटों से भरे नीले बादलों जैसे लगते थे।

6.15.17

देवैर्निरीक्षितान्नित्यं यज्ञवेदिलतादलान्। शुकान्कार्शानवाञ्छयामाञ्छिशूञ्छिखिशिखाशिखान्॥ १७॥

devairnirīkṣitānniyaṃ yajñavedilatādalān| śukānkārśānavāñchayāmāñchiśūñchikhīśikhāśikhān || 17 ||

The gods always watched them: parrots - slender, dark and young, like the leaves of creepers on the sacrifice-altar - and crested peacock chicks.

देवता हमेशा उन्हें देखते रहते थे: तोते - दुबले, साँवले और नन्हे, यज्ञ-वेदी की लताओं के पत्तों जैसे - और चोटीदार मोर के बच्चे।

6.15.18

गौरीरक्षितबर्हौघान्कौमारान्वरबर्हिणः स्कन्दोपन्यस्तनिःशेषशैवविज्ञानकोविदान्॥ १८॥

gaurīrakṣitabarhaughānkaumārānvarabarhiṇaḥ skandopanyastaniḥśeṣaśaivavijñānakovidān || 18 ||

Peacocks whose plumes Gauri watched over, young peacocks, the finest peacocks, skilled in the whole of Shiva's wisdom that Skanda had taught them,

वे मोर जिनके पंखों की रखवाली गौरी करती थीं, जवान मोर, सबसे अच्छे मोर, जो शिव का वह पूरा ज्ञान जानते थे जो स्कंद ने उन्हें सिखाया था,

6.15.19

व्योम्नैव जातनष्टानां महतां व्योमपक्षिणाम्। बन्धूनाबद्धनिलयाञ्छरदभ्रसमाकृतीन्॥ १९॥

vyomnaiva jātanaṣṭānāṃ mahatāṃ vyomapakṣiṇām| bandhūnābaddhanilayāñcharadabhrasamākṛtīn || 19 ||

the kin of the great birds of the sky, who were born and vanished in the sky alone, whose home was fixed nowhere, shaped like the clouds of autumn,

आकाश के उन बड़े पक्षियों के रिश्तेदार, जो आकाश में ही जन्म लेते और आकाश में ही मिट जाते थे, जिनका कोई घर तय नहीं था, जिनका रूप शरद ऋतु के बादलों जैसा था,

6.15.20

विरञ्चिहंसजानन्यानन्यानग्निशुकोद्भवान्कौमारबर्हिजानन्यानन्यानम्बरपक्षिजान॥ २०॥

viraṃcihaṃsajānanyānanyānagniśukodbhavānkaumārabarhijānanyānanyānambarapakṣijān || 20 ||

other birds too, born from the swan of Brahma, sprung from a parrot of fire, born of the peacock of Kumara, and still others, offspring of the birds of the sky,

और भी दूसरे पक्षी, ब्रह्मा के हंस से जन्मे, आग के तोते से पैदा हुए, कुमार के मोर से जन्मे, और कुछ और भी, जो आकाश के पक्षियों की संतान थे,

6.15.21

द्वितुण्डांश्च भरद्वाजान्हेमचूडान्विहंगमान्। कलविङ्कबलाग्गृध्रान्कोकिलान्क्रौञ्चकुक्कुटान्॥ २१॥

dvituṇḍāṃśca bharadvājānhemacūḍānvihāṅgamān| kalaviṅkabalāṅgṛdhrānkokilānkrauñcakukkuṭān || 21 ||

two-beaked birds, and bharadvaja birds, golden-crested birds, flocks of sparrows, vultures, cuckoos, curlews, and cocks,

दो चोंच वाले पक्षी, भरद्वाज पक्षी, सुनहरी कलगी वाले पक्षी, गौरैयों के झुंड, गिद्ध, कोयल, क्रौंच पक्षी और मुर्गे,

6.15.22

भासचाषबलाकादीन्बहूनन्यांश्च राघव । भूतौघं जगतीवाहं दृष्टवांस्तत्र पक्षिणः ॥ २२ ॥

bhāsacāṣabalākādīnbahūnanyāṃśca rāghava | bhūtaughaṃ jagatīvāhaṃ dṛṣṭvāṃstatra pakṣiṇaḥ || 22 ||

hawks, blue jays, cranes, and many more besides, Raghava, I saw the birds there, like a whole world of living beings gathered together.

बाज, नीलकंठ, सारस और भी बहुत सारे, हे राघव, मैंने वहाँ पक्षियों को देखा, मानो पूरी दुनिया के जीव इकट्ठे हों।

6.15.23

दक्षिणस्कन्धशाखायां स्थितायां वै दवीयसि । अथाहं दृष्टवान्पुष्टपत्रायामम्बरस्थितः ॥ २३ ॥

dakṣiṇaskandhaśākhāyāṃ sthitāyāṃ vai davīyasi | athāhaṃ dṛṣṭavānpūṣṭapatrāyāmambarasthitaḥ || 23 ||

Far off, I then saw a branch of the southern bough, thick with leaves, while I myself remained in the sky.

दूर, मैंने दक्षिण की ओर की शाखा की एक घनी पत्तों वाली डाल देखी, जबकि मैं खुद आकाश में खड़ा था।

6.15.24

काले काकोलवलयं मञ्जरीजालमालितम् । लोकालोकाचलेऽरण्ये कल्पाभ्रौघमिव स्थितम् ॥ २४ ॥

kāle kākolavalayaṃ mañjarījālamālitam | lokālokācale'raṇye kalpābhraughamiva sthitam || 24 ||

Then, in the forest on Mount Lokaloka, I saw a ring of crows wreathed with clusters of blossoms, standing there like a mass of clouds at the end of an age.

फिर, लोकालोक पर्वत के जंगल में, मैंने कौवों का एक घेरा देखा, जो फूलों के गुच्छों से सजा था, और वहाँ ऐसे खड़ा था जैसे प्रलय के बादलों का ढेर।

6.15.25

तत्र पश्याम्यहं यावदेकान्ते स्कन्धकोटरे । विचित्रकुसुमास्तीर्णे विविधामोदशालिनि ॥ २५ ॥

tatra paśyāmyahaṃ yāvadekānte skandhakoṭare | vicitra kusumāstīrṇe vividhāmodaśālini || 25 ||

There, as I looked into a lonely hollow of the branch, strewn with flowers of many colors and filled with many scents,

वहाँ, जब मैंने शाखा की एक अकेली खोह में देखा, जो रंग-बिरंगे फूलों से बिछी थी और तरह-तरह की खुशबू से भरी थी,

6.15.26

पुण्यकृद्योषितां स्वर्गे प्रियस्तबकवासिताः । अपरिक्षुभिताकाराः सभायां वायसाः स्थिताः ॥ २६ ॥

puṇyakṛdyoṣitāṃ svarge priyastabakavāsitāḥ | aparikṣubhitākārāḥ sabhāyāṃ vāyasāḥ sthitāḥ || 26 ||

crows sat together there, calm and undisturbed, scented with the favorite flower-clusters of the virtuous women of heaven.

वहाँ कौवे इकट्ठे बैठे थे, शांत और अविचलित, स्वर्ग की पुण्यवान स्त्रियों के प्रिय फूलों के गुच्छों की खुशबू से महकते हुए।

6.15.27

विभेद्यमेघा वातेन समेनेवापसारिताःतेषां मध्ये स्थितः श्रीमान्भुशुण्डः प्रोन्नताकृतिः ॥ २७ ॥

vibhedyameghā vātena samenevāpasāritāḥteṣāṃ madhye sthitaḥ śrīmānbhuśuṇḍaḥ pronnatākṛtiḥ || 27 ||

Those crows had parted like clouds driven apart by a steady wind, and in their midst stood the glorious Bhushunda, tall and stately.

वे कौवे यूँ हट गए थे जैसे बादल किसी तेज़ और बराबर हवा से बिखर जाते हैं, और उनके बीच खड़े थे तेजस्वी भुशुण्ड, ऊँचे और भव्य रूप में।

6.15.28

मध्ये च काचकण्डानामिन्द्रनील इवोन्नतःपरिपूर्णमना मानी समः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ २८ ॥

madhye ca kācakhaṇḍānāmindranīla ivonnataḥparipūrṇamanā mānī samaḥ sarvāṅgasundaraḥ || 28 ||

And amid pieces of glass he rose like a tall sapphire, content in mind, dignified, calm and even, beautiful in every limb.

और शीशे के टुकड़ों के बीच वे नीलम की तरह ऊँचे उठे हुए लग रहे थे, मन से तृप्त, गरिमामय, शांत और संतुलित, हर अंग से सुंदर।

6.15.29

प्राणस्पन्दावधानेन नित्यमन्तर्मुखः सुखीचिरंजीवीति विख्यातश्चिरजीवितया तया ॥ २९ ॥

prāṇaspandāvadhānena nityamantarmukhaḥ sukhīciraṃjīvīti vikhyātaścirajīvitayā tayā || 29 ||

By watching the movement of his breath, always turned inward, content, through that long life of his he was famed as Chiranjivi, the long-lived one.

अपनी सांस की हलचल पर ध्यान देकर, हमेशा अंतर्मुखी और सुखी रहकर, अपने उसी लंबे जीवन के कारण वे चिरंजीवी के नाम से मशहूर हुए।

6.15.30

जगद्विदितदीर्घायुर्भुशुण्ड इति विश्रुतःयुगागमापायदशादशनप्रौढमानसः ॥ ३० ॥

jagadviditadīrghāyurbhuśuṇḍa iti viśrutaḥyugāgamāpāyadaśādaśanaprauḍhamānasaḥ || 30 ||

Known through all the world for his long life, famed by the name Bhushunda, his mind grown mature from tasting the coming and going of age after age.

पूरी दुनिया में अपनी लंबी उम्र के लिए जाने जाते, भुशुण्ड नाम से प्रसिद्ध, उनका मन युगों के बार-बार आने और जाने को अनुभव करके परिपक्व हो चुका था।

6.15.31

प्रतिकल्पं च गणयन्खिन्नश्चक्रपरम्परान्जन्मनां लोकपालानां शर्वशक्रमरुत्वताम् ॥ ३१ ॥

pratikalpaṃ ca gaṇayankhinnaścakraparamparāmjanmanāṃ lokapālānāṃ śarvaśakramarutvatām || 31 ||

At every world-cycle he grew weary counting the turning wheel of births of the world's guardians, Shiva, Indra, and the lord of the Maruts.

हर कल्प में, संसार के रखवालों, शिव, इंद्र और मरुतों के स्वामी, के जन्मों के चक्र को गिनते-गिनते वे थक चुके थे।

6.15.32

संस्मर्ता समतीतानां सुरासुरमहीभृताम् । प्रसन्नगम्भीरमनाः पेशलः स्निग्धमुग्धवाक् ॥ ३२ ॥

saṃsmartā samatītānāṃ surāsuramahībhṛtām | prasannagambhīramanāḥ peśalaḥ snigdhamugdhavāk || 32 ||

He remembered the gods, demons, and kings of ages gone by; his mind was clear and deep, he was gentle, and his speech was warm and winning.

वे बीते हुए युगों के देवताओं, दानवों और राजाओं को याद करते थे, उनका मन निर्मल और गहरा था, वे सौम्य थे, उनकी वाणी स्नेहमयी और मनमोहक थी।

6.15.33

अव्यक्तवक्ता विज्ञाता निर्ममो निरहंकृतिः । सुहृद्बन्धुस्तथा मित्रं मृत्युपुत्रो गुरुप्रभुः । सर्वदा सर्वथा सत्यं सर्वं सर्वस्य संस्तवे ॥ ३३ ॥

avyaktavaktā vijñātā nirmamo nirahaṃkṛtiḥ | suhṛdbandhus tathā mitraṃ mṛtyuputro guruprabhuḥ | sarvadā sarvathā satyaṃ sarvaṃ sarvasya saṃstave || 33 ||

He could speak of what lies beyond sight, and he understood all things; he claimed nothing as his own, and had no pride of self. He was a well-wisher, a kinsman, and a friend besides; he was like a son to death, and a great master among teachers. Always, in every way, whatever anyone said in praise of him was wholly true.

वे उस चीज़ के बारे में बोल सकते थे जो आँखों से नहीं दिखती, और वे हर बात को समझते थे; उन्होंने किसी चीज़ को अपना नहीं माना, न ही उन्हें अपने होने का कोई घमंड था। वे एक शुभचिंतक थे, एक रिश्तेदार, और साथ ही एक मित्र भी; वे मानो मृत्यु के पुत्र थे, और गुरुओं में सबसे बड़े स्वामी। हमेशा, हर तरह से, उनकी जो भी प्रशंसा की जाती, वह पूरी तरह सच होती थी।

6.15.34

सौम्यः प्रसन्नमधुरो रसवान्महात्मा हृद्यः सरोवर इवान्तरखण्डशैत्यः । हृत्पुण्डरीककुहरं व्यवहारवेत्ता गाम्भीर्यमच्छमजहात्प्रकटाशयश्रीः ॥ ३४ ॥

saumyaḥ prasannamadhuro rasavānmahātmā hṛdyaḥ sarovara ivāntarakhṇḍaśaityaḥ | hṛtpunḍarīkakuharaṃ vyavahāravettā gāmbhīryamacchamajahātprakaṭāśayaśrīḥ || 34 ||

He was gentle, clear and sweet, full of feeling, a great soul, dear to the heart, cool within through and through like a lake. He understood the ways of the world as deeply as the hollow of a lotus in the heart. He never gave up a clarity that ran deep, and the beauty of his open heart showed plainly.

वे सौम्य थे, स्वच्छ और मीठे, भाव से भरपूर, महान आत्मा, मन को भाने वाले, और भीतर से पूरी तरह ठंडे, जैसे कोई सरोवर। वे दुनिया के व्यवहार को उतनी ही गहराई से समझते थे जितनी गहराई हृदय-कमल की खोह में होती है। उन्होंने अपनी साफ गहराई कभी नहीं छोड़ी, और उनके खुले मन की शोभा साफ दिखाई देती थी।

Chapter 16

6.16.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ तत्याहमपतं दीप्यमानवपुः पुरः । किंचिद्विक्षोभितसभः खान्नक्षत्रमिवाचले ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha tatyāhamapataṃ dīpyamānavapuḥ puraḥ | kiṃcidvikṣobhitasabhaḥ khānnakṣatramivācale || 1 ||

Sri Vasishtha said: Then, my body glowing, I came flying down in front of him, like a star falling from the sky onto a mountain, and that stirred the gathering a little.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, अपने चमकते शरीर के साथ, मैं उसके सामने ऐसे उड़कर आया जैसे आकाश से कोई तारा पहाड़ पर गिरता है, और इससे वह सभा थोड़ी हिल उठी।

6.16.2

चुक्षोभ वायसास्थानं नीलोत्पलसरःसमम् । मत्पातमन्दवातेन भूकम्पेनेव सागरः ॥ २ ॥

cukṣobha vāyasāsthānaṃ nīlotpalasaraḥsamam | matpātamandavātena bhūkampeneva sāgaraḥ || 2 ||

The crow's dwelling, like a lake full of blue lotuses, was stirred by the light breeze of my landing, just as the ocean is stirred by an earthquake.

कौए का वह निवास, जो नीले कमलों से भरे किसी सरोवर जैसा था, मेरे उतरने की हल्की हवा से हिल उठा, ठीक वैसे ही जैसे भूकंप से समुद्र हिल उठता है।

6.16.3

अशङ्कितमपि प्राप्तं दर्शनान्मामनन्तरम् । भुशुण्डस्तु वसिष्ठोऽयं प्राप्त इत्यवबुद्धवान् ॥ ३ ॥

aśaṅkitamapi prāptaṃ darśanānmāmanantaram | bhuśuṇḍastu vasiṣṭho'yaṃ prāpta ityavabuddhavān || 3 ||

Even though I had come unannounced, the moment he saw me, Bhushunda understood that this one who had come was Vasishtha.

मैं बिना बताए ही आया था, फिर भी मुझे देखते ही भुशुण्ड समझ गया कि यह जो आया है वह वसिष्ठ है।

6.16.4

पत्रपुञ्जात्समुत्तस्थौ मेघशाव इवाचलात् । हे मुने स्वागतमिति प्रोवाच मधुराक्षरम् ॥ ४ ॥

patrapuñjātsamuttaṣṭhau meghaśāva ivācalāt | he mune svāgatamiti provāca madhurākṣaram || 4 ||

He rose up from a heap of leaves, like a young cloud rising from a mountain, and said in sweet words, welcome, O sage.

वह पत्तों के ढेर में से उठ खड़ा हुआ, जैसे कोई नन्हा बादल पहाड़ से उठता है, और मीठे शब्दों में बोला, स्वागत है हे मुनि।

6.16.5

संकल्पमात्रजाताभ्यां कराभ्यां कुसुमाञ्जलिम् । मह्यमाशु तदैवादान्मेघो हैममिवोत्करम् ॥ ५ ॥

saṃkalpamātrajātābhyāṃ karābhyāṃ kusumāñjalim | mahyamāśu tadaivādānmegho haemamivotkaram || 5 ||

With two hands born only of his wish, he at once gave me an armful of flowers, like a cloud pouring down a shower of gold.

अपनी इच्छा मात्र से बने दो हाथों से उसने तुरंत मुझे फूलों की एक अंजलि दी, जैसे कोई बादल सोने की वर्षा करता है।

6.16.6

इदमासनमिप्युक्त्वा नवं कल्पतरुच्छदम्। उपानीतवति त्यक्तभृत्ये वायसनायके ॥ ६ ॥

idamāsanamipyuktvā navaṃ kalpatarucchadam | upānītavati tyaktabhṛtye vāyasanāyake || 6 ||

Saying, here is your seat, a new seat made of leaves of the wish granting tree, the lord of the crows sent his attendants away and brought it himself.

यह कहते हुए कि यह रहा तुम्हारा आसन, कल्पवृक्ष के पत्तों से बना एक नया आसन, कौओं के उस स्वामी ने अपने सेवकों को हटाकर इसे स्वयं ले आया।

6.16.7

भुशुण्ड उत्थिते स्वीयकलापक्षेषु पक्षिषु। उपविष्टं मुनिं दृष्ट्वा स्वासनोन्मुखदृष्टिषु ॥ ७ ॥

bhushuṇḍa utthite svīyakalāpakṣeṣu pakṣiṣu | upaviṣṭaṃ muniṃ dṛṣṭvā svāsanonmukhadṛṣṭiṣu || 7 ||

Bhushunda saw the sage seated, while the birds of his own flock had risen up, their eyes turned toward their own perches.

भुशुण्ड ने मुनि को बैठा हुआ देखा, जबकि उसके अपने झुंड के पक्षी उठ खड़े हुए थे, उनकी नजरें अपने अपने बैठने के स्थान की ओर लगी थीं।

6.16.8

समन्तात्खगवृन्देन भुशुण्डेन समं ततः। तस्मिन्कल्पलतापुञ्जे ह्युपविष्टोऽहमासने ॥ ८ ॥

samantātkhagavṛndena bhuśuṇḍena samaṃ tataḥ | tasmin kalpalatāpuñje hyupaviṣṭo'hamāsane || 8 ||

Then, with the flock of birds all around, together with Bhushunda, I sat down on that seat woven from a mass of wish granting vines.

फिर, चारों ओर पक्षियों के झुंड के साथ, भुशुण्ड के साथ मिलकर, मैं कल्पलताओं के उस ढेर से बने आसन पर बैठ गया।

6.16.9

अर्घ्यपाद्यादि संपाद्य भुशुण्डस्तुष्टमानसः। मामुवाच महातेजाः सौहृदान्मधुराक्षरम् ॥ ९ ॥

arghyapādyādi saṃpādya bhuśuṇḍastuṣṭamānasaḥ | māmuvāca mahātejāḥ sauhṛdānmadhurākṣaram || 9 ||

Bhushunda, his heart glad, performed the rites of welcome, offering arghya, water for the feet, and the rest. Then he, shining with great power, spoke sweet words to me out of friendship.

भुशुण्ड ने प्रसन्न मन से अर्घ्य, पैर धोने का जल आदि स्वागत की सारी विधियाँ कीं। फिर वह, महान तेज से चमकता हुआ, मित्रता से मुझसे मीठे शब्दों में बोला।

6.16.10

भुशुण्ड उवाच। अहो भगवताऽस्माकं प्रसादो दर्शितश्चिरात्। दर्शनामृतसेकेन यत्सिक्ताः सद्द्रुमा वयम् ॥ १० ॥

bhushuṇḍa uvāca | aho bhagavatā'smākaṃ prasādo darśitaścirāt | darśanāmṛtasekena yatsiktāḥ saddrumā vayam || 10 ||

Bhushunda said: Ah, my lord, after such a long time you have shown us your grace. We are like good trees, watered by the nectar of your sight.

भुशुण्ड ने कहा: अहा, हे भगवन्, इतने लंबे समय बाद आपने हम पर अपनी कृपा दिखाई है। हम अच्छे पेड़ों की तरह आपके दर्शन के अमृत से सींचे गए हैं।

6.16.11

मत्पुण्यचिरसंभारप्रेरितेन त्वयाधुना । मुने मान्यैकमान्येन कुतश्चागमनं कृतम् ॥ ११ ॥

matpuṇyacirasambhārapreritena tvayādhunā | mune mānyaikamānyena kutaścāgamanaṃ kṛtam || 11 ||

It is by the long gathered store of my own merit that you have been moved to come here now, O sage, most honored among the honorable. From where have you come?

मेरे ही चिरकाल से जमा हुए पुण्य के कारण आप अभी यहाँ आने के लिए प्रेरित हुए हैं, हे मुनि, आदरणीयों में सबसे आदरणीय। आप कहाँ से आए हैं?

6.16.12

कच्चिदस्मिन्महामोहे चिरं विहरतस्तव । अखण्डितैव समता स्थिता चेतसि पावने ॥ १२ ॥

kaccidasminmahāmohe ciraṃ viharatastava | akhaṇḍitaiva samatā sthitā cetasi pāvane || 12 ||

Even though you have long moved about in this great delusion, I hope that unbroken evenness of mind still stands firm in your pure heart.

यद्यपि आप इस बड़े मोह में लंबे समय से घूम रहे हैं, फिर भी मुझे आशा है कि आपके शुद्ध हृदय में समता अखंडित बनी हुई है।

6.16.13

किमर्थमद्यागमनक्लेशेनात्मा कदर्थितः । वचनश्रवणोत्कानामाज्ञां नो वक्तुमर्हसि ॥ १३ ॥

kimarthamadyāgamanakleśenātmā kadarthitaḥ | vacanaśravaṇotkānāmājñāṃ no vaktumarhasi || 13 ||

Why have you troubled yourself today with the hardship of this journey? Please tell us, who are eager to hear your words, what has brought you.

आज आपने इस यात्रा का कष्ट उठाकर अपने आपको क्यों तकलीफ दी? कृपया हमें बताइए, जो आपके शब्द सुनने के लिए उत्सुक हैं, कि आप किसलिए आए हैं।

6.16.14

त्वत्पाददर्शनादेव सर्वं ज्ञातं मया मुने । त्वदागमनपुण्येन वयमायोजितास्त्वया ॥ १४ ॥

tvatpādadarśanādeva sarvaṃ jñātaṃ mayā mune | tvadāgamanapuṇyena vayamāyojitāstvayā || 14 ||

O sage, merely by seeing your feet I have already understood everything. By the merit of your coming, you have joined us to yourself.

हे मुनि, आपके चरणों को देखते ही मैं सब कुछ समझ गया। आपके आने के पुण्य से आपने हमें अपने साथ जोड़ लिया है।

6.16.15

चिरंजीवितचर्चाभिर्वयं वः स्मृतिमागताः । तेनेदमास्पदं पादैस्त्वं पवित्रितवानयम् ॥ १५ ॥

cirañjīvitacarcābhirvayaṃ vaḥ smṛtimāgatāḥ | tenedamāspadaṃ pādaistvaṃ pavitritavānayam || 15 ||

It was talk of my long life that brought me into your memory, and so, with your own feet, you have made this dwelling of mine sacred.

मेरे लंबे जीवन की चर्चा के कारण ही मैं आपकी स्मृति में आया, और इसी वजह से आपने अपने चरणों से मेरे इस निवास को पवित्र कर दिया।

6.16.16

ज्ञातत्वदागमोऽप्येवं त्वां पृच्छामीह यन्मुने । भवद्वाक्यामृतास्वादवाञ्छितं प्रविजृम्भते ॥ १६ ॥

jñātatvadāgamo'pyevaṃ tvāṃ pṛcchāmīha yanmune | bhavadvākyāmṛtāsvādavāñchitaṃ pravijṛmbhate || 16 ||

Even though I already know why you have come, I still ask you, O sage, because my longing to taste the nectar of your words keeps rising up in me.

यद्यपि मैं आपके आने का कारण पहले ही जान चुका हूँ, फिर भी मैं आपसे पूछता हूँ, हे मुनि, क्योंकि आपके वचनों का अमृत चखने की मेरी इच्छा बार बार उठती है।

6.16.17

इत्युक्तवानसौ पक्षी भुशुण्डश्चिरजीवितः । त्रिकालामलसंवेदी तत्र प्रोक्तमिदं मया ॥ १७ ॥

ityuktavānasau pakṣī bhuśuṇḍaścirajīvitaḥ | trikālāmalasaṃvedī tatra proktamidaṃ mayā || 17 ||

So spoke that long lived bird, Bhushunda, who knows the three times, past, present and future, without any flaw. Then I spoke these words.

इस प्रकार उस दीर्घजीवी पक्षी भुशुण्ड ने कहा, जो भूत, वर्तमान और भविष्य, तीनों कालों को बिना किसी दोष के जानता है। फिर मैंने ये शब्द कहे।

6.16.18

श्रीवसिष्ठ उवाच । विहंगम महाराज सत्यमेतत्त्वयोच्यते । द्रष्टुमभ्यागतोऽस्म्यद्य त्वामेव चिरजीवितम् ॥ १८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vihaṅgama mahārāja satyametattvayocyate | draṣṭumabhyāgato'smyadya tvāmeva cirajīvitam || 18 ||

Sri Vasishtha said: O bird, great king, what you say is true. I have come today only to see you, the long lived one.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे पक्षी, हे महाराज, आप जो कहते हैं वह सच है। मैं आज केवल आपको देखने आया हूँ, आप जो इतने लंबे समय से जीवित हैं।

6.16.19

आशीतलान्तःकरणो दिष्ट्या कुशलवानसि । पतितोऽसि न बुद्धात्मा भीषणां भववागुराम् ॥ १९ ॥

āśītalāntaḥkaraṇo diṣṭyā kuśalavānasi | patito'si na buddhātmā bhīṣaṇāṃ bhavavāgurām || 19 ||

Your mind is calm and cool, and by good fortune you are well. Your self awakened, you have not fallen into the terrible snare of worldly existence.

आपका मन शांत और शीतल है, और सौभाग्य से आप कुशल हैं। आपकी आत्मा जाग चुकी है, आप संसार के इस भयंकर जाल में नहीं गिरे हैं।

6.16.20

तदेतं संशयं छिन्धि भगवन्मम सत्यतः । कस्मिन्कुले भवाञ्जातो ज्ञातज्ञेयः कथं भवान् ॥ २० ॥

tadetaṃ saṃśayaṃ chindhi bhagavanmama satyataḥ | kasmin kule bhavāñjāto jñātajñeyaḥ kathaṃ bhavān || 20 ||

So, my lord, truly resolve this doubt of mine. In what family were you born, and how did you come to know all that can be known?

इसलिए, हे भगवन्, सच में मेरा यह संदेह दूर कीजिए। आप किस कुल में जन्मे, और आपने वह सब कैसे जान लिया जो जानने योग्य है?

6.16.21

कियदायुश्च ते साधो वृत्तं स्मरसि किंच वा । केनायं वा निवासस्ते निर्दिष्टो दीर्घदर्शिनः ॥ २१ ॥

kiyadāyuśca te sādho vṛttaṃ smarasi kiṃca vā | kenāyaṃ vā nivāsaste nirdiṣṭo dīrghadarśinaḥ || 21 ||

How long is your life, good sir? And what do you remember of the past? And who assigned you this dwelling place, you who see so far?

हे साधु, आपकी आयु कितनी है? और आपको बीते समय की क्या क्या याद है? और आपको यह निवास स्थान किसने बताया, आप जो इतनी दूर तक देख सकते हैं?

6.16.22

भुशुण्ड उवाच । यत्पृच्छसि मुने सर्वं तदिदं वर्णयाम्यहम् । अनुद्वेगितया यत्नात्कथा श्राव्या महात्मना ॥ २२ ॥

bhūśuṇḍa uvāca | yatpṛcchasi mune sarvaṃ tadidaṃ varṇayāmyaham | anudvegitayā yatnātkathā śrāvyā mahātmanā || 22 ||

Bhushunda said: O sage, all that you ask, I will now tell. A great soul should listen to this story carefully, without any unease.

भुशुण्ड ने कहा: हे मुनि, आप जो कुछ पूछते हैं, वह सब मैं अभी बताता हूँ। इस कथा को किसी महान आत्मा को बिना घबराए ध्यान से सुनना चाहिए।

6.16.23

युष्मद्विधास्त्रिभुवनप्रभुपूज्यरूपा आकर्णयन्ति यमुदारधियो महान्तः । तेनाशुभं प्रकथितेन विनाशमेति मेघास्पदेन विभवेन यथार्कतापः ॥ २३ ॥

yuṣmadvidhāstrībhuvanaprabhupūjyarūpā ākarṇayanti yamudāradhiyo mahāntaḥ | tenāśubhaṃ prakathitena vināśameti meghāspadena vibhavena yathārkatāpaḥ || 23 ||

Great and noble minded men, men like you, whose very form even the lords of the three worlds should worship, listen to this story. When it is told, misfortune is destroyed, just as the heat of the sun is destroyed by the power that lives in a cloud.

आप जैसे महान और उदार बुद्धि वाले लोग, जिनका रूप तीनों लोकों के स्वामियों के लिए भी पूजनीय है, इस कथा को सुनते हैं। जब यह कही जाती है, तो अशुभ नष्ट हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे बादल में बसी शक्ति से सूरज की गर्मी नष्ट हो जाती है।

Chapter 17

6.17.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ राम भुशुण्डोऽसौ न प्रहृष्टो न वक्रधीः । सर्वाङ्गसुन्दरः श्यामः प्रावृषीव पयोधरः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha rāma bhuśuṇḍo'sau na prahṛṣṭo na vakradhīḥ | sarvāṅgasundaraḥ śyāmaḥ prāvṛṣīva payodharaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: Now, Rama, this Bhushunda was neither overjoyed nor crooked in mind. He was beautiful in every limb, dark, like a raincloud in the monsoon.

श्री वसिष्ठ ने कहा: राम, यह भुशुण्ड न तो बहुत खुश था और न ही उसका मन टेढ़ा था। वह हर अंग से सुंदर था, रंग में सांवला, जैसे बरसात के मौसम में कोई बादल।

6.17.2

स्निग्धगम्भीरवचनः स्मितपूर्वाभिभाषणः । करस्थबिल्वफलवत्प्रतोलितजगत्त्रयः ॥ २ ॥

snigdhagambhīravacanaḥ smitapūrvābhibhāṣaṇaḥ | karasthabilvaphalavatpratolitajagattrayaḥ || 2 ||

His words were gentle and deep; he spoke first with a smile. The three worlds were as plain to him as a wood-apple held in the hand.

उसकी बातें कोमल और गंभीर थीं; वह पहले मुस्कुराकर बोलता था। उसके लिए तीनों लोक वैसे ही साफ-साफ दिखते थे जैसे हाथ में रखा हुआ बेल का फल।

6.17.3

तृणवद्दृष्टसकलः प्रमेयीकृतसंसृतिः । लोकाजवं जवीभावे दृष्टज्ञानपरावरः ॥ ३ ॥

tṛṇavaddṛṣṭasakalaḥ prameyīkṛtasaṃsṛtiḥ | lokājavaṃ javībhāve dṛṣṭajñānaparāvaraḥ || 3 ||

He looked at everything as if it were mere grass; for him the whole cycle of worldly existence had become a thing fully known. Even in the swift rush of the world, he held knowledge of both the highest and the lowest.

वह हर चीज़ को तिनके के समान देखता था; उसके लिए यह पूरा संसार-चक्र एक जानी-पहचानी चीज़ बन गया था। संसार की तेज़ भाग-दौड़ के बीच भी उसे सबसे ऊँची और सबसे नीची, दोनों तरह की जानकारी थी।

6.17.4

धीरस्थिरमहाकारो विश्रान्ति गतमन्दरः । परिपूर्णमनाः शुद्धः क्षीरार्णव इवागतः ॥ ४ ॥

dhīrasthiramahākāro viśrānti gatamandaraḥ | paripūrṇamanāḥ śuddhaḥ kṣīrārṇava ivāgataḥ || 4 ||

His form was calm, steady and great, like the Ocean of Milk once Mount Mandara has come to rest in it. His mind was full and pure — he seemed to have arrived like that very ocean of milk.

उसका रूप शांत, स्थिर और महान था, जैसे मंदराचल के थम जाने के बाद क्षीरसागर हो। उसका मन भरा हुआ और शुद्ध था, वह मानो खुद क्षीरसागर बनकर आया हो।

6.17.5

परिविश्रान्तधीः शान्तः परमानन्दघूर्णितः । आविर्भावतिरोभावतज्ज्ञः संसारजन्मनाम् ॥ ५ ॥

pariviśrāntadhīḥ śāntaḥ paramānandaghūrṇitaḥ | āvirbhāvatirobhāvatajjñaḥ saṃsārajanmanām || 5 ||

His mind was completely at rest; he was peaceful, swaying in supreme bliss. He knew how births rise and vanish in this world.

उसका मन पूरी तरह शांत हो चुका था; वह शांत था, परम आनंद में डूबा हुआ था। वह जानता था कि इस संसार में जन्म कैसे उठते हैं और कैसे मिट जाते हैं।

6.17.6

सरभसवदनाभिरामरूपः प्रियमधुरोचितगानहृद्यवाक्यः स्वयमिव नवमाश्रितः शरीरं सकलभयापहरं प्रहर्षयुक्तः ॥ ६ ॥

sarabhasavadanābhirāmarūpaḥ priyamadhurocitagānahṛdyavākyaḥ svayamiva navamāśritaḥ śarīraṃ sakalabhayāpaharaṃ praharṣayuktaḥ || 6 ||

The eagerness in his face made his form delightful; his words were dear, sweet, fit for song, and pleasing to the heart. He seemed to have taken on a new body of his own will, a body that took away all fear, and he was full of joy.

उसके चेहरे की उत्सुकता से उसका रूप और भी मनमोहक लगता था; उसकी बातें प्यारी, मीठी, गीत जैसी और दिल को छू लेने वाली थीं। मानो उसने अपनी इच्छा से एक नया शरीर धारण किया हो, ऐसा शरीर जो हर डर को दूर कर दे, और वह खुशी से भरा हुआ था।

6.17.7

इदममलगिरा समाह शुद्धममृतमनुज्झितसंभ्रमक्रमेण कथयितुमखिलं निजं स्वरूपं मधुपमिव स्तनितेन मुग्धमेघः ॥ ७ ॥

idamamalagirā samāha śuddhamamṛtamanujjhitasaṃbhramakrameṇa kathayitumakhilaṃ nijaṃ svarūpaṃ madhupamiva stanitena mugdhameghaḥ || 7 ||

With a voice as pure as nectar, speaking now in due order without losing his eagerness, he said this, to tell his whole true nature, like an artless cloud calling the bee with its thunder.

अमृत जैसी शुद्ध आवाज़ में, अपनी उत्सुकता खोए बिना, सही क्रम में उसने यह कहा, ताकि अपना पूरा असली रूप बता सके, जैसे कोई भोला-भाला बादल अपनी गरज से भँवरे को बुलाता है।

Chapter 18

6.18.1

भुशुण्ड उवाच । अस्त्यस्मिञ्जगति श्रेष्ठः सर्वनाकनिवासिनाम् । देवदेवो हरो नाम देवदेवाभिवन्दितः ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | astyasmiñjagati śreṣṭhaḥ sarvanākanivāsinām | devadevo haro nāma devadevābhivanditaḥ || 1 ||

Sri Bhushunda said: In this world there is one who is the greatest of all who live in heaven. He is the god of gods, named Hara, and all the gods bow down to him.

श्री भुशुण्ड ने कहा: इस जगत में एक ऐसा है जो स्वर्ग में रहने वालों में सबसे बड़ा है। वह देवों का देव है, जिसका नाम हर है, और सब देवता उसे नमन करते हैं।

6.18.2

षट्पदश्रेणिनयना यस्योच्चस्तबकस्तनी । विलासिनी शरीरार्धे लता चूततरोरिव ॥ २ ॥

ṣaṭpadashreṇinayanā yasyoccastabakastanī | vilāsinī śarīrārdhe latā cūtataroriva || 2 ||

Half of his body is a playful woman. Her eyes are like rows of bees, her breasts are like high clusters, and she clings to him like a vine wound round a mango tree.

उसके शरीर का आधा भाग एक चंचल स्त्री है। उसकी आँखें भौंरों की पंक्ति जैसी हैं, उसके स्तन ऊँचे गुच्छों जैसे हैं, और वह उससे ऐसे लिपटी है जैसे बेल आम के पेड़ से लिपटी हो।

6.18.3

हिमहारसिता यस्य लहरीस्तबकोम्भिता । आवेष्टितजटालूटा गङ्गाकुसुममालिका ॥ ३ ॥

himahārasitā yasya laharīstabakombitā | āveṣṭitajaṭālūṭā gaṅgākusumamālikā || 3 ||

The garland of Ganga flowers winds through his matted hair. It is white like a necklace of snow and thick with the clusters of her waves.

गंगा के फूलों की माला उसकी जटाओं में लिपटी है। वह बर्फ के हार जैसी सफेद है और गंगा की लहरों के गुच्छों से घनी है।

6.18.4

क्षीरसागरसंभूतः प्रसृतामृतनिर्झरः । प्रतिबिम्बकरः श्रीमान्यस्य चूडामणिः शशी ॥ ४ ॥

kṣīrasāgarasaṃbhūtaḥ prasṛtāmṛtanirjharaḥ | pratibimbakaraḥ śrīmānyasya cūḍāmaṇiḥ śaśī || 4 ||

The moon is the jewel on his crest. It was born from the ocean of milk, it pours out a stream of nectar, it casts bright reflections, and it is full of splendor.

चाँद उसके मुकुट का रत्न है। वह क्षीरसागर से जन्मा है, अमृत की धारा बहाता है, चमकीले प्रतिबिंब बनाता है, और शोभा से भरा है।

6.18.5

अनारतशिरश्चन्द्रप्रस्रवेणामृतीकृतः । यस्येन्द्रनीलवत्कालकूटः कण्ठे विभूषणम् ॥ ५ ॥

anārataśiraścandraprasraveṇāmṛtīkṛtaḥ | yasyendranīlavatkālakūṭaḥ kaṇṭhe vibhūṣaṇam || 5 ||

That moon on his head streams down without stopping, and its flow has turned into nectar. On his throat, the kalakuta poison sits like a sapphire, and it is his ornament.

उसके सिर पर वह चाँद बिना रुके बहता रहता है, और उसका बहाव अमृत बन गया है। उसके गले में कालकूट विष नीलम की तरह टिका है, और वही उसका आभूषण है।

6.18.6

धूलिलेखामहावर्तं स्वच्छपावकसंभवम्। परमाणुमयं भस्म यस्य ज्ञानजलं सितम्॥ ६॥

dhūlilekhāmahāvartaṃ svacchapāvakasaṃbhavam | paramāṇumayaṃ bhasma yasya jñānajalaṃ sitam || 6 ||

His ash is spotless. It was born from pure fire, it is made of the finest specks, like a great swirl of lines of dust, and it is the white water of his knowledge.

उसकी भस्म निर्मल है। वह शुद्ध अग्नि से बनी है, बहुत महीन कणों की है, धूल की रेखाओं के बड़े भँवर जैसी है, और वही उसके ज्ञान का सफेद जल है।

6.18.7

निर्मलानि जितेन्दूनि सृष्टानि घटितानि च। यस्यास्थीन्येव रत्नानि देहकान्तमयानि च॥ ७॥

nirmalāni jitendūni sṛṣṭāni ghaṭitāni ca | yasyāsthīnyeva ratnāni dehakāntamayāni ca || 7 ||

His bones themselves are jewels. They are spotless, they outshine the moon, they are crafted and set, and they are full of the glow of his body.

उसकी हड्डियाँ ही रत्न हैं। वे निर्मल हैं, चाँद को भी मात करती हैं, गढ़ी और जड़ी गई हैं, और उसके शरीर की चमक से भरी हैं।

6.18.8

सुधाकरसुधाधीतं नीलनीरदपल्लवम्। तारकाबिन्दुशबलं यस्य चाम्वरमम्बरम्॥ ८॥

sudhākarasudhādhītaṃ nīlanīradapallavam | tārakābinduśabalaṃ yasya cāmparamambaram || 8 ||

The sky is his garment. It has drunk the moon's nectar, it sprouts blue clouds, and it is speckled with drops of stars.

आकाश उसका वस्त्र है। उसने चाँद का अमृत पी लिया है, उसमें नीले बादल फूटते हैं, और वह तारों की बूँदों से चितकबरा है।

6.18.9

भ्रमच्छिवाङ्गनापक्वमहामांसौदनाकुलम्। बहिर्भूतं गृहं यस्य श्मशानं हिमपाण्डुरम्॥ ९॥

bhramacchivāṅganāpakvamahāmāṃsaudanākulam | bahirbhūtaṃ gṛhaṃ yasya śmaśānaṃ himapāṇḍuram || 9 ||

His house is the cremation ground. It lies outside the town, it is white as snow, and it is crowded with wandering she-jackals and great heaps of cooked flesh.

उसका घर श्मशान है। वह गाँव के बाहर है, बर्फ जैसा सफेद है, और घूमती सियारिनों तथा पके हुए मांस के ढेरों से भरा है।

6.18.10

कपालमालाभरणाः पीतरक्तवसासवाः। आन्त्रस्रग्दामवलिता बन्धवो यस्य मातरः॥ १०॥

kapālamālābharaṇāḥ pītaraktavasāsavāḥ | āntrasragdāmavalitā bandhavo yasya mātaraḥ || 10 ||

His kin are the Mothers. They wear garlands of skulls as ornaments, their wine is blood and fat, and they are wound about with garlands and cords of entrails.

उसके सगे-संबंधी माताएँ हैं। वे खोपड़ियों की माला पहनती हैं, उनकी शराब खून और चर्बी है, और वे आँतों की मालाओं और डोरियों से लिपटी हैं।

6.18.11

प्रस्फुरन्मूर्धमणयश्चरन्तो मसृणाङ्गकाः । भुजगा वलया यस्य प्रकचत्कनकत्विषः ॥ ११ ॥

prasphuranmūrdhamṇayaścaranto masṛṇāṅgakāḥ | bhujagā valayā yasya prakacatkanakatviṣaḥ || 11 ||

His bracelets are snakes. They glide about, sleek-bodied, the jewels on their hoods flashing, and they gleam like gold.

उसके कंगन साँप हैं। वे रेंगते हैं, उनका शरीर चिकना है, उनकी फनों के रत्न चमकते हैं, और वे सोने की तरह दमकते हैं।

6.18.13

स्वस्थीकृतजगज्जातस्वव्यापारस्थचेतसः । यदृच्छया करस्पन्दो यस्यासुरपुरक्षयः ॥ १३ ॥

svasthīkṛtajagajjātasvavyāpārasthacetasaḥ | yadṛcchayā karaspando yasyāsurapurakṣayaḥ || 13 ||

His mind stays fixed on his own work of setting the whole world at ease. A single careless movement of his hand destroys the cities of the demons.

उसका मन पूरी दुनिया को सुख देने के अपने काम में लगा रहता है। उसके हाथ की एक अनायास हरकत से दानवों की नगरियाँ नष्ट हो जाती हैं।

6.18.14

एकाग्रमूर्तयः स्नेहरागद्वेषविवर्जिताः । स्वशना यस्य ते शैलाः सरसा अपि नीरसाः ॥ १४ ॥

ekāgramūrtayaḥ sneharāgadveṣavivarjitāḥ | svaśanā yasya te śailāḥ sarasā api nīrasāḥ || 14 ||

Those mountains belong to him. They are fixed in a single form, free of love, passion and hate, they feed themselves, and though full of sap they have no taste.

वे पर्वत उसी के हैं। वे एक ही रूप में स्थिर हैं, स्नेह, राग और द्वेष से रहित हैं, खुद अपना आहार जुटाते हैं, और रस से भरे होकर भी बेस्वाद हैं।

6.18.15

शिरःखुराः खुरकराः करदन्तमुखोदराः । ऋक्षोष्ट्राजाहिवक्त्राश्च प्रमथा यस्य लालकाः ॥ १५ ॥

śiraḥkhurāḥ khurakarāḥ karadantamukhodarāḥ | ṛkṣoṣṭrājāhivaktrāśca pramathā yasya lālakāḥ || 15 ||

His favorite goblins have heads like hooves and hands like hooves. Their hands, teeth, mouths and bellies are those of beasts, and their faces are like bears, camels, goats and snakes.

उसके प्यारे गण-भूत खुरों जैसे सिर और खुरों जैसे हाथ रखते हैं। उनके हाथ, दाँत, मुँह और पेट पशुओं के जैसे हैं, और उनके चेहरे भालू, ऊँट, बकरी और साँप जैसे हैं।

6.18.16

तस्य नेत्रत्रयोद्भासिवदनस्यामलप्रभाः । यथा गणास्तथैवान्याः परिवारो हि मातरः ॥ १६ ॥

tasya netratrayodbhāsivadanasya amalaprabhāḥ | yathā gaṇās tathaivānyāḥ parivāro hi mātaraḥ || 16 ||

His face shines with three eyes, and his attendants are spotless in splendor. Just as they are, so also are the others, the Mothers, who are his retinue.

उसका चेहरा तीन आँखों से चमकता है, और उसके गण निर्मल तेज वाले हैं। जैसे वे हैं, वैसे ही बाकी लोग भी हैं, वे माताएँ, जो उसका परिवार हैं।

6.18.17

नृत्यन्ति मातरस्तस्य पुरो भूतगणानताः । चतुर्दशविधानन्तभूतजातैकभोजनाः ॥ १७ ॥

nṛtyanti mātarastasya puro bhūtagaṇānatāḥ| caturdaśavidhānantabhūtajātaikabhojanāḥ || 17 ||

The Mothers dance before him. Hosts of spirits bow to them, and their only food is the endless creatures born in all fourteen kinds.

माताएँ उसके आगे नाचती हैं। भूत-गणों के समूह उन्हें नमन करते हैं, और उनका एकमात्र भोजन चौदह प्रकार में जन्मे अनगिनत जीव हैं।

6.18.18

खरोष्ट्राकारवदना रक्तमेदोवसासवाः। दिगन्तरविहारिण्यः शरीरावयवस्रजः ॥ १८ ॥

kharoṣṭrākāravadanā raktamedovasāsavāḥ| digantaravihāriṇyaḥ śarīrāvayavasrajaḥ || 18 ||

Their faces are shaped like donkeys and camels. Their wine is blood, fat and marrow, they roam through every direction, and they wear garlands made of body parts.

उनके चेहरे गधों और ऊँटों जैसे बने हैं। उनकी शराब खून, चर्बी और मज्जा है, वे हर दिशा में घूमती हैं, और वे शरीर के अंगों की मालाएँ पहनती हैं।

6.18.19

वसन्तगिरिकूटेषु व्योम्नि लोकान्तरेषु च। अवटेषु श्मशानेषु शरीरेषु च देहिनाम् ॥ १९ ॥

vasantagirikūṭeṣu vyomni lokāntareṣu ca| avaṭeṣu śmaśāneṣu śarīreṣu ca dehinām || 19 ||

They live on mountain peaks, in the sky, in other worlds, in pits, in cremation grounds, and inside the bodies of living beings.

वे पर्वत की चोटियों पर, आकाश में, दूसरे लोकों में, गड्ढों में, श्मशानों में, और जीवित प्राणियों के शरीरों के भीतर रहती हैं।

6.18.20

जया च विजया चैव जयन्ती चापराजिता। सिद्धा रक्तालम्बुसा च उत्पला चेति देवताः ॥ २० ॥

jayā ca vijayā caiva jayantī cāparājitā| siddhā raktālambusā ca utpalā ceti devatāḥ || 20 ||

Jaya, Vijaya, Jayanti, Aparajita, Siddha, Rakta, Alambusa, and Utpala are the goddesses.

जया, विजया, जयंती, अपराजिता, सिद्धा, रक्ता, अलम्बुसा और उत्पला, ये सब देवियाँ हैं।

6.18.21

सर्वासामेव मातॄणामष्टावेतास्तु नायिकाः। आसामनुगतास्त्वन्यास्तासामनुगताः पराः ॥ २१ ॥

sarvāsāmeva mātṝṇāmaṣṭāvetāstu nāyikāḥ| āsāmanugatāstvan'yāstāsāmanugatāḥ parāḥ || 21 ||

Among all the Mother goddesses, these eight alone are the chiefs; other goddesses follow them, and still others follow those.

सारी मातृ-देवियों में से बस यही आठ मुखिया हैं; इनके पीछे और देवियाँ चलती हैं, और उनके पीछे भी और देवियाँ चलती हैं।

6.18.22

तासां मध्ये महार्हाणां मातॄणां मुनिनायक। अलम्बुसेति विख्याता माता मानद विद्यते ॥ २२ ॥

tāsāṃ madhye mahārhāṇāṃ mātṝṇāṃ munināyaka | alambuseti vikhyātā mātā mānada vidyate || 22 ||

O foremost of sages, O giver of honor, among these great mothers there is one mother known as Alambusa.

हे मुनियों में श्रेष्ठ, हे सम्मान देने वाले, इन महान माताओं में एक माता है जिसे अलम्बुसा के नाम से जाना जाता है।

6.18.23

वज्रास्थितुण्डश्चण्डाख्य इन्द्रनीलाचलोपमः। तस्यास्तु वाहनं काको वैष्णव्या गरुडो यथा ॥ २३ ॥

vajrāsthituṇḍaścaṇḍākhya indranīlācalopamaḥ | tasyāstu vāhanaṃ kāko vaiṣṇavyā garuḍo yathā || 23 ||

Her vehicle is a crow named Chanda, its beak hard as a diamond, its body like a mountain of sapphire, just as Garuda is the vehicle of Vaishnavi.

उसका वाहन चण्ड नाम का एक कौआ है, जिसकी चोंच हीरे जैसी कठोर है और शरीर नीलम के पहाड़ जैसा है, ठीक वैसे ही जैसे गरुड़ वैष्णवी का वाहन है।

6.18.24

इत्यष्टैश्वर्ययुक्तास्ता मातरो रौद्रचेष्टिताः । कदाचिन्मिलिता व्योम्नि सर्वाः केनापि हेतुना ॥ २४ ॥

ityaṣṭaiśvaryayuktāstā mātaro raudraceṣṭitāḥ | kadācinmilitā vyomni sarvāḥ kenāpi hetunā || 24 ||

So these eight mothers, endowed with such powers, fierce in their ways, once all came together in the sky for some reason.

इस तरह ये आठों माताएँ, ऐसी शक्तियों से भरी और स्वभाव से उग्र, किसी वजह से एक बार आकाश में सब इकट्ठी हो गईं।

6.18.25

उत्सवं परमं चक्रुः परमार्थप्रकाशकम् । वामस्रोतोगता एतास्तुम्बुरुं रुद्रमाश्रिताः ॥ २५ ॥

utsavaṃ paramaṃ cakruḥ paramārthaprakāśakam | vāmasrotagatā etāstumbaruṃ rudramāśritāḥ || 25 ||

They held a great festival that revealed the highest truth. Following the Vama tradition, they were devoted to Tumburu and Rudra.

उन्होंने एक बड़ा उत्सव मनाया जो परम सत्य को प्रकट करने वाला था। वाम मार्ग की अनुयायी होकर वे तुम्बुरु और रुद्र की भक्त थीं।

6.18.26

पूजयित्वा जगत्पूज्यौ देवौ तुम्बुरुभैरवौ । विचित्रार्थाः कथाश्चक्रुर्मदिरामदतोषिताः ॥ २६ ॥

pūjayitvā jagatpūjyau devau tumbarubhairavau | vicitrārthāḥ kathāścakrurmadorāmadatoṣitāḥ || 26 ||

Having worshipped Tumburu and Bhairava, the two gods worshipped by the whole world, they told wondrous tales, delighted with the intoxication of wine.

समस्त संसार द्वारा पूजे जाने वाले दो देवताओं, तुम्बुरु और भैरव, की पूजा करके, और मदिरा के नशे में मगन होकर, उन्होंने अद्भुत कथाएँ सुनाईं।

6.18.27

अथेयमाययौ तासां कथावसरतः कथा । अस्मानुमापतिर्देवः किं पश्यत्यवहेलया ॥ २७ ॥

atheyamāyayau tāsāṃ kathāvasarataḥ kathā | asmānumāpatirdevaḥ kiṃ paśyatyavahēlayā || 27 ||

Then, in the course of their talk, this question came up: does the god who is Uma's husband look at us with contempt?

फिर उनकी बातचीत के बीच यह सवाल उठा, क्या उमा के पति देवता हमें तिरस्कार की नज़र से देखते हैं?

6.18.28

प्रभावं दर्शयामोऽस्य पुनर्नास्मांस्त्वसौ यथा । दृष्टमात्रमहाशक्तिः करिष्यत्यवधीरणम् ॥ २८ ॥

prabhāvaṃ darśayāmo'sya punarnāsmāṃstvasau yathā | dṛṣṭamātramahāśaktiḥ kariṣyatyavadhīraṇam || 28 ||

Let us show him our power, so that once he has seen our great might, he will never scorn us again.

चलो हम उसे अपनी शक्ति दिखाएँ, ताकि हमारी बड़ी शक्ति देखकर वह फिर कभी हमारा तिरस्कार न करे।

6.18.29

इति निश्चित्य ता देव्यो विवर्णवदनाङ्गिकाम् । उमामेव वशीकृत्य प्रोक्षयामासुरादृताः ॥ २९ ॥

iti niścitya tā devyo vivarṇavadanāṅgikām | umāmeva vaśīkṛtya prokṣayāmāsurādṛtāḥ || 29 ||

Resolving this, those goddesses overpowered Uma herself, until her face and body turned pale, and reverently drenched her.

यह तय करके उन देवियों ने उमा को ही वश में कर लिया, यहाँ तक कि उसका चेहरा और शरीर पीला पड़ गया, और आदरपूर्वक उसे भिगो दिया।

6.18.30

मायया पहृतां भर्तुरङ्गाद्रङ्गमुपागताम्। तामालोलकचां देव्यः शेपुरोदनतां गताम्॥ ३०॥

māyayāpahṛtāṃ bhartur aṅgād raṅgam upāgatām | tām ālolakacāṃ devyaḥ śepurodanatāṃ gatām || 30 ||

She had been drawn away from her husband's side by magic and brought to that gathering; the goddesses cursed her there, her hair in disarray, as she was reduced to weeping.

उसे माया से उसके पति के पास से खींचकर उस सभा में लाया गया था; वहाँ देवियों ने उसे शाप दिया, उसके बाल बिखरे हुए थे, और वह रोने लगी।

6.18.31

पार्वतीप्रोक्षणदिने तस्मिंस्तत्र महोत्सवः। बभूव तासां सर्वासां नृत्यगेयमनोहरः॥ ३१॥

pārvatīprokṣaṇadine tasmiṃstatra mahotsavaḥ | babhūva tāsāṃ sarvāsāṃ nṛtyageyamanoharaḥ || 31 ||

On the day Parvati was sprinkled, a great festival took place there, made beautiful by the dancing and singing of all those goddesses.

पार्वती के छिड़काव के उस दिन, वहाँ एक बड़ा उत्सव हुआ, जो उन सभी देवियों के नाच-गाने से सुंदर बन गया।

6.18.32

अत्यानन्दमनुद्दामरवमेवाम्बरं बभौ। दीर्घावयवविक्षेपविकासिजघनोदराः॥ ३२॥

atyānandamanuddāmaravamevāmbaraṃ babhau | dīrghāvayavavikṣepavikāsijaghanodarāḥ || 32 ||

The sky itself rang with great joy and unrestrained noise; they flung out their long limbs, their hips and bellies flashing as they danced.

आकाश स्वयं अपार आनंद और बेरोकटोक शोर से गूँज उठा; वे अपने लंबे अंग उछालती हुई नाचती रहीं, जिससे उनके कूल्हे और पेट झलक उठे।

6.18.33

अन्या जहसुरुद्दामताल क्ष्वेडाघनारवम्। लसदङ्गविकारं च ध्वनत्सगिरिकाननाः॥ ३३॥

anyā jahasuruddāmatālakṣveḍāghanāravam | lasadaṅgavikāraṃ ca dhvanatsagirikānanāḥ || 33 ||

Others laughed loudly, with unrestrained clapping and shouting, their bodies shaking and quivering, until the mountains and forests echoed with the sound.

दूसरी देवियाँ ज़ोर से हँसीं, खुलकर ताली बजाती और चिल्लाती हुई; उनके शरीर काँपते और थरथराते रहे, यहाँ तक कि पहाड़ और जंगल भी उस आवाज़ से गूँज उठे।

6.18.34

अन्या जगुर्ध्वनच्छैलग्रहमापानतोषिताः। वारीव रववद्रञ्जज्जगन्मण्डलकोटरे॥ ३४॥

anyā jagurdhvanacchailagrahamāpānatōṣitāḥ | vārīva ravavadrñjajjaganmaṇḍalakōṭare || 34 ||

Others sang, delighted with their drinking, filling the mountains with echoes; their sound spread like the sound of water, filling the hollow of the whole world.

दूसरी देवियाँ अपनी मदिरा से तृप्त होकर गाने लगीं, जिससे पहाड़ गूँज उठे; उनकी आवाज़ पानी की आवाज़ की तरह फैलकर पूरी दुनिया के खोखले हिस्से में भर गई।

6.18.35

अन्याः पानं पपुः पुष्टचर्चिताङ्गशिरःखुरम् । लीलाघुरघुरारावरणदाकाशकोटरे ॥ ३५ ॥

anyāḥ pānaṃ papuḥ puṣṭacarcitāṅgaśiraḥkhuram | līlāghuraghurārāvaraṇadākāśakōṭare || 35 ||

Others drank their drink, rich and smeared over limb, head, and hoof, its playful gurgling sound echoing in the hollow of the sky.

दूसरी देवियाँ अपना पेय पीती रहीं, जो गाढ़ा था और अंग, सिर और खुर पर लिपटा हुआ था; उसकी खिलवाड़ भरी घुर-घुर ध्वनि आकाश के खोखले हिस्से में गूँजती रही।

6.18.36

पपुरुदगुरथोच्चैः सत्वरा जग्मुरूचुर्जहसुरपुरहौषुः पेतुरुच्चैर्ववल्गुः । ननृतुरनिशमादुः स्वादु मांसं च देव्यस्त्रिभुवनमपवृत्तं चक्ररुन्मत्तवृत्ताः ॥ ३६ ॥

papurudagurathoccaiḥ satvarā jagmurūcurjahasurapurahauṣuḥ peturuccairvavalguḥ | nanṛturaniśamāduḥ svādu māṃsaṃ ca devyastribhuvanamapavṛttaṃ cakrarunmattavṛttāḥ || 36 ||

The goddesses, behaving like the mad and the drunk, drank, sang out, rushed about, spoke, laughed, shouted, fell, leapt about noisily, danced without stopping, and ate sweet meat, and so they threw the three worlds into turmoil.

वे देवियाँ, पागलों और नशे में डूबे लोगों जैसा बर्ताव करती हुईं, पीती रहीं, गातीं, इधर-उधर दौड़तीं, बोलतीं, हँसतीं, चिल्लातीं, गिरतीं, ज़ोर-ज़ोर से उछलतीं, बिना रुके नाचतीं और स्वादिष्ट मांस खाती रहीं, और इस तरह उन्होंने तीनों लोकों को उलट-पुलट कर दिया।

Chapter 19

6.19.1

भुशुण्ड उवाच । इत्युत्सवे वर्तमाने तासां वाहास्त उत्तमाः । तथैव मत्ता जहसुर्ननृतुः पपुरप्यसृक् ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | ityutsave vartamāne tāsāṃ vāhāsta uttamāḥ | tathaiva mattā jahasurnanṛtuḥ papurapyasṛk ||1||

Bhushunda said: While the festival was going on like this, their finest mounts, just as drunk, laughed, danced, and even drank blood.

भुशुण्ड ने कहा: जब उत्सव इसी तरह चल रहा था, तब उनकी सबसे अच्छी सवारियाँ भी उसी तरह नशे में धुत होकर हँसीं, नाचीं और खून भी पी गईं।

6.19.2

तत्रैकत्रासवोन्मत्ताः काश्चिन्ननृनुरम्बरे । रथहंस्यः स्थिता ब्राहम्यः काकश्चालम्बुसारथः ॥ २ ॥

tatraikatrāsavonmattāḥ kāścinnanṛnurambare | rathahaṃsyaḥ sthitā brāhamyaḥ kākaścālambusārathaḥ || 2 ||

There, some, wild with liquor, danced together in the sky. Brahmi's chariot-swans stood by, and the crow was the charioteer of Alambusa.

वहाँ कुछ शराब में मस्त होकर आकाश में साथ-साथ नाचने लगीं। ब्राह्मी के रथ खींचने वाली हंसिनियाँ वहीं खड़ी रहीं, और कौआ आलम्बुसा का सारथी था।

6.19.3

नृत्यन्तीनां च हंसीनां पिबन्तीनामथासवम् । तले चाब्धितटानां तु रतिः सम्यगजायत ॥ ३ ॥

nṛtyantīnāṃ ca haṃsīnāṃ pibantīnāmathāsavam | tale cābdhitataṭānāṃ tu ratiḥ samyagajāyata || 3 ||

The swans danced and drank liquor, and at the foot of the ocean's shore they gave themselves fully to lovemaking.

वे हंसिनियाँ नाचती और शराब पीती रहीं, और समुद्र के किनारे की तलहटी में वे पूरी तरह प्रेम-क्रीड़ा में डूब गईं।

6.19.4

संजातरतयो मत्ताः सर्वा हंस्य क्रमेण ताः । रेमिरे सह काकेनाप्यथ मत्तास्तदा किल ॥ ४ ॥

saṃjātaratayo mattāḥ sarvā haṃsya kramena tāḥ | remire saha kākenāpyatha mattāstadā kila || 4 ||

All those swans, drunk and full of desire, made love one by one with the drunken crow too, indeed.

वे सभी हंसिनियाँ नशे में डूबी और वासना से भरी हुई थीं; वे एक-एक करके उस नशे में डूबे कौए के साथ भी रमण करने लगीं।

6.19.5

सप्तानां कुलहंसीनां दयितो वायसस्त्वसो । क्रमेणारमतैकत्र यावदन्योन्यमीप्सितम् ॥ ५ ॥

saptānāṃ kulahaṃsīnāṃ dayito vāyasastvaso | krameṇāramataikatra yāvadanyonyamīpsitam || 5 ||

That crow was the lover of the seven noble swans; he made love with them one by one, until each one's desire for the other was fulfilled.

वह कौआ उन सात कुलीन हंसिनियों का प्रियतम था; उसने एक-एक करके उन सबके साथ प्रेम किया, जब तक हर एक की चाहत पूरी नहीं हो गई।

6.19.6

अथ ता गर्भधारिण्यो बभूवुरतितोषिताः । देव्यश्च कृतनृत्यास्ताः सुप्रशान्तमथाययुः ॥ ६ ॥

atha tā garbhadhāriṇyo babhūvuratitoṣitāḥ | devyaśca kṛtanṛtyāstāḥ suprasāntamathāyayuḥ || 6 ||

Then they became pregnant, greatly pleased. And the goddesses, their dance now done, went then to a very peaceful place.

फिर वे गर्भवती हो गईं और बहुत खुश हुईं। और वे देवियाँ, जिनका नाचना अब खत्म हो चुका था, फिर एक बहुत शांत जगह चली गईं।

6.19.7

ददुरोदनतां यातमीश्वराय प्रियामुमाम् । भोजनाय महामायां देव्यस्ताः शूलपाणये ॥ ७ ॥

dadurodanatāṃ yātamīśvarāya priyāmumām | bhojanāya mahāmāyāṃ devyastāḥ śūlapāṇaye || 7 ||

The goddesses gave Uma, his beloved, the great Maya who had turned into food, to the Lord, the trident-bearer, for his meal.

उन देवियों ने उमा को, जो उनकी प्रिया और महामाया थीं और भोजन बन चुकी थीं, भगवान त्रिशूलधारी को खाने के लिए दे दिया।

6.19.8

प्रिया मे भोजने दत्तेत्येवं च शशिशेखरः । बुद्ध्वा बभूव रुषितो यदा मातृगणं प्रति ॥ ८ ॥

priyā me bhojane dattetyevaṃ ca śaśiśekharaḥ | buddhvā babhūva ruṣito yadā mātṛgaṇaṃ prati || 8 ||

Realizing that his beloved had been given as food, the one who wears the moon on his head grew angry at the mother-goddesses.

यह जानकर कि उनकी प्रिया को खाने के लिए दे दिया गया है, सिर पर चाँद धारण करने वाले वह देवता माता-देवियों पर बहुत क्रोधित हो गए।

6.19.9

तदा तास्तां समुत्पाद्य स्वाङ्गदानेन वै पुनः । ददुर्भूयो विवाहेन पार्वतीमिन्दुमौलये ॥ ९ ॥

tadā tāstāṃ samutpādya svāṅgadānena vai punaḥ | dadurbhūyo vivāhena pārvatīmindumaulaye || 9 ||

Then they, having made her again by giving parts of their own bodies, once more gave Parvati in marriage to the one who wears the moon on his head.

फिर उन्होंने अपने ही शरीर के अंश देकर उसे दोबारा बनाया, और पार्वती को फिर से चाँद सिर पर धारण करने वाले उन्हीं से विवाह में सौंप दिया।

6.19.10

ततो देव्यो हरश्चैव परिवारस्तथैतयोः । सर्वे संतुष्टमनसः स्वां स्वामुपययुर्दिशम् ॥ १० ॥

tato devyo haraścaiva parivārastathaitayoḥ | sarve saṃtuṣṭamanasaḥ svāṃ svāmupayayurdishaṃ || 10 ||

Then the goddesses, and Hara himself, and the group that went with both of them — all of them, with happy minds, went each to their own direction.

फिर देवियाँ, और स्वयं हर, और उन दोनों के साथ चलने वाला दल — ये सब मन में खुश होकर अपनी-अपनी दिशा में चले गए।

6.19.11

अन्तर्वत्न्यो बभूवुस्ता ब्राह्म्यो हंस्यो मुनीश्वर । वृत्तान्तं कथयामासुर्ब्राह्म्या देव्या यथास्थितम् ॥ ११ ॥

antarvatnyo babhūvustā brāhmyo haṃsyo munīśvara | vṛttāntaṃ kathayāmāsurbrāhmyā devyā yathāsthitam || 11 ||

Brahmi's swans became pregnant, O lord of sages; they told the goddess Brahmi what had happened, exactly as it was.

हे मुनिश्रेष्ठ, ब्राह्मी की हंसिनियाँ गर्भवती हो गईं; उन्होंने देवी ब्राह्मी को जो कुछ हुआ था, ठीक वैसा ही बता दिया।

6.19.12

ब्राह्म्युवाच । हे वत्स्यः सांप्रतं वत्सवत्यो मे रथकर्मणि । न समर्था भवन्त्यो हि स्वैरं चरत सांप्रतम् ॥ १२ ॥

brāhmyuvāca | he vatsyaḥ sāṃprataṃ vatsavatyo me rathakarmaṇi | na samarthā bhavantyo hi svairaṃ carata sāṃpratam || 12 ||

Brahmi said: O dear daughters, now that you carry young, you are not fit for chariot-work; roam freely now.

ब्राह्मी ने कहा: हे प्रिय बेटियो, अब जब तुम गर्भ धारण किए हुए हो, तो तुम रथ खींचने के काम के लायक नहीं रहीं; अब जहाँ चाहो वहाँ स्वतंत्र होकर घूमो।

6.19.13

इति गर्भालसा हंसीरुक्त्वा देवी दयापरा । निर्विकल्पसमाधाने ब्राह्मी तस्थौ यथासुखम् ॥ १३ ॥

iti garbhālasā haṃsīruktvā devī dayāparā | nirvikalpasamādhāne brāhmī tasthau yathāsukham || 13 ||

Having said this to the swans, now heavy and slow with pregnancy, the kind goddess Brahmi stayed on happily, deep in meditation beyond all thought.

गर्भ के भार से थकी और सुस्त हो चुकी उन हंसिनियों से यह कहकर, दयालु देवी ब्राह्मी खुशी-खुशी उस गहरे, विचार-रहित ध्यान में लीन रहीं।

6.19.14

अजनाभिसरोजान्तवैरिञ्चकमलाकरे । गर्भालसा विचेरुस्ता राजहंस्यो मुनीश्वर ॥ १४ ॥

ajanābhisarojaantavairiñcakamalākare | garbhālasā vicerustā rājahaṃsyo munīśvara || 14 ||

In Brahma's lotus pond, inside the lotus that grew from the navel of the unborn one, the royal swans, heavy with young, wandered about, O lord of sages.

हे मुनिश्रेष्ठ, ब्रह्मा के उस कमल-सरोवर में, उस कमल के भीतर जो अजन्मे की नाभि से उगा था, वे राजहंसिनियाँ गर्भ के भार से लदी हुई घूमती रहीं।

6.19.15

एवं विपक्वगर्भास्ता नाभीकमलपल्लवे । सुवते स्म मृदून्यण्डान्यथ वल्ल्य इवाङ्कुरान् ॥ १५ ॥

evaṃ vipakvagarbhāstā nābhīkamalapallave | suvate sma mṛdūnyaṇḍānyatha vallya ivāṅkurān || 15 ||

Thus, with their pregnancy fully ripened, they laid soft eggs on the petal of the navel-lotus, like creepers putting out shoots.

इस तरह, जब उनका गर्भ पूरी तरह पक गया, तो उन्होंने नाभि-कमल की पंखुड़ी पर नरम अंडे दिए, जैसे बेलें अंकुर फोड़ती हैं।

6.19.16

तानि कालं समासाद्य ततोऽण्डान्येकविंशतिः । गर्भाक्रान्त्या द्विधा जग्मुर्ब्रह्माण्डानीव सारवत् ॥ १६ ॥

tāni kālaṃ samāsādya tato'ṇḍānyekaviṃśatiḥ | garbhākrāntyā dvividhā jagmurbrahmāṇḍānīva sāravat || 16 ||

When their time came, those twenty-one eggs then split in two by the force of the womb, whole within, like cosmic eggs.

जब उनका समय आया, तो वे इक्कीस अंडे गर्भ के दबाव से दो-दो हिस्सों में फूट गए, अंदर से पूरी तरह भरे हुए, जैसे ब्रह्मांड के अंडे होते हैं।

6.19.17

अण्डेभ्यस्तेभ्य एवं हि जाता वयमिमे मुने । भ्रातरश्चण्डतनया वायसा एकविंशतिः ॥ १७ ॥

aṇḍebhyastebhya evaṃ hi jātā vayamime mune | bhrātaraścaṇḍatanayā vāyasā ekaviṃśatiḥ || 17 ||

From those eggs, this is how we were born, O sage — these brothers, twenty-one crows, sons of Chanda.

उन्हीं अंडों से, हे मुनि, हम इस तरह पैदा हुए — ये भाई, इक्कीस कौए, चण्ड के पुत्र।

6.19.18

ते संजाता गता वृद्धिं तस्मिन्कमलपल्लवे । संजातपक्षाः संपन्ना गगनोड्डयने क्षमाः ॥ १८ ॥

te saṃjātā gatā vṛddhiṃ tasminkamalapallave | saṃjātapakṣāḥ saṃpannā gaganōḍḍayane kṣamāḥ || 18 ||

Once born, we grew up on that lotus petal; once our wings had grown, we became able to fly in the sky.

पैदा होने के बाद हम उसी कमल की पंखुड़ी पर बड़े हुए; पंख उगने के बाद हम आकाश में उड़ने के काबिल हो गए।

6.19.19

मातृभिः सह हंसीभिर्ब्राह्मी भगवती ततः । चिरमाराधिता सम्यक्समाधिविरता सती ॥ १९ ॥

mātṛbhiḥ saha haṃsībhirbrāhmī bhagavatī tataḥ | ciramārādhitā samyaksamādhi-viratā satī || 19 ||

Then the divine Brahmi, who was true and good, came out of her meditation, after being worshipped for a long time by the mother-goddesses together with the swans.

फिर सच्ची और भली देवी ब्राह्मी, माता-देवियों और हंसिनियों द्वारा लंबे समय तक पूजे जाने के बाद, अपने ध्यान से बाहर आ गई।

6.19.20

प्रसादपरया काले भगवत्या ततः स्वयम् । तथाङ्गानुगृहीता स्मो येन मुक्ता वयं स्थिताः ॥ २० ॥

prasādaparayā kāle bhagavatyā tataḥ svayam | tathāṅgānugṛhītā smo yena muktā vayaṃ sthitāḥ || 20 ||

Then, in time, the goddess, full of grace, herself blessed our bodies, and by this we came to remain free.

फिर, समय आने पर, वह दयालु देवी स्वयं हमारे शरीर पर कृपा कर बैठीं, और इसी से हम मुक्त होकर रह गए।

6.19.21

संशान्तमनसः शान्ता एकान्ते ध्यानसंस्थितौ । तिष्ठाम इति निश्चित्य पितुः पार्श्वे वयं गताः ॥ २१ ॥

saṃśāntamanasaḥ śāntā ekānte dhyānasaṁsthitau | tiṣṭhāma iti niścitya pituḥ pārśve vayaṃ gatāḥ || 21 ||

With our minds fully calmed and at peace, we decided to stay settled alone in meditation, and went to our father's side.

हमारा मन पूरी तरह शांत हो चुका था; हमने तय किया कि हम अकेले में ध्यान में स्थिर रहेंगे, और अपने पिता के पास चले गए।

6.19.22

आलिङ्गितास्ततः पित्रा पूजितालम्बुसा वयम् । तया दृष्टाः प्रसादेन संस्थितास्तत्र संयताः ॥ २२ ॥

āliṅgitāstatas pitrā pūjitālambusā vayam | tayā dṛṣṭāḥ prasādena saṃsthitāstatra saṃyatāḥ || 22 ||

Then, having honored Alambusa, we were hugged by our father; she looked at us with favor, and we stayed there, calm and controlled.

फिर, आलम्बुसा का सम्मान करने के बाद, हमारे पिता ने हमें गले लगाया; उसने हमें कृपा भरी नज़र से देखा, और हम वहाँ शांत और संयमित होकर रहने लगे।

6.19.23

चण्ड उवाच । पुत्राः कच्चिदपर्यन्तवासनातन्तुगुण्ठितात् । भवन्तो निर्गता नूनमस्मात्संसारजालकात् ॥ २३ ॥

caṇḍa uvāca | putrāḥ kaccidaparyantavāsanātantuguṇṭhitāt | bhavanto nirgatā nūnamasmātsaṃsārajālakāt || 23 ||

Chanda said: Sons, have you truly come out from this net of rebirth, wrapped as it is in endless threads of desire?

चण्ड ने कहा: बेटो, क्या तुम सचमुच इस जन्म-मरण के जाल से बाहर निकल आए हो, जो वासना के अनगिनत धागों में लिपटा हुआ है?

6.19.24

नो चेद्वयं भगवतीं तदिमां भृत्यवत्सलाम् । प्रार्थयामो यथा यूयं भवथ ज्ञानपारगाः ॥ २४ ॥

no cedvayaṃ bhagavatīṃ tadimāṃ bhṛtyavatsalām | prārthayāmo yathā yūyaṃ bhavatha jñānapāragāḥ || 24 ||

If not, we will pray to this goddess, who loves her servants, so that you may cross over to the very end of knowledge.

अगर नहीं, तो हम इस देवी से, जो अपने सेवकों से प्रेम करती हैं, प्रार्थना करेंगे कि तुम ज्ञान की पूरी सीमा तक पहुँच जाओ।

6.19.25

काका ऊचुः । तात ज्ञातमलं ज्ञेयं ब्राह्म्या देव्याः प्रसादतः । किंत्वेकान्तस्थितेः स्थानमभिवाञ्छाम उत्तमम् ॥ २५ ॥

kākā ūcuḥ | tāta jñātamalaṃ jñeyaṃ brāhmyā devyāḥ prasādataḥ | kiṃtvekāntasthiteḥ sthānamabhivāñchāma uttamam || 25 ||

The crows said: Father, enough has been known — all there is to know — by the grace of the goddess Brahmi; but we wish for an excellent place to live alone.

कौओं ने कहा: पिताजी, देवी ब्राह्मी की कृपा से जो कुछ जानने योग्य था, वह सब जान लिया गया है; लेकिन हम अकेले रहने के लिए एक बेहतरीन जगह चाहते हैं।

6.19.26

चण्ड उवाच । सर्वरत्नगणाधारः समस्तसुरसंश्रयः । अस्ति ह्येव महोत्सेधो मेरुर्नाम महीधरः ॥ २६ ॥

caṇḍa uvāca | sarvaratnagaṇādhāraḥ samastasurasaṃśrayaḥ | asti hyeva mahotse dho merurnāma mahīdharaḥ || 26 ||

Chanda said: There is a very tall mountain named Meru, the base of all the gems, the shelter of all the gods.

चण्ड ने कहा: मेरु नाम का एक बहुत ऊँचा पर्वत है, जो सब रत्नों का आधार है और सब देवताओं का आश्रय है।

6.19.27

लसच्चन्द्रार्कदीपस्य भूतवृन्दकलत्रिणः । ब्रह्माण्डमण्डपस्यान्तः स्तम्भः कनकनिर्मितः ॥ २७ ॥

lasaccandrārkadīpasya bhūtavṛndakalatriṇaḥ | brahmāṇḍamaṇḍapasyāntaḥ stambhaḥ kanakanirmitaḥ || 27 ||

Its lamps are the shining sun and moon, its companions are crowds of living beings; it is the golden pillar standing inside the hall of the whole universe.

उसके दीये चमकते सूरज और चाँद हैं, उसके साथी अनगिनत जीव हैं; वह पूरे ब्रह्माण्ड के मंडप के भीतर खड़ा सोने का खंभा है।

6.19.28

सौवर्णचन्द्रपीठाढ्यो रत्नाढ्यशिखराङ्गुलिः । ध्वनद्द्वीपाब्धिवलयो भुवेवोन्नमितो भुजः ॥ २८ ॥

sauvarṇacandrapīṭhāḍhyo ratnāḍhyaśikharāṅguliḥ | dhvanaddvīpābdhivalayo bhuvevonnamito bhujaḥ || 28 ||

Rich with a golden seat shaped like the moon, its peak like a finger studded with gems, ringed by roaring islands and oceans, it stands like an arm lifted up from the earth.

चाँद जैसे सोने के आसन से भरा, रत्नों-जड़ी चोटी जिसकी उँगली है, गरजते हुए द्वीपों और समुद्रों के घेरे से घिरा, वह धरती से ऊपर उठी हुई भुजा जैसा खड़ा है।

6.19.29

वृतः कुलाद्रिसामन्तैर्जम्बूद्वीपासने स्थितः । राजा चन्द्रार्कनयने भ्रमयञ्छैलसंसदि ॥ २९ ॥

vṛtaḥ kulādrisāmantairjambūdvīpāsane sthitaḥ | rājā candrārkanayane bhramayañchailasaṃsadi || 29 ||

Ringed by the great mountains standing round it like vassals, seated on the throne of Jambudvipa, it is a king whose eyes are the sun and moon, turning them in the gathering of the mountains.

बड़े-बड़े पर्वत सेवकों की तरह उसके चारों ओर खड़े हैं, वह जम्बूद्वीप के सिंहासन पर बैठा है; वह एक राजा है जिसकी आँखें सूरज और चाँद हैं, और पर्वतों की सभा में वह उन्हें घुमाता है।

6.19.30

तारौघमालतीमाल्यो दिग्दशैकाम्बराम्बरः । नागजातिद्वयस्थात्मा नाकनायकभूषणः ॥ ३० ॥

tāraughamālatīmālyo digdaśaikāmbarāmbaraḥ | nāgajātidvayasthātmā nākanāyakabhūṣaṇaḥ || 30 ||

Its garland is a flood of stars like a string of jasmine, the ten directions are its one robe, its body rests among two kinds of serpents, and it is adorned by the lord of heaven.

उसकी माला तारों की भरमार से बनी चमेली की माला जैसी है, दसों दिशाएँ उसका एक ही वस्त्र हैं, उसका शरीर सर्पों की दो जातियों के बीच टिका है, और उसे स्वर्ग के स्वामी से सजाया गया है।

6.19.31

दिगङ्गनाभिरभितो रम्याभिः पुरभूषणैः । एष निस्यन्दिभिः शीतैर्वीजितो घनचामरैः ॥ ३१ ॥

digaṅganābhirabhito ramyābhiḥ purabhūṣaṇaiḥ| eṣa nisyandibhiḥ śītairvījito ghanacāmaraiḥ || 31 ||

This mountain is surrounded on every side by the lovely maidens of the directions, who are the beauty of their cities, and it is fanned by cool, flowing, thick fly-whisks.

यह पर्वत चारों ओर से दिशाओं की सुंदर स्त्रियों से घिरा है, जो अपने नगरों की शोभा हैं, और उसे ठंडी, बहती, घनी चँवरों से हवा दी जाती है।

6.19.32

षोडशास्य सहस्राणि योजनानामधः क्षितौ । स्थिताः पादाः प्रपूज्यन्ते नागासुरमहोरगैः ॥ ३२ ॥

ṣoḍaśāsya sahasrāṇi yojanānāmadhaḥ kṣitau| sthitāḥ pādāḥ prapūjyante nāgāsuramahoragaiḥ || 32 ||

Sixteen thousand yojanas down inside the earth stand its feet, and there serpents, demons, and great serpents worship them.

धरती के भीतर सोलह हज़ार योजन नीचे उसके पैर टिके हैं, और वहाँ नाग, असुर और महानाग उनकी पूजा करते हैं।

6.19.33

अशीतिश्च सहस्राणि देहोऽस्यार्केन्दुलोचनः। पूज्यते नाकसदने सुरगन्धर्वकिंनरैः ॥ ३३ ॥

aśītiśca sahasrāṇi deho'syārkendulocanaḥ| pūjyate nākasadane suragandharvakiṃnaraiḥ || 33 ||

Its body is eighty thousand yojanas, its eyes are the sun and moon, and in the seat of heaven, gods, gandharvas, and kinnaras worship it.

उसका शरीर अस्सी हज़ार योजन का है, उसकी आँखें सूरज और चाँद हैं, और स्वर्ग के धाम में देवता, गंधर्व और किन्नर उसकी पूजा करते हैं।

6.19.34

चतुर्दशविधान्येनं गृहस्थमिव बान्धवाः। उपजीवन्ति भूतानि मिथो दृष्टपुरास्पदम् ॥ ३४ ॥

caturdaśavidhānyenaṃ gṛhasthamiva bāndhavāḥ| upajīvanti bhūtāni mitho dṛṣṭapurāspadam || 34 ||

The fourteen kinds of beings depend on it for their living, as kinsmen depend on a householder, and among themselves they see it as their age-old home.

चौदह प्रकार के प्राणी उस पर वैसे ही निर्भर रहते हैं जैसे रिश्तेदार किसी गृहस्थ पर निर्भर रहते हैं, और वे आपस में उसे अपना पुराना घर मानते हैं।

6.19.35

अस्य त्वीशानदिग्भागे पद्मरागमयं बृहत्। विद्यते शृङ्गमपरो दिवाकर इवोदितः ॥ ३५ ॥

asya tvīśānadigbhāge padmarāgamayaṃ bṛhat| vidyate śṛṅgamaparo divākara ivoditaḥ || 35 ||

In its northeast quarter there is a great peak made of ruby, rising like a second sun.

उसकी ईशान दिशा में माणिक्य का बना एक बड़ा शिखर है, जो मानो एक और उगता हुआ सूरज हो।

6.19.36

अस्यास्ति पृष्ठे भूतौघवृतः कल्पतरुर्महान् जगतः शिखरादर्शे प्रतिबिम्बमिव स्थितः ॥ ३६ ॥

asyāsti pṛṣṭhe bhūtaughavṛtaḥ kalpatarurmahān jagataḥ śikharādarśe pratibimbamiva sthitaḥ || 36 ||

On its summit stands the great wish-granting tree, surrounded by crowds of living beings, standing on the peak of the world like a reflection in a mirror.

उसकी चोटी पर वह महान कल्पवृक्ष खड़ा है, जो अनगिनत जीवों से घिरा है, और वह संसार की चोटी पर मानो दर्पण में किसी प्रतिबिंब जैसा खड़ा है।

6.19.37

तस्यास्ति दक्षिणस्कन्धे शाखा कनकपल्लवा रत्नस्तबकनीरन्ध्रा चन्द्रबिम्बोल्लसत्फला ॥ ३७ ॥

tasyāsti dakṣiṇaskandhe śākhā kanakapallavā ratnastabakanīrandhrā candrabimbollasatphalā || 37 ||

On its southern branch is a bough with golden shoots, packed close with clusters of gems, its fruits shining like the disc of the moon.

उसकी दक्षिणी शाखा में सोने की कोंपलों वाली एक डाल है, जो रत्नों के गुच्छों से भरी हुई है, और जिसके फल चाँद की तरह चमकते हैं।

6.19.38

तत्र पूर्वं मया नीडं कृतमासीत्स्फुरन्मणि देव्या ध्याननिषण्णायां यस्मिन्किल रमे सुताः ॥ ३८ ॥

tatra pūrvaṃ mayā nīḍaṃ kṛtamāsītsphuranmaṇi devyā dhyānaniṣaṇṇāyāṃ yasmin kila rame sutāḥ || 38 ||

O children, there I once built a nest that gleamed with jewels, while the goddess sat there in meditation, and in it I find my joy.

हे बच्चो, वहाँ मैंने पहले एक घोंसला बनाया था जो रत्नों से चमकता था, जब देवी वहाँ ध्यान में बैठी थीं, और उसी में मुझे आनंद मिलता है।

6.19.39

रत्नपुष्पदलच्छन्नं रसायनफलान्वितम् चिन्तामणिशलाकाभिर्विहितालिन्दसंस्थिति ॥ ३९ ॥

ratnapuṣpadalacchannaṃ rasāyanaphalānvitam cintāmaṇiśalākābhirvihitālindasaṃsthiti || 39 ||

It was covered with petals of jewelled flowers, filled with fruits of rejuvenating elixir, and its terrace was made with rods of wish-granting gems.

वह रत्न-फूलों की पंखुड़ियों से ढका था, रसायन के फलों से भरा था, और उसका आँगन इच्छा पूरी करने वाले मणियों की छड़ों से बना था।

6.19.40

बुद्धिपूर्वसमाचारैः संपूर्णं काकपुत्रकैः शीतलाभ्यन्तरं हृद्यं पूरितं कुसुमोत्करैः ॥ ४० ॥

buddhipūrvasamācāraiḥ saṃpūrṇaṃ kākaputrakaiḥ śītalābhyantaraṃ hṛdyaṃ pūritaṃ kusumotkaraiḥ || 40 ||

It was full of young crows of careful, thoughtful ways, cool inside and pleasant, and filled with heaps of flowers.

वह सोच-समझकर आचरण करने वाले काक-शिशुओं से भरा था, भीतर से ठंडा और मन को भाने वाला था, और फूलों के ढेरों से भरा था।

6.19.41

तद्गच्छत सुता नीडं दुर्गं नाकवतामपि । भोगं मोक्षं च तत्रस्था निर्विघ्नमलमाप्स्यथ ॥ ४१ ॥

tadgacchata sutā nīḍaṃ durgam nākavatāmapi | bhogaṃ mokṣaṃ ca tatrasthā nirvighramalamāpsyatha || 41 ||

So go, children, to that nest, which even those who live in heaven cannot easily reach; staying there you will fully win both enjoyment and freedom, with nothing to stop you.

इसलिए, हे बच्चो, उस घोंसले में जाओ, जहाँ स्वर्ग में रहने वाले भी आसानी से नहीं पहुँच पाते; वहाँ रहकर तुम बिना किसी रुकावट के भोग और मुक्ति दोनों पूरी तरह पा लोगे।

6.19.42

इत्युक्त्वास्मान्पिता तत्र चुचुम्बाभ्यालिलिङ्ग च । ददौ देव्या यदानीतमस्मभ्यं च तदामिषम् ॥ ४२ ॥

ityuktvāsmānpitā tatra cucumbābhyāliliṅga ca | dadau devyā yadānītamasmabhyaṃ ca tadāmiṣam || 42 ||

Having said this, our father kissed us there and held us close, and gave us the food that the goddess had brought.

यह कहकर हमारे पिता ने वहाँ हमें चूमा और हमें गले लगाया, और देवी द्वारा लाया गया वह भोजन हमें दिया।

6.19.43

तद्भुक्त्वा चरणौ देव्याः पितुश्चैवाभिवाद्य च । विन्ध्यकच्छाद्वयं तस्मात्स्थानादालम्बुसात्प्लुताः ॥ ४३ ॥

tadbhuktvā caraṇau devyāḥ pituscaivābhivādya ca | vindhyakacchādvayaṃ tasmātsthānādālambusātplutāḥ || 43 ||

Having eaten that, and having bowed at the feet of the goddess and of our father, the two of us flew off from that abode of Alambusa in the Vindhya lowlands.

उसे खाकर, और देवी तथा अपने पिता के चरणों में प्रणाम करके, हम दोनों विन्ध्य की तराई में अलम्बुसा के उस धाम से उड़ चले।

6.19.44

क्रमेणाकाशमुल्लङ्घ्य निर्गत्याम्बुदकोटरैः । पवनस्कन्धमासाद्य वन्दितव्योमचारिणः ॥ ४४ ॥

krameṇākāśamullaṅghya nirgatyaambudakoṭaraiḥ | pavanasakndhamāsādya vanditavyomacāriṇaḥ || 44 ||

Gradually crossing the sky, coming out from the hollows of the clouds, and reaching the region of the wind, we saluted those who wander the sky.

धीरे-धीरे आकाश को पार करते हुए, बादलों की गुफाओं से बाहर निकलकर, और वायु के क्षेत्र में पहुँचकर, हमने आकाश में विचरने वालों को प्रणाम किया।

6.19.45

परिहृत्य दिनाधीशं लोकान्तरपुरं गताः । स्वर्गमुल्लङ्घ्य याताः स्मो ब्रह्मलोकं मुनीश्वर ॥ ४५ ॥

parihṛtya dinādhīśaṃ lokāntarapuraṃ gatāḥ | svargamullaṅghya yātāḥ smo brahmalokaṃ munīśvara || 45 ||

Avoiding the lord of the day, we went to the city of another world; and crossing beyond heaven, O lord of sages, we reached the world of Brahma.

दिन के स्वामी से बचते हुए, हम दूसरे लोक के नगर में गए; और स्वर्ग को पार करके, हे मुनीश्वर, हम ब्रह्मलोक पहुँचे।

6.19.46

प्रणामपूर्वं तत्रैतद्यथावत्तत्पितुर्वचःमात्रे च भगवत्यै च ब्राह्म्यै चाशु निवेदितम् ॥ ४६ ॥

praṇāmapūrvaṃ tatraitadyathāvattatpiturvacaḥmātre ca bhagavatyai ca brāhmyai cāśu niveditam || 46 ||

There, after bowing, we quickly told our father's words, just as they were, to our mother and to the blessed goddess Brahmi.

वहाँ प्रणाम करके, हमने पिता के वचन ज्यों के त्यों, माता को और भगवती देवी ब्राह्मी को शीघ्र सुना दिए।

6.19.47

ताभ्यां सस्नेहमालिङ्ग्य गच्छतेत्याज्ञयैधिताःवयं कृतनमस्कारा ब्रह्मलोकाद्विनिर्गताः ॥ ४७ ॥

tābhyāṃ sasnehamāliṅgya gacchatetyājñayaidhitāḥvayaṃ kṛtanamaskārā brahmalokādvinirgatāḥ || 47 ||

The two of them embraced us with love, and their word, Go, filled us with joy; having paid our respects, we left the world of Brahma.

उन दोनों ने हमें प्रेम से गले लगाया, और उनके जाओ शब्द ने हमें आनंद से भर दिया; प्रणाम करके हम ब्रह्मलोक से निकल पड़े।

6.19.48

उल्लङ्घ्य लोकपालानां पुरीस्तपनभास्वराःआकाशगामिनो लोलाः पवनस्कन्धचारिणः ॥ ४८ ॥

ullaṅghya lokapālānāṃ purīstapanabhāsvarāḥākāśagāmino lolāḥ pavanaskandhacāriṇaḥ || 48 ||

Crossing over the cities of the guardians of the world, shining like the sun, going through the sky, darting and swift, wandering in the region of the wind.

लोकपालों के नगरों को पार करते हुए, सूरज जैसे चमकते हुए, आकाश में उड़ते हुए, चंचल और तेज़, वायु के क्षेत्र में विचरते हुए।

6.19.49

इमं कल्पतरुं प्राप्य निजं नीडं प्रविश्य चदूरस्थबाधास्तिष्ठामो मुने मौनमवस्थिताः ॥ ४९ ॥

imaṃ kalpataruṃ prāpya nijaṃ nīḍaṃ praviśya cadūrasthabādhāstiṣṭhāmo mune maunamavasthitāḥ || 49 ||

Reaching this wish-granting tree and entering our own nest, O sage, we stay here far from all trouble, settled in silence.

इस कल्पवृक्ष तक पहुँचकर और अपने घोंसले में जाकर, हे मुनि, हम सब कष्टों से दूर, मौन होकर यहाँ रहते हैं।

6.19.50

जाता यथा वयमिमे स्थितिमागताश्च संप्राप्य बोधमुपशान्तधियो यथावतेतत्तदुक्तमविखण्डमलं मया ते शेषेण मां समनुशाधि महानुभाव ॥ ५० ॥

jātā yathā vayamime sthitimāgatāśca saṃprāpya bodhamupaśāntadhiyo
yathāvatetattaduktamavikhaṇḍamalaṃ mayā te śeṣeṇa māṃ samanuśādhi mahānubhāva || 50 ||

How we were born, how we came to this state, and how, once we gained understanding, our minds grew calm, all this I have told you fully and exactly, leaving nothing out. Now teach me the rest, great one.

हम कैसे जन्मे, कैसे इस स्थिति में आए, और समझ पाकर हमारे मन कैसे शांत हुए, यह सब मैंने आपको पूरी तरह और ठीक-ठीक बता दिया है, कुछ भी छोड़े बिना। अब हे महानुभाव, मुझे शेष बात सिखाइए।

Chapter 20

6.20.1

भुशुण्ड उवाच। आसीत्किंचित्पुरा कल्पे जगद्यच्चिरमास्थितम्। संनिवेशेन चैतद्वदद्यापि च न दूरगम्॥ १॥

bhushuṇḍa uvāca | āsītkiccitpurā kalpe jagadyacchiramāsthitam | sanniveśena caitadvadadyāpi ca na dūragam || 1 ||

Bhushunda said: Once, long ago, in a past age, there was a world that lasted a long time; and in how it was arranged, this world too, even today, is not very different from it.

भुशुण्ड ने कहा: बहुत पहले, किसी बीते युग में, एक दुनिया थी जो लंबे समय तक बनी रही; और उसकी बनावट में, आज की यह दुनिया भी उससे बहुत अलग नहीं है।

6.20.2

तदेतद्वृत्तमभ्यासाद्वर्तमानेन वर्णितम्। मया मुनीन्द्र बोधाय प्राग्जन्मसाम्यदर्शिना॥ २॥

tadetadvṛttamabhyāsādvartamānena varṇitam | mayā munīndra bodhāya prāgjanmasāmyadarśinā || 2 ||

I have told you this happening from my long experience, since I now live in the present, so that you may understand, best of sages - for I have watched world after world come to birth, and have seen how alike they all are.

मैंने आपको यह घटी हुई बात अपने लंबे अनुभव से बताई है, क्योंकि मैं अभी वर्तमान में जी रहा हूं, ताकि आप समझ सकें, हे मुनियों में श्रेष्ठ - क्योंकि मैंने एक के बाद एक दुनिया को जन्म लेते देखा है, और देखा है कि वे सब कितनी एक जैसी हैं।

6.20.3

अद्य मे फलितं पुण्यैश्चिरकालोपसंभृतैः। निर्विघ्नमेव पश्यामि यद्भवन्तं मुने ततः॥ ३॥

adya me phalitaṃ puṇyaiścirakālopasaṃbhṛtaiḥ | nirvighnameva paśyāmi yadbhavantaṃ mune tataḥ || 3 ||

Today my merit, gathered over a long time, has come to fruit, sage, for I see you now with nothing standing in the way.

आज मेरा पुण्य, जो मैंने इतने लंबे समय से इकट्ठा किया था, फल गया है, हे मुनि, क्योंकि अब मैं आपको बिना किसी रुकावट के देख रहा हूं।

6.20.4

इदं नीडमिमां शाखामहं चायमयं द्रुमः। अद्य पावनतां प्राप्तान्येतानि तव दर्शनात्॥ ४॥

idaṃ nīḍamimāṃ śākhāmahaṃ cāyamayaṃ drumaḥ | adya pāvanatāṃ prāptānyetāni tava darśanāt || 4 ||

This nest, this branch, I myself, and this tree - today all these have become pure through the sight of you.

यह घोंसला, यह डाल, मैं खुद, और यह पेड़ - आज ये सब आपके दर्शन से पवित्र हो गए हैं।

6.20.5

इदमर्घ्यमिद पाद्यं गृहीत्वा विहगार्पितम्। नूनं पावनतां नीत्वा शेषेणादिश चाशु भोः॥ ५॥

idamarghyamida pādyaṃ gṛhītvā vihagārpitam | nūnaṃ pāvanatāṃ nītvā śeṣeṇādiśa cāśu bhoḥ || 5 ||

Please take this welcome water and this water for the feet, offered by a bird; you have surely made them pure by taking them - now tell me quickly, sir, what else you wish.

यह स्वागत का जल और यह पैर धोने का जल लीजिए, जो एक पक्षी ने आपको दिया है; आपने इन्हें स्वीकार करके ज़रूर पवित्र कर दिया है - अब जल्दी बताइए, स्वामी, आप और क्या चाहते हैं।

6.20.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । इदमर्घ्यं च पाद्यं च भूयो दत्तवति स्वयम् । भुशुण्डविहगे तस्मिन्निदं रामाहमुक्तवान् ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | idam arghyaṃ ca pādyaṃ ca bhūyo dattavati svayam | bhuśuṇḍavihage tasminn idaṃ rāmāham uktavān || 6 ||

Sri Vasishtha said: When Bhushunda the bird had himself offered this welcome water and foot water once again, I said this to him, Rama:

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब पक्षी भुशुण्ड ने खुद फिर से यह स्वागत जल और पैर धोने का जल दिया, तो मैंने उससे यह कहा, हे राम:

6.20.7

भ्रातरस्ते विहङ्गेश तादृक्सत्त्वा महाधियः । इह कस्मान्न दृश्यन्ते त्वमेवैको हि दृश्यसे ॥ ७ ॥

bhrātaraste vihaṅgeśa tādṛksattvā mahādhiyaḥ | iha kasmānna dṛśyante tvamevaiko hi dṛśyase || 7 ||

Your brothers, king of birds - beings just as great, just as wise as you - why are none of them seen here? You alone are seen.

हे पक्षियों के राजा, आपके भाई, जो आपकी तरह ही महान और बुद्धिमान हैं - वे यहां क्यों नहीं दिखते? सिर्फ आप ही दिखते हैं।

6.20.8

भुशुण्ड उवाच । तिष्ठतामिह नः कालो महानतिगतो मुने । युगानां पङ्क्तयः क्षीणा दिवसानामिवानघ ॥ ८ ॥

bhuśuṇḍa uvāca | tiṣṭhatāmiha naḥ kālo mahān atigato mune | yugānāṃ paṅktayaḥ kṣīṇā divasānām ivānagha || 8 ||

Bhushunda said: In the time we have stayed here, sage, a great length of time has gone by; rows of ages have passed like rows of days, sinless one.

भुशुण्ड ने कहा: हम यहां जितने समय से रह रहे हैं, हे मुनि, उतना बहुत बड़ा समय बीत चुका है; युगों की कतारें ऐसे बीत गईं जैसे दिनों की कतारें, हे निष्पाप।

6.20.9

एतावताथ कालेन सर्व एव ममानुजाः । तनूस्तृणमिव त्यक्त्वा शिवे परिणताः पदे ॥ ९ ॥

etāvatātha kālena sarva eva mamānujāḥ | tanūs tṛṇam iva tyaktvā śive pariṇatāḥ pade || 9 ||

In all this time, every one of my younger brothers has dropped his body like a blade of grass, and has passed into the blessed state.

इतने समय में, मेरे सारे छोटे भाइयों ने अपने शरीर को घास के तिनके की तरह छोड़ दिया है, और वे शुभ अवस्था को पा गए हैं।

6.20.10

दीर्घायुषो महान्तोऽपि सन्तोऽपि बलिनोऽपि च । सर्व एव निगीर्यन्ते कालेनाकलितात्मना ॥ १० ॥

dīrghāyuṣo mahānto'pi santo'pi balino'pi ca | sarva eva nigīryante kālenākalitātmanā || 10 ||

However long-lived, however great, good, or strong they were - all of them are swallowed up by time, whose nature no one can grasp.

वे चाहे कितने भी लंबी उम्र वाले, महान, भले या बलवान क्यों न रहे हों - समय उन सबको निगल जाता है, और समय की उस प्रकृति को कोई नहीं समझ पाता।

6.20.11

श्रीवसिष्ठ उवाच । स्कन्धव्यूढार्कशशिषु वहत्स्वविरतं जवात् । वातस्कन्धातिवातेषु कच्चित्तात न खिद्यसे ॥ ११ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | skandhavyūḍhārkaśaśiṣu vahatsvaviratam javāt | vātaskandhātivāteṣu kaccittāta na khidyase || 11 ||

Sri Vasishtha said: In the bands of wind that carry the sun and the moon, blowing on and on without a stop, with great speed, in these fierce, strong winds - tell me truly, dear one, does this not trouble you?

श्री वसिष्ठ ने कहा: सूरज और चांद को ढोने वाली हवा की परतों में, जो बिना रुके पूरी तेज़ी से बहती रहती हैं, इन बहुत तेज़ हवाओं में - सच बताइए, प्रिय, क्या इससे आपको तकलीफ़ नहीं होती?

6.20.12

दग्धोदयास्तशैलेन्द्रवनव्यूहै रवेः करैः । चिरमत्यन्तमासन्नैः कच्चित्तात न खिद्यसे ॥ १२ ॥

dagdhodayāstaśailendravanavyūhai ravēḥ karaiḥ | ciramatyantamāsannaiḥ kaccittāta na khidyase || 12 ||

By the sun's rays that scorch the forests on the mountains of sunrise and sunset, rays that stay so long, so very close to you - surely this does not trouble you, dear one?

उगते और डूबते सूरज के पहाड़ों के जंगलों को जलाने वाली सूरज की किरणों से, जो लंबे समय तक आपके बहुत पास रहती हैं - क्या इससे आपको तकलीफ़ नहीं होती, प्रिय?

6.20.13

इन्दोरथ करैः शीतैः पाषाणीकृतवारिभिः । आसन्नकरकापातैः कच्चित्तात न खिद्यसे ॥ १३ ॥

indoratha karaiḥ śītaiḥ pāṣāṇīkṛtavāribhiḥ | āsannakarakāpātaiḥ kaccittāta na khidyase || 13 ||

And by the moon's cold rays, that turn water to stone, with hailstones falling so close by - surely this does not trouble you, dear one?

और चांद की ठंडी किरणों से, जो पानी को पत्थर बना देती हैं, और जिनके साथ पास ही ओले गिरते हैं - क्या इससे आपको तकलीफ़ नहीं होती, प्रिय?

6.20.14

अजस्रमिह विश्रान्तैः कल्पजीमूतमण्डलैः । परशुच्छेदनीहारैः कच्चित्तात न खिद्यसे ॥ १४ ॥

ajasramiha viśrāntaiḥ kalpajīmūtamaṇḍalaiḥ | paraśucchedanīhāraiḥ kaccittāta na khidyase || 14 ||

By the endless banks of doomsday clouds that rest here without a break, and by mist that cuts like an axe - surely this does not trouble you, dear one?

यहां बिना रुके टिके रहने वाले प्रलय के बादलों के अंतहीन समूहों से, और कुल्हाड़ी जैसे काटने वाले कोहरे से - क्या इससे आपको तकलीफ़ नहीं होती, प्रिय?

6.20.15

विषमैर्जागतैः क्षोभैरुच्चैस्तरपदस्थितः । कथं न क्षोभमायाति कल्पवृक्षोऽयमुन्नतः ॥ १५ ॥

viṣamairjāgataiḥ kṣobhairuccaitarapadasthitaḥ | kathaṃ na kṣobhamāyāti kalpavṛkṣo'yamunnataḥ || 15 ||

Standing in so high a place, facing the world's harsh storms, how does this tall wish-granting tree not shake?

इतनी ऊंची जगह पर खड़ा, दुनिया की कठोर उथल-पुथल झेलता हुआ, यह ऊंचा इच्छा-पूर्ति करने वाला पेड़ कैसे नहीं हिलता?

6.20.16

भुशुण्ड उवाच निरालम्बास्पदा ब्रह्मन्सर्वलोकावहेलिता तुच्छेयं सर्वभूतानां मध्ये विहगजीविका ॥ १६ ॥

bhushuṇḍa uvāca nirālambāspadā brahman sarvalokāvahelitā tucchēyaṃ sarvabhūtānāṃ madhyē vihagajīvikā || 16 ||

Bhushunda said: Brahmin, a bird's life rests on nothing solid; the whole world looks down on it - among all creatures, this life of a bird is the most worthless.

भुशुण्ड ने कहा: हे ब्राह्मण, पक्षी का जीवन किसी ठोस चीज़ पर टिका नहीं होता; पूरी दुनिया इसे तुच्छ समझती है - सब प्राणियों में, पक्षी का यह जीवन सबसे तुच्छ है।

6.20.17

ईदृशेषु च भूतेषु निर्जनेषु वनेषु च कल्पितास्थास्थितिर्धात्रा शून्ये वा व्योमवर्त्मनि ॥ १७ ॥

īdṛśēṣu ca bhūtēṣu nirjanēṣu vanēṣu ca kalpitāsthāsthitirdhātrā śūnyē vā vyomavartmani || 17 ||

And for creatures like this, in empty, lonely forests or on the bare path of the sky, the creator has given only an uncertain foothold to stand on.

और ऐसे प्राणियों के लिए, चाहे सूने-वीरान जंगलों में हों या आकाश के खाली रास्ते पर, विधाता ने खड़े होने के लिए बस एक अनिश्चित सहारा दिया है।

6.20.18

कथमस्यां प्रभो जातौ जातस्य चिरजीविनः आशापाशनिबद्धस्य विहगस्य विशोकिता ॥ १८ ॥

kathamasyāṃ prabho jātau jātasya cirajīvinaḥ āśāpāśanibaddhasya vihagasya viśokitā || 18 ||

So how, my lord, can a bird born into such a life, living long yet bound by the rope of hope, ever be free from sorrow?

तो फिर, हे प्रभु, ऐसे जन्म में पैदा हुआ, लंबे समय तक जीने वाला, फिर भी आशा की रस्सी से बंधा हुआ पक्षी, दुख से मुक्त कैसे हो सकता है?

6.20.19

वयं तु भगवन्नित्यमात्मसंतोषमास्थिताः न कदाचन नीरूपे मुह्यामो जातविभ्रमैः ॥ १९ ॥

vayaṃ tu bhagavannityamātmasantoṣamāsthitāḥ na kadācana nīrūpe muhyāmo jātavibhramaiḥ || 19 ||

But we, my lord, always stay content within ourselves; before the formless truth, we are never confused by the illusions that arise.

पर हम, हे प्रभु, हमेशा अपने भीतर ही संतुष्ट रहते हैं; उस निराकार सच्चाई के सामने उठने वाले भ्रमों से हम कभी नहीं भटकते।

6.20.20

स्वभावमात्रसंतुष्टाः कष्टैर्मुक्ता विचेष्टितैः क्षिपामः केवलं कालमस्मिन्ब्रह्मन्निजालये ॥ २० ॥

svabhāvamātrasantoṣṭāḥ kaṣṭairmuktā viceṣṭitaiḥ kṣipāmaḥ kevalaṃ kālamasminbrahmannijālaye || 20 ||

Content with just our own nature, free from the troubles that come with restless striving, we simply pass our time here, Brahmin, in this home of our own.

बस अपने स्वभाव से ही संतुष्ट, बेचैन कोशिशों की परेशानियों से मुक्त, हम यहां अपना समय बस यूं ही बिता देते हैं, हे ब्राह्मण, अपने इसी घर में।

6.20.21

न जीविताऩ्न मरणात्कर्मदेहस्य रोधनम् । यथा स्थितेन तिष्ठामस्तथैवास्तंगतेहिताः ॥ २१ ॥

na jīvitānna maraṇātkarmadehasya rodhanam | yathā sthitena tiṣṭhāmastathaivāstaṃgatehitāḥ || 21 ||

Neither life nor death brings an end to this body shaped by our past deeds. Just as we stay the same while it stands, so we stay the same as it sets.

न जीवन और न मृत्यु इस कर्मों से बने शरीर को खत्म करती है। जैसे यह खड़ा रहता है तो हम वैसे ही स्थिर रहते हैं, वैसे ही जब यह ढल रहा हो तब भी हम उतने ही स्थिर रहते हैं।

6.20.22

आलोकिता लोकदशा दृष्टा दृष्टान्तदृष्टयः । नूनं संत्यक्तमस्माकं मनसा चञ्चलं वपुः ॥ २२ ॥

ālokitā lokadaśā dṛṣṭā dṛṣṭāntadṛṣṭayaḥ | nūnaṃ saṃtyaktamasmākaṃ manasā cañcalaṃ vapuḥ || 22 ||

We have seen the ways of the world, and seen example after example of them. Surely our mind has now given up this restless body.

हमने संसार का हाल देखा है, और बार-बार इसके उदाहरण देखे हैं। लगता है अब हमारे मन ने इस चंचल शरीर को छोड़ दिया है।

6.20.23

अनारतनिजालोके नित्यं चापरितापिनि । कल्पागस्योपरि सदा वेद्मि कालकलागतिम् ॥ २३ ॥

anāratanijāloke nityaṃ cāparitāpini | kalpāgasyopari sadā vedmi kālakalāgatim || 23 ||

By our own steady light, which never stops and never burns, here on this mountain that lasts through the ages, we always know time's passing, down to its smallest piece.

अपनी उस लगातार चलने वाली और कभी न जलाने वाली रोशनी से, इस युगों-युगों तक टिके रहने वाले पहाड़ पर, हम हमेशा समय के हर छोटे टुकड़े की चाल जानते हैं।

6.20.24

रत्नगुच्छप्रकाशाख्ये ब्रह्मन्कल्पलतागृहे । प्राणापानप्रवाहेण वेद्मि कल्पमखण्डितम् ॥ २४ ॥

ratnaguccaprakāśākhye brahman kalpalatāgṛhe | prāṇāpānapravāheṇa vedmi kalpamakhāṇḍitam || 24 ||

Here, Brahmin, in this bower of wishing vines, called the glow of a bunch of jewels, we keep count of the whole age, without a break, through the flow of our breath in and out.

हे ब्राह्मण, इच्छा पूरी करने वाली इन बेलों के इस घर में, जिसे रत्नों के गुच्छे की चमक कहा जाता है, हम अपनी साँस के आने-जाने से पूरे युग का हिसाब बिना चूके रखते हैं।

6.20.25

अविज्ञातदिवारात्रौ ह्यस्मिन्नुच्चैः शिलोच्चये । जानामि निजया बुद्ध्या लोककालक्रमस्थितिम् ॥ २५ ॥

avijñātadivārātrau hyasminnuccaiḥ śiloccaye | jānāmi nijayā buddhyā lokakālakramasthitim || 25 ||

On this high, rocky mountain, where day and night cannot be told apart, we know, by our own understanding, the order in which the world and time unfold.

इस ऊँचे, पथरीले पहाड़ पर, जहाँ दिन और रात पहचान में नहीं आते, हम अपनी ही समझ से जानते हैं कि संसार और समय किस क्रम में चलते हैं।

6.20.26

सारासारपरिच्छेदि बोधाद्विश्रान्तिमागतम्। निरस्तचापलं शान्तं सुस्थिरं मे मुने मनः ॥ २६ ॥

sārāsāraparicchedi bodhādviśrāntimāgatam | nirastacāpalaṃ śāntaṃ susthiraṃ me mune manaḥ || 26 ||

Sage, our mind can tell what is real from what is not, and it has come to rest through understanding. It is free of restlessness now, calm, and steady.

हे मुनि, हमारा मन जान लेता है कि क्या सच है और क्या नहीं, और समझ के दम पर शांत हो चुका है। अब यह चंचलता से मुक्त, शांत और पूरी तरह स्थिर है।

6.20.27

संसारव्यवहारोत्थैराशापाशैरसन्मयैः। उद्गारैरिव भूकाको न वैवश्यं व्रजाम्यहम् ॥ २७ ॥

saṃsāravvyavahārotthairāśāpāśairasanmayaiḥ | udgārairiva bhūkāko na vaivaśyaṃ vrajāmyaham || 27 ||

The false chains of desire that come from worldly life do not take hold of us. We are not like a crow gone wild over scraps of food.

संसार के व्यवहार से उठे इच्छा के झूठे बंधन हम पर काबू नहीं पाते। हम उस कौवे जैसे नहीं हैं जो जूठन पर पागल हो जाता है।

6.20.28

परोपशमधर्मिण्या वयमालोकशीतया। पश्यन्तो जागतीं मायां धिया धैर्यमुपागताः ॥ २८ ॥

paropaśamadharmiṇyā vayamālokśītayā | paśyanto jāgatīṃ māyāṃ dhiyā dhairyaṃ upāgatāḥ || 28 ||

With a mind at deep peace, cool with its own light, we watch the world's illusion, and we stay steady and unafraid.

गहरी शांति में टिके, अपनी ही रोशनी से शीतल मन के साथ, हम संसार की माया को देखते हैं, और स्थिर तथा निडर बने रहते हैं।

6.20.29

भीमास्वपि महाबुद्धे दशास्वचलबुद्धयः। विनिर्मलोपलाकाराः संप्राप्तासु यथाक्रमम् ॥ २९ ॥

bhīmāsvapi mahābuddhe daśāsvacalabuddhayaḥ | vinirmalopalākārāḥ saṃprāptāsu yathākramam || 29 ||

Wise one, even when frightening things happen to us one after another, our mind does not waver. It stays like a clean, spotless stone.

हे बुद्धिमान, डरावनी बातें भी एक के बाद एक आएँ, तो भी हमारा मन नहीं डगमगाता। यह एक साफ़, बेदाग़ पत्थर जैसा टिका रहता है।

6.20.30

इयमारम्भसुभगा तरला जागती स्थितिः। भूयो भूयः परामृष्टा न च किंच न बाधते ॥ ३० ॥

iyamārambhasubhagā taralā jāgatī sthitiḥ | bhūyo bhūyaḥ parāmṛṣṭā na ca kiṃca na bādhate || 30 ||

This state of the world looks pleasant only at first, and it never stops shifting. But we have looked at it again and again, and now none of it troubles us at all.

संसार की यह हालत शुरू में ही अच्छी लगती है, और यह कभी बदलना नहीं छोड़ती। पर हमने इसे बार-बार देखा-परखा है, और अब यह हमें तनिक भी नहीं सताती।

6.20.31

सर्वाण्येव प्रयान्त्येव समायान्ति च वा न वा। भगवन्भूतजालानि भयमस्माकमत्र किम् ॥ ३१ ॥

sarvāṇyeva prayāntyeva samāyānti ca vā na vā | bhagavanbhūtajālāni bhayamasmākamatra kim || 31 ||

Lord, all beings, every one of them, come and go, or do not come at all. What is there for us to fear in that?

हे भगवन, सारे प्राणी, एक-एक करके, आते और चले जाते हैं, या बिल्कुल नहीं आते। इसमें हमें किस बात का डर?

6.20.32

भूतजालतरङ्गिण्या विशन्त्याः कालसागरे । वयं संसारसरितस्तटस्था अप्यनादृताः ॥ ३२ ॥

bhūtajālataraṅgiṇyā viśantyāḥ kālasāgare | vayaṃ saṃsārasaritastataṭasthā apyanādṛtāḥ || 32 ||

This river of the world is made of countless beings, like waves, flowing into the ocean of time. We stand on its bank and pay it no mind.

संसार की यह नदी अनगिनत प्राणियों की लहरों से बनी है, और समय के सागर में जा मिलती है। हम इसके किनारे खड़े हैं, और इसकी कोई परवाह नहीं करते।

6.20.33

नोज्झामो न च गृह्णीमस्तिष्ठामो नेह च स्थिताः । मृदुपादा दृशा क्रूरा वयमस्मिन्द्रुमे स्थिताः ॥ ३३ ॥

nojjhāmo na ca gṛhṇīmastiṣṭhāmo neha ca sthitāḥ | mṛdupādā dṛśā kūrā vayamasmindrume sthitāḥ || 33 ||

We do not throw anything away, and we do not hold on to anything either. We stay, but we are not tied down here. Soft-footed and sharp-eyed, we live in this tree.

हम न कुछ छोड़ते हैं, न कुछ पकड़ते हैं। हम यहाँ टिके तो हैं, पर बंधे नहीं हैं। कोमल पैरों और तेज़ नज़र के साथ, हम इस पेड़ पर रहते हैं।

6.20.34

वीतशोकभयायासैस्त्वादृशैः पुरुषोत्तमैः । तुष्टैरनुगृहीताः स्मः संस्थिता विगतामयाः ॥ ३४ ॥

vītaśokabhayāyāsai stvādṛśaiḥ puruṣottamaiḥ | tuṣṭairanugṛhītāḥ smaḥ saṃsthitā vigatāmayāḥ || 34 ||

Great men like you, free of grief, fear, and tiredness, and pleased with us, have blessed us with their grace. So we stay settled, free of every trouble.

आप जैसे बड़े लोग, जो शोक, डर और थकान से मुक्त हैं, और हमसे खुश हैं, उन्होंने अपनी कृपा से हम पर एहसान किया है। इसी से हम स्थिर और हर तकलीफ़ से मुक्त बने रहते हैं।

6.20.35

ततस्ततश्च पर्यस्तं लुठितं न च वृत्तिषु । नापरामृष्टतत्त्वार्थमस्माकं भगवन्मनः ॥ ३५ ॥

tatastataśca paryastaṃ luṭhitaṃ na ca vṛttiṣu | nāparāmṛṣṭatattvārthamasmākaṃ bhagavanmanaḥ || 35 ||

Lord, our mind does not get pulled this way and that, and it does not get stuck in changing moods. It has truly understood the meaning of the truth.

हे भगवन, हमारा मन इधर-उधर नहीं भटकता, और बदलते मिज़ाज में नहीं उलझता। इसने सच्चाई का मतलब सचमुच समझ लिया है।

6.20.36

निर्विकारे गतक्षोभे चात्मन्युपशमं गते । चित्तरङ्गाः प्रबुद्धाः स्मः पर्वणीव महाब्धयः ॥ ३६ ॥

nirvikāre gatakṣobhe cātmanyupaśamaṃ gate | cittaraṅgāḥ prabuddhāḥ smaḥ parvaṇīva mahābdhayaḥ || 36 ||

The self inside us does not change, has no unrest, and rests in peace. Even so, the waves of our mind still rise up, the way the sea swells at full moon.

हमारे भीतर की आत्मा न बदलती है, न उसमें कोई हलचल है, और वह शांति में टिकी है। फिर भी हमारे मन की लहरें वैसे ही उठती हैं जैसे पूर्णिमा पर समंदर उमड़ पड़ता है।

6.20.37

भवदागमनाद्ब्रह्मन्निदानीं मुदिताशयाः । मन्दरोद्धूतसर्वाङ्गः क्षीरोदो येन तन्यते ॥ ३७ ॥

bhavadāgamanād brahmannidānīṃ muditāśayāḥ | mandaroddhūtasarvāṅgaḥ kṣīrodo yena tanyate || 37 ||

Brahmin, since you came, our hearts are now full of joy, the way the Ocean of Milk swells all over when Mount Mandara churns it.

हे ब्राह्मण, आपके आने से अब हमारा मन खुशी से भर गया है, जैसे मंदराचल के मंथन से क्षीरसागर का कण-कण उमड़ पड़ता है।

6.20.38

नातः परतरं किंचिन्मन्ये कुशलमात्मनः । सन्तो यदनुगम्यन्ते संत्यक्तसकलैषणाः ॥ ३८ ॥

nātaḥ parataraṃ kiṃcinmanye kuśalamātmanaḥ | santo yadanugamyante saṃtyaktasakalaiṣaṇāḥ || 38 ||

I think there is nothing better for the self than this: getting to be with good people who have given up wanting anything at all.

मुझे लगता है आत्मा के लिए इससे भला कुछ नहीं कि हमें उन अच्छे लोगों का साथ मिले जिन्होंने कुछ भी चाहना छोड़ दिया है।

6.20.39

आपातमात्ररम्येभ्यो भोगेभ्यः किमवाप्यते । सत्सङ्गचिन्तामणितः सर्वसारमवाप्यते ॥ ३९ ॥

āpātamātraramyehyo bhogebhyaḥ kimavāpyate | satsaṅgacintāmaṇitaḥ sarvasāramavāpyate || 39 ||

What do we really get from pleasures that feel sweet only for a moment? From the company of good people, a wishing-jewel, we get everything that truly matters.

जो सुख बस एक पल के लिए मीठे लगते हैं, उनसे क्या मिलता है? पर अच्छे लोगों की संगति से, जो एक इच्छा पूरी करने वाली मणि जैसी है, हमें सब कुछ जो सचमुच मायने रखता है मिल जाता है।

6.20.40

स्निग्धगम्भीरमसृणमधुरोदारधीरवाक् । त्रैलोक्यपद्मकोशेऽस्मिंस्त्वमेकः षट्पदायसे ॥ ४० ॥

snigdhagambhīramasṛṇamadhurodāradhīravāk | trailokyapadmakośe'smiṃstvamekaḥ ṣaṭpadāyase || 40 ||

Your voice is warm, deep, smooth, sweet, generous, and calm. In this cup of the lotus that is the three worlds, you alone are the bee.

आपकी बोली गर्मजोशी भरी, गहरी, मुलायम, मीठी, उदार और शांत है। तीनों लोकों के इस कमल के प्याले में, आप ही अकेले भँवरे हैं।

6.20.41

अधिगतपरमात्मनोऽपि मन्ये भवदवलोकनशान्तदुष्कृतस्यमम सफलमिहाद्य जन्म साधो सकलभयापहरो हि साधुसङ्गः ॥ ४१ ॥

adhigataparamātmano'pi manye bhavadavalokanaśāntaduṣkṛtasyamama saphalamihādya janma sādho sakalabhayāpaharo hi sādhusaṅgaḥ || 41 ||

Even though I had already reached the highest self, I think my birth here, today, has still borne fruit, because seeing you has quieted whatever wrong I had done. Good one, the company of the good truly drives away every fear.

मैं पहले ही परम आत्मा को पा चुका था, फिर भी मुझे लगता है कि आज यहाँ मेरा जन्म फिर भी सफल हो गया, क्योंकि आपको देखकर मेरे बुरे कर्म शांत हो गए। हे भले पुरुष, अच्छे लोगों की संगति सचमुच हर डर को दूर कर देती है।

Chapter 21

6.21.1

भुशुण्ड उवाच। युगक्षोभेषु घोरेषु वाक्यासु विषमासु च। सुस्थिरः कल्पवृक्षोऽयं न कदाचन कम्पते ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | yugakṣobheṣu ghoreṣu vākyāsu viṣamāsu ca | susthirah kalpavṛkṣo'yaṃ na kadācana kampate ||1||

Bhushunda said: In the terrible upheavals of the ages, and in violent storms, this wish-granting tree stays perfectly steady; it never trembles.

भुशुण्ड ने कहा: युगों की भयानक उथल-पुथल में और भयंकर तूफ़ानों में भी, यह इच्छा पूरी करने वाला पेड़ पूरी तरह अडिग रहता है; यह कभी नहीं हिलता।

6.21.2

अगम्योऽयं समग्राणां लोकान्तरविहारिणाम्। भूतानां तेन तिष्ठाम इह साधो सुखेन वै ॥ २ ॥

agamyo'yaṃ samagrāṇāṃ lokāntaravihāriṇām | bhūtānāṃ tena tiṣṭhāma iha sādho sukhena vai ||2||

This tree cannot be reached by any being that wanders through other worlds; so, wise one, we live here in comfort.

दूसरे लोकों में घूमने वाला कोई भी प्राणी इस पेड़ तक नहीं पहुँच सकता; इसलिए, हे बुद्धिमान, हम यहाँ सुख से रहते हैं।

6.21.3

हिरण्याक्षो धरापीठं द्वीपसप्तकवेष्टितम्। यदा जहार तरसा नाकम्पत तदा तरुः ॥ ३ ॥

hiraṇyākṣo dharāpīṭhaṃ dvīpasaptakaveṣṭitam | yadā jahāra tarasā nākampata tadā taruḥ ||3||

When Hiranyaksha swiftly seized the disc of the earth, wrapped in its seven continents, the tree did not tremble then.

जब हिरण्याक्ष ने पृथ्वी के उस गोल आसन को झट से उठा लिया, जो उसके सात द्वीपों से घिरा था, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.4

यदा लोलायितवपुर्बभूवामरपर्वतः। सर्वतो दत्तसाम्यादिस्तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ ४ ॥

yadā lolāyitavapurbabhūvāmaraparvataḥ | sarvato dattasāmyādris tadā nākampata drumah ||4||

When Mount Meru, the mountain of the gods that keeps the whole world balanced, began to sway and reel on every side, the tree did not tremble then.

जब देवताओं का पर्वत मेरु, जो चारों ओर सबको संतुलन देता है, हर तरफ़ से डगमगाने और काँपने लगा, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.5

भुजावष्टम्भविनमन्मेरुर्नारायणो यदा। मन्दरं प्रोद्दधारादिं तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ ५ ॥

bhujāvaṣṭambhavinamanmerurnārāyaṇo yadā | mandaraṃ proddadhārādriṃ tadā nākampata drumah ||5||

When Narayana, bracing with his arms, made Meru bend, as he lifted up the mountain Mandara, the tree did not tremble then.

जब नारायण ने अपनी भुजाओं का सहारा देकर मेरु को झुका दिया, और मन्दर पर्वत को ऊपर उठा लिया, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.6

यदा सुरासुरक्षोभपतच्चन्द्रार्कमण्डलम्। आसीज्जगदतिक्षुब्धं तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ ६ ॥

yadā surāsurakṣobhapataccandrārkamaṇḍalam | āsījjagadatikṣubdhaṃ tadā nākampata drumaḥ || 6 ||

When, in the turmoil between gods and demons, the disc of the moon and the sun fell, and the whole world grew utterly agitated, the tree did not tremble then.

जब देवताओं और असुरों के संघर्ष से चाँद और सूरज का गोला गिर पड़ा, और सारा संसार बुरी तरह हिल उठा, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.7

उन्मूलिताद्रीन्द्रशिला यदोत्पातानिला ववुः। आधूतमेरुतरवस्तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ ७ ॥

unmūlitādrīndraśilā yadotpātānilā vavuḥ | ādhūtamerutaravastadā nākampata drumaḥ || 7 ||

When the winds of disaster blew, tearing loose the rocks of the great mountain and shaking the trees of Meru, the tree did not tremble then.

जब आपदा की आँधियाँ चलीं, जिन्होंने बड़े पर्वत की चट्टानों को उखाड़ दिया और मेरु के पेड़ों को झकझोर दिया, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.8

यदा क्षीरोदलोलाद्रिकन्दरानिलकम्पिताः। कल्पाभ्रपङ्क्तयश्चेरुस्तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ ८ ॥

yadā kṣīrodalolādrīkandarānilakampitāḥ | kalpābhrapaṅktayaścerustadā nākampata drumaḥ || 8 ||

When rows of doomsday clouds, set shaking by the wind from the mountain caves rocking in the ocean of milk, went drifting across the sky, the tree did not tremble then.

जब क्षीरसागर में हिलते पर्वत की गुफाओं से उठी हवा से हिलते हुए प्रलय के बादलों की पंक्तियाँ आकाश में बहने लगीं, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.9

यदा समन्ततो मेरुः कालनेमिभुजान्तरे। किंचिदुन्मूलितोऽतिष्ठत्तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ ९ ॥

yadā samantato meruḥ kālanemibhujāntare | kiñcidunmūlito'tiṣṭhattadā nākampata drumaḥ || 9 ||

When Meru, gripped on every side between Kalanemi's arms, stood there half torn from the ground, the tree did not tremble then.

जब कालनेमि की भुजाओं के बीच चारों ओर से जकड़ा हुआ मेरु पर्वत आधा उखड़ा हुआ खड़ा रह गया, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.10

पक्षीशपक्षपवना अमृताक्रान्तिसंगरे। यदा ववुः पतत्सिद्धास्तदायं नापतद्द्रुमः ॥ १० ॥

pakṣīśapakṣapavanā amṛtākrāntisaṅgare | yadā vavuḥ patatsiddhāstadāyaṃ nāpataddrumaḥ || 10 ||

When, in the battle over seizing the nectar, winds blew from the wings of the king of birds, and the Siddhas were falling, this tree did not fall.

जब अमृत को छीनने की लड़ाई में पक्षियों के राजा के पंखों से हवाएँ चलीं, और सिद्ध लोग गिर रहे थे, तब भी यह पेड़ नहीं गिरा।

6.21.11

यदा शेषाकृतिं रुद्रो नसमाप्तैकचेष्टिताम्। ययौ गरुत्मान्ब्रह्माण्डं तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ ११ ॥

yadā śeṣākṛtiṃ rudro nasamāptaikaceṣṭitām | yayau garutmānbrahmāṇḍaṃ tadā nākampata drumaḥ || 11 ||

When Rudra took on the form of Shesha, whose one task never comes to an end, and Garutman went into the cosmic egg, the tree did not tremble then.

जब रुद्र ने शेष का रूप धारण किया, जिनका एक काम कभी पूरा नहीं होता, और गरुत्मान ब्रह्माण्ड में प्रवेश कर गए, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.12

यदा कल्पानलशिखाः शैलाब्धिसकलोल्बणः । शेषः फणाभिस्तत्याज तदा नाकम्पत द्रुमः ॥ १२ ॥

yadā kalpānalaśikhāḥ śailābhdhisakalolbaṇaḥ | śeṣaḥ phaṇābhistatyāja tadā nākampata drumaḥ || 12 ||

When Shesha, grown terrible together with all the mountains and seas, breathed out from his hoods the flames of the world-ending fire, the tree did not tremble then.

जब शेष, सभी पर्वतों और समुद्रों के साथ भयंकर होकर, अपने फणों से प्रलय की आग की लपटें छोड़ने लगे, तब भी यह पेड़ नहीं हिला।

6.21.13

एवंरूपे द्रुमवरे तिष्ठतामापदः कुतः । अस्माकं मुनिशार्दूल दौःस्थित्येन किलापदः ॥ १३ ॥

evaṃrūpe drumavare tiṣṭhatāmāpadaḥ kutaḥ | asmākaṃ muniśārdūla dauḥsthityena kilāpadaḥ || 13 ||

For those who live in a tree like this, the finest of trees, how could misfortune ever come? Tiger among sages, our misfortunes come only from being unsteady.

ऐसे श्रेष्ठ पेड़ पर रहने वालों को भला विपत्ति कहाँ से आ सकती है? हे मुनियों के बाघ, हमारी विपत्तियाँ तो केवल अस्थिरता से ही आती हैं।

6.21.14

श्रीवसिष्ठ उवाच । कल्पान्तेषु महाबुद्धे वहत्सूत्पातवायुषु । प्रपतत्स्विन्दुभार्केषु कथं तिष्ठसि विज्वरः ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kalpānteṣu mahābuddhe vahatsūtpātavāyuṣu | prapatatsvindubhārkeṣu kathaṃ tiṣṭhasi vijvaraḥ || 14 ||

Sri Vasishtha said: Great-minded one, at the ends of the ages, when the winds of disaster are blowing and the moon and the sun are falling, how do you remain free of all distress?

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे महाबुद्धिमान, युगों के अंत में जब आपदा की आँधियाँ चलती हैं और चाँद-सूरज गिर रहे होते हैं, तब आप कैसे बिना किसी व्याकुलता के बने रहते हैं?

6.21.15

भुशुण्ड उवाच । यदा पपात कल्पान्ते व्यवहारो जगत्स्थितौ । कृतघ्न इव सन्मित्रं तदा नीडं त्यजाम्यहम् ॥ १५ ॥

bhūśuṇḍa uvāca | yadā papāta kalpānte vyavahāro jagatsthitau | kṛtaghna iva sanmitraṃ tadā nīḍaṃ tyajāmyaham || 15 ||

Bhushunda said: When, at the end of the age, the working order of the world collapses, then, like an ungrateful man deserting a true friend, I leave my nest.

भुशुण्ड ने कहा: जब युग के अंत में संसार की व्यवस्था बिखर जाती है, तब मैं भी, किसी कृतघ्न व्यक्ति के अपने सच्चे मित्र को छोड़ने जैसा, अपना घोंसला छोड़ देता हूँ।

6.21.16

आकाश एव तिष्ठामि विगताखिलकल्पनःस्तब्धप्रकृतिसर्वाङ्गो मनो निर्वासनं यथा ॥ १६ ॥

ākāśa eva tiṣṭhāmi vigatākhilakalpanaḥstabdhaprakṛtisarvāṅgo mano nirvāsanaṃ yathā || 16 ||

I stay alone in the open sky, every thought gone, my whole body and nature stilled, like a mind free of all desire.

मैं अकेला खुले आकाश में रहता हूँ, हर विचार समाप्त हो चुका होता है, मेरा पूरा शरीर और स्वभाव स्थिर हो जाता है, ठीक वैसे जैसे एक इच्छा-रहित मन।

6.21.17

प्रतपन्ति यदादित्याः शकलीकृतभूधराःवारुणीं धारणां बद्धा तदा तिष्ठामि धीरधीः ॥ १७ ॥

pratapanti yadādityāḥ śakalīkṛtabhūdharāḥvāruṇīṃ dhāraṇāṃ baddhvā tadā tiṣṭhāmi dhīradhīḥ || 17 ||

When the suns blaze and burn, shattering the mountains to pieces, then, holding fast to the meditation of water, I stay calm and steady-minded.

जब सूर्य प्रचंड होकर तपते हैं और पर्वतों को टुकड़े-टुकड़े कर देते हैं, तब मैं जल के ध्यान को दृढ़ता से थामे हुए शांत और स्थिर-बुद्धि बना रहता हूँ।

6.21.18

यदा शकलिताद्रीन्द्रा वान्ति प्रलयवायवःपार्वतीं धारणां बद्धा खे तिष्ठाम्यचलं तदा ॥ १८ ॥

yadā śakalitādrīndrā vānti pralayavāyavaḥpārvatīṃ dhāraṇāṃ baddhvā khe tiṣṭhāmyacalaṃ tadā || 18 ||

When the winds of doom blow and smash the great mountains to pieces, then, holding fast to the meditation of the mountain, I stay unmoving in the sky.

जब प्रलय की आँधियाँ चलती हैं और बड़े-बड़े पर्वतों को चूर-चूर कर देती हैं, तब मैं पर्वत के ध्यान को दृढ़ता से थामे हुए आकाश में अडिग बना रहता हूँ।

6.21.19

जगद्गलितमेर्वादि यात्येकार्णवतां यदावायवीं धारणां बद्धा संप्लवेऽचलधीस्तदा ॥ १९ ॥

jagadgalitamervādi yātyekārṇavatāṃ yadāvāyavīṃ dhāraṇāṃ baddhvā saṃplave'caladhīstadā || 19 ||

When the world, with Meru and everything else dissolved away, turns into a single ocean, then, holding fast to the meditation of wind, my mind stays unmoved in that flood.

जब मेरु और बाकी सब कुछ पिघलकर संसार एक ही समुद्र बन जाता है, तब मैं वायु के ध्यान को दृढ़ता से थामे हुए उस जलप्रलय में भी अपने मन को अडिग रखता हूँ।

6.21.20

ब्रह्माण्डपारमासाद्य तत्त्वान्ते विमले पदेसुषुप्तावस्थया तावत्तिष्ठाम्यचलरूपया ॥ २० ॥

brahmāṇḍapāramāsādya tattvānte vimale padesuṣuptāvasthayā tāvattiṣṭhāmyacalarūpayā || 20 ||

Having reached beyond the cosmic egg, at the far end of all the elements, in that pure state, I stay there without moving, for as long as it lasts, in a state like deep dreamless sleep.

ब्रह्माण्ड के पार पहुँचकर, सभी तत्वों के अंतिम छोर पर, उस निर्मल अवस्था में, मैं वहाँ तब तक बिना हिले-डुले, गहरी बिना-सपने की नींद जैसी अवस्था में बना रहता हूँ।

6.21.21

यावत्पुनः कमलजः सृष्टिकर्मणि तिष्ठति । तत्र प्रविश्य ब्रह्माण्डं तिष्ठामि विहगालये ॥ २१ ॥

yāvatpunaḥ kamalajaḥ sṛṣṭikarmaṇi tiṣṭhati | tatra praviśya brahmāṇḍaṃ tiṣṭhāmi vihagālaye || 21 ||

Until the lotus-born one again takes up the work of creation, I go there, enter the cosmic egg, and live in that home of birds.

जब तक कमल से जन्मा वह फिर से सृष्टि रचने का काम शुरू नहीं करता, तब तक मैं वहाँ ब्रह्माण्ड में प्रवेश करके पक्षियों के उस घर में रहता हूँ।

6.21.22

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथा तिष्ठसि पक्षीन्द्र धारणाभिरखण्डितः । कल्पान्तेषु तथा कस्मान्नान्ये तिष्ठन्ति योगिनः ॥ २२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathā tiṣṭhasi pakṣīndra dhāraṇābhirakhṇḍitaḥ | kalpānteṣu tathā kasmānnānye tiṣṭhanti yoginaḥ || 22 ||

Sri Vasishtha said: King of birds, you remain unbroken through your states of concentration like this at the ends of the ages — so why do other yogis not remain this way?

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे पक्षियों के राजा, आप युगों के अंत में अपनी ध्यान-अवस्थाओं के सहारे इस तरह अटूट बने रहते हैं — तो फिर बाकी योगी इस तरह क्यों नहीं टिक पाते?

6.21.23

भुशुण्ड उवाच । ब्रह्मन्नियतिरेषा हि दुर्लङ्घ्या पारमेश्वरी । मयेदृशेन वै भाव्यं भाव्यमन्यैस्तु तादृशैः ॥ २३ ॥

bhūśuṇḍa uvāca | brahmanniyatireṣā hi durlaṅghyā pārameśvarī | mayedṛśena vai bhāvyaṃ bhāvyamanaisastu tādṛśaiḥ || 23 ||

Bhushunda said: Brahmin, this is destiny, the power of the supreme lord, and it cannot be crossed. Being what I am, I must be this way; being what they are, others must be that way.

भुशुण्ड ने कहा: हे ब्राह्मण, यह नियति है, परमेश्वर की शक्ति है, और इसे लाँघा नहीं जा सकता। मैं जैसा हूँ, मुझे वैसा ही होना है; और दूसरे जैसे हैं, उन्हें वैसा ही होना है।

6.21.24

न शक्यते तोलयितुमवश्यं भवितव्यता । यद्यथा तत्तथैतद्धि स्वभावस्यैव निश्चयः ॥ २४ ॥

na śakyate tolayitumavaśyaṃ bhavitavyatā | yadyathā tattathaitaddhi svabhāvasyaiva niścayaḥ || 24 ||

What is bound to happen cannot be weighed or measured. Whatever a thing is, it is exactly that — this alone is the fixed rule of its own nature.

जो होना ही है, उसे न तौला जा सकता है, न मापा जा सकता है। जो चीज़ जैसी है, वह वैसी ही है — यही उसके अपने स्वभाव का पक्का नियम है।

6.21.25

मत्संकल्पवशेनैव कल्पे कल्पे पुनः पुनः । अस्मिन्नेव गिरेः शृङ्गे तरुरित्थं भवत्ययम् ॥ २५ ॥

matsaṅkalpavaśenaiva kalpe kalpe punaḥ punaḥ | asminneva gireḥ śṛṅge taruritthaṃ bhavatyayam || 25 ||

By the power of my own will alone, age after age, again and again, this tree comes into being just like this, on this very mountain peak.

केवल मेरे अपने संकल्प के बल से, हर युग में, बार-बार, यह पेड़ ठीक इसी तरह, इसी पर्वत-शिखर पर बनता है।

6.21.26

श्रीवसिष्ठ उवाच । अत्यन्तमोक्षदीर्घायुर्भवान्निर्देशनायकः । ज्ञानविज्ञानवान्धीरो योगयोग्यमनोगतिः ॥ २६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atyantamokṣadīrghāyurbhavānnirdeśanāyakaḥ | jñānavijñānavāndhīro yogayogyamanogatiḥ || 26 ||

Sri Vasishtha said: You have a life so long it reaches all the way to liberation; you are a foremost guide and teacher; you hold both knowledge and its right use, and you are steady; your mind moves in a way fit for yoga.

श्री वसिष्ठ ने कहा: आपका जीवन इतना लंबा है कि वह मोक्ष तक पहुँचता है; आप सबसे बड़े मार्गदर्शक और शिक्षक हैं; आपके पास ज्ञान भी है और उसे सही ढंग से बरतने की समझ भी, और आप स्थिर-चित्त हैं; आपका मन योग के योग्य दिशा में चलता है।

6.21.27

दृष्टानेकविधानल्पसर्गसङ्गमागमः । किं किं स्मरसि कल्याण चित्रमस्मिञ्जगत्क्रमे ॥ २७ ॥

dṛṣṭānekavidhānalpasargasaṅgagamāgamaḥ | kiṃ kiṃ smarasi kalyāṇa citramasmijjagatkramē || 27 ||

You have seen many kinds of great creation come and go. Tell me, good friend, what wonders do you remember in this course of the world?

तुमने कई तरह की बड़ी-बड़ी सृष्टियों को बनते और मिटते देखा है। बताओ, प्रिय मित्र, इस जगत के क्रम में तुम्हें कौन-कौन सी अचरज की बातें याद हैं?

6.21.28

भुशुण्ड उवाच । महत्तर शिलावृक्षामजाततृणवीरुधम् । अशैलवनवृक्षौघां स्मरामीमां धरामधः ॥ २८ ॥

bhūśuṇḍa uvāca | mahattara śilāvṛkṣāmajātatṛṇavīrudham | aśailavanavṛkṣaughāṃ smarāmīmāṃ dharāmadhaḥ || 28 ||

Bhushunda said: Great one, I remember this earth here below - bare rock, without trees, its grass and creepers not yet born, without mountains, without forests, without any multitude of trees.

भुशुण्ड ने कहा: हे महान, मुझे यह धरती नीचे ऐसी याद है - नंगी चट्टान, बिना पेड़ों के, जिसमें घास और बेलें अभी पैदा भी नहीं हुई थीं, बिना पहाड़ों के, बिना जंगलों के, बिना पेड़ों के झुंड के।

6.21.29

दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च । भस्मसारभरापूर्णां संस्मरामि धरामधः ॥ २९ ॥

daśavarṣasahasrāṇi daśavarṣaśatāni ca | bhasmasārabharāpūrṇāṃ saṃsmarāmi dharāmadhaḥ || 29 ||

For ten thousand years, and a thousand years besides, I remember this earth here below, filled with a heap of ash.

दस हज़ार साल और उसके ऊपर एक हज़ार साल तक, मुझे यह धरती नीचे राख के ढेर से भरी हुई याद है।

6.21.30

अनुत्पन्नदिवाधीशामशक्तशशिमण्डलाम् । अविभक्तदिवालोकां संस्मरामि धरामधः ॥ ३० ॥

anutpannadivādhīśāmaśaktaśaśimaṇḍalām | avibhaktadivālokāṃ saṃsmarāmi dharāmadhaḥ || 30 ||

I remember this earth here below, when the sun, lord of the day, had not yet arisen, when the moon's disc had no power, and when the light of day was not yet divided out.

मुझे यह धरती नीचे ऐसी याद है - जब सूरज, जो दिन का स्वामी है, अभी उगा भी नहीं था, जब चाँद की गोलाई में कोई ताकत नहीं थी, और जब दिन का उजाला अभी अलग होकर बना भी नहीं था।

6.21.31

मेरुरत्नतलोद्योतैरर्धप्रकटकोटरम् । लोकालोकमिवाक्याढ्याद्रिभुवनं संस्मराम्यहम् ॥ ३१ ॥

meruratnatalodyotairardhaprakaṭakoṭaram | lokālokamivākyāḍhyādribhuvanaṃ saṃsmarāmyaham || 31 ||

I remember a world of mountains, glowing with the light of Meru's jewelled slopes, its caves half revealed, as rich as Lokaloka.

मुझे पहाड़ों की एक दुनिया याद है, जो मेरु पर्वत की रत्न जड़ी ढलानों की चमक से जगमगा रही थी, जिसकी गुफाएँ आधी दिखाई देती थीं, लोकालोक पर्वत जितनी समृद्ध।

6.21.32

प्रवृद्धासुरसंग्रामे क्षीयमाणन्तरामिह । पलायमानामभितः संस्मरामि धरामिमाम् ॥ ३२ ॥

pravṛddhāsurasaṃgrāme kṣīyamāṇantarāmiha | palāyamānāmabhitaḥ saṃsmarāmi dharāmimām || 32 ||

I remember this earth, when the war of the demons had grown great, wasting away within, fleeing on every side.

मुझे यह धरती याद है, जब असुरों का युद्ध बहुत बढ़ गया था, तब यह भीतर ही भीतर घटती जा रही थी और चारों ओर भागी फिर रही थी।

6.21.33

चतुर्युगानि चाक्रान्तामसुरैर्मत्तकाशिभिः । दैत्यान्तःपुरतां प्राप्तां संस्मरामि धरामिमाम् ॥ ३३ ॥

caturyugāni cākrāntāmasurairmattakāśibhiḥ | daityāntaḥpuratāṃ prāptāṃ saṃsmarāmi dharāmimām || 33 ||

I remember this earth, overrun for four ages by demons maddened and proud, an earth that had become the inner chambers of the demon lords.

मुझे यह धरती याद है, जिस पर चार युगों तक मदमाते और घमंडी असुरों ने कब्ज़ा किया हुआ था, और जो असुर राजाओं के अंतःपुर जैसी बन गई थी।

6.21.34

अत्यन्तान्तरितान्तसमस्तापरमण्डलाम् । अजदेवत्रयीशेषां संस्मरामि जगत्कुटीम् ॥ ३४ ॥

atyantāntaritāntasamastāparamaṇḍalām | ajadevatrayīśeṣāṃ saṃsmarāmi jagatkuṭīm || 34 ||

I remember this hut of a world, in which all the other orbs lay hidden away to the very end, and only the unborn one and the three remained.

मुझे यह जगत की झोंपड़ी याद है, जिसमें बाकी सभी लोक अंत तक छिपे हुए थे, और केवल अजन्मा और वे तीनों ही बचे थे।

6.21.35

चतुर्युगार्धमपरं नीरन्ध्रां वनपादपैः । अदृष्टेतरनिर्माणां संस्मरामि धरामिमाम् ॥ ३५ ॥

caturyugārdhamaparaṃ nīrandhrāṃ vanapādapaiḥ | adṛṣṭetaranirmāṇāṃ saṃsmarāmi dharāmimām || 35 ||

I remember this earth, for another half of the four ages, thick without a gap with forest trees, its making seen nowhere else.

मुझे यह धरती याद है, चार युगों के एक और आधे हिस्से तक, जो जंगल के पेड़ों से बिना किसी खाली जगह के घनी भरी हुई थी, और जिसका बनना कहीं और नहीं देखा गया।

6.21.36

एवं चतुर्युगं साग्रं नीरन्ध्रैरचलैर्वृताम् अप्रवृत्तजनाचारां संस्मरामि धरामिमाम् ॥ ३६ ॥

evaṃ caturyugaṃ sāgraṃ nīrandhrairacalairvṛtām apravṛttajanācārāṃ saṃsmarāmi dharāmimām || 36 ||

So for a full four ages I remember this earth, thickly covered with unbroken mountains, where the ways of people had not yet begun.

इस तरह पूरे चार युगों तक मुझे यह धरती याद है, जो लगातार पहाड़ों से घनी ढकी हुई थी, जहाँ लोगों के रीति-रिवाज़ अभी शुरू भी नहीं हुए थे।

6.21.37

दशवर्षसहस्राणि मृतदैत्यास्थिपर्वतैः आकीर्णां परितः पूर्णां संस्मरामि धरामिमाम् ॥ ३७ ॥

daśavarṣasahasrāṇi mṛtadaityāsthiparvataiḥ ākīrṇāṃ paritaḥ pūrṇāṃ saṃsmarāmi dharāmimām || 37 ||

For ten thousand years I remember this earth, strewn all around and filled with mountains of dead demons' bones.

दस हज़ार साल तक मुझे यह धरती याद है, जो चारों ओर मरे हुए असुरों की हड्डियों के पहाड़ों से बिखरी और भरी हुई थी।

6.21.38

भयादन्तर्हिताशेषवैमानिकनभश्चराम् द्यां च निर्वृक्षनिःशेषां संस्मरामि तमोमयीम् ॥ ३८ ॥

bhayādantarhitāśeṣavaimānikanabhaścarām dyāṃ ca nirvṛkṣaniḥśeṣāṃ saṃsmarāmi tamomayīm || 38 ||

I remember the sky, where out of fear every rider of the flying chariots had vanished completely, and the heaven, without a single tree left, filled with darkness.

मुझे वह आकाश याद है, जहाँ डर के मारे उड़ने वाले रथों के सारे सवार पूरी तरह गायब हो गए थे, और वह आसमान, जिसमें एक भी पेड़ नहीं बचा था, अंधकार से भरा हुआ था।

6.21.39

अनगस्त्यामगस्त्याशामेकपर्वततां गताम् मत्ते विन्ध्यमहाशैले संस्मरामि जगत्कुटीम् ॥ ३९ ॥

anagastyāmagastyāśāmekaparvatatāṃ gatām matte vindhyamahāśaile saṃsmarāmi jagatkuṭīm || 39 ||

I remember this hut of a world, when Agastya was not yet, when the region of Agastya had become a single mountain, at the great, proud Vindhya mountain.

मुझे यह जगत की झोंपड़ी याद है, जब अगस्त्य अभी हुए भी नहीं थे, जब अगस्त्य की दिशा एक ही पहाड़ बन गई थी, उस विशाल और घमंडी विंध्य पर्वत पर।

6.21.40

एतांश्चान्यांश्च वृत्तान्तान्संस्मरामि बहूनपि किं तेन बहुनोक्तेन सारं संक्षेपतः शृणु ॥ ४० ॥

etāṃścānyāṃśca vṛttāntānsaṃsmarāmi bahūnapi kiṃ tena bahunoktena sāraṃ saṃkṣepataḥ śṛṇu || 40 ||

I remember these events and many others besides. But what use is so much telling? Hear the essence in brief.

मुझे ये और भी कई घटनाएँ याद हैं। पर इतना सब कहने से क्या फ़ायदा? सार को संक्षेप में सुनो।

6.21.41

असंख्यातान्मनून्ब्रह्मन्स्मरामि शतशो गतान्। सर्वान्संरम्भबहुलांश्चतुर्युगशतानि च ॥ ४१ ॥

asankhyātānmanūnbrahman smarāmi śataśo gatān | sarvānsaṃrambhabahulāṃścatur yugashatāni ca || 41 ||

O Brahmin, I remember countless Manus, gone by in their hundreds, all of them full of great striving, and hundreds of the four ages besides.

हे ब्राह्मण, मुझे असंख्य मनु याद हैं, जो सैकड़ों की संख्या में बीत चुके हैं, वे सब बड़े संघर्ष से भरे हुए थे, और साथ ही सैकड़ों चतुर्युग भी।

6.21.42

एकमेव स्वयं शुद्धं पुरुषासुरवर्जितम्। आलोकनिचयं चैकं कंचित्सर्गं स्मराम्यहम् ॥ ४२ ॥

ekameva svayaṃ śuddhaṃ puruṣāsuravarjitam | ālokanicayaṃ caikaṃ kaṃcitsargaṃ smarāmyaham || 42 ||

I remember a certain creation - one alone, pure in itself, empty of men and demons, a single mass of light.

मुझे एक ऐसी सृष्टि याद है - बिल्कुल अकेली, अपने आप में शुद्ध, मनुष्यों और असुरों से खाली, प्रकाश का एक ही ढेर।

6.21.43

सुरापं ब्राह्मणं मत्तं निषिद्धसुरशूद्रकम्। बहुनाथसतीकं च कंचित्सर्गं स्मराम्यहम्॥ ४३॥

surāpaṃ brāhmaṇaṃ mattaṃ niṣiddhasuraśūdrakam | bahunāthasatīkaṃ ca kaṃcitsargaṃ smarāmyaham || 43 ||

I remember a certain creation, in which the Brahmin was drunk on wine, in which the Shudra was forbidden wine, and in which a wife had many husbands.

मुझे एक ऐसी सृष्टि याद है, जिसमें ब्राह्मण शराब पीकर मदमस्त रहता था, जिसमें शूद्र के लिए शराब मना थी, और जिसमें एक पत्नी के कई पति होते थे।

6.21.44

वृक्षनीरन्ध्रभूपीठमकल्पितमहार्णवम्। स्वयसंजातपुरुषं कंचित्सर्गं स्मराम्यहम्॥ ४४॥

vṛkṣanīrandhrabhūpīṭhamakalpitamahārṇavam | svayasaṃjātapuruṣaṃ kaṃcitsargaṃ smarāmyaham || 44 ||

I remember a certain creation, its earth thick with trees, its great ocean not yet formed, its men born of themselves.

मुझे एक ऐसी सृष्टि याद है, जिसकी धरती पेड़ों से घनी भरी थी, जिसका महासागर अभी बना भी नहीं था, और जिसमें पुरुष अपने आप जन्मे थे।

6.21.45

अपर्वतमभूमिं च व्योमस्थामरमानवम्। अचन्द्रार्कप्रकाशाख्यं कंचित्सर्गं स्मराम्यहम्॥ ४५॥

aparvatamabhūmiṃ ca vyomastāmaramānavam | acandrārkaprakāśākhyaṃ kaṃcitsargaṃ smarāmyaham || 45 ||

I remember a certain creation, with no mountains and no ground, with gods and men dwelling in the sky, with a light that was neither the moon's nor the sun's.

मुझे एक ऐसी सृष्टि याद है, जिसमें न पहाड़ थे न ज़मीन, जिसमें देवता और मनुष्य आकाश में रहते थे, और जिसमें एक ऐसा प्रकाश था जो न चाँद का था न सूरज का।

6.21.46

अनिन्द्रममहीपालममध्यस्थाधमोत्तमम्। स्वममन्धककुप्चक्रं कंचित्सर्गं स्मराम्यहम्॥ ४६॥

anindramamahīpālamamadhyasthādhamottamam | svamamandhakakupcakraṃ kaṃcitsargaṃ smarāmyaham || 46 ||

I remember a certain creation, without Indra, without a king of the earth, with no middle rank - only the lowest and the highest - the circle of the sky around it undimmed.

मुझे एक ऐसी सृष्टि याद है, जिसमें न इंद्र था न धरती का कोई राजा, जिसमें कोई मंझला दर्जा नहीं था - केवल सबसे नीचा और सबसे ऊँचा - और जिसके चारों ओर आकाश का घेरा एकदम साफ़ था।

6.21.47

सर्गप्रारम्भकलना विभागो भुवनत्रये कुलपर्वतसंस्थानं जम्बूद्वीपं पृथक्स्थितम्॥ ४७॥

sargaprārambhakalanā vibhāgo bhuvanatraye kulaparvatasaṃsthānaṃ jambūdvīpaṃ pṛthaksthitam || 47 ||

The conception of the very start of creation, the division into the three worlds, the arrangement of the ancestral mountains, and Jambudvipa standing apart on its own.

सृष्टि के आरंभ की कल्पना, तीनों लोकों में बँटवारा, मुख्य पर्वतों की व्यवस्था, और जम्बूद्वीप का अलग खड़ा होना।

6.21.48

वर्णधर्मधियां सृष्टिविभागो मण्डलावनेः । ऋक्षचक्रकसंस्थानं ध्रुवनिर्माणमेव च ॥ ४८ ॥

varṇadharmadhiyāṃ sṛṣṭivibhāgo maṇḍalāvaneḥ | ṛkṣacakrakasaṃsthānaṃ dhruvanirmāṇameva ca || 48 ||

The making of the castes, their duties and their understanding, the division of the earth's regions, the arrangement of the circle of the stars, and indeed the making of the pole star.

जातियों, उनके धर्मों और उनकी समझ का बनना, धरती के भागों का बँटवारा, तारों के घेरे की व्यवस्था, और साथ ही ध्रुव तारे का बनना।

6.21.49

जन्मेन्दुभास्करादीनामिन्द्रोपेन्द्रव्यवस्थितिम् । हिरण्याक्षापहरणं वराहोद्धरणं क्षितेः ॥ ४९ ॥

janmendubhāskarādīnāmindropendravavyavasthitim | hiraṇyākṣāpaharaṇaṃ varāhoddharaṇaṃ kṣiteḥ || 49 ||

The birth of the moon, the sun and the rest, the settling of Indra and Upendra in their places, the carrying away of the earth by Hiranyaksha, and the raising of the earth by the Boar.

चाँद, सूरज और बाकी सबका जन्म, इंद्र और उपेंद्र का अपने-अपने स्थान पर बैठना, हिरण्याक्ष द्वारा धरती का हरण, और वराह द्वारा धरती को ऊपर उठाना।

6.21.50

कल्पनं पार्थिवानां च वेदानयनमेव च । मन्दरोन्मूलनं चाब्धेरमृतार्थं च मन्थनम् ॥ ५० ॥

kalpanaṃ pārthivānāṃ ca vedānayanameva ca | mandaronmūlanaṃ cābdheramṛtārthaṃ ca manthanaṃ || 50 ||

The appointing of earthly kings, and indeed the recovering of the Vedas, the uprooting of Mount Mandara from the ocean, and the churning of the ocean for the sake of the nectar of immortality.

धरती के राजाओं की नियुक्ति, और वेदों को वापस लाना, समुद्र से मंदराचल पर्वत को उखाड़ना, और अमृत के लिए समुद्र का मंथन।

6.21.51

अजातपक्षो गरुडः सागराणां च संभवः । इत्यादिका याः स्मृतयः स्वल्पातीतजगत्क्रमाः । बालैरपि हि तास्तात स्मर्यन्ते तासु को ग्रहः ॥ ५१ ॥

ajātapakṣo garuḍaḥ sāgarāṇāṃ ca saṃbhavaḥ | ityādikā yāḥ smṛtayaḥ svalpātītajagatkramāḥ | bālairapi hi tāstāta smaryante tāsu ko grahaḥ || 51 ||

Garuda before his wings had grown, and the birth of the oceans - these and other such memories belong to the world's very recent past. Even children remember them, dear one - what is there to dwell on in them?

गरुड़ का वह समय जब उसके पंख अभी उगे भी नहीं थे, और समुद्रों का जन्म - ये और ऐसी ही और बातें जगत के बहुत हाल के अतीत की हैं। इन्हें तो बच्चे भी याद रखते हैं, प्रिय - इनमें उलझने से क्या फ़ायदा?

6.21.52

गरुडवाहनं विहगवाहनं विहगवाहनं वृषभवाहनम् । वृषभवाहनं गरुडवाहनं कलितवानहं कलितजीवितः ॥ ५२ ॥

garuḍavāhanaṃ vihagavāhanaṃ vihagavāhanaṃ vṛṣabhavāhanam | vṛṣabhavāhanaṃ garuḍavāhanaṃ kalitavānahaṃ kalitajīvitaḥ || 52 ||

Garuda as the mount, then a bird as the mount; a bird as the mount, then a bull as the mount; a bull as the mount, then Garuda as the mount again - I have known this, having lived through it.

कभी गरुड़ सवारी था, फिर पक्षी सवारी बना; कभी पक्षी सवारी था, फिर बैल सवारी बना; कभी बैल सवारी था, फिर से गरुड़ सवारी बना - मैंने यह सब जाना है, अपने जीवन में इसे भोगा है।

Chapter 22

6.22.1

भुशुण्ड उवाच । ततो जगति जातेषु भगवन्युष्मदादिषु । भरद्वाजपुलस्त्यात्रिनारदेन्द्रमरीचिषु ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | tato jagati jāteṣu bhagavanyuṣmadādiṣu | bharadvājapulastyātrināradendramarīciṣu || 1 ||

Bhushunda said: Then, holy one, since you and the rest were born in this world — Bharadvaja, Pulastya, Atri, Narada, Indra, and Marichi —

भुशुण्ड ने कहा: हे भगवन, फिर जब से आप और बाकी लोग इस दुनिया में पैदा हुए — भरद्वाज, पुलस्त्य, अत्रि, नारद, इंद्र और मरीचि —

6.22.2

पुलहोद्दालकाद्येषु क्रतुभृग्वङ्गिरस्सु च । सनत्कुमारभृङ्गीशस्कन्देभवदनादिषु ॥ २ ॥

pulahodddālakādyeṣu kratubhṛgvaṅgirassu ca | sanatkumārabhṛṅgīśaskandebhavadanādiṣu || 2 ||

Pulaha, Uddalaka, and others; Kratu, Bhrigu, and Angiras; Sanatkumara, Bhringisha, Skanda, the elephant-faced god, and others —

पुलह, उद्दालक और बाकी लोग; क्रतु, भृगु और अंगिरस; सनतकुमार, भृंगीश, स्कंद, हाथी-मुख वाले देवता और बाकी लोग —

6.22.3

गौरीसरस्वतीलक्ष्मीगायत्र्याद्यासु भूरिषु । मेरुमन्दरकैलासहिमवद्दर्दुरादिषु ॥ ३ ॥

gaurīsarasvatīlakṣmīgāyatryādyāsu bhūriṣu | merumandarakailāsahimavaddardurādiṣu || 3 ||

Gauri, Sarasvati, Lakshmi, Gayatri, and many other goddesses; Meru, Mandara, Kailasa, Himavat, Dardura, and other mountains —

गौरी, सरस्वती, लक्ष्मी, गायत्री और बाकी बहुत सी देवियाँ; मेरु, मंदर, कैलास, हिमवत, दर्दुर और बाकी पर्वत —

6.22.4

हयग्रीवहिरण्याक्षकालनेमिबलादिषु । हिरण्यकशिपुक्राथबलिप्रह्लादकादिषु ॥ ४ ॥

hayagrīvahiraṇyākṣakālanemibalādiṣu | hiraṇyakaśipukrāthabaliprahrādakādiṣu || 4 ||

Hayagriva, Hiranyaksha, Kalanemi, Bala, and others; Hiranyakashipu, Kratha, Bali, Prahlada, and others —

हयग्रीव, हिरण्याक्ष, कालनेमि, बल और बाकी लोग; हिरण्यकशिपु, क्राथ, बलि, प्रह्लाद और बाकी लोग —

6.22.5

शिबिन्यङ्कुपृथूलाख्यवैन्यनाभागकेलिषु । नलमान्धातृसगरदिलीपनहुषादिषु ॥ ५ ॥

śibinyaṅkupṛthūlākhyavainyanābhāgakeliṣu | nalamāndhātṛsagaradilīpanahuṣādiṣu || 5 ||

Shibi, Nyanku, Prithu — also called Prithula, son of Vena — and Nabhaga, in their deeds; Nala, Mandhatr, Sagara, Dilipa, Nahusha, and others —

शिबि, न्यंकु, पृथु — जिन्हें पृथूल और वेन-पुत्र भी कहते हैं — और नाभाग, इनके खेलों में; नल, मांधाता, सगर, दिलीप, नहुष और बाकी लोग —

6.22.6

आत्रेयव्यासवाल्मीकिशुकवात्स्यायनादिषु । उपमन्युमणीमङ्कीभगीरथशुकादिषु ॥ ६ ॥

ātreyavyāsavālmīkiśukavātsyāyanādiṣu | upamanyumaṇīmaṅkībhagīrathaśukādiṣu || 6 ||

Atreya, Vyasa, Valmiki, Shuka, Vatsyayana, and others; Upamanyu, Mani, Manki, Bhagiratha, Shuka, and others —

आत्रेय, व्यास, वाल्मीकि, शुक, वात्स्यायन और बाकी लोग; उपमन्यु, मणि, मंकी, भगीरथ, शुक और बाकी लोग —

6.22.7

अल्पकातीतकालेषु किंचिद्दूरेषु केषुचित् । तथाद्यतनसर्गेषु स्मरणे गणनैव का ॥ ७ ॥

alpakātītakāleṣu kiñciddūreṣu keṣucit | tathādyatanasargeṣu smaraṇe gaṇanaiva kā || 7 ||

some of these belong to a time only a little past, some to a time somewhat farther back, and some to the present creation as well — when it comes to remembering, what use is counting?

इनमें से कुछ बहुत पहले नहीं हुए, कुछ थोड़ा और पहले हुए, और कुछ तो इसी सृष्टि में भी हुए हैं — याद करने में अब गिनने से क्या फायदा।

6.22.8

मुने ते ब्रह्मपुत्रस्य जन्माष्टकमिदं किल । संस्मराम्यष्टमे सर्गे तस्मिंस्त्वं मम संगतः ॥ ८ ॥

munete brahmaputrasya janmāṣṭakamidaṃ kila | saṃsmarāmyaṣṭame sarge tasmīṃstvaṃ mama saṃgataḥ || 8 ||

Sage, this is indeed your eighth birth, you who are the son of Brahma. I remember it: in that eighth creation, you were together with me.

हे मुनि, यह सचमुच आपका आठवाँ जन्म है, आप जो ब्रह्मा के पुत्र हैं। मुझे याद है: उस आठवीं सृष्टि में आप मेरे साथ थे।

6.22.9

कदाचिज्जायसे व्योम्नः कदाचिज्जायसे जलात् । कदाचिद्वायुतः शैलात्कदाचिज्जायसेऽनलात् ॥ ९ ॥

kadācicijjāyase vyomnaḥ kadācicijjāyase jalāt | kadācidvāyutaḥ śailātkadācicijjāyase'nalāt || 9 ||

Sometimes you are born from the sky, sometimes you are born from water; sometimes from wind, sometimes from a mountain, and sometimes you are born from fire.

कभी आप आकाश से जन्म लेते हैं, कभी पानी से; कभी हवा से, कभी पहाड़ से, और कभी आग से जन्म लेते हैं।

6.22.10

यादृशो यादृशाचारो यादृक्संस्थानदिग्गणः । सर्गोऽयं तादृशानेव त्रीन्सर्गान्संस्मराम्यहम् ॥ १० ॥

yādṛśo yādṛśācāro yādṛksaṃsthānadiggaṇaḥ | sargo'yaṃ tādṛśāneva trīnsargānsaṃsmarāmyaham || 10 ||

Whatever kind this present creation is — its ways, its layout of lands and directions — I remember three creations just like it.

यह सृष्टि जैसी भी है — इसके रीति-रिवाज, इसकी धरती और दिशाओं की बनावट — मुझे ऐसी ही तीन सृष्टियाँ याद हैं।

6.22.11

एकरूपाखिलाचारसंनिवेशधरामरान् । समकालान्स्थिरस्थैर्यान्दशसर्गान्स्मराम्यहम् ॥ ११ ॥

ekarūpākhilācārasaṃniveśadharāmarān | samakālānsthirasthairyāndaśasargānsmarāmyaham || 11 ||

I remember ten creations, all the same in form, the same in every custom, the same in the layout of their lands and their gods, equal in how long they lasted, and firm and steady throughout.

मुझे दस सृष्टियाँ याद हैं, जो रूप में एक जैसी थीं, हर रीति-रिवाज में एक जैसी थीं, अपनी धरती और देवताओं की बनावट में एक जैसी थीं, समय में बराबर थीं, और शुरू से आखिर तक स्थिर रहीं।

6.22.12

अन्तर्धानं गता धात्री वारपञ्चकमुद्धृता । मुने पञ्चसु सर्गेषु कूर्मेणैव पयोनिधेः ॥ १२ ॥

antardhānaṃ gatā dhātrī vārapañcakamuddhṛtā | mune pañcasu sargeṣu kūrmeṇaiva payonidheḥ || 12 ||

Sage, the earth vanished and was raised up again five times — in five creations, by the tortoise, out of the ocean.

हे मुनि, धरती पाँच बार लुप्त हुई और फिर ऊपर उठाई गई — पाँच सृष्टियों में, कछुए के द्वारा, समुद्र से।

6.22.13

मन्दराकर्षणावेगपर्याकुलसुरासुरम् । स्मरामि द्वादशं चेदममृताम्भोधिमन्थनम् ॥ १३ ॥

mandarākṛṣaṇāvegaparyākulasurāsuram | smarāmi dvādaśaṃ cedamamṛtāmbhodhimanthanam || 13 ||

I remember this churning of the ocean of nectar, in which the gods and demons were thrown into turmoil by the force of dragging Mount Mandara, as the twelfth such churning.

मुझे यह अमृत के समुद्र का मंथन याद है, जिसमें मंदर पर्वत को खींचने के वेग से देवता और असुर दोनों घबरा गए थे — यह बारहवीं बार का मंथन है।

6.22.14

सर्वौषधिरसोपेतां बलिग्राहस्तदा दिवः । वारत्रयहिरण्याक्षो नीतवान्वसुधामधः ॥ १४ ॥

sarvauṣadhirasopetāṃ baligrāhas tadā divaḥ | vāratrayahiraṇyākṣo nītavān vasudhāmadhaḥ || 14 ||

Three times, Hiranyaksha, the seizer of tribute, carried the earth — rich with the sap of every plant — down from the sky, below.

तीन बार हिरण्याक्ष ने, जो कर छीनने वाला था, धरती को — जो हर पौधे के रस से भरी थी — आकाश से नीचे ले लिया।

6.22.15

रेणुकात्मजतां गत्वा षष्ठवारमिमं हरिः । बहुसर्गान्तरेणापि चकार क्षत्रियक्षयम् ॥ १५ ॥

reṇukātmajatāṃ gatvā ṣaṣṭhavāramimaṃ hariḥ | bahusargāntareṇāpi cakāra kṣatriyakṣayam || 15 ||

Becoming the son of Renuka, Hari did this — the destruction of the kshatriyas — for the sixth time, even though many creations lay between each time.

रेणुका का पुत्र बनकर, हरि ने यह काम — क्षत्रियों का नाश — छठी बार किया, हालाँकि हर बार के बीच कई सृष्टियाँ बीत चुकी थीं।

6.22.16

शतं कलियुगानां च हरेर्बुद्धदशाशतम् । शौकराजतयैवाप्तं स्मरामि मुनिनायक ॥ १६ ॥

śataṃ kaliyugānāṃ ca harerbuddhadaśāśatam | śaukarājatayaivāptaṃ smarāmi munināyaka || 16 ||

I remember, chief of sages, a hundred Kali Yugas, and Hari's Buddha form appearing a hundred times, reached also in the form of the boar-king.

हे मुनियों के नायक, मुझे याद है — सौ कलियुग, और हरि का बुद्ध रूप सौ बार आना, और वराह रूप में भी यही पाया जाना।

6.22.17

त्रिंशत्त्रिपुरविक्षोभान्द्वौ दक्षाध्वरसंक्षयौ । दशशक्रविघातांश्च चन्द्रमौलेः स्मराम्यहम् ॥ १७ ॥

triṃśattripuravikṣobhāndvau dakṣādhvarasaṃkṣayau | daśaśakravighātāṃśca candramauleḥ smarāmyaham || 17 ||

I remember thirty times Tripura was thrown down, two destructions of Daksha's sacrifice, and ten routs of Indra — all by the moon-crested one.

मुझे याद है — त्रिपुर का तीस बार नाश, दक्ष के यज्ञ का दो बार विनाश, और इंद्र की दस बार हार — ये सब चंद्रमा को सिर पर धारण करने वाले शिव के द्वारा।

6.22.18

बाणार्थमष्टौ संग्रामाञ्ज्वरप्रमथमन्त्रकान् । विक्षोभितसुरानीकान्स्मरामि हरिशर्वयोः ॥ १८ ॥

bāṇārthamaṣṭau saṃgrāmāñjvarapramathamantrakān | vikṣobhitasurānīkāntsmarāmi hariśarvayoḥ || 18 ||

I remember eight battles fought for the sake of Bana, battles of fever, goblins, and spells, in which the armies of the gods were thrown into turmoil — battles between Hari and Shiva.

मुझे याद है — बाण के लिए लड़े गए आठ युद्ध, जिनमें बुखार, भूत-प्रेत और मंत्रों का प्रयोग हुआ, और जिनमें देवताओं की सेनाएँ घबरा गईं — ये हरि और शिव के बीच के युद्ध थे।

6.22.19

युगंप्रति धियां पुंसां न्यूनाधिकतया मुने । क्रियाङ्गपाठवैचित्र्ययुक्तान्वेदान्त्यराम्यहम् ॥ १९ ॥

yugaṃprati dhiyāṃ puṃsāṃ nyūnādhikatayā mune | kriyāṅgapāṭhavai citryayuktānvēdāntyārāmyaham || 19 ||

Sage, because in each age people's understanding is sometimes less, sometimes greater, I remember the Vedas recited in many different versions of their ritual sections.

हे मुनि, हर युग में लोगों की समझ कभी कम और कभी ज़्यादा होती है, इसलिए मुझे वेद याद हैं जिनके कर्मकांड वाले हिस्से अलग-अलग तरीकों से पढ़े गए।

6.22.20

एकार्थानि समग्राणि बहुपाठानि मेऽनघ । पुराणानि प्रवर्तन्ते प्रसृतानि युगंप्रति ॥ २० ॥

ekārthāni samagrāṇi bahupāṭhāni me'nagha | purāṇāni pravartante prasṛtāni yugaṃprati || 20 ||

Sinless one, to me the Puranas are one in meaning and complete, though they have many versions — they arise and spread anew in every age.

हे निष्पाप, मेरे लिए पुराण अर्थ में एक ही हैं और पूरे हैं, भले ही उनके कई पाठ हों — वे हर युग में नए सिरे से उठते और फैलते हैं।

6.22.22

इतिहासं महाश्चर्यमन्यं रामायणामिधम् । ग्रन्थलक्षप्रमाणं च ज्ञानशास्त्रं स्मराम्यहम् ॥ २२ ॥

itihāsaṃ mahāścaryamanyaṃ rāmāyaṇāmidham | granthalakṣapramāṇaṃ ca jñānaśāstram smarāmyaham || 22 ||

I remember another history, greatly wondrous, called the Ramayana — a work of knowledge running to a hundred thousand verses.

मुझे एक और इतिहास याद है, जो बहुत अद्भुत है, जिसे रामायण कहा जाता है — यह ज्ञान का एक ग्रंथ है जो एक लाख श्लोकों का है।

6.22.23

रामवद्व्यवहर्तव्यं न रावणविलासवत्। इति यत्र धियां ज्ञानं हस्ते फलमिवार्पितम्॥ २३॥

rāmavadvyavahartavyaṃ na rāvaṇavilāsavat | iti yatra dhiyāṃ jñānaṃ hastē phalamivārpitam || 23 ||

One should act as Rama did, not as Ravana did in his self-indulgence — in this work, understanding is placed in people's hands like a fruit.

राम जैसा व्यवहार करना चाहिए, रावण के भोग-विलास जैसा नहीं — इस ग्रंथ में लोगों की बुद्धि में ज्ञान हाथ में रखे फल की तरह दिया गया है।

6.22.25

वाल्मीकिनाम्ना जीवेन तेनैवान्येन वा कृतम्। एतच्च द्वादशं वारं क्रियते विस्मृतिं गतम्॥ २५॥

vālmīkināmnā jīvena tenaivānyena vā kṛtam | etaccadvādaśaṃ vāraṃ kriyate vismṛtiṃ gatam || 25 ||

This same work, made by the soul named Valmiki, or by another, is being made now for the twelfth time, each time after the last was forgotten.

यह वही ग्रंथ, वाल्मीकि नाम की आत्मा ने, या किसी और ने बनाया — यह अब बारहवीं बार बनाया जा रहा है, हर बार पिछला भुला दिए जाने के बाद।

6.22.26

द्वितीयमेतस्य समं भारतं नाम नामतः। स्मरामि प्राक्तनव्यासकृतं जगति विस्मृतम्॥ २६॥

dvitīyametasya samaṃ bhārataṃ nāma nāmataḥ | smarāmi prāktanavyāsakṛtaṃ jagati vismṛtam || 26 ||

I remember a second work, equal to this one, called by the name Bharata, made by an earlier Vyasa, and now forgotten in the world.

मुझे एक दूसरा ग्रंथ याद है, जो इसके बराबर है, जिसका नाम भारत है, जिसे किसी पहले के व्यास ने बनाया था, और जो अब दुनिया में भुला दिया गया है।

6.22.27

व्यासाभिधेन जीवेन तेनैवान्येन वा कृतम्। एतत्तु सप्तमं वारं क्रियते विस्मृतिं गतम्॥ २७॥

vyāsābhidhena jīvena tenaivānyena vā kṛtam | etattu saptamaṃ vāraṃ kriyate vismṛtiṃ gatam || 27 ||

Made by that same soul called Vyasa, or by another, this work is being made now for the seventh time, each time after being forgotten.

वही आत्मा, जिसे व्यास कहा जाता है, या कोई और — इसने इसे बनाया; यह अब सातवीं बार बनाया जा रहा है, हर बार भुला दिए जाने के बाद।

6.22.28

कृतं वाल्मीकिना चैतदधुना यत्करिष्यति अन्यच्च प्रकटं लोके स्थितं ज्ञास्यसि कालतः॥ २८॥

kṛtaṃ vālmīkinā caitadadhunā yatkariṣyati anyacca prakaṭaṃ loke sthitaṃ jñāsyasi kālataḥ || 28 ||

This has now been made by Valmiki, and whatever else he will make, standing manifest in the world — you will come to know it in time.

यह अब वाल्मीकि द्वारा बनाया गया है, और वे आगे जो कुछ और बनाएँगे और दुनिया में प्रकट होकर रहेगा — वह आपको समय के साथ पता चल जाएगा।

6.22.29

भूयस्तान्येव तान्येव तथान्यानि युगे युगे साधो पदार्थजालानि प्रपश्यामि स्मरामि वै ॥ २९ ॥

bhūyastānyeva tānyeva tathānyāni yuge yuge sādho padārthajālāni prapaśyāmi smarāmi vai || 29 ||

Good man, again and again, age after age, I see and remember the same clusters of things, the same ones, the same ones, and also different ones.

हे सज्जन, मैं बार-बार, हर युग में, चीज़ों के वही समूह देखता और याद करता हूँ, वही, वही, और कुछ अलग समूह भी।

6.22.30

राक्षसक्षतये विष्णोर्महीमवतरिष्यतः अधुनैकादशं जन्म रामनाम्नो भविष्यति ॥ ३० ॥

rākṣasakṣataye viṣṇormahīmavatariṣyataḥ adhunaikādaśaṃ janma rāmanāmno bhaviṣyati || 30 ||

To destroy the demons, Vishnu, who is about to descend to the earth, will now have his eleventh birth under the name Rama.

राक्षसों का नाश करने के लिए, विष्णु अब धरती पर उतरने वाले हैं; यह उनका ग्यारहवाँ जन्म होगा, और वे राम नाम से जाने जाएँगे।

6.22.31

नारसिंहेन वपुषा हिरण्यकशिपुं हरिः जघान वारत्रितयं मृगेन्द्र इव वारणम् ॥ ३१ ॥

nārasiṃhena vapuṣā hiraṇyakaśipuṃ hariḥ jaghāna vāratritayaṃ mṛgendra iva vāraṇam || 31 ||

With his body as the Man-Lion, Hari killed Hiranyakashipu three times, the way a lion kills an elephant.

नरसिंह रूप में, हरि ने हिरण्यकशिपु को तीन बार मारा, जैसे सिंह हाथी को मारता है।

6.22.32

वसुदेवगृहे विष्णोर्भुवो भारनिवृत्तये अधुना षोडशं जन्म भविष्यति मुनीश्वर ॥ ३२ ॥

vasudevagṛhe viṣṇorbhuvobhāranivṛttaye adhunā ṣoḍaśaṃ janma bhaviṣyati munīśvara || 32 ||

In the house of Vasudeva, to remove the earth's burden, Vishnu will now take his sixteenth birth, lord of sages.

हे मुनीश्वर, वसुदेव के घर में, धरती का बोझ उतारने के लिए, विष्णु अब अपना सोलहवाँ जन्म लेंगे।

6.22.33

जगन्मयी भ्रान्तिरियं न कदाचन विद्यते । विद्यते तु कदाचिच्च जलबुद्बुदवत्स्थिता ॥ ३३ ॥

jaganmayī bhrāntiriyam na kadācana vidyate | vidyate tu kadāciccajalabudbudavatsthitā || 33 ||

This world-delusion never truly exists at all; yet at times it does exist, standing there like a bubble on water.

यह जो जगत के रूप में भ्रम है, वह सच में कभी है ही नहीं; फिर भी कभी-कभी यह होता है, जैसे पानी पर एक बुलबुला।

6.22.34

दृश्यभ्रान्तिरनित्येयमन्तस्था संविदात्मनि । जायते लीयते चाशु लोला वीचिरिवाम्भसि ॥ ३४ ॥

dṛśyabhrāntiranityeyamantasthā saṃvidātmani | jāyate līyate cāśu lolā vīcirivāmbhasi || 34 ||

This delusion of what is seen does not last; it sits within consciousness itself. It arises and quickly melts away, restless, like a wave in water.

यह जो दिखने वाला भ्रम है, वह टिकने वाला नहीं है; यह चेतना के भीतर ही बसा है। यह उठता है और जल्दी मिट जाता है, चंचल, जैसे पानी में एक लहर।

6.22.35

समेकसंनिवेशानि बहूनि विषमाणि च । तथार्धसमरूपाणि त्रिजगन्ति स्मराम्यहम् ॥ ३५ ॥

samekasaṃniveśāni bahūni viṣamāṇi ca | tathārdhasamarūpāṇi trijaganti smarāmyaham || 35 ||

I remember the three worlds as they have been, many times arranged just the same, many times arranged differently, and many times arranged half the same and half different.

मुझे तीनों लोक याद हैं, कई बार बिलकुल एक जैसे बने, कई बार अलग बने, और कई बार आधे एक जैसे और आधे अलग बने।

6.22.36

तान्येव तादृक्कर्माणि तथान्याचरणानि च । तत्कर्माणि तथान्यानि भूतानीह स्मराम्यहम् ॥ ३६ ॥

tānyeva tādṛkkarmāṇi tathānyācaraṇāni ca | tatkarmāṇi tathānyāni bhūtānīha smarāmyaham || 36 ||

I remember, in this world, the very same deeds done in the very same way, and also other, different conduct; the same acts, and also other, different beings.

मुझे इस संसार में याद है, वही कर्म वैसे ही किए गए, और कुछ दूसरे ढंग के आचरण भी; वही कर्म, और कुछ दूसरे प्राणी भी।

6.22.37

प्रतिमन्वन्तरं ब्रह्मन्विपर्यस्ते जगत्क्रमे । संनिवेशेऽन्यथाजाते प्रयाते संश्रुते जने ॥ ३७ ॥

pratimanvantaraṃ brahmanviparyaste jagatkrame | saṃniveśe'nyathājāte prayāte saṃśrute jane || 37 ||

In every new Manvantara, brahmin, the world's order turns upside down, its arrangement comes out different, and the generation once known passes away.

हे ब्राह्मण, हर नए मन्वन्तर में, संसार का क्रम उलट जाता है, उसकी बनावट अलग हो जाती है, और जो पीढ़ी पहचानी जाती थी वह जा चुकी होती है।

6.22.38

ममान्यान्येव मित्राणि अन्य एव च बन्धवः । अन्य एव नवा भृत्या अन्य एव समाश्रयाः ॥ ३८ ॥

mamānyānyeva mitrāṇi anya eva ca bandhavaḥ | anya eva navā bhṛtyā anya eva samāśrayāḥ || 38 ||

Then my friends become different ones, and my kinsmen too become different; my new servants are different, and my shelters are different.

तब मेरे मित्र दूसरे हो जाते हैं, और मेरे रिश्तेदार भी दूसरे हो जाते हैं; मेरे नए सेवक दूसरे होते हैं, और मेरे ठिकाने भी दूसरे होते हैं।

6.22.39

कदाचिदहमेकान्ते विन्ध्यकच्छकृतालयः । कदाचित्सह्यनिलयः कदाचिद्दर्दुरालयः ॥ ३९ ॥

kadācidahamekānte vindhyakacchakṛtālayaḥ | kadācitsahyanilayaḥ kadāciddardurālayaḥ || 39 ||

Sometimes I have lived alone, making my home in a marshy tract of the Vindhya hills; sometimes I have dwelt in the Sahya hills, sometimes in the Dardura hills.

कभी मैं अकेला विंध्य पर्वत के दलदली भाग में रहा; कभी सह्य पर्वत में रहा, कभी दर्दुर पर्वत में रहा।

6.22.40

कदाचिद्धिमवद्वासी कदाचिन्मलयाचलः । कदाचित्प्राक्तनेनैव संनिवेशेन भूधरम् ॥ ४० ॥

kadāciddhimavadvāsī kadācinmalayācalaḥ | kadācitprāktanenaiva saṃniveśena bhūdharam || 40 ||

Sometimes I have lived in the Himalaya, sometimes on the Malaya mountain, and sometimes, through that same old arrangement repeating, I have kept to a mountain again.

कभी मैं हिमालय में रहा, कभी मलय पर्वत पर रहा, और कभी उसी पुरानी बनावट के दोहराने से, फिर किसी पर्वत पर रहा।

6.22.41

चूतवृक्षे च शाखायां प्राप्य नीडं करोम्यहम् । अनाद्यन्तेषु यातेषु युगेषु मुनिनायक ॥ ४१ ॥

cūtavṛkṣe ca śākhāyāṃ prāpya nīḍaṃ karomyaḥam | anādyanteṣu yāteṣu yugeṣu munināyaka || 41 ||

And I find a branch of a mango tree and make my nest there, leader of sages, through the countless ages without beginning or end that have passed.

और आम के पेड़ की एक डाल पाकर, मैं वहाँ अपना घोंसला बनाता हूँ, हे मुनियों के स्वामी, उन अनगिनत, बिना आदि-अंत के युगों में जो बीत चुके हैं।

6.22.42

प्राक्तनेनैव जातोऽयं संनिवेशेन पादपः । देहं त्यक्त्वा सुखं साधो नातः परिणतिं गतः ॥ ४२ ॥

prāktanenaiva jāto'yaṃ saṃniveśena pādapaḥ | dehaṃ tyaktvā sukhaṃ sādho nātaḥ pariṇatiṃ gataḥ || 42 ||

This tree was born through that very same arrangement as before. Good man, having peacefully given up its body, it did not turn into anything different because of that.

यह पेड़ भी उसी पुरानी बनावट से जन्मा है। हे सज्जन, अपने पुराने शरीर को शांति से छोड़कर, यह उसकी वजह से किसी और चीज़ में नहीं बदला।

6.22.43

तदीयेनैव जातोऽयं संनिवेशेन पादपः । ताते जीवति यैवाभूच्छोभास्य सुतरोस्तथा ॥ ४३ ॥

tadīyenaiva jāto'yaṃ saṃniveśena pādapaḥ | tāte jīvati yaivābhūcchobhāsya sutarostathā || 43 ||

This tree too was born through that very same arrangement as the one before it. The beauty that belonged to it while its parent tree was alive belongs, just the same, to this child tree.

यह पेड़ भी उसी पुरानी बनावट से जन्मा है जो पहले वाले पेड़ की थी। जो सुंदरता इस पेड़ की तब थी जब इसका पिता वृक्ष जीवित था, वही सुंदरता अब इसके संतान वृक्ष की भी है।

6.22.44

कृतप्राक्संनिवेशोऽयमहं स्थितिमिहागतः । नेहाभूदुत्तरा पूर्वं ककुब्नायं च भूधरः ॥ ४४ ॥

kṛtaprāksaṃniveśo'yamahaṃ sthitimihāgataḥ | nehābhūduttarā pūrvaṃ kakubnāyaṃ ca bhūdharaḥ || 44 ||

I too have come to be as I am now, shaped by that same arrangement as before. Here, in the past, there was no north; this direction was not the same, and this mountain was not the same either.

मैं भी उसी पुरानी बनावट के अनुसार बनकर यहाँ इस स्थिति में आया हूँ। यहाँ पहले उत्तर दिशा नहीं थी; यह दिशा वैसी नहीं थी, और यह पर्वत भी वैसा नहीं था।

6.22.45

दिगुत्तराभूदन्येयं पूर्वमेव महीधरः । एकैकदेहसंस्थानवीतब्रह्मनिशागमः ॥ ४५ ॥

diguttarābhūdanyeyaṃ pūrvameva mahīdharaḥ | ekaikadehasaṃsthānavītabrahmaniśāgamaḥ || 45 ||

This north was once a different direction, and this mountain too was different before. With each single bodily existence, a night of Brahma has come and gone.

यह उत्तर दिशा पहले कोई और दिशा थी, और यह पर्वत भी पहले कुछ और था। हर एक शरीर के साथ, ब्रह्मा की एक रात बीत चुकी है।

6.22.46

ध्यानान्ते तत्त्व एवैनं सर्गमालोक्य वेद्म्यहम्। अर्कादेर्ऋक्षसंच्चारान्मेर्वादिस्थानका दिशः ॥ ४६ ॥

dhyānānte tattva evainaṃ sargamālokya vedmyaham | arkāderṛkṣasaṃccārānmervādistānakā diśaḥ || 46 ||

At the end of meditation, I truly see this creation and know it: the positions of places like Meru, and the directions themselves, come from the movement of the sun and stars.

ध्यान के अंत में, सच में, इस सृष्टि को देखकर मैं इसे जानता हूँ, सूर्य और तारों की गति से ही मेरु आदि स्थान और दिशाएँ बनती हैं।

6.22.47

संस्थानमन्यथा तस्मिन्स्थिते यान्ति दिशोऽन्यथा। न सन्नासज्जगन्मन्ये भ्रमयन्केवलं धियः ॥ ४७ ॥

saṃsthānamanyathā tasminsthite yānti diśo'nyathā | na sannāsajjaganmanye bhramayankevalaṃ dhiyaḥ || 47 ||

When that is set differently, the whole arrangement changes, and the directions change too. I do not think the world is real, nor that it is unreal, it merely confuses the mind.

जब वह अलग तरह से स्थित होता है, तो पूरी बनावट बदल जाती है, और दिशाएँ भी बदल जाती हैं। मैं इस जगत को न सत्य मानता हूँ, न असत्य, यह बस बुद्धि को भ्रमित करता है।

6.22.48

आत्मस्पन्दचमत्कारविभवोऽयं विजृम्भते। पुत्रः पितृत्वमायाति मित्रं यात्यरितां तथा ॥ ४८ ॥

ātmaspandacamatkāravibhavo'yaṃ vijṛmbhate | putraḥ pitṛtvamāyāti mitraṃ yātyaritāṃ tathā || 48 ||

This whole display unfolds as the wonder of the self's own inner stirring: a son becomes a father, and in the same way, a friend becomes an enemy.

यह सब आत्मा की अपनी हलचल के चमत्कार की शक्ति से फैलता है, बेटा पिता बन जाता है, और वैसे ही मित्र शत्रु बन जाता है।

6.22.49

स्त्रीत्वं च शतशो यातान्पुंसश्चैव स्मराम्यहम्। कलौ कृतयुगाचारान्कृते कलियुगस्थितिम् ॥ ४९ ॥

strītvaṃ ca śataśo yātānpumsaścaiva smarāmyaham | kalau kṛtayugācārānkṛte kaliyugasthitim || 49 ||

I remember men who, hundreds of times, have become women. I remember the ways of the Krita age appearing within the Kali age, and the state of the Kali age appearing within the Krita age.

मुझे याद है कि पुरुष सैकड़ों बार स्त्री बन चुके हैं। मुझे याद है कि कलियुग में सतयुग जैसे आचार दिखे, और सतयुग में कलियुग जैसी स्थिति दिखी।

6.22.50

त्रेतायां द्वापरे चैव संस्मरामि मुनीश्वर। अदृष्टवेदवेदार्थान्स्वसंकेतविहारिणः ॥ ५० ॥

tretāyāṃ dvāpare caiva saṃsmarāmi munīśvara | adṛṣṭavedavedārthānsvasaṃketavihāriṇaḥ || 50 ||

In the Treta age and in the Dvapara age too, lord of sages, I remember people who had never seen the Vedas or their meaning, living by rules of their own making.

हे मुनीश्वर, त्रेता और द्वापर युग में भी, मुझे याद हैं ऐसे लोग जिन्होंने न वेद देखे थे, न वेदों का अर्थ, और जो अपने ही बनाए नियमों से जीते थे।

6.22.51

सर्गान्निरर्गलाचारान्क्वचित्कांश्चित्स्मराम्यहम्। ध्यातरि ब्रह्मणो ब्रह्मन्ससुरासुरमानुषम्॥ ५१॥

sargān nirargalācārān kvacit kāṃścit smarāmyaham | dhyātari brahmaṇo brahman sasurāsuramānuṣam || 51 ||

Brahmin, here and there, I remember certain creations that followed no law, and one, together with gods, demons and men, existing within the meditation of a Brahma.

हे ब्राह्मण, मुझे याद हैं कहीं-कहीं कुछ ऐसी सृष्टियाँ जिनका कोई नियम-कायदा नहीं था, और एक ऐसी सृष्टि भी, जिसमें देवता, असुर और मनुष्य शामिल थे, जो किसी ब्रह्मा के ध्यान के भीतर बसी थी।

6.22.52

चतुर्युगसहस्रान्ते जगच्छून्यं स्मराम्यहम्। मनोमननिर्माणान्पार्थिवाकारवर्जितान्। व्याप्तान्वायुमयैर्भूतैर्दश सर्गान्स्मराम्यहम्॥ ५२॥

catur yugasahasrānte jagacchūnyaṃ smarāmyaham | manomananirmāṇānpārthivākāravarjitān | vyāptānvāyumayairbhūtairdaśa sargānsmarāmyaham || 52 ||

At the end of a thousand cycles of the four ages, I remember the world empty. I remember ten creations made only by the thinking of the mind, without any earthly shape, filled with beings made of air.

चार युगों के हज़ार चक्रों के अंत में, मुझे यह जगत खाली याद है। मुझे याद हैं दस सृष्टियाँ जो केवल मन के सोचने से बनी थीं, जिनका कोई सांसारिक रूप नहीं था, और जो हवा जैसे प्राणियों से भरी थीं।

6.22.53

विचित्रसंस्थानविशेषदेशान्विचित्रकार्याकुलभूतकोशान्। विचित्रविन्यासविलासवेषान्स्मराम्यहं ब्रह्मदिनेष्वशेषाम्॥ ५३॥

vicitrasaṃsthānaviśeṣadeśānvicitrakāryākulabhūtakośān | vicitravinyāsavilāsaveṣānsmarāmyahaṃ brahmadineṣvaśeṣām || 53 ||

Strange and special lands with their own arrangements, hosts of beings caught up in strange doings, and wondrous, playful forms of dress and bearing, all of it I remember, in the days of Brahma.

विचित्र और खास बनावट वाले वे प्रदेश, अजीब-अजीब कामों में लगे प्राणियों के समूह, और उनके निराले, चटकीले वेश-भूषा, यह सब मुझे याद है, ब्रह्मा के दिनों में।

Chapter 23

6.23.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथासौ वायसश्रेष्ठो जिज्ञासार्थमिदं मया । भूयः पृष्टो महाबाहो कल्पवृक्षलताग्रके ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athāsau vāyasaśreṣṭho jijñāsārthamidaṃ mayā | bhūyaḥ pṛṣṭo mahābāho kalpavṛkṣalatāgrake || 1 ||

Sri Vasishtha said: Then, O mighty-armed Rama, on the tip of a branch of the wish-granting tree, I asked that finest of crows this question again, wanting to know it.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, हे बलवान राम, इच्छा पूरी करने वाले पेड़ की एक डाल की नोक पर, मैंने उस सबसे अच्छे कौए से यह बात जानने के लिए फिर पूछी।

6.23.2

चरतां जगतः कोशे व्यवहारवतामपि । कथं विहगराजेन्द्र देहं मृत्युर्न बाधते ॥ २ ॥

caratāṃ jagataḥ kośe vyavahāravatāmapi | kathaṃ vihagarājendra dehaṃ mṛtyurna bādhate || 2 ||

O king of birds, how is it that death does not touch the body of people who move about within this world and carry on its everyday affairs?

हे पक्षियों के राजा, जो लोग इस दुनिया में घूमते-फिरते हैं और रोज़ के काम-काज भी करते हैं, मृत्यु उनके शरीर को क्यों नहीं सताती?

6.23.3

भुशुण्ड उवाच । जानन्नपि हि सर्वज्ञ ब्रह्मञ्जिज्ञासयेव माम् । पृच्छसि प्रभवो नित्यं भृत्यं वाचालयन्ति हि ॥ ३ ॥

bhūśuṇḍa uvāca | jānannapi hi sarvajña brahmañjijñāsayeva mām | pṛcchasi prabhavo nityaṃ bhṛtyaṃ vācālayanti hi || 3 ||

Bhushunda said: You know everything already, all-knowing Brahmin, yet you ask me as if you wanted to know. Masters always make their servants speak.

भुशुण्ड ने कहा: हे सब कुछ जानने वाले ब्राह्मण, आप सब कुछ पहले से जानते हैं, फिर भी मानो जानने की इच्छा से मुझसे पूछते हैं। मालिक हमेशा अपने सेवक से बुलवाते ही हैं।

6.23.4

तथापि यत्पृच्छसि मां तत्ते प्रकथयाम्यहम् । आज्ञाचरणमेवाहुर्मुख्यमाराधनं सताम् ॥ ४ ॥

tathāpi yatpṛcchasi māṃ tatte prakathayāmyaham | ājñācaraṇamevāhurmukhyamārādhanam satām || 4 ||

Even so, whatever you ask me, I will tell you. People say that obeying a command is the chief way good people show devotion.

फिर भी आप जो मुझसे पूछते हैं, वह मैं आपको बताता हूँ। कहा जाता है कि आज्ञा का पालन करना ही सज्जनों की सबसे बड़ी सेवा है।

6.23.5

दोषमुक्ताफलप्रोता वासनातन्तुसंततिः । हृदि न ग्रथिता यस्य मृत्युस्तं न जिघांसति ॥ ५ ॥

doṣamuktāphalaprotā vāsanātantusantatiḥ | hṛdi na grathitā yasya mṛtyustan na jighāṃsati || 5 ||

Death does not try to kill the person whose heart does not carry the thread of desires strung with pearls of fault.

मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसके दिल में इच्छाओं की डोरी, जो दोषरूपी मोतियों से गुँथी है, बँधी हुई नहीं है।

6.23.6

निःश्वासवृक्षक्रकचाः सर्वदेहलताघुणाः । आधयो यं न भिन्दन्ति मृत्युस्तं न जिघांसति ॥ ६ ॥

niḥśvāsavṛkṣakrakacāḥ sarvadehalatāghuṇāḥ | ādhayo yaṃ na bhindanti mṛtyustañ na jighāṃsati || 6 ||

Mental worries are like saws cutting the tree of the breath and worms boring into the vine of the whole body. Death does not try to kill the person they cannot cut through.

मानसिक चिंताएँ साँस के पेड़ को काटने वाली आरी जैसी हैं और पूरे शरीररूपी बेल को खाने वाले कीड़े जैसी हैं। मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसे ये काट नहीं पातीं।

6.23.7

शरीरतरुसर्पौघाश्चिन्तार्पितशिरःफणाः । आशा यं न दहन्त्यन्तर्मृत्युस्तं न जिघांसति ॥ ७ ॥

śarīratarusarpaughāścintārpitasiarḥphaṇāḥ | āśā yaṃ na dahantyantarmṛtyustañ na jighāṃsati || 7 ||

Hopes are like a swarm of snakes living in the tree of the body, their raised hoods full of worry. Death does not try to kill the person they do not burn inside.

उम्मीदें शरीररूपी पेड़ में रहने वाले साँपों के झुंड जैसी हैं, जिनके उठे हुए फन चिंता से भरे हैं। मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसे ये भीतर से जला नहीं पातीं।

6.23.8

रागद्वेषविषापूरः स्वमनोबिलमन्दिरः । लोभव्यालो न भुङ्क्ते यं मृत्युस्तं न जिघांसति ॥ ८ ॥

rāgadveṣaviṣāpūraḥ svamanobilamandiraḥ | lobhavyālo na bhuṅkte yaṃ mṛtyustañ na jighāṃsati || 8 ||

Greed is a snake that lives in the hole of one's own mind, filled with the poison of desire and hatred. Death does not try to kill the person this snake does not feed on.

लालच एक साँप है जो अपने ही मन के बिल में रहता है और इच्छा और नफरत के ज़हर से भरा है। मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसे यह साँप खाता नहीं।

6.23.9

पीताशेषविवेकाम्बुः शरीराम्भोधिवाडवः । न निर्दहति यं कोपस्तं मृत्युर्न जिघांसति ॥ ९ ॥

pītāśeṣavivekāmbuḥ śarīrāmbhodhivāḍavaḥ | na nirdahati yaṃ kopastañ mṛtyurna jighāṃsati || 9 ||

Anger is a fire under the ocean of the body that has drunk up all the water of good sense. Death does not try to kill the person it does not burn up.

गुस्सा शरीररूपी समुद्र की तह में लगी वह आग है जो सारा विवेकरूपी पानी पी चुकी है। मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसे यह आग जलाती नहीं।

6.23.10

यन्त्रं तिलानां कठिनं राशिमुग्रमिवाकुलम् । यं पीडयति नानङ्गस्तं मृत्युर्न जिघांसति ॥ १० ॥

yantraṃ tilānāṃ kaṭhinaṃ rāśimugramivākulam | yaṃ pīḍayati nānaṅgastañ mṛtyurna jighāṃsati || 10 ||

Desire presses a person the way an oil-press crushes a huge, hard, churning heap of sesame seeds. Death does not try to kill the person it does not crush like that.

वासना किसी व्यक्ति को वैसे ही दबाती है जैसे तिल पेरने की घानी तिल के कठोर, उग्र और उलझे हुए ढेर को पेरती है। मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसे वासना इस तरह दबाती नहीं।

6.23.11

एकस्मिन्निर्मले येन पदे परमपावने । संश्रिता चित्तविश्रान्तिस्तं मृत्युर्न जिघांसति ॥ ११ ॥

ekasminnirmale yena pade paramapāvane | saṃśritā cittaviśrāntistam mṛtyurna jighāṃsati || 11 ||

Death does not try to kill the person whose mind has found rest in one clear, completely pure state.

मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसके मन को एक साफ़ और पूरी तरह पवित्र अवस्था में चैन मिल गया है।

6.23.12

वपुःखण्डाभिपतितं शाखामृगमिवोदितम् । न चञ्चलं मनो यस्य तं मृत्युर्न जिघांसति ॥ १२ ॥

vapuḥkhaṇḍābhitapitaṃ śākhāmṛgamivoditam | na cañcalaṃ mano yasya taṃ mṛtyurna jighāṃsati || 12 ||

Death does not try to kill the person whose mind does not dart about restlessly, the way a monkey leaps up pouncing on a piece of flesh.

मृत्यु उस व्यक्ति को मारने की कोशिश नहीं करती जिसका मन उस बंदर की तरह बेचैन होकर उछलता नहीं, जो मांस के एक टुकड़े पर झपटता है।

6.23.13

एते ब्रह्मन्महादोषाः संसारव्याधिहेतवः । मनागपि न लुम्पन्ति चित्तमेकं समाहितम् ॥ १३ ॥

ete brahmanmahādoṣāḥ saṃsāravyādhihetavaḥ | manāgapi na lumpanti cittamekaṃ samāhitam || 13 ||

O Brahmin, these great faults, the causes of the disease of worldly life, do not harm a settled, one-pointed mind even a little.

हे ब्राह्मण, ये बड़े-बड़े दोष, जो संसाररूपी बीमारी के कारण हैं, एकाग्र और स्थिर मन को तनिक भी हानि नहीं पहुँचाते।

6.23.14

आधिव्याधिसमुत्थानि चलितानि महाभ्रमेः । न विलुम्पन्ति दुःखानि चित्तमेकं समाहितम् ॥ १४ ॥

ādhiyādhisamutthāni calitāni mahābhrahmeḥ | na vilumpanti duḥkhāni cittamekaṃ samāhitam || 14 ||

Sorrows that rise from mental worry and bodily disease, stirred up by great delusion, do not harm a settled, one-pointed mind.

मानसिक चिंता और शरीर की बीमारी से उठने वाले और बड़े मोह से हिलाए गए दुःख, एकाग्र और स्थिर मन को हानि नहीं पहुँचाते।

6.23.15

नास्तमेति न चोदेति न संस्मृतिर्न विस्मृतिः । न सुप्तं न च जाग्रत्स्याच्चित्तं यस्य समाहितम् ॥ १५ ॥

nāstameti na codeti na saṃsmṛtirna vismṛtiḥ | na suptaṃ na ca jāgratsyāccittaṃ yasya samāhitam || 15 ||

The mind of a person who is settled does not set and does not rise, does not remember and does not forget, is not asleep and is not awake.

जिस व्यक्ति का मन स्थिर हो गया है, उसका मन न डूबता है न उगता है, न याद करता है न भूलता है, न सोया रहता है न जागा रहता है।

6.23.16

अन्धीकृतहृदाकाशाः कामकोपविकारजाः । चिन्ता न परिहिंसन्ति चित्तं यस्य समाहितम् ॥ १६ ॥

andhīkṛtahṛdākāśāḥ kāmakopavikārajāḥ | cintā na parihiṃsanti cittaṃ yasya samāhitam || 16 ||

Worries born from the turmoil of desire and anger, which darken the sky of the heart, do not harm the mind of a person who is settled.

इच्छा और गुस्से की उथल-पुथल से पैदा होने वाली और दिलरूपी आकाश को अंधा कर देने वाली चिंताएँ, स्थिर मन को हानि नहीं पहुँचातीं।

6.23.17

न ददाति न चादत्ते न जहाति न याचते। कुर्वदेव च कार्याणि चित्तं यस्य समाहितम्॥ १७॥

na dadāti na cādatte na jahāti na yācate | kurvadeva ca kāryāṇi cittaṃ yasya samāhitam || 17 ||

The settled mind of such a person does not give and does not take, does not leave and does not beg, yet it goes on doing what has to be done.

ऐसे व्यक्ति का स्थिर मन न कुछ देता है न लेता है, न कुछ छोड़ता है न माँगता है, फिर भी वह अपने काम करता रहता है।

6.23.18

ये दुरर्था दुरारम्भा दुर्गुणा दुरुदाहृताः। दुष्क्रमास्ते न कृन्तन्ति चित्तं यस्य समाहितम्॥ १८॥

ye durarthā durārambhā durguṇā durudāhṛtāḥ | duṣkramāste na kṛntanti cittaṃ yasya samāhitam || 18 ||

Things that have a bad purpose, a bad start, a bad quality, a bad name, and a bad course do not cut into the mind of a person who is settled.

जिन बातों का मकसद बुरा है, शुरुआत बुरी है, गुण बुरा है, जिनकी बदनामी है और चाल बुरी है, वे स्थिर मन को छू तक नहीं पातीं।

6.23.19

आभान्ति विपुलार्थानि महान्ति गुणवन्ति च। सर्वाण्येवानुधावन्ति चित्तं यस्य समाहितम्॥ १९॥

ābhānti vipulārthāni mahānti guṇavanti ca | sarvāṇyevānudhāvanti cittaṃ yasya samāhitam || 19 ||

Great things, rich in meaning and full of good qualities, shine before him. Everything comes running after the man whose mind is at peace.

जिसका मन शांत है, उसके सामने बड़ी, अर्थ से भरी और गुणों से भरपूर चीज़ें चमकती हैं। सब कुछ उसी के पीछे दौड़ा चला आता है।

6.23.20

यदुदर्कहितं सत्यमनपायि गतभ्रमम्। दुरीहितदृशोन्मुक्तं तत्परं कारयेन्मनः॥ २०॥

yadudarkahitaṃ satyamanapāyi gatabhramam | durīhitadṛśonmuktaṃ tatparaṃ kārayenmanaḥ || 20 ||

The mind should be fixed only on what is good in the end, what is true, what never fails, and what is free from confusion and wrong desire.

मन को केवल उसी चीज़ में लगाना चाहिए जो अंत में भलाई दे, जो सच्ची हो, जो कभी नष्ट न हो, और जो भ्रम और गलत इच्छा से मुक्त हो।

6.23.21

यददृष्टमशुद्धेन चित्तवैधुर्यदायिनानेकत्वपिशाचेन तत्परं कारयेन्मनः॥ २१॥

yadadṛṣṭamaśuddhena cittavaidhuryadāyināanekatvapiśācena tatparaṃ kārayenmanaḥ || 21 ||

The mind should be fixed only on what stays hidden from that unclean demon of endless difference, the demon that robs the mind of its peace.

मन को केवल उसी चीज़ में लगाना चाहिए जो उस अशुद्ध राक्षस की नज़र से छिपी रहती है, वह राक्षस जो अनेकता का है और जो मन की शांति छीन लेता है।

6.23.22

आदौ मध्ये तथान्ते च चिराय परमोचितम्यच्चारु मधुरं पथ्यं तत्परं कारयेन्मनः॥ २२॥

ādau madhye tathānte ca cirāya paramocitamyaccāru madhuraṃ pathyaṃ tatparaṃ kārayenmanaḥ || 22 ||

The mind should be fixed only on what is right at the start, right in the middle, and right at the end, what stays fitting for a long time, and what is lovely, sweet, and wholesome.

मन को केवल उसी चीज़ में लगाना चाहिए जो शुरू में, बीच में और अंत में सही हो, जो लंबे समय तक उचित बनी रहे, और जो सुंदर, मीठी और हितकारी हो।

6.23.23

यदनन्तं मनःपथ्यं तथ्यमाद्यन्तमध्यगम्समस्तसाधुभिर्जुष्टं तत्परं कारयेन्मनः ॥ २३ ॥

yadanantaṃ manaḥpathyaṃ tathyamādyantamadhyagamsamastasādhubhirjuṣṭaṃ tatparaṃ kārayenmanaḥ || 23 ||

The mind should be fixed only on what has no end, what is good for the mind, what is true from start to middle to end, and what all good people cherish.

मन को केवल उसी चीज़ में लगाना चाहिए जिसका कोई अंत नहीं, जो मन के लिए अच्छी है, जो शुरू से बीच से अंत तक सच्ची है, और जिसे सभी अच्छे लोग अपनाते हैं।

6.23.24

यद्बुद्धेः परमालोकमाद्यं यदमृतं परम्यदनुत्तमसौभाग्यं तत्परं कारयेन्मनः ॥ २४ ॥

yadbuddheḥ paramālokamādyaṃ yadamṛtaṃ paramyadanuttamasaubhāgyaṃ tatparaṃ kārayenmanaḥ || 24 ||

The mind should be fixed only on what is the first and highest light of understanding, on the highest nectar, and on the greatest joy there is.

मन को केवल उसी चीज़ में लगाना चाहिए जो समझ का सबसे पहला और सबसे ऊँचा प्रकाश है, जो सबसे बड़ा अमृत है, और जो सबसे बड़ा सुख है।

6.23.25

सामरासुरगन्धर्वे सविद्याधरकिन्नरेससुरस्त्रीगणे स्वर्गे न किंचित्सुस्थिरं शुभम् ॥ २५ ॥

sāmarāsuragandharve savidyādharakinnaresasurastrīgaṇe svarge na kiṃcitsusthiraṃ śubham || 25 ||

In heaven, with its gods, demons, gandharvas, vidyadharas, kinnaras, and crowds of heavenly women, nothing at all is truly lasting and good.

स्वर्ग में, जहाँ देवता, दानव, गंधर्व, विद्याधर, किन्नर और स्वर्ग की स्त्रियों के समूह रहते हैं, वहाँ कुछ भी सच में टिकाऊ और अच्छा नहीं है।

6.23.26

सतरौ सनराधीशे सपर्वतपुरव्रजे । साम्बुधौ भूतले तात न किंचिच्छोभनं स्थिरम् ॥ २६ ॥

satarau sanarādhīśe saparvatapuravraje | sāmbudhau bhūtale tāta na kiñcicchobhanaṃ sthiram || 26 ||

On this earth, dear child, with its trees, its kings, its mountains, its towns and villages, and its oceans, nothing beautiful lasts.

इस धरती पर, बेटा, जहाँ पेड़, राजा, पहाड़, नगर, गाँव और समुद्र हैं, वहाँ कोई भी सुंदर चीज़ स्थिर नहीं रहती।

6.23.27

सनागे सासुरव्यूहे सासुरस्त्रीगणे तथा । समस्त एव पाताले न किंचिच्छोभनं स्थिरम् ॥ २७ ॥

sanāge sāsuravyūhe sāsurastrīgaṇe tathā | samasta eva pātāle na kiñcicchobhanaṃ sthiram || 27 ||

In the whole underworld, with its serpent-people, its armies of demons, and its crowds of demon women, nothing beautiful lasts.

पूरे पाताल में, जहाँ नाग, दानवों की सेनाएँ और दानव स्त्रियों के समूह हैं, वहाँ कोई भी सुंदर चीज़ स्थिर नहीं रहती।

6.23.28

सस्वर्गे ससुरालोके सपाताले सदिक्तटे । जगत्यस्मिंस्तु सर्वस्मिन्न किंचिच्छोभनं स्थिरम् ॥ २८ ॥

sasvarge sasurāloke sapātāle sadiktate | jagatyasmiṃstu sarvasminna kiñcicchobhanaṃ sthiram || 28 ||

In this whole world, with its heaven, its world of gods, its underworld, and the far ends of every direction, nothing beautiful lasts.

इस पूरे संसार में, जिसमें स्वर्ग, देवताओं का लोक, पाताल और सभी दिशाओं के छोर शामिल हैं, वहाँ कोई भी सुंदर चीज़ स्थिर नहीं रहती।

6.23.29

आधिव्याधिविलोलासु दुःखौघवलितासु च । क्रियासुनित्यतुच्छासु न किंचित्सुस्थिरं शुभम् ॥ २९ ॥

ādhiyādhivilolāsu duḥkhaughavalitāsu ca | kriyāsunityatucchāsu na kiñcitsusthiraṃ śubham || 29 ||

In all that we do, shaken by worry and sickness, drowned in floods of sorrow, always small and petty, nothing at all is truly lasting and good.

हमारे सारे कामों में, जो चिंता और बीमारी से हिलते रहते हैं, दुख की बाढ़ में डूबे रहते हैं और हमेशा छोटे और तुच्छ रहते हैं, वहाँ कुछ भी सच में टिकाऊ और अच्छा नहीं है।

6.23.30

तरलीकृतचित्तासु हृदयानन्दिनीषु च । चिन्तासु धीविकारासु नकिंचित्सुस्थिरं शुभम् ॥ ३० ॥

taralīkṛtacittāsu hṛdayānandinīṣu ca | cintāsu dhīvikārāsu nakiñcitsusthiraṃ śubham || 30 ||

In our worries, which make the mind unsteady, which please the heart only for a moment, and which disturb our reason, nothing at all is truly lasting and good.

हमारी चिंताओं में, जो मन को डगमगा देती हैं, जो दिल को बस थोड़ी देर के लिए खुश करती हैं, और जो बुद्धि को बिगाड़ देती हैं, वहाँ कुछ भी सच में टिकाऊ और अच्छा नहीं है।

6.23.31

हृत्क्षीरोदकसंस्पन्दमन्दरेषु चलेष्वपि । स्वसंकल्पविकल्पेषु न किंचित्सुस्थिरं शुभम् ॥ ३१ ॥

hṛtkṣīrodakasaṃspandamandareṣu caleṣvapi | svasaṅkalpavikalpeṣu na kiñcitsusthiraṃ śubham || 31 ||

Even our own decisions and the doubts that fight them stir the heart's ocean of milk the way Mount Mandara once churned it, yet they themselves never stay still. Nothing in them is lasting and good.

हमारे अपने फैसले और उनसे लड़ने वाले संदेह भी मन के दूध के सागर को उसी तरह मथते हैं जैसे मंदराचल पर्वत ने सागर को मथा था, फिर भी वे खुद कभी स्थिर नहीं रहते। उनमें कुछ भी टिकाऊ और अच्छा नहीं है।

6.23.32

अनारतागमापायपरास्वसिशिरास्वपि । चित्राकारासु चेष्टासु न किंचित्सुस्थिरं शुभम् ॥ ३२ ॥

anāratāgamāpāyaparāsvasiśirāsvapi | citrākārāsu ceṣṭāsu na kiñcitsusthiraṃ śubham || 32 ||

In everything we do, always coming and going, as unsafe as walking on the edge of a sword, and taking countless different shapes, nothing at all is truly lasting and good.

हमारे हर काम में, जो हमेशा आते-जाते रहते हैं, तलवार की धार पर चलने जैसे खतरनाक होते हैं, और जो अनगिनत रूप बदलते रहते हैं, वहाँ कुछ भी सच में टिकाऊ और अच्छा नहीं है।

6.23.33

न वरमेकमहीतलराजता न च वरं विबुधामररूपता । न च वरं धरणीतलनागता स्थितिमुपैति हि यत्र सतां मनः ॥ ३३ ॥

na varam ekamahītalarājatā na ca varaṃ vibudhāmararūpatā | na ca varaṃ dharaṇītalanāgatā sthitimupaiti hi yatra satāṃ manaḥ || 33 ||

To be the sole king over the whole earth is no better than the place where the minds of good people come to rest. To have the form of a god is no better. To be a serpent-lord under the earth is no better.

पूरी धरती का अकेला राजा होना भी उतना अच्छा नहीं है जितना वह जगह जहाँ अच्छे लोगों का मन शांत होकर टिकता है। किसी देवता का रूप पाना भी उतना अच्छा नहीं है। धरती के नीचे नागों का राजा बनना भी उतना अच्छा नहीं है।

6.23.34

न वरमाकुलशास्त्रविचारणं न च वरं परकार्यविवेचनम् । न वरमग्र्यकथाक्रमवर्णनं स्थितिमुपैति हि यत्र सतां मनः ॥ ३४ ॥

na varam ākulaśāstravicāraṇaṃ na ca varaṃ parakāryavivecanam | na varam agryakathākramavarṇanaṃ sthitimupaiti hi yatra satāṃ manaḥ || 34 ||

Working through confusing scripture is no better than the place where the minds of good people come to rest. Judging other people's business is no better. Telling one fine story after another is no better.

उलझे हुए शास्त्रों में सिर खपाना भी उतना अच्छा नहीं है जितना वह जगह जहाँ अच्छे लोगों का मन शांत होकर टिकता है। दूसरों के मामलों को जांचना-परखना भी उतना अच्छा नहीं है। एक के बाद एक अच्छी कहानियाँ सुनाना भी उतना अच्छा नहीं है।

6.23.35

न वरमाधिमयं चिरजीवितं न च वरं मरणं दृढमूढता । न च वरं नरको न च विष्टपं स्थितिमुपैति हि न क्वचिदाशयः ॥ ३५ ॥

na varam ādhimayaṃ cirajīvitaṃ na ca varaṃ maraṇaṃ dṛḍhamūḍhatā | na ca varaṃ narako na ca viṣṭapaṃ sthitimupaiti hi na kvacidāśayaḥ || 35 ||

A long life full of worry is no better. Death is no better, nor is stubborn folly. Hell is no better, nor is heaven. The mind finds rest nowhere in any of them.

चिंता से भरी लंबी उम्र भी अच्छी नहीं है। मृत्यु भी अच्छी नहीं है, न ही हठी मूर्खता। नरक भी अच्छा नहीं है, न ही स्वर्ग। इनमें से किसी में भी मन को शांति नहीं मिलती।

6.23.36

इति विविधजगत्क्रमाः समस्ताः खलु मतिमूढतया नरस्य रम्याः । चलतरकलनाहिते पदार्थे कथमुपयान्ति चिरस्थितिं महान्तः ॥ ३६ ॥

iti vividhajagatkramāḥ samastāḥ khalu matimūḍhatayā narasya ramyāḥ | calatarakalanāhite padārthe kathamupayānti cirasthitiṃ mahāntaḥ || 36 ||

So all these many ways of the world seem pleasing to a man only because his mind is confused. In a thing that keeps on changing, how can great people ever find lasting steadiness?

इसलिए संसार के ये सारे तरह-तरह के रूप मनुष्य को केवल इसलिए अच्छे लगते हैं क्योंकि उसकी बुद्धि भ्रमित है। जो चीज़ हमेशा बदलती रहती है, उसमें महान लोग स्थिर टिकाव कैसे पा सकते हैं?

Chapter 24

6.24.1

भुशुण्ड उवाच । एकैव केवला दृष्टिर्निरापाया गतभ्रमा । विद्यते सर्ववित्त्वेषु सर्वश्रेष्ठा समुन्नता ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | ekaiva kevalā dṛṣṭirnirāpāyā gatabhramā | vidyate sarvavittveṣu sarvaśreṣṭhā samunnatā || 1 ||

Bhushunda said: There is only one true insight. It is pure, safe from all harm, and free of all confusion. Among every kind of knowing, it is the best of all, the highest.

भुशुण्ड ने कहा: सच्ची समझ बस एक ही है। वह शुद्ध है, हर हानि से सुरक्षित है, और हर भ्रम से मुक्त है। हर तरह के ज्ञान में, वह सबसे अच्छी है, सबसे ऊँची है।

6.24.2

आत्मचिन्ता समस्तानां दुःखानामन्तकारिणी । चिरसंभृतदुःस्वप्नसंसारभ्रमहारिणी ॥ २ ॥

ātmacintā samastānāṃ duḥkhānāmantakāriṇī | cirasaṃbhṛtaduḥsvapnasamsārabhramahāriṇī || 2 ||

Thought about oneself ends all sorrows. It removes the confusion of the world, which is a bad dream held on to for a long time.

खुद के बारे में सोचना सब दुखों को खत्म कर देता है। यह संसार के उस भ्रम को दूर करता है, जो लंबे समय से पाला हुआ एक बुरा सपना है।

6.24.3

निष्कलङ्कमनोमार्गविपुलाङ्गणचारिणी । तथा समस्तदुःखानां चिन्तानर्थविनाशिनी ॥ ३ ॥

niṣkalaṅkamanomārgavipulāṅgaṇacāriṇī | tathā samastaduḥkhānāṃ cintānarthavināśinī || 3 ||

It moves freely through the wide, clear space of the mind. It also destroys the harmful worry that lies behind every sorrow.

यह सोच मन के विशाल और साफ रास्ते में खुलकर घूमती है। यह हर दुख के पीछे छिपी हानिकारक चिंता को भी मिटा देती है।

6.24.4

ज्योत्स्नयेवान्धकाराणामलमन्तः प्रजायते । सा स्वात्मचिन्ता भगवन्सर्वसंकल्पवर्जिता ॥ ४ ॥

jyotsnayevāndhakārāṇāmalamantaḥ prajāyate | sā svātmacintā bhagavansarvasaṅkalpavarjitā || 4 ||

It arises within, like moonlight, strong enough to drive away the darkness. Venerable one, this thought about oneself is free of all wishing and imagining.

यह भीतर चांदनी की तरह उठती है, जो अंधकार को दूर करने के लिए काफी है। हे भगवन, खुद के बारे में यह सोच हर तरह की इच्छा और कल्पना से मुक्त है।

6.24.5

युष्मदादिषु सुप्रापा दुष्प्रापैवास्मदादिषु । समस्तकलनातीतं परां कोटिमुपागतम् ॥ ५ ॥

yuṣmadādiṣu suprāpā duṣprāpaivāsmadādiṣu | samastakalanātītaṃ parāṃ koṭimupāgatam || 5 ||

This is easy to reach for you and those like you, but hard to reach for us and those like us. It goes beyond all reckoning; it has reached the highest point.

यह तुम्हारे लिए और तुम्हारे जैसे लोगों के लिए पाना आसान है, पर हमारे लिए और हमारे जैसे लोगों के लिए पाना कठिन है। यह हर तरह के हिसाब-किताब से परे है; यह सबसे ऊँचे शिखर तक पहुँच चुकी है।

6.24.6

पदमासादयन्त्येतत्कथं सामान्यबुद्धयः । आत्मचिन्ताविलासिन्यास्तस्याः सख्यो महामुने ॥ ६ ॥

padamāsādayantyetatkathaṃ sāmānyabuddhayaḥ | ātmacintāvilāsinyāstasyāḥ sakhyo mahāmune || 6 ||

How can ordinary minds reach this state? Great sage, hear now about the friends of that playful thought about oneself.

साधारण बुद्धि वाले लोग यह हाल कैसे पा सकते हैं? हे महामुने, अब सुनो उस चंचल सोच की सहेलियों के बारे में, जो खुद के बारे में सोचने से जुड़ी हैं।

6.24.7

किंचित्साम्यमुपायाता विज्ञानशशिशीतलाः । आत्मचिन्तासमानानां विविधानां मुनीश्वर ॥ ७ ॥

kiṃcitsāmyamupāyātā vijñānaśaśiśītalāḥ | ātmacintāsamānānāṃ vividhānāṃ munīśvara || 7 ||

Among the many things that are like thought about oneself, lord of sages, a few have come a little close to it, cool like the moon of true knowledge.

खुद के बारे में सोचने जैसी बहुत सी चीज़ों में से, हे मुनीश्वर, कुछ ही उसके थोड़ा करीब आ पाई हैं, जो ज्ञान के चाँद जैसी ठंडी हैं।

6.24.8

आत्मचिन्तावयस्यानां मध्यादेकतमा मया । सर्वदुःखक्षयकरी सर्वसौभाग्यवर्धिनी ॥ ८ ॥

ātmacintāvayasyānāṃ madhyādekatamā mayā | sarvaduḥkhakṣayakarī sarvasaubhāgyavardhinī || 8 ||

Among the friends of thought about oneself, I count one above the rest. She ends every sorrow and increases every good fortune.

खुद के बारे में सोचने की सहेलियों में से, मैं एक को सबसे ऊपर मानता हूँ। वह हर दुख को खत्म करती है और हर सौभाग्य को बढ़ाती है।

6.24.9

कारणं जीवितस्येह प्राणचिन्ता समाश्रिता । श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्तवन्तं विहगं भुशुण्डं पुनरप्यहम् । जानन्नपीदमव्यग्रः पृष्टवान्क्रीडया मुनिम् ॥ ९ ॥

kāraṇaṃ jīvitasyeha prāṇacintā samāśritā | śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktavantaṃ vihagaṃ bhuśuṇḍaṃ punarapyaham | jānannapīdamavyagraḥ pṛṣṭavānkrīḍayā munim || 9 ||

Here, the cause of life rests on concern for the vital breath. Sri Vasishtha said: The bird Bhushunda had said this. Even so, I asked the sage again. I already knew the answer and felt no unease; I asked only in play.

यहाँ जीवन का कारण प्राण की चिंता पर टिका है। श्री वसिष्ठ ने कहा: पक्षी भुशुण्ड ने यह कहा। फिर भी मैंने मुनि से दोबारा पूछा। मैं पहले से उत्तर जानता था और मुझे कोई बेचैनी नहीं थी; मैंने केवल खेल-खेल में पूछा।

6.24.10

सर्वसंशयविच्छेदिन्नत्यन्तचिरजीवित । यथार्थम ब्रूहि मे साधो प्राणचिन्ता किमुच्यते ॥ १० ॥

sarvasaṃśayavicchedinnatyantacirajīvita | yathārtham brūhi me sādho prāṇacintā kimucyate || 10 ||

You cut through every doubt, and your life is exceedingly long. Tell me truly, good sage, what is meant by concern for the vital breath.

आप हर संशय को काट देते हैं, और आपका जीवन बहुत ही लंबा है। हे साधु, मुझे सच-सच बताइए, प्राण की चिंता से क्या मतलब है।

6.24.11

भुशुण्ड उवाच सर्ववेदान्तवेत्तासि सर्वसंशयनाशकः मामेतत्परिहासार्थं मुने पृच्छसि वायसम् ॥ ११ ॥

bhūśuṇḍa uvāca sarvavedāntavettāsi sarvasaṃśayanāśakaḥ māmetatparihāsārthaṃ mune pṛcchasi vāyasam || 11 ||

Bhushunda said: You know all of Vedanta; you destroy every doubt. Sage, you ask me, a crow, only in jest.

भुशुण्ड ने कहा: आप समस्त वेदांत को जानते हैं; आप हर संशय को मिटा देते हैं। हे मुनि, आप मुझ कौवे से यह केवल मज़ाक में पूछ रहे हैं।

6.24.12

अथवा भवतामेव भगवन्परिशिक्षितुम् पुनः प्रत्युत्तराणीदं का मे क्षतिरुपस्थिता ॥ १२ ॥

athavā bhavatāmeva bhagavanpariśikṣitum punaḥ pratyuttarāṇīdaṃ kā me kṣatirupasthitā || 12 ||

Or perhaps, venerable one, you ask only to sharpen your own understanding. Even so, what do I lose by answering you again?

या फिर, हे भगवन, हो सकता है आप केवल अपनी समझ को और निखारने के लिए पूछ रहे हों। फिर भी, आपको दोबारा उत्तर देने में मेरी क्या हानि है?

6.24.13

भुशुण्डजीवितकरं भुशुण्डस्वात्मलाभदम् शृणु प्राणसमाधानं वक्ष्यमाणमिदं मया ॥ १३ ॥

bhūśuṇḍajīvitakaraṃ bhūśuṇḍasvātmalābhadam śṛṇu prāṇasamādhānaṃ vakṣyamāṇamidaṃ mayā || 13 ||

Listen now to this settling of the vital breath, which I am about to explain. It is what keeps Bhushunda alive; it is what has brought Bhushunda to his own true self.

अब सुनो प्राण को शांत करने की यह बात, जो मैं अभी बताने जा रहा हूँ। यही भुशुण्ड को जीवित रखती है; यही भुशुण्ड को उसके अपने सच्चे स्वरूप तक ले आई है।

6.24.14

पश्येदं भगवन्सर्वं देहगेहं मनोरमम् त्रिप्रकारमहास्थूणं नवद्वारसमावृतम् ॥ १४ ॥

paśyedaṃ bhagavansarvaṃ dehagehaṃ manoramam tripakāramahāsthūṇaṃ navadvārasamāvṛtam || 14 ||

Venerable one, see all of this: the pleasant house that is the body. It is held up by one great three-part pillar, and enclosed by nine doors.

हे भगवन, यह सब देखिए, यह सुंदर घर, जो शरीर है। यह एक बड़े तीन-भाग वाले खंभे पर टिका है, और नौ दरवाज़ों से घिरा हुआ है।

6.24.15

पुर्यष्टककलत्रेण तन्मात्रस्वजनेन च अहंकारगृहस्थेन सर्वतः परिपालितम् ॥ १५ ॥

puryaṣṭakakalatreṇa tanmātrasvajanena ca ahaṃkāragṛhasthana sarvataḥ paripālitam || 15 ||

On every side, this house is kept up: its wife is the subtle body, its kinfolk are the subtle elements, and its householder is the ego.

यह घर हर तरफ से इस तरह संभाला जाता है, इसकी पत्नी सूक्ष्म शरीर है, इसके परिजन सूक्ष्म तत्व हैं, और इसका मालिक अहंकार है।

6.24.16

अन्तः पश्यसि सत्कर्णशष्कुलीचन्द्रशालिकम्। शिरोरुहाच्छादनवद्विपुलाक्षिगवाक्षकम्॥ १६॥

antaḥ paśyasi satkarṇaśaṣkulīcandraśālikam | śiroruhācchādanavadvipulākṣigavākṣakam || 16 ||

Inside, you see: the two ears are its rooftop turrets, the hair is its roof-covering, and the large eyes are its windows.

भीतर देखो, दोनों कान इसकी छत की मुंडेर हैं, बाल इसकी छत का आवरण हैं, और बड़ी आँखें इसकी खिड़कियाँ हैं।

6.24.17

आस्यप्रधानसुद्वार भुजपार्श्वोपमन्दिरम्। दन्तालिकेसरस्रग्भिर्भूषितद्वारकोटरम्॥ १७॥

āsyapradhānasudvāra bhujapārśvopamandiram | dantālikeśarasragbhirbhūṣitadvārakoṭaram || 17 ||

The mouth is the house's main door. The arms on either side are like halls built onto it. Its gateway is decorated with garlands made of teeth, delicate like garlands of flowers.

मुँह इस घर का मुख्य द्वार है। इसके दोनों ओर की भुजाएँ मानो इससे जुड़े हुए बरामदे हैं। इसका द्वार दांतों की मालाओं से सजा है, जो फूलों की मालाओं जितनी नाज़ुक हैं।

6.24.18

अनारतं रूपरसस्पर्शनद्वारपालवत्। संकुलालोकवलितं तारालिन्दकृतस्थिति॥ १८॥

anārataṃ rūparasasparśanadvārapālavat | saṃkulālokavalitaṃ tārālindakṛtasthiti || 18 ||

Sight, taste and touch stand as its doorkeepers, always on watch. It is crowded with sights on every side, and the pupils of its eyes form its terrace.

रूप, स्वाद और स्पर्श इसके द्वारपाल हैं, जो हमेशा पहरे पर रहते हैं। यह हर तरफ से तरह-तरह के नज़ारों से भरा है, और इसकी आँखों की पुतलियाँ इसका बरामदा बनाती हैं।

6.24.19

रक्तमांसवसादिग्धं स्नायुसंततिवेष्टितम्। स्थूलास्थिकाष्ठसंबद्धं सुकुडयं सुसमाहितम्॥ १९॥

raktamāṃsavasādigdhaṃ snāyusaṃtativeṣṭitam | sthūlāsthikāṣṭhasaṃbaddhaṃ sukudayaṃ susamāhitam || 19 ||

It is coated with blood, flesh and fat, and wrapped in a network of sinews. Thick bones serve as its timber, holding it together. Its walls are strong, and it is well put together.

यह खून, मांस और चर्बी से लिपटा हुआ है, और नसों के जाल से बंधा हुआ है। मोटी हड्डियाँ इसकी लकड़ी की तरह हैं, जो इसे जोड़े रखती हैं। इसकी दीवारें मज़बूत हैं, और यह अच्छी तरह से बना हुआ है।

6.24.20

इडा च पिङ्गला चास्य देहस्य मुनिनायक। सुस्थिते कोमले मध्ये पार्श्वकोष्ठे निमीलिते॥ २०॥

iḍā ca piṅgalā cāsya dehasya munināyaka | susthite komale madhye pārśvakoṣṭhe nimīlite || 20 ||

Ida and pingala, O chief of sages, are the two channels of this body; they rest well in the soft middle part, hidden away in the closed chambers on its two sides.

हे मुनियों के प्रधान, इस शरीर की इडा और पिंगला नाम की दो नाड़ियाँ कोमल बीच वाले हिस्से में अच्छी तरह टिकी हैं, और शरीर के दोनों तरफ के बंद कोठों में छिपी हुई हैं।

6.24.21

पद्मयुग्मत्रयं यन्त्रमस्थिमांसमयं मृदुऊर्ध्वाधोनालमन्योन्यमिलत्कोमलसद्दलम् ॥ २१ ॥

padmayugmatrayaṃ yantramasthimāṃsamayaṃ mṛduūrdhvādhonālamanyonyamilatkomalasaddalam || 21 ||

This machine is made of three pairs of lotuses, formed of bone and flesh, soft to the touch, with stalks running upward and downward, its soft petals touching one another.

यह यंत्र तीन जोड़ी कमलों से बना है, हड्डी और मांस से बना, छूने में नरम, जिसकी नालें ऊपर और नीचे की तरफ जाती हैं, और जिसकी नरम पंखुड़ियाँ आपस में मिलती हैं।

6.24.22

सेकेन विकसत्पत्रं सकलाकाशचारिणाचलन्ति तस्य पत्राणि मृदु व्याप्तानि वायुना ॥ २२ ॥

sekena vikasatpatraṃ sakalākāśacāriṇācalanti tasya patrāṇi mṛdu vyāptāni vāyunā || 22 ||

Sprinkled with moisture its petals open, the way they would from a breeze moving through the whole sky; its petals stir, softly filled with that air.

पानी छिड़कने से जैसे फूल की पंखुड़ियाँ खिलती हैं, वैसे ही पूरे आकाश में बहती हवा से इसकी पंखुड़ियाँ खिलती हैं; इसकी पंखुड़ियाँ हिलती हैं, उस हवा से नरमी से भर जाती हैं।

6.24.23

चलत्सु तेषु पत्रेषु स मरुत्परिवर्धतेवाताहते लतापत्रजाले बहिरिवाभितः ॥ २३ ॥

calatsu teṣu patreṣu sa marutparivardhatevātāhate latāpatrajāle bahirivābhitaḥ || 23 ||

When those petals move, the breath inside grows greater, the way a web of vine leaves struck by the wind spreads and stirs all around, as though it were outside the body.

जब वे पंखुड़ियाँ हिलती हैं, तो भीतर की वह हवा और बढ़ती जाती है, जैसे हवा के थपेड़ों से बेलों और पत्तों का जाल चारों तरफ फैलता और हिलता है, मानो शरीर के बाहर हो।

6.24.24

वृद्धिं नीतः स नाडीषु कृत्वा स्थानमनेकधाऊर्ध्वाधोवर्तमानासु देहेऽस्मिन्प्रसरत्यथ ॥ २४ ॥

vṛddhiṃ nītaḥ sa nāḍīṣu kṛtvā sthānamanekadhāūrdhvādhovartamānāsu dehe'sminprasaratyatha || 24 ||

Once grown in this way, it settles in many places among the channels running upward and downward, and then spreads through this whole body.

इस तरह बढ़कर वह हवा ऊपर-नीचे जाने वाली नाड़ियों में कई जगह अपनी जगह बनाती है, और फिर इस पूरे शरीर में फैल जाती है।

6.24.25

प्राणापानसमानाद्यैस्ततः स हृदयानिलःसंकेतैः प्रोच्यते तज्ज्ञैर्विचित्राचारचेष्टितैः ॥ २५ ॥

prāṇāpānasamānādyaistataḥ sa hṛdayānilaḥsaṃketaiḥ procyate tajjñairvicitrācāraceṣṭitaiḥ || 25 ||

Then those who understand this call this breath of the heart by names such as prana, apana and samana, names given for its many different actions and movements.

फिर जो लोग इसे समझते हैं, वे हृदय की इस हवा को प्राण, अपान, समान जैसे नामों से पुकारते हैं, ये नाम उसके अलग-अलग तरह के काम और हरकतों के हिसाब से दिए गए हैं।

6.24.26

हृत्पद्मयन्त्रत्रितये समस्ताः प्राणशक्तयः ऊर्ध्वाधः प्रसृता देहे चन्द्रबिम्बादिवांशवः ॥ २६ ॥

hṛtpadmayantratritaye samastāḥ prāṇaśaktayaḥ ūrdhvādhaḥ prasṛtā dehe candra bimbādivāṃśavaḥ || 26 ||

In the three machines of the heart lotus, all the powers of breath spread upward and downward through the body, like rays spreading out from the disk of the moon.

हृदय-कमल के इन तीन यंत्रों में, प्राण की सारी शक्तियाँ शरीर में ऊपर और नीचे फैलती हैं, जैसे चाँद की थाली से किरणें चारों तरफ फैलती हैं।

6.24.27

यान्त्यायान्ति विकर्षन्ति हरन्ति विहरन्ति च उत्पतन्ति पतन्त्याशु ता एताः प्राणशक्तयः ॥ २७ ॥

yāntyāyānti vikarṣanti haranti viharanti ca utpatanti patantyāśu tā etāḥ prāṇaśaktayaḥ || 27 ||

These powers of breath go out and come back, they pull, they carry things away, they move about, they fly up and quickly fall down again, such are these powers of breath.

प्राण की ये शक्तियाँ बाहर जाती हैं और वापस आती हैं, खींचती हैं, चीज़ों को ले जाती हैं, इधर-उधर घूमती हैं, ऊपर उड़ती हैं और फिर तेज़ी से नीचे गिरती हैं, प्राण की ये शक्तियाँ ऐसी ही हैं।

6.24.28

स एष हृत्पद्मगतः प्राण इत्युच्यते बुधैः अस्य काचिन्मुने शक्तिः प्रस्पन्दयति लोचने ॥ २८ ॥

sa eṣa hṛtpadmagataḥ prāṇa ityucyate budhaiḥ asya kācinmune śaktiḥ praspandayati locane || 28 ||

This power, seated in the lotus of the heart, is the one the wise call prana. One part of it, O sage, makes the eyes blink and move.

यही शक्ति, जो हृदय-कमल में बैठी है, उसे समझदार लोग प्राण कहते हैं। हे मुनि, इसका एक हिस्सा आँखों को झपकाता और हिलाता है।

6.24.29

काचिस्पर्शमुपादत्ते काचिद्वहति नासया काचिदन्नं जरयति काचिद्वक्ति वचांसि च ॥ २९ ॥

kācispṛśamupādatte kācidvahati nāsayā kācidannaṃ jarayati kācidvakti vacāṃsi ca || 29 ||

One part takes hold of the sense of touch, one part moves through the nose, one part digests the food eaten, and one part speaks out words.

इसका एक हिस्सा छूने का एहसास कराता है, एक हिस्सा नाक से होकर बहता है, एक हिस्सा खाए हुए अन्न को पचाता है, और एक हिस्सा शब्द बोलता है।

6.24.30

बहुनात्र किमुक्तेन सर्वमेव शरीरके करोति भगवान्वायुर्यन्त्रेहामिव यान्त्रिकः ॥ ३० ॥

bahunātra kimuktena sarvameva śarīrake karoti bhagavānvāyuryantrehāmiva yāntrikaḥ || 30 ||

What use is there in saying more about this? The lord Vayu does everything in the body, the way a mechanic works a machine.

इस बारे में ज़्यादा कहने से क्या फ़ायदा? भगवान वायु शरीर में सब कुछ करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक कारीगर अपना यंत्र चलाता है।

6.24.31

तत्रोर्ध्वाधोद्विसंकेतौ प्रसृतावनिलौ मुने । प्राणापानाविति ख्यातौ प्रकटौ द्वौ वरानिलौ ॥ ३१ ॥

tatror-dhvādhodvisaṅketau prasṛtāvanilau mune | prāṇāpānāviti khyātau prakaṭau dvau varānilau || 31 ||

There, O sage, two winds spread out, one going upward and one going downward; these two well known and excellent winds are called prana and apana.

वहाँ, हे मुनि, दो हवाएँ फैलती हैं, एक ऊपर की तरफ और एक नीचे की तरफ; इन दोनों जानी-मानी और श्रेष्ठ हवाओं को प्राण और अपान कहा जाता है।

6.24.32

तयोरनुसरन्नित्यं मुने गतिमहं स्थितः । शीतोष्णवपुषोर्नित्यं नित्यमम्बरपान्थयोः ॥ ३२ ॥

tayoranusarannityaṃ mune gatimahaṃ sthitaḥ | śītoṣṇavapuṣornityaṃ nityamambarapānthayoḥ || 32 ||

O sage, I always stand following the movement of these two; they are forever cold and hot in body, forever travelers of the sky.

हे मुनि, मैं हमेशा इन दोनों के पीछे-पीछे उनकी गति को देखता हुआ खड़ा रहता हूँ; ये दोनों हमेशा शरीर में कभी ठंडी कभी गरम रहती हैं, और हमेशा आकाश में घूमने वाली हैं।

6.24.33

कलेवरमहायन्त्रवाहयोः श्रमहीनयोः । हृदाकाशार्कशशिनोस्त्वग्नीषोमस्वरूपयोः ॥ ३३ ॥

kalevaramahāyantravāhayoḥ śramahīnayoḥ | hṛdākāśārkaśaśinos tvagnīṣomasvarūpayoḥ || 33 ||

They are the two that drive the great machine of the body without ever growing tired, the sun and moon of the heart's sky, whose true forms are fire and soma.

ये दोनों शरीर के बड़े यंत्र को बिना थके चलाती हैं, ये हृदय के आकाश के सूरज और चाँद हैं, जिनका असली रूप आग और सोम है।

6.24.34

शरीरपुरपालस्य मनसो रथचक्रयोः । अहंकारनृपस्यास्य प्रशस्येष्टतुरङ्गयोः ॥ ३४ ॥

śarīrapurapālasya manaso rathacakrayoḥ | ahaṃkāranṛpasya asya praśasyeṣṭaturangayoḥ || 34 ||

They are the two wheels of the chariot of the mind, the mind that guards the city of the body; they are also the two fine and favorite horses of this king, the ego.

ये दोनों मन के रथ के दो पहिये हैं, वह मन जो शरीर रूपी नगर की रखवाली करता है; ये अहंकार रूपी राजा के दो सुंदर और प्यारे घोड़े भी हैं।

6.24.35

तयोर्ममानुसरतः प्राणापानाभिधानयोः । गतिं शरीरमरुतोराशरीरमरुद्धयोः ॥ ३५ ॥

tayormamānusarataḥ prāṇāpānābhidhānayoḥ | gatiṃ śarīramarutorāśarīramaruddhayoḥ || 35 ||

Following the movement of these two named prana and apana, these two winds of the body go on without stopping for as long as the body lasts.

प्राण और अपान नाम की इन दोनों की गति के पीछे-पीछे चलते हुए, शरीर की ये दोनों हवाएँ तब तक बिना रुके चलती रहती हैं जब तक शरीर बना रहता है।

6.24.36

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तेषु सदैव समरूपयोः। सुषुप्तसंस्थितस्येव ब्रह्मन् गच्छन्ति वासराः ॥ ३६ ॥

jāgratsvapnasuṣupteṣu sadaiva samarūpayoḥ| suṣuptasaṃsthitasyeva brahman gacchanti vāsarāḥ || 36 ||

They stay the same in waking, in dream, and in deep sleep, O Brahmin; my days pass as though I were one resting in deep sleep.

हे ब्राह्मण, ये जागने, सपने और गहरी नींद में हमेशा एक जैसी रहती हैं; मेरे दिन ऐसे बीतते हैं मानो मैं गहरी नींद में पड़ा हुआ हूँ।

6.24.37

सहस्रविनिकृत्ताङ्गाद्बिसतन्तुलवादपि । दुर्लक्ष्या विद्यमानापि गतिः सूक्ष्मतराऽनयोः ॥ ३७ ॥

sahasravinikṛttāṅgādbisatantulavādapi| durlakṣyā vidyamānāpi gatiḥ sūkṣmatarā'nayoḥ || 37 ||

The movement of these two is finer even than a strand of lotus fiber cut into a thousand pieces; though it is real and present, it is hard to see.

इन दोनों की गति कमल के रेशे को हज़ार टुकड़ों में काटने से भी ज़्यादा बारीक है; यह असल में मौजूद होते हुए भी दिखाई नहीं देती।

6.24.38

अविरतगतयोर्गतिं विदित्वा हृदि मरुतोरनुसृत्य चोदितां ताम् । न पुनरिह हि जायते महात्मन्मुदितमनाः पुरुषः प्रणष्टपाशः ॥ ३८ ॥

aviratagatayorgatiṃ viditvā hṛdi marutoranusṛtya coditāṃ tām| na punariha hi jāyate mahātmanmuditamanāḥ puruṣaḥ praṇaṣṭapāśaḥ || 38 ||

A man who comes to know the movement of these two winds that move without stopping in the heart, and who follows that moving movement, becomes glad in mind and has his bonds destroyed; such a man, O great soul, is not born again in this world.

जो मनुष्य हृदय में बिना रुके चलती इन दोनों हवाओं की गति को जान लेता है, और उस चलती हुई गति के पीछे-पीछे चलता है, उसका मन खुश हो जाता है और उसके सारे बंधन टूट जाते हैं; हे महात्मा, ऐसा मनुष्य फिर इस दुनिया में जन्म नहीं लेता।

Chapter 25

6.25.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्थं स कथयन्पक्षी पृष्टस्तत्र पुनर्मया । कीदृशी प्राणवातस्य गतिरित्येव राघव ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | itthaṃ sa kathayanpakṣī pṛṣṭastatra punarmayā | kīdṛśī prāṇavātasya gatirityeva rāghava || 1 ||

Sri Vasishtha said: While the bird was saying all this, I asked him again there, Rama: what is the movement of the breath of life?

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब वह पक्षी यह सब कह रहा था, तब मैंने उससे वहीं फिर पूछा, हे राम: प्राण-वायु की गति कैसी होती है?

6.25.2

भुशुण्ड उवाच । जानन्नपि मुने सर्वं किं मां पृच्छसि लीलया । यथापृष्टमहं वच्मि शृणु तत्रापि मद्वचः ॥ २ ॥

bhūśuṇḍa uvāca | jānannapi mune sarva kiṃ māṃ pṛcchasi līlayā | yathāpṛṣṭamahaṃ vacmi śṛṇu tatrāpi madvacaḥ || 2 ||

Bhushunda said: Sage, you already know everything; why do you ask me only in play? I will tell you just as you asked; hear my words on this too.

भुशुण्ड ने कहा: हे मुनि, आप तो सब कुछ पहले से जानते हैं, फिर मुझसे यह सिर्फ खेल-खेल में क्यों पूछते हैं? आपने जैसा पूछा है वैसा ही मैं बताता हूँ; इस बारे में भी मेरी बात सुनिए।

6.25.3

प्राणोऽयमनिशं ब्रह्मन्स्पन्दशक्तिः सदागतिः । सबाह्याभ्यन्तरे देहे प्राणोऽयमुपरि स्थितः ॥ ३ ॥

prāṇo'yamaniśaṃ brahman spandaśaktiḥ sadāgatiḥ | sabāhyābhyantare dehe prāṇo'yamupari sthitaḥ || 3 ||

This up-breath never stops, O Brahmin; it is the power that vibrates, always moving. In the body, outside and inside together, this up-breath stays in the upper part.

हे ब्राह्मण, यह ऊपर की साँस कभी नहीं रुकती; यह हिलने-डुलने की शक्ति है, जो सदा चलती रहती है। शरीर में, बाहर और भीतर दोनों तरफ, यह ऊपर की साँस ऊपर के भाग में रहती है।

6.25.4

अपानोऽप्यनिशं ब्रह्मन्स्पन्दशक्तिः सदागतिः । सबाह्याभ्यन्तरे देहे त्वपानोऽयमवाक्स्थितः ॥ ४ ॥

apāno'pyaniśaṃ brahman spandaśaktiḥ sadāgatiḥ | sabāhyābhyantare dehe tvapāno'yamavāksthitaḥ || 4 ||

This down-breath too never stops, O Brahmin; it is the power that vibrates, always moving. In the body, outside and inside together, this down-breath stays in the lower part.

हे ब्राह्मण, यह नीचे की साँस भी कभी नहीं रुकती; यह हिलने-डुलने की शक्ति है, जो सदा चलती रहती है। शरीर में, बाहर और भीतर दोनों तरफ, यह नीचे की साँस नीचे के भाग में रहती है।

6.25.5

जाग्रतः स्वपतश्चैव प्राणायामोऽयमुत्तमः । प्रवर्तते यतस्तज्ज्ञ तत्तावच्छ्रेयसे शृणु ॥ ५ ॥

jāgrataḥ svapataścaiva prāṇāyāmo'yamuttamaḥ | pravartate yatastajjña tattāvacchreyase śṛṇu || 5 ||

For one who is awake, and for one who is asleep, this control of the breath is the highest kind. Listen to how it works, you who understand such things; listen well, for it is for your own good.

जो जाग रहा हो या जो सो रहा हो, दोनों के लिए साँस पर यह काबू सबसे ऊँचा है। हे इसे समझने वाले, सुनिए यह कैसे होता है; अपने भले के लिए ध्यान से सुनिए।

6.25.6

बाह्योन्मुखत्वं प्राणानां यद्धृदम्बुजकोटरात् स्वरसेनास्तयत्नानां तं धीरा रेचकं विदुः ॥ ६ ॥

bāhyonmukhatvaṃ prāṇānāṃ yaddhṛdambujakoṭarāt svarasenāstayatnānāṃ taṃ dhīrā recakaṃ viduḥ || 6 ||

When the breath turns to face outward, moving on its own from the hollow of the heart-lotus, without any effort, the wise call that the out-breath.

जब साँस हृदय-कमल की गुहा से अपने आप, बिना किसी प्रयास के, बाहर की ओर मुड़ती है, तो बुद्धिमान लोग उसे बाहर जाने वाली साँस कहते हैं।

6.25.7

द्वादशाङ्गुलपर्यन्तं बाह्यमाक्रमतामधः प्राणानामङ्गसंस्पर्शो यः स पूरक उच्यते ॥ ७ ॥

dvādaśāṅgulaparyantaṃ bāhyamākramatām adhaḥ prāṇānāmaṅgasansparśo yaḥ sa pūraka ucyate || 7 ||

The breath moves downward and covers the space outside, up to twelve finger-widths away, then touches the body; that touch is called the in-breath.

साँस नीचे की ओर बढ़ती हुई बाहर के उस स्थान को, जो नाक से बारह अंगुल दूर तक है, पार करती है, फिर शरीर को छूती है; उस स्पर्श को अंदर आने वाली साँस कहते हैं।

6.25.8

बाह्यात्परापतत्यन्तरपाने यत्नवर्जितः योऽयं प्रपूरणः स्पर्शो विदुस्तमपि पूरकम् ॥ ८ ॥

bāhyātparāpatatyantarapāne yatnavarjitaḥ yo'yaṃ prapūraṇaḥ sparśo vidustamapi pūrakam || 8 ||

And the breath that falls from outside into the down-breath within, without any effort, that filling touch too is called the in-breath.

और जो साँस बिना किसी प्रयास के बाहर से भीतर की नीचे वाली साँस में जा गिरती है, उस भरने वाले स्पर्श को भी अंदर आने वाली साँस कहते हैं।

6.25.9

अपानेऽस्तंगते प्राणो यावन्नाभ्युदितो हृदि तावत्सा कुम्भकावस्था योगिभिर्यानुभूयते ॥ ९ ॥

apāne'stamgate prāṇo yāvannābhyudito hṛdi tāvatsā kumbhakāvasthā yogibhiryānubhūyate || 9 ||

When the down-breath has gone down and settled, and the up-breath has not yet risen again in the heart, for that time, the state that yogis feel is called the held breath.

जब नीचे की साँस नीचे जाकर ठहर जाती है, और ऊपर की साँस अभी हृदय में फिर से नहीं उठी है, उतने समय तक जो अवस्था योगी महसूस करते हैं, उसे साँस का रुकना कहते हैं।

6.25.10

रेचकः कुम्भकश्चैव पूरकश्च त्रिधा स्थितः अपानस्योदयस्थाने द्वादशान्तादधो बहिः ॥ १० ॥

recakaḥ kumbhakaścaiva pūrakaśca tridhā sthitaḥ apānasyaodayasthāne dvādaśāntādadho bahiḥ || 10 ||

The out-breath, the held breath, and the in-breath all exist as three, at the place where the down-breath rises, below the point that is twelve finger-widths away, out in the open.

बाहर जाने वाली साँस, रुकी हुई साँस, और अंदर आने वाली साँस, ये तीनों उस जगह होती हैं जहाँ नीचे की साँस उठती है, उस बारह अंगुल वाले बिंदु से नीचे, खुले में।

6.25.11

स्वभावाः सर्वकालस्थाः सम्यग्यत्नविवर्जिताः । ये प्रोक्ताः स्फारमतिभिस्ताञ्छृणु त्वं महामते ॥ ११ ॥

svabhāvāḥ sarvakālasthāḥ samyagyatnavivarjitāḥ | ye proktāḥ sphāramatibhistāñchṛṇu tvaṃ mahāmate || 11 ||

Now hear about the natural workings of the breath that stay the same at all times, entirely free of effort, as they have been told by people of great understanding; listen to them, wise one.

अब साँस के उन स्वाभाविक कामों के बारे में सुनिए जो हर समय एक जैसे रहते हैं, जिनमें कोई प्रयास नहीं लगता, और जिन्हें बड़ी समझ रखने वाले लोगों ने बताया है; हे बुद्धिमान, उन्हें सुनिए।

6.25.12

द्वादशाङ्गुलपर्यन्ताद्बाह्याद्भ्युदितः प्रभो । यो वातस्तस्य तत्रैव स्वभावात्पूरकादयः ॥ १२ ॥

dvādaśāṅgulaparyantādbāhyādabhyuditaḥ prabho | yo vātastasya tatraiva svabhāvātpūrakādayaḥ || 12 ||

My lord, the breath that rises from that outer point twelve finger-widths away, for this breath, right there, the in-breath and the rest happen entirely on their own.

हे स्वामी, जो साँस उस बाहरी बिंदु से उठती है जो बारह अंगुल दूर है, उस साँस में, वहीं पर, अंदर आने वाली साँस और बाकी सब अपने आप होते हैं।

6.25.13

हृदन्तरस्थानिष्पन्नघटवद्या स्थितिर्बहिः । द्वादशाङ्गुलपर्यन्ते नासाग्रसमसंमुखे ॥ १३ ॥

hṛdantarasthāniṣpannaghaṭavadyā sthitirbahiḥ | dvādaśāṅgulaparyante nāsāgrasamasammukhe || 13 ||

From inside the heart, the breath takes a settled shape, like a pot fully formed, and rests outside at the point twelve finger-widths away, level with and facing the tip of the nose.

हृदय के भीतर से यह साँस एक बने हुए घड़े की तरह ठहरा हुआ रूप ले लेती है, और बाहर उस बिंदु पर टिकती है जो बारह अंगुल दूर है, ठीक नाक की नोक के सामने।

6.25.14

व्योम्नि नित्यमपानस्य तं विदुः कुम्भकं बुधाः । बाह्योन्मुखस्य वायोर्या नासिकाग्रावधिर्गतिः ॥ १४ ॥

vyomni nityamapānasya taṃ viduḥ kumbhakaṃ budhāḥ | bāhyonmukhasya vāyoryā nāsikāgrāvadhirgatiḥ || 14 ||

In that space, the wise call the down-breath's constant, steady state the held breath. The breath that turns outward moves only as far as the tip of the nose.

उस जगह में, बुद्धिमान लोग नीचे की साँस की उस स्थिर, बनी रहने वाली अवस्था को साँस का रुकना कहते हैं। जो साँस बाहर की ओर मुड़ती है, वह केवल नाक की नोक तक ही जाती है।

6.25.15

तं बाह्यपूरकं त्वाद्यं विदुर्योगविदो जनाः । नासाग्रादपि निर्गत्य द्वादशान्तावधिर्गतिः ॥ १५ ॥

taṃ bāhyapūrakaṃ tvādyaṃ viduryogavidō janāḥ | nāsāgrādapi nirgatya dvādaśāntāvadhirgatiḥ || 15 ||

People who know this practice call that movement, up to the tip of the nose, the first outer in-breath. From the tip of the nose it goes out further, moving on to the point twelve finger-widths away.

इस विद्या को जानने वाले लोग नाक की नोक तक की उस गति को पहली बाहरी अंदर आने वाली साँस कहते हैं। नाक की नोक से यह आगे बाहर निकलकर उस बिंदु तक जाती है जो बारह अंगुल दूर है।

6.25.16

या वायोस्तं विदुर्धीरा अपरं बाह्यपूरकम्। वहिरस्तंगते प्राणे यावन्नापान उद्गतः ॥ १६ ॥

yā vāyostaṁ vidurdhīrā aparaṁ bāhyapūrakam | vahirastaṁgate prāṇe yāvanna apāna udgataḥ || 16 ||

The wise call that movement of the breath, reaching the point twelve finger-widths away, the second outer in-breath. Once the breath has gone out and settled outside, there is a time before the down-breath rises again.

बुद्धिमान लोग साँस की उस गति को, जो बारह अंगुल दूर वाले बिंदु तक पहुँचती है, दूसरी बाहरी अंदर आने वाली साँस कहते हैं। जब साँस बाहर जाकर ठहर जाती है, तो नीचे की साँस के फिर से उठने से पहले कुछ समय बीतता है।

6.25.17

तावत्पूर्णं समावस्थं बहिष्ठं कुम्भकं विदुः। यत्तदन्तर्मुखत्वं स्यादपानस्योदयं विना ॥ १७ ॥

tāvatpūrṇam samāvastham bahiṣṭham kumbhakam viduḥ | yattadantarmukhatvam syādapānasyodayam vinā || 17 ||

For as long as that lasts, the full and evenly settled state that stays outside is called the held breath. There is also a turning inward that can happen even before the down-breath has risen.

जब तक यह बना रहता है, तब तक जो पूरी और बराबर टिकी हुई अवस्था बाहर रहती है, उसे साँस का रुकना कहते हैं। एक भीतर की ओर मुड़ना भी होता है, जो नीचे की साँस के उठने से पहले भी हो सकता है।

6.25.18

तं बाह्यरेचकं विद्याच्चिन्त्यमानं विमुक्तिदम्। द्वादशान्ताद्यदुत्थाय रूपपीवरता परा ॥ १८ ॥

tam bāhyarecakam vidyāccintyamānam vimuktidam | dvādaśāntādyadutthāya rūpapīvaratā parā || 18 ||

That inward turning, when watched closely, is known as the outer out-breath, and it brings freedom. Something else rises from the point twelve finger-widths away and swells into its fullest form.

उस भीतर की ओर मुड़ने को, जब ध्यान से देखा जाए, बाहरी बाहर जाने वाली साँस कहते हैं, और यह मुक्ति देती है। कुछ और उस बारह अंगुल वाले बिंदु से उठता है और अपने पूरे रूप में भर जाता है।

6.25.19

अपानस्य बहिष्ठं तमपरं पूरकं विदुः। बाह्यानाभ्यन्तरांश्चैतान्कुम्भकादीननारतम् ॥ १९ ॥

apānasyabahiṣṭham tamaparam pūrakam viduḥ | bāhyānābhatantarāmścaitānkumbhakādīnanāratam || 19 ||

This, the outer form of the down-breath, is known as the other in-breath. These, the outer and the inner, the held breath and the rest, go on without pause.

यह, जो नीचे की साँस का बाहरी रूप है, दूसरी अंदर आने वाली साँस कहलाती है। ये सब, बाहरी और भीतरी, साँस का रुकना और बाकी सब, बिना रुके चलते रहते हैं।

6.25.20

प्राणापानस्वभावांस्तमबुद्ध्वा भूयो न जायते। अष्टावेते महाबुद्धे रात्रिदिवमनुस्मृताः ॥ २० ॥

prāṇāpānasvabhāvāmstamabuddhvā bhūyo na jāyate | aṣṭāvete mahābuddhe rātridivamanusmṛtāḥ || 20 ||

One who understands these natural workings of the up-breath and the down-breath is not born again. Great one, these are the eight, to be kept in mind night and day.

जो ऊपर जाने वाली और नीचे जाने वाली साँस के इन स्वाभाविक कामों को समझ लेता है, वह फिर जन्म नहीं लेता। हे महाबुद्धि, ये आठ हैं, जिन्हें दिन-रात याद रखना चाहिए।

6.25.21

स्वभावा देहवायूनां कथिता मुक्तिदा मया । गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा ॥ २१ ॥

svabhāvā dehavāyūnāṃ kathitā muktidā mayā | gacchatastiṣṭhato vāpi jāgrataḥ svapato'pi vā || 21 ||

I have told you the natural workings of the body's breath, which lead to freedom, whether one is walking or standing still, awake or even asleep.

मैंने आपको शरीर की साँसों के वे स्वाभाविक काम बताए हैं, जो मुक्ति देते हैं, चाहे कोई चल रहा हो या खड़ा हो, जाग रहा हो या सो भी रहा हो।

6.25.22

एते निरोधमायान्ति प्रकृत्याऽतिचलानिलाः । यत्करोति यदश्नाति बुद्ध्यैवालमनुस्मरन् ॥ २२ ॥

ete nirodhamāyānti prakṛtyā'ticalānilāḥ | yatkaroti yadaśnāti buddhyai'valamanusmaran || 22 ||

These breaths, restless by nature, come to rest and stillness in someone who keeps in mind, with full attention, whatever he does and whatever he eats.

ये साँसें, जो स्वभाव से बहुत बेचैन रहती हैं, उस व्यक्ति में शांत और स्थिर हो जाती हैं जो पूरे ध्यान से यह याद रखता है कि वह क्या कर रहा है और क्या खा रहा है।

6.25.23

कुम्भकादीन्नरः स्वान्तस्तत्र कर्ता न किंचन । अव्यग्रमस्मिन्व्यापारे बाह्यं परिजहन्मनः ॥ २३ ॥

kumbhakādīnnaraḥ svāntastatra kartā na kiṃcana | avyagramasminvyāpāre bāhyaṃ parijahanmanaḥ || 23 ||

In holding the breath and all the rest of it, a person does nothing at all by his own will; his mind stays undisturbed in this working, and it lets go of everything outside.

साँस रोकने और बाकी सब में, मनुष्य अपनी ओर से कुछ भी नहीं करता; उसका मन इस काम में अशांत नहीं होता, और वह बाहर की हर चीज़ को छोड़ देता है।

6.25.24

दिनैः कतिपयैरेव पदमाप्नोति केवलम् । एतदभ्यसतः पुंसो बाह्ये विषयवृत्तिषु ॥ २४ ॥

dinaiḥ katipayaireva padamāpnoti kevalam | etadabhyasataḥ puṃso bāhye viṣayavṛttiṣu || 24 ||

In just a few days he reaches that one pure state; this happens to a person who practises this, even while his outer life still runs after the things the senses want.

कुछ ही दिनों में वह उस एक शुद्ध अवस्था को पा लेता है; ऐसा उस व्यक्ति के साथ होता है जो इसका अभ्यास करता है, भले ही उसका बाहरी जीवन अभी भी इंद्रियों की चीज़ों के पीछे चल रहा हो।

6.25.25

न बघ्नाति रतिं चेतः श्वदृतौ ब्राह्मणो यथा । एतां दृष्टिमवष्टभ्य ये स्थिताः कृतबुद्धयः ॥ २५ ॥

na baghnāti ratiṃ cetaḥ svadṛtau brāhmaṇo yathā | etāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya ye sthitāḥ kṛtabuddhayaḥ || 25 ||

His mind forms no attachment there, just as a Brahmin takes no pleasure in a dog's skin. Those who hold to this insight and stay firm in it have made their understanding complete.

उसका मन वहाँ कोई लगाव नहीं बनाता, जैसे एक ब्राह्मण कुत्ते की खाल में कोई खुशी नहीं पाता। जो लोग इस समझ को पकड़कर स्थिर रहते हैं, उनकी बुद्धि पूरी हो चुकी होती है।

6.25.26

प्राप्तप्राप्तव्यमखिलं तैरखिन्नास्त एव हि । तिष्ठता गच्छता नित्यं स्वपता जाग्रता तथा ॥ २६ ॥

prāptaprāptavyamakhilaṃ tairakhinnaasta eva hi | tiṣṭhatā gacchatā nityaṃ svapatā jāgratā tathā || 26 ||

Without ever growing tired, these very people gain everything there is to gain, whether they are standing, walking, sleeping, or awake.

बिना थके, यही लोग वह सब कुछ पा लेते हैं जो पाने योग्य है, चाहे वे खड़े हों, चल रहे हों, सो रहे हों या जाग रहे हों।

6.25.27

एषा चेत्प्रेक्ष्यते दृष्टिस्तन्न बन्धनमाप्यते । प्राणापानानुसरणप्राप्तबोधवतामलम् ॥ २७ ॥

eṣā cetprekṣyate dṛṣṭistann na bandhanamāpyate | prāṇāpānānusaraṇaprāptabodhavatāmalam || 27 ||

If a person holds on to this way of seeing, he does not fall into bondage. This much is enough for those who have gained understanding by following the path of the out-breath and the in-breath.

अगर कोई इस दृष्टि को थामे रहे, तो वह बंधन में नहीं पड़ता। जिन्होंने सांस के बाहर जाने और अंदर आने का पीछा करके यह समझ पाई है, उनके लिए इतना ही काफी है।

6.25.28

संशान्तमलमोहेन स्वस्थेनान्तरिहोष्यते । सर्वारम्भान्सदा स्वच्छः कुर्वन्वापि बुधो जनः ॥ २८ ॥

saṃśāntamalamohēna svasthēnāntarihōṣyatē | sarvārambhānsadā svacchaḥ kurvanvāpi budhō janaḥ || 28 ||

The wise person, whose impurity and delusion have been quieted, rests steady within himself and dwells inwardly, right here, staying clear at all times, even while carrying out every task.

जिस बुद्धिमान व्यक्ति की मैल और मोह शांत हो चुके हैं, वह अपने भीतर स्थिर होकर यहीं भीतर बसा रहता है, और हर काम करते हुए भी हमेशा साफ़ बना रहता है।

6.25.29

प्राणापानगतिं प्राप्य सुस्वस्थः सुखमेधते । प्राणस्याभ्युदयो ब्रह्मन्पद्मपत्राद्धृदि स्थितात् ॥ २९ ॥

prāṇāpānagatiṃ prāpya susvasthaḥ sukhamēdhatē | prāṇasyābhyudayō brahmanpadmapatrāddhṛdi sthitāt || 29 ||

Once a person has grasped the movement of the out-breath and the in-breath, he becomes steady and lives happily. The out-breath rises, O Brahmin, from the lotus petal that sits in the heart.

जब कोई सांस के बाहर जाने और अंदर आने की चाल को समझ लेता है, तो वह स्थिर होकर सुख से रहता है। हे ब्राह्मण, बाहर जाने वाली सांस हृदय में बसे कमल की पंखुड़ी से उठती है।

6.25.30

द्वादशाङ्गुलपर्यन्ते प्राणोऽस्तं यात्ययं बहिः । अपानस्योदयो बाह्याद्द्वादशान्तान्महामुने ॥ ३० ॥

dvādaśāṅgulaparyantē prāṇō'staṃ yātyayaṃ bahiḥ | apānasyaudayō bāhyāddvādaśāntānmahāmunē || 30 ||

This out-breath travels outward and comes to rest at a distance of twelve finger-widths. The in-breath then rises from outside, from that point twelve finger-widths away, great sage.

यह बाहर जाने वाली सांस बाहर जाकर बारह उंगली की दूरी पर जाकर थम जाती है। हे महामुनि, अंदर आने वाली सांस बाहर उसी बारह उंगली वाली जगह से उठती है।

6.25.31

अस्तंगतिरथाम्भोजमध्ये हृदयसंस्थिते । प्राणो यत्र समायाति द्वादशान्ते नभःपदे ॥ ३१ ॥

astaṃgatirathāmbhojamadhye hṛdayasaṃsthite | prāṇo yatra samāyāti dvādaśānte nabhaḥpade || 31 ||

Then it comes to rest in the middle of the lotus that sits in the heart, at that space twelve finger-widths within, where the breath arrives.

फिर वह हृदय में बसे कमल के बीचोंबीच जाकर थम जाती है, उस भीतर की बारह उंगली वाली जगह पर, जहाँ सांस आ पहुँचती है।

6.25.32

पदात्तस्मादपानोऽयं खादेति समनन्तरम् । बाह्याकाशोन्मुखः प्राणो वहत्यग्निशिखा यथा ॥ ३२ ॥

padāttasmādapāno'yaṃ khādeti samanantaram | bāhyākāśonmukhaḥ prāṇo vahatyagniśikhā yathā || 32 ||

From that point, this in-breath then moves on at once. The out-breath, turning toward the outer space, flows on like the flame of a fire.

उसी जगह से यह अंदर आने वाली सांस तुरंत आगे बढ़ जाती है। बाहर जाने वाली सांस बाहरी आकाश की ओर मुड़कर आग की लौ की तरह बहती है।

6.25.33

हृदाकाशोन्मुखोऽपानो निम्ने वहति वारिवत् । अपानश्चन्द्रमा देहमाप्याययति बाह्यतः ॥ ३३ ॥

hṛdākāśonmukho'pāno nimne vahati vārivat | apānaścandramā dehamāpyāyayati bāhyataḥ || 33 ||

The in-breath, turning toward the space in the heart, flows downward like water. The in-breath is the moon; it refreshes the body from outside.

हृदय के आकाश की ओर मुड़कर अंदर आने वाली सांस पानी की तरह नीचे बहती है। यह अंदर आने वाली सांस ही चंद्रमा है, जो शरीर को बाहर से तृप्त करती है।

6.25.34

प्राणः सूर्योऽग्निरथवा पचत्यन्तरिदं वपुः । प्राणो हि हृदयाकाशं तापयित्वा प्रतिक्षणम् ॥ ३४ ॥

prāṇaḥ sūryo'gnirathavā pacatyantaridaṃ vapuḥ | prāṇo hi hṛdayākāśaṃ tāpayitvā pratikṣaṇam || 34 ||

The out-breath is the sun, or rather fire; it cooks this body from within. It is the out-breath that heats the space of the heart, moment after moment,

बाहर जाने वाली सांस ही सूर्य है, या यूँ कहें आग है; वह इस शरीर को भीतर से पकाती है। यही बाहर जाने वाली सांस हर पल हृदय के आकाश को तपाती रहती है,

6.25.35

मुखाग्रगगनं पश्चात्तापयत्युत्तमो रविः । अपानेन्दुर्मुखाग्रं तु प्लावयित्वा हृदम्बरम् ॥ ३५ ॥

mukhāgragaganaṃ paścāttāpayatyuttamo raviḥ | apānendurmakhāgraṃ tu plāvayitvā hṛdambaram || 35 ||

and afterward, being the supreme sun, it heats the space at the tip of the mouth too. The moon, the in-breath, then drenches the space at the tip of the mouth, and reaches on to the space of the heart,

और फिर, सर्वश्रेष्ठ सूर्य होने के नाते, वह मुँह की नोक वाले आकाश को भी तपाती है। इसके बाद अंदर आने वाली सांस, जो चंद्रमा है, मुँह की नोक वाले आकाश को भिगोकर हृदय के आकाश तक पहुँचती है,

6.25.36

पश्चादाप्याययत्येष निमेषसमनन्तरम्। अपानशशिनोऽन्तस्था कला प्राणविवस्वता ॥ ३६ ॥

paścādāpyāyayatyēṣa nimēṣasamanantaram | apānaśaśinō'ntasthā kalā prāṇavivasvatā || 36 ||

and right after, moment by moment, it nourishes that same heart-space. The inner sliver of the moon that is the in-breath is then reached by the sun that is the out-breath,

और हर पल, हर पलक झपकते ही, वह उसी हृदय के आकाश को तृप्त करती है। इसके बाद अंदर आने वाली सांस रूपी चंद्रमा की भीतरी किरण को बाहर जाने वाली सांस रूपी सूर्य छू लेता है,

6.25.37

यत्र ग्रस्ता तदासाद्य पदं भूयो न शोच्यते। प्राणार्कस्य तथान्तस्था यत्रापानसितांशुना ॥ ३७ ॥

yatra grastā tadāsādya padaṃ bhūyo na śocyate | prāṇārkasya tathāntasthā yatrāpānasitāṃśunā || 37 ||

and once it is swallowed there, a person who reaches that state grieves no more. In the same way, the inner sliver of the sun that is the out-breath is reached by the white-rayed moon that is the in-breath,

और जहाँ वह किरण निगल ली जाती है, वहाँ पहुँचकर व्यक्ति फिर कभी शोक नहीं करता। उसी तरह, बाहर जाने वाली सांस रूपी सूर्य की भीतरी किरण को अंदर आने वाली सांस रूपी उजली चंद्रमा छू लेता है,

6.25.38

ग्रस्ता तत्पदमासाद्य न भूयो जन्मभाङ्नरः। प्राण एवार्कतां याति सबाह्याभ्यन्तरेऽम्बरे ॥ ३८ ॥

grastā tatpadamāsādya na bhūyo janmabhāṅnaraḥ | prāṇa evārkatāṃ yāti sabāhyābhyantare'mbare || 38 ||

and once it is swallowed, a person who reaches that state is not born again. The out-breath itself then becomes the sun, in the space both outside and inside.

और जहाँ वह किरण निगल ली जाती है, वहाँ पहुँचकर व्यक्ति फिर कभी जन्म नहीं लेता। बाहर जाने वाली सांस स्वयं ही सूर्य बन जाती है, उस आकाश में जो बाहर भी है और भीतर भी।

6.25.39

आप्यायनकरीं पश्चाच्छशितामधितिष्ठति। प्राण एवेन्दुतां त्यक्त्वा शरीराप्यायकारिणीम् ॥ ३९ ॥

āpyāyanakarīṃ paścācchaśitāmadhitiṣṭhati | prāṇa evendutāṃ tyaktvā śarīrāpyāyakāriṇīm || 39 ||

Afterward, the out-breath takes on the moon's nature, the one that brings nourishment. Having given up being the sun, it is the out-breath itself that now takes up that moon-nature which restores the body.

इसके बाद बाहर जाने वाली सांस चंद्रमा का रूप ले लेती है, जो तृप्ति देने वाला है। सूर्य का रूप छोड़कर, बाहर जाने वाली सांस स्वयं ही उस चंद्रमा के रूप को अपना लेती है जो शरीर को फिर से भर देता है।

6.25.40

क्षणादायाति सूर्यत्वं संशोषणकरं पदम्। अर्कतां संपरित्यज्य न यावच्चन्द्रतां गतः ॥ ४० ॥

kṣaṇādāyāti sūryatvaṃ saṃśoṣaṇakaraṃ padam | arkatāṃ saṃparityajya na yāvaccandratāṃ gataḥ || 40 ||

It does not reach, in an instant, the parching state of the sun until it has completely given up being the sun and has first turned into the moon.

जब तक वह सूर्य होना पूरी तरह छोड़कर पहले चंद्रमा नहीं बन जाती, तब तक वह एक ही पल में सूर्य की उस झुलसाने वाली अवस्था में नहीं पहुँचती।

6.25.41

प्राणस्तावद्विचार्यन्तेऽदेशकाले न शोच्यते । हृदि चन्द्रार्कयोर्ज्ञात्वा नित्यमस्तमयोदयम् ॥ ४१ ॥

prāṇastāvadvicāryante'deśakāle na śocyate | hṛdi candrārkayorjñātvā nityamastamayodayam || 41 ||

So long as a person keeps watching the two breaths closely, he does not grieve out of place or out of time, once he has come to know, within his own heart, the endless rising and setting of the moon and the sun.

जब तक इंसान दोनों साँसों को ध्यान से देखता रहता है, उसे न गलत समय पर और न गलत जगह पर कभी दुख होता है, क्योंकि वह अपने ही हृदय में चंद्रमा और सूर्य के लगातार डूबने और उगने को जान चुका होता है।

6.25.42

आन्मनो निजमाधारं न भूयो जायते मनः । सोदयास्तमयं सेन्दुं सरश्मिं सगमागमम् ॥ ४२ ॥

ānmano nijamādhāraṃ na bhūyo jāyate manaḥ | sodayāstamayaṃ senduṃ saraśmiṃ sagamāgamam || 42 ||

and once he has come to know his own true foundation, the self, his mind is never born again, that same mind which used to have its rising and its setting, its own moon, its own rays, its own coming and going.

और जब वह अपने असली आधार, यानी आत्मा को जान लेता है, तो उसका मन फिर कभी जन्म नहीं लेता, वही मन जिसमें कभी उगना और डूबना था, अपना चंद्रमा था, अपनी किरणें थीं, अपना आना-जाना था।

6.25.43

हृदये भास्करं देवं यः पश्यति स पश्यति । न क्षीणं नापरिक्षीणं बहिष्ठं सिद्धये तमः ॥ ४३ ॥

hṛdaye bhāskaraṃ devaṃ yaḥ paśyati sa paśyati | na kṣīṇaṃ nāparikṣīṇaṃ bahiṣṭhaṃ siddhaye tamaḥ || 43 ||

He who sees the sun god within his own heart is the one who truly sees. Outward darkness, whether it has faded away or not, does not help reach that attainment.

जो अपने ही हृदय में सूर्य देवता को देखता है, असल में वही देखता है। बाहर का अंधेरा घटे या न घटे, उससे वह सिद्धि नहीं मिलती।

6.25.44

हार्दं तु क्षपयेद्ध्वान्तं यत्क्षये सिद्धिरुत्तमा । बाह्ये तमसि संक्षीणो लोकालोकः प्रजायते ॥ ४४ ॥

hārdaṃ tu kṣapayeddhvāntaṃ yatkṣaye siddhiruttamā | bāhye tamasi saṃkṣīṇo lokālokaḥ prajāyate || 44 ||

It is the darkness inside the heart that must be destroyed, destroying that brings the highest attainment. When only the darkness outside fades away, all a person gets is the ordinary sight of the world.

नाश करना हो तो हृदय के अंधेरे का करना चाहिए, उसके नाश से ही सबसे बड़ी सिद्धि मिलती है। सिर्फ़ बाहर का अंधेरा मिटने से तो बस दुनिया का सामान्य दिखना भर मिलता है।

6.25.45

हार्दे तु तमसि क्षीणे स्वालोको जायते मुने । हार्दान्धकारक्षयदं परिज्ञातं विमुक्तिदम् ॥ ४५ ॥

hārde tu tamasi kṣīṇe svālokaḥ jāyate mune | hārdāndhakārakṣayadaṃ parijñātaṃ vimuktidam || 45 ||

But when the darkness inside the heart is destroyed, sage, a light of one's own arises. Once a person has fully understood this, the destroying of the heart's darkness, it grants him freedom.

लेकिन जब हृदय का अंधेरा मिट जाता है, हे मुनि, तो अपना ही प्रकाश जाग उठता है। जब कोई इस बात को, हृदय के अंधेरे के नाश को, पूरी तरह समझ लेता है, तो उसे यही मुक्ति देता है।

6.25.46

सोदयास्तमयं यत्नात्प्राणार्कमवलोकयेत् । अपानेन्दुः प्रयात्यस्तं यत्र हृत्पद्मकोटरे ॥ ४६ ॥

sodayāstamayaṃ yatnātprāṇārkamavalokayet | apānenduḥ prayātyastaṃ yatra hṛtpadmakoṭare || 46 ||

A person should watch closely the out-breath, the sun, along with its rising and setting, and see where the in-breath, the moon, comes to rest, in the hollow of the lotus in the heart.

व्यक्ति को चाहिए कि वह ध्यान से बाहर जाने वाली सांस, यानी सूर्य को, उसके उगने और डूबने के साथ देखे, और यह भी देखे कि अंदर आने वाली सांस, यानी चंद्रमा, हृदय के कमल की खोह में कहाँ जाकर थमती है।

6.25.47

पदात्तस्मादुदेत्यन्तः प्राणार्को बहिरुन्मुखः । अपानेऽस्तंगते प्राणः समुदेति हृदम्बुजात् ॥ ४७ ॥

padāttasmādudetyantaḥ prāṇārko bahirunmukhaḥ | apāne'stamgate prāṇaḥ samudeti hṛdambujāt || 47 ||

From that point, the out-breath, the sun, rises up within, turning toward the outside. Once the in-breath has come to rest, the out-breath rises up again from the lotus of the heart.

उसी जगह से बाहर जाने वाली सांस, यानी सूर्य, भीतर उगती है और बाहर की ओर मुड़ जाती है। जब अंदर आने वाली सांस थम जाती है, तब बाहर जाने वाली सांस फिर से हृदय के कमल से उग आती है।

6.25.48

छायायां गलिताङ्गायां तत्रैवाशु यथातपः । प्राणे त्वस्तंगते बाह्यादपानः प्रोदितः क्षणात् ॥ ४८ ॥

chāyāyāṃ galitāṅgāyāṃ tatraivāśu yathātapaḥ | prāṇe tvastaṃgate bāhyādapānaḥ proditaḥ kṣaṇāt || 48 ||

Just as sunlight appears the instant shade fades away, so too, the instant the out-breath comes to rest, the in-breath rises up at once from outside.

जैसे छाया मिटते ही उसी जगह तुरंत धूप आ जाती है, वैसे ही बाहर जाने वाली सांस थमते ही अंदर आने वाली सांस तुरंत बाहर से उठ आती है।

6.25.49

आतपे परितो नष्टे छायेवानुपदं तथा । प्राणजन्मावनौ नष्टमपानं विद्धि सन्मते ॥ ४९ ॥

ātape parito naṣṭe chāyevānupadaṃ tathā | prāṇajanmāvanau naṣṭamapānaṃ viddhi sanmate || 49 ||

Just as shade follows right on the heels of sunlight the moment it has fully vanished, know this too, wise one: the in-breath is absent from the very ground where the out-breath is born.

जैसे धूप के पूरी तरह मिटते ही तुरंत उसी पल छाया आ जाती है, वैसे ही यह भी जान लो, हे सुबुद्धि: जिस जगह बाहर जाने वाली सांस जन्म लेती है, वहाँ अंदर आने वाली सांस नहीं होती।

6.25.50

अपानजन्मभूमौ च प्राणं नष्टमवेहि हि । अस्तंगतवति प्राणे त्वपानेऽभ्युदयोन्मुखे ॥ ५० ॥

apānajanmabhūmau ca prāṇaṃ naṣṭamavehi hi | astaṃgatavati prāṇe tvapāne'bhyudayonmukhe || 50 ||

And know for certain, too, that the out-breath is absent from the ground where the in-breath is born, once the out-breath has come to rest and the in-breath is about to rise.

और यह भी निश्चित रूप से जान लो: जिस जगह अंदर आने वाली सांस जन्म लेती है, वहाँ बाहर जाने वाली सांस नहीं होती, यानी जब बाहर जाने वाली सांस थम चुकी होती है और अंदर आने वाली सांस उगने ही वाली होती है।

6.25.51

बहिः कुम्भकमालम्ब्य चिरं भूयो न शोच्यते। अपानेऽस्तंगते प्राणे किंचिदभ्युदयोन्मुखे॥ ५१॥

bahiḥ kumbhakamālambya ciraṃ bhūyo na śocyate | apāne'staṃgate prāṇe kiṃcidabhyudayonmukhe || 51 ||

By holding on to breath-holding outside the body for a long time, a person no longer grieves, once apana has set and prana is only just beginning to rise.

शरीर के बाहर सांस रोकने का अभ्यास लंबे समय तक करने से इंसान फिर दुखी नहीं होता, जब अपान शांत हो चुका हो और प्राण अभी उठना ही शुरू कर रहा हो।

6.25.52

अन्तःकुम्भकमालम्ब्य चिरं भूयो न शोच्यते। प्राणरेचकमालम्ब्य अपानाद्दूरकोटिगम्॥ ५२॥

antaḥkumbhakamālambya ciraṃ bhūyo na śocyate | prāṇarecakamālambya apānāddūrakoṭigam || 52 ||

By holding on to breath-holding inside the body for a long time, one grieves no more, releasing prana all the way out to its farthest point from apana.

शरीर के भीतर सांस रोकने का अभ्यास लंबे समय तक करने से इंसान फिर दुखी नहीं होता, प्राण को छोड़ते हुए उसे अपान से बहुत दूर, उसकी आख़िरी सीमा तक ले जाकर।

6.25.53

स्वच्छं कुम्भकमभ्यस्य न भूयः परितप्यते। अपाने रेचकाधारं प्राणपूरान्तरास्थितम्॥ ५३॥

svacchaṃ kumbhakamabhyasyya na bhūyaḥ paritapyate | apāne recakādhāraṃ prāṇapūrāntarāsthitam || 53 ||

By practicing pure breath-holding, one is troubled no more: apana is the base behind the out-breath, resting within the current where prana flows in.

शुद्ध ढंग से सांस रोकने का अभ्यास करने से इंसान फिर परेशान नहीं होता: अपान सांस छोड़ने का आधार है, जो प्राण के भीतर आने वाली धारा में ही टिका रहता है।

6.25.54

स्वसंस्थं पूरकं दृष्ट्वा न भूयो जायते नरः। प्राणापानावुभावन्तर्यत्रैतौ विलयं गतौ॥ ५४॥

svasaṃsthaṃ pūrakaṃ dṛṣṭvā na bhūyo jāyate naraḥ | prāṇāpānāvubhāvantaryatraitau vilayaṃ gatau || 54 ||

Seeing the in-breath settled in its own natural place, a person is not born again; that is the place within where both prana and apana dissolve.

सांस भरने की क्रिया को उसकी अपनी स्वाभाविक जगह में टिकी हुई देखकर इंसान फिर जन्म नहीं लेता; वह भीतर की वही जगह है जहाँ प्राण और अपान दोनों विलीन हो जाते हैं।

6.25.55

तदालम्ब्य पदं शान्तमात्मानं नानुतप्यते। प्राणभक्षोन्मुखेऽपाने देशं कालं च निष्कलम्॥ ५५॥

tadālambya padaṃ śāntamātmānaṃ nānutapyate | prāṇabhakṣonmukhe'pāne deśaṃ kālaṃ ca niṣkalam || 55 ||

Relying on that peaceful state, the self grieves no more; when apana is about to consume prana, space and time become undivided.

उस शांत अवस्था का सहारा लेकर आत्मा फिर दुखी नहीं होती; जब अपान प्राण को निगलने ही वाला हो, तब देश और काल में कोई बंटवारा नहीं रह जाता।

6.25.56

विचार्य बहिरन्तर्वा न भूयः परिशोच्यते । अपानभक्षणपरे प्राणे हृदि तथा बहिः ॥ ५६ ॥

vicārya bahirantarvā na bhūyaḥ pariśocyate | apānabhakṣaṇapare prāṇe hṛdi tathā bahiḥ || 56 ||

Having looked closely at this, whether outside or within, one grieves no more, when prana is about to consume apana, in the heart as much as outside.

इस पर गौर करने से, चाहे बाहर हो या भीतर, इंसान फिर दुखी नहीं होता, जब प्राण अपान को निगलने पर आ जाए, चाहे वह हृदय में हो या बाहर।

6.25.57

देशं कालं च संप्रेक्ष्य न भूयो जायते मनः । यत्र प्राणो ह्यपानेन प्राणेनापान एव च ॥ ५७ ॥

deśaṃ kālaṃ ca saṃprekṣya na bhūyo jāyate manaḥ | yatra prāṇo hyapānena prāṇenāpāna eva ca || 57 ||

Having seen the place and the moment where prana becomes one with apana, and apana itself becomes one with prana, the mind is not born again.

उस जगह और उस पल को देखकर, जहाँ प्राण अपान से एक हो जाता है और अपान भी प्राण से एक हो जाता है, मन फिर जन्म नहीं लेता।

6.25.58

निगीर्णौ बहिरन्तश्च देशकालौ च पश्य तौ । क्षणमस्तंगतप्राणमपानोदयवर्जितम् ॥ ५८ ॥

nigīrṇau bahirantaśca deśakālau ca paśya tau | kṣaṇamastagataprāṇamapānodayavarjitam || 58 ||

See how space and time are swallowed up, both outside and within, in that moment when prana has set and apana does not rise at all.

देखो, कैसे देश और काल दोनों लुप्त हो जाते हैं, बाहर भी और भीतर भी, उस पल में जब प्राण शांत हो चुका होता है और अपान बिल्कुल नहीं उठता।

6.25.59

अयत्नसिद्धबाह्यस्थं कुम्भकं तत्पदं विदुः । अयत्नसिद्धो ह्यन्तस्थकुम्भकः परमं पदम् ॥ ५९ ॥

ayatnasiddhabāhyasthaṃ kumbhakaṃ tatpadaṃ viduḥ | ayatnasiddho hyantasthakumbhakaḥ paramaṃ padam || 59 ||

The wise know effortless breath-holding outside the body as that state; effortless breath-holding within the body is indeed the highest state.

सांस रोकना जब बिना किसी कोशिश के अपने-आप शरीर के बाहर घटित हो जाए, ज्ञानी लोग उसे ही वह अवस्था मानते हैं; और जब यह बिना कोशिश के भीतर ही अपने आप घटित हो, वही सबसे ऊँची अवस्था है।

6.25.60

एतत्तदात्मनो रूपं शुद्धैषा परमैव चित् । एतत्तत्तत्सदाभासमेतत्प्राप्य न शोच्यते ॥ ६० ॥

etattadātmano rūpaṃ śuddhaiṣā paramaiva cit | etattattatsadābhāsametatprāpya na śocyate || 60 ||

This is that very form of the self; this alone is pure, supreme awareness. This is that ever-present light; attaining this, one grieves no more.

यही आत्मा का वह असली रूप है; यही शुद्ध, सबसे ऊँची चेतना है। यही वह सदा चमकता प्रकाश है; इसे पाकर इंसान फिर दुखी नहीं होता।

6.25.61

पुष्पस्यान्तरिवामोदः प्राणस्यान्तरवस्थितम्। न स प्राणं न वाऽपानं चिदात्मानमुपास्महे ॥ ६१ ॥

puṣpasyaantarivāmodaḥ prāṇasyāntaravasthitam | na sa prāṇaṃ na vā'pānaṃ cidātmānamupāsmahe || 61 ||

Like the fragrance held within a flower, it stays within prana; it is neither prana nor apana. We meditate on that self which is pure awareness.

जैसे खुशबू फूल के भीतर छिपी रहती है, वैसे ही यह प्राण के भीतर बसी हुई है; यह न प्राण है, न अपान। हम उस आत्मा का ध्यान करते हैं, जो शुद्ध चेतना है।

6.25.62

जलस्यान्तरिवास्वादमपानस्यान्तरस्थितम्। न सप्राणं न वाऽप्राणं चिदात्मानमुपास्महे ॥ ६२ ॥

jalasyāntarivāsvādamapānasyaantarasthitam | na saprāṇaṃ na vā'prāṇaṃ cidātmānamupāsmahe || 62 ||

Like taste hidden within water, it stays within apana; it is neither joined to prana nor free of prana. We meditate on that self which is pure awareness.

जैसे स्वाद पानी के भीतर छिपा रहता है, वैसे ही यह अपान के भीतर बसी हुई है; यह न प्राण से जुड़ी है, न प्राण से मुक्त है। हम उस आत्मा का ध्यान करते हैं, जो शुद्ध चेतना है।

6.25.63

प्राणक्षयस्योपान्तस्थमपानक्षयकोटिगम्। अपानप्राणयोर्मध्यं चिदात्मानमुपास्महे ॥ ६३ ॥

prāṇakṣayasyopāntasthamapānakṣayakoṭigam | apānaprāṇayormadhyaṃ cidātmānamupāsmahe || 63 ||

It stands at the edge where prana ends, it reaches the farthest point where apana ends, it is the exact mid-point between apana and prana; we meditate on that self which is pure awareness.

वह प्राण के खत्म होने की सीमा पर खड़ी है, वह अपान के खत्म होने के आखिरी बिंदु तक पहुँचती है, वह अपान और प्राण के ठीक बीच का बिंदु है; हम उस आत्मा का ध्यान करते हैं, जो शुद्ध चेतना है।

6.25.64

प्राणस्य प्राणनं प्रोच्चैः परं जीवस्य जीवनम्। देहस्य धारणं धुर्यं चिदात्मानमुपास्महे ॥ ६४ ॥

prāṇasya prāṇanaṃ proccaiḥ paraṃ jīvasya jīvanam | dehasya dhāraṇaṃ dhuryaṃ cidātmānamupāsmahe || 64 ||

It is, above all, what breathes life into the breath itself, the life within life, the chief support that holds up the body; we meditate on that self which is pure awareness.

वह सबसे बढ़कर सांस को सांस देने वाली है, वह जीवन के भीतर का जीवन है, वह शरीर को थामे रखने वाला सबसे बड़ा सहारा है; हम उस आत्मा का ध्यान करते हैं, जो शुद्ध चेतना है।

6.25.65

मनसो मननं सत्यं बुद्धेरेकावबोधनम्। अहंकृतेरहंकारं चिदात्मानमुपास्महे ॥ ६५ ॥

manaso mananaṃ satyaṃ buddherekāvabodhanam | ahaṃkṛterahaṃkāraṃ cidātmānamupāsmahe || 65 ||

It is the true thought behind the mind's thinking, the one understanding behind the intellect, the very sense of I behind the feeling of I; we meditate on that self which is pure awareness.

वह मन के सोचने के पीछे का सच्चा विचार है, वह बुद्धि की एक अकेली समझ है, वह अहंकार के भीतर का मैं-पन है; हम उस आत्मा का ध्यान करते हैं, जो शुद्ध चेतना है।

6.25.66

यस्मिन्सर्व यतः सर्वं यत्सर्वं सर्वतश्च यत् यच्च सर्वमयं नित्यं तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ६६ ॥

yasmin sarva yataḥ sarvaṃ yat sarvaṃ sarvataśca yat yacca sarvamayaṃ nityaṃ taccittattvamupāsmahe || 66 ||

In it is everything, from it comes everything, it is everything, it is everywhere, and it is the ever-existing one in which everything rests; we meditate on that reality which is pure awareness.

सब कुछ उसी में है, सब कुछ उसी से आता है, वही सब कुछ है, वही हर जगह है, और वही वह सदा रहने वाला है जिसमें सब कुछ समाया है; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.67

आलोकालोकनं पुण्यं सर्वपावनपावनम् न च भावनमन्नूनं तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ६७ ॥

ālokālokanaṃ puṇyaṃ sarvapāvanapāvanam na ca bhāvanamanūnaṃ taccittattvamupāsmahe || 67 ||

It is the light that lets all seeing happen, it is sacred, the purifier of every purifying thing, a fullness that lacks nothing; we meditate on that reality which is pure awareness.

वह उजाला है जिससे हर देखना संभव होता है, वह पवित्र है, वह हर पवित्र करने वाली चीज़ को भी पवित्र करने वाली है, वह एक ऐसी पूर्णता है जिसमें कोई कमी नहीं; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.68

अपानोऽस्तं गतो यत्र प्राणो नाभ्युदितः क्षणम् कलाकलङ्करहितं तच्चित्तत्त्वमुपास्महे नापानोऽभ्युदितो यत्र प्राणश्चान्तमुपागतः नासाग्रगगनावर्तं तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ६८ ॥

apāno'staṃ gato yatra prāṇo nābhyuditaḥ kṣaṇam kalākalaṅkarahitaṃ taccittattvamupāsmahe nāpāno'bhyudito yatra prāṇaścāntamupāgataḥ nāsāgragaganāvartam taccittattvamupāsmahe || 68 ||

Where apana has set and prana has not risen even for a moment, free from the least stain of division, we meditate on that reality which is pure awareness. Where apana has not risen and prana has come to its end, that whirling space at the tip of the nose, we meditate on that reality which is pure awareness.

जहाँ अपान शांत हो चुका है और प्राण एक पल के लिए भी नहीं उठा, जो किसी भी बंटवारे के दाग़ से मुक्त है, हम उस चेतना का ध्यान करते हैं। जहाँ अपान नहीं उठा और प्राण अपने अंत तक पहुँच चुका है, नाक की नोक पर घूमता हुआ वह आकाश, हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.69

यत्र प्राणोऽस्तमायाति यत्रापानोऽस्तमेति च यत्र द्वावप्यनुत्पन्नौ तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ६९ ॥

yatra prāṇo'stamāyāti yatrāpāno'stameti ca yatra dvāvapyanutpannau taccittattvamupāsmahe || 69 ||

Where prana goes to its setting, and apana too goes to its setting, where both together are unborn; we meditate on that reality which is pure awareness.

जहाँ प्राण अस्त होता है, और जहाँ अपान भी अस्त होता है, जहाँ ये दोनों कभी उत्पन्न ही नहीं होते; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.70

प्राणापानोद्भवस्थाने बाह्याभ्यन्तरमास्थिते ये द्वे योगिपदाधारस्तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ७० ॥

prāṇāpānodbhavasthāne bāhyābhyantaramāsthite ye dve yogipadādhāras taccittattvamupāsmahe || 70 ||

In the place where prana and apana arise, resting both outside and within, these two are the very foundation of the yogi's state; we meditate on that reality which is pure awareness.

प्राण और अपान के उत्पन्न होने की जगह में, जो बाहर भी है और भीतर भी, ये दोनों जगहें ही योगी की उस परम अवस्था का आधार हैं; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.71

प्राणापानरथारूढं प्राणापानमनाततम्। यच्छक्तिरूपं शक्तीनां तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ७१ ॥

prāṇāpānarathārūḍhaṃ prāṇāpānamanātatam | yacchaktirūpaṃ śaktīnāṃ taccittattvamupāsmahe || 71 ||

Mounted on the chariot of prana and apana, yet not bound by prana and apana, the very power behind all powers; we meditate on that reality which is pure awareness.

प्राण और अपान के रथ पर सवार, फिर भी प्राण-अपान से अछूती, वह समस्त शक्तियों की मूल शक्ति है; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.72

हृत्प्राणकुम्भकं देवं बहिश्चापानकुम्भकम्। पूरकांशविसृष्टं यत्तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ७२ ॥

hṛtprāṇakumbhakaṃ devaṃ bahiścāpānakumbhakam | pūrakāṃśavisṛṣṭaṃ yattaccittattvamupāsmahe || 72 ||

The shining one who is the holding of prana in the heart, and the holding of apana outside, who is released as a portion of every in-breath; we meditate on that reality which is pure awareness.

वह तेजस्वी रूप, जो हृदय में प्राण को रोकना है, और जो बाहर अपान को रोकना है, जो हर बार सांस भरने में एक अंश की तरह प्रकट होती है; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.73

प्राणापानपरामर्शं सत्ताबोधं विरूपकम्। यत्प्राप्यं प्राणमननात्तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ७३ ॥

prāṇāpānaparāmarśaṃ sattābodhaṃ virūpakam | yatprāpyaṃ prāṇamananāttaccittattvamupāsmahe || 73 ||

The touch that grasps both prana and apana together, the awareness of pure being, without any fixed form, reached through deep attention to the breath; we meditate on that reality which is pure awareness.

जो प्राण और अपान दोनों को एक साथ छूती और जानती है, जो होने के एहसास को जानती है, जिसका कोई तय रूप नहीं, जिसे सांस पर गहरा ध्यान देकर ही पाया जाता है; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.74

यत्प्राणपवनस्पन्दो यत्स्पन्दानन्दकारकम्। कारणं कारणानां यत्तच्चित्तत्त्वमुपास्महे ॥ ७४ ॥

yatprāṇapavanaspando yatspandānandakārakam | kāraṇaṃ kāraṇānāṃ yattaccittattvamupāsmahe || 74 ||

It is the very throb of the breath-wind; it is what turns that throb into joy; it is the cause behind all causes; we meditate on that reality which is pure awareness.

वह सांस की उस हवा की धड़कन है; वह उस धड़कन को आनंद में बदलने वाली है; वह समस्त कारणों का मूल कारण है; हम उस चेतना का ध्यान करते हैं।

6.25.75

यदखिलकलनाकलङ्कहीनं परिवलितं च सदा कलागणेन। स्वनुभवविभवं पदं तदग्र्यं सकलसुरप्रणतं परं प्रपद्ये ॥ ७५ ॥

yadakhilakalanākalaṅkahīnaṃ parivalitaṃ ca sadā kalāgaṇena | svanubhavavibhavaṃ padaṃ tadagryaṃ sakalasurapraṇataṃ paraṃ prapadye || 75 ||

I take refuge in that highest, supreme state, free from the stain of all activity, yet always surrounded by its own many powers, a state whose only wealth is one's own direct experience of it, bowed to by all the gods.

मैं उस सबसे ऊँची, परम अवस्था की शरण लेता हूँ, जो हर तरह की हलचल के दाग़ से मुक्त है, फिर भी हमेशा अपनी ही अनेक शक्तियों से घिरी रहती है, जिसकी एकमात्र दौलत उसका अपना सीधा अनुभव है, और जिसे सभी देवता नमन करते हैं।

Chapter 26

6.26.1

भुशुण्ड उवाच । एषा हि चित्तविश्रान्तिर्मया प्राणसमाधिना । क्रमेणानेन संप्राप्ता स्वयमात्मनि निर्मले ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | eṣā hi cittaviśrāntirmayā prāṇasamādhinā | krameṇānena saṃprāptā svayamātmani nirmale || 1 ||

Bhushunda said: This resting of my mind I have reached on its own, in the pure self, through mastery of the breath, by this very process.

भुशुण्ड ने कहा: मन की यह शांति मैंने प्राण को साधने से, इसी क्रम से, अपने आप, निर्मल आत्मा में पाई है।

6.26.2

एतां दृष्टिमवष्टभ्य संस्थितोऽस्मि महामुने । न चलामि निमेषांशमपि मेरुविचालतः ॥ २ ॥

etāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya saṃsthito'smi mahāmune | na calāmi nimeṣāṃśamapi meruvicālataḥ || 2 ||

Holding on to this vision, I stand fixed, great sage. I do not move, not even for the blink of an eye, even if Mount Meru itself were shaking.

इस दृष्टि को थामे हुए मैं स्थिर खड़ा हूँ, हे महामुनि। मैं पलक झपकने भर भी नहीं हिलता, चाहे मेरु पर्वत ही क्यों न हिल जाए।

6.26.3

गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा । स्वप्नेऽपि न चलत्येष सुसमाधिर्ममात्मनि ॥ ३ ॥

gacchatastiṣṭhato vāpi jāgrataḥ svapato'pi vā | svapne'pi na calatyēṣa susamādhirmamātmani || 3 ||

Whether I walk or stand, whether I am awake or asleep, even in dream, this deep stillness of mine in the self does not waver.

चाहे मैं चलूँ या खड़ा रहूँ, चाहे जागूँ या सोऊँ, स्वप्न में भी, मेरी आत्मा की यह गहरी समाधि कभी नहीं डगमगाती।

6.26.4

नित्यानित्यासु लोलासु जगत्स्थितिषु सुस्थितः । अन्तर्मुखोऽस्मि तिष्ठामि स्वकामेनात्मनात्मनि ॥ ४ ॥

nityānityāsu lolāsu jagatsthitiṣu susthitaḥ | antarmukho'smi tiṣṭhāmi svakāmenātmanātmani || 4 ||

Amid the states of the world, lasting and passing, ever shifting, I stand firm. I am turned inward; by my own will, I remain, myself within myself.

जगत की इन बदलती हुई, कभी टिकने वाली और कभी न टिकने वाली, अवस्थाओं के बीच मैं दृढ़ स्थित हूँ। मैं अंतर्मुख हूँ; अपनी ही इच्छा से मैं आत्मा में आत्मा के रूप में स्थित रहता हूँ।

6.26.5

प्राणापानानुसरणात्परमात्मावलोकनात् । अशोकमनुजातोऽस्मि पदमाद्यं महातपः ॥ ५ ॥

prāṇāpānānusaraṇātparamātmāvalokanāt | aśokamanujāto'smi padamādyaṃ mahātapaḥ || 5 ||

By following the breath in and the breath out, by watching the supreme self, through great austerity I have come to the first state, free of sorrow.

श्वास के भीतर आने और बाहर जाने का अनुसरण करने से, परमात्मा को देखने से, कठोर तप से मैं उस पहली, शोकरहित अवस्था को प्राप्त हुआ हूँ।

6.26.7

आमहाप्रलयाद्ब्रह्मन्नुन्मज्जननिमज्जनम्। अहमद्यापि भूतानां पश्यञ्जीवामि धीरधीः ॥ ७ ॥

āmahāpralayādbrahmannunmajjjananimajjanam | ahamadyāpi bhūtānāṃ paśyañjīvāmi dhīradhīḥ || 7 ||

Ever since the great dissolution, brahmin, I have watched the rising and sinking of beings; even today, steady of mind, I live on, seeing this.

हे ब्राह्मण, महाप्रलय के समय से लेकर आज तक मैं प्राणियों के उठने और डूबने को देखता हुआ जी रहा हूँ, स्थिर बुद्धि के साथ।

6.26.8

न भूतं न भविष्यं च चिन्तयामि कदाचन। दृष्टिमालम्ब्य तिष्ठामि वर्तमानामिहात्मना ॥ ८ ॥

na bhūtaṃ na bhaviṣyaṃ ca cintayāmi kadācana | dṛṣṭimālambya tiṣṭhāmi vartamānāmihātmanā || 8 ||

I never dwell on what has been or what will be. I hold to the vision of the present, and remain here, in myself.

मैं कभी न बीते हुए के बारे में सोचता हूँ, न आने वाले के बारे में। मैं वर्तमान की दृष्टि को थामे यहाँ, अपने आप में, स्थित रहता हूँ।

6.26.9

यथा प्राप्तेषु कार्येषु परित्यक्तफलैषणः। सुषुप्तसमया बुद्ध्या परितिष्ठामि केवलम् ॥ ९ ॥

yathā prāpteṣu kāryeṣu parityaktaphalaiṣaṇaḥ | suṣuptasamayā buddhyā paritiṣṭhāmi kevalam || 9 ||

In whatever task comes to me, I have given up craving for its fruit; with a mind still as deep sleep, I simply remain.

जो भी काम सामने आता है, उसमें फल की चाह छोड़कर, गहरी नींद जैसी शांत बुद्धि से, मैं बस स्थित रहता हूँ।

6.26.10

भावाभावमयीं चिन्तामीहितानीहितान्विताम्। विमृश्यात्मनि तिष्ठामि चिरं जीवाम्यनामयः ॥ १० ॥

bhāvābhāvamayīṃ cintāmīhitānīhitānvitām | vimṛśyātmani tiṣṭhāmi ciraṃ jīvāmyanāmayaḥ || 10 ||

I reflect on thought itself, made of being and non-being, mixed with what is wished for and what is not, and then rest in the self. So I live long, free from any sickness.

भाव और अभाव से बनी, चाही और अनचाही बातों से भरी हुई चिंता पर विचार करके, मैं आत्मा में स्थित रहता हूँ। इसी से मैं बहुत समय से बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.11

प्राणापानसमायोगसमयं समनुस्मरन्। स्वयमात्मनि तुष्यामि चिरं जीवाम्यनामयः ॥ ११ ॥

prāṇāpānasamāyogasamayaṃ samanusmaran | svayamātmani tuṣyāmi ciraṃ jīvāmyanāmayaḥ || 11 ||

Always keeping in mind the moment when the in-breath and the out-breath join, I am content in myself, within the self. So I live long, free from any sickness.

प्राण और अपान के मिलने के क्षण को सदा स्मरण करते हुए, मैं स्वयं अपनी आत्मा में संतुष्ट रहता हूँ। इसी से मैं बहुत समय से बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.12

इदमद्य मया लब्धमिदं प्राप्स्यामि सुन्दरम्। इति चिन्ता न मे तेन चिरं जीवाम्यनामयः ॥ १२ ॥

idamadya mayā labdhamidaṃ prāpsyāmi sundaram | iti cintā na me tena ciraṃ jīvāmyanāmayaḥ || 12 ||

I have gained this today, and tomorrow I will get that lovely thing, I never think this way. So I live long, free from any sickness.

आज मुझे यह मिल गया, और आगे वह सुंदर वस्तु मिलेगी, ऐसी चिंता मुझे कभी नहीं होती। इसी से मैं बहुत समय से बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.13

न स्तौमि न च निन्दामि क्वचित्किंचित्कदाचन। आत्मनोऽन्यस्य वा साधो तेनाहं शुभमागतः ॥ १३ ॥

na stauti na ca nindāmi kvacitkiñcitkadācana | ātmano'nyasya vā sādho tenāhaṃ śubhamāgataḥ || 13 ||

I never praise and I never blame anything, anywhere, at any time, whether it is my own or another's, good sir. That is why I have come to what is good.

मैं न कभी किसी की प्रशंसा करता हूँ, न कभी निंदा, चाहे वह मेरा अपना हो या किसी और का, हे साधु। इसी से मैं शुभ को प्राप्त हुआ हूँ।

6.26.14

न तुष्यति शुभप्राप्तौ नाशुभेष्वपि खिद्यते। मनो मम समं नित्यं तेनाहं शुभमागतः ॥ १४ ॥

na tuṣyati śubhaprāptau nāśubheṣvapi khidyate | mano mama samaṃ nityaṃ tenāhaṃ śubhamāgataḥ || 14 ||

My mind does not rejoice when good things come, nor does it grieve even at bad things; it stays even always. That is why I have come to what is good.

अच्छी वस्तु मिलने पर मेरा मन प्रसन्न नहीं होता, और बुरी वस्तु मिलने पर भी दुखी नहीं होता; मेरा मन सदा समान रहता है। इसी से मैं शुभ को प्राप्त हुआ हूँ।

6.26.15

परमं त्यागमालम्ब्य सर्वमेव सदैव हि। जीवितादि मया त्यक्तं तेनाहं शुभमागतः ॥ १५ ॥

paramaṃ tyāgamālambya sarvameva sadaiva hi | jīvitādi mayā tyaktaṃ tenāhaṃ śubhamāgataḥ || 15 ||

Holding fast to the highest renunciation, I have given up everything, always, life itself, and all that goes with it. That is why I have come to what is good.

सबसे बड़े त्याग को अपनाकर मैंने सब कुछ, सदा के लिए, त्याग दिया है, जीवन को भी और बाकी सब कुछ भी। इसी से मैं शुभ को प्राप्त हुआ हूँ।

6.26.16

प्रशान्तचापलं वीतशोकं स्वस्थं समाहितम्। मनो मम मुने शान्तं तेन जीवाम्यनामयः ॥ १६ ॥

praśāntacāpalaṃ vītaśokaṃ svasthaṃ samāhitam | mano mama mune śāntaṃ tena jīvāmyanāmayaḥ || 16 ||

My mind, sage, has its restlessness calmed; it is free of sorrow, steady in itself, gathered, at peace. So I live free of any sickness.

हे मुनि, मेरा मन चंचलता से मुक्त, शोक से रहित, अपने आप में स्थिर, एकाग्र और शांत है। इसी से मैं बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.17

काष्ठं विलासिनीं शैलं तृणमग्निं हिमं नभः । समं सर्वत्र पश्यामि तेन जीवाम्यनामयः ॥ १७ ॥

kāṣṭhaṃ vilāsinīṃ śailaṃ tṛṇamagniṃ himaṃ nabhaḥ | samaṃ sarvatra paśyāmi tena jīvāmyanāmayaḥ || 17 ||

Wood, a beautiful woman, a mountain, a blade of grass, fire, snow, the sky, I see them all alike, everywhere. So I live free of any sickness.

लकड़ी, एक सुंदर स्त्री, पर्वत, तिनका, आग, बर्फ़, आकाश, मैं इन सबको हर जगह समान देखता हूँ। इसी से मैं बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.18

किमद्य मम संपन्नं प्रातर्वा भविता पुनः । इति चिन्ताज्वरो नास्ति तेन जीवाम्यनामयः ॥ १८ ॥

kimadya mama saṃpannaṃ prātarvā bhavitā punaḥ | iti cintājvaro nāsti tena jīvāmyanāmayaḥ || 18 ||

What have I gotten today, or what will happen again tomorrow, this fever of worry does not touch me. So I live free of any sickness.

आज मुझे क्या मिला, या कल सुबह फिर क्या होगा, ऐसी चिंता का बुखार मुझे कभी नहीं होता। इसी से मैं बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.19

जरामरणदुःखेषु राज्यलाभसुखेषु च । न बिभेमि न हृष्यामि तेन जीवाम्यनामयः ॥ १९ ॥

jarāmaraṇaduḥkheṣu rājyalābhasukheṣu ca | na bibhemi na hṛṣyāmi tena jīvāmyanāmayaḥ || 19 ||

In the sufferings of old age and death, and in the joys of gaining a kingdom, I neither fear nor delight. So I live free of any sickness.

बुढ़ापे और मृत्यु के दुखों में, और राज्य पाने के सुख में, मैं न डरता हूँ, न प्रसन्न होता हूँ। इसी से मैं बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.20

अयं बन्धुः परश्चायं ममायमयमन्यतः । इति ब्रह्मन्न जानामि तेन जीवाम्यनामयः ॥ २० ॥

ayaṃ bandhuḥ paraścāyaṃ mamāyamayamanyataḥ | iti brahmanna jānāmi tena jīvāmyanāmayaḥ || 20 ||

This one is my kinsman, this one is a stranger, this one is mine, this one belongs to someone else, I never think this way, brahmin. So I live free of any sickness.

यह मेरा अपना है, यह पराया है, यह मेरा है, यह किसी और का है, हे ब्राह्मण, मैं ऐसा कभी नहीं सोचता। इसी से मैं बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.21

सर्वं सर्वपदाभासमनाद्यन्तमनामयम् । अहं चिदिति जानामि तेन जीवाम्यनामयः ॥ २१ ॥

sarvaṃ sarvapadābhāsam anādyantam anāmayam | ahaṃ cid iti jānāmi tena jīvāmy anāmayaḥ || 21 ||

I know that all this, appearing in every form, without beginning or end, untouched by any sickness, is myself, pure awareness. So I live free of any sickness.

मैं जानता हूँ कि यह सब कुछ, जो हर रूप में दिखाई देता है, जिसका न आरंभ है न अंत, जो किसी रोग से रहित है, वह मैं ही हूँ, चेतना। इसी से मैं बिना किसी रोग के जी रहा हूँ।

6.26.22

आहरन्विहरंस्तिष्ठन्नत्तिष्ठन्नुच्छ्वसन्स्वपन् । देहोऽहमिति नो वेद्मि तेनास्मि चिरजीवितः ॥ २२ ॥

āharanviharaṃstiṣṭhannattiṣṭhannucchvasansvapan | deho'hamiti no vedmi tenāsmi cirajīvitaḥ || 22 ||

Whether I am eating, moving about, standing or not standing, breathing, or sleeping, in all this I never think 'I am the body.' Because of this I live a long life.

चाहे मैं खा रहा होऊं, घूम रहा होऊं, खड़ा होऊं या खड़ा न होऊं, सांस ले रहा होऊं या सो रहा होऊं, इन सबमें मैं कभी यह नहीं सोचता कि 'मैं यह शरीर हूं।' इसी वजह से मैं लंबी उम्र तक जीता हूं।

6.26.23

इमं सांसारमारम्भं सुषुप्तपदवत्स्थितः । असन्तमिव जानामि तेन जीवाम्यनामयः ॥ २३ ॥

imaṃ sāṃsāramārambhaṃ suṣuptapadavatsthitaḥ | asantamiva jānāmi tena jīvāmyanāmayaḥ || 23 ||

I see this whole business of the world the way someone standing in deep sleep sees it, as if it did not exist at all. Because of this I live free from disease.

मैं इस पूरी दुनिया के इस खेल को वैसे देखता हूं जैसे कोई गहरी नींद में सोया हुआ व्यक्ति देखता है, जैसे यह हो ही ना। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.24

यथाकालमुपायातावर्थानर्थौ समौ मम । हस्ताविव शरीरस्थौ तेन जीवाम्यनामयः ॥ २४ ॥

yathākālamupāyātāvarthānarathau samau mama | hastāviva śarīrasthau tena jīvāmyanāmayaḥ || 24 ||

Gain and loss come to me each in their own time, and both are the same to me, like my own two hands on my body. Because of this I live free from disease.

लाभ और हानि मेरे पास अपने-अपने समय पर आते हैं, और दोनों मेरे लिए बराबर हैं, जैसे मेरे शरीर के अपने ही दोनों हाथ। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.25

अपरिचलया शक्त्या सुदृशा स्निग्धमुग्धया । ऋजु पश्यामि सर्वत्र तेन जीवाम्यनामयः ॥ २५ ॥

aparicalayā śaktyā sudṛśā snigdhamugdhayā | ṛju paśyāmi sarvatra tena jīvāmyanāmayaḥ || 25 ||

With a power that never wavers, and with a clear eye that is gentle and innocent, I see straight and true everywhere. Because of this I live free from disease.

एक ऐसी ताकत से जो कभी नहीं डगमगाती, और एक ऐसी साफ नज़र से जो कोमल और भोली है, मैं हर जगह सीधा और सच देखता हूं। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.26

आपादमस्तकान्तेऽस्मिन्न देहे ममता मम । त्यक्ताहंकारपङ्कस्य तेन जीवाम्यनामयः ॥ २६ ॥

āpādamastakānte'sminna dehe mamatā mama | tyaktāhaṃkārapaṅkasya tena jīvāmyanāmayaḥ || 26 ||

In this body, from the feet to the top of the head, I feel nothing is 'mine.' I have thrown off the mud of ego. Because of this I live free from disease.

इस शरीर में, पैर से लेकर सिर की चोटी तक, मुझे कहीं भी यह महसूस नहीं होता कि यह 'मेरा' है। मैंने अहंकार के कीचड़ को त्याग दिया है। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.27

यत्करोमि यदश्नामि तत्त्यक्त्वा तद्वतोऽपि मे । मनो नैष्कर्म्यमादत्ते तेन जीवाम्यनामयः ॥ २७ ॥

yatkaromi yadaśnāmi tattatyaktvā tadvato'pi me | mano naiṣkarmyamādatte tena jīvāmyanāmayaḥ || 27 ||

Whatever I do, whatever I eat, I let it go even while I am doing it, and my mind holds on to freedom from action. Because of this I live free from disease.

मैं जो भी करता हूं, जो भी खाता हूं, उसे करते हुए भी उसी वक्त छोड़ देता हूं, और मेरा मन कर्म से मुक्ति को पकड़े रहता है। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.28

यदा यदा मुने किंचिद्विजानामि तदा तदा । मतिरायाति नौद्धत्यं तेन जीवाम्यनामयः ॥ २८ ॥

yadā yadā mune kiñcidvijānāmi tadā tadā | matirāyāti nauddhatyaṃ tena jīvāmyanāmayaḥ || 28 ||

O sage, whenever I come to understand something, my mind never becomes proud of it. Because of this I live free from disease.

हे मुनि, जब भी मुझे कुछ समझ आता है, मेरा मन कभी उस पर घमंड नहीं करता। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.29

करोमीशोऽपि नाक्रान्तिं परितापे न खेदवान् । दरिद्रोऽपि न वाञ्छामि तेन जीवाम्यनामयः ॥ २९ ॥

karomīśo'pi nākrāntiṃ paritāpe na khedavān | daridro'pi na vāñchāmi tena jīvāmyanāmayaḥ || 29 ||

Even when I have the power to act, I do not force my way over anyone. In suffering I do not grieve. Even when poor, I do not long for more. Because of this I live free from disease.

भले ही मुझमें कुछ भी करने की ताकत हो, मैं किसी पर ज़बरदस्ती नहीं करता। दुख में मैं दुखी नहीं होता। गरीब होने पर भी मैं और पाने की चाह नहीं रखता। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.30

पश्यद्रूपे शरीरेऽस्मिन्भूतस्थात्मा चिदास्पदः । भूतवृन्दमहं साम्यात्तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३० ॥

paśyadrūpe śarīre'sminbhūtasthātmā cidāspadaḥ | bhūtavṛndamahaṃ sāmyāttena jīvāmyanāmayaḥ || 30 ||

In this body, which has a form that sees, the self that lives in every being is the seat of awareness. Through this sameness, I am the whole multitude of beings. Because of this I live free from disease.

इस शरीर में, जिसका रूप देखने में सक्षम है, हर प्राणी में रहने वाली आत्मा ही चेतना का ठिकाना है। इसी समानता के कारण मैं ही सब प्राणियों का समूह हूं। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.31

आशापाशविनुन्नायाश्चित्तवृत्तेः समाहितः । संस्पर्शे न ददाम्यन्तस्तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३१ ॥

āśāpāśavinunnāyāścittavṛtteḥ samāhitaḥ | saṃsparśe na dadāmyantastena jīvāmyanāmayaḥ || 31 ||

When the movements of my mind are pulled by the rope of desire, I stay collected and do not let them touch me from within. Because of this I live free from disease.

जब मेरे मन की हलचलें इच्छा की रस्सी से खिंचती हैं, तब भी मैं स्थिर रहता हूं और उन्हें अपने भीतर छूने नहीं देता। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.32

असत्तां जगतः सत्तामात्मनः करबिल्ववत् । सुप्तः प्रबुद्धः पश्यामि तेनास्मि चिरजीवितः ॥ ३२ ॥

asattāṃ jagataḥ sattāmātmanaḥ karabilvavat | suptaḥ prabuddhaḥ paśyāmi tenāsmi cirajīvitaḥ || 32 ||

Whether asleep or awake, I see the unreality of the world and the reality of the self as clearly as a fruit held in my own hand. Because of this I live a long life.

चाहे मैं सोया हुआ होऊं या जागा हुआ, मुझे दुनिया का न होना और आत्मा का होना उतना ही साफ दिखता है जितना अपने हाथ में रखा हुआ कोई फल। इसी वजह से मैं लंबी उम्र तक जीता हूं।

6.26.33

जीर्णं भिन्नं श्लथं क्षीणं क्षुब्धं क्षुण्णं क्षयं गतम्। पश्यामि नववत्सर्वं तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३३ ॥

jīrṇaṃ bhinnaṃ ślathaṃ kṣīṇaṃ kṣubdhaṃ kṣuṇṇaṃ kṣayaṃ gatam | paśyāmi navavatsarvaṃ tena jīvāmyanāmayaḥ || 33 ||

Old, broken, worn out, wasted, shaken, crushed, destroyed — whatever has become like this, I see it all as if it were new. Because of this I live free from disease.

पुराना, टूटा हुआ, ढीला, कमज़ोर, हिला हुआ, कुचला हुआ, नष्ट हो चुका — जो कुछ भी ऐसा हो चुका है, मुझे वह सब नया जैसा दिखता है। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.34

सुखितोऽस्मि सुखापन्ने दुःखितो दुःखिते जने। सर्वस्य प्रियमित्रं च तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३४ ॥

sukhito'smi sukhāpanne duḥkhito duḥkhite jane | sarvasya priyamitraṃ ca tena jīvāmyanāmayaḥ || 34 ||

When someone is happy, I am happy. When someone is suffering, I suffer with them. I am a dear friend to everyone. Because of this I live free from disease.

जब कोई खुश होता है, तो मैं खुश होता हूं। जब कोई दुखी होता है, तो मैं भी उसके साथ दुखी होता हूं। मैं सबका प्रिय मित्र हूं। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.35

आपद्यचलधीरोऽस्मि जगन्मित्रं च संपदि। भावाभावेषु नैवास्मि तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३५ ॥

āpadyacaladhīro'smi jagannmitraṃ ca saṃpadi | bhāvābhāveṣu naivāsmi tena jīvāmyanāmayaḥ || 35 ||

In misfortune I stay firm and unshaken, and in good fortune I am a friend to the world. Whether things come into being or pass away, I am not caught up in it. Because of this I live free from disease.

मुसीबत में मैं अडिग और स्थिर रहता हूं, और अच्छे समय में मैं दुनिया का मित्र बना रहता हूं। चीज़ें बनें या मिटें, मैं उनमें उलझता नहीं। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.36

नाहमस्मि न चान्यो मे नाहमन्यस्य कस्यचित्। इति मे भावितं चित्तं तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३६ ॥

nāhamasmi na cānyo me nāhamanyasya kasyacit | iti me bhāvitaṃ cittaṃ tena jīvāmyanāmayaḥ || 36 ||

I am not this separate self, and no one else belongs to me, nor do I belong to anyone else. My mind is settled in this understanding. Because of this I live free from disease.

मैं यह अलग 'मैं' नहीं हूं, और कोई दूसरा मेरा नहीं है, ना ही मैं किसी और का हूं। मेरा मन इसी समझ में टिका हुआ है। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.37

अहं जगदहं व्योम देशकालक्रमावहम्। अहं क्रियेति मे बुद्धिस्तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३७ ॥

ahaṃ jagadahaṃ vyoma deśakālakramāvaham | ahaṃ kriyeti me buddhiste na jīvāmyanāmayaḥ || 37 ||

I am the world, I am the sky, I am the one who brings about the order of place, time, and action — this is my understanding. Because of this I live free from disease.

मैं ही दुनिया हूं, मैं ही आकाश हूं, स्थान, समय और कर्म का क्रम लाने वाला भी मैं ही हूं — यही मेरी समझ है। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.38

घटश्चिच्चित्पटश्चित्खं चिद्वनं शकटं च चित् । चित्सर्वमिति मे भावस्तेन जीवाम्यनामयः ॥ ३८ ॥

ghaṭaściccitpaṭaścitkhaṃ cidvanaṃ śakaṭaṃ ca cit | citsarvamiti me bhāvaste na jīvāmyanāmayaḥ || 38 ||

The pot is consciousness, the cloth is consciousness, the sky is consciousness, the forest is consciousness, and the cart too is consciousness. 'Consciousness is everything' — this is what I hold to be true. Because of this I live free from disease.

घड़ा भी चेतना है, कपड़ा भी चेतना है, आकाश भी चेतना है, जंगल भी चेतना है, और गाड़ी भी चेतना है। 'सब कुछ चेतना ही है' — यही मेरा दृढ़ विश्वास है। इसी वजह से मैं बिना किसी रोग के जीता हूं।

6.26.39

इत्यहं मुनिशार्दूल त्रिलोककमलालिकः । भुशुण्डो नाम काकोलः कथितश्चिरजीवितः ॥ ३९ ॥

ityahaṃ muniśārdūla trilokakamalālikaḥ | bhuśuṇḍo nāma kākolāḥ kathitaścirajīvitaḥ || 39 ||

So, O tiger among sages, I, the bee at the lotus of the three worlds, named Bhushunda, a crow, am known as long-lived.

इस तरह, हे मुनियों में श्रेष्ठ, मैं, तीनों लोकों के कमल पर मंडराने वाला भौंरा, भुशुण्ड नाम का यह कौआ, दीर्घजीवी के रूप में जाना जाता हूं।

6.26.40

ब्रह्मार्णवे विलुलितं त्रिजगत्तरङ्गमुत्पादनाद्यभिभवेन विभिन्नरूपम् । आलीनमुन्नमितमाकुलदृश्यदृश्यमालोकयन्प्रकलयंश्च चिरं स्थितोऽस्मि ॥ ४० ॥

brahmārṇave vilulitaṃ trijagattaraṅgamutpādanādyabhibhavena vibhinnarūpam |
ālīnamunnamitamākuladṛśyadṛśyamālokayanprakalayaṃśca ciraṃ sthito'smi || 40 ||

In the ocean of Brahman, the three worlds toss like a wave, changing form as they are created and then overwhelmed and destroyed. That wave sometimes sinks down and sometimes rises up, and it is a confusing sight to watch. Watching it and understanding it, I have gone on living for a long time.

ब्रह्म के इस सागर में तीनों लोक एक लहर की तरह हिलते-डुलते रहते हैं, बनते हैं, फिर दबाए जाते हैं और नष्ट होते हैं, और अलग-अलग रूप लेते रहते हैं। वह लहर कभी नीचे बैठ जाती है, कभी ऊपर उठ आती है, और इसे देखना एक उलझन भरा दृश्य है। इसे देखते हुए और समझते हुए, मैं लंबे समय से यहां टिका हुआ हूं।

Chapter 27

6.27.1

भुशुण्ड उवाच । एतत्ते कथितं ब्रह्मन्यथास्मि यदिहास्मि च । त्वदाज्ञामात्रसिद्ध्यर्थं धार्ष्ट्येन ज्ञानपारग ॥ ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | etatte kathitaṃ brahmanyathāsmi yadihāsmi ca | tvadājñāmātrasiddhyarthaṃ dhārṣṭyena jñānapāraga || 1 ||

Bhushunda said: I have told you all this, Brahmin, exactly as I am and as I live here. I have spoken boldly only to carry out your order, you who have gone all the way in true knowledge.

भुशुण्ड ने कहा: हे ब्राह्मण, मैंने आपको सब कुछ वैसा ही बता दिया जैसा मैं हूँ और यहाँ जैसे रहता हूँ। मैंने यह सब सिर्फ आपकी आज्ञा पूरी करने के लिए साहस से कहा है, हे ज्ञान में सबसे आगे बढ़े हुए व्यक्ति।

6.27.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । अहो नु चित्रं भगवन्भवता भूषणं श्रुतेः । आत्मोदन्तः प्रकथितः परं विस्मयकारणम् ॥ ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | aho nu citraṃ bhagavanbhavatā bhūṣaṇaṃ śruteḥ | ātmoudantaḥ prakathitaḥ paraṃ vismayakāraṇam || 2 ||

Sri Vasishtha said: Oh, how wonderful this is, venerable one. You are an ornament to sacred learning, and you have told your own story. It is a great cause for wonder.

श्री वसिष्ठ ने कहा: अरे, यह कितना अद्भुत है, हे भगवन्! आप शास्त्रों की शोभा हैं, और आपने अपनी ही कहानी सुनाई है। यह बहुत बड़े आश्चर्य की बात है।

6.27.3

धन्यास्ते ये महात्मानमत्यन्तचिरजीवनम् । भवन्तं परिपश्यन्ति द्वितीयमिव पद्मजम् ॥ ॥ ३ ॥

dhanyāste ye mahātmānamatyantacirajīvanam | bhavantaṃ paripaśyanti dvitīyamiva padmajam || 3 ||

Blessed are those who see you, a great soul of very long life, as if you were a second Brahma.

धन्य हैं वे लोग जो आपको देखते हैं, एक महान आत्मा जो बहुत लंबे समय से जीवित है, मानो आप दूसरे ब्रह्मा हों।

6.27.4

यावदद्य दृशो धन्याः स्वात्मोदन्तमखण्डितम् । यथावत्पावनं बुद्धेः सर्वं कथितवानसि ॥ ॥ ४ ॥

yāvadadya dṛśo dhanyāḥ svātmoudantamakhṇḍitam | yathāvatpāvanaṃ buddheḥ sarvaṃ kathitavānasi || 4 ||

Today my own eyes are blessed, since you have told the whole of your story, without leaving anything out, exactly as it happened, and it purifies the mind.

आज मेरी आँखें सचमुच धन्य हैं, क्योंकि आपने अपनी पूरी कहानी बिना कुछ छोड़े, ठीक जैसी हुई वैसी ही सुनाई है, और यह मन को शुद्ध करने वाली है।

6.27.5

प्रभातं दिक्षु सर्वासु दृष्टा विबुधभूतयः । भवानिव जगत्यस्मिन्न महानवलोकितः ॥ ॥ ५ ॥

prabhātaṃ dikṣu sarvāsu dṛṣṭā vibudhabhūtayaḥ | bhavāniva jagatyasminna mahānavalokitaḥ || 5 ||

I have seen dawn break in every direction, I have seen the good fortune of the gods, but I have never seen anyone as great as you in this world.

मैंने हर दिशा में सुबह होते देखी है, मैंने देवताओं का ऐश्वर्य देखा है, पर इस दुनिया में आपके जैसा महान व्यक्ति मैंने कभी नहीं देखा।

6.27.6

कथंचित्प्राप्यते कश्चिद्भ्रान्त्वेव हि महाजनः । न भवानिव भव्यात्मा सुलभो जगति क्वचित् ॥ ६ ॥

kathaṃcitprāpyate kaścidbhrāntveva hi mahājanaḥ | na bhavāniva bhavyātmā sulabho jagati kvacit || 6 ||

After much wandering, a great person may somehow be found somewhere. But a good soul like you is not easy to find anywhere in this world.

बहुत भटकने के बाद कहीं न कहीं कोई महान व्यक्ति मिल ही जाता है। पर आपके जैसी अच्छी आत्मा इस दुनिया में कहीं भी आसानी से नहीं मिलती।

6.27.7

वंशखण्डे हि कस्मिंश्चिज्जायते मौक्तिकं यथा । जगत्खण्डे हि कस्मिंश्चिद्दृश्यते त्वादृशस्तथा ॥ ७ ॥

vaṃśakhaṇḍe hi kasmiṃścijjāyate mauktikaṃ yathā | jagatkhaṇḍe hi kasmiṃściddṛśyate tvādṛśastathā || 7 ||

A pearl is born only in some rare piece of bamboo. In the same way, someone like you is found only in some rare part of the world.

मोती किसी विरले बांस के टुकड़े में ही पैदा होता है। उसी तरह, आप जैसा व्यक्ति दुनिया के किसी विरले हिस्से में ही मिलता है।

6.27.8

मया तु सुमहत्कार्यमद्य संपादितं शुभम् । पुण्यदेहविमुक्तात्मा यद्भवानवलोकितः ॥ ८ ॥

mayā tu sumahatkāryamadya saṃpāditaṃ śubham | puṇyadehavimuktātmā yadbhavānavalokitaḥ || 8 ||

Today I have done a truly great and good thing, since I have seen you. You live in a blessed body, but your soul is already free.

आज मैंने सच में एक बहुत बड़ा और अच्छा काम किया है, क्योंकि मैंने आपको देखा है। आप एक पुण्य शरीर में रहते हैं, पर आपकी आत्मा पहले से ही मुक्त है।

6.27.9

तदस्तु तव कल्याणं प्रविशात्मगुहां शुभाम् । मध्याह्नसमयो यन्मे व्रजामि सुरमन्दिरम् ॥ ९ ॥

tadastu tava kalyāṇaṃ praviśātmaguhaṃ śubhām | madhyāhnasamayo yanme vrajāmi suramandiram || 9 ||

So may all be well with you. Go back into your own good cave. It is midday for me now, and I am going to the home of the gods.

तो आपका भला हो। आप अपनी उसी अच्छी गुफा में लौट जाइए। अब मेरे लिए दोपहर हो गई है, और मैं देवताओं के घर जा रहा हूँ।

6.27.10

इत्याकर्ण्य भुशुण्डोऽसौ जग्राहोत्थाय पादपात् । संकल्पिताभ्यां हस्ताभ्यामुपात्तं हेमपल्लवम् ॥ १० ॥

ityākarṇya bhuśuṇḍo'sau jagrahottāya pādapāt | saṃkalpitābhyāṃ hastābhyāmupāttaṃ hemapallavam || 10 ||

Hearing this, Bhushunda rose from the tree. With two hands he made by his own will, he picked up a golden leaf.

यह सुनकर भुशुण्ड पेड़ से उठा। अपनी इच्छा से बनाए दो हाथों से उसने एक सोने का पत्ता उठा लिया।

6.27.11

कल्पवृक्षलतापुष्पकेसरेण हिमत्विषा तत्पात्रं मौक्तिकार्घ्येण पूरयामास पूर्णधीः ॥ ११ ॥

kalpavṛkṣalatāpuṣpakesareṇa himatviṣā tatpātraṃ mauktikārghyeṇa pūrayāmāsa pūrṇadhīḥ || 11 ||

With his mind fully fixed, he filled that leaf like a cup with the pollen of a wish-granting vine's flowers, cool and bright as snow, as an offering of pearls.

पूरी तरह एकाग्र मन से उसने उस पत्ते के दोने को एक कल्पवृक्ष की बेल के फूलों के पराग से भर दिया, जो बर्फ जैसा ठंडा और चमकीला था, मानो मोतियों की भेंट हो।

6.27.12

तेनार्घ्यपाद्यपुष्पेण त्रिनेत्रमिव मामसौ आपादमस्तकं भक्त्या पूजयामास पूर्वजः ॥ १२ ॥

tenārghyapādyapuṣpeṇa trinetramiva māmasau āpādamastakaṃ bhaktyā pūjayāmāsa pūrvajaḥ || 12 ||

With that offering, the water for the feet, and the flowers, that ancient one worshipped me with devotion from head to foot, as if I were the three-eyed Shiva.

उस भेंट, चरण धोने के जल और फूलों से उस बहुत पुराने भुशुण्ड ने मुझे सिर से पैर तक भक्ति के साथ पूजा, मानो मैं तीन आँखों वाले शिव होऊँ।

6.27.13

अनुव्रज्याकदर्थेन खगेन्द्रालमिति ब्रुवन् विष्टरादहमुत्थाय ततः खगवदाप्लुतः ॥ १३ ॥

anuvrajyākadarthena khagendrālamiti bruvan viṣṭarādahamutthāya tataḥ khagavadāplutaḥ || 13 ||

He walked behind me with respect. I said, Enough now, king of birds, and then I rose from my seat and sprang up into the air like a bird myself.

वह आदर के साथ मेरे पीछे-पीछे चला। मैंने कहा, बस कीजिए अब, हे पक्षियों के राजा, और फिर मैं अपने आसन से उठकर खुद भी पक्षी की तरह हवा में उड़ चला।

6.27.14

व्योम्नि योजनमात्रं तु मदनुव्रज्यया गतः करं करेणावष्टभ्य बलात्संरोधितः खगः ॥ १४ ॥

vyomni yojanamātraṃ tu madanuvrajyayā gataḥ karaṃ kareṇāvaṣṭabhya balātsaṃrodhitaḥ khagaḥ || 14 ||

In the sky, after following me for the distance of one yojana, I caught his hand with my hand and stopped the bird by force.

आकाश में मेरे पीछे एक योजन दूर तक जाने के बाद, मैंने अपने हाथ से उसका हाथ पकड़ लिया और उस पक्षी को जबरदस्ती रोक दिया।

6.27.15

मयि याते क्षणेनैव गगनाध्वन्यदृश्यताम् निवृत्तोऽसौ विहंगेन्द्रो दुस्त्यजा संगतिः सताम् ॥ १५ ॥

mayi yāte kṣaṇenaiva gaganādhvanyadṛśyatām nivṛtto'sau vihaṃgendro dustyajā saṃgatiḥ satām || 15 ||

When I had gone on through the sky and disappeared in a moment, that king of birds turned back. It is hard to give up the company of good people.

जब मैं आकाश में जाकर एक पल में ओझल हो गया, तब वह पक्षियों का राजा लौट गया। अच्छे लोगों का साथ छोड़ना कठिन होता है।

6.27.16

अन्योन्यमपि कस्मिंश्चित्तरङ्गक इवाम्बुधौ । व्योमन्यदृश्यतां यातो खगस्मृत्या मुनीनहम् ॥ १६ ॥

anyonyamapi kasmiṃścittaraṅgaka ivāmbudhau | vyomanyadṛśyatāṃ yāto khagasmṛtyā munīnaham || 16 ||

Like two waves in the ocean that meet each other for a moment, I disappeared into the sky and went on to the sages, still carrying the memory of that bird.

जैसे समुद्र में दो लहरें एक पल के लिए एक-दूसरे से मिलती हैं, वैसे ही मैं आकाश में ओझल होकर ऋषियों के पास चला गया, फिर भी उस पक्षी की याद लिए हुए।

6.27.17

सप्तर्षिमण्डलं प्राप्य जायया परिपूजितः । याते कृतयुगस्यादौ पुरा वर्षशतद्वये ॥ १७ ॥

saptarṣimaṇḍalaṃ prāpya jāyayā paripūjitaḥ | yāte kṛtayugasyādau purā varṣaśatadvaye || 17 ||

I reached the group of the seven sages, and there my wife honored me. This was long ago, when two hundred years had passed since the start of the Krita age.

मैं सप्तर्षियों की मंडली में पहुँचा, और वहाँ मेरी पत्नी ने मेरा सम्मान किया। यह बहुत पहले की बात है, जब कृतयुग शुरू होने के दो सौ साल बीत चुके थे।

6.27.18

संगतोऽहं भुशुण्डेन मेरोः शृङ्गद्रुमेऽभवम् । अद्य राम कृते क्षीणे त्रेता संप्रति वर्तते ॥ १८ ॥

saṃgato'haṃ bhuśuṇḍena meror śṛṅgadrumebhavam | adya rāma kṛte kṣīṇe tretā saṃprati vartate || 18 ||

I had met Bhushunda and was staying at the tree on the peak of Mount Meru. Now, Rama, the Krita age has ended, and the Treta age is going on at present.

मैं भुशुण्ड से मिलकर मेरु पर्वत की चोटी वाले पेड़ पर ठहरा हुआ था। अब, हे राम, कृतयुग समाप्त हो चुका है, और अभी त्रेतायुग चल रहा है।

6.27.19

मध्ये त्रेतायुगस्यास्य जातस्त्वं रिपुमर्दन । पुनरद्याष्टमे वर्षे तत्रैवोपरि भूभृतः । मिलितोऽभूद्भुशुण्डो मे तथेवाजररूपवान् ॥ १९ ॥

madhye tretāyugasyāsya jātastvaṃ ripumardana | punaradyāṣṭame varṣe tatraivopari bhūbhṛtaḥ | milito'bhūdbhuśuṇḍo me tathaivājararūpavān || 19 ||

You were born in the middle of this Treta age, you who crush your enemies. And now, again, in the eighth year, on that same mountain, Bhushunda met me once more, still in that same unaging form.

इसी त्रेतायुग के बीच में आपका जन्म हुआ, हे शत्रुओं को कुचलने वाले। और अब, फिर से, आठवें साल में, उसी पर्वत पर, भुशुण्ड मुझसे दोबारा मिले, वही बिना बुढ़ापे वाला रूप लिए हुए।

6.27.20

इति संकथितं चित्रं भुशुण्डोदन्तमुत्तमम् । श्रुत्वा विचार्य चैवान्तर्यद्युक्तं तत्समाचर ॥ २० ॥

iti saṃkathitaṃ citraṃ bhuśuṇḍodantamuttamam | śrutvā vicārya caivāntaryadyuktaṃ tatsamācara || 20 ||

This is the wonderful and excellent story of Bhushunda that I have told you. Now that you have heard it, think it over in your own mind, and do whatever is right.

यह भुशुण्ड की वह अद्भुत और उत्तम कहानी है जो मैंने आपको सुनाई। अब जब आपने इसे सुन लिया है, तो इसे अपने मन में सोचिए, और जो उचित हो वही कीजिए।

6.27.21

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इति सुमतिभुशुण्डसत्कथां यो विमलमतिः प्रविचारयिष्यतीह । भवभयबहुलाकुलास्थितां स प्रसभमसत्सरितं तरिष्यतीति ॥ २१ ॥

śrīvālmīkiruvāca | iti sumatibhuśuṇḍasatkathāṃ yo vimalamatiḥ pravicārayiṣyatīha |
bhavabhayabahulākulāsthitāṃ sa prasabhamasatsaritaṃ tariṣyatīti || 21 ||

Sri Valmiki said: Whoever has a clear mind and thinks carefully here about this true story of the wise Bhushunda will cross by force over that false river, a river full of the many troubles and fears of worldly life.

श्री वाल्मीकि ने कहा: जिस किसी का मन साफ हो और जो यहाँ बुद्धिमान भुशुण्ड की इस सच्ची कहानी पर ध्यान से सोचे, वह सांसारिक जीवन की अनेक परेशानियों और डर से भरी उस झूठी नदी को जबरदस्ती पार कर जाएगा।

Chapter 28

6.28.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवं भुशुण्डवृत्तान्तः कथितस्ते मयानघ । अनया प्रज्ञया तीर्णो भुशुण्डो मोहसंकटात् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃ bhuśuṇḍavṛttāntaḥ kathitas te mayānagha | anayā prajñayā tīrṇo bhuśuṇḍo mohasaṃkaṭāt || 1 ||

Sri Vasishtha said: I have told you the whole story of Bhushunda, blameless one. By this wisdom Bhushunda crossed beyond the danger of delusion.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे निष्पाप, मैंने तुम्हें भुशुण्ड की पूरी कथा सुना दी। इसी बुद्धि से भुशुण्ड मोह के संकट से पार हो गया।

6.28.2

एतां दृष्टिमवष्टभ्य स्वप्राणाभ्यासपूर्विकाम् । भुशुण्डवन्महाबाहो भव तीर्णमहार्णवः ॥ २ ॥

etāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya svaprāṇābhyāsapūrvikām | bhuśuṇḍavatmahābāho bhava tīrṇamahārṇavaḥ || 2 ||

Grasp this insight, gained through the practice of your own breath, mighty-armed one, and become one who has crossed the great ocean, like Bhushunda.

हे महाबाहु, अपने ही प्राण के अभ्यास से मिली इस दृष्टि को थाम लो, और भुशुण्ड की तरह इस महासागर को पार कर जाओ।

6.28.3

यथा ज्ञानेन योगेन संततााभ्यासजन्मना । भुशुण्डः प्राप्तवान्प्राप्यं तथासादय तत्पदम् ॥ ३ ॥

yathā jñānena yogena saṃtatābhyāsajanmanā | bhuśuṇḍaḥ prāptavānprāpyaṃ tathāsādaya tatpadam || 3 ||

Just as Bhushunda reached the goal he sought, through knowledge and yoga born of constant practice, so you too reach that same state.

जैसे भुशुण्ड ने निरंतर अभ्यास से उपजे ज्ञान और योग के द्वारा उस पाने-योग्य लक्ष्य को पाया, वैसे ही तुम भी उस पद को पाओ।

6.28.4

असक्तबुद्धयः सर्वे भुशुण्डवदवस्थितिम् । प्राप्नुवन्ति परे तत्त्वे प्राणापानावलोकिनः ॥ ४ ॥

asaktabuddhayaḥ sarve bhuśuṇḍavadavasthitim | prāpnuvanti pare tattve prāṇāpānāvalokinaḥ || 4 ||

All those whose minds are free of attachment, who watch their in-breath and out-breath, reach a state fixed in the highest reality, just like Bhushunda.

जिनकी बुद्धि किसी से जुड़ी नहीं, जो अपने प्राण और अपान यानी सांस के आने-जाने को देखते रहते हैं, वे सब भुशुण्ड की तरह उस परम तत्त्व में स्थिर हो जाते हैं।

6.28.5

एता विचित्रा भवता श्रुता विज्ञानदृष्टयः । इदानीं धियमालम्ब्य यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ५ ॥

etā vicitrā bhavatā śrutā vijñānadṛṣṭayaḥ | idānīṃ dhiyamālambya yathecchasi tathā kuru || 5 ||

You have now heard these many wondrous insights of true knowledge. Now hold fast to your own understanding, and do as you wish.

ये विचित्र और अनेक सच्चे ज्ञान की दृष्टियाँ तुमने सुन लीं। अब अपनी बुद्धि को थामकर जैसा चाहो वैसा करो।

6.28.6

श्रीराम उवाच । भगवन्भवता भूमिभास्वता ज्ञानरश्मिभिः । हार्दमुद्दामदौरात्म्यं प्रमृष्टमखिलं तमः ॥ ६ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavan bhavatā bhūmibhāsvatā jñānaraśmibhiḥ | hārdamuddāmadaurātmyaṃ pramṛṣṭamakhilaṃ tamaḥ || 6 ||

Sri Rama said: Lord, you shine on the earth with rays of knowledge, and you have wiped away all the darkness of my heart, the unchecked evil in it.

श्रीराम ने कहा: हे भगवन्, आप ज्ञान की किरणों से इस धरती पर सूर्य के समान चमकते हैं, और आपने मेरे हृदय के उस पूरे अंधकार को मिटा दिया है, जो बिना रोक-टोक की बुराई थी।

6.28.7

प्रबुद्धाः स्मः प्रहृष्टाः स्मः प्रविष्टाः स्मः स्वमास्पदम् । स्थिताः स्मो ज्ञातविज्ञेया भवन्तो ह्यपरा इव ॥ ७ ॥

prabuddhāḥ smaḥ prahṛṣṭāḥ smaḥ praviṣṭāḥ smaḥ svamāspadam | sthitāḥ smo jñātavijñeyā bhavanto hyaparā iva || 7 ||

We are awake, we are full of joy, we have entered our own true home. We stand here, knowing what is to be known, as if we have become other people.

हम जाग गए हैं, हम आनंदित हैं, हम अपने असली घर में प्रवेश कर चुके हैं। जो जानने योग्य था उसे जानकर हम मानो दूसरे ही मनुष्य बनकर खड़े हैं।

6.28.8

अहो भुशुण्डचरितं परं विस्मयकारकम् । भगवन्भवता प्रोक्तमुत्तमार्थावबोधनम् ॥ ८ ॥

aho bhuśuṇḍacaritaṃ paraṃ vismayakārakam | bhagavan bhavatā proktam uttamārthāvabodhanam || 8 ||

How wonderful is the story of Bhushunda, it fills us with wonder. Lord, you have told it so that we may understand the highest truth.

भुशुण्ड की यह कथा कितनी अद्भुत है, यह मन को चकित कर देती है। हे भगवन्, आपने इसे इसलिए कहा है ताकि हम परम सत्य को समझ सकें।

6.28.9

भुशुण्डचरिते ब्रह्मन्नेतस्मिन्कथिते त्वया । यच्छरीरगृहं प्रोक्तं मांसचर्मास्थिनिर्मितम् ॥ ९ ॥

bhuśuṇḍacarite brahmannetasmin kathite tvayā | yaccharīragṛhaṃ proktaṃ māṃsacarmāsthinirmitam || 9 ||

In this story of Bhushunda that you have told, Brahmin, you spoke of the body as a house built of flesh, skin, and bone.

हे ब्राह्मण, आपने भुशुण्ड की जो यह कथा कही, उसमें शरीर को मांस, चमड़ी और हड्डी से बना एक घर बताया।

6.28.10

तत्केन नाम रचितं कुतो वा तत्समुत्थितम् । कथं वा स्थितिमायातं को वा तत्रावतिष्ठते ॥ १० ॥

tatkena nāma racitaṃ kuto vā tatsamutthitam | kathaṃ vā sthitimāyātaṃ ko vā tatrāvatiṣṭhate || 10 ||

Who really made it? Where did it come from? How did it come to exist? And who lives inside it?

उसे सचमुच किसने बनाया? वह कहाँ से पैदा हुआ? वह कैसे बनकर खड़ा हुआ? और उसके भीतर कौन रहता है?

6.28.11

श्रीवसिष्ठ उवाच परमार्थावबोधाय दोषापाकरणाय च श्रृणु राघव तत्त्वेन वक्ष्यमाणमिदं मया ॥ ११ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca paramārthāvabodhāya doṣāpākaraṇāya ca śṛṇu rāghava tattvena vakṣyamāṇamidaṃ mayā || 11 ||

Sri Vasishtha said: To help you understand the highest truth, and to remove your faults, listen, Raghava, to what I am now about to tell you truly.

श्री वसिष्ठ ने कहा: परम सत्य को समझने के लिए, और दोषों को दूर करने के लिए, हे राघव, ध्यान से सुनो जो मैं अब सच्चाई के साथ तुमसे कहने जा रहा हूँ।

6.28.12

अस्थिस्थूणं नवद्वारं रक्तमांसावलेपनम् शरीरसदनं राम न केनचिदिदं कृतम् ॥ १२ ॥

asthisthūṇaṃ navadvāraṃ raktamāṃsāvalepanam śarīrasadanaṃ rāma na kenacididaṃ kṛtam || 12 ||

Rama, this house that is the body, its pillars are bones, it has nine doors, and it is plastered with blood and flesh, was not made by anyone.

हे राम, यह शरीर रूपी घर, जिसके खंभे हड्डियाँ हैं, जिसमें नौ दरवाज़े हैं, और जो खून और मांस से लीपा गया है, इसे किसी ने नहीं बनाया।

6.28.13

आभासमात्रमेवेदमित्थमेवावभासते द्विचन्द्रविभ्रमाकारं सदसच्च व्यवस्थितम् ॥ १३ ॥

ābhāsamātramevedamitthamevāvabhāsate dvicandravibhramākāraṃ sadasaccavyavasthitam || 13 ||

This is nothing but appearance; it shows itself only in this way, like the illusion of two moons, existing as both real and unreal.

यह केवल एक आभास है; यह बस इसी तरह दिखाई देता है, जैसे किसी को धोखे से दो चाँद दिख जाएँ, और यह सत्य व असत्य दोनों रूपों में बना रहता है।

6.28.14

द्विचन्द्रदर्शनविधौ चन्द्रद्वित्वं सदैव हि वस्तुतश्चैक एवेन्दुः स्थितो देहस्तथैव हि ॥ १४ ॥

dvicandradarśanavidhau candradvitvaṃ sadaiva hi vastutaścaika evenduḥ sthito dehastathaiva hi || 14 ||

When someone sees two moons, he always sees two, even though in fact there is only one moon. The body is exactly the same.

जब किसी को दो चाँद दिखते हैं, तो उसे हमेशा दो ही दिखते हैं, जबकि असल में चाँद एक ही होता है। शरीर भी ठीक वैसा ही है।

6.28.15

देहप्रत्ययकाले हि देहोऽयं समवस्थितः असन्नेव च सत्तस्मात्प्रोक्तः सदसदात्मकः ॥ १५ ॥

dehapratyayakāle hi deho'yaṃ samavasthitaḥ asanneva ca sattasmātproktaḥ sadāsadātmakaḥ || 15 ||

This body stands only as long as the notion body lasts. In that moment it is not unreal but real, and that is why it is called both real and unreal.

यह शरीर तभी तक टिका रहता है जब तक 'यह शरीर है' यह खयाल बना रहता है। उस पल में यह असत्य नहीं, सत्य होता है, इसीलिए इसे सत्य और असत्य दोनों कहा गया है।

6.28.16

स्वप्ने स्वप्नावबोधः संस्त्वन्यदा स मुधैव हि । बुद्बुदो बुद्बुदविधौ सत्यो मिथ्यैव चान्यदा ॥ १६ ॥

svapne svapnāvabodhaḥ saṃstvananyadā sa mudhaiva hi | budbudo budbudavidhau satyo mithyaiva cānyadā || 16 ||

In a dream, what one dream-knows is real inside the dream, but at another time it is simply not true. A bubble, while it is a bubble, is real, but at another time it is simply not true.

सपने में, सपने के भीतर जो जाना जाता है वह सपने के भीतर सच होता है, पर बाद में वह बस झूठ रह जाता है। बुलबुला भी, जब तक बुलबुला है तब तक सच है, पर बाद में वह बस झूठ रह जाता है।

6.28.17

देहो देहविधौ सत्यो ह्यसत्य इतरद्विधौ । प्रतिभासविधौ तावज्जलं सदसदन्यदा ॥ १७ ॥

deho dehavidhau satyo hyasatya itaradvidhau | pratibhāsavidhau tāvajjalaṃ sadadasadanyadā || 17 ||

The body is real as long as it is taken to be a body, but it is not real when looked at differently. In the same way, in a mirage, water seems real for a moment, but it is not real at another time.

शरीर तब तक सच है जब तक उसे शरीर मानकर देखा जाए, पर अलग तरह से देखने पर वह सच नहीं रहता। वैसे ही मरीचिका में पानी एक पल सच लगता है, पर दूसरे पल सच नहीं रहता।

6.28.18

प्रतिभासविधौ देहः सन्नसंश्चान्यदा स्मृतः । आभासमात्रमेवेदमित्थं संप्रति भासते ॥ १८ ॥

pratibhāsavidhau dehaḥ sannasaṃścānyadā smṛtaḥ | ābhāsamātramevedamitthaṃ saṃprati bhāsate || 18 ||

In the same way, the body is taken to be real in the moment it appears, and remembered as unreal at another time. All this is nothing but appearance, it merely appears this way, right now.

उसी तरह शरीर भी जिस पल दिखता है उस पल सच माना जाता है, और दूसरे पल याद आने पर असच लगता है। यह सब बस एक आभास है, यह अभी बस इसी तरह दिख रहा है।

6.28.19

अयं नामाहमित्यन्तर्गृहीतमननं स्थितम् । मांसास्थिमयनिर्माणदेहोऽहमिति विभ्रमम् ॥ १९ ॥

ayaṃ nāmāhamityantargṛhītamananaṃ sthitam | māṃsāsthimayanirmāṇadeho'hamiti vibhramam || 19 ||

The thought held within the mind, this is who I am, stays fixed there, the delusion I am a body made of flesh and bone.

मन के भीतर पकड़ा हुआ यह विचार टिका रहता है कि यही मैं हूँ, यह भ्रम कि मैं मांस और हड्डी से बना शरीर हूँ।

6.28.20

त्यज संकल्पनिर्माणदेहाः सन्ति सहस्रशः । सुखतल्पगतो येन स्वप्नदेहेन दिक्तटान् ॥ २० ॥

tyaja saṃkalpanirmāṇadehāḥ santi sahasraśaḥ | sukhatalpagato yena svapnadehena diktataṭān || 20 ||

Give up this delusion. Bodies built by nothing but thought and imagination exist by the thousands, like the dream-body of a man lying happily on his bed, that wanders off to the far edges of the world's directions.

इस भ्रम को छोड़ दो। मात्र कल्पना से बने शरीर हज़ारों की संख्या में होते हैं, जैसे कोई अपने बिस्तर पर आराम से लेटा हो, और उसका सपने वाला शरीर दिशाओं के छोर तक भटक जाए।

6.28.21

परिभ्रमसि हे राम स देहस्ते क्व संस्थितः । जागरायां मनोराज्ये येन स्वर्गपुरान्तरम् ॥ २१ ॥

paribhramasi he rāma sa dehaste kva saṃsthitaḥ | jāgarāyāṃ manorājye yena svargapurāntaram || 21 ||

You wander there, Rama, so where is that body of yours now? Even while awake, in the kingdom your own mind imagines, you go deep into the city of heaven.

तुम वहाँ भटकते हो, राम, तो अब तुम्हारा वह शरीर कहाँ है? जागते हुए भी, अपने मन की कल्पना के राज्य में, तुम स्वर्ग की नगरी के भीतर तक चले जाते हो।

6.28.22

परिभ्रमसि मेरुं वा स देहस्ते क्व संस्थितः । स्वप्नेष्वपि च यः स्वप्नस्तत्र येन महीतटान् ॥ २२ ॥

paribhramasi meruṃ vā sa dehaste kva saṃsthitaḥ | svapneṣvapi ca yaḥ svapnastatra yena mahītaṭān || 22 ||

Or you wander to Mount Meru, so where is that body of yours now? Even inside a dream, in a dream within that dream, you go to the shores of the earth.

या तुम मेरु पर्वत तक भटक आते हो, तो अब तुम्हारा वह शरीर कहाँ है? सपने के भीतर भी, उस सपने के भीतर एक और सपने में, तुम पृथ्वी के छोर तक चले जाते हो।

6.28.23

परिभ्रमसि हे राम स देहस्ते क्व संस्थितः । मनोराज्यं मनोराज्ये महद्विभवभूमिषु ॥ २३ ॥

paribhramasi he rāma sa dehaste kva saṃsthitaḥ | manorājyaṃ manorājye mahadvibhavabhūmiṣu || 23 ||

You wander there, Rama, so where is that body of yours now? Kingdom of the mind within kingdom of the mind, you go into lands of great wealth and splendor.

तुम वहाँ भटकते हो, राम, तो अब तुम्हारा वह शरीर कहाँ है? मन की कल्पना के राज्य में एक और कल्पना का राज्य, और उसमें बड़े वैभव और धन के प्रदेश, वहाँ तक तुम चले जाते हो।

6.28.24

परिभ्रमसि येनेह स देहस्ते क्व संस्थितः । गतैर्देहैर्मनोराज्ये या विचित्रा जगत्क्रियाः ॥ २४ ॥

paribhramasi yeneha sa dehaste kva saṃsthitaḥ | gatairdhehairmanorājye yā vicitrā jagatkriyāḥ || 24 ||

By all this you wander here, so where is that body of yours now? With bodies now gone, in the kingdom your mind imagines, come the many wondrous doings of the world.

इन सबसे तुम यहाँ भटकते रहते हो, तो अब तुम्हारा वह शरीर कहाँ है? जो शरीर बीत चुके, उनके सहारे, मन की कल्पना के राज्य में संसार के अनेक विचित्र काम होते हैं।

6.28.25

प्रकरोषि महाबाहो ते देहास्ते क्व संस्थिताः । विलासिन्यानुरागिण्या येन संकल्पकान्तया ॥ २५ ॥

prakaroṣi mahābāho te dehāste kva saṃsthitāḥ | vilāsinyānurāgiṇyā yena saṃkalpakāntayā || 25 ||

Mighty-armed Rama, you act with a loving, playful woman who is nothing but the beloved of your own imagination — so where do those bodies of yours stand?

हे महाबाहु राम, तुम एक चंचल और प्रेम करने वाली स्त्री के साथ काम करते हो, जो केवल तुम्हारी कल्पना की प्रिया है — तो तुम्हारे वे शरीर कहाँ स्थित हैं?

6.28.26

निर्वृतिं यासि देहेन स देहस्ते क्व संस्थितः । एते राम यथा देहा मनसः सदसन्मयाः ॥ २६ ॥

nirvṛtiṃ yāsi dehena sa dehastē kvā saṃsthitaḥ | ētē rāma yathā dēhā manasaḥ sadasantamayāḥ || 26 ||

By that body you reach your delight — where does that body of yours stand? These bodies, Rama, are of the mind, made of both the real and the unreal.

उस शरीर से तुम आनंद पाते हो — वह शरीर तुम्हारा कहाँ स्थित है? हे राम, ये सब शरीर मन के हैं, जो असली और नकली दोनों से बने हैं।

6.28.27

तथैव तादृशाचारो देहोऽयं मनसः स्मृतः । इदं धनमयं देहो देशोऽयमिति विभ्रमः ॥ २७ ॥

tathaiva tādṛśācāro dēho'yaṃ manasaḥ smṛtaḥ | idaṃ dhanamayaṃ dēho dēśo'yamiti vibhramaḥ || 27 ||

In the same way, this body that acts so is known to be only of the mind. Thinking, 'this body is made of wealth,' or 'this is a place,' is nothing but confusion.

उसी तरह, ऐसा आचरण करने वाला यह शरीर भी केवल मन का जाना जाता है। यह सोचना कि 'यह शरीर धन से बना है' या 'यह एक जगह है', केवल भ्रम है।

6.28.28

तत्सर्वं चित्तवीर्यस्य संकल्पस्य विजृम्भितम् । दीर्घस्वप्नमिमं विद्धि दीर्घं वा चित्तविभ्रमम् ॥ २८ ॥

tatsarvaṃ cittavīryasya saṃkalpasya vijṛmbhitam | dīrghasvapnamimaṃ viddhi dīrghaṃ vā cittavibhramam || 28 ||

All that is the unfolding of the mind's power of will. Know it to be a long dream, or a long delusion of the mind.

यह सब मन की शक्ति से उठी कल्पना का फैलाव है। इसे एक लंबा सपना समझो, या मन का एक लंबा भ्रम।

6.28.29

दीर्घं वापि मनोराज्यं संसारं रघुनन्दन । प्रबोधमेष्यसि यदा परमात्मेच्छया स्वया ॥ २९ ॥

dīrghaṃ vāpi manorājyaṃ saṃsāraṃ raghunandana | prabodhameṣyasi yadā paramātmecchayā svayā || 29 ||

This long mental kingdom, Rama, is the cycle of the world itself. You will wake up from it when you yourself, as the highest self, wish to.

हे राम, मन की यह लंबी दुनिया ही संसार का चक्र है। तुम इससे तभी जागोगे जब तुम स्वयं, परम आत्मा के रूप में, ऐसा चाहोगे।

6.28.30

द्रक्ष्यसि त्वं तदा सम्यगिदमर्कोदये यथा । स्वप्नसंकल्पजालेन यथान्यैव जगत्स्थितिः ॥ ३० ॥

drakṣyasi tvaṃ tadā samyagidamarkodaye yathā | svapnasankalpajālena yathānyaiva jagatsthitiḥ || 30 ||

Then you will see all this clearly, as things become clear at sunrise. You will see that the world, woven from the net of dream and imagination, is something altogether different.

तब तुम यह सब स्पष्ट रूप से देखोगे, जैसे सूर्योदय पर सब कुछ साफ़ दिखने लगता है। तुम देखोगे कि यह संसार, जो सपने और कल्पना के जाल से बना है, वास्तव में कुछ और ही है।

6.28.31

तथैवेयं हि संकल्पकलना काचिदेव हि। यथा पूर्वं मयोत्पत्तिः प्रोक्ता कमलजन्मनः ॥ ३१ ॥

tathaiveyaṃ hi saṃkalpakalanā kācideva hi | yathā pūrvaṃ mayotpattiḥ proktā kamalajanmanaḥ || 31 ||

In just this way, this world too is nothing but a working of imagination, as I told you earlier about the birth of the lotus-born Brahma.

इसी तरह, यह संसार भी कल्पना की एक रचना मात्र है, जैसा मैंने पहले तुम्हें कमल से जन्मे ब्रह्मा की उत्पत्ति के बारे में बताया था।

6.28.32

मनसः स्वयमेवान्तःसंकल्पकलनोद्भवा। विचित्ररचनोपेतं मनस्तत्रात्तविभ्रमम् ॥ ३२ ॥

manasaḥ svayamevāntaḥsaṃkalpakalanodbhavā | vicitraracanopetaṃ manastatrāttavibhramam || 32 ||

This rises up by itself, from within the mind, as the mind's own act of imagining. The mind, filled with these strange creations, falls into confusion over them.

यह सब मन के भीतर से, मन की अपनी कल्पना के रूप में, अपने आप उठता है। मन, इन विचित्र रचनाओं से भरा हुआ, इन्हीं में उलझ जाता है।

6.28.33

संकल्पकलनामात्रं तथेदमवभासनम्। यथा कल्पित आभासो मनसोऽब्जजतां गतः ॥ ३३ ॥

saṃkalpakalanāmātraṃ tathedamavabhāsanam | yathā kalpita ābhāso manaso'bjajatāṃ gataḥ || 33 ||

In the same way, this whole appearance is nothing but a mere act of imagining — like the imagined image in the mind that took on the form of the lotus-born Brahma.

उसी तरह, यह सारा प्रकट रूप भी कल्पना की एक रचना मात्र है — जैसे मन की कल्पित छवि ने कमल से जन्मे ब्रह्मा का रूप ले लिया था।

6.28.34

देहाद्विचिन्तितो देहः स्थितोऽन्यस्तद्वदेव हि। प्राक्प्रवाहचिराभ्यस्तो वासनातिशयेन यः ॥ ३४ ॥

dehādvicintito dehaḥ sthito'nyastadvadeva hi | prākpravāhacirābhyasto vāsanātiśayena yaḥ || 34 ||

In the same way, out of one body, another body that is merely imagined comes to stand there as if it were real — a body long formed, carried down from the past, by the sheer weight of old impressions.

उसी तरह, एक शरीर से दूसरा शरीर, जो केवल कल्पना में है, वहाँ असली जैसा खड़ा हो जाता है — एक ऐसा शरीर जो अतीत की धारा से, पुराने संस्कारों के भारी प्रभाव से, लंबे समय से बना हुआ है।

6.28.35

तथैव दृश्यते देहस्तथाऽऽकृत्युदयेन सः। पौरुषेण प्रयत्नेन संकल्पो ह्ययमेव चित् ॥ ३५ ॥

tathaiva dṛśyate dehastathā'kṛtyudayena saḥ | pauruṣeṇa prayatnena saṃkalpo hyayameva cit || 35 ||

In just this way that body is seen, through the rising of its form by one's own effort — and this act of will is, in truth, nothing but consciousness itself.

उसी तरह वह शरीर दिखाई देता है, अपने ही प्रयास से उसका रूप उभरने पर — और यह कल्पना वास्तव में चेतना ही है।

6.28.36

अन्यथा भाव्यते राम भूयते तदिहान्यथा । अयं सोऽयं ममायं च संसार इति भाविते ॥ ३६ ॥

anyathā bhāvyate rāma bhūyate tadihānyathā | ayaṃ so'yaṃ mamāyaṃ ca saṃsāra iti bhāvite || 36 ||

Rama, when something is imagined in one way, it then becomes that very way here — when one thinks, 'this is that,' 'this is mine,' and 'this is the world.'

हे राम, जिस रूप में किसी चीज़ की कल्पना की जाती है, वह यहाँ वैसी ही बन जाती है — जब कोई सोचता है, 'यह वह है', 'यह मेरा है', और 'यह संसार है'।

6.28.37

सत्यो यो भाव्यते राम भावनादार्ढ्यसंभवः । भावितं तीव्रवेगेन यदेवाशु तदेव हि ॥ ३७ ॥

satyo yo bhāvyate rāma bhāvanādārḍhyasaṃbhavaḥ | bhāvitaṃ tīvravegena yadevāśu tadeva hi || 37 ||

Rama, what is imagined as real becomes real through the firmness of that imagining. What is imagined with great intensity becomes so at once.

हे राम, जिसकी कल्पना सच के रूप में दृढ़ता से की जाती है, वह सच बन जाती है। जिसकी कल्पना बड़ी तीव्रता से की जाती है, वह तुरंत वैसी ही हो जाती है।

6.28.38

सर्वत्र दृश्यते राम कान्तेवात्यन्तवल्लभा । अहर्व्यावृत्तिरभ्यस्ता यथा स्वप्नेषु दृश्यते ॥ ३८ ॥

sarvatra dṛśyate rāma kāntevātyantavallabhā | aharvyāvṛttirabhyastā yathā svapneṣu dṛśyate || 38 ||

This imagining is seen everywhere, Rama, the way an utterly beloved woman is seen everywhere. The passing of day after day, once it becomes a habit, is seen just as it is seen in dreams.

हे राम, यह कल्पना हर जगह वैसे ही दिखाई देती है जैसे एक अत्यंत प्रिय स्त्री हर जगह दिखाई देती है। दिन के बाद दिन बीतना, जब यह आदत बन जाता है, वैसे ही दिखता है जैसे सपनों में दिखाई देता है।

6.28.39

तथायं भावनाभ्यस्तः संसारोऽप्यवलोक्यते । यथा स्वप्नावनौ क्षिप्रमहर्यदवभासते ॥ ३९ ॥

tathāyaṃ bhāvanābhyastaḥ saṃsāro'pyavalokyate | yathā svapnāvanau kṣipramaharyadavabhāsate || 39 ||

In the same way, this world too, shaped by such constant imagining, comes to be seen as real — just as, within a dream, a whole day can quickly appear to pass.

उसी तरह, यह संसार भी, इस निरंतर कल्पना से बना हुआ, असली जैसा दिखने लगता है — जैसे सपने में एक पूरा दिन जल्दी ही बीता हुआ लगता है।

6.28.40

तथेदमल्पकालस्थमपि संलक्ष्यते स्थिरम् । व्योमन्येव यथा तापतप्ते संदृश्यते सरित् ॥ ४० ॥

tathedamalpakālasthamapi saṃlakṣyate sthiram | vyomanyeva yathā tāpatapte saṃdṛśyate sarit || 40 ||

In the same way, this world, though it lasts only a short time, seems to be lasting — just as a river seems to appear in the sky, shimmering with heat.

उसी तरह, यह संसार, भले ही थोड़े समय के लिए हो, स्थायी जैसा प्रतीत होता है — जैसे गर्मी से तपते आकाश में एक नदी दिखाई देती है।

6.28.41

धराप्यविद्यमानापि संकल्पाद्दृश्यते तथा । दृश्यते दृष्टिवैरूप्याद्यथा व्योमनि पिच्छिका ॥ ४१ ॥

dharāpyavidyamānāpi saṃkalpāddṛśyate tathā | dṛśyate dṛṣṭivairūpyādyathā vyomani picchikā || 41 ||

The earth too, though it does not truly exist, is seen in just this way, through imagination — seen only because of a fault in one's sight, the way a speck like a feather is seen in an empty sky.

उसी तरह, यह पृथ्वी भी, वास्तव में न होते हुए भी, कल्पना के कारण दिखाई देती है — जैसे आँख के दोष से आकाश में पंख जैसा एक धब्बा दिखाई देता है।

6.28.42

तथैवेयं जगल्लक्ष्मीर्दुर्ज्ञानादवभासते । दृश्यते समया दृष्ट्या न यथा व्योम्नि पिच्छिका ॥ ४२ ॥

tathaiveyaṃ jagallakṣmīrdurjñānādavabhāsate | dṛśyate samayā dṛṣṭyā na yathā vyomni picchikā || 42 ||

In just this way, this glory of the world appears only because of faulty understanding. Seen with true sight, it is not there at all — just as that feather-like speck is not there in the sky for one who sees correctly.

उसी तरह, संसार की यह चमक-दमक केवल गलत समझ के कारण दिखाई देती है। सही दृष्टि से देखने पर यह वहाँ है ही नहीं — जैसे सही देखने वाले को आकाश में वह पंख जैसा धब्बा दिखाई नहीं देता।

6.28.43

सम्यग्दृष्ट्या जगल्लक्ष्मीस्तथेयं नावभासते । भीरुरभ्येति न यथा स्वसंकल्पेषु संभ्रमम् ॥ ४३ ॥

samyagdṛṣṭyā jagallakṣmīstathaeyaṃ nāvabhāsate | bhīrurabhyeti na yathā svasaṃkalpeṣu saṃbhramam || 43 ||

With true sight, this glory of the world likewise does not appear — just as a fearful person does not fall into panic over his own imaginings.

सही दृष्टि से देखने पर, संसार की यह चमक-दमक भी वैसे ही प्रकट नहीं होती — जैसे एक डरपोक व्यक्ति भी अपनी ही कल्पनाओं से घबराता नहीं है।

6.28.44

स्वसंकल्पे हि संसारे न तथैति भयं सुधीः । स्व एव हि स्वभावोऽयमित्थं संप्रति भासते ॥ ४४ ॥

svasaṃkalpe hi saṃsāre na tathaeti bhayaṃ sudhīḥ | sva eva hi svabhāvo'yamitthaṃ saṃprati bhāsate || 44 ||

In this world, which is only one's own imagining, a wise person does not fall into fear. This is simply one's own nature — that is how it now appears.

इस संसार में, जो केवल अपनी ही कल्पना है, बुद्धिमान व्यक्ति डरता नहीं है। यह वास्तव में अपना ही स्वभाव है — अभी यह ऐसा ही दिखाई देता है।

6.28.45

संसारसरणिस्थित्यां कस्मात्कोऽत्र विभेति किम् । स एव किंचित्संशोध्यः शुद्ध्या विमलतां गते ॥ ४५ ॥

saṃsārasaraṇisthityāṃ kasmātko'tra vibheti kiṃ | sa eva kiṃcitsaṃśodhyaḥ śuddhyā vimalatāṃ gate || 45 ||

In the ongoing course of the world, who here is afraid, of what, and why? That same self only needs to be purified a little, until through that purity it becomes stainless.

संसार के इस चलते हुए क्रम में, यहाँ कौन किससे और क्यों डरता है? उसी को थोड़ा शुद्ध करना है, जब तक शुद्धि से वह निर्मल न हो जाए।

6.28.46

तस्मिन्न दृश्यते राम मोहोऽयं जगतः स्थितः । सम्यगालोकमात्रेण स्वभावः शुद्धिमृच्छति ॥ ४६ ॥

tasminn dṛśyate rāma moho'yaṃ jagataḥ sthitaḥ | samyagālokamātreṇa svabhāvaḥ śuddhimṛcchati || 46 ||

In that state, Rama, this delusion of the world, though it stands there, is no longer seen. Through right seeing alone, one's own nature becomes pure.

उस अवस्था में, हे राम, संसार का यह मोह, भले ही वह बना रहे, दिखाई नहीं देता। केवल सही देखने भर से अपना स्वभाव शुद्ध हो जाता है।

6.28.47

न गृह्णाति मलं भूयस्ताम्रतामिव काञ्चनम् । आभासमात्रमेवेदं न सन्नासज्जगत्त्रयम् ॥ ४७ ॥

na gṛhṇāti malaṃ bhūyastāmratāmiva kāñcanam | ābhāsamātramevedaṃ na sannāsajjagattrayam || 47 ||

It does not become impure again, just as gold, once purified, does not turn back into copper. This world of three realms is nothing but a mere appearance — neither real nor unreal.

वह फिर से अशुद्ध नहीं होता, जैसे शुद्ध किया हुआ सोना फिर तांबा नहीं बनता। यह तीनों लोकों वाला संसार केवल एक आभास मात्र है — न तो असली है, न नकली।

6.28.48

इत्यन्यकलनात्यागः सम्यगालोकनं विदुः । मरणं जीवितं स्वर्गो ज्ञानमज्ञानमेव च ॥ ४८ ॥

ityanyakalanātyāgaḥ samyagālokanaṃ viduḥ | maraṇaṃ jīvitaṃ svargo jñānamajñānameva ca || 48 ||

The wise call it right seeing when, in this way, one gives up the very notion of 'an other.' So too are death, life, heaven, knowledge, and ignorance.

इस तरह 'दूसरे' की धारणा को छोड़ देना ही बुद्धिमान लोग सही देखना कहते हैं। मृत्यु, जीवन, स्वर्ग, ज्ञान और अज्ञान भी वैसे ही हैं।

6.28.49

चिदाभासादृते नास्तीत्येकता सम्यगीक्षणम् । त्वमहंतादिसंसार इति मे न दिशो दश ॥ ४९ ॥

cidābhāsādṛte nāstītyekatā samyagīkṣaṇam | tvamahantādisaṃsāra iti me na diśo daśa || 49 ||

Nothing exists except this appearance of consciousness; to see this as a single thing is true seeing. For me there are no ten directions at all, no you, no I, nothing else, no world.

चेतना की इस झलक के अलावा कुछ भी नहीं है; इसे एक ही मानकर देखना सही देखना है। मेरे लिए दसों दिशाएँ हैं ही नहीं, न कोई तू, न कोई मैं, न कुछ और, न कोई संसार।

6.28.50

सर्वं स्वाभासमेवेति सम्यगालोकनं विदुः । सदसन्मयसंसारे यथा भूतार्थदर्शनात् ॥ ५० ॥

sarvaṃ svābhāsam eveti samyagālokanaṃ viduḥ | sadāsanmayasaṃsāre yathā bhūtārthadarśanāt || 50 ||

They call it true seeing when someone knows that everything is only its own appearance. This comes from seeing things exactly as they really are, in this world made of both being and non-being.

सही देखना उसे कहते हैं जब कोई जान ले कि हर चीज़ सिर्फ़ अपनी ही झलक है। यह तभी होता है जब इंसान चीज़ों को ठीक वैसा ही देखे जैसी वे सच में हैं, इस संसार में जो होने और न होने से मिलकर बना है।

6.28.51

नास्तमेति न चोदेति सम्यगालोकनान्मनः। निर्णीय सर्वभावानामसत्त्वं सत्त्वमेव च ॥ ५१ ॥

nāstameti na codeti samyagālokanānmanaḥ| nirṇīya sarvabhāvānāmasattvaṃ sattvameva ca || 51 ||

Through true seeing, the mind neither sets nor rises, once it has settled that all things both exist and do not exist.

सही देखने से मन न डूबता है, न उगता है, जब वह यह तय कर लेता है कि सब चीज़ें एक साथ हैं भी और नहीं भी हैं।

6.28.52

निष्कामं शान्तिमभ्येति सम्यगालोकनान्मनः। न निन्दति न च स्तौति न हृष्यति न शोचति ॥ ५२ ॥

niṣkāmaṃ śāntimabhyeti samyagālokanānmanaḥ| na nindati na ca stauti na hṛṣyati na śocati || 52 ||

Through true seeing the mind reaches a peace free of desire. It does not blame, it does not praise, it does not rejoice, and it does not grieve.

सही देखने से मन एक ऐसी शांति पाता है जिसमें कोई इच्छा नहीं रहती। वह न किसी को दोष देता है, न तारीफ़ करता है, न खुश होता है, न दुखी होता है।

6.28.53

शीतलां सत्यतामेति सम्यगालोकनान्मनः। अवश्यमेव मर्तव्यं सर्वैरेव हि बन्धुभिः ॥ ५३ ॥

śītalāṃ satyatāmeti samyagālokanānmanaḥ| avaśyameva martavyaṃ sarvaireva hi bandhubhiḥ || 53 ||

Through true seeing, the mind reaches a cool, steady truth. All relatives, every single one, must certainly die.

सही देखने से मन एक ठंडी और पक्की सच्चाई तक पहुँचता है, यह कि सारे रिश्तेदार, बिना किसी अपवाद के, ज़रूर मरेंगे।

6.28.54

इति बन्धुवियोगेषु किं वृथा परितप्यसे। अवश्यमेव च मया मर्तव्यमिति निश्चयः ॥ ५४ ॥

iti bandhuvivyogeṣu kiṃ vṛthā paritapyase| avaśyameva ca mayā martavyamiti niścayaḥ || 54 ||

So why do you torment yourself uselessly over separation from your relatives? It is certain that I too must die.

तो फिर तू अपने रिश्तेदारों से बिछड़ने पर बेकार में खुद को क्यों तड़पाता है? यह तो तय है कि मुझे भी ज़रूर मरना है।

6.28.55

इत्यात्ममरणप्राप्तौ किं मुधा परितप्यसे। अवश्यमेव जातेन किंचित्सुविभवादिकम् ॥ ५५ ॥

ityātmamarṇaprāptau kiṃ mudhā paritapyase| avaśyameva jātena kiṃcitsuvibhavādikam || 55 ||

So why do you torment yourself uselessly when your own death is certain to come? For anyone who is born, some amount of prosperity and the rest is bound to happen.

तो फिर अपनी मौत तय होते हुए भी तू खुद को बेकार में क्यों तड़पाता है? जो भी पैदा हुआ है, उसे कुछ न कुछ धन-दौलत वगैरह ज़रूर मिलता है।

6.28.56

प्राप्तव्यं पुरुषेणेति हर्षस्यावसरो हि कःसर्वस्यैव हि संसारे नरस्य व्यवहारिणः ॥ ५६ ॥

prāptavyaṃ puruṣeṇeti harṣasyāvasaro hi kaḥsarvasyaiva hi saṃsāre narasya vyavahāriṇaḥ || 56 ||

Since a person is bound to get these things anyway, what real occasion is there for joy? This is true for absolutely everyone who deals with the affairs of this world.

जब इंसान को ये चीज़ें वैसे भी मिलनी ही हैं, तो खुश होने का असली मौका है ही कहाँ? यह बात हर उस इंसान पर लागू होती है जो इस संसार के काम-काज में लगा है।

6.28.57

अर्थायाता भवत्यापच्छोकस्यावसरो हि कःबृहत्युदेति स्फुरति बुद्बुदौघ इवार्णवे ॥ ५७ ॥

arthāyātā bhavatyāpacchokasyāvasaro hi kaḥbṛṃhatyudeti sphurati budbudaugha ivārṇave || 57 ||

Trouble comes for the sake of wealth, so what real occasion is there for grief? It swells up, rises and glitters, like a mass of bubbles on the ocean.

धन के चक्कर में मुसीबत आती है, तो दुखी होने का असली मौका है ही कहाँ? वह उठती है, उभरती है, चमकती है, जैसे समंदर में बुलबुलों का झुंड।

6.28.58

इदं हि जगतां जालं किमत्र परिदेवनासत्सदेव सदैवैतदसदेवासदेव हि ॥ ५८ ॥

idaṃ hi jagatāṃ jālaṃ kimatra paridevanāsatsadeva sadaivaitadasadevāsadeva hi || 58 ||

This is simply the net of the worlds, so what is there here to grieve over? What is real is always simply real, and what is unreal is always simply unreal.

यह तो बस दुनियाओं का जाल है, यहाँ रोने-धोने की क्या बात है? जो सच है वह हमेशा सिर्फ़ सच ही है, और जो झूठ है वह हमेशा सिर्फ़ झूठ ही है।

6.28.59

क्रियावैचित्र्यमात्रे तु किमन्यत्परिदेव्यतेनाहमस्मि न चाभूवं भविष्यामि न सोऽधुना ॥ ५९ ॥

kriyāvaicitryamātre tu kimanyatparidevyatenāhamasmi na cābhūvaṃ bhaviṣyāmi na so'dhunā || 59 ||

This is all just the many different things that happen, so what else is there to grieve over? I am not what I was, I was not what I am now, I will not be what I am now, and I am not now what I will be.

यह सब तो बस अलग-अलग तरह से होने वाले काम हैं, और क्या रोना है? मैं वह नहीं हूँ जो मैं पहले था, मैं वह नहीं था जो अब हूँ, मैं वह नहीं रहूँगा जो अभी हूँ, और अभी वह नहीं हूँ जो आगे रहूँगा।

6.28.60

देहोऽयं चित्रदोषोत्थः किमन्यत्परिदेव्यतेदेहाच्चेदन्य एवाहं चिदाभासस्तदङ्ग हे ॥ ६० ॥

deho'yaṃ citradoṣotthaḥ kimanyatparidevyatedehāccedanya evāhaṃ cidābhāsastadaṅga he || 60 ||

This body has arisen from some strange defect, so what else is there to grieve over? And if I am indeed different from the body, being only the appearance of consciousness, that is how it is, friend.

यह शरीर किसी अजीब दोष से पैदा हुआ है, और किस बात का रोना? और अगर मैं सच में शरीर से अलग हूँ, सिर्फ़ चेतना की एक झलक हूँ, तो बस यही बात है, दोस्त।

6.28.61

कौ तौ मे सदसद्भावौ यन्निष्ठं परितप्यते । इति निश्चयवत्स्वान्तं सम्यग्ज्ञानात्मनो मुनेः ॥ ६१ ॥

kau tau me sadasadbhāvau yanniṣṭhaṃ paritapyate | iti niścayavatsvāntaṃ samyagjñānātmano muneḥ || 61 ||

What are these two things, my existing and my not existing, that anyone should grieve resting on them? Such is the firm, settled mind of the sage whose very nature is true knowledge.

ये दो बातें क्या हैं, मेरा होना और मेरा न होना, जिन पर टिककर कोई दुखी हो? ऐसा ही पक्का और शांत मन होता है उस मुनि का जिसकी असली प्रकृति सच्चा ज्ञान है।

6.28.62

नास्तमेति न चोदेति न शान्तं परितप्यते । परतामेव नाशान्तामनुत्तमपदे स्थितः ॥ ६२ ॥

nāstameti na codeti na śāntaṃ paritapyate | paratāmeva nāśāntāmanuttamapade sthitaḥ || 62 ||

That mind neither rises nor sets, and being at peace, it does not suffer. Standing in the highest state, it never turns into a restless, troubled state.

वह मन न उगता है, न डूबता है, और शांत रहते हुए दुखी भी नहीं होता। सबसे ऊँची अवस्था में टिका हुआ, वह कभी किसी बेचैन, अशांत हालत में नहीं बदलता।

6.28.63

आदत्ते तित्तिरी मृद्वीं तृणकोटिमिवामलाम् । एतदर्थमसत्येऽस्मिन्नास्था कार्या मनागपि ॥ ६३ ॥

ādatte tittirī mṛdvīṃ tṛṇakoṭimivāmalām | etadarthamasatye'sminnāsthā kāryā manāgapi || 63 ||

A tittiri bird holds up a soft, clean blade of grass. For that reason, one should not place even the slightest concern in this unreal world.

एक तीतरी चिड़िया घास की एक नरम, साफ़ पत्ती को थामे रहती है। इसी वजह से, इस झूठे संसार में ज़रा भी परवाह नहीं करनी चाहिए।

6.28.64

सुरज्ज्वेव बलीवर्दो बध्यते जन्तुरास्थया । अतस्त्वया दृढमिदमिति निर्णीय बुद्धितः ॥ ६४ ॥

surajjveva balīvardo badhyate janturāsthayā | atastvayā dṛḍhamidamiti nirṇīya buddhitḥ || 64 ||

As an ox is bound by a strong rope, a creature is bound by its own concern. So you must firmly settle this in your mind.

जैसे बैल मज़बूत रस्सी से बंधा रहता है, वैसे ही जीव अपनी परवाह से बंधा रहता है। इसलिए तुझे यह बात अपने मन में पक्की तरह तय कर लेनी चाहिए।

6.28.65

आस्थारहितया बुद्ध्या विहर्तव्यमिहानघ । कर्तव्यमेव कर्तव्यमकर्तव्यमुपेक्ष्यते ॥ ६५ ॥

āsthārahitatayā buddhyā vihartavyamihānagha | kartavyameva kartavyamakartavyamupekṣyate || 65 ||

You should live in this world with a mind free of concern, sinless one. What must be done should indeed be done; what must not be done should be disregarded.

हे निष्पाप, तुझे इस संसार में बिना किसी परवाह के जीना चाहिए। जो करने लायक है वह ज़रूर करना चाहिए; जो करने लायक नहीं है उसकी अनदेखी करनी चाहिए।

6.28.66

आस्थानास्थे परित्यज्य लीलयैव महाधिया । आभासमात्रमेवेदं यस्य च प्रतिभासते ॥ ६६ ॥

āsthānāsthe parityajya līlayaiva mahādhiyā | ābhāsamātramevedaṃ yasya ca pratibhāsate || 66 ||

Having given up both concern and lack of concern, acting only in play, with a great mind, for the person to whom this world appears as mere appearance.

परवाह और बेपरवाही दोनों को छोड़कर, सिर्फ़ खेल भर में, एक बड़ी बुद्धि के साथ, उस इंसान के लिए जिसे यह संसार सिर्फ़ एक झलक जैसा लगता है।

6.28.67

सोऽन्तः शीतलतामेति दिनान्ते भुवनं यथा । प्रतिभासं परित्यज्य पदार्थपटलव्रजे ॥ ६७ ॥

so'ntaḥ śītalatāmeti dinānte bhuvanaṃ yathā | pratibhāsaṃ parityajya padārthapaṭalavraje || 67 ||

That person becomes cool and calm within, just as the world grows cool at the end of the day, once he has given up the sense of appearance amid this whole array of objects.

वह इंसान अंदर से ठंडा और शांत हो जाता है, जैसे दिन ढलते वक़्त पूरी दुनिया ठंडी हो जाती है, जब वह चीज़ों के इस पूरे जमघट में झलक के एहसास को छोड़ देता है।

6.28.68

आभासमात्रसामान्यमिदमालोकयानघ । आभासमात्रकं राम चित्तामर्शकलङ्कितम् ॥ ६८ ॥

ābhāsamātrasāmānyamidamālokayānagha | ābhāsamātrakaṃ rāma cittāmarśakalaṅkitam || 68 ||

See this, sinless one, as nothing but a common appearance. It is only appearance, Rama, stained by the touch of the mind.

हे निष्पाप, इसे बस एक आम सी झलक मानकर देख। यह सिर्फ़ एक झलक है, राम, जो मन के छूने से मैली हो गई है।

6.28.69

ततस्तदपि संत्यज्य निराभासो भवोत्तम । चिदाकाशमयो नित्यं सर्वगः सर्ववर्जितः ॥ ६९ ॥

tatastadapi saṃtyajya nirābhāso bhavottama | cidākāśamayo nityaṃ sarvagaḥ sarvavarjitaḥ || 69 ||

Then, having given up even that appearance, become free of all appearance, best of men, eternal, made of the space of consciousness, present everywhere, free from everything.

फिर, उस झलक को भी छोड़कर, हर झलक से मुक्त हो जा, हे श्रेष्ठ पुरुष, हमेशा रहने वाला, चेतना के आकाश से बना, हर जगह मौजूद, हर चीज़ से खाली।

6.28.70

आभासस्य परित्यागे भवस्येकान्तनिर्मलः । नाहमस्मि न मे भोगाः सत्या इत्यभिभाविते ॥ ७० ॥

ābhāsasya parityāge bhavasyekāntanirmalaḥ | nāhamasmi na me bhogāḥ satyā ityabhibhāvite || 70 ||

By giving up appearance, you become utterly pure, once this thought fully takes hold: I am not this, and my pleasures are not real.

झलक को छोड़ने से तू पूरी तरह शुद्ध हो जाता है, जब यह बात पूरी तरह मन में बैठ जाती है: मैं यह नहीं हूँ, और मेरे भोग सच नहीं हैं।

6.28.71

नेदमाडम्बरं व्यर्थमनर्थायावभासते । अहमेव हि वा सर्वं चिदित्येवं विभाविते ॥ ७१ ॥

nedamāḍambaraṃ vyarthamanarthāyāvabhāsate | aham-eva hi vā sarvaṃ cid-ity-evaṃ vibhāvite || 71 ||

This whole grand display does not shine out in vain or to cause harm, once you have truly realized: I alone am everything, or, everything is consciousness.

यह सारा तामझाम बेकार में या नुकसान पहुँचाने के लिए नहीं चमकता, जब तुझे सच में यह समझ आ जाए: मैं ही सब कुछ हूँ, या, सब कुछ चेतना ही है।

6.28.72

नेदमाडम्बरं व्यर्थमनर्थायावभासते । दर्शनद्वयमप्येतत्सत्यमत्यन्तसिद्धिदम् ॥ ७२ ॥

nedamāḍambaraṃ vyarthamanarthāyāvabhāsate | darśanadvayam-apy-etat-satyaṃ-atyaṃta-siddhi-dam || 72 ||

This whole display does not appear pointlessly, or to harm you. Both these ways of seeing it are true, and each one brings you all the way to fulfillment.

यह सब कुछ जो दिखाई देता है, न तो बेकार है और न तुम्हें नुकसान पहुँचाने के लिए है। इसे देखने के दोनों तरीके सच हैं, और दोनों ही तुम्हें पूरी सफलता तक पहुँचाते हैं।

6.28.73

यदेकमेतयोवेत्सि रम्यं तद्राम संश्रय । द्वाभ्यामेवाथ वै ताभ्यां दर्शनाभ्यामिहानघ ॥ ७३ ॥

yad-ekam-etayo-vetsi ramyaṃ tad-rāma saṃśraya | dvābhyām-eva-atha vai tābhyāṃ darśanābhyām-iha-anagha || 73 ||

Rama, of these two ways of seeing, hold to whichever one you find pleasing. Or, sinless one, you may rely on both together, right here.

हे राम, इन दोनों तरीकों में से जो भी तुम्हें अच्छा लगे, उसी का सहारा लो। या फिर, हे निष्पाप, तुम यहीं दोनों तरीकों का सहारा एक साथ भी ले सकते हो।

6.28.74

विहरन्कुरु कल्याण रागद्वेषपरिक्षयम् । यत्किंचिदुदितं लोके यन्नभस्यथ वा दिवि ॥ ७४ ॥

viharan kuru kalyāṇa rāga-dveṣa-parikṣayam | yat-kiṃcid-uditaṃ loke yan-nabhasy-atha vā divi || 74 ||

Good man, live in the world, but bring wanting and hating to a complete end. Whatever has come to be in this world, in the sky, or in heaven,

हे भले पुरुष, संसार में रहते हुए भी चाहने और न चाहने को पूरी तरह मिटा दो। इस संसार में, आकाश में या स्वर्ग में जो कुछ भी उठ खड़ा हुआ है,

6.28.75

तत्सर्वं प्राप्यते राम रागद्वेषपरिक्षयात् । रागादिहतया बुद्ध्या यादृग्राम विचेष्टितम् ॥ ७५ ॥

tat-sarvaṃ prāpyate rāma rāga-dveṣa-parikṣayāt | rāgād-ih-tayā buddhyā yādṛg-rāma vic-eṣṭitam || 75 ||

all of it, Rama, is reached by ending wanting and hating. Whatever is done here, Rama, by a mind that has destroyed wanting and its kin,

वह सब कुछ, हे राम, चाहने और न चाहने को मिटाने से ही मिलता है। जो कुछ भी काम, हे राम, ऐसे मन से यहाँ किया जाता है जिसने चाहने आदि को मिटा दिया है,

6.28.76

तत्तदेव प्रयात्याशु मूढानां विपरीतताम्। द्वेषदोषोर्मिरुद्धासु न गुणाश्चित्तवृत्तिषु ॥ ७६ ॥

tattadeva prayātyāśu mūḍhānāṃ viparītatām | dveṣadoṣormiruddhāsu na guṇāścittavṛttiṣu || 76 ||

for fools, that same action quickly turns into its opposite. Where the mind is choked by the waves of the fault of hate, no virtue grows.

मूर्खों के लिए वही काम जल्दी ही उलटा हो जाता है। जहाँ मन घृणा के दोष की लहरों से घिरा हो, वहाँ कोई गुण नहीं पनपता।

6.28.77

पदं कुर्वन्ति दग्धासु स्थलीषु हरिणा इव। रागो द्वेषश्च सर्पौ द्वौ न विलीनौ मनोविले ॥ ७७ ॥

padaṃ kurvanti dagdhāsu sthalīṣu hariṇā iva | rāgo dveṣaśca sarpaudvau na vilīnau manovile || 77 ||

Such fools take their stand on scorched ground, the way deer wander onto it. Wanting and hating, the two snakes, have not yet dissolved in the cave of the mind.

ऐसे मूर्ख जली हुई ज़मीन पर वैसे ही पैर जमाते हैं जैसे हिरण उस पर भटक जाते हैं। चाहना और घृणा, ये दोनों साँप, अभी तक मन की गुफा में घुले नहीं हैं।

6.28.78

यस्य कल्पतरोस्तस्मात्किं नामाङ्ग न लभ्यते। ये हि प्राज्ञाः स्वनियता विदग्धाः शास्त्रशालिनः ॥ ७८ ॥

yasya kalpatarostasmātkiṃ nāmāṅga na labhyate | ye hi prājñāḥ svaniyatā vidagdhāḥ śāstraśālinaḥ || 78 ||

My dear, what indeed is not gained from that wish granting tree by the wise, the self controlled, the skillful, those well versed in the scriptures?

हे प्रिय, उस इच्छा पूरी करने वाले वृक्ष से उन बुद्धिमान, आत्म संयमी, कुशल और शास्त्रों में पारंगत लोगों को क्या नहीं मिलता?

6.28.79

रागद्वेषमयास्ते वै जम्बुकास्ते धिगस्तु तान्। मद्धनं भुक्तमन्येन धनं त्यक्तं मयाऽन्यतः ॥ ७९ ॥

rāgadveṣamayāste vai jambukāste dhigastu tān | maddhanaṃ bhuktamanyena dhanaṃ tyaktaṃ mayā'nyataḥ || 79 ||

Those who are entirely wanting and hating are nothing but jackals, and a curse be on them. My wealth was enjoyed by another, and elsewhere, wealth of my own I gave up.

जो पूरी तरह चाहने और घृणा से बने हैं, वे केवल गीदड़ हैं, उन पर धिक्कार हो। मेरा धन तो किसी और ने भोगा, और कहीं और अपना धन मैंने खुद छोड़ दिया।

6.28.80

इति संव्यवहारेहाः के रागद्वेषयोः क्रमाः। धनानि बन्धवो मित्रं पुनरायान्ति यान्ति च ॥ ८० ॥

iti saṃvyavahārehāḥ ke rāgadveṣayoḥ kramāḥ | dhanāni bandhavo mitraṃ punarāyānti yānti ca || 80 ||

So go the doings of everyday dealings, what are they but the workings of wanting and hating? Wealth, kinsmen, and friends come back again, and go away again.

इस तरह चलते हैं संसार के लेन देन, ये चाहने और घृणा के खेल के सिवा और क्या हैं? धन, रिश्तेदार और मित्र बार बार आते हैं और चले जाते हैं।

6.28.81

किमेतेषु नरः प्राज्ञो रज्यते वा विरज्यते । भावाभावभवाभोगा मायेयं पारमेश्वरी ॥ ८१ ॥

kimeṣu naraḥ prājño rajyate vā virajyate | bhāvābhāvabhavābhogā māyeyaṁ pārameśvarī || 81 ||

Does a wise man become attached to these things, or turn away from them? This is the great illusion of the Supreme Lord, made of things existing, not existing, coming into being, and being enjoyed.

क्या बुद्धिमान मनुष्य इन चीज़ों से राग करता है, या इनसे विराग? यह तो परमेश्वर की माया है, जो चीज़ों के होने, न होने, बनने और भोगे जाने से बनी है।

6.28.82

संसाररचना सर्वा संसक्तं पातयत्यलम् । न धनं न जनो नात्मा सत्यं राघव वस्तुतः ॥ ८२ ॥

saṁsāraracanā sarvā saṁsaktaṁ pātayatyalam | na dhanaṁ na jano nātmā satyaṁ rāghava vastutaḥ || 82 ||

This whole design of the world brings down completely anyone who clings to it. Wealth is not real, people are not real, even the self is not real, Raghava, not truly, not in fact.

संसार की यह पूरी रचना उसे पूरी तरह गिरा देती है जो इससे चिपक जाता है। हे राघव, न धन सच है, न लोग सच हैं, न स्वयं आत्मा सच है, असल में कुछ भी सच नहीं।

6.28.83

मिथ्यैव मिथ्यावसितमितीदं परिलक्ष्यते । आद्यन्तयोः सर्वमसन्मध्येऽप्यस्थिरमाधिमत् ॥ ८३ ॥

mithyaiava mithyāvasitamitīdaṁ parilakṣyate | ādyantayoḥ sarvamasantmadhye'pyasthiramādhi mat || 83 ||

This is clearly seen to be false, plainly false. At the start and at the end, all of it is unreal, and even in the middle, it is unsteady and full of pain.

यह साफ़ दिखाई देता है कि यह झूठा है, पूरी तरह झूठा है। शुरुआत में और अंत में, यह सब कुछ असत्य है, और बीच में भी यह अस्थिर और दुख से भरा है।

6.28.84

क्व बध्नाति रतिं प्राज्ञो ह्यन्यकल्पितखद्रुमे । एकेन कल्पिता खे स्त्री भुङ्क्ते तां दूरगोऽपरः ॥ ८४ ॥

kva bhagnāti ratiṁ prājño hyanyakalpitakhadrume | ekena kalpitā khe strī bhuṅkte tāṁ dūrago'paraḥ || 84 ||

Why would a wise man set his heart on a sky tree that someone else has merely imagined? One man imagines a woman in the sky, and another man, far away, enjoys her.

बुद्धिमान व्यक्ति भला आकाश में किसी और के कल्पना किए हुए पेड़ से प्रेम क्यों बाँधे? एक आदमी आकाश में एक स्त्री की कल्पना करता है, और कोई दूसरा आदमी, दूर बैठा हुआ, उसे भोगता है।

6.28.85

इतीयमङ्ग संसाररचना तेन मा भ्रम । भूताजवं जवीभावमिममाततमाकुलम् ॥ ८५ ॥

itīyamaṅga saṁsāraracanā tena mā bhrama | bhūtājavaṁ javībhāvamimamātatamākulam || 85 ||

So, dear one, is this design of the world, do not be misled by it. It holds the stillness and the movement of all beings, spread out everywhere, and full of turmoil.

हे प्रिय, संसार की यह बनावट ऐसी ही है, इससे भ्रमित मत हो। इसमें सब प्राणियों की स्थिरता और गति दोनों हैं, जो हर जगह फैली हुई और उथल पुथल से भरी हैं।

6.28.86

गन्धर्वपुरनिर्माणविलासेन समं विदुः । स्वप्नसंकल्पपुरवदसदेवेदमुत्थितम् ॥ ८६ ॥

gandharvapuranirmāṇavilāsena samaṃ viduḥ | svapnasankalpapuravadasadevedamutthitam || 86 ||

They know it to be just like the play of building a city in the sky. Like a city seen in a dream or shaped by imagination, this world has arisen wholly unreal.

वे इसे आकाश में एक नगर बनाने के खेल के समान जानते हैं। जैसे सपने में देखा हुआ या कल्पना से गढ़ा हुआ कोई नगर होता है, वैसे ही यह संसार पूरी तरह असत्य होकर उठ खड़ा हुआ है।

6.28.87

सर्वत्र संस्थमेवेदं सुषुप्तमिव विच्युतम् । परिपश्यसि संसारदीर्घस्वप्नपुरद्रुमम् ॥ ८७ ॥

sarvatra saṃsthamavedaṃ suṣuptamiva vicyutam | paripaśyasi saṃsāradīrghasvapnapuradrumam || 87 ||

This, though it stands everywhere, has slipped away like something in deep sleep. Now you see clearly, this world is a tree standing in the city of one long dream.

यह जो हर जगह मौजूद दिखता है, वह गहरी नींद की तरह खिसक चुका है। अब तुम साफ़ देख रहे हो, यह संसार एक लंबे सपने के नगर में खड़ा हुआ एक पेड़ है।

6.28.88

अज्ञाननिद्रालुठनस्वभावात्मकमच्युतम् । संसारस्वप्नसंभ्रान्तो भवानयमिह स्थितः ॥ ८८ ॥

ajñānanidrāluṭhanasvabhāvātmakamacyutam | saṃsārasvapnasambhrānto bhavānayamiha sthitaḥ || 88 ||

By nature it tosses and turns in the sleep of ignorance, yet in truth it never changes. You, bewildered by this dream of the world, are standing right here caught in it.

यह अपने स्वभाव से अज्ञान की नींद में करवटें बदलता रहता है, पर सच में यह कभी नहीं बदलता। तुम, संसार के इस सपने से भ्रमित होकर, यहीं इसमें फँसे खड़े हो।

6.28.89

तदेनां विततां निद्रां घनाज्ञानमयात्मिकाम् । त्यजालक्ष्मीमिवावाप्तनिधानः पुरुषोत्तमः ॥ ८९ ॥

tadenāṃ vitatāṃ nidrāṃ ghanājñānamayātmikām | tyajālakṣmīmivāvāptanidhānaḥ puruṣottamaḥ || 89 ||

So give up this vast sleep made of thick ignorance, just as a great man who has found a hidden treasure gives up misfortune.

इसलिए घने अज्ञान से बनी इस बड़ी नींद को त्याग दो, जैसे कोई महापुरुष खज़ाना पाकर दुर्भाग्य को त्याग देता है।

6.28.90

प्रबोधमेहि पश्य स्वमात्मानमुदितं सदा । निर्विकल्पं चिदाभासं प्रातःपद्मं रविं यथा ॥ ९० ॥

prabodhamehi paśya svamātmānamuditaṃ sadā | nirvikalpaṃ cidābhāsaṃ prātaḥpadmaṃ raviṃ yathā || 90 ||

Wake up fully. See your own self, always risen, free of all division, the very shining of awareness, like the morning sun on the lotus.

पूरी तरह जाग जाओ। अपने आप को देखो, जो सदा उदय है, हर भेद से मुक्त है, चेतना का वह प्रकाश है, जैसे सुबह का सूरज कमल पर होता है।

6.28.91

प्रबुध्यस्व प्रबुध्यस्व पुनःपुनरयं मयाप्रबोध्यसे महाबाहो पश्यात्मार्कमनामयम् ॥ ९१ ॥

prabudhyasva prabudhyasva punaḥpunarayaṃ mayāprabodhyase mahābāho paśyātmārkamanāmayam || 91 ||

Awake, awake! Again and again I am waking you, mighty armed one. See the sun of your own self, free from all affliction.

जागो, जागो! बार बार मैं तुम्हें जगा रहा हूँ, हे महाबाहु। अपने आत्मा के सूर्य को देखो, जो हर पीड़ा से मुक्त है।

6.28.92

मयैतेनाभिवृष्टेन शीतेन ज्ञानवारिणासुशब्दशालिना राम ह्यनेनैवासि बोधितः ॥ ९२ ॥

mayaitenābhivṛṣṭena śītena jñānavāriṇāsuśabdaśālinā rāma hyanenaivāsi bodhitaḥ || 92 ||

Rama, with this cool water of knowledge that I have poured down on you, carrying a lovely sound, you have indeed been awakened by this alone.

हे राम, ज्ञान के इस शीतल जल से, जो मैंने तुम पर बरसाया है और जिसमें एक सुंदर ध्वनि है, तुम इसी से जग चुके हो।

6.28.93

बोधमासादय परं प्रबोधोऽद्यैव राघव सत्यमालोकयालीकं त्यक्त्वेमं जागतं भ्रमम् ॥ ९३ ॥

bodhamāsādaya paraṃ prabodho'dyaiva rāghavasatyamālokayālīkaṃ tyaktvemaṃ jāgataṃ bhramam || 93 ||

Reach the highest awakening. Let it happen today, Raghava. Give up this false delusion of the world, and see the truth.

सबसे बड़े जागरण को पाओ। यह आज ही हो जाए, हे राघव। संसार के इस झूठे भ्रम को छोड़ दो, और सच को देखो।

6.28.94

न ते जन्म न ते दुःखं न दोषास्ते न ते भ्रमाःसर्वं संकल्पमुत्सृज्य तिष्ठात्मनि सुसंस्थितः ॥ ९४ ॥

na te janma na te duḥkhaṃ na doṣāste na te bhramāḥsarvaṃ saṃkalpamutsṛjya tiṣṭhātmani susaṃsthitaḥ || 94 ||

You have no birth, you have no suffering, you have no faults, you have no delusions. Give up every wish and thought, and stay firmly settled in your own self.

तुम्हारा न कोई जन्म है, न कोई दुख है, न कोई दोष है, न कोई भ्रम है। हर इच्छा और विचार को छोड़ दो, और अपने आप में दृढ़ता से टिके रहो।

6.28.95

परिगलितविकल्पदोषजालस्त्वमसि सुसारसुषुप्तसौम्यदृष्टिः अतिविततमिदं सुशुद्धये त्वं समुपशमात्मनि तिष्ठ हे महात्मन् ॥ ९५ ॥

parigalitavikalpadoṣajālastvamasi susārasuṣuptasaumyadṛṣṭiḥativitatamidaṃ suśuddhaye tvaṃ samupaśamātmani tiṣṭha he mahātman || 95 ||

You are one in whom the whole web of doubt and imagined ideas has melted away. Your vision is deep, still as dreamless sleep, gentle, and true to its very core. All that has been said here at such length is for your complete purification. Great soul, remain in the self that is utter peace.

तुम वह हो जिसमें संदेह और कल्पना से बनी बातों का सारा जाल पूरी तरह घुल चुका है। तुम्हारी दृष्टि गहरी है, गहरी नींद जैसी शांत, कोमल और अपने मूल में सच्ची है। यहाँ जो कुछ इतने विस्तार से कहा गया, वह तुम्हारी पूरी शुद्धि के लिए है। हे महात्मा, उस आत्मा में टिके रहो जो पूर्ण शांति है।

Chapter 29

6.29.1

दृशा सर्वार्तिहारिण्या चिरमस्म्यास्पदीकृतः । पुष्पसानूपविष्टाय तस्मै त्रैलोक्यसाक्षिणे ॥ १ ॥

dṛśā sarvārtihāriṇyā ciramasmāspadīkṛtaḥ | puṣpasānūpaviṣṭāya tasmai trailokyasākṣiṇe || 1 ||

By that gaze which takes away all suffering, I have for a long time been made a dwelling place for him who sits on the flower-covered ridge, the witness of all three worlds.

जो नज़र हर दुख को दूर कर देती है, उसी नज़र ने मुझे बहुत समय से उसका ठिकाना बना दिया है, जो फूलों से भरी चोटी पर बैठा है और तीनों लोकों को देखने वाला है।

6.29.2

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्याकर्णयति स्वस्थसमचेतसि राघवे । विश्रान्ते स्वात्मनि स्वैरं परमानन्दमागते ॥ २ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityākarṇayati svasthasamacetasi rāghave | viśrānte svātmani svairaṃ paramānandamāgate || 2 ||

Sri Valmiki said: Rama was listening to all this, calm and steady in his mind, resting freely in his own self, having come to the highest bliss.

श्री वाल्मीकि ने कहा: राम यह सब सुन रहे थे, वे शांत और स्थिर मन वाले थे, अपने आप में खुलकर टिके हुए थे, और परम आनंद को पा चुके थे।

6.29.3

विरराम मुनेर्वारि सस्येष्वम्बुधरादिव । अथ याते मुहूर्तार्धे राघवे प्रतिबोधिते ॥ ३ ॥

virarāma munervāri sasyeṣvambudharādiva | atha yāte muhūrtārdhe rāghave pratibodhite || 3 ||

The sage's flow of words came to a stop, like a raincloud stops raining once it has watered the crops. Then, after half a moment had passed, Rama was roused.

मुनि के बोलने की धारा रुक गई, जैसे बादल खेतों को सींचकर बरसना बंद कर देता है। फिर जब आधा पल बीत गया, राम को होश आया।

6.29.4

पुनराह तमेवार्थं वसिष्ठो वदतां वरः । श्रीवसिष्ठ उवाच । राम सम्यक्प्रबुद्धोऽसि स्वात्मानमसि लब्धवान् ॥ ४ ॥

punarāha tamevārthaṃ vasiṣṭho vadatāṃ varaḥ | śrīvasiṣṭha uvāca | rāma samyakprabuddho'si svātmānamasi labdhvān || 4 ||

Vasishtha, the best of speakers, spoke again on that same matter. Sri Vasishtha said: Rama, you are now fully awake; you have found your own self.

वसिष्ठ, जो बोलने वालों में सबसे श्रेष्ठ हैं, फिर उसी बात पर बोले। श्री वसिष्ठ ने कहा: राम, अब तुम पूरी तरह जाग गए हो; तुमने अपने आप को पा लिया है।

6.29.5

एवमेवावलम्ब्यार्थं तिष्ठ नेह पदं कृथाः । इदं संसारचक्रं हि नाभौ संकल्पमात्रके ॥ ५ ॥

evamevāvalambyārthaṃ tiṣṭha neha padaṃ kṛthāḥ | idaṃ saṃsāracakraṃ hi nābhau saṃkalpamātrake || 5 ||

Just go on resting on this alone, stay firm, and do not take a foothold here again. This wheel of the world, indeed, turns on a hub that is nothing but intention.

बस इसी बात पर टिके रहो, स्थिर रहो, और यहाँ दोबारा पैर मत जमाओ। यह संसार का पहिया, सच में, एक ऐसी धुरी पर घूमता है जो केवल इच्छा (संकल्प) है।

6.29.6

संरोधितायां वहनाद्रघुनन्दन रुद्ध्यतेक्षोभितायां मनोनाभ्यामिदं संसारचक्रकम् ॥ ६ ॥

saṃrodhitāyāṃ vahanādraghunandana ruddhyatekṣobhitāyāṃ manonābhyāmidaṃ saṃsāracakrakam || 6 ||

Rama, when the mind, which is the hub of this wheel of the world, is stopped from turning and so is shaken, the wheel of the world comes to a stop.

राम, जब मन, जो इस संसार-चक्र की धुरी है, घूमने से रोक दिया जाता है और इस तरह हिल जाता है, तब संसार का यह पहिया रुक जाता है।

6.29.7

प्रयत्नाद्रोधितमपि प्रवहत्येव वेगतः परं पौरुषमास्थाय बलं प्रज्ञां च युक्तितः ॥ ७ ॥

prayatnādrodhitamapi pravahatyeva vegataḥ paraṃ pauruṣamāsthāya balaṃ prajñāṃ ca yuktitaḥ || 7 ||

Even when it is checked by effort, it still rushes on with force. It can be stopped only by taking up great manly effort, strength, and wisdom, applied the right way.

कोशिश से रोकने पर भी यह पूरी ताकत से आगे बढ़ता रहता है। इसे रोका जा सकता है सिर्फ बड़े पुरुषार्थ, बल और बुद्धि को सही तरीके से अपनाकर।

6.29.8

नाभिं संसारचक्रस्य चित्तमेव निरोधयेत्प्रज्ञासौजन्ययुक्तेन शास्त्रसंवलितेन च ॥ ८ ॥

nābhiṃ saṃsāracakrasya cittameva nirodhayetprajñāsaujanyayuktena śāstrasaṃvalitena ca || 8 ||

One should hold back the mind alone, which is the hub of this wheel of the world, using wisdom joined with goodness, and combined with the teaching of the scriptures.

इस संसार-चक्र की धुरी सिर्फ मन है, इसलिए मन को ही रोकना चाहिए, अच्छाई से जुड़ी बुद्धि से, और शास्त्रों की सीख के साथ।

6.29.9

पौरुषेण न यत्प्राप्तं न तत्क्वचन लभ्यतेदैवैकपरतां त्यक्त्वा बालबोधोपकल्पिताम् ॥ ९ ॥

pauruṣeṇa na yatprāptaṃ na tatkvacana labhyatedaivaikaparatāṃ tyaktvā bālabodhopakalpitām || 9 ||

What cannot be gained by one's own effort can never be gained at all. So give up relying only on fate, an idea fit only for a child's understanding.

जो अपनी मेहनत से नहीं मिलता, वह कभी किसी तरह नहीं मिलता। इसलिए सिर्फ किस्मत पर भरोसा करना छोड़ दो, यह सोच तो बस बच्चों की समझ के लायक है।

6.29.10

निजं प्रयत्नमाश्रित्य चित्तमादौ निरोधयेताविरिञ्चात्प्रवृत्तेन भ्रमेणाज्ञानरूपिणा ॥ १० ॥

nijaṃ prayatnamāśritya cittamādau nirodhayetāviriñcātpravṛttena bhrameṇājñānarūpiṇā || 10 ||

Relying on one's own effort, one should first hold back the mind, hold back the confusion, in the form of ignorance, that has been moving on ever since Brahma.

अपनी मेहनत का सहारा लेकर पहले मन को रोकना चाहिए, उस भ्रम को रोकना चाहिए, जो अज्ञान के रूप में ब्रह्मा के समय से चला आ रहा है।

6.29.11

असदेव सदाभासमिदमालक्ष्यतेऽनघ । अज्ञानभ्रमविस्तारमात्रकाकृतयोऽनघ ॥ ११ ॥

asadeva sadābhāsamidamālakṣyate'nagha | ajñānabhramavistāramātrakākṛtayo'nagha || 11 ||

Sinless one, this world, though unreal, looks real. These shapes are nothing but the spreading out of the confusion of ignorance, sinless one.

हे निष्पाप, यह संसार, झूठा होते हुए भी, सच जैसा दिखता है। ये सारे रूप अज्ञान के भ्रम के फैलाव के सिवा कुछ नहीं हैं, हे निष्पाप।

6.29.12

इमे देहा भ्रमन्तीह सर्वधर्मात्समुत्थिताः । संकल्पः पुनरस्त्वेव देहस्यार्थे कदाचन ॥ १२ ॥

ime dehā bhramantīha sarvadharmātsamutthitāḥ | saṃkalpaḥ punarastveva dehasyārthe kadācana || 12 ||

These bodies wander about here, made up out of every kind of quality. But even so, let there still be, now and then, some thought given to the body.

ये शरीर यहाँ इधर-उधर भटकते हैं, जो हर तरह के गुणों से बने हैं। फिर भी, कभी-कभी शरीर के लिए थोड़ा ध्यान रहने दो।

6.29.13

सुखदुःखविचारित्वं न कार्यं राम धीमता । दुःखम्लानमुखः क्लेदी प्रसन्नात्क्लेदवर्जितात् ॥ १३ ॥

sukhaduḥkhavicāritvaṃ na kāryaṃ rāma dhīmatā | duḥkhamlānamukhaḥ kledī prasannātkledavarjitāt || 13 ||

Rama, a wise man should not trouble himself weighing pleasure against pain, telling apart a face gone dull and damp with sorrow from one that is bright and free of that dampness.

राम, समझदार आदमी को सुख-दुख को तौलने में नहीं उलझना चाहिए, यह देखने में नहीं कि कौन सा चेहरा दुख से मुरझाया और गीला है, और कौन सा चेहरा खिला हुआ और उस गीलेपन से मुक्त है।

6.29.14

अपि चित्रनराद्देहनरस्तुच्छतरः स्मृतःआधिव्याधिपरिम्लाने स्वयं क्लेदिनि नाशिनि ॥ १४ ॥

api citranarāddehanarastucchataraḥ smṛtaḥādhivyādhiparimlāne svayaṃ kledini nāśini || 14 ||

Indeed, the man of flesh is reckoned more worthless than the man painted in a picture, since the body of flesh withers from mental grief and bodily disease, turns damp and rotten by itself, and perishes.

सच तो यह है कि मांस का बना आदमी चित्र में बने आदमी से भी ज़्यादा तुच्छ माना गया है, क्योंकि मांस का यह शरीर मानसिक दुख और शारीरिक बीमारी से मुरझा जाता है, खुद ही सड़-गल जाता है, और नष्ट हो जाता है।

6.29.15

न तथा स्थिरता देहे चित्रपुंसो यथा किल । विनाशितो हि चित्रस्थो देहो नश्यति नान्यथा ॥ १५ ॥

na tathā sthiratā dehe citrapuṃso yathā kila | vināśito hi citrastho deho naśyati nānyathā || 15 ||

The real body does not have as much lasting power as the painted man's body does. For the body in a picture perishes only when someone destroys it, never otherwise.

असली शरीर में उतनी टिकाऊपन नहीं है जितनी चित्र में बने आदमी के शरीर में है। क्योंकि चित्र का शरीर तभी नष्ट होता है जब कोई उसे मिटा दे, वरना नहीं।

6.29.16

अवश्यनाशो मांसात्मा स्वयं देहो विनश्यति । पालितः सुस्थिरां शोभामादत्ते चित्रमानवः ॥ १६ ॥

avaśyanāśo māṃsātmā svayaṃ deho vinaśyati | pālitaḥ susthirāṃ śobhāmādatte citramānavaḥ || 16 ||

The body of flesh is bound to perish; it dies all by itself. But the man in a painting, once cared for, keeps a beauty that lasts.

मांस का शरीर नष्ट होना ही है; यह अपने आप ही मर जाता है। पर चित्र में बना आदमी, अगर उसकी देखभाल हो, तो उसकी सुंदरता टिकी रहती है।

6.29.17

देहस्तु पालितोऽप्युच्चैर्नश्यत्येव न वर्धते । तेन श्रेष्ठश्चित्रदेहो नायं संकल्पदेहकः ॥ १७ ॥

dehas tu pālito'py uccair naśyaty eva na vardhate | tena śreṣṭhaś citradeho nāyaṃ saṃkalpadehakaḥ || 17 ||

But the body of flesh, however well it is cared for, only wastes away, it never grows better. So the painted body is the finer one, not this body, which is made only of imagination.

पर मांस का शरीर, चाहे कितनी भी देखभाल हो, बस घटता ही जाता है, कभी बेहतर नहीं होता। इसलिए चित्र का शरीर ही बेहतर है, यह शरीर नहीं, जो सिर्फ कल्पना से बना है।

6.29.18

ये गुणाश्चित्रदेहे हि न ते संकल्पदेहके । चित्रदेहादपि जडाद्योऽयं तुच्छतरः किल ॥ १८ ॥

ye guṇāś citradehe hi na te saṃkalpadehake | citradehād api jaḍād yo'yaṃ tucchataraḥ kila || 18 ||

Whatever good qualities are found in the painted body are not found in this body made only of imagination. This body is more worthless, indeed, than even the painted body, and that painted body is itself lifeless.

चित्र के शरीर में जो भी अच्छे गुण हैं, वे इस कल्पना से बने शरीर में नहीं हैं। यह शरीर तो चित्र के शरीर से भी ज़्यादा तुच्छ है, और वह चित्र का शरीर तो खुद ही निर्जीव है।

6.29.19

तस्मिन्मांसमये देहे कैवास्था भवतोऽनघ । दीर्घसंकल्पदेहोऽयं तस्मिन्नास्था महामते ॥ १९ ॥

tasmin māṃsamaye dehe kaivāsthā bhavato'nagha | dīrghasaṃkalpadeho'yaṃ tasmin nāsthā mahāmate || 19 ||

So, sinless one, what regard should you still have for that body of flesh? It is a body made of long-held imagination, great one, give it no regard at all.

तो हे निष्पाप, उस मांस के शरीर के लिए तुम्हें अब कैसा मोह होना चाहिए? यह तो लंबे समय की कल्पना से बना शरीर है, हे महान बुद्धि वाले, इसके लिए कोई मोह मत रखो।

6.29.20

स्वप्नसंकल्पजाद्देहादपि तुच्छतरो ह्ययम् । अल्पसंकल्पजो दीर्घैः सुखदुःखैर्न गृह्यते ॥ २० ॥

svapnasaṃkalpajād dehād api tucchataro hy ayam | alpasaṃkalpajo dīrghaiḥ sukhaduḥkhair na gṛhyate || 20 ||

This body is more worthless, indeed, than even a body born of a dream's imagining. What is born of a short imagining is not gripped by long-lasting pleasure and pain.

यह शरीर तो सपने की कल्पना से बने शरीर से भी ज़्यादा तुच्छ है। जो थोड़ी देर की कल्पना से बनता है, वह लंबे सुख-दुख की गिरफ्त में नहीं आता।

6.29.21

दीर्घसंकल्पजश्चायं दीर्घदुःखेन दुःखितः । देहो हि संकल्पमयो नायमस्ति न वास्ति नः ॥ २१ ॥

dīrghasaṃkalpajaścāyaṃ dīrghaduḥkhena duḥkhitaḥ | deho hi saṃkalpamayo nāyamasti na vāsti naḥ || 21 ||

But this body, born of a long imagining, is pained by long-lasting pain. The body, indeed, is made only of thought, for us it neither exists, nor does it fail to exist.

पर यह शरीर, जो लंबी कल्पना से बना है, लंबे दुख से दुखी रहता है। यह शरीर सच में सिर्फ विचार से बना है, हमारे लिए यह न तो है, न ही नहीं है।

6.29.22

किं व्यर्थमेतदर्थं हि मूढोऽयं क्लेशभाजनम्। यथा चित्रमये पुंसि क्षते क्षीणे न तत्क्षतिः ॥ २२ ॥

kiṃ vyarthametadarthaṃ hi mūḍho'yaṃ kleśabhājanam | yathā citramaye puṃsi kṣate kṣīṇe na tatkṣatiḥ || 22 ||

Why does this fool needlessly turn himself into a vessel of suffering, for the sake of this body? Just as, when the man in a painting is cut or worn away, that is no real loss.

यह मूर्ख आदमी बेकार में ही, इस शरीर की खातिर, खुद को दुख का बर्तन क्यों बना लेता है? जैसे चित्र में बने आदमी को काटने या मिटाने से कोई असली नुकसान नहीं होता।

6.29.23

तथा संकल्पपुरुषे क्षते क्षीणे न तत्क्षतिः। यथा मनोराज्यमये क्षते क्षीणे न तत्क्षतिः ॥ २३ ॥

tathā saṃkalpapuruṣe kṣate kṣīṇe na tatkṣatiḥ | yathā manorājyamaye kṣate kṣīṇe na tatkṣatiḥ || 23 ||

So too, when the man made only of imagination is cut or worn away, that is no real loss. And just as, when something in a daydream is cut or worn away, that is no real loss.

वैसे ही, कल्पना से बने आदमी को काटने या मिटाने से भी कोई असली नुकसान नहीं होता। और जैसे मन के सपने में किसी चीज़ को काटने या मिटाने से कोई असली नुकसान नहीं होता।

6.29.24

यथा द्वितीये शशिनि क्षते क्षीणे न तत्क्षतिः। यथा स्वप्नसमारम्भे क्षते क्षीणे न तत्क्षतिः ॥ २४ ॥

yathā dvitīye śaśini kṣate kṣīṇe na tatkṣatiḥ | yathā svapnasamārambhe kṣate kṣīṇe na tatkṣatiḥ || 24 ||

Just as, when a second moon is cut or worn away, that is no real loss, just as, when something arising in a dream is cut or worn away, that is no real loss.

जैसे दूसरे भ्रम वाले चाँद को काटने या मिटाने से कोई असली नुकसान नहीं होता, जैसे सपने में उठी किसी चीज़ को काटने या मिटाने से कोई असली नुकसान नहीं होता।

6.29.25

यथा नद्यातपजले क्षते क्षीणे न तत्क्षतिः। संकल्पमात्ररचिते प्रकृत्यैव च नाशिनि ॥ २५ ॥

yathā nadyātapajale kṣate kṣīṇe na tatkṣatiḥ | saṃkalpamātraracite prakṛtyaiva ca nāśini || 25 ||

Just as, when the water of a mirage on a sunlit riverbed is cut or worn away, that is no real loss, since it is a thing made only by imagination, and by its own nature bound to vanish.

जैसे धूप में नदी पर दिखने वाले मृगतृष्णा के पानी को काटने या मिटाने से कोई असली नुकसान नहीं होता, क्योंकि वह सिर्फ कल्पना से बनी चीज़ है, और अपने आप ही मिट जाने वाली है।

6.29.26

तथा शरीरयन्त्रेऽस्मिन्क्षते क्षीणे न तत्क्षतिः। दीर्घस्वप्नमये ह्यस्मिंश्चित्तसंकल्पकल्पिते ॥ २६ ॥

tathā śarīrayantre'smin kṣate kṣīṇe na tatkṣatiḥ | dīrghasvapnamaye hyasmiñcittasaṃkalpakalpite || 26 ||

So too, when this bodily machine is cut or wears away, that is no real loss, since this body is only a long dream, shaped by the mind's own intention.

वैसे ही, इस शरीर रूपी मशीन को काटने या इसके घिस जाने से कोई असली नुकसान नहीं होता, क्योंकि यह शरीर तो बस मन के संकल्प से बना एक लंबा सपना है।

6.29.27

भूषिते दूषिते देहे न हि किंचिच्चितः क्षतम्। न चिदन्तमुपायाति नात्मा चलति राघव ॥ २७ ॥

bhūṣite dūṣite dehe na hi kiñciccitaḥ kṣatam | na cidantamupāyāti nātmā calati rāghava || 27 ||

Rama, whether the body is adorned or spoiled, awareness itself is not harmed at all. Awareness never comes to an end, and the self never changes.

राम, चाहे शरीर सजा हो या बिगड़ा हो, चेतना को इससे कोई नुकसान नहीं होता। चेतना कभी खत्म नहीं होती, और आत्मा कभी नहीं बदलती।

6.29.28

न ब्रह्म विकृतिं याति किंवा देहक्षये क्षतम्। भ्रमच्चक्रोपरिष्ठो हि पूर्वचक्रोपचक्रवत् ॥ २८ ॥

na brahma vikṛtiṃ yāti kiṃvā dehakṣaye kṣatam | bhramaccakropariṣṭho hi pūrvacakropacakravat || 28 ||

Brahman does not change, nor is there any harm when the body dies, for it stands above the whirling wheel, like a small wheel resting on a bigger, earlier wheel.

ब्रह्म कभी नहीं बदलता, और शरीर के नष्ट होने से उसे कोई नुकसान नहीं होता, क्योंकि वह घूमते हुए पहिये के ऊपर खड़ा रहता है, जैसे एक छोटा पहिया किसी बड़े, पहले से मौजूद पहिये पर टिका हो।

6.29.29

यथा पश्यति दिक्चक्रं भ्रमदत्यन्तमोहितः। अकस्मादेव रुढेन मिथ्याज्ञानेन वल्गता ॥ २९ ॥

yathā paśyati dikcakraṃ bhramadatyantamohitaḥ | akasmādeva ruḍhena mithyājñānena valgatā || 29 ||

Just as someone made completely dizzy sees the whole circle of the directions spinning, because of a false idea that suddenly takes hold and runs wild in him,

जैसे कोई पूरी तरह चक्कर खाया हुआ आदमी दिशाओं के पूरे घेरे को घूमता हुआ देखता है, क्योंकि एक झूठी सोच अचानक उस पर हावी होकर उसमें बेकाबू होकर दौड़ने लगती है,

6.29.30

तत्रस्थेन तथैवेदं दृश्यते देहचक्रकम्। भ्रमितं च भ्रमद्रूपं पतद्रूपं प्रपातितम् ॥ ३० ॥

tatrasthtena tathaivedaṃ dṛśyate dehacakrakam | bhramitaṃ ca bhramadūpaṃ patadrūpaṃ prapātitam || 30 ||

so that same person, in just the same way, sees this wheel of the body as spinning, as a thing whirling, as a thing falling, brought down to fall.

वैसे ही वह आदमी, ठीक उसी तरह, इस शरीर के पहिये को घूमता हुआ देखता है, घूमते हुए रूप में, गिरते हुए रूप में, गिराए जाने के रूप में।

6.29.31

हतं च हन्यमानं च दृश्यते देहचक्रकम्। धीरतामलमालम्ब्य घनभ्रममिमं त्यजेत् ॥ ३१ ॥

hataṃ ca hanyamānaṃ ca dṛśyate dehacakrakam | dhīratāmalamālambya ghanabhramamimaṃ tyajet || 31 ||

This wheel of the body is seen as killed, and as being killed. Holding on to pure steadiness, one should give up this thick delusion.

यह देह-चक्र मरा हुआ और मरता हुआ दिखाई देता है। शुद्ध धैर्य को थामकर, इस घने भ्रम को छोड़ देना चाहिए।

6.29.32

संकल्पेन कृतो देहो मिथ्याज्ञानेन सन्नसन्। असत्येन कृतं यस्मान्न तत्सत्यं कदाचन ॥ ३२ ॥

saṃkalpena kṛto deho mithyājñānena sannasan | asatyena kṛtaṃ yasmānna tatsatyam kadācana || 32 ||

The body is made by intention, and because of false knowledge it seems to exist though it does not exist. Since it is made from what is unreal, it can never be real.

देह संकल्प से बनी है, और झूठे ज्ञान के कारण वह होते हुए भी नहीं है। जो चीज़ असत्य से बनी हो, वह कभी सच नहीं हो सकती।

6.29.33

असदभ्युत्थितो देहो रज्ज्वामिव भुजंगधीः । असत्यामेव सत्यां च करोत्यपि जगत्क्रियाम् ॥ ३३ ॥

asadabhyutthito deho rajjvāmiva bhujangadhīḥ | asatyāmeva satyāṃ ca karotyapi jagatkriyām || 33 ||

The body rises up out of the unreal, like the thought of a snake in a rope. Though it is unreal, it still carries out the actions of the world, as if it were real.

देह असत्य से उठी है, जैसे रस्सी में साँप का भ्रम होता है। असत्य होते हुए भी वह संसार के कार्य ऐसे करती है जैसे वह सत्य हो।

6.29.34

जडेन राम क्रियते यन्न तत्कृतमुच्यते । कुर्वन्नपि तदा देहो न कर्ता क्वचिदेव हि ॥ ३४ ॥

jaḍena rāma kriyate yannatatkṛtamucyate | kurvannapi tadā deho na kartā kvacideva hi || 34 ||

Rama, what an unfeeling thing does cannot really be called its own act. So even while the body acts, it is never the one who acts.

हे राम, जो कोई जड़ वस्तु करती है, उसे सच में उसका किया हुआ काम नहीं कहा जा सकता। इसलिए देह चाहे कुछ भी करती दिखे, वह कभी करने वाली नहीं होती।

6.29.35

निरीहो हि जडो देहो नात्मनोऽस्याभिवाञ्छितम् । कर्ता न कश्चिदेवातो द्रष्टा केवलमस्य सः ॥ ३५ ॥

nirīho hi jaḍo deho nātmano'syābhivāñchitam | kartā na kaścidevāto draṣṭā kevalamasya saḥ || 35 ||

The body has no wish of its own; it is unfeeling, with no desire in it at all. So there is no doer here at all, the Self is only the witness of it.

देह में अपनी कोई इच्छा नहीं होती, वह जड़ है, उसमें कुछ भी चाहने की शक्ति नहीं है। इसलिए यहाँ कोई करने वाला नहीं है, आत्मा तो केवल इसका देखने वाला है।

6.29.36

यथा दीपो निवातस्थः स्वात्मन्येवावतिष्ठते । साक्षिवत्सर्वभावेषु तथा तिष्ठेज्जगत्स्थितौ ॥ ३६ ॥

yathā dīpo nivātasthaḥ svātmanyevāvatiṣṭhate | sākṣivatsarvabhāveṣu tathā tiṣṭhejjagatsthitau || 36 ||

As a lamp in a place with no wind stands still in itself, so one should remain like a witness toward everything, while living on in the world.

जैसे हवा रहित जगह में रखा दीपक स्थिर होकर अपने आप में टिका रहता है, वैसे ही संसार में रहते हुए हर चीज़ के प्रति साक्षी की तरह स्थिर रहना चाहिए।

6.29.37

यथा दिवसकर्माणि भास्करः स्वस्थ एव सन् । करोत्येवमिमां राम कुरु पार्थिवसंस्थितिम् ॥ ३७ ॥

yathā divasakarmāṇi bhāskaraḥ svastha eva san | karotyevamimāṃ rāma kuru pārthivasansthitim || 37 ||

Just as the sun, remaining unmoved in itself, still carries out the work of the day, so too, Rama, carry out your work as a king.

जैसे सूर्य स्वयं में स्थिर रहते हुए भी दिन भर के सारे काम करता है, वैसे ही, हे राम, तुम भी राजा के अपने काम करते रहो।

6.29.38

अस्मिन्नसन्मये देहगृहे शून्ये समुत्थिते । सत्तामुपगते मिथ्याबालकल्पितयक्षवत् ॥ ३८ ॥

asminnasanmaye dehagṛhe śūnye samutthite | sattāmupagate mithyābālakalpitayakṣavat || 38 ||

This house of the body is made of what is unreal. It is empty. It has arisen, and has come to feel like something real, like a ghost that a foolish child only imagines.

यह देह का घर असत्य से बना है, खाली है। यह उठ खड़ा हुआ है और सच जैसा लगने लगा है, जैसे कोई बच्चा झूठ-मूठ में किसी भूत की कल्पना कर ले।

6.29.39

कुतोऽप्यागत्य निःसारः सर्वसज्जनवर्जितः । अहंकारः कुवेतालः प्रविष्टश्चित्तनामकः ॥ ३९ ॥

kuto'pyāgatya niḥsāraḥ sarvasajjanavarjitaḥ | ahaṃkāraḥ kuvetālaḥ praviṣṭaścittanāmakaḥ || 39 ||

Coming from who knows where, with no substance in it, shunned by every good person, the ego entered this house like an evil ghost, going by the name of the mind.

न जाने कहाँ से आकर, बिना किसी सार के, हर भले इंसान से दूर रहने वाला अहंकार, एक बुरे भूत की तरह, मन के नाम से अंदर घुस आया।

6.29.40

अस्य मा भृत्यतां गच्छ त्वमहंकारदुर्मतेः । अस्य भृत्यतया राम निरयः प्राप्यते फलम् ॥ ४० ॥

asya mā bhṛtyatāṃ gaccha tvamahaṃkāradurmateḥ | asya bhṛtyatayā rāma nirayaḥ prāpyate phalam || 40 ||

Do not become a servant to this evil-minded ego. By serving it, Rama, the reward you get is hell.

इस दुर्बुद्धि अहंकार का सेवक मत बनो। हे राम, इसकी सेवा करने से नरक ही फल के रूप में मिलता है।

6.29.41

स्वसंकल्पविलासेन देहगेहे दुराकृतिः । उन्मत्तचित्तवेतालः परिवल्गति लीलया ॥ ४१ ॥

svasaṃkalpavilāsena dehagehe durākṛtiḥ | unmattacittavetālaḥ parivalgati līlayā || 41 ||

By the play of its own imagination, this ugly, mad ghost of the mind leaps and dances about in the house of the body, as if in sport.

अपनी ही कल्पना के खेल में, यह भद्दा, पागल मन-रूपी भूत देह के घर में मस्ती से उछल-कूद करता रहता है।

6.29.42

शून्यं देहगृहं प्राप्य चित्तयक्षेण तत्कृतम् । भीता येन महान्तोऽपि समाधिनियताः स्थिताः ॥ ४२ ॥

śūnyaṃ dehagṛhaṃ prāpya cittayakṣeṇa tatkṛtam | bhītā yena mahānto'pi samādhinayatāḥ sthitāḥ || 42 ||

Having entered the empty house of the body, this is what the ghost of the mind has done: even great souls have grown afraid of it, and stay bound in meditation because of it.

देह के खाली घर में घुसकर मन के भूत ने यह किया है, इससे डरकर बड़े-बड़े लोग भी समाधि में बंधे हुए स्थिर रहते हैं।

6.29.43

चित्तवेतालमुद्वास्य स्वशरीरकमन्दिरात् । संसारशून्यनगरे न बिभेति कदाचन ॥ ४३ ॥

cittavetālamudvāsya svaśarīrakamandirāt | saṃsāraśūnyanagare na bibheti kadācana || 43 ||

Once one drives the ghost of the mind out of the temple of one's own body, one is never afraid again in the empty city of this world.

जब मन के भूत को अपने शरीर रूपी मंदिर से निकाल दिया जाता है, तो फिर संसार रूपी खाली नगर में कभी डर नहीं लगता।

6.29.44

चित्तभूताभिभूतेऽस्मिन्ये शरीरगृहे रताः । चित्रमद्यापि ते कस्माद्धटिता आत्मवत्स्थिताः ॥ ४४ ॥

cittabhūtābhibhūte'sminye śarīragṛhe ratāḥ | citramadyāpi te kasmāddhaṭitā ātmavatsthitāḥ || 44 ||

It is strange that those who delight in this body, this house possessed by the ghost of the mind, still stand today joined to it as if it were their own self.

जो लोग मन के भूत से ग्रसित इस देह रूपी घर में रम जाते हैं, यह आश्चर्य है कि वे आज भी इससे जुड़कर ऐसे खड़े रहते हैं जैसे यही उनकी आत्मा हो।

6.29.46

अहंकारबृहद्यक्षगृहे दग्धशरीरके । विहरन्नास्थया साधो न तु वै तत्किल स्थिरम् ॥ ४६ ॥

ahaṃkārabṛhadyakṣagṛhe dagdhaśarīrake | viharannāsthayā sādho na tu vai tatkil sthiram || 46 ||

Good man, that body is the great house of the ego-ghost, and it will end in fire. Even if you live there with attachment, know that it is never lasting.

हे साधो, यह शरीर अहंकार रूपी भूत का बड़ा घर है, और यह एक दिन जलकर राख हो जाएगा। भले ही तुम इसमें प्रेम से रहते हो, जान लो कि यह कभी स्थिर नहीं रहने वाला।

6.29.47

अहंकारानुचरतां त्यक्त्वा विततया धिया । अहंकारास्मृतिं प्राप्य स्वात्मैवाश्ववलम्ब्यताम् ॥ ४७ ॥

ahaṃkārānucaratāṃ tyaktvā vitatayā dhiyā | ahaṃkārāsmṛtiṃ prāpya svātmaivāśvavalambyatām || 47 ||

Give up following the ego, and with a broad mind, having forgotten the ego, quickly take hold of your own Self alone.

अहंकार का साथ छोड़कर, खुले मन से, अहंकार को भुलाकर, जल्दी से केवल अपनी आत्मा का सहारा लो।

6.29.48

अहंकारपिशाचेन ग्रस्ता ये निरयैषिणः । तेषां मोहमदान्धानां न मित्राणि न बान्धवाः ॥ ४८ ॥

ahaṃkārapiśācena grastā ye nirayaiṣiṇaḥ | teṣāṃ mohamadāndhānāṃ na mitrāṇi na bāndhavāḥ || 48 ||

Those seized by the demon of the ego are asking for hell. For them, blinded by the pride of delusion, there is no friend and no kinsman.

जो अहंकार रूपी पिशाच के वश में हैं, वे मानो नरक ही माँग रहे हैं। मोह के नशे में अंधे हो चुके उन लोगों का न कोई मित्र होता है, न कोई अपना।

6.29.49

अहंकारोपहतया बुद्ध्या या क्रियते क्रिया । विषवल्ल्या इव फलं तस्याः स्यान्मरणात्मकम् ॥ ४९ ॥

ahaṃkāropahatayā buddhyā yā kriyate kriyā | viṣavallī iva phalaṃ tasyāḥ syānmaraṇātmakam || 49 ||

Any action done with a mind struck by the ego bears a deadly fruit, like the fruit of a poison vine.

जो भी काम अहंकार से भरी बुद्धि के साथ किया जाता है, उसका फल विषबेल के फल जैसा घातक होता है।

6.29.50

विवेकधैर्यहीनेन स्वाहंकारमहोत्सवः । मूर्खेणालम्बितो येन नष्टमेवाशु विद्धि तम् ॥ ५० ॥

vivekadhairyaheena svāhaṃkāramahotsavaḥ | mūrkhenālambito yena naṣṭamevāśu viddhi tam || 50 ||

Know that whatever fool, lacking good sense and steadiness, takes up the great festival of his own ego, is destroyed at once.

जो भी मूर्ख विवेक और धैर्य से रहित होकर अपने अहंकार के बड़े उत्सव में डूब जाता है, जान लो कि वह तुरंत नष्ट हो जाता है।

6.29.51

अहंकारपिशाचेन वराका ये वशीकृताः । त एते नरकाग्नीनां राघवेन्धनतां गताः ॥ ५१ ॥

ahaṃkārapiśācena varākā ye vaśīkṛtāḥ | te ete narakāgnīnāṃ rāghavenadhanatāṃ gatāḥ || 51 ||

Rama, those poor wretches conquered by the demon of the ego have become nothing but fuel for the fires of hell.

हे राम, जो बेचारे अहंकार रूपी पिशाच के वश में आ जाते हैं, वे नरक की आग के लिए ईंधन बनकर रह जाते हैं।

6.29.52

अहंकारोरगो यस्य परिस्फूर्जति कोटरे । स्वदेहपादपोऽधीरैरचिरेण निपात्यते ॥ ५२ ॥

ahaṃkāroraго yasya parisfhūrjati koṭare | svadehapādopo'dhīrairacireṇa nipātyate || 52 ||

The tree of one's own body, in whose hollow the snake of the ego coils and hisses, is soon brought down by its restless stirring.

अपने शरीर का वृक्ष, जिसके खोखल में अहंकार रूपी साँप कुंडली मारे फुँफकारता है, उसकी बेचैन हलचल से जल्द ही गिर जाता है।

6.29.53

अहंकारपिशाचोऽस्मिन्देहे तिष्ठतु यातु वा । त्वमेनमालोकय मा मनसा महतां वर ॥ ५३ ॥

ahaṃkārapiśāco'smindehe tiṣṭhatu yātu vā | tvamenamālokaya mā manasā mahatāṃ vara || 53 ||

Whether the demon of the ego stays in this body or leaves it, best of the noble, just watch it, do not take it into your mind.

हे महापुरुषों में श्रेष्ठ, चाहे अहंकार रूपी पिशाच इस देह में रहे या चला जाए, तुम बस उसे देखते रहो, उसे अपने मन में मत लाओ।

6.29.54

अवधूतो ह्यवज्ञातश्चेतसैव तिरस्कृतः । अहंकारपिशाचस्ते नेह किंचित्करिष्यति ॥ ५४ ॥

avadhūto hyavajñātaścetasaiva tiraskṛtaḥ | ahaṃkārapiśācaste neha kiṃcitkariṣyati || 54 ||

Once it is shaken off, disregarded, and pushed aside by your own mind, this demon of the ego of yours will not be able to do anything here.

जब मन ही उसे झटक दे, अनदेखा कर दे और दुत्कार दे, तो तुम्हारा यह अहंकार रूपी पिशाच यहाँ कुछ भी नहीं कर पाएगा।

6.29.55

देहालये स्फुरत्यस्मिन् राम चित्तपिशाचके । अस्यानन्तविलासस्य किमिवागतमात्मनः ॥ ५५ ॥

dehālaye sphuratyasmin rāma cittapiśācake | asyānantavilāsasya kimivāgatamātmanaḥ || 55 ||

Rama, even while this ghost of the mind flickers in the house of the body, what real harm has come to the Self, whose play has no end?

हे राम, देह के इस घर में मन रूपी भूत के हलचल मचाने पर भी, उस आत्मा का क्या बिगड़ा है, जिसकी लीला अनंत है?

6.29.56

चित्तयक्षाभिभूतानां याः पुंसां विततापदः । शक्यन्ते परिसंख्यातुं न ता वर्षशतैरपि ॥ ५६ ॥

cittayakṣābhibhūtānāṃ yāḥ puṃsāṃ vitatāpadaḥ | śakyante parisaṃkhyātuṃ na tā varṣaśatairapi || 56 ||

The countless troubles of men overpowered by the ghost of the mind cannot be counted even in a hundred years.

मन रूपी भूत के वश में आए मनुष्यों की जो अनगिनत मुसीबतें हैं, उन्हें सौ साल में भी गिना नहीं जा सकता।

6.29.57

हा हा मृतोऽस्मि दग्धोऽस्मीत्येता वै दुःखवृत्तयःअहंकारपिशाचस्य शक्तयोऽन्यस्य नानघ ॥ ५७ ॥

hā hā mṛto'smi dagdho'smītyetā vai duḥkhavṛttayaḥahaṃkārapiśācasya śaktayo'nyasya nānagha || 57 ||

Alas, I am dying, I am burning, these cries of suffering, sinless one, are the powers of the demon of the ego, and of nothing else.

हाय हाय, मैं मर रहा हूँ, मैं जल रहा हूँ, हे निष्पाप, दुख के ये सारे रूप और कुछ नहीं, बस अहंकार रूपी पिशाच की ही शक्तियाँ हैं।

6.29.58

सर्वगोऽपि यथाकाशः संबन्धो नेह केनचित्सर्वगोऽपि तथैवात्मा नाहंकारेण संगतः ॥ ५८ ॥

sarvago'pi yathākāśaḥ saṃbandho neha kenacitsarvago'pi tathaivātmā nāhaṃkāreṇa saṃgataḥ || 58 ||

Just as space, though it reaches everywhere, is not bound to anything, so too the Self, though it reaches everywhere, is not joined to the ego.

जैसे आकाश हर जगह होते हुए भी किसी से बँधा नहीं होता, वैसे ही आत्मा भी हर जगह होते हुए भी अहंकार से जुड़ी हुई नहीं है।

6.29.59

यत्करोति यदादत्ते देहयन्त्रमिदं चलम्वातरज्जुयुतं राम तदहंकारचेष्टितम् ॥ ५९ ॥

yatkaroti yadādatte dehayantramidaṃ calamvātarajjuyutaṃ rāma tadahaṃkāraceṣṭitam || 59 ||

Whatever this moving machine of the body does, whatever it takes hold of, Rama, this body strung with ropes of wind, all of that is the working of the ego.

यह चलता-फिरता देह रूपी यंत्र जो कुछ भी करता है, जो कुछ भी ग्रहण करता है, हे राम, हवा की डोरियों से बँधा यह यंत्र, यह सब अहंकार की ही करतूत है।

6.29.60

वृक्षोत्पत्तौ यथा हेतुरकर्त्रपि किलाम्बरमात्मसंस्थस्तथेहात्मा चित्तचेष्टासु कारणम् ॥ ६० ॥

vṛkṣotpattau yathā heturakartrapi kilāmbaramātmasaṃsthastathehātmā cittaceṣṭāsu kāraṇam || 60 ||

Just as space, though it does nothing, is still a cause of a tree's growth, simply by being there, so too the Self, simply by being there, is the cause behind the workings of the mind.

जैसे आकाश कुछ किए बिना भी, बस अपनी जगह टिके रहकर, पेड़ के उगने का कारण बनता है, वैसे ही आत्मा भी, बस अपने आप में टिकी रहकर, मन की हलचलों का कारण बनती है।

6.29.61

आत्मसंनिधिमात्रेण स्फुरत्यात्तवपुर्मनःदीपसंनिधिमात्रेण कुड्यरूपमिवामलम् ॥ ६१ ॥

ātmasaṃnidhimātreṇa sphuratyāttavapurmanaḥdīpasaṃnidhimātreṇa kuḍyarūpamivāmalam || 61 ||

Just by the Self being near, the mind takes on a body and begins to shine, the way a wall's clear shape appears just by a lamp being near it.

जैसे केवल दीपक के पास होने से दीवार का साफ रूप दिखाई देने लगता है, वैसे ही केवल आत्मा के पास होने से मन देह धारण कर चमकने लगता है।

6.29.62

अपि विश्लिष्टयो राम नित्यमेवात्मचित्तयोः। द्यावापृथिव्योरिव कः संबन्धः प्रकटान्धयोः ॥ ६२ ॥

api viśliṣṭayo rāma nityamevātmacittayoḥ| dyāvāpṛthivyoriva kaḥ saṃbandhaḥ prakaṭāndhayoḥ || 62 ||

Rama, the self and the mind are always separate from each other. What real connection can there be between them, any more than between the sky, which is open and bright, and the earth, which is blind?

राम, आत्मा और मन हमेशा एक-दूसरे से अलग रहते हैं। इनके बीच सच में कोई नाता कैसे हो सकता है, जैसे आकाश और धरती के बीच कोई नाता नहीं होता, जिनमें एक उजला और खुला है और दूसरी अंधी है।

6.29.63

चपलस्पन्दनेराभिरात्मशक्तिभिरावृतम्। चित्तमात्मेति मौर्ख्येण दृश्यते रघुनन्दन ॥ ६३ ॥

capalaspandanerābhirātmaśaktibhirāvṛtam| cittamātmeti maurkhyeṇa dṛśyate raghunandana || 63 ||

Rama, wrapped in these quick, flickering movements, which are powers belonging to the self, the mind gets mistaken for the self. That is pure foolishness.

राम, इन्हीं चंचल हरकतों में लिपटा हुआ मन, जो असल में आत्मा की ही ताकतें हैं, आत्मा समझ लिया जाता है। यह निरी मूर्खता है।

6.29.64

आत्मा प्रकाशरूपो हि नित्यः सर्वगतो विभुः। चित्तं शठमहंकारं विद्धि हार्दं बृहत्तमः ॥ ६४ ॥

ātmā prakāśarūpo hi nityaḥ sarvagato vibhuḥ| cittaṃ śaṭhamahaṅkāraṃ viddhi hārdaṃ bṛhattamaḥ || 64 ||

The self is truly the form of light, eternal, present everywhere, all-powerful. Know the mind to be a cunning ego, sitting in the heart, a thick darkness.

आत्मा सचमुच प्रकाश का रूप है, वह सदा रहने वाली, हर जगह मौजूद और सब कुछ करने में समर्थ है। जान लो कि मन एक चालाक अहंकार है, जो हृदय में बैठा है, और वह घना अंधेरा है।

6.29.65

आत्मासि वस्तुतस्त्वं हि सर्वज्ञो न मनो भृशम्। दूरे कुरु मनोमोहं किमेतेनाभिसंगतः ॥ ६५ ॥

ātmāsi vastutastvaṃ hi sarvajño na mano bhṛśam| dūre kuru manomohaṃ kimetenābhisaṅgataḥ || 65 ||

You are the self. In truth you are the one who knows everything, not the mind at all. Throw the delusion of the mind far away. What use is there in clinging to it?

तुम आत्मा हो। सच में तुम वही हो जो सब कुछ जानता है, तुम मन बिलकुल भी नहीं हो। मन के इस भ्रम को दूर फेंक दो। इससे चिपके रहने का क्या फायदा?

6.29.66

पिशाचोऽपि मनो राम शून्यदेहगृहे स्थितः। भावयत्येष दुष्टात्मा मौनमुत्तम संस्पृशन् ॥ ६६ ॥

piśāco'pi mano rāma śūnyadehagṛhe sthitaḥ| bhāvayatyēṣa duṣṭātmā maunamuttama saṃspṛśan || 66 ||

The mind, Rama, best of men, is like a ghoul living in the empty house of the body. This wicked being keeps imagining things, even while it brushes against silence itself.

राम, हे श्रेष्ठ पुरुष, मन उस पिशाच की तरह है जो शरीर के खाली घर में रहता है। यह दुष्ट प्राणी चुप्पी को छूकर भी लगातार कुछ न कुछ गढ़ता रहता है।

6.29.67

भवप्रदमकल्याणं धैर्यसर्वस्वहारिणम् । मनःपिशाचमुत्सृज्य योऽसि स त्वं स्थिरो भव ॥ ६७ ॥

bhavapradamakalyāṇaṃ dhairyasarvasvahāriṇam | manaḥpiśācamutsṛjya yo'si sa tvaṃ sthiro bhava || 67 ||

Give up this ghoul called the mind. It leads to rebirth, it brings nothing good, and it steals away all your courage. Give it up, and be steady as the self that you really are.

मन नाम के इस पिशाच को छोड़ दो। यह जन्म-मरण की ओर ले जाता है, इससे कुछ भला नहीं होता, और यह तुम्हारा सारा धैर्य छीन लेता है। इसे छोड़कर, जो आत्मा तुम सचमुच हो, उसमें स्थिर हो जाओ।

6.29.68

चित्तयक्षदृढाक्रान्तं न शास्त्राणि न बान्धवाः । शक्नुवन्ति परित्रातुं गुरवो न च मानवम् ॥ ६८ ॥

cittayakṣadṛḍhākrāntaṃ na śāstrāṇi na bāndhavāḥ | śaknuvanti paritrātuṃ guravo na ca mānavam || 68 ||

When a man is firmly seized by the mind-demon, neither scriptures, nor relatives, nor teachers can save him.

जब किसी आदमी को मन रूपी यक्ष कसकर जकड़ लेता है, तो न शास्त्र उसे बचा सकते हैं, न रिश्तेदार, न गुरु।

6.29.69

संशान्तचित्तवेतालं गुरुशास्त्रार्थबान्धवाः । शक्नुवन्ति समुद्धर्तुं स्वल्पपङ्कान्मृगं यथा ॥ ६९ ॥

saṃśāntacittavetālaṃ guruśāstrārthabāndhavāḥ | śaknuvanti samuddhartuṃ svalpapaṅkānmṛgaṃ yathā || 69 ||

But once the mind-ghost has grown calm, teachers, scriptures, purpose, and relatives can lift a man up, the way a deer is pulled out of shallow mud.

लेकिन जब मन रूपी वेताल शांत हो जाता है, तो गुरु, शास्त्र, उद्देश्य और रिश्तेदार उस आदमी को ऊपर उठा सकते हैं, जैसे किसी हिरण को हल्की कीचड़ से बाहर निकाला जाता है।

6.29.70

अस्मिञ्जगच्छून्यपुरे सर्वमेव प्रदूषितम् । देहगेहं प्रमत्तेन चित्तयक्षेण वल्गता ॥ ७० ॥

asmiñjagacchūnyapure sarvameva pradūṣitam | dehagehaṃ pramattena cittayakṣeṇa valgatā || 70 ||

In this empty city that is the world, everything has been fouled, even the house of the body, by the reckless mind-demon that leaps and roams about inside it.

इस दुनिया रूपी सूने शहर में सब कुछ गंदा हो चुका है, यहाँ तक कि शरीर रूपी घर भी, उस लापरवाह मन रूपी यक्ष के कारण जो इसके भीतर उछल-कूद करता रहता है।

6.29.71

चित्तवेतालवलिता समस्ता देहखण्डजा । इयं जगदरण्यानी शून्या कस्य न भीतये ॥ ७१ ॥

cittavetālavalitā samastā dehakhaṇḍajā | iyaṃ jagadaraṇyānī śūnyā kasya na bhītaye || 71 ||

This wilderness that is the world is empty, entirely made of broken-up bodies, and wound all through with the mind-ghost. Who would not be afraid of it?

यह दुनिया रूपी जंगल सूना है, यह पूरी तरह टूटे हुए शरीरों से बना है, और मन रूपी वेताल ने इसे पूरी तरह लपेट रखा है। ऐसे में कौन इससे नहीं डरेगा?

6.29.72

जगन्नगर्यामस्यां तु शान्तचित्तपिशाचकम् । देहगेहं कतिपयैः सेव्यते सद्भिरेव यत् ॥ ७२ ॥

jagannagaryāmasyāṃ tu śāntacittapiśācakam | dehagehaṃ katipayaiḥ sevyate sadbhireva yat || 72 ||

But in this city that is the world, only a few good people live in a body-house whose ghoul-mind has grown quiet.

लेकिन इस दुनिया रूपी शहर में, कुछ ही अच्छे लोग ऐसे शरीर रूपी घर में रहते हैं जिसका पिशाच रूपी मन शांत हो चुका है।

6.29.73

इह संश्रूयते या या दिक् सैव रघुनन्दन । प्रमत्तमोहवेतालैः पूर्णा देहश्मशानकैः ॥ ७३ ॥

iha saṃśrūyate yā yā dik saiva raghunandana | pramattamohavetālaiḥ pūrṇā dehaśmaśānakaiḥ || 73 ||

Rama, whichever direction you hear about, that very direction is full of reckless, deluded ghosts, haunting bodies as if they were cremation grounds.

राम, तुम जिस भी दिशा के बारे में सुनो, वह दिशा लापरवाह और भ्रमित वेतालों से भरी है, जो शरीरों को श्मशान की तरह भटकते रहते हैं।

6.29.74

अस्यां जगदरण्यान्यां मुह्यन्तं मुग्धबालवत् । स्वयमाराध्य धैर्याशमात्मनात्मानमुद्धरेत् ॥ ७४ ॥

asyāṃ jagadaraṇyānyāṃ muhyantaṃ mugdhabālavat | svayamārādhya dhairyāśamātmanātmānamuddharet || 74 ||

In this wilderness that is the world, a person grows confused like a bewildered child. He must win steadiness for himself, by himself, and pull himself up by his own self.

इस दुनिया रूपी जंगल में इंसान एक भोले बच्चे की तरह उलझ जाता है। उसे खुद ही अपने लिए धैर्य पाना होगा, और खुद ही अपने बल पर खुद को ऊपर उठाना होगा।

6.29.76

अस्मिन्महीतलारण्ये चरन्ति मृगपोतकाः । त्वमज्ञानगजं भुक्त्वा सैंहीं वृत्तिमुपाश्रय ॥ ७६ ॥

asminmahītalāraṇye caranti mṛgapotakāḥ | tvamajñānagajaṃ bhuktvā saiṃhīṃ vṛttimupāśraya || 76 ||

In this forest that is the earth's surface, only young deer wander about. Devour the elephant of ignorance, and take up the life of a lion.

धरती की सतह के इस जंगल में सिर्फ हिरण के बच्चे घूमते हैं। तुम अज्ञान रूपी हाथी को निगल जाओ, और शेर की तरह जीना अपना लो।

6.29.77

अन्ये नरमृगा मुग्धा जम्बूद्वीपे स्वजङ्गले । विहरन्ति यथा राम तथा मा विहरानघ ॥ ७७ ॥

anye naramṛgā mugdhā jambūdvīpe svajaṅgale | viharanti yathā rāma tathā mā viharānagha || 77 ||

Rama, other bewildered deer-like men roam in their own jungle in Jambudvipa. Do not roam about like that, blameless one.

राम, दूसरे भोले और हिरण जैसे लोग जम्बूद्वीप में अपने ही जंगल में भटकते रहते हैं। हे निर्दोष, तुम वैसे मत भटकना।

6.29.78

अत्यल्पकालशिशिरे कर्दमालेपदायिनि मङ्क्तव्यं बन्धुरूपे महिषेणेव पल्वले ॥ ७८ ॥

atyalpakālaśiśire kardamālepadāyinina maṅktavyaṃ bandhurūpe mahiṣeṇeva palvale || 78 ||

A person should not sink into something that looks like a kinsman but only smears you with mud for a moment's coolness, the way a buffalo sinks into a muddy pond.

इंसान को उस चीज़ में नहीं डूबना चाहिए जो रिश्तेदार जैसी दिखती है पर पल भर की ठंडक के बदले सिर्फ कीचड़ पोत देती है, जैसे भैंसा किसी कीचड़ भरे तालाब में डूब जाता है।

6.29.79

भोगाभोगा बहिष्कार्या आर्यस्यानुसरेत्पदम्प्रविचार्य महार्थं स्वमेकमात्मानमाश्रयेत् ॥ ७९ ॥

bhogābhogā bahiṣkāryā āryasyānusaretpadampravicārya mahārthaṃ svamekamātmānamāśrayet || 79 ||

Give up pleasures of every kind. Follow the path of the noble. Think it over carefully, weigh the great goal, and take refuge in your own single self.

हर तरह के सुख-भोग को छोड़ दो। श्रेष्ठ जनों के रास्ते पर चलो। अच्छी तरह सोच-विचार करके, बड़े लक्ष्य को तौलकर, अपनी एक अकेली आत्मा की शरण लो।

6.29.80

अपवित्रस्य तुच्छस्य दुर्भगस्य दुराकृतेःदेहस्यार्थं न मङ्क्तव्यं चिन्ताचण्डी सुदारुणा ॥ ८० ॥

apavitrasya tucchasya durbhagasya durākṛteḥdehasyārthaṃ na maṅktavyaṃ cintācaṇḍī sudāruṇā || 80 ||

For the sake of this body, which is impure, worthless, unlucky, and ugly, one should not become attached. Worry over it is as fierce and terrible as the goddess Chandi.

इस शरीर के लिए, जो अपवित्र, तुच्छ, अभागा और भद्दा है, इंसान को मोह नहीं करना चाहिए। इसकी चिंता देवी चंडी जितनी ही भयंकर और डरावनी है।

6.29.81

अन्येन रचितो देहो यक्षेणान्येन संश्रितःदुःखमन्यस्य भोक्तान्यश्चित्रेयं मौर्ख्यचक्रिका ॥ ८१ ॥

anyena racito deho yakṣeṇānyena saṃśritaḥduḥkhamanyasya bhoktānyaścitreyaṃ maurkhyacakrikā || 81 ||

The body is made by one, and inhabited by another, a demon. The suffering belongs to one, and the one who enjoys it is yet another. Strange is this wheel of foolishness.

शरीर को कोई और बनाता है, और इसमें कोई और यक्ष आकर बसता है। दुख किसी और का होता है, और भोगने वाला कोई और ही होता है। मूर्खता का यह चक्र कितना अजीब है।

6.29.82

यथैकरूपा घनता दृषदोऽस्त्यात्मनस्तथासत्तामात्रैकसामान्यादितरस्याप्यसंभवात् ॥ ८२ ॥

yathaikarūpā ghanatā dṛṣado'styātmanastathāsattāmātraikasāmānyāditarasyāpyasaṃbhavāt || 82 ||

Just as the hardness of a stone has only one form, so it is with the self too, because, once there is only bare existence in common, nothing else is possible.

जैसे पत्थर की कठोरता का एक ही रूप होता है, वैसे ही आत्मा का भी बस एक ही रूप है, क्योंकि जहाँ सिर्फ शुद्ध अस्तित्व एक जैसा हो, वहाँ कुछ और हो ही नहीं सकता।

6.29.83

यथोपलस्य घनता मानसादि तथात्मनः । सत्तामात्रादभिन्नत्वादभावादस्य संस्थितेः ॥ ८३ ॥

yathopalasya ghanatā mānasādi tathātmanaḥ | sattāmātrādabhinnatvādabhāvādasya saṃsthiteḥ || 83 ||

Just as the hardness of a stone is not separate from the stone, so the mind and its states are not separate from the self, because they are not different from bare existence, and because the mind has no standing of its own apart from it.

जैसे पत्थर की कठोरता पत्थर से अलग नहीं होती, वैसे ही मन और उसकी हालतें आत्मा से अलग नहीं हैं, क्योंकि वे शुद्ध अस्तित्व से अलग नहीं हैं, और मन का अपना कोई अलग ठिकाना है ही नहीं।

6.29.84

यथोपलस्योपलता घटस्य घटता यथा । सत्तामात्रादभिन्नैव मानसादि तथात्मनः ॥ ८४ ॥

yathopalasyopalatā ghaṭasya ghaṭatā yathā | sattāmātrādabhinnaiva mānasādi tathātmanaḥ || 84 ||

Just as the stoniness of a stone and the potness of a pot are nothing but bare existence, so too the mind and its states are nothing but the self.

जैसे पत्थर का पत्थर होना और घड़े का घड़ा होना शुद्ध अस्तित्व के सिवा कुछ नहीं है, वैसे ही मन और उसकी हालतें भी आत्मा के सिवा कुछ नहीं हैं।

6.29.85

अत्रेमामपरां दृष्टिं महामोहविनाशिनीम् । शृणु या कथिता पूर्वं मम कैलासकन्दरे ॥ ८५ ॥

atremāmaparāṃ dṛṣṭiṃ mahāmohavināśinīm | śṛṇu yā kathitā pūrvaṃ mama kailāsakandare || 85 ||

Now listen to this other teaching too, the one that destroys great delusion, which was told to me before, in a cave on Kailasa.

अब यह दूसरी शिक्षा भी सुनो, जो बड़े से बड़े भ्रम को मिटा देती है, जो मुझे पहले कैलास की एक गुफा में बताई गई थी।

6.29.86

संसारदुःखशान्त्यर्थं देवेनार्धेन्दुमौलिना । अस्तीन्दुकरसंभारभासुरः पारगो दिवः ॥ ८६ ॥

saṃsāraduḥkhaśāntyarthaṃ devena ardhendumaulinā | astīndukarasaṃbhārabhāsuraḥ pārago divaḥ || 86 ||

This was told, to calm the suffering of this world, by the god who wears the crescent moon on his head. There is a mountain, shining with a flood of moonlight, that rises higher than the sky.

यह बात दुनिया के दुख को शांत करने के लिए, आधे चाँद को सिर पर धारण करने वाले देवता ने बताई थी। एक पर्वत है, जो चाँदनी की बाढ़ जैसा चमकता है, और आकाश से भी ऊँचा उठा हुआ है।

6.29.87

कैलासो नाम शैलेन्द्रो गौरीरमणमन्दिरम् । तत्रास्ते भगवान्देवो हरश्चन्द्रकलाधरः ॥ ८७ ॥

kailāso nāma śailendro gaurīramanamandiram | tatrāste bhagavāndevo haraścandrakalādharaḥ || 87 ||

There is a lord among mountains named Kailasa, the home of Gauri's beloved. There the divine lord Hara lives, who wears the crescent of the moon.

कैलास नाम का एक पर्वतों का राजा है, जो गौरी के प्रिय का घर है। वहीं भगवान हर रहते हैं, जो चाँद की कला को धारण करते हैं।

6.29.88

तं पूजयन्महादेवं तस्मिन्नेव गिरौ पुरा । कदाचिदवसं गङ्गातटे विरचिताश्रमः ॥ ८८ ॥

taṃ pūjayanmahādevaṃ tasminneva girau purā| kadācidavasaṃ gaṅgātaṭe viracitāśramaḥ || 88 ||

Worshipping that great god on that very mountain, I once lived there long ago, on the bank of the Ganga, after building a hermitage.

उसी पर्वत पर उस महान देवता की पूजा करते हुए, मैं बहुत पहले वहाँ रहा था, गंगा के किनारे, एक आश्रम बनाकर।

6.29.89

तपोर्थं तापसाचारे चिराय रचितस्थितिः । सिद्धसंघातवलितः कृतशास्त्रार्थसंग्रहः ॥ ८९ ॥

taporthaṃ tāpasācāre cirāya racitasthitiḥ| siddhasaṃghātavalitaḥ kṛtaśāstrārthasaṃgrahaḥ || 89 ||

For the sake of austerity, I settled for a long time into the ways of an ascetic, surrounded by a crowd of perfected sages, and gathered together the meaning of the scriptures.

तप के लिए मैं लंबे समय तक एक तपस्वी की तरह वहाँ बस गया, सिद्ध साधुओं की भीड़ से घिरा हुआ, और मैंने शास्त्रों के अर्थ को इकट्ठा किया।

6.29.90

पुष्पार्थं स्यूतपुटिकः पुस्तकव्यूहसंग्रही । एवंगुणविशिष्टस्य कैलासवनकुञ्जके ॥ ९० ॥

puṣpārthaṃ syūtapuṭikaḥ pustakavyūhasaṃgrahī| evaṃguṇaviśiṣṭasya kailāsavanakuñjake || 90 ||

In a bower of the Kailasa forest I lived like this: I kept a stitched pouch for gathering flowers, and I kept a large collection of books.

कैलास के जंगल की एक कुंज में मैं इस तरह रहता था: फूल इकट्ठा करने के लिए मेरे पास एक सिली हुई थैली थी, और मेरे पास किताबों का एक बड़ा संग्रह था।

6.29.91

तपः प्रचरतो राम मम कालोऽत्यवर्तत । अथैकदा कदाचित्तु बहुलस्याष्टमे दिने ॥ ९१ ॥

tapaḥ pracarato rāma mama kālo'tyavartata| athaikadā kadācittu bahulasyāṣṭame dine || 91 ||

Rama, my time passed like this while I practiced austerity. Then, once, on a certain day, it was the eighth day of the dark half of the month.

राम, तप करते हुए मेरा समय इसी तरह बीतता गया। फिर एक बार, किसी दिन, वह कृष्ण पक्ष की अष्टमी का दिन था।

6.29.92

गते श्रावणपक्षस्य रात्र्यग्रे क्षयमागते । दिक्षु संशान्तरूपासु काष्ठमौनस्थितास्विव ॥ ९२ ॥

gate śrāvaṇapakṣasya rātryagre kṣayamāgate| dikṣu saṃśāntarūpāsu kāṣṭhamounasthitāsviva || 92 ||

The dark fortnight of the month of Shravana had passed and come to its end. Night was falling, and on every side the directions had grown calm and hushed, as still and silent as wood.

श्रावण महीने का कृष्ण पक्ष बीत चुका था और अपने अंत पर पहुँच गया था। रात होने लगी थी, और चारों ओर दिशाएँ शांत और खामोश हो गई थीं, बिल्कुल लकड़ी जैसी स्थिर और चुप।

6.29.93

खड्गच्छेद्यान्धकारेषु कुञ्जेषु गहनेषु च । एतस्मिन्नन्तरे तत्र यामार्धे प्रथमे गते ॥ ९३ ॥

khadgacchedyāndhakāreṣu kuñjeṣu gahaneṣu ca | etasminnantare tatra yāmārdhe prathame gate || 93 ||

In the groves and the thick woods, the darkness was so deep it could be cut with a sword. Meanwhile, there, half of the first watch of the night had passed.

झुरमुटों और घने जंगलों में अंधेरा इतना गहरा था कि उसे तलवार से काटा जा सकता था। इसी बीच, वहाँ रात के पहले पहर का आधा भाग बीत चुका था।

6.29.94

समाधिं तनुतां नीत्वा स्थितोहं बाह्यमग्नदृक् । अपश्यं कानने तेजो झटित्येव समुत्थितम् ॥ ९४ ॥

samādhiṃ tanutāṃ nītvā sthitohaṃ bāhyamagnadṛk | apaśyaṃ kānane tejo jhaṭityeva samutthitam || 94 ||

I had loosened my deep trance and sat there with my gaze now turned outward. Suddenly I saw a light rise up in the forest.

मैंने अपनी गहरी समाधि को ढीला कर लिया था और बाहर की ओर दृष्टि किए बैठा था। अचानक मैंने जंगल में एक रोशनी उठती देखी।

6.29.95

शुभ्राभ्रशतसंकाशं चन्द्रबिम्बगणोपमम् । प्रकटीकृतदिक्कुञ्ज तदालोक्य मया स्मयात् ॥ ९५ ॥

śubhrābhraśatasaṃkāśaṃ candrabimbagṇopamam | prakaṭīkṛtadikkuñja tadālokya mayā smayāt || 95 ||

It looked like a hundred bright clouds, like a cluster of moon discs, and it lit up the groves in every direction. Seeing it, I was filled with wonder.

वह सैकड़ों उजले बादलों जैसी लगती थी, चाँद के गोलों के समूह जैसी, और उसने चारों दिशाओं के कुंजों को रोशन कर दिया था। उसे देखकर मैं आश्चर्य से भर गया।

6.29.96

अन्तःप्रकाशशालिन्या बहिर्दृष्ट्यावलोकितम् । यावत्पश्यामि तं सानुं प्राप्तश्चन्द्रकलाधरः ॥ ९६ ॥

antaḥprakāśaśālinyā bahirdṛṣṭyāvalokitam | yāvatpaśyāmi taṃ sānuṃ prāptaścandrakalādharaḥ || 96 ||

I watched it with outward eyes that were lit by an inner light. And as I kept looking at that hilltop, there arrived the one who wears the crescent moon.

मैंने उसे बाहरी आँखों से देखा, जो भीतर की रोशनी से जगमगा रही थीं। और जैसे ही मैं उस पहाड़ी की चोटी को देखता रहा, वहाँ चंद्रमा की कला धारण करने वाले आ पहुँचे।

6.29.97

गौरीकरार्पितकरो नन्दिप्रोत्सारिताग्रगः । शिष्यान्संबोध्य तत्रस्थान्गृहीत्वार्घ्यं सुसंयतः ॥ ९७ ॥

gaurīkarārpitakaro nandiprotsāritāgragaḥ | śiṣyānsaṃbodhya tatrastāngṛhītvārghyaṃ susaṃyataḥ || 97 ||

His hand rested in Gauri's hand, and Nandi went ahead of him, clearing the way. He spoke to the disciples standing there, and, composed, accepted the water offered to him.

उनका हाथ गौरी के हाथ में था, और नंदी उनके आगे-आगे चलकर रास्ता साफ कर रहे थे। उन्होंने वहाँ खड़े शिष्यों से बात की, और शांत भाव से चढ़ाया गया जल स्वीकार किया।

6.29.98

अगमं सुमनास्तस्य दृष्टिपूतमहं पुरः । तत्र पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा दूरादेव त्रिलोचनः ॥ ९८ ॥

agamaṃ sumanāstasya dṛṣṭipūtamahaṃ puraḥ | tatra puṣpāñjaliṃ dattvā dūrādeva triločanaḥ || 98 ||

I went forward with a glad heart, my sight made pure by his gaze. There, from a distance, I offered a handful of flowers to the three eyed god.

मैं प्रसन्न मन से आगे बढ़ा, उनकी दृष्टि से मेरी नज़र पवित्र हो गई थी। वहाँ, दूर से ही, मैंने उन तीन आँखों वाले देवता को फूलों की अंजलि अर्पित की।

6.29.99

दत्तार्घ्येण मया देवः संप्रणम्याभिवन्दितः । ततश्चन्द्रप्रभासख्या ऋज्व्या शीतलया तया ॥ ९९ ॥

dattārghyeṇa mayā devaḥ saṃpraṇamyābhivanditaḥ | tataścandraprabhāsakhyā ṛjvyā śītalayā tayā || 99 ||

I offered him arghya, bowed low, and paid homage to the god. And she joined me in honoring him too, that honest and cool woman, moonlight's own companion.

मैंने उन्हें अर्घ्य चढ़ाया, झुककर प्रणाम किया, और देवता का सम्मान किया। और उन्होंने भी मेरे साथ उनका सम्मान किया, वह सीधी-सच्ची, शीतल स्त्री, जो चाँदनी की सखी थी।

6.29.101

अर्घ्यं पुष्पं तथा पाद्यमभ्युपेत्यार्पितं मया । मन्दारपुष्पाञ्जलयो विकीर्णा बहवः पुरः ॥ १०१ ॥

arghyaṃ puṣpaṃ tathā pādyamabhyupetyārpi taṃ mayā | mandārapuṣpāñjalayo vikīrṇā bahavaḥ puraḥ || 101 ||

I went up to her and offered arghya, flowers, and water for her feet. Many handfuls of mandara flowers, in great number, were scattered before her.

मैं उनके पास गया और अर्घ्य, फूल तथा पैर धोने का जल अर्पित किया। मंदार के फूलों की कई अंजलियाँ उनके सामने बिखेर दी गईं।

6.29.102

नानाविधेर्नमस्कारैः स्तोत्रैश्चाभ्यर्चितः शिवः । ततो भगवती गौरी तादृश्यैव सपर्यया ॥ १०२ ॥

nānāvidhernamaskāraiḥ stotraiścābhyarcitaḥ śivaḥ | tato bhagavatī gaurī tādṛśyai va saparyayā || 102 ||

Shiva was worshipped with bows and hymns of many kinds. Then the goddess Gauri too was worshipped in the very same way.

शिव की पूजा कई प्रकार के प्रणामों और स्तुतियों से की गई। फिर देवी गौरी की भी उसी तरह पूजा की गई।

6.29.103

संपूजिता सखीयुक्ता गणमण्डलिका तथा । पूजान्ते पूर्णशीतांशुरश्मिशीतलया गिरा ॥ १०३ ॥

saṃpūjitā sakhīyuktā gaṇamaṇḍalikā tathā | pūjānte pūrṇaśītāṃśur aśmiśītalayā girā || 103 ||

She was honored together with her companions, and with the whole band of Shiva's attendants besides. When the worship ended, in a voice as cool as the light of the full moon,

उनकी सखियों के साथ-साथ शिव के गणों की पूरी टोली का भी सम्मान किया गया। पूजा समाप्त होने पर, पूर्णिमा की चाँदनी जैसी शीतल वाणी में,

6.29.104

तत्रोपविष्टं प्रोवाच मामर्धेन्दुकलाधरः । ब्रह्मन्प्रशमशालिन्यः प्राप्तविश्रान्तयः पदे ॥ १०४ ॥

tatropaviṣṭaṃ provāca māmardhendukalādharaḥ | brahmanpraśamaśālinyaḥ prāptaviśrāntayaḥ pade || 104 ||

as I sat there, he who wears the crescent moon spoke to me: Brahmin, are your thoughts, full of peace and come to rest in their place,

जब मैं वहाँ बैठा था, तब चंद्रमा की कला धारण करने वाले ने मुझसे कहा, हे ब्राह्मण, क्या तुम्हारे विचार, जो शांति से भरे हैं और अपने ठिकाने पर टिके हैं,

6.29.105

कच्चित्कल्याणकारिण्यः संविदस्ते स्थिताः परे । कच्चित्तपस्ते निर्विघ्नं कल्याणमनुवर्तते ॥ १०५ ॥

kaccitkalyāṇakāriṇyaḥ saṃvidaste sthitāḥ pare | kaccittapaste nirvighnaṃ kalyāṇamanuvartate || 105 ||

thoughts that work only good, are they established in the Highest? Does your penance go on without hindrance, and does good fortune keep following it?

वे विचार जो केवल भलाई करते हैं, क्या वे परम तत्व में स्थिर हैं? क्या तुम्हारी तपस्या बिना किसी रुकावट के चल रही है, और क्या उसके साथ मंगल भी बना हुआ है?

6.29.106

कच्चित्प्राप्यमनुप्राप्तं कच्चिच्छाम्यन्ति भीतयः । एवंवादिनि देवेशे सर्वलोकैककारिणि ॥ १०६ ॥

kaccitprāpyamanuprāptaṃ kaccicchāmyanti bhītayaḥ | evaṃvādini deveśe sarvalokaikakāriṇi || 106 ||

Has what was to be gained been gained? Have your fears been put to rest? So spoke the lord of the gods, the one maker of every world.

क्या जो पाने योग्य था वह पा लिया गया है? क्या तुम्हारे डर शांत हो गए हैं? देवताओं के स्वामी, समस्त लोकों के एकमात्र रचयिता ने इस प्रकार कहा।

6.29.107

गिरानुनयशालिन्या मयोक्तं रघुनन्दन । त्र्यक्षानुस्मृतिकल्याणवतामिह महेश्वर ॥ १०७ ॥

girānunayaśālinyā mayoktaṃ raghunandana | tryakṣānusmṛtikalyāṇavatāmiha maheśvara || 107 ||

With a voice full of humble courtesy, I answered. Rama, this is what I said: Great lord, for those who have the blessing of remembering the three eyed god in this world,

बड़ी विनम्रता भरी वाणी में मैंने उत्तर दिया। हे राम, यही मैंने कहा, हे महेश्वर, जो लोग इस संसार में तीन आँखों वाले देवता का स्मरण करने का सौभाग्य रखते हैं,

6.29.108

न किंचिदपि दुष्प्रापं न च काश्चन भीतयः । त्वदनुस्मरणानन्दपरिघूर्णितचेतसाम् ॥ १०८ ॥

na kiṃcidapi duṣprāpaṃ na ca kāścana bhītayaḥ | tvadanusmaraṇānandaparighūrṇitacetasām || 108 ||

nothing at all is hard for them to get, and they have no fear of any kind, for their minds are whirled round in the joy of remembering you.

उनके लिए कुछ भी पाना कठिन नहीं है, और उन्हें किसी भी तरह का भय नहीं रहता, क्योंकि उनका मन आपके स्मरण के आनंद में डूबकर घूमता रहता है।

6.29.109

न ते सन्ति जगत्कोशे प्रणमन्ति न ये पुनः । ते देशास्ते जनपदास्ता दिशस्ते च पर्वताः ॥ १०९ ॥

na te santi jagatkośe praṇamanti na ye punaḥ | te deśāste janapadāstā diśaste ca parvatāḥ || 109 ||

There is no one in this whole world who does not bow down to you. The same is true of those lands, those countries, those directions, and those mountains

इस पूरे संसार में कोई ऐसा नहीं है जो आपके आगे न झुके। वही बात उन प्रदेशों, उन देशों, उन दिशाओं और उन पर्वतों के लिए भी सच है

6.29.110

त्वदनुस्मरणैकान्तधियो यत्र स्थिता जनाः । फलं भूतस्य पुण्यस्य वर्तमानस्य सेचनम् ॥ ११० ॥

tvadanusmaraṇaikāntadhiyo yatra sthitā janāḥ | phalaṃ bhūtasya puṇyasya vartamānasya secanaṃ || 110 ||

where people live whose minds are fixed only on remembering you. That is the fruit of merit earned in the past, and it nourishes the merit of the present.

जहाँ ऐसे लोग रहते हैं जिनका मन केवल आपके स्मरण में लगा रहता है। यह बीते हुए पुण्य का फल है, और यह वर्तमान के पुण्य को सींचता है।

6.29.111

तनोति चैष्यतो बीजं त्वदनुस्मरणं प्रभो । ज्ञानामृतैककलशो धृतिज्योत्स्नानिशाकरः ॥ १११ ॥

tanoti caiṣyato bījaṃ tvadanusmaraṇaṃ prabho | jñānāmṛtaikakalaśo dhṛtijyotsnāniśākaraḥ || 111 ||

And remembering you, my lord, also sows the seed of the merit yet to come. You are the one vessel holding the nectar of knowledge, the moon whose moonlight is steadiness.

और हे प्रभु, आपका स्मरण आने वाले पुण्य का बीज भी बोता है। आप ही ज्ञान के अमृत के एकमात्र कलश हैं, वह चंद्रमा जिसकी चाँदनी धैर्य है।

6.29.112

अपवर्गपुरद्वारं त्वदनुस्मरणं प्रभो । त्वदनुस्मरणोदारचिन्तामणिमता मया ॥ ११२ ॥

apavargapuradvāraṃ tvadanusmaraṇaṃ prabho | tvadanusmaraṇodāracintāmaṇimatā mayā || 112 ||

Remembering you, my lord, is the gate to the city of final freedom. With this generous wish granting gem that is remembering you,

हे प्रभु, आपका स्मरण मोक्ष की नगरी का द्वार है। आपके स्मरण रूपी इस उदार चिंतामणि के सहारे,

6.29.113

सर्वासामापदां मूर्ध्नि दत्तं भूतपते पदम् । इत्युक्त्वा सुप्रसन्नं तं भगवन्तं महेश्वरम् ॥ ११३ ॥

sarvāsāmāpadāṃ mūrdhni dattaṃ bhūtapate padam | ityuktvā suprasannaṃ taṃ bhagavantaṃ maheśvaram || 113 ||

I have set my foot on the head of every calamity, lord of all beings. Having said this to that greatly pleased great god,

मैंने हर विपत्ति के सिर पर अपना पैर रख दिया है, हे भूतपते। यह कहकर, उन अत्यंत प्रसन्न महादेव से,

6.29.114

अवोचं प्रणतो भूत्वा यद्राम तदिदं शृणु । भगवंस्त्वत्प्रसादेन पूर्णा मे सकला दिशः ॥ ११४ ॥

avocaṃ praṇato bhūtvā yadrāma tadidaṃ śṛṇu | bhagavaṃstvatprasādena pūrṇā me sakalā diśaḥ || 114 ||

bowing down, I said this. Rama, hear what it was: Lord, by your grace, every direction is full for me.

मैं झुककर बोला। हे राम, सुनो मैंने क्या कहा, हे भगवान, आपकी कृपा से मेरे लिए हर दिशा पूर्ण है।

6.29.115

किंतु पृच्छामि देवेश संदेहे तत्र निर्णयम्। ब्रूहि प्रसन्नया बुद्ध्या त्यक्तोद्वेगमनामयम्॥ ११५॥

kintu pṛcchāmi deveśa saṃdehe tatra nirṇayam | brūhi prasannayā buddhyā tyaktodvegamanāmayam || 115 ||

But, lord of the gods, I ask you to settle one doubt for me. Tell me with a clear mind, free of any trouble, without distress.

लेकिन, हे देवेश, मैं आपसे एक संदेह का समाधान माँगता हूँ। प्रसन्न मन से, बिना किसी बेचैनी या कष्ट के, मुझे बताइए।

6.29.116

सर्वपापक्षयकरं सर्वकल्याणवर्धनम्। देवार्चनविधानं तत्कीदृशं भवति प्रभो॥ ११६॥

sarvapāpakṣayakaraṃ sarvakalyāṇavardhanam | devārcanavidhānaṃ tatkīdṛśaṃ bhavati prabho || 116 ||

What is the proper way to worship god, my lord, the way that destroys every sin and increases every blessing?

हे प्रभु, ईश्वर की पूजा की सही विधि क्या है, वह विधि जो हर पाप का नाश करे और हर मंगल को बढ़ाए?

6.29.117

ईश्वर उवाच। शृणु ब्रह्मविदां श्रेष्ठ देवार्चनमनुत्तमम्। वदामि मुच्यते येन कृतेन सकृदेव हि॥ ११७॥

īśvara uvāca | śṛṇu brahmavidāṃ śreṣṭha devārcanamanuttamam | vadāmi mucyate yena kṛtena sakṛdeva hi || 117 ||

Lord Shiva said: Listen, best of those who know the highest truth. I will tell you the highest way to worship god. By doing it, even just once, a person is set free.

भगवान शिव ने कहा, सुनो, उच्चतम सत्य को जानने वालों में श्रेष्ठ। मैं तुम्हें ईश्वर की पूजा की सबसे उत्तम विधि बताता हूँ। इसे एक बार करने मात्र से भी मनुष्य मुक्त हो जाता है।

6.29.118

कच्चिद्वेत्सि महाबाहो देवः कः स्यादिति द्विज। न देवः पुण्डरीकाक्षो न च देवस्त्रिलोचनः॥ ११८॥

kaccidvetsi mahābāho devaḥ kaḥ syāditi dvija | na devaḥ puṇḍarīkākṣo na ca devastrilocanaḥ || 118 ||

Do you know, mighty armed one, Brahmin, what god really is? God is not the lotus eyed one, and god is not the three eyed one.

हे महाबाहु, हे ब्राह्मण, क्या तुम जानते हो कि ईश्वर वास्तव में क्या है? ईश्वर न तो कमल नयन वाला है, और न ही तीन आँखों वाला।

6.29.119

न देवः कमलोद्भूतो न देवस्त्रिदशेश्वरः। न देवः पवनो नार्को नानलो न निशाकरः॥ ११९॥

na devaḥ kamalodbhūto na devastridaśeśvaraḥ | na devaḥ pavano nārko nānalo na niśākaraḥ || 119 ||

God is not the one born from the lotus. God is not the lord of the thirty gods. God is not the wind, not the sun, not fire, and not the moon.

ईश्वर न तो कमल से जन्मा वह है, न तीसों देवताओं का स्वामी। ईश्वर न वायु है, न सूर्य, न अग्नि, न चंद्रमा।

6.29.120

न ब्राह्मणो नाऽवनिपो नाहं न त्वं द्विजोत्तम। न देवो देहरूपो हि न देवश्चित्तरूपधृक्॥ १२०॥

na brāhmaṇo nā'vanipo nāhaṃ na tvaṃ dvijottama | na devo deharūpo hi na devaścittarūpadhṛk || 120 ||

God is not the priest, and not the king. God is not I, and not you, best of the twice born. God does not have the form of a body, and god does not take the form of the mind.

ईश्वर न तो पुरोहित है, न राजा। ईश्वर न मैं हूँ, न तुम हो, हे द्विजों में श्रेष्ठ। ईश्वर न शरीर के रूप में है, और न ही मन के रूप में।

6.29.121

न देवः कमलारूपी नापि देवो भवेन्मतिः । अकृत्रिममनाद्यन्तं देवनं देव उच्यते ॥ १२१ ॥

na devaḥ kamalārūpī nāpi devo bhavenmatiḥ | akṛtrimamanādyantaṃ devanaṃ deva ucyate || 121 ||

God does not have the form of Lakshmi, and god cannot be a mere thought. What is uncontrived, without beginning or end, that shining, is called God.

ईश्वर लक्ष्मी के रूप में नहीं है, और ईश्वर केवल एक विचार भी नहीं हो सकता। जो न बनाई गई है, जिसका न आदि है न अंत, उस चमक को ही ईश्वर कहा जाता है।

6.29.122

आकारादिपरिच्छिन्ने मिते वस्तुनि तत्कुतः । अकृत्रिममनाद्यन्तं देवनं चिच्छिवं विदुः ॥ १२२ ॥

ākārādiparicchinne mite vastuni tatkutaḥ | akṛtrimamanādyantaṃ devanaṃ cicchivaṃ viduḥ || 122 ||

How could that be found in a thing bound and limited by shape and the rest? The wise know that uncontrived shining, without beginning or end, as pure awareness, as Shiva himself.

जो आकार आदि से सीमित और बंधा हुआ है, उस वस्तु में वह कैसे मिल सकता है? ज्ञानी लोग उस अकृत्रिम, अनादि अनंत चमक को शुद्ध चेतना के रूप में जानते हैं, शिव के रूप में।

6.29.123

तदेव देवशब्देन कथ्यते तत्प्रपूजयेत् । तदेवास्ति यतः सर्वं सत्तासत्तात्मरूपधृक् ॥ १२३ ॥

tadeva devaśabdena kathyate tatprapūjayet | tadevāsti yataḥ sarvaṃ sattāsattātmarūpadhṛk || 123 ||

That alone is called by the name "God"; worship that alone. That alone truly exists, because everything, real or unreal, takes that as its own true form.

उसी को "ईश्वर" नाम से पुकारा जाता है; उसी की पूजा करनी चाहिए। असल में वही है, क्योंकि हर चीज़ चाहे सच हो या झूठ, उसी को अपना असली रूप मानती है।

6.29.124

अज्ञातशिवतत्त्वानामाकाराद्यर्चनं कृतम् । योजनाध्वन्यशक्तस्य क्रोशाध्वा परिकल्प्यते ॥ १२४ ॥

ajñātaśivatattvānāmākārādyarcanaṃ kṛtam | yojanādhvanyśaktasya krośādhvā parikalpyate || 124 ||

For those who do not know the true nature of Shiva, worship of an image is prescribed. It is like this: for someone unable to walk the full distance of a yojana, a shorter distance of one krosha is set instead.

जो लोग शिव के असली स्वरूप को नहीं जानते, उनके लिए मूर्ति की पूजा बताई गई है। यह वैसे ही है जैसे जो एक योजन जितनी दूर तक नहीं चल सकता, उसके लिए एक कोस जितनी छोटी दूरी तय कर दी जाती है।

6.29.125

इयत्तादिपरिच्छिन्नं रुद्रादेः प्राप्यते फलम् । अकृत्रिममनाद्यन्तं फलमानन्द आत्मनः ॥ १२५ ॥

iyattādiparicchinnaṃ rudrādeḥ prāpyate phalam | akṛtrimamanādyantaṃ phalamānanda ātmanaḥ || 125 ||

The fruit gained from Rudra and other such gods is limited and measured. But the fruit that is uncreated, without beginning or end, is the bliss of the Self.

रुद्र आदि देवताओं से जो फल मिलता है, वह सीमित और नापा हुआ होता है। पर जो फल बिना बनाए है, जिसका न आदि है न अंत, वह आत्मा का आनंद है।

6.29.126

अकृत्रिमफलं त्यक्त्वा यः कृत्रिमफलं व्रजेत् । त्यक्त्वा स मन्दारवनं कारञ्जं याति काननम् ॥ १२६ ॥

akṛtrimaphalaṃ tyaktvā yaḥ kṛtrimaphalaṃ vrajet | tyaktvā sa mandāravanaṃ kārañjaṃ yāti kānanam || 126 ||

One who gives up the uncreated fruit to run after the created fruit gives up the Mandara forest to go to the Karanja forest.

जो अकृत्रिम फल को छोड़कर बनावटी फल के पीछे जाता है, वह मन्दार वन को छोड़कर कारंज वन में चला जाता है।

6.29.127

बोधः साम्यं शम इति पुष्पाण्यग्राणि तत्र च । शिवं चिन्मात्रममलं पूज्यं पूज्यविदो विदुः ॥ १२७ ॥

bodhaḥ sāmyaṃ śama iti puṣpāṇyagrāṇi tatra ca | śivaṃ cinmātramamalaṃ pūjyaṃ pūjyavidō viduḥ || 127 ||

Understanding, evenness of mind, and calm, these are the finest flowers to offer there. Those who know what deserves worship know that Shiva, who is pure and stainless consciousness itself, is the one to be worshipped.

समझ, समभाव और शांति, यही वहाँ चढ़ाए जाने वाले सबसे अच्छे फूल हैं। जो लोग जानते हैं कि पूजा किसकी होनी चाहिए, वे जानते हैं कि शिव, जो शुद्ध और निर्मल चेतना ही हैं, वही पूजने योग्य हैं।

6.29.128

शमबोधादिभिः पुष्पैर्देव आत्मा यदर्च्यते । तत्तु देवार्चनं विद्धि नाकारार्चनमर्चनम् ॥ १२८ ॥

śamabodhādibhiḥ puṣpairdeva ātmā yadarcayate | tattu devārcanaṃ viddhi nākārārcanamarcanaṃ || 128 ||

When the Self, who is God, is worshipped with flowers such as calm and understanding, know that as true worship of God, not the worship of an image.

जब आत्मा को, जो स्वयं ईश्वर है, शांति और समझ जैसे फूलों से पूजा जाता है, तो उसे ही ईश्वर की सच्ची पूजा समझो, मूर्ति की पूजा को नहीं।

6.29.129

आत्मसंवित्तिरूपं तु त्यक्त्वा देवार्चनं जनाः । कृत्रिमार्चासु ये सक्ताश्चिरं क्लेशं भजन्ति ते ॥ १२९ ॥

ātmasaṃvittirūpaṃ tu tyaktvā devārcanaṃ janāḥ | kṛtrimārcāsu ye saktāściraṃ kleśaṃ bhajanti te || 129 ||

But people who give up worshipping God as the knowledge of the Self, and cling instead to artificial forms of worship, suffer distress for a long time.

पर जो लोग आत्मज्ञान के रूप में ईश्वर की पूजा छोड़कर बनावटी पूजाओं से चिपके रहते हैं, वे लंबे समय तक दुख भोगते हैं।

6.29.130

ज्ञातज्ञेया हि ये सन्तो बालक्रीडोपमं च ते । आत्मध्यानादृते ब्रह्मन्कुर्वन्तो देवपूजनम् ॥ १३० ॥

jñātajñeyā hi ye santo bālakrīḍopamaṃ ca te | ātmadhyānādṛte brahmannkurvanto devapūjanam || 130 ||

O Brahmin, the truly wise, who have known what must be known, see the worship of God done without meditation on the Self as nothing more than a children's game.

हे ब्राह्मण, जो सच में समझदार हैं और जो जानने योग्य है उसे जान चुके हैं, वे बिना आत्मा के ध्यान के की गई ईश्वर-पूजा को बच्चों के खेल जैसा ही मानते हैं।

6.29.131

आत्मैव देवो भगवाञ्छिवः परमकारणम्। ज्ञानार्चनेनाविरतं पूजनीयः स सर्वदा ॥ १३१ ॥

ātmaiva devo bhagavāñchivaḥ paramakāraṇam | jñānārcanenāviratam pūjanīyaḥ sa sarvadā || 131 ||

The Self alone is God, the Blessed One, Shiva, the highest cause. He must always be worshipped, without a break, through the worship of knowledge.

आत्मा ही ईश्वर है, भगवान शिव, सबसे बड़ा कारण। उसकी पूजा हमेशा, बिना रुके, ज्ञान के द्वारा करनी चाहिए।

6.29.132

त्वमेतच्चेतनाकाशमात्मानं जीवमव्ययम्। स्वभावं विद्धि न त्वन्यः पूज्यः पूजात्मपूजनम् ॥ १३२ ॥

tvametaccetanākāśamātmānaṃ jīvamavyayam | svabhāvaṃ viddhi na tvanyaḥ pūjyaḥ pūjātmapūjanam || 132 ||

Know yourself to be this space of consciousness, the Self, the living being, imperishable, your own true nature. No one else is to be worshipped; worship is truly the worship of the Self.

अपने आप को इस चेतना के आकाश के रूप में जानो, जो आत्मा है, जीव है, अविनाशी है, यही तुम्हारा असली स्वभाव है। इसके सिवा और कोई पूजने योग्य नहीं; पूजा असल में आत्मा की ही पूजा है।

6.29.133

श्रीवसिष्ठ उवाच। चेतनाकाशमात्रात्म यथा जगदिदं प्रभो। यथा तच्चेतनस्यैव जीवादित्वं तदुच्यताम् ॥ १३३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | cetanākāśamātrātma yathā jagadidaṃ prabho | yathā taccetanasyaiva jīvāditvaṃ taducyatām || 133 ||

Sri Vasishtha said: Lord, tell me how this world is nothing but a space of consciousness, and how that same consciousness comes to have the states of being a living being and so on.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे प्रभु, बताइए कि यह जगत केवल चेतना का आकाश कैसे है, और वही चेतना जीव आदि का रूप कैसे धारण कर लेती है।

6.29.134

ईश्वर उवाच। चिद्व्योमैव किलास्तीह पारावारविवर्जितम्। सर्वत्रासंभवच्चेत्यं यत्कल्पान्तेऽवशिष्यते ॥ १३४ ॥

īśvara uvāca | cidvyomaiava kilāstīha pārāvāravivarjitam | sarvatrāsaṃbhavacchetyaṃ yatkalpānte'vaśiṣyate || 134 ||

Ishvara said: Only the space of consciousness truly exists here, without a far shore or a near shore, without any limit. It can never become an object anywhere, and it alone remains when an entire age of the world comes to an end.

ईश्वर ने कहा: यहाँ सच में केवल चेतना का आकाश ही है, जिसकी न कोई इस पार है न उस पार, जिसकी कोई सीमा नहीं। वह कहीं भी किसी वस्तु के रूप में नहीं आ सकता, और जब सृष्टि का एक पूरा युग समाप्त होता है, तब भी वही बचा रहता है।

6.29.135

यद्यत्स्वयं प्रकचति तस्य स्वकचनस्य तु। स्वयं यत्स्पन्दितं नाम तेनेदं जगदित्यलम् ॥ १३५ ॥

yadyatsvayaṃ prakacati tasya svakacanasya tu | svayaṃ yatspanditaṃ nāma tenenedaṃ jagadityalam || 135 ||

Whatever shines by itself, and the stirring of that shining, which is its own vibration, that alone, and nothing more, is what is called "the world."

जो कुछ अपने आप चमकता है, और उस चमक की हलचल, जो उसी की अपनी धड़कन है, बस इतना ही है जिसे "जगत" कहा जाता है।

6.29.136

इत्येवं स्वप्नपुरवज्जगद्भाति चिदात्मकम्। एवं चिद्व्योममात्रात्म जगदच्छं न भित्तिमत्॥ १३६॥

ityevaṃ svapnapuravajjagadbhāti cidātmakam | evaṃ cidvyomamātrātma jagadacchaṃ na bhittimat || 136 ||

So the world, whose nature is consciousness, appears just like a city seen in a dream. In the same way, the world, whose self is nothing but the space of consciousness, is clear and pure, resting on no wall or foundation.

इस तरह यह जगत, जिसका स्वभाव चेतना है, ठीक सपने में दिखने वाले शहर जैसा दिखता है। उसी तरह यह जगत, जिसकी आत्मा केवल चेतना का आकाश है, साफ और निर्मल है, किसी दीवार या नींव पर टिका नहीं है।

6.29.137

अत्यन्तासंभवाच्चेत्यं दृश्यं चिद्व्योममात्रकम्। चित्त्वात्कचति सर्गादौ यत्तज्जगदिति स्मृतम्॥ १३७॥

atyantāsaṃbhavācchetyaṃ dṛśyaṃ cidvyomamātrakam | cittvātkacati sargādau yattajjagaditi smṛtam || 137 ||

Because it can never truly become an object at all, this visible world is nothing but the space of consciousness. Because it is consciousness, it shines forth at the start of creation, and that shining is what is called "the world."

क्योंकि यह कभी भी सच में किसी वस्तु के रूप में सामने नहीं आ सकता, यह दिखने वाला जगत केवल चेतना का आकाश ही है। चेतना होने के कारण ही यह सृष्टि के आरंभ में चमक उठता है, और उसी चमक को "जगत" कहा जाता है।

6.29.138

तस्मात्स्वप्नपुराकारं यदिदं भासते जगत्। तत्र चिद्व्योममात्रात्मन्यन्यता नाम का कुतः॥ १३८॥

tasmātsvapnapurākāraṃ yadidaṃ bhāsate jagat | tatra cidvyomamātrātmanyanyatā nāma kā kutaḥ || 138 ||

So this world that appears, shaped like a city in a dream, in it, within a self that is nothing but the space of consciousness, what could "otherness" even be, and where would it come from?

तो यह जगत जो सपने के शहर जैसा दिखाई देता है, इसमें, उस आत्मा के भीतर जो केवल चेतना का आकाश है, "अलगपन" नाम की चीज़ है ही क्या, और वह आएगी कहाँ से?

6.29.139

चिन्मात्रमेव गिरयश्चिन्मात्रं जगदम्बरम्। चिन्मात्रमात्मा जीवश्च चिन्मात्रं भूतसंततिः॥ १३९॥

cinmātrameva girayaścinmātraṃ jagadambaram | cinmātramātmā jīvaśca cinmātraṃ bhūtasaṃtatiḥ || 139 ||

Mountains are nothing but consciousness. The sky of this world is nothing but consciousness. The self and the living being are nothing but consciousness. The whole line of living creatures is nothing but consciousness.

पहाड़ केवल चेतना हैं। इस जगत का आकाश केवल चेतना है। आत्मा और जीव केवल चेतना हैं। जीवों की पूरी शृंखला केवल चेतना है।

6.29.140

चिद्व्योममात्रादितरत्सर्गादौ सर्ववेदने। भिन्नस्वर्गे पुरे वापि किं संभवति कथ्यताम्॥ १४०॥

cidvyomamātrāditiratsargādau sarvavedane | bhinnasvarge pure vāpi kiṃ saṃbhavati kathyatām || 140 ||

Tell me, at the very start of creation, in this all-knowing space of consciousness, what else could possibly exist, whether in a different heaven or a different city?

बताइए, सृष्टि के आरंभ में, इस सब कुछ जानने वाली चेतना के आकाश में, इसके सिवा और क्या हो सकता है, चाहे वह किसी दूसरे स्वर्ग में हो या किसी दूसरे शहर में?

6.29.141

आकाशं परमाकाशं ब्रह्माकाशं जगच्चितिः । इति पर्यायनामानि तत्र पादपवृक्षवत् ॥ १४१ ॥

ākāśaṃ paramākāśaṃ brahmākāśaṃ jagaccitiḥ | iti paryāyanāmāni tatra pādapavṛkṣavat || 141 ||

Space, the highest space, the space of Brahman, and the consciousness that is this world, these are only different names for one and the same thing, just as a tree can be called by more than one name.

आकाश, सबसे ऊँचा आकाश, ब्रह्म का आकाश, और वह चेतना जो यह जगत है, ये सब एक ही चीज़ के अलग-अलग नाम हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक ही पेड़ को अलग-अलग नामों से बुलाया जा सकता है।

6.29.142

एवं द्वौ स्वप्नसंकल्पमायाभिः स्वनुभूयते । तदा किल चिदाकाशमेव भाति जगत्तया ॥ १४२ ॥

evaṃ dvau svapnasankalpamāyābhiḥ svanubhūyate | tadā kila cidākāśameva bhāti jagattayā || 142 ||

In this way, these two are experienced through dream, through mere thought, and through illusion. Then indeed, it is only the space of consciousness that appears as the world.

इस तरह ये दोनों सपने से, मात्र सोच से, और भ्रम से अनुभव किए जाते हैं। तब सच में केवल चेतना का आकाश ही जगत के रूप में दिखाई देता है।

6.29.143

यथैतत्संविदाकाशं स्वप्ने भाति जगद्वपुः । तथेदं जाग्रदाख्येऽपि स्वप्ने भाति तदेव नः ॥ १४३ ॥

yathaitatsaṃvidākāśaṃ svapne bhāti jagadvapuḥ | tathedaṃ jāgradākhye'pi svapne bhāti tadeva naḥ || 143 ||

Just as this space of awareness appears in a dream as the shape of a whole world, in just the same way it is that same awareness which appears to us in this state we merely call "waking," itself a kind of dream.

जैसे यही चेतना का आकाश सपने में एक पूरे जगत के रूप में दिखता है, ठीक उसी तरह वही चेतना हमें इस अवस्था में भी दिखती है जिसे हम केवल "जागना" कहते हैं, जो खुद भी एक तरह का सपना ही है।

6.29.144

यथा स्वप्नपुरे चित्खं वर्जयित्वेतरत्क्वचित् न किंचित्संभवत्येवं जाग्रत्येवं महाचितः ॥ १४४ ॥

yathā svapnapure citkhaṃ varjayitvetaratkvacit na kiṃcitsaṃbhavyevaṃ jāgratyevaṃ mahācitaḥ || 144 ||

Just as, in a city seen in a dream, nothing else at all exists anywhere apart from the space of consciousness, so too in the waking state, nothing exists apart from that same vast consciousness.

जैसे सपने में दिखने वाले शहर में चेतना के आकाश के सिवा और कुछ भी कहीं नहीं होता, ठीक उसी तरह जागने की अवस्था में भी उसी विशाल चेतना के सिवा कुछ नहीं होता।

6.29.145

यतो न संभवत्यन्यच्चेत्यं किंचित्ततोऽखिलम् चित्तं संचेत्यमप्येतदचेत्यं सज्जगत्स्थितम् ॥ १४५ ॥

yato na saṃbhavyanyacchetyaṃ kiṃcittato'khilam cittaṃ saṃcetyamapyetadacetyaṃ sajjagatsthitam || 145 ||

Because nothing else that could ever be an object exists at all, this whole world, mind itself, though it seems an object one can know, is really beyond being any object at all; and just this is what stands as the world that exists.

क्योंकि इसके सिवा कोई भी वस्तु कभी हो ही नहीं सकती, यह पूरा जगत, यानी मन खुद, भले ही वह जानी जाने वाली चीज़ लगे, असल में किसी भी वस्तु के दायरे से परे है; और यही है जो इस मौजूद जगत के रूप में खड़ा है।

6.29.146

परमाकाशकलनं त्रिजगत्स्वयमुत्थितम् स्वप्नवद्विद्धि चिद्व्योम्नि न त्वेतद्वैतवत्स्थितम् ॥ १४६ ॥

paramākāśakalanaṃ trijagatsvayamutthitam svapnavadviddhi cidvyomni na tvetaddvaitavatsthitam || 146 ||

Know that the three worlds, a stirring of the highest space, arisen on their own, exist within the space of consciousness just like a dream; none of this stands there as if it were two separate things.

जानो कि तीनों लोक, जो सबसे ऊँचे आकाश की एक हलचल हैं, अपने आप उठे हुए, चेतना के आकाश के भीतर सपने की तरह ही मौजूद हैं; यह इस तरह मौजूद नहीं है जैसे दो अलग चीज़ें हों।

6.29.147

यथा चिद्व्योममात्रात्म स्वप्ने घटपटादिकम् सर्गादावेव सर्गोऽयं तथा चिद्व्योममात्रकम् ॥ १४७ ॥

yathā cidvyomamātrātma svapne ghaṭapaṭādikam sargādāveva sargo'yaṃ tathā cidvyomamātrakam || 147 ||

Just as a pot, a cloth, and everything else in a dream have nothing for their true nature but the space of consciousness, so too this creation, from the very start, is nothing but that same space of consciousness.

जैसे सपने में घड़ा, कपड़ा और बाकी सब कुछ असल में चेतना के आकाश के सिवा और कुछ नहीं होते, ठीक वैसे ही यह सृष्टि भी शुरू से ही उसी चेतना के आकाश के सिवा और कुछ नहीं है।

6.29.148

शुद्धसंवित्तिमात्रत्वाद्दृतेऽन्यत्स्वप्नपत्तने यथा न विद्यते किंचित्तथास्मिन्भुवनत्रये ॥ १४८ ॥

śuddhasaṃvittimātratvādṛte'nyatsvapnapattane yathā na vidyate kiṃcit tathāsminbhuvanatraye || 148 ||

Just as, in a city seen in a dream, nothing at all exists apart from pure awareness alone, so too in these three worlds nothing else exists either.

जैसे सपने में दिखने वाले शहर में शुद्ध चेतना के सिवा कुछ भी नहीं होता, ठीक वैसे ही इन तीनों लोकों में भी इसके सिवा और कुछ नहीं है।

6.29.149

याः काश्चन दृशो ये ये भावाभावास्त्रिकालगाः । सदेशकालचित्तास्तत्सर्वं चिद्व्योममात्रकम् ॥ १४९ ॥

yāḥ kāścana dṛśo ye ye bhāvābhāvāstrikālagāḥ | sadeśakālacittāstatsarvaṃ cidvyomamātrakam || 149 ||

Whatever there is to see, whatever things exist or do not exist across past, present, and future, together with their place, their time, and their mind, all of it is nothing but the space of consciousness.

जो कुछ भी देखने में आता है, जो कुछ भी भूत, वर्तमान और भविष्य में है या नहीं है, अपनी जगह, अपने समय और अपने मन के साथ, यह सब कुछ केवल चेतना का आकाश ही है।

6.29.150

स एष देवः कथितो यः परः परमार्थतः । यस्त्वं सोऽहमशेषं वा जगदेव च योऽखिलः ॥ १५० ॥

sa eṣa devaḥ kathito yaḥ paraḥ paramārthataḥ | yastvaṃ so'ham aśeṣaṃ vā jagadeva ca yo'khilaḥ || 150 ||

This very one, who in ultimate truth is the Supreme, has been declared to be God, the one who is you, who is I, who without exception is this whole world, who is everything.

यही, जो असली सच्चाई में सबसे ऊँचा है, ईश्वर कहा गया है, वही जो तुम हो, वही जो मैं हूँ, वही जो बिना किसी कमी के यह पूरा जगत है, वही जो सब कुछ है।

6.29.151

सर्वस्य वस्तुजातस्य जगतोऽन्यस्य ते मम । देहो हि चेतनाकाशे परमात्मैव नेतरत् ॥ १५१ ॥

sarvasya vastujātasya jagato'nyasya te mama | deho hi cetanākāśe paramātmaiva netarat || 151 ||

Of every single thing that exists, this world, anything else, you, me, the body is truly nothing but the Supreme Self within the space of consciousness; it is nothing other than that.

जो कुछ भी है, यह जगत, कुछ भी और, तुम, मैं, इन सबका शरीर असल में चेतना के आकाश के भीतर परमात्मा ही है; इसके सिवा और कुछ नहीं।

6.29.152

संकल्पने स्वप्नपुरे शरीरं चिद्व्योमतोऽन्यन्न यथास्ति किंचित् । तथेह सर्गे प्रथमैकर्सगान्मुने प्रभृत्यस्ति न रूपमन्यत् ॥ १५२ ॥

saṃkalpane svapnapure śarīraṃ cidvyomato'nyann yathāsti kiṃcit | tatheha sarge prathamaikarsagānmune prabhṛtyasti na rūpamanyat || 152 ||

Just as, in a dream-city built by mere imagination, there is no body that is anything but the space of consciousness, so too, O sage, in this creation, right from the first act of creation onward, there is no other form than that.

जैसे केवल कल्पना से बने सपने के शहर में कोई शरीर चेतना के आकाश के सिवा कुछ और नहीं होता, ठीक वैसे ही, हे मुनि, इस सृष्टि में भी, सृष्टि के पहले पल से ही, इसके सिवा और कोई रूप नहीं है।

Chapter 30

6.30.1

ईश्वर उवाच । एवं सर्वमिदं विश्वं परमात्मैव केवलम् । ब्रह्मैव परमाकाशमेष देवः परः स्मृतः ॥ १ ॥

īśvara uvāca | evaṃ sarvamidaṃ viśvaṃ paramātmaiva kevalam | brahmaiva paramākāśameṣa devaḥ paraḥ smṛtaḥ || 1 ||

Ishvara said: In this way, this whole universe is nothing but the one supreme self. Brahman alone is the highest space; this god is known as the supreme one.

ईश्वर ने कहा: इस तरह यह पूरी दुनिया बस एक परम आत्मा ही है। ब्रह्म ही सबसे ऊँचा आकाश है; इसी देव को सबसे ऊँचा माना गया है।

6.30.2

तदेतत्पूजनं श्रेयस्तस्मात्सर्वमवाप्यते । तदेव सर्गभूः सर्वमिदं तस्मिन्व्यवस्थितम् ॥ २ ॥

tadetatpūjanaṃ śreyastasmātsarvamavāpyate | tadeva sargabhūḥ sarvamidaṃ tasminvyavasthitam || 2 ||

Worshipping this alone is the highest good; from it everything is gained. That alone is the source of creation; all this rests in it.

इसी की पूजा करना सबसे अच्छी बात है; इसी से सब कुछ मिल जाता है। यही सृष्टि का मूल कारण है; यह सारी दुनिया इसी में टिकी हुई है।

6.30.3

अकृत्रिममनाद्यन्तमद्वितीयमखण्डितम् । अवहिःसाधनासाध्यं सुखं तस्मादवाप्यते ॥ ३ ॥

akṛtrimamanādyantamadvitīyamakhaṇḍitam | avahiḥsādhanāsādhyam sukhaṃ tasmādavāpyate || 3 ||

It has no beginning and no end, it was never made, it has no second, and it is not broken into parts. The happiness that no outside means can bring is gained only from it.

इसका न कोई आदि है न अंत, यह कभी बनाया नहीं गया, इसका कोई दूसरा नहीं है, और यह टुकड़ों में बंटा नहीं है। जो सुख बाहर के किसी उपाय से नहीं मिलता, वह सुख इसी से मिलता है।

6.30.4

प्रबुद्धस्त्वं मुनिश्रेष्ठ तेनेदं तव कथ्यतेनातिदेवार्चने योग्यः पुष्पधूपचयो महान् ॥ ४ ॥

prabuddhastvaṃ muniśreṣṭha tenedaṃ tava kathyatenātidevārcane yogyaḥ puṣpadhūpacayo mahān || 4 ||

You are awake, best of sages, and that is why this is being told to you. A great heap of flowers and incense is not fit for the worship of the supreme god.

हे मुनियों में श्रेष्ठ, तुम जाग चुके हो, इसीलिए तुम्हें यह बात बताई जा रही है। परम देव की पूजा के लिए फूलों और धूप का बड़ा ढेर उपयुक्त नहीं है।

6.30.5

अव्युत्पन्नधियो ये हि बालपेलवचेतसः । कृत्रिमार्चामयं तेषां देवार्चनमुदाहृतम् ॥ ५ ॥

avyutpannadhiyo ye hi bālape lavacetasaḥ | kṛtrimārcāmayaṃ teṣāṃ devārcanamudāhṛtam || 5 ||

For those whose understanding is not yet grown, whose minds are childish and weak, the worship of god is said to be made of artificial rites.

जिनकी समझ अभी पूरी तरह विकसित नहीं हुई, जिनका मन बच्चों जैसा कच्चा और कमज़ोर है, उनके लिए देव-पूजा का मतलब बनावटी पूजा बताया गया है।

6.30.6

शमबोधाद्यभावे हि पुष्पाद्यैर्वार्चयन्ति हि । मिथ्यैव कल्पितैरेवमाकारे कल्पितात्मके ॥ ६ ॥

śamabodhādyabhāve hi puṣpādyairvārcayanti hi | mithyaiva kalpitairevamākāre kalpitātmake || 6 ||

When there is no peace and no understanding, people worship with flowers and such things, merely with imagined offerings, before a form that is itself imagined.

जब मन में शांति और समझ नहीं होती, तब लोग फूल वगैरह से पूजा करते हैं, बस कल्पना की हुई चीज़ों से, एक ऐसे रूप की पूजा जो खुद भी कल्पना से गढ़ा गया है।

6.30.7

स्वसंकल्पकृतैः कृत्वा क्रमैरर्चनमादृताः । बालाः संतोषमायान्ति पुष्पधूपलवार्चनैः ॥ ७ ॥

svasaṅkalpakṛtaiḥ kṛtvā kramairarcanaṃādṛtāḥ | bālāḥ saṃtoṣamāyānti puṣpadhūpalavārcanaiḥ || 7 ||

Performing worship step by step with rites made up by their own imagination, the childish find contentment through worship with a little flower and incense.

अपनी ही कल्पना से बनाए गए तरीकों से आदर के साथ पूजा करके, भोले लोग थोड़े से फूल और धूप की पूजा से ही संतोष कर लेते हैं।

6.30.8

स्वसंकल्पकृतैरर्थैः कृत्वा देवार्चनं मुधा । यतः कुतश्चिन्मिथ्यात्म फलमात्रं नयन्ति ते ॥ ८ ॥

svasaṅkalpakṛtairarthaiḥ kṛtvā devārcanaṃ mudhā | yataḥ kutaścinmihyātma phalamātraṃ nayanti te || 8 ||

Having done the worship of god uselessly, with things made up by their own imagination, they gain, from wherever it comes, only a false result.

अपनी ही कल्पना से बनाई गई चीज़ों से बेकार में देव-पूजा करके, वे न जाने कहाँ से बस एक झूठा फल पा लेते हैं।

6.30.9

पुष्पधूपार्चनं ब्रह्मन्कल्पितं बालबुद्धिषु । यत्स्याद्भवादृशां योग्यमर्चनं तद्वदाम्यहम् ॥ ९ ॥

puṣpadhūpārcanaṃ brahman kalpitaṃ bālabuddhiṣu | yatsyādbhavādṛśāṃ yogyamarcanaṃ tadvadāmyaham || 9 ||

Worship with flowers and incense, Brahmin, is made for childish minds. Now I will tell you the worship that is fit for one such as you.

हे ब्राह्मण, फूल और धूप से पूजा भोली बुद्धि वालों के लिए बनाई गई है। अब मैं तुम्हें बताता हूँ कि तुम्हारे जैसे व्यक्ति के लिए कौन सी पूजा ठीक है।

6.30.10

अस्मदादिस्त्वसौ कश्चिद्देवो मतिमतां वर । देवस्त्रिभुवनाधारः परमात्मैव नेतरत् ॥ १० ॥

asmadādistvasau kaściddevo matimatāṃ vara | devastribhuvanādhāraḥ paramātmaiva netarat || 10 ||

But one such as myself is only some sort of god, best among the wise. The god who is the support of the three worlds is the supreme self alone, and nothing else.

पर मुझ जैसा कोई तो बस एक छोटा-मोटा देवता ही है, हे बुद्धिमानों में सबसे अच्छे। असली देव तो तीनों लोकों का सहारा है, और वह परम आत्मा ही है, कुछ और नहीं।

6.30.11

शिवः सर्वपदातीतः सर्वसंकल्पनातिगः । सर्वसंकल्पवलितो न सर्वो न च सर्वकः ॥ ११ ॥

śivaḥ sarvapadātītaḥ sarvasaṅkalpanātigaḥ | sarvasaṅkalpavalito na sarvo na ca sarvakaḥ || 11 ||

Shiva is beyond every condition, beyond every thought a mind can form, and yet he is wrapped in every thought a mind can form. He is not everything put together, and he is not each separate thing either.

शिव हर अवस्था से परे है, हर उस विचार से भी परे है जो मन बना सकता है, फिर भी वह हर उस विचार में लिपटा हुआ रहता है। वह न तो सब कुछ मिलाकर बना हुआ पूरा है, और न ही अलग-अलग हर एक चीज़ है।

6.30.12

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नः सर्वारम्भप्रकाशकृत् । चिन्मात्रमूर्तिरमलो देव इत्युच्यते मुने ॥ १२ ॥

dikkālādyanavacchinnaḥ sarvārambhaprakāśakṛt | cinmātramūrtiramalo deva ityucyate mune || 12 ||

He is not bound by place or time or anything like them. He lights up every act as it begins. His only form is pure awareness, and he is without a stain. Sage, this is what is called god.

वह देश और समय जैसी किसी भी सीमा में नहीं बंधा। वह हर शुरू होते काम को रोशन करता है। उसका रूप बस शुद्ध चेतना है, और उस पर कोई दाग़ नहीं है। हे मुनि, उसी को 'देव' कहा जाता है।

6.30.13

संवित्सर्वकलातीता सर्वभावान्तरस्थिता । सर्वसत्ताप्रदा देवी सर्वसत्तापहारिणी ॥ १३ ॥

saṃvitsarvakalātītā sarvabhāvāntarasthitā | sarvasattāpradā devī sarvasattāpahāriṇī || 13 ||

Awareness, the goddess, is beyond every division and lives inside everything that exists. She gives existence to everything, and she also takes existence away from everything.

चेतना, वह देवी, हर बंटवारे से परे है, और हर चीज़ के भीतर मौजूद रहती है। वही सबको अस्तित्व देती है, और वही सबसे अस्तित्व छीन भी लेती है।

6.30.14

ब्रह्म ब्रह्मन्सदसतोर्मध्यं तद्देव उच्यते । परमात्मपराभिख्यं तत्सदोमित्युदाहृतम् ॥ १४ ॥

brahma brahmansadasator madhyaṃ taddeva ucyate | paramātmparābhikhyam tatsadomityudāhṛtam || 14 ||

Brahman, Brahmin, is what stands between being and non-being; that is what is called god. It is known by the highest name, the supreme self, and it is also called being and Om.

हे ब्राह्मण, ब्रह्म वह है जो होने और न होने के बीच में है; उसी को 'देव' कहा जाता है। उसे सबसे ऊँचे नाम 'परमात्मा' से जाना जाता है, और उसे 'सत्' और 'ॐ' भी कहा गया है।

6.30.15

महासत्तास्वभावेन सर्वत्र समतां गतम् । महाचिदिति संप्रोक्तं परमार्थ इति श्रुतम् ॥ १५ ॥

mahāsattāsvabhāvena sarvatra samatāṃ gatam | mahācidi ti saṃproktaṃ paramārtha iti śrutam || 15 ||

Through the nature of vast being, it has become the same everywhere. It is called the great awareness, and it is known as the highest truth.

बड़ी सत्ता के अपने स्वभाव से वह हर जगह बराबर हो गया है। उसे 'महाचित' कहा गया है, और उसे 'परम सत्य' भी कहा गया है।

6.30.16

स्थितं सर्वत्र सर्वं तु लतास्वन्तर्यथा रसः। सत्तासामान्यरूपेण महासत्तात्मनापि च ॥ १६ ॥

sthitaṃ sarvatra sarvaṃ tu latāsvantaryathā rasaḥ| sattāsāmānyarūpeṇa mahāsattātmanāpi ca || 16 ||

It stays everywhere, in everything, the way sap stays inside a vine, present both as ordinary being and as vast being.

वह हर जगह, हर चीज़ में उसी तरह मौजूद है जैसे बेल के भीतर रस मौजूद रहता है, साधारण होने के रूप में भी, और महान होने के रूप में भी।

6.30.17

यच्चित्तत्त्वमरुन्धत्या यच्चित्तत्त्वं तवानघ। यच्चित्तत्त्वं च पार्वत्या यच्चित्तत्त्वं गणेषु च ॥ १७ ॥

yaccittattvamarundhatyā yaccittattvaṃ tavānagha| yaccittattvaṃ ca pārvatyā yaccittattvaṃ gaṇeṣu ca || 17 ||

The awareness that is in Arundhati, the awareness that is in you, sinless one, the awareness that is in Parvati, and the awareness that is in the ganas.

जो चेतना अरुंधती में है, जो चेतना तुझमें है, हे निष्पाप, जो चेतना पार्वती में है, और जो चेतना गणों में है।

6.30.18

चित्तत्त्वं यन्ममेदं च चित्तत्त्वं यज्जगत्रये। तद्देव इति तत्त्वज्ञा विदुरुत्तमबुद्धयः ॥ १८ ॥

cittattvaṃ yanmamedaṃ ca cittattvaṃ yajjagatraye| taddeva iti tattvajñā viduruttamabuddhayaḥ || 18 ||

And the awareness that is in me, and the awareness that is in the three worlds. Those who know the truth, those of the finest understanding, know this as god.

और जो चेतना मुझमें है, और जो चेतना तीनों लोकों में है। सच जानने वाले और सबसे अच्छी बुद्धि वाले लोग इसी को 'देव' कहते हैं।

6.30.19

पादपाण्यादिमानन्यो यो वा देवः प्रकल्प्यते। संविन्मात्रादृते ब्रह्मन्किंसारः किल कथ्यताम् ॥ १९ ॥

pādapāṇyādimānanyo yo vā devaḥ prakalpyate| saṃvinmātrādṛte brahmannkiṃsāraḥ kila kathyatām || 19 ||

Brahmin, tell me what essence any other imagined god would have, one with hands and feet and so on, apart from pure awareness.

हे ब्राह्मण, मुझे बताओ कि हाथ-पैर वगैरह वाला जो भी कोई और देवता कल्पना करके गढ़ा जाता है, शुद्ध चेतना के अलावा उसमें सार ही क्या है।

6.30.20

चिन्मात्रमेव संसारसारः सकलसारताम्। गतः स देवः सर्वोऽहं तस्मात्सर्वमवाप्यते ॥ २० ॥

cinmātrameva saṃsārasāraḥ sakalasāratām| gataḥ sa devaḥ sarvo'haṃ tasmātsarvamavāpyate || 20 ||

Pure awareness alone is the essence of this world, and it has become the essence of everything. That god is everything, and I am that everything. From it, everything is gained.

शुद्ध चेतना ही इस संसार का सार है, और वही हर चीज़ का सार बन गई है। वह देव ही सब कुछ है, और मैं ही वह सब कुछ हूँ। उसी से सब कुछ मिलता है।

6.30.21

न स दूरे स्थितो ब्रह्मन्न दुष्प्रापः स कस्यचित्। संस्थितः स सदा देहे सर्वत्रैव च खे तथा ॥ २१ ॥

na sa dūre sthito brahmanna duṣprāpaḥ sa kasyacit | saṃsthitaḥ sa sadā dehe sarvatraiva ca khe tathā || 21 ||

He is not far away, Brahmin, and for no one is he hard to reach. He always stays in the body, and the same way, everywhere, in space too.

हे ब्राह्मण, वह दूर नहीं है, और वह किसी के लिए भी पाना मुश्किल नहीं है। वह हमेशा शरीर के भीतर रहता है, और वैसे ही हर जगह, आकाश में भी।

6.30.22

स करोति स चाश्नाति स बिभर्ति प्रयाति च। सनिःश्वसिति संवेत्तासोऽङ्गान्यङ्गानि वेत्ति च ॥ २२ ॥

sa karoti sa cāśnāti sa bibharti prayāti ca | saniḥśvasiti saṃvettāso'ṅgānyaṅgāni vetti ca || 22 ||

He acts, and he eats; he sustains, and he moves; he breathes; he is the one who knows, and he knows every limb, one by one.

वही करता है, वही खाता है, वही सम्भालता है, वही चलता है; वही सांस लेता है; वही जानने वाला है, और वही एक-एक अंग को जानता है।

6.30.23

सोऽस्यां विचित्रचेष्टायां प्रकाशिन्यां च तद्वशात्। तत्स्वरूपनिबद्धायां पुर्यामास्ते मुनीश्वर ॥ २३ ॥

so'syāṃ vicitracēṣṭāyāṃ prakāśinyāṃ ca tadvāśāt | tatsvarūpanibaddhāyāṃ puryāmāste munīśvara || 23 ||

In this strange, restless city, which shines by his own power and is made of his own true nature, he lives, lord of sages.

इस अनोखी और हलचल भरी नगरी में, जो उसी की ताक़त से चमकती है और उसी के स्वरूप से बनी है, वह रहता है, हे मुनियों के स्वामी।

6.30.24

शरीरावसथायां च चलायां तत्प्रसादतः। सोऽस्यां गहनकोशायां ह्रद्गुहायां गुहेश्वरः ॥ २४ ॥

śarīrāvasathāyāṃ ca calāyāṃ tatprasādataḥ | so'syāṃ gahanakośāyāṃ hradguhāyāṃ guheśvaraḥ || 24 ||

In this moving house that is the body, which moves by his own grace, he lives inside its deep covering, in the cave of the heart, the lord of that cave.

शरीर रूपी इस चलते-फिरते घर में, जो उसी की कृपा से चलता है, वह इसकी गहरी परत के भीतर, दिल की गुफा में रहता है, वही उस गुफा का मालिक है।

6.30.25

मनःषष्ठेन्द्रियाचारसत्तातीतामलात्मनः। तस्य संव्यवहारार्थं संज्ञा चिदिति कल्पिता ॥ २५ ॥

manaḥṣaṣṭhendriyācārasattātītāmalātmanaḥ | tasya saṃvyavahārārthaṃ saṃjñā ciditi kalpitā || 25 ||

He is beyond the working of the five senses and the mind, and his nature is pure. Just so people can talk about him in ordinary dealings, he has been given the name awareness.

वह पाँचों इंद्रियों और मन के काम-काज से परे है, और उसका स्वभाव निर्मल है। ताकि लोग उसके बारे में आसानी से बात कर सकें, इसीलिए उसे 'चेतना' नाम दे दिया गया है।

6.30.26

स एष चिन्मयः सूक्ष्मः सर्वव्यापी निरञ्जनः । इमं भास्वरमाभासं करोति न करोति च ॥ २६ ॥

sa eṣa cinmayaḥ sūkṣmaḥ sarvavyāpī nirañjanaḥ | imaṃ bhāsvarmābhāsaṃ karoti na karoti ca || 26 ||

He is made of awareness, subtle, present everywhere, and without a stain. He both makes this shining appearance and does not make it.

वह चेतनामय है, सूक्ष्म है, हर जगह मौजूद है, और निर्मल है। वह इस चमकती हुई झलक को बनाता भी है, और नहीं भी बनाता।

6.30.27

सा चिदत्यन्तविमला जगदर्थं जगत्क्रियाम् । इमां रञ्जयति प्राज्ञ रसेनेव मधुर्लताम् ॥ २७ ॥

sā cidatyantavimalā jagadarthaṃ jagatkriyām | imāṃ rañjayati prājña raseneiva madhurlatām || 27 ||

That awareness, utterly pure, colors this purpose of the world and this working of the world, wise one, the way sap colors a sweet flowering vine.

वह चेतना, पूरी तरह निर्मल, संसार के इस मक़सद और संसार के इस काम को रंग देती है, हे प्राज्ञ, जैसे रस किसी मीठी लता को रंग देता है।

6.30.28

चारवो ये चमत्काराश्चितश्चिति यथास्थितम् । चमत्कुर्वन्ति किल ते तेन केचिन्नभोभिधाः ॥ २८ ॥

cāravo ye camatkārāścitaściti yathāsthitam | camatkurvanti kila te tena kecinnabhobhidhāḥ || 28 ||

Whatever beautiful wonders shine out, staying just as they are within consciousness itself, truly amaze the eye; because of this, some of them are called by the name sky.

जो भी सुंदर चमत्कार, चेतना के भीतर ही जैसे के तैसे बने रहकर, सचमुच चकित कर देते हैं, उन्हीं में से कुछ को इसी वजह से आकाश नाम दिया जाता है।

6.30.29

केचिज्जीवाभिधानाश्च केचिच्चित्ताभिधानकाः । केचित्कलाभिधानाश्च केचिद्देशाभिधानकाः ॥ २९ ॥

kecijjīvābhidhānāśca keciccittābhidhānakāḥ | kecitkalābhidhānāśca kecidddeśābhidhānakāḥ || 29 ||

Some are called by the name life, some are called mind, some are called a part, and some are called a place.

कुछ को जीव कहा जाता है, कुछ को मन, कुछ को अंश और कुछ को जगह कहा जाता है।

6.30.30

केचित्क्रियाभिधानाश्च केचिद्द्रव्याभिधानकाः । केचिद्भावविकारादिजात्यौचित्याभिधानकाः ॥ ३० ॥

kecitkriyābhidhānāśca keciddravyābhidhānakāḥ | kecidbhāvavikārādijātyaucityābhidhānakāḥ || 30 ||

Some are called action, some are called a thing, and some are called by whatever name fits their kind, starting with a change of state.

कुछ को क्रिया कहा जाता है, कुछ को वस्तु, और कुछ को उनकी तरह के हिसाब से जो भी नाम ठीक बैठे, जैसे अवस्था में बदलाव वगैरह।

6.30.31

प्रकाशाभिधानाः केचित्केचिच्छैलतमोभिधाः । अर्केन्द्राद्यभिधाः केचित्केचिद्यक्षाभिधानकाः ॥ ३१ ॥

prakāśābhidhānāḥ kecitkecicchailatamobhidhāḥ | arkendrādyabhidhāḥ kecitkecidyakṣābhidhānakāḥ || 31 ||

Some are called light, some are called mountain or darkness, some are called the sun, Indra, and so on, and some are called a yaksha.

कुछ को प्रकाश कहा जाता है, कुछ को पहाड़ या अंधकार, कुछ को सूरज, इंद्र वगैरह, और कुछ को यक्ष कहा जाता है।

6.30.32

निरिच्छस्वस्वभावेन वसन्तेन यथाङ्कुरः । तन्यते तद्वदेवेयं जगल्लक्ष्मीश्चिदात्मना ॥ ३२ ॥

niricchasvasvabhāvena vasantena yathāṅkuraḥ | tanyate tadvadeveyaṃ jagallakṣmīścidātmanā || 32 ||

Just as spring, through its own nature and without wanting anything, makes a sprout spread out, in the same way this glory of the world spreads out through the nature of consciousness.

जैसे बसंत अपने ही स्वभाव से, बिना कुछ चाहे, एक अंकुर को फैला देता है, वैसे ही यह जगत की शोभा चेतना के स्वभाव से फैलती है।

6.30.33

चिदेवासु समग्रासु सर्वदैवैकिकैव हि । त्रैलोक्याम्भोधिसंस्थासु शरीरजलजालिका ॥ ३३ ॥

cidevāsu samagrāsu sarvadaivekikaiva hi | trailokyāmbhodhisansthāsu śarīrajalajālikā || 33 ||

In all these bodies, a mass of water within the ocean of the three worlds, consciousness alone, always, is the one single reality.

तीनों लोकों के समुद्र में मौजूद ये सारे शरीर पानी के जाल जैसे हैं, और इन सबमें हमेशा चेतना ही अकेली एक सचाई है।

6.30.34

शरीरपङ्कजभ्रान्तमनोभ्रमरसंभृताम् । आस्वादयति संकल्पमधुसत्तां चिदीश्वरी ॥ ३४ ॥

śarīrapaṅkajabhrāntamanobhramarasaṃbhṛtām | āsvādayati saṃkalpamadhusattāṃ cidīśvarī || 34 ||

Consciousness, the queen, tastes the honey sweet being of imagination, a being filled with the mind, a bee wandering confused on the lotus of the body.

चेतना रूपी रानी कल्पना की शहद जैसी मीठी सत्ता को चखती है, वह सत्ता जो मन से भरी है, जो शरीर रूपी कमल पर उलझे हुए भँवरे जैसा है।

6.30.35

ससुरासुरगन्धर्वं सशैलार्णवकं जगत् । चिति स्थितं प्रवहति जलावर्ते जलं यथा ॥ ३५ ॥

sasurāsuragandharvaṃ saśailārṇavakaṃ jagat | citi sthitaṃ pravahati jalāvarte jalaṃ yathā || 35 ||

The world, with its gods, demons, and gandharvas, its mountains and oceans, resting in consciousness, flows the way water flows in a whirlpool.

यह जगत, अपने देवताओं, दानवों और गंधर्वों सहित, अपने पहाड़ों और समुद्रों सहित, चेतना में टिका हुआ वैसे ही बहता है जैसे पानी भँवर में बहता है।

6.30.36

बन्धचित्तमयाचारचारुचञ्चुरचक्रिकम् । संसारचक्रं चिच्चक्रे भ्राम्यति भ्रमभाजनम् ॥ ३६ ॥

bandhacittamayācāracārucañcuracakrikam | saṃsāracakraṃ ciccakre bhrāmyati bhramabhājanam || 36 ||

The wheel of the world, a beautiful, swiftly turning wheel made from the conduct of the bound mind, a vessel of confusion, turns on the wheel of consciousness.

संसार का पहिया, जो बंधे हुए मन के आचरण से बना एक सुंदर और तेज़ी से घूमने वाला पहिया है और भ्रम का बर्तन है, चेतना के पहिये पर घूमता है।

6.30.37

चिच्चतुर्भुजरूपेण जघानासुरमण्डलम् । कालो जलदखण्डेन सायुधेन यथाऽऽतपम् ॥ ३७ ॥

ciccaturbhujarūpeṇa jaghānāsuramaṇḍalam | kālo jaladakhaṇḍena sāyudhena yathā''tapam || 37 ||

Consciousness, in the form of the four armed one, struck down the whole host of demons, the way time, armed with a piece of cloud, strikes down the heat of the sun.

चेतना ने चार भुजाओं वाले रूप में राक्षसों की पूरी सेना को मार गिराया, वैसे ही जैसे समय बादल के टुकड़े को हथियार बनाकर धूप को मार गिराता है।

6.30.38

चित्त्रिनेत्रतया ब्रह्मन्वृषशीतांशुचिह्नया । गौरीकमलिनीवक्रपद्मषट्पदतां गता ॥ ३८ ॥

citrttrinetratayā brahmanvṛṣaśītāṃśucihnayā | gaurīkamalinīvakrapadmaṣaṭpadatāṃ gatā || 38 ||

Consciousness, taking the form of the three eyed one marked by the bull and the crescent moon, has become the bee on the curving lotus that is Gauri's lotus pond.

चेतना, तीन आँखों वाले उस रूप में जिसकी पहचान बैल और चाँद से है, गौरी के कमल सरोवर के मुड़े हुए कमल पर भँवरा बन गई है।

6.30.39

विष्णोः पद्मालितामेत्य चिद्ध्यानाधीनमानसा । त्रयी नलिन्याः सरसीं धत्ते पैतामहीं स्थितिम् ॥ ३९ ॥

viṣṇoḥ padmālitāmetya ciddhyānādhīnamānasā | trayī nalinyāḥ sarasīṃ dhatte paitāmahīṃ sthitim || 39 ||

Consciousness, becoming the bee on Vishnu's lotus, its mind absorbed in meditation and carrying the three Vedas within it, takes on, in that same lotus pond, the position of Brahma the grandfather.

चेतना, विष्णु के कमल पर भँवरा बनकर, ध्यान में डूबे मन के साथ और तीनों वेदों को अपने भीतर लिए हुए, उसी सरोवर में ब्रह्मा यानी पितामह का पद धारण करती है।

6.30.40

चितो ब्रह्मन्विचित्राणि शरीराणीह भूरिशः । पत्राणीव तरोर्हेम्नि केयूरादिक्रियेव च ॥ ४० ॥

cito brahmanvicitrāṇi śarīrāṇīha bhūriśaḥ | patrāṇīva tarorhemni keyūrādikriyeva ca || 40 ||

O wise one, from consciousness come many kinds of wondrous bodies here in plenty, just as leaves come from a tree, and just as armlets and other ornaments are made from gold.

हे बुद्धिमान, चेतना से यहाँ बहुत तरह के अनोखे शरीर भारी मात्रा में पैदा होते हैं, जैसे पेड़ से पत्ते निकलते हैं, और जैसे सोने से बाजूबंद वगैरह गहने बनाए जाते हैं।

6.30.41

चित्समस्तसुरानीकपरिवन्दितपादया त्रैलोक्यचूडामणितां धत्ते वासवलीलया ॥ ४१ ॥

citsamastasurānīkaparivanditapādayā trailokyacūḍāmaṇitāṃ dhatte vāsavalīlayā || 41 ||

Consciousness, whose feet are worshipped by the whole army of gods, takes on, through Indra's play, the state of being the crown jewel of the three worlds.

चेतना, जिसके चरणों की पूजा देवताओं की पूरी सेना करती है, इंद्र की लीला के ज़रिए तीनों लोकों के मुकुट मणि का पद धारण करती है।

6.30.42

चित्सुभास्वरतामेत्य त्रैलोक्योदरडम्बरे पतत्युदेति संयाति स्वात्मन्येवाब्धिवारिवत् ॥ ४२ ॥

citsubhāsvartāmetya trailokyodaraḍambare patatyudeti saṃyāti svātmanyevābdhivārivat || 42 ||

Consciousness, becoming radiant, seems to fall, rise, and pass away within the great display inside the three worlds, yet all this happens within itself alone, like the water of the ocean.

चेतना चमकीली होकर तीनों लोकों के भीतर के बड़े तमाशे में गिरती, उठती और चली जाती हुई सी दिखती है, पर यह सब उसके अपने भीतर ही होता है, जैसे समुद्र का पानी अपने ही भीतर उठता गिरता है।

6.30.43

चिच्चन्द्रिका चतुर्दिक्षु अवभासं वितन्वती विकासयति निःशेषभूतसत्ताकुमुद्वतीम् ॥ ४३ ॥

cicchandrikā caturdikṣu avabhāsaṃ vitanvatī vikāsayati niḥśeṣabhūtasattākumudvatīm || 43 ||

The moonlight of consciousness, spreading its glow in all four directions, makes the lily pond that is the existence of every single being bloom.

चेतना की चाँदनी चारों दिशाओं में अपना उजाला फैलाकर, हर एक प्राणी के अस्तित्व रूपी कुमुदिनी के तालाब को खिला देती है।

6.30.44

चिद्दर्पणमहालक्ष्मीस्त्रिजगत्प्रतिबिम्बितम् गृह्णात्यनुग्रहेणान्तः स्वगर्भमिव गर्भिणी ॥ ४४ ॥

ciddarpaṇamahālakṣmīstrijagatpratibimbhitam gṛhṇātyanugraheṇāntaḥ svagarbhmiv garbhiṇī || 44 ||

The great glory that is the mirror of consciousness holds within itself, out of its own grace, the reflected image of the three worlds, the way a pregnant woman holds her own child in the womb.

चेतना रूपी दर्पण की महान शोभा तीनों लोकों की झलक को अपनी ही कृपा से अपने भीतर थाम लेती है, जैसे गर्भवती स्त्री अपने गर्भ को अपने भीतर थामे रहती है।

6.30.45

चिद्दर्पणमहालक्ष्मीस्त्रिजगत्प्रतिबिम्बितम् गृह्णात्यनुग्रहेणान्तः स्वगर्भमिव गर्भिणी ॥ ४५ ॥

ciddarpaṇamahālakṣmīstrijagatpratibimbhitam gṛhṇātyanugraheṇāntaḥ svagarbhmiv garbhiṇī || 45 ||

The great glory that is the mirror of consciousness holds within itself, out of its own grace, the reflected image of the three worlds, the way a pregnant woman holds her own child in the womb.

चेतना रूपी दर्पण की महान शोभा तीनों लोकों की झलक को अपनी ही कृपा से अपने भीतर थाम लेती है, जैसे गर्भवती स्त्री अपने गर्भ को अपने भीतर थामे रहती है।

6.30.46

विचित्रालोककुसुमा घनसंकल्पपल्लवा । व्योमकेदारिकारूढा सत्तौघफलशालिनी ॥ ४६ ॥

vicitrālokakusumā ghanasaṃkalpapallavā | vyomakedārikārūḍhā sattaughaphalaśālinī || 46 ||

The creeper of consciousness has dazzling light for its flowers and dense thought for its young shoots; it has grown up on a plot of the sky, and it carries the abundance of all existence as its fruit.

चेतना की यह बेल चमकीले प्रकाश को अपने फूल बनाती है और घने विचार को अपनी नई कोंपलें; यह आकाश की क्यारी में उगी है, और सारे अस्तित्व की भरमार को अपने फल के रूप में लिए हुए है।

6.30.47

जीवजालरजःपुञ्जवासनारसरञ्जिता । संवेदनत्वग्वलिता चित्तेहाकलिकाकुला ॥ ४७ ॥

jīvajālarajaḥpuñjavāsanārasarañjitā | saṃvedanatvagvalitā cittēhākalikākulā || 47 ||

It is coloured by the sap of desire that is the pollen mass of the web of living beings; it is wrapped in the bark of awareness; and it is thick with the buds that are the mind's cravings.

यह जीवों के जाल के पराग जैसी वासना के रस से रंगी हुई है; यह जागरूकता की छाल में लिपटी है; और यह मन की चाहतों रूपी कलियों से भरी हुई है।

6.30.48

अतीतासंख्यत्रिजगत्केसरोज्ज्वलरूपिणी । अनारतस्पन्दमहाविलासोल्लासहासिनी ॥ ४८ ॥

atītāsaṃkhyatrijagatkēsarōjjvalarūpiṇī | anārataspandamahāvilāsōllāsahāsinī || 48 ||

Its shape shines bright, with countless past worlds as its threads, and it laughs with the joy of its own great, ceaseless play of motion.

इसका रूप अनगिनत बीते हुए तीनों लोकों को अपने रेशों जैसा बनाकर चमकता है, और यह लगातार चलती हलचल के महान खेल की खुशी से हँसती है।

6.30.49

सर्वर्तुपर्वपरुषा जडशैलादिगुल्मका । विग्रहग्रन्थिवलिता मूलाग्रपरिवर्तिता ॥ ४९ ॥

sarvartuparvaparuṣā jaḍaśailādigulmakā | vigrhagraṇthivalitā mūlāgraparivartitā || 49 ||

It has the joints of every season for its stem knots, and lifeless mountains and the like for its thickets; it is coiled round with the knots that are bodies, and it turns from its root to its tip.

इसकी गाँठें हर मौसम के पर्व जैसी हैं, और निर्जीव पहाड़ वगैरह इसकी झाड़ियाँ हैं; यह देह रूपी गाँठों से लिपटी है, और यह अपनी जड़ से लेकर अपनी नोक तक घूमती रहती है।

6.30.50

चिल्लतेयं विकसिता पेलवं सदसद्वपुः । विचित्रं दृश्यकुसुमं परामर्शासहं बहु ॥ ५० ॥

cillateyaṃ vikasitā pelavaṃ sadasadvapuḥ | vicitraṃ dṛśyakusumaṃ parāmarśāsaḥaṃ bahu || 50 ||

This creeper of consciousness has blossomed: delicate, its body something that is and is not, a wondrous flower to see, and in many ways beyond all grasp.

चेतना की यह बेल खिल उठी है: नाज़ुक, इसका रूप ऐसा है जो है भी और नहीं भी है, देखने में एक अनोखा फूल, और कई तरह से समझ से परे।

6.30.51

अनयेह हि सर्वत्र च्छायाच्छमिव जन्यते । मन्यते तन्यते वस्तु गीयते क्रियतेऽपि च ॥ ५१ ॥

anayeh hi sarvatra chChAyAchChamiva janyate | manyate tanyate vastu gIyate kriyate'pi cha || 51 ||

By this, indeed, everywhere here, like one shadow inside another, a thing is born, is thought about, is spread out, is spoken of, and is also made.

इसी की वजह से, यहाँ हर जगह, जैसे एक छाया के भीतर दूसरी छाया हो, कोई चीज़ पैदा होती है, सोची जाती है, फैलाई जाती है, कही जाती है, और बनाई भी जाती है।

6.30.52

महाचितानया नित्यं भासन्ते भास्करादयः । देहाः स्वदन्ते च मिथस्तत्सच्चिज्जडविभ्रमैः ॥ ५२ ॥

mahAchitAnayA nityaM bhAsante bhAskarAdayaH | dehAH svadante cha mithastatsachchijjDavibhramaiH || 52 ||

By this great consciousness, the sun and the rest shine forever, and bodies enjoy one another, through illusions that split it into being, awareness, and lifeless matter.

इस महान चेतना से सूरज वगैरह हमेशा चमकते हैं, और शरीर एक दूसरे का आनंद लेते हैं, उन भ्रमों के ज़रिए जो इसे होने, जागरूकता और निर्जीव पदार्थ में बाँट देते हैं।

6.30.53

चिता चावर्तवर्तिन्या सिद्धान्येव प्रनृत्यति । जगज्जालरजोलेखा तत्सत्ता दृश्यदेहिनी ॥ ५३ ॥

chitA chAvartavartinyA siddhAnyeva pranRtyati | jagajjAlarajolekhA tatsattA dRshyadehinI || 53 ||

Through consciousness dwelling in its own turning cycle, the trail of dust that is the web of the world, its being embodied as the visible, truly dances like a thing perfected.

अपने ही चक्र में घूमती हुई चेतना के ज़रिए, जगत के जाल की धूल की वह लकीर, जिसका अस्तित्व दिखने वाले रूप में ढला है, सचमुच किसी सिद्ध चीज़ की तरह नाचती है।

6.30.54

चित्सर्वं जगदारम्भमिमं प्रकटयत्यलम् । त्रैलोक्यदीपकशिखादीपो वर्णाश्रयं यथा ॥ ५४ ॥

chitsarvaM jagadArambhamimaM prakaTayatyalam | trailokyadIpakaSikhAdIpo varNAshrayaM yathA || 54 ||

Consciousness fully reveals this entire arising of the world, the way a lamp, the flame that lights the three worlds, reveals colours and shapes.

चेतना इस पूरे जगत के उठने को पूरी तरह प्रकट करती है, जैसे एक दीया, जो तीनों लोकों को रोशन करने वाली लौ है, रंगों और रूपों को उजागर करता है।

6.30.55

चिच्चन्द्रबिम्बे विमले शशवत्प्राप्य संगमम् । सर्वत्र लक्ष्यतामेति पदार्थश्रीर्जगद्गता ॥ ५५ ॥

chichchandrabimbe vimale shashavatprApya saMgamam | sarvatra lakShyatAmeti padArthashrIrjagadgatA || 55 ||

Once the glory of things spread through the world joins itself to the pure moon-disc of consciousness, the way a hare's mark belongs to the moon, it becomes visible everywhere.

जब दुनिया भर में फैली चीज़ों की शोभा चेतना के उस निर्मल चाँद से वैसे ही जुड़ जाती है जैसे चाँद पर खरगोश का निशान जुड़ा रहता है, तो वह हर जगह दिखने लगती है।

6.30.56

चिद्रसायनसेकेन पदार्थपटलावली । रूपमेति फलं चैव प्रावृट्सिक्तेव सल्लता ॥ ५६ ॥

cidrasāyanasekena padārthapaṭalāvalī | rūpameti phalaṃ caiva prāvṛṭsiktēva sallatā || 56 ||

When the whole array of things is sprinkled with the elixir of consciousness, it takes on shape and bears fruit, like a healthy vine watered by the rains.

जब चीज़ों के इस पूरे समूह पर चेतना का अमृत छिड़का जाता है, तो वह आकार लेता है और फल देता है, ठीक वैसे ही जैसे बारिश से सींची गई एक अच्छी बेल फलती-फूलती है।

6.30.57

चिच्छाययैव सर्वस्य जाड्यं सम्यगुदेति च । सर्वस्यास्य शरीरस्य गृहस्येव तमस्त्विह ॥ ५७ ॥

cicchāyayaiva sarvasya jāḍyaṃ samyagudeti ca | sarvasyāsya śarīrasya gṛhasyēva tamastvih || 57 ||

It is the shadow of consciousness that brings out the dullness in everything; dullness fills this whole body the way darkness fills a house.

चेतना की छाया से ही हर चीज़ में जड़ता उभरती है; जैसे किसी घर में अंधेरा भर जाता है, वैसे ही यह जड़ता इस पूरे शरीर में भरी रहती है।

6.30.58

चिच्चमत्कृतयो देहे न भवेयुरिमा यदि । त्रैलोक्यदेहास्त्यक्त्वैते न स्पृशेयुः किलाकृतिम् ॥ ५८ ॥

ciccmatkṛtayo dēhē na bhavēyurimā yadi | trailōkyadēhāstyaktvaitē na spṛśēyuḥ kilākṛtim || 58 ||

If consciousness did not work its wonders in the body, then every body in the three worlds would lose everything and never take shape at all.

अगर चेतना शरीर में अपने ये चमत्कार न दिखाए, तो तीनों लोकों का हर शरीर सब कुछ खो बैठे और कभी कोई आकार ही न ले पाए।

6.30.59

चिदाकाशप्रकाशेऽस्मिन्संकल्पशिशुधारिणी । क्रियाकुलवधूर्देहगृहे स्फुरति चञ्चला ॥ ५९ ॥

cidākāśaprakāśē'smin saṃkalpaśiśudhāriṇī | kriyākulavadhūrdēhagṛhē sphurati cañcalā || 59 ||

In this light of the open space of consciousness, action is like a restless young wife carrying her baby, which is intention: she flickers inside the house of the body.

चेतना के इस खुले आकाश जैसे प्रकाश में, क्रिया मानो एक चंचल नई दुल्हन है जो अपने शिशु यानी संकल्प को गोद में लिए हुए है: वह शरीर रूपी घर के भीतर टिमटिमाती रहती है।

6.30.60

चिदालोकं विना कस्य रसनाग्रे स्फुरन्नपि । कथं कदा प्रकटतामेति दृष्टः क्व वा रसः ॥ ६० ॥

cidālōkaṃ vinā kasya rasanāgrē sphurannapi | kathaṃ kadā prakaṭatāmēti dṛṣṭaḥ kvā vā rasāḥ || 60 ||

Without the light of consciousness, taste may flicker on the tip of the tongue, but how or when would anyone notice it there? Where has taste ever been experienced without that light?

चेतना के प्रकाश के बिना, स्वाद भले ही जीभ की नोक पर चमक उठे, पर कोई उसे वहाँ कैसे और कब पहचानेगा? चेतना के बिना स्वाद कभी किसी ने कहाँ अनुभव किया है?

6.30.61

शृण्वङ्ग स्वाङ्गशाखोऽपि कुन्तलालिलतोऽप्यलम् । चिन्मज्जनं विना देहवृक्षः क इव राजते ॥ ६१ ॥

śr̥ṇvaṅga svāṅgaśākho'pi kuntalālilato'pyalam | cinmajjanam vinā dehavr̥kṣaḥ ka iva rājate || 61 ||

Listen, friend: the tree that is the body has its own limbs for branches and thick curling hair like climbing vines, but without being steeped in consciousness, what does this tree of a body look like?

सुनो मित्र: शरीर रूपी यह पेड़ अपने अंगों को ही डालियाँ बनाए हुए है और घुँघराले बालों को बेल जैसा लटकाए हुए है, पर चेतना में डूबे बिना यह शरीर रूपी पेड़ आखिर कैसा दिखता है?

6.30.62

वर्धते विलुठत्यत्ति चिच्चराचरकारिणी । चिदेवास्तीतरन्नास्ति चिन्मात्रमिदमुत्थितम् ॥ ६२ ॥

vardhate viluṭhatyatti ciccarācarakāriṇī | cidevāstītarannāsti cinmātramidamutthitam || 62 ||

Consciousness grows, tumbles about, and eats; consciousness makes everything that moves and everything that stands still. Only consciousness exists, nothing else exists. All that has arisen here is consciousness alone.

चेतना ही बढ़ती है, लोटती है, खाती है; चेतना ही हर चलने वाली और हर अचल चीज़ को बनाती है। केवल चेतना है, और कुछ नहीं है। यहाँ जो कुछ भी उत्पन्न हुआ है, वह चेतना ही है।

6.30.63

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्तवांस्तदा त्र्यक्षः सुधांशुस्वच्छया गिरा । पुनः पृष्टो मया राम सुधांशुस्वच्छया गिरा ॥ ६३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktavāṃstadā tryakṣaḥ sudhāṃśusvacchayā girā | punaḥ pṛṣṭo mayā rāma sudhāṃśusvacchayā girā || 63 ||

Sri Vasishtha said: after the three-eyed Shiva had said this, in a voice clear as moonlight, I questioned him again, Rama, in a voice just as clear as moonlight.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तीन आँखों वाले शिव के यह बात चाँदनी जैसी निर्मल वाणी में कहने के बाद, हे राम, मैंने भी उतनी ही निर्मल, चाँदनी जैसी वाणी में उनसे फिर से सवाल पूछा।

6.30.64

यदि सर्वगता देव चिदस्त्येका तदात्मकः । तदयं चावनिस्फारमयान्धेव न चेतति ॥ ६४ ॥

yadi sarvagatā deva cidastyekā tadātmakaḥ | tadayaṃ cāvanisphāramayāndheva na cetati || 64 ||

If, my lord, there is one consciousness that goes everywhere, and this being is nothing but that consciousness, then why does it, like someone blind, fail to perceive even the vastness of the earth?

हे प्रभु, अगर एक ऐसी चेतना है जो हर जगह मौजूद है, और यह प्राणी उसी चेतना से बना है, तो यह किसी अंधे की तरह पृथ्वी की इस विशालता को भी क्यों नहीं देख पाता?

6.30.65

अयं चित्वान्पुरा भूत्वा चिद्धीनः संप्रति स्थितः । इतीयं कल्पना लोके प्रत्यक्षानुभवा कथम् ॥ ६५ ॥

ayaṃ citvānpurā bhūtvā ciddhīnaḥ saṃprati sthitaḥ | itīyaṃ kalpanā loke pratyakṣānubhavā katham || 65 ||

People say: this one used to be conscious, and now stands without consciousness. How is such an idea in the world ever something we directly experience?

लोग कहते हैं: यह पहले सचेत था, और अब चेतनारहित होकर खड़ा है। दुनिया में ऐसी बात को हम कभी सीधे अनुभव से कैसे जान सकते हैं?

6.30.66

ईश्वर उवाच । शृण्वेतदखिलं ब्रह्मन्यदा पृष्टं वदामि ते । महानयं त्वया प्रश्नः कृतो ब्रह्मविदां वर ॥ ६६ ॥

īśvara uvāca | śr̥ṇvetadakhilaṃ brahmanyadā pr̥ṣṭaṃ vadāmi te | mahānayaṃ tvayā praśnaḥ kr̥to brahmavidāṃ vara || 66 ||

Ishvara said: listen to all of this, sage. I will answer what you have asked. This is a great question you have raised, greatest among those who know the highest truth.

ईश्वर ने कहा: यह सब सुनो, हे मुनि। तुमने जो पूछा है, मैं उसका उत्तर दूँगा। तुमने बहुत बड़ा सवाल उठाया है, परम सत्य को जानने वालों में सबसे श्रेष्ठ।

6.30.67

चिदस्ति हि शरीरेह सर्वभूतमयात्मिका । चलोन्मुखात्मिकैका तु निर्विकल्पा परा स्मृता ॥ ६७ ॥

cidasti hi śarīreha sarvabhūtamayātmikā | calonmukhātmikaikā tu nirvikalpā parā smṛtā || 67 ||

Consciousness does exist in the body: it takes on the nature of every being and inclines toward movement. But there is one consciousness, remembered as supreme, that never changes.

चेतना शरीर में वास्तव में मौजूद है: वह हर प्राणी का स्वभाव धारण करती है और हलचल की ओर झुकी रहती है। पर एक चेतना ऐसी भी है जिसे परम कहा गया है, जो कभी नहीं बदलती।

6.30.68

संकल्पबुद्धा सैवान्तः स्वयमन्येव संस्थिता । संकल्पितेतरवरा दौःशील्यं स्त्री यथा गता ॥ ६८ ॥

saṃkalpabuddhā saivāntaḥ svayamanayeva saṃsthitā | saṃkalpitetaravarā dauḥśīlyaṃ strī yathā gatā || 68 ||

That same consciousness, roused by thought, stands within as if it were someone else, the same excellent one turned into another through imagination, like a good woman fallen into bad conduct.

वही चेतना, विचार से जाग उठकर, भीतर मानो किसी और रूप में खड़ी हो जाती है; वही उत्तम चेतना कल्पना के कारण कोई और बन जाती है, ठीक वैसे ही जैसे कोई भली स्त्री बुरे आचरण में गिर जाए।

6.30.69

स एव हि पुमान्कोपाद्यथेहान्य इव क्षणात् । भवत्येवं विकल्पाङ्का चित्स्वरूपान्यतां गता ॥ ६९ ॥

sa eva hi pumānkopādyathehānya iva kṣaṇāt | bhavatyevaṃ vikalpāṅkā cittasvarūpānyatāṃ gatā || 69 ||

Just as an angry man can turn, in a moment, into what seems like a different person, so consciousness, once marked by thought, turns into something other than its own true nature.

जैसे एक क्रोधित आदमी एक ही पल में मानो कोई दूसरा व्यक्ति बन जाता है, वैसे ही चेतना, विचारों से चिह्नित होकर, अपने असली स्वरूप से अलग कुछ और बन जाती है।

6.30.70

विकल्पकल्पिता ब्रह्मंश्चित्स्वरूपपरिच्युता । जाड्यं क्रमाद्भावयन्ती प्रयाति कलनापदम् ॥ ७० ॥

vikalpakalpitā brahmaṃścitsvarūpaparicyutā | jāḍyaṃ kramādbhāvayantī prayāti kalanāpadam || 70 ||

Sage, once consciousness is shaped by thought and falls away from its own true nature, it slowly grows dull and reaches the state where it acts and creates.

हे मुनि, जब चेतना विचारों से गढ़ी जाती है और अपने असली स्वरूप से गिर जाती है, तो वह धीरे-धीरे जड़ होती जाती है और कर्म करने, रचने की स्थिति तक पहुँच जाती है।

6.30.71

चित्स्वयं चेत्यतामेति साकाशपरमाणुताम् । शब्दबीजात्मिकां पश्चाद्वाततन्मात्रगामिनी ॥ ७१ ॥

citsvayaṃ cetyatāmeti sākāśaparamāṇutām | śabdabījātmikāṃ paścādvātatanmātragāminī || 71 ||

Consciousness itself becomes an object: it turns into a tiny particle of space, carrying the seed of sound, and from there moves on to the subtle stuff of air.

चेतना खुद ही एक विषय बन जाती है: वह आकाश का एक सूक्ष्म कण बन जाती है, जिसमें ध्वनि का बीज छिपा होता है, और फिर वहाँ से वायु के सूक्ष्म तत्व की ओर बढ़ जाती है।

6.30.72

देशकालविभागान्ता तन्मात्रवलिता क्रमात् । जीवो भूत्वा भवत्याशु बुद्धिः पश्चादहं मनः ॥ ७२ ॥

deśakālavibhāgāntā tanmātrāvalitā kramāt | jīvo bhūtvā bhavatyāśu buddhiḥ paścādahaṃ manaḥ || 72 ||

Wrapped in the subtle elements one after another, ending in the division into space and time, it quickly turns into a living being: first the intellect, then the sense of I, then the mind.

सूक्ष्म तत्वों में एक के बाद एक लिपटते हुए, और अंत में देश और काल के विभाजन तक पहुँचकर, वह जल्दी ही एक जीव बन जाती है; पहले बुद्धि, फिर मैं का भाव, फिर मन।

6.30.73

मनस्त्वं समुपायाता संसारमवलम्बते । चण्डालोऽस्मीति मननाच्चण्डालत्वमिव द्विजः ॥ ७३ ॥

manastvaṃ samupāyātā saṃsāramavalambate | caṇḍālo'smīti mananāccaṇḍālatvamiva dvijaḥ || 73 ||

Once it becomes mind, it clings to the world, the way a brahmin, merely by thinking I am an outcaste, takes on the state of an outcaste.

जब वह मन बन जाती है, तो संसार से चिपक जाती है; ठीक वैसे ही जैसे कोई ब्राह्मण सिर्फ यह सोचकर कि मैं अछूत हूँ, अछूत जैसी दशा को प्राप्त हो जाए।

6.30.74

संकल्पिताऽप्रबोधेन जाड्याऽविश्वप्रबोधिनी । शबलं रूपमासाद्य संकल्पाद्यात्यनारतम् ॥ ७४ ॥

saṃkalpitā'prabodhena jāḍyā'viśvaprabodhinī | śabalaṃ rūpamāsādya saṃkalpādyātyanāratam || 74 ||

Shaped by this failure to awaken, grown dull, no longer rousing the world into wakefulness, it takes on a mixed, changing form, and moves on endlessly, driven by thought.

इस न-जाग पाने के कारण गढ़ी हुई, जड़ हो चुकी, अब संसार को जगाने में असमर्थ, वह एक मिली-जुली, बदलती हुई शक्ल ले लेती है, और विचार के सहारे बिना रुके आगे बढ़ती चली जाती है।

6.30.75

अनन्तसंकल्पमयी जाड्यसंकल्पपीवरा । चिज्जाड्यान्मोदमायाति पयः पाषाणतामिव ॥ ७५ ॥

anantasaṃkalpamayī jāḍyasaṃkalpapīvarā | cijjāḍyānmōdamāyāti payaḥ pāṣāṇatāmiva || 75 ||

Consciousness, made entirely of endless thought and grown heavy with dull thinking, comes to find relish even in dullness, the way water can turn into stone.

चेतना, जो पूरी तरह अनंत विचारों से बनी है और जड़ विचारों से भारी हो गई है, जड़ता में भी एक तरह का रस पा लेती है, ठीक वैसे ही जैसे पानी पत्थर में बदल सकता है।

6.30.76

ततश्चित्तं मनोमोहो मायेति विहिताभिधा । जाड्यं निपुणमाश्रित्य संसारे जायते मुने ॥ ७६ ॥

tatashchittaṃ manomoho māyeti vihitābhidhā | jāḍyaṃ nipuṇamāśritya saṃsāre jāyate mune || 76 ||

Then it becomes thought, the mind's confusion, given the name illusion. Having settled completely into dullness, it is born into the round of worldly life, sage.

फिर वह विचार बन जाती है, मन का भ्रम, जिसे भ्रम यानी माया का नाम दिया गया है। जड़ता में पूरी तरह बस जाने के बाद, हे मुनि, वह संसार के चक्र में जन्म लेती है।

6.30.77

मोहमान्द्यमुपायाता तृष्णानिगडपीडिता । कामक्रोधभयोपेता भावाभावातिपातिनी ॥ ७७ ॥

mohamāndyamupāyātā tṛṣṇānigaḍapīḍitā | kāmakrodhabhayopetā bhāvābhāvātipātinī || 77 ||

Grown sluggish with delusion, bound tight by the shackles of craving, gripped by desire, anger and fear, swinging endlessly between existing and not existing.

मोह से सुस्त हो चुकी, तृष्णा की बेड़ियों में जकड़ी हुई, इच्छा, क्रोध और डर से घिरी हुई, वह लगातार होने और न होने के बीच झूलती रहती है।

6.30.78

त्यक्तानन्तनिजाभोगा व्यवच्छेदविकारिणी । दुःखदावानलातप्ता शोकाशिवकृशाशया ॥ ७८ ॥

tyaktānantanijābhogā vyavacchedavikāriṇī | duḥkhadāvānalātaptā śokāśivakṛśāśayā || 78 ||

It has given up its own boundless joys, and keeps changing as it splits itself apart; it is burned by the wildfire of suffering, its heart worn thin by bitter grief.

उसने अपने असीम आनंद को छोड़ दिया है, और खुद को टुकड़ों में बाँटते हुए लगातार बदलती रहती है; वह दुख की जंगल की आग में जलती है, और कड़वे शोक से उसका मन कमज़ोर पड़ गया है।

6.30.79

इयमस्मीति भावेन शून्येन विकलीकृता । देहमात्रगृहीतास्था परं दैन्यमुपागता ॥ ७९ ॥

iyamasmīti bhāvena śūnyena vikalīkṛtā | dehamātragṛhītāsthā paraṃ dainyamupāgatā || 79 ||

Crippled by the empty thought I am this body, it puts all its trust in the body alone, and falls into utter misery.

मैं यही शरीर हूँ, इस खोखले विचार से अपंग होकर, वह सिर्फ शरीर पर ही पूरा भरोसा रखती है, और गहरी दुर्दशा में जा गिरती है।

6.30.80

मग्ना मोहमहापङ्के जीर्णेव वनदन्तिनी । भावाभावलतादोला परिलोलशरीरका ॥ ८० ॥

magnā mohamahāpaṅke jīrṇeva vanadantinī | bhāvābhāvalatādolā parilolaśarīrakā || 80 ||

Sunk in the great mire of delusion like an old elephant stuck in a forest swamp, it swings on a vine of being and not being, its little body swaying restlessly.

मोह के बड़े दलदल में डूबी हुई, ठीक वैसे ही जैसे जंगल का कोई बूढ़ा हाथी दलदल में फँस जाए, वह होने और न होने की बेल पर झूलती रहती है, और उसका छोटा-सा शरीर बेचैनी से हिलता-डुलता रहता है।

6.30.81

असारापारसंसारविकारव्यवहारिणी । तापोपतप्तहृदया रागतेजोनुरञ्जिता ॥ ८१ ॥

asārāpārasaṃsāravikāravyavahāriṇī | tāpopataptahṛdayā rāgatejonurañjitā || 81 ||

Forever caught up in the endless, empty changes of this world, its heart scorched with torment, colored by the burning glow of passion.

इस संसार के अंतहीन, खोखले बदलावों में हमेशा उलझी हुई, उसका मन पीड़ा से झुलसा हुआ है, और वह वासना की जलती चमक से रंगी हुई है।

6.30.82

निजयूथपरिभ्रष्टा मृगीवावशतां गता । आविर्भावोदिताकारा तिरोभावेऽस्तमागता ॥ ८२ ॥

nijayūthaparibhraṣṭā mṛgīvāvaśatāṃ gatā | āvirbhāvoditākārā tirobhāve'stamāgatā || 82 ||

Strayed from its own herd like a helpless doe, it rises into shape when it appears, and sets like the sun when it fades away.

अपने ही झुंड से भटककर एक असहाय हिरणी की तरह, वह प्रकट होने पर आकार लेकर उभरती है, और ओझल होने पर सूरज की तरह डूब जाती है।

6.30.83

स्वसंकल्पोपयातासु भीता संभ्रमदृष्टिषु । पलायते वाष्वन्यासु वेतालेष्विव बालिका ॥ ८३ ॥

svasaṃkalpopayātāsu bhītā saṃbhramadṛṣṭiṣu | palāyate vāṣvanyāsu vetāleṣviva bālikā || 83 ||

Among these things that her own imagination has produced, whose sight bewilders her, she is frightened and runs away, like a young girl fleeing among ghosts.

अपनी ही कल्पना से पैदा हुई इन चीज़ों के बीच, जिनका रूप देखकर होश उड़ जाते हैं, वह डर के मारे भागती है, जैसे कोई छोटी लड़की भूतों के बीच भागती है।

6.30.84

उष्ट्रीव मधुरं विन्दुं वाञ्छते भावितं सुखम् । अवान्तरपरिभ्रष्टा दोषाद्दोषं पतत्यधः ॥ ८४ ॥

uṣṭrīva madhuraṃ vinduṃ vāñchate bhāvitaṃ sukham | avāntaraparibhraṣṭā doṣāddoṣaṃ patatyadhaḥ || 84 ||

Like a she-camel longing for a sweet drop, she longs for a happiness that is only imagined; slipping in between, she falls downward from one fault into the next.

जैसे कोई ऊँटनी किसी मीठी बूँद के लिए तरसती है, वैसे ही वह एक ऐसे सुख के लिए तरसती है जो सिर्फ़ उसकी कल्पना में है; बीच में ही फिसलकर वह एक दोष से दूसरे दोष में गिरती चली जाती है।

6.30.85

परं वैषम्यमायाति संकटात्संकटं गता । दुःखाद्दुःखं निपतिता विपदो विपदि स्थिता ॥ ८५ ॥

paraṃ vaiṣamyamāyāti saṃkaṭātsaṃkaṭaṃ gatā | duḥkhāddhuḥkhaṃ nipatitā vipado vipadi sthitā || 85 ||

She comes to the worst distress, going from one tight spot into another; she falls from one sorrow into the next sorrow, and stands from one disaster in another disaster.

वह सबसे बुरी मुसीबत में पड़ जाती है, एक तंगी से दूसरी तंगी में जाती हुई; वह एक दुख से दूसरे दुख में गिरती है, और एक विपत्ति से दूसरी विपत्ति में जा खड़ी होती है।

6.30.86

नानानर्थगणोपेता चेष्टापरवशाशयाकष्टात्कष्टमनुप्राप्ता परितापानुतापिनी ॥ ८६ ॥

nānānarthagaṇopetā ceṣṭāparavaśāśayākaṣṭātkaṣṭamanuprāptā paritāpānutāpinī || 86 ||

Joined with many kinds of misfortune, her mind helplessly driven by her own actions, she passes from ease into hardship, and grieves with torment after torment.

अनेक तरह की मुसीबतों से घिरी हुई, उसका मन अपने ही कामों के आगे बेबस है; वह आराम से निकलकर मुसीबत में जा पड़ती है, और तकलीफ़ पर तकलीफ़ सहकर पछताती रहती है।

6.30.87

क्रमादाबद्धवैदग्ध्याद्वैदग्ध्याङ्गमुपागताविचित्रबन्धनिर्माणपराक्रमपदं गता ॥ ८७ ॥

kramādābaddhavaidagdhyādvaidagdhyāṅgamupāgatāvicitrabandhanirmāṇaparākramapadaṃ gatā || 87 ||

Step by step, having gained skill, she becomes skill itself; she reaches the power to build bonds of every strange kind.

धीरे-धीरे चतुराई सीखकर वह खुद चतुराई का ही रूप बन जाती है; वह तरह-तरह के अजीब बंधन बनाने की ताक़त पा लेती है।

6.30.88

सर्वतः शङ्कते भीता प्राणात्ययमुपागताक्षीणतोयेव शफरी विवर्तनपरायणा ॥ ८८ ॥

sarvataḥ śaṅkate bhītā prāṇātyayamupāgatākṣīṇatoyeva śapharī vivartanaparāyaṇā || 88 ||

Frightened, she suspects danger on every side, coming close to death, like a little fish in a drying pool, desperate, turning this way and that.

डरी हुई, वह हर तरफ़ ख़तरे की आशंका करती है, मौत के क़रीब पहुँची हुई, जैसे सूखते हुए तालाब में कोई छोटी मछली घबराकर इधर-उधर पलटती रहती है।

6.30.89

बाल्ये विवशसर्वार्था यौवने चिन्तयाऽऽवृतावार्धकेऽप्यतिदुःखार्ता मृता कर्मवशीकृता ॥ ८९ ॥

bālye vivaśasarvārthā yauvane cintayā''vṛtāvārdhake'pyatiduḥkhārtā mṛtā karmavaśīkṛtā || 89 ||

In childhood she is helpless in everything she wants; in youth she is wrapped in worry; in old age too she suffers great pain; and in death she is ruled by her own karma.

बचपन में वह जो चाहती है उसमें बेबस रहती है; जवानी में वह चिंता से घिरी रहती है; बुढ़ापे में भी उसे बहुत तकलीफ़ होती है; और मरने पर वह अपने ही कर्मों के वश में होती है।

6.30.90

जायते स्वर्गनगरे नागी पातालकोटरेआसुरी दैत्यविवरे नरस्त्री वसुधातले ॥ ९० ॥

jāyate svarganagare nāgī pātālakoṭareāsurī daityavivare narastrī vasudhātale || 90 ||

She is born in heaven's city; a serpent-woman in a cave of the underworld; an asura-woman in a pit of the daityas; a human woman on the face of the earth.

वह स्वर्ग की नगरी में जन्म लेती है; पाताल की किसी गुफा में नागिन बनकर; दैत्यों के किसी बिल में असुर-स्त्री बनकर; और धरती पर मनुष्य-स्त्री बनकर।

6.30.91

राक्षसी राक्षसाधारे वानरी वनकोटरे । सिंही गिरीन्द्रशिखरे किन्नरी कुलपर्वते ॥ ९१ ॥

rākṣasī rākṣasādhāre vānarī vanakoṭare | siṃhī girīndraśikhare kinnarī kulaparvate || 91 ||

A rakshasi in the home of the rakshasas, a she-monkey in a hollow of the forest, a lioness on the peak of the king of mountains, a kinnari on a great mountain range.

राक्षसों के घर में राक्षसी, जंगल की किसी खोह में बंदरिया, पहाड़ों के राजा की चोटी पर शेरनी, किसी बड़े पर्वत पर किन्नरी।

6.30.92

विद्याधरी देवगिरौ व्याली च वनगर्तके । लता तरौ खगी नीडे वीरुत्सानौ वने मृगी ॥ ९२ ॥

vidyādharī devagirau vyālī ca vanagartake | latā tarau khagī nīḍe vīrutsānau vane mṛgī || 92 ||

A vidyadhari on the mountain of the gods, a female serpent in a pit of the forest, a creeper on a tree, a bird in a nest, a shrub on a mountain ridge, a doe in the forest.

देवताओं के पर्वत पर विद्याधरी, जंगल के किसी गड्ढे में सँपिनी, पेड़ पर बेल, घोंसले में चिड़िया, पहाड़ की चोटी पर झाड़ी, जंगल में हिरनी।

6.30.93

शेते नारायणोऽम्भोधौ ध्यानी ब्रह्मपुरेऽब्जजः । कान्तागतो हरः शैले स्वर्गे सुरवरो हरिः ॥ ९३ ॥

śete nārāyaṇo'mbhodhau dhyānī brahmapure'bjajaḥ | kāntāgato haraḥ śaile svarge suravaro hariḥ || 93 ||

Narayana lies on the ocean; Brahma, the lotus-born, meditates in his own city; Hara, gone to his beloved, is on the mountain; in heaven is Hari, best of the gods.

नारायण समुद्र पर लेटे हैं; कमल से जन्मे ब्रह्मा अपनी नगरी में ध्यान लगाए हैं; हर अपनी प्रिया के पास पर्वत पर हैं; स्वर्ग में देवताओं में श्रेष्ठ हरि हैं।

6.30.94

दिनं करोति तीक्ष्णांशुर्वर्षत्यम्बुधरो जलम् । करोति श्वसनं संवित्सपर्वतमहोदधिम् ॥ ९४ ॥

dinaṃ karoti tīkṣṇāṃśurvarṣatyambudharo jalam | karoti śvasanaṃ saṃvitsaparvatamahodadhim || 94 ||

The sharp-rayed sun makes the day; the cloud pours down rain; consciousness makes the wind that moves over the mountains and the great ocean.

तीखी किरणों वाला सूरज दिन बनाता है; बादल बारिश बरसाता है; चेतना ही वह हवा बनाती है जो पहाड़ों और बड़े समुद्र पर चलती है।

6.30.95

ऋतुचक्रं प्रवहति सहसा कालमण्डलम् । दिनरात्रितयोपैति तेजस्तिमिरतां क्रमात् ॥ ९५ ॥

ṛtucakraṃ pravahati sahasā kālamaṇḍalam | dinarātritayopaiti tejastimiratāṃ kramāt || 95 ||

She flows on, all at once, as the wheel of the seasons, as the circle of time; through day and night, in turn, she becomes light, and she becomes darkness.

वह अचानक ऋतुओं के चक्र और समय के मंडल के रूप में बहती है; दिन और रात के ज़रिए, बारी-बारी से, वह उजाला बनती है और अँधेरा बनती है।

6.30.96

क्वचिद्बीजरसोल्लासात्क्वचित्पाषाणमौनिनी क्वचिन्नदी रसवती क्वचित्कुमुदविस्तृतिः ॥ ९६ ॥

kva cid bīja rasollāsāt kva cit pāṣāṇam auninī kva cin nadī rasavatī kva cit kumudavistṛtiḥ || 96 ||

Somewhere she bursts out with delight as the sap of a seed; somewhere she is silent like a stone; somewhere she is a river, flowing with water; somewhere she is a wide bed of white lotuses.

कहीं वह बीज के रस के उमंग से फूट पड़ती है; कहीं वह पत्थर की तरह चुप रहती है; कहीं वह जल से भरी नदी है; कहीं वह फैले हुए सफ़ेद कमलों के रूप में होती है।

6.30.97

क्वचित्फलावलीपाकैः क्वचित्काष्ठानलादिभिः क्वचिच्छैत्यहिमद्वारि क्वचित्खादि न किंचन ॥ ९७ ॥

kva cit phalāvalīpākaiḥ kva cit kāṣṭhānalādibhiḥ kva cicchait yahimadvāri kva cit khādi na kiñcana || 97 ||

Somewhere she is in the ripening rows of fruit; somewhere in wood and fire and such things; somewhere in the cold, in ice, in water; somewhere there is nothing at all to eat.

कहीं वह पके हुए फलों की क़तार में है; कहीं लकड़ी और आग जैसी चीज़ों में है; कहीं ठंड में, बर्फ़ में, पानी में है; कहीं खाने को कुछ भी नहीं है।

6.30.98

क्वचिदुज्ज्वलिताकारा क्वचित्कष्टा शिला क्वचित् क्वचिन्नीलाथ हरिता क्वचिदग्निः क्वचिन्मही ॥ ९८ ॥

kva cid ujjvalitākārā kva cit kṣṭā śilā kva cit kva cin nīlātha haritā kva cid agniḥ kva cin mahī || 98 ||

Somewhere she has a blazing form; somewhere she is a hard rock; somewhere she is blue, or she is green; somewhere she is fire; somewhere she is the earth.

कहीं उसका रूप जलता-चमकता है; कहीं वह कठोर चट्टान है; कहीं वह नीली है, या हरी है; कहीं वह आग है; कहीं वह धरती है।

6.30.99

सर्वात्मत्वात्सर्वगत्वात्सर्वशक्तित्वयोगतः सर्वत्वादेवंरूपैव खादप्यच्छैव सा परा ॥ ९९ ॥

sarvātmavāt sarvagatvāt sarvaśaktitvayogataḥ sarvatvādevaṃrūpaiva khādapyacchai va sā parā || 99 ||

Because she is the self of everything, because she is present everywhere, because she carries every power, because she is everything, she has just this one form; clearer even than the sky, she is the highest.

क्योंकि वह सबकी आत्मा है, क्योंकि वह हर जगह मौजूद है, क्योंकि उसमें हर शक्ति है, क्योंकि वह ही सब कुछ है, इसलिए उसका यही एक रूप है; आकाश से भी ज़्यादा साफ़, वह सबसे ऊँची है।

6.30.100

चिच्चिनोति यथात्मानं येन यत्र यदा यदा तत्तथानुभवत्यम्बु स्पन्दाद्वीच्यादितां यथा ॥ १०० ॥

ciccinoti yathātmānaṃ yena yatra yadā yadā tattathānubhavatyambu spandādvīcyāditāṃ yathā || 100 ||

Just as water, when it stirs, becomes a wave and the rest, so consciousness, in whatever way, by whatever cause, wherever, whenever it comes to know itself, experiences itself in that very way.

जैसे पानी हिलने पर लहर वगैरह बन जाता है, वैसे ही चेतना जिस तरह, जिस कारण से, जहाँ, जब भी अपने आप को जानती है, वैसे ही अपने आप को अनुभव करती है।

6.30.101

हंसी क्रौञ्ची बकी काकी सारसी तुरगी वृकीबकी बलाका हरिणी वानरी किन्नरी शुनी ॥ १०१ ॥

haṃsī krauñcī bakī kākī sārasī turagī vṛkībakī balākā hariṇī vānarī kinnarī śunī || 101 ||

A female swan, a female curlew, a female stork, a female crow, a female sarus crane, a mare, a she-wolf, a female stork, a female crane, a doe, a she-monkey, a kinnari, a female dog.

हंसिनी, क्रौंची, बगुली, कौवी, सारसिन, घोड़ी, भेड़िन, बगुली, बलाका, हिरनी, बंदरिया, किन्नरी, कुतिया।

6.30.102

वटीका पिंगली शाली मक्षिका भ्रमरी शुकीधीः श्रीर्ह्रीः प्रीती रतिश्च शंबरी शर्वरी शशी ॥ १०२ ॥

vaṭīkā piṅgalī śālī makṣikā bhramarī śukīdhīḥ śrīrhrīḥ prītī ratiśca śaṃbarī śarvarī śaśī || 102 ||

A young banyan tree, a tawny lizard, a rice plant, a fly, a bee, a female parrot, understanding, fortune, modesty, affection, and desire, a sambar doe, the night, the moon.

छोटा बरगद, कोई भूरी छिपकली, धान का पौधा, मक्खी, भँवरा, तोती, बुद्धि, सम्पत्ति, लाज, स्नेह और चाह, सांभर हिरनी, रात, चाँद।

6.30.103

एतास्वन्यासु चान्यासु परिभ्रमति योनिषुविवर्तमानसंसारे जलावर्ते तृणं यथा ॥ १०३ ॥

etāsvanyāsu cānyāsu paribhramati yoniṣuvivartamānasaṃsāre jalāvarte tṛṇaṃ yathā || 103 ||

Among these wombs, and others, and yet others, she wanders in this ever-turning cycle of rebirth, like a blade of grass caught in a whirlpool.

इन गर्भों में, और दूसरे गर्भों में, और फिर दूसरे गर्भों में, वह इस घूमते हुए संसार-चक्र में भटकती रहती है, जैसे कोई तिनका भँवर में घूमता रहता है।

6.30.104

बिभेत्यथ स्वसंकल्पात्स्वशब्दादिव गर्दभीनानया सदृगन्यास्ति मुग्धा बाला चलाऽबला ॥ १०४ ॥

bibhetyatha svasaṃkalpātsvaśabdādiva gardabhīnānayā sadṛganyāsti mugdhā bālā calā'balā || 104 ||

Then she is afraid of her own thought, like a she-donkey afraid of her own braying; there is no other like her, a bewildered young girl, restless and powerless.

फिर वह अपने ही विचार से डर जाती है, जैसे कोई गधी अपनी ही आवाज़ से डर जाती है; उसके जैसी कोई दूसरी नहीं, एक भोली-भाली, चंचल और कमज़ोर लड़की।

6.30.105

एषा सा कथिता तुभ्यं जीवशक्तिर्महामुनेप्राकृताचारविवशा वराकी पशुधर्मिणी ॥ १०५ ॥

eṣā sā kathitā tubhyaṃ jīvaśaktirmahāmuneprākṛtācāravivaśā varākī paśudharmiṇī || 105 ||

This, great sage, is the power of the soul that I have told you about, helpless in her worldly ways, wretched, living by the law of an animal.

हे महामुनि, यही वह आत्म-शक्ति है जो मैंने तुम्हें बताई है; अपने सांसारिक स्वभाव में बेबस, बेचारी, और पशु की तरह जीने वाली।

6.30.106

कर्मात्मेत्यभिधां प्राप्ता शोच्यास्य परमात्मनः । अनन्तं दुःखबहुलं स्वयं विभ्रममाश्रिता ॥ १०६ ॥

karmātmetyabhidhāṃ prāptā śocyāsya paramātmanaḥ | anantaṃ duḥkhabahulaṃ svayaṃ vibhramamāśritā || 106 ||

She has come to be called 'the self of action,' a pitiable part of this supreme self; on her own she has taken shelter in an endless confusion, full of sorrow.

वह 'कर्म-रूप आत्मा' कहलाने लगी है, इस परम आत्मा का एक दुखी हिस्सा; उसने अपने आप एक अंतहीन उलझन में शरण ली है, जो दुखों से भरी है।

6.30.107

असदेवानयाक्रान्तं विनाशि सहजं मलम्। तण्डुलेनेव कञ्चूकमनन्ययाऽव्यवस्थितम्॥ १०७॥

asadevānayākrāntaṃ vināśi sahajaṃ malam | taṇḍuleneva kañcūkamananyayā'vyavasthitam || 107 ||

It is only what is unreal that has taken hold of her, an inborn stain that will perish, like the husk on a grain of rice; not different from her, yet without any fixed being of its own.

जो असत् है, उसी ने उसे घेर रखा है, एक जन्मजात मैल जो नष्ट हो जाने वाला है, जैसे चावल के दाने पर छिलका होता है; वह उससे अलग नहीं है, फिर भी उसका अपना कोई पक्का अस्तित्व नहीं है।

6.30.108

अनन्तविभवभ्रष्टा दौर्भाग्यपरितापिनी। शोचन्ती प्राप्य जीवत्वं भर्तृहीनेव नायिका॥ १०८॥

anantavibhavabhrastā daurbhāgyaparitāpinī | śocantī prāpya jīvatvaṃ bhartṛhīneva nāyikā || 108 ||

Fallen from endless wealth, and burning with misfortune, she grieves on reaching the state of a living being, like a woman left without her husband.

अनंत वैभव से गिरी हुई, और दुर्भाग्य से जलती हुई, वह जीव बनकर दुख मनाती है, जैसे कोई स्त्री अपने पति के बिना दुखी होती है।

6.30.109

जडगतेरवलोकय शक्ततां निजपदस्मरणेन विनेह चित्। व्रजति कष्टमधः पतनाय या यदरघट्टघटीघनपीठवत्॥ १०९॥

jaḍagateravalokaya śaktatāṃ nijapadasmarṇena vineha cit | vrajati kaṣṭamadhaḥ patanāya yā yadaraghaṭṭaghaṭīghanapīṭhavat || 109 ||

See the power in the way that dull matter moves. Here, consciousness, without remembering its own true place, goes down into hardship and falls, the way the buckets go down, one after another, on the wheel of a well.

देखो, जड़ पदार्थ की चाल में कैसी ताक़त है। यहाँ चेतना अपने असली स्थान को भूलकर मुसीबत में नीचे गिरती चली जाती है, जैसे कुएँ के चक्र में बाल्टियाँ एक के बाद एक नीचे जाती हैं।

Chapter 31

6.31.1

ईश्वर उवाच । चिनोत्यलीकमेवैवं सदुःखास्मीति भावनात् । चित्स्वप्नक्षीबतामोहपतिता संभ्रमे यथा ॥ १ ॥

īśvara uvāca | cinotyalīkamevaivam saduḥkhāsmīti bhāvanāt | cittasvapnakṣībatāmohapatitā sambhrame yathā || 1 ||

Ishvara said: Believing 'I am sorrowful,' consciousness in this way creates only something unreal - it has fallen into a delusion like the drunkenness of a dream, into sheer confusion.

ईश्वर ने कहा: 'मैं दुखी हूँ' ऐसा मानकर चेतना इस तरह बस एक झूठी चीज़ को जन्म देती है - वह सपने में हुए नशे जैसे भ्रम में, पूरी उलझन में जा गिरती है।

6.31.2

अमृतापि मृतास्मीति विपर्यस्तमतिर्वधूः । यथा रोदित्यनष्टैव नष्टास्मीति तथैव चित् ॥ २ ॥

amṛtāpi mṛtāsmīti viparyastamatirvadhūḥ | yathā rodityanaṣṭaiva naṣṭāsmīti tathaiva cit || 2 ||

Just as a young bride who is not dead at all gets it backward and thinks, 'I am dead,' and weeps, though she is not ruined in the least, thinking 'I am ruined' - consciousness does the very same thing.

जैसे कोई नवविवाहिता, जो मरी नहीं है, उलटी सोच के कारण यह मान बैठती है कि 'मैं मर गई हूँ' और रोने लगती है, जबकि वह बिलकुल नष्ट नहीं हुई फिर भी सोचती है 'मैं नष्ट हो गई' - ठीक वैसे ही चेतना भी करती है।

6.31.3

अकारणं विपर्यस्ता मतिर्भ्रान्तमपि स्थिरम् । यथा जगत्पश्यतीदं तथाहंताभ्रमाच्चितिः ॥ ३ ॥

akāraṇam viparyastā matirbhāntamapi sthiram | yathā jagatpaśyatīdam tathāhaṃtābharmāccitiḥ || 3 ||

For no real reason, a bewildered mind sees even something perfectly steady as if it were reeling, the way it sees this whole world. In the same way, through the delusion of 'I,' consciousness sees wrongly too.

बिना किसी असली वजह के, एक भ्रमित मन बिलकुल स्थिर चीज़ को भी हिलती हुई देख लेता है, जैसे वह इस पूरी दुनिया को देखता है। उसी तरह, 'मैं' के भ्रम से चेतना भी गलत देखती है।

6.31.4

चित्तं हि कारणं त्वस्याः संसारानुभवे चितेः । न च तत्कारणं किंचिच्चित्त्वान्यत्वात्यसंभवात् ॥ ४ ॥

cittaṃ hi kāraṇam tvasyāḥ saṃsārānubhave citeḥ | na ca tatkāraṇam kiṃciccittvānyatvātyasambhavāt || 4 ||

The mind is indeed said to be the cause of consciousness's experience of the world. But it is not really any cause at all, because it is utterly impossible for the mind to be anything separate from consciousness.

मन को ही चेतना के इस संसार के अनुभव का कारण कहा जाता है। पर वह असल में कोई कारण नहीं है, क्योंकि मन का चेतना से बिलकुल अलग होना संभव ही नहीं है।

6.31.5

एवं हि कारणाभावाच्चेत्यस्यासंभवादिति । नासौ चित्तं ततश्चेत्यं यत्नतश्चेत्यते यया ॥ ५ ॥

evaṃ hi kāraṇābhāvāccetyasyāsaṃbhāvāditi | nāsau cittaṃ tataścetyaṃ yatnataścetyate yayā || 5 ||

So indeed, since there is no such cause, the thing perceived is itself impossible - that is what is meant. That thing, then, is not the mind; it is only the perceived object, which consciousness perceives by its own effort.

तो इस तरह, जब कोई असली कारण है ही नहीं, तब जो देखा जाता है वह भी वास्तव में संभव नहीं है - यही बात है। वह चीज़ मन नहीं है, बल्कि सिर्फ एक देखी गई वस्तु है, जिसे चेतना खुद प्रयास करके देखती है।

6.31.6

न दृश्यदर्शनद्रष्ट्रूपं तैलमिवोपले । न कर्तृकर्मकरणं दृशीन्दाविव कृष्णता ॥ ६ ॥

na dṛśyadarśanadraṣṭrarūpaṃ tailamivopale | na kartṛkarma-karaṇaṃ dṛśīndāviva kṛṣṇatā || 6 ||

Consciousness has no seer, no seeing and no thing seen within it - just as no oil is hidden inside a stone. It has no one who acts, nothing acted upon, and no tool for acting within it - just as no blackness is hidden inside the shining moon.

चेतना में न कोई देखने वाला है, न देखना है, न देखी गई चीज़ - जैसे किसी पत्थर में तेल छुपा नहीं होता। इसमें न कोई करने वाला है, न कोई काम की गई चीज़, न कोई साधन - जैसे चमकते चाँद में कालापन छुपा नहीं होता।

6.31.7

न मातृमेयमानानि नभसीव नवाङ्कुरः । न चिच्चेतनचेत्यादि नन्दने खदिरो यथा ॥ ७ ॥

na mātṛmeyamānāni nabhasīva navāṅkuraḥ | na cic-cetana-cetyādi nandane khadiro yathā || 7 ||

It has no knower, no known thing and no act of knowing in it, just as no new sprout grows in the sky. It has no consciousness, a conscious being and an object of consciousness in it, just as no khadira tree grows in Nandana, the heavenly garden.

उसमें न कोई जानने वाला है, न जानी गई चीज़, न जानना - जैसे आकाश में कोई नया अंकुर नहीं उगता। उसमें चेतना, चेतन प्राणी और चेतना का विषय जैसी कोई अलग-अलग चीज़ नहीं है, जैसे नंदन वन में कोई खैर का पेड़ नहीं उगता।

6.31.8

नाहंत्वत्वंत्वतत्त्वादि पर्वतत्वमिवाम्बरे । सदेहत्वान्यदेहत्वे शङ्खत्वमिव कज्जले ॥ ८ ॥

nāhaṃtvatvatvatattvādi parvatatvamivāmbare | sadehatvānyadehatve śaṅkhatvamiva kajjale || 8 ||

It has no 'I,' no 'you,' no 'that' and so on in it, just as there is no mountain in the sky. It has no 'this is my body' and 'that is another's body' in it, just as there is no whiteness of a conch shell in black soot.

उसमें 'मैं', 'तू', 'वह' जैसी कोई चीज़ नहीं है, जैसे आकाश में कोई पहाड़ नहीं होता। उसमें 'यह मेरा शरीर है' और 'वह दूसरे का शरीर है' जैसा कोई भेद नहीं है, जैसे काली कालिख में शंख जैसी सफेदी नहीं होती।

6.31.9

नानाऽनाना न चाप्यन्तरणाविव सुमेरवः । न च शब्दार्थशब्दश्रीर्महोषरलता यथा ॥ ९ ॥

nānā'nānā na cāpyantaraṇāviva sumeravaḥ | na ca śabdārthaśabdaśrīrmahoṣaralatā yathā || 9 ||

It is not many things, and it is not one thing that is 'not-many' either - it is not like many Sumeru mountains packed into a single atom. And the beauty of words together with their meanings does not touch it, any more than a vine grows in a barren, salty field.

वह न तो अनेक है, न ही एक 'अनेक-रहित' चीज़ है - वह ऐसी नहीं कि एक कण में कई सुमेरु पर्वत समा जाएँ। शब्दों और उनके अर्थों की सारी शोभा भी उस तक नहीं पहुँचती, जैसे किसी बंजर खारी ज़मीन में कोई बेल नहीं उगती।

6.31.10

नेति नेति न चैवार्कमण्डले रजनी यथा । न वस्तुतावस्तुते च तुषारे तु यथोष्णता ॥ १० ॥

neti neti na caivārkamaṇḍale rajanī yathā | na vastutāvastute ca tuṣāre tu yathoṣṇatā || 10 ||

Of it one can only say, 'not this, not this' - just as there is no night inside the disc of the sun. It is neither a real thing nor an unreal thing, just as there is no warmth in frost.

उसके बारे में बस इतना कहा जा सकता है - 'यह नहीं, यह नहीं' - जैसे सूरज के गोले में कभी रात नहीं होती। वह न तो कोई असली चीज़ है, न ही झूठी चीज़, जैसे बर्फ़ में कभी गर्मी नहीं होती।

6.31.11

न शून्यताशून्यते वा शिलाकोश इव द्रुमः । शून्यताशून्यता नाम महती ख इवाखता ॥ ११ ॥

na śūnyatāśūnyate vā śilākośa iva drumaḥ | śūnyatāśūnyatā nāma mahatī kha ivākhatā || 11 ||

It is not emptiness, and it is not the absence of emptiness either - as impossible as a tree growing inside solid rock. In fact, even calling it 'emptiness-and-non-emptiness' would be too grand a claim - as absurd as a great hole dug into the sky.

वह न तो शून्यता है, न शून्यता का अभाव - यह उतना ही असंभव है जितना पत्थर के भीतर पेड़ का उगना। 'शून्यता-अशून्यता' कहना भी एक बहुत बड़ी बात हो जाएगी, जितना आकाश में बड़ा गड्ढा खोदना असंभव है।

6.31.12

केवल केवलीभावस्वच्छतैवावशिष्यते । न चित्तात्कस्यचिद्दोषाज्जातयैतदवाप्यते ॥ १२ ॥

kevala kevalībhāvasvacchatāivāvaśiṣyate | na cittātkasyaciddosājjātayaitadavāpyate || 12 ||

Only the clear purity of standing utterly alone remains. It is not reached through the mind, through anyone's fault, or through birth.

बस अकेले रह जाने की वह शुद्ध निर्मलता बचती है। यह न तो मन से मिलती है, न किसी की गलती से, न ही जन्म से।

6.31.13

तत्सर्वभावनामात्रेणानर्थः प्रकृतः स्थितः । तज्ज्ञेऽप्यभावनामात्रेणानर्थ उपशाम्यति ॥ १३ ॥

tatsarvabhāvanāmātreṇānarthaḥ prakṛtaḥ sthitaḥ | tajjñe'pyabhāvanāmātreṇānartha upaśāmyati || 13 ||

This whole trouble stands there, produced only by the habit of imagining everything as real. For one who knows the truth, the trouble dies down the moment that imagining stops.

यह सारी मुसीबत केवल हर चीज़ को सच मान लेने की आदत से खड़ी होती है। जो सच जानता है, उसके लिए यह सोचना बंद होते ही मुसीबत भी मिट जाती है।

6.31.14

तज्ज्ञेऽप्यभावनामात्रादृतेऽन्यत्रोपयुज्यते । न तृणं न च त्रैलोक्यमिति स्वायत्ततात्र या ॥ १४ ॥

tajjñe'pyabhāvanāmātrādṛte'nyatro'payujyate | na tṛṇaṃ na ca trailokyamiti svāyattatātra yā || 14 ||

For the one who knows this, nothing else works except simply not imagining it - not the smallest blade of grass, not the three whole worlds. Such is how completely this matter rests in one's own hands.

जो यह सच जानता है, उसके लिए इस न सोचने के अलावा और कुछ काम नहीं आता - न घास का एक तिनका, न तीनों लोक। यह बात इतनी ज़्यादा अपने ही हाथ में है।

6.31.15

स्वायत्त एव चैषोऽर्थो दुःसाध्यो भावनास्थितः । यद्यन्न साध्यते पुंसा तत्कथं क्वेव लभ्यते ॥ १५ ॥

svāyatta eva caiṣo'artho duḥsādhyo bhāvanāsthitaḥ | yadyanna sādhyate puṃsā tatkathaṃ kveva labhyate || 15 ||

This matter rests entirely in one's own hands, yet it is hard to achieve because it is rooted in old habits of imagining. Whatever a person does not work to achieve - how, and from where, could that ever be gained?

यह बात पूरी तरह अपने ही हाथ में है, फिर भी इसे पाना मुश्किल है क्योंकि यह पुरानी सोचने की आदत में जड़ जमाए बैठी है। इंसान जिस चीज़ के लिए कोशिश नहीं करता, वह चीज़ उसे कैसे और कहाँ से मिल सकती है?

6.31.16

निर्विकल्पाद्वितीया चिद्यासौ सकलगा सती । परमैका परा साच्छा दीपिका तेजसामपि ॥ १६ ॥

nirvikalpādvitīyā cidyāsau sakalagā satī | paramaikā parā sācchā dīpikā tejasāmapi || 16 ||

This consciousness has no mental constructs and no second beside it; it reaches everywhere. It is supreme, one, beyond all else, perfectly clear - the very lamp that lights up every light.

यह चेतना किसी विचार या भेद से रहित है, और इसके सिवा दूसरा कुछ नहीं है; यह हर जगह फैली है। यह सबसे ऊँची, एक और सबसे परे है, बिलकुल निर्मल - यह हर रोशनी को रोशन करने वाला दीया है।

6.31.17

सैषावभासनकरी सर्वगा नित्यनिर्मला । नित्योदिता निर्मनस्का निर्विकारा निरञ्जना ॥ १७ ॥

saiṣāvabhāsanakarī sarvagā nityanirmalā | nityoditā nirmanaskā nirvikārā nirañjanā || 17 ||

This same consciousness is what lights up everything. It reaches everywhere, and it is always pure. It is always shining and never sets, it has no mind of its own, it never changes, and it is never stained.

यही चेतना हर चीज़ को रोशन करती है। यह हर जगह है और हमेशा निर्मल है। यह हमेशा चमकती रहती है, कभी डूबती नहीं; इसका कोई अपना मन नहीं, यह कभी बदलती नहीं, और कभी मैली नहीं होती।

6.31.18

घटे पटे वटे कुड्ये शकटे वानरे खरे । असुरे सागरे भूते नरे नागे च संस्थिता ॥ १८ ॥

ghaṭe paṭe vaṭe kuḍye śakaṭe vānare khare | asure sāgare bhūte nare nāge ca saṃsthitā || 18 ||

It is present in a pot, in cloth, in a banyan tree, in a wall, in a cart, in a monkey, in a donkey, in a demon, in the ocean, in every creature, in a man, and in a serpent.

यह घड़े में, कपड़े में, बरगद के पेड़ में, दीवार में, गाड़ी में, बंदर में, गधे में, दानव में, समुद्र में, हर जीव में, आदमी में, और साँप में मौजूद है।

6.31.19

साक्षिवत्तिष्ठति सती स्पन्दते न च कुत्रचित्। दीपः प्रकाशनायेव करोति न पुनः क्रियाम्॥ १९॥

sākṣivattiṣṭhati satī spandate na ca kutracit | dīpaḥ prakāśanāyeva karoti na punaḥ kriyām || 19 ||

While present everywhere, it just stands there like a witness - it never stirs anywhere at all. Like a lamp that exists only to give light, it performs no other action.

हर जगह मौजूद रहते हुए भी, यह बस एक गवाह की तरह खड़ी रहती है - यह कहीं भी हिलती-डुलती नहीं। जैसे दीया सिर्फ़ रोशनी देने के लिए होता है, वैसे ही यह और कोई काम नहीं करती।

6.31.20

मलिनाप्यमुनैषा साऽविकल्पाढ्या विकल्पिनी। जडेवाप्यजडाभासा न सर्वा सर्वगैव च॥ २०॥

malināpyamunaiṣā sā'vikalpāḍhyā vikalpinī | jaḍevāpyajaḍābhāsā na sarvā sarvagaiva ca || 20 ||

Though it may seem stained by all this, this consciousness - which is truly full of freedom from thought - appears full of thoughts. Though it seems lifeless, it has the appearance of the living. It is not everything, yet it reaches everywhere.

हालाँकि यह इन सबके संपर्क से मैली लगती है, यह चेतना - जो असल में हर विचार से मुक्त और भरपूर है - विचारों से भरी हुई लगती है। यह निर्जीव जैसी लगती है, पर सजीव जैसी दिखती है। यह हर चीज़ नहीं है, फिर भी हर जगह मौजूद है।

6.31.21

निर्विकल्पा परा सूक्ष्मा चिच्चिनोति स्वसंविदम्। वातावाताङ्गमर्मादि यथा यन्त्रादिवेष्टने॥ २१॥

nirvikalpā parā sūkṣmā ciccinoti svasaṃvidam | vātāvātāṅgamarmādi yathā yantrādivēṣṭanē || 21 ||

Free of mental constructs, supreme and subtle, consciousness perceives its own self-awareness - the way a breath, whether moving or still, reaches the limbs and vital points inside, within the wrappings of a machine.

हर विचार से मुक्त, सर्वोच्च और सूक्ष्म चेतना अपनी ही आत्म-चेतना को जान लेती है - जैसे साँस, चाहे चल रही हो या थमी हो, किसी यंत्र की लपेट के भीतर अंगों और नाज़ुक हिस्सों तक पहुँच जाती है।

6.31.22

रूपालोकमनस्कारवलिता चिदबोधतः। बोधतश्चैव भवति निद्रां सदसती यतः॥ २२॥

rūpālokamanaskāravalitā cidabodhataḥ | bodhataścaiva bhavati nidrāṃ sadasatī yataḥ || 22 ||

Consciousness, caught up in shape, sight and thought, turns - through both not-knowing and knowing - into what we call sleep, since sleep itself is both real and unreal.

चेतना, जब रूप, दिखावट और मन के जुड़ाव में उलझ जाती है, तो न-जानने और जानने दोनों से वह नींद बन जाती है, क्योंकि नींद खुद ही सच और झूठ दोनों जैसी होती है।

6.31.23

सा परैव चिदत्यच्छा चिन्तामायाति चेतनात्। साधुरेव यथाऽसाधुर्भावितै दुर्जनैषणाः॥ २३॥

sā pareva cidatyacchā cintāmāyāti cetanāt | sādhureva yathā'sādhurbhāvite durjanaiṣaṇāḥ || 23 ||

That same supreme, perfectly clear consciousness comes to feel worry, simply through the activity of thinking - just as a good man turns into a bad one once wicked desires take root in him.

वही सर्वोच्च और बिलकुल निर्मल चेतना, सिर्फ़ सोचने की हलचल से, चिंता में पड़ जाती है - जैसे एक भला आदमी बुरी इच्छाएँ पाल लेने पर बुरा बन जाता है।

6.31.24

मलेन स्वर्णमायाति ताम्रतां मलमार्जनात्। पुनः कनकतामेति यथा चित्परमा तथा ॥ २४ ॥

malena svarṇamāyāti tāmratāṃ malamārjanāt | punaḥ kanakatāmeti yathā citparamā tathā || 24 ||

Gold, when covered with tarnish, looks like copper; wash the tarnish away, and it becomes gold again - the same is true of the supreme consciousness.

सोना जब मैल से ढक जाता है, तो ताँबे जैसा दिखने लगता है; उस मैल को धो दिया जाए, तो वह फिर सोना बन जाता है - सर्वोच्च चेतना के साथ भी ठीक यही होता है।

6.31.25

स्वारोपशान्त्या स्वादर्शो यथैति प्रतिमास्थितिम्। तथा सर्गमिवागम्य बोधात्स्वं याति तत्पदम् ॥ २५ ॥

svāropaśāntyā svādarśo yathaiti pratimāsthitim | tathā sargamivāgamya bodhātsvaṃ yāti tatpadam || 25 ||

Just as a mirror, once the disturbance in it settles, comes to hold a steady reflection, so too consciousness, having entered creation as if it were many things, returns through awakening to its own self, to that highest state.

जैसे शीशा, जब उसकी हलचल थम जाती है, तो एक स्थिर प्रतिबिंब दिखाने लगता है, वैसे ही चेतना भी, सृष्टि में मानो प्रवेश करने के बाद, जागने पर अपने ही स्वरूप में, उसी परम अवस्था में लौट जाती है।

6.31.26

अभाववेदनादस्याः संसारः संप्रवर्तते। स्वभाववेदनादेष त्वसदेवोपशाम्यति ॥ २६ ॥

abhāvavedanādasyaḥ saṃsāraḥ saṃpravartate | svabhāvavedanādeṣa tv asadevopaśāmyati || 26 ||

Because consciousness fails to recognize its own true state, the round of the world arises. When it recognizes its own true nature, this round of the world, which was never real to begin with, comes to rest.

क्योंकि चेतना अपनी असली स्थिति को नहीं पहचानती, इसलिए संसार का चक्र चलने लगता है। जब वह अपने असली स्वरूप को पहचान लेती है, तो यह चक्र, जो शुरू से ही झूठा था, थम जाता है।

6.31.27

यदा चित्त्वाच्चिनोत्यन्तरन्यतामसतीं तदा। अहंतामिव संप्राप्य नश्यतीवाप्यनाशिनी ॥ २७ ॥

yadā cittvāccinotyantarananyatāmasatīṃ tadā | ahaṃtāmiva saṃprāpya naśyatīvāpyanāśinī || 27 ||

When, having become mind, consciousness conceives an inner difference that isn't really there, then, taking on a sense of 'I,' it seems to perish, though it can never actually die.

जब चेतना मन बनकर अपने भीतर एक ऐसा भेद मान लेती है जो असल में है ही नहीं, तब 'मैं' का भाव पाकर वह मिटती हुई सी लगती है, जबकि वह कभी मिट ही नहीं सकती।

6.31.28

ईषत्स्पन्दादधो याति भृगुप्रान्तात्तरोः फलम्। यथा तथैष संवित्तेरधःपातो महानिव ॥ २८ ॥

īṣatspandādadho yāti bhṛguprāntāttaroḥ phalaṃ | yathā tathaiṣa saṃvitteradhaḥpāto mahāniva || 28 ||

Just as, from the slightest shake, the fruit of a tree at the edge of a cliff falls all the way down, so this fall of consciousness seems like a great fall, though it began with only a slight stir.

जैसे ज़रा से हिलने से चट्टान के किनारे खड़े पेड़ का फल नीचे जा गिरता है, वैसे ही चेतना का यह गिरना एक बड़ा गिरना लगता है, हालाँकि यह शुरू हुआ था बस एक हल्की सी हलचल से।

6.31.29

रूपादीनां तु सत्तैषा चित एवामलैव चित्। द्वित्वैकत्वे त्वबोधोत्थे बोधेन विलयं गते ॥ २९ ॥

rūpādīnāṃ tu sattaiṣā cit evāmalai va cit | dvitvaikatve tvabodhotthe bodhena vilayaṃ gate || 29 ||

The reality that form and the rest have is just this same consciousness, the one stainless consciousness. Duality and oneness both arise from not knowing; when knowledge comes, they dissolve.

रूप वगैरह में जो असलियत है, वह यही चेतना है, वही एक निर्मल चेतना है। दो होना और एक होना, दोनों अज्ञान से पैदा होते हैं; जब ज्ञान आता है, तो वे मिट जाते हैं।

6.31.30

सत्तामात्रेण चित्तस्य बोधश्चित्तेन्द्रियादिषु। आलोकसत्तामात्रेण व्यवहारः क्रियास्विव ॥ ३० ॥

sattāmātreṇa cittasya bodhaścittendriyādiṣu | ālokasattāmātreṇa vyavahāraḥ kriyāsviva || 30 ||

By the mere presence of the mind, awareness arises in the mind, the senses, and the rest, just as by the mere presence of light, work becomes possible in actions.

जैसे रोशनी के होने भर से काम करना संभव हो जाता है, वैसे ही मन के होने भर से मन, इंद्रियों और बाकी सबमें चेतनता आ जाती है।

6.31.31

वातात्कनीनिकास्पन्दस्तद्दीप्तिर्दृष्टिरुच्यते। तद्बाह्यवति तद्रूपरूपबोधस्तु चित्परा ॥ ३१ ॥

vātātkanīnikāspandastaddīptirdṛṣṭirucyate | tadbāhyavati tadrūparūpabodhastu citparā || 31 ||

From the breath, the pupil trembles; its shine is what we call sight. But when that sight turns toward what is outside, the awareness of the shape it shows is the higher consciousness.

सांस से आँख की पुतली कांपती है; उसकी चमक को दृष्टि कहते हैं। पर जब वह दृष्टि बाहर की चीज़ों की ओर मुड़ती है, तो जो आकार की चेतनता होती है, वही असली ऊँची चेतना है।

6.31.32

त्वङ्मारुतौ जडौ तुच्छौ तत्सङ्गः स्पर्श उच्यते। मननं स्पर्शसंवित्तिस्तत्संवित्तिस्तु चित्परा ॥ ३२ ॥

tvaṅmārutau jaḍau tucchau tatsaṅgaḥ sparśa ucyate | mananaṃ sparśasaṃvittistatsaṃvittistu citparā || 32 ||

Skin and breath, by themselves, are both lifeless and empty things; their contact is what we call touch. Thinking about it is the awareness of touch, but the awareness of that awareness is the higher consciousness.

त्वचा और सांस, दोनों अपने आप में निर्जीव और बेकार चीज़ें हैं; उनके मिलने को स्पर्श कहते हैं। उस पर सोचना छूने की चेतनता है, पर उस चेतनता की चेतनता ही असली ऊँची चेतना है।

6.31.33

गन्धतन्मात्रपवनसंबन्धो गन्धसंविदः। आसां तु मनसा हीनं वेदनं परमैव चित् ॥ ३३ ॥

gandhatanmātrapavanasambandho gandhasaṃvidaḥ | āsāṃ tu manasā hīnaṃ vedaṇaṃ paramaiva cit || 33 ||

The joining of the subtle element of smell with the breath gives the awareness of smell. But feeling these without any mind at all is nothing but the supreme consciousness.

गंध के सूक्ष्म तत्व का सांस से जुड़ना ही गंध की चेतनता है। पर मन के बिना इनको महसूस करना, वह सिर्फ परम चेतना ही है।

6.31.34

शब्दतन्मात्रश्रवणवातसङ्गान्मनो विना । सुषुप्तसदृशी संवित्परमा चिदुदाहृता ॥ ३४ ॥

śabdatanmātraśravaṇavātasaṅgānmano vinā | suṣuptasadṛśī saṃvitparamā cidudāhṛtā || 34 ||

From the joining of the subtle element of sound, hearing, and breath, when there is no mind, the awareness that remains, like the awareness of deep sleep, is called the supreme consciousness.

शब्द के सूक्ष्म तत्व, सुनने और सांस के मेल से, जब मन न हो, तो जो चेतनता बचती है, वह गहरी नींद जैसी होती है, और उसी को परम चेतना कहते हैं।

6.31.35

क्रियोन्मुखत्वं संकल्पात्संकल्पो मननक्रमः । मननं चित्तकालुष्यमात्मा चिन्निर्मला भवेत् ॥ ३५ ॥

kriyonmukhatvaṃ saṃkalpātsaṃkalpo mananakramaḥ | mananaṃ cittakāluṣyamātmā cinnirmalā bhavet || 35 ||

Being ready to act comes from intention, and intention is the process of thinking. Thinking is what clouds the mind; the self, free of it, is pure consciousness.

काम करने को तैयार होना संकल्प से आता है, और संकल्प सोचने की प्रक्रिया है। सोचना ही मन को गंदला करता है; उससे मुक्त आत्मा शुद्ध चेतना है।

6.31.36

चित्प्रकाशात्मिका नित्या स्वात्मन्येवावसंस्थिता । इदमन्तर्जगद्धत्ते सन्निवेशं यथा शिला ॥ ३६ ॥

citprakāśātmikā nityā svātmanyevāvasaṃsthitā | idamantarjagaddhatte sanniveśaṃ yathā śilā || 36 ||

Consciousness, whose very nature is light, eternal, resting only in itself, holds this inner world as a structure within it, the way a rock holds a structure within it.

चेतना, जिसका स्वभाव प्रकाश है, नित्य है और सिर्फ अपने में ही टिकी रहती है। वह इस भीतरी जगत को एक बनी हुई बनावट की तरह धारण करती है, जैसे पत्थर अपना आकार धारण करता है।

6.31.37

अद्वितीया दधानेदं विकारादिविवर्जितम् । नास्तमेति न चोदेति स्पन्दते नो न वर्धते ॥ ३७ ॥

advitīyā dadhānedaṃ vikārādivivarjitam | nāstameti na codeti spandate no na vardhate || 37 ||

Without a second, holding this world, and free from change and all the rest, it does not set and does not rise, it does not tremble and does not grow.

बिना किसी दूसरे के, इस जगत को धारण करते हुए और बदलाव वगैरह से मुक्त, वह न डूबती है, न उगती है, न कांपती है, न बढ़ती है।

6.31.38

संकल्पाज्जीवतामेत्य निःसंकल्पात्मनात्मना । चिज्जडं नो जडं भावं भावयन्ती स्वसंस्थिता ॥ ३८ ॥

saṃkalpājjīvatāmetya niḥsaṃkalpātmanātmanā | cijjaḍaṃ no jaḍaṃ bhāvaṃ bhāvayantī svasaṃsthitā || 38 ||

Through thought, it takes on the state of a living being, though by its own true nature it is free of thought. It is consciousness appearing as inert matter, yet not inert by nature, bringing about that inert state while all along resting in itself.

विचार के जरिए वह जीव की अवस्था धारण कर लेती है, हालांकि अपने असली स्वभाव में वह विचार से मुक्त है। वह चेतना ही जड़ पदार्थ जैसी दिखती है, फिर भी असल में जड़ नहीं है, और अपने में टिकी रहते हुए ही वह जड़ जैसी अवस्था बना देती है।

6.31.39

रथस्त्वस्याश्चितेर्जीवो जीवस्याहंकृती रथः । अहंकृते रथो बुद्धिस्ततो बुद्धेर्मनो रथः ॥ ३९ ॥

rathastvasyāściterjīvo jīvasyāhaṃkṛtī rathaḥ | ahaṃkṛte ratho buddhistato buddhermano rathaḥ || 39 ||

The chariot of this consciousness is the individual soul; the chariot of the individual soul is the sense of I; the chariot of the sense of I is the intellect; and the chariot of the intellect is the mind.

इस चेतना का रथ जीव है; जीव का रथ मैं के भाव यानी अहंकार है; अहंकार का रथ बुद्धि है; और बुद्धि का रथ मन है।

6.31.40

मनसस्तु रथः प्राणः प्राणस्याक्षगणो रथः । अक्षौघस्य रथो देहो देहस्य स्यन्दनो रथः ॥ ४० ॥

manasastu rathaḥ prāṇaḥ prāṇasyākṣagaṇo rathaḥ | akṣaughasya ratho deho dehasya syandano rathaḥ || 40 ||

The chariot of the mind is the breath; the chariot of the breath is the group of senses. The chariot of the group of senses is the body; the chariot of the body is the chariot.

मन का रथ सांस है; सांस का रथ इंद्रियों का समूह है। इंद्रियों के समूह का रथ शरीर है; और शरीर का रथ रथ ही है।

6.31.41

स्पन्दनं कर्म संसारे जरामरणपञ्जरम् । एवं प्रवर्तितं चक्रमिदमादिविभूतिजम् ॥ ४१ ॥

spandanaṃ karma saṃsāre jarāmaraṇapañjaram | evaṃ pravartitaṃ cakramidamādivibhūtijam || 41 ||

Movement is action in this world of rebirth, a cage of old age and death. This is how the wheel, born from the first power, was set turning.

हलचल ही इस संसार में कर्म है, जो बुढ़ापे और मौत का पिंजरा है। इसी तरह यह पहिया, जो पहली शक्ति से पैदा हुआ, घूमने लगा।

6.31.42

प्रतिभासत एवात्मन्यसत्स्वप्न इवाततः । मनागपि न सत्यात्म मृगतृष्णाम्बुवत्स्थितम् ॥ ४२ ॥

pratibhāsata evātmanyasatsvapna ivātataḥ | manāgapi na satyātma mṛgatṛṣṇāmbuvatsthitam || 42 ||

It only appears within the self, unreal, spread out like a dream. Not even a little of it is real; it stands there like the water of a mirage.

यह सिर्फ आत्मा में दिखाई देता है, झूठा, सपने की तरह फैला हुआ। इसमें जरा भी सच्चाई नहीं है; यह मृगतृष्णा के पानी जैसा खड़ा है।

6.31.43

रथस्त्वत्र स्मृतः प्राणः कल्पनाया मुनीश्वर । यत्र प्राणमरुत्तत्र मननं परितिष्ठति ॥ ४३ ॥

rathastvatra smṛtaḥ prāṇaḥ kalpanāyā munīśvara | yatra prāṇamaruttatra mananaṃ paritiṣṭhati || 43 ||

Here, O lord of sages, the breath is regarded as the chariot of imagination. Wherever the breath-wind goes, there the thinking mind stays.

यहाँ, हे मुनियों के स्वामी, सांस को कल्पना का रथ माना गया है। सांस की हवा जहाँ जाती है, वहीं मन भी टिका रहता है।

6.31.44

आलोकश्रीः स्थिता यत्र रूपं तत्रैव राजते । प्राणो बली स्थितो यत्र तदेव परिवेपति ॥ ४४ ॥

ālokaśrīḥ sthitā yatra rūpaṃ tatraiva rājate | prāṇo balī sthito yatra tadeva parivepati || 44 ||

Where the brightness of light is present, there a shape shines out. Where the strong breath is present, that same thing trembles.

जहाँ रोशनी की चमक होती है, वहीं आकार चमकता है। जहाँ ताकतवर सांस होती है, वहीं कंपन होता है।

6.31.45

यत्प्रयाति वनं वात्या तदेव परिघूर्णते । मनस्याकाशसंलीने न प्राणः परिवेपति ॥ ४५ ॥

yatprayāti vanaṃ vātyā tadeva parighūrṇate | manasyākāśasaṃlīne na prāṇaḥ parivepati || 45 ||

Wherever a storm-wind moves into a forest, that same place reels and whirls. When the mind dissolves into empty space, the breath no longer trembles.

आँधी जिस जंगल में जाती है, वही जगह घूमने और हिलने लगती है। जब मन आकाश में घुल जाता है, तब सांस नहीं कांपती।

6.31.46

तेजस्यसत्तामायाते न रूपमिव राजते प्राणे प्रशान्ते मरुति मनोन्तर्न मनागपि ॥ ४६ ॥

tejasyasattāmāyāte na rūpamiva rājate prāṇe praśānte maruti manontarna manāgapi || 46 ||

When the light itself is gone, no shape shines out at all. When the breath-wind is stilled, there is no mind within, not even a trace.

जब रोशनी ही मिट जाती है, तो कोई आकार बिलकुल नहीं चमकता। जब सांस की हवा शांत हो जाती है, तो भीतर मन बिलकुल नहीं रहता, जरा भी नहीं।

6.31.47

वात्यायामुपशान्तायां रजो न परिकम्पते यत्र प्राणो मरुद्याति मनस्तत्रैव तिष्ठति ॥ ४७ ॥

vātyāyāmupaśāntāyāṃ rajo na parikampate yatra prāṇo marudyāti manastatraiva tiṣṭhati || 47 ||

When the storm-wind has calmed, the dust no longer shakes. Wherever the breath-wind goes, the mind stays right there.

जब आँधी शांत हो जाती है, तो धूल नहीं हिलती। सांस की हवा जहाँ जाती है, मन भी वहीं ठहरता है।

6.31.48

यत्र यत्रानुसरति रथस्तत्रैव सारथिः प्राणसंप्रेरितं चित्तं याति देशान्तरे क्षणात् ॥ ४८ ॥

yatra yatrānusarati rathastatraiva sārathiḥ prāṇasaṃpreritaṃ cittaṃ yāti deśāntare kṣaṇāt || 48 ||

Wherever the chariot goes, the charioteer goes there too. The mind, driven by the breath, moves to another place in an instant.

रथ जहाँ भी जाता है, सारथी भी वहीं जाता है। सांस से चलाया हुआ मन एक पल में दूसरी जगह पहुंच जाता है।

6.31.49

क्षेपणोन्मुक्तपाषाण इव तत्रान्यथा क्षयि यत्र पुष्पं तत्र गन्धो यत्राग्निस्तत्र सोष्णता ॥ ४९ ॥

kṣepaṇonmuktapāṣāṇa iva tatrānyathā kṣayi yatra puṣpaṃ tatra gandho yatrāgnistatra soṣṇatā || 49 ||

Like a stone let loose from a sling that goes where it is thrown, and otherwise just falls away: where there is a flower, there is fragrance; where there is fire, there is heat.

जैसे गोफन से छूटा हुआ पत्थर वहीं जाता है जहाँ फेंका जाए, नहीं तो बस गिर जाता है: जहाँ फूल है, वहीं खुशबू है; जहाँ आग है, वहीं गर्मी है।

6.31.50

यत्र प्राणो मरुद्याति यत्रेन्दुस्तत्र तच्छविः संवित्तिः पवनस्पन्दान्नाडीसंस्पर्शनश्च सः ॥ ५० ॥

yatra prāṇo marudyāti yatrendustatra tacchaviḥ saṃvittiḥ pavanaspandānnāḍīsaṃsparśanaśca saḥ || 50 ||

Where the breath-wind goes, and where the moon is, there is its glow. Awareness comes from the trembling of the breath; it is felt as a touch in the body's channels.

सांस की हवा जहाँ जाती है, और जहाँ चांद है, वहीं उसकी चमक है। चेतनता सांस के कंपन से आती है; वह शरीर की नाड़ियों में स्पर्श जैसी महसूस होती है।

6.31.51

संवित्तिस्फारता चित्तं मनस्तत्प्राणकोटरे । सर्वत्र विद्यते संविद्व्योमस्वच्छा जडाजडे ॥ ५१ ॥

saṃvittisphāratā cittaṃ manastatprāṇakoṭare | sarvatra vidyate saṃvidvyomasvacchā jaḍājaḍe || 51 ||

The spreading-out of awareness is the mind; the mind sits in the hollow of that breath. Awareness exists everywhere, clear like open sky, in both the lifeless and the living.

चेतनता का फैलाव ही मन है; मन उस सांस की खोह में बसा है। चेतनता हर जगह है, आकाश जैसी साफ, जड़ और चेतन दोनों में।

6.31.52

क्षुभ्यन्तीव तु सा प्राणस्पन्दादित्यनुभूयते । सत्तामात्रस्वरूपेण जडेषु समवस्थिता ॥ ५२ ॥

kṣubhyantīva tu sā prāṇaspandādityanubhūyate | sattāmātrasvarūpeṇa jaḍeṣu samavasthitā || 52 ||

It seems to stir, and is felt that way because of the trembling of the breath. But in its nature as mere existence, it is present just the same in lifeless things.

वह हिलती हुई सी लगती है, और सांस के कंपन के कारण ऐसा महसूस होता है। पर सिर्फ होने के रूप में, वह जड़ चीज़ों में भी उतनी ही मौजूद रहती है।

6.31.53

प्राणसंबोधिता वेत्ति वेदनात्मतया जडे । नानास्फारसमुल्लासैर्यः पूर्वं परिवल्गति । प्राणेऽतीते त्वमननः स एवाशु न वेपति ॥ ५३ ॥

prāṇasaṃbodhitā vetti vedaṃātmatayā jaḍe | nānāsphārasamullāsairyaḥ pūrvaṃ parivalgati | prāṇe'tīte tvamananaḥ sa evāśu na vepati || 53 ||

Stirred awake by the breath, awareness knows through the nature of feeling, even in a lifeless body. What used to leap about before, bursting out in all its many thrills, stops trembling at once, without a thought, once the breath is gone.

सांस से जगी हुई चेतनता, महसूस करने के जरिए, निर्जीव शरीर में भी जानती है। जो पहले तरह-तरह की उमंगों से उछलता-कूदता था, सांस के जाते ही, वह बिना किसी सोच के, तुरंत कांपना बंद कर देता है।

6.31.54

पुर्यष्टके चित्परमा स्वे मुने प्रतिबिम्बति । आदर्श एव प्रतिमा दृश्यते नोपलादिषु ॥ ५४ ॥

puryaṣṭake cittaparamā sve mune pratibimbiti | ādarśa eva pratimā dṛśyate nopalādiṣu || 54 ||

O sage, the supreme consciousness reflects itself in its own eightfold body, the way a reflection is seen only in a mirror, not in a stone or such things.

हे मुनि, परम चेतना अपने आठ-अंगों वाले शरीर में प्रतिबिंबित होती है, जैसे प्रतिबिंब सिर्फ आईने में दिखता है, पत्थर वगैरह में नहीं।

6.31.55

मनः पुर्यष्टकं विद्धि सर्वकार्यैककारणम् । तदैव भेदैः कथितमन्यैः स्वाशयकल्पितैः ॥ ५५ ॥

manaḥ puryaṣṭakaṃ viddhi sarvakāryaikakāraṇam | tadaiva bhedaiḥ kathitaman'yaiḥ svāśayakalpitaiḥ || 55 ||

Know the mind as this eightfold body, the one single cause behind everything that happens. Others speak of it under different names, each shaped by their own way of thinking.

मन को ही यह आठ-अंगों वाला शरीर समझो, जो हर चीज़ का एक ही कारण है। दूसरे लोग इसे अलग-अलग नामों से बताते हैं, जो उनकी अपनी सोच से गढ़े गए हैं।

6.31.56

यस्मादुदेति कलनाकुलदृश्यजालं यत्तत्र च स्थितवदित्यनुभूतमुच्चैः । यस्मान्मनो विपरिवर्तति देहदृष्ट्या सर्वं तु तत्परमवस्त्विति विद्धि विश्वम् ॥ ५६ ॥

yasmādudeti kalanākuladṛśyajālaṃ yattatra ca sthitavadityanubhūtamuccaiḥ | yasmānmano viparivartati dehadṛṣṭyā sarvaṃ tu tatparamavastviti viddhi viśvam || 56 ||

Know that the whole universe -- the tangled net of visible things that rises from it, thick with imagination and strongly felt as though it truly stood there, and the mind that turns and moves through it by way of the body's sight -- all of this is that supreme reality.

जानो कि यह पूरा विश्व -- जिसमें से दिखने वाली चीज़ों का उलझा हुआ जाल उठता है, जो कल्पनाओं से भरा है और जो वहाँ सचमुच खड़ा हुआ जैसा गहराई से महसूस होता है, और जिसमें मन शरीर की नज़र के जरिए घूमता-फिरता है -- यह सब कुछ वही परम सत्य है।

Chapter 32

6.32.1

ईश्वर उवाच । मुने शृणु कथं कार्यकारिणी स्पन्दशालिनी । चरन्ती च तनुं पुंसामुपैति परमाभिधाम् ॥ १ ॥

īśvara uvāca | mune śṛṇu kathaṃ kāryakāriṇī spandaśālinī | carantī ca tanuṃ puṃsāmupaiti paramābhidhām || 1 ||

Ishvara said: Listen, sage, how this power, which does its work and is filled with vibration, moving through the bodies of men, comes to bear the highest name.

ईश्वर ने कहा: हे मुनि, सुनो कि यह शक्ति, जो अपना काम करती है और स्पंदन से भरी है, मनुष्यों के शरीर में चलते हुए, कैसे सबसे बड़ा नाम पाती है।

6.32.2

प्राक्तनैस्तैर्निहन्त्येव स्वमनोमननेहितैः । कर्मव्रातैर्विचित्रैहैः परिपीवरतां गतैः ॥ २ ॥

prāktanais tair nihantyeva svamanomananehitaiḥ | karmavrātair vicitrehaiḥ paripīvaratāṃ gataiḥ || 2 ||

By those past workings of its own mind's thinking, and by heaps of actions of many kinds grown dense, it truly drives the body on.

अपने मन के उन पुराने विचारों से, और तरह-तरह के कामों के ढेरों से जो घने हो चुके हैं, यह सचमुच शरीर को चलाती है।

6.32.3

मनस्तया गता शक्तिः सज्जडेवागता चितेः । सा स्फुरत्यनया ब्रह्मन्नुचिता शक्तिभूतया ॥ ३ ॥

manastayā gatā śaktiḥ sajjadevāgatā citeḥ | sā sphuraty anayā brahmann ucitā śaktibhūtayā || 3 ||

The power of consciousness turns into mind and seems to become dull. That same power, Brahmin, then shines out fittingly, having become this active power.

चेतना की शक्ति मन बनकर मानो जड़ हो जाती है। हे ब्राह्मण, वही शक्ति फिर सही रूप में चमकती है, सक्रिय शक्ति बनकर।

6.32.4

अस्याः प्रसादादिह सा चित्कलङ्कवती मुने । जगद्गन्धर्वनगरं करोति न करोति च ॥ ४ ॥

asyāḥ prasādād iha sā citkalaṅkavatī mune | jagadgandharvanagaraṃ karoti na karoti ca || 4 ||

Through the grace of this power, that tainted consciousness, sage, both makes the world into a city in the sky, and does not make it.

इस शक्ति की कृपा से, वह दाग लगी हुई चेतना, हे मुनि, संसार को आकाश के नगर जैसा बना भी देती है, और नहीं भी बनाती।

6.32.5

चित्ताद्यसत्तया देहो मूकस्तिष्ठति कुड्यवत् । तत्सत्तया हि स्फुरति नभःसंप्रेरिताश्मवत् ॥ ५ ॥

cittādyasattayā deho mūkastiṣṭhati kuḍyavat | tatsattayā hi sphurati nabhaḥsaṃpreritāśmavat || 5 ||

Without mind, the body stands mute like a wall. With mind present, the body moves, like a stone hurled through the sky.

मन के न होने पर शरीर दीवार की तरह चुपचाप खड़ा रहता है। मन के होने पर वह चलता है, जैसे आकाश में फेंका गया पत्थर।

6.32.7

सर्वस्थयात्मशक्त्यैव जीव एष स्फुरत्यलम्। मुकुरो बिम्बमादत्ते द्रव्यात्मन्यस्थितादपि ॥ ७ ॥

sarvasthayātmaśaktyaiva jīva eṣa sphuraty alam | mukuro bimbamādatte dravyātmanyasthitādapi || 7 ||

By the power of the Self alone, present in everything, this jiva truly shines forth, just as a mirror catches an image, even though the object itself is not there inside the mirror.

आत्मा की उसी शक्ति से, जो हर चीज़ में मौजूद है, यह जीव सचमुच चमकता है, जैसे दर्पण किसी छवि को पकड़ लेता है, भले ही वह वस्तु दर्पण के भीतर न हो।

6.32.8

प्रविस्मृतस्वभावत्वाज्जीवोऽयं जडतां गतः। मोहाद्विस्मृतभावत्वाच्छूद्रतामिव सद्विजः ॥ ८ ॥

pravismṛtasvabhāvatvājjīvo'yaṃ jaḍatāṃ gataḥ | mohādvismṛtabhāvatvācchūdratāmiva saddvijaḥ || 8 ||

Because it has forgotten its own nature completely, this jiva has fallen into dullness, like a true Brahmin who, through delusion, forgets his own nature and falls into the state of a Shudra.

अपने स्वभाव को पूरी तरह भूल जाने के कारण यह जीव जड़ता में गिर जाता है, जैसे कोई सच्चा ब्राह्मण मोह के कारण अपना स्वभाव भूलकर शूद्र जैसी अवस्था में गिर जाए।

6.32.9

प्रविस्मृतस्वभावा हि चिच्चित्तत्वमुपागता। मोहापहतचित्तत्वात्सुमहानिव दीनताम् ॥ ९ ॥

pravismṛtasvabhāvā hi ciccittatvamupāgatā | mohāpahatacittatvātsumahāniva dīnatām || 9 ||

Consciousness, having completely forgotten its own nature, comes to be mind, its awareness overwhelmed by delusion, like a truly great man fallen into misery.

चेतना अपने स्वभाव को पूरी तरह भूलकर मन बन जाती है, मोह से उसकी चेतना दब जाती है, जैसे कोई बहुत बड़ा आदमी दुख और दरिद्रता में गिर जाए।

6.32.10

जडयाऽवशया देहो वातशक्तिसमानया। संचाल्यते तदनया वारीव वीचिमालया ॥ १० ॥

jaḍayā'vaśayā deho vātaśaktisamānayā | saṃcālyate tadanayā vārīva vīcimālayā || 10 ||

By that dull, uncontrolled mind, like the power of wind, the body is driven along, just as water is stirred by a line of waves.

उस जड़ और बेकाबू मन से, जो हवा की ताकत जैसा है, शरीर चलाया जाता है, जैसे पानी लहरों की कतार से हिलता है।

6.32.11

कर्मात्मना वराकेण जीवेन मनसामुना। चाल्यन्ते देहयन्त्राणि पाषाणा इव वायुना ॥ ११ ॥

karmātmanā varākeṇa jīvena manasāmunā | cālyante dehayantrāṇi pāṣāṇā iva vāyunā || 11 ||

By this poor jiva, whose nature is action, along with its mind, the machinery of the body is driven, like stones driven by the wind.

कर्म-रूप इस बेचारे जीव के द्वारा, उसके मन के साथ, शरीर की मशीन चलाई जाती है, जैसे हवा से पत्थर चलते हैं।

6.32.12

शरीरशकटानां हि कर्षणे परमात्मनामनःप्राणोदयौ ब्रह्मकृतौ कर्मकृतौ दृढौ ॥ १२ ॥

śarīraśakaṭānāṃ hi karṣaṇe paramātmanāmanaḥprāṇodayau brahmankṛtau karmakṛtau dṛḍhau || 12 ||

It is by these two firm powers that the cart of the body is pulled: the mind, which comes from Brahman, and the life-breath, which comes from karma.

शरीर रूपी गाड़ी को ये दो मज़बूत शक्तियाँ ही खींचती हैं: मन, जो ब्रह्म से आता है, और प्राण, जो कर्म से आता है।

6.32.13

चिज्जडं तूररीकृत्य रूपं जीवत्वमेत्य च मनोरथमुपारुह्य वहत्प्राणतुरङ्गमम् ॥ १३ ॥

cijjaḍaṃ tūrarīkṛtya rūpaṃ jīvatvametya camanorathamupāruhya vahatprāṇaturaṃgamam || 13 ||

Consciousness takes on the form of dull matter, becomes a jiva, and mounts the chariot of the mind, a chariot drawn by the horses that are the moving breaths of life.

चेतना जड़ पदार्थ का रूप लेकर जीव बन जाती है, और मन रूपी रथ पर सवार हो जाती है, जो जीवन की चलती हुई साँसों रूपी घोड़ों से खींचा जाता है।

6.32.14

क्वचिज्जातपदार्थत्वं क्वचिन्नष्टपदार्थताम्क्वचिद्बहुपदार्थत्वं क्वचिदेकपदार्थताम् ॥ १४ ॥

kvacijjātapadārthatvaṃ kvacinnaṣṭapadārthatāmkvacidvahupadārthatvaṃ kvacidekapadārthatām || 14 ||

Sometimes it takes the state of a thing that has come into being, and sometimes the state of a thing destroyed. Sometimes it takes the state of being many things, and sometimes the state of being just one thing.

कभी यह किसी उत्पन्न हुई चीज़ की अवस्था लेती है, कभी किसी नष्ट हुई चीज़ की। कभी यह अनेक चीज़ों की अवस्था लेती है, कभी सिर्फ़ एक ही चीज़ की।

6.32.15

गतेव भिन्नेवास्त्येवमत्यजन्ती निजं पदम्जलतेव तरङ्गत्वं सैवासदसदोदिता ॥ १५ ॥

gateva bhinnevāstyevamatyajantī nijaṃ padamjalateva taraṅgatvaṃ saivāsadasadoditā || 15 ||

It seems to have gone away, seems to have become different, and yet it exists just as it is, never leaving its own true place, like the wave that belongs to water. That very thing has arisen as neither real nor unreal.

वह मानो चली गई, मानो अलग हो गई, फिर भी वैसी ही बनी रहती है, अपनी असली जगह को कभी न छोड़ते हुए, जैसे लहर पानी की ही होती है। वही चीज़ न पूरी तरह सच है, न पूरी तरह झूठ, ऐसी बनकर उठी है।

6.32.16

उपजीव्यात्मनो रूपं परं स्फुरति वृत्तिषुआलोकमुपजीव्येमं रूपश्रीर्दृश्यगा यथा ॥ १६ ॥

upajīvyātmano rūpaṃ paraṃ sphurati vṛttiṣuālokamupajīvyemaṃ rūpaśrīrdṛśyagā yathā || 16 ||

Resting on the Self's own highest form, it shines out within the mind's changing states, just as, resting on light, the beauty of a shape becomes visible.

आत्मा के अपने सबसे ऊँचे रूप पर टिककर, यह मन की बदलती अवस्थाओं में चमकता है, ठीक वैसे ही जैसे रोशनी पर टिककर किसी आकृति की सुंदरता दिखाई देती है।

6.32.17

परमात्मनि चित्तत्त्वे स्थिते सति निरामये । जीवो जीवति सालोकं दीपे सति गृहं यथा ॥ १७ ॥

paramātmani cittatve sthite sati nirāmaye | jīvo jīvati sālokaṃ dīpe sati gṛhaṃ yathā || 17 ||

When consciousness rests firmly in the Supreme Self, untouched by any illness, the jiva lives on, filled with light, just as a house has light when a lamp is burning in it.

जब चेतना का सच्चा स्वरूप परमात्मा में स्थिर रहता है, बिना किसी रोग के, तब जीव प्रकाश से भरा हुआ जीता है, जैसे घर में दीया जलने पर उजाला रहता है।

6.32.18

आधयो व्याधयश्चैव प्रयान्त्यस्य प्रपीनताम् । अपामिव तरङ्गत्वं वीचित्वस्येव फेनता ॥ १८ ॥

ādhayo vyādhayaścaiva prayāntyasya prapīnatām | apāmiva taraṅgatvaṃ vīcitvasyaiva phenatā || 18 ||

Worries of the mind and sicknesses of the body grow thick upon the jiva, just as the wave belongs to the water, and foam belongs to the wave.

मन की चिंताएँ और शरीर के रोग जीव पर गहरे होकर छा जाते हैं, ठीक वैसे ही जैसे लहर पानी की होती है, और झाग लहर का।

6.32.19

आधिव्याधिभिराकीर्णशरीराम्भोजषट्पदः । जीवो वैषम्यमायाति तरङ्गत्वे यथा पयः ॥ १९ ॥

ādhivyādhibhirākīrṇaśarīrāmbhojaṣaṭpadaḥ | jīvo vaiṣamyamāyāti taraṅgatve yathā payaḥ || 19 ||

The jiva, the bee upon the lotus of the body now covered with worries and sicknesses, falls into disorder, just as water does when it turns into a wave.

जीव, जो शरीर रूपी कमल पर मंडराने वाला भौंरा है, अब चिंताओं और रोगों से ढका हुआ, अस्त-व्यस्त हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे पानी लहर बनने पर हो जाता है।

6.32.20

चिच्छक्तिः सर्वशक्तित्वान्नाहं चिदिति भावनात् । अत्र सैवैति वैवश्यं सूर्यो दीप्तैरिवाम्बुदैः ॥ २० ॥

cicchaktiḥ sarvaśaktitvānnāhaṃ ciditi bhāvanāt | atra saivaiti vaivaśyaṃ sūryo dīptairivāmbudaiḥ || 20 ||

Consciousness-power, though it holds all power, falls here into helplessness through the thought "I am not consciousness," like the sun losing its light behind bright clouds.

चेतना की शक्ति, सारी शक्तियों से भरी होते हुए भी, यहाँ "मैं चेतना नहीं हूँ" ऐसे विचार से असहाय हो जाती है, जैसे सूरज चमकते बादलों की आड़ में छिप जाता है।

6.32.21

वैवश्याच्च्यवती मौढ्यान्न विन्दत्यात्मसंविदम् । घनजाड्यपराभूतः स्वाङ्गावदलनं यथा ॥ २१ ॥

vaivaśyāccyavatī mauḍhyānna vindatyātmasaṃvidam | ghanajāḍyaparābhūtaḥ svāṅgāvadalanaṃ yathā || 21 ||

Falling away through this helplessness, and overcome by thick inertia, it does not find awareness of itself, lost in delusion, just as one is overwhelmed by the tearing of one's own limb.

इस असहायता से गिरकर, और घनी जड़ता से दबकर, यह मोह में पड़कर अपनी पहचान नहीं पाती, ठीक वैसे ही जैसे कोई अपने ही अंग के कट जाने से बेहाल हो जाए।

6.32.22

प्राप्य चाप्यनुसंधानमस्या मोहो विनश्यति। घनमोहरतो जन्तुः स्वकार्यस्मरणं यथा॥ २२॥

prāpya cāpyanusaṃdhānamasyā moho vinaśyati | ghanamoharato jantuḥ svakāryasmaraṇaṃ yathā || 22 ||

And when awareness of this power returns, delusion is destroyed, just as a creature lost deep in confusion comes out of it the moment it remembers its own task.

और जब इस शक्ति की पहचान फिर से हो जाती है, तो मोह नष्ट हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे गहरे मोह में डूबा हुआ कोई प्राणी अपना काम याद आते ही मोह से बाहर आ जाए।

6.32.23

यदाङ्गसंविदां वातस्पन्दशक्तिः प्रमोषतः। न करोत्यनुसंधानं कुष्ठी स्पन्दैषणं यथा॥ २३॥

yadāṅgasamvidāṃ vātaspandaśaktiḥ pramoṣataḥ | na karotyanusaṃdhānaṃ kuṣṭhī spandaiṣaṇaṃ yathā || 23 ||

When the vibrating power of the breath is stolen from the awareness of the limbs, no reconnection happens, just as a leper cannot recover feeling in a numbed limb.

जब अंगों की चेतना से प्राण के स्पंदन की शक्ति चुरा ली जाती है, तो फिर से जुड़ाव नहीं होता, ठीक वैसे ही जैसे कोढ़ी सुन्न पड़े अंग में फिर से सनसनी नहीं पा सकता।

6.32.24

असंवित्स्पन्दतो देहे पद्मपत्रं हृदि स्थितम्। न स्फुरत्यपरामृष्टं दारुपात्रं यथा बहिः॥ २४॥

asaṃvitspandato dehe padmapatraṃ hṛdi sthitaṃ | na sphuratypaparāmṛṣṭaṃ dārupātraṃ yathā bahiḥ || 24 ||

When the vibration in the body loses awareness, the lotus of the heart, left untouched, no longer stirs, like a wooden bowl sitting outside, untouched.

जब शरीर में स्पंदन से चेतना निकल जाती है, तो हृदय का कमल, बिना छुए, हिलना बंद कर देता है, जैसे बाहर रखा हुआ लकड़ी का बर्तन बिना छुए पड़ा रहता है।

6.32.25

निःस्पन्दे पद्मपत्रेऽन्तः प्राणाः शान्तिं प्रयान्त्यमी। तालवृन्ते यथाऽस्पन्दे बहिः पवनशक्तयः॥ २५॥

niḥspande padmapatre'ntaḥ prāṇāḥ śāntiṃ prayāntyamī | tālavṛnte yathā'spande bahiḥ pavanaśaktayaḥ || 25 ||

When the lotus of the heart within grows still, the breaths of life come to rest, just as, when a palm-leaf fan stops moving, the breeze outside it dies down.

जब भीतर हृदय का कमल शांत हो जाता है, तब प्राण भी शांत हो जाते हैं, ठीक वैसे ही जैसे ताड़ के पत्ते का पंखा रुकने पर बाहर की हवा भी थम जाती है।

6.32.26

प्राणे शान्तेतरस्पर्शे जीवो निष्पूर्णमूकताम्। याति शान्ते नभोवायौ न दृश्यत्वं यथा रजः॥ २६॥

prāṇe śāntetarasparśe jīvo niṣpūrṇamūkatāṃ | yāti śānte nabhovāyau na dṛśyatvaṃ yathā rajaḥ || 26 ||

When the breath grows fully still, touching nothing else, the jiva sinks into a complete and silent stillness, just as dust can no longer be seen when the wind in the sky falls still.

जब प्राण पूरी तरह शांत हो जाता है, और किसी और चीज़ को नहीं छूता, तब जीव पूरी तरह मौन शांति में डूब जाता है, ठीक वैसे ही जैसे आकाश की हवा थमने पर धूल दिखनी बंद हो जाती है।

6.32.27

विरजं विगताधारं मनो हि शिष्यते मुने । तिष्ठत्यात्मपदं लब्ध्वा जलादितरुबीजवत् ॥ २७ ॥

virajaṃ vigatādhāraṃ mano hi śiṣyate mune | tiṣṭhatyātmapadaṃ labdhvā jalāditarubījavat || 27 ||

The mind, free of all impurity and without any support left, simply remains, sage. It rests, having reached its own true place, like a tree's seed sitting in water.

मन, सारी मैल से मुक्त होकर और बिना किसी सहारे के, बस बचा रहता है, हे मुनि। वह अपनी असली जगह को पाकर टिका रहता है, जैसे पानी में पड़ा हुआ किसी पेड़ का बीज।

6.32.28

इति वैकल्यमायातैः कारणौघैः समन्ततः । पुर्यष्टके शमं याते देहः पतति निश्चलः ॥ २८ ॥

iti vaikalyamāyātaiḥ kāraṇaughaiḥ samantataḥ | puryaṣṭake śamaṃ yāte dehaḥ patati niścalaḥ || 28 ||

Thus, when all the causes, on every side, break down, and the city of eight comes to rest, the body falls, motionless.

इस तरह जब चारों ओर से सारे कारण बिगड़ जाते हैं, और आठ की नगरी शांत हो जाती है, तो शरीर बिना हिले-डुले गिर जाता है।

6.32.29

चिच्चेत्यचेतनान्मोहात्स्पन्दमायान्ति वासनाः । तदीरिता स्मरत्यन्तरन्यद्विस्मरति स्वयम् ॥ २९ ॥

cicchetyacetanānmohātspandamāyānti vāsanāḥ | tadīritā smaratyantaranyadvismarati svayam || 29 ||

Out of confusion, taking the lifeless body for consciousness, the old desires begin to stir. Pushed by that, the mind remembers one thing inside itself, and forgets everything else on its own.

भ्रम के कारण, निर्जीव शरीर को चेतना समझ बैठने से, पुरानी इच्छाएँ हिलने-डुलने लगती हैं। उसी से प्रेरित होकर मन भीतर एक बात को याद रखता है, और बाकी सब कुछ अपने आप भूल जाता है।

6.32.30

हृत्पद्मपत्रस्फुरणात्स्फुटं पुर्यष्टकं भवेत् । हृत्पद्मयन्त्रे वहनाद्रुद्धे पुर्यष्टकं क्षयि ॥ ३० ॥

hṛtpadmapatrasphuraṇātsphuṭaṃ puryaṣṭakaṃ bhavet | hṛtpadmayantre vahanādruddhe puryaṣṭakaṃ kṣayi || 30 ||

When the petals of the heart's lotus throb, the city of eight stands out clearly. When the flow in the heart-lotus's mechanism is blocked, the city of eight wastes away.

जब हृदय-कमल की पंखुड़ियाँ फड़कती हैं, तो आठ की नगरी साफ़ दिखाई देती है। जब हृदय-कमल के यंत्र में बहाव रुक जाता है, तो आठ की नगरी घटती-घटती नष्ट हो जाती है।

6.32.31

देहे पुर्यष्टकं यावदस्ति तावत्स जीवति । शान्ते पुर्यष्टके देहो मृत इत्युच्यते द्विज ॥ ३१ ॥

dehe puryaṣṭakaṃ yāvadasti tāvatsa jīvati | śānte puryaṣṭake deho mṛta ityucyate dvija || 31 ||

As long as the city of eight remains in the body, he lives. When the city of eight grows still, the body is called dead, O Brahmin.

जब तक आठ की नगरी शरीर में रहती है, तब तक वह जीवित रहता है। जब आठ की नगरी शांत हो जाती है, तो शरीर को मरा हुआ कहा जाता है, हे ब्राह्मण।

6.32.32

विरुद्धमलसंबोधाच्छेदभेददशावशात् न प्रस्फुरति हृत्पद्मयन्त्रमभ्यन्तरे यदा ॥ ३२ ॥

viruddhamalasambodhācchhedabhedadaśāvaśāt na prasphurati hṛtpadmayantramabhyantare yadā || 32 ||

When, because awareness is blocked by impurity, and in a state of being cut and torn apart, the mechanism of the heart's lotus no longer stirs within,

जब मैल के कारण चेतना रुक जाती है, और कट-फट जाने जैसी स्थिति में हृदय-कमल का यंत्र भीतर हिलना बंद कर देता है,

6.32.33

तदा पुर्यष्टकं शान्तिमुपैति गगने शनैः संरोधिते वातयन्त्रे यथा पवनसंततिः ॥ ३३ ॥

tadā puryaṣṭakaṃ śāntimupaiti gagane śanaiḥ saṃrodhite vātayantre yathā pavanasantatiḥ || 33 ||

then the city of eight settles slowly into space, the way the flow of air fades when a bellows is blocked.

तब आठ की नगरी धीरे-धीरे आकाश में शांत हो जाती है, जैसे धौंकनी रुक जाने पर हवा का बहना बंद हो जाता है।

6.32.34

स्वसंवित्तिवशाज्जीवो वैवश्यमुपगच्छति पद्मयन्त्रं शरीरस्थं प्रवाहं याति नित्यदा ॥ ३४ ॥

svasaṃvittivāśājjīvo vaivaśyamupagacchati padmayantraṃ śarīrasthaṃ pravāhaṃ yāti nityadā || 34 ||

Bound by its own awareness, the living being falls under that power. The lotus-mechanism seated in the body keeps flowing on, always.

अपनी ही चेतना से बंधकर जीव उसी के वश में हो जाता है। शरीर में बैठा कमल-यंत्र हमेशा बहता रहता है।

6.32.35

वासना विमला येषां हृदयान्नापसर्पति स्थिरैकरूपजीवास्ते जीवन्मुक्ताश्चिरायुषः ॥ ३५ ॥

vāsanā vimalā yeṣāṃ hṛdayānnāpasarpati sthirairkarūpajīvāste jīvanmuktāścirāyuṣaḥ || 35 ||

Those from whose heart pure desire does not slip away, whose inner self remains steady, always the same, are free while they live, and live long.

जिनके हृदय से शुद्ध इच्छा कभी नहीं हटती, जिनका भीतरी स्वरूप स्थिर और सदा एक-सा बना रहता है, वे जीते-जी मुक्त होते हैं, और लंबी उम्र पाते हैं।

6.32.36

संरुद्धे पद्मयन्त्रे हि प्राणे शान्तिमुपागते देहः पतत्यधैर्योऽयं काष्ठलोष्टसमः क्षितौ ॥ ३६ ॥

saṃrudhde padmayantre hi prāṇe śāntimupāgate dehaḥ patatyadhairyo'yaṃ kāṣṭhaloṣṭasamaḥ kṣitau || 36 ||

When the lotus-mechanism is blocked and the breath grows still, this body falls helpless to the ground, no different from a log or a clod of earth.

जब कमल-यंत्र रुक जाता है और सांस शांत हो जाती है, तो यह शरीर बेबस होकर ज़मीन पर गिर जाता है, बिलकुल लकड़ी के लट्ठे या मिट्टी के ढेले जैसा।

6.32.37

यथैव व्योम मरुति लीनं पुर्यष्टकं भवेत्। तथैव तत्रैव तदा लयमेति मनो मुने ॥ ३७ ॥

yathaiva vyoma maruti līnaṃ puryaṣṭakaṃ bhavet | tathaiva tatraiva tadā layameti mano mune || 37 ||

Just as the city of eight dissolves into the wind of the sky, so too, right there, the mind then reaches its own dissolution, O sage.

जैसे आठ की नगरी आकाश की हवा में घुल जाती है, वैसे ही, उसी जगह, मन भी तब अपने लय को पा जाता है, हे मुनि।

6.32.38

सुचिराभ्यस्तभावं तु वासनाखचितं मनः । यत्र तत्र भ्रमत्स्वर्गनरकादि प्रपश्यति ॥ ३८ ॥

sucirābhyastabhāvaṃ tu vāsanākhacitaṃ manaḥ | yatra tatra bhramatsvarganarakādi prapaśyati || 38 ||

But the mind, long shaped by habit and inlaid with desire, wanders here and there and sees heaven, hell, and everything of that kind.

लेकिन मन, जो लंबे समय के अभ्यास से बना है और इच्छाओं से जड़ा हुआ है, इधर-उधर भटकते हुए स्वर्ग, नरक और ऐसी ही चीज़ें देखता है।

6.32.39

शरीरं शवतामेति मनोमारुतवर्जितम् । गते गृहजने दूरं गृहं संशून्यतामिव ॥ ३९ ॥

śarīraṃ śavatāmeti manomārutavarjitam | gate gṛhajane dūraṃ gṛhaṃ saṃśūnyatāmiva || 39 ||

The body, left without mind or breath, becomes a corpse, the way a house turns completely empty when the family living there has gone far away.

मन और सांस दोनों से रहित शरीर लाश बन जाता है, जैसे घर के लोग दूर चले जाने पर घर बिलकुल सूना हो जाता है।

6.32.40

सर्वगा चिच्चेतनतो जीवीभूय मनःस्थिता । पुर्यष्टकवपुर्भूत्वा साऽऽतिवाहिकदेहिनी ॥ ४० ॥

sarvagā cicchetanato jīvībhūya manaḥsthitā | puryaṣṭakavapurbhūtvā sā''tivāhikadehinī || 40 ||

Consciousness, which is present everywhere, becomes a living being through its own power of awareness. It settles into the mind, takes on the shape of the city of eight, and becomes the one who carries a body that travels on.

चेतना, जो हर जगह मौजूद है, अपनी ही जानने की शक्ति से जीव बन जाती है। वह मन में बस जाती है, आठ की नगरी का रूप ले लेती है, और आगे यात्रा करने वाला शरीर धारण करने वाली बन जाती है।

6.32.41

तन्मात्रपञ्चकं चित्तं क्रोडीकृत्य व्यवस्थिता । स्वप्नभ्रमवदाकारं भावात्स्थूलं प्रपश्यति ॥ ४१ ॥

tanmātrapañcakaṃ cittaṃ kroḍīkṛtya vyavasthitā | svapnabhramavadākāraṃ bhāvātsthūlaṃ prapaśyati || 41 ||

Holding the five subtle elements and the mind together within itself, it stays settled there. Then, the way a dream creates a confused shape, it sees a solid form simply out of its own imagining.

पाँचों सूक्ष्म तत्वों और मन को अपने भीतर समेटकर वह वहीं टिकी रहती है। फिर जैसे सपने में भ्रम से कोई आकार बनता है, वैसे ही वह अपनी ही कल्पना से एक ठोस रूप देखने लगती है।

6.32.42

दृढभावनया पश्चात्तत्रैव रसशालिनी । आतिवाहिकदेहत्वं विस्मरत्यखिलं क्षणात् ॥ ४२ ॥

dṛḍhabhāvanayā paścāttatraiva rasashālinī | ātivāhikadehatvaṃ vismaratyakhilaṃ kṣaṇāt || 42 ||

Then, through this firm imagining, taking delight in that very place, it forgets completely, in an instant, that it ever was the body that travels on.

फिर इसी पक्की कल्पना से, वहीं रस लेते हुए, वह एक पल में पूरी तरह भूल जाती है कि वह कभी आगे यात्रा करने वाला शरीर थी।

6.32.43

असत्येव शरीरेऽस्मिन्कृतकृत्रिमभावना । नयत्यसत्यं सत्यत्वं सत्यं चासत्यतामपि ॥ ४३ ॥

asatyeva śarīre'smin kṛtakṛtrimabhāvanā | nayatyasatyaṃ satyatvaṃ satyaṃ cāsatyatāmapi || 43 ||

Though this body is not real at all, a belief that has been artificially built up turns the unreal into something taken as real, and turns the real into something taken as unreal.

यह शरीर बिलकुल असत्य होते हुए भी, बनावटी ढंग से बनाई गई मान्यता असत्य को सत्य जैसा बना देती है, और सत्य को भी असत्य जैसा बना देती है।

6.32.44

सर्वगा हि चिदंशेन जीवीभूयाभवन्मनः । मनः पुर्यष्टकरथमाक्रामति ततो जगत् ॥ ४४ ॥

sarvagā hi cidaṃśena jīvībhūyābhavanmanaḥ | manaḥ puryaṣṭakarathamākrāmati tato jagat || 44 ||

Consciousness, though present everywhere, becomes a living being through a fragment of itself, and turns into mind. That mind then climbs into the chariot of the city of eight, and rides it out into the world.

चेतना, हर जगह मौजूद होते हुए भी, अपने ही एक अंश से जीव बनकर मन में बदल जाती है। फिर वह मन आठ की नगरी के रथ पर सवार होकर संसार में निकल पड़ता है।

6.32.45

पुर्यष्टकं वातमयं देहमुत्थापयत्यलम् । हृत्स्पन्दिवेताल इव जीवतीत्युच्यते तदा ॥ ४५ ॥

puryaṣṭakaṃ vātamayaṃ dehamutthāpayatyalaṃ | hṛtspandivetāla iva jīvatītyucyate tadā || 45 ||

The city of eight, made of wind, is enough by itself to make the body rise up. Throbbing at the heart, like a spirit stirring a corpse, it is then said to 'be alive.'

हवा से बनी आठ की नगरी अकेले ही शरीर को उठाने-खड़ा करने के लिए काफ़ी होती है। हृदय में धड़कते हुए, जैसे कोई भूत-प्रेत लाश को हिलाता है, तब उसे 'जीवित है' कहा जाता है।

6.32.46

क्षीणे पुर्यष्टके चित्तं यदा व्योमनि लीयते । तदा स्फुरति देहोऽयं मृत इत्युच्यतेऽपि च ॥ ४६ ॥

kṣīṇe puryaṣṭake cittaṃ yadā vyomani līyate | tadā sphurati deho'yaṃ mṛta ityucyate'pi ca || 46 ||

When the city of eight is worn out, and the mind dissolves into space, then this body shows itself as it is, and is called dead too.

जब आठ की नगरी घिस-घिसकर खत्म हो जाती है, और मन आकाश में घुल जाता है, तब यह शरीर जैसा है वैसा ही दिखाई देने लगता है, और इसे भी मरा हुआ कहा जाता है।

6.32.47

स्वभाववशतो जीवो विस्मृत्या शक्तिमृच्छति । वैवश्यात्कालवशतः पर्णं जर्जरतामिव ॥ ४७ ॥

svabhāvavaśato jīvo vismṛtyā śaktimṛcchati | vaivaśyātkālavavaśataḥ parṇaṃ jarjaratāmiva || 47 ||

Ruled by its own nature, the living being, through forgetting itself, falls under a compelling power. Helpless, ruled by time, it withers like a leaf turning brittle.

अपने ही स्वभाव के वश में, जीव अपने को भूलकर एक मजबूर कर देने वाली शक्ति के अधीन हो जाता है। बेबस होकर, समय के वश में, वह पत्ते की तरह सूखकर भुरभुरा हो जाता है।

6.32.48

जीवशक्तया परामृष्टे निरुद्धे पद्मयन्त्रके । प्राणे संरोधमायाते म्रियते मानवो मुने ॥ ४८ ॥

jīvaśaktyā parāmṛṣṭe niruddhe padmayantrake | prāṇe saṃrodhamāyāte mriyate mānavo mune || 48 ||

When the power of the living being grips the lotus-mechanism and blocks it, and the breath comes to a stop, the man dies, O sage.

जब जीव की शक्ति कमल-यंत्र को जकड़कर रोक देती है, और सांस थम जाती है, तब मनुष्य मर जाता है, हे मुनि।

6.32.49

यथा जातानि जातानि चान्यान्यन्यानि कालतः । वृक्षात्पर्णानि शीर्यन्ते शरीराणि तथा नृणाम् ॥ ४९ ॥

yathā jātāni jātāni cānyānyanyāni kālataḥ | vṛkṣātparṇāni śīryante śarīrāṇi tathā nṛṇām || 49 ||

Just as leaves are born on a tree one after another, each new one different, and in time they fall from it, so it is with the bodies of men.

जैसे पेड़ पर पत्ते एक के बाद एक जन्म लेते हैं, हर बार अलग-अलग, और समय आने पर पेड़ से झड़ जाते हैं, वैसे ही मनुष्यों के शरीर होते हैं।

6.32.50

जायन्ते च म्रियन्ते च शरीराणि शरीरिणाम् । पादपानां च पर्णानि का तत्र परिदेवना ॥ ५० ॥

jāyante ca mriyante ca śarīrāṇi śarīriṇām | pādapānāṃ ca parṇāni kā tatra paridevanā || 50 ||

The bodies of living beings are born and die, just as the leaves of trees are born and die. What is there in that to grieve over?

जीवों के शरीर जन्म लेते हैं और मरते हैं, ठीक जैसे पेड़ों के पत्ते जन्म लेते हैं और झड़ते हैं। इसमें दुख मनाने की क्या बात है?

6.32.51

चिदम्बुधौ स्फुरन्त्येता देहबुद्बुदपङ्कतयः । इतश्चान्या इतश्चान्या एतास्वास्था न धीमतः ॥ ५१ ॥

cidambudhau sphurantyetā dehabudbudapaṅkatayaḥ | itaścānyā itaścānyā etāsvāsthā na dhīmataḥ || 51 ||

In the ocean of consciousness these rows of bodies flash up like bubbles, one after another, again and again from every side. A wise man has no attachment to them.

चेतना के समुद्र में शरीरों की ये कतारें बुलबुलों की तरह उठती हैं, एक के बाद एक, बार-बार, हर तरफ़ से। समझदार व्यक्ति को इनसे कोई मोह नहीं होता।

6.32.52

सर्वगापि चिदेतस्मिंश्चेतसि प्रतिबिम्बति । पदार्थमन्तरादत्ते नान्यो हि मुकुरादृते ॥ ५२ ॥

sarvagāpi cidetasmiṃścetasi pratibimbiti | padārthamantarādatte nānyo hi mukurādṛte || 52 ||

Consciousness, though it is everywhere, is reflected in this mind. Nothing but a mirror can take an object inside itself like that.

चेतना, हर जगह मौजूद होते हुए भी, इस मन में झलकती है। दर्पण के सिवा और कोई चीज़ किसी वस्तु को अपने भीतर इस तरह नहीं ले पाती।

6.32.53

चिदमलनभसि प्रयत्नरूपाः परिविततते तदतन्मयाः स्फुरन्ति । कलकलमुखराः स्फुटाभिरामा विविधशरीरविमोहतापनाय ॥ ५३ ॥

cidamalanabhasi prayatnarūpāḥ parivitatte tadatanmayāḥ sphuranti | kalakalamukharāḥ sphuṭābhirāmā vividhaśarīravimohatāpanāya || 53 ||

In the stainless sky of consciousness, spread out everywhere, forms that look like striving beings flash into view, though they are not truly made of it. Loud with noise, bright and pleasing, they exist only to confuse and torment these various bodies.

चेतना के निर्मल आकाश में, चारों ओर फैले हुए, मेहनत करते जीवों जैसे दिखने वाले रूप उभर आते हैं, हालाँकि वे असल में उसी से नहीं बने होते। शोर-शराबे से भरे, चमकीले और भले लगने वाले, वे बस इन तरह-तरह के शरीरों को भरमाने और सताने के लिए होते हैं।

Chapter 33

6.33.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । चन्द्रार्धशेखरधर चित्तत्त्वस्य महात्मनः । अनन्तस्यैकरूपस्य द्वित्वं कथमुपागतम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | candrārdhaśekharadhara cittattvasya mahātmanaḥ | anantasyaiakarūpasya dvitvaṃ kathamupāgatam || 1 ||

Sri Vasishtha said: You who wear the half moon on your head, the great being who is the truth of consciousness has no end and only one form. How did duality come upon him?

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे अपने सिर पर आधा चाँद धारण करने वाले, चेतना का सत्य जो महान आत्मा है, वह अनंत है और उसका रूप एक ही है। उसमें द्वैत कैसे आ गया?

6.33.2

कथं च तन्महादेव रूढं पर्यायसंकुलम् । भवेद्दुःखोपघाताय प्रज्ञया विनिवारितम् ॥ २ ॥

kathaṃ ca tanmahādeva rūḍhaṃ paryāyasaṃkulam | bhavedduḥkopaghātāya prajñayā vinivāritam || 2 ||

And great god, how has this duality become so firmly fixed and so full of shifting forms that it wounds us with suffering, a thing that only wisdom can drive away?

और हे महादेव, यह द्वैत इतना गहरा जम गया और इतने बदलते रूपों से भर गया कि यह दुख देकर चोट पहुँचाता है, ऐसी चीज़ जिसे केवल बुद्धि से ही दूर किया जा सकता है।

6.33.3

ईश्वर उवाच । सर्वशक्ति हि तद्ब्रह्म सदेकं विद्यते यदा । तदा निर्मूल एवायं द्वित्वैकत्वकलोदयः ॥ ३ ॥

īśvara uvāca | sarvaśakti hi tadbrahma sadekaṃ vidyate yadā | tadā nirmūla evāyaṃ dvitvaikatvakalodayaḥ || 3 ||

Ishvara said: That Brahman holds every power. When it exists as the one reality, then this rising of the parts called duality and oneness has no root at all.

ईश्वर ने कहा: वह ब्रह्म हर शक्ति से भरा हुआ है। जब वह एक ही सत्य के रूप में रहता है, तब द्वैत और एकत्व नाम के ये जो भेद उठते हैं, उनकी कोई जड़ ही नहीं होती।

6.33.4

सति द्वित्वे किलैकं स्यात्सत्येकत्वे द्विरूपता । कले द्वे अपि चिद्रूपे चिद्रूपत्वात्तदप्यसत् ॥ ४ ॥

sati dvitve kilaikaṃ syātsatyekatve dvirūpatā | kale dve api cidrūpe cidrūpatvāttadapyasat || 4 ||

If there is duality, then there must also be oneness. If there is oneness, then there must also be twoness. But both of these are only forms of consciousness, and because they are only consciousness, this duality and this oneness are both unreal.

अगर द्वैत है, तो एकत्व भी होना चाहिए। अगर एकत्व है, तो द्वैत भी होना चाहिए। पर ये दोनों केवल चेतना के ही रूप हैं, और चूँकि ये केवल चेतना हैं, इसलिए यह द्वैत और यह एकत्व दोनों ही असत्य हैं।

6.33.5

एकाभावादभावोऽत्र एकत्वद्वित्वयोर्द्वयोः । एकं विना न द्वितीयं न द्वितीयं विनैकता ॥ ५ ॥

ekābhāvādabhāvo'tra ekatvadvitvayordvayoḥ | ekaṃ vinā na dvitīyaṃ na dvitīyaṃ vinaikatā || 5 ||

If oneness itself were absent, then both oneness and duality would be absent. Without the one there is no second, and without the second there is no oneness.

अगर एकत्व ही न हो, तो एकत्व और द्वैत दोनों ही नहीं रहेंगे। एक के बिना दूसरा नहीं होता, और दूसरे के बिना एकत्व नहीं होता।

6.33.6

कार्यकारणयोरेकसारत्वादेकरूपता । फलान्तस्यापि बीजादेर्विकारादिह कल्पना ॥ ६ ॥

kāryakāraṇayorekasāratvādekarūpatā | phalāntasyāpi bījādervikārādih kalpanā || 6 ||

Because cause and effect share the very same essence, they are really one. Even from the seed to the fruit, this idea of change is only something imagined.

कारण और कार्य का सार एक ही है, इसलिए वे असल में एक ही हैं। बीज से लेकर फल तक जो बदलाव दिखता है, वह भी बस एक कल्पना है।

6.33.7

चित्त्वं चेत्यविकल्पेन स्वयं स्फुरति तन्मयम् । विकारादि तदेवान्तस्तत्सारत्वान्न भिद्यते ॥ ७ ॥

cittvaṃ cetyaavikalpena svayaṃ sphurati tanmayam | vikārādi tadevāntastatsāratvānna bhidyate || 7 ||

Being the knower and being the known shine by themselves, without any real difference, both made only of consciousness. Whatever change seems to happen is within that very consciousness, and because it shares its essence, it is not different from it.

जानने वाला होना और जाना जाना, ये दोनों बिना किसी असली भेद के अपने आप प्रकट होते हैं, और दोनों केवल चेतना से ही बने हैं। जो भी बदलाव दिखता है, वह उसी चेतना के भीतर है, और चूँकि उसका सार भी वही है, इसलिए वह उससे अलग नहीं है।

6.33.8

विकारादिविकल्पोऽयं तत उत्थाय वस्तुषु । याति सार्थकतां नानाकार्यकारणतादिभिः ॥ ८ ॥

vikārādivikalpo'yaṃ tata utthāya vastuṣu | yāti sārthakatāṃ nānākāryakāraṇatādibhiḥ || 8 ||

This idea of change rises out of consciousness, and once it falls upon things, it gets its meaning only through the many relations of cause and effect.

यह बदलाव का विचार चेतना से ही उठता है, और जब यह चीज़ों पर लागू होता है, तभी इसे कारण और कार्य जैसे कई संबंधों से कोई अर्थ मिलता है।

6.33.9

तरङ्गाः सलिले येऽपि तोये शैलस्य ते समाः । शशश्रृङ्गसमः सोऽपि यस्य सत्यः शशाङ्कुरः ॥ ९ ॥

taraṅgāḥ salile yē'pi toyē śailasya tē samāḥ | śaśaśṛṅgasamaḥ sō'pi yasya satyaḥ śaśāṅkuraḥ || 9 ||

The waves in water and the waves in a mountain's water are the same. And one to whom a horn sprouting on a hare seems real is himself like a hare's horn.

पानी की लहरें और पहाड़ के पानी की लहरें एक जैसी ही हैं। और जिसे खरगोश के सिर पर उगा सींग सच लगता है, वह खुद भी खरगोश के सींग जैसा ही है।

6.33.10

वस्तुबोधोऽत्र संधत्ते तत्रालं वाग्विकल्पनैः । व्यवच्छेदादि दुश्छेद्यं वचोवाच्यात्किल द्विज ॥ १० ॥

vastubodho'tra saṃdhatte tatrālaṃ vāgvikalpanaiḥ | vyavacchedādi duśchedyaṃ vacovācyātkila dvija || 10 ||

Here it is the direct knowledge of the thing itself that settles this, enough with clever words about it. Cutting things apart into this and that cannot really be done through words alone, brahmin.

यहाँ तो वस्तु का सीधा ज्ञान ही इस बात को तय करता है, अब शब्दों की चतुराई बहुत हो चुकी। हे ब्राह्मण, चीज़ों को अलग-अलग बाँटना केवल शब्दों से कभी नहीं हो सकता।

6.33.11

ब्रह्मणः सर्वशक्तित्वं तत्त्वतो न विभिद्यते । तरङ्गकणकल्लोलजलौघ इव वारिणः ॥ ११ ॥

brahmaṇaḥ sarvaśaktitvaṃ tattvato na vibhidyate | taraṅgakaṇakallolajalaugha iva vāriṇaḥ || 11 ||

Brahman holding every power is, in truth, no different from Brahman itself, just as a wave, a drop, a swell and a flood of water are nothing but water.

ब्रह्म का हर शक्ति से युक्त होना असल में ब्रह्म से अलग नहीं है, जैसे लहर, बूँद, हिलोर और पानी की बाढ़, ये सब पानी ही हैं, पानी से अलग कुछ नहीं।

6.33.12

पुष्पपल्लवपत्रादि लताया नेतरद्यथा । द्वित्वैकत्वजगत्त्वादि त्वन्त्वाहन्त्वं तथा चितेः ॥ १२ ॥

puṣpapallavapatrādi latāyā netaradyathā | dvitvaikatvajagattvādi tvantvāhantvaṃ tathā citeḥ || 12 ||

Just as the flower, the young shoot and the leaf of a vine are nothing other than the vine, so duality, oneness, the being of the world, and the being of you and I are nothing other than consciousness.

जैसे बेल का फूल, कोमल कोंपल और पत्ता बेल से अलग कुछ नहीं है, वैसे ही द्वैत, एकत्व, संसार का होना, और तू और मैं का होना, ये सब चेतना से अलग कुछ नहीं हैं।

6.33.13

देशकालविकारादिः कृतो भेदश्चितस्तु यः । तच्चिदेतदसत्प्रोक्तं न प्रश्नोऽत्र तवोचितः ॥ १३ ॥

deśakālavikārādiḥ kṛto bhedaścitas tu yaḥ | taccidetadasatproktaṃ na praśno'tra tavocitaḥ || 13 ||

Whatever difference in consciousness seems made by place, time or change has been declared unreal. So your question here does not really fit.

स्थान, समय और बदलाव के कारण चेतना में जो भेद दिखता है, वह भेद असत्य ही बताया गया है। इसलिए यहाँ तुम्हारा यह प्रश्न ठीक नहीं बैठता।

6.33.14

देशकालक्रियासत्तानियत्याद्याश्च शक्तयः । चिदात्मिका एव चितः सत्त्वात्संपतिताः स्वतः ॥ १४ ॥

deśakālakriyāsattāniyatyādyāśca śaktayaḥ | cidātmikā eva citḥ sattvātsaṃpatitāḥ svataḥ || 14 ||

And the powers called place, time, action, existence and law are, in their own nature, nothing but consciousness. They arise by themselves out of the very being of consciousness.

और स्थान, समय, क्रिया, सत्ता और नियम जैसी जो शक्तियाँ हैं, वे अपने स्वभाव में चेतना ही हैं। वे चेतना के सत्य होने से खुद ही उठ खड़ी होती हैं।

6.33.15

चित्तत्त्वं चित्तचेत्येहं चिद्ब्रह्माद्यभिधा स्मृता । यथा वीच्याद्यभिधार्हं स्थितमम्बुतरङ्गकम् ॥ १५ ॥

cittattvaṃ cittacetyehaṃ cidbrahmādyabhidhā smṛtā | yathā vīcyādyabhidhārhaṃ sthitamambutaraṅgakam || 15 ||

The truth of consciousness, consciousness, the known, I, Brahman, these are only different names given to the one thing, just as a ripple of water is called by different names like wave, while remaining water.

चेतना का सत्य, चेतना, ज्ञेय, मैं, ब्रह्म, ये सब एक ही चीज़ को दिए गए अलग-अलग नाम हैं, जैसे पानी की एक हिलोर को लहर जैसे अलग-अलग नाम दिए जाते हैं, पर वह पानी ही रहती है।

6.33.16

असंभवत्तरङ्गस्य चिद्विलासमहाम्बुधेः । तरङ्गितत्वमिव यत्तत्तावच्चेत्यसङ्गिता ॥ १६ ॥

asambhavattaraṅgasya cidvilāsamahāmbudheḥ | taraṅgitatvamiva yattattāvaccetyasaṅgitā || 16 ||

For the vast ocean that is consciousness at play, a wave is not really possible at all. Whatever looks like waviness in it is only the name we give to the known, nothing more.

चेतना की लीला रूपी विशाल सागर में लहर वास्तव में संभव ही नहीं है। उसमें जो लहर जैसा दिखता है, वह केवल ज्ञेय नाम की एक संज्ञा भर है, इससे ज़्यादा कुछ नहीं।

6.33.17

तदेतत्परमं ब्रह्म सत्येश्वरशिवादिभिः । शून्यैकपरमात्मादिनामभिः परिगीयते ॥ १७ ॥

tadetatparamaṃ brahma satyeśvaraśivādibhiḥ | śūnyaikaparamātmādināmabhiḥ parigīyate || 17 ||

This same highest Brahman is praised under names like the real, the lord, Shiva, and under names like the void, the one, the supreme self.

यही परम ब्रह्म सत्य, ईश्वर, शिव जैसे नामों से, और शून्य, एक, परमात्मा जैसे नामों से गाया जाता है।

6.33.18

एवं रूपपदातीतं यद्रूपं परमात्मनः । यत्तु नामाहममलं विषयो न गिरां च तत् ॥ १८ ॥

evaṃ rūpapadātītaṃ yadrūpaṃ paramātmanaḥ | yattu nāmāhamamalaṃ viṣayo na girāṃ ca tat || 18 ||

So the true form of the supreme self is beyond every shape and every word. And what is called the stainless I is also something words cannot reach.

इस तरह परमात्मा का असली रूप हर आकार और हर शब्द से परे है। और जिसे निर्मल मैं कहा जाता है, वह भी शब्दों की पहुँच से बाहर है।

6.33.19

यदिदं दृश्यते तस्यास्तल्लताया महाचितेः । फलपल्लवपुष्पादि न भिन्नं तन्मयं यतः ॥ १९ ॥

yadidaṃ dṛśyate tasyāstallatāyā mahāciteḥ | phalapallavapuṣpādi na bhinnam tanmayam yataḥ || 19 ||

Whatever is seen here, the fruit, the shoot, the flower and the rest, belongs to that vast vine which is consciousness itself, and none of it is different, because it is all made of that same consciousness.

यहाँ जो कुछ भी दिखता है, फल, कोंपल, फूल आदि, वह उस विशाल बेल का है जो खुद महाचेतना है, और उनमें से कोई भी उससे अलग नहीं है, क्योंकि वे सब उसी चेतना से बने हैं।

6.33.20

महाविद्योपनयना चिद्भवत्यभिधा सती । सा जीवत्वेन बाह्यत्वं तदा द्वीन्द्विव पश्यति ॥ २० ॥

mahāvidyopanayanā cidbhavatyabhidhā satī | sā jīvatvena bāhyatvaṃ tadā dvīndviva paśyati || 20 ||

Consciousness, led on by great ignorance, while still remaining itself, comes to bear a name. Then, as a living soul, it sees an outside world, seeing double, like someone seeing two moons where there is only one.

चेतना, बड़ी अविद्या के असर में आकर, खुद वही रहते हुए भी एक नाम धारण कर लेती है। फिर जीव बनकर वह बाहर की दुनिया देखती है, वैसे ही जैसे कोई एक चाँद को देखकर भी दो चाँद देखने लगे।

6.33.21

स्वयमन्यैवमस्मीति भावयित्वा स्वभावतः । अन्यतामिव संयाति स्वविकल्पात्मिकां स्वतः ॥ २१ ॥

svayamanyaiavasmīti bhāvayitvā svabhāvataḥ | anyatāmiva saṃyāti svavikalpātmikāṃ svataḥ || 21 ||

By its own nature it imagines, I myself am someone else, and so it seems to become another, an otherness that is nothing but its own imagining, made by itself.

वह अपने स्वभाव से ही यह सोच लेती है कि मैं तो कोई और हूँ, और इस तरह वह मानो कोई दूसरी चीज़ बन जाती है, यह अलगपन बस उसकी अपनी कल्पना है, जो उसने खुद बनाई है।

6.33.22

अकलङ्केन रूपेण रूपं यत्सकलङ्कवत् । संसारसरितं प्राप्य चेतनेनैव चेतति ॥ २२ ॥

akalaṅkena rūpeṇa rūpaṃ yatsakalaṅkavat | saṃsārasaritaṃ prāpya cetanenaiva cetati || 22 ||

With a form that has no stain at all, it comes to carry what looks like a stained form, and having entered the river of this world, it still knows only through consciousness itself.

जो रूप असल में बिना किसी दाग के है, वही मानो दाग-भरा रूप धारण कर लेता है। और इस संसार रूपी नदी में उतरकर भी, वह जानता तो चेतना से ही है।

6.33.23

चिद्वपुः स्वयमेतेन ह्येकतामेति जीवताम् । चित्तत्त्वस्यावभासेन जीवो जीवति तन्मयः ॥ २३ ॥

cidvapuḥ svayameten hyekatāmeti jīvatām | cittattvasyāvabhāsena jīvo jīvati tanmayaḥ || 23 ||

The form that is consciousness itself, through this very process, comes to become one with being a living soul. It is by the shining of the truth of consciousness that the living soul lives at all, being made entirely of it.

चेतना का यह रूप, इसी प्रक्रिया से, खुद जीव होने के साथ एक हो जाता है। चेतना के इसी सत्य के उजाले से जीव जीवित रहता है, क्योंकि वह पूरी तरह उसी से बना है।

6.33.24

आतिवाहिकदेहोऽपि जीवतां समुपागतः । भावनापञ्चकं भूत्वा द्रव्यमस्मीति वेत्त्यलम् ॥ २४ ॥

ātivāhikadeho'pi jīvatāṃ samupāgataḥ | bhāvanāpañcakaṃ bhūtvā dravyamasmīti vetyalam || 24 ||

Even the subtle carrier body, once it comes to be a living soul, passes through a fivefold imagining, and then knows fully, I am matter.

सूक्ष्म वाहक शरीर भी, जीव बनने के बाद, पाँच तरह की कल्पना से गुज़रता है, और फिर पूरी तरह जान लेता है कि मैं तो पदार्थ हूँ।

6.33.25

तद्द्रव्यं प्राणिना भुक्तमाशु गच्छति वीर्यताम्। ततोऽहं प्राणवाञ्जातो वेत्तीत्यनुभवात्मकम्॥ २५॥

taddravyaṃ prāṇinā bhuktaṃ āśu gacchati vīryatām | tato'haṃ prāṇavāñjāto vettītyanubhavātmakam || 25 ||

That matter, once the living being takes it in, quickly turns into vital strength. Then it knows, as its own direct experience, I have become a being with life breath.

वह पदार्थ, जब प्राणी उसे ग्रहण करता है, जल्दी ही जीवनी-शक्ति में बदल जाता है। फिर वह अपने सीधे अनुभव से जान लेता है कि मैं तो प्राणवान हो गया हूँ।

6.33.26

अहंतादिक्रमेणाशु पञ्चकानुभवभ्रमात्। स्थावरं जंगमं सर्वं वेत्ति तत्तद्भवत्यलम्॥ २६॥

ahantādikrameṇāśu pañcakānubhavabhramāt | sthāvaraṃ jaṅgamaṃ sarvaṃ vetti tattadbhavaty alam || 26 ||

Through the sequence that begins with 'I am', quickly, out of the confusion of experiencing the five elements, it comes to know everything that stands still and everything that moves — and it becomes exactly that thing it knows.

'मैं हूँ' से शुरू होने वाले क्रम से, जल्दी ही, पाँचों तत्वों को अनुभव करने की उलझन से, वह हर उस चीज़ को जान लेता है जो स्थिर है और जो चलती है — और वह ठीक वही बन जाता है जिसे वह जानता है।

6.33.27

काकतालीययोगेन दृढाभ्यासक्षयेण च। वासनान्तरसंश्लेषात्सूक्ष्ममाकारमुज्झति॥ २७॥

kākatālīyayogena dṛḍhābhyāsakṣayeṇa ca | vāsanāntarasaṃśleṣātsūkṣmamākāramujjhati || 27 ||

By sheer coincidence — as when a crow lands on a branch just as a palm fruit happens to fall — and by the wearing away of a fixed habit, when it joins with another set of impressions, it gives up its subtle form.

जैसे कौआ किसी डाल पर बैठता है और ठीक उसी पल ताड़ का फल गिर जाता है, ऐसे ही एक अचानक संयोग से, और पक्के अभ्यास के घिस जाने से, जब वह किसी और वासना से जुड़ता है, तो वह अपना सूक्ष्म रूप छोड़ देता है।

6.33.28

द्वित्वस्वसंविदा द्वित्वमेकस्यैव प्रवर्तते। पुंसो वेतालसंकल्पाद्वेताल इव भासुरः॥ २८॥

dvitvasvasaṃvidā dvitvamekasyaiva pravartate | puṃso vetālasaṃkalpādvetāla iva bhāsuraḥ || 28 ||

By its own sense of being two, twoness arises in what is really only the one — bright and vivid, like a ghost that appears simply because a man imagines a ghost.

अपने आप को दो समझने से, जो असल में सिर्फ एक है उसी में दोपन पैदा हो जाता है — बिलकुल वैसे ही जैसे कोई आदमी भूत की कल्पना करे तो वह भूत जीता-जागता, चमकीला दिखने लगता है।

6.33.29

अद्वित्ववेदनाद्वित्वमात्मनोऽपि निवर्तते। न करोमीति संकल्पात्पुरुषस्येव कर्तृता॥ २९॥

advitvavedanādvitvamātmano'pi nivartate | na karomīti saṃkalpātpuruṣasyeva kartṛtā || 29 ||

By knowing non-duality, the self's duality too comes to an end — just as a man's sense of being the doer ends the moment he thinks, 'I am not doing this.'

अद्वैत को जान लेने से आत्मा का दोपन भी मिट जाता है — बिलकुल वैसे ही जैसे कोई आदमी जब यह सोचता है, 'मैं कुछ नहीं कर रहा', तो उसका कर्ता होने का भाव खत्म हो जाता है।

6.33.30

द्वित्वसंकल्पतो द्वित्वमेकस्यैव प्रवर्तते। अद्वित्वसंविदा द्वित्वमनेकस्यापि नश्यति ॥ ३० ॥

dvitvasaṃkalpato dvitvamekasyaiva pravartate | advitvasaṃvidā dvitvamanekasyāpi naśyati || 30 ||

Out of the thought of twoness, twoness arises in the one alone; and by the knowledge of oneness, twoness disappears even for the many.

दोपन के विचार से, जो एक है उसी में दोपन पैदा होता है; और एकता के ज्ञान से, दोपन कई लोगों में भी मिट जाता है।

6.33.31

परमात्मतया द्वित्वं न किलात्मनि विद्यते। अविकारादिमत्त्वेन सर्वगत्वेन सर्वदा ॥ ३१ ॥

paramātmatayā dvitvaṃ na kilātmani vidyate | avikārādimattvena sarvagatvena sarvadā || 31 ||

Because the self is the highest self, duality truly does not exist in it — it is changeless through and through, it fills all things, and this is so always.

क्योंकि आत्मा परम आत्मा है, इसलिए उसमें दोपन सच में है ही नहीं — वह पूरी तरह अपरिवर्तित रहता है, वह हर जगह भरा हुआ है, और यह हमेशा से ऐसा ही है।

6.33.32

यत्स्वसंकल्परचितमसंकल्पक्षयं हि तत्। यथा मुने मनोराज्यं गन्धर्वनगरं यथा ॥ ३२ ॥

yatsvasaṃkalparacitamasankalpakṣayaṃ hi tat | yathā mune manorājyaṃ gandharvanagaraṃ yathā || 32 ||

O sage, whatever is built by one's own thought lasts only until that thought is gone — like a daydream, like a city in the sky.

हे मुनि, जो कुछ भी अपने ही विचार से बना है, वह विचार खत्म होते ही खत्म हो जाता है — जैसे एक दिवास्वप्न, जैसे आकाश में बना एक शहर।

6.33.33

तथा संकल्पने क्लेशो न संकल्पविनाशने। संकल्पयक्षो गन्धर्वपुर्याः सृष्टौ न तु क्षये ॥ ३३ ॥

tathā saṃkalpane kleśo na saṃkalpavināśane | saṃkalpayakṣo gandharvapuryāḥ sṛṣṭau na tu kṣaye || 33 ||

In the same way, the pain is in forming the thought, not in ending the thought — the spirit that builds the city in the sky works only in its making, not in its unmaking.

उसी तरह, दुख विचार बनाने में है, विचार मिटाने में नहीं — आकाश में शहर बनाने वाली शक्ति सिर्फ उसे बनाने में लगती है, उसे मिटाने में नहीं।

6.33.34

पुष्टसंकल्पमात्रेण यदिदं दुःखमागतम्। तदसंकल्पमात्रेण क्षयि कात्र कदर्थना ॥ ३४ ॥

puṣṭasaṃkalpamātreṇa yadidaṃ duḥkhamāgatam | tadasaṃkalpamātreṇa kṣayi kātra kadarthanā || 34 ||

This suffering has come only because a thought was fed and made strong; it ends the moment there is simply no thought at all — so what difficulty can there be in that?

यह दुख सिर्फ इसलिए आया है क्योंकि एक विचार को पाला-पोसा और मज़बूत किया गया; जैसे ही विचार बिलकुल न रहे, यह मिट जाता है — तो इसमें मुश्किल ही क्या है?

6.33.35

यत्किंचिदपि संकल्प्य नरो दुःखे निमज्जति। न किंचिदपि संकल्प्य सुखमव्ययमश्नुते ॥ ३५ ॥

yatkiṃcidapi saṃkalpya naroduḥkhe nimajjati | na kiṃcidapi saṃkalpya sukhamavyayamaśnute || 35 ||

By thinking up anything at all, a man sinks into suffering; by thinking up nothing at all, he reaches a happiness that never fades.

कुछ भी सोचकर गढ़ने से आदमी दुख में डूब जाता है; कुछ भी न सोचकर गढ़ने से वह ऐसा सुख पाता है जो कभी खत्म नहीं होता।

6.33.36

संकल्पव्यालनिर्मुक्ता न यदा तव चेतना । न तदा नन्दनोद्याने त्वमुच्चैः परिराजसे ॥ ३६ ॥

saṃkalpavyālanirmuktā na yadā tava cetanā | na tadā nandanodyāne tvamuccaiḥ parirājase || 36 ||

Unless your awareness is freed from the snake of thought, you will not shine in glory even in the Nandana garden.

जब तक तुम्हारी चेतना विचार के साँप से मुक्त नहीं होती, तब तक तुम नंदनवन में भी शान से नहीं चमकते।

6.33.37

स्वविवेकानिलैः कृत्वा संकल्पजलदक्षयम् । परां निर्मलतामेहि शरदीव नभोन्तरम् ॥ ३७ ॥

svavivekānilaiḥ kṛtvā saṃkalpajaladakṣayam | parāṃ nirmalatāmehi śaradīva nabhontaram || 37 ||

Use the winds of your own good sense to blow away the cloud of thought, and come to the highest clearness — like the sky in autumn, free of every cloud.

अपने विवेक की हवाओं से विचार के बादल को उड़ा दो, और सबसे ऊँची निर्मलता को पा लो — जैसे शरद ऋतु का आकाश हर बादल से साफ होता है।

6.33.38

संकल्पसरितं मत्तां मणिमन्त्रेण शोषयतत्रोह्यमानमात्मानं समाश्वास्य भवामनाः ॥ ३८ ॥

saṃkalpasaritaṃ mattāṃ maṇimantreṇa śoṣayatatrohyamānamātmānaṃ samāśvāsya bhavāmanāḥ || 38 ||

Dry up the raging river of thought with a jewel-charm, calm the self being swept along in it, and let go of your mind entirely.

जवाहर के मंत्र से विचार की उफनती नदी को सुखा दो, उसमें बहते जा रहे मन को शांत करो, और अपने मन को पूरी तरह छोड़ दो।

6.33.39

संकल्पानिलनिर्धूतं भ्रान्तं पर्णतृणांशवत् । भूताकाशे चिदात्मानमवलम्ब्य विलोकय ॥ ३९ ॥

saṃkalpānilanirdhūtaṃ bhrāntaṃ parṇatṛṇāṃśavat | bhūtākāśe cidātmānamavalambya vilokaya || 39 ||

Rest on the pure awareness within you, and watch — see how it is tossed by the wind of thought, drifting through this world like a scrap of leaf or straw.

अपने भीतर की शुद्ध चेतना का सहारा लेकर देखो — यह विचार की हवा से उड़ता हुआ, इस दुनिया में पत्ते या तिनके के टुकड़े की तरह भटकता है।

6.33.40

स्वसंकल्पनकालुष्यं विनिवार्यात्मनात्मनः । परं प्रसादमासाद्य परमानन्दवान्भव ॥ ४० ॥

svasaṃkalpanakāluṣyaṃ vinivāryātmanātmanaḥ | paraṃ prasādamāsādya paramānandavānbhava || 40 ||

Remove, by your own effort, the murkiness that your own thinking makes in yourself; reach the highest calm, and become full of supreme bliss.

अपने ही प्रयास से, अपने विचार बनाने से जो गंदगी तुम्हारे भीतर आई है उसे हटा दो; सबसे ऊँची शांति को पाकर, परम आनंद से भर जाओ।

6.33.41

सर्वशक्तिमयो ह्यात्मा यद्यथा भावयत्यलम्। तत्तथा पश्यति तदा स्वसंकल्पविजृम्भितम्॥ ४१॥

sarvaśaktimayo hyātmā yadyathā bhāvayaty alam | tattathā paśyati tadā svasaṃkalpavijṛmbhitam || 41 ||

The self holds every power; whatever it fully imagines, in whatever way, it then sees exactly that, in that way — it is only its own thought spreading out.

आत्मा में हर शक्ति है; वह जो कुछ भी, जिस तरह से, पूरी तरह सोच ले, वह उसे ठीक उसी तरह देखने लगता है — यह बस उसके अपने विचार का फैलाव है।

6.33.42

संकल्पमात्रमेवेदं जगन्मिथ्यात्वमुत्थितम्। असंकल्पनमात्रेण ब्रह्मन्क्वापि विलीयते॥ ४२॥

saṃkalpamātramevedaṃ jagannmithyātvamutthitam | asaṃkalpanamātreṇa brahman kvāpi vilīyate || 42 ||

This world, which has arisen as something false, is nothing but thought, O Brahmin; by the mere absence of thought, it dissolves away completely.

हे ब्राह्मण, यह जो झूठा जगत पैदा हुआ है, वह सिर्फ विचार है; विचार के बिलकुल न रहने से ही, यह पूरी तरह मिट जाता है।

6.33.43

संकल्पवातवलितं जन्मजालकदम्बकम्। असंकल्पानिलस्पर्शाद्विश्राम्यति परे पदे॥ ४३॥

saṃkalpavātavalitaṃ janmajālakadambakam | asaṃkalpānilasparśād viśrāmyati pare pade || 43 ||

The whole tangled net of rebirth, twisted about by the wind of thought, comes to rest in the highest state the moment it is touched by the breeze of no-thought.

जन्मों के जाल का यह पूरा उलझा हुआ जाल, विचार की हवा से मुड़ा हुआ है; जैसे ही विचार-रहित हवा उसे छू लेती है, वह सबसे ऊँची अवस्था में शांत हो जाता है।

6.33.44

तृष्णाकरञ्जलतिकामिमां रूढिमुपागताम्। संकल्पमूलोद्धरणात्परिशोषवतीं कुरु॥ ४४॥

tṛṣṇākarañjalatikām imāṃ rūḍhim upāgatām | saṃkalpamūloddharaṇāt pariśoṣavatīṃ kuru || 44 ||

This karanja vine of craving has taken deep root and become a fixed habit — dry it up completely by pulling out its root, which is thought.

यह लालच की करंज-बेल गहरी जड़ जमा चुकी है और पक्की आदत बन चुकी है — इसकी जड़, यानी विचार, को उखाड़कर इसे पूरी तरह सुखा दो।

6.33.45

प्रतिभाससमुत्थानं प्रतिभासपरिक्षयम्। यथा गन्धर्वनगरं तथा संसृतिविभ्रमः॥ ४५॥

pratibhāsasamutthānaṃ pratibhāsaparikṣayam | yathā gandharvanagaraṃ tathā saṃsṛtivibhramaḥ || 45 ||

Its rising up is only an appearance, and its passing away is only an appearance — the confusion we call worldly life is just like a city in the sky.

इसका उठना भी बस एक झलक है, और इसका मिटना भी बस एक झलक है — संसार का यह भ्रम बिलकुल वैसा ही है जैसे आकाश में बना एक शहर।

6.33.46

प्रभुरस्मीति विस्मृत्य तावच्छोचति भूमिपः । भूमिपोऽस्मीति संजाता यावन्नास्य हृदि स्मृतिः ॥ ४६ ॥

prabhurasmiti vismrtya tavacchocati bhumipah | bhumipo'smiti sanjata yaavannasya hridi smritih || 46 ||

Having forgotten that he is the master, the king grieves for exactly as long as the memory 'I am the king' has not returned to his heart.

यह भूलकर कि वह मालिक है, राजा तब तक दुखी रहता है, जब तक उसके मन में यह याद वापस नहीं आती कि 'मैं राजा हूँ।'

6.33.47

नास्य तज्जातया ब्रह्मन्प्राक्स्मृतिर्वर्तमानया । शरदेवोपगतया प्रावृड् जाड्यापवारिणी ॥ ४७ ॥

nasya tajjataya brahmanpraksmritirvartamanyaya | saradevopagataya pravrd jadyapavarini || 47 ||

For him, O Brahmin, once the present memory has arisen, the earlier one does not remain — just as, the moment autumn comes, it clears away the murkiness the rains had brought.

हे ब्राह्मण, जब वर्तमान याद आ जाती है, तो पहले वाली स्थिति नहीं रहती — बिलकुल वैसे ही जैसे शरद ऋतु आते ही बारिश की गंदगी साफ हो जाती है।

6.33.48

घनप्रवाहयाऽकस्माच्चित्तेहा सैव वर्धते । य एवोच्चैःस्वरस्तन्त्र्याः स एवाक्रामति श्रुतिम् ॥ ४८ ॥

ghanapravahaya'kasmaccittheha saiva vardhate | ya evoccaissvarastantryah sa evakramati srutim || 48 ||

Suddenly, in a dense flood, that very craving of the mind grows stronger — just as, among the strings of a lute, it is the loudest note that fills the ear.

अचानक, एक घने सैलाब की तरह, मन की वही चाहत और बढ़ जाती है — बिलकुल वैसे ही जैसे वीणा के तारों में से जो सबसे ऊँची आवाज़ होती है, वही कान में गूँजती है।

6.33.49

अहमेकोऽहमात्मास्मीत्येकां भावय भावनाम् । तया भावनया युक्तः स एव त्वं भवस्यलम् ॥ ४९ ॥

ahameko'hamatmasmitiyekekaṃ bhavaya bhavanam | taya bhavanaya yuktaḥ sa eva tvam bhavasyalam || 49 ||

Cultivate this one conviction alone: 'I am one, I am the Self.' United with that conviction, you truly become that very Self.

बस यही एक भावना मन में बसाओ: 'मैं एक हूँ, मैं ही आत्मा हूँ।' इस भावना से जुड़कर, तुम सचमुच वही आत्मा बन जाते हो।

6.33.50

एवं ह्यसंभवदिदं त्वविरागभास्यत्तत्सत्त्वमुत्तमपदं परमेकदेवः । पूजासु पूजकसुपूजनपूज्यरूपं किंचिन्नकिंचिदिव चित्तपदैकमूर्तिः ॥ ५० ॥

evam hyasambhavadidam tvaviragabhasyattatsattvamuttamapadam paramekadevah | pujasu pujakasupujanapujyarupam kincinnakincidiva cittapadaikamurtih || 50 ||

So, since this reality cannot arise in any other way, it shines forth free of all desire — that very being is the highest state, the one supreme God. In every act of worship it appears as the worshiper, the worship itself, and the one worshipped; it is something, and yet as if nothing at all — it alone is the single form that is the very ground of the mind.

तो, क्योंकि यह सच्चाई किसी और तरह से पैदा नहीं हो सकती, यह हर इच्छा से मुक्त होकर चमकती है — यही सबसे ऊँची अवस्था है, यही एक परमेश्वर है। हर पूजा में यही पूजा करने वाला भी है, पूजा भी है, और पूजा जाने वाला भी है; यह कुछ है, फिर भी मानो कुछ भी नहीं — यही अकेला वह रूप है जो मन की असली अवस्था है।

Chapter 34

6.34.1

ईश्वर उवाच इत्थं स्थितमिदं विश्वं सदसद्देवरूपि च द्वैतैक्यपदनिर्मुक्तं युक्तं द्वैतैक्यमप्यतः ॥ १ ॥

īśvara uvāca itthaṃ sthitamidaṃ viśvaṃ sadāsaddēvarūpi ca dvaitaikyapadanirmuktaṃ yuktaṃ dvaitaikyamapyataḥ || 1 ||

Sri Ishvara said: The universe stands exactly like this. It is both the existing and the non-existing, and it also wears the form of the divine. It is free from the very idea of twoness and oneness, and for that same reason it rightly holds both twoness and oneness too.

श्री ईश्वर ने कहा: यह जगत ठीक ऐसा ही है। यह मौजूद भी है और न-मौजूद भी, और यह ईश्वर का ही रूप भी है। यह दो होने और एक होने, इन दोनों खयालों से मुक्त है, और इसी वजह से यह ठीक-ठीक दो भी है और एक भी।

6.34.2

चितेः कलङ्कवैरूप्यमिति संसारतां गतम् अकलङ्कमसंसारि तच्चाभिन्नाद्वयात्मकम् ॥ २ ॥

citeḥ kalaṅkavairūpyamiti saṃsāratāṃ gatam akalaṅkamasāṃsāri taccābhinnādvayātmakam || 2 ||

The blemish and the distorted shape of consciousness -- that is what has become this world. But consciousness itself, without blemish and without this world, is whole, undivided, and one without a second.

चेतना का दाग और उसका बिगड़ा हुआ रूप ही यह संसार बन गया है। पर चेतना खुद, बिना दाग के और बिना संसार के, पूरी है, अखंड है, और एक है, उसके सिवा कुछ और नहीं।

6.34.3

इयमस्मीति संप्राप्तकलङ्का चिन्निबध्यते एतामेव कलां बुद्ध्वा स्वकाभिन्नां विमुच्यते ॥ ३ ॥

iyamasmīti saṃprāptakalaṅkā cinnibadhyate etāmeva kalāṃ buddhvā svakābhinnāṃ vimucyate || 3 ||

Consciousness becomes bound when it takes on the stain of thinking, 'I am this.' But when it recognizes this very state as its own, not different from itself, it becomes free.

चेतना तब बंध जाती है जब उस पर यह दाग लग जाता है कि 'मैं यह हूं।' पर जब वह इसी हालत को अपनी ही समझ लेती है, अपने से अलग नहीं, तो वह मुक्त हो जाती है।

6.34.4

चिदर्थाकारताभावाद्द्वित्वात्सत्त्वं समुज्झति सुखादिमिलितां धत्ते न सत्यां सदिति क्षणात् ॥ ४ ॥

cidarthākāratābhāvāddvitvātsattvaṃ samujjhati sukhādimilitāṃ dhatte na satyāṃ saditi kṣaṇāt || 4 ||

When consciousness takes on the shape of an object and so becomes two, it gives up its true being. It takes on a nature mixed with pleasure and other such things, and holds an existence that is not real -- an 'it exists' that lasts only a moment.

जब चेतना किसी चीज़ का रूप ले लेती है और इस तरह दो बन जाती है, तो वह अपना असली होना छोड़ देती है। वह सुख और ऐसी ही और चीज़ों से मिली हुई एक प्रकृति ले लेती है, और एक ऐसा होना पकड़ लेती है जो सच्चा नहीं है - एक 'है' जो सिर्फ एक पल के लिए रहता है।

6.34.5

शुद्धा निरंशा सत्या वाऽसत्या वेत्येवमादिभिः विमुक्ता नामशब्दार्थैः सर्वैः सर्वात्मिकापि खम् ॥ ५ ॥

śuddhā niraṃśā satyā vā'satyā vetyevamādibhiḥ vimuktā nāmaśabdārthaiḥ sarvaiḥ sarvātmikāpi kham || 5 ||

Pure, without parts, whether called real or unreal or anything else like that, and free from every name, every word, and every meaning those words carry -- it is like the sky, even though it is the very self of everything.

शुद्ध, बिना किसी हिस्से के, चाहे उसे सच्चा कहो या झूठा या ऐसा ही कुछ और, और हर नाम, हर शब्द, और उन शब्दों के हर मतलब से मुक्त - वह आकाश जैसी है, फिर भी वह हर चीज़ की असली आत्मा है।

6.34.6

सर्वं निरुपमं शान्तं मनसैतत्त्रिमार्गगम्ब्रह्मेदं बृंहितं ब्रह्म शक्त्याऽऽकाशविकासया ॥ ६ ॥

sarvaṃ nirupamaṃ śāntaṃ manasaitattrimārgagambrahmedaṃ bṛṃhitaṃ brahma śaktyā''kāśavikāsayā || 6 ||

All this is beyond compare and at peace; the mind moves through it along three paths. This same reality, called Brahman, though it grows and expands, remains Brahman, through the power that unfolds as the sky.

यह सब कुछ बेजोड़ है और शांत है; मन इसमें से होकर तीन रास्तों से गुज़रता है। यही सच्चाई, जिसे ब्रह्म कहते हैं, भले ही बढ़े और फैले, ब्रह्म ही रहती है, उस शक्ति के ज़रिए जो आकाश के रूप में फैलती है।

6.34.7

मनसा मनसि च्छिन्ने स्वेन्द्रियावयवात्मनिसत्यालोकाज्जगज्जाले प्रच्छन्ने विलयं गते ॥ ७ ॥

manasā manasi cchinne svendriyāvayavātmanisatyālokājjagajjāle pracchanne vilayaṃ gate || 7 ||

When the mind is cut off by the mind itself, within the self that is made only of one's own sense organs, and, through the true light, the net of the world lies hidden and reaches its dissolution,

जब मन खुद मन को काट देता है, उस आत्मा के भीतर जो अपनी ही इंद्रियों से बनी है, और सच्चे प्रकाश के ज़रिए, संसार का जाल छिपकर खत्म हो जाता है,

6.34.8

छिद्यते शीर्णसंसारकलना कल्पनात्मिकाभृष्टबीजोपमा सत्ता जीवस्य इतिनामिका ॥ ८ ॥

chidyate śīrṇasaṃsārakalanā kalpanātmikābhṛṣṭabījopamā sattā jīvasya itināmikā || 8 ||

then the existence of the individual soul -- known by that very name -- which is the crumbling shape given to the world, made only of imagination, and like a roasted seed, is cut away.

तो जीव का होना - जिसे यही नाम दिया गया है - जो संसार को दी गई एक टूटती-बिखरती शक्ल है, सिर्फ कल्पना से बनी हुई, और भुने हुए बीज जैसी, कट जाती है।

6.34.9

पश्यन्ती नाम कलितोत्सृजन्ती चेत्यचर्वणाम्मनोमोहाभ्रनिर्मुक्ता शरदाकाशकोशवत् ॥ ९ ॥

paśyantī nāma kalitotsṛjantī cetyacarvaṇāmmanomohābhranirmuktā śaradākāśakośavat || 9 ||

It is called 'the seeing.' Having grasped this, it gives up its endless chewing over of things to be known, and, freed from the cloud of the mind's delusion, becomes like the clear expanse of the autumn sky.

इसे 'देखने वाली' कहा जाता है। इसे समझकर, वह जानी जाने वाली चीज़ों पर बार-बार सोचना छोड़ देती है, और मन के भ्रम के बादल से मुक्त होकर, शरद ऋतु के साफ आकाश जैसी हो जाती है।

6.34.10

शुद्धा चिद्भावमात्रस्था चेत्यचिच्चापलं गतासमस्तसामान्यवती भवतीर्णभवार्णवा ॥ १० ॥

śuddhā cidbhāvamātrasthā cetyaciccāpalaṃ gatāsamastasāmānyavatī bhavatīrṇabhavārṇavā || 10 ||

Pure, resting only in the state of being consciousness, it has left behind the restlessness of things that are known and things that are unconscious. Having become common to all, it crosses over the ocean of becoming.

शुद्ध, सिर्फ चेतना होने की हालत में टिकी हुई, वह जानी जाने वाली और बेजान चीज़ों की बेचैनी को पीछे छोड़ चुकी है। सबकी साझी बनकर, वह जन्म-मरण के सागर को पार कर जाती है।

6.34.11

अपुनर्भवसौषुप्तपदपाण्डित्यपीवरी । परमासाद्य विश्रान्ता विश्रान्ता वितते पदे ॥ ११ ॥

apunarbhavaśauṣuptapadapāṇḍityapīvarī | paramāsādya viśrāntā viśrāntā vitate pade || 11 ||

Grown full with the mastery of that dreamless sleep from which there is no birth again, it reaches the highest and comes to rest -- truly at rest, in that vast, open state.

उस बिना सपने वाली नींद में महारत से भरी हुई, जिसके बाद फिर जन्म नहीं होता, वह सबसे ऊंची जगह पाकर टिक जाती है - पूरी तरह टिककर, उस फैली हुई, खुली हालत में।

6.34.12

एतत्ते मनसि क्षीणे प्रथमं कथितं पदम् । द्वितीयं श्रृणु विप्रेन्द्र शक्तेरस्याः सुपावनम् ॥ १२ ॥

etatte manasi kṣīṇe prathamaṃ kathitaṃ padam | dvitīyaṃ śṛṇu viprendra śakterasyāḥ supāvanam || 12 ||

This is the first state, told to you, that comes when the mind is worn away. Now hear the second, O best of the brahmins -- the most purifying state of this same power.

यह पहली हालत है, जो तुम्हें बताई गई, जो तब आती है जब मन घिसकर खत्म हो जाता है। अब दूसरी सुनो, हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ - इसी शक्ति की सबसे पवित्र करने वाली हालत।

6.34.13

एषैव मनसोन्मुक्ता चिच्छक्तिः शान्तिशालिनी । सर्वज्योतिस्तमोमुक्ता विततताकाशसुन्दरी ॥ १३ ॥

eṣaiva manasonmuktā cicchaktiḥ śāntiśālinī | sarvajyotistamomuktā vitatākāśasundarī || 13 ||

This same power of consciousness, once freed from the mind, is full of peace. It is the light of everything, free from all darkness, and beautiful like the wide open sky.

चेतना की यही शक्ति, मन से मुक्त होकर, शांति से भरी है। यह हर चीज़ का प्रकाश है, हर अंधेरे से मुक्त, और फैले हुए आकाश जैसी सुंदर है।

6.34.14

घनसौषुप्तलेखावच्छिलान्तःसन्निवेशवत् । सैन्धवान्तस्थरसवद्वातान्तःस्पन्दशक्तिवत् ॥ १४ ॥

ghanasauṣuptalekhāvacchilāntaḥsanniveśavat | saindhavāntastharasavadvātāntaḥspandaśaktivat || 14 ||

It is like the trace of deep sleep, like a formation held inside a rock, like the taste held inside a grain of rock-salt, like the power of vibration inside the wind.

यह गहरी नींद की एक झलक जैसी है, जैसे पत्थर के अंदर बनी हुई कोई बनावट, जैसे सेंधा नमक के अंदर का स्वाद, जैसे हवा के अंदर की हिलने की ताकत।

6.34.15

कालेनायाति तत्रैव परां परिणतिं यदा । शून्यशक्तिरिवाकाशे परमाकाशगा तदा ॥ १५ ॥

kālenāyāti tatraiva parāṃ pariṇatiṃ yadā | śūnyaśaktirivākāśe paramākāśagā tadā || 15 ||

When, in time, it comes there to its highest ripening, then, like an empty power in the sky, it passes into the highest sky.

जब समय के साथ, वह वहीं अपने सबसे ऊंचे बदलाव को पहुंचती है, तो आकाश में मौजूद एक खाली ताकत की तरह, वह सबसे ऊंचे आकाश में चली जाती है।

6.34.16

चेत्यांशोन्मुखतां नूनं त्यजत्यम्ब्विव चापलम् । वातलेखेव चलनं पुष्पलेखेव सौरभम् ॥ १६ ॥

cetyāṃśonmukhatāṃ nūnaṃ tyajatyambviva cāpalam | vātalekheva calanaṃ puṣpalekheva saurabham || 16 ||

It surely gives up its turning toward the world of things to be known -- just as water gives up its restlessness, just as a trace of wind gives up its motion, just as a trace of a flower gives up its fragrance.

वह जानी जाने वाली चीज़ों की तरफ अपना झुकाव ज़रूर छोड़ देती है - जैसे पानी अपनी बेचैनी छोड़ देता है, जैसे हवा की एक लहर अपनी हलचल छोड़ देती है, जैसे फूल की एक लहर अपनी खुशबू छोड़ देती है।

6.34.17

कालताकाशते त्यक्त्वा सकले सकलाकला । न जडा नाजडा स्फारा धत्ते सत्तामनामिकाम् ॥ १७ ॥

kālatākāśate tyaktvā sakale sakalākalā | na jaḍā nājaḍā sphārā dhatte sattāmanāmikām || 17 ||

It has given up being time and being space. It is whole everywhere, yet it has no parts. It is neither dull nor not dull. Vast, it holds an existence that has no name.

उसने समय होना और आकाश होना, दोनों छोड़ दिए हैं। वह हर जगह पूरा है, फिर भी उसके कोई हिस्से नहीं हैं। वह न जड़ है, न अजड़। विशाल है, और उसका अस्तित्व बेनाम है।

6.34.18

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नमहासत्तापदं गताम् । तुर्यतुर्यांशकलितामकलङ्कामनामयाम् ॥ १८ ॥

dikkālādyanavacchinnamahāsattāpadaṃ gatām | turyaturyāṃśakalitāmakalaṅkāmanāmayām || 18 ||

That existence has reached the state of great being, one that space, time and everything else cannot break into parts. It holds within it something of the state beyond the fourth state. It is without stain and without any affliction.

वह अस्तित्व उस महान भाव की अवस्था तक पहुँच गया है, जिसे आकाश, समय और बाकी कुछ भी टुकड़ों में नहीं बाँट सकता। उसमें चौथी अवस्था से भी आगे की अवस्था का कुछ अंश है। वह निष्कलंक है और उसे कोई रोग नहीं है।

6.34.19

कांचिदेव विशालाक्ष साक्षिवत्समवस्थिताम् । सर्वतः सर्वदा सर्वप्रकाशस्वादुतत्पराम् ॥ १९ ॥

kāṃcideva viśālākṣa sākṣivatsamavasthitām | sarvataḥ sarvadā sarvaprakāśasvādutatparām || 19 ||

It is a certain something, O wide-eyed one, standing there like a witness. Everywhere, always, it is given over to the sweet taste of the light of all things.

हे विशाल आँखों वाले, यह कोई एक निश्चित चीज़ है, जो वहाँ साक्षी की तरह खड़ी रहती है। हर जगह, हर समय, यह हर चीज़ के प्रकाश के मीठे स्वाद में डूबी रहती है।

6.34.20

एषा द्वितीया पदता कथिता तव सुव्रत । तृतीयं श्रृणु वक्ष्यामि पदं पदविदां वर ॥ २० ॥

eṣā dvitīyā padatā kathitā tava suvrata | tṛtīyaṃ śṛṇu vakṣyāmi padaṃ padavidāṃ vara || 20 ||

This was the second state — that has been told to you, O faithful one. Now listen, I will tell you the third state, O best knower of states.

यह दूसरी अवस्था थी, जो तुम्हें बताई जा चुकी है, हे व्रतधारी। अब सुनो, मैं तुम्हें तीसरी अवस्था बताऊँगा, हे अवस्थाओं को जानने वालों में सबसे श्रेष्ठ।

6.34.21

एषा दृक्चेत्यवलनादनामार्थापदं गता । ब्रह्मात्मेत्यादिशब्दार्थादतीतोदेति केवला ॥ २१ ॥

eṣā dṛk cet yavalanād anāmārthāpadaṃ gatā| brahmātmetyādiśabdārthād atītodeti kevalā || 21 ||

Because the seer and the seen have both come to rest, this state is beyond name and meaning. Going beyond what words like 'the absolute' and 'the self' mean, it rises alone, on its own.

क्योंकि देखने वाला और दिखने वाला दोनों शांत हो चुके हैं, इसलिए यह अवस्था नाम और अर्थ से परे है। 'ब्रह्म' और 'आत्मा' जैसे शब्दों के अर्थ से भी आगे जाकर, यह अकेली, अपने-आप उदय होती है।

6.34.22

स्थैर्येण कालतः स्वस्था निष्कलङ्का परात्मना । तुर्यातीतादिनामत्वादपि याति परं पदम् ॥ २२ ॥

sthairyena kālataḥ svasthā niṣkalaṅkā parātmanā| turyātītādināmatvādapi yāti paraṃ padam || 22 ||

By its own steadiness, it rests untouched by time, without stain, as the highest self. And even though it is called by names such as 'the state beyond the fourth state,' it reaches the highest state.

अपनी स्थिरता के कारण, यह समय से अछूती होकर अपने में टिकी रहती है, निष्कलंक, परम आत्मा के रूप में। और यद्यपि इसे 'चौथी अवस्था से भी आगे की अवस्था' जैसे नामों से पुकारा जाता है, फिर भी यह सबसे ऊँची अवस्था तक पहुँचती है।

6.34.23

सा परा परमा काष्ठा प्रधानं शिवभावतः । चित्येका निरवच्छेदा तृतीया पावनी स्थितिः ॥ २३ ॥

sā parā paramā kāṣṭhā pradhānaṃ śivabhāvataḥ| cit yekā niravacchedā tṛtīyā pāvanī sthitiḥ || 23 ||

That third, cleansing state is the highest, the supreme goal, the most important thing of all — good by its own nature, pure consciousness, undivided.

वह तीसरी, पवित्र करने वाली अवस्था सबसे ऊँची है, परम लक्ष्य है, सबसे महत्वपूर्ण चीज़ है — अपने स्वभाव से मंगलमय, शुद्ध चेतना, अखंड।

6.34.24

चिरमस्यां प्रतिष्ठायां सर्वाध्वाध्वगदूरगा । सा ममाप्यंग वचसां न समायाति गोचरम् ॥ २४ ॥

ciram asyāṃ pratiṣṭhāyāṃ sarvādhvādhvagadūragā| sā mamāpyaṃga vacasāṃ na samāyāti gocaram || 24 ||

Resting long in this foundation, it has gone far beyond every path and everyone who walks a path. That, dear one, does not come within the reach of even my own words.

इस आधार में लंबे समय तक टिककर, यह हर रास्ते और हर रास्ते पर चलने वाले से बहुत आगे निकल गई है। वह, प्रिय, मेरे शब्दों की भी पहुँच में नहीं आती।

6.34.25

त्रिमार्गकलनातीतमिति ते कथितं मुने । तिष्ठ तस्मिन्पदे नित्यमिति देवः सनातनः ॥ २५ ॥

trimārgakalanātītam iti te kathitaṃ mune| tiṣṭha tasmin pade nityam iti devaḥ sanātanaḥ || 25 ||

This is beyond what the three paths can reach — so it was told to you, sage. Always stay in that state — so said the eternal god.

'यह उन तीनों मार्गों की पहुँच से परे है' — यह तुम्हें बताया जा चुका है, हे मुनि। 'सदा उसी अवस्था में रहो' — ऐसा उस सनातन देव ने कहा।

6.34.26

एतन्मयमिदं विश्वं मुने तन्मयवेदनात् । सत्यसंवेदनान्नेदं न च नेदं मुनीश्वर ॥ २६ ॥

etanmayamidaṃ viśvaṃ mune tanmayavedanāt| satyasaṃvedanānnedaṃ na ca nedaṃ munīśvara || 26 ||

This universe, sage, is made of that very thing, since it is felt to be made of that. Seen with true understanding, it is neither 'this' nor 'not this,' lord of sages.

यह विश्व, हे मुनि, उसी से बना है, क्योंकि इसे उसी से बना हुआ महसूस किया जाता है। सच्चे बोध से देखने पर, यह न 'यह' है, न 'यह नहीं' है, हे मुनियों के स्वामी।

6.34.27

नेदं प्रवर्तते किंचिन्नेदं किंचिन्निवर्तते । शान्तं समसमाभासं प्रथते स्वस्य कोशवत् ॥ २७ ॥

nedaṃ pravartate kiṃcin nedaṃ kicin nivartate| śāntaṃ samasamābhāsaṃ prathate svasya kośavat || 27 ||

Nothing here truly comes into being, and nothing here truly goes out of being. Peaceful, everywhere the same, it spreads out like its own covering.

यहाँ न कुछ सच में उत्पन्न होता है, न कुछ सच में खत्म होता है। शांत, हर जगह एक-सा, यह अपने ही आवरण की तरह फैल जाता है।

6.34.28

अद्वैतैक्यादसंक्षोभाद्धनचेतनया तया । अविकारादिमत्त्वाच्च नित्यानित्यतया चिरम् ॥ २८ ॥

advaitaikyādasaṅkṣobhāddhana cetanayā tayā| avikārādimattvācca nityānityatayā ciram || 28 ||

Because it is one, with nothing else beside it, because it is never shaken, because it is thick with consciousness, and because it is changeless and more besides, it goes on, for a long time, as both everlasting and not everlasting.

क्योंकि यह एक है और इसके सिवा कुछ और नहीं, क्योंकि यह कभी विचलित नहीं होता, चेतना से घना भरा है, निर्विकार है और इससे भी बढ़कर है, इसलिए यह लंबे समय तक हमेशा रहने वाला भी है और न रहने वाला भी।

6.34.29

चिद्धनत्वाच्छिशुशिलाकोशानां जगतामपि । मनागपि न भेदोऽस्ति सतामप्यसतामपि ॥ २९ ॥

ciddhanatvācchiśuśilākośānāṃ jagatāmapi| manāgapi na bhedo'sti satāmapyasatāmapi || 29 ||

Because consciousness is one dense whole, there is not the slightest difference between worlds — whether they are like a child, a stone, or a husk — nor between what is real and what is unreal.

क्योंकि चेतना एक सघन समूची है, इसलिए दुनियाओं में रत्ती भर भी भेद नहीं है, चाहे वे बच्चे जैसी हों, पत्थर जैसी हों, या खोल जैसी हों — और न ही जो सच है और जो झूठ है, उनमें कोई भेद है।

6.34.30

समस्तं सुशिवं शान्तमतीतं वाग्विलासतः। ओमित्यस्य च तन्मात्रातुर्या सा परमा गतिः ॥ ३० ॥

samastaṃ suśivaṃ śāntamatītaṃ vāgvilāsataḥ| omityasya ca tanmātrāturyā sā paramā gatiḥ || 30 ||

All this is entirely good, at peace, and beyond the play of words. And the fourth, the true measure of the sound Om — that is the highest goal.

यह सब पूरी तरह अच्छा है, शांत है, और शब्दों के खेल से परे है। और चौथी अवस्था, ओम् ध्वनि का सच्चा माप — वही सबसे ऊँचा लक्ष्य है।

6.34.31

श्रीवाल्मीकिरुवाच इत्युक्तवानमलदृक्परिणामतोऽस्मिन् पारे पदे समुपशान्तरवाभिधाने तूष्णीमतिष्ठदमुना मुनिना च सार्धं विश्रान्तवृत्तिरथ तत्र मुहूर्तमीशः ॥ ३१ ॥

śrīvālmīkiruvāca ityuktavānamaladṛkpariṇāmato'smin pāre pade samupaśāntaravābhidhāne tūṣṇīmatiṣṭhadamunā muninā ca sārdhaṃ viśrāntavṛttiratha tatra muhūrtamīśaḥ || 31 ||

Sri Valmiki said: Having said this, the Lord — whose sight is without stain — passed, through that same change, into this highest state called 'the fully quieted sound.' There he stood silent for a moment, his mind at rest, together with that sage.

श्री वाल्मीकि ने कहा: यह कहकर, वह प्रभु — जिनकी दृष्टि निर्मल है — उसी परिवर्तन से इस सबसे ऊँची अवस्था में चले गए, जिसे 'पूरी तरह शांत हुई ध्वनि' कहा जाता है। वहाँ वे कुछ पल के लिए चुप खड़े रहे, उनका मन शांत था, उस मुनि के साथ।

Chapter 35

6.35.1

श्रीवसिष्ठ उवाच ततो मुहूर्तेन हरो गौरीकमलिनीसरः मद्विकासोन्मुखः स्वैरं विकासं बहिराददे ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca tato muhūrtena haro gaurīkamalinīsaraḥ madvikāsonmukhaḥ svairaṃ vikāsaṃ bahirādade || 1 ||

Sri Vasishtha said: Then, in a moment, Hara, like a pond of Gauri's lotuses, turned toward my awakening and took on, of his own accord, an outward blossoming.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, एक ही पल में, हर गौरी के कमलों के तालाब की तरह, मुझे जगाने की ओर मुड़े और अपनी मर्ज़ी से बाहर की ओर खिलना शुरू कर दिया।

6.35.2

दृक्चयो द्योतयामास मुखाकाशतलोदितः बोधं समुद्गकादर्क अंशुराशिरिवोद्गतः ॥ २ ॥

dṛkchayo dyotayāmāsa mukhākāśataloditaḥ bodhaṃ samudgakādarka aṃśurāśirivodgataḥ || 2 ||

The gathering of his gaze rose up from the sky of his face and lit up awareness, like the sun rising out of a box, like a mass of rays bursting forth.

उनकी नज़रों का समूह उनके चेहरे के आकाश से उठा और समझ को रोशन कर दिया, जैसे सूरज किसी डिब्बे से निकलकर उठे, जैसे किरणों का ढेर फूट पड़े।

6.35.3

ईश्वर उवाच मुने मननमाहूय स्वसत्तैवाशु मीयताम् त्वमर्थं माहरानर्थं पवनः स्पन्दतामिव ॥ ३ ॥

īśvara uvāca mune mananamāhūya svasattai vāśu mīyatām tvamarathaṃ māharānarthaṃ pavanaḥ spandatāmiva || 3 ||

Ishvara said: O sage, call forth deep reflection, and quickly come to know your own being alone. Do not grasp at what is meaningless as if it held meaning - it only trembles, the way the wind trembles.

ईश्वर ने कहा: हे मुनि, गहरे मनन को बुलाओ, और जल्दी से अपने ही अस्तित्व को पहचान लो। जो बेमतलब है उसे मतलब का समझकर मत पकड़ो - वह तो बस हवा की तरह काँपता भर है।

6.35.4

द्रष्टव्यमिह यत्किंचित्तद्दृष्टं किं समं भ्रमैः न हि हेयमुपादेयं चेह पश्यामि तद्विदः ॥ ४ ॥

draṣṭavyamihayatkiñcittaddṛṣṭaṃ kiṃ samaṃ bhramaiḥ na hi heyaṃ upādeyaṃ ceha paśyāmi tadvidaḥ || 4 ||

Whatever here can be seen, I have already seen it - what is it but the same as an illusion? Indeed I see nothing here to reject and nothing to take up, O knower of truth.

यहाँ जो कुछ भी देखने लायक है, मैं उसे देख चुका हूँ - वह किसी भ्रम से अलग क्या है? हे सच जानने वाले, मुझे यहाँ न कुछ छोड़ने लायक दिखता है, न कुछ अपनाने लायक।

6.35.5

शान्त्यशान्तिमयानेतान्विकल्पान्दलयन्नसिः धीरोसिनान्यथाऽऽस्थित्वा त्वमेव भव चात्मदृक् ॥ ५ ॥

śāntyaśāntimayānetānvikalpāndalayannasiḥ dhīrosināṇyathā''sthitvā tvameva bhava cātmadṛk || 5 ||

Cut through these thoughts of calm and unrest like a sword - be steady, nothing else. Take your stand, and become yourself the one who sees the self.

शांति और अशांति के इन विचारों को तलवार की तरह काट दो - दृढ़ रहो, और कुछ नहीं। अपने पैरों पर खड़े होकर, तुम खुद ही अपनी आत्मा को देखने वाले बन जाओ।

6.35.6

इमां दृश्यदशामाशु बाह्यबोधाय वा पुनः । समाश्रित्य मदुक्तं त्वं श्रृणु तूष्णीं स्थितेन किम् ॥ ६ ॥

imāṃ dṛśyadaśāmāśu bāhyabodhāya vā punaḥ | samāśritya maduktaṃ tvaṃ śṛṇu tūṣṇīṃ sthitena kim || 6 ||

Either quickly turn to this state of seeing the outside world, so as to know what is outside - or else settle into it, and listen to what I have told you. What is the use of sitting there in silence?

या तो जल्दी से इस बाहर देखने वाली स्थिति में जाओ, ताकि बाहर की दुनिया को जान सको - या फिर इसी में टिककर, जो मैंने कहा है उसे सुनो। चुपचाप बैठे रहने से क्या फ़ायदा?

6.35.7

इत्युक्त्वा बाह्यबोधस्त्वं मा भवेति त्रिशूलधृक् । प्राणेनेदं देहगेहं परिस्फुरति यन्त्रवत् ॥ ७ ॥

ityuktvā bāhyabodhastvaṃ mā bhaveti triśūladhṛk | prāṇenedaṃ dehagehaṃ parisphurati yantravat || 7 ||

Saying this, the trident-bearer said: do not turn into only the mind that knows the outer world. It is the breath that makes this body, this house, shake like a machine.

यह कहकर त्रिशूलधारी ने कहा: सिर्फ़ बाहर की दुनिया जानने वाला मन मत बन जाओ। यह साँस ही है जो इस देह-रूपी घर को किसी मशीन की तरह हिलाती रहती है।

6.35.8

प्राणहीनं परिस्पन्दं त्यक्त्वा तिष्ठति मूकवत् । चालनी पावनी शक्तिः शक्तिः संवेदनी चितिः ॥ ८ ॥

prāṇahīnaṃ parispandaṃ tyaktvā tiṣṭhati mūkavat | cālanī pāvanī śaktiḥ śaktiḥ saṃvedanī citiḥ || 8 ||

Once the breath is gone, the body gives up all its movement and stands still like a mute thing. The power that moves and cleans is one power; the power that feels and knows is consciousness.

जब साँस निकल जाती है, तो देह अपनी सारी हलचल छोड़कर किसी गूँगी चीज़ की तरह चुपचाप पड़ी रहती है। जो शक्ति हिलाती और साफ़ करती है, वह एक शक्ति है; जो शक्ति महसूस करती और जानती है, वह चेतना है।

6.35.9

सा मूर्ता खादपि स्वच्छा सत्सत्तैवात्र कारणम् । विनश्यतः प्राणदेहौ वियोगान्मरुदेव च ॥ ९ ॥

sā mūrtā khādapi svacchā satsattaivātra kāraṇam | vinaśyataḥ prāṇadehau viyogānmruddeva ca || 9 ||

That consciousness, even when it takes on a shape, stays as clear as open space - real existence alone is the reason for this. The breath and the body die when they part from each other, and the wind dies with them too.

वह चेतना, आकार लेकर भी, खुले आकाश जैसी साफ़ ही रहती है - इसकी वजह है असली अस्तित्व। साँस और देह जब एक-दूसरे से अलग होते हैं तो दोनों मर जाते हैं, और उनके साथ हवा भी चली जाती है।

6.35.10

चिदात्मा खादपि स्वच्छो न विनश्यति किं भ्रमैः । मनःप्राणमये देहे चित्तत्त्वं परिजायते ॥ १० ॥

cidātmā khādapi svaccho na vinaśyati kiṃ bhramaiḥ | manaḥprāṇamaye dehe cittattvaṃ parijāyate || 10 ||

The self that is pure consciousness stays as clear as open space and never dies - illusion has no hold on it. It is only inside the body made of mind and breath that this thing called mind seems to be born.

जो आत्मा शुद्ध चेतना है, वह खुले आकाश जैसी साफ़ रहती है और कभी नहीं मरती - भ्रम का उस पर कोई असर नहीं होता। मन और साँस से बनी इस देह के भीतर ही मन नाम की यह चीज़ जन्म लेती हुई जान पड़ती है।

6.35.11

मुकुरे ह्यमलाभासे प्रतिबिम्बं प्रवर्तते । सदप्यग्रगतं वस्तु प्रतिबिम्बक्रिया विना ॥ ११ ॥

mukure hyamalābhāse pratibimbaṃ pravartate | sadapyagragataṃ vastu pratibimbakriyā vinā || 11 ||

A reflection appears only in a mirror that is bright and without stain. A thing may stand right in front of it and truly exist, but without the mirror's power to reflect, no image shows.

प्रतिबिंब सिर्फ़ उसी शीशे में दिखता है जो साफ़ और बेदाग़ हो। कोई चीज़ भले ही उसके ठीक सामने खड़ी हो और सचमुच मौजूद हो, पर बिना शीशे की उस झलक दिखाने की ताकत के, कोई तस्वीर नहीं दिखती।

6.35.12

यथा नास्ति मलोपेते मुकुरे मुनिनायक । तथा नास्ति गतप्राणे विद्यमानेऽपि देहके ॥ १२ ॥

yathā nāsti malopete mukure munināyaka | tathā nāsti gataprāṇe vidyamāne'pi dehake || 12 ||

Just as no reflection shows in a mirror covered with dirt, O chief of sages, so too nothing shows in a body once its breath has left, even though the body is still there.

हे मुनियों में श्रेष्ठ, जैसे मैल से ढके शीशे में कोई प्रतिबिंब नहीं दिखता, वैसे ही जिस देह से साँस निकल चुकी है उसमें कुछ नहीं दिखता, चाहे देह अभी भी वहाँ मौजूद हो।

6.35.13

सर्वगापि चिदुच्छूनबोधात्स्पन्दादिकं प्रति । बोधात्कलङ्कविमला चिदेव परमं शिवम् ॥ १३ ॥

sarvagāpi ciducchūnabodhātspandādikaṃ prati | bodhātkalaṅkavimalā cideva paramaṃ śivam || 13 ||

Consciousness reaches everywhere, but it shows itself as movement and the like only where awareness swells up in a body. Consciousness free even of this taint of awareness is alone the highest good.

चेतना हर जगह मौजूद है, पर वह हलचल वगैरह के रूप में तभी दिखती है जब देह में जागरूकता उभर आती है। जो चेतना इस जागरूकता के दाग़ से भी मुक्त है, वही सबसे बड़ा शुभ है।

6.35.14

विदुर्देवं तदाभासं सर्वसत्तार्थदं तथा । स हरिः स शिवः सोऽजः स ब्रह्मा स सुरेश्वरः ॥ १४ ॥

vidurdevaṃ tadābhāsaṃ sarvasattārthadaṃ tathā | sa hariḥ sa śivaḥ so'jaḥ sa brahmā sa sureśvaraḥ || 14 ||

The wise know this as God - the shining likeness of that, and also as the one who gives being and meaning to everything that exists. He is Hari, he is Shiva, he is the Unborn One, he is Brahma, he is the lord of the gods.

जानने वाले इसे ईश्वर के रूप में जानते हैं - उस परम सत्य की चमकती झलक, और साथ ही हर चीज़ को अस्तित्व और मतलब देने वाला। वही हरि है, वही शिव है, वही अजन्मा है, वही ब्रह्मा है, वही देवताओं का स्वामी है।

6.35.15

अनिलानलचन्द्रार्कवपुः स परमेश्वरः । स एष सर्वगो ह्यात्मा चित्खनिश्चेतनः स्मृतः ॥ १५ ॥

anilānalacandrārkavapuḥ sa parameśvaraḥ | sa eṣa sarvago hyātmā citkhaniścetanaḥ smṛtaḥ || 15 ||

That highest Lord has wind, fire, the moon and the sun as his body. He alone is this self that reaches everywhere - known as the one who is aware, the very source of consciousness.

वह परम ईश्वर हवा, आग, चाँद और सूरज को अपनी देह बनाए हुए है। वही वह आत्मा है जो हर जगह मौजूद है - चेतन कहलाने वाला, चेतना का असली स्रोत।

6.35.16

देवेशो देवभृद्धाता देवदेवो दिवः पतिः । महाचितः समुल्लासं मुह्यन्तीव न केचन ॥ १६ ॥

deveśo devabhṛddhātā devadevo divaḥ patiḥ | mahācitaḥ samullāsaṃ muhyantīva na kecana || 16 ||

He is the ruler of the gods, the one who upholds the gods, the maker of all, the god of gods, the lord of the sky. About this joy pouring out of the great consciousness, no one is truly confused.

वह देवताओं का राजा है, देवताओं को सम्भालने वाला, सबका रचयिता, देवताओं का देव, आकाश का स्वामी है। इस महाचेतना से फूटने वाले इस आनंद के बारे में, कोई भी सच में उलझन में नहीं रहता।

6.35.17

ये नाम ते जगत्येते ब्रह्मविष्णुहरादयः । परस्मात्परिनिर्याता ब्रह्मविष्णुहरादयः ॥ १७ ॥

ye nāma te jagatyete brahmaviṣṇuharādayaḥ | parasmatpariniryātā brahmaviṣṇuharādayaḥ || 17 ||

Those who in this world go by the names Brahma, Vishnu, Hara and the rest - these very ones, Brahma, Vishnu, Hara and the rest, have all come out from the Supreme.

इस दुनिया में जिन्हें ब्रह्मा, विष्णु, हर और बाक़ी नामों से जाना जाता है - यही ब्रह्मा, विष्णु, हर और बाक़ी सब, परम तत्व से ही निकले हैं।

6.35.18

कणास्तप्तायस इव वारिधेरिव बिन्दवः । तेष्विव भ्रमभूतेषु जातेष्विव परात्पदात् ॥ १८ ॥

kaṇāstaptāyasa iva vāridheriva bindavaḥ | teṣviva bhramabhūteṣu jāteṣviva parātpadāt || 18 ||

Like sparks from red-hot iron, like drops from the sea, these gods were born as if by illusion, as if out of the Supreme state itself.

जैसे तपे हुए लोहे से चिंगारियाँ निकलती हैं, जैसे समुद्र से बूँदें निकलती हैं, वैसे ही ये देवता मानो किसी भ्रम से जन्मे, मानो परम स्थिति से ही निकले।

6.35.19

स्थितेषु भ्रमबीजेषु कल्पनाजालकर्तृषु । सहस्रशतशाखेयमविद्योदेति पीवरी ॥ १९ ॥

sthitēṣu bhramabījēṣu kalpanājālakartṛṣu | sahasraśataśākhēyamavidyōdēti pīvarī || 19 ||

When these seed-like illusions stand in place, weaving the net of imagination, this thick ignorance rises up, branching into a hundred thousand forms.

जब ये भ्रम के बीज जैसे देवता अपनी जगह टिके रहते हैं और कल्पना का जाल बुनते हैं, तो यह घनी अज्ञानता उठ खड़ी होती है और लाखों शाखाओं में फैल जाती है।

6.35.20

वेदवेदार्थवेदादिजीवजालजटावली । ततस्तस्या अनन्तायाः प्रसृतायाः पुनःपुनः ॥ २० ॥

vēdavēdārthavēdādijīvajālajaṭāvalī | tatastasyā anantāyāḥ prasṛtāyāḥ punaḥpunaḥ || 20 ||

This ignorance is a tangled mass holding the Vedas, the meaning of the Vedas, and the whole web of living beings. Then, from this endless ignorance, spreading out again and again,

यह अज्ञानता एक उलझी हुई गुत्थी है, जिसमें वेद, वेदों का अर्थ, और सारे जीवों का जाल समाया हुआ है। फिर इस अंतहीन अज्ञानता से, बार-बार फैलते हुए,

6.35.21

संपन्नदेशकालायाः क्रमः स्याद्वर्णनासु कःब्रह्मविष्णुहरादीनामतोऽयं परमः पिता ॥ २१ ॥

saṃpannadeśakālāyāḥ kramaḥ syādvarṇanāsu kaḥbrahmaviṣṇuharādīnāmato'yaṃ paramaḥ pitā || 21 ||

taking on place and time as it spreads, what fixed order could anyone give in describing it? So this one is the highest father of Brahma, Vishnu, Hara and the rest.

फैलते समय जगह और समय को अपनाते हुए, इसका बयान किस क्रम में हो सकता है? इसलिए यही एक ब्रह्मा, विष्णु, हर और बाक़ी सबका सबसे बड़ा पिता है।

6.35.22

मूलबीजं महादेवः पल्लवानामिव द्रुमःसर्वसत्त्वाभिधः सर्वः सर्वसंवेदनैककृत ॥ २२ ॥

mūlabījaṃ mahādevaḥ pallavānāmiva drumaḥsarvasattvābhidhaḥ sarvaḥ sarvasaṃvedanaikakṛt || 22 ||

The Great God is the root and seed of it all, as a tree is the source of its own shoots. Called by the name of all that exists, he is everything, and he alone creates every kind of awareness.

महादेव ही सबकी जड़ और बीज है, जैसे पेड़ अपनी कोंपलों का स्रोत होता है। हर चीज़ के नाम से पुकारा जाने वाला, वही सब कुछ है, और वही अकेला हर तरह की जागरूकता बनाता है।

6.35.23

सर्वसत्ताप्रदो भास्वान्वन्द्योऽभ्यर्च्यश्च तद्विदःप्रत्यक्षवस्तुविषयः सर्वत्रैव सदोदितः ॥ २३ ॥

sarvasattāprado bhāsvānvandyo'bhyarcyaśca tadvidaḥpratyakṣavastuviṣayaḥ sarvatraiva sadoditaḥ || 23 ||

He gives existence to everything; he shines; he deserves reverence and worship, O knower of truth. He can be known directly, like a thing right before the eyes - always present, everywhere.

वह सबको अस्तित्व देता है; वह चमकता है; हे सच जानने वाले, वह आदर और पूजा के योग्य है। उसे सीधे वैसे ही जाना जा सकता है जैसे आँखों के सामने रखी कोई चीज़ - वह हर जगह, हमेशा मौजूद है।

6.35.24

संवेदनात्मकतया गतया सर्वगोचरम्न तस्याह्वानमन्त्रादि किंचिदेवोपयुज्यते ॥ २४ ॥

saṃvedanātmakatayā gatayā sarvagocaramna tasyāhvānamantrādi kiṃcidevopayujyate || 24 ||

He is, by his very nature, something felt directly - so he is within everyone's reach. No invocation, no chant, nothing of that kind is needed to reach him.

वह अपने स्वभाव से ही सीधे महसूस होने वाला है - इसलिए वह हर किसी की पहुँच में है। उस तक पहुँचने के लिए किसी आवाहन, किसी मंत्र, या ऐसी किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है।

6.35.25

नित्याहूतः स सर्वस्थो लभ्यते सर्वतः स्वचित्यां यां वस्तुदशां याति तत एव मुने शिवम् ॥ २५ ॥

nityāhūtaḥ sa sarvastho labhyate sarvataḥ svacityāṃ yāṃ vastudaśāṃ yāti tata eva mune śivam || 25 ||

He is always there, as if already called upon, present in all, and can be found on every side. Whatever real state one's own awareness reaches - it is from that very state, O sage, that the highest good comes.

वह हमेशा वहाँ है, मानो पहले से ही बुलाया हुआ, सबमें मौजूद, और हर तरफ़ पाया जा सकता है। अपनी चेतना में इंसान जिस भी असली स्थिति तक पहुँचता है, हे मुनि, उसी स्थिति से सबसे बड़ा शुभ मिलता है।

6.35.26

स्वरूपं समवाप्नोति रूपालोकमनोदृशाम् आद्यं पूज्यं नमस्कार्यं स्तुत्यमर्घ्यं सुरेश्वरम् ॥ २६ ॥

svarūpaṃ samavāpnoti rūpālokamanodṛśām ādyaṃ pūjyaṃ namaskāryaṃ stutyamarghyaṃ sureśvaram || 26 ||

Then one attains his true nature - he who comes before every sight of shape, of light, and of the mind; worthy of worship, worthy of bowing to, worthy of praise, worthy of offerings, the lord of the gods.

फिर इंसान उसके असली स्वरूप को पा लेता है - वह जो रूप, रोशनी और मन की हर झलक से पहले है; पूजा के योग्य, प्रणाम के योग्य, स्तुति के योग्य, भेंट के योग्य, देवताओं का स्वामी।

6.35.27

एनं तं विद्धि वेद्यानां सीमान्तं महतामपि एतमात्मानमालोक्य जराशोकभयापहम् संभृष्टबीजवज्जन्तुर्न भूयः परिरोहति ॥ २७ ॥

enaṃ taṃ viddhi vedyānāṃ sīmāntaṃ mahatāmapi etamātmānamālokya jarāśokabhayāpaham saṃbhṛṣṭabījavajjanturna bhūyaḥ parirohati || 27 ||

Know him as the final boundary of everything that can be known, even of the greatest things. Once someone has seen this self, the remover of old age, sorrow and fear, that person, like a roasted seed, never sprouts again.

उसे जानो, हर जानी जा सकने वाली चीज़ की आख़िरी सीमा के रूप में, यहाँ तक कि सबसे बड़ी चीज़ों की भी। जिसने भी इस आत्मा को देख लिया, जो बुढ़ापे, दुख और डर को मिटा देती है, वह भुने हुए बीज की तरह फिर कभी नहीं उगता।

6.35.28

सकलजन्तुषु यत्त्वभयप्रदं विदितमाद्यमुपास्यमयत्नतः त्वमजमात्मगतं परमं पदं भवसि किं परिमुह्यसि दृष्टिषु ॥ २८ ॥

sakalajantuṣu yattvabhayapradaṃ viditamādyamupāsyamayatnataḥ tvamajamātmagataṃ paramaṃ padaṃ bhavasi kiṃ parimuhyasi dṛṣṭiṣu || 28 ||

Among all living beings, you are known as the one who gives freedom from fear, the first one, worthy of worship without any effort. You yourself are that unborn, highest state living within the self - so why do you stay confused, caught up in mere appearances?

सारे जीवों में तुम उसी के रूप में जाने जाते हो जो डर से आज़ादी देता है, जो सबसे पहला है, जो बिना किसी मेहनत के पूजा के योग्य है। तुम खुद ही वह अजन्मा, सबसे ऊँची स्थिति हो जो आत्मा में बसी है - तो फिर तुम बाहरी नज़ारों में उलझकर क्यों भ्रमित होते हो?

Chapter 36

6.36.1

ईश्वर उवाच। ततश्चिद्रूपमेवैकं सर्वसत्तान्तरास्थितम्। स्वानुभूतिमयं शुद्धं देवं रुद्रेश्वरं विदुः ॥ १ ॥

Īśvara uvāca | tataścidrūpamevaikaṃ sarvasattāntarāsthitam | svānubhūtimayaṃ śuddhaṃ devaṃ rudreśvaraṃ viduḥ || 1 ||

Ishvara said: Then, they know the one form of consciousness itself, present inside every being, made from its own inner experience, pure, as the god Rudreshvara.

ईश्वर ने कहा: फिर, वे उस एक चेतना-स्वरूप को जानते हैं, जो हर प्राणी के भीतर बसा है, जो अपने ही भीतरी अनुभव से बना है, जो शुद्ध है, उसे रुद्रेश्वर देवता कहते हैं।

6.36.2

बीजं समस्तबीजानां सारं संसारसंसृतेः। कर्मणां परमं कर्म चिद्धातुं विद्धि निर्मलम् ॥ २ ॥

bījaṃ samastabījānāṃ sāraṃ saṃsārasaṃsṛteḥ | karmaṇāṃ paramaṃ karma ciddhātuṃ viddhi nirmalam || 2 ||

Know it as the seed of all seeds, the essence of the flow of the world, the greatest of all deeds, the pure substance of consciousness.

जानो कि वह सब बीजों का बीज है, संसार की धारा का सार है, सब कामों में सबसे बड़ा काम है, चेतना का शुद्ध तत्व है।

6.36.3

कारणं कारणौघानामकारणमनाविलम्। भावनं भावनौघानामभाव्यमभवात्मकम् ॥ ३ ॥

kāraṇaṃ kāraṇaughānāmakāraṇamanāvilam | bhāvanaṃ bhāvanaughānāmabhāvyaṃabhavātmakam || 3 ||

It is the cause of countless causes, yet itself has no cause and is untouched by anything. It is the thought behind countless thoughts, yet itself cannot be thought of, and its nature is beyond all birth.

वह असंख्य कारणों का कारण है, पर स्वयं उसका कोई कारण नहीं और वह किसी चीज़ से छुआ नहीं जाता। वह असंख्य विचारों के पीछे का विचार है, पर स्वयं उसके बारे में सोचा नहीं जा सकता, और उसका स्वभाव जन्म से परे है।

6.36.4

चेतनं चेतनौघानां चेतनात्मनि चेतनम्। स्वं चेत्यचेतनं चेत्यपरमं भूरिभावनम् ॥ ४ ॥

cetanaṃ cetanaughānāṃ cetanātmani cetanam | svaṃ cetya cetanam aparamaṃ bhūribhāvanam || 4 ||

It is awareness inside every aware being, awareness within the aware self. It is known as the self, and it is known as the unaware world too; not separate from anything, it is the vast power that creates everything.

वह हर चेतन प्राणी के भीतर की चेतना है, चेतन आत्मा के भीतर की चेतना है। उसे स्वयं आत्मा के रूप में भी जाना जाता है, और निर्जीव जगत के रूप में भी; वह किसी से अलग नहीं है, वही वह विशाल शक्ति है जो सब कुछ रचती है।

6.36.5

आलोकालोकममलमनालोक्यमलोकजम्। आलोकं बीजबीजौघं चिद्घनं विमलं विदुः ॥ ५ ॥

ālokālokamamalamanālokyamalokajam | ālokaṃ bījabījaughaṃ ciddhanaṃ vimalaṃ viduḥ || 5 ||

They know it as light and as darkness, spotless, unseen, born from no world at all; as the light that is the seed of all seeds, a dense mass of consciousness, without a stain.

वे उसे प्रकाश भी जानते हैं और अंधकार भी, वह निर्मल है, दिखाई नहीं देता, किसी लोक से जन्मा नहीं है; वह वही प्रकाश है जो सब बीजों का बीज है, चेतना का सघन रूप है, बिना किसी दाग़ के।

6.36.6

असत्यं सन्मयं शान्तं सत्यासत्यविवर्जितम्। महासत्तादिसत्तान्ते चिन्मात्रं विद्धि नेतरत् ॥ ६ ॥

asatyaṃ sanmayam śāntaṃ satyāsatyavivarjitam | mahāsattādisattānte cinmātraṃ viddhi netarat || 6 ||

Know it as unreal, yet made of being; calm, beyond both the real and the unreal. It stands at the very end of the Great Being and of every existence that flows from it, so know it as consciousness alone, and nothing else.

जानो कि वह असत्य है, फिर भी सत्ता से बना है; शांत है, सत्य और असत्य दोनों से परे है। वह महासत्ता और उससे निकली हर सत्ता के अंत में खड़ा है, इसलिए जानो कि वह केवल चेतना है, और कुछ नहीं।

6.36.7

स्वयं भवति रागात्मा रञ्जको रञ्जनं रजः। स्वयमाकाशमप्याशु कुड्यं भवति मण्डितम् ॥ ७ ॥

svayaṃ bhavati rāgātmā rañjako rañjanaṃ rajaḥ | svayamākāśamapyāśu kuḍyaṃ bhavati maṇḍitam || 7 ||

By itself it becomes passion, the dyer, the dyeing, and the dye. By itself, even empty space quickly becomes a painted wall.

वह स्वयं ही राग बन जाता है, रंगनेवाला भी, रंगना भी, और रंग भी। वह स्वयं ही आकाश को भी झट से सजी हुई दीवार बना देता है।

6.36.8

अस्मिंश्चिच्चेतसि स्फारे जगन्मरुमरीचयः। स्फुरिताः प्रस्फुरिष्यन्ति प्रस्फुरन्ति च कोटयः ॥ ८ ॥

asmiṃścicchetaasi sphāre jagannmarumarīcayaḥ | sphuritāḥ prasphurişyanti prasphuranti ca koṭayaḥ || 8 ||

In this vast field of conscious awareness, countless flickers of the world, like a mirage in the desert, have shimmered, will shimmer, and are shimmering even now, by the millions.

इस विशाल चेतन-जागरूकता में, संसार की असंख्य झलकियाँ, रेगिस्तान की मृगतृष्णा जैसी, पहले चमकी हैं, आगे चमकेंगी, और अभी करोड़ों में चमक रही हैं।

6.36.9

स्वसत्तामात्रसंपन्नं पदमस्मिन्स्वतेजसि। न किंचन च संपन्नमन्यदौष्ण्यादिवानले ॥ ९ ॥

svasattāmātrasaṃpannaṃ padamasminnsvatejasi | na kiṃcana ca saṃpannaṃanydauṣṇyādivānale || 9 ||

This state, in its own light, holds nothing but its own existence; nothing else at all is found in it, just as nothing but heat is found in fire.

यह अवस्था, अपने ही प्रकाश में, केवल अपनी सत्ता से भरी है; इसमें और कुछ भी नहीं है, जैसे आग में गर्मी के सिवा कुछ नहीं होता।

6.36.10

गर्भीकृतमहामेरुं परमाणुसमं विदुः । आच्छादितमहामेरुं परमाणुसमं विदुः ॥ १० ॥

garbhīkṛtamahāmeruṃ paramāṇusamaṃ viduḥ | ācchāditamahāmeruṃ paramāṇusamaṃ viduḥ || 10 ||

They know it as holding Mount Meru inside itself like a womb, yet no bigger than an atom. They know it as covering over Mount Meru completely, yet no bigger than an atom.

वे उसे ऐसा जानते हैं जिसने महामेरु पर्वत को अपने भीतर गर्भ की तरह समेट लिया है, फिर भी वह एक परमाणु जितना ही है। वे उसे ऐसा भी जानते हैं जिसने महामेरु पर्वत को पूरी तरह ढक लिया है, फिर भी वह एक परमाणु जितना ही है।

6.36.11

गर्भीकृतमहाकल्पो निमेषोऽसावुदाहृतः । आक्रान्तकल्पेनानेन न संत्यक्ता निमेषता ॥ ११ ॥

garbhīkṛtamahākalpo nimeṣo'sāvudāhṛtaḥ | ākrāntakalpenānenā na saṃtyaktā nimeṣatā || 11 ||

That which has taken a whole great age into itself like a womb is called just one instant. Though it has spanned a whole age, it never stops being just an instant.

जिसने एक पूरे महाकल्प को अपने भीतर गर्भ की तरह समेट लिया है, उसे ही एक क्षण कहा जाता है। एक पूरे कल्प को व्याप्त करके भी, वह क्षण-भर होना कभी नहीं छोड़ता।

6.36.12

बालाग्रकादप्यणुना व्याप्तानेनाखिला मही । सप्ताब्धिवसनाप्युर्वी नास्यान्तमधिगच्छति ॥ १२ ॥

bālāgrakādapyṇunā vyāptānenākhalā mahī | saptābdhivāsanāpyurvī nāsyāntamadhigacchati || 12 ||

By an atom smaller than the tip of a hair, this whole earth is filled. The earth, though wrapped in the seven oceans, cannot find the end of that atom.

बाल की नोक से भी छोटे एक परमाणु से यह पूरी पृथ्वी भरी हुई है। सात समुद्रों से घिरी हुई पृथ्वी भी उस परमाणु का अंत नहीं पा सकती।

6.36.13

अकुर्वन्नेव संसाररचनां कर्तृतां गतः । कुर्वन्नेव महाकर्म न करोत्येव किंचन ॥ १३ ॥

akurvannēva saṃsāraracanāṃ kartṛtāṃ gataḥ | kurvannēva mahākarma na karotyēva kiñcana || 13 ||

Without ever making the world, it has become known as the world's maker. Even while doing this great deed, it does nothing at all.

संसार की रचना किए बिना भी, वह उसका कर्ता कहलाता है। यह महान कार्य करते हुए भी, वह वास्तव में कुछ नहीं करता।

6.36.14

द्रव्यमप्येष निर्द्रव्यो निर्द्रव्योऽपि हि द्रव्यवान् । अकायोऽपि महाकायो महाकायोऽप्यकायवान् ॥ १४ ॥

dravyamapyēṣa nirdravyō nirdravyō'pi hi dravyavān | akāyō'pi mahākāyō mahākāyō'pyakāyavān || 14 ||

It is matter, yet it has no substance; having no substance, it is still full of substance. It has no body, yet it has a vast body; having a vast body, it still has no body.

वह पदार्थ है, फिर भी उसमें कोई द्रव्य नहीं है; द्रव्य-रहित होकर भी, वह द्रव्य से भरपूर है। उसका कोई शरीर नहीं, फिर भी उसका शरीर विशाल है; विशाल शरीर होकर भी, उसका कोई शरीर नहीं है।

6.36.15

अद्याप्येष सदा प्रातः प्रातरप्यद्यतां गतः । न वाद्यमद्य न प्रातस्त्वद्य प्रातश्च वा सदा ॥ १५ ॥

adyāpyēṣa sadā prātaḥ prātarapyadyatāṃ gataḥ | na vādyamadya na prātastvadya prātaśca vā sadā || 15 ||

Even as today, it is always morning; even as morning, it becomes today. But today is not really today, and morning is not really today, morning simply always is.

आज होकर भी वह सदा सुबह है; सुबह होकर भी वह आज बन जाता है। पर आज सच में आज नहीं है, और सुबह सच में आज नहीं है, सुबह बस सदा वैसी ही रहती है।

6.36.16

भिंडिं भिंडिं खिले मत्ता पुरुपिच्छिलिसालघम् । विविच्चलित्सदालोका लासो गुलुगुलुः शिली ॥ १६ ॥

bhiṃḍiṃ bhiṃḍiṃ khile matta purupicchilisālagham | viviccalitsadālokā lāso guluguluḥ śilī || 16 ||

Bhindim bhindim khile matta purupichchhilisalagham, vivichchalitsadaloka laso guluguluh shili.

भिंडिं भिंडिं खिले मत्ता पुरुपिच्छिलिसालघम्, विविच्चलित्सदालोका लासो गुलुगुलुः शिली।

6.36.17

इत्याद्यनर्थकं वाक्यं तथा सत्यं स एव च । न तदस्ति न यत्सत्यं न तदस्ति न यत्त्वसौ ॥ १७ ॥

ityādyanarthakaṃ vākyaṃ tathā satyaṃ sa eva ca | na tadasti na yatsatyaṃ na tadasti na yattvasau || 17 ||

A meaningless sentence like this one is also true, since it too is that very one. Nothing exists that is not true; nothing exists that is not that.

ऐसा एक निरर्थक वाक्य भी सत्य है, क्योंकि वह भी वही एक है। ऐसा कुछ भी नहीं जो सत्य न हो; ऐसा कुछ भी नहीं जो वह न हो।

6.36.18

यस्मिन्सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः । यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥ १८ ॥

yasmin sarvaṃ yataḥ sarvaṃ yaḥ sarvaṃ sarvataśca yaḥ | yaśca sarvamayo nityaṃ tasmai sarvātmane namaḥ || 18 ||

Salutation to that self of all, in whom is everything, from whom everything comes, who is everything and is everywhere, and who is forever made of everything.

उस सर्वात्मा को प्रणाम, जिसमें सब कुछ है, जिससे सब कुछ आता है, जो स्वयं सब कुछ है और हर जगह है, और जो सदा सब कुछ से बना है।

6.36.19

यत्रान्तरालगहनेन विलासवत्या हेलाविलोलघनसर्जितयामलेन । मल्लेन पल्लवदलामलमालितानां लक्ष्मीलताऽविरलिता वलितेव मुष्टिः ॥ १९ ॥

yatrāntarālagahanena vilāsavatyā helāvilolaghanasarjitayāmalena | mallen pallavadalāmalamālitānāṃ lakṣmīlatā'viralitā valiteva muṣṭiḥ || 19 ||

There, in a dense inner grove, through the playful woman and the pair formed by the swaying, thick cloud of sport, through the wrestler crowned with pure young shoots and petals, the vine of fortune spreads unbroken, coiled like a fist.

वहाँ, एक घने भीतरी उपवन में, उस चंचल स्त्री के द्वारा और खेल की सघन, हिलती हुई जोड़ी के द्वारा, शुद्ध कोंपलों और पंखुड़ियों से सजे उस पहलवान के द्वारा, सौभाग्य की बेल बिना टूटे फैली है, मुट्ठी की तरह लिपटी हुई।

Chapter 37

6.37.1

ईश्वर उवाच । इत्यादिकानां शब्दानामर्थश्रीः सत्यरूपिणि । तस्मिन्सर्वेश्वरे सर्वसत्तामणिसमुद्गके ॥ १ ॥

Īśvara uvāca | ityādikānāṃ śabdānāmarthaśrīḥ satyarūpiṇi | tasminsarveśvare sarvasattāmaṇisamudgake || 1 ||

Ishvara said: The rich meaning of words like these rests in the one whose very form is truth, in that lord of all, the jewel box that holds all existence.

ईश्वर ने कहा: ऐसे शब्दों का गहरा अर्थ उसी में टिका है जिसका रूप खुद सच्चाई है, उस सबके स्वामी में, जो समूचे अस्तित्व का रत्न-कोष है।

6.37.2

का नाम विमलाभासास्तस्मिन्परमचिन्मणौ । न कचन्ति विचिन्वन्ति विचित्राणि जगन्ति याः ॥ २ ॥

kā nāma vimalābhāsāstasminparamacinmaṇau | na kacanti vicinvanti vicitrāṇi jaganti yāḥ || 2 ||

What are these stainless reflections in that highest jewel of awareness, which look into the many worlds but never show themselves?

उस सबसे ऊँची चेतना की मणि में ये कौन-सी निर्मल झलकियाँ हैं, जो अनेक लोकों में झाँकती हैं पर खुद कभी दिखती नहीं?

6.37.3

एषा बीजकणान्तस्था चित्सत्ता स्ववपुर्मयम् । लब्ध्वा मृत्कालवार्यादि करोत्यङ्कुरमोदनम् ॥ ३ ॥

eṣā bījakaṇāntasthā cittsattā svavapurmayam | labdhvā mṛtkālavāryādi karotyaṅkuramodanam || 3 ||

This power of awareness lives inside a tiny seed. It takes hold of soil, season, and water, turns them into a body for itself, and so makes the sprout spring up with joy.

यह चेतना की शक्ति एक छोटे-से बीज के भीतर बसी रहती है। यह मिट्टी, मौसम और पानी को पकड़कर उन्हें अपना ही शरीर बना लेती है, और इस तरह अंकुर को खुशी से उगा देती है।

6.37.4

फेनावर्तविवर्तान्तर्वर्तिनी रसरूपिणी । कठिनेन्द्रियसंबन्धे करोति स्पन्दमम्भसाम् ॥ ४ ॥

phenāvartavivartāntarvartinī rasarūpiṇī | kaṭhinendriyasaṃbandhe karoti spandamambhasām || 4 ||

She lives inside the whirling turn of foam, in the form of liquid. When the water meets something hard, she stirs it into motion.

वह झाग के घूमते-बहते रूप के भीतर, रस के रूप में बसी रहती है। जब पानी किसी कठोर चीज़ से टकराता है, तो वह उसमें हलचल पैदा कर देती है।

6.37.5

एषा कुसुमगुच्छेषु रसरूपेण संस्थिता । कचति घ्राणरन्ध्रेषु करोति परिफुल्लताम् ॥ ५ ॥

eṣā kusumaguccheṣu rasarūpeṇa saṃsthitā | kacati ghrāṇarandhreṣu karoti pariphuLLatām || 5 ||

This same power lives in clusters of flowers as their scent. It shines out through the nostrils and fills them with the joy of full bloom.

यही शक्ति फूलों के गुच्छों में सुगंध बनकर बसी रहती है। यह नथुनों में होकर फैलती है और उन्हें पूरी तरह खिलने के आनंद से भर देती है।

6.37.6

शिलाङ्गस्था शिलाङ्गाभामसतीं सत्यतापदम्। सर्गाधारदशां धत्ते गिरीन्द्रः स्थितिलीलया ॥ ६ ॥

śilāṅgasthā śilāṅgābhāmasatīṃ satyatāpadam | sargādhāradaśāṃ dhatte girīndraḥ sthitalīlayā || 6 ||

Living inside every part of a rock and looking just like the rock itself, unreal in itself yet made to look entirely real, this power gives the great mountain the role of holding up all creation, simply by playing at standing still.

पत्थर के एक-एक हिस्से में बसकर और ठीक पत्थर जैसी दिखकर, खुद झूठी होकर भी पूरी तरह सच्ची लगती हुई, यह शक्ति बड़े पहाड़ को पूरी सृष्टि को थामे रखने की भूमिका दे देती है, बस स्थिर खड़े रहने के खेल से।

6.37.7

पवनस्पन्दकोशात्मरूपिणीव त्वगिन्द्रियम्। संसाधयत्यात्मसुतं पितेवात्मतयानया ॥ ७ ॥

pavanaspaṅdakośātmarūpiṇīva tvagindriyam | saṃsādhayatyātmasutaṃ pitevātmatayānayā || 7 ||

Taking the very form of the case that holds the wind's vibration, this same power raises the organ of touch, the skin, the way a father raises his own son, by treating it as truly her own self.

हवा की थरथराहट को थामने वाले खोल का रूप लेकर, यही शक्ति स्पर्श की इंद्रिय यानी त्वचा को उसी तरह पालती-पोसती है जैसे पिता अपने बेटे को पालता है, क्योंकि वह उसे सचमुच अपना ही रूप मानती है।

6.37.8

अशेषसारसंपिण्डमध्यात्मानं स्वसिद्धये। भावयित्वा नकिंचित्त्वमिव खत्वं करोत्यलम् ॥ ८ ॥

aśeṣasārasaṃpiṇḍamadhyātmānaṃ svasiddhaye | bhāvayitvā nakiṃcittvamiva khatvaṃ karotyalam || 8 ||

For her own fulfillment, she first turns her attention to the inner self, the whole gathered essence of everything, and then she truly turns it into empty space, as if into nothing at all.

अपनी ही सिद्धि के लिए वह पहले भीतर के आत्मा की ओर ध्यान लगाती है, जो समूचे सार का जमा हुआ रूप है, और फिर उसे सचमुच आकाश जैसा यानी मानो कुछ भी नहीं, बना देती है।

6.37.9

स्वसत्ताप्रतिबिम्बाभमाकाशमुकुरोदरे। धत्ते कल्पनिमेषाङ्कं कालाख्यममलं वपुः ॥ ९ ॥

svasattāpratibimbābhamaākāśamukurodare | dhatte kalpanimeṣāṅkaṃ kālākhyamamalaṃ vapuḥ || 9 ||

In the hollow of that mirror called space, she takes on a pure body called time, marked out in parts from a whole world-age down to the blink of an eye, a body that is nothing but the reflected image of her own existence.

आकाश नाम के उस दर्पण की खाली जगह में, वह समय नाम की एक निर्मल देह धारण करती है, जो एक पूरे कल्प से लेकर पलक झपकने तक के हिस्सों में बँटी होती है, और यह देह असल में उसकी अपनी ही सत्ता की परछाईं है।

6.37.10

आमहापञ्चमेशानं परिणाममया इमे। इदमित्थमिदं नेति नियतिर्भवति स्वयम् ॥ १० ॥

āmahāpañcameśānaṃ pariṇāmamayā ime | idamitthamidaṃ neti niyatirbhavati svayam || 10 ||

All these things, right up to the great fifth lord himself, are made of change. And the fact that each thing is fixed as "this is so, this is not so" is itself the power called law.

ये सब चीज़ें, उस महान पाँचवें ईश तक भी, बदलाव से बनी हैं। और यह तय होना कि हर चीज़ "यह ऐसी है, यह वैसी नहीं है", यही वह शक्ति है जिसे नियम कहा जाता है।

6.37.11

साक्षिणि स्फार आभासे गृहे दीप इव क्रियाः । सत्ये तस्मिन्प्रकाशन्ते जगच्चित्रपरम्पराः ॥ ११ ॥

sākṣiṇi sphāra ābhāse gṛhe dīpa iva kriyāḥ | satye tasminprakāśante jagaccitraparamparāḥ || 11 ||

In the witness, that wide, bright reality, all the passing pictures of the world are lit up and shown, just as a lamp in a house shows up everything being done there.

साक्षी में, यानी उस फैली हुई सच्ची रोशनी में, संसार की एक के बाद एक आती तस्वीरें वैसे ही उजागर होती हैं जैसे घर में जलता दीया वहाँ हो रहे हर काम को दिखा देता है।

6.37.12

परमाकाशनगरनाट्यमण्डपभूमिषु । स्वशक्तिवृत्तं संसारं पश्यन्ती साक्षिवत्स्थिता ॥ १२ ॥

paramākāśanagaranāṭyamaṇḍapabhūmiṣu | svaśaktivṛttaṃ saṃsāraṃ paśyantī sākṣivatsthitā || 12 ||

On the stage of that theatre hall, the city built in the highest sky, she stands only as a witness, watching the whole round of the world, which is nothing but her own power at play.

उस ऊँचे आकाश में बसे नगर के नाट्य-मंडप के मंच पर, वह बस एक साक्षी की तरह खड़ी होकर संसार के पूरे चक्र को देखती रहती है, जो असल में उसकी अपनी ही शक्ति का खेल है।

6.37.13

श्रीवसिष्ठ उवाच । शिवस्यास्य जगन्नाथ शक्तयः काः कथं स्थिताः । साक्षिता का च किं तासां वृत्तं स्यात्कियदेव तते ॥ १३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śivasya asya jagannātha śaktayaḥ kāḥ kathaṃ sthitāḥ | sākṣitā kā ca kiṃ tāsāṃ vṛttaṃ syātkiyadeva tate || 13 ||

Sri Vasishtha said: O lord of the world, what are the powers of this Shiva, and how do they exist? What is their being a witness, what is their work, and how far does it reach?

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे जगत के स्वामी, इस शिव की शक्तियाँ क्या हैं, और वे कैसे रहती हैं? उनका साक्षी होना क्या है, उनका काम क्या है, और वह कहाँ तक फैला है?

6.37.14

ईश्वर उवाच । अप्रमेयस्य शान्तस्य शिवस्य परमात्मनः । सौम्य चिन्मात्ररूपस्य सर्वस्यानाकृतेरपि ॥ १४ ॥

īśvara uvāca | aprameyasya śāntasya śivasya paramātmanaḥ | saumya cinmātrarūpasya sarvasyānākṛterapi || 14 ||

Ishvara said: Shiva cannot be measured, and he is completely at peace. He is the highest self. His form, gentle one, is pure awareness alone. He is everything, and yet he has no shape at all.

ईश्वर ने कहा: शिव को नापा नहीं जा सकता, और वह पूरी तरह शांत है। वह सबसे ऊँचा आत्मा है। हे सज्जन, उसका रूप केवल शुद्ध चेतना है। वह सब कुछ है, फिर भी उसका कोई आकार नहीं है।

6.37.15

इच्छासत्ता व्योमसत्ता कालसत्ता तथैव च । तथा नियतिसत्ता च महासत्ता च सुव्रत ॥ १५ ॥

icchāsattā vyomasattā kālasattā tathaiva ca | tathā niyatisattā ca mahāsattā ca suvrata || 15 ||

His powers are the existence that is will, the existence that is space, and the existence that is time; and also, good soul, the existence that is law, and the great existence.

उसकी शक्तियाँ हैं: इच्छा का अस्तित्व, आकाश का अस्तित्व, और समय का अस्तित्व; और हे नेक आत्मा, नियम का अस्तित्व, और महान अस्तित्व भी।

6.37.16

ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिः कर्तृताऽकर्तृतापि च । इत्यादिकानां शक्तीनामन्तो नास्ति शिवात्मनः ॥ १६ ॥

jñānaśaktiḥ kriyāśaktiḥ kartṛtā'kartṛtāpi ca | ityādikānāṃ śaktīnāmanto nāsti śivātmanaḥ || 16 ||

There is also the power to know, the power to act, and the state of being a doer or of not being a doer. Powers like these, belonging to Shiva's own self, have no end.

जानने की शक्ति, करने की शक्ति, और कर्ता होने या कर्ता न होने की स्थिति भी है। शिव के अपने स्वरूप की ऐसी शक्तियों का कोई अंत नहीं है।

6.37.17

श्रीवसिष्ठ उवाच । शक्तयः कुत एवैता बहुत्वं कथमासु च । उदयश्च कथं देव भेदाभेदश्च कीदृशः ॥ १७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śaktayaḥ kuta evaitā bahutvaṃ kathamāsu ca | udayaśca kathaṃ deva bhedābhedaśca kīdṛśaḥ || 17 ||

Sri Vasishtha said: Where do these powers come from? How does so much variety appear in them? How do they arise, O Lord? And what kind of difference and non-difference do they have?

श्री वसिष्ठ ने कहा: ये शक्तियाँ आखिर कहाँ से आती हैं? इनमें इतनी विविधता कैसे आती है? हे भगवन, इनका जन्म कैसे होता है? और इनमें भेद और अभेद किस तरह का है?

6.37.18

ईश्वर उवाच । शिवस्यानन्तरूपस्य सैषा चिन्मात्रतात्मनः । एषा हि शक्तिरित्युक्ता तस्माद्भिन्ना मनागपि ॥ १८ ॥

īśvara uvāca | śivasya anantarūpasya saiṣā cinmātratātmanaḥ | eṣā hi śaktirityuktā tasmādbhinnā manāgapi || 18 ||

Sri Ishvara said: This power belongs to Shiva himself, whose forms are endless and whose very being is pure awareness. It is indeed called power, yet it differs from him only a little.

श्री ईश्वर ने कहा: यह शक्ति स्वयं शिव की है, जिनके रूप अनंत हैं और जिनका स्वरूप केवल शुद्ध चेतना है। इसे ही शक्ति कहा जाता है, फिर भी यह उनसे बस थोड़ी सी ही अलग है।

6.37.19

ज्ञत्वकर्तृत्वभोक्तृत्वसाक्षित्वादिविभावनात् । शक्तयो विविधं रूपं धारयन्ति बहूदकम् ॥ १९ ॥

jñatvakartṛtvabhoktṛtvasākṣitvādivibhāvanāt | śaktayo vividhaṃ rūpaṃ dhārayanti bahūdakam || 19 ||

Because they show themselves as the knower, the doer, the one who enjoys, the witness, and so on, the powers take on many different forms, as plentiful as water.

क्योंकि ये स्वयं को जानने वाला, करने वाला, भोगने वाला, साक्षी आदि रूपों में प्रकट करती हैं, इसलिए ये शक्तियाँ पानी जितनी भरपूर मात्रा में अनेक रूप धारण करती हैं।

6.37.20

एवं जगति नृत्यन्ति ब्रह्माण्डे नृत्यमण्डपे । कालेन नर्तकेनेव क्रमेण परिशिक्षिताः ॥ २० ॥

evaṃ jagati nṛtyanti brahmāṇḍe nṛtyamaṇḍape | kālena nartakeneva kramena pariśikṣitāḥ || 20 ||

In this way they dance in the world, in the universe which is their dance hall, trained step by step by time, like a dance master.

इस तरह वे संसार में नाचती हैं, इस ब्रह्मांड रूपी नाचघर में, जिन्हें समय ने, मानो एक नाच सिखाने वाले गुरु की तरह, क्रम-क्रम से सिखाया है।

6.37.21

यैषा परपराभासा सैषा नियतिरुच्यते । क्रियाथ कृतिरिच्छा वा कालेत्यादिकृताभिधा ॥ २१ ॥

yaiṣā paraparābhāsā saiṣā niyatirucyate | kriyātha kṛtiricchā vā kāletādyakṛtābhidhā || 21 ||

That which appears as both the higher and the lower is called niyati. It is also given other names, such as action, doing, will, and time.

जो यह ऊँचे और नीचे रूप में दिखाई देती है, उसी को नियति कहा जाता है। इसे क्रिया, कृति, इच्छा और काल जैसे दूसरे नामों से भी पुकारा जाता है।

6.37.22

आमहारुद्रपर्यन्तमिदमित्थमिति स्थितेः । आतृणापद्मजस्पन्दं नियमान्नियतिः स्मृता ॥ २२ ॥

āmahārudraparyantamidamitthamiti sthiteḥ | ātṛṇāpadmajaspandaṃ niyamānniyatiḥ smṛtā || 22 ||

One fixed rule decides that everything is exactly as it is, from a single blade of grass up to Brahma who was born from the lotus, up to the great Rudra. Because of this rule, all movement everywhere is called niyati.

एक निश्चित नियम यह तय करता है कि हर चीज़ ठीक वैसी ही है जैसी वह है, घास के एक तिनके से लेकर कमल से जन्मे ब्रह्मा तक, और महारुद्र तक। इसी नियम के कारण हर जगह की हलचल को नियति कहा जाता है।

6.37.23

नियतिर्नित्यमुद्वेगवर्जिताऽपरिमार्जिता । एषा नृत्यति वै नृत्यं जगज्जालकनाटकम् ॥ २३ ॥

niyatirnityamudvegavarjitā'parimārjitā | eṣā nṛtyati vai nṛtyaṃ jagajjālakanāṭakam || 23 ||

Niyati is always free of disturbance, and she never wears away. She is the one dancing this dance, the drama of the world's web.

नियति सदा हलचल से मुक्त रहती है, और वह कभी घिसती या मिटती नहीं। यही नाच नाचने वाली है, संसार के जाल का यह नाटक।

6.37.24

नानारसविलासाढ्यं विवर्ताभिनयान्वितम् । कल्पक्षणहतानेकपुष्करावर्तघर्घरम् ॥ २४ ॥

nānārasavilāsāḍhyaṃ vivartābhinayānvitam | kalpakṣaṇahatānekapuṣkarāvartaghargharam || 24 ||

This dance is rich with the play of many moods, full of scenes that keep acting out change, and it rumbles like countless whirlpools breaking apart at the moment a whole age of the world ends.

यह नाच अनेक भावों के खेल से भरपूर है, बदलते हुए दृश्यों को बार-बार दिखाता है, और ऐसा गरजता है जैसे किसी युग के अंत के पल में अनगिनत भंवर टूट रहे हों।

6.37.25

सर्वर्तुकुसुमाकीर्णं धारागोलकमन्दिरम् । भूयोभूयः पतद्वर्षभूरिस्वेदजलोत्करम् ॥ २५ ॥

sarvartukusumākīrṇaṃ dhārāgolakamandiram | bhūyobhūyaḥ patadvarṣabhūrisvedajalotkaram || 25 ||

It is scattered with flowers of every season, a hall built of falling drops of water, and it is soaked again and again by heavy rain, like streams of sweat.

यह हर मौसम के फूलों से बिखरा हुआ है, गिरती हुई जल-बूंदों का एक भवन है, और बार-बार होने वाली भारी बारिश से, पसीने की तरह, यह भीगता रहता है।

6.37.26

पयोदपल्लवालोलनीलाम्बरकृतभ्रमम्। पूर्णं संशुद्धसप्ताब्धिरत्नौघवलयाकुलम्॥ २६॥

payodapallavālolanīlāmbarakṛtabhramam | pūrṇaṃ saṃśuddhasaptābdhiratnaughavalayākulam || 26 ||

Clouds like tender young leaves sway across the dark blue sky and make it seem to whirl; this dance is completely full, ringed all around by streams of jewels from the seven pure oceans.

कोमल नई पत्तियों जैसे बादल गहरे नीले आकाश में लहराते हैं और उसे घूमता हुआ दिखाते हैं; यह नाच पूरी तरह भरा हुआ है, और सातों शुद्ध समुद्रों से बहते रत्नों की धाराओं से चारों ओर घिरा है।

6.37.27

यामपक्षदिनप्रेक्षाकटाक्षोद्भासिताम्बरम्। मज्जनोन्मज्जनव्यग्रकुलाद्रिकुलशेखरम्॥ २७॥

yāmapakṣadinaprekṣākaṭākṣodbhāsitāmbaram | majjanonmajjjanavyagrakulādrikulaśekharam || 27 ||

The passing of every watch, every fortnight, and every day lights up its sky like a sidelong glance; whole ranges of mountains keep sinking and rising in it.

हर प्रहर, हर पखवाड़े और हर दिन का बीतना मानो एक तिरछी नज़र से इसके आकाश को रोशन करता है; इसमें पूरे-पूरे पर्वत बार-बार डूबते और उभरते रहते हैं।

6.37.28

भ्रमच्छशिमणिप्रोतगङ्गामुक्ताफलत्रयम्। संदृष्टादृष्टसंध्याभ्रविलोलकरपल्लवम्॥ २८॥

bhramacchaśimaṇiprotagaṅgāmuktāphalatrayam | saṃdṛṣṭādṛṣṭasandhyābhravilolakarapallavam || 28 ||

In it, the three worlds hang like Ganga's pearls strung on the moving moon-gem; the twilight clouds' soft rays tremble, now seen, now hidden.

इसमें तीनों लोक ऐसे लटके हैं जैसे गंगा के मोती चलते हुए चंद्रमणि में पिरोए गए हों; संध्या के बादलों की कोमल किरणें कभी दिखती और कभी छिपती हुई काँपती हैं।

6.37.29

अनारतरणल्लोललोकालंकारकोमलम्। भूरिभूतलपातालनभस्तलपदक्रमम्॥ २९॥

anārataraṇallolalokālaṃkārakomalam | bhūribhūtalapātālanabhastalapadakramam || 29 ||

It is soft, adorned by this restless world, which keeps tinkling without stopping, and it walks step by step across the wide earth, the world below, and the sky.

यह कोमल है, इस बेचैन संसार से सजा है, जो लगातार बजता रहता है, और यह विशाल पृथ्वी, पाताल और आकाश में कदम-दर-कदम चलता है।

6.37.30

मग्नोन्मग्नमहानेकताराघर्मकणोत्करम्। चन्द्रार्ककुण्डलस्पन्दस्मितस्फुटनभोमुखम्॥ ३०॥

magnonmagna mahāneka tārāgharmakaṇotkaram | candrārkakuṇḍalaspandasmitasphuṭanabhomukham || 30 ||

In it, countless great stars sink and rise like heaps of sweat drops, and the face of its sky breaks into a trembling smile, wearing the sun and the moon as earrings.

इसमें अनगिनत बड़े तारे पसीने की बूँदों की तरह डूबते-उभरते रहते हैं, और इसके आकाश का चेहरा सूरज और चाँद को कुंडल की तरह पहनकर एक काँपती मुस्कान में खिल उठता है।

6.37.31

कल्पितानेकब्रह्माण्डकपाटकवितानकम् । लुठल्लोकान्तरव्यूहध्वनन्मुक्ताङ्कपल्लवम् । सुखदुःखदशादोषभावाभावरसान्तरम् ॥ ३१ ॥

kalpitāneka brahmāṇḍa kapāṭa kavitānakam | luṭhal lokāntara vyūha dhvanan mukta aṅka pallavam | sukha duḥkha daśā doṣa bhāva abhāva rasa antaram || 31 ||

It is a canopy made from the doors of many imagined universes; in its rolling rows of other worlds, freed sounds keep echoing again and again; and inside it lies the very taste of happiness and sorrow, of fault, of being and not being.

यह अनेक कल्पित ब्रह्मांडों के द्वारों से बना एक बड़ा शामियाना है; इसमें लुढ़कती हुई दूसरी दुनियाओं की पंक्तियों में मुक्त हुई आवाज़ें बार-बार गूंजती रहती हैं; और इसके भीतर सुख-दुख, दोष, तथा होने और न होने का रस समाया हुआ है।

6.37.32

अस्मिन्विकारवलिते नियतेर्विलासे संसारनाम्नि चिरनाटकनाट्यसारे । साक्षी सदोदितवपुः परमेश्वरोऽयमेकः स्थितो न च तया न च तेन भिन्नः ॥ ३२ ॥

asmin vikāra valite niyater vilāse saṃsāra nāmni chira nāṭaka nāṭya sāre | sākṣī sadodita vapuḥ parameśvaro'yam ekaḥ sthito na ca tayā na ca tena bhinnaḥ || 32 ||

This world is full of change. It is niyati's play, and it is called samsara, the very heart of an age-old drama and its performance. Within it stands one witness, the Supreme Lord, whose presence never ends. He is one, and he is not separate from niyati, nor separate from this world.

यह संसार बदलाव से भरा है। यह नियति का खेल है, और इसे संसार कहा जाता है, यह एक पुराने नाटक और उसके अभिनय का सार है। इसके भीतर एक गवाह की तरह खड़ा है परमेश्वर, जिसका अस्तित्व सदा बना रहता है। वह एक है, और वह न नियति से अलग है, न इस संसार से।

Chapter 38

6.38.1

ईश्वर उवाच । एष देवः स परमः पूज्य एष सदा सताम् । चिन्मात्रमनुभूत्यात्मा सर्वगः सर्वसंश्रयः ॥ १ ॥

īśvara uvāca | eṣa devaḥ sa paramaḥ pūjya eṣa sadā satām | cinmātramanubhūtyātmā sarvagaḥ sarvasaṃśrayaḥ || 1 ||

Ishvara said: This is the god, the supreme one, worthy of worship; the good always worship him. His nature is pure consciousness and direct experience; he is present everywhere, the refuge of everything.

ईश्वर ने कहा: यही वह देवता है, सबसे बड़ा है, पूजने के योग्य है; अच्छे लोग हमेशा इसी की पूजा करते हैं। इसका स्वरूप शुद्ध चेतना और सीधा अनुभव है; यह हर जगह मौजूद है, सबका आसरा है।

6.38.2

घटे पटे वटे कुड्ये शकटे वानरे स्थितः । शिवो हरो हरिर्ब्रह्मा शक्रो वैश्रवणो यमः ॥ २ ॥

ghaṭe paṭe vaṭe kuḍye śakaṭe vānare sthitaḥ | śivo haro harirbrahmā śakro vaiśravaṇo yamaḥ || 2 ||

He dwells in a pot, in cloth, in a banyan tree, in a wall, in a cart, in a monkey. He is Shiva, Hara, Hari, Brahma, Shakra, Vaishravana, and Yama.

वह घड़े में है, कपड़े में है, बरगद के पेड़ में है, दीवार में है, गाड़ी में है, बंदर में है। वही शिव है, हर है, हरि है, ब्रह्मा है, शक्र है, वैश्रवण है, और यम है।

6.38.3

बहिरन्तश्च सर्वात्मा सदा स्वात्मा सुबुद्धिभिः । विविधेन क्रमेणैव भगवान्परिपूज्यते ॥ ३ ॥

bahirantaśca sarvātmā sadā svātmā subuddhibhiḥ | vividhena krameneva bhagavānparipūjyate || 3 ||

He is outside and inside, the self of everything, always one's own true self. Wise people worship this Lord in many different ways.

वह बाहर भी है और भीतर भी, सबकी आत्मा है, हमेशा अपनी ही सच्ची आत्मा है। समझदार लोग इस भगवान की पूजा कई अलग-अलग तरीकों से करते हैं।

6.38.4

बहिस्तावन्महाबुद्धे क्रमेण परिपूज्यते । येन तच्छृणु तत्त्वज्ञ श्रोष्यस्यन्तःक्रमं ततः ॥ ४ ॥

bahistāvanmahābuddhe kramena paripūjyate | yena tacchṛṇu tattvajña śroṣyasyantḥkramam tataḥ || 4 ||

First, O wise one, listen to how he is worshipped outwardly, step by step. O knower of truth, after that you will hear the inward way of worship.

पहले, हे बुद्धिमान, सुनो कि बाहर से उसकी पूजा किस क्रम से की जाती है। हे सत्य जानने वाले, उसके बाद तुम भीतर की पूजा की विधि सुनोगे।

6.38.5

पूजाक्रमेषु सर्वेषु देहगेहं पवित्रकम्। त्याज्यं देहावबोधात्म परं यत्नात्पवित्रकम्॥ ५॥

pūjākrameṣu sarveṣu dehagehaṃ pavitrakam | tyājyaṃ dehāvabodhātma paraṃ yatnātpavitrakam || 5 ||

In every kind of worship, people use the purity of the body and the house. But that should be given up. The self that has gone beyond body-consciousness reaches, through effort, the higher, the truly pure.

हर तरह की पूजा में, लोग शरीर और घर की पवित्रता काम में लाते हैं। पर इसे छोड़ देना चाहिए। जो आत्मा शरीर के एहसास से आगे निकल जाती है, वह मेहनत से उस ऊँची, सच्ची पवित्रता तक पहुँचती है।

6.38.6

पूजनं ध्यानमेवान्तर्नान्यदस्त्यस्य पूजनम्। तस्मात्त्रिभुवनाधारं नित्यं ध्यानेन पूजयेत्॥ ६॥

pūjanam dhyānam evāntarnānyad asty asya pūjanam | tasmāt tribhuvanādhāram nityam dhyānena pūjayet || 6 ||

The only true worship is meditation, done within; there is no other way to worship him. So one should always worship, through meditation, the one who supports the three worlds.

सच्ची पूजा बस भीतर किया गया ध्यान है; इसकी और कोई पूजा नहीं है। इसलिए तीनों लोकों को सहारा देने वाले की पूजा हमेशा ध्यान से करनी चाहिए।

6.38.7

चिद्रूपं सूर्यलक्षाभं समस्ताभासभासनम्। अन्तस्थचित्प्रकाशं स्वमहंतासारमाश्रयेत्॥ ७॥

cidrūpam sūryalakṣābham samastābhāsabhāsanam | antasthacitprakāśam svamahamtāsāram āśrayet || 7 ||

He is pure consciousness, shining like a hundred thousand suns, the light that makes everything else shine. One should take refuge in this inner light of consciousness, the very essence of one's own sense of 'I'.

वह शुद्ध चेतना है, लाखों सूर्यों जैसा चमकता है, वह रोशनी है जिससे बाकी सब चीज़ें चमकती हैं। इस भीतरी चेतना की रोशनी की शरण लेनी चाहिए, जो अपने ही 'मैं' के एहसास का सार है।

6.38.8

अपारपरमाकाशविपुलाभोगकन्धरम्। अनन्ताधस्तनाकाशकोशपादसरोरुहम्॥ ८॥

apāraparamākāśavipulābhogakandharam | anantādhasthanākāśakośapādasaroruham || 8 ||

His neck is the vast, boundless highest sky; his lotus feet rest in the endless sky below.

उसकी गर्दन असीम, ऊँचे से ऊँचे आकाश जितनी बड़ी है; उसके कमल जैसे पैर नीचे के अनंत आकाश में टिके हैं।

6.38.9

अनन्तदिक्तटाभोगभुजमण्डलमण्डितम्। नानाविधमहालोकगृहीतपरमायुधम्॥ ९॥

anantadiktatābhogabhujamaṇḍalamaṇḍitam | nānāvidhamahālogagṛhītaparamāyudham || 9 ||

He is adorned with a circle of arms that reach to the edges of the endless directions, holding supreme weapons taken from the many great worlds.

वह अपनी भुजाओं के घेरे से सजा है, जो अनंत दिशाओं के छोर तक पहुँचती हैं, और कई बड़े लोकों से लिए गए सबसे बड़े हथियार थामे हुए हैं।

6.38.10

हृत्कोशकोणविश्रान्तब्रह्माण्डौघपरम्परम्। प्रकाशपरमाकाशपारगापारविग्रहम्॥ १०॥

hṛtkosakoṇaviśrāntabrahmaṇḍaughaparamparam | prakāśaparamākāśapāragāpāravigraham || 10 ||

In a corner of his heart rest, one after another, countless multitudes of universes. His form is boundless, going beyond even the highest sky of light.

उसके हृदय के एक कोने में, एक के बाद एक, अनगिनत ब्रह्मांडों के समूह टिके हुए हैं। उसका रूप असीम है, वह रोशनी के सबसे ऊँचे आकाश से भी आगे जाता है।

6.38.11

अध ऊर्ध्वं चतुर्दिक्षु विदिक्षु च निरन्तरम्। ब्रह्मेन्द्रहरिरुद्रेशप्रमुखामरमण्डितम्॥ ११॥

adha ūrdhvaṃ caturdikṣu vidikṣu ca nirantaram brahmendraharirudreśapramukhāmaramaṇḍitam || 11 ||

Below, above, in the four directions and the directions between, without a gap, he is surrounded by gods headed by Brahma, Indra, Hari, Rudra, and Isha.

नीचे, ऊपर, चारों दिशाओं में और उनके बीच की दिशाओं में, बिना किसी कमी के, वह ब्रह्मा, इंद्र, हरि, रुद्र और ईश जैसे देवताओं से घिरा हुआ है।

6.38.12

इमां भूतश्रियं तस्य रोमालिं प्रविचिन्तयेत्विविधारम्भकारिण्यस्त्रिजगद्यन्त्ररज्जवः॥ १२॥

imāṃ bhūtaśriyaṃ tasya romāliṃ pravicintayetvividhārambhakāriṇyastrijagadyantrarajjavaḥ || 12 ||

One should meditate on this: his row of body-hairs, the splendor of all created beings, which are the ropes working the machine of the three worlds, setting all its various activities going.

इस पर ध्यान करना चाहिए: उसके शरीर के रोंगटों की पंक्ति, जो सारे जीवों की शोभा है, वही तीनों लोकों की मशीन को चलाने वाली रस्सियाँ हैं, जो तरह-तरह की हलचल शुरू करती हैं।

6.38.13

इच्छाद्याः शक्तयस्तस्य चिन्तनीयाः शरीरगाःएष देवः स परमः पूज्य एष सदा सताम्॥ १३॥

icchādyāḥ śaktayastasya cintanīyāḥ śarīragāḥeṣa devaḥ sa paramaḥ pūjya eṣa sadā satām || 13 ||

One should meditate on his powers, beginning with will, that dwell in his body. This is the god, the supreme one, worthy of worship; the good always worship him.

उसकी शक्तियों पर ध्यान करना चाहिए, इच्छा से शुरू होकर, जो उसके शरीर में रहती हैं। यही वह देवता है, सबसे बड़ा है, पूजने के योग्य है; अच्छे लोग हमेशा इसी की पूजा करते हैं।

6.38.14

चिन्मात्रानुभूत्यात्मा सर्वगः सर्वसंश्रयःघटे पटे वटे कुड्ये शकटे वानरे स्थितः॥ १४॥

cinmātramanubhūtyātmā sarvagaḥ sarvasaṃśrayaḥghaṭe paṭe vaṭe kuḍye śakaṭe vānare sthitaḥ || 14 ||

His nature is pure consciousness and direct experience; he is present everywhere, the refuge of everything. He dwells in a pot, in cloth, in a banyan tree, in a wall, in a cart, in a monkey.

इसका स्वरूप शुद्ध चेतना और सीधा अनुभव है; यह हर जगह मौजूद है, सबका आसरा है। यह घड़े में है, कपड़े में है, बरगद के पेड़ में है, दीवार में है, गाड़ी में है, बंदर में है।

6.38.15

शिवो हरो हरिर्ब्रह्मा शक्रो वैश्रवणो यमःअनन्तैकपदाधारसत्तामात्रैकविग्रहः ॥ १५ ॥

śivo haro harirbrahmā śakro vaiśravaṇo yamaḥanantaikapadādhārasattāmātraikavigrahaḥ || 15 ||

He is Shiva, Hara, Hari, Brahma, Shakra, Vaishravana, and Yama. His only form is pure existence itself, the one support of that single, endless state.

वही शिव है, हर है, हरि है, ब्रह्मा है, शक्र है, वैश्रवण है, और यम है। उसका एक ही रूप शुद्ध अस्तित्व है, जो उस एक, अनंत अवस्था का इकलौता आधार है।

6.38.16

विवर्तितजगज्जालः कालोऽस्य द्वारपालकः । सशैलभुवनाभोगमिदं ब्रह्माण्डमण्डलम् ॥ १६ ॥

vivartitajagajjālaḥ kālo'sya dvārapālakaḥ | saśailabhuvanābhogamidaṃ brahmāṇḍamaṇḍalam || 16 ||

By him the web of the world is unfolded; Time is his gatekeeper. This is the sphere of the universe together with its mountains and the vast expanse of worlds.

उसी ने संसार का जाल फैलाया है; काल उसका द्वारपाल है। यही है ब्रह्मांड का घेरा, अपने पहाड़ों और लोकों के फैलाव के साथ।

6.38.17

देहकोणोऽस्य कस्मिंश्चित्स्वाङ्गावयवतां गतम् । विचिन्तयेन्महादेवं सहस्रश्रवणेक्षणम् ॥ १७ ॥

dehakoṇo'sya kasmiṃścitsvāṅgāvayavatāṃ gatam | vicintayenmahādevaṃ sahasraśravaṇekṣaṇam || 17 ||

A corner of its body, in some place, has become one of his own limbs. One should meditate on this great god, who has a thousand ears and a thousand eyes.

इसके शरीर का एक कोना, कहीं न कहीं, उसी के अपने अंगों में से एक बन गया है। इस महादेव का ध्यान करना चाहिए, जिसके हज़ार कान और हज़ार आँखें हैं।

6.38.18

सहस्रशिरसं शान्तं सहस्रभुजभूषणम् । सर्वत्रेक्षणशक्त्याढ्यं सर्वतो घ्राणशक्तिकम् ॥ १८ ॥

sahasraśirasaṃ śāntaṃ sahasrabhujabhūṣaṇam | sarvatrekṣaṇaśaktyāḍhyaṃ sarvato ghrāṇaśaktikam || 18 ||

He has a thousand heads and is at peace; he is adorned with a thousand arms. He has the power to see in every direction, and the power to smell in every direction.

उसके हज़ार सिर हैं और वह शांत है; वह हज़ार भुजाओं से सजा है। उसमें हर दिशा में देखने की शक्ति है, और हर दिशा में सूंघने की शक्ति है।

6.38.19

सर्वतः स्पर्शनमयं सर्वतो रसनान्वितम् । सर्वत्र श्रवणाकीर्णं सर्वत्र मननान्वितम् ॥ १९ ॥

sarvataḥ sparśanamayaṃ sarvato rasanānvitam | sarvatra śravaṇākīrṇaṃ sarvatra mananānvitam || 19 ||

He feels touch on every side, and he tastes on every side; he hears on every side, and he thinks on every side.

वह हर तरफ से छूता है और हर तरफ से चखता है; वह हर तरफ से सुनता है और हर तरफ से सोचता है।

6.38.20

सर्वतो मननातीतं सर्वतः परमं शिवम् । सर्वदा सर्वकर्तारं सर्वसंकल्पितार्थदम् ॥ २० ॥

sarvato mananātītaṃ sarvataḥ paramaṃ śivam | sarvadā sarvakartāraṃ sarvasaṃkalpitārthadam || 20 ||

He is beyond thought on every side, and he is the highest good on every side; he always does everything, and he gives whatever anyone wishes for.

वह हर तरफ से सोच विचार से परे है, और वह हर तरफ से सबसे बड़ा कल्याण है; वह हमेशा सब कुछ करता है, और जो कोई जो चाहे, वह उसे देता है।

6.38.21

सर्वभूतान्तरावस्थं सर्वं सर्वैकसाधनम् इति संचिन्त्य देवेशमर्चयेद्विधिवत्ततः ॥ २१ ॥

sarvabhūtāntarāvasthaṃ sarvaṃ sarvaikasādhanam iti saṃcintya deveśamarcayedvidhivattataḥ || 21 ||

He lives inside every being; he is everything, and he alone is the means to everything. Thinking of the lord of the gods in this way, one should then worship him according to the rule.

वह हर जीव के अंदर रहता है; वह ही सब कुछ है, और वही सब कुछ पाने का एकमात्र साधन है। देवताओं के स्वामी के बारे में इस तरह सोचकर, फिर विधि के अनुसार उसकी पूजा करनी चाहिए।

6.38.22

विधानमर्चनस्येदं श्रृणु ब्रह्मविदां वर स्वसंविदात्मा देवोऽयं नोपहारेण पूज्यते ॥ २२ ॥

vidhānamarcasyedaṃ śṛṇu brahmavidāṃ vara svasaṃvidātmā devo'yaṃ nopahāreṇa pūjyate || 22 ||

Listen now, best of those who know Brahman, to this rule of worship. This god, whose very self is his own awareness, is not worshipped by any offering.

अब सुनो, ब्रह्म को जानने वालों में सबसे श्रेष्ठ, पूजा की इस विधि को। इस देवता को, जिसका रूप खुद उसकी अपनी चेतना है, किसी भेंट से नहीं पूजा जाता।

6.38.23

न दीपेन न धूपेन न पुष्पविभवार्पणैः नान्नदानादिदानेन न चन्दनविलेपनैः ॥ २३ ॥

na dīpena na dhūpena na puṣpavibhavārpaṇaiḥ nānnadānādidānena na candanavilepanaiḥ || 23 ||

Not by a lamp, not by incense, not by lavish offerings of flowers; not by giving food and other gifts, not by smearing on sandal paste.

न दीये से, न धूप से, न फूलों की भरमार चढ़ाने से; न अन्न आदि दान देने से, न चंदन लगाने से।

6.38.24

न च कुङ्कुमकर्पूरभोगैश्चित्रैर्न चेतरैः नित्यमक्लेशलभ्येन शीतलेनाऽविनाशिना ॥ २४ ॥

na ca kuṅkumakarpūrabhogaiścitraiḥ na cetaraiḥ nityamakleśalabhyena śītalenā'vināśinā || 24 ||

Not by offerings of saffron and camphor either, special or ordinary; he is worshipped only by what is always gained without hardship, what is cool, and what never dies.

न केसर और कपूर चढ़ाने से भी, चाहे वे खास हों या साधारण; उसकी पूजा केवल उससे होती है जो हमेशा बिना किसी कष्ट के मिलता है, जो शीतल है, और जो कभी नहीं मरता।

6.38.25

एकेनैवाऽमृतेनैष बोधेन स्वेन पूज्यते एतदेव परं ध्यानं पूजैषैव परा स्मृता ॥ २५ ॥

ekenaivā'mṛtenaiṣa bodhena svena pūjyate etadeva paraṃ dhyānaṃ pūjaiṣaiva parā smṛtā || 25 ||

This god is worshipped by one thing alone: the undying nectar that is his own awareness. This alone is the highest meditation, and this alone is remembered as the highest worship.

इस देवता की पूजा केवल एक चीज़ से होती है: वह अमर अमृत जो उसकी अपनी चेतना ही है। यही सबसे बड़ा ध्यान है, और यही सबसे बड़ी पूजा मानी गई है।

6.38.26

यदनारतमन्तस्थशुद्धचिन्मात्रवेदनम् । पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपन्श्वसन् ॥ २६ ॥

yadanāratamantasthaśuddhacinmātravedanam | paśyañśṛṇvanspṛśañjighrannannagacchan svapañśvasan || 26 ||

This is the ceaseless inner experience of pure awareness alone, present while a person sees, hears, touches, smells, eats, walks, sleeps, and breathes,

यह शुद्ध चेतना का बिना रुके चलने वाला भीतरी अनुभव है, जो तब भी बना रहता है जब इंसान देखता है, सुनता है, छूता है, सूंघता है, खाता है, चलता है, सोता है, और सांस लेता है,

6.38.27

प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्शुद्धसंविन्मयो भवेत् । ध्यानामृतेन संपूज्य स्वयमात्मानमीश्वरम् ॥ २७ ॥

pralapanvisṛjan gṛhṇan śuddhasaṃvinmayo bhavet | dhyānāmṛtena saṃpūjya svayamātmānamīśvaram || 27 ||

while he speaks, excretes, and holds things, let him become one with pure awareness. Worshipping his own self, the lord, all by himself, with the nectar of meditation,

और जब वह बोलता है, मल त्यागता है, और चीज़ें पकड़ता है, तब भी वह शुद्ध चेतना से एक हो जाए। ध्यान के अमृत से, खुद अपने आप, अपने ही आत्मा को, जो स्वामी है, पूजकर,

6.38.28

परमास्वादयुक्तेन मुक्तेन कुसुमेहितैः । ध्यानोपहार एवात्मा ध्यानं ह्यस्य समीहितम् ॥ २८ ॥

paramāsvādayuktena muktena kusumehitaiḥ | dhyānopahāra evātmā dhyānaṃ hyasy samīhitam || 28 ||

joined with the highest delight, set free, and with the flowers he longs for, this offering of meditation is the self itself; meditation truly is what he longs for.

सबसे बड़े आनंद से जुड़ा, मुक्त, और उन फूलों के साथ जिनकी वह चाह रखता है, ध्यान की यह भेंट खुद आत्मा ही है; ध्यान ही सचमुच वह चीज़ है जो वह चाहता है।

6.38.29

ध्यानमर्घ्यं च पाद्यं च शुद्धसंवेदनात्मकम् । ध्यानसंवेदनं पुष्पं सर्वं ध्यानपरं विदुः ॥ २९ ॥

dhyānamarghyaṃ ca pādyaṃ ca śuddhasaṃvedanātmakam | dhyānasaṃvedanaṃ puṣpaṃ sarvaṃ dhyānaparaṃ viduḥ || 29 ||

Meditation is the water offered to a guest, and the water for washing the feet, made entirely of pure awareness. The felt experience of meditation is the flower. They know that everything here centers on meditation.

ध्यान ही मेहमान को दिया जाने वाला जल है, और पैर धोने का जल भी, जो पूरी तरह शुद्ध चेतना से बना है। ध्यान का अनुभव ही फूल है। ज्ञानी जानते हैं कि यहाँ सब कुछ ध्यान पर ही टिका है।

6.38.30

विना तेनेतरेणायमात्मा लभ्यत एव नो । ध्यानात्प्रसादमायाति सर्वभोगसुखश्रियः ॥ ३० ॥

vinā tenetareṇāyamātmā labhyata eva no | dhyānātprasādamāyāti sarvabhogasukhaśriyaḥ || 30 ||

Except by that, by nothing else, can this self ever be reached. Through meditation, one comes to a grace that is the glory of every pleasure and happiness.

उसके सिवा, किसी और चीज़ से, यह आत्मा कभी नहीं मिलता। ध्यान से इंसान उस कृपा को पाता है, जो हर सुख और आनंद की शान है।

6.38.31

अयमात्मा मुने भुङ्क्ते देहरूपो गृहे यथा । ध्यानेनानेन सुमते निमेषांस्तु त्रयोदश ॥ ३१ ॥

ayamātmā mune bhuṅkte deharūpo gṛhe yathā | dhyānenānena sumate nimeṣāṃstu trayodaśa || 31 ||

O sage, this self enjoys, in the shape of the body, just as one does in a house. O wise one, by this meditation, for thirteen blinks of an eye,

हे मुनि, यह आत्मा शरीर के रूप में वैसे ही भोगता है, जैसे कोई घर में भोगता है। हे बुद्धिमान, इस ध्यान से, आँख के तेरह झपकने भर के समय में,

6.38.32

मूढोऽपि पूजयित्वेशं गोप्रदानफलं लभेत् । पूजयित्वा निमेषाणां शतमेकमिति प्रभुम् ॥ ३२ ॥

mūḍho'pi pūjayitveśaṃ gopradānaphalaṃ labhet pūjayitvā nimeṣāṇāṃ śatamekamiti prabhum || 32 ||

even a fool, having worshipped the lord for that long, gets the reward of the gift of a cow. Having worshipped the lord thus for a hundred blinks of an eye,

एक मूर्ख भी, इतनी देर स्वामी की पूजा करके, गाय दान करने जितना फल पाता है। इस तरह सौ बार आँख झपकने भर के समय तक स्वामी की पूजा करके,

6.38.33

अश्वमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः । पूजयित्वा स्वमात्मानं घटिकार्धमिति प्रभुम् ॥ ३३ ॥

aśvamedhasya yajñasya phalaṃ prāpnoti mānavaḥ | pūjayitvā svamātmānaṃ ghaṭikārdhamiti prabhum || 33 ||

a man gets the reward of the horse-sacrifice. Having worshipped his own self, the lord, for half a ghatika,

एक इंसान अश्वमेध यज्ञ जितना फल पाता है। आधी घड़ी तक अपने आत्मा को, जो स्वामी है, पूजकर,

6.38.34

अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः । ध्यानवल्युपहारेण स्वयमात्मानमात्मना ॥ ३४ ॥

aśvamedhasahasrasya phalaṃ prāpnoti mānavaḥ | dhyānavalyupahāreṇa svayamātmānamātmanā || 34 ||

a man gets the reward of a thousand horse-sacrifices, worshipping the self by the self, with the offering of meditation.

एक इंसान हज़ार अश्वमेध यज्ञों जितना फल पाता है, ध्यान की भेंट से, खुद आत्मा को आत्मा के द्वारा पूजकर।

6.38.35

घटिकां पूजयेद्यस्तु राजसूयं लभेत सः । मध्याह्नपूजनादित्थं राजसूयैकलक्षभाक् ॥ ३५ ॥

ghaṭikāṃ pūjayedyastu rājasūyaṃ labhet saḥ | madhyāhnpūjanādithaṃ rājasūyaikalakṣabhāk || 35 ||

Whoever worships for a whole ghatika gets the reward of the rajasuya sacrifice. Worshipping thus at midday, he shares in a hundred thousand rajasuya sacrifices.

जो कोई पूरी एक घड़ी तक पूजा करता है, वह राजसूय यज्ञ जितना फल पाता है। इस तरह दोपहर में पूजा करने से, वह एक लाख राजसूय यज्ञों का भागी बनता है।

6.38.36

दिवसं पूजयित्वैवं परे धाम्नि वसेन्नरः एषोऽसौ परमो योग एषा सा परमा क्रिया बाह्यसंपूजनं प्रोक्तमेतदुत्तममात्मनः ॥ ३६ ॥

divasaṃ pūjayitvaiavaṃ pare dhāmni vasennaraḥ eṣo'sau paramo yoga eṣā sā paramā kriyā bāhyasaṃpūjanaṃ proktametaduttamamātmanaḥ || 36 ||

Having worshipped in this way for a whole day, a man comes to dwell in the highest abode. This is the highest yoga; this is the highest act. This has been called the outward worship, the highest worship there is of the self.

इस तरह पूरे दिन पूजा करके, इंसान सबसे ऊँचे धाम में जा बसता है। यही सबसे बड़ा योग है; यही सबसे बड़ा कर्म है। इसे बाहरी पूजा कहा गया है, आत्मा की सबसे बड़ी पूजा।

6.38.37

एतत्पवित्रमखिलाघविघातहेतुं यस्त्वाचरिष्यति नरः क्षणमप्यखिन्नः तं वन्दयिष्यति सुरासुरलोकपूगः प्राप्तास्पदं जगति मामिव मुक्तमात्मन् ॥ ३७ ॥

etatpavitramakhilāghavighātahetuṃ yastvācariṣyati naraḥ kṣaṇamapyakhinnāḥ taṃ vandayiṣyati surāsuralokapūgaḥ prāptāspadaṃ jagati māmiva muktamātman || 37 ||

Whatever man practices this pure rite, the cause that destroys all sin, even for a single moment, without growing weary, him the crowds of the worlds of gods and demons will honor, as one who has won his place in the world, freed like me, dear one.

जो भी इंसान इस पवित्र काम को, जो हर पाप को नष्ट करने वाला है, एक पल के लिए भी बिना थके करता है, उसे देवताओं और असुरों के लोकों की भीड़ आदर देगी, क्योंकि वह इस दुनिया में अपनी जगह पा चुका है, मेरी तरह मुक्त, हे प्रिय।

Chapter 39

6.39.1

ईश्वर उवाच । पावनं पावनानां यद्यत्सर्वतमसां क्षयः । तदिदानीं प्रवक्ष्येऽहमन्तःपूजनमात्मनः ॥ १ ॥

īśvara uvāca | pāvanaṃ pāvanānāṃ yadyatsarvatamasāṃ kṣayaḥ | tadidānīṃ pravakṣye'hamantaḥpūjanamātmanaḥ || 1 ||

Ishvara said: Now I will teach the inner worship of the self, which purifies even the purest and destroys all darkness.

ईश्वर ने कहा: अब मैं आत्मा की भीतरी पूजा के बारे में बताऊँगा, जो हर पवित्र चीज़ से भी ज़्यादा पवित्र करने वाली है और सारे अंधेरे को मिटा देती है।

6.39.2

गच्छतस्तिष्ठतश्चैव जाग्रतः स्वपतोऽपि च । सर्वाचारगता पूजा नित्यं ध्यानात्मिका त्वियम् ॥ २ ॥

gacchatastiṣṭhatascaiva jāgrataḥ svapato'pi ca | sarvācāragatā pūjā nityaṃ dhyānātmikā tviyam || 2 ||

Whether walking, standing, awake, or even asleep, this worship stays with every act; it is always simply meditation.

चाहे चलते हुए हों, खड़े हों, जागते हों या सोते हुए भी हों, यह पूजा हर काम के साथ चलती है; यह हमेशा बस ध्यान ही है।

6.39.3

नित्यमेव शरीरस्थमिमं ध्यायेत्परं शिवम् । सर्वप्रत्ययकर्तारं स्वयमात्मानमात्मना ॥ ३ ॥

nityameva śarīrasthamimaṃ dhyāyetparaṃ śivam | sarvapratyayakartāraṃ svayamātmānamātmanā || 3 ||

A person should always meditate, by their own self, on this supreme Shiva who lives in the body, who is one's own self, and who makes every act of knowing happen.

इंसान को हमेशा अपने आप से, शरीर में रहने वाले इस परम शिव का ध्यान करना चाहिए, जो खुद अपनी आत्मा है और जो हर जानने की क्रिया करवाता है।

6.39.4

शयानमुत्थितं चैव व्रजन्तमथवा स्थितम् । स्पृशन्तमभितः स्पृश्यं त्यजन्तमथवाऽभितः ॥ ४ ॥

śayānamutthitaṃ caiva vrajantamathavā sthitam | spṛśantamabhitaḥ spṛśyaṃ tyajantamathavā'bhitaḥ || 4 ||

See him lying down and rising, walking or standing still, touching on every side what can be touched, or letting it go on every side.

उसे लेटे हुए और उठते हुए, चलते हुए या खड़े हुए, चारों तरफ़ छूने लायक चीज़ को छूते हुए, या चारों तरफ़ उसे छोड़ते हुए देखे।

6.39.5

भुञ्जानं संत्यजन्तं च भोगानाभोगपीवरान् । बाह्यार्थपरिकर्तारं सर्वकार्यस्वरूपदम् ॥ ५ ॥

bhujjānaṃ saṃtyajantaṃ ca bhogānābhogapīvarān | bāhyārthaparikartāraṃ sarvakāryasvarūpadam || 5 ||

Enjoying rich pleasures and giving them up, fully caught up with outer things, giving his own shape to every act.

भरपूर सुख-भोगों को भोगते हुए और छोड़ते हुए, बाहर की चीज़ों से पूरी तरह जुड़े हुए, और हर काम को अपना रूप देते हुए।

6.39.6

देहलिङ्गेषु शान्तस्थं त्यक्तलिङ्गान्तरादिकम् यथाप्राप्तार्थसंवित्त्या बोधलिङ्गं प्रपूजयेत् ॥ ६ ॥

dehaliṅgeṣu śāntasthaṃ tyaktaliṅgāntarādikam yathāprāptārthasaṃvittyā bodhaliṅgaṃ prapūjayet || 6 ||

He stays calm within the body's organs, yet has let go of every other, inner mark. Through the knowing of whatever comes to hand, worship him as the emblem of pure awareness.

वह शरीर के अंगों में शांत होकर रहता है, फिर भी उसने भीतर के बाकी सारे चिन्ह छोड़ दिए हैं। जो भी चीज़ सामने आए, उसके ज्ञान से, उसे शुद्ध चेतना के प्रतीक के रूप में पूजे।

6.39.7

प्रवाहपतितार्थस्थः स्वबोधस्नानशुद्धिमान् नित्यावबोधार्हणया बोधलिङ्गं प्रपूजयेत् ॥ ७ ॥

pravāhapatitārthasthaḥ svabodhasnānaśuddhimān nityāvabodhārhaṇayā bodhaliṅgaṃ prapūjayet || 7 ||

He stands among things that come and go like a flowing stream, and he is made pure by bathing in his own awareness. Worship this emblem of pure awareness with the endless offering of that same awareness.

वह उन चीज़ों के बीच रहता है जो धारा की तरह आती-जाती रहती हैं, और वह अपनी ही चेतना के स्नान से शुद्ध होता है। इस शुद्ध चेतना के प्रतीक को उसी लगातार चेतना के अर्पण से पूजे।

6.39.8

आदित्यभावनाभोगभाविताम्बरभास्वरम् शशाङ्कभावनाभोगभावितेन्दुतयोदितम् ॥ ८ ॥

ādityabhāvanābhogabhāvitāmbarabhāsvaraṃ śaśāṅkabhāvanābhogabhāvitendutayoditam || 8 ||

He shines as the sky lit up when the sun is fully held in thought; he rises as the moon when the moon is fully held in thought.

जब सूरज का पूरा ध्यान किया जाए तो वह सूरज से जगमगाते आसमान के रूप में चमकता है; जब चाँद का पूरा ध्यान किया जाए तो वह चाँद बनकर उगता है।

6.39.9

प्रतिभासपदार्थौघनित्यावगतसंविदम् द्वारैर्वहन्तं शारीरैर्मुखे प्राणस्वरूपिणम् ॥ ९ ॥

pratibhāsapadārthaughaniyāvagatasaṃvidam dvārairvahantaṃ śārīrairmukhe prāṇasvarūpiṇam || 9 ||

He is the awareness that always knows the whole flood of things that appear; he flows out through the body's gateways, taking the form of the breath at the mouth.

वह वही चेतना है जो दिखने वाली हर चीज़ की बाढ़ को हमेशा जानती रहती है; वह शरीर के दरवाज़ों से होकर बहता है, और मुँह पर साँस का रूप ले लेता है।

6.39.10

रसीकृत्य रसं प्राणस्वान्तोदात्ततुरङ्गमम् प्राणापानरथारूढं गूढमन्तर्गुहाशयम् ॥ १० ॥

rasīkṛtya rasaṃ prāṇasvāntodāttaturagamam prāṇāpānarathārūḍhaṃ gūḍhamantarguhāśayam || 10 ||

He turns every taste into himself and becomes the fine horse of breath rising within the heart. Riding the chariot of the in-breath and the out-breath, he stays hidden, living in the secret cave of the heart.

वह हर स्वाद को अपने में बदल लेता है और दिल में उठने वाले प्राण के सुंदर घोड़े जैसा बन जाता है। वह साँस के अंदर-बाहर जाने के रथ पर सवार होकर, छिपा हुआ, दिल की गुफा में रहता है।

6.39.11

ज्ञातारं ज्ञेयदृष्टीनां कर्तारं सर्वकर्मणाम्। भोक्तारं सर्वभोज्यानां स्मर्तारं सर्वसंविदाम्॥ ११॥

jñātāraṃ jñeyadṛṣṭīnāṃ kartāraṃ sarvakarmaṇām | bhoktāraṃ sarvabhojyānāṃ smartāraṃ sarvasaṃvidām || 11 ||

He is the knower of every view of what can be known, the doer of every deed, the enjoyer of everything that can be enjoyed, the one who remembers every act of knowing.

वह हर जानी जाने वाली चीज़ के हर नज़रिए को जानता है, हर काम को करता है, हर भोगी जाने वाली चीज़ को भोगता है, और हर जाने हुए को याद रखता है।

6.39.12

सम्यक्संविदिताङ्गौघं भावाभावनभावितम्। आभासभास्वरं भूरि सर्वगं चिन्तयेच्छिवम्॥ १२॥

samyaksamviditāṅgaughaṃ bhāvābhāvanabhāvitam | ābhāsabhāsvaraṃ bhūri sarvagaṃ cintayecchivam || 12 ||

Think of this Shiva, whose whole body of parts is known as one, who takes shape through the thought of what exists and what does not, who shines out in everything that appears, vast and present everywhere.

इस शिव का ध्यान करे, जिसके सारे अंग मिलकर एक ही जाने जाते हैं, जो होने और न होने के ख़याल से आकार लेता है, जो हर दिखने वाली चीज़ में चमकता है, और जो बहुत बड़ा होकर हर जगह मौजूद है।

6.39.13

निष्कलं सकलं चैव देहस्थं व्योमचारिणम्। अरञ्जितं रञ्जितं च नित्यमङ्गाङ्गसंविदम्॥ १३॥

niṣkalaṃ sakalaṃ caiva dehasthaṃ vyomacāriṇam | arañjitaṃ rañjitaṃ ca nityamangāṅgasamvidam || 13 ||

He is without parts, and he is with parts; he lives in the body, and he moves through the sky; he is free of color, and he is colored; he is, always, the awareness inside every single limb.

वह बिना अंगों वाला भी है और अंगों वाला भी; वह शरीर में भी रहता है और आसमान में भी घूमता है; वह बेरंग भी है और रंगा हुआ भी; वह हमेशा हर एक अंग की चेतना है।

6.39.14

मनोमननशक्तिस्थं प्राणापानान्तरोदितम्। हृत्कण्ठतालुमध्यस्थं भ्रनासापुटपीठगम्॥ १४॥

manomananaśaktisthaṃ prāṇāpānāntaroditam | hṛtkāṇṭhatālumadhyasthaṃ bhranāsāpuṭapīṭhagam || 14 ||

He is present in the mind's power to think; he rises between the in-breath and the out-breath; he sits in the middle of the heart, the throat, and the palate; he rests in the seat between the eyebrows and the nostrils.

वह मन की सोचने की ताक़त में मौजूद है, वह साँस के अंदर जाने और बाहर आने के बीच उठता है, वह दिल, गले और तालू के बीच में बैठा है, वह भौंहों और नथुनों की जगह में रहता है।

6.39.15

षट्त्रिंशत्पदकोटिस्थमुन्मन्यन्तदशातिगम्। कुर्वन्तमन्तःशब्दादींश्चोदयन्तं मनःखगम्॥ १५॥

ṣaṭtriṃśatpadakoṭisthamunmanyantadaśātigam | kurvantamantaḥśabdādīṃścodayantaṃ manaḥkhagam || 15 ||

He is present in the countless states of the thirty-six parts, and he goes beyond even the state where the mind stops. He stirs up the inner sounds, and he drives the mind onward like a bird in flight.

वह छत्तीस तत्वों की अनगिनत अवस्थाओं में मौजूद है, और वह उस हालत से भी आगे जाता है जहाँ मन रुक जाता है। वह भीतर की आवाज़ें पैदा करता है, और मन को, जो एक उड़ते पंछी जैसा है, आगे बढ़ाता है।

6.39.16

विकल्पिन्यविकल्पे च द्विविधे वाक्पथे स्थितम्। तिले तैलमिवाङ्गेषु सर्वेष्वेवान्तरं स्थितम्॥ १६॥

vikalpinyavikalpe ca dvividhe vākpathe sthitam | tile tailamivāṅgeṣu sarveṣvevāntaraṃ sthitam || 16 ||

He is present in both paths of speech, the one full of thought and the one free of thought, and, like oil hidden inside a sesame seed, he is present inside every limb.

वह बोलने के दोनों रास्तों में मौजूद है, एक जिसमें विचार होते हैं और एक जिसमें नहीं होते, और जैसे तिल के अंदर तेल छिपा होता है, वैसे ही वह हर अंग के अंदर मौजूद है।

6.39.17

कलाकलङ्करहितं कठिनं च कलागणैः। एकदेशे सुहृत्पद्मे सर्वदेहे च संस्थितम्॥ १७॥

kalākalaṅkarahitaṃ kaṭhinaṃ ca kalāgaṇaiḥ | ekadeśe suhṛtpadme sarvadehe ca saṃsthitam || 17 ||

He carries no stain from his many parts, yet he is made firm by that same multitude of parts. He is settled in one place, the lotus of the heart, and he is present, too, in the whole body.

वह अपने कई हिस्सों से आया कोई दाग नहीं रखता, फिर भी उन्हीं कई हिस्सों से मज़बूत बना रहता है। वह एक जगह, दिल के कमल में, बसा है, और साथ ही पूरे शरीर में भी मौजूद है।

6.39.18

चिन्मात्रममलाभासं कलाकलनकल्पनम्। प्रत्यक्षदृश्यं सर्वत्र स्वानुभूतिमयात्मकम्॥ १८॥

cinmātramamalābhāsaṃ kalākalanakalpanam | pratyakṣadṛśyaṃ sarvatra svānubhūtimayātmakam || 18 ||

He is pure awareness alone, shining without any stain; he is the very thought that counts up all the parts; he can be seen directly everywhere, made entirely out of one's own experience.

वह सिर्फ़ शुद्ध चेतना है, बिना किसी दाग के चमकने वाला; वह वही ख़याल है जो सारे हिस्सों को गिनता है; वह हर जगह सीधे दिखाई देता है, और पूरी तरह अपने ही अनुभव से बना है।

6.39.19

प्रत्यक्चेतनमात्मीयमर्थित्वेन पुनः स्थितम्। पदार्थानामुपेत्याशु क्षणाद्द्वित्वमिवागतम्॥ १९॥

pratyakcetanamātmīyamarthitvena punaḥ sthitam | padārthānāmupetyāśu kṣaṇāddvitvamivāgatam || 19 ||

He is the awareness turned inward, one's very own self, yet he appears again as one who wants and needs. Reaching quickly toward things, in a single moment he seems to have become two.

वह भीतर की ओर मुड़ी हुई चेतना है, जो अपनी ही आत्मा है, फिर भी वह चाहने और ज़रूरत रखने वाले के रूप में फिर से आ जाता है। चीज़ों की तरफ़ तेज़ी से बढ़कर, वह एक ही पल में मानो दो हो गया हो।

6.39.20

सहस्तपादावयवः सकेशनखदन्तकः । स्वदेहसंविदाभासो देवोऽयमिति भावयेत् ॥ २० ॥

sahastapādāvayavaḥ sakeśanakhadantakaḥ | svadehasaṃvidābhāso devo'yamiti bhāvayet || 20 ||

With a thousand feet and limbs, with hair, nails, and teeth, this shining of awareness in one's own body, one should hold in mind, this is God.

हज़ार पैरों और अंगों वाला, बाल-नाखून-दांतों वाला, अपने ही शरीर में चेतना की यह चमक, इसे मन में यह मानकर देखे: यह भगवान है।

6.39.21

विचित्राः शक्तयो बह्व्यो नानाचारा मनोदशाम् । उपासते मामनिशं पत्न्यः कान्तमिवोत्तमम् ॥ २१ ॥

vicitrāḥ śaktayo bahvyo nānācārā manodaśām | upāsate māmaniśaṃ patnyaḥ kāntamivotthamam || 21 ||

Many wonderful powers of many kinds, each acting in its own way, worship me without end, in the state of the mind, the way wives attend an excellent husband.

अनेक तरह की अनोखी शक्तियाँ, जिनका स्वभाव अलग-अलग है, मन की उस हालत में मुझे हमेशा पूजती रहती हैं, जैसे पत्नियाँ किसी बेहतरीन पति की सेवा करती हैं।

6.39.22

मनो मे द्वारपालोऽयं निवेदितजगत्त्रयः । चिन्तेयं मे प्रतीहारी द्वारस्था शुद्धरूपिणी ॥ २२ ॥

mano me dvārapālo'yaṃ niveditajagattrayaḥ | cinteyaṃ me pratīhārī dvārasthā śuddharūpiṇī || 22 ||

This mind of mine is the gatekeeper who brings me news of the three worlds. This thought of mine is the female doorkeeper, standing at the gate, pure in form.

यह मन मेरा द्वारपाल है, जो तीनों लोकों की खबर मुझे देता है। यह मेरी सोच द्वार पर खड़ी शुद्ध रूप वाली द्वारपालिका है।

6.39.23

शक्तिर्ममात्मिका बुद्धिः क्रिया चैव वराङ्गना । ज्ञानानि च विचित्राणि भूषणान्यङ्गगानि मे ॥ २३ ॥

śaktirmamātmikā buddhiḥ kriyā caiva varāṅganā | jñānāni ca vicitrāṇi bhūṣaṇānyaṅgagāni me || 23 ||

My power is the intellect, and my action too is a beautiful woman. And my many kinds of knowledge are the ornaments on my limbs.

मेरी शक्ति ही बुद्धि है, और मेरी क्रिया भी एक सुंदर स्त्री है। और मेरे अनेक प्रकार के ज्ञान मेरे अंगों के आभूषण हैं।

6.39.24

कर्मेन्द्रियाणि द्वाराणि बुद्धीन्द्रियगणैः सह । अयं सोऽहमनन्तात्मा व्यवच्छेदोज्झिताकृतिः ॥ २४ ॥

karmeindriyāṇi dvārāṇi buddhīndriyagaṇaiḥ saha | ayaṃ so'hamanantātmā vyavacchedojjhitākṛtiḥ || 24 ||

The organs of action, together with the group of organs of perception, are its doors. I am this, I am that, the infinite self, whose form has cast off all division.

कर्म करने वाली इंद्रियाँ, ज्ञान की इंद्रियों के समूह के साथ, इसके द्वार हैं। मैं यही हूँ, वही हूँ, वह अनंत आत्मा, जिसका रूप हर भेद से मुक्त है।

6.39.25

तिष्ठामि भरितैकात्मा पूर्णः सर्वावपूरकः । इति दैवीमुपाश्रित्य स्वच्छामात्मचमत्कृतिम् ॥ २५ ॥

tiṣṭhāmi bharitaikātmā pūrṇaḥ sarvāvapūrakaḥ | iti daivīmupāśritya svacchāmātmacamatkṛtim || 25 ||

I remain as the one self, full and complete, filling everything entirely, resting on this clear, divine wonder that is my own self.

मैं एक अकेला आत्मा होकर सदा बना रहता हूँ, पूर्ण और सम्पूर्ण, सबको भरने वाला, अपने इस निर्मल दिव्य आत्मचमत्कार का सहारा लेकर।

6.39.26

दैवत्वपरिपूर्णोऽन्तरदीनात्मावतिष्ठते । नास्तमेति न चोदेति न तुष्यति न कुप्यति ॥ २६ ॥

daivatvaparipūrṇo'ntaradīnātmāvatiṣṭhate | nāstameti na codeti na tuṣyati na kupyati || 26 ||

Full of that divinity, the inner self, never downcast, stands firm. It never sets and never rises, it is never pleased and never angered.

उस दिव्यता से भरपूर, भीतर की आत्मा कभी उदास नहीं होती, स्थिर रहती है। न वह अस्त होती है, न उदय होती है, न प्रसन्न होती है, न क्रोधित होती है।

6.39.27

न तृप्तिं न क्षुधं याति नाभिवाञ्छति नोज्झति । समः समसमाचारः समाभासः समाकृतिः ॥ २७ ॥

na tṛptiṃ na kṣudhaṃ yāti nābhivāñchati nojjhati | samaḥ samasamācāraḥ samābhāsaḥ samākṛtiḥ || 27 ||

It knows neither being full nor being hungry; it neither longs for anything nor gives anything up. It is even, its conduct is even, its look is even, its form is even.

वह न तृप्ति पाती है, न भूख; न वह किसी चीज़ की चाह करती है, न किसी चीज़ को छोड़ती है। वह सम है, उसका आचरण सम है, उसकी छवि सम है, उसका रूप सम है।

6.39.28

सौम्यतामलमायातः समन्तात्सुन्दराशयः । आदेहमेक एवासावव्युच्छिन्नमहामतिः ॥ २८ ॥

saumyatāmalamāyātaḥ samantātsundarāśayaḥ | ādeham eka evāsāv avyucchinnamahāmatiḥ || 28 ||

It has become wholly gentle, lovely in nature on every side. Even within the body, it remains this one alone, its great wisdom never broken.

वह पूरी तरह सौम्य हो गई है, चारों ओर से सुंदर स्वभाव वाली। शरीर के भीतर रहते हुए भी वह अकेली ही रहती है, उसकी महान बुद्धि कभी खंडित नहीं होती।

6.39.29

देवार्चनं करोत्येव दीर्घदीर्घमहर्निशम् । चित्तत्त्वचलितो देहो देवोऽस्य समुदाहृतः ॥ २९ ॥

devārcanaṃ karotyeva dīrghadīrghamaharniśam | cittattvacalito deho devo'sya samudāhṛtaḥ || 29 ||

It goes on worshipping god for a very long time, day and night. This body, set in motion by the mind, is declared to be its god.

वह लंबे समय तक, दिन-रात, देव-पूजा करती रहती है। यह शरीर, जो मन के द्वारा गति पाता है, इसका देवता कहलाता है।

6.39.30

यथाप्राप्तेन सर्वेण तमर्चयति वस्तुना । समया सर्वया बुद्ध्या चिन्मात्रं देवचित्परम् ॥ ३० ॥

yathāprāptena sarveṇa tamarcayati vastunā | samayā sarvayā buddhyā cinmātraṃ devacitparam || 30 ||

With whatever comes, with all of it, one worships that one, keeping the understanding equal toward everything; that one who is pure awareness itself, the highest divine consciousness.

जो कुछ भी जैसे मिले, उस सब से उसकी पूजा की जाती है, हर चीज़ के प्रति समान बुद्धि रखते हुए; उस शुद्ध चेतना मात्र की, जो परम दिव्य चित्त है।

6.39.31

यथाप्राप्तक्रमोत्थेन सर्वार्थेन समर्चयेत् । मनागपि न कर्तव्यो यत्नोऽत्रापूर्ववस्तुनि ॥ ३१ ॥

yathāprāptakramotthena sarvārthena samarcayet | manāgapi na kartavyo yatno'trāpūrvavastuni || 31 ||

One should worship him with whatever comes, in whatever order it comes. Not even the smallest effort should be made here to obtain some new, unattained thing.

जो कुछ भी जिस क्रम में मिले, उसी से उसकी पूजा करनी चाहिए। यहाँ किसी नई, अप्राप्त वस्तु को पाने के लिए तनिक भी प्रयत्न नहीं करना चाहिए।

6.39.32

प्राप्तदेहतया नित्यं तथार्थक्रिययाऽनया । कामसंसेवनेनाऽथ पूजयेच्छोभनं विभुम् ॥ ३२ ॥

prāptadehatayā nityaṃ tathārthakriyayā'nayā | kāmasaṃsevanenā'tha pūjayecchobhanaṃ vibhum || 32 ||

With this body one has been given, always; with this action done for a purpose; and with the pursuit of one's desires, one should worship the radiant, all-pervading lord.

इस प्राप्त शरीर के द्वारा सदा, इसी उद्देश्यपूर्ण क्रिया के द्वारा, और कामनाओं की पूर्ति के द्वारा, उस सुंदर सर्वव्यापी प्रभु की पूजा करनी चाहिए।

6.39.33

भक्ष्यभोज्यान्नपानेन नानाविभवशालिना । शयनासनयानेन यथाप्तेनार्चयेच्छिवम् ॥ ३३ ॥

bhakṣyabhojyānnapānena nānāvibhavashālinā | śayanāsanayānena yathāptenārcayecchivam || 33 ||

With food to chew and food to eat, with grain and drink, rich with every kind of plenty; with bed, seat and carriage, just as one gets them, one should worship the auspicious one.

खाने योग्य और चबाने योग्य भोजन से, अन्न और पेय से, जो अनेक प्रकार के वैभव से भरपूर हों; बिस्तर, आसन और सवारी से, जैसे भी मिलें, उस मंगलमय की पूजा करनी चाहिए।

6.39.34

कान्तान्नपानसंभोगसंभारादिविलासिना । सुखेन सर्वरूपेण संबुद्ध्याऽऽत्मानमर्चयेत् ॥ ३४ ॥

kāntānnapānasambhogasaṃbhārādivilāsinā | sukhena sarvarūpeṇa saṃbuddhyā''tmānamarcayet || 34 ||

With the pleasure of fine food and drink, of enjoyment, of abundance and the like; with happiness of every kind, and with full awareness, one should worship the self.

सुंदर भोजन, पेय, भोग और सुख-साधनों आदि से मिलने वाले आनंद से; हर प्रकार के सुख से, पूरी सजगता के साथ, आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.35

आधिव्याधिपरीतेन मोहसंरम्भशालिना । सर्वोपद्रवदुःखेन प्राप्तेनात्मानमर्चयेत् ॥ ३५ ॥

ādhiyādhivyādhiparītena mohasaṃrambhaśālinā | sarvopadravaduḥkhena prāptenātmānamarcayet || 35 ||

With mental anguish and bodily illness, with delusion and agitation, with every calamity and pain that comes, one should worship the self.

मानसिक पीड़ा और शारीरिक रोग से, मोह और उलझन से, जो भी विपत्ति और दुख आ पड़े उससे, आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.36

समस्तैश्च समस्तानां चेष्टानां जगतः स्थितेः । मृतिजीवितस्वप्नाद्यैः प्राप्तैरात्मानमर्चयेत् ॥ ३६ ॥

samastaiśca samastānāṃ ceṣṭānāṃ jagataḥ sthiteḥ | mṛtijīvitasvapnādyaiḥ prāptairātmānamarcayet || 36 ||

And with all the countless doings that make up the world's ongoing life, with death, with life, with dreams and all such things, just as they come, one should worship the self.

और संसार की निरंतर चाल में होने वाली सारी गतिविधियों से, मृत्यु, जीवन, स्वप्न आदि जो कुछ भी मिले उससे, आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.37

दारिद्र्येणाथ राज्येन प्रवाहपतितात्मना । विचित्रचेष्टापुष्पेण शुद्धात्मानं समर्चयेत् ॥ ३७ ॥

dāridryeṇātha rājyena pravāhapatitātmanā | vicitracēṣṭāpuṣpēṇa śuddhātmānaṃ samarcayet || 37 ||

With poverty, and with a kingdom, letting the self fall into whatever stream of events comes; with the flower of all these various doings, one should worship the pure self.

दरिद्रता से, और राज्य से, जो भी घटनाओं की धारा में बहता आए उसी से; इन विविध कर्मों के फूल से, शुद्ध आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.38

नानाकलहकल्लोललनोल्लासशालिना । रागद्वेषविलासेन सौम्यमात्मानमर्चयेत् ॥ ३८ ॥

nānākalahakallolalalanollāsaśālinā | rāgadveṣavilāsena saumyamātmānamarcayet || 38 ||

With the delight women take amid the many surging waves of quarrels, and with the play of liking and disliking, one should worship the gentle self.

झगड़ों की अनेक लहरों में स्त्रियों के हर्ष-उल्लास से, और राग-द्वेष के खेल से, उस सौम्य आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.39

सतां हृदयगामिन्या रूढया शशिशीतया । मैत्र्या माधुर्यधर्मिण्या हृत्स्थमात्मानमर्चयेत् ॥ ३९ ॥

satāṃ hṛdayagāminyā rūḍhayā śaśiśītayā | maitryā mādhuryadharmiṇyā hṛtsthamātmānamarcayet || 39 ||

With a friendliness that reaches into the hearts of good people, deep-rooted, cool like the moon, and sweet by nature, one should worship the self that dwells in the heart.

सज्जनों के हृदय तक पहुँचने वाली, गहरी जड़ें जमाए हुए, चाँद जैसी शीतल, और मधुर स्वभाव वाली मैत्री से, हृदय में बसी आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.40

उपेक्षया करुणया सदा मुदितया हृदि । शुद्धया शक्तिपद्धत्या बोधेनात्मानमर्चयेत् ॥ ४० ॥

upekṣayā karuṇayā sadā muditayā hṛdi | śuddhayā śaktipaddhatyā bodhenātmānamarcayet || 40 ||

With equanimity, with compassion, with a heart always glad; by the pure path of one's own power, and with understanding, one should worship the self.

उपेक्षा भाव से, करुणा से, सदा प्रसन्न हृदय से; अपनी शक्ति के शुद्ध मार्ग से, और समझ से, आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.41

आकस्मिकोपयातेन स्थितेनानियतेन च । भोगाभोगैकभोगेन प्राप्तेनात्मानमर्चयेत् ॥ ४१ ॥

ākasmikopayātena sthitenaaniyatena ca | bhogābhogaikebogen prāptenātmānamarcayet || 41 ||

With what arrives suddenly, with what stays fixed, and with what is uncertain; with the single experience that holds both pleasure and its absence, just as it comes, one should worship the self.

जो अचानक आ जाए, जो स्थिर हो, और जो अनिश्चित हो, उस सबसे; भोग और अभोग दोनों को एक ही अनुभव मानते हुए, जैसे भी मिले, आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.42

भोगानामनिषिद्धानां निषिद्धानां च सर्वदा। त्यागेन वातिरागेण स्वात्मानं शुद्धमर्चयेत्॥ ४२॥

bhogānāmaniṣiddhānāṃ niṣiddhānāṃ ca sarvadā | tyāgena vātirāgeṇa svātmānaṃ śuddhamarcayet || 42 ||

Of pleasures allowed and pleasures forbidden, always, whether by giving them up or by pursuing them with passion, one should worship one's own pure self.

स्वीकृत और निषिद्ध, दोनों प्रकार के भोगों को सदा, चाहे उन्हें त्याग कर या उनमें गहरी आसक्ति के साथ भोगकर, अपनी शुद्ध आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.43

ईहितानीहितौघेन युक्तायुक्तमयात्मना। त्यक्तेनात्तेन चार्थेन ह्यर्थानामीशमर्चयेत्॥ ४३॥

īhitānīhitaughēna yuktāyuktamayātmāna | tyaktēnāttēna cārthēna hyarthānāmīśamarcayet || 43 ||

With everything one wants and everything one does not want, with a mind that is sometimes right and sometimes wrong, with wealth given away and wealth received - one should worship the lord of all things.

जो कुछ चाहा जाए और जो न चाहा जाए, जो मन कभी सही होता है कभी गलत, जो धन छोड़ा जाए और जो धन मिले - इन सबसे सब वस्तुओं के स्वामी की पूजा करनी चाहिए।

6.39.44

नष्टं नष्टमुपेक्षेत प्राप्तं प्राप्तमुपाहरेत्। निर्विकारतयैतद्धि परमार्चनमात्मनः॥ ४४॥

naṣṭaṃ naṣṭamupēkṣet prāptaṃ prāptamupāharet | nirvikāratayaitaddhi paramārcanamātmānaḥ || 44 ||

One should let go of each thing that is lost, and take up each thing that is gained. Doing this without letting it change you is the highest worship of the self.

जो कुछ खो जाए उसे छोड़ देना चाहिए, जो कुछ मिले उसे अपना लेना चाहिए। यह सब करते हुए भी खुद में कोई बदलाव न आने देना, यही आत्मा की सबसे बड़ी पूजा है।

6.39.45

सर्वदैव समग्रासु चेष्टानिष्टासु दृष्टिषु। परमं साम्यमाधाय नित्यात्मार्चाव्रतं चरेत्॥ ४५॥

sarvadaiva samagrāsu cēṣṭāniṣṭāsu dṛṣṭiṣu | paramaṃ sāmyamādhāya nityātmārcāvrataṃ caret || 45 ||

Always, in every sight, whether it is liked or disliked, one should hold on to the highest evenness of mind, and follow this vow of forever worshipping the self.

हर समय, हर दृश्य में - चाहे पसंद आए या नापसंद - सबसे बड़ी समता बनाए रखते हुए, आत्मा की सदा पूजा करने का यह व्रत निभाना चाहिए।

6.39.46

सर्वं विन्देत सुशुभं सर्वं विद्याऽच्छुभाशुभम्। सर्वमात्ममयं कुर्यान्नित्यात्मार्चाव्रतं चरेत्॥ ४६॥

sarvaṃ vindeta suśubhaṃ sarvaṃ vidyā'cchubhāśubham | sarvamātmamayaṃ kuryānnityātmārcāvrataṃ caret || 46 ||

One should find everything as good. One should know the good and the bad as the same thing. One should turn everything into the self, and follow this vow of forever worshipping the self.

हर चीज़ को अच्छा मानना चाहिए। अच्छे और बुरे को एक समान जानना चाहिए। सब कुछ को आत्मा-रूप बना लेना चाहिए, और आत्मा की सदा पूजा करने का यह व्रत निभाना चाहिए।

6.39.47

आपातरमणीयं यद्यच्चापातसुदुःसहम्। तत्सर्वं सुसमं बुद्धा नित्यात्मार्चाव्रतं चरेत्॥ ४७॥

āpātaramaṇīyaṃ yadyaccāpātasuduḥsaham | tatsarvaṃ susamaṃ buddhvā nityātmārcāvrataṃ caret || 47 ||

Whatever seems pleasant at first sight, and whatever seems very hard to bear at first sight - knowing all of it as truly the same, one should follow this vow of forever worshipping the self.

जो पहली नज़र में सुखद लगे, और जो पहली नज़र में बहुत कठिन और असहनीय लगे - इन सबको सचमुच एक समान समझकर, आत्मा की सदा पूजा करने का यह व्रत निभाना चाहिए।

6.39.48

अयं सोहमयं नाहं विभागमिति संत्यजेत्। सर्वं ब्रह्मेति निश्चित्य नित्यात्मार्चाव्रतं चरेत्॥ ४८॥

ayaṃ sohamayaṃ nāhaṃ vibhāgamiti saṃtyajet | sarvaṃ brahmeti niścitya nityātmārcāvrataṃ caret || 48 ||

One should give up dividing things into this is me and this is not me. Knowing for certain that everything is Brahman, one should follow this vow of forever worshipping the self.

यह मैं हूं और यह मैं नहीं हूं - इस तरह के भेद को छोड़ देना चाहिए। यह निश्चित जानकर कि सब कुछ ब्रह्म ही है, आत्मा की सदा पूजा करने का यह व्रत निभाना चाहिए।

6.39.49

सर्वदा सर्वरूपेण सर्वाकारविकारिणा। सर्वं सर्वप्रकारेण प्राप्तेनात्मानमर्चयेत्॥ ४९॥

sarvadā sarvarūpeṇa sarvākāravikāriṇā | sarvaṃ sarvaprakāreṇa prāptenātmānamarcayet || 49 ||

Always, in every form, with all that seems to change into every shape, with everything one meets in every way - one should worship the self.

हमेशा, हर रूप में, हर आकार में बदलती हुई हर चीज़ के साथ, जो कुछ भी हर तरह से मिले उससे - आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.50

अनीहितं परित्यज्य परित्यज्य तथेहितम्। उभयाश्रयणेनापि नित्यमात्मानमर्चयेत्॥ ५०॥

anīhitaṃ parityajya parityajya tathehitam | ubhayāśrayaṇenāpi nityamātmānamarcayet || 50 ||

Giving up what is not wanted, and giving up in the same way what is wanted, relying on both alike, one should forever worship the self.

जो नहीं चाहा गया वह भी छोड़ दो, और जो चाहा गया वह भी उसी तरह छोड़ दो - दोनों का सहारा लेकर भी, आत्मा की सदा पूजा करनी चाहिए।

6.39.51

न वाञ्छता न त्यजता दैवप्राप्ताः स्वभावतः। सरितः सागरेणेव भोक्तव्या भोगभूमयः॥ ५१॥

na vāñchata na tyajatā daivaprāptāḥ svabhāvataḥ | saritaḥ sāgareṇeva bhoktavyā bhogabhūmayaḥ || 51 ||

Neither wishing for them nor pushing them away, one should live through the fields of experience that come naturally, by fate, just as the ocean takes in the rivers.

न तो चाहते हुए, न ही ठुकराते हुए - जो भोग के क्षेत्र भाग्य से, अपने आप मिलें, उन्हें वैसे ही भोगना चाहिए, जैसे समुद्र नदियों को ग्रहण करता है।

6.39.52

उद्वेगो नानुगन्तव्यस्तुच्छाऽतुच्छासु दृष्टिषु । व्योम्ना चित्रपदार्थेषु पतितो ह्याततेष्विव ॥ ५२ ॥

udvego nānugantavyastucchā'tucchāsu dṛṣṭiṣu | vyomnā citrapadārtheṣu patito hyātateṣviva || 52 ||

One should not give in to distress over any sight, small or great. It is like a sky painted among the many other painted things spread on a canvas.

जो कुछ भी दिखे, चाहे छोटा हो या बड़ा, उस पर व्याकुल नहीं होना चाहिए। यह वैसा ही है जैसे किसी चित्र में और चित्रित वस्तुओं के बीच बनाया गया आकाश।

6.39.53

देशकालक्रियायोगाद्यदुपैति शुभाशुभम् । अविकारं गृहीतेन तेनैवात्मानमर्चयेत् ॥ ५३ ॥

deśakālakriyāyogādyadupaiti śubhāśubham | avikāraṃ gṛhītena tenaivātmānamarcayet || 53 ||

Whatever good or bad comes to a person through the meeting of place, time, and action - by taking hold of it without letting it change you, one should worship the self with that very thing.

जो भी अच्छा या बुरा स्थान, समय और कर्म के मेल से आ पहुंचे - उसे बिना किसी बदलाव के, जैसा है वैसा ही ग्रहण करके, उसी से आत्मा की पूजा करनी चाहिए।

6.39.54

आत्मार्चनविधानेऽस्मिन्प्रोक्ता द्रव्यश्रियस्तु याः । एकेनैव समेनैता रसेन परिभाविताः ॥ ५४ ॥

ātmārcanavidhāne'sminprāktā dravyaśriyastu yāḥ | ekenaiva samenaaitā rasena paribhāvitāḥ || 54 ||

The many kinds of offerings spoken of for this method of worshipping the self are, in truth, all steeped in one and the same flavour: evenness of mind.

आत्मा की पूजा की इस विधि में जो अलग-अलग सामग्रियां बताई गई हैं, वे सब असल में एक ही रस - समता के रस - में डूबी हुई हैं।

6.39.55

नाम्लानकट्व्यो नो तिक्ता न कषायाश्च काश्चन । चित्रैरपि रसैर्दिग्धा मधुरा एव ताः किल ॥ ५५ ॥

nāmlānakatvyā no tiktā na kaṣāyāśca kāścana | citrairapi rasairdigdhā madhurā eva tāḥ kila || 55 ||

They are not sour, not sharp, not bitter, and not rough at all. Though they may seem coated with many different flavours, in truth they are all sweet.

वे न खट्टी हैं, न तीखी, न कड़वी, न ही कसैली। भले ही ऊपर से तरह-तरह के स्वाद जैसी लगें, असल में वे सब मीठी ही हैं।

6.39.56

समता मधुरा रस्या रसशक्तिरतीन्द्रिया । तया यद्भावितं चेत्यममृतं तत्क्षणाद्भवेत् ॥ ५६ ॥

samatā madhurā rasyā rasaśaktiratīndriyā | tayā yadbhāvitaṃ cetya amṛtaṃ tatkṣaṇādbhavet || 56 ||

Evenness of mind is sweet and full of flavour; the power of its taste is beyond the senses. Whatever thought it touches turns into nectar in an instant.

समता मीठी है, रसीली है; उसकी रस-शक्ति इंद्रियों से परे है। वह जिस भी विचार को छू लेती है, वह उसी क्षण अमृत बन जाता है।

6.39.57

समतामृतरूपेण यद्यन्नाम विभाव्यते । तत्तदायाति माधुर्यं परमिन्दोरिव च्युतम् ॥ ५७ ॥

samatāmṛtarūpeṇa yadyannāma vibhāvyate | tattadāyāti mādhuryaṃ paramindoriva cyutam || 57 ||

Whatever a person looks at through the nectar of evenness of mind comes to taste supremely sweet, like nectar dropped from the moon.

जो कुछ भी समता के अमृत के ज़रिए देखा जाता है, वह सबसे बड़ी मिठास पा जाता है, मानो चंद्रमा से टपका हुआ अमृत हो।

6.39.58

समताकाशवद्भूत्वा यत्तु स्याल्लीनमानसम्। अविकारमनायासं तदेवार्चनमुच्यते ॥ ५८ ॥

samatākāśavadbhūtvā yattu syāllīnamānasam | avikāramanāyāsaṃ tadevārcanamucyate || 58 ||

Becoming like the open sky of evenness of mind, the mind dissolves into it; and that state, unchanging and effortless, is called true worship.

समता के आकाश-जैसा बनकर जब मन उसी में लीन हो जाता है, तो जो अवस्था बिना किसी बदलाव और बिना किसी मेहनत के होती है, उसी को असली पूजा कहा जाता है।

6.39.59

पूर्णेन्दुनेव पूर्णेन भाव्यं समसमत्विषा। स्वच्छेन चिद्घनैकेन ज्ञेनाप्युपलरूपिणा ॥ ५९ ॥

pūrṇenduneva pūrṇena bhāvyaṃ samasamatviṣā | svacchena ciddhanaikena jñenāpyupalarūpiṇā || 59 ||

One should become full, like the full moon, with an even and steady glow, clear, a single dense mass of consciousness, which, though it is the knower, seems as still as a crystal.

पूर्ण चंद्रमा की तरह पूर्ण होकर, एक समान और स्थिर चमक के साथ, स्वच्छ और चेतना के सघन एक रूप के साथ बनना चाहिए - जो जानने वाला होकर भी किसी मणि जैसा स्थिर दिखाई देता है।

6.39.60

अन्तराकाशविशदो बहिःप्रकृतकार्यकृत्। रञ्जनामिहिकामुक्तः संपूर्णो ज्ञ उपासकः ॥ ६० ॥

antarākāśaviśado bahiḥprakṛtakāryakṛt | rañjanāmihikāmuktaḥ saṃpūrṇo jñ upāsakaḥ || 60 ||

Clear within, like open space, yet outwardly carrying on his ordinary actions, and free from the fog of attachment, the complete knower is the true worshipper.

भीतर से आकाश की तरह निर्मल, पर बाहर से सामान्य कर्म करने वाला, और आसक्ति के कोहरे से मुक्त - ऐसा पूर्ण ज्ञानी ही सच्चा उपासक है।

6.39.61

स्वप्नेऽप्यदृष्टह्लेखमज्ञानाभ्रपरिक्षये। शान्ताहंतादिमिहिकं ज्ञः शरद्व्योम राजते ॥ ६१ ॥

svapne'pyadṛṣṭahṛllekhamajñānābhraparikṣaye | śāntāhaṃtādimihikaṃ jñaḥ śaradvyoma rājate || 61 ||

When the cloud of ignorance has completely worn away, and the mist of ego and its kin has grown still, leaving no mark even on the heart in dreams, the knower shines like the clear autumn sky.

जब अज्ञान का बादल पूरी तरह छंट जाता है और अहंकार आदि का कोहरा शांत हो जाता है, तो सपने में भी हृदय पर कोई निशान नहीं बनता, और ज्ञानी शरद ऋतु के निर्मल आकाश की तरह चमकता है।

6.39.62

सोमार्कमस्तमितमानसमातृमेयं सद्यःप्रसूतशिशुवेदनवद्वितानम्। पश्यन्प्रशान्तमतिचेतनचित्तबीजं जीवन्ननुत्तमपदस्थित एव तिष्ठ ॥ ६२ ॥

somārkamastamitamānasamātṛmeyaṃ sadyaḥprasūtaśiśuvedanavadvitānam |
paśyanpraśāntamaticetanacittabījaṃ jīvannanuttamapadasthita eva tiṣṭha || 62 ||

See the calm seed of the mind, awake beyond the senses, in which the mind, the knower and the known have set like the sun and moon going down, and which spreads out like the bare feeling of a newborn child. While still alive, remain fixed in that highest state alone.

मन, जानने वाला और जाना जाने वाला - ये सब सूरज-चांद की तरह डूब चुके हैं; जो बचता है वह नवजात शिशु की कच्ची अनुभूति की तरह फैला हुआ है। मन के इस शांत बीज को देखते हुए, जो इंद्रियों से भी ज़्यादा जाग्रत है - जीते जी, उसी सबसे ऊंची अवस्था में स्थिर रहो।

6.39.63

देशकालकरणक्रमोदितैः सर्ववस्तुसुखदुःखविभ्रमैः । नित्यमर्चय शरीरनायकं तिष्ठ शान्तसकलेहया धिया ॥ ६३ ॥

deśakālakaraṇakramoditaiḥ sarvavastusukhaduḥkhavibhramaiḥ | nityamarCaya śarīranāyakaṃ tiṣṭha śāntasakalehayā dhiyā || 63 ||

With the passing pleasures and pains of all things, rising in their turn through place, time and means, forever worship the lord of the body, and remain with a mind whose every craving has grown still.

स्थान, समय और साधन के क्रम से उठने वाले सब वस्तुओं के सुख-दुःख के साथ - शरीर के स्वामी की सदा पूजा करो, और ऐसी बुद्धि के साथ रहो जिसकी हर इच्छा शांत हो चुकी हो।

Chapter 40

6.40.1

ईश्वर उवाच। यथाकालं यथारम्भं न करोषि करोषि यत्। चिन्मात्रस्य शिवस्यान्तस्तदेवार्चनमात्मनः ॥ १ ॥

īśvara uvāca | yathākālaṃ yathārambhaṃ na karōṣi karōṣi yat | cinmātrasya śivasya antastadevārcanamātmanaḥ || 1 ||

Ishvara said: whatever you do, or do not do, at the right time, in whatever you take up, that very thing, within the pure awareness that is Shiva, is the worship of the self.

ईश्वर ने कहा: सही समय पर तुम जो भी करो या न करो, जो भी काम हाथ में लो, वही चीज़, उस शुद्ध चेतना के भीतर जो शिव है, आत्मा की पूजा है।

6.40.2

तेनैवाह्लादमायाति याति प्रकटतां तथा। तथा स्थितेन रूपेण स्वेनैव स्वयमीश्वरः ॥ २ ॥

tenaivāhlādamāyāti yāti prakaṭatāṃ tathā | tathā sthitena rūpeṇa svenaiva svayamīśvaraḥ || 2 ||

Through that alone he comes to joy, and in the same way he comes into view. In that same form, just as it stands, the Lord becomes himself, through himself alone.

उसी से वह आनंद पाता है, और उसी तरह प्रकट भी होता है। उसी रूप में, जैसा वह है, ईश्वर खुद अपने आप से ही खुद बनता है।

6.40.3

रागद्वेषादिशब्दार्थानात्मन्यन्यतयामले। संभवन्ति पृथग्रूपावह्नौ वह्निकणा इव ॥ ३ ॥

rāgadveṣādiśabdārthānātmanyanyatayāmale | saṃbhavanti pṛthagrūpāvahnau vahnikanā iva || 3 ||

Liking, disliking, and the other things such words mean, arise in the stainless self as if they were something else, taking separate shapes, the way sparks of fire arise in fire.

पसंद, नापसंद और ऐसे ही शब्दों का मतलब, उस निर्मल आत्मा में मानो किसी और चीज़ की तरह अलग-अलग रूप लेकर उठते हैं, जैसे आग में से चिंगारियाँ उठती हैं।

6.40.4

यद्यद्राजत्वदीनत्वसुखदुःखादिवेदनम्। आत्मीयं परकीयं च तत्तदर्चनमात्मनः ॥ ४ ॥

yadyadrājatvadīnatvasukhaduḥkhādivedanam | ātmīyaṃ parakīyaṃ ca tattadarcanamātmanaḥ || 4 ||

Whatever is felt, being a king, being poor, pleasure, pain, and the rest, whether felt as one's own or as someone else's, each of these is the worship of the self.

जो भी महसूस हो, राजा होना, गरीब होना, सुख, दुख और बाकी सब, चाहे वह अपना लगे या पराया, यह सब आत्मा की पूजा है।

6.40.5

विश्वसंवित्तिरेवार्चा नित्यस्यात्मन एव च। घटाद्यात्मतया ब्रह्म स्वयमात्मा तथैव च ॥ ५ ॥

viśvasaṃvittirevārcā nityasyātmana eva ca | ghaṭādyātmatayā brahma svayamātmā tathaiva ca || 5 ||

The awareness of the whole world is itself the worship of the eternal self. And in the same way, Brahman itself, taking the form of a pot and other things, is the self itself.

पूरे संसार का अनुभव ही उस शाश्वत आत्मा की पूजा है। और उसी तरह, ब्रह्म खुद, घड़े वगैरह का रूप लेकर, खुद आत्मा ही है।

6.40.6

शिवं शान्तमनाभासमेकं भास्वरमागतम्। जगत्प्रत्ययवत्सर्वमात्मरूपमिदं स्थितम्॥ ६॥

śivaṃ śāntamanābhāsamēkaṃ bhāsvaramāgatam | jagatpratyayavatsarvamātmarūpamidaṃ sthitam || 6 ||

This whole world, peaceful, one, radiant, without any separate appearance, come into being, and auspicious, is nothing more than the idea called the world; it stands here as the form of the self.

यह पूरा संसार, शांत, एक, तेजस्वी, बिना किसी अलग रूप के, प्रकट हुआ, और शुभ, संसार नाम के विचार से ज़्यादा कुछ नहीं है; यह यहाँ आत्मा के ही रूप में खड़ा है।

6.40.7

अहो नु चित्रमात्मैव घटाद्यन्यद्व्यवस्थितम्। जीवादिस्वस्वभावोऽन्तर्नूनं विस्मृतिमानिव॥ ७॥

aho nu citramātmaiva ghaṭādyanyadvyavasthitam | jīvādisvasvabhāvo'ntarnūnaṃ vismṛtimāniva || 7 ||

Oh, how strange indeed, the self alone stands here as something else, such as a pot. Its own nature as a living being must, deep inside, be as if it has forgotten itself.

अरे, यह कितनी अनोखी बात है, आत्मा ही यहाँ किसी और चीज़ की तरह, जैसे घड़ा, खड़ी है। जीव के रूप में इसका अपना स्वभाव भीतर से मानो खुद को भूल बैठा है।

6.40.8

सर्वात्मकस्यानन्तस्य शिवस्यान्तः किलात्मनः। पूज्यपूजकपूजाख्यो विभ्रमः प्रोदितः कुतः॥ ८॥

sarvātmakasyānantasya śivasyaantaḥ kilātmanaḥ | pūjyapūjakapūjākhyo vibhramaḥ proditaḥ kutaḥ || 8 ||

Within the self that is the self of everything, endless and auspicious, from where indeed has this confusion arisen, the one called the worshipped, the worshipper, and the worship?

हर चीज़ की आत्मा, अनंत और शुभ, उस आत्मा के भीतर यह भ्रम कहाँ से पैदा हुआ जिसे पूज्य, पूजा करने वाला और पूजा कहा जाता है?

6.40.9

नियताकारता शान्ते न च संभवतीश्वरे। यत्र संकल्प्यते ब्रह्मन्पूज्यपूजामयः क्रमः॥ ९॥

niyatākāratā śānte na ca saṃbhavatīśvare | yatra saṃkalpyate brahmanpūjyapūjāmayaḥ kramaḥ || 9 ||

A fixed form is not possible at all in the peaceful Lord, O Brahmin, the one in whom a sequence made of the worshipped and the worship is merely imagined.

उस शांत ईश्वर में कोई तय रूप संभव ही नहीं है, हे ब्राह्मण, जिसमें पूज्य और पूजा से बना क्रम बस कल्पना भर है।

6.40.10

पूज्यपूजाद्यवच्छिन्नो देवो नित्यामलात्मनः। सर्वशक्तेरनन्तस्य नेश्वरत्वस्य भाजनम्॥ १०॥

pūjyapūjādyavacchinno devo nityāmalātmanaḥ | sarvaśakteranantasya neśvaratvasya bhājanam || 10 ||

A god who is limited by the worshipped, the worship, and the rest is not a fit vessel for the lordship of the eternal, stainless self, which holds every power and has no end.

जो देवता पूज्य, पूजा वगैरह से बंधा है, वह उस शाश्वत, निर्मल आत्मा के ईश्वरत्व के लायक नहीं है, जिसके पास हर शक्ति है और जिसका कोई अंत नहीं।

6.40.11

त्रिजगत्प्रसृताच्छाच्छसंविद्रूपस्य चात्मनः नेश्वरस्याकृतेर्ब्रह्मन्व्यपदेशो हि युज्यते ॥ ११ ॥

trijagatprasṛtācchācchasaṃvidrūpasya cātmanaḥ neśvarasyākṛterbrahmanvyapadeśo hi yujyate || 11 ||

Of the self, whose nature is consciousness, utterly clear and spread through the three worlds, no name at all fits, O Brahmin, that formless Lord.

जिस आत्मा की प्रकृति चेतना है, जो पूरी तरह निर्मल है और तीनों लोकों में फैली है, हे ब्राह्मण, उस निराकार ईश्वर के लिए कोई नाम ठीक नहीं बैठता।

6.40.12

देशकालपरिच्छिन्नो येषां स्यात्परमेश्वरः। अस्माकमुपदेश्यास्ते न विपश्चिद्विपश्चिताम्॥ १२ ॥

deśakālaparicchinno yeṣāṃ syātparameśvaraḥ asmākamupadeśyāste na vipaścidvipaścitām || 12 ||

Those for whom the highest Lord would be something limited by place and time need to be taught by us; they are not the wise among the wise.

जिनके लिए परम ईश्वर देश और काल से बंधी कोई चीज़ है, उन्हें हमसे सीखने की ज़रूरत है, वे बुद्धिमानों में सचमुच बुद्धिमान नहीं हैं।

6.40.13

तदीयां दृष्टिमुत्सृज्य तथेमामवलम्ब्य च। समः स्वच्छमनाः शान्तो वीतरागो निरामयः ॥ १३ ॥

tadīyāṃ dṛṣṭimutsṛjya tathemāmavalambya ca samaḥ svacchamanāḥ śānto vītarāgo nirāmayaḥ || 13 ||

Give up their way of seeing, and instead hold on to this one. Be even minded, clear in mind, at peace, free from craving, free from sickness.

उनकी वह नज़र छोड़ दो, और इसके बजाय इसी को थामे रहो। समभाव रखो, मन को साफ रखो, शांत रहो, चाह से मुक्त रहो, रोग से मुक्त रहो।

6.40.14

कामोपहारैरभितो यथाप्राप्तैरखिन्नधीः। आत्मानमर्चयंस्तिष्ठ सुखदुःखशुभाशुभैः ॥ १४ ॥

kāmopahārairabhito yathāprāptairakhinnadhīḥ ātmānamarcayaṃstiṣṭha sukhaduḥkhaśubhāśubhaiḥ || 14 ||

Whatever desired things come to you from every side, just as they come, do not let your mind grow tired of them. Remain worshipping the self, through pleasure and pain, good and bad.

जो भी चाही हुई चीज़ें हर तरफ से जैसे मिलती जाएँ, उनसे मन को थकने मत दो। सुख-दुख में, अच्छे-बुरे में, आत्मा की पूजा करते हुए बने रहो।

6.40.15

अधिगतवति साधौ चैकमेवानुरूपं त्वयि तरलितजीवे जन्मदुःखादि किंचित्। न लगति परिशून्ये सर्वतः स्फाटिकाङ्गे नवसदन इवाङ्के निष्कलङ्के कलङ्कः ॥ १५ ॥

adhigatavati sādhau caikamevānurūpaṃ tvayi taralitajīve janmaduḥkhādi kiṃcit na lagati pariśūnye sarvataḥ sphāṭikāṅge navasadana ivāṅke niṣkalaṅke kalaṅkaḥ || 15 ||

Sage, once you have found the one thing that truly fits you, and your restless self has grown calm, no trace of birth or suffering clings to you any more, since you are empty on every side and your body is like crystal, just as a stain does not cling to a spotless disc in a new house.

हे साधु, जब तुमने वह एक चीज़ पा ली है जो सचमुच तुम्हारे अनुरूप है, और तुम्हारा चंचल जीव शांत हो गया है, तो जन्म और दुख का कोई अंश अब तुमसे नहीं चिपकता, क्योंकि तुम हर तरफ से खाली हो और तुम्हारा शरीर स्फटिक जैसा है, ठीक वैसे ही जैसे एक नए घर में किसी निष्कलंक चीज़ पर दाग नहीं चिपकता।

Chapter 41

6.41.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । शिवः किमुच्यते देव परंब्रह्म किमुच्यते । आत्मा किमुच्यते नाथ परमात्मा किमुच्यते ॥ ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śivaḥ kimucyate deva paraṃbrahma kimucyate | ātmā kimucyate nātha paramātmā kimucyate || 1 ||

Sri Vasishtha said: God, what is called Shiva? What is called the highest Brahman? Lord, what is called the self? What is called the supreme self?

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे देव, शिव किसे कहते हैं? परम ब्रह्म किसे कहते हैं? हे नाथ, आत्मा किसे कहते हैं? परमात्मा किसे कहते हैं?

6.41.2

तत्सत्किंचिन्न किंचिच्च शून्यं विज्ञानमेव च । इत्यादिभेदो भगवंस्त्रिलोकेश किमुच्यते ॥ ॥ २ ॥

tatsatkiṃcinnakiṃcicca śūnyaṃ vijñānameva ca | ityādibhedo bhagavaṃstrilokeśa kimucyate || 2 ||

Some call it that, some call it being, some call it something, some call it nothing, some call it emptiness, some call it pure awareness. Lord, ruler of the three worlds, what is meant by all these different names?

कोई इसे वह कहते हैं, कोई अस्तित्व कहते हैं, कोई कुछ कहते हैं, कोई कुछ नहीं कहते हैं, कोई शून्य कहते हैं, कोई शुद्ध चेतना कहते हैं। हे भगवन, तीनों लोकों के स्वामी, इन सब अलग-अलग नामों का मतलब क्या है?

6.41.3

ईश्वर उवाच । अनाद्यन्तमनाभासं सत्किंचिदिह विद्यते । इन्द्रियाणामगम्यत्वाद्यन्न किंचिदिव स्थितम् ॥ ॥ ३ ॥

īśvara uvāca | anādyantamanābhāsaṃ satkiṃcid iha vidyate | indriyāṇāmagamyatvādyan na kiṃcid iva sthitam || 3 ||

Ishvara said: A real something exists here that has no beginning and no end and never becomes visible. Because the senses cannot reach it, it stands as if it were nothing at all.

ईश्वर ने कहा: यहाँ एक ऐसी सच्चाई है जिसका न आरंभ है न अंत, और जो कभी दिखाई नहीं देती। इंद्रियों की पहुँच से बाहर होने के कारण वह मानो कुछ भी नहीं है, ऐसी लगती है।

6.41.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । यदिन्द्रियाणां बुद्ध्यादियुक्तानामप्यदृश्यताम् । गतं तत्कथमीशान त्वशङ्केनोपगम्यते ॥ ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yadindriyāṇāṃ buddhyādiyuktānāmapyadṛśyatām | gataṃ tatkathamīśāna tvāśaṅkenopagamyate || 4 ||

Sri Vasishtha said: That thing is unseen even by the senses joined with the mind and the intellect. Lord, how then can anyone grasp it with no doubt at all?

श्री वसिष्ठ ने कहा: वह वस्तु इंद्रियों और मन-बुद्धि से भी नहीं दिखती। हे ईश, फिर कोई उसे बिना किसी संदेह के कैसे समझ सकता है?

6.41.5

ईश्वर उवाच। यो मुमुक्षुरविद्यांशः केवलो नाम सात्त्विकः। सात्त्विकैरेव सोऽविद्याभागैः शास्त्रादिनामभिः॥ ॥ ५॥

īśvara uvāca | yo mumukṣuravidyāṃśaḥ kevalo nāma sāttvikaḥ | sāttvikaireva so'vidyābhāgaiḥ śāstrādināmabhiḥ || 5 ||

Ishvara said: The seeker of liberation is himself only a portion of ignorance, the pure kind, called the sattvic portion. It is by these very sattvic portions of ignorance, which go by names such as scripture,

ईश्वर ने कहा: मोक्ष चाहने वाला स्वयं अज्ञान का ही एक अंश है, वह शुद्ध अंश जिसे सात्त्विक कहा जाता है। वह इन्हीं सात्त्विक अंशों से, जिन्हें शास्त्र आदि नाम दिए गए हैं,

6.41.6

अविद्यां श्रेष्ठया श्रेष्ठां क्षालयन्निह तिष्ठति। मलं मलेनापहरन्युक्तिज्ञो रजको यथा॥ ६॥

avidyāṃ śreṣṭhayā śreṣṭhāṃ kṣālayanniha tiṣṭhati | malaṃ malenāpaharanyuktijño rajako yathā || 6 ||

that he washes away the coarser ignorance with this finer ignorance, and so remains here, like a skilled washerman who removes one stain with another stain.

इसी घटिया अज्ञान को इस उत्तम अज्ञान से धोता है, और इस तरह यहाँ बना रहता है, जैसे कोई कुशल धोबी मैल को मैल से ही साफ करता है।

6.41.7

काकतालीयवत्पश्चादविद्याक्षय आगते। प्रपश्यत्यात्मनैवात्मा स्वभावस्यैव निश्चयः॥ ७॥

kākatālīyavatpaścādavidyākṣaya āgate | prapaśyatyātmanaivātmā svabhāvasyeva niścayaḥ || 7 ||

Later, when ignorance is finally destroyed, the way a crow happens to land on a branch at the very moment a palm fruit happens to fall, the self sees itself by itself alone. This indeed is the certain knowledge of its own true nature.

बाद में जब अज्ञान पूरी तरह मिट जाता है, ठीक वैसे ही जैसे कौआ किसी डाल पर बैठता है और ठीक उसी क्षण संयोग से ताड़ का फल गिर पड़ता है, तब आत्मा स्वयं अपने आप को देख लेता है। यही अपने असली स्वरूप का पक्का ज्ञान है।

6.41.8

यथाकथंचिदङ्गारे निघृष्य क्षालयञ्छिशुः। करनैर्मल्यमाप्नोति काष्ण्यार्ङ्गारक्षये यथा॥ ८॥

yathākathaṃcid aṅgāre nighṛṣya kṣālayaṃś śiśuḥ | karanair malyam āpnoti kārṣṇyāṅgārakṣaye yathā || 8 ||

It is like a child who somehow rubs charcoal on his hands and washes them, and gets clean hands only once all the black of the charcoal is gone.

यह वैसा ही है जैसे कोई बच्चा हाथों पर जैसे-तैसे कोयला मलकर उन्हें धोता है, और उसके हाथ तभी साफ होते हैं जब कोयले की सारी कालिख मिट जाती है।

6.41.9

यथाकथंचिच्छास्त्राद्यैर्भागैर्भागं विचारयेत्। सात्त्विकस्तामसो भागो द्वयोरात्मोदयस्तथा॥ ९॥

yathākathaṃciśśāstrādyairbhāgairbhāgaṃ vicārayet | sāttvikastāmaso bhāgo dvayorātmodayastathā || 9 ||

In the same way, one should use the pure portion, such as scripture, however one can, to examine the dark portion. Between these two portions, the pure and the dark, the self then rises.

उसी तरह जैसे-तैसे शास्त्र आदि के शुद्ध अंश से अंधेरे वाले अंश की जाँच करनी चाहिए। इन दोनों अंशों, शुद्ध और अंधेरे वाले, के बीच से ही आत्मा का उदय होता है।

6.41.10

पश्यत्यात्मानमात्मैव विचारयति चात्मना । आत्मैवेहास्ति नाविद्या इत्यविद्याक्षयं विदुः ॥ १० ॥

paśyatyātmānamātmaiva vicārayati cātmanā | ātmaivahehāsti nāvidyā ityavidyākṣayaṃ viduḥ || 10 ||

The self alone sees the self, and by the self it examines itself. Here only the self exists, not ignorance. This is what the wise call the destruction of ignorance.

आत्मा स्वयं ही आत्मा को देखता है, और आत्मा से ही आत्मा की जाँच करता है। यहाँ केवल आत्मा है, अज्ञान नहीं। इसी को अज्ञान का नाश कहते हैं।

6.41.11

यावत्किंचिदिदं वस्तु नाना नात्मावगम्यताम् । क्रमा गुरूपदेशाद्या नात्मज्ञानस्य कारणम् ॥ ११ ॥

yāvatkiṃcididaṃ vastu nānā nātmāvagamyatām | kramā gurūpadeśādyā nātmajñānasya kāraṇam || 11 ||

So long as this thing is taken as many separate things, the self is not understood. The sequence that begins with the guru's teaching is not itself the cause of self-knowledge.

जब तक यह वस्तु अनेक अलग-अलग चीज़ों के रूप में समझी जाती है, तब तक आत्मा समझ में नहीं आता। गुरु के उपदेश से शुरू होने वाला क्रम आत्मज्ञान का असली कारण नहीं है।

6.41.12

गुरुर्हीन्द्रियवृत्तात्मा ब्रह्म सर्वेन्द्रियक्षयात् । यद्वस्तु यत्क्षये प्राप्यं तत्तस्मिन्सति नाप्यते ॥ १२ ॥

gururhīndriyavṛttātmā brahma sarvendriyakṣayāt | yadvastu yatkṣaye prāpyaṃ tattasminnāpyate || 12 ||

The guru is himself a being made of the working of the senses, but Brahman is reached only through the ending of all the senses. Whatever is to be gained by the ending of some thing cannot be gained while that thing still exists.

गुरु स्वयं इंद्रियों की क्रिया से बना एक जीव है, जबकि ब्रह्म तो सभी इंद्रियों के शांत हो जाने से ही मिलता है। जो चीज़ किसी वस्तु के मिट जाने पर मिलती है, वह उस वस्तु के रहते हुए नहीं मिल सकती।

6.41.13

अकारणान्यपि प्राप्ता भृशं कारणतां द्विज । क्रमा गुरूपदेशाद्या आत्मज्ञानस्य सिद्धये ॥ १३ ॥

akāraṇānyapi prāptā bhṛśaṃ kāraṇatāṃ dvija | kramā gurūpadeśādyā ātmajñānasya siddhaye || 13 ||

Brahmin, though the guru's teaching and the rest are not themselves the cause, in their gradual course they come strongly to serve as a cause for reaching self-knowledge.

हे द्विज, यद्यपि गुरु का उपदेश आदि स्वयं कारण नहीं हैं, फिर भी धीरे-धीरे वे आत्मज्ञान पाने में बहुत हद तक कारण बन जाते हैं।

6.41.14

क्रमे गुरूपदेशानां प्रवृत्ते शिष्यबोधतः । अनिर्देश्योऽप्यदृश्योऽपि स्वयमात्मा प्रसीदति ॥ १४ ॥

krame gurūpadeśānāṃ pravṛtte śiṣyabodhataḥ | anirdeśyo'pyadṛśyo'pi svayamātmā prasīdati || 14 ||

When the guru's teaching has done its work through the disciple's own understanding, the self, though it cannot be pointed to and cannot be seen, reveals itself on its own.

जब गुरु का उपदेश शिष्य की अपनी समझ के ज़रिए अपना काम कर चुका होता है, तब आत्मा, जिसे न दिखाया जा सकता है न देखा जा सकता है, स्वयं ही प्रकट हो जाता है।

6.41.15

शास्त्रार्थैर्बुध्यते नात्मा गुरोर्वचनतो न च । बुध्यते स्वयमेवैष स्वबोधवशतस्ततः ॥ १५ ॥

śāstrārthairbuddhyate nātmā gurorvacanato na ca | buddhyate svayamevaiṣa svabodhavśatastataḥ || 15 ||

The self is not known through the meaning of scripture, nor through the guru's words. It is known only by itself, through the force of its own awakening.

आत्मा न तो शास्त्रों के अर्थ से जाना जाता है, न गुरु के वचनों से। वह तो अपने ही जागने की शक्ति से, स्वयं ही जाना जाता है।

6.41.16

गुरूपदेशशास्त्रार्थैर्विना चात्मा न बुध्यते । एतत्संयोगसत्तैव स्वात्मज्ञानप्रकाशिनी ॥ १६ ॥

gurūpadeśaśāstrārthairvinā cātmā na budhyate | etatsaṃyogasattaiva svātmajñānaprakāśinī || 16 ||

Yet without the guru's teaching and the meaning of the scriptures, the self is also not known. It is the presence of this combination together that brings the light of self-knowledge.

फिर भी गुरु के उपदेश और शास्त्रों के अर्थ के बिना आत्मा भी नहीं जाना जाता। गुरु, उपदेश और शिष्य के एक साथ होने से ही आत्मज्ञान का प्रकाश मिलता है।

6.41.17

गुरुशास्त्रार्थशिष्याणां चिरसंयोगसत्तया । अहनीव जनाचार आत्मज्ञानं प्रवर्तते ॥ १७ ॥

guruśāstrārthaśiṣyāṇāṃ cirasaṃyogasattayā | ahanīva janācāra ātmajñānaṃ pravartate || 17 ||

Through the long-continued presence of the guru, the meaning of scripture, and the disciple together, self-knowledge comes about, just as people's habits are formed day after day.

गुरु, शास्त्र के अर्थ और शिष्य, इन तीनों के लंबे समय तक साथ रहने से आत्मज्ञान उत्पन्न होता है, ठीक वैसे ही जैसे लोगों की आदतें दिन-प्रतिदिन धीरे-धीरे बनती हैं।

6.41.18

कर्मबुद्धीन्द्रियाद्यन्तसुखदुःखादिसंक्षये । शिव आत्मेति कथितस्तत्सदित्यादिनामभिः ॥ १८ ॥

karmabuddhīndriyādyantasukhaduḥkhādisaṃkṣaye | śiva ātmeti kathitastatsadityādināmabhiḥ || 18 ||

When action, intellect, the senses and the rest, along with pleasure, pain and the rest, finally come to an end, that is what is spoken of by the names Shiva, the self, that, being, and the like.

जब कर्म, बुद्धि, इंद्रियाँ आदि, और सुख-दुःख आदि सब अंततः शांत हो जाते हैं, तो उसी को शिव, आत्मा, वह, अस्तित्व आदि नामों से कहा जाता है।

6.41.19

यत्रेदमखिलं नास्ति तद्रूपेणैव चास्ति वा । तदाकाशादच्छतरमनन्तं सदिवास्ति हि ॥ १९ ॥

yatredamakhilaṃ nāsti tadrūpeṇaiva cāsti vā | tadākāśādacchataramanantaṃ sadivāsti hi || 19 ||

Where this whole world does not exist, or exists only as one with that reality, that reality is clearer than open space, without end, and truly exists as pure being.

जहाँ यह सारा जगत नहीं है, या फिर उसी के रूप में है, वह सच्चाई आकाश से भी अधिक निर्मल है, अनंत है, और सचमुच शुद्ध सत्ता के रूप में विद्यमान है।

6.41.20

अविश्रान्ततया यत्र तनुविद्यैर्मुमुक्षुभिः । विचित्रशुद्धमननकलङ्ककलितात्मभिः ॥ २० ॥

aviśrāntatayā yatra tanuvidyairmumukṣubhiḥ | vicitraśuddhamananakalaṅkakalitātmabhiḥ || 20 ||

There, seekers of liberation who have only slight knowledge work without ever resting, their very being marked with the imprint of varied, pure reflection.

वहाँ, थोड़े ही ज्ञान वाले, मोक्ष चाहने वाले लोग बिना कभी रुके प्रयास करते रहते हैं, और उनका अपना स्वरूप विविध शुद्ध चिंतन के चिह्न से युक्त होता है।

6.41.21

अदूर एव तिष्ठद्भिर्जीवन्मुक्तस्य दृक्पथे । मोक्षोपासकबोधाय शास्त्रार्थरचनाय च ॥ २१ ॥

adūra eva tiṣṭhadbhirjīvanmuktasya dṛkpathe | mokṣopāsakabodhāya śāstrārthracanāya ca || 21 ||

They stay always close, within the sight of one liberated while still alive, so as to awaken those devoted to liberation and to compose the meaning of the scriptures.

वे सदा जीते-जी मुक्त हो चुके व्यक्ति की नज़रों के पास ही बने रहते हैं, ताकि मोक्ष चाहने वालों को जगा सकें और शास्त्रों के अर्थ की रचना कर सकें।

6.41.22

ब्रह्मेन्द्ररुद्रप्रमुखैर्लोकपालैः सुपण्डितैः । पुराणवेदसिद्धान्तसिद्धये भावितात्मभिः ॥ २२ ॥

brahmendrarudrapramukhairlokapālaiḥ supaṇḍitaiḥ | purāṇavedasiddhāntasiddhaye bhāvitātmabhiḥ || 22 ||

The guardians of the world, led by Brahma, Indra, and Rudra, are deeply learned, their minds devoted to establishing the doctrines of the Puranas and the Vedas.

ब्रह्मा, इंद्र और रुद्र आदि लोकपाल अत्यंत विद्वान हैं, और उनका मन पुराणों तथा वेदों के सिद्धांतों को स्थापित करने में लगा रहता है।

6.41.23

चिद्ब्रह्म शिव आत्मेशपरमात्मेश्वरादिका । एतस्मिन्कल्पिता संज्ञा निःसंज्ञे पृथगीश्वरे ॥ २३ ॥

cidbrahma śiva ātmeśaparamātmeśvarādikā | etasminkalpitā saṃjñā niḥsaṃjñe pṛthagīśvare || 23 ||

Upon this alone are the names Chit-Brahman, Shiva, lord of the self, supreme self, Ishvara, and the rest placed, names given to a single Lord who in truth has no name and stands apart from all of them.

इसी एक सच्चाई पर चित्-ब्रह्म, शिव, आत्मेश, परमात्मा, ईश्वर आदि सारे नाम रखे गए हैं, जबकि वह भगवान वास्तव में नामरहित है और इन सब नामों से अलग है।

6.41.24

एवमेतज्जगत्तत्त्वं स्वं तत्त्वं शिवनामकम् । सर्वथा सर्वदा सर्वसर्वं यत्सुखमास्व भो ॥ २४ ॥

evametajjagattattvaṃ svaṃ tattvaṃ śivanāmakam | sarvathā sarvadā sarvasarvaṃ yatsukhamāsva bho || 24 ||

So this true nature of the world is also your own true nature, and it goes by the name Shiva, in every way, at all times, the whole of everything. Rest happily in it, friend.

इस प्रकार जगत का यह सच्चा स्वरूप ही तुम्हारा भी सच्चा स्वरूप है, जिसे शिव नाम दिया गया है, हर तरह से, हमेशा, सब कुछ का सब कुछ। हे मित्र, उसी में सुखपूर्वक स्थिर रहो।

6.41.25

शिव आत्मा परं ब्रह्मेत्यादिशब्दैस्तु भिन्नता । पुरातनैर्विरचिता तस्य भेदो न वस्तुतः ॥ २५ ॥

śiva ātmā paraṃ brahmetyādiśabdaitu bhinnatā | purātanairviracitā tasya bhedo na vastutaḥ || 25 ||

Words like Shiva, the self, the highest Brahman, and so on seem to show a difference between them, but that difference was made by people of old. In truth there is no division in it at all.

शिव, आत्मा, परम ब्रह्म जैसे शब्दों से भेद-सा दिखता है, पर यह भेद तो प्राचीन लोगों ने बनाया है। सच में उसमें कोई भेद नहीं है।

6.41.26

एवं देवार्चनं नित्यं ज्ञः कुर्वन्मुनिनायक । यत्रास्मदादयो भृत्यास्तत्प्रयान्ति परं पदम् ॥ २६ ॥

evaṃ devārcanaṃ nityaṃ jñaḥ kurvanmunināyaka | yatrāsmadādayo bhṛtyāstatprayānti paraṃ padam || 26 ||

So, chief among sages, one who knows this and always worships God in this way reaches the very same highest state that we too, mere servants, also reach.

इस प्रकार, हे मुनियों में श्रेष्ठ, जो व्यक्ति यह जानकर सदा इसी तरह ईश्वर की पूजा करता है, वह उसी परम पद को पाता है, जिसे हम भी, जो खुद सेवक ही हैं, पाते हैं।

6.41.27

श्रीवसिष्ठ उवाच । अविद्यमानमेवेदं विद्यमानमिव स्थितम् । यथा तन्मे समासेन भगवन्वक्तुमर्हसि ॥ २७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | avidyamānamevedaṃ vidyamānamiva sthitam | yathā tanme samāsena bhagavanvaktumarhasi || 27 ||

Sri Vasishtha said: This world does not really exist at all, yet it stands here as if it did exist. Lord, please explain this to me briefly, exactly as it is.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह जगत वास्तव में है ही नहीं, फिर भी ऐसे खड़ा है मानो हो। हे भगवन, कृपया मुझे यह बात संक्षेप में, ठीक जैसी है वैसी ही बताइए।

6.41.28

ईश्वर उवाच । योऽसौ ब्रह्मादिशब्दार्थः संविदं विद्धि केवलम् । स्वच्छमाकाशमप्यस्य स्थूलं मेरुरणोरिव ॥ २८ ॥

īśvara uvāca | yo'sau brahmādiśabdārthaḥ saṃvidaṃ viddhi kevalam | svacchamākāśamapyasyasthūlaṃ meruraṇoriva || 28 ||

Ishvara said: Know that whatever is meant by the word Brahman and other such words is nothing but pure awareness itself. Next to it, even clear open space is as coarse as Mount Meru is next to a speck of dust.

ईश्वर ने कहा: ब्रह्म आदि शब्दों का जो भी अर्थ है, उसे केवल शुद्ध चेतना ही समझो। उसके सामने निर्मल आकाश भी उतना ही स्थूल है, जितना मेरु पर्वत किसी धूल के कण के सामने।

6.41.29

सा वेद्यमिह गच्छन्ती याति चिन्नामयोग्यताम् । अप्यवेद्यवती नूनमुन्मन्यन्तपदस्थिता ॥ २९ ॥

sā vedyamiha gacchantī yāti cinnāmayogyatām | apyavedyavatī nūnamunmanyantapadasthitā || 29 ||

That awareness, when it turns into something known here, only earns the fitness to be called thought. But truly, since it has nothing at all left to know, it stands firm in the state that lies beyond the mind.

वह चेतना जब यहाँ किसी जानी हुई वस्तु में बदलती है, तो केवल मन कहलाने योग्य बनती है। पर सच में, जब उसके लिए जानने को कुछ भी नहीं बचता, तब वह मन से परे उस स्थिति में स्थिर रहती है।

6.41.30

क्षणाद्भावितवेद्यत्त्वादहन्तामनुगच्छति । पुरुषत्वात्पुमान्स्वप्ने वनवारणतामिव ॥ ३० ॥

kṣaṇādbhāvitavedyattvādahantāmanugacchati | puruṣatvātpumān svapne vanavāraṇatāmiva || 30 ||

Because in an instant it comes to be treated as something known, it takes on the sense of I. It is like a man, who is truly a man, becoming a wild elephant in his dream.

क्योंकि एक क्षण में वह जानी हुई वस्तु जैसी मान ली जाती है, इसलिए उसमें मैं का भाव आ जाता है। यह वैसा ही है जैसे कोई पुरुष, जो सचमुच पुरुष है, सपने में जंगली हाथी बन जाता है।

6.41.31

अस्याहन्तादिरूपाया देशतां कालतां गताः । संपद्यन्ते ततः शून्यरूपिण्यः सख्य एव ताः ॥ ३१ ॥

asyāhantādirūpāyā deśatāṃ kālatāṃ gatāḥ | saṃpadyante tataḥ śūnyarūpiṇyaḥ sakhya eva tāḥ || 31 ||

These powers, true companions of this being whose nature is 'I', turn into place and into time, and so, in the end, they turn out to be void, having no real form.

ये ताकतें, जो इस 'मैं' वाले तत्व की सच्ची साथी हैं, जगह और समय का रूप ले लेती हैं, और आखिर में पता चलता है कि इनका कोई असली रूप नहीं है, ये खाली हैं।

6.41.32

ताभिः संवलिता सैव सत्ता जीवाभिधानिका । भवति स्पन्दविज्ञाना पवनस्येव लेखिका ॥ ३२ ॥

tābhiḥ saṃvalitā saiva sattā jīvābhidhānikā | bhavati spandavijñānā pavanasyaiva lekhikā || 32 ||

That same being, mixed together with those powers, becomes what we call the living self. It is aware of movement, and it is the very writer of the breath.

वही तत्व, इन ताकतों के साथ मिलकर, वह बन जाता है जिसे जीव कहते हैं। यह हलचल को महसूस करता है, और सांस को लिखने वाला खुद यही है।

6.41.33

जीवशक्तिस्तथाभूता निश्चयैकविलासिनी । बुद्धितामनुयाता सा भवत्यज्ञपदे स्थिता ॥ ३३ ॥

jīvaśaktistathābhūtā niścayaikavilāsinī | buddhitāmanuyātā sā bhavatyajñapade sthitā || 33 ||

This power of the living being comes about in this way; its one joy is making up its mind. Once it turns into intellect, it comes to rest in the state of not knowing.

जीव की यह ताकत इसी तरह पैदा होती है; इसका बस एक ही सुख है फैसला करना। जब यह बुद्धि बन जाती है, तो यह अनजान की हालत में जाकर टिक जाती है।

6.41.34

शब्दशक्त्या क्रियाशक्त्या ज्ञानशक्त्यानुगम्यते । प्रत्येकं प्रस्फुरत्यन्तरप्रदर्शितरूपया ॥ ३४ ॥

śabdaśaktyā kriyāśaktyā jñānaśaktyānugamyate | pratyekaṃ prasphuratyantarapradarśitarūpayā || 34 ||

It is followed by three powers, the power to speak, the power to act, and the power to know, and each one shines out with a form shown from within.

इसके साथ तीन ताकतें चलती हैं बोलने की ताकत, काम करने की ताकत, और जानने की ताकत और हर एक अपने अंदर से दिखाए गए रूप में चमकती है।

6.41.35

मिलित्वैष गणः क्षिप्रं स्मृतिं समनुकूलयन्। मनो भवति भूतात्मबीजं संकल्पशाखिनः ॥ ३५ ॥

militvaiṣa gaṇaḥ kṣipraṃ smṛtiṃ samanukūlayan | mano bhavati bhūtātmabījaṃ saṃkalpaśākhinaḥ || 35 ||

These powers join together, quickly bring memory into line, and become the mind, the seed-self of all beings, the seed of the tree whose branches are our thoughts.

ये सारी ताकतें मिलकर, जल्दी से याद्दाश्त को अपने साथ मिला लेती हैं, और मन बन जाती हैं हर जीव के भीतर का बीज, और उस पेड़ का बीज जिसकी शाखाएं हमारे विचार हैं।

6.41.36

आतिवाहिकदेहोक्तिभाजनं तद्विदुर्बुधाः। अन्तस्थया ब्रह्मशक्त्या ज्ञरूपं स्वात्मनात्मदृक् ॥ ३६ ॥

ātivāhikadehoktibhājanaṃ tadvidurbudhāḥ | antasthayā brahmaśaktyā jñarūpaṃ svātmanātmadṛk || 36 ||

The wise call this the carrier body, the subtle body that travels on. Through the hidden power of the Supreme within it, it takes the shape of a knower, seeing itself by itself.

बुद्धिमान लोग इसे यात्रा करने वाला शरीर कहते हैं, वह सूक्ष्म शरीर जो आगे बढ़ता रहता है। अंदर छुपी परमात्मा की ताकत से, यह जानने वाले का रूप ले लेता है, और खुद को खुद से देखता है।

6.41.37

संपद्यमाना एवास्मिंश्चेतसीमा हि शक्तयः। पश्चादिह बहिष्ठास्ता उद्यन्त्यनुदिता अपि ॥ ३७ ॥

sampadyamānā evāsmiṃścetasīmā hi śaktayaḥ | paścādiha bahiṣṭhāstā udyantyanuditā api || 37 ||

These powers come to be within this mind. Later they turn outward and rise up out here, even though they never really rose at all.

ये ताकतें पहले इसी मन के अंदर पैदा होती हैं। बाद में ये बाहर की ओर मुड़ जाती हैं और यहाँ उठती हुई दिखती हैं, हालांकि असल में ये कभी उठी ही नहीं।

6.41.38

वातसत्ता स्पन्दसत्ता स्पर्शसत्ता तथैव च। त्वक्सत्ता तेजसां सत्ता तथा सत्ताप्रकाशिनी ॥ ३८ ॥

vātasattā spandasattā sparśasattā tathaiva ca | tvaksattā tejasāṃ sattā tathā sattāprakāśinī || 38 ||

There is the existence of wind, the existence of movement, the existence of touch, and also the existence of skin, the existence of light, and the existence that shines through it all.

हवा का होना है, हलचल का होना है, छूने का होना है, और साथ ही त्वचा का होना, रोशनी का होना, और वह होना जो इन सबमें चमकता है।

6.41.39

रूपसत्ता जलसत्ता स्वादुसत्ता तथैव च। तथैव रससत्ता च गन्धसत्ता तथैव च ॥ ३९ ॥

rūpasattā jalasattā svādusattā tathaiva ca | tathaiva rasasattā ca gandhasattā tathaiva ca || 39 ||

There is the existence of shape, the existence of water, the existence of sweetness, and also the existence of taste, and the existence of smell.

रूप का होना है, पानी का होना है, मिठास का होना है, और साथ ही स्वाद का होना, और गंध का होना।

6.41.40

भूसत्ता हेमसत्ता च पिण्डसत्ता च पीवरी । देशसत्ता कालसत्ता सर्वाढ्याकारवर्जिता ॥ ४० ॥

bhūsattā hemasattā ca piṇḍasattā ca pīvarī | deśasattā kālasattā sarvāḍhyākāravarjitā || 40 ||

There is the existence of earth, the existence of gold, the existence of matter, thick and heavy, the existence of place, the existence of time, yet none of this has any real form; it is free of every rich shape.

धरती का होना है, सोने का होना है, गाढ़े और भारी पदार्थ का होना है, जगह का होना है, समय का होना है फिर भी इनमें से किसी का कोई असली रूप नहीं है; यह हर तरह की बनावट से मुक्त है।

6.41.41

सर्वसत्तागणं चैतत्क्रोडीकृत्य स्वरूपवत्स्फुरत्याश्रित्य पत्रादि बीजं बीजादितां गतम् ॥ ४१ ॥

sarvasattāgaṇaṃ caitatkroḍīkṛtya svarūpavatsphuratyāśritya patrādi bījaṃ bījāditāṃ gatam || 41 ||

Taking in this whole group of existences, it shines out as though it were its own true form. Like a seed that puts out leaves and more, it becomes the very seed of all seeds.

इन सारे होने वालों के समूह को अपने अंदर समेटकर, यह ऐसे चमकता है जैसे यही इसका असली रूप हो। जैसे एक बीज पत्ते वगैरह निकालता है, वैसे ही यह हर बीज का बीज बन जाता है।

6.41.42

एतत्पुर्यष्टकं विद्धि देहोऽयं चातिवाहिकःअपारबोधमेतत्तु स्फुरत्यङ्ग विभागवत् ॥ ४२ ॥

etatpuryaṣṭakaṃ viddhi deho'yaṃ cātivāhikaḥapārabodhametattu sphuratyaṅga vibhāgavat || 42 ||

Know this as the body of eight parts. This same thing is the body that travels on. But really, dear one, this is awareness without limit, only it shines as if broken into pieces.

इसे आठ हिस्सों वाला शरीर समझो। यही वह शरीर है जो आगे यात्रा करता है। पर असल में, प्रिय, यह तो बिना किसी सीमा वाली चेतना है, बस यह टुकड़ों में बंटी हुई सी चमकती है।

6.41.43

एवमाद्यङ्गसंपन्नं संपन्नं न च किञ्चनन ज्ञानं न च तद्रूपं न विदाचितचेतनम् ॥ ४३ ॥

evamādyaṅgasaṃpannaṃ saṃpannaṃ na ca kiṃcanana jñānaṃ na ca tadrūpaṃ na vidācitacetanam || 43 ||

So furnished with all these parts, it is in truth furnished with nothing at all. It is not knowledge itself, nor does it have any form of its own, nor can it truly be known as living or lifeless.

इन सब हिस्सों से भरा हुआ दिखते हुए भी, असल में इसमें कुछ भी नहीं भरा है। यह खुद ज्ञान नहीं है, न ही इसका अपना कोई रूप है, और न ही इसे सचमुच जीवित या निर्जीव कहा जा सकता है।

6.41.44

परं परे प्रस्फुरितं केवलं केवलात्म सत्जलपीठस्य जठरे जलद्रवविलासवत् ॥ ४४ ॥

paraṃ pare prasphuritaṃ kevalaṃ kevalātma satjalapīṭhasya jaṭhare jaladravavilāsavat || 44 ||

The Supreme, shining within the Supreme, alone, its nature the one absolute being, plays like a ripple moving within the deep of the ocean.

परम तत्व, परम तत्व के भीतर ही चमकता हुआ, अकेला, जिसका स्वभाव बस एक ही परम सत्य है यह ऐसे खेलता है जैसे समुद्र की गहराई में पानी की एक लहर।

6.41.45

संवित्संवेदनैकात्म पृथगेतदचेतनम्संपद्यते परिज्ञातं संकल्पनगरोपमम् ॥ ४५ ॥

saṃvitsaṃvedanaikātma pṛthagetadacetanamsaṃpadyate parijñātaṃ saṃkalpanagaropamam || 45 ||

Awareness and consciousness are one single self. This, apart from that self, has no life of its own. Once it is truly known, it turns out to be only like a city built in thought.

जागरूकता और चेतना एक ही तत्व हैं। यह, उस तत्व से अलग होकर, अपने आप में निर्जीव है। जब इसे ठीक से जान लिया जाता है, तो पता चलता है कि यह बस मन में बसाए गए एक शहर जैसा है।

6.41.46

संवेदनात्परिज्ञानाच्छिवतामेव गच्छति अज्ञातमेव वा यत्तत्कथं गच्छति वस्तुताम् ॥ ४६ ॥

saṃvedanātparijñānācchivatāmeva gacchati ajñātameva vā yattatkathaṃ gacchati vastutām || 46 ||

From awareness, from full knowledge, it goes indeed to the state of pure bliss. But if it remains unknown, how can it ever become a real thing?

जागरूकता से, पूरी जानकारी से, यह सचमुच परम शांति की हालत में पहुँच जाता है। पर अगर यह अनजाना ही रह जाए, तो यह असली चीज़ कैसे बन सकता है?

6.41.47

अथैतद्विन्दते स्वान्तःसंकल्पादंशता स्वतःतन्मात्रसत्ता तस्याणोरेतां पश्यति देहके ॥ ४७ ॥

athaitadvindate svāntaḥsaṃkalpādaṃśatā svataḥtanmātrasattā tasyāṇoretāṃ paśyati dehake || 47 ||

Now, through its own inner thought, this comes on its own to have a part, a fragment. It sees, in a small body, the subtle existence that belongs to that fragment.

अब, अपने ही भीतरी विचार से, यह खुद ब खुद एक हिस्सा बन जाता है एक टुकड़ा। यह एक छोटे शरीर में उस टुकड़े से जुड़ा सूक्ष्म अस्तित्व देखता है।

6.41.48

सर्वं स्थूलत्वमापन्नं तदेवाशु प्रपश्यतितस्य तन्मात्ररन्ध्राणि यथादेशं प्रपश्यति ॥ ४८ ॥

sarvaṃ sthūlatvamāpannaṃ tadevāśu prapaśyatitasya tanmātrarandhrāṇi yathādeśaṃ prapaśyati || 48 ||

It quickly sees everything that has turned solid, and it sees, each set in its own place, the small openings of the subtle senses.

यह हर उस चीज़ को झट से देख लेता है जो ठोस बन चुकी है, और यह देखता है, हर एक को उसकी अपनी जगह पर, सूक्ष्म इंद्रियों के छोटे-छोटे रास्ते।

6.41.49

ततः पुरुषरूपैकभावनात्पुरुषाकृतिम्काकतालीयवद्दृष्ट्वा तुष्टं पुष्टं भवत्यलम् ॥ ४९ ॥

tataḥ puruṣarūpaikabhāvanātpuruṣākṛtimkākatālīyavaddṛṣṭvā tuṣṭaṃ puṣṭaṃ bhavatyalam || 49 ||

Then, from picturing only a human shape in the mind, it sees a human form appear, purely by chance, like a crow landing on a branch just as a fruit happens to fall from it, and it becomes very pleased and greatly satisfied.

फिर, मन में सिर्फ एक इंसानी आकार की कल्पना करने से, यह एक इंसानी रूप को सामने आते देखता है बिल्कुल इत्तेफाक से, जैसे कौआ किसी डाल पर बैठे और ठीक उसी वक्त फल गिर जाए और बहुत खुश और पूरी तरह संतुष्ट हो जाता है।

6.41.50

जीवदेतदवस्थाकं स्थितं पश्यति देहकमसन्तमेव गन्धर्वपुरं स्वप्ननरं यथा ॥ ५० ॥

jīvadetadavasthākaṃ sthitaṃ paśyati dehakamasantameva gandharvapuraṃ svapnanaraṃ yathā || 50 ||

The living self sees this small body standing there in that condition, though it does not really exist at all, like a city in the sky, or like a man seen in a dream.

जीव इस छोटे शरीर को उस हालत में खड़ा हुआ देखता है हालांकि यह असल में है ही नहीं, जैसे आसमान में बना एक शहर, या जैसे सपने में दिखा कोई आदमी।

6.41.51

श्रीवसिष्ठ उवाच । गन्धर्वनगराकारमपि स्वप्ननरोपमम् । जगद्दुःखाय दुःखस्य कात्र युक्तिः परिक्षये ॥ ५१ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | gandharvanagarākāramapi svapnanaropamam | jagadduduḥkhāya duḥkhasya kātra yuktiḥ parikṣaye || 51 ||

Sri Vasishtha said: Although it has the shape of a city in the sky, comparable to a man in a dream, the world causes sorrow. What means, then, is there to end this sorrow?

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह भले ही आसमान के शहर जैसा हो, सपने में दिखे आदमी जैसा हो, फिर भी यह दुनिया दुख देती है। तो इस दुख को खत्म करने का कोई रास्ता है क्या?

6.41.52

ईश्वर उवाच । वासनावशतो दुःखं विद्यमाने च सा भवेत् । अविद्यमानं च जगन्मृगतृष्णाम्बुभङ्गवत् ॥ ५२ ॥

īśvara uvāca | vāsanāvaśato duḥkhaṃ vidyamāne ca sā bhavet | avidyamānaṃ ca jagannmṛgatṛṣṇāmbubhaṅgavat || 52 ||

Ishvara said: Sorrow comes through the force of desire, and it exists only so long as the world is taken to be real. But when the world is seen as unreal, it is like the vanishing of mirage water.

ईश्वर ने कहा: दुख इच्छा के ज़ोर से आता है, और यह तभी तक रहता है जब तक दुनिया को सच माना जाता है। पर जब दुनिया को झूठ समझ लिया जाए, तो यह मृगतृष्णा के पानी के गायब होने जैसा है।

6.41.53

अतः किं वास्यते केन कस्य वा वासना कुतः । कथं स्वप्ननरेणाङ्ग मृगतृष्णाम्बु पीयते ॥ ५३ ॥

ataḥ kiṃ vāsyate kena kasya vā vāsanā kutaḥ | kathaṃ svapnanareṇāṅga mṛgatṛṣṇāmbu pīyate || 53 ||

So then, what is impressed by what? Whose desire is it, and where does it come from? Dear one, how can a man in a dream drink the water of a mirage?

तो फिर, किसमें क्या छाप बैठती है? यह इच्छा किसकी है, और यह आती कहाँ से है? प्रिय, सपने में दिखा आदमी मृगतृष्णा का पानी कैसे पी सकता है?

6.41.54

सद्रष्टरि तु साहन्ते समनोमननादिके । अविद्यमाने जगति यत्सत्तत्परिदृश्यते ॥ ५४ ॥

sadrṣṭari tu sāhante samanomananādike | avidyamāne jagati yatsattatparidṛśyate || 54 ||

But in the true, real seer, mind and thought and the rest still stand. Even though the world does not really exist, whatever is real is still clearly seen.

पर असली, सच्चे देखने वाले में, मन और विचार वगैरह अब भी बने रहते हैं। दुनिया असल में न होते हुए भी, जो सच है वह साफ दिखता ही है।

6.41.55

यत्र नो वासना नैव वासको नैव वास्यता । केवलं केवलीभावः संशान्तकलनभ्रमः ॥ ५५ ॥

yatra no vāsanā naiva vāsako naiva vāsyatā | kevalaṃ kevalībhāvaḥ saṃśāntakalanabhramaḥ || 55 ||

Where there is no desire, no one to plant it, and nothing planted by it, there remains only the one true state, all alone, where every confused notion of doing has come to complete rest.

जहाँ कोई इच्छा नहीं है न कोई इसे बोने वाला, न कोई इससे बोया हुआ वहाँ बस एक ही सच्ची हालत बचती है, बिल्कुल अकेली, जहाँ कुछ करने का हर भ्रम पूरी तरह शांत हो चुका है।

6.41.56

यस्य सत्योऽप्यसत्यो वा शून्य एव हि यक्षकः । विलीनस्तस्य कैवल्यात्किमन्यदवशिष्यते ॥ ५६ ॥

yasya satyo'pyasatyo vā śūnya eva hi yakṣakaḥ | vilīnastasya kaivalyātkimanyadavaśiṣyate || 56 ||

Whether it is real or unreal, that spirit is nothing but empty air. Once it melts away into pure aloneness, what else could be left?

चाहे यह सच हो या झूठ, वह साया असल में खाली हवा ही है। जब यह अपनी अकेली सच्चाई में घुल जाता है, तो बाकी क्या बचता है?

6.41.57

शून्य एव हि वेताल इवेत्थं चित्तवासना । उदितेयं जगन्नाम्नी तच्छान्तौ शान्तिरक्षता ॥ ५७ ॥

śūnya eva hi vetāla iveithaṃ cittavāsanā | uditeyaṃ jagannāmnī tacchāntau śāntirakṣatā || 57 ||

Just like an empty ghost, so indeed is the mind's desire: this, having arisen, is named 'the world.' When that is stilled, peace stands whole and unbroken.

जैसे एक खाली भूत, वैसे ही है मन की इच्छा: यही, उठकर, दुनिया कहलाती है। जब यह शांत हो जाती है, तो शांति पूरी और अखंड बनी रहती है।

6.41.58

अहन्तायां जगति च मृगतृष्णाजले च यः । सास्थस्तं थिग्घतनरं नोपदेश्यस्त्वसाविति ॥ ५८ ॥

ahantāyāṃ jagati ca mṛgatṛṣṇājale ca yaḥ | sāsthaṃ sthiṅghatanaraṃ nopadeśyastvasāviti || 58 ||

Whoever still trusts in the ego, in the world, and in the water of a mirage, that despised man is not to be taught, thinking he still can learn.

जो कोई अब भी अहंकार पर, दुनिया पर, और मृगतृष्णा के पानी पर भरोसा करता है उस तुच्छ आदमी को यह सोचकर नहीं सिखाना चाहिए कि वह सीख लेगा।

6.41.59

जीवं विवेकिनमिहोपदिशन्ति तज्ज्ञा नो बालमुद्भ्रममसन्मयमार्यमुक्तम् । अज्ञं प्रशास्ति किल यः कनकावदातां स स्वप्नदृष्टपुरुषाय सुतां ददाति ॥ ५९ ॥

jīvaṃ vivekinamihopadiśanti tajjñā no bālamudbhramamasanmayamāryamuktam | ajñaṃ praśāsti kila yaḥ kanakāvadātāṃ sa svapnadṛṣṭapuruṣāya sutāṃ dadāti || 59 ||

The wise, following what the noble ones have taught, point to the discerning living self as the one fit to be taught, never to a childish, bewildered person made only of what is unreal. Whoever tries to teach a fool is indeed like a man who gives his gold-bright daughter in marriage to a man he saw only in a dream.

बुद्धिमान लोग, महान लोगों की सिखाई बात मानकर, समझदार जीव की ओर इशारा करते हैं कि उसी को सिखाना चाहिए किसी बचकाने, भरमाए हुए, सिर्फ झूठ से बने इंसान को नहीं। जो कोई किसी मूर्ख को सिखाने की कोशिश करता है, वह बिल्कुल वैसा है जैसे कोई आदमी अपनी सोने जैसी चमकती बेटी की शादी सपने में दिखे किसी आदमी से कर दे।

Chapter 42

6.42.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ततः स जीवो भगवन्दृष्टवान्देहसंभ्रमम् । आदिसर्गे नभःसंस्थः कामवस्थामुपैति हि ॥ ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tataḥ sa jīvo bhagavandṛṣṭavāndehasambhramam | ādisarge nabhaḥsaṃsthaḥ kāmavasthāmupaiti hi || 1 ||

Sri Vasishtha said: Then, my lord, that soul, having seen the confusion of having a body, comes to a state of desire while it rests in empty space at the start of creation.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, हे प्रभु, वह जीव शरीर के भ्रम को देखकर, सृष्टि के आरंभ में आकाश में स्थित रहते हुए, इच्छा की अवस्था में आ जाता है।

6.42.2

ईश्वर उवाच । परस्मात्परमे व्योम्नि पूर्वोक्तक्रमतो वपुः । जीवः पश्यति संपन्नं स च स्वप्ननरो यथा ॥ ॥ २ ॥

īśvara uvāca | parasmatparame vyomni pūrvoktakramato vapuḥ | jīvaḥ paśyati sampannaṃ sa ca svapnanaro yathā || 2 ||

Ishvara said: In that space higher than the highest, in the way told before, the soul sees a body take shape, just as a man in a dream sees one.

ईश्वर ने कहा: सबसे ऊँचे से भी ऊँचे उस आकाश में, वैसे ही जैसा पहले बताया गया, जीव एक शरीर को बनते हुए देखता है, जैसे सपने में कोई आदमी शरीर को बनते देखता है।

6.42.3

सर्वगत्वाच्चिद्धनस्य कार्यं स्वप्ननरोऽपि हि । यथा करोत्याशु तथा जीवोऽद्यापि शरीरधृक् ॥ ॥ ३ ॥

sarvagatvāccidghanasya kāryaṃ svapnanaro'pi hi | yathā karotyāśu tathā jīvo'dyāpi śarīradhṛk || 3 ||

Because the mass of pure consciousness is present everywhere, even the man in a dream is its work. Just as he instantly creates things, the soul too, even now, carries a body in the same way.

चूंकि शुद्ध चेतना का घनत्व हर जगह मौजूद है, सपने का आदमी भी उसी का काम है। जैसे वह तुरंत चीज़ें बना लेता है, वैसे ही जीव भी आज तक उसी तरह शरीर धारण करता है।

6.42.4

सनातनोऽहमव्यक्तः पुमानित्यभिधां ततः । करोत्यात्मनि तेनाशु प्रथमः प्रथितः पुमान् ॥ ॥ ४ ॥

sanātano'hamavyaktaḥ pumānityabhidhāṃ tataḥ | karotyātmani tenāśu prathamaḥ prathitaḥ pumān || 4 ||

Thinking, I am eternal, unseen, I am the Person, it gives itself that name. Through this, at once, it becomes the first Person, well known by that name.

यह सोचकर कि मैं शाश्वत हूं, अदृश्य हूं, मैं ही पुरुष हूं, वह अपने आप को यही नाम दे देता है। इससे वह तुरंत पहला और प्रसिद्ध पुरुष बन जाता है।

6.42.5

एवं स सर्गे कस्मिंश्चित्प्रथमोऽथ सदाशिवः। कस्मिंश्चिद्विष्णुरित्युक्तो नाभ्युत्पन्नः पितामहः ॥ ॥ ५ ॥

evaṃ sa sarge kasmiṃścitprathamo'tha sadāśivaḥ | kasmiṃścidviṣṇurityukto nābhyutpannaḥ pitāmahaḥ || 5 ||

Thus, in one creation, he is first, and then becomes Sadashiva. In another creation he is called Vishnu, and in another, the Grandfather Brahma, born from a navel.

इस प्रकार, किसी सृष्टि में वह पहले होता है, फिर सदाशिव बन जाता है। किसी सृष्टि में उसे विष्णु कहा जाता है, और किसी में वह नाभि से जन्मे पितामह ब्रह्मा है।

6.42.6

पितामहः स कस्मिंश्चित्कस्मिंश्चिदपि चेतरः। स च संकल्पपुरुषः संकल्पान्मूर्तिमास्थितः ॥ ६ ॥

pitāmahaḥ sa kasmiṃścitkasmiṃścidapi cetaraḥ| sa ca saṃkalpapuruṣaḥ saṃkalpānmūrtimāsthitaḥ || 6 ||

In some creation he is the Grandfather Brahma, and in some other he is someone else again. He is the Person made of will, and through will alone he takes on a form.

किसी सृष्टि में वह पितामह ब्रह्मा है, और किसी और सृष्टि में वह कोई और ही है। वह संकल्प से बना पुरुष है, और संकल्प से ही वह रूप धारण करता है।

6.42.7

पुष्टः प्रथमसंकल्पस्तां मनोमूर्तिमास्थितः। यद्यथा कल्पयत्याशु तत्तथानुभवत्यलम् ॥ ७ ॥

puṣṭaḥ prathamasaṅkalpastāṃ manomūrtimāsthitaḥ| yadyathā kalpayatyāśu tattathānubhavaty alam || 7 ||

He is the first act of will, now grown full, and he takes on that form made of mind. Whatever he quickly imagines, and however he imagines it, that he fully experiences, exactly so.

वह पहला संकल्प है, जो अब पूरी तरह विकसित होकर मन से बने उस रूप को धारण कर लेता है। वह जो कुछ भी और जिस तरह भी तुरंत कल्पना करता है, वैसा ही वह पूरी तरह अनुभव करता है।

6.42.8

तत्त्वसद्रूपमखिलं शून्यवेतालको यथा। भ्रमदृष्ट्या तु सद्रूपमित्यहंता जगद्गतिः ॥ ८ ॥

tattvasadrūpamakhilaṃ śūnyavetālako yathā| bhramadṛṣṭyā tu sadrūpamityahaṃtā jagadgatiḥ || 8 ||

This whole world, which looks like a real, true thing, is like a ghost in empty space. Only to eyes confused by illusion does it look real. This sense of I is the way the world goes.

यह पूरा संसार, जो सच्चे और वास्तविक रूप जैसा दिखता है, खाली आकाश में भूत जैसा है। भ्रम से भरी आँखों को ही यह सच लगता है। यही मैं का भाव संसार के चलने का तरीका है।

6.42.9

द्रष्टादिपुरुषस्त्वेवं स्वयं संपद्यते हि यः। स निमेषं प्रति व्योम समुदेत्यथ नीयते ॥ ९ ॥

draṣṭādipuruṣastvevaṃ svayaṃ saṃpadyate hi yaḥ| sa nimeṣaṃ prati vyoma samudetyatha nīyate || 9 ||

This Person, who becomes the seer and all that follows, comes into being by himself in this way. With every blink of an eye, he rises up into the sky, and then is carried off.

यह पुरुष, जो द्रष्टा और उसके बाद की हर चीज़ बन जाता है, इस तरह स्वयं ही उत्पन्न होता है। हर पलक झपकते ही वह आकाश में उठता है, और फिर दूर ले जाया जाता है।

6.42.10

निमेष एव कल्पो यो महाकल्पपरम्पराम् । प्रतिभासविपर्यासमात्रेणानुभवत्यलम् ॥ १० ॥

nimeṣa eva kalpo yo mahākalpaparamparām| pratibhāsaviparyāsamātreṇānubhavaty alam || 10 ||

That single blink of an eye is itself a whole age; it lives through a whole chain of great ages, simply by a shift in how things appear.

वह एक पलक झपकना ही एक पूरा युग है; वह केवल रूप बदलने भर से महायुगों की पूरी शृंखला का अनुभव कर लेता है।

6.42.11

परमाणौ परमाणौ व्योम्नि व्योम्नि क्षणे क्षणेसर्गकल्पमहाकल्पभावाभावा भवन्ति ते ॥ ११ ॥

paramāṇau paramāṇau vyomni vyomni kṣaṇe kṣaṇesargakalpamahākalpabhāvābhāvā bhavanti te || 11 ||

In every single atom, in every point of space, in every moment, worlds and ages and great ages endlessly appear and disappear.

हर एक परमाणु में, हर एक जगह में, हर एक पल में, सृष्टियां, युग और महायुग बनते और मिटते रहते हैं।

6.42.12

दृश्यन्ते केचिदन्योन्यं साधर्म्याद्वासनागतेःमिथः केचिन्न दृश्यन्ते दृष्टेनाथ सदात्मना ॥ १२ ॥

dṛśyante kecidanyonyaṃ sādharmyādvāsanāgateḥmithaḥ kecinna dṛśyante dṛṣṭenātha sadātmanā || 12 ||

Some of these are seen by one another, because their inner tendencies run alike. Some are never seen by each other at all, though the one true, seeing self sees them all.

इनमें से कुछ एक-दूसरे को देख पाते हैं, क्योंकि उनकी वासनाएं आपस में मिलती हैं। कुछ एक-दूसरे को कभी नहीं देख पाते, फिर भी वह एक सच्चा, देखने वाला आत्मा उन सबको देखता है।

6.42.13

सर्गाः सर्गेण सर्वत्र संभवन्ति न ते शिवेभवन्ति परमे व्योम्नि व्योमरूपा इति स्वयम् ॥ १३ ॥

sargāḥ sargeṇa sarvatra saṃbhavanti na te śivebhavanti parame vyomni vyomarūpā iti svayam || 13 ||

World after world seems to arise everywhere, but none of them truly comes to be in the real. In the highest space, they are, of themselves, nothing but that space.

सृष्टि पर सृष्टि हर जगह होती हुई दिखती है, पर असल में वे सच्चाई में कभी बनती ही नहीं। परम आकाश में वे स्वयं उसी आकाश का ही रूप हैं।

6.42.14

स्वयं च सदसद्रूपा लीयन्ते स्वप्नशैलवत्सर्गैर्न देश आक्रान्तो न च कालो न कर्तृता ॥ १४ ॥

svayaṃ ca sadasadrūpā līyante svapnaśailavatsargairna deśa ākrānto na ca kālo na kartṛtā || 14 ||

Being themselves both real and unreal, they melt away like a mountain seen in a dream. These creations occupy no true place, no true time, and involve no true doer.

वे स्वयं सत्य और असत्य दोनों रूप के होकर, सपने में देखे गए पहाड़ की तरह घुल जाते हैं। इन सृष्टियों से न कोई सच्चा स्थान घिरता है, न सच्चा समय, न कोई सच्चा करने वाला।

6.42.15

न चैते तत्स्वरूपा वा न कल्प्यं नापि च क्षणःन चेदं जायते किंचिन्न च किंचन नश्यति ॥ १५ ॥

na caite tatsvarūpā vā na kalpyaṃ nāpi ca kṣaṇaḥna cedaṃ jāyate kiṃcinna ca kiṃcana naśyati || 15 ||

These are not truly of that real nature, nor can they even be grasped as real for a single moment. Nothing here is ever truly born, and nothing ever truly dies.

ये उस सच्चे स्वरूप के नहीं हैं, और इन्हें एक पल के लिए भी सच मानकर नहीं पकड़ा जा सकता। यहां न तो कुछ सचमुच जन्म लेता है, और न कुछ सचमुच नष्ट होता है।

6.42.16

सर्वं संकल्परूपेण चिच्चमत्कुरुते चिति । स्वप्नपत्तननिर्माणपातोत्पातनवज्जगत् ॥ १६ ॥

sarvaṃ saṃkalparūpeṇa ciccmatkurute citi | svapnapattnanirmāṇapātotpātanavajjagat || 16 ||

Consciousness itself, taking the form of will, conjures up everything within itself, as consciousness. The world is like a city built and torn down in a dream.

चेतना स्वयं, संकल्प का रूप लेकर, अपने भीतर, चेतना के रूप में ही, सब कुछ अचरज की तरह रच देती है। यह संसार सपने में बने और गिराए गए एक शहर जैसा है।

6.42.17

न देशकालक्रमणं करोति च मनागपि । यथा संकल्पशैलेन देशकालाद्यनन्तकम् ॥ १७ ॥

na deśakālakramaṇaṃ karoti ca manāgapi | yathā saṃkalpaśailena deśakālādyanantakam || 17 ||

It does not pass through place and time even a little. Yet through the mountain of thought, place, time and everything like them become endless.

वह जगह और समय में होकर ज़रा भी नहीं गुज़रता। फिर भी एक भारी सोच के दम पर जगह, समय और ऐसी सारी चीज़ें अनंत हो जाती हैं।

6.42.18

आक्रान्तमपि नाक्रान्तं तथैव जगता सता । अथ नाक्रान्तमाक्रान्तमिव संकल्पमेरुणा ॥ १८ ॥

ākrāntamapi nākrāntaṃ tathaiva jagatā satā | atha nākrāntamākrāntamiva saṃkalpameruṇā || 18 ||

Even a thing that place and time seem to touch, they do not really touch it — the real world, just as it is, is exactly the same. And through the Meru-mountain of a single thought, what is untouched can look as if it is touched.

जिस चीज़ को जगह और समय छूते हुए लगते हैं, असल में वे उसे छूते नहीं — असली संसार भी बिलकुल ऐसा ही है। और एक सोच के मेरु-पर्वत जैसे बोझ से, जो चीज़ छुई नहीं गई, वह छुई हुई जैसी दिखने लगती है।

6.42.19

यथोच्चैर्देशकालादि तथैव जगता सता । संपद्यते यथा योऽसौ पुरुषः सर्वकारकः ॥ १९ ॥

yathoccairdeśakālādi tathaiva jagatā satā | saṃpadyate yathā yo'sau puruṣaḥ sarvakārakaḥ || 19 ||

Just as place and time become as vast as they become, the real world too comes about in just the same way — exactly as the one who does everything wills it.

जैसे जगह और समय जितने बड़े बनते हैं, वैसे ही असली संसार भी उसी तरह बनता है — ठीक वैसे ही जैसे वह सब कुछ करने वाला चाहता है।

6.42.20

अनेनैव क्रमेणेह कटिः संपद्यते क्षणात्। तस्थुषामेवमेवेह जातयो हि चतुर्विधाः ॥ २० ॥

anenaiva krameṇeha kaṭiḥ saṃpadyate kṣaṇāt | tasthuṣāmevameveha jātayo hi caturvidhāḥ || 20 ||

By this same process an insect comes into being in an instant. In just the same way, the births of living creatures here are of four kinds.

इसी क्रम से यहाँ एक कीड़ा पल भर में पैदा हो जाता है। इसी तरह यहाँ जीवों के जन्म चार प्रकार के होते हैं।

6.42.21

रुद्राद्यास्तृणपर्यन्ताः संपद्यन्ते क्षणं प्रति। परमाणूपमाः सन्ति तथा केचिदणूपमाः ॥ २१ ॥

rudrādyāstṛṇaparyantāḥ saṃpadyante kṣaṇaṃ prati | paramāṇūpamāḥ santi tathā kecid aṇūpamāḥ || 21 ||

Everything from Rudra down to a blade of grass comes into being moment by moment. Some are as small as the tiniest speck; others are a little bigger, like a small particle.

रुद्र जैसे देवता से लेकर घास के एक तिनके तक, सब कुछ हर पल नया बनता है। कुछ सबसे छोटे कण जितने बारीक होते हैं, और कुछ उससे थोड़े बड़े, एक छोटे कण जैसे।

6.42.22

एष एव क्रमस्तेषां सति वाऽसति सर्गके। अस्याः संसारमायाया एवंभूतार्थभावनात् ॥ २२ ॥

eṣa eva kramasteṣāṃ sati vā'sati sargake | asyāḥ saṃsāramāyāyā evaṃbhūtārthabhāvanāt || 22 ||

This is exactly the order in which they come about, whether this creation is real or not — because the illusion of the world is imagined to be a real thing exactly like this.

चाहे यह सृष्टि सच में हो या न हो, इनके बनने का क्रम बिलकुल यही है — क्योंकि संसार का यह भ्रम बिलकुल ऐसी ही एक सच्ची चीज़ मान लिया जाता है।

6.42.23

भेदोपशान्तावभ्यासाद्भवत्युपगतः शिवः। निमेषशतभागार्धमात्रमेव परा चितिः ॥ २३ ॥

bhedopaśāntāvabhyāsādbhavatyupagataḥ śivaḥ | nimeṣaśatabhāgārdhamātrameva parā citiḥ || 23 ||

Through practice, when all sense of difference dies down, one reaches the auspicious state, Shiva. The highest awareness itself lasts only half of one hundredth of the time of a single blink.

अभ्यास से जब भेद का भाव पूरी तरह शांत हो जाता है, तब इंसान उस कल्याणकारी अवस्था यानी शिव को पा लेता है। सबसे ऊँची चेतना तो बस एक पलक झपकने के सौवें हिस्से के आधे समय जितनी ही रहती है।

6.42.24

स्वरूपतश्चेल्लुठिता सैषोदेत्यनवस्थितिः। सा ज्ञरूपा शिलाकाश इव चित्स्वात्मनिस्थिता ॥ २४ ॥

svarūpataścelluṭhitā saiṣodetyanavasthitiḥ | sā jñarūpā śilākāśa iva cittsvātmanisthitā || 24 ||

If, by its own nature, this awareness rolls about like this, then this very restlessness appears. But that same awareness, whose nature is knowing, truly rests in itself, like the space that seems shut inside a stone.

अगर यह चेतना अपने स्वभाव से ही इस तरह डगमगाने लगे, तो यही बेचैनी उठ खड़ी होती है। पर यही चेतना, जो जानने के रूप में है, असल में अपने ही आप में टिकी रहती है, जैसे पत्थर के भीतर बंद दिखने वाला आकाश।

6.42.25

तदनाद्यवभासात्म ब्रह्मशब्देन गीयतेअस्मिन्प्रौढिं गते सर्गे महाचिद्द्योतनं न च ॥ २५ ॥

tadanādyavabhāsātma brahmaśabdena gīyateasminprauḍhiṃ gate sarge mahāciddyotanaṃ na ca || 25 ||

That whose shining has no beginning is called by the name Brahman. And even when this creation grows to its fullness, the great awareness does not shine out any more than before.

जिसका प्रकाश कभी शुरू ही नहीं हुआ, उसे 'ब्रह्म' नाम से पुकारा जाता है। और यह सृष्टि चाहे कितनी भी पूरी क्यों न हो जाए, वह बड़ी चेतना पहले से ज़्यादा नहीं चमकती।

6.42.26

संगतासत्यदिग्देशकालांशपरमाणुता । जीवतामागता भूततन्मात्रवलनाक्रमात् ॥ २६ ॥

saṅgatāsatyadigdeśakālāṃśaparamāṇutā | jīvatāmāgatā bhūtatanmātravalanākramāt || 26 ||

A tiny, atom-sized share of unreal direction, place and time has joined together and come to each living being, through the way the gross elements and their subtle essences roll into one another.

दिशा, जगह और समय का यह झूठा मगर बहुत छोटा टुकड़ा हर जीव को मिला है, जो पंच तत्वों और उनके सूक्ष्म अंशों के आपस में घुलने-मिलने से जुड़ा है।

6.42.27

भवत्यङ्ग मृगीवीरुत्कीटदेवासुरादिकम् । यस्मिन्नित्ये ततेऽनन्ते दृढे स्रगिव तिष्ठति ॥ २७ ॥

bhavatyanga mṛgīvīrutkīṭadevāsurādikam | yasminnitye tate'nante dṛḍhe sragiva tiṣṭhati || 27 ||

Dear one, deer, plants, insects, gods, demons and all the rest come to be within that one thing which is eternal, vast, endless and firm — they stand strung together like a garland.

हे प्रिय, हिरन, लताएँ, कीड़े, देवता, राक्षस — ये सब उसी एक चीज़ में बनते हैं जो सदा रहने वाली, फैली हुई, असीम और अटल है — वे सब उसमें एक माला की तरह गुँथे खड़े रहते हैं।

6.42.28

सदसद्ग्रथितं विश्वं विश्वगे विश्वकर्मणि । न तद्दूरे न निकटे नोर्ध्वे नाधो न तेन मे । न पूर्वं नाद्य न प्रातर्न सन्नासन्न मध्यमम् ॥ २८ ॥

sadasadgrathitaṃ viśvaṃ viśvage viśvakarmaṇi | na taddūre na nikaṭe nordhve nādho na tena me | na pūrvaṃ nādya na prātarnā sannāsanna madhyamam || 28 ||

The universe, woven out of what is and what is not, lives in that one who fills everything and does everything. That one is not far and not near, not above and not below, and is not mine either. That one is not the past, not today, not tomorrow morning; not something that is, not something that is not, and not something in between.

यह विश्व, जो है और नहीं है दोनों से मिलकर बना है, उस एक में टिका है जो सबमें फैला है और सब कुछ करता है। वह न दूर है, न पास; न ऊपर है, न नीचे; और वह मेरा भी नहीं है। वह न बीता कल है, न आज है, न आने वाला कल; वह न कुछ ऐसा है जो होता है, न कुछ जो नहीं होता, और न कोई बीच की चीज़।

6.42.29

अनुभवकलनामृतेऽस्य माता भवति न सर्वविकल्पनेष्वसत्सु । फलदुरुविभवा प्रमाणमाला स्थितिमुपयाति न वारिणीव वह्निः ॥ २९ ॥

anubhavakalanāmṛte'sya mātā bhavati na sarvavikalpaneṣvasatsu | phaladuruvibhavā pramāṇamālā sthitimupayāti na vāriṇīva vahniḥ || 29 ||

Only through direct experience can this reality truly be known — not through any of the unreal alternatives the mind imagines. Real proof, which bears great fruit, cannot take a firm place in what is unreal, just as fire cannot stay alight in water.

इस सच्चाई को सिर्फ़ सीधे अनुभव से ही जाना जा सकता है — मन के गढ़े हुए किसी झूठे विकल्प से नहीं। सच्चा सबूत, जो बड़ा फल देता है, झूठी चीज़ों में टिक नहीं पाता, ठीक वैसे ही जैसे आग पानी में जलती नहीं रह सकती।

6.42.30

यथापृष्टं मुने प्रोक्तं त्वयि कल्याणमस्तु ते । दिशं प्रयामोऽभिमतामागच्छोत्तिष्ठ पार्वति ॥ ३० ॥

yathāpṛṣṭaṃ mune proktaṃ tvayi kalyāṇamastu te | diśaṃ prayāmo'bhimatāmāgaccho'ttiṣṭha pārvati || 30 ||

Sage, as you asked, so it has been told. May you have well-being. Now let us go to the direction we wish. Come, get up, Parvati.

हे मुनि, जैसा तुमने पूछा था, वैसा ही बता दिया गया। तुम्हारा भला हो। अब हम अपनी मनचाही दिशा को चलते हैं। पार्वती, उठो, चलो।

6.42.31

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा नीलकण्ठोऽसौ त्यक्तपुष्पाञ्जलौ मयि । ततार परिवारेण सममम्बरकोटरम् ॥ ३१ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā nīlakaṇṭho'sau tyaktapuṣpāñjalau mayi | tatāra parivāreṇa samamambarakoṭaram || 31 ||

Sri Vasishtha said: After saying this, Nilakantha, the blue-throated god, released his handful of cupped flowers onto me, and crossed the hollow of the sky together with his company.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह कहकर नीले गले वाले देव नीलकंठ ने फूलों से भरी अपनी अंजलि मुझ पर उड़ेल दी, और अपने साथियों के साथ आकाश के खोखले विस्तार को पार कर गए।

6.42.32

तस्मिन्गते त्रिभुवनाधिपतावुमेशे स्थित्वा क्षणं तदनु संस्मृतिपूर्वमेव । अङ्गीकृतं नवपवित्रधिया मयात्मदेवार्चनं शमवतैव जिहासितं तत् ॥ ३२ ॥

tasmingate tribhuvanādhipatāvumeśe sthitvā kṣaṇaṃ tadanu saṃsmṛtipūrvameva | aṅgīkṛtaṃ navapavitradhiyā mayātmadevārcanaṃ śamavataiva jihāsitaṃ tat || 32 ||

When Umesha, lord of the three worlds, had left, I stood still for a moment. Then, after first remembering, I, with a fresh and pure mind, took up again the worship of my chosen god — the very worship that, in my tranquility, I had wished to give up.

जब तीनों लोकों के स्वामी उमेश चले गए, तो मैं एक पल को वहीं ठहरा रहा। फिर, पहले सब याद करके, मैंने एक ताज़े और शुद्ध मन से अपने आराध्य देवता की पूजा फिर से शुरू कर दी — वही पूजा जिसे मैं अपनी शांति की वजह से छोड़ देना चाहता था।

Chapter 43

6.43.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतदुक्तं परं तेन स्वयमेव च वेद्म्यहम् । राम त्वमपि जानीषे यथेदं समवस्थितम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etaduktaṃ paraṃ tena svayameva ca vedmyaham | rāma tvamapi jānīṣe yathedaṃ samavasthitam || 1 ||

Sri Vasishtha said: This highest truth was spoken by him, and I know it myself as well. Rama, you too know how things truly stand.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह सबसे बड़ी बात उसने कही थी, और मैं खुद भी इसे जानता हूँ। राम, तुम भी जानते हो कि असल में सब कुछ कैसे है।

6.43.2

यत्रालीकमलीकेन किलालीके विलोक्यते । तस्यां संसारमायायां किं सत्यं किमसन्मयम् ॥ २ ॥

yatrālīkamalīkena kilālīke vilokyate | tasyāṃ saṃsāramāyāyāṃ kiṃ satyaṃ kimasanmayam || 2 ||

Here the unreal is seen by the unreal, within what is itself unreal. In this illusion we call the world, what part of it is real, and what part is made only of the unreal?

यहाँ झूठी चीज़ को झूठी चीज़ ही देखती है, और यह देखना भी झूठा ही है। संसार के इस भ्रम में सच क्या है, और झूठ से बना क्या है?

6.43.3

यथा येन विकल्पेन यद्विकल्पेन कथ्यते । तथा तेनात्मकल्पेन नगताऽप्यनुभूयते ॥ ३ ॥

yathā yena vikalpena yadvikalpena kathyate | tathā tenātmakalpena nagatā'pyanubhūyate || 3 ||

Whatever a thing is described as, by some idea, that same thing, through that very idea, is felt as real, even when it never actually happened.

किसी चीज़ को जिस भी विचार से बताया जाता है, उसी विचार के सहारे वह सच जैसी महसूस होती है, भले ही वह कभी हुई ही न हो।

6.43.4

यथा द्रवत्वं पयसि यथा स्पन्दो नभस्वति । यथा नभसि शून्यत्वं तथा सर्गत्वमात्मनि ॥ ४ ॥

yathā dravatvaṃ payasi yathā spando nabhasvati | yathā nabhasi śūnyatvaṃ tathā sargatvamātmani || 4 ||

Just as fluidity belongs to water, just as motion belongs to the wind, just as emptiness belongs to the sky, so does the making of the world belong to the Self.

जैसे पानी में बहाव होता है, जैसे हवा में हलचल होती है, जैसे आकाश में खालीपन होता है, वैसे ही आत्मा में यह संसार बनाने का गुण है।

6.43.5

ततः प्रभृति तेनैव क्रमेणार्चनमात्मनः । अद्य यावद्गतव्यग्रः कुर्वन्नहमवस्थितः ॥ ५ ॥

tataḥ prabhṛti tenaiva kramenārcanamātmanaḥ | adya yāvadgatavyagraḥ kurvannahamavasthitaḥ || 5 ||

From that time on, in that same way, I have worshipped my own Self. Until today I have gone on doing this, free from all restlessness.

उसी समय से, उसी तरीके से, मैं अपनी आत्मा की पूजा करता रहा हूँ। आज तक मैं बिना किसी बेचैनी के यही करता आया हूँ।

6.43.6

अनेनार्चाविधानेन मयेमे राम वासराः । अखिन्नेनातिवाह्यन्ते व्यवहारपरा अपि ॥ ६ ॥

anenārcāvidhānena mayeme rāma vāsarāḥ | akhinnenātivāhyante vyavahāraparā api || 6 ||

By this way of worship, Rama, I have spent all these days without tiring, even though they were full of everyday work.

इसी तरह की पूजा से, राम, मैंने ये सारे दिन बिना थके बिताए हैं, भले ही वे रोज़मर्रा के कामों से भरे रहे हों।

6.43.7

यथाप्राप्तैः क्रियाचारकुसुमैरात्मनोऽर्चनम् । व्युच्छिन्नमपि व्युच्छिन्नं न कदाचिदहर्निशम् ॥ ७ ॥

yathāprāptaiḥ kriyācārakusumairātmano'rcanam | vyucchinnamapi vyucchinnaṃ na kadācidaharniśam || 7 ||

With whatever flowers of action and conduct came my way, I worshipped the Self. Even when it looked broken off, it was never really broken, day or night.

जो भी काम और आचरण के फूल मुझे मिलते गए, उन्हीं से मैंने आत्मा की पूजा की। यह पूजा भले ही रुकी हुई दिखे, पर यह दिन-रात कभी सच में रुकी नहीं।

6.43.8

ग्राह्यग्राहकसंबन्धे सामान्ये सर्वदेहिनाम् । योगिनः सावधानत्वं यत्तदर्चनमात्मनः ॥ ८ ॥

grāhyagrāhakasaṃbandhe sāmānye sarvadehinām | yoginaḥ sāvadhānatvaṃ yattadarcanaṃ ātmanaḥ || 8 ||

Between the thing perceived and the one who perceives it, a relation common to every living body, the yogi's watchfulness within that very relation is itself worship of the Self.

जो चीज़ देखी जाती है और जो उसे देखता है, इन दोनों के बीच जो रिश्ता है, वह हर प्राणी में एक जैसा होता है। योगी इसी रिश्ते के भीतर जो सजग रहता है, वही उसकी आत्मा की पूजा है।

6.43.9

दृष्ट्यानया रघुपते सङ्गमुक्तेन चेतसा । संसारविरलारण्ये विहरास्मिन्न खिद्यसे ॥ ९ ॥

dṛṣṭyānayā raghupate saṅgamuktena cetasā | saṃsāraviralāraṇye viharāsmi nna khidyase || 9 ||

With this way of seeing, O lord of the Raghus, and with a mind free of attachment, wander through this thin forest of the world; you will not suffer.

इसी नज़र से, हे रघुकुल के स्वामी, और मोह से मुक्त मन के साथ, संसार के इस कम घने जंगल में घूमो, तुम्हें कोई दुख नहीं होगा।

6.43.10

दुःखे महति संप्राप्ते धनबंधुवियोगजेतां दृष्टिमवष्टभ्य विचारं कुरु सुव्रत ॥ १० ॥

duḥkhe mahati saṃprāpte dhanabandhuviyogajeetāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya vicāraṃ kuru suvrata || 10 ||

When great sorrow comes upon you, born from losing wealth or family, hold on to the understanding that overcomes it, and reflect deeply; you keep your vows well.

जब धन या परिवार खोने से बड़ा दुख आ पड़े, तो उस पर जीत पाने वाली समझ को मज़बूती से थामे रहो, और गहराई से विचार करो; तुम तो अपने व्रत अच्छी तरह निभाते हो।

6.43.11

सुखदुःखे न कर्तव्ये धनबन्धूदयक्षये । एवंप्राया एव सर्वा नित्यं संसारदृष्टयः ॥ ॥ ११ ॥

sukhaduḥkhe na kartavye dhanabandhūdayakṣaye | evaṃprāyā eva sarvā nityaṃ saṃsāradṛṣṭayaḥ || 11 ||

When wealth and family rise or fall, do not turn that into pleasure or pain. Almost all the ways the world looks at things are, always, just like this.

धन और परिवार के बढ़ने या घटने को सुख या दुख मत बनाओ। संसार को देखने के लगभग सभी तरीके हमेशा ऐसे ही होते हैं।

6.43.12

जानास्येव गतिं चित्रां विषयाणां प्रमाथिनीम् । यथायान्ति यथा यान्ति यथा परिभवन्ति च ॥ ॥ १२ ॥

jānāsyeva gatiṃ citrāṃ viṣayāṇāṃ pramāthinīm | yathāyānti yathā yānti yathā paribhavanti ca || 12 ||

You already know the strange, tormenting way the objects of the senses move, how they come, how they go, and how they overpower us.

तुम पहले से ही जानते हो कि इंद्रियों के विषय कैसे अजीब और परेशान करने वाले ढंग से चलते हैं, कैसे वे आते हैं, कैसे जाते हैं, और कैसे हम पर हावी हो जाते हैं।

6.43.13

एवमेव प्रवर्तन्ते प्रेमाणि च धनानि च । एवमेवावहीयन्ते निमित्तैरविचारितैः ॥ ॥ १३ ॥

evameva pravartante premāṇi ca dhanāni ca | evamevāvahīyante nimittairavicāritaiḥ || 13 ||

In just the same way, love and wealth both arise, and in just the same way they fall away, by causes that no one has ever examined.

प्रेम और धन दोनों इसी तरह पैदा होते हैं, और इसी तरह घट भी जाते हैं, ऐसे कारणों से जिन पर किसी ने कभी सोच-विचार नहीं किया।

6.43.14

न तास्तव न तासां त्वं निर्मलान्तर्जगत्क्रियाः । इदमित्थं जगत्किंचित्किं मुधा परितप्यसे ॥ ॥ १४ ॥

na tāstava na tāsāṃ tvaṃ nirmalāntarjagatkriyāḥ | idamitthaṃ jagatkiṃcit kiṃ mudhā paritapyase || 14 ||

Those things are not yours, and you do not belong to them. What happens within the inner world stays untouched and clean. Seen this way, this world is a small thing. Why do you suffer for nothing?

वे चीज़ें तुम्हारी नहीं हैं, और तुम उनके नहीं हो। भीतर की दुनिया में जो होता है वह हमेशा निर्मल और अछूता रहता है। इस तरह देखो तो यह संसार एक छोटी सी बात है। फिर तुम बेकार में क्यों दुखी होते हो?

6.43.15

त्वमिहासि जगद्रूपं चिन्मात्रविततताकृते । निजावयवकावृत्तौ कः क्रमो हर्षशोकयोः ॥ ॥ १५ ॥

tvamihāsi jagadrūpaṃ cinmātravitatatākṛte | nijāvayavakāvṛttau kaḥ kramaḥ harṣaśokayoḥ || 15 ||

Here you yourself are the very shape of the world, you whose true form is spread out as pure consciousness. When it is only your own limbs turning through their round, what place is there for joy or sorrow?

यहाँ तुम खुद ही इस संसार का रूप हो, तुम जिसका असली रूप शुद्ध चेतना की तरह फैला हुआ है। जब यह सिर्फ तुम्हारे अपने ही अंगों का घूमना-फिरना है, तो उसमें सुख या दुख के लिए जगह कहाँ है?

6.43.16

तात चिन्मात्ररूपोऽसि न ते भिन्नमिदं जगत् । अतस्तव कथं कुत्र हेयोपादेयकल्पना ॥ १६ ॥

tāta cinmātrarūpo'si na te bhinnamidaṃ jagat | atastava kathaṃ kutra heyopādeyakalpanā || 16 ||

Dear one, you are pure consciousness itself; this world is not separate from you. So how, and where, could there be for you any idea of what to accept and what to reject?

प्रिय, तुम स्वयं शुद्ध चेतना हो; यह संसार तुमसे अलग नहीं है। तो फिर तुम्हारे लिए यह मानना कि क्या अपनाना है और क्या छोड़ना है, कैसे और कहाँ बन सकता है?

6.43.17

इति चिच्चक्रचाञ्चल्ये चिन्मये जगदम्बुधौ । तरङ्गजाले चाम्भोधौ कः क्रमो हर्षशोकयोः ॥ १७ ॥

iti ciccakracāñcalye cinmaye jagadambudhau | taraṅgajāle cāmbhodhau kaḥ kramo harṣaśokayoḥ || 17 ||

So, in the restless turning of the wheel of consciousness, in this world that is an ocean made of consciousness, like a mass of waves upon the sea, what place is there for joy or sorrow?

इस तरह, चेतना के चक्र की इस बेचैन हलचल में, चेतना से बने इस संसार रूपी समुद्र में, जैसे समुद्र में लहरों का जाल होता है, वैसे ही इसमें सुख या दुख के लिए जगह कहाँ है?

6.43.18

चिदेकतानतामेत्य सौषुप्तीमागतः स्थितिम् । अद्यप्रभृति राम त्वं तुर्यावस्थात्मको भव ॥ १८ ॥

cidekatānatāmetya sauṣuptīmāgataḥ sthitim | adyaprabhṛti rāma tvaṃ turyāvasthātmako bhava || 18 ||

Having become one with pure consciousness, and reached a stillness like deep sleep, from today on, Rama, become one whose very nature is the fourth state.

शुद्ध चेतना के साथ एक होकर, और गहरी नींद जैसी शांति को पाकर, आज से, राम, तुम अपने स्वभाव में उस चौथी अवस्था के रूप में रहो।

6.43.19

समः समसमाभासो भास्वद्वपुरुदारधीः । तिष्ठात्मार्चारतो नित्यं परिपूर्णं इवार्णवः ॥ १९ ॥

samaḥ samasamābhāso bhāsvadvapurudāradhīḥ | tiṣṭhātmārcārato nityaṃ paripūrṇaṃ ivārṇavaḥ || 19 ||

Be balanced, shining the same everywhere, your body full of light, your understanding generous. Stay always devoted to honoring the self, complete like the ocean.

समान भाव में रहो, हर जगह एक जैसी चमक वाले बनो, तुम्हारा शरीर तेजस्वी हो, बुद्धि उदार हो। हमेशा अपनी आत्मा का सम्मान करने में लगे रहो, समंदर की तरह भरपूर।

6.43.20

एतत्त्वं श्रुतवान्सर्वं स्थितस्त्वं परिपूर्णधीः । यदिच्छसीतरत्प्रष्टुं तत्पृच्छ रघुनन्दन ॥ २० ॥

etattvaṃ śrutavānsarvaṃ sthitastvaṃ paripūrṇadhīḥ | yadicchasītaratpraṣṭuṃ tatpṛccha raghunandana || 20 ||

You have heard all this; your understanding is now complete. Whatever else you wish to ask, ask it, Raghunandana.

यह सब तुमने सुन लिया है; अब तुम्हारी समझ पूरी है। जो कुछ और पूछना चाहते हो, पूछ लो, हे रघुनंदन।

6.43.21

यत्पृष्टं प्रथमे कल्पे तदद्य परिचोदय । श्रीराम उवाच । इदानीं संशयो ब्रह्मन्विनिवृत्तो विशेषतः ॥ २१ ॥

yatpṛṣṭaṃ prathame kalpe tadadya paricoday| śrīrāma uvāca| idānīṃ saṃśayo brahmanvinivṛtto viśeṣataḥ || 21 ||

Whatever was asked in that first cosmic age, put it forward again today. Sri Rama said: Now, O Brahmin, my doubt has especially ceased.

पहले युग में जो कुछ पूछा गया था, वही आज फिर पूछो। श्रीराम ने कहा: हे ब्राह्मण, अब मेरा संशय खासतौर पर मिट गया है।

6.43.22

ज्ञातं ज्ञातव्यमखिलं जाता तृप्तिरकृत्रिमा । न मुनेऽस्ति मलं द्वित्वं न चेत्यं न च कल्पनम् ॥ २२ ॥

jñātaṃ jñātavyamakhilaṃ jātā tṛptirakṛtrimā| na mune'sti malaṃ dvitvaṃ na cetyaṃ na ca kalpanam || 22 ||

O sage, all there was to know is known, and a genuine, unmade contentment has arisen in me. There is no impurity, no duality, no object of perception, no imagining.

हे मुनि, जो कुछ जानने लायक था, वह सब जान लिया है, और मुझमें एक सच्चा, बिना बनावटी संतोष जाग उठा है। न कोई मैल है, न दो-पन है, न कुछ दिखता है, न कोई कल्पना है।

6.43.23

तदा ममाभूदज्ञानं प्रशान्तमधुना तु तत् । कलङ्क आत्मनोऽस्तीति तदज्ञानवशेन या ॥ २३ ॥

tadā mamābhūdajñānaṃ praśāntamadhunā tu tat| kalaṅka ātmano'stīti tadajñānavashena yā || 23 ||

Then I was ignorant, but now that ignorance has been calmed completely — it was under the sway of that ignorance that the thought arose: the self has a stain.

उस वक्त मैं अज्ञानी था, पर अब वह अज्ञान पूरी तरह शांत हो चुका है — उसी अज्ञान के असर से यह ख्याल उठा था कि आत्मा में मैल है।

6.43.24

भ्रान्तिरासीदिदानीं सा निवृत्ता त्वत्प्रसादतः । न जायते न म्रियते न चैवात्मा कलङ्कितः ॥ २४ ॥

bhrāntirāsīdidānīṃ sā nivṛttā tvatprasādataḥ| na jāyate na mriyate na caivātmā kalaṅkitaḥ || 24 ||

That was a delusion, and it has now ceased through your grace. The self is not born, it does not die, and the self is never stained.

वह एक भ्रम था, और अब आपकी कृपा से वह मिट चुका है। आत्मा न जन्म लेती है, न मरती है, और आत्मा कभी मैली नहीं होती।

6.43.25

सर्वं च खल्विदं ब्रह्ममयमित्युदितोऽस्म्यलम् । प्रश्नेभ्यः संशयेभ्यश्च वाञ्छितेभ्यश्च सर्वतः ॥ २५ ॥

sarvaṃ ca khalvidamaṃ brahmamayamityudito'smyalam| praśnebhyaḥ saṃśayebhyaśca vāñchitebhyaśca sarvataḥ || 25 ||

All this, indeed, is nothing but Brahman — with this I have risen up completely, done with questions, doubts, and desires, on every side.

यह सब कुछ सचमुच ब्रह्म ही है — यह जानकर मैं पूरी तरह ऊपर उठ गया हूँ, हर तरफ से सवालों, शंकाओं और इच्छाओं से मुक्त होकर।

6.43.26

शुद्धं मे निर्मलं चेतस्त्वष्ट्रा यन्त्रभ्रमादिव । सर्वाचारोपदेशेषु प्राप्तप्रोक्तेषु साधुभिः ॥ २६ ॥

śuddhaṃ me nirmalaṃ cetastvaṣṭrā yantrabhramādiva | sarvācāropadeśeṣu prāptaprokeṣu sādhubhiḥ || 26 ||

Amid all the codes of conduct that holy people have received and taught, my mind stays pure and spotless, like something turned smooth on Tvashtar's lathe.

साधु-संतों ने जो भी आचार-नियम सीखे और सिखाए हैं, उन सबके बीच भी मेरा मन शुद्ध और निर्मल है, जैसे त्वष्टा के खराद पर घिसकर बनाई गई कोई चीज़।

6.43.27

निराकाङ्क्षी स्थितोऽस्म्यन्तः सुमेरुः कनकेष्विव । न तदस्त्यस्ति यत्राशा न तदस्ति यदीप्सितम् ॥ २७ ॥

nirākāṅkṣī sthito'smiyantaḥ sumeruḥ kanakeṣviva | na tadastyasti yatrāśā na tadasti yadīpsitam || 27 ||

Free from craving, I stand steady within, like Sumeru among the golden peaks. Nothing exists anywhere that is craved for; nothing exists that is desired.

इच्छा से मुक्त होकर मैं भीतर से स्थिर हूँ, जैसे सुमेरु सोने के पहाड़ों के बीच अडिग खड़ा है। कहीं भी ऐसा कुछ नहीं जिसकी चाह हो, कुछ भी नहीं जो चाहा गया हो।

6.43.28

न तदस्ति यदादेयं हेयं मध्यं चराचरे । इदं हेयमुपादेयमिदं सदिदमप्यसत् ॥ २८ ॥

na tadasti yadādeyaṃ heyaṃ madhyaṃ carācare | idaṃ heyaṃ upādeyamidaṃ sadidamapyasat || 28 ||

Among all things moving and unmoving, there is nothing to accept, nothing to reject, and nothing in between; there is no 'this should be rejected, this accepted,' no 'this is real, this too unreal.'

चलने वाली और न चलने वाली, इन सब चीज़ों में न कुछ अपनाने लायक है, न छोड़ने लायक, न बीच का कुछ; न यह कि 'यह छोड़ो, यह अपनाओ', न यह कि 'यह सच है, यह झूठ'।

6.43.29

इति चिन्ताभ्रमः शान्तो निपुणं परमो मुने । न स्वर्गमभिवाञ्छामि द्वेष्मि वापि न रौरवम् ॥ २९ ॥

iti cintābhraṃmaḥ śānto nipuṇaṃ paramo mune | na svargamabhivāñchāmi dveṣmi vāpi na rauravam || 29 ||

Thus the confusion of thought is calmed, thoroughly and completely, O sage. I do not long for heaven, nor do I hate the hell called Raurava.

इस तरह विचारों की उलझन पूरी तरह शांत हो गई है, हे मुनि। न मुझे स्वर्ग की चाह है, न रौरव नरक से नफ़रत।

6.43.30

आत्मन्येव हि तिष्ठामि मन्दराद्रिरिवाभ्रमः । कणशः कीर्णत्रिजगत्क्षीरसागरसंसृतिः ॥ ३० ॥

ātmanyeva hi tiṣṭhāmi mandarādririvābhraṃmaḥ | kaṇaśaḥ kīrṇatrijagatkṣīrasāgarasaṃsṛtiḥ || 30 ||

I stand firm in the self alone, unmoving like Mount Mandara, while the round of birth and death through the three worlds lies scattered into drops, like an ocean of milk.

मैं सिर्फ आत्मा में ही टिका हूँ, मंदराचल पर्वत जैसा अडिग, जबकि तीनों लोकों में जन्म-मरण का चक्र बूंद-बूंद बिखरा पड़ा है, जैसे दूध का समंदर बिखर गया हो।

6.43.31

विश्रान्तश्चिरसंभ्रान्तो निर्भ्रमो राम मन्दरः । अवस्त्विदमिदं वस्तु पश्येति कलनास्त्यलम् ॥ ३१ ॥

viśrāntaścirasaṃbhrānto nirbhraṃmo rāma mandaraḥ | avastvidaṃidaṃ vastu paśyeti kalanāstyalaṃ || 31 ||

Mount Mandara, long since tossed about, has come to rest, O Rama, free from all whirling. The fancy that says, 'this is unreal, this is real — look!' exists no more, entirely.

हे राम, मंदराचल पर्वत, जो लंबे समय तक हिलता रहा, अब थमकर शांत हो चुका है, पूरी तरह घूमना छोड़ चुका है। 'यह झूठ है, यह सच है, देखो' — ऐसी सोच अब पूरी तरह खत्म हो चुकी है।

6.43.32

हृदि तस्य कुसंदेहजालेन ज्वलिताधिकम् । इदमित्थं जगदिति ज्ञातं येन मुनीश्वर ॥ ३२ ॥

hṛdi tasya kusaṃdehajālena jvalitādhikaṃ | idamitthaṃ jagaditi jñātaṃ yena munīśvara || 32 ||

In whose heart, ablaze all the more with a web of evil doubts, it is held for certain that 'this world is exactly so' — O lord of sages,

हे मुनीश्वर, जिसके दिल में बुरे शक़ों का जाल आग को और भड़काता है, और जिसे यह पक्का यकीन है कि 'यह दुनिया बस ऐसी ही है' —

6.43.33

स यत्र याति कार्पण्यं जगतस्तन्न लभ्यते । विचित्राकुलकल्लोलाज्जडाद्वृत्तिविवर्जितात् ॥ ३३ ॥

sa yatra yāti kārpaṇyaṃ jagatastanna labhyate | vicitrākulakallolājjāḍādvṛttivivarjitāt || 33 ||

he, wherever he goes, does not find escape from the world's wretchedness — the world being a dull thing, empty of true activity, tossed with strange and turbulent waves.

वह जहाँ भी जाए, दुनिया की बदहाली से छुटकारा नहीं पाता — क्योंकि यह दुनिया एक जड़ चीज़ है, असली हलचल से खाली, पर अजीब और बेचैन लहरों से भरी हुई।

6.43.34

त्वत्प्रसादेन भगवंस्तीर्णाः स्मो भवसागरात् । संपदामवधिर्ज्ञातो दृष्टः सीमान्त आपदाम् ॥ ३४ ॥

tvatprasādena bhagavaṃstīrṇāḥ smo bhavasāgarāt | saṃpadāmavadhirjñāto dṛṣṭaḥ sīmānta āpadām || 34 ||

By your grace, lord, I have crossed the ocean of worldly existence. I have known the farthest limit of prosperity, and I have seen the outer edge of misfortune.

हे भगवन, आपकी कृपा से मैं संसार के समंदर को पार कर चुका हूँ। मैंने संपत्ति की आखिरी सीमा जान ली है, और मुसीबत की सीमा भी देख ली है।

6.43.35

सर्वसारेऽप्यदीनाः स्मः पूर्णाः स्मः परमेश्वर । ययावभेद्यामपरैर्दलिताशामतङ्गजम् । संसारसागरे सम्यग्वीरतामागतं मनः ॥ ३५ ॥

sarvasāre'pyadīnāḥ smaḥ pūrṇāḥ smaḥ parameśvara | yayāvabhedyāmaparairdalitāśāmatangajam | saṃsārasāgare samyagvīratāmāgataṃ manaḥ || 35 ||

Even amid every trial we are not disheartened; we are complete, O supreme lord. In the ocean of worldly existence, my mind has come to a true courage — like a rutting elephant, unbreakable by others, before which their hopes are crushed.

हर मुश्किल में भी हम निराश नहीं होते; हम भरपूर हैं, हे परमेश्वर। संसार के समंदर में मेरा मन सच्चे साहस को पा चुका है — मस्त हाथी जैसा, जिसे कोई और तोड़ नहीं सकता, जिसके आगे दूसरों की उम्मीद चकनाचूर हो जाती है।

6.43.36

परिगलितविकल्पतामुपेतं प्रगलितवाञ्छमदीनसारसत्त्वम्। त्रिजगति यदतिप्रसन्नरूपं प्रमुदितमन्तरनुत्तमं मनो मे ॥ ३६ ॥

parigalitavikalpatāmupetaṃ pragalitavāñchamadīnasārasattvam | trijagati yadatiprasannarūpaṃ pramuditamantaranuttamaṃ mano me || 36 ||

My mind has reached a state where all mental division has melted away and longing has dissolved; its essential nature is steady and unafraid; in all three worlds its form is utterly serene; it rejoices, supreme within.

मेरा मन अब ऐसी हालत में आ गया है जहाँ सारे भेद-भाव और कल्पनाएँ घुल चुकी हैं, चाहत पिघल चुकी है; इसका मूल स्वभाव स्थिर और निडर है; तीनों लोकों में इसका रूप पूरी तरह शांत है; यह भीतर से खुश और सबसे ऊँचा है।

Chapter 44

6.44.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । केवलेनेन्द्रियैः सार्धं वर्तमानार्थवर्तिना । असंगमेन मनसा यत्करोषि न तत्कृतम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kevaleneindriyaiḥ sārdhaṃ vartamānārthavartinā | asaṅgamena manasā yatkaroṣi na tatkṛtam || 1 ||

Sri Vasishtha said: When you act only through the senses, staying with whatever is right there in front of you, and your mind has no attachment, then what you do does not really count as doing anything.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब तुम सिर्फ इंद्रियों से काम करते हो, जो कुछ सामने है बस उसी में रहते हो, और मन में कोई लगाव नहीं होता, तो जो तुम करते हो वह असल में करना नहीं गिना जाता।

6.44.2

यथा प्राप्निक्षणे वस्तु प्रथमे तुष्टये तथा । न प्राप्येकक्षणादूर्ध्वमिति को नानुभूतवान् ॥ २ ॥

yathā prāptikṣaṇe vastu prathame tuṣṭaye tathā | na prāptyekakṣaṇādūrdhvamiti ko nānubhūtavān || 2 ||

A thing feels good only in the first moment you get it, just as it felt then. Beyond that one moment of getting it, it does not feel good. Who has not felt this for themselves?

कोई भी चीज़ सिर्फ उसी पहले पल में अच्छी लगती है जब वह मिलती है, जैसी उस पल लगी थी। उस एक पल के बाद वह अच्छी नहीं लगती। यह किसने खुद अनुभव नहीं किया?

6.44.4

वाञ्छाकाले तुष्टये यत्तत्र वाञ्छैव कारणम् । तुष्टिस्त्वतुष्टिपर्यन्ता तस्माद्वाञ्छां परित्यज ॥ ४ ॥

vāñchākāle tuṣṭaye yattatra vāñchāiva kāraṇam | tuṣṭistvatuṣṭiparyantā tasmādvāñchāṃ parityaj || 4 ||

At the moment you want something, the wanting itself is what gives the pleasure. But every pleasure ends in a lack of pleasure. So give up wanting.

जिस पल तुम कुछ चाहते हो, वह चाहना ही सुख का कारण होती है। पर हर सुख का अंत असंतोष में होता है। इसलिए चाहना छोड़ दो।

6.44.5

वाञ्छाकाले यथा वस्तु तुष्टये नान्यदा तथा । तस्मात्क्षणसुखे सक्तिं बालो बध्नाति नेतरः ॥ ५ ॥

vāñchākāle yathā vastu tuṣṭaye nānyadā tathā | tasmātkṣaṇasukhe saktiṃ bālo badhnāti netaraḥ || 5 ||

A thing gives pleasure only at the moment you want it, not at any other time. So only a child gets attached to a moment's pleasure - no one wiser does.

कोई चीज़ सुख सिर्फ उसी पल देती है जब उसकी चाह हो, किसी और समय नहीं। इसलिए क्षण भर के सुख से लगाव सिर्फ एक बच्चा लगाता है, समझदार कोई नहीं।

6.44.6

आत्मज्ञानाचलस्याग्रे राम विश्रान्तवानसि । अहंभावमहाश्वभ्रे न पुनः पातमर्हसि ॥ ६ ॥

ātmajñānācalasyāgre rāma viśrāntavānasi | ahaṃbhāvamahāśvabhre na punaḥ pātam arhasi || 6 ||

Rama, you are now resting on the peak of the mountain of self-knowledge. You must not fall again into the great pit of "I am this."

राम, तुम अब आत्मज्ञान के पर्वत की चोटी पर टिके हो। तुम्हें फिर से "मैं यह हूँ" वाले उस बड़े गड्ढे में नहीं गिरना चाहिए।

6.44.7

यत्स्मृतानन्तसद्दृष्टेर्ज्ञत्वमेरुशिरःस्थितेः । पुनर्गर्भानुकारान्तःपाताले पतनं कुतः ॥ ७ ॥

yatsmṛtānantasaddṛṣṭerjñatvameruśiraḥsthiteḥ | punargarbhānukārāntaḥpātāle patanaṃ kutaḥ || 7 ||

For one who has called back the sight of the endless real, and stands on the very peak of the mountain of knowing, how could there be a fall again into that dark pit below, like a womb?

जिसने अनंत सत्य के उस दर्शन को फिर से याद कर लिया है, और ज्ञान के पर्वत की चोटी पर खड़ा है, उसका फिर से नीचे उस गर्भ जैसे अंधेरे गड्ढे में गिरना कैसे हो सकता है?

6.44.8

दृश्यते ते स्वभावोऽयं समतासत्यतामयः । मन्ये क्षीणविकल्पोऽसि जातोऽसि हतकालिकः ॥ ८ ॥

dṛśyate te svabhāvo'yaṃ samatāsatyatāmayaḥ | manye kṣīṇavikalpo'si jāto'si hatakālikaḥ || 8 ||

I can see this nature of yours now - it is made of evenness and truth. I think your false ideas have worn away; you are born anew, as one for whom death itself has been struck down.

मुझे अब तुम्हारा यह स्वभाव दिख रहा है - यह समता और सच्चाई से बना है। मुझे लगता है तुम्हारे झूठे विचार खत्म हो गए हैं; तुम नए सिरे से जन्मे हो, ऐसे व्यक्ति के रूप में जिसके लिए मृत्यु का नाश हो चुका है।

6.44.9

स्वभावे संस्थितो राम इत्यावेदयतीव मे । सौम्य पूर्णार्णवप्रख्या समता निर्मला तव ॥ ९ ॥

svabhāve saṃsthito rāma ityāvedayatīva me | saumya pūrṇārṇavaprakhyā samatā nirmalā tava || 9 ||

This seems to tell me, Rama, that you have settled into your true nature. Gentle one, your evenness of mind is pure, like a full, still ocean.

राम, यह मानो मुझसे कह रहा है कि तुम अपने असली स्वभाव में टिक गए हो। हे सौम्य, तुम्हारी समता एक भरे हुए, शांत समुद्र जैसी निर्मल है।

6.44.10

आशा यातु निराशत्वमभावं यातु भावनम् । अमनस्त्वं मनो यातु तवासङ्गेन जीवतः ॥ १० ॥

āśā yātu nirāśatvamabhāvaṃ yātu bhāvanam | amanastvaṃ mano yātu tavāsaṅgena jīvataḥ || 10 ||

Let your hope turn into no more hoping. Let your sense that things exist turn into knowing they do not. Let your mind turn into no mind - since you now live without any attachment.

तुम्हारी आशा अब निराशा में बदल जाए। चीज़ों के होने का जो भाव है, वह अब न-होने में बदल जाए। तुम्हारा मन अब मन-रहित हो जाए - क्योंकि अब तुम बिना किसी लगाव के जी रहे हो।

6.44.11

यां यां वस्तुदृशं यासि तस्यां तस्यामवस्थितम् । सत्तासामान्यरूपेण ब्रह्म बृंहितचिद्घनम् ॥ ११ ॥

yāṃ yāṃ vastudṛśaṃ yāsi tasyāṃ tasyāmavasthitam | sattāsāmānyarūpeṇa brahma bṛṃhitaciddhanam || 11 ||

In whatever thing you look at, right there, in the plain fact that it exists, Brahman is present - the vast, dense mass of awareness.

तुम जिस किसी चीज़ को देखो, वहीं, उसके सिर्फ़ "होने" में ही, ब्रह्म मौजूद है - चेतना का वह विशाल, सघन समूह।

6.44.12

अज्ञातात्मा निबद्धोऽसि विज्ञातात्मा न बध्यसे । राम त्वं स्वात्मनात्मानं बोधयस्व बलादतः ॥ १२ ॥

ajñātātmā nibaddho'si vijñātātmā na badhyase | rāma tvaṃ svātmanātmānaṃ bodhayasva balādataḥ || 12 ||

Not knowing the self, you are bound. Knowing the self, you are not bound. So, Rama, with all your strength, let your own self wake you up to yourself.

आत्मा को न जानने पर तुम बंधे रहते हो। आत्मा को जान लेने पर तुम बंधन में नहीं रहते। इसलिए, राम, पूरी ताकत से, अपनी आत्मा से खुद को अपने प्रति जगाओ।

6.44.13

यत्र न स्वदते वस्तु स्वदते च यथागतम् । अवासनत्वं तद्विद्धि साम्यमाकाशकोमलम् ॥ १३ ॥

yatra na svadate vastu svadate ca yathāgatam | avāsanatvaṃ tadviddhi sāmyamākāśakomalam || 13 ||

When a thing brings you no craving, and yet you take it just as it comes - know this as being free of hidden desires, an evenness as soft as open sky.

जब कोई चीज़ तुम्हारे मन में कोई चाह नहीं जगाती, फिर भी तुम उसे जैसी आए वैसे ही ले लेते हो - इसी को वासना-रहित होना जानो, आकाश जैसी कोमल समता।

6.44.14

वासनारहितैरन्तरिन्द्रियैराहर क्रियाः । न विक्रियामवाप्नोषि खवत्क्षोभशतैरपि ॥ १४ ॥

vāsanārahitairantarindriyairāhara kriyāḥ | na vikriyāmavāpnoṣi khavatkṣobhaśatairapi || 14 ||

Do all your acts with inner senses that carry no hidden desire. Then, like the sky, you will not be shaken, even by a hundred disturbances.

अपने सारे काम ऐसी इंद्रियों से करो जिनमें कोई छिपी हुई चाह न हो। फिर तुम आकाश की तरह अडिग रहोगे, चाहे सौ उथल-पुथल भी आएं।

6.44.15

ज्ञाता ज्ञानं तथा ज्ञेयं त्रयमेकतयात्मनि । शान्तात्मानुभवाऽभव्यं न भूयो भवभागसि ॥ १५ ॥

jñātā jñānaṃ tathā jñeyaṃ trayamekatayātmani | śāntātmānubhavā'bhavyaṃ na bhūyo bhavabhāgasi || 15 ||

The knower, the knowing, and the known become one in the self. Through this experience of the peaceful self, you can no longer be born again; you will never again take part in this world of change.

जानने वाला, जानना, और जो जाना जाए - ये तीनों आत्मा में एक हो जाते हैं। शांत आत्मा के इस अनुभव से, अब तुम फिर से जन्म नहीं ले सकते; तुम फिर कभी इस बदलते संसार में हिस्सा नहीं लोगे।

6.44.16

चित्तोन्मेषनिमेषाभ्यां संसारप्रलयोदयौ । वासनाप्राणसंरोधादनिमेषं मनः कुरु ॥ १६ ॥

cittonmeṣanimeṣābhyāṃ saṃsārapralayodayau | vāsanāprāṇasaṃrodhādanimeṣaṃ manaḥ kuru || 16 ||

The world's ending and arising happen only through the mind's stirring and stilling. By holding back the breath, and the desires within it, make your mind unwavering.

संसार का मिटना और उठना मन के जागने और शांत होने से ही होता है। श्वास को, और उसमें छिपी चाहों को रोककर, अपने मन को अडिग बना लो।

6.44.17

प्राणोन्मेषनिमेषाभ्यां संसृतेः प्रलयोदयौ तमभ्यासप्रयोगाभ्यामुन्मेषरहितं कुरु ॥ १७ ॥

prāṇonmeṣanimēṣābhyāṃ saṃsṛteḥ pralayodayau tamabhyāsaprayogābhyāmunmēṣarahitaṃ kuru || 17 ||

Through the breath's stirring and stilling, the round of birth and death dissolves and arises. Through practice and effort, make your mind free of all stirring.

श्वास के जागने और शांत होने से ही जन्म-मरण के चक्र का मिटना और उठना होता है। अभ्यास और प्रयास से अपने मन को हर हलचल से मुक्त कर दो।

6.44.18

मौर्ख्योन्मेषनिमेषाभ्यां कर्मणां प्रलयोदयौ तद्विलीनं कुरु बलाद्गुरुशास्त्रार्थसंयमैः ॥ १८ ॥

mauṛkhyonmeṣanimēṣābhyāṃ karmaṇāṃ pralayodayau tadvilīnaṃ kuru balādguruśāstrārthasaṃyamaiḥ || 18 ||

Ignorance opens and closes, and from this actions rise and end. Force that ignorance to dissolve, through discipline in what the guru and the scriptures teach.

अज्ञान के खुलने और बंद होने से ही कर्म पैदा होते हैं और मिटते हैं। गुरु और शास्त्र जो सिखाते हैं, उस पर अनुशासन से चलकर उस अज्ञान को ज़बरदस्ती मिटा दो।

6.44.19

यथा वातरजःसङ्गस्पन्दात्खं भाववेदनम् तथा चितश्चेत्यतया स्पन्दादिदमुपस्थितम् ॥ १९ ॥

yathā vātarajaḥsaṅgaspandātkhaṃ bhāvavedanam tathā citaścetyatayā spandādidamupasthitam || 19 ||

When wind stirs dust, even empty space seems to become a real thing we can sense. In the same way, when consciousness stirs and turns into something known, this world stands before us.

जैसे हवा में उड़ती धूल की हलचल से खाली आकाश भी किसी ठोस चीज़ जैसा महसूस होने लगता है, वैसे ही चेतना में हलचल होने से और वह जानी हुई चीज़ बन जाने से यह जगत सामने आ खड़ा होता है।

6.44.20

दृश्यदर्शनसंबन्धस्पन्देनेयं जगद्गतिः स्फुरत्यालोककुड्यादिसंगजा वर्णधीरिव ॥ २० ॥

dṛśyadarśanasambandhaspandene yaṃ jagadgatiḥ sphuratyālokakuḍyādisaṃgajā varṇadhīriva || 20 ||

Through the vibration in the bond between the seer and the seen, this world and all its movement appear, the way the sense of color appears when light falls on a wall.

देखने वाले और दिखने वाली चीज़ के बीच के इस नाते की हलचल से ही यह जगत और उसकी सारी हलचल दिखाई देती है, जैसे रोशनी दीवार पर पड़ने से रंग दिखाई देने लगता है।

6.44.21

दृश्यदर्शनसंबन्धस्पन्दाभावे न जायते वेदना भवदाभासा चित्रपुंसामिवाशये ॥ २१ ॥

dṛśyadarśanasambandhaspandābhāve na jāyate veda nā bhavadābhāsā citrapuṃsāmivāśaye || 21 ||

When that vibration between the seer and the seen is not there, no feeling that seems real is born, just as men painted in a picture feel nothing.

जब देखने वाले और दिखने वाली चीज़ के बीच वह हलचल नहीं रहती, तब असली जैसा दिखने वाला कोई एहसास पैदा नहीं होता, जैसे चित्र में बने आदमियों को कुछ भी महसूस नहीं होता।

6.44.22

चित्तस्पन्दोत्थिता माया तदभावे विलीयते। पयःस्पन्दोत्थिता वीचिस्तदभावे विनश्यति॥ २२॥

cittaspandotthitā māyā tadabhāve vilīyate | payaḥspandotthitā vīcistadabhāve vinaśyati || 22 ||

Illusion rises from the vibration of the mind, and when that vibration stops, it melts away, just as a wave rises from the stirring of water, and when the stirring stops, the wave disappears.

माया मन की हलचल से पैदा होती है, और जब वह हलचल नहीं रहती तो वह घुल जाती है, जैसे लहर पानी की हलचल से उठती है, और हलचल न रहने पर लहर मिट जाती है।

6.44.23

त्यागेन वासनांशस्य बोधाद्वा प्राणरोधनात्। चित्ते निस्पन्दतां याते कुतः स्पन्दस्य संभवः॥ २३॥

tyāgena vāsanāṃśasya bodhādvā prāṇarodhanāt | citte nispandatāṃ yāte kutaḥ spandasya saṃbhavaḥ || 23 ||

By giving up part of one's desire, or through true understanding, or by holding the breath, when the mind becomes still, how can any vibration rise in it?

वासना के कुछ हिस्से को छोड़ने से, या सच्ची समझ से, या प्राण को रोकने से, जब मन शांत और निश्चल हो जाता है, तो उसमें हलचल कहाँ से पैदा होगी?

6.44.24

असंवित्स्पन्दमात्रेण याति चित्तमचित्तताम्। प्राणानां वा निरोधेन तदेव च परं पदम्॥ २४॥

asaṃvitspandamātreṇa yāti cittamacittatām | prāṇānāṃ vā nirodhena tadeva ca paraṃ padam || 24 ||

By stopping the mind's vibration alone, even without true understanding, the mind reaches the state of no-mind; the same is reached by holding the breath, and that state itself is the highest place.

सिर्फ़ मन की हलचल को रोक देने से भी, भले सच्चा ज्ञान न हो, मन उस अवस्था में पहुँच जाता है जहाँ मन नहीं रहता, या फिर प्राण को रोकने से भी वही अवस्था मिलती है, और वही अवस्था सबसे ऊँचा पद है।

6.44.25

दृश्यदर्शनसंबन्धे यत्सुखं पारमार्थिकम्। तदन्तैकान्तसंवित्त्या ब्रह्मदृष्ट्या मनःक्षयः॥ २५॥

dṛśyadarśanasambandhe yatsukhaṃ pāramārthikam | tadantaikāntasaṃvittyā brahmadṛṣṭyā manaḥkṣayaḥ || 25 ||

The true happiness found in the bond between the seer and the seen comes only by fully knowing exactly where that bond ends. It is through this vision of Brahman that the mind is destroyed.

देखने वाले और दिखने वाली चीज़ के इस नाते में जो सच्चा सुख है, वह तभी मिलता है जब उस नाते का असली अंत पूरी तरह जान लिया जाए। ब्रह्म को देखने की इस दृष्टि से ही मन नष्ट होता है।

6.44.26

यत्र नाभ्युदितं चित्तं तत्तत्सुखमकृत्रिमम्। न स्वर्गादौ संभवति मरौ हिमगृहं यथा॥ २६॥

yatra nābhyuditaṃ cittaṃ tattatsukhamakṛtrimam | na svargādau saṃbhavati marau himagṛhaṃ yathā || 26 ||

Wherever the mind does not rise up, that itself is real, unmade happiness. It cannot be found in heaven or anywhere like it, just as a house of ice cannot exist in a desert.

जहाँ मन उठता ही नहीं, वही असली और बिना बनावट का सुख है। यह स्वर्ग वगैरह में भी नहीं मिलता, जैसे रेगिस्तान में बर्फ़ का घर नहीं हो सकता।

6.44.27

चित्तोपशमजं स्फारमवाच्यं वचसा सुखम्क्षयातिशयनिर्मुक्तं नोदेति न च शाम्यति ॥ २७ ॥

cittopaśamajaṃ sphāramavācyaṃ vacasā sukhamkṣayātiśayanirmuktaṃ nodeti na ca śāmyati || 27 ||

The happiness born from the mind's stillness is vast, and it cannot be put into words. Free from both decay and excess, it neither rises nor fades away.

मन के शांत होने से पैदा हुआ सुख बहुत विशाल है और शब्दों में बताया नहीं जा सकता। वह न घटता है, न बढ़ता है, न कभी शुरू होता है, न कभी मिटता है।

6.44.28

बोधाद्भवति चित्तान्तो दुर्बोधाच्चित्तवेदिता । बालवेतालवत्तेन मोहश्रीर्घनतां गता ॥ २८ ॥

bodhādbhavati cittānto durbodhāccittaveditā | bālavetālavattena mohaśrīrghanatāṃ gatā || 28 ||

True understanding brings the mind to an end. Wrong understanding keeps the sense that the mind is real. The way a child truly believes in a ghost, this wrong understanding makes the power of delusion grow thick and solid.

सच्चे ज्ञान से मन का अंत हो जाता है। गलत समझ से यह एहसास बना रहता है कि मन सच में है। जैसे कोई बच्चा सच में भूत होने पर विश्वास कर लेता है, वैसे ही यह गलत समझ भ्रम की ताक़त को और गहरा और ठोस बना देती है।

6.44.29

विद्यमानमपि ह्येतच्चित्तं बोधाद्विलीयते । सदप्यसदिवाभाति ताम्रं हेमीकृतं यथा ॥ २९ ॥

vidyamānamapi hyetaccittaṃ bodhādvilīyate | sadapyasadivābhāti tāmraṃ hemīkṛtaṃ yathā || 29 ||

Even though this mind truly exists, it dissolves away through true understanding. Though it still exists, it appears as if it does not, just as copper, once turned into gold, no longer looks like copper.

यह मन असल में मौजूद होते हुए भी सच्चे ज्ञान से घुल जाता है। मौजूद होते हुए भी वह न होने जैसा दिखने लगता है, जैसे तांबा सोने में बदल जाने पर तांबे जैसा नहीं दिखता।

6.44.30

ज्ञस्य चित्तं न चित्ताख्यं ज्ञचित्तं सत्त्वमुच्यते । नामार्थान्यत्वभाक्चित्तं बोधात्ताम्रसुवर्णवत् ॥ ३० ॥

jñasya cittaṃ na cittākhyaṃ jñacittaṃ sattvamucyate | nāmārthānyatvabhākcittaṃ bodhāttāmrasuvarṇavat || 30 ||

The mind of one who has true understanding is not called mind anymore; the mind of such a knower is called pure being. After understanding, the mind takes on a different name and a different nature altogether, just as copper becomes gold.

जिसे सच्चा ज्ञान हो गया है, उसके मन को मन नहीं कहा जाता, ऐसे ज्ञानी के मन को शुद्ध सत्ता कहा जाता है। ज्ञान होने के बाद मन का नाम भी बदल जाता है और उसका मतलब भी बदल जाता है, बिलकुल जैसे तांबा सोना बन जाता है।

6.44.31

न संभवति चित्तत्वं तेन तत्प्रविलीयते । भ्रमः शाम्यति बोधेन नाभावो विद्यते सतः ॥ ३१ ॥

na saṃbhavati cittatvaṃ tena tatpravilīyate | bhramaḥ śāmyati bodhena nābhāvo vidyate sataḥ || 31 ||

Its being mind no longer holds, and so it dissolves completely. The delusion is quieted by understanding, but what truly exists never becomes nothing.

मन का मन होना ही नहीं रह जाता, इसलिए वह पूरी तरह घुल जाता है। ज्ञान से भ्रम शांत हो जाता है, पर जो सच में है वह कभी बिलकुल मिटता नहीं।

6.44.32

अवस्त्वेव विकल्पात्म चित्तादि शशशृङ्गवत् सर्वं तदात्मनस्तस्मात्तद्धि बोधाद्विलीयते ॥ ३२ ॥

avastveva vikalpātma cittādi śaśaśṛṅgavat sarvaṃ tadātmanastasmāttaddhi bodhādvilīyate || 32 ||

The mind and everything like it are, by their nature, mere imagination, unreal, like the horn of a hare. All of it exists only because of the Self, and so it dissolves completely through true understanding.

मन वगैरह सब अपने स्वभाव से केवल कल्पना हैं, असली नहीं, जैसे खरगोश का सींग, जो होता ही नहीं। यह सब कुछ केवल आत्मा के कारण दिखता है, इसलिए सच्चे ज्ञान से यह पूरी तरह घुल जाता है।

6.44.33

चित्तं सत्त्वं समायातं किंचित्कालं जगत्स्थितौ विहृत्य तुर्यावस्थायां तुर्यातीतं भवत्यतः ॥ ३३ ॥

cittaṃ sattvaṃ samāyātaṃ kiṃcitkālaṃ jagatsthitau vihṛtya turyāvasthāyāṃ turyātītaṃ bhavatyataḥ || 33 ||

Once the mind becomes pure being, it stays within the world for some time, moving in the fourth state, and after that it goes beyond even the fourth state.

मन जब शुद्ध सत्ता बन जाता है, तो कुछ समय तक जगत में रहता है, चौथी अवस्था में विचरण करता है, और उसके बाद वह उस चौथी अवस्था से भी आगे निकल जाता है।

6.44.34

ब्रह्मैव भूरिभवनभ्रमविभ्रमौघैरित्थं स्थितं सममनेकतयैकमेव सर्वात्म संभवति नेतरदङ्ग किंचिच्चित्तादिकं च न हृदीव हि संनिवेशः ॥ ३४ ॥

brahmaiva bhūribhavanabhramavibhramaughairitthaṃ sthitaṃ samamanekatayaikameva sarvātma saṃbhavati netaradaṅga kiṃcicchittādikaṃ ca na hṛdīva hi sanniveśaḥ || 34 ||

Brahman alone stands like this, through the many floods of confusion in countless worlds. Though it looks like many, it is truly one, the self of everything; there is nothing else at all, friend. The mind and everything like it has no real place, not even within the heart.

ब्रह्म ही इस तरह अनेक जगतों के भ्रम की भरमार के बीच बना रहता है। वह अनेक जैसा दिखने पर भी असल में एक ही है, सबकी आत्मा है, इसके सिवा और कुछ भी नहीं है, हे मित्र। मन वगैरह सब का कोई असली ठिकाना नहीं है, यहाँ तक कि हृदय में भी नहीं।

Chapter 45

6.45.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अत्रेमामवबोधाय विस्मयोल्लासकारिणीम् । अपूर्वां चैव संक्षेपाद्राम रम्यां कथां श्रृणु ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atremāmavabodhāya vismayollāsakāriṇīm | apūrvāṃ caiva saṃkṣepādrāma ramyāṃ kathāṃ śṛṇu || 1 ||

Sri Vasishtha said: Now, Rama, listen briefly to this pleasant and never-before-told story, which will bring wonder and joy, so that you may understand.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे राम, अब यह सुंदर और अनोखी कथा थोड़े में सुनो, जो तुम्हें समझने में मदद करेगी और तुम्हें चकित व प्रसन्न करेगी।

6.45.2

योजनानां सहस्राणि विपुलं विमलं स्फुटम् । युगैरप्यजरद्रूपमस्ति बिल्वफलं महत् ॥ २ ॥

yojanānāṃ sahasrāṇi vipulaṃ vimalaṃ sphuṭam | yugairapyajaradrūpamasti bilvaphalaṃ mahat || 2 ||

There is a great bilva fruit, thousands of yojanas across, vast, clear and bright, whose form never grows old, even through the ages.

एक विशाल बिल्व फल है, जो हज़ारों योजन बड़ा, साफ़ और चमकीला है; युगों-युगों में भी इसका रूप कभी बूढ़ा नहीं होता।

6.45.3

अविनाशरसाधारं सुधामधुरसारवत् । पुराणमपि बालेन्दुदलमार्दवसुन्दरम् ॥ ३ ॥

avināśarasādhāraṃ sudhāmadhurasāravat | purāṇamapi bālendudalamārdavasundaram || 3 ||

Its juice never spoils, sweet like the very essence of nectar. Though very old, it is soft and lovely, like the crescent of a young moon.

इसका रस कभी बिगड़ता नहीं, यह अमृत के सार जैसा मीठा है। यह बहुत पुराना है, फिर भी नए चाँद की पतली कोर जैसा कोमल और सुंदर है।

6.45.4

व्यूहमध्यमहामेरुं मन्दराद्रिरिवाचलम् । महाकल्पान्तवात्याया अपि वेगैरचालितम् ॥ ४ ॥

vyūhamadhyamahāmeruṃ mandarādririvācalam | mahākalpāntavātyāyā api vegairacālitam || 4 ||

It stands like the great Mount Meru amid the ranges, unmoving like Mount Mandara. Even the fierce winds of the storm at the end of a great world age cannot shake it.

यह पर्वतों के बीच खड़े महामेरु जैसा और मंदराचल जैसा अटल है। महाप्रलय के प्रचंड तूफ़ान की हवाएँ भी इसे हिला नहीं पातीं।

6.45.5

यस्य बिल्वफलस्योच्चैब्रह्माण्डानि समीपतः । हरन्ति लीलां शैलाधो राजिकाकणपद्धतेः ॥ ५ ॥

yasya bilvaphalasyoccai brahmāṇḍāni samīpataḥ | haranti līlāṃ śailādho rājikākaṇapaddhateḥ || 5 ||

Next to this bilva fruit, all the universes nearby look as small as a row of mustard seeds lying at the foot of a mountain.

इस बिल्व फल के आगे आस-पास के सारे ब्रह्मांड ऐसे छोटे दिखते हैं जैसे किसी पहाड़ के नीचे सरसों के दानों की एक कतार।

6.45.7

स्यन्दमानरसापूरां स्वाद्वीं रसचमत्कृतिम् । यस्यातिशेते नो कश्चिदपि राघव षड्रसः ॥ ७ ॥

syandamānarasāpūrāṃ svādvīṃ rasacamatkṛtim| yasyātiśete no kaścidapi rāghava ṣaḍrasaḥ || 7 ||

It is full of flowing, sweet juice, a marvel of taste. Rama, not one of the six flavors can surpass it.

यह बहते हुए मीठे रस से भरा है, स्वाद का चमत्कार है। हे राम, छहों रसों में से कोई भी इसकी बराबरी नहीं कर सकता।

6.45.8

न कदाचन पाकेन पातं तेन समेति यत् । सदैव पक्वमप्यङ्ग जरसा यन्न बाध्यते ॥ ८ ॥

na kadācana pākena pātaṃ tena sameti yat| sadaiva pakvamapyanga jarasā yanna bādhyate || 8 ||

It never spoils or decays through ripening. Dear one, though it is always ripe, old age never touches it.

यह पककर कभी खराब या सड़ता नहीं। हे प्रिय, यह हमेशा पका रहता है, फिर भी बुढ़ापा इसे कभी नहीं छूता।

6.45.9

ब्रह्मविष्ण्विन्द्ररुद्राद्या जरठाः केचिदेव न । यस्योत्पत्तिं विजानन्ति मूलं वा वृन्तमेव च ॥ ९ ॥

brahmaviṣṇvindrarudrādyā jarṭhāḥ kecid eva na| yasyotpattiṃ vijānanti mūlaṃ vā vṛntameva ca || 9 ||

Not even the old gods, Brahma, Vishnu, Indra, Rudra and the rest, know where it came from, or where its root is, or where its stem is.

ब्रह्मा, विष्णु, इंद्र, रुद्र जैसे पुराने देवता भी नहीं जानते कि यह कहाँ से आया, इसकी जड़ कहाँ है या इसका डंठल कहाँ है।

6.45.10

अदृष्टाङ्कुरवृक्षस्य त्वदृष्टकुसुमाकृतेः । अस्तम्भमूलशाखस्य फलस्यास्य महाकृतेः ॥ १० ॥

adṛṣṭāṅkuravṛkṣasya tvadṛṣṭakusumākṛteḥ| astambhamūlaśākhasya phalasyāsya mahākṛteḥ || 10 ||

This great fruit grew on a tree whose sprout no one ever saw and whose flower no one ever saw either, a tree with no trunk, no root and no branch.

यह महान फल ऐसे पेड़ पर लगा जिसका अंकुर किसी ने कभी नहीं देखा और जिसका फूल भी कभी नहीं देखा गया, ऐसा पेड़ जिसका न कोई तना है, न जड़, न कोई डाली।

6.45.11

एकपिण्डघनाकारविततस्थौल्यशालिनः । यस्योत्पत्तिविकारादिपरिणामो न दृश्यते ॥ ११ ॥

ekapiṇḍaghanākāravitata sthaulyaśālinaḥ| yasyotpatti vikārādipariṇāmo na dṛśyate || 11 ||

It has the shape of a single dense mass, spread out and huge. No one has ever seen it being born, or changing, or its form shifting in any way.

यह एक ही ठोस और सघन आकार का है, फैला हुआ और बहुत बड़ा। इसका जन्म होते हुए, इसे बदलते हुए, या इसका रूप किसी तरह बदलते हुए, यह किसी ने कभी नहीं देखा।

6.45.12

समस्तफलसारस्य फलस्यास्य महाकृतेः । न मज्जा नाष्ठि विततो निर्विकारो निरञ्जनः ॥ १२ ॥

samastaphalasārasya phalasyāsya mahākṛteḥ | na majjā nāṣṭhi vitato nirvikāro nirañjanaḥ || 12 ||

This great fruit is the essence of all fruits. It has no stone and no seed pulp; it is vast, it never changes, and it is spotless.

यह महान फल सभी फलों का सार है। इसमें न कोई गुठली है, न बीज का गूदा; यह बहुत बड़ा है, कभी नहीं बदलता, और बिलकुल निर्मल है।

6.45.13

शिलान्तरिव नीरन्ध्रः स्यन्दमानेन्दुबिम्बवत्। रसं स्वसंविदास्वाद्यं स्यन्दमान इवामृतम्॥ १३॥

śilāntariva nīrandhraḥ syandamānendubimbavat | rasaṃ svasaṃvidāsvādyaṃ syandamāna ivāmṛtam || 13 ||

It is solid, without a single gap, like the inside of a rock, yet it flows like the disc of the moon. Its juice, which only one's own awareness can taste, flows on like nectar.

यह चट्टान के भीतरी हिस्से जैसा ठोस है, जिसमें कोई भी छेद नहीं; फिर भी यह चाँद की थाली जैसा बहता है। इसका रस, जिसे केवल अपनी ही चेतना चख सकती है, अमृत की तरह बहता रहता है।

6.45.14

कोशः सकलसौख्यानां शीतलालोककारकः। शैलाभोऽमृतपिण्डाभो मज्जाआत्मफलस्थितेः॥ १४॥

kośaḥ sakalasaukhyānāṃ śītalālokakārakaḥ | śailābho'mṛtapiṇḍābho majjāātmaphalasthiteḥ || 14 ||

It is a storehouse of every comfort, giving off a cool light. It looks like a mountain, like a lump of nectar, the covering around the marrow-self that lives inside this fruit.

यह हर सुख का भंडार है, ठंडी चमक फैलाने वाला। यह किसी पहाड़ जैसा, अमृत के पिंड जैसा दिखता है, इस फल के भीतर बसे उस गूदे-रूपी आत्मा का आवरण।

6.45.15

तस्मात्परममज्जा तु यासौ स्वात्मचमत्कृतिः। अनन्तरक्षितो नित्यमनन्यः श्रीफलं गतः॥ १५॥

tasmātparamamajjā tu yāsau svātmacamatkṛtiḥ | anantarakṣito nityamananyaḥ śrīphalaṃ gataḥ || 15 ||

So that highest marrow, the very wonder of one's own self, always guarded, never broken, and without a second, has become this glorious fruit.

इसलिए वह सबसे गहरा गूदा, जो खुद अपनी चेतना का चमत्कार है, हमेशा सुरक्षित, कभी न टूटने वाला, और जिसके जैसा कोई दूसरा नहीं, यही वह दिव्य फल बन गया।

6.45.16

स्वसंनिवेशवैचित्र्यमन्यत्वफलतां गताम्। अत्यजन्त्या तया तन्व्या स्थूलयाप्यतिबालया॥ १६॥

svasaṃniveśavaicitryamanyatvaphalatāṃ gatām | atyajantyā tayā tanvyā sthūlayāpyatibālayā || 16 ||

The many different forms of her own making turned into this fruit of otherness. That slender one did not give it up, though she was also vast, and though she was very young.

उसके अपने बनाए अनेक रूप ही यह दूसरेपन का फल बन गए। उस पतली-सी ने इसे छोड़ा नहीं, भले ही वह बहुत बड़ी भी थी और बिलकुल नई-नवेली भी।

6.45.17

इयमस्मीति कलनादसदप्यन्यतामलम्। भेदाद्यसंभवदिदं स्वयमुत्पाद्य भावितम्॥ १७॥

iyamasmeeti kalanaadasadapyanyataamalam | bhedaadyasambhavadidam svayamutpaadya bhaavitam || 17 ||

By the thought I am this, though it was not real, this became something wholly other. Such a division could not have been possible, yet it produced this out of itself and made it seem real.

मैं यह हूँ, इस विचार से, यद्यपि यह सच नहीं था, यह पूरी तरह से अलग बन गया। ऐसा भेद संभव ही नहीं था, फिर भी इसने इसे स्वयं उत्पन्न कर दिया और सच जैसा बना दिया।

6.45.18

अहंकलासमुदयसमनन्तरमेव सा । वलिताकाशशब्दाङ्गत्रैलोक्यपरमाणुभिः ॥ १८ ॥

ahankaalasamudayasamanantaramaeva saa | valitaakaashashabdaangatrailokyaparamaanubhih || 18 ||

Right after this fragment of I arose, she got tangled up with the atoms of space, sound, the body and the three worlds.

मैं का यह अंश उठते ही, वह आकाश, शब्द, शरीर और तीनों लोकों के कणों से उलझ गई।

6.45.19

इत्यनुक्रमतो याता संविच्छक्तिस्वरूपताम् । मज्जा प्राक् संनिवेशं स्वं तमेवाप्य समुज्झती ॥ १९ ॥

ityanukramato yaataa samvichchaktisvarupataam | majjaa praak sannivesham svam tamevaapy samujjhati || 19 ||

In this way, step by step, she came to have the very nature of the power of consciousness. On reaching that same state, the marrow let go of her own earlier form.

इस प्रकार, धीरे-धीरे, वह चेतना की शक्ति के स्वरूप तक जा पहुँची। उसी अवस्था को पाकर, गूदे ने अपना पुराना रूप छोड़ दिया।

6.45.20

संविच्छक्तया तया तत्र ततस्तरलरूपया । निज एव समे रूपे दृगित्थं संप्रसारिता ॥ २० ॥

samvichchaktayaa tayaa tatra tatastaralaruupayaa | nija eva same ruupe drigittham samprasaaritaa || 20 ||

Through that power of awareness, which was trembling there in shape, seeing then spread itself out into that same one form, its very own.

उस चेतना की शक्ति के द्वारा, जो वहाँ काँपते हुए रूप में थी, दृष्टि उसी एक अपने ही रूप में इस तरह फैल गई।

6.45.21

इदं व्योम महानन्तमियं कालमयी कला । इयं नियतिरित्युक्ता क्रियेयं स्पन्दरूपिणी ॥ २१ ॥

idam vyoma mahaanantamiyam kaalamayee kalaa | iyam niyatiritiuktaa kriyeyam spandaruupinee || 21 ||

This is space, vast and endless. This is the portion made of time. This is called destiny. And this is action, taking the form of vibration.

यह आकाश है, विशाल और अनंत। यह समय से बना हुआ अंश है। इसे नियति कहा गया है। और यह क्रिया है, जो कंपन के रूप में है।

6.45.22

अयं संकल्पविस्तारस्त्वयमाशान्तरभ्रमः । रागद्वेषस्थितिरियं हेयोपादेयधीरियम् ॥ २२ ॥

ayaṃ saṃkalpavistārastvayamāśāntarabhramaḥ | rāgadveṣasthitiriyam heyopādeyadhīriyam || 22 ||

This is the spreading out of the will. This is the wandering from one desire to another. This is the state of liking and disliking. This is the mind that decides what to take and what to leave.

यह इच्छा का फैलाव है। यह एक चाह से दूसरी चाह में भटकना है। यह पसंद और नापसंद की स्थिति है। यह वह बुद्धि है जो तय करती है कि क्या लेना है और क्या छोड़ना है।

6.45.23

इयं त्वत्ता त्वियं मत्ता तत्तेयं संस्थिता स्वयम् । ब्रह्माण्डौघोऽयमूर्ध्वस्थः स्वयमङ्गोर्ध्वमप्यधः ॥ २३ ॥

iyaṃ tvattā tviyaṃ mattā tatteyaṃ saṃsthitā svayam | brahmāṇḍaugho'yamūrdhvasthaḥ svayamaṅgordhvamapyadhaḥ || 23 ||

This is your sense of being 'you,' and this is my sense of being 'I' — that too stands there on its own, as yours. This is the whole flood of universes, standing above, itself a body reaching both upward and downward.

यह तुम्हारा 'तुम' होने का भाव है, और यह मेरा 'मैं' होने का भाव है — यह भी तुम्हारा अपना है, अपने आप खड़ा हुआ। यह ब्रह्मांडों की पूरी बाढ़ है, ऊपर खड़ी हुई, स्वयं एक ऐसा शरीर जो ऊपर और नीचे दोनों तरफ फैला है।

6.45.24

अयं पुरः पार्श्वतोऽयं पश्चादाराद्दवीयसी । इदं भूतं वर्तमानं भविष्यत्त्विदमित्यपि ॥ २४ ॥

ayaṃ puraḥ pārśvato'yaṃ paścāddārāddavīyasī | idaṃ bhūtaṃ vartamānaṃ bhaviṣyattvidamityapi || 24 ||

This is in front, this is at the side, this is behind, and this is far away, farther still. This is the past, this is the present, and this too is the future.

यह सामने है, यह बगल में है, यह पीछे है, और यह दूर है, उससे भी दूर। यह भूतकाल है, यह वर्तमान है, और यह भविष्य भी है।

6.45.25

इदं भूतं वर्तमानं भविष्यत्त्विदमित्यपि । ब्रह्माण्डमण्डपापीडक्रीडामण्डपमण्डलम् ॥ २५ ॥

idaṃ bhūtaṃ vartamānaṃ bhaviṣyattvidamityapi | brahmāṇḍamaṇḍapāpīḍakrīḍāmaṇḍapamaṇḍalam || 25 ||

This is the past, this is the present, and this too is the future. This is the round crest that sits on the playing-hall built above the great hall of the universe.

यह भूतकाल है, यह वर्तमान है, और यह भविष्य भी है। यह वह गोल शिखर है जो ब्रह्मांड के बड़े भवन के ऊपर बने खेल-मंडप पर टिका है।

6.45.26

अनन्तकलनातत्त्वपरिपल्लविता हरेः । हृदब्जकर्णिका चेयं लोकपद्माक्षमालिका ॥ २६ ॥

anantakalanātattvaparipallavitā hareḥ | hṛdabjakarṇikā ceyaṃ lokapadmākṣamālikā || 26 ||

This is the whorl of Hari's heart-lotus, grown full with the truth of endless motion. And this is the string of beads on the world's lotus.

यह हरि के हृदय-कमल की कर्णिका है, जो अनंत गति के सत्य से भरपूर खिली है। और यह संसार रूपी कमल की माला है।

6.45.27

इयं कीर्णमहारुद्रगणापूरितकोटरा । दीर्घाभ्रसरणिर्भ्रान्तध्वंसनेभ्यः प्रभाविनी ॥ २७ ॥

iyam kīrṇamahārudraghaṇāpūritakoṭarā | dīrghābhrasaraṇirbhāntadhvaṃsanebhyaḥ prabhāvinī || 27 ||

This one, her hollow filled with the scattered hosts of the great Rudras, is the long path through the clouds, with the power to destroy those who wander lost.

यह वह है जिसकी खोखली जगह महान रुद्रों के बिखरे हुए समूहों से भरी है। यह बादलों का लंबा मार्ग है, जिसमें भटके हुओं का नाश करने की शक्ति है।

6.45.28

इयं मेरुः ककुभ्यत्र जगत्पङ्कजकर्णिका । स्फुरदिन्दुमधूल्लासलम्पटामरषट्पदा ॥ २८ ॥

iyam meruḥ kakubhyatra jagatpaṅkajakarṇikā | sphuradindumadhūllāsalampaṭāmaraṣaṭpadā || 28 ||

This is Meru among the directions here, the whorl of the world's lotus, the deathless bee greedy for the joy of the nectar of the shimmering moon.

यह यहाँ दिशाओं के बीच मेरु पर्वत है, संसार रूपी कमल की कर्णिका है, वह अमर भौंरा है जो चमकते चाँद के मधु के आनंद का लालची है।

6.45.29

इयमुद्दामसौगन्ध्यस्वर्गश्रीपुष्पमञ्जरी । जगज्जरठवृक्षस्य रजोनरकमूलिनः ॥ २९ ॥

iyamuddāmasaugandhyasvargasrīpuṣpamañjarī | jagajjaraṭhavṛkṣasya rajonarakamūlinaḥ || 29 ||

This is the richly fragrant cluster of heaven's glorious flowers, on the old tree of the world whose root is in dust and hell.

यह स्वर्ग की शोभा वाले फूलों का भरपूर सुगंधित गुच्छा है, संसार रूपी पुराने वृक्ष पर, जिसकी जड़ धूल और नरक में है।

6.45.30

इयं च ताराकिंजल्का ब्रह्मार्णवतटस्थिता । अपारापारपर्यन्ता व्योमलीलासरोजिनी ॥ ३० ॥

iyam ca tārākiñjalkā brahmārṇavataṭasthitā | apārāpāraparyantā vyomalīlāsarojinī || 30 ||

And this is the lotus with stars for its filaments, standing on the shore of the ocean of Brahman, reaching all the way to what has no end, the lotus-plant that plays in the sky.

और यह वह कमल है जिसके रेशे तारे हैं, जो ब्रह्म रूपी सागर के किनारे खड़ा है, जो वहाँ तक फैला है जहाँ कोई अंत नहीं है, वह कमल-लता जो आकाश में खेलती है।

6.45.31

इयं क्रियापरिग्राहा तरङ्गतरलावली । सर्गावर्तविधानस्थभूरिभूतपरम्परा ॥ ३१ ॥

iyam kriyāparigrāhā taraṅgataralāvalī | sargāvartavidhānasthabhūribhūtaparamparā || 31 ||

This takes hold of every action, a row of trembling waves. She is the vast chain of beings caught in the whirlpool of creation's law.

यह हर क्रिया को अपने भीतर समेटती है, काँपती हुई लहरों की एक कतार। यह सृष्टि के नियम के भँवर में फँसे हुए जीवों की विशाल कड़ी है।

6.45.32

इयत्तया प्रसरिणी क्षणकल्पादिपल्लवातेजःकेसरिणी कालनलिनी व्योमपङ्कजा ॥ ३२ ॥

iyattayā prasariṇī kṣaṇakalpādipallavātejaḥkesariṇī kālanalinī vyomapaṅkajā || 32 ||

She spreads out to her full measure, her shoots being the moment, the aeon, and every span of time between. Her filaments are light itself. She is the lotus of time, the lotus of the sky.

वह अपने पूरे विस्तार में फैलती है, उसके अंकुर पल, कल्प और समय के हर हिस्से हैं। उसके रेशे प्रकाश ही हैं। वह समय का कमल है, आकाश का कमल है।

6.45.33

इमा भावविकाराढ्या जरामृतिविषूचिकाःविद्याविद्याविलासाढ्या इमाः शास्त्रार्थदृष्टयः ॥ ३३ ॥

imā bhāvavikārāḍhyā jarāmṛtiviṣūcikāḥvidyāvidyāvilāsāḍhyā imāḥ śāstrārthadṛṣṭayaḥ || 33 ||

These, full of every change of state, are old age, death, and cholera. These, full of the play of knowledge and ignorance, are the views that give the scriptures their meaning.

ये, हर तरह के बदलाव से भरी हुई, बुढ़ापा, मृत्यु और हैजा हैं। ये, ज्ञान और अज्ञान के खेल से भरी हुई, वे दृष्टियाँ हैं जो शास्त्रों को उनका अर्थ देती हैं।

6.45.34

इति सा तस्य बिल्वस्य निजमज्जाचमत्कृतिःसंकल्पसंनिवेशान्तरेवैव कृतसंस्थितिः ॥ ३४ ॥

iti sā tasya bilvasya nijamajjācamatkṛtiḥsaṃkalpasaṃniveśāntarevaiva kṛtasaṃsthitiḥ || 34 ||

Thus she is the wondrous pulp of that bel fruit, her place set only within the gap where the will comes to rest.

इस तरह वह उस बेल फल का अद्भुत गूदा है, जिसका स्थान केवल उस अंतराल में बना है जहाँ इच्छा टिकती है।

6.45.35

शान्ता स्वस्था निराबाधा सौम्या भावनयोज्झिताकर्तृत्वमप्यकर्तृत्वं कृत्वाऽकृत्वेव संस्थिता ॥ ३५ ॥

śāntā svasthā nirābādhā saumyā bhāvanayojjhitākartṛtvamapyakartṛtvaṃ kṛtvā'kṛtveva saṃsthitā || 35 ||

She is peaceful, at ease, untroubled, and gentle, free of imagining. Having done both acting and not acting, she stands as though she had done neither.

वह शांत है, सहज है, बाधा-रहित है, और सौम्य है, कल्पना से मुक्त है। कर्तापन और अकर्तापन दोनों करके भी, वह ऐसे खड़ी है जैसे उसने कुछ भी न किया हो।

6.45.36

एषैकिकैव विविधेव विभाव्यमाना नैकात्मिका न विविधा ननु सैव सैवसत्यास्थिता सकलशान्तिसमैकरूपा सर्वात्मिकातिमहती चितिरूपशक्तिः ॥ ३६ ॥

eṣaikikaiva vividheva vibhāvyamānā naikātmikā na vividhā nanu saiva saivasatyāsthitā sakalaśāntisamaikarūpā sarvātmikātimahatī citirūpaśaktiḥ || 36 ||

She alone, though seen as many, is not one alone and not many either. She indeed, she alone, stands as the truth. Equal to complete peace, one same form, the self of everything, immense — this is the power that takes the shape of awareness.

वह अकेली होते हुए भी अनेक जैसी दिखती है, न वह एक अकेली है, न अनेक। वही, केवल वही, सत्य के रूप में टिकी है। पूर्ण शांति के समान, एक ही रूप, सबकी आत्मा, विराट — यही वह शक्ति है जो चेतना का रूप लेती है।

Chapter 46

6.46.1

श्रीराम उवाच । भगवन्सर्वसारज्ञ त्वयैषा बिल्वरूपिणी । महाचिद्घनसत्तेह कथितेति मतिर्मम ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansarvasārajña tvayaishā bilvarūpiṇī | mahāciddhanasatteha kathiteti matirmama || 1 ||

Sri Rama said: Lord, you who know the essence of everything, I understand that you have just described this great dense reality of consciousness here in the form of a wood-apple.

श्रीराम ने कहा कि भगवन, आप जो हर चीज़ का सार जानते हैं, मुझे लगता है कि आपने अभी यहाँ चेतना की इस महान सघन सत्ता को बेल के फल के रूप में बताया है।

6.46.2

चिन्मज्जारूपमखिलमहंतादीदमाततम् । न मनागपि भेदोऽस्ति द्वैतैक्यकलनात्मकः ॥ २ ॥

cinmajjārūpamakhilamahantādīdamātatam | na manāgapi bhedo'sti dvaitaikyakalanātmakaḥ || 2 ||

All this, starting from the sense of 'I', extends as the very pulp of consciousness. There is not the slightest difference in it, none that could be counted as two-ness or one-ness.

'मैं' के भाव से लेकर यह सब कुछ चेतना के इसी गूदे के रूप में फैला हुआ है। इसमें रत्ती भर भी भेद नहीं है, ऐसा भेद जिसे दो या एक कहकर गिना जा सके।

6.46.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथा ब्रह्माण्डकूश्माण्डमज्जामेर्वादिसंस्थितिः । तथा चिद्विल्वमज्जेयं ब्रह्माण्डादिजगत्स्थितिः ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathā brahmāṇḍakūśmāṇḍamajjāmervādisaṃsthitiḥ | tathā cidvilvamajjeyaṃ brahmāṇḍādijagatsthitiḥ || 3 ||

Sri Vasishtha said: Just as, inside the pulp of that pumpkin which is itself like a cosmic egg, Mount Meru and everything else have their place, so inside this pulp of the wood-apple of consciousness, the cosmic egg and the whole world have their place.

श्री वसिष्ठ ने कहा कि जैसे उस कद्दू के गूदे के भीतर, जो स्वयं एक ब्रह्मांड जैसा है, मेरु पर्वत और बाकी सब कुछ अपनी जगह पर टिका है, वैसे ही चेतना के इस बेल के गूदे के भीतर ब्रह्मांड और पूरा संसार अपनी जगह पर टिका है।

6.46.4

सृष्टिचिद्विल्वमज्जा स्यात्स्वाधारान्यत्वसंभवे । विनाशः सर्वगस्यास्य न चैतत्संभवत्यलम् ॥ ४ ॥

sṛṣṭicidvilvamajjā syātsvādhārānyatvasaṃbhave | vināśaḥ sarvagasyāsya na caitatsaṃbhavyalam || 4 ||

Creation could be something other than this pulp of the wood-apple of consciousness only if it could become separate from its own ground. That would mean the destruction of this consciousness that pervades everything, and that simply cannot happen.

सृष्टि तभी चेतना के इस बेल के गूदे से अलग कोई चीज़ हो सकती थी, जब वह अपने ही आधार से अलग हो पाती। इसका मतलब होता सब में व्याप्त इस चेतना का नाश, और ऐसा हो ही नहीं सकता।

6.46.5

चितेर्मरीचबीजस्य जगदाख्या चमत्कृतिः । स्थिता सौषुप्तसौम्यान्तः शिलान्तःसंनिवेशवत् ॥ ५ ॥

citeramarīcabījasya jagadākhyā camatkṛtiḥ | sthitā sauṣuptasauyāntaḥ śilāntaḥsanniveśavat || 5 ||

This wonder called the world is a tiny spark-seed of consciousness. It rests peacefully, as if in deep sleep, the way an arrangement rests inside a stone.

संसार नाम का यह चमत्कार चेतना का एक छोटा-सा चिंगारी-बीज है। यह वैसे ही शांति से, मानो गहरी नींद में, टिका है, जैसे किसी पत्थर के भीतर कोई बनावट टिकी होती है।

6.46.6

अत्रेमामिन्दुवदन चित्रां विस्मयकारिणीम् । वर्ण्यमानां मया रम्यामन्यामाख्यायिकां शृणु ॥ ६ ॥

atremāminduvadana citrāṃ vismayakāriṇīm | varṇyamānāṃ mayā ramyāmanyāmākhyāyikāṃ śṛṇu || 6 ||

Now listen, moon-faced one, to this other story, which I will tell, wondrous, astonishing and delightful.

अब सुनो, हे चंद्रमुख, एक और कहानी, जो मैं तुम्हें सुनाने जा रहा हूँ, अद्भुत, चकित कर देने वाली और मनभावन।

6.46.7

स्निग्धा स्पष्टा मृदुस्पर्शा महाविस्तारशालिनी । निविडा नित्यमक्षुब्धा क्वचिदस्ति महाशिला ॥ ७ ॥

snigdhā spaṣṭā mṛdusparśā mahāvistāraśālinī | niviḍā nityamakṣubdhā kvacidasti mahāśilā || 7 ||

Somewhere there is a great rock, smooth, clear, soft to the touch, vast in size, dense, and forever undisturbed.

कहीं एक विशाल चट्टान है, चिकनी, साफ़, छूने में मुलायम, आकार में बहुत बड़ी, घनी, और सदा अडिग।

6.46.8

तस्यामन्तः प्रफुल्लानि पद्मानि सुबहून्यपि । सरस्यामिव रम्याणि तान्यनन्तानि सन्ति वै ॥ ८ ॥

tasyāmantaḥ praphullāni padmāni subahūnyapi | sarasyāmiva ramyāṇi tānyanantāni santi vai || 8 ||

Inside it there are countless fully-opened lotuses, delightful as if in a lake, endless in number.

उसके भीतर अनगिनत पूरी तरह खिले हुए कमल हैं, मानो किसी सरोवर में हों, बहुत सुंदर और असंख्य।

6.46.9

अन्योन्यप्रोतपत्राणि मिथो विघटितानि च । मिथश्चोपनिगूढानि गूढानि प्रकटानि च ॥ ९ ॥

anyonyaprotapatrāṇi mitho vighaṭitāni ca | mithaścopanigūḍhāni gūḍhāni prakaṭāni ca || 9 ||

Some have their petals threaded into one another, some are apart from one another. Some lie hidden close together, some are hidden, and some are plainly visible.

किन्हीं की पंखुड़ियाँ आपस में गुंथी हुई हैं, किन्हीं की एक-दूसरे से अलग हैं। कुछ आपस में छिपकर पास-पास हैं, कुछ छिपी हुई हैं और कुछ खुलकर दिखती हैं।

6.46.10

अधोमुखान्यूर्ध्वमुखान्यपि तिर्यङ्मुखानि च । मिथोमिलितमूलानि मिथःप्रोतमुखान्यपि ॥ १० ॥

adhomukhānyūrdhvamukhānyapi tiryaṅmukhāni ca | mithomilitamūlāni mithaḥprotamukhānyapi || 10 ||

Some face downward, some face upward, and some face sideways. Some have their roots joined together, and some have their faces threaded into one another.

कुछ नीचे की ओर मुँह किए हैं, कुछ ऊपर की ओर, और कुछ आड़े-तिरछे। कुछ की जड़ें आपस में जुड़ी हैं, और कुछ के मुँह आपस में गुंथे हैं।

6.46.11

कर्णिकाजालमूलानि मूलान्तःकर्णिकानि च । ऊर्ध्वमूलान्यधोमूलान्यमूलानीतराणि च ॥ ११ ॥

karṇikājālamūlāni mūlāntaḥkarṇikāni ca | ūrdhvamūlānyadhomūlānyamūlānītarāṇi ca || 11 ||

Some have a whole cluster of seed-pods at their roots, and some have the seed-pod inside the root itself. Some are rooted upward, some rooted downward, and others have no roots at all.

कुछ की जड़ों में बीज-कोशों का पूरा गुच्छा है, और कुछ की जड़ के भीतर ही बीज-कोश है। कुछ ऊपर की ओर जड़ें फैलाए हैं, कुछ नीचे की ओर, और कुछ की तो जड़ ही नहीं है।

6.46.12

तेषां च निकटे सन्ति शङ्खाः शतसहस्रशः । चक्रौघाश्च महाकाराः पद्मवत्संनिवेशिनः ॥ १२ ॥

teṣāṃ ca nikṭe santi śaṅkhāḥ śatasahasraśaḥ | cakraughāśca mahākārāḥ padmavatsanniveśinaḥ || 12 ||

Near them are hundreds of thousands of conch shells, and great masses of discs, arranged just like the lotuses.

उनके पास सैकड़ों-हज़ारों शंख हैं, और चक्रों के बड़े-बड़े समूह भी, जो कमलों की तरह ही सजे हुए हैं।

6.46.13

श्रीराम उवाच । सत्यमेतन्मया दृष्टा तादृशी सा महाशिला । शालग्रामे हरेर्धाम्नि विद्यते परिवारिणी ॥ १३ ॥

śrīrāma uvāca | satyametanmayā dṛṣṭā tādṛśī sā mahāśilā | śālagrāme harerdhāmni vidyate parivāriṇī || 13 ||

Sri Rama said: This is true, I have seen just such a great rock. At Shalagrama, the abode of Hari, there is one like that, complete with its whole array.

श्रीराम ने कहा कि यह सच है, मैंने ऐसी ही एक विशाल चट्टान देखी है। शालग्राम में, हरि के धाम में, ठीक वैसी ही एक चट्टान है, अपने पूरे साज-सामान के साथ।

6.46.14

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवमेतद्विजानासि दृष्टवानसि तां शिलाम् । यो यश्च तत्र वै प्राणः समस्तादृगनन्तरः ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evametadvijānāsi dṛṣṭavānasi tāṃ śilām | yo yaśca tatra vai prāṇaḥ samastādṛganantaraḥ || 14 ||

Sri Vasishtha said: Yes, you understand this correctly, you have indeed seen that rock. And whatever life there is in it, of every kind, is never separate from it.

श्री वसिष्ठ ने कहा कि हाँ, तुमने इसे ठीक समझा है, तुमने सचमुच वह चट्टान देखी है। और उसमें जो भी जीवन है, हर तरह का, वह उससे कभी अलग नहीं है।

6.46.15

मया त्वियमपूर्वैव शिलेह कथिता तव । यस्यामन्तर्महाकुक्षौ सर्वमस्ति च नास्ति च ॥ १५ ॥

mayā tviyamapūrvaiva śileha kathitā tava | yasyāmantarmahākukṣau sarvamasti ca nāsti ca || 15 ||

But I have told you here of a rock unlike any other, inside whose vast belly everything both exists and does not exist.

पर मैंने तुम्हें यहाँ जिस चट्टान के बारे में बताया है, वह किसी और जैसी नहीं है, जिसके विशाल पेट के भीतर सब कुछ है भी और नहीं भी है।

6.46.16

चिच्छिलैषा मयोक्ता ते यस्यामन्तर्जगन्ति वै । घनत्वैकात्मकत्वादिवशादेषा शिलैव चित् ॥ १६ ॥

cicchilaiṣā mayoktā te yasyāmantarjaganti vai | ghanatvaikātmakatvādivaśādeṣā śilaiva cit || 16 ||

This is the rock of consciousness that I have told you of, inside which are all the worlds. Because it is dense and one single self, this very rock is consciousness itself.

यह वही चेतना की चट्टान है जिसके बारे में मैंने तुम्हें बताया, जिसके भीतर सारे लोक हैं। घनी और एक ही आत्मा होने के कारण, यह चट्टान खुद चेतना ही है।

6.46.17

अप्यत्यन्तघनाङ्गायाः सुनीरन्ध्राकृतेरपि । विद्यतेऽन्तर्जगद्वृन्दं व्योम्नीव विपुलानिलः ॥ १७ ॥

apyatyantaghanāṅgāyāḥ sunīrandhrākṛterapi | vidyate'ntarjagadvṛndaṃ vyomnīva vipulānilaḥ || 17 ||

Even though its form is extremely dense, entirely without a single hole in it, the whole multitude of worlds exists inside it, like the vast wind existing inside the sky.

हालांकि इसका रूप बहुत घना है, इसमें कहीं एक भी छेद नहीं है, फिर भी इसके भीतर लोकों का पूरा समूह मौजूद है, जैसे आकाश के भीतर विशाल वायु मौजूद रहती है।

6.46.18

द्यौः क्षमा वायुराकाशं पर्वताः सरितो दिशः । सन्ति तस्यां शिलायां च सुषिरं न मनागपि ॥ १८ ॥

dyauḥ kṣamā vāyurākāśaṃ parvatāḥ sarito diśaḥ | santi tasyāṃ śilāyāṃ ca suṣiraṃ na manāgapi || 18 ||

Heaven, earth, wind, space, mountains, rivers and the directions, all exist inside that rock, and yet there is not the slightest hollow in it.

स्वर्ग, धरती, वायु, आकाश, पर्वत, नदियाँ और दिशाएँ, ये सब उस चट्टान के भीतर मौजूद हैं, फिर भी उसमें रत्ती भर भी खोखलापन नहीं है।

6.46.19

अस्यामेव घनाङ्गात्म जगत्पद्मं विजृम्भते । एतस्माद्वस्तुतो नान्यदन्यच्छुद्धात्मकं च वा ॥ १९ ॥

asyāmeva ghanāṅgātma jagatpadmaṃ vijṛmbhate | etasmādvastuto nānyadanyaścchuddhātmakaṃ ca vā || 19 ||

Inside this very dense rock, the lotus of the world unfolds. In reality, nothing exists apart from it, there is no other separate thing with a nature of its own.

इसी घनी चट्टान के भीतर संसार का कमल खिलता है। सच में, इसके अलावा कुछ भी नहीं है, कोई और अलग चीज़ अपने आप में नहीं है।

6.46.20

शङ्खपद्मादिकं लोकं पाषाणे लिख्यते यथा । भूतं भवद्भविष्यच्च शिलायां शालभञ्जिका ॥ २० ॥

śaṅkhapadmādikaṃ lokaṃ pāṣāṇe likhyate yathā | bhūtaṃ bhavadbhaviṣyacca śilāyāṃ śālabhañjikā || 20 ||

The way a whole world of conches and lotuses can be carved on a stone, the past, the present and the future exist on that rock in just the same way, like a figure carved in stone.

जैसे शंख और कमलों से भरा एक पूरा संसार किसी पत्थर पर उकेरा जा सकता है, वैसे ही भूत, वर्तमान और भविष्य उस चट्टान पर उसी तरह मौजूद हैं, जैसे पत्थर में उकेरी गई कोई मूरत।

6.46.21

तथास्ति तत्र तत्सर्वं संस्थानं वस्तुतो यथा। उपलान्तः संनिवेशो नानात्माप्येकपिण्डताम्॥ २१॥

tathāsti tatra tatsarvaṃ saṃsthānaṃ vastuto yathā | upalāntaḥ saṃniveśo nānātmāpyekapiṇḍatām || 21 ||

In that same way, everything there truly exists just as it looks. The pattern inside the stone seems like many different things, but it is really just one solid piece.

उसी तरह वहाँ सब कुछ सचमुच वैसा ही है जैसा दिखता है। पत्थर के अंदर की बनावट देखने में कई अलग-अलग चीज़ें लगती है, पर असल में वह एक ही ठोस टुकड़ा है।

6.46.22

यथादत्ते तथैषा चित्पिण्डाकारैकिकां घनाम्। यथा पद्मः शिलाकोशादभिन्नस्तद्वपुर्मयः॥ २२॥

yathādatte tathaiṣā citpiṇḍākāraikikāṃ ghanām | yathā padmaḥ śilākośādabhinnastadvapurmayaḥ || 22 ||

Just as the stone takes on that shape, so this consciousness takes on one dense, single form; and just as the lotus is not different from the stone's own substance, but is made of that same stuff.

जैसे पत्थर उस आकार को धारण करता है, वैसे ही यह चेतना एक सघन, एक जैसा रूप धारण करती है; और जैसे कमल पत्थर के पदार्थ से अलग नहीं है, बल्कि उसी पदार्थ से बना है।

6.46.23

तथा सर्गश्चितो रूपादभिन्नोऽपि वपुर्मयः। सुषुप्तावस्थया चक्रपद्मलेखाः शिलोदरे॥ २३॥

tathā sargaścito rūpādabhinnopi vapurmayaḥ | suṣuptāvasthayā cakrapadmalekhāḥ śilodare || 23 ||

In the same way, creation, though not different from the form of consciousness, is made of that same substance — like the lines of a wheel or a lotus lying asleep inside a stone.

उसी तरह सृष्टि, चेतना के रूप से अलग न होते हुए भी, उसी पदार्थ से बनी है, जैसे पत्थर के भीतर सोए हुए चक्र और कमल की रेखाएँ।

6.46.24

यथा स्थिताश्चितेरन्तस्तथेयं जगदावली। शिलान्तः पद्मलेखाली मरिचान्तश्चमत्कृतिः॥ २४॥

yathā sthitāściterantastatheyaṃ jagadāvalī | śilāntaḥ padmalekhālī maricāntaścamatkṛtiḥ || 24 ||

As these stand within consciousness, so does this whole row of worlds — like a row of lotus lines inside a stone, like a marvel hidden inside a peppercorn.

जैसे ये चेतना के भीतर टिके हैं, वैसे ही संसारों की यह पूरी कतार भी टिकी है, जैसे पत्थर के भीतर कमल-रेखाओं की कतार, जैसे किसी मिर्च के दाने के भीतर छिपा हुआ कोई अचरज।

6.46.25

नोदेति नास्तमायाति यथा सर्गस्तथा चितौ। यथा पुरन्ध्र्यां मर्त्योऽन्तर्मज्जा वा बिल्वगा यथा॥ २५॥

nodayeti nāstamāyāti yathā sargastathā citau | yathā purandhryāṃ martyo'ntarmajjā vā bilvagā yathā || 25 ||

Creation does not rise and does not set, and neither does it in consciousness, like a child lying hidden inside its mother, or like a seed hidden inside a bilva fruit.

सृष्टि न उगती है, न डूबती है, और चेतना में भी वैसे ही नहीं होती, जैसे कोई बच्चा अपनी माँ के भीतर छिपा रहता है, या जैसे बिल्व फल के भीतर बीज छिपा रहता है।

6.46.26

तथाऽनन्तविकाराढ्या चितौ ब्रह्माण्डमण्डली । विकारादि तदेवेति मुधैवोक्तिरनर्थिका ॥ २६ ॥

tathā'nantavikārāḍhyā citau brahmāṇḍamaṇḍalī | vikārādi tadeveti mudhaivoktiranarthikā || 26 ||

In that way, the whole array of universes, full of endless changes, exists within consciousness. To say that this change is something separate is an empty statement, without any real meaning.

इस तरह अनगिनत बदलावों से भरी हुई ब्रह्मांडों की पूरी शृंखला चेतना के भीतर ही मौजूद है। यह कहना कि यह बदलाव कोई अलग चीज़ है, एक खोखली बात है, जिसका कोई मतलब नहीं।

6.46.27

तत्तां समुपयात्याशु जलबिन्दुरिवाम्भसि । अनन्तत्वाच्चितेरेतद्विकारादि चितेरिति ॥ २७ ॥

tattāṃ samupayātyāśu jalabindurivāmbhasi | anantatvācciteretadvikārādi citeriti || 27 ||

It quickly merges into that oneness, like a drop of water into water. Because consciousness is without limit, this change and all the rest belong to consciousness alone.

वह तुरंत उसी एकता में मिल जाता है, जैसे पानी की एक बूँद पानी में मिल जाती है। चेतना असीम है, इसलिए यह बदलाव और बाकी सब कुछ चेतना का ही है।

6.46.28

उक्त्या संपद्यते यच्च तल्लयेन विलीयते । ब्रह्मैवेदं विकारादि विकाराद्यर्थवर्जितम् ॥ २८ ॥

uktyā saṃpadyate yacca tallayena vilīyate | brahmaivedaṃ vikārādi vikārādyarthavarjitam || 28 ||

And whatever comes into being only through being spoken of, dissolves away when that dissolution comes. This whole show of change is Brahman alone, and it holds nothing of the reality of change.

और जो कुछ केवल कहने भर से बना है, वह लय होने पर मिट जाता है। यह सारा बदलाव ब्रह्म ही है, और उसमें बदलाव की कोई सच्चाई नहीं है।

6.46.29

वर्जनावर्जनेऽर्थस्य ब्रह्मैवानन्ततावशात् । ब्रह्म स्थितं विकारादि ब्रह्मैवोत्पादितं क्रमात् ॥ २९ ॥

varjanāvarjane'rthasya brahmaivānanatatāvaśāt | brahma sthitaṃ vikārādi brahmaivotpāditaṃ kramāt || 29 ||

Whether we deny this thing or accept it, it is Brahman alone, because Brahman has no limit. Change and all the rest stand as Brahman; it is Brahman itself that has come forth, step by step.

चाहे हम इस चीज़ को नकारें या मानें, यह ब्रह्म ही है, क्योंकि ब्रह्म की कोई सीमा नहीं। बदलाव और बाकी सब ब्रह्म के रूप में ही टिके हैं; यह ब्रह्म ही है जो क्रम से प्रकट हुआ है।

6.46.30

अत्रान्यार्थमिदं विद्धि मृगतृष्णाम्भसा समम् । बीजं पुष्पफलान्तस्थं बीजान्तर्नान्यदात्मकम् ॥ ३० ॥

atrānyārthamidaṃ viddhi mṛgatṛṣṇāmbhasā samam | bījaṃ puṣpaphalāntasthaṃ bījāntarnānyadātmakam || 30 ||

Know that, taken as something separate, this world is just like the water of a mirage. The seed that lies inside the flower and the fruit is not, within the seed, made of anything else.

जान लो कि अलग चीज़ मानने पर यह संसार मृगतृष्णा के पानी जैसा ही है। फूल और फल के भीतर जो बीज है, वह बीज के भीतर किसी और चीज़ से नहीं बना।

6.46.31

यादृशी बीजसत्ता सा भवन्ती यात्यथोत्तरम्। चिद्घने चिद्घनत्वं यत्स एव त्रिजगत्क्रमः ॥ ३१ ॥

yādṛśī bījasattā sā bhavantī yātyathottaram | ciddhane ciddhanatvaṃ yatsa eva trijagatkramḥ || 31 ||

Whatever the seed's own being is, that same being, unfolding, moves further onward. In the dense mass of consciousness, what is the very thickness of consciousness, that alone is the unfolding of the three worlds.

बीज का जो अपना अस्तित्व है, वही अस्तित्व आगे बढ़ते हुए फैलता जाता है। चेतना के सघन रूप में जो चेतना की सघनता ही है, वही तीनों लोकों का फैलाव है।

6.46.32

एकत्वमेतयोर्द्वित्वमेकाभावे द्वयोः क्षतिः। जगदन्यभवोद्भूतिर्न कदाचित्तदीदृशम् ॥ ३२ ॥

ekatvametayordvitvamekābhāve dvayoḥ kṣatiḥ | jagadanyabhavodbhūtirna kadācittadīdṛśam || 32 ||

These two are really one; to call them two, if either one were missing, both would be lost. The world coming to be as something separate never happens like that, not ever.

ये दोनों सचमुच एक ही हैं; इन्हें दो कहना, अगर इनमें से एक भी न हो, तो दोनों ही मिट जाएँगे। संसार का किसी अलग चीज़ के रूप में उत्पन्न होना ऐसा कभी नहीं होता।

6.46.33

चिदचिन्न कदाचिच्च द्वयमन्तर्मिथोऽद्वयम्। महाशिलान्तरे भेदो लेखात्मास्ति यथा बहुः। तदन्यानन्यमज्जादि चिद्घने त्रिजगत्तथा ॥ ३३ ॥

cidacinna kadācicca dvayamantarmitho'dvyam | mahāśilāntare bhedo lekhātmāsti yathā bahuḥ | tadanyānanyamajjādi ciddhane trijagattathā || 33 ||

Consciousness and matter are never truly two, even though they seem like two, deep within, they are not separate. Just as a single great rock seems to hold many different markings, so the three worlds lie hidden inside the dense mass of consciousness, seeming both different from it and not different, sunk within it.

चेतना और जड़ पदार्थ कभी सचमुच दो नहीं हैं, भले ही वे दो जैसे दिखें, भीतर से वे अलग नहीं हैं। जैसे एक बड़ी चट्टान में कई अलग-अलग निशान दिखते हैं, वैसे ही तीनों लोक चेतना के सघन रूप के भीतर छिपे रहते हैं, उससे अलग और न अलग दोनों जैसे दिखते हुए, उसी में डूबे हुए।

6.46.34

रेखोपरेखावलिता यथैका पीवरी शिला। तथा त्रैलोक्यवलितं ब्रह्मैकमिति दृश्यते ॥ ३४ ॥

rekhoparekhāvalitā yathaikā pīvarī śilā | tathā trailokyavalitaṃ brahmaikamiti dṛśyate || 34 ||

As one solid rock is covered with line upon line, so Brahman, wrapped in the three worlds, is seen as one.

जैसे एक ठोस चट्टान पर रेखा पर रेखा बिछी होती है, वैसे ही ब्रह्म, तीनों लोकों में लिपटा हुआ, एक ही दिखता है।

6.46.35

एतच्छिलान्तरब्जादि यथा नित्यं सुषुप्तकम्। नास्तमेति न चोदेति तथाऽहंता जगद्गतिः ॥ ३५ ॥

etacchilāntarabījādi yathā nityaṃ suṣuptakam | nāstameti na codeti tathā'haṃtā jagadgatiḥ || 35 ||

As the lotus and the rest inside the stone lie forever asleep, neither setting nor rising, so the sense of I and the way of the world neither rise nor set.

जैसे पत्थर के भीतर कमल आदि हमेशा सोए हुए पड़े रहते हैं, न डूबते हैं न उगते हैं, वैसे ही मैं के भाव और संसार की गति भी न उगती है न डूबती है।

6.46.36

यथा शिलान्तर्लेखादि भिद्यते न शिलान्तरात् तत्सारत्वाज्जगत्कर्तृ कर्तृत्वादिजगच्चितिः ॥ ३६ ॥

yathā śilāntarlekhādi bhidyate na śilāntarāt tatsāratvājjagatkartṛ kartṛtvādijagaccitiḥ || 36 ||

As the markings inside a stone are never separate from the stone itself, so, because of that same inner substance, the doer of the world, its power to act, and the world itself are all consciousness.

जैसे पत्थर के भीतर के निशान पत्थर से कभी अलग नहीं होते, वैसे ही उसी भीतरी तत्व के कारण संसार का कर्ता, उसकी कर्तापन की शक्ति, और संसार खुद, ये सब चेतना ही हैं।

6.46.37

यथा शिलान्तरब्जानां स्पन्दास्पन्दभवाभवाः विषयत्वं न गच्छन्ति कर्तारो जगतस्तथा ॥ ३७ ॥

yathā śilāntarabjānāṃ spandāspandabhavābhavaḥ viṣayatvaṃ na gacchanti kartāro jagatastathā || 37 ||

As the lotuses inside the stone, whether stirring or still, whether coming to be or not, never become outward things, so the doers of the world never become outward things either.

जैसे पत्थर के भीतर के कमल, चाहे हिलें या स्थिर रहें, चाहे बनें या न बनें, कभी बाहरी वस्तु नहीं बनते, वैसे ही संसार के कर्ता भी कभी बाहरी वस्तु नहीं बनते।

6.46.38

नेदं कदाचित्क्रियते न कदाचन नश्यति अद्रिवत्प्रभवोल्लासविलासावेदनात्मकम् ॥ ३८ ॥

nedaṃ kadācitkriyate na kadācana naśyati adrivatprabhavollāsavilāsāvedanātmakam || 38 ||

This is never created, and it is never destroyed. Like a rock, its coming into being, its brightening, its play, are never really felt happening.

यह न कभी बनाया जाता है, न कभी मिटता है। पत्थर की तरह, इसका उत्पन्न होना, इसकी चमक, इसका खेल, ये कभी सचमुच घटित होते हुए महसूस नहीं होते।

6.46.39

यथा यत्र यदाकारं तथा तत्र तदेव हि ब्रह्मसत्तात्मकं सर्वं सुषुप्तस्थमिव स्थितम् ॥ ३९ ॥

yathā yatra yadākāraṃ tathā tatra tadeva hi brahmasattātmakaṃ sarvaṃ suṣuptasthamiva sthitam || 39 ||

Wherever a shape appears, and whatever shape it is, that alone is truly there. Everything, being nothing but the existence of Brahman, remains as if lying in deep sleep.

जहाँ भी जो रूप दिखता है, वही सच में वहाँ है। हर चीज़, ब्रह्म के अस्तित्व के सिवा कुछ नहीं होते हुए, गहरी नींद में पड़ी हुई जैसी बनी रहती है।

6.46.40

भूरिभावविकाराढ्यो योऽयं जगदुरुभ्रमः सुषुप्तमेव तद्विद्धि शिलान्तः पङ्कजादिवत् ॥ ४० ॥

bhūribhāvavikārāḍhyo yo'yaṃ jagadurubhramaḥ suṣuptameva tadviddhi śilāntaḥ paṅkajādivat || 40 ||

This vast illusion of the world, full of so many states and changes, know it to be nothing but a deep sleep, like the lotus and the rest lying inside a stone.

संसार का यह विशाल भ्रम, जो इतनी सारी अवस्थाओं और बदलावों से भरा है, इसे एक गहरी नींद के सिवा कुछ मत समझो, जैसे पत्थर के भीतर पड़े कमल आदि।

6.46.41

नित्यं सुषुप्तपदमेव जगद्विलासः सम्यक्प्रशान्तसमचिद्धनखात्मकत्वात् । पद्माः शिलान्तरिव सर्गदशास्त्वसारा दृष्टा न देहमुपयान्ति कदाचिदेव ॥ ४१ ॥

nityaṃ suṣuptapadameva jagadvilāsaḥ samyakpraśāntasamaciddhanakhātmakatvāt | padmāḥ śilāntariva sargadaśāstvasārā dṛṣṭā na dehamupayānti kadācideva || 41 ||

The world's whole play is forever nothing but a state of deep sleep, because in truth it is the calm, even, dense mass of consciousness, like open space. As lotuses stay inside a stone, the states of creation have no real substance, seen, yet they never truly take on a body, not ever.

संसार का पूरा खेल हमेशा एक गहरी नींद की अवस्था के सिवा कुछ नहीं है, क्योंकि सच में यह शांत, समान, आकाश जैसी सघन चेतना ही है। जैसे कमल पत्थर के भीतर टिके रहते हैं, वैसे ही सृष्टि की अवस्थाओं में कोई सच्चाई नहीं, दिखते हुए भी, वे कभी शरीर धारण नहीं करतीं।

Chapter 47

6.47.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । चित्तत्त्वस्य फलस्येव चितः स्वापापरक्रमात् । स्वसत्तासंनिवेशेन यः स सर्ग इति स्थितः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | cittattvasya phalasyeva cittaḥ svāpāparakramāt | svasattāsaṃniveśena yaḥ sa sarga iti sthitaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: Consciousness is real the way a fruit is real. It does not come into being step by step, the way sleep changes into some further state. Whatever stands here stands only because consciousness has arranged its own being within itself. That is what we call creation.

श्री वसिष्ठ ने कहा: चेतना उतनी ही सच है जितना कोई फल सच होता है। यह नींद के आगे किसी और अवस्था में बदलने जैसे किसी क्रम से नहीं बनती। यहाँ जो कुछ भी है, वह इसलिए है क्योंकि चेतना ने अपने ही होने को अपने भीतर सजाया है। इसी को सृष्टि कहते हैं।

6.47.2

देशकालक्रियादीनामपि तन्मयरूपतः । इदमन्यदिदं चान्यदिति नात्रोपपद्यते ॥ २ ॥

deśakālakriyādīnāmapi tanmayarūpataḥ | idamanyadidaṃ cānyaditi nātropapadyate || 2 ||

Even place, time and action, and everything else like them, are made of that same consciousness. So no one can rightly say, this is one thing and this is another.

जगह, समय, काम और ऐसी हर चीज़ भी उसी चेतना से बनी है। इसलिए यह कहना ठीक नहीं कि यह कुछ और है और वह कुछ और है।

6.47.3

समस्तशब्दशब्दार्थवासनाकलनाविदः । एकात्मत्वादसच्चेदमिति संकथ्यते कथम् ॥ ३ ॥

samastśabdaśabdārthavāsanākalanāvidaḥ | ekātmatvādasaccetamiti saṃkathyate katham || 3 ||

For one who understands how every word carries its meaning, all this is one single self. So how can anyone say this world is unreal?

जो यह समझता है कि हर शब्द का अर्थ कैसे बनता है, उसके लिए यह सब एक ही आत्मा है। तो फिर यह दुनिया झूठी कैसे कही जा सकती है?

6.47.4

फलस्यान्तःसंनिवेशो नामानुक्रमतो यथा । चितः स्वसत्ताघनताऽनाना नाना स्थिता तथा ॥ ४ ॥

phalasyāntaḥsaṃniveśo nāmānukramato yathā | cittaḥ svasattāghanatā'nānā nānā sthitā tathā || 4 ||

Just as a fruit has its own parts arranged inside it, each in its own place, the solid mass that is consciousness's own being is really one, yet it stands as many things.

जैसे किसी फल के भीतर उसके हिस्से अपनी-अपनी जगह पर सजे होते हैं, वैसे ही चेतना का अपना ठोस रूप असल में एक ही है, फिर भी वह कई चीज़ों के रूप में खड़ा दिखता है।

6.47.5

अनानैवापि नानैव क्षुब्धेवाक्षुभितैव च । यथा फलान्तः स्वासत्ता चिदन्तः सिद्धयस्तथा ॥ ५ ॥

anānaivāpi nānaivā kṣubdhevākṣubhitaiva ca | yathā phalāntaḥ svāsattā cidantaḥ siddhayas tathā || 5 ||

It is not many, yet it appears as many. It is as if stirred, yet it is never really stirred. Just as a fruit's own being stays inside the fruit, the things that appear inside consciousness stay inside consciousness in the same way.

वह कई नहीं है, फिर भी कई जैसा दिखता है। वह मानो हिला हुआ है, पर असल में कभी हिलता नहीं। जैसे फल का अपना तत्व फल के भीतर ही रहता है, वैसे ही चेतना के भीतर दिखने वाली चीज़ें चेतना के भीतर ही रहती हैं।

6.47.6

जगन्नगरमादर्शे चितः स्वं प्रतिबिम्बितम् । कचतीवाऽकचदपि शिलान्तःसंनिवेशवत् ॥ ६ ॥

jagannagaramādarśe cittaḥ svaṃ pratibimbamitaṃ | kacatīvā'kacadapi śilāntaḥsaṃniveśavat || 6 ||

The world is a city seen reflected in the mirror of consciousness. It seems to shine, though nothing there truly shines, the way a picture seems to appear inside a stone.

यह दुनिया चेतना रूपी दर्पण में दिखने वाला एक नगर है। यह चमकता हुआ लगता है, हालाँकि वहाँ असल में कुछ भी नहीं चमकता, ठीक वैसे ही जैसे किसी पत्थर के भीतर कोई तस्वीर दिखाई देती है।

6.47.7

परमे चिन्मणौ सन्ति जगत्कोटिशतान्यपि । चिन्तामणावनन्तानि फलानीवार्पितान्यलम् ॥ ७ ॥

parame cinmaṇau santi jagatkoṭiśatānyapi | cintāmaṇāvanantāni phalānīvārpitānyalam || 7 ||

In the highest gem, which is consciousness, there are hundreds of millions of worlds, held inside it completely, the way countless fruits are held inside a jewel that grants every wish.

चेतना नाम के सबसे ऊँचे रत्न के भीतर सैकड़ों करोड़ दुनियाएँ हैं, वे उसमें पूरी तरह से समाई हुई हैं, ठीक वैसे ही जैसे हर इच्छा पूरी करने वाले रत्न के भीतर अनगिनत फल समाए होते हैं।

6.47.8

चित्समुद्गक एवेदं तदङ्गोत्कीर्णमाततम् । जगन्मौक्तिकमाभाति तदंशमयमन्यवत् ॥ ८ ॥

citsamudgaka evedaṃ tadaṅgotkīrṇamātatam | jagannmauktikamābhāti tadaṃśamayamanyavat || 8 ||

This is nothing but the jewel box of consciousness, its surface carved all over and spread out wide. Inside it shines the pearl called the world, made of a mere part of that box, yet it looks like something separate.

यह चेतना की गहनों की डिबिया के सिवा कुछ नहीं है, जिसकी सतह पर हर तरफ नक्काशी फैली है। उसके भीतर 'दुनिया' नाम का मोती चमकता है, जो उसी डिबिया के एक हिस्से से बना है, फिर भी अलग चीज़ जैसा दिखता है।

6.47.9

अहोरात्रं विकरयन्वेदनावेदनान्यलम् । चिदादित्यः स्थितो भास्वाञ्जगद्द्रव्याणि दर्शयन् ॥ ९ ॥

ahorātraṃ vikarayanvedanāvedanānyalam | cidādityaḥ sthito bhāsvāñjagaddravyāṇi darśayan || 9 ||

Making day and night, giving rise to every kind of feeling and every kind of not-feeling, the sun of consciousness stands there shining, showing all the things of the world.

दिन और रात बनाता हुआ, हर तरह का एहसास और हर तरह की बेहोशी पैदा करता हुआ, चेतना का सूरज वहाँ चमकता हुआ खड़ा है, और दुनिया की सब चीज़ों को दिखा रहा है।

6.47.10

समुद्रकोटरावर्तपयःस्पन्दविलासवत् । अनानैव च नाना चिच्छिलान्तःसंनिवेशवत् ॥ १० ॥

samudrakoṭarāvartapayaḥspandavilāsavat | anānaiva ca nānā ciścilāntaḥsaṃniveśavat || 10 ||

It is like the play of pulsing water in the hollows and whirlpools of the ocean. It is one thing, yet it stands as many, the way a pattern stands inside the stone of consciousness.

यह समंदर के गड्ढों और भँवरों में उछलते पानी के खेल जैसा है। वह एक ही है, फिर भी कई रूपों में खड़ा दिखता है, ठीक वैसे ही जैसे चेतना रूपी पत्थर के भीतर कोई नक्शा खड़ा होता है।

6.47.11

यदस्ति तच्चिति शिलाशरीरे शालभञ्जिका यन्नास्ति तच्चिति शिलाशरीरे शालभञ्जिका ॥ ११ ॥

yadasti tacciti śilāśarīre śālabhañjikā yannāsti tacciti śilāśarīre śālabhañjikā || 11 ||

Whatever exists is, inside consciousness, a figure carved in the body of a stone. Whatever does not exist is also, inside consciousness, a figure carved in the body of a stone.

जो कुछ भी है, वह चेतना के भीतर पत्थर के शरीर में बनी हुई एक मूरत है। जो कुछ भी नहीं है, वह भी चेतना के भीतर पत्थर के शरीर में बनी हुई एक मूरत है।

6.47.12

भावाभावेषु यत्सत्यं चिन्मज्जाकल्पमेव तत् मज्जासारा पदार्थश्रीस्तन्मयं स्यात्तदेव हि ॥ १२ ॥

bhāvābhāveṣu yatsatyaṃ cinmajjākalpameva tat majjāsārā padārthashrīstanmayaṃ syāttadeva hi || 12 ||

Whatever is real amid existing and not existing is like the very core of consciousness. And the glory of any thing, whose heart is that core, is made of that core alone.

होने और न होने के बीच जो कुछ भी सच है, वह चेतना के मूल तत्व जैसा ही है। और किसी भी चीज़ की शोभा, जिसका दिल वही मूल तत्व है, उसी मूल तत्व से बनी है।

6.47.13

पद्मनानादिशब्दार्थस्त्यक्त्वा यद्वच्छिलोदरम् नाना तद्वदिदं नाना तदेतन्मयमद्वयम् ॥ १३ ॥

padmanānādiśabdārthastyaktvā yadvacchilodaram nānā tadvadidaṃ nānā tadetanmayamadvayam || 13 ||

Set aside the meanings of words like lotus and the rest, and what stays inside a stone is only stone. In the same way, set aside the many names of this world, and it is made of this one thing alone, without a second.

'कमल' और ऐसे बाकी शब्दों के अर्थ अलग हटा दो, तो पत्थर के भीतर सिर्फ पत्थर ही बचता है। वैसे ही, इस दुनिया के कई नामों को अलग हटा दो, तो यह उसी एक चीज़ से बनी है, जिसका कोई दूसरा नहीं।

6.47.14

नानाप्येकतयाऽनाना पद्मबिम्बं शिलोदरम् यथा तदविभागात्म तथेदं चिद्घनान्तरम् ॥ १४ ॥

nānāpyekatayā'nānā padmabimbaṃ śilodaram yathā tadavibhāgātma tathaidam ciddhanāntaram || 14 ||

Though they look like many things, by being one they are not really many. The carved lotus and the inside of the stone are, in their nature, undivided. In the same way, this inner mass of consciousness is undivided.

वे कई चीज़ों जैसी दिखती हैं, पर एक होने के कारण असल में कई नहीं हैं। पत्थर पर बना कमल और पत्थर का भीतरी हिस्सा, अपने स्वभाव में, अलग-अलग नहीं हैं। वैसे ही चेतना का यह भीतरी ठोस रूप भी अलग-अलग नहीं है।

6.47.15

यथाऽमलपयःकोशः स्थलधियां तु भानुभाः सन्नेवासन्निवैवं चिन्नैव त्वं सदसद्वपुः ॥ १५ ॥

yathā'malapayaḥkośaḥ sthaladhiyāṃ tu bhānubhāḥ sannivāsanivaiavaṃ cinnaitvaṃ sadasadvapuḥ || 15 ||

Just as sunlight, over what is really solid ground, looks to those watching like a sheet of clear water that seems to be there though it is not, in the same way you, who are consciousness itself, are not a body made of existing or not existing.

जैसे धूप, असल में सूखी ज़मीन पर पड़ते हुए भी, देखने वालों को साफ़ पानी की एक चादर जैसी लगती है जो होते हुए भी असल में नहीं है, वैसे ही तुम, जो खुद चेतना हो, न होने से बने हो और न न-होने से।

6.47.16

यथा सम्यक् पयोराशिः कोटरे कलनोन्मुखम्। द्रवत्वात्स्पन्दतेऽस्पन्दं तथेदं चिद्घनान्तरम्॥ १६॥

yathā samyak payorāśiḥ koṭare kalanonmukham | dravatvātspandate'spandaṃ tathedaṃ ciddhanāntaram || 16 ||

Just as a full body of water lying in a hollow seems to stir, because it is liquid, though nothing in it truly moves, in the same way is this inner mass of consciousness.

जैसे किसी गड्ढे में भरा हुआ पानी अपने तरल होने के कारण हिलता हुआ लगता है, हालाँकि उसमें असल में कुछ भी नहीं हिलता, वैसे ही चेतना का यह भीतरी ठोस रूप भी है।

6.47.17

चिच्छिलाशङ्खपद्मौघस्तन्मयत्वेऽप्यतन्मयः। जगद्विद्धि सपद्मादिपदार्थं चिच्छिलान्तरम्॥ १७॥

cicchilāśaṅkhapadmaughastanmayatve'pyatanmayaḥ | jagadviddhi sapadmādipadārthaṃ cicchilāntaram || 17 ||

The many conches and lotuses carved on the stone of consciousness are made of that very stone, yet they look like something else. Know that the world too, with its lotuses and every other thing in it, is nothing but the substance of that stone of consciousness.

चेतना रूपी पत्थर पर बने कई शंख और कमल उसी पत्थर से बने हैं, फिर भी वे किसी और चीज़ जैसे दिखते हैं। जान लो कि यह दुनिया भी, अपने कमलों और बाकी हर चीज़ के साथ, उसी चेतना रूपी पत्थर के पदार्थ के सिवा कुछ नहीं है।

6.47.18

महाशिलाघनोऽप्येष चिद्घनस्थं शिलोदरम्। अरन्ध्रोनिर्द्वयोऽच्छोऽजः संशान्तःसंनिवेशवत्॥ १८॥

mahāśilāghano'pyeṣa ciddhanasthaṃ śilodaram | arandhronirdvayo'ccho'jaḥ saṃśāntaḥsaṃniveśavat || 18 ||

This, though it looks like a great solid mass of stone, is only the inside of that stone resting within the mass of consciousness, without a crack, without a second thing, clear, never born, completely at peace within itself.

यह, भले ही एक बड़े ठोस पत्थर जैसा दिखता है, दरअसल उसी पत्थर का भीतरी हिस्सा है, जो चेतना के ठोस रूप में टिका है — बिना किसी दरार के, बिना किसी दूसरी चीज़ के, साफ़, कभी न जन्मा, और अपने भीतर पूरी तरह शांत।

6.47.19

तपतीदं जगद्ब्रह्म शरत्काल इवामलम्। स्फुरतीदं जगद्ब्रह्म सौम्यः सोम इव द्रुतः॥ १९॥

tapatīdaṃ jagadbrahma śaratkāla ivāmalam | sphuratīdaṃ jagadbrahma saumyaḥ soma iva drutaḥ || 19 ||

This world, which is Brahman, shines pure and bright, like the clear sky of autumn. This world, which is Brahman, shimmers soft and flowing, like the gentle moon.

यह जगत, जो ब्रह्म है, शरद ऋतु के निर्मल आकाश की तरह उज्ज्वल चमकता है। यह जगत, जो ब्रह्म है, कोमल चाँद की तरह मृदु और बहता हुआ दमकता है।

6.47.20

ब्रह्मणीदं सुषुप्ताभं नास्त्यनाशं शिलाब्जवत्। ब्रह्मत्वं ब्रह्मणि यथा तथैवेदं जगत्स्थितम्॥ २०॥

brahmaṇīdaṃ suṣuptābhaṃ nāstyānāśaṃ śilābjavat | brahmatvaṃ brahmaṇi yathā tathaivedaṃ jagatsthitam || 20 ||

In Brahman, this world is like a deep sleep - it does not last forever, the way a lotus carved in stone does. Even so, this world exists within Brahman exactly the way Brahman's own nature exists within Brahman.

ब्रह्म में यह जगत गहरी नींद जैसा है - यह पत्थर में उकेरे गए कमल की तरह हमेशा टिकने वाला नहीं है। फिर भी यह जगत ब्रह्म में ठीक वैसे ही मौजूद है जैसे ब्रह्म का अपना स्वभाव ब्रह्म में मौजूद है।

6.47.21

नानयोर्विद्यते मेदस्तरुपादपयोरिव । यानीमानि जगन्तीह नान्यत्तानि चिदाकृतेः ॥ २१ ॥

nānayorvidyate medastarupādapayoriva | yānīmāni jagantīha nānyattāni cidākṛteḥ || 21 ||

Between these two there is no difference, just as there is no difference between two names for a tree. Whatever these worlds are, here, they are nothing but the shape of consciousness.

इन दोनों में कोई भेद नहीं, जैसे पेड़ के दो नामों में कोई भेद नहीं होता। यहाँ ये जो भी जगत हैं, वे चेतना के रूप के सिवा कुछ और नहीं हैं।

6.47.22

भावाभावादि नास्त्येषां तस्या इव कदाचन । ब्रह्मैव जगदाभासं मरुतापो यथा जलम् ॥ २२ ॥

bhāvābhāvādi nāstyēṣāṃ tasyā iva kadācana | brahmaiva jagadābhāsaṃ marutāpo yathā jalam || 22 ||

These worlds are never touched by being or non-being, or anything like that - no more than that consciousness is. Brahman alone appears as the world, the way desert heat appears as water.

इन जगतों को भाव या अभाव जैसी कोई बात कभी नहीं छूती - जैसे वह उस चेतना को भी नहीं छूती। ब्रह्म ही जगत के रूप में दिखाई देता है, जैसे रेगिस्तान की गरमी पानी जैसी दिखाई देती है।

6.47.23

ब्रह्मैवालोकनाच्छुद्धं भवत्यम्बु यथातपः । मेर्वादेस्तृणगुल्मादेश्चित्तादेर्जगतोऽपि च ॥ २३ ॥

brahmaiva lōkanācchuddhaṃ bhavatyambu yathātapaḥ | mervādēstṛṇagulmādēścittādērjagatō'pi ca || 23 ||

Brahman alone becomes clear through being seen, the way water becomes clear in sunlight - true of Meru and the rest, of grass and bushes and the rest, of the mind and the rest, and of the world too.

ब्रह्म ही देखे जाने से वैसे निर्मल हो जाता है जैसे पानी धूप से निर्मल हो जाता है - यह मेरु आदि के लिए भी सच है, घास-झाड़ियों आदि के लिए भी, मन आदि के लिए भी, और जगत के लिए भी।

6.47.24

परमाम्बुविभागेन यद्रूपं तत्परं विदुः । तत्समूहस्तदेवोच्चैश्चित्तं मेरुतृणादिकम् ॥ २४ ॥

paramāmbuvibhāgēna yadrūpaṃ tatparaṃ viduḥ | tatsamūhastadēvōccaiścittaṃ mērutṛṇādikam || 24 ||

Whatever shape comes from a portion of that highest water, the wise know as the Highest itself. That same whole is truly called mind - appearing as Meru, as grass, and as everything else.

उस परम जल के किसी भाग से जो भी रूप बनता है, ज्ञानी लोग उसे परम तत्व ही मानते हैं। वही समूह सचमुच मन है - मेरु के रूप में, घास के रूप में, और बाकी सब के रूप में।

6.47.25

यत्सौक्ष्म्येऽपि हि सारात्म स्थौल्ये सारतरं हि तत् । यथा रसात्मिका शक्तिः परमाणुतयाऽनघ ॥ २५ ॥

yatsaukṣmyē'pi hi sārātma sthaulyē sārataraṃ hi tat | yathā rasātmikā śaktiḥ paramāṇutayā'nagha || 25 ||

Whatever has the nature of essence even in its finest, smallest state has that same essence even more fully in its largest, grossest state - just as the essence that is sap, O sinless one, shows itself even in its smallest, atomic form.

जो चीज़ अपनी सबसे सूक्ष्म अवस्था में भी सार-रूप है, वह अपनी स्थूल अवस्था में और भी अधिक सार-रूप होती है - जैसे रस-रूप शक्ति, हे निष्पाप, अपने सबसे छोटे कण-रूप में भी प्रकट होती है।

6.47.26

स्थिता जगत्पदार्थेषु पायसी ब्रह्मता तथा । रसशक्तिर्यथा नानातृणगुल्मलताम्भसाम् ॥ २६ ॥

sthitā jagatpadārtheṣu pāyasī brahmatā tathā | rasaśaktiryathā nānātṛṇagulmalatāmbhasām || 26 ||

Brahman's nature, like milk, is present in every thing of this world - just as the power of sap is present in all the different grasses, shrubs, vines, and waters.

ब्रह्म का स्वभाव, दूध की तरह, जगत की हर वस्तु में मौजूद है - जैसे रस की शक्ति अलग-अलग घासों, झाड़ियों, बेलों और जल में मौजूद रहती है।

6.47.27

तथा नानातयोदेति सैवासैवेव ब्रह्मता । यैषा रूपविलासानामालोकपरमाणुता ॥ २७ ॥

tathā nānātayodeti saivāsaiveva brahmatā | yaiṣā rūpavilāsānāmālokaparamāṇutā || 27 ||

In this same way, Brahman's nature rises up as many things - it is itself, and yet not itself. This is the finest, smallest point of light within the play of forms.

इसी तरह ब्रह्म का स्वभाव अनेक रूपों में उठता है - वह वही है, और फिर भी वही नहीं है। यह रूपों के खेल में प्रकाश का सबसे सूक्ष्म बिंदु है।

6.47.28

गुणगुण्यर्थसत्तात्मरूपिण्यासां परात्मता । चिति चित्तेऽस्ति मेर्वादि तदभिव्यञ्जनात्मनि ॥ २८ ॥

guṇaguṇyarthasattātmarūpiṇyāsāṃ parātmatā | citi citte'sti mervādi tadabhivyañjanātmani || 28 ||

These many forms show themselves as a quality and the thing that carries the quality, but their highest, true nature is consciousness itself. Meru and the rest exist in the mind - the mind that gives that consciousness its expression.

ये अनेक रूप किसी गुण और उस गुण को धारण करने वाली वस्तु के रूप में दिखते हैं, पर इनका सबसे ऊँचा, असली स्वरूप चेतना ही है। मेरु आदि मन में ही मौजूद हैं - उस मन में जो चेतना को अभिव्यक्त करता है।

6.47.29

पिच्छपक्षौघकाठिन्यं मयूराण्डरसे यथा । चिति तत्त्वेऽस्ति नानाता तदभिव्यञ्जनात्मनि ॥ २९ ॥

picchapakṣaughakāṭhinyaṃ mayūrāṇḍarase yathā | citi tattve'sti nānātā tadabhivyañjanātmani || 29 ||

Just as the hardness of feathers and wings is present in the fluid inside a peacock's egg, diversity is present in the reality of consciousness in the very same way - present only in what gives it expression.

जैसे मोर के अंडे के रस में पंखों और परों का सारा सख्तपन मौजूद रहता है, ठीक वैसे ही चेतना के मूल तत्व में विविधता मौजूद रहती है - पर सिर्फ उस रूप में जो उसे प्रकट करता है।

6.47.30

विचित्रपिच्छिकापुञ्जो मयूराण्डरसे यथा । यथा नानात्मिके ह्येव बर्ह्यण्डरसबर्हिते ॥ ३० ॥

vicitrapicchikāpuñjo mayūrāṇḍarase yathā | yathā nānātmike hyeva barhyaṇḍarasabarhite || 30 ||

Just as the many-colored bundle of feathers exists in the fluid of a peacock's egg, so too, in that same fluid, the many-natured peacock itself already exists.

जैसे मोर के अंडे के रस में रंग-बिरंगे पंखों का पूरा गुच्छा मौजूद रहता है, वैसे ही उसी रस में वह विविध-रूपी मोर भी पहले से मौजूद रहता है।

6.47.31

विवेकदृष्ट्या दृष्टे ते तथा ब्रह्म जगत्स्थितम्। सनानातोऽप्यनानातो यथाऽण्डरसबर्हिणः ॥ ३१ ॥

vivekadṛṣṭyā dṛṣṭe te tathā brahma jagatsthitam | sanānāto'pyanānāto yathā'ṇḍarasabarhiṇaḥ || 31 ||

When these two are seen with the eye that tells things apart, Brahman and the world stand just so - many, and yet not many, the way the egg's fluid and the peacock are.

जब इन दोनों को भेद करने वाली दृष्टि से देखा जाता है, तो ब्रह्म और जगत ठीक इसी तरह हैं - अनेक, और फिर भी अनेक नहीं, जैसे अंडे का रस और मोर।

6.47.32

अद्वैतद्वैतसत्तात्मा तथा ब्रह्मजगद्भ्रमः। यथा सदसतोः सत्ता समतायामवस्थितिः ॥ ३२ ॥

advaitadvaitasattātmā tathā brahmajagadbhramaḥ | yathā sadasatoḥ sattā samatāyāmavasthitiḥ || 32 ||

The apparent difference between Brahman and the world is, in its very being, both one thing and two - just as being itself, whether of what is real or what is not real, comes to rest in sameness.

ब्रह्म और जगत के बीच जो भेद दिखाई देता है, वह अपने असली स्वरूप में एक भी है और दो भी - ठीक वैसे ही जैसे सत् और असत् का होना, दोनों का, एक ही समानता में टिका रहता है।

6.47.33

यतः सदसतो रूपं भावस्थं विद्धि तं परम्। नानाऽनानात्मकमिदं त्वनुभूतं नसंभवम् ॥ ३३ ॥

yataḥ sadasato rūpaṃ bhāvasthaṃ viddhi taṃ param | nānā'nānātmakamidaṃ tv anubhūtaṃ nasaṃbhavam || 33 ||

Know this as the Supreme: the one place where the forms of the real and the unreal come to rest. It is both many and not many, yet it is something we actually experience, not something that was ever born.

जान लो कि परम तत्व वही है जिसमें सत् और असत् के रूप टिके रहते हैं। वह अनेक भी है और अनेक नहीं भी, फिर भी वह अनुभव में आता है, वह कभी जन्मा हुआ नहीं है।

6.47.34

चिज्जगद्वलनं पश्य बर्ह्मण्डे रसबर्हिणम्। यथा जगति चित्तत्त्वं चित्तत्त्वे यज्जगत्तथा। नानाऽनानात्मकैकं च मयूराण्डरसो यथा ॥ ३४ ॥

cijjagadvālaṇaṃ paśya barhyaṇḍe rasabarhiṇam | yathā jagati cittattvaṃ cittattve yajjagattathā | nānā'nānātmakaikaṃ ca mayūrāṇḍaraso yathā || 34 ||

See how consciousness turns into the world, the way a peacock lies within the fluid of its egg. Just as the reality of consciousness is present in the world, so the world is present in the reality of consciousness - one single thing, both many and not many, like the fluid inside a peacock's egg.

देखो कैसे चेतना जगत में बदल जाती है, जैसे मोर अपने अंडे के रस में मौजूद रहता है। जैसे चेतना का तत्व जगत में मौजूद है, वैसे ही जगत चेतना के तत्व में मौजूद है - एक ही चीज़, जो अनेक भी है और अनेक नहीं भी, ठीक जैसे मोर के अंडे का रस।

6.47.35

नानापदार्थभ्रमपिच्छपूर्णा जगन्मयूराण्डरसश्चिदाद्या । मयूररूपं त्वमयूरमन्तः सत्तापदं विद्धि कुतोऽस्ति भेदः ॥ ३५ ॥

nānāpadārthabhramapicchāpūrṇā jagatmayūrāṇḍarasaścidādyā | mayūrarūpaṃ tvamayūramantaḥ sattāpadaṃ viddhi kuto'sti bhedaḥ || 35 ||

This world is like the fluid inside a peacock's egg, full of feathers that are the illusion of many separate things, and its source is consciousness. The shape of a peacock is there, yet inside it there is no peacock yet - know this simply as the state of pure being. So how could there be any real difference?

यह जगत मोर के अंडे के रस जैसा है, जो उन पंखों से भरा है जो अनेक अलग वस्तुओं का भ्रम हैं, और इसका मूल स्रोत चेतना है। मोर का आकार वहाँ है, पर भीतर अभी कोई मोर नहीं है - इसे केवल शुद्ध सत्ता की अवस्था जानो। तो फिर सचमुच भेद कहाँ है?

Chapter 48

6.48.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । यत्रानुदितरूपात्म सर्वमस्तीदमाततम् । मयूर इव बीजेऽन्तस्तदहंतादिगादि च ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yatrānuditarūpātma sarvamastīdamātatam | mayūra iva bīje'ntastadahantādigādi ca || 1 ||

Sri Vasishtha said: Where the self has not yet taken on any form, this whole vast world already exists inside it. And inside it too, the way a peacock lies hidden inside its seed, lies the sense of I and everything that comes with it.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जहाँ आत्मा का कोई रूप अभी तक नहीं उभरा, वहाँ यह सारा फैला हुआ जगत पहले से ही मौजूद है। और उसी के भीतर, जैसे मोर अपने बीज के भीतर छिपा रहता है, वैसे ही मैं का भाव और उससे जुड़ी हर चीज़ छिपी रहती है।

6.48.2

यत्र नाभ्युदितं किंचित्तत्र सर्वं च विद्यते । तदत्राप्यङ्गिराः स्वर्गसुखसारेण बिम्बति ॥ २ ॥

yatra nābhyuditaṃ kiñcit tatra sarvaṃ ca vidyate | tadatrāpyaṅgirāḥ svargasukhasāreṇa bimbiti || 2 ||

Where nothing at all has arisen, everything exists there too. Here, even the sage Angiras shines through the very essence of heaven's bliss.

जहाँ कुछ भी अभी तक नहीं उभरा, वहाँ सब कुछ भी मौजूद है। यहाँ ऋषि अंगिरा भी स्वर्ग के सुख के सार से ही चमकते हैं।

6.48.3

तथा च मुनयो देवा गणाः सिद्धा महर्षयः । आस्वादयन्तः स्वं रूपं सदा तुर्यपदे स्थिताः ॥ ३ ॥

tathā ca munayo devā gaṇāḥ siddhā maharṣayaḥ | āsvādayantaḥ svaṃ rūpaṃ sadā turyapade sthitāḥ || 3 ||

And so the sages, the gods, the hosts, the siddhas and the great seers keep tasting their own true nature, always established in the fourth state.

इसी तरह मुनि, देवता, गण, सिद्ध और महर्षि, ये सब अपने ही असली स्वरूप का स्वाद लेते हुए, सदा उस चौथी अवस्था में स्थिर रहते हैं।

6.48.4

एते ये स्तब्धनयनदृष्टयो निर्निमेषिणः । ते दृश्यदर्शनासङ्गस्पन्दत्यागे व्यवस्थिताः ॥ ४ ॥

ete ye stabdhanayanadṛṣṭayo nirnimeṣiṇaḥ | te dṛśyadarśanāsaṅgaspandatyāge vyavasthitāḥ || 4 ||

These are the ones whose eyes are fixed, unblinking. They stand firm, having let go of even the slightest stir that ties the seer to the seen.

ये वे हैं जिनकी आँखें स्थिर हैं, बिना पलक झपकाए। ये उस हल्के से कंपन को भी छोड़कर स्थिर हो चुके हैं, जो देखने वाले को देखी गई चीज़ से जोड़ता है।

6.48.5

नास्थिता भावना येषां स्थितानामपि कर्मसु । संवित्संवेद्यसंबन्धस्पन्दत्यागे च ये स्थिताः ॥ ५ ॥

nāsthitā bhāvanā yeṣāṃ sthitānāmapi karmasu | saṃvitsaṃvedyasaṃbandhaspandatyāge ca ye sthitāḥ || 5 ||

No thought settles and takes hold in their mind, even while they carry on with their actions. They stand having let go of the least stir that links awareness to what it is aware of.

ये अपने कामों में लगे रहते हुए भी, इनके मन में कोई विचार टिकता नहीं। ये उस हल्के कंपन को भी छोड़कर स्थिर हो चुके हैं, जो चेतना को उसके जाने गए विषय से जोड़ता है।

6.48.6

प्राणो न स्पन्दते येषां चित्रस्थवपुषामिव । मनो न स्पन्दते येषां चित्रस्थवपुषामिव ॥ ६ ॥

prāṇo na spandate yeṣāṃ citrasthavapuṣāmiva| mano na spandate yeṣāṃ citrasthavapuṣāmiva || 6 ||

Their breath does not move, like the figures painted in a picture. Their mind does not move, like the figures painted in a picture.

इनकी साँस नहीं चलती, जैसे किसी चित्र में बने हुए शरीर हिलते नहीं। इनका मन नहीं चलता, जैसे किसी चित्र में बने हुए शरीर हिलते नहीं।

6.48.7

चित्तचेत्यसमासङ्गत्यागे ते स्वपदे स्थिताः । स्पन्दात्संसाधयन्त्यर्थं तेनांशेनेश्वरो यथा ॥ ७ ॥

cittacetyasamāsaṅgatyāge te svapade sthitāḥ| spandātsaṃsādhayantyarthaṃ tenāṃśeneśvaro yathā || 7 ||

They have let go of all close contact between the mind and what the mind touches, and they stand in their own true place. Yet through that same trace of stir they still get their work done, through that one part of themselves, just as the Lord does.

ये मन और मन के विषय के बीच के हर गहरे जुड़ाव को छोड़कर, अपने असली स्थान में स्थिर रहते हैं। फिर भी उसी हल्के कंपन के सहारे ये अपना काम पूरा कर लेते हैं, अपने उसी एक हिस्से से, जैसे स्वयं ईश्वर करते हैं।

6.48.8

तथैव चित्तचेत्यादिस्पन्दात्कुर्वन्ति संस्थितिम् । यथा ह्लादयति स्वच्छः पल्लवं रश्मिरैन्दवः ॥ ८ ॥

tathaiva cittacetyādispandātkurvanti saṃsthitim| yathā hlādayati svacchaḥ pallavaṃ raśmiraindavaḥ || 8 ||

In just this way, they carry on their existence through that same stir of the mind and its object, the way a clear moonbeam gladdens a young shoot.

ठीक इसी तरह, ये मन और उसके विषय के उसी हल्के कंपन के सहारे अपना जीवन चलाते रहते हैं, जैसे चाँद की एक स्वच्छ किरण किसी कोमल कोंपल को सुख देती है।

6.48.9

तथात्मा ह्लादयत्यन्तर्दृश्यदर्शनसंगमे । बिम्बाद्दूरं प्रयातस्य भित्तावपतितस्य च ॥ ९ ॥

tathātmā hlādayatyantardṛśyadarśanasamgame| bimbāddūraṃ prayātasya bhittāvapatitasya ca || 9 ||

In the same way, the self delights within, at the very point where the seen and the seeing meet, like a ray that has traveled far from the moon's disc and fallen on a wall.

उसी तरह आत्मा भीतर ही भीतर आनंदित होती है, ठीक उस जगह जहाँ देखी गई चीज़ और देखने वाला मिलते हैं, जैसे चाँद के गोले से दूर निकली कोई किरण किसी दीवार पर जा गिरे।

6.48.10

यदिन्दोस्तेजसो रूपं तद्रूपं शुद्धसंविदः । न दृश्यं नोपदेशार्हं नात्यासन्नं न दूरगम् ॥ १० ॥

yadindostejaso rūpaṃ tadrūpaṃ śuddhasaṃvidaḥ| na dṛśyaṃ nopadeśārhaṃ nātyāsannaṃ na dūragam || 10 ||

The very light that shines from the moon, that is the form of pure awareness. It cannot be seen as a thing, it cannot be taught in words, it is not very near, and it is not far away.

चाँद से निकलने वाला जो प्रकाश है, वही शुद्ध चेतना का रूप है। वह किसी वस्तु की तरह देखी नहीं जा सकती, शब्दों में सिखाई नहीं जा सकती, न वह बहुत पास है, न बहुत दूर।

6.48.11

केवलानुभवप्राप्यं चिद्रूपं शुद्धमात्मनः । न देहो नेन्द्रियप्राणौ न चित्तं न च वासना ॥ ११ ॥

kevalānubhavaprāpyaṃ cidrūpaṃ śuddhamātmanaḥ | na deho nendriyaprāṇau na cittaṃ na ca vāsanā || 11 ||

It can be reached only through direct experience. It is the pure awareness that is the self's true nature. It is not the body, not the senses and the breath, not the mind, and not even a desire buried deep within.

इसे केवल सीधे अनुभव से ही पाया जा सकता है। यह आत्मा का शुद्ध चेतना रूप स्वभाव है। यह न शरीर है, न इंद्रियाँ और साँस, न मन है, और न ही मन में गहरे दबी कोई इच्छा।

6.48.12

न जीवो नापि च स्पन्दो न संवित्तिर्न वै जगत् । न सन्नासन्न मध्यं च शून्याशून्यं न चैव हि ॥ १२ ॥

na jīvo nāpi ca spando na saṃvittirna vai jagat | na sannāsanna madhyaṃ ca śūnyāśūnyaṃ na caiva hi || 12 ||

It is not the living self, not movement, not an act of knowing, and not the world. It is not being, not non-being, and not something in between. And it is not empty, and it is not the opposite of empty either.

यह न जीव है, न कोई हलचल, न जानने की कोई क्रिया, और न ही यह जगत है। यह न सत् है, न असत्, और न इन दोनों के बीच की कोई चीज़। और यह न खाली है, न खाली के विपरीत कुछ।

6.48.13

न देशकालवस्त्वादि तदेवास्ति न चेतरत् । एतैः सर्वैर्विनिर्मुक्तं हृदि कोशशतेन च ॥ १३ ॥

na deśakālavastvādi tadevāsti na cetarat | etaiḥ sarvairvinirmuktaṃ hṛdi kośaśatena ca || 13 ||

It is not place, time, or any thing. Only that alone truly exists, nothing else does. It is free from all of these, though it lies in the heart, wrapped in a hundred layers.

यह न स्थान है, न समय, न कोई वस्तु। केवल वही सचमुच है, और कुछ नहीं। यह इन सबसे मुक्त है, फिर भी यह हृदय में सौ परतों में लिपटी हुई है।

6.48.14

यत्रैतत्स्पन्दते दृश्यं तत्तदात्मपदं भवेत् । यच्च नाद्यं न कल्पान्तं न वस्त्वाद्यनिलादिभिः ॥ १४ ॥

yatraitatspandate dṛśyaṃ tattadātmapadaṃ bhavet | yacca nādyaṃ na kalpāntaṃ na vastvādyanilādibhiḥ || 14 ||

Wherever this visible world moves, that very place is the state of the self, which has no beginning, no end even when a whole age is destroyed, and is not made of matter, wind, or any of the elements.

यह दिखने वाला जगत जहाँ भी हिलता डुलता है, वही जगह आत्मा की अवस्था है, जिसका न कोई आरंभ है, न कल्प के प्रलय में भी कोई अंत, और जो न तो किसी पदार्थ से बनी है, न वायु से, न किसी और तत्व से।

6.48.15

इह चामुत्र सद्रूपादन्यथा भवति क्वचित् । जायन्ते च म्रियन्ते च देहकुम्भाः सहस्रशः ॥ १५ ॥

iha cāmutra sadrūpādanyathā bhavati kvacit | jāyante ca mriyante ca dehakumbhāḥ sahasraśaḥ || 15 ||

Here, and in the world beyond, it sometimes appears different from its own true, existing form. And bodies, like clay pots, are born and die by the thousand.

यहाँ भी और उस लोक में भी, यह कभी कभी अपने असली, विद्यमान रूप से अलग जैसा दिखाई देता है। और शरीर, घड़ों की तरह, हज़ारों की संख्या में जन्म लेते और मरते रहते हैं।

6.48.16

सबाह्याभ्यन्तरस्यास्य नात्माकाशस्य खण्डना । तच्च देहादि सकलमात्मैवात्मविदां वर ॥ १६ ॥

sabāhyābhyantarasyāsya nātmākāśasya khaṇḍanā | tacca dehādi sakalamātmaivātmavidāṃ vara || 16 ||

This space that is the self has both an outside and an inside, yet it is never broken into pieces. And all of this, the body and everything else, is nothing but the self, O best among those who know the self.

यह आत्मा रूपी आकाश बाहर भी है और भीतर भी, फिर भी यह कभी टुकड़ों में नहीं टूटता। और यह सब कुछ, शरीर और बाकी सब, आत्मा के सिवा कुछ नहीं है, हे आत्मा को जानने वालों में श्रेष्ठ।

6.48.17

केवलं बोधवैरूप्यादीषत्पृथगिव स्थितम् । विष्वगात्ममयं विश्वं ज्ञातं बुद्ध्या सुसिद्धया ॥ १७ ॥

kevalaṃ bodhavairūpyādīṣatpṛthagiva sthitam | viṣvagātmamayaṃ viśvaṃ jñātaṃ buddhyā susiddhayā || 17 ||

Only because knowing itself takes on a different shape does it seem to stand a little apart. Once known through a fully clear mind, this whole universe, in every direction, is made of nothing but the self.

केवल जानने के रूप में आए अंतर के कारण ही यह थोड़ा अलग जैसा दिखता है। जब बुद्धि पूरी तरह निर्मल हो जाती है, तो पता चलता है कि यह सारा विश्व, हर दिशा में, आत्मा के सिवा कुछ और नहीं है।

6.48.18

प्रज्वलन्नपि कार्येषु निर्वाणो निर्ममो भव । यदिदं दृश्यते किंचिज्जगत्स्थावरजंगमम् ॥ १८ ॥

prajvalannapi kāryeṣu nirvāṇo nirmamo bhava | yadidaṃ dṛśyate kiṃcidjagatsthāvarajaṅgamam || 18 ||

Even while you burn bright in your work, stay cool within and free of any sense of mine, toward this whole world that is seen, everything that moves and everything that does not move.

अपने कामों में पूरी तरह जलते दहकते हुए भी, भीतर से शांत और मेरापन से मुक्त रहो, इस पूरे दिखने वाले जगत के प्रति, चाहे वह चलने वाला हो या न चलने वाला।

6.48.19

तत्सर्वं ब्रह्म निर्धर्म निर्गुणं निर्मलात्मकम् । निर्विकारमनाद्यन्तं नित्यं शान्तं समात्मकम् ॥ १९ ॥

tatsarvaṃ brahma nirdharma nirguṇaṃ nirmalātmakam | nirvikāramanādyantaṃ nityaṃ śāntaṃ samātmakam || 19 ||

All of this is Brahman alone, beyond any property, beyond any quality, spotless by nature, unchanging, without beginning or end, eternal, at peace, and the same everywhere.

यह सब कुछ केवल ब्रह्म ही है, किसी भी गुण धर्म से परे, स्वभाव से निर्मल, अपरिवर्तनीय, बिना आरंभ और बिना अंत के, नित्य, शांत, और हर जगह एक समान।

6.48.20

कालक्रियाकरणकर्तृनिदानकार्यजन्मस्थितिप्रलयसंस्मरणादि सर्वम्। ब्रह्मेति दृष्टवत एव तवात्मदृष्ट्या भूयोऽपि किं भ्रमणमङ्ग समङ्ग एव॥ २०॥

kālakriyākaraṇakartṛnidānakāryajanmasthitipralayasaṃsmaraṇādi sarvam | brahmeti dṛṣṭavata eva tavātmadṛṣṭyā bhūyo'pi kiṃ bhramaṇamaṅga samaṅga eva || 20 ||

Time, action, the means, the doer, the cause, the effect, birth, continuing, dissolving, remembering, and everything else, once you have seen all of this as Brahman alone, through your own vision of the self, what confusion can remain, dear one, whole and complete as you already are.

समय, क्रिया, साधन, करने वाला, कारण, परिणाम, जन्म, टिके रहना, नाश होना, याद रखना, यह सब कुछ, जब तुमने अपनी आत्म दृष्टि से इसे केवल ब्रह्म के रूप में देख लिया है, तो अब और कौन सा भ्रम बचा है, प्रिय, जबकि तुम पहले से ही पूर्ण हो।

Chapter 49

6.49.1

श्रीराम उवाच । यदि नास्ति विकारादि ब्रह्मन्ब्रह्मणि बृंहिते । तदिदं कथमाभाति भावाभावमयं जगत् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | yadi nāsti vikārādi brahmanbrahmaṇi bṛṃhite | tadidaṃ kathamābhāti bhāvābhāvamayaṃ jagat ||1||

Sri Rama said: If there is no modification in the expanded Brahman, then how does this world, which is full of existence and non-existence, appear?

श्रीराम ने कहा: यदि विस्तृत ब्रह्म में कोई विकार नहीं है, तो यह अस्तित्व और अनस्तित्व से भरा जगत कैसे प्रकट होता है?

6.49.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । अपुनःप्रागवस्थानं यत्स्वरूपविपर्ययः । त्तद्विकारादिकं तात यत्क्षीरादिषु वर्तते ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | apunaḥprāgavasthānaṃ yatsvarūpaviparyayaḥ | ttadvikārādikaṃ tāta yatkṣīrādiṣu vartate ||2||

Vasishtha said: O dear one, that which is a change in the original state of something is called a modification, like the transformation of milk into curd.

वसिष्ठ ने कहा: हे प्रिय, जो किसी चीज की मूल अवस्था में परिवर्तन है, उसे विकार कहते हैं, जैसे दूध का दही में परिवर्तन।

6.49.3

पयस्तां पुनरभ्येति दधित्वान्न पुनः पयः । बुद्धमाद्यन्तमध्येषु ब्रह्म ब्रह्मैव निर्मलम् ॥ ३ ॥

payastāṃ punarabhyeti dadhitvānna punaḥ payaḥ | buddhamādyantamadhyeṣu brahma brahmaiva nirmalam ||3||

Milk does not return to its original state after becoming curd. Similarly, Brahman, which is pure and unchanging, remains the same in the beginning, middle, and end.

दूध दही बनने के बाद अपनी मूल अवस्था में नहीं लौटता। इसी प्रकार, ब्रह्म, जो शुद्ध और अपरिवर्तनशील है, आदि, मध्य और अंत में वही रहता है।

6.49.4

क्षीरादेरिव तेनास्ति ब्रह्मणो न विकारिता । अनाद्यन्तविभागस्य न चैषोऽवयविक्रमः ॥ ४ ॥

kṣīrāderiva tenāsti brahmaṇo na vikāritā | anādyantavibhāgasya na caiṣo'vayavikramaḥ ||4||

Therefore, just as there is no modification in milk, there is no modification in Brahman, which has no beginning or end. It is not divided into parts.

इसलिए, जैसे दूध में कोई विकार नहीं होता, उसी प्रकार ब्रह्म में भी कोई विकार नहीं है, जिसका न आदि है न अंत। यह अवयवों में विभाजित नहीं है।

6.49.5

समस्याद्यन्तयोर्येयं दृश्यते विकृतिः क्षणात् । संविदः संभ्रमं विद्धि नाविकारेऽस्ति विक्रिया ॥ ५ ॥

samasyādyantayoryeyaṃ dṛśyate vikṛtiḥ kṣaṇāt | saṃvidaḥ saṃbhramaṃ viddhi nāvikāre'sti vikriyā ||5||

The apparent modification seen in the beginning, middle, and end is merely a disturbance of consciousness. There is no real modification in the unchanging.

आदि, मध्य और अंत में दिखने वाला विकार केवल चेतना का विक्षेप है। अपरिवर्तनशील में कोई वास्तविक विकार नहीं है।

6.49.6

न संवेद्यं न संवित्तिस्तत्र ब्रह्मणि विद्यते । तद्ब्रह्मशब्दकथितं निःसंबन्धचिदात्मवत् ॥ ६ ॥

na saṃvedyaṃ na saṃvittistatra brahmaṇi vidyate | tadbrahmaśabdakathitaṃ niḥsaṃbandhacidātmavat || 6 ||

In Brahman, there is neither the knowable nor knowledge. That is called Brahman, which is devoid of any relationship and is pure consciousness.

ब्रह्म में न ज्ञेय है और न ही ज्ञान | वह ब्रह्म कहलाता है जो संबंध से रहित और चिदात्मा है ||

6.49.7

यादृगाद्यन्तयोर्वस्तु तादृगेव तदुच्यते । मध्ये यस्य यदन्यत्वं तदबोधाद्विजृम्भितम् ॥ ७ ॥

yādṛgādyantayorvastu tādṛgeva taducyate | madhye yasya yadanyatvaṃ tadabodhādvijṛmbhitam || 7 ||

Whatever exists at the beginning and the end is described as such. The difference in the middle is due to ignorance.

जो आदि और अंत में है, वही वर्णित है | मध्य में जो भिन्नता है, वह अज्ञान से उत्पन्न है ||

6.49.8

आत्मा त्वाद्यन्तमध्येषु समः सर्वत्र सर्वदा । स्वमप्यन्यत्वमायाति नात्मतत्त्वं कदाचन ॥ ८ ॥

ātmā tvādyantamadhyeṣu samaḥ sarvatra sarvadā | svamapyanyatvamāyāti nātmatattvaṃ kadācana || 8 ||

The Self is the same at the beginning, middle, and end, everywhere and always. It never loses its true nature, even though it may appear different.

आत्मा आदि, मध्य और अंत में समान है, सर्वत्र और सर्वदा | यद्यपि वह भिन्न प्रतीत होता है, आत्मतत्त्व कभी नहीं खोता ||

6.49.9

अरूपत्वात्तथैकत्वान्नित्यत्वादयमीश्वरः । वशं भावविकाराणां न कदाचन गच्छति ॥ ९ ॥

arūpatvāttathaikatvānniatyatvādayamīśvaraḥ | vaśaṃ bhāvavikārāṇāṃ na kadācana gacchati || 9 ||

Due to being formless, one, and eternal, this Lord never comes under the influence of mental modifications.

रूपहीनता, एकत्व और नित्यत्व के कारण, यह ईश्वर मानसिक विकारों के अधीन कभी नहीं आता ||

6.49.10

श्रीराम उवाच । विद्यमाने सदैकस्मिन्ब्रह्मण्येकान्तनिर्मले । संविद्भ्रमस्वरूपाया अविद्यायाः क आगमः ॥ १० ॥

śrīrāma uvāca | vidyamāne sadaikasminbrahmaṇyekāntanirmale | saṃvidbhramasvarūpāyā avidyāyāḥ ka āgamaḥ || 10 ||

Sri Rama said: When there is always the pure and non-dual Brahman, what is the origin of ignorance, which is of the nature of the illusion of knowledge?

श्री राम ने कहा: जब सदा शुद्ध और अद्वैत ब्रह्म है, तो ज्ञान के भ्रम की प्रकृति वाली अज्ञान का उद्भव कैसे हुआ?

6.49.11

श्रीवसिष्ठ उवाचब्रह्मतत्त्वमिदं सर्वमासीदस्ति भविष्यतिनिर्विकारमनाद्यन्तं नाविद्यास्तीति निश्चयः ॥ ११ ॥

śrīvasiṣṭha uvācabrahmatattvamidaṃ sarvamāsīdasti bhaviṣyatinirvikāramanādyantaṃ nāvidyāstīti niścayaḥ || 11 ||

Vasishtha said: This entire universe is the reality of Brahman. It was, it is, and it will be, unchanging, without beginning or end. There is no ignorance, this is certain.

वसिष्ठ ने कहा: यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ब्रह्म का तत्व है। यह था, है, और होगा, अपरिवर्तनीय, अनादि और अनन्त। कोई अज्ञान नहीं है, यह निश्चित है।

6.49.12

यस्तु ब्रह्मेति शब्देन वाच्यवाचकयोः क्रमःतत्रापि नान्यताभावमुपदेष्टुं क्रमो ह्यसौ ॥ १२ ॥

yastu brahmeti śabdena vācyavācakayoḥ kramaḥtatrāpi nānyatābhāvamupadeṣṭuṃ kramo hyasau || 12 ||

Even in the sequence of the signified and the signifier, denoted by the word 'Brahman,' there is no difference. This sequence is to teach the absence of duality.

जब शब्द 'ब्रह्म' से वाच्य और वाचक का क्रम निर्धारित होता है, तब भी कोई अन्तर नहीं है। यह क्रम द्वैत की अनुपस्थिति को सिखाने के लिए है।

6.49.13

त्वमहं जगदाशाश्च द्यौर्भूश्चाप्यनलादि वाब्रह्ममात्रमनाद्यन्तं नाविद्यास्ति मनागपि ॥ १३ ॥

tvamahaṃ jagadāśāśca dyaurbhūścāpyanalādi vābrahmamātramanādyantaṃ nāvidyāsti manāgapi || 13 ||

You, I, the hopes of the world, the sky, the earth, and even fire, etc., are all merely Brahman, without beginning or end. There is no ignorance, even in the mind.

तुम, मैं, दुनिया की आशाएँ, आकाश, पृथ्वी, और अग्नि आदि, सभी केवल ब्रह्म हैं, अनादि और अनन्त। मन में भी कोई अज्ञान नहीं है।

6.49.14

नामैवेदमविद्येति भ्रममात्रमसद्विदुःन विद्यते या सा सत्या कीदृग्राम भवेत्किल ॥ १४ ॥

nāmaivedamavidyeti bhramamātramasadviduḥna vidyate yā sā satyā kīdṛgrāma bhavetkila || 14 ||

This is called ignorance, which is merely an illusion, known to be unreal. That which is real does not exist, what kind of reality would that be?

यह अज्ञान कहलाता है, जो केवल एक भ्रम है, जिसे असत्य जाना जाता है। जो सत्य है, वह नहीं है, ऐसा सत्य कैसा होगा?

6.49.15

श्रीराम उवाचौपशमप्रकरणे ह्यस्तने तु त्वयेरितमविद्येयं तथेत्थं च विचार्यत इति प्रभो ॥ १५ ॥

śrīrāma uvācaupaśamaprakaraṇe hyastane tu tvayeritamavidyeyaṃ tathetthaṃ ca vicāryata iti prabho || 15 ||

Sri Rama said: In the context of tranquility, this ignorance is indeed discussed by you. Therefore, it should be contemplated in this manner, O Lord.

श्री राम ने कहा: शान्ति के संदर्भ में, यह अज्ञान वास्तव में आपने वर्णित किया है। इसलिए, यह इस प्रकार से विचार किया जाना चाहिए, हे प्रभु।

6.49.16

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतावन्तमबुद्धस्त्वमभूः कालं रघूद्वह । कल्पिताभिः किलैताभिर्बोधितोसि स्वयुक्तिभिः ॥ १६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etāvantamabuddhas tvam abhūḥ kālaṃ raghūdvaha | kalpitābhiḥ kila etābhir bodhito'si svayuktibhiḥ || 16 ||

Vasishtha said: O Rama, you have been ignorant for so long. You have been enlightened by these fabricated reasons.

वसिष्ठ ने कहा: हे रघुनाथ, तुम इतने समय तक अज्ञानी रहे हो। तुम्हें इन कल्पित युक्तियों से बोध मिला है।

6.49.17

अविद्येयमयं जीव इत्यादिकलनाक्रमः । अप्रबुद्धप्रबोधाय कल्पितो वाग्विदां वरैः ॥ १७ ॥

avidye yamayaṃ jīva ityādikalanākramaḥ | aprabuddhaprabodhāya kalpito vāgvidāṃ varaiḥ || 17 ||

The sequence of calculations such as 'This jiva is made of ignorance' is fabricated by the best of scholars for the enlightenment of the unenlightened.

यह अनुक्रम 'यह जीव अज्ञान से बना है' जैसे गणनाओं का है, जो अप्रबुद्धों के प्रबोध के लिए विद्वानों द्वारा कल्पित किया गया है।

6.49.18

अप्रबुद्धं मनो यावत्तावदेव भ्रमं विना। न प्रबोधमुपायाति तदाक्रोशशतैरपि ॥ १८ ॥

aprabuddhaṃ mano yāvat tāvad eva bhramaṃ vinā | na prabodham upāyāti tadākrośaśatair api || 18 ||

As long as the mind is unenlightened, it does not attain enlightenment even with hundreds of reprimands without delusion.

जब तक मन अप्रबुद्ध है, तब तक भ्रम के बिना सौ फटकारों के साथ भी प्रबोध नहीं प्राप्त होता।

6.49.19

युक्त्यैव बोधयित्वैष जीव आत्मनि योज्यते। यद्युक्त्यासाद्यते कार्यं न तद्यत्नशतैरपि ॥ १९ ॥

yuktyaiva bodhayitvaiṣa jīva ātmani yojyate | yadyuktyāsādyate kāryaṃ na tadyatnaśatair api || 19 ||

Only by reasoning is this jiva enlightened and united with the Self. If a task is accomplished by reasoning, it cannot be achieved even with hundreds of efforts.

केवल युक्ति से ही यह जीव बोध प्राप्त करता है और आत्मा से जुड़ता है। अगर कोई कार्य युक्ति से प्राप्त होता है, तो सौ प्रयासों के साथ भी वह प्राप्त नहीं हो सकता।

6.49.20

सर्वं ब्रह्मेति यो ब्रूयादप्रबुद्धस्य दुर्मतेः। स करोति सुहृद्वृत्त्या स्थाणोर्दुःखनिवेदनम् ॥ २० ॥

sarvaṃ brahmeti yo brūyād aprabuddhasya durmateḥ | sa karoti suhṛdvṛttyā sthāṇorduḥkhanivedanam || 20 ||

One who says 'All is Brahman' to an unenlightened person of poor understanding causes them pain, even with friendly behavior.

जो कहता है 'सब कुछ ब्रह्म है' एक अप्रबुद्ध और दुर्बुद्धि वाले व्यक्ति से, वह मित्रतापूर्ण व्यवहार के साथ भी उसे दुःख पहुँचाता है।

6.49.21

युक्त्या प्रबोध्यते मूढः प्राज्ञस्तत्त्वेन बोध्यते। मूढः प्राज्ञत्वमायाति न युक्त्या बोधनं विना ॥ २१ ॥

yuktyā prabodhyate mūḍhaḥ prājñastattvena bodhyate | mūḍhaḥ prājñatvamāyāti na yuktyā bodhanaṃ vinā || 21 ||

The ignorant one is awakened by reasoning, the wise one is awakened by the truth. The ignorant one attains wisdom, not without awakening by reasoning.

मूढ़ व्यक्ति युक्ति से जागृत होता है, बुद्धिमान व्यक्ति सत्य से जागृत होता है | मूढ़ व्यक्ति बुद्धिमान बनता है, युक्ति के बिना जागृति नहीं होती |

6.49.22

एतावन्तमबुद्धस्त्वं कालं युक्त्या प्रबोधितःइदानीं संप्रबुद्धस्त्वं मया येनावबोध्यसे ॥ २२ ॥

etāvantamabuddhastvaṃ kālaṃ yuktyā prabodhitaḥidānīṃ saṃprabuddhastvaṃ mayā yenāvabodhyase || 22 ||

Thus far, you have been ignorant, but now you have been enlightened by reasoning. Now you are fully awakened by me.

अब तक आप अज्ञानी थे, पर अब आप तर्क से बुद्धिमान हो गए हैं। अब आप मेरे द्वारा पूर्ण रूप से जागरूक हो गए हैं।

6.49.23

ब्रह्माहं त्रिजगद्ब्रह्म त्वं ब्रह्म खलु दृश्यभूः। द्वितीया कलना नास्ति यथेच्छसि तथा कुरु ॥ २३ ॥

brahmāhaṃ trijagadbrahma tvaṃ brahma khalu dṛśyabhūḥ | dvitīyā kalanā nāsti yathecchasi tathā kuru || 23 ||

I am Brahman, the Brahman of the three worlds, you are Brahman, indeed the visible world. There is no second creation, do as you wish.

मैं ब्रह्म हूँ, तीनों लोकों का ब्रह्म, तुम ब्रह्म हो, indeed दृश्य जगत | दूसरी कल्पना नहीं है, जैसे तुम चाहो वैसे करो |

6.49.24

असंवेद्यमहासंवित्कोटिमात्रं जगत्त्रयम्। एकप्रत्ययवानन्तः कुर्वन्नपि न लिप्यसे॥ २४॥

asaṃvedyamahāsaṃvitkoṭimātraṃ jagattrayam | ekapratyayavānantaḥ kurvannapi na lipyase || 24 ||

The three worlds are insignificant compared to the great consciousness, which is beyond comprehension. Though acting with a single intention, you are not affected.

तीनों लोक महान चेतना के सामने अप्राप्य हैं, जो समझ से परे है | एक ही प्रत्यय से कार्य करते हुए भी, तुम प्रभावित नहीं होते |

6.49.25

भारूपश्चेतनो व्यापी परमात्माहमित्ययम्। राघवानुभवान्तस्त्वं तिष्ठङ्गच्छञ्श्वसन्स्वपन्॥ २५॥

bhārūpaścetano vyāpī paramātmāhamityayam | rāghavānubhavāntastvaṃ tiṣṭhaṅgacchañchvasansvapan || 25 ||

I am the all-pervading, conscious, supreme self in the form of the bearer. You, experiencing Raghava, are standing, moving, breathing, and sleeping.

मैं भार के रूप में, चेतन, व्यापक, परमात्मा हूँ | तुम, रघुवंशी का अनुभव करते हुए, खड़े हो, चल रहे हो, साँस ले रहे हो, और सो रहे हो |

6.49.26

निर्ममो निरहंकारो बुद्धिमानसि साधु चेत्। तद्ब्रह्म वेदनं शान्तं सर्वभूतस्थितं भव॥ २६॥

nirmamo nirahaṃkāro buddhimānasi sādhu cet | tadbrahma vedanaṃ śāntaṃ sarvabhūtasthitaṃ bhava || 26 ||

Be free from possessiveness, free from ego, wise, and good-hearted. Know that Brahman is tranquil and present in all beings.

निर्मम हो, निरहंकार हो, बुद्धिमान हो, और साधु हो। वह ब्रह्म ज्ञान शान्त है और सभी जीवों में स्थित है।

6.49.27

तदनाद्यन्तमाभासं सत्त्वमेव परं पदम्। स्थितोऽसि सर्वगैकात्मशुद्धसंविन्मयात्मकः॥ २७॥

tadanādyantamābhāsaṃ sattvameva paraṃ padam | sthito'si sarvagaikātmaśuddhasaṃvinmayātmakaḥ || 27 ||

That which is without beginning or end, which is pure existence, is the supreme state. You are established in that pure consciousness which is all-pervading and one with the self.

जो आदि और अंत से रहित है, जो शुद्ध अस्तित्व है, वह परम स्थिति है। तुम उस शुद्ध चेतना में स्थित हो जो सर्वव्यापी और आत्मा से एक है।

6.49.28

यद्ब्रह्मात्मापि तुर्यश्च याऽविद्या प्रकृतिश्च या। तदभिन्नसदैकात्म यथा कुम्भशतेषु मृत्॥ २८॥

yadbrahmātmāpi turyaśca yā'vidyā prakṛtiśca yā | tadabhinnasadaikātma yathā kumbhaśateṣu mṛt || 28 ||

That which is Brahman, the self, and the fourth state, and that which is ignorance and nature, is non-dual and one with the self, like clay in a hundred pots.

जो ब्रह्म, आत्मा, और चौथी अवस्था है, और जो अविद्या और प्रकृति है, वह अद्वैत और आत्मा से एक है, जैसे सौ घड़ों में मिट्टी।

6.49.29

नात्मनः प्रकृतिर्भिन्ना घटान्मृन्मयता यथा। सन्मृन्मात्रं यथा चान्तरात्मैवं प्रकृतिः स्थिता॥ २९॥

nātmanaḥ prakṛtirbhinnā ghaṭānmṛnmayatā yathā | sanmṛnmātraṃ yathā cāntarātmaivaṃ prakṛtiḥ sthitā || 29 ||

The nature of the self is not different, just as a pot is made of clay. The inner self is the essence of existence, just as the pot is essentially clay.

आत्मा की प्रकृति भिन्न नहीं है, जैसे घड़ा मिट्टी से बना होता है। आत्मा अस्तित्व की मूल तत्व है, जैसे घड़ा मिट्टी से ही होता है।

6.49.30

आवर्तः सलिलस्येव यः स्पन्दस्त्वयमात्मनः । प्रोक्तः प्रकृतिशब्देन तेनैवेह स एव हि ॥ ३० ॥

āvartaḥ salilasyeva yaḥ spandastvayamātmanaḥ | proktaḥ prakṛtiśabdena tenaiveha sa eva hi || 30 ||

The vibration of the self is like the whirlpool in water. It is called nature, and that is the same here.

आत्मा की स्पन्दन पानी में भंवर की तरह है। यह प्रकृति कहलाती है, और यह यहाँ वही है।

6.49.31

यथैकः स्पन्दपवनौ नाम्ना भिन्नौ न सत्तया । तथैकमात्मप्रकृती नाम्ना भिन्ने न सत्तया ॥ ३१ ॥

yathaikaḥ spandapavanau nāmnā bhinnau na sattayā | tathaikamātmaprakṛtī nāmrā bhinne na sattayā || 31 ||

Just as wind and vibration are one in essence though different in name, so too are the Self and Prakriti one in essence though different in name.

जैसे हवा और कंपन नाम से अलग हैं पर सत्ता में एक हैं, वैसे ही आत्मा और प्रकृति नाम से अलग हैं पर सत्ता में एक हैं।

6.49.32

अबोधादेतयोर्भेदो बोधेनैव विलीयते । अबोधात्सन्मयो याति रज्ज्वां सर्पभ्रमो यथा ॥ ३२ ॥

abodhādetayorbhedo bodhenaiva vilīyate | abodhātsanmayo yāti rajjvāṃ sarpabhramo yathā || 32 ||

The difference between the two arises from ignorance and dissolves with knowledge. Just as the illusion of a snake in a rope arises from ignorance and dissolves with knowledge.

इन दोनों का भेद अज्ञान से होता है और ज्ञान से विलीन हो जाता है। जैसे रस्सी में साँप का भ्रम अज्ञान से होता है और ज्ञान से दूर हो जाता है।

6.49.33

चित्क्षेत्रे कलनाबीजं यदेतत्पतति स्फुरन् । चित्ताङ्कुरं तदेतस्माद्भाविसंसारखण्डकः ॥ ३३ ॥

citkṣetre kalanābījaṃ yadetatpatati sphuran | cittāṅkuraṃ tadetasmādbhāvisaṃsārakhaṇḍakaḥ || 33 ||

The seed of mental agitation falls into the field of consciousness and sprouts as the mind, which is the fragment of future worldly existence.

मानसिक उथल-पुथल का बीज चेतना के खेत में गिरता है और मन के रूप में अंकुरित होता है, जो भविष्य के संसार का टुकड़ा है।

6.49.34

एतदेवात्मविज्ञानाद्दग्धं सद्वासनाजलैः । संसिक्तमपि यत्नेन न भवत्यङ्कुरक्षमम् ॥ ३४ ॥

etadevātmavijñānāddagdhaṃ sadvāsanājalaiḥ | saṃsiktamapi yatnena na bhavatyankurakṣamam || 34 ||

This very seed, when burned by the knowledge of the Self, even if watered with effort, does not become capable of sprouting.

यही बीज, जब आत्मज्ञान से जल जाता है, तो चाहे प्रयास से सींचा जाए, अंकुरित होने के योग्य नहीं होता।

6.49.35

नो चेत्पतति चित्क्षेत्रे कलनाबीजकं ततः । चित्ताङ्कुरा न जायन्ते सुखदुःखलवद्रुमाः ॥ ३५ ॥

no cetpatati citkṣetre kalanābījakaṃ tataḥ | cittāṅkurā na jāyante sukhaduḥkhalavadrumāḥ || 35 ||

If the seed of mental agitation does not fall into the field of consciousness, then the sprouts of the mind, which are the trees of happiness and sorrow, do not arise.

यदि मानसिक उथल-पुथल का बीज चेतना के खेत में नहीं गिरता है, तो मन के अंकुर, जो सुख और दुःख के वृक्ष हैं, उत्पन्न नहीं होते।

6.49.36

द्वित्वं जगत्यसदुपात्तमबोधजातं बोधक्षयं जहिहि बोधमुपागतोऽसि । आत्मैकभावविभवेन भवाभयात्मा नास्त्येव दुःखमिति नः परमार्थसारः ॥ ३६ ॥

dvitvaṃ jagatyasadupāttamabodhajātaṃ bodhakṣayaṃ jahihi bodhamupāgato'si | ātmaikabhāvavibhavena bhavābhayātmā nāstyeva duḥkhamiti naḥ paramārthasāraḥ || 36 ||

The duality in the world, which is unreal and born of ignorance, should be abandoned by the destruction of ignorance, as you have attained knowledge. By the splendor of the state of being one with the Self, there is no fear of existence, indeed there is no sorrow, this is the essence of the highest truth for us.

जगत में जो असत्य और अज्ञान से उत्पन्न द्वैत है, उसे अज्ञान के नाश द्वारा त्याग दें, क्योंकि आप ज्ञान को प्राप्त हो चुके हैं। आत्मा के साथ एकत्व की अवस्था के तेज से, अस्तित्व का भय नहीं है, वास्तव में कोई दुःख नहीं है, यह हमारे लिए परम सत्य का सार है।

Chapter 50

6.50.1

श्रीराम उवाच । ज्ञातं ज्ञातव्यमखिलं दृष्टं द्रष्टव्यमक्षतम् । परेण परिपूर्णाः स्मो ब्रह्मज्ञानामृतेन ते ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | jñātaṃ jñātavyamakhilaṃ dṛṣṭaṃ drṣṭavyamakṣatam | pareṇa paripūrṇāḥ smo brahmajñānāmṛtena te || 1 ||

Shri Ram said: We have known all that is to be known, seen all that is to be seen. We are fully satisfied with the nectar of Brahmajnana (knowledge of Brahman).

श्रीराम ने कहा: हमने जानने योग्य सभी कुछ जान लिया है, देखने योग्य सभी कुछ देख लिया है। हम ब्रह्मज्ञान के अमृत से पूर्ण हैं।

6.50.2

पूर्णात्पूर्णमिदं पूर्णं पूर्णात्पूर्णं प्रसूयते । पूर्णेनापूरितं पूर्णं स्थिता पूर्णे च पूर्णता ॥ २ ॥

pūrṇātpūrṇamidaṃ pūrṇaṃ pūrṇātpūrṇaṃ prasūyate | pūrṇenāpūritaṃ pūrṇaṃ sthitā pūrṇe ca pūrṇatā || 2 ||

From the full, the full is born; from the full, the full is taken away. The full remains full even when the full is taken away from it.

पूर्ण से पूर्ण उत्पन्न होता है, पूर्ण से पूर्ण निकलता है। पूर्ण से पूर्ण निकलने पर भी पूर्ण पूर्ण ही रहता है।

6.50.3

लीलयेदं तु पृच्छामि भूयोबोधाभिवृद्धये । बालस्येव पिता ब्रह्मन्न कोपं कर्तुमर्हसि ॥ ३ ॥

līlayedaṃ tu pṛcchāmi bhūyobodhābhivṛddhaye | bālasyeva pitā brahmanna kopaṃ kartumarhasi || 3 ||

I ask this out of curiosity for the increase of knowledge. O Brahman, like a father to a child, you should not be angry.

मैं ज्ञान की वृद्धि के लिए उत्सुकता से यह पूछता हूँ। हे ब्रह्मन्, बालक के पिता की तरह तुम्हें क्रोध नहीं करना चाहिए।

6.50.4

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च । विद्यमानमपि ब्रह्मन्दृश्यमानमपि स्फुटम् ॥ ४ ॥

śrotraṃ cakṣuḥ sparśanaṃ ca rasanaṃ ghrāṇameva ca | vidyamānamapi brahmandṛśyamānamapi sphuṭam || 4 ||

The ears, the eyes, the sense of touch, the sense of taste, and the sense of smell are all present and clearly visible.

कान, आँखें, स्पर्श इंद्रिय, स्वाद इंद्रिय और घ्राण इंद्रिय सभी उपस्थित हैं और स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

6.50.5

कथं मृतस्य वै जन्तोर्विषयं स्वं न पश्यति । जीवतश्च कथं सर्वं विषयं स्वं प्रपश्यति ॥ ५ ॥

kathaṃ mṛtasya vai jantorviṣayaṃ svaṃ na paśyati | jīvataśca kathaṃ sarvaṃ viṣayaṃ svaṃ prapaśyati || 5 ||

How does the dead person not see his own senses? And how does the living person see all his senses?

मृत व्यक्ति अपनी इंद्रियों को कैसे नहीं देखता? और जीवित व्यक्ति अपनी सभी इंद्रियों को कैसे देखता है?

6.50.6

कथं घटादिबाह्यत्वमिन्द्रियाणि जडान्यपिशरीरेऽनुभवन्त्यन्तःपुनर्नानुभवन्त्यपि ॥ ६ ॥

kathaṃ ghaṭādibāhyatvamindriyāṇi jaḍānyapiśarīre'nubhavantyantaḥpunarnānubhavantyapi || 6 ||

How do the senses, which are inert, experience the external objects like pots, etc., in the body, but do not experience them internally?

कैसे इन्द्रियाँ, जो जड़ हैं, शरीर में घट आदि बाह्य वस्तुओं का अनुभव करती हैं, लेकिन अंतःकरण में उनका अनुभव नहीं करतीं?

6.50.7

अयःशलाकोपमयोर्घटादीन्द्रिययोः किलाश्लिष्टयोरन्तरसौ कथं तन्नोदिता मिथः ॥ ७ ॥

ayaḥśalākopamayorghaṭādīndriyayoḥ kilaaśliṣṭayorantarasau kathaṃ tannoditā mithaḥ || 7 ||

How do the senses, which are like iron rods and pots, being closely connected, not stimulate each other?

लोहे की सलाख और घट की तरह इन्द्रियाँ, जो घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई हैं, एक-दूसरे को कैसे उत्तेजित नहीं करतीं?

6.50.8

जानन्नपि यदेतान्वै विशेषाञ्छतधा पुनःपृच्छामि तदशेषेण कथयस्वानुकम्पया ॥ ८ ॥

jānannapi yadetānvai viśeṣāñchatadhā punaḥpṛcchāmi tadaśeṣeṇa kathayasvānukampayā || 8 ||

Even though I know these distinctions in various ways, I ask again with compassion, please explain them in detail.

यद्यपि मैं इन विशेषताओं को विभिन्न तरीकों से जानता हूँ, फिर भी दया से पूछता हूँ, कृपया इन्हें विस्तार से समझाएँ।

6.50.9

श्रीवसिष्ठ उवाचैन्द्रियाद्यपि चित्तादि घटाद्यपि न किंचन पृथक् संभवतीहाङ्ग निर्मलाच्चेतनादृते ॥ ९ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaindriyādyapi cittādi ghaṭādyapi na kiṃcana pṛthak saṃbhavatīhāṅga nirmalāccetanādṛte || 9 ||

Vasishtha said: Even the senses and the mind, pots, etc., do not exist separately without the pure consciousness.

वसिष्ठ ने कहा: इन्द्रियाँ और मन, घट आदि, शुद्ध चेतना के बिना अलग से नहीं होते।

6.50.10

गगनादपि याऽच्छा चित्तया रूपं स्वमात्मनाचित्त्वात्पुर्यष्टकत्वेन भाववृत्त्यैव भावितम् ॥ १० ॥

gaganādapi yā'cchā cittayā rūpaṃ svamātmanācittvātpuryaṣṭakatvena bhāvavṛttyaiva bhāvitam || 10 ||

Even the desire arising from the sky, by the mind, takes the form of its own self, due to the nature of consciousness, as the eight-fold city.

आकाश से उत्पन्न इच्छा, मन द्वारा, अपने स्वरूप का रूप लेती है, चेतना की प्रकृति के कारण, आठ-भुजा नगर के रूप में।

6.50.11

तदेव च प्रकृतितां गतं जगदवस्थितेःतस्या अवयवाज्जातमिन्द्रियादि घटादि च ॥ ११ ॥

tadeva ca prakṛtitāṃ gataṃ jagadavasthiteḥtasyā avayavājjātamindriyādi ghaṭādi ca || 11 ||

That very universe has become of the nature of Prakriti, and from its elements, the senses and objects like pots, etc., have arisen.

वही ब्रह्मांड प्रकृति के स्वभाव का हो गया है, और उसके तत्वों से इन्द्रियाँ और घड़े आदि वस्तुएँ उत्पन्न हुई हैं।

6.50.12

पुर्यष्टकत्वमायातं यच्चित्तं स्वस्वभावतःस्व एवावयवस्तस्मिन्घटादि प्रतिबिम्बति ॥ १२ ॥

puryaṣṭakatvamāyātaṃ yaccittaṃ svasvabhāvataḥsva evāvayavastasminghaṭādi pratibimbati || 12 ||

The mind, which has become the eightfold city, reflects its own elements in the form of pots, etc., due to its own nature.

मन, जो अष्टकोण नगर बन गया है, अपने स्वभाव के कारण घड़े आदि के रूप में अपने तत्वों को प्रतिबिम्बित करता है।

6.50.13

श्रीराम उवाचजगत्सहस्रनिर्माणमहिम्नो दर्पणस्य चपुर्यष्टकस्य भगवन्रूपं कथय कीदृशम ॥ १३ ॥

śrīrāma uvācajagatsahasranirmāṇamahimno darpaṇasya capuryaṣṭakasya bhagavanrūpaṃ kathaya kīdṛśam || 13 ||

Sri Rama said: O Lord, describe the nature of the reflection of the thousandfold creation of the universe in the mirror of the eightfold city.

श्री राम ने कहा: हे भगवान, अष्टकोण नगर के दर्पण में ब्रह्मांड की हजारों रचनाओं के महिमा का प्रतिबिम्ब कैसा है, यह बताएँ।

6.50.14

श्रीवसिष्ठ उवाचानाद्यन्तं जगद्बीजं यद्ब्रह्मास्ति निरामयम्भारूपं शुद्धचिन्मात्रं कलाकलनवर्जितम ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaanādyantaṃ jagadbījaṃ yadbrahmāsti nirāmayambhārūpaṃ śuddhacinmātraṃ kalākalanavarjitam || 14 ||

Sri Vasistha said: That which is the seed of the universe, without beginning or end, is Brahman, flawless, of the nature of pure consciousness, devoid of parts and divisions.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो ब्रह्मांड का बीज है, जिसका न आदि है न अंत, वह ब्रह्म है, जो दोषरहित, शुद्ध चेतना के स्वभाव का, भागों और विभाजनों से रहित है।

6.50.15

कलानोन्मुखतां यातमन्तर्जीव इति स्मृतःस जीवः खलु देहेऽस्मिन्चिनोति स्पन्दते स्फुटम ॥ १५ ॥

kalanonmukhatāṃ yātamantarjīva iti smṛtaḥsa jīvaḥ khalu dehe'smiṃścinoti spandate sphuṭam || 15 ||

That which has turned towards the parts is known as the inner self. That self indeed, in this body, clearly thinks and pulsates.

जो भागों की ओर मुड़ गया है, वह अंतर्जीव कहलाता है। वह आत्मा इस शरीर में स्पष्ट रूप से सोचता और धड़कता है।

6.50.16

अहंभावादहंकारो मननान्मन उच्यतेबोधनिश्चयतो बुद्धिरिन्द्रदृष्टेस्तथेन्द्रियम् ॥ १६ ॥

ahaṃbhāvādahaṃkāro mananānmana ucyatebodhaniścayato buddhirindradṛṣṭestathendriyam || 16 ||

From the sense of 'I', ego arises; from thought, the mind is said to be. From certainty of knowledge, intellect; and from the sight of Indra, thus the sense.

अहं भाव से अहंकार उत्पन्न होता है; मनन से मन कहलाता है। ज्ञान की निश्चयता से बुद्धि; और इन्द्र के दर्शन से, इस प्रकार इन्द्रिय।

6.50.17

देहभावनया देहो घटभावनया घटःएष एव स्वभावात्मा जनैः पुर्यष्टकं स्मृतः ॥ १७ ॥

dehabhāvanayā deho ghaṭabhāvanayā ghaṭaḥeṣa eva svabhāvātmā janaiḥ puryaṣṭakaṃ smṛtaḥ || 17 ||

By the conception of the body, the body exists; by the conception of a pot, the pot exists. This very nature of the self is remembered by people as the eightfold city.

देह की भावना से देह होता है; घड़े की भावना से घड़ा होता है। यही आत्मा का स्वभाव है जिसे लोग आठ पुरियों के रूप में याद करते हैं।

6.50.18

ज्ञत्वकर्तृत्वभोक्तृत्वसाक्षित्वाद्यभिपातिनीया संविज्जीव इत्युक्ता तद्धि पुर्यष्टकं विदुः ॥ १८ ॥

jñatvakartṛtvabhoktṛtvasākṣitvādyabhipātinīyā saṃvijjīva ityuktā taddhi puryaṣṭakaṃ viduḥ || 18 ||

That which is called the knower, doer, enjoyer, witness, etc., is known as the living being. That indeed is known as the eightfold city.

जो ज्ञाता, कर्ता, भोक्ता, साक्षी आदि कहलाता है, वह जीव कहलाता है। वही आठ पुरियों के रूप में जाना जाता है।

6.50.19

काले काले ततो जीवस्त्वन्योन्यो भवति स्वतःभावितकारयानन्तवासनाकणिकोदयम् ॥ १९ ॥

kāle kāle tato jīvastvanyonyo bhavati svataḥbhāvitākārayānantavāsanākaṇikodayam || 19 ||

From time to time, the living being becomes different due to its own nature, arising from the endless particles of impressions.

समय-समय पर, जीव अपने स्वभाव के कारण भिन्न-भिन्न हो जाता है, जो अनन्त संस्कारों के कणों से उत्पन्न होता है।

6.50.20

पुर्यष्टकस्वभावेन कालेनाकारमृच्छतियथावासनतः सेकाद्बीजं पल्लवतामिव ॥ २० ॥

puryaṣṭakasvabhāvena kālenākāramṛcchatiyathāvāsanataḥ sekādbījaṃ pallavatāmiva || 20 ||

Due to the nature of the eightfold city, over time, it assumes various forms, just as a seed sprouts into a sapling due to irrigation.

आठ पुरियों के स्वभाव के कारण, समय के साथ, यह विभिन्न रूप धारण करता है, जैसे कि सिंचाई के कारण बीज अंकुरित होकर पौधा बन जाता है।

6.50.21

आकारोऽहं शरीरादि स्थावरादि चरादि च नाहमाद्यश्चिदात्मेति मिथ्या ज्ञानेन चेतति ॥ २१ ॥

ākāro'haṃ śarīrādi sthāvarādi carādi canāhamādyaścidātmeti mithyā jñānena cetati || 21 ||

I am the form, the body, the immovable, the movable, and so on. I am not the pure consciousness. This is false knowledge.

मैं आकार हूँ, शरीर हूँ, स्थावर हूँ, चर हूँ और इसी तरह के अन्य भी हूँ। मैं शुद्ध चेतना नहीं हूँ। यह मिथ्या ज्ञान है।

6.50.22

भ्रमत्येव जगज्जीवो वासनावलितश्चिरमूर्ध्वाधोगमनैरब्धौ काष्ठं वीचिहतं यथा ॥ २२ ॥

bhramatyeva jagajjīvo vāsanāvalitaściramūrdhvādhogamanairabdhau kāṣṭhaṃ vīcihataṃ yathā || 22 ||

The individual soul wanders in the world, covered by desires, like a piece of wood tossed by the waves.

जीव आत्मा वासनाओं से ढका हुआ जगत में भटकता है, जैसे लहरों से उछाला जाने वाला काष्ठ।

6.50.23

कश्चिद्विशुद्धजातित्वाद्भवबन्धादनन्तरम्बुद्धात्मानं समभ्येति पदमाद्यन्तवर्जितम् ॥ २३ ॥

kaścidviśuddhajātitvādbhavabandhādanantarambuddhvātmānaṃ samabhyeti padamādyantavarjitam || 23 ||

Someone, due to being born pure, attains the state of the self, which is beyond the beginning and the end, immediately after the bondage of existence.

कोई शुद्ध जन्म के कारण, अस्तित्व के बंधन के बाद तुरंत ही आदि और अंत से परे आत्मा की स्थिति को प्राप्त करता है।

6.50.24

कश्चित्कालेन बहुना भुक्तयोनिगणातुरः आत्मज्ञानवशादेति परमं पदमात्मनः ॥ २४ ॥

kaścitkālena bahunā bhuktayonigaṇāturaḥātmajñānavaśādeti paramaṃ padamātmanaḥ || 24 ||

Someone, after a long time, suffering from many births, attains the supreme state of the self due to self-knowledge.

कोई, लंबे समय के बाद, अनेक जन्मों से पीड़ित होकर, आत्मज्ञान के कारण आत्मा की परम स्थिति को प्राप्त करता है।

6.50.25

एवंरूपश्च सुमते जीवो यातः शरीरताम्नेत्रादिना घटाद्यन्तर्यथा वेत्ति तथा शृणु ॥ २५ ॥

evaṃrūpaśca sumate jīvo yātaḥ śarīratāmnetrādinā ghaṭādyantaryathā vetti tathā śṛṇu || 25 ||

O wise one, the individual soul, having attained the form of the body, knows the inner workings of the body, just as one knows the inside of a pot through the eyes.

हे बुद्धिमान, जीव आत्मा, शरीर का रूप प्राप्त करने के बाद, शरीर के अंतर्गत कार्यों को जानता है, जैसे कि नेत्रों द्वारा घड़े के अंदर को जाना जाता है।

6.50.26

चित्त्वस्य कलनान्तस्य संप्रयातस्य जीवताम्मनःषष्ठेन्द्रियग्रामो देहोऽयमवतिष्ठते ॥ २६ ॥

cittvasya kalanāntasya saṃprayātasya jīvatāmmanaḥṣaṣṭhendriyagrāmo deho'yamavatiṣṭhate || 26 ||

This body, which is the collection of the six senses including the mind, remains established in the living being whose consciousness has been completely dissolved.

यह देह, जो मन सहित छह इन्द्रियों का समूह है, उस जीव में स्थित रहता है जिसकी चेतना पूर्णतः विलीन हो चुकी है।

6.50.27

यदान्यः सर्वदेहेभ्यः खे पतत्यक्षरूपिणातदा तज्जीवसंस्पर्शाज्जीवात्मैकत्वमृच्छति ॥ २७ ॥

yadānyaḥ sarvadehebhyaḥ khe patatyakṣarūpiṇātadā tajjīvasaṃsparśājjīvātmaikatvamṛcchati || 27 ||

When a different being falls from all bodies into the ether in the form of space, then by the touch of that being, the individual soul attains oneness.

जब कोई अन्य जीव सभी देहों से आकाश में आकाश रूप में गिरता है, तब उस जीव के स्पर्श से व्यक्तिगत आत्मा एकत्व प्राप्त करती है।

6.50.28

बाह्यार्थवेदने नित्यं संबन्धोऽक्षस्य कारकःसमन्वितस्य चित्तेन न मुक्तस्य कदाचन ॥ २८ ॥

bāhyārthavedane nityaṃ saṃbandho'kṣasya kārakaḥsamanvitasya cittena na muktasya kadācana || 28 ||

The connection with the ether is always the cause of the perception of external objects, but never for the one who is liberated with a controlled mind.

आकाश के साथ संबंध हमेशा बाह्य वस्तुओं के बोध का कारण होता है, लेकिन कभी नहीं उसके लिए जिसका मन नियंत्रित है और जो मुक्त है।

6.50.29

यद्यदच्छतरं तस्मिन्नभःस्थं प्रतिबिम्बतिजीवेन भवति श्लिष्टो बहिर्जीवोऽप्यजीवति ॥ २९ ॥

yadyadacchataraṃ tasminnabhaḥsthaṃ pratibimbatijīvena bhavati śliṣṭo bahirjīvo'pyajīvati || 29 ||

Whatever is reflected in the ether within the being, the external being also appears to be alive due to its connection with the being.

जो कुछ भी जीव में आकाश में प्रतिबिंबित होता है, बाहरी जीव भी जीव के साथ उसके संबंध के कारण जीवित प्रतीत होता है।

6.50.30

निघृष्टनवरत्नाभे यदा नयनतारकेतदा तयोर्बाह्यगतः पदार्थः प्रतिबिम्बति ॥ ३० ॥

nighṛṣṭanavaratnābhe yadā nayanatāraketadā tayorbāhyagataḥ padārthaḥ pratibimbati || 30 ||

When the eye is like a polished gem, then the external object is reflected in it.

जब नेत्र एक चमकीले रत्न की तरह होता है, तब बाहरी वस्तु उसमें प्रतिबिंबित होती है।

6.50.31

जीवेन भवति श्लिष्टः प्रतिबिम्बतया ततःजीवज्ञेयत्वमायाति बाह्यं वस्त्विति राघव ॥ ३१ ॥

jīvena bhavati śliṣṭaḥ pratibimbatayā tataḥjīvajñeyatvamāyāti bāhyaṃ vastviti rāghava || 31 ||

The living being becomes attached to the reflection, and thus the knowable object becomes known as an external entity, O Raghava.

जीव प्रतिबिम्ब के रूप में जुड़ जाता है, और इस प्रकार ज्ञेय वस्तु बाह्य वस्तु के रूप में जानी जाती है, हे रघुवंशी।

6.50.32

यत्संश्लेषमुपायाति तद्बालोऽपि हि विन्दतिपशुर्वा स्थावरो वापि जीवः कस्मान्न वेत्स्यति ॥ ३२ ॥

yatsaṃśleṣamupāyāti tadbālo'pi hi vindatipaśurvā sthāvaro vāpi jīvaḥ kasmānna vetsyati || 32 ||

Whatever one attains through attachment, even a child or an animal or a stationary being can perceive it. Why should the living being not know it?

जो कुछ भी आसक्ति के द्वारा प्राप्त होता है, उसे Even a child or an animal or a stationary being can perceive it. जीव उसे क्यों नहीं जान सकता?

6.50.33

अच्छस्य नयनस्याथो रश्मयो जीववेष्टिताःक्रोडीकुर्वन्त्यलं दृश्यं जीवस्तत्त्वेन विन्दति ॥ ३३ ॥

acchasya nayanasyātho raśmayo jīvaveṣṭitāḥkroḍīkurvantyalaṃ dṛśyaṃ jīvastattvena vindati || 33 ||

The rays of the pure eye, being enveloped by the living being, make the visible sufficient. The living being perceives it as reality.

शुद्ध नेत्र की किरणें, जीव द्वारा आवृत होकर, दृश्य को पर्याप्त बनाती हैं। जीव उसे वास्तविकता के रूप में ग्रहण करता है।

6.50.34

एष एव क्रमः स्पर्शे संबन्धः प्रत्ययोद्भवःरसे गन्धे च कथितो जीवसंस्पर्शसंभवः ॥ ३४ ॥

eṣa eva kramaḥ sparśe saṃbandhaḥ pratyayodbhavaḥrase gandhe ca kathito jīvasaṃsparśasaṃbhavaḥ || 34 ||

This is the same process in touch, the connection arises from perception. It is also said in taste and smell, the contact with the living being.

यह स्पर्श में भी वही क्रम है, संबंध ग्रहण से उत्पन्न होता है। स्वाद और गंध में भी यह कहा गया है, जीव का संपर्क।

6.50.35

शब्दस्त्वाकाशनिष्ठत्वात्कर्णाकाशगतः क्षणात्जीवाकाशं विशत्यन्तरित्थमिन्द्रियसंविदः ॥ ३५ ॥

śabdastvākāśaniṣṭhatvātkarṇākāśagataḥ kṣaṇātjīvākāśaṃ viśatyantaritthamindriyasaṃvidaḥ || 35 ||

Sound, being situated in space, instantly enters the space of the ear and then the space of the living being, thus becoming the object of sense perception.

ध्वनि, आकाश में स्थित होने के कारण, तुरंत कान के आकाश में प्रवेश करती है और फिर जीव के आकाश में प्रवेश करती है, इस प्रकार इंद्रिय ग्रहण का विषय बन जाती है।

6.50.36

श्रीराम उवाच दृश्यते मानसादर्शे यन्त्रदार्वोदरेषु तत्। प्रतिबिम्बितमेतन्मे ब्रूहि ब्रह्मन्किमात्मकम् ॥ ३६ ॥

śrīrāma uvāca dṛśyate mānasādarśe yantradārvaudareṣu tat pratibimbitametanme brūhi brahmankimātmakam || 36 ||

Śrī Rāma said, It is seen in the mirror of the mind, in the hollow of machines and wooden instruments. This reflection of mine, tell me, O Brahman, what is its nature?

श्रीराम ने कहा, यह मन के दर्पण में, यंत्रों और लकड़ी के खोखले उपकरणों में दिखाई देता है। यह मेरा प्रतिबिम्ब है, हे ब्रह्मन्, बताओ, इसका स्वरूप क्या है?

6.50.37

अत्यन्तजडयोरेव जीवयोरिव तन्मिथः प्रतिबिम्बं दृशो भ्रान्ति विद्धि वेद्यविदां वर ॥ ३७ ॥

atyantajaḍayoreva jīvayoriva tanmithaḥ pratibimbaṃ dṛśo bhrānti viddhi vedyavidāṃ vara || 37 ||

Know this reflection of the two, the utterly inert and the living, to be a delusion of sight, O best among the knowers of the knowable.

हे जानने वालों में श्रेष्ठ, इस अत्यंत जड़ और जीव के मिथ्या प्रतिबिम्ब को दृष्टि की भ्रान्ति जानो।

6.50.38

तावन्मात्रं जगत्त्वेतद्विश्वासो मा तवास्त्विह अहमित्यादिस्तरङ्गो वर्तमानं सदा जलम् ॥ ३८ ॥

tāvanmātraṃ jagattvetadviśvāso mā tavāstviha ahamityādistaraṅgo vartamānaṃ sadā jalam || 38 ||

This world is merely so much, a belief; let not this conviction of 'I am' be yours here. The waves of 'I' and 'this' ever arise and subside in the water of existence.

यह जगत मात्र एक विश्वास है; यहाँ 'मैं हूँ' का यह भाव तुम्हारा न हो। 'मैं' और 'यह' के ये तरंग सदा अस्तित्व रूपी जल में उठते और गिरते रहते हैं।

6.50.39

परम्बोधौ तु नास्त्येव देशकालक्रियादिकम् तन्मयैकतया नित्यमात्मा सर्वत्र सर्वगः ॥ ३९ ॥

parāmbhodhau tu nāstyeva deśakālakriyādikam tanmayaikatayā nityamātmā sarvatra sarvagaḥ || 39 ||

In the supreme Consciousness, there is truly no trace of place, time, action, or any such distinctions. The Self, ever one with That, is eternal and all-pervading everywhere.

परम बोध में देश, काल, क्रिया आदि का कोई अस्तित्व नहीं है। आत्मा सदा उसी के साथ एकरूप होकर नित्य और सर्वव्यापी है।

6.50.40

नित्यमसक्तमतिर्मुदितात्मा शान्तमृषासुखदुःखविदन्तः । तिष्ठ निविष्टमतिः समतायामस्तसमस्तभवामयमायः ॥ ४० ॥

nityamāsaktamatirmuditātmā śāntamṛṣāsukhaduḥkhavidantaḥ tiṣṭha niviṣṭamatiḥ samatāyāmastasamastabhavāmayamāyaḥ || 40 ||

Ever unattached, the mind delighted in the Self, the sage abides in peace, knowing joy and sorrow. With his mind fixed in equanimity, he remains free from the disease of all becoming.

जो सदा अनासक्त मन वाला है, आत्मा में प्रसन्न है, शान्त मुनि सुख-दुःख को जानता हुआ समभाव में स्थित रहता है। वह समस्त संसार रूपी रोग से मुक्त हो जाता है।

Chapter 51

6.51.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । न पुनर्भवतः पूर्वं संपन्नाश्चक्षुरादयः । यथा कमलजस्यैतत्सर्वमेव त्वया श्रुतम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | na punarbhavaḥ pūrvaṃ saṃpannāścakṣurādayaḥ | yathā kamalajasyaitatsarvameva tvayā śrutam || 1 ||

Shri Vasistha said: Before rebirth, the senses such as the eyes do not exist. Just as a lotus-born one, you have heard all this.

श्री वसिष्ठ ने कहा: पुनर्जन्म से पहले, नेत्र आदि इन्द्रियाँ नहीं होतीं। जैसे कमलज (ब्रह्मा) ने सुना है, वैसे ही तुमने भी यह सब सुना है।

6.51.2

ब्रह्मपुर्यष्टकस्यादावर्थसंविद्यथोदिता । पुर्यष्टकस्य सर्वस्य तथैवोदेति सर्वदा ॥ २ ॥

brahmapuryaṣṭakasyādāvarthasaṃvidyathoditā | puryaṣṭakasya sarvasya tathaivodeti sarvadā || 2 ||

The meaning of the eight-fold city of Brahma is revealed at the beginning. Similarly, the meaning of the entire eight-fold city arises always.

ब्रह्म की आठ-भुजा नगरी का अर्थ आरम्भ में प्रकट होता है। इसी प्रकार, पूरी आठ-भुजा नगरी का अर्थ हमेशा उभरता है।

6.51.3

विद्धि पुर्यष्टकं जीवो यो गर्भस्थेन्द्रियोदयः । यद्यथा भावयत्याशु तत्तथा परिपश्यति ॥ ३ ॥

viddhi puryaṣṭakaṃ jīvo yo garbhasthaindriyodayaḥ | yadyathā bhāvayatyāśu tattathā paripaśyati || 3 ||

Know the eight-fold city to be the living being which is the arising of senses in the womb. Whatever one meditates upon quickly, one perceives accordingly.

आठ-भुजा नगरी को उस जीव के रूप में जानो, जो गर्भ में इन्द्रियों का उदय है। जो कुछ भी शीघ्र ही ध्यान करता है, वह उसी प्रकार देखता है।

6.51.4

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थाख्यं विद्धि संवेदनं स्वकम् । संपन्नं च यथा तत्ते प्रोक्तमाद्यमनःस्थितौ ॥ ४ ॥

indriyāṇīndriyārthākhyam viddhi saṃvedanaṃ svakam | saṃpannaṃ ca yathā tatte proktamādyamanassthitau || 4 ||

Know the perception of the senses and their objects as your own. As it is accomplished, it is explained in the beginning of the mind's state.

इन्द्रियों और उनके विषयों की अनुभूति को अपनी समझो। जैसे यह सिद्ध होता है, वैसे ही यह मन की स्थिति के आरम्भ में बताया गया है।

6.51.5

शुद्धा संवित्संभवन्ती संवेदनमनिन्दितम् । ततोऽहंवेदनानन्तजीवपुर्यष्टकान्विता ॥ ५ ॥

śuddhā saṃvitsaṃbhavantī saṃvedanamaninditam | tato'haṃvedanānanta jīvapuryaṣṭakānvitā || 5 ||

Pure consciousness arises, which is the unblemished perception. From that, the infinite self-awareness arises, endowed with the eight-fold city of the living being.

शुद्ध चेतना उत्पन्न होती है, जो निर्दोष अनुभूति है। उससे अनंत आत्म-चेतना उत्पन्न होती है, जो जीव की आठ-भुजा नगरी से युक्त है।

6.51.6

न त्वेकत्वादनन्तत्वादवेद्यत्वादनामये अभावत्वादनेकत्वादशून्यत्वात्परा स्थिता ॥ ६ ॥

na tvekatvād anantatvād avedyatvād anāmaye abhāvatvād anekatvād aśūnyatvāt parā sthitā || 6 ||

It is not due to oneness, not due to infinity, not due to being unknowable, not due to being flawless, not due to non-existence, not due to multiplicity, not due to emptiness, the supreme state is established.

यह एकत्व से नहीं, अनंतत्व से नहीं, अज्ञेयत्व से नहीं, निर्दोषत्व से नहीं, अभाव से नहीं, अनेकत्व से नहीं, शून्यत्व से नहीं, परम स्थिति स्थापित है।

6.51.7

चेत्यादिबुद्ध्या तत्किंचिन्न मनस्तां च गच्छति न च जीवत्वमायाति न च पुर्यष्टकात्मिका ॥ ७ ॥

cetyādibuddhyā tat kiñcinn na manastāṃ ca gacchati na ca jīvatvam āyāti na ca puryaṣṭakātmikā || 7 ||

By the intellect that begins with consciousness, it does not attain the state of mind, nor does it attain the state of life, nor does it become the eight-fold city.

चेतना से शुरु होने वाली बुद्धि से, यह मन की स्थिति प्राप्त नहीं करता, न ही जीवन की स्थिति प्राप्त करता, न ही आठ अंगों वाली नगरी बनता है।

6.51.8

न विद्यादिविलासोऽस्ति सोस्ति नास्तीव यः सदा परमात्मेति कथितो मनःषष्ठेन्द्रियातिगः ॥ ८ ॥

na vidyādivilāso'sti so'sti nāstīva yaḥ sadā paramātmeti kathito manaḥṣaṣṭhendriyātigaḥ || 8 ||

There is no play of knowledge, it exists and does not exist, that which is always called the supreme self, beyond the mind and senses.

ज्ञान का कोई विलास नहीं है, यह है और नहीं भी है, जो हमेशा परमात्मा कहा जाता है, मन और इंद्रियों से परे।

6.51.9

तस्मात्संपद्यते जीवश्चिन्मूर्तिर्मननात्मकः भ्रमः केवलमित्याद्य उपदेशाय गीयते ॥ ९ ॥

tasmātsaṃpadyate jīvaś cinmūrtirmananātmakaḥ bhramaḥ kevalamityādya upadeśāya gīyate || 9 ||

Therefore, the individual soul, which is the embodiment of consciousness and consists of the mind, is said to be merely an illusion, and this is taught for instruction.

इसलिए, जीवात्मा, जो चेतना का स्वरूप है और मन से बना है, केवल एक भ्रम है, और यह उपदेश के लिए कहा जाता है।

6.51.10

यतः कुतश्चित्संपन्ने त्वविद्यामय आमये उपदेश्योपदेशेन प्रविलीने विचारणात् ॥ १० ॥

yataḥ kutaścit saṃpanne tvavidyāmaya āmaye upadeśyopadeśena pravilīne vicāraṇāt || 10 ||

From whatever cause, when ignorance is destroyed by the instruction of the teacher, it dissolves through reflection.

किसी भी कारण से, जब अज्ञान गुरु के उपदेश से नष्ट हो जाता है, तो यह विचारणा से विलीन हो जाता है।

6.51.11

प्रशान्तसकलाकारं ज्ञानं तत्रावशिष्यते । यत्राकाशमपि स्थूलमणाविव महाचलः ॥ ११ ॥

praśāntasakalākāraṃ jñānaṃ tatrāvaśiṣyate | yatrākāśamapi sthūlam aṇāviva mahācalaḥ || 11 ||

In that state of complete tranquility, knowledge remains. Where even the vast sky appears as small as an atom, and a great mountain appears as minute as a mustard seed.

उस शान्ति की अवस्था में ज्ञान बचा रहता है, जहाँ विशाल आकाश भी अणु के समान छोटा लगता है और एक महान पर्वत सरसों के बीज के समान छोटा लगता है।

6.51.12

यत्रोद्यदाचारमपि सदप्यसदिव स्थितम् । जगज्जान्विषयांस्त्यक्त्वा काये त्वं तिष्ठ निर्मले ॥ १२ ॥

yatrodyadācāramapi sadapyasadiva sthitam | jagajjānviṣayāṃstyaktvā kāye tvaṃ tiṣṭha nirmale || 12 ||

Where even the most virtuous conduct appears as unreal, abandon the worldly pursuits and remain in the pure body.

जहाँ सबसे उत्तम आचरण भी असत्य के समान लगता है, वहाँ संसारिक विषयों को त्याग कर पवित्र शरीर में रहें।

6.51.13

असन्मयमविद्याया रूपमेव तदेव हि । यद्वीक्षिता सती नूनं नश्यत्येव न दृश्यते ॥ १३ ॥

asanmayamavidyāyā rūpameva tadeva hi | yadvīkṣitā satī nūnaṃ naśyatyeva na dṛśyate || 13 ||

The form of ignorance is indeed non-existent. When it is seen, it certainly perishes and is not visible.

अज्ञान का रूप वास्तव में असत्य है। जब यह देखा जाता है, तो यह निश्चित रूप से नष्ट हो जाता है और दिखाई नहीं देता।

6.51.14

आलोकितं नाम कथमवस्तु किल लभ्यते । प्रयत्नेनापि संप्राप्तं मृगतृष्णाम्बुकैरिव ॥ १४ ॥

ālokitaṃ nāma kathamavastu kila labhyate | prayatnenāpi saṃprāptaṃ mṛgatṛṣṇāmbukairiva || 14 ||

How can that which is seen be obtained as a real object? Even with effort, it is obtained like the water of a mirage.

वह जो देखा जाता है, उसे वास्तविक वस्तु के रूप में कैसे प्राप्त किया जा सकता है? यहाँ तक कि प्रयास के साथ भी, यह मृगतृष्णा के जल की तरह प्राप्त होता है।

6.51.15

असदेव सदेवासदज्ञानादस्य सत्यता । ज्ञानाद्यथास्थितं वस्तु दृश्यते नश्यति भ्रमः ॥ १५ ॥

asadeva sadevāsadajñānādasyasatyatā | jñānādyathāsthitaṃ vastu dṛśyate naśyati bhramaḥ || 15 ||

The unreal appears as real due to ignorance. Through knowledge, the object is seen as it truly is, and the illusion disappears.

असत्य सत्य के रूप में दिखाई देता है अज्ञान के कारण। ज्ञान के द्वारा, वस्तु को उसके वास्तविक रूप में देखा जाता है, और भ्रम नष्ट हो जाता है।

6.51.16

अविद्याया विचारोऽयं जीवपुर्यष्टकादिका । अप्यत्यन्तमसत्यायाः कल्पना कल्पितात्मनः ॥ १६ ॥

avidyāyā vicāro'yaṃ jīvapuryaṣṭakādikā | apyatyantamasatyāyāḥ kalpanā kalpitātmanaḥ || 16 ||

This is the thought of ignorance, such as the eightfold city of the individual soul and so on. It is the imagination of the self, which is completely unreal.

यह अविद्या का विचार है, जैसे जीव का पुर्यष्टक और इसी तरह की अन्य कल्पनाएँ | यह एक ऐसी कल्पना है जो पूरी तरह से असत्य है, जिसका आत्मा कल्पित है || 16 ||

6.51.17

तस्यास्त उपदेशाय सेयं जीवादिकल्पना । कृता शास्त्रैः प्रबोधाय तां त्वमेकमनाः श्रृणु ॥ १७ ॥

tasyāst upadeśāya seyaṃ jīvādikalpanā | kṛtā śāstraiḥ prabodhāya tāṃ tvamekamanaḥ śrṛṇu || 17 ||

This imagination of the individual soul and so on is made for the instruction of that ignorance. Listen to it with a focused mind for awakening.

यह जीव और इसी तरह की अन्य कल्पनाएँ उस अविद्या के उपदेश के लिए की गई हैं। उसे एकाग्र मन से सुनो ताकि तुम जागृत हो सको।

6.51.18

जीवत्वमिव संप्राप्ता पुर्यष्टकपदस्थिता । कला कलङ्ककलिता चितिराबोधनोन्मुखी ॥ १८ ॥

jīvatvamiva saṃprāptā puryaṣṭakapadasthitā | kalā kalaṅkakalitā citirābodhanonmukhī || 18 ||

As if attaining the state of individual soul, situated in the concept of the eightfold city, the power is stained with defects and is inclined towards awakening consciousness.

जैसे जीव की स्थिति प्राप्त हो गई है, पुर्यष्टक के पद में स्थित, शक्ति दोषों से कलंकित है और चेतना की ओर उन्मुख है।

6.51.19

यद्यथा भावयत्याशु तत्तथानुभवत्यलम् । सत्यो भवत्वसत्यो वा बालेन निशि यक्षकः ॥ १९ ॥

yadyathā bhāvayatyāśu tattathānubhavaty alam | satyo bhavatv asatyo vā bālena niśi yakṣakaḥ || 19 ||

Whatever one imagines quickly, one experiences it as such. Whether it is true or false, like a child imagining a ghost at night.

जो कुछ भी कोई जल्दी से सोचता है, वह उसे ऐसा ही अनुभव करता है। चाहे वह सत्य हो या असत्य, जैसे एक बच्चा रात में भूत की कल्पना करता है।

6.51.20

पञ्चतन्मात्रकलनां संभावयति सत्तया । तत्रात्मनि तथा रन्ध्रान्प्रपश्यति तथोदितान् ॥ २० ॥

pañcatanmātrakalanāṃ saṃbhāvayati sattayā | tatrātmani tathā randhrānprapaśyati tathoditān || 20 ||

One imagines the five subtle elements with reality and sees the described openings in the self.

कोई पाँच सूक्ष्म तत्वों की कल्पना करता है जैसे कि वे वास्तविक हैं और आत्मा में वर्णित छिद्रों को देखता है।

6.51.21

एभ्य एव समुत्पन्नं बहिःस्थं भूतपञ्चकम् । पश्यत्यनन्यदन्याभं शाखाशतमिवाङ्कुरः ॥ २१ ॥

ebhyo eva samutpannaṃ bahiḥsthaṃ bhūtapañcakam | paśyaty ananyad anyābhaṃ śākhāśatam ivāṅkuraḥ || 21 ||

From these very elements, the five external elements are born | He sees them as not different from himself, like a sprout seeing a hundred branches.

इन्हीं से उत्पन्न होते हैं बाह्य पाँच भूत | वह उन्हें अपने से भिन्न नहीं देखता, जैसे अंकुर सौ शाखाओं को देखता है।

6.51.22

इदमन्तरिदं बाह्यमिति निश्चयवांस्ततः । जीवो भावं यथादत्ते तत्तथा द्रढयत्यथ ॥ २२ ॥

idam antar idaṃ bāhyam iti niścayavāṃs tataḥ | jīvo bhāvaṃ yathā datte tat tathā draḍhayaty atha || 22 ||

This is internal, this is external, thus having determined | The living being adopts that state and thus strengthens it.

यह अंतर है, यह बाह्य है, इस प्रकार निश्चय करके | जीव उस भाव को अपनाता है और इस प्रकार उसे दृढ़ करता है।

6.51.23

रश्मिजालमिवेन्दोर्यदात्मनः प्रतिभासनम् । बाह्यस्पर्शतया तेन तदेवाशूररीकृतम् ॥ २३ ॥

raśmijālam ivendor yadātmanaḥ pratibhāsanam | bāhyasparśatayā tena tadevāśūrarīkṛtam || 23 ||

Like the web of rays of the sun, whatever is the reflection of the self | By the touch of the external, it is made impure.

सूर्य के किरणों की जाल की तरह, जो भी स्वयं का प्रतिबिंब है | बाह्य स्पर्श से वह अशुद्ध हो जाता है।

6.51.24

मरिचस्येव यत्तैक्ष्ण्यं शून्यत्वमिव खस्य यत् ॥ आत्मनो वेदनं यच्च तदेवान्यदिव स्थितम् ॥ २४ ॥

maricasya iva yat taikṣṇyaṃ śūnyatvam iva khasya yat | ātmano vedanaṃ yac ca tadevānyad iva sthitam || 24 ||

Like the sharpness of black pepper, like the emptiness of the sky | Whatever is the feeling of the self, that itself appears as if different.

काली मिर्च की तीखापन की तरह, आकाश की शून्यता की तरह | स्वयं की जो भी वेदना है, वह स्वयं ही अलग-अलग प्रतीत होती है।

6.51.25

अत्रैव निश्चयं बद्ध्वा नियमः सुदृढीकृतः । अनेनेत्थमनेनेत्थं भाव्यमित्यवखण्डितम् ॥ २५ ॥

atraiva niścayaṃ badhvā niyamaḥ sudṛḍhīkṛtaḥ | anenettham anenettham bhāvyam ity avakhaṇḍitam || 25 ||

Having determined this, the rule is firmly established | It is to be contemplated thus and thus without any doubt.

इसी पर निश्चय करके, नियम दृढ़ हो जाता है | इस प्रकार और इस प्रकार की भावना करनी चाहिए, बिना किसी संदेह के।

6.51.26

स्वभावेतरनामासौ स्वसंकल्पमयात्मकः । कश्चित्कदाचिद्भवति स्वभावेनैव नान्यथा ॥ २६ ॥

svabhāvetaranāmāsau svasaṃkalpamayātmakaḥ | kaścitkadācidbhavati svabhāvenaiva nānyathā || 26 ||

This one, named other than nature, is of the form of one's own resolve. Sometimes it becomes by nature itself, not otherwise.

यह स्वभाव से अलग नाम वाला, अपने संकल्प के रूप में है। कभी-कभी यह स्वभाव से ही होता है, अन्यथा नहीं।

6.51.27

आत्मनैवेदमखिलं संपन्नं द्वैतमद्वयम् । खण्डो मधुरसेनेव मृदेव च महाघटः ॥ २७ ॥

ātmanaive damakhilaṃ saṃpannaṃ dvaitamadvayam | khaṇḍo madhuraseneva mṛdeva ca mahāghaṭaḥ || 27 ||

All this is accomplished by the self alone, both duality and non-duality. Like a piece of sugar, like clay, and like a large pot.

यह सब कुछ आत्मा द्वारा ही पूर्ण होता है, द्वैत और अद्वैत दोनों। जैसे चीनी का टुकड़ा, जैसे मिट्टी, और जैसे एक बड़ा घड़ा।

6.51.28

संनिवेशविकारादिदेशकालादिसंभवात् । संभवत्यत्र नत्वीशे देशकालाद्यसंभवात् ॥ २८ ॥

saṃniveśavikārādideśakālādisaṃbhavāt | saṃbhavatyatra natvīśe deśakālādyasaṃbhavāt || 28 ||

From the existence of place, time, and modifications, it arises here, not in the Lord, due to the non-existence of place, time, etc.

स्थान, समय और परिवर्तनों के अस्तित्व से, यह यहाँ उत्पन्न होता है, ईश्वर में नहीं, स्थान, समय आदि के अभाव के कारण।

6.51.29

इतः पुष्पमितः पत्रमहमित्युदितो यथा । खण्डे स्वात्मनि नः सत्तारसोऽद्वित्वे द्वितां वहन् ॥ २९ ॥

itaḥ puṣpamitaḥ patramahamityudito yathā | khaṇḍe svātmani naḥ sattāraso'dvitve dvitāṃ vahan || 29 ||

Just as one says, 'This is a flower, this is a leaf, I am,' in a piece of the self, we carry duality in non-duality, having the essence of existence.

जैसे कोई कहता है, 'यह फूल है, यह पत्ता है, मैं हूँ,' आत्मा के एक टुकड़े में, हम अद्वैत में द्वैत को लेकर चलते हैं, अस्तित्व की आत्मा के साथ।

6.51.30

इतः पट इतः कुड्यमहमित्यादितस्तथा । सर्वात्मनात्मनि ब्रह्म विद्धि त्वं द्वित्वमाहरत् ॥ ३० ॥

itaḥ paṭa itaḥ kuḍyamahamityāditastathā | sarvātmanātmani brahma viddhi tvaṃ dvitvamāharat || 30 ||

Similarly, from this cloth, from this wall, I am, etc., know that Brahman, the self of all selves, brings forth duality.

इसी तरह, इस कपड़े से, इस दीवार से, मैं हूँ, आदि, यह जानो कि ब्रह्म, सभी आत्माओं का आत्मा, द्वैत को लाता है।

6.51.31

अद्याङ्कुरोऽहमद्यार्करुगहं त्वद्य वारिदः । यथेति तिष्ठत्यम्भोदस्तथात्मा सदसद्वपुः ॥ ३१ ॥

adyāṅkuro'hamadyārkarugahaṃ tvadya vāridaḥ| yatheti tiṣṭhatyambhodastathātmā sadasadvapuḥ|| 31||

I am the sprout today, I am the sun today, I am the rain cloud today. As the cloud stands, so does the self, in the form of existence and non-existence.

आज मैं अंकुर हूँ, आज मैं सूर्य हूँ, आज मैं वर्षा का बादल हूँ। जैसे बादल खड़ा होता है, वैसे ही आत्मा अस्तित्व और अनस्तित्व के रूप में खड़ा होता है।

6.51.32

इति भाव्यमनेनेदमित्थं सर्वेश्वरे ततम् । क्रमं खण्डयितुं लोके कस्य नामास्ति शक्तता ॥ ३२ ॥

iti bhāvyamanenedamitthaṃ sarveśvare tatam| kramaṃ khaṇḍayituṃ loke kasya nāmāsti śaktatā|| 32||

Thus, this is to be contemplated by the self in this manner, pervading the supreme lord. Who in this world has the power to break the sequence?

इस प्रकार यह आत्मा द्वारा इस प्रकार से विचारणीय है, सर्वेश्वर में व्याप्त। इस संसार में कौन है जिसके पास क्रम को तोड़ने की शक्ति है?

6.51.33

आदर्शस्वच्छ आकाशे नैव स्वः प्रतिबिम्बति । व्यतिरेकासंभवतः कचत्येव हि केवलम् ॥ ३३ ॥

ādarśasvaccha ākāśe naiva svaḥ pratibimbati| vyatirekāsaṃbhavataḥ kacatyeva hi kevalam|| 33||

In the clear sky, the self does not reflect. Due to the impossibility of separation, it only shines alone.

साफ आकाश में, आत्मा प्रतिबिम्बित नहीं होता। अलगाव की असंभावना के कारण, यह अकेला ही चमकता है।

6.51.34

ब्रह्मणि त्वात्मनात्मैव स्थितः कचति बिम्बति । द्वैतीभवत्यदेहोऽपि चिन्मयत्वात्स्वभावतः ॥ ३४ ॥

brahmaṇi tvātmanātmaiva sthitaḥ kacati bimbati| dvaitībhavatyadeho'pi cinmayatvātsvabhāvataḥ|| 34||

In Brahman, the self itself is established, shines, and reflects. Even without a body, it becomes dual due to its inherent nature of pure consciousness.

ब्रह्म में, आत्मा खुद ही स्थापित होता है, चमकता है और प्रतिबिम्बित होता है। शरीर के बिना भी, इसकी शुद्ध चेतना के स्वभाव के कारण यह द्वैत बन जाता है।

6.51.35

यद्यथैवात्मकचनं वेत्ति तं भवतात्मना । असत्यमपि तन्नेह व्यभिचारी कदाचन ॥ ३५ ॥

yadyathaivātmakacanaṃ vetti taṃ bhavatātmanā| asatyamapi tannenaha vyabhicārī kadācana|| 35||

Whatever the self knows, it knows as the self. Even the unreal does not deviate from it at any time.

आत्मा जो भी जानता है, वह आत्मा के रूप में ही जानता है। असत्य भी कभी इससे अलग नहीं होता।

6.51.36

हेमत्वकटकत्वे द्वे सत्यासत्यस्वरूपिणी । हेम्नि भाण्डगते यद्वच्चित्त्वाचित्त्वे तथात्मनि ॥ ३६ ॥

hemtvakaṭakatve dve satyāsatya svarūpiṇī | hemtni bhāṇḍagate yadvac cittvā cittve tathātmani || 36 ||

In the context of gold and bracelet, both are true and untrue in nature. Just as gold in a vessel is both sentient and insentient, so is the self.

हेमत्व और कटकत्व के संदर्भ में, दोनों सत्य और असत्य स्वरूप वाले हैं। जैसे भाण्ड में हेम दोनों चित्त और अचित्त है, वैसे ही आत्मा भी है।

6.51.37

सर्वगत्वाच्चितेश्चित्त्वं नित्यं मनसि विद्यते । हेमत्वं कटकस्येव जडभावः स्थितोऽन्यदा ॥ ३७ ॥

sarvagatvāc citta eś cittvaṃ nityaṃ manasi vidyate | hemtvaṃ kaṭakasyeva jaḍabhāvaḥ sthito'nyadā || 37 ||

Due to the omnipresence of consciousness, sentience is always present in the mind. Just as the nature of gold is insentient, so is the inert nature of the bracelet.

चित्त की सर्वव्यापकता के कारण, चित्तत्व हमेशा मन में विद्यमान है। जैसे हेम का जड़ स्वभाव है, वैसे ही कटक का जड़ स्वभाव है।

6.51.38

चित्त्वजाड्यात्मकं चित्तं दृष्टं भावयति स्वयम् । यथा यदैव यद्भावं तथा भवति तत्तदा ॥ ३८ ॥

cittvajaḍyātmakaṃ cittaṃ dṛṣṭaṃ bhāvayati svayam | yathā yadaiva yadbhāvaṃ tathā bhavati tattadā || 38 ||

The mind, which is of the nature of sentience and insentience, perceives itself as it is seen. Just as whatever state it perceives, it becomes that state.

चित्त, जो चित्तत्व और जड़त्व के स्वभाव का है, अपने आप को जैसे देखता है, वैसे ही ग्रहण करता है। जैसे जो भी अवस्था उसे दिखाई देती है, वह उसी अवस्था में हो जाता है।

6.51.39

काले काले चिता जीवस्त्वन्योन्यो भवति स्वयम् । भावितोकारवानन्तर्वासनाकलिकोदयात् ॥ ३९ ॥

kāle kāle cittā jīvas tvanyonyo bhavati svayam | bhāvitākāravānantarvāsanākalikodayāt || 39 ||

At different times, the conscious being becomes different due to the arising of various impressions and thoughts.

अलग-अलग समय पर, चित्त जीव अपने आप में अलग-अलग हो जाता है विभिन्न संस्कारों और विचारों के उदय के कारण।

6.51.40

स्वप्ने दृष्टो यथा ग्रामो याति सत्तान्यतेक्षणात्। देहाद्देहं तथा याति देहोऽयं प्रतिभात्मकः ॥ ४० ॥

svapne dṛṣṭo yathā grāmo yāti sattānyatekṣaṇāt | dehādddehaṃ tathā yāti deho'yaṃ pratibhātmakaḥ || 40 ||

Just as a village seen in a dream becomes real at that moment, similarly, the body moves from one body to another, and this body is of the nature of reflection.

जैसे स्वप्न में देखा गया गाँव उस समय सच हो जाता है, वैसे ही देह एक देह से दूसरे देह में चला जाता है, और यह देह प्रतिभा के स्वभाव का है।

6.51.41

प्रतिभासो यथा स्वप्ने नरः कुड्यं पटो भवेत्। भवत्यसत्यमेवेदं देहान्तरमिदं स्वतः ॥ ४१ ॥

pratibhāso yathā svapne naraḥ kuḍyaṃ paṭo bhavet | bhavatyasatyamevedaṃ dehāntaramidaṃ svataḥ || 41 ||

Just as in a dream, a man may appear as a wall or a cloth, similarly, this body is indeed unreal and appears as such by itself.

जैसे स्वप्न में एक व्यक्ति दीवार या कपड़े के रूप में दिखाई देता है, वैसे ही यह शरीर असत्य है और स्वयं ही ऐसा प्रतीत होता है।

6.51.42

असत्यमेव म्रियते त्वसत्यं जायते पुनः। जीवः स्वप्रतिभासेन स्वप्नवत्स्वान्यरूपवत् ॥ ४२ ॥

asatyameva mriyate tvasatyaṃ jāyate punaḥ | jīvaḥ svapratibhāsena svapnavatsvānyarūpavat || 42 ||

The unreal dies, and the unreal is born again. The individual soul, through its own appearance, seems to take on different forms like in a dream.

असत्य मरता है और असत्य फिर से जन्म लेता है। जीवात्मा अपनी प्रतीति के द्वारा, स्वप्न की तरह अलग-अलग रूप धारण करता है।

6.51.43

कालेनैतादृशं रूपमिदं नान्यत्वमेति वै। प्रकृतं निश्चयारूढं भ्रमन्त्येते भवः स्वतः ॥ ४३ ॥

kālenaitādṛśaṃ rūpamidaṃ nānyatvameti vai | prakṛtaṃ niścayārūḍhaṃ bhramantyete bhavaḥ svataḥ || 43 ||

This form does not become different due to time. The natural state, firmly established, wanders by itself.

यह रूप समय के कारण दूसरा नहीं होता। प्राकृतिक अवस्था, दृढ़ता से स्थापित, स्वयं ही भटकती है।

6.51.44

वस्तु दृष्टमदृष्टं च स्वप्ने समनुभूयते। जीवस्वप्ने जगद्रूपं विद्धि वेद्यविदां वर ॥ ४४ ॥

vastu dṛṣṭamadṛṣṭaṃ ca svapne samanubhūyate | jīvasvapne jagadrūpaṃ viddhi vedyavidāṃ vara || 44 ||

In a dream, both seen and unseen objects are experienced. Know that in the dream of the individual soul, the form of the world is experienced, O best among the knowers of the knowable.

स्वप्न में, देखे और अदृश्य वस्तुएँ अनुभव की जाती हैं। जान लो कि जीवात्मा के स्वप्न में, संसार का रूप अनुभव किया जाता है, हे ज्ञेय के जानने वालों में श्रेष्ठ।

6.51.45

अजाग्रत्दृष्टिदृष्टो यः स्वाभिधानादिनेरितः। न स्वप्नो विद्यते तस्मादच्छात्मा चितिमात्रकम् ॥ ४५ ॥

ajāgratdṛṣṭidṛṣṭo yaḥ svābhidhānādineritaḥ | na svapno vidyate tasmādacchātmā citimātrakam || 45 ||

He who is seen by the vision of the awakened state, driven by his own nature, there is no dream for him. That self is pure consciousness alone.

जो जाग्रत अवस्था की दृष्टि से देखा जाता है, अपनी प्रकृति से प्रेरित, उसके लिए कोई स्वप्न नहीं होता। वह आत्मा शुद्ध चेतना मात्र है।

6.51.46

अद्यापूर्वाभिधं स्वप्ने यथा पश्यति नान्यथा । अग्रदृष्टं तथैवार्थं चेतनं चित्प्रपश्यति ॥ ४६ ॥

adyāpūrvābhidhaṃ svapne yathā paśyati nānyathā | agradr̥ṣṭaṃ tathaivārthaṃ cetanaṃ citprapaśyati || 46 ||

Just as one sees unprecedented things in dreams, similarly, the conscious mind perceives things that have not been seen before.

जैसे स्वप्न में अनहोनी चीजें देखता है, वैसे ही चेतन मन भी अनहोनी चीजें देखता है।

6.51.47

प्राक्तनी वासनाद्यापि पौरुषेणावजीयते । ह्यःकुकर्माद्य यत्नेन प्रयाति हि सुकर्मताम् ॥ ४७ ॥

prāktanī vāsanādyāpi pauruṣeṇāvajīyate | hyakukarmādya yatnena prayāti hi sukarmatām || 47 ||

Even the past tendencies are overcome by human effort. By striving, one attains good deeds from bad deeds.

भूतकालीन वासनाएँ भी मानवीय प्रयास से दूर हो जाती हैं। प्रयास करने से बुरे कर्मों से अच्छे कर्म प्राप्त होते हैं।

6.51.48

मोक्षादृते न शाम्यन्ति जीवतां चक्षुरादयः । उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति केवलं देशकालतः ॥ ४८ ॥

mokṣādr̥te na śāmyanti jīvatāṃ cakṣurādayaḥ | unmajjanti nimajjanti kevalaṃ deśakālataḥ || 48 ||

Without liberation, the senses of living beings do not find peace. They only rise and fall according to place and time.

बिना मोक्ष के, जीवों के इन्द्रियाँ शांति नहीं पातीं। वे केवल स्थान और समय के अनुसार उठती और गिरती हैं।

6.51.49

चितः स्वकलनात्तस्य देहोग्र इव तिष्ठति । पञ्चात्माभावितोऽसत्यो महायक्षः शिशोरिव ॥ ४९ ॥

citaḥ svakalanāttasya dehogra iva tiṣṭhati | pañcātmābhāvito'satyo mahāyakṣaḥ śiśoriva || 49 ||

The body appears fearful due to the mind's own imaginings. It is unreal, composed of the five elements, like a great demon to a child.

मन की अपनी कल्पना से शरीर भयानक लगता है। यह असत्य है, पाँच तत्वों से बना है, जैसे एक बच्चे के लिए एक बड़ा राक्षस।

6.51.50

मनोबुद्धिरहंकारस्तथा तन्मात्रपञ्चकम् । इति पुर्यष्टकं प्रोक्तं देहोऽसावातिवाहिकः ॥ ५० ॥

manobuddhirahaṃkārastathā tanmātrapañcakam | iti puryaṣṭakaṃ proktaṃ deho'sāvātivāhikaḥ || 50 ||

The mind, intellect, ego, and the five subtle elements constitute the eightfold body, which is the vehicle of the soul.

मन, बुद्धि, अहंकार और पाँच सूक्ष्म तत्व इनका समूह आठ अंगों वाला शरीर है, जो आत्मा का वाहन है।

6.51.51

अमूर्त एव चित्तात्मा खत्वमस्यातिपीनता । वाततास्य महागुल्मो देहतास्य सुमेरुता ॥ ५१ ॥

amūrta eva cittātmā khatvamasyātipīnatā | vātatāsya mahāgulmo dehatāsya sumerutā || 51 ||

The self is formless and is the essence of the mind. Its emptiness is extremely vast. Its air-like nature is like a great tree, and its body-like nature is like Mount Meru.

स्वयं निराकार है और मन का सार है। इसकी खालीपन अत्यधिक विस्तृत है। इसकी वायु जैसी प्रकृति एक महान वृक्ष के समान है, और इसकी शरीर जैसी प्रकृति मेरु पर्वत के समान है।

6.51.52

विरजस्त्वक्रमेणैव निरवस्थस्तु मुक्तिभाक् । सुषुप्ततैकावस्थास्य जडाः क्रोडीकृता यया ॥ ५२ ॥

virajastvakrameṇaiva niravasthastu muktibhāk | suṣuptataikāvasthāsya jaḍāḥ kroḍīkṛtā yayā || 52 ||

Being free from passion through the natural order, one is liberated without any state. The state of deep sleep is the only state where the inert are embraced.

प्रकृति के क्रम से राग से मुक्त होने पर, कोई अवस्था के बिना मुक्त होता है। गहरी नींद की अवस्था ही वह एकमात्र अवस्था है जहाँ जड़ अपने आप में समाहित होते हैं।

6.51.53

स्वप्ननाम्नी तथावस्था देहप्रत्ययशालिनी । आमोक्षं भ्रमतीहायमिति स्थावरजंगमैः ॥ ५३ ॥

svapnanāmnī tathāvasthā dehapratyayaśālinī | āmokṣaṃ bhramatīhāyamiti sthāvarajaṅgamaiḥ || 53 ||

The state of dreaming is also a state of bodily awareness. The liberation wanders here, thus it is said by the immovable and movable beings.

स्वप्न की अवस्था भी शरीर के बोध की अवस्था है। मुक्ति यहाँ भटकती है, इसलिए यह स्थावर और जंगम प्राणियों द्वारा कहा जाता है।

6.51.54

कदाचिद्धि सुषुप्तस्थः कदाचित्स्वप्नवत्स्थितः । आतिवाहिकदेहोऽयं सर्वस्यैवावतिष्ठते ॥ ५४ ॥

kadāciddhi suṣuptasthaḥ kadācitsvapnavatsthitaḥ | ātivāhikadeho'yaṃ sarvasyaivāvatiṣṭhate || 54 ||

Sometimes one is in the state of deep sleep, sometimes in the state of dreaming. This transmigratory body abides in all.

कभी गहरी नींद की अवस्था में होता है, कभी स्वप्न की अवस्था में। यह परिवर्तनशील शरीर सभी में निवास करता है।

6.51.55

यदा सुषुप्तभावस्थो भाविदुःस्वप्नवेधितः । तदा कालानलसमस्तिष्ठत्यनुदिताकृतिः ॥ ५५ ॥

yadā suṣuptabhāvastho bhāviduḥsvapnavedhitaḥ | tadā kālānalasamastiṣṭhatyanuditākṛtiḥ || 55 ||

When one is in the state of deep sleep, one is aware of the dream state. Then, one remains like the fire of time, with an unmanifested form.

जब कोई गहरी नींद की अवस्था में होता है, तो उसे स्वप्न की अवस्था का बोध होता है। तब, वह समय की अग्नि के समान अपनी अव्यक्त आकृति में रहता है।

6.51.56

स्थावराद्यास्ववस्थासु कल्पवृक्षदशासु च । भवत्येव सुषुप्तस्थो घनमोहशिलाघनः ॥ ५६ ॥

sthāvarādyāsvavasthāsu kalpavṛkṣadaśāsu ca | bhavatyeva suṣuptastho ghanamohaśilāghanaḥ || 56 ||

In all states of existence, whether inanimate or animate, and in the state of the wish-fulfilling tree, one remains in a state of deep sleep, as dense as a stone.

स्थावर आदि की स्थितियों में और कल्पवृक्ष की दशा में, वह गहरी नींद में रहता है, जैसे पत्थर की तरह घना।

6.51.57

सुषुप्तास्य जडता स्वप्नोत्थेयं हि संसृतिः । यः प्रबोधोऽस्य सा मुक्तिस्तज्जाग्रद्या तु तुर्यता ॥ ५७ ॥

suṣuptatāsya jaḍatā svapnottheyam hi sansṛtiḥ | yaḥ prabodho'sya sā muktistajjāgradyā tu turyatā || 57 ||

The inertness of deep sleep is the cause of this worldly existence. The awakening from this state is liberation, and the state of wakefulness is the fourth state.

गहरी नींद की जड़ता इस संसारिक अस्तित्व का कारण है। इस अवस्था से जागरण मुक्ति है, और जागरूकता की अवस्था चौथी अवस्था है।

6.51.58

जीवप्रबोधान्मुक्तिर्हि प्रबोधात्परमात्मताम् । सोऽभ्येति क्षालितमलं ताम्रं कनकतामिव ॥ ५८ ॥

jīvaprabodhānmuktirhi prabodhātparamātmatām | so'bhyeti kṣālitamalaṃ tāmraṃ kanakatāmiva || 58 ||

Liberation comes from the awakening of the individual self. From this awakening, one attains the supreme self, just as copper, when purified, becomes gold.

जीव के जागरण से मुक्ति होती है। इस जागरण से वह परमात्मा को प्राप्त करता है, जैसे तांबा शुद्ध होने पर सोना बन जाता है।

6.51.59

जीवप्रबोधान्मुक्तिर्या सा चेह द्विविधोच्यते । एका जीवन्मुक्ततेति द्वितीया देहमुक्तता ॥ ५९ ॥

jīvaprabodhānmuktiryā sā ceha dvividhocyate | ekā jīvanmuktateti dvitīyā dehamuktatā || 59 ||

The liberation that comes from the awakening of the individual self is said to be of two kinds: one is liberation while living, and the other is liberation after death.

जीव के जागरण से प्राप्त मुक्ति दो प्रकार की होती है: एक जीवन्मुक्ति है, और दूसरी देह मुक्ति है।

6.51.60

जीवन्मुक्तिर्हि तुर्यत्वं तुर्यातीतं पदं ततः । बोधो जीवः प्रबोधोऽयं स च बुद्धिप्रयत्नतः ॥ ६० ॥

jīvanmuktirhi turyatvaṃ turyātītaṃ padaṃ tataḥ | bodho jīvaḥ prabodho'yaṃ sa ca buddhiprayatnataḥ || 60 ||

Liberation while living is the state of the fourth. The state beyond the fourth is the supreme state. The individual self is consciousness, and this awakening is through the effort of the intellect.

जीवन्मुक्ति चौथी अवस्था है। चौथी से परे की अवस्था परम पद है। जीव चेतना है, और यह जागरण बुद्धि के प्रयास से होता है।

6.51.61

ज्ञातप्रमाणो जीवोन्तर्यो जानातीह तन्मयः । पश्यतीमं भयं चैव सुदीर्घस्वप्नविभ्रमम् ॥ ६१ ॥

jñātapramāṇo jīvontaryo jānātīha tanmayaḥ| paśyatīmaṃ bhayaṃ caiva sudīrghasvapnavibhramam || 61 ||

The individual soul, which is known by its own measure, knows itself to be identified with that. It sees this fear and the long dream-like delusion.

ज्ञात प्रमाण वाला जीव अपने आप को जानता है और उससे परिपूर्ण होता है| वह इस भय और लंबे स्वप्न-सदृश भ्रम को देखता है।

6.51.62

मिथ्योदितः स्वहृदये स्वस्थ एव शिलीकृते । जीवानामन्तरे त्वन्यन्न किंचिच्चित्कलां विना ॥ ६२ ॥

mithyoditaḥ svahṛdaye svastha eva śilīkṛte| jīvānāmantare tvanyann kiñciccitkalāṃ vinā || 62 ||

Falsely imagined in one's own heart, it is established as stable. In the inner space of beings, there is nothing other than the power of consciousness.

अपने हृदय में मिथ्या कल्पना की गई, यह स्थिर होता है| जीवों के अन्तर में, चेतना की शक्ति के अलावा कुछ भी नहीं है।

6.51.63

तामेवान्यतया पश्यन्मुधैव परिशोचति । जीवाणोरन्तरे त्वन्यन्न किंचित्परमाद्दते ॥ ६३ ॥

tāmevānyatayā paśyanmudhaiva pariśocati| jīvāṇorantare tvanyann kiñcitparamādṛte || 63 ||

Seeing that very consciousness as something else, the foolish one indeed laments. In the inner space of beings, there is nothing other than the supreme consciousness.

उस चेतना को दूसरे के रूप में देखकर, मूढ़ व्यक्ति शोक करता है| जीवों के अन्तर में, परम चेतना के अलावा कुछ भी नहीं है।

6.51.64

यत्र तत्र जगद्दृष्टमहो मायाविजृम्भितम्। स्थाल्यन्तः कथदम्बूनां यथा नाना भ्रमोदयः ॥ ६४ ॥

yatra tatra jagaddṛṣṭamaho māyāvijṛmbhitam| sthālyantaḥ kathadambūnāṃ yathā nānā bhramodayaḥ || 64 ||

Wherever the world is seen, it is amazingly manifested by illusion. Just as various illusions arise from the reflections in a pot of water, so too the world appears diverse.

जहां-जहां संसार दिखाई देता है, वह माया द्वारा चमत्कारपूर्ण रूप से प्रकट होता है| जैसे पानी के घड़े में प्रतिबिंब से विविध भ्रम उत्पन्न होते हैं, वैसे ही संसार विविध रूप में दिखाई देता है।

6.51.65

जीवाणूनां तथैवान्तर्मिथ्यासंसरणोदयः। बन्धोस्य वासनाबन्धो मोक्षः स्याद्वासनालयः ॥ ६५ ॥

jīvāṇūnāṃ tathaivāntarmithyāsaṃsaraṇodayaḥ| bandho'sya vāsanābandho mokṣaḥ syādvāsanālayaḥ || 65 ||

Similarly, in the inner space of beings, the false cycle of transmigration arises. Bondage is the bond of impressions, and liberation is the abode of impressions.

इसी प्रकार, जीवों के अन्तर में, मिथ्या संसार चक्र का उदय होता है| बंधन वासनाओं का बंधन है, और मोक्ष वासनाओं का आश्रय है।

6.51.66

वासनान्तोऽस्य सौषुप्ती स्वप्ने विस्फुरति स्थितिः। घनवासनमोहोऽयं जीवः स्थावरतादिभाक् ॥ ६६ ॥

vāsanānto'sya sauṣuptī svapne visphurati sthitiḥ | ghanavāsanamoho'yaṃ jīvaḥ sthāvaratādibhāk || 66 ||

The end of desires is deep sleep; in dreams, the state flickers. This dense delusion of desires is the individual soul, experiencing the state of immobility and so forth.

इच्छाओं का अंत गहरी नींद है; सपनों में, स्थिति चमकती है। यह घनी इच्छाओं का मोह जीव है, जो अचलता की स्थिति का अनुभव करता है।

6.51.67

मध्यस्थवासनस्तिर्यक्पुरुषस्तनुवासनः। यदान्तर्जीवितेनान्तो बहिर्जाता घटादयः ॥ ६७ ॥

madhyasthavāsanastiryakpuruṣastanuvāsanaḥ | yadāntarjīvitena'nto bahirjātā ghaṭādayaḥ || 67 ||

The intermediate desires are the animal beings; the bodily desires are the human beings. When the inner life ends, external objects like pots are born.

मध्यस्थ इच्छाएं पशु हैं; शारीरिक इच्छाएं मनुष्य हैं। जब आंतरिक जीवन समाप्त होता है, तब बाहरी वस्तुएं जैसे घड़े उत्पन्न होते हैं।

6.51.68

जीवैक्यादुभयोः सत्ता ग्राह्यग्राहकयोस्तदा। आत्मानात्मसमालीढो बहिरन्तर्यदा चिता ॥ ६८ ॥

jīvaikyādubhayoḥ sattā grāhyagrāhakayostadā | ātmānātmasamālīḍho bahirantaryadā citā || 68 ||

From the unity of the individual soul, both the subject and the object exist. When the self and the non-self are united, the consciousness pervades both inside and outside.

जीव की एकता से, विषय और विषयी दोनों अस्तित्व में हैं। जब आत्मा और अनात्मा एक होते हैं, तब चेतना भीतर और बाहर दोनों में व्याप्त होती है।

6.51.69

तदा ग्राह्यग्रहणधीर्मृगतृष्णेव सोदया । नेह संत्यज्यते किंचिन्नेह किंचिन्न गृह्यते ॥ ६९ ॥

tadā grāhyagrahaṇadhīrmṛgatṛṣṇeva sodayā | neha saṃtyajyate kiṃcinneha kiṃcinna gṛhyate || 69 ||

Then, the intellect that grasps the object is like a mirage, appearing with the rise. Nothing is abandoned here, nothing is grasped here.

तब, विषय को ग्रहण करने वाली बुद्धि मृगतृष्णा की तरह है, उदय के साथ प्रकट होती है। यहाँ कुछ भी त्यागा नहीं जाता, यहाँ कुछ भी ग्रहण नहीं किया जाता।

6.51.70

बाह्यान्तरकलाकारश्चिदात्मैकः प्रकाशते । त्रिजगच्चिच्चमत्कारस्त्वलं भेदविकल्पनैः ॥ ७० ॥

bāhyāntarakalākāraścidātmaikaḥ prakāśate | trijagaccciccamatkārastvalaṃ bhedavikalpanaiḥ || 70 ||

The single consciousness, the self, shines as the form of internal and external arts. The wonder of the three worlds of consciousness is sufficient without the concept of differences.

एक चेतना, आत्मा, भीतर और बाहर की कलाओं के रूप में चमकती है। चेतना के तीन जगतों का आश्चर्य भेद की कल्पना के बिना पर्याप्त है।

6.51.71

अब्धिर्यथा जलमपास्तसमस्तभेदः खादच्छमेव सकलं द्रवमेकशुद्धम् । सर्वं तथेदमपहस्तितभेदजातमाद्यं परं पदमनामयमेव बुद्धम् ॥ ७१ ॥

abdhiryathā jalamapāstasamastabhedaḥ khādacchameva sakalaṃ dravamekaśuddham | sarvaṃ tathedamapahastitabhedajātamādyaṃ paraṃ padamanāmayameva buddham || 71 ||

Just as the ocean casts off all distinctions of water, remaining only as pure space, similarly, this entire universe, having cast off all distinctions, is the pure, primordial, supreme state, free from all afflictions and fully awakened.

जैसे समुद्र सारे जल के भेदों को त्याग देता है और केवल शुद्ध आकाश के रूप में रहता है, उसी प्रकार यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, सारे भेदों को त्याग कर, शुद्ध, आदिम, परम अवस्था है, जो सभी क्लेशों से मुक्त और पूर्ण रूप से जाग्रत है।

Chapter 52

6.52.1

यो जीवस्यादितः स्वप्नो नानाकलनकोमलः तमिमं विद्धि संसारं न सत्यं नाप्यसन्मयम् ॥ १ ॥

yo jīvasyāditaḥ svapno nānākalanakomalaḥ tamimaṃ viddhi saṃsāraṃ na satyaṃ nāpyasanmayam || 1 ||

The dream of the individual soul, which is variegated and delicate from the beginning, is to be known as this samsara, which is neither real nor unreal.

जीव का स्वप्न, जो शुरू से ही विविध और कोमल है, इसे यह संसार समझना चाहिए, जो न तो सत्य है न असत्य।

6.52.2

न पुंस इव जीवस्य स्वप्नः संभवति क्वचित्तेनैते जाग्रतो भावा जाग्रत्स्वप्नकृतोऽत्र हि ॥ २ ॥

na puṃsa iva jīvasya svapnaḥ saṃbhavati kvacittenaite jāgrato bhāvā jāgratsvapnakṛto'tra hi || 2 ||

The dream of the individual soul does not happen like that of a person. These experiences in the waking state are like a dream in the waking state here.

जीव का स्वप्न किसी व्यक्ति के स्वप्न की तरह नहीं होता। ये जाग्रत अवस्था में अनुभव जाग्रत स्वप्न के समान हैं।

6.52.3

जीवस्वप्नमिमं दीर्घं क्षिप्रताप्रतिभासतः असत्यमप्यवस्तुत्वाद्विद्धि वेद्यविदां वर ॥ ३ ॥

jīvasvapnamimaṃ dīrghaṃ kṣipratāpratibhāsataḥ asatyamapyavastutvāddviddhi vedyavidāṃ vara || 3 ||

Know this long dream of the individual soul, which appears quickly, to be unreal yet having the nature of existence, O best among the knowers of the knowable.

इस लंबे जीव के स्वप्न को, जो तुरंत प्रकट होता है, असत्य होने के बावजूद अस्तित्व की प्रकृति वाला जानो, हे ज्ञेय के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ।

6.52.4

स्वप्नात्स्वप्नान्तरमिव गच्छन्तो जीवजीवकाः असत्यमेव पश्यन्ति घनसत्यतयानघ ॥ ४ ॥

svapnātsvapnāntaramiva gacchanto jīvajīvakāḥ asatyameva paśyanti ghanasatyatayānagha || 4 ||

Moving from one dream to another, the individual souls see the unreal as if it were real, O sinless one.

एक स्वप्न से दूसरे स्वप्न में जाते हुए, जीव असत्य को वास्तविक की तरह देखते हैं, हे निष्पाप।

6.52.5

अजडे जडता तात जडे चाजडतोदिता असत्ये सत्यता जीवजीवानुभवमोहतः ॥ ५ ॥

ajaḍe jaḍatā tāta jaḍe cājaḍatoditā asatye satyatā jīvajīvānubhavamohataḥ || 5 ||

O dear one, in the conscious, there is inertness, and in the inert, there is consciousness. In the unreal, there is reality due to the delusion of the experience of the individual soul.

हे प्रिय, चेतन में जड़ता है, और जड़ में चेतना है। असत्य में जीव के अनुभव के भ्रम के कारण सत्यता है।

6.52.6

भानोरप्यन्तरखिलं पश्यन्तस्त्रिजगद्भ्रमम्भ्रमन्ति स्वप्नसंभ्रान्ता इव जीवा भिदालिभिः ॥ ६ ॥

bhānorapyantarakhilaṃ paśyantastrijagadbhramambhramanti svapnasaṃbhrāntā iva jīvā bhidālibhiḥ || 6 ||

Even while seeing the entire universe within the sun, beings wander in the delusion of the three worlds, confused like those in a dream, due to their differences.

सूर्य में पूरे ब्रह्मांड को देखते हुए भी, जीव तीनों लोकों के भ्रम में भटकते हैं, स्वप्न में भ्रमित लोगों की तरह, अपने भेदों के कारण।

6.52.7

सर्वगत्वादनन्तत्वात्स्वस्य जीवस्य जीवतःयद्भावयन्ति चेतन्ति तदेवाश्विति सत्यवत् ॥ ७ ॥

sarvagatvādanantatvātsvasya jīvasya jīvataḥyadbhāvayanti cetanti tadevāśviti satyavat || 7 ||

Due to the omnipresence and eternity of one's own self, whatever beings think of, that itself is true, as if it were a horse.

अपने स्वयं के सर्वव्यापकता और अनंतता के कारण, जीव जो भी सोचते हैं, वही सत्य है, मानो वह घोड़ा हो।

6.52.8

पुण्डरीकाक्षनिर्दिष्टामसंसक्तिगतिं शुभाम्यामालिङ्ग्य महाबाहो जीवन्मुक्तो महामुनिः ॥ ८ ॥

puṇḍarīkākṣanirdiṣṭāmasaṃsaktigatiṃ śubhāmyāmāliṅgya mahābāho jīvanmukto mahāmuniḥ || 8 ||

O mighty-armed one, the great sage, liberated while living, embraces the auspicious path of non-attachment indicated by the lotus-eyed one.

हे महाबाहो, वह महामुनि, जो जीवन में ही मुक्त है, कमलनयन द्वारा निर्दिष्ट अनासक्ति के शुभ मार्ग को आलिंगन करता है।

6.52.9

पाण्डोः पुत्रोऽर्जुनो नाम सुखं जीवितमात्मनःक्षिपयिष्यति निर्दुःखं तथा क्षेपय जीवितम् ॥ ९ ॥

pāṇḍoḥ putro'rjuno nāma sukhaṃ jīvitamātmanaḥkṣipayiṣyati nirduḥkhaṃ tathā kṣepaya jīvitam || 9 ||

Pandu's son, named Arjuna, will cast off his life happily and without sorrow. Thus, cast off your life.

पांडु के पुत्र, नाम अर्जुन, अपने जीवन को सुखपूर्वक और दुःखरहित त्याग देगा। इसलिए, अपने जीवन को त्याग दो।

6.52.10

श्रीराम उवाच भविष्यति कदा ब्रह्मन्सोऽर्जुनः पाण्डुनन्दनःकीदृशीं च हरिस्तस्य कथयिष्यत्यसक्तताम् ॥ १० ॥

śrīrāma uvācabhaviṣyati kadā brahmanso'rjunaḥ pāṇḍunandanaḥkīdṛśīṃ ca haristasya kathayiṣyatyasaktatām || 10 ||

Sri Rama said: When will Arjuna, the son of Pandu, become detached, O Brahman, and how will Hari describe his detachment?

श्री राम ने कहा: हे ब्रह्मन्, पांडु के पुत्र अर्जुन कब अनासक्त होंगे, और हरि उनकी अनासक्ति कैसे वर्णन करेंगे?

6.52.11

श्रीवसिष्ठ उवाचास्ति सन्मात्रमात्मेति परिकल्पितनामकम्स्थितमात्मन्यनाद्यन्ते नभसीव महानभः ॥ ११ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaasti sanmātramātmeti parikalpitanāmakamsthitamātmanyanādyante nabhasīva mahānabhaḥ || 11 ||

Śrīvasiṣṭha said: There exists the pure Self, known by the name 'Ātman,' which is eternal and boundless like the sky.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: एक शुद्ध आत्मा है, जिसे 'आत्मा' के नाम से जाना जाता है, जो आदि-अंत रहित और आकाश की तरह अनंत है।

6.52.12

दृश्यते विमले तस्मिन्नयं संसारविभ्रमःकटकादि यथा हेम्नि तरङ्गादि यथाम्भसि ॥ १२ ॥

dṛśyate vimale tasminnayaṃ saṃsāravibhramaḥkaṭakādi yathā hemni taraṅgādi yathāmbhasi || 12 ||

In that pure Self, this delusion of the world is seen, just as reflections are seen in gold or waves in water.

उस शुद्ध आत्मा में, यह संसार का भ्रम दिखाई देता है, जैसे सोने में प्रतिबिंब या पानी में लहरें दिखाई देती हैं।

6.52.13

चतुर्दशविधा भूतजातयः प्रस्फुरन्त्यलम्तस्मिंससारजालेऽस्मिञ्जाले शकुनयो यथा ॥ १३ ॥

caturdaśavidhā bhūtajātayaḥ prasphurantyalamtasminsaṃsārajāle'smiñjāle śakunayo yathā || 13 ||

The fourteen types of beings shine forth in this web of the world, like birds in a net.

चौदह प्रकार के जीव इस संसार के जाल में चमकते हैं, जैसे पक्षी जाल में।

6.52.14

तत्रैते यमचन्द्रार्कशक्राद्याः शंसितक्रमाःभूतपञ्चकसंसारलोकपालत्वमागताः ॥ १४ ॥

tatraite yamacandrārkaśakrādyāḥ śaṃsitakramāḥbhūtapañcakasaṃsāralokapālatvamāgatāḥ || 14 ||

There, these beings such as Yama, Chandra, Surya, and Indra, in their respective order, have attained the status of protectors of the world composed of the five elements.

वहाँ, यम, चंद्र, सूर्य और इंद्र जैसे जीव, अपने-अपने क्रम में, पंचभूत से बने संसार के रक्षक की स्थिति प्राप्त कर चुके हैं।

6.52.15

इदं पुण्यमुपादेयं हेयं पापमिदं त्वितितैः स्वसंकल्पघटिताद्वेदनात्स्थापिता स्थितिः ॥ १५ ॥

idaṃ puṇyamupādeyaṃ heyaṃ pāpamidaṃ tvititaiḥ svasaṃkalpaghaṭitādvedanātsthāpitā sthitiḥ || 15 ||

This is meritorious and should be accepted; that is sinful and should be rejected—such is the state established by their own mental constructs and experiences.

यह पुण्य है और इसे स्वीकार किया जाना चाहिए; वह पाप है और इसे त्याग देना चाहिए—ऐसी स्थिति उनके अपने मानसिक निर्माण और अनुभवों से स्थापित होती है।

6.52.16

तस्याद्य यावदनघ प्रवाहपतिते निजेकर्मण्यचलसंकाशस्थिरं चित्तमवस्थितम् ॥ १६ ॥

tasyādya yāvadanagha pravāhapatite nijekarmaṇyacalasaṃkāśasthiraṃ cittamavasthitam || 16 ||

Today, as long as the flow of one's own actions continues, the mind remains steady and immovable.

आज, जब तक अपने कर्मों का प्रवाह चलता रहे, मन अचल और स्थिर रहता है।

6.52.17

भगवान्स यमः किंचिद्गते प्रतिचतुर्युगेतपः प्रकुरुते भूतदलनात्पापशङ्कया ॥ १७ ॥

bhagavānsa yamaḥ kiṃcidgate praticaturyugetapaḥ prakurute bhūtadalanātpāpaśaṅkayā || 17 ||

Lord Yama, having gone a little, performs penance in every four ages out of fear of the sin of destroying beings.

भगवान यम, थोड़ा सा चलकर, प्रत्येक चार युगों में प्राणियों को नष्ट करने के पाप से डरकर तपस्या करते हैं।

6.52.18

कदाचिदष्टौ वर्षाणि दश द्वादश वापि चकदाचित्पञ्चसप्तादि कदाचित्षोडशापि च ॥ १८ ॥

kadācidaṣṭau varṣāṇi daśa dvādaśa vāpi cakadācitpañcasaptādi kadācitṣoḍaśāpi ca || 18 ||

Sometimes eight years, sometimes ten, twelve, sometimes five, seven, etc., and sometimes even sixteen.

कभी आठ वर्ष, कभी दस, बारह, कभी पाँच, सात आदि, और कभी-कभी सोलह भी।

6.52.19

उदासीनवदासीने तस्मिन्नियमसंस्थितौन हिनस्ति जगज्जाले मृत्युर्भूतानि कानिचित् ॥ १९ ॥

udāsīnavadāsīne tasminniyamasaṃsthitauna hinasti jagajjāle mṛtyurbhūtāni kānicit || 19 ||

In the worldly web, death does not destroy those who are detached and established in discipline.

दुनिया के जाल में, मृत्यु उन्हें नहीं नष्ट करती जो विरक्त और अनुशासन में स्थित हैं।

6.52.20

तेन नीरन्ध्रभूतौघनिःसंचारं महीतलम्भवति प्रावृषि स्वेदी कुञ्जरो मशकैरिव ॥ २० ॥

tena nīrandhrabhūtaughaniḥsaṃcāraṃ mahītalambhavati prāvṛṣi svedī kuñjaro maśakairiva || 20 ||

By that, the earth becomes filled with the movement of beings without openings, like a sweating elephant with insects during the rainy season.

इससे, पृथ्वी खुले छिद्रों के बिना प्राणियों के चलन-फिरन से भर जाती है, जैसे वर्षा ऋतु में पसीने से भरा हाथी कीड़ों से भर जाता है।

6.52.21

अथैतानि विचित्राणि भूतानि बहुयुक्तिभिःक्षिपयन्ति सुरा राम भुवो भारनिवृत्तये ॥ २१ ॥

athaitāni vicitrāṇi bhūtāni bahuyuktibhiḥkṣipayanti surā rāma bhuvo bhāranivṛttaye || 21 ||

Thus, these various beings, with many arguments, are thrown by the gods, O Rama, for the relief of the earth's burden.

इस प्रकार, ये विविध प्राणी, बहुत से तर्कों के साथ, देवताओं द्वारा फेंके जाते हैं, हे राम, पृथ्वी के भार को हल्का करने के लिए।

6.52.22

एवं युगसहस्राणि व्यवहारशतानि चसमतीतान्यनन्तानि भूतानि च जगन्ति च ॥ २२ ॥

evaṃ yugasahasrāṇi vyavahāraśatāni casamatītānyanantāni bhūtāni ca jaganti ca || 22 ||

Thus, thousands of yugas and hundreds of practices have passed, and countless beings have come into existence.

इस प्रकार, हजारों युग और सैकड़ों व्यवहार बीत चुके हैं, और अनगिनत प्राणी अस्तित्व में आए हैं।

6.52.23

वैवस्वतोऽद्य तु यमो य एष पितृनायकःअनेन त्वधुना साधो परिक्षीणेषु केषुचित् ॥ २३ ॥

vaivasvato'dya tu yamo ya eṣa pitṛnāyakaḥanena tvadhunā sādho parikṣīṇeṣu keṣucit || 23 ||

Today, this Yama, the lord of the ancestors, son of Vivasvat, is now diminished in some respects, O virtuous one.

आज, यह यम, पितृनायक, विवस्वत के पुत्र, कुछ मामलों में कमजोर हो गए हैं, हे साधु।

6.52.24

युगेष्वघविघाताय वर्षाणि द्वादशात्मनाव्रतचर्येह कर्तव्या दूरास्तजनकर्षणा ॥ २४ ॥

yugeṣvaghavighātāya varṣāṇi dvādaśātmanāvratacaryeha kartavyā dūrāstajanakarṣaṇā || 24 ||

In the yugas, for the destruction of sins, one should perform penance for twelve years, staying away from people.

युगों में, पापों के नाश के लिए, कोई बारह वर्षों तक तपस्या करनी चाहिए, लोगों से दूर रहते हुए।

6.52.25

तेनेयमुर्वी नीरन्ध्रा भूतैर्मर्त्यैरमृत्युभिःदीना प्रपन्ना गुल्मेव भारभूतैर्भविष्यति ॥ २५ ॥

teneyamurvī nīrandhrā bhūtairmartyairamṛtyubhiḥdīnā prapannā gulmeva bhārabhūtairbhaviṣyati || 25 ||

Thus, this earth, full of holes, will be filled with beings, mortals, and immortals, miserable and helpless, like a cluster of bushes burdened with weight.

इस प्रकार, यह पृथ्वी, छेदों से भरी हुई, प्राणियों, मनुष्यों, और अमरों से भरी होगी, दुःखी और असहाय, भारी बोझ से लदे झाड़ियों की तरह।

6.52.26

भूभारपरिभूताङ्गी हरिं शरणमेष्यतिकान्ता दस्युपराभूता दीना पतिमिव प्रिया ॥ २६ ॥

bhūbhāraparibhūtāṅgī hariṃ śaraṇameṣyatikāntā dasyuparābhūtā dīnā patimiva priyā || 26 ||

The Earth, overwhelmed by the burden, will seek refuge in Hari. She will be beloved, oppressed by thieves, and miserable like a dear wife seeking her husband.

पृथ्वी, भार से पीड़ित, हरि की शरण में जाएगी। वह प्यारी, डाकुओं से पीड़ित, और दुःखी होगी, जैसे एक प्यारी पत्नी अपने पति की शरण में जाती है।

6.52.27

हरिर्देहद्वयेनाथ महीमवतरिष्यतिदेवांशैरखिलैः सार्धं नरनारायणं गतैः ॥ २७ ॥

harirdehadvayenātha mahīmavatariṣyatidevāṃśairakhilaiḥ sārdhaṃ naranārāyaṇaṃ gataiḥ || 27 ||

Then Hari, with two bodies, will descend to the Earth, accompanied by all the divine parts, along with Nara-Narayana.

तब हरि, दो शरीरों के साथ, पृथ्वी पर अवतरित होंगे, सभी दिव्य अंशों के साथ, नर-नारायण के साथ।

6.52.28

वसुदेवसुतस्त्वेको वासुदेव इति श्रुतःदेहो भविष्यति हरेर्द्वितीयः पाण्डवोऽर्जुनः ॥ २८ ॥

vasudevasutastveko vāsudeva iti śrutaḥdeho bhaviṣyati harerdvitīyaḥ pāṇḍavo'rjunaḥ || 28 ||

The son of Vasudeva, known as Vasudeva, will be the second body of Hari, the Pandava Arjuna.

वसुदेव के पुत्र, जिन्हें वासुदेव के नाम से जाना जाता है, हरि का दूसरा शरीर होंगे, पांडव अर्जुन।

6.52.29

युधिष्ठिर इति ख्यातो धर्मपुत्रो भविष्यतिअम्भोधिमेखलाभूपःपाण्डोः पुत्रः स धर्मवित् ॥ २९ ॥

yudhiṣṭhira iti khyāto dharmaputro bhaviṣyatiambhodhimekhalābhūpaḥpāṇḍoḥ putraḥ sa dharmavit || 29 ||

Known as Yudhishthira, the son of Dharma, he will be the ruler of the ocean-girdled Earth, the son of Pandu, knowledgeable in Dharma.

युधिष्ठिर के नाम से जाना जाता है, धर्म का पुत्र, वह समुद्र-परिक्रमा पृथ्वी का शासक होगा, पांडु का पुत्र, धर्म का ज्ञाता।

6.52.30

दुर्योधन इति ख्यातस्तस्य भ्राता पितृव्यजःभविष्यति दृढद्वन्द्वो भीमो बभ्रुरहेरिव ॥ ३० ॥

duryodhana iti khyātastasya bhrātā pitṛvyajaḥbhaviṣyati dṛḍhadvandvo bhīmo babhruraheriva || 30 ||

Known as Duryodhana, his brother born from his paternal uncle, will be the strong adversary, Bhima, like a tiger.

दुर्योधन के नाम से जाना जाता है, उसका चाचा से जन्मा भाई, वह एक शक्तिशाली विरोधी, भीम, एक बाघ की तरह होगा।

6.52.31

अन्योन्यं हरतोरुर्वी तयोः संग्रामलोलयोःअष्टादशात्राक्षौहिण्यो घटिष्यन्त्यत्र भीषणाः ॥ ३१ ॥

anyonyaṃ haratorurvau tayoḥ saṃgrāmalolayoḥaṣṭādaśātrākṣauhiṇyo ghaṭiṣyantyatra bhīṣaṇāḥ || 31 ||

The two armies, eager for battle, will clash against each other with eighteen terrifying divisions.

दोनों सेनाएँ, युद्ध के लिए उत्सुक, अट्ठारह भयानक विभागों के साथ एक-दूसरे से टकराएँगी।

6.52.32

तत्क्षयेण विभारत्वं भुवो विष्णुः करिष्यतिराघवाऽर्जुनदेहेन वृहद्गाण्डीवधन्वना ॥ ३२ ॥

tatkṣayeṇa vibhāratvaṃ bhuvo viṣṇuḥ kariṣyatirāghavā'rjunadehena vṛhadgāṇḍīvadhanvanā || 32 ||

With the destruction of that, Viṣṇu will make the earth prosperous through the body of Rāghava and Arjuna, the wielder of the great Gāṇḍīva bow.

उसके विनाश के साथ, विष्णु राघव और अर्जुन के शरीर के माध्यम से, महान गाण्डीव धनुष धारी, पृथ्वी को समृद्ध बनाएँगे।

6.52.33

विष्णोरर्जुननामादौ प्राकृतं भावमास्थितःहर्षामर्षान्वितो देहो नरधर्मा भविष्यति ॥ ३३ ॥

viṣṇorarjunanāmādau prākṛtaṃ bhāvamāsthitaḥharṣāmarṣānvito deho naradharmā bhaviṣyati || 33 ||

Initially, the body of Viṣṇu named Arjuna will assume a natural state, filled with joy and anger, and will follow human duties.

शुरुआत में, विष्णु का अर्जुन नामक शरीर एक प्राकृतिक अवस्था ग्रहण करेगा, हर्ष और क्रोध से भरा हुआ, और मानव कर्तव्यों का पालन करेगा।

6.52.34

सेनाद्वयगतान्दृष्ट्वा स्वजनान्मरणोन्मुखान्विषादमेष्यत्युद्योगं युद्धाय न करिष्यति ॥ ३४ ॥

senādvayagatāndṛṣṭvā svajanānmaraṇonmukhānviṣādameṣyatyudyogaṃ yuddhāya na kariṣyati || 34 ||

Seeing his own people facing death in both armies, he will feel sorrow and will not prepare for battle.

अपने लोगों को दोनों सेनाओं में मृत्यु का सामना करते देख, वह दुःख महसूस करेगा और युद्ध की तैयारी नहीं करेगा।

6.52.35

तमर्जुनाभिधं देहं प्राप्तकार्यैकसिद्धयेहरिर्बुद्धेन देहेन बोधयिष्यति राघव ॥ ३५ ॥

tamarjunābhidhaṃ dehaṃ prāptakāryaikasiddhayeharirbuddhena dehena bodhayiṣyati rāghava || 35 ||

Hari, with the enlightened body of Rāghava, will awaken that body named Arjuna for the accomplishment of the task.

हरि, राघव के ज्ञानवान शरीर के साथ, कार्य की सिद्धि के लिए अर्जुन नामक शरीर को जागृत करेंगे।

6.52.36

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयःअजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥ ३६ ॥

na jāyate mriyate vā kadācinnāyaṃ bhūtvā bhavitā vā na bhūyaḥajo nityaḥ śāśvato'yaṃ purāṇo na hanyate hanyamāne śarīre || 36 ||

The soul is never born nor dies at any time. It does not come into being, does not come to exist again. It is unborn, eternal, ever-existing and primeval. It is not slain when the body is slain.

आत्मा कभी जन्म नहीं लेता है और न ही कभी मरता है। यह कभी अस्तित्व में नहीं आता और न ही फिर से अस्तित्व में आता है। यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुराण है। जब शरीर मारा जाता है तो यह नहीं मारा जाता।

6.52.37

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतमुभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥ ३७ ॥

ya enaṃ vetti hantāraṃ yaścainaṃ manyate hatamubhau tau na vijānīto nāyaṃ hanti na hanyate || 37 ||

He who thinks the soul to be the slayer, and he who thinks the soul to be slain, both of them do not know. For the soul neither slays nor is slain.

जो आत्मा को हत्यारा मानता है और जो आत्मा को मारा हुआ मानता है, दोनों ही नहीं जानते। क्योंकि आत्मा न तो मारता है और न ही मारा जाता है।

6.52.38

अनन्तस्यैकरूपस्य सतः सूक्ष्मस्य खादपिआत्मनः परमेशस्य किं कथं केन नश्यति ॥ ३८ ॥

anantasyaikarūpasya sataḥ sūkṣmasya khādapiātmanaḥ parameśasya kiṃ kathaṃ kena naśyati || 38 ||

How can the eternal, unchanging, subtle, and all-pervading soul be destroyed?

अनंत, अपरिवर्तनीय, सूक्ष्म और सर्वव्यापी आत्मा कैसे नष्ट हो सकता है?

6.52.39

अनन्तमव्यक्तमनादिमध्यमात्मानमालोकय संविदात्मन्संविद्वपुः स्फारमलभ्ददोषमजोऽसि नित्योऽसि निरामयोऽसि ॥ ३९ ॥

anantamavyaktamanādimadhyamātmānamālokaya saṃvidātmansaṃvidvapuḥ sphāramalabdhadoṣamajo'si nityo'si nirāmayo'si || 39 ||

Behold the eternal, unmanifest, beginningless, and endless soul, the essence of consciousness, the form of consciousness, pure and free from all impurities. You are unborn, eternal, and free from disease.

अनंत, अव्यक्त, अनादि, और अंतहीन आत्मा को देखो, चेतना का सार, चेतना का रूप, पवित्र और सभी दोषों से मुक्त। तुम अजन्मा, नित्य, और रोगमुक्त हो।

Chapter 53

6.53.1

श्रीभगवानुवाच अर्जुन त्वं न हन्ता त्वमभिमानमलं त्यज जरामरणनिर्मुक्तः स्वयमात्मासि शाश्वतः ॥ १ ॥

śrībhagavānuvāca arjuna tvaṃ na hantā tvamabhimānamalaṃ tyaja jarāmaraṇanirmuktaḥ svayamātmāsi śāśvataḥ || 1 ||

The Supreme Lord said: O Arjuna, you are not the slayer; give up this ego. You are eternal, free from old age and death, and you are the self.

श्री भगवान ने कहा: हे अर्जुन, तुम मारने वाले नहीं हो; इस अभिमान को त्याग दो। तुम जरा और मृत्यु से मुक्त हो, स्वयं ही आत्मा हो और शाश्वत हो।

6.53.2

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यतेहत्वापि स इमांल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥ २ ॥

yasya nāhaṃkṛto bhāvo buddhiryasya na lipyatehatvāpi sa imāṃllokānna hanti na nibadhyate || 2 ||

One who has no sense of ego, whose intellect is not attached to actions, even though they act, they do not kill nor are they bound by actions.

जिसका कोई अहंकार नहीं है, जिसकी बुद्धि कर्मों से नहीं लिप्त है, वह भले ही कर्म करे, वह न तो मारता है और न ही कर्मों से बंधा है।

6.53.3

यैव संजायते संविदन्तः सेवानुभूयते अयं सोऽहमिदं तन्म इत्यन्तः संविदं त्यज ॥ ३ ॥

yaiva saṃjāyate saṃvidantaḥ sevānubhūyate ayaṃ so'hamidaṃ tanm ityantaḥ saṃvidaṃ tyaja || 3 ||

The same consciousness that arises in all beings, that is experienced in service, this is me, this is mine, give up this inner identification.

जो सभी प्राणियों में उत्पन्न होती है, जो सेवा में अनुभव की जाती है, यह मैं हूँ, यह मेरा है, इस अंतर्निहित पहचान को त्याग दो।

6.53.4

अनयैव च युक्तोऽस्मि नष्टोऽस्मीति च भारत अभितः सुखदुःखाभ्यामवशः परितप्यसे ॥ ४ ॥

anayaiava ca yukto'smi naṣṭo'smīti ca bhārata abhitaḥ sukhaduḥkhābhyāmavaśaḥ paritapyase || 4 ||

O Bharata, I am united with this and I am destroyed, thus you are tormented by happiness and sorrow from all sides.

हे भारत, मैं इससे जुड़ा हूँ और मैं नष्ट हूँ, इस प्रकार तुम सब ओर से सुख और दुःख से पीड़ित हो।

6.53.5

स्वात्मांशैः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि भागशः अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥ ५ ॥

svātmāṃśaiḥ kriyamāṇāni guṇaiḥ karmāṇi bhāgaśaḥ ahaṃkāravimūḍhātmā kartāhamiti manyate || 5 ||

The self, deluded by ego, thinks 'I am the doer' while the actions are being performed by the qualities of the self.

आत्मा, अहंकार से मोहित होकर, यह सोचता है कि 'मैं कर्ता हूँ' जबकि कर्म आत्मा के गुणों द्वारा किए जाते हैं।

6.53.6

चक्षुः पश्यतु कर्णश्च श्रृणोतु त्वक्स्पृशत्विदम्। रसना च रसं यातु कात्र कोऽहमिति स्थितिः ॥ ६ ॥

cakṣuḥ paśyatu karṇaśca śrṇotu tvakspṛśatvidam | rasanā ca rasaṃ yātu kātra ko'hamiti sthitiḥ || 6 ||

Let the eyes see, the ears hear, the skin touch, and the tongue taste | Who am I in this situation?
आँखें देखें, कान सुनें, त्वचा छूए, और जीभ स्वाद ले | इस स्थिति में मैं कौन हूँ?

6.53.7

कलनाकर्मणि रते मनस्यपि महात्मनः। न कश्चिदत्राहमिति क्लेशभागे क एव ते ॥ ७ ॥

kalanākarmaṇi rate manasyapi mahātmanaḥ | na kaścidatrāhamiti kleśabhāge ka eva te || 7 ||

Even when the great soul is engaged in the action of movement, there is no 'I' in this suffering | Who are you in this share of suffering?
जब महात्मा गति के कार्य में लगा होता है, तब भी इस दुःख में कोई 'मैं' नहीं है | इस दुःख के भाग में तुम कौन हो?

6.53.8

बहुभिः समवायेन यत्कृतं तत्र भारत। एकोऽभिमानदुःखेन हास्यायैव ह्रइं गृह्यते ॥ ८ ॥

bahubhiḥ samavāyena yatkṛtaṃ tatra bhārata | eko'bhimānaduḥkhena hāsyāyaiva hṛiṃ gṛhyate || 8 ||

O Bharata, what is done by many together, there one takes the burden of sorrow alone and is laughed at |
हे भारत, जो काम बहुतों ने मिलकर किया है, वहाँ एक ही दुःख का भार लेता है और हँसी उड़ाया जाता है |

6.53.9

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि। योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥ ९ ॥

kāyena manasā buddhyā kevalairindriyairapi | yoginaḥ karma kurvanti saṅgaṃ tyaktvātmaśuddhaye || 9 ||

Yogis perform actions with the body, mind, intellect, and even with the senses alone, renouncing attachment for the purification of the self |
योगी शरीर, मन, बुद्धि और इन्द्रियों के साथ कार्य करते हैं, आसक्ति को त्यागकर स्वयं की शुद्धि के लिए |

6.53.10

अहन्त्वविषचूर्णेन येषां कायो न मारितः। कुर्वन्तोऽपि हरन्तोऽपि न च ते निर्विषूचिकाः ॥ १० ॥

ahantvaviṣacūrṇena yeṣāṃ kāyo na māritaḥ | kurvanto'pi haranto'pi na ca te nirviṣūcikāḥ || 10 ||

Those whose bodies are not killed by the poison of ego, even while acting or taking, they are not free from the poison of ego |
जिनके शरीर अहंकार के विष से नहीं मारे गए हैं, वे कार्य करते हुए या लेते हुए भी अहंकार के विष से मुक्त नहीं हैं |

6.53.11

न क्वचिद्राजते कायो ममतामेध्यदूषितः। प्राज्ञोऽप्यतिबहुज्ञोऽपि दुःशील इव मानवः ॥ ११ ॥

na kvacidrājate kāyo mamatāmedhyadūṣitaḥ | prājño'pyatibahujño'pi duḥśīla iva mānavaḥ || 11 ||

The body tainted by selfishness and impure thoughts never shines anywhere. Even a wise and highly knowledgeable person appears like a man of bad character.
स्वार्थ और अशुद्ध विचारों से दूषित शरीर कहीं भी नहीं चमकता है। चाहे वह व्यक्ति बुद्धिमान और बहुत ज्ञानी हो, वह एक बुरे चरित्र के व्यक्ति की तरह दिखाई देता है।

6.53.12

निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी। यः स कार्यमकार्यं वा कुर्वन्नपि न लिप्यते॥ १२॥

nirmamo nirahaṃkāraḥ samaduḥkhasukhaḥ kṣamī | yaḥ sa kāryamakāryaṃ vā kurvannapi na lipyate || 12 ||

One who is free from selfishness and ego, who treats joy and sorrow equally, and who is forgiving, does not get tainted by performing good or bad actions.

जो स्वार्थ और अहंकार से मुक्त है, जो दुःख-सुख को समान रूप से लेता है, और जो क्षमाशील है, वह अच्छे या बुरे कार्यों से दूषित नहीं होता।

6.53.13

इदं च ते पाण्डुसुत स्वकर्म क्षात्रमुत्तमम्। अपि क्रूरमतिश्रेयः सुखायैवोदयाय च॥ १३॥

idaṃ ca te pāṇḍusuta svakarma kṣātramuttamam | api krūramatiśreyaḥ sukhāyaivodayāya ca || 13 ||

O son of Pandu, this is your best duty as a warrior. Even if it is cruel, it is superior and leads to happiness and prosperity.

हे पाण्डु पुत्र, यह तुम्हारा उत्तम क्षात्र कर्म है। यदि यह क्रूर है, तो भी यह श्रेष्ठ है और सुख और उदय के लिए है।

6.53.14

अपि कुत्सितमप्यन्यदप्यधर्ममयक्रमम्। श्रेष्ठं ते स्वं यथा कर्म तथेहामृतवान्भव॥ १४॥

api kutsitamapyanyadapyadharmamayakramam | śreṣṭhaṃ te svaṃ yathā karma tathehāmṛtavānbhava || 14 ||

Even if it is despised and unrighteous, your own duty is the best. By performing it, you will attain immortality.

यदि यह निंदित और अधर्म है, तो भी तुम्हारा अपना कर्म श्रेष्ठ है। इसे करके तुम अमृत प्राप्त करोगे।

6.53.15

मूर्खस्यापि स्वकर्मैव श्रेयसे किमु सन्मतेः। मतिर्गलदहंकारा पतितापि न लिप्यते॥ १५॥

mūrkhasyāpi svakarmaiva śreyase kimu sanmateḥ | matirgaladahaṃkārā patitāpi na lipyate || 15 ||

Even a fool's own duty is beneficial. How much more so for a wise person? A person with a pure mind, even if fallen, does not get tainted.

एक मूर्ख का अपना कर्म भी श्रेयस्कर है। फिर एक बुद्धिमान व्यक्ति का कर्म तो और भी श्रेष्ठ है। एक पवित्र मन वाला व्यक्ति, चाहे वह पतित हो, दूषित नहीं होता।

6.53.16

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय। निःसङ्गस्त्वं यथाप्राप्तकर्मवान्न निबध्यसे॥ १६॥

yogasthaḥ kuru karmāṇi saṅgaṃ tyaktvā dhanaṃjaya | niḥsaṅgastvaṃ yathāprāptakarmavānna nibadhyase || 16 ||

Perform your duties, O Arjuna, being established in Yoga, abandoning attachment, being free from attachment, you will not be bound.

हे धनंजय, योग में स्थित होकर कर्म करो, आसक्ति को त्यागकर | आसक्ति रहित होकर तू प्राप्त कर्म करने वाला नहीं बँधेगा ||

6.53.17

शान्तब्रह्मवपुर्भूत्वा कर्म ब्रह्ममयं कुरु। ब्रह्मार्पणसमाचारो ब्रह्मैव भवसि क्षणात्॥ १७॥

śāntabrahma-vapurbhūtvā karmabrahmayam kuru | brahmārpaṇasamācāro brahmaiva bhavasi kṣaṇāt || 17 ||

Becoming calm and realizing the Brahman within, perform actions as an offering to Brahman. By making all actions an offering to Brahman, you will become Brahman instantly.

शांत ब्रह्म शरीर होकर कर्म ब्रह्ममय करो | ब्रह्म अर्पण समाचार से ब्रह्म ही तुरंत हो जाओ ||

6.53.18

ईश्वरार्पितसर्वार्थ ईश्वरात्मा निरामयः । ईश्वरः सर्वभूतात्मा भव भूषितभूतलः ॥ १८ ॥

īśvarārpitasarvārtha īśvarātmā nirāmayaḥ | īśvaraḥ sarvabhūtātmā bhava bhūṣitabhūtalaḥ || 18 ||

With all actions offered to Ishvara, being the soul of Ishvara, free from disease, become Ishvara, the soul of all beings, adorned with the world.

सभी कार्य ईश्वर को अर्पित करके, ईश्वर की आत्मा होकर, रोगमुक्त होकर, ईश्वर, सभी प्राणियों की आत्मा, विश्व से अलंकृत होकर बनो |

6.53.19

संन्यस्तसर्वसंकल्पः समः शान्तमना मुनिः । संन्यासयोगयुक्तात्मा कुर्वन्मुक्तमतिर्भव ॥ १९ ॥

saṃnyastasarvasaṅkalpaḥ samaḥ śāntamanā muniḥ | saṃnyāsayogayuktātmā kurvanmuktamatirbhava || 19 ||

Abandoning all desires, being equanimous, with a peaceful mind, a sage, with a mind united in the yoga of renunciation, perform actions with a liberated mind.

सभी इच्छाओं को त्यागकर, समान भाव से, शांत मन से, मुनि, त्याग योग से जुड़े मन से, मुक्त मन से कर्म करो |

6.53.20

अर्जुन उवाच । सङ्गत्यागस्य भगवंस्तथा ब्रह्मार्पणस्य च । ईश्वरार्पणरूपस्य संन्यासस्य च सर्वशः ॥ २० ॥

arjuna uvāca | saṅgatyāgasya bhagavaṃstathā brahmārpaṇasya ca | īśvarārpaṇarūpasya saṃnyāsasya ca sarvaśaḥ || 20 ||

Arjuna said: O Lord, what is the difference between renunciation of attachment, offering to Brahman, offering to Ishvara, and complete renunciation?

अर्जुन ने कहा: हे भगवन्, आसक्ति के त्याग, ब्रह्म को अर्पण, ईश्वर को अर्पण, और पूर्ण त्याग में क्या अंतर है?

6.53.21

तथा ज्ञानस्य योगस्य विभागः कीदृशः प्रभो । क्रमेण कथयैतन्मे महामोहनिवृत्तये ॥ २१ ॥

tathā jñānasya yogasya vibhāgaḥ kīdṛśaḥ prabho | krameṇa kathayaitanme mahāmohanivṛttaye || 21 ||

O Lord, what is the nature of the division of knowledge and yoga? Please explain this to me in sequence for the removal of great delusion.

हे प्रभो, ज्ञान और योग का विभाजन कैसा है? कृपया मुझे क्रमशः यह बताएं ताकि महान मोह दूर हो सके।

6.53.22

श्रीभगवानुवाच । सर्वसंकल्पसंशान्तौ प्रशान्तघनवासनम् । न किंचिद्भावनाकारं यत्तद्ब्रह्म परं विदुः ॥ २२ ॥

śrībhagavānuvāca | sarvasaṃkalpasaṅśāntau praśāntaghanavāsanam | na kiṃcidbhāvanākāraṃ yattadbrahma paraṃ viduḥ || 22 ||

The Supreme Lord said: That which is the cessation of all desires, the tranquil and dense impression, devoid of any form of thought, is known as the supreme Brahman.

श्री भगवान ने कहा: जो सभी इच्छाओं का शान्त होना, शान्त और घनी वासना है, जिसमें कोई भावना का रूप नहीं है, वह परम ब्रह्म कहलाता है।

6.53.23

तदुद्योगं विदुर्ज्ञानं योगं च कृतबुद्धयः । ब्रह्म सर्वं जगदहं चेति ब्रह्मार्पणं विदुः ॥ २३ ॥

tadudyogaṃ vidurjñānaṃ yogaṃ ca kṛtabuddhayaḥ | brahma sarvaṃ jagadahaṃ ceti brahmārpaṇaṃ viduḥ || 23 ||

The wise know that the effort towards that (Brahman) is knowledge and yoga. They understand the offering of everything, including the world and the self, to Brahman.

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि उस (ब्रह्म) की ओर प्रयास ही ज्ञान और योग है। वे समझते हैं कि सब कुछ, जिसमें संसार और आत्मा शामिल है, ब्रह्म को अर्पित करना है।

6.53.24

अन्तःशून्यं बहिःशून्यं पाषाणहृदयोपमम् । शान्तमाकाशकोशाच्छं न दृश्यं न दृशः परम् ॥ २४ ॥

antaḥśūnyaṃ bahiḥśūnyaṃ pāṣaṇahṛdayopamam | śāntamākāśakośācchaṃ na dṛśyaṃ na dṛśaḥ param || 24 ||

That which is empty within and without, resembling a stone heart, tranquil like the clear sky, not visible, nor the seer, is the supreme.

जो अंदर और बाहर से खाली है, पत्थर के हृदय के समान, निर्मल आकाश की तरह शांत, न दिखाई देता है, न देखने वाला, वह परम है।

6.53.25

तत ईषद्यदुत्थानमीषदन्यतयोदितम् । स जगत्प्रतिभासोऽयमाकाशमिव शून्यता ॥ २५ ॥

tat īṣadyadutthānamīṣadanyatayoditam | sa jagatpratibhāso'yamākāśamiva śūnyatā || 25 ||

That slight arising, which is somewhat different, is this world's appearance, like the emptiness of space.

वह थोड़ा उदय, जो कुछ अलग है, यह संसार का प्रतिभास है, जैसे आकाश की शून्यता।

6.53.26

भावोऽहमिति कोऽप्येष प्रत्येकमुदितश्चितेः । कोटिकोट्यंशकलितः क इवैनं प्रति ग्रहः ॥ २६ ॥

bhāvo'hamiti ko'pyeṣa pratyekamuditaścciteḥ | koṭikoṭyaṃśakalitaḥ ka iva enaṃ prati grahaḥ || 26 ||

This 'I am' feeling arises in every individual consciousness, multiplied by millions of parts. Who can grasp it?

यह 'मैं हूँ' भाव हर व्यक्ति की चेतना में उत्पन्न होता है, करोड़ों अंशों में बँटा हुआ। कौन इसे समझ सकता है?

6.53.27

अपृथग्भूत एवैष पृथग्भूत इव स्थितः । पृथक्त्वं हि न पर्यन्तो नाहमित्यवगच्छति ॥ २७ ॥

apṛthagbhūta evaiṣa pṛthagbhūta iva sthitaḥ | pṛthaktvaṃ hi na paryanto nāhamityavagacchati || 27 ||

Though it is not separate, it appears as separate. Separateness does not reach the ultimate, it does not realize 'I am not'.

यद्यपि यह अलग नहीं है, फिर भी यह अलग प्रतीत होता है। अलगाव अंतिम तक नहीं पहुँचता, यह 'मैं नहीं हूँ' को समझता नहीं है।

6.53.28

यथेहाहं तथेहास्ति घटादीहापि मर्कटः । स्वमीहैवं तथाम्भोधिः किमहंतां प्रति ग्रहः ॥ २८ ॥

yathehāhaṃ tathehāsti ghaṭādīhāpi markaṭaḥ | svamīhevaṃ tathāmbhodhiḥ kimahantāṃ prati grahaḥ || 28 ||

Just as I am here, so is the monkey here with the pot, etc. Similarly, the ocean is here. What is the grasp of 'I-ness'?

जैसे मैं यहाँ हूँ, वैसे ही घड़ा और बंदर यहाँ हैं। इसी तरह, समुद्र यहाँ है। 'मैंपन' का क्या अर्थ है?

6.53.29

विकल्पभेदे स्फुरिते संवित्सारमयात्मनि । वैचित्र्येण विचित्रेपि किमेकत्वेऽपि नो ग्रहः ॥ २९ ॥

vikalpabhede sphurite saṃvitsāramayātmani | vaicitryeṇa vicitrepi kimekatve'pi no grahaḥ || 29 ||

When the diversity of thoughts arises in the essence of consciousness, even in the variety, why is there no grasp of oneness?

जब चेतना की सारतत्त्व में विचारों का भेद उभरता है, विविधता में भी, एकता का क्यों ग्रहण नहीं होता?

6.53.30

इति ज्ञातविभागस्य बुद्धौ तस्य परिक्षयः । कर्मणां यः फलत्यागस्तं संन्यासं विदुर्बुधाः ॥ ३० ॥

iti jñātavibhāgasya buddhau tasya parikṣayaḥ | karmaṇāṃ yaḥ phalatyāgastam saṃnyāsaṃ vidurbudhāḥ || 30 ||

Thus, for one who knows the distinctions, there is a decline in that intellect. The wise call the renunciation of the fruits of actions as 'sannyasa'.

इस प्रकार, जो भेद को जानता है, उसकी बुद्धि में क्षय होता है। बुद्धिमान लोग कर्मों के फलों का त्याग 'संन्यास' कहते हैं।

6.53.31

त्यागः संकल्पजालानामसंसङ्गः स कथ्यते । समस्तकलनाजालस्येश्वरत्वैकभावना ॥ ३१ ॥

tyāgaḥ saṃkalpajālānāmasaṃsaṅgaḥ sa kathyate | samastakalanājālasyeśvaratvaikabhāvanā || 31 ||

Renunciation is said to be the non-attachment to the network of desires | The contemplation of the oneness of the divine nature of the entire network of calculations

त्याग कहलाता है इच्छाओं के जाल से असंलग्नता | सम्पूर्ण गणना जाल के ईश्वरत्व की एकता का भावना

6.53.32

गलितद्वैतनिर्भासमेतदेवेश्वरार्पणम् । अबोधवशतो भेदो नाम्नैवैषां चिदात्मनि ॥ ३२ ॥

galitadvaitanirbhāsame tadeveśvarārpaṇam | abodhavaśato bhedo nāmnaivaiṣāṃ cidātmani || 32 ||

This very dissolution of duality is the offering to the Lord | Due to ignorance, the difference is only in name in the conscious self

यही द्वैत का विलयन ईश्वर को अर्पण है | अज्ञान के कारण, चेतन आत्मा में अंतर केवल नाम मात्र है

6.53.33

बोधात्मा किल शब्दार्थो जगदेकं न संशयः । अहमाशा जगदहं स्वमहं कर्म चाप्यहम् ॥ ३३ ॥

bodhātmā kila śabdārtho jagadekaṃ na saṃśayaḥ | ahamāśā jagadahaṃ svamahaṃ karma cāpyaham || 33 ||

The essence of the word is indeed the conscious self, the world is one, there is no doubt | I am hope, I am the world, I am myself, I am action, and I am also this

शब्द का अर्थ वास्तव में चेतन आत्मा है, जगत एक है, इसमें कोई संदेह नहीं | मैं आशा हूँ, मैं जगत हूँ, मैं स्वयं हूँ, मैं कर्म हूँ, और मैं यह भी हूँ

6.53.34

कालोऽहमहमद्वैतं द्वैतं चाहमहं जगत्। मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥ ३४ ॥

kālo'hamahamadvaitaṃ dvaitaṃ cāhamahaṃ jagat | manmanā bhava madbhakto madyājī māṃ namaskuru | māmeva eṣyasi yuktvai vamātmānaṃ matparāyaṇaḥ || 34 ||

I am time, I am non-duality, duality, and I am the world | Be devoted to me, be my devotee, worship me, bow to me | You will surely come to me, thus uniting your self with me

मैं काल हूँ, मैं अद्वैत हूँ, द्वैत हूँ, और मैं जगत हूँ | मेरा भक्त बनो, मेरा उपासक बनो, मुझे पूजो, मुझे प्रणाम करो | तुम निश्चित रूप से मेरे पास आओगे, इस प्रकार अपने आत्मा को मेरे साथ जोड़ते हुए

6.53.35

अर्जुन उवाच। द्वे रूपे तव देवेश परं चापरमेव च। कीदृशं तत्कदा रूपं तिष्ठाम्याश्रित्य सिद्धये ॥ ३५ ॥

arjuna uvāca | dve rūpe tava deveśa paraṃ cāparam eva ca | kīdṛśaṃ tat kadā rūpaṃ tiṣṭhāmyāśritya siddhaye || 35 ||

Arjuna said | O Lord, you have two forms, the supreme and the non-supreme | What kind of form is that, and when do I abide in it for perfection

अर्जुन ने कहा | हे देवेश, तुम्हारे दो रूप हैं, परम और अपरम | वह कैसा रूप है, और मैं उसमें कब सिद्धि के लिए निवास करता हूँ

6.53.36

श्रीभगवानुवाच। सामान्यं परमं चैव द्वे रूपे विद्धि मेऽनघ। पाण्यादियुक्तं सामान्यं शङ्खचक्रगदाधरम्॥ ३६ ॥

śrībhagavānuvāca | sāmānyaṃ paramaṃ caiva dve rūpe viddhi me'nagha | pāṇyādiyuktaṃ sāmānyaṃ śaṅkhacakragadādharam || 36 ||

The Supreme Lord said: O sinless one, know that I have two forms: the ordinary and the supreme. The ordinary form is endowed with attributes such as hands, and holds the conch, discus, and mace.

भगवान् ने कहा: हे निष्पाप, मेरे दो रूप हैं - सामान्य और परम | सामान्य रूप हाथों से युक्त है और शंख, चक्र और गदा धारण करता है |

6.53.37

परं रूपमनाद्यन्तं यन्ममैकमनामयम्। ब्रह्मात्मपरमात्मादिशब्देनैतदुदीर्यते ॥ ३७ ॥

paraṃ rūpamanādyantaṃ yanmamaikamanāmayam | brahmātmparamātmādiśabdenaitadudīryate || 37 ||

The supreme form is eternal and without beginning or end. It is my sole, flawless form, which is referred to by the terms Brahman, Atman, and Paramatman.

परम रूप अनादि और अनंत है, जो मेरा एकमात्र और निर्दोष रूप है, जिसे ब्रह्म, आत्मा और परमात्मा जैसे शब्दों से कहा जाता है |

6.53.38

यावदप्रतिबुद्धस्त्वमनात्मज्ञतया स्थितः। तावच्चतुर्भुजाकारदेवपूजापरो भव ॥ ३८ ॥

yāvadapratibuddhastvamanātmjñatayā sthitaḥ | tāvaccaturbhujākāradevapūjāparo bhava || 38 ||

As long as you are not fully awakened and remain in the state of ignorance about the self, you should engage in the worship of the deity with the four-armed form.

जब तक तुम पूर्ण रूप से जागृत नहीं हो और आत्मा के ज्ञान से रहित हो, तब तक तुम चार भुजाओं वाले देव की पूजा में लगे रहो |

6.53.39

तत्क्रमात्संप्रबुद्धस्त्वं ततो ज्ञास्यसि तत्परम्। मम रूपमनाद्यन्तं येन भूयो न जायते ॥ ३९ ॥

tatkramaatsaṃprabuddhastvaṃ tato jñāsyasi tatparam | mama rūpamanādyantaṃ yena bhūyo na jāyate || 39 ||

Gradually becoming fully awakened, you will then know that supreme form of mine, which is eternal and without beginning or end, by which one is not born again.

धीरे-धीरे पूर्ण जागृत होकर, तुम तब मेरे उस परम रूप को जानोगे, जो अनादि और अनंत है, जिससे फिर से जन्म नहीं लेता |

6.53.40

यदि वा वेद्यविज्ञातो भावस्तदरिमर्दन। तन्ममात्मानमात्मानमात्मनश्चाशु संश्रय ॥ ४० ॥

yadi vā vedyavijñāto bhāvastadarimardana | tanmamātmānamātmānamātmanaścāśu saṃśraya || 40 ||

O slayer of the enemy, if you understand this knowable reality, then quickly take refuge in my self, which is the self of all selves.

हे शत्रुघ्न, यदि तुम इस ज्ञेय वास्तविकता को समझो, तो शीघ्र ही मेरे उस आत्मा में शरण लो, जो सभी आत्माओं का आत्मा है |

6.53.41

इदं चाहमिदं चाहमिति यत्प्रवदाम्यहम्। तदेतदात्मतत्त्वं तु तुभ्यं ह्युपदिशाम्यहम् ॥ ४१ ॥

idaṃ cāhamidaṃ cāhamiti yatpravadāmyaham | tadetadātmatattvaṃ tu tubhyaṃ hyupadiśāmyaham || 41 ||

I declare that I am this and I am that; this is the truth of the Self that I impart to you.

मैं कहता हूँ कि मैं इस और उस हूँ; यह आत्मा का तत्त्व है जो मैं आपको बताता हूँ।

6.53.42

मन्ये साधुविबुद्धोसि पदे विश्रान्तवानसि। संकल्पैरवमुक्तोऽसि सत्यैकात्ममयो भव ॥ ४२ ॥

manye sādhuvibuddhosipade viśrāntavānasisaṃkalpairavamukto'si satyaikātmamayo bhava || 42 ||

I believe you are well-versed in goodness and have found rest in the supreme state. You are free from desires; become one with the truth of the Self.

मैं मानता हूँ कि आप सद्गुणों में पारंगत हैं और परम अवस्था में विश्राम पा चुके हैं। आप इच्छाओं से मुक्त हैं; आत्मा के सत्य से एक हो जाओ।

6.53.43

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि। पश्य त्वं योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ ४३ ॥

sarvabhūtasthamātmānaṃ sarvabhūtāni cātmani | paśya tvaṃ yogayuktātmā sarvatra samadarśanaḥ || 43 ||

See the Self in all beings and all beings in the Self. With a mind united in yoga, see the same everywhere.

सभी प्राणियों में आत्मा को देखो और आत्मा में सभी प्राणियों को देखो। योग में एकाग्र मन के साथ, सभी जगह समान देखो।

6.53.44

सर्वभूतस्थमात्मानं भजत्येकत्वमात्मनः। सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते ॥ ४४ ॥

sarvabhūtasthamātmānaṃ bhajatyekatvamātmanaḥ | sarvathā vartamāno'pi na sa bhūyo'bhijāyate || 44 ||

Worship the Self that is in all beings, realizing the oneness of the Self. Even while engaged in all activities, one does not become entangled again.

सभी प्राणियों में आत्मा की पूजा करो, आत्मा की एकता को समझते हुए। सभी गतिविधियों में लगे हुए भी, वह फिर से उलझन में नहीं आता।

6.53.46

त्रैलोक्यचेतसामन्तरालोको यः प्रकाशकः । अनुभूतिमुपारूढः सोऽहमात्मेति निश्चयः ॥ ४६ ॥

trailokyacetasāmantarāloko yaḥ prakāśakaḥ | anubhūtimupārūḍhaḥ so'hamātmāti niścayaḥ || 46 ||

The one who illuminates the inner worlds of the three realms is the Self. This is the firm conviction based on experience.

जो तीन लोकों के अंतर्मन को प्रकाशित करता है, वह आत्मा है। यह अनुभव पर आधारित दृढ़ निश्चय है।

6.53.47

त्रैलोक्यपयसामन्तर्यो रसानुभवः स्थितः । गव्यानामब्धिजानां च सोऽयमात्मेति भारत ॥ ४७ ॥

trailokyapayasāmantaryo rasānubhavaḥ sthitaḥ | gavyānāmabdhijānāṃ ca so'yamātmeti bhārata || 47 ||

The subtle essence of milk pervades the three worlds | This essence, found in the milk of cows and ocean-born creatures, is the self, O Bharata

तीनों लोकों के दूध का सूक्ष्म रस सब में व्याप्त है | गायों और समुद्र जनित प्राणियों के दूध में यही आत्मा है, हे भारत

6.53.48

अन्तः सर्वशरीराणां यः सूक्ष्मोनुभवः स्थितः । मुक्तोऽनुभवनीयेन सोऽयमात्मास्ति सर्वगः ॥ ४८ ॥

antaḥ sarvaśarīrāṇāṃ yaḥ sūkṣmonubhavaḥ sthitaḥ | mukto'nubhavanīyena so'yamātmāsti sarvagaḥ || 48 ||

The subtle experience that resides within all bodies is the self, which is free from the experience of the senses and is all-pervading.

सभी शरीरों के अन्दर जो सूक्ष्म अनुभव स्थित है, वह आत्मा है, जो इन्द्रियों के अनुभव से मुक्त है और सर्वव्यापी है।

6.53.49

समग्रपयसामन्तर्यथा घृतमिव स्थितम् । तथा सर्वपदार्थानां देहानां संस्थितः परः ॥ ४९ ॥

samagrpayasāmantaryathā ghṛtamiva sthitam | tathā sarvapadārthānāṃ dehānāṃ saṃsthitaḥ paraḥ || 49 ||

Just as ghee is present in the entire milk, similarly, the supreme self is present in all objects and bodies.

जैसे घी पूरे दूध में व्याप्त होता है, उसी प्रकार परम आत्मा सभी पदार्थों और शरीरों में स्थित है।

6.53.50

सर्वाम्भोनिधिरत्नानां सबाह्याभ्यन्तरे यथा । तेजस्तथास्मि देहानामसंस्थित इव स्थितः ॥ ५० ॥

sarvāmbhonidhiratnānāṃ sabāhyābhyantare yathā | tejastathāsmi dehānāmasaṃsthita iva sthitaḥ || 50 ||

Just as the essence of all gems is present both inside and outside the ocean, similarly, I am present in all bodies as if unattached.

जैसे समुद्र के सभी रत्नों का सार बाहर और अन्दर दोनों में व्याप्त होता है, उसी प्रकार मैं सभी शरीरों में अनासक्त की तरह स्थित हूँ।

6.53.51

यथा कुम्भसहस्राणां सबाह्याभ्यन्तरे नभः । जगत्त्रयशरीराणां तथात्माहमवस्थितः ॥ ५१ ॥

yathā kumbhasahasrāṇāṃ sabāhyābhyantare nabhaḥ | jagattrayśarīrāṇāṃ tathātmāhamavasthitaḥ || 51 ||

Just as the sky is present both inside and outside thousands of pots, similarly, I am present in the bodies of the three worlds.

जैसे आकाश हजारों घड़ों के अन्दर और बाहर दोनों में व्याप्त होता है, उसी प्रकार मैं तीनों लोकों के शरीरों में स्थित हूँ।

6.53.52

मुक्ताफलशतौघानां तन्तुः प्रोतवपुर्यथा । तथायं देहलक्षाणां स्थित आत्मास्त्यलक्षितः ॥ ५२ ॥

muktāphalaśataughānāṃ tantuḥ protavapuryathā | tathāyaṃ dehalakṣāṇāṃ sthita ātmāstyalakṣitaḥ || 52 ||

Just as a thread runs through a string of pearls, so the imperceptible Atman pervades all bodies.

जैसे मोतियों की माला में धागा फँसा होता है, वैसे ही अलक्षित आत्मा सभी शरीरों में व्याप्त है।

6.53.53

ब्रह्मादौ तृणपर्यन्ते पदार्थनिकुरम्बके । सत्तासामान्यमेतद्यत्तमात्मानमजं विदुः ॥ ५३ ॥

brahmādau tṛṇaparyante padārthanikurambeke | sattāsāmānyametadyattamātmānamajaṃ viduḥ || 53 ||

From Brahma down to a blade of grass, in the entire collection of objects, the common essence is that which is known as the unborn Atman.

ब्रह्मा से लेकर एक तिनके तक, सभी वस्तुओं के समूह में, सामान्य सत्ता वह है जिसे अजन्मा आत्मा कहा जाता है।

6.53.54

तदीषत्स्फुरिताकारं ब्रह्म ब्रह्मैव तिष्ठति । अहन्तादि जगत्तादि क्रमेण भ्रमकारिणा ॥ ५४ ॥

tadīṣatsphuritākāraṃ brahma brahmaiva tiṣṭhati | ahaṃtādi jagattādi krameṇa bhramakāriṇā || 54 ||

That Brahman, which is slightly manifested, remains as Brahman itself. The ego and the world, in sequence, are the causes of delusion.

वह ब्रह्म, जो थोड़ा प्रकट है, ब्रह्म ही रहता है। अहंकार और संसार, क्रमशः, भ्रम के कारण हैं।

6.53.55

आत्मैवेदं जगद्रूपं हन्यते हन्ति वात्र किम् । शुभाशुभैर्जगद्दुःखैः किमस्यार्जुन लिप्यते ॥ ५५ ॥

ātmaivedaṃ jagadrūpaṃ hanyate hanti vātra kim | śubhāśubhairjagaddhuḥkhaiḥ kimasyārjuna lipyate || 55 ||

This world, which is the form of the Atman, is neither slain nor slays. How can it be affected by the world's joys and sorrows, O Arjuna?

यह संसार, जो आत्मा का रूप है, न मारा जाता है न मारता है। हे अर्जुन, यह संसार के सुख-दुःखों से कैसे प्रभावित हो सकता है?

6.53.56

प्रतिबिम्बेष्विवादर्शसमं साक्षिवदास्थितम् । नश्यत्सु न विनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥ ५६ ॥

pratibimbeṣvivaādarśasamaṃ sākṣivadāsthitam | naśyatsu na vinaśyantaṃ yaḥ paśyati sa paśyati || 56 ||

One who sees the Atman, which is like a reflection in a mirror, witnessing everything, and remains unchanged even when the reflections perish, truly sees.

जो आत्मा को देखता है, जो दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह है, सब कुछ देखता है, और चाहे प्रतिबिम्ब नष्ट हो जाएं, अपरिवर्तित रहता है, वही सच्चाई से देखता है।

6.53.57

इदं चाहमिदं नेति इतीदं कथ्यते मया । एवमात्मास्मि सर्वात्मा मामेवं विद्धि पाण्डव ॥ ५७ ॥

idaṃ cāhamidaṃ neti itīdaṃ kathyate mayā | evamātmāsmi sarvātmā māmevaṃ viddhi pāṇḍava || 57 ||

I am this and I am not this—thus I am described. Know Me thus, O Pandava, as the Self in all beings.

मैं यह हूँ और मैं यह नहीं हूँ—इस प्रकार मैं वर्णित हूँ। हे पाण्डव, मुझे इस प्रकार जानो, जैसे सभी प्राणियों में आत्मा हूँ।

6.53.58

इमाः सर्वाः प्रवर्तन्ते सर्गप्रलयविक्रियाः । आत्मन्यहंताचित्तस्थाः पयःस्पन्दा इवाम्बुधौ ॥ ५८ ॥

imāḥ sarvāḥ pravartante sargapralayavikriyāḥ | ātmanyahaṃtācittasthāḥ payaḥspandā ivāmbudhau || 58 ||

All these activities of creation, dissolution, and maintenance are set in motion by Me, as if spontaneously, like the movements of water in the ocean.

ये सभी सृष्टि, प्रलय और पालन की गतिविधियाँ मेरे द्वारा स्वतः ही प्रेरित होती हैं, जैसे सागर में जल की लहरें।

6.53.59

यथोपलत्वं शैलानां दारुत्वं च महीरुहाम् । तरङ्गाणां जलत्वं च पदार्थानां तथात्मता ॥ ५९ ॥

yathopalatvaṃ śailānāṃ dārutvaṃ ca mahīruhām | taraṅgāṇāṃ jalatvaṃ ca padārthānāṃ tathātmatā || 59 ||

Just as the nature of stones is to be stones, the nature of trees is to be trees, and the nature of waves is to be water, so is the nature of all things to be the Self.

जैसे पत्थरों का स्वभाव पत्थर होना है, पेड़ों का स्वभाव पेड़ होना है, और लहरों का स्वभाव पानी होना है, वैसे ही सभी चीजों का स्वभाव आत्मा होना है।

6.53.60

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि । यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति ॥ ६० ॥

sarvabhūtasthamātmānaṃ sarvabhūtāni cātmani | yaḥ paśyati tathātmānamakartāraṃ sa paśyati || 60 ||

One who sees the Self in all beings and all beings in the Self, and sees the Self as the non-doer, truly sees.

जो सभी प्राणियों में आत्मा को देखता है और आत्मा में सभी प्राणियों को देखता है, और आत्मा को कर्ता नहीं देखता, वह सचमुच देखता है।

6.53.61

नानाकारविकारेषु तरङ्गेषु यथा पयः । कटकादिषु वा हेम भूतेष्वात्मा तथाऽर्जुन ॥ ६१ ॥

nānākāravikāreṣu taraṅgeṣu yathā payaḥ | kaṭakādiṣu vā hema bhūteṣvātmā tathā'rjuna || 61 ||

Just as water is present in various forms like waves, and gold is present in various ornaments, so is the Self present in all beings, O Arjuna.

जैसे पानी विभिन्न रूपों में लहरों के रूप में विद्यमान है, और सोना विभिन्न आभूषणों में विद्यमान है, वैसे ही आत्मा सभी प्राणियों में विद्यमान है, हे अर्जुन।

6.53.62

नानातरङ्गवृन्दानि यथा लोलानि वारिणि । कटकादीनि वा हेम्नि भूतान्येवं परात्मनि ॥ ६२ ॥

nānātaraṅgavṛndāni yathā lolāni vāriṇi | kaṭakādīni vā hemni bhūtānyevaṃ parātmani || 62 ||

Just as various waves arise in water and various ornaments in gold, all beings arise in the Supreme Self.

जैसे पानी में विभिन्न लहरें और सोने में विभिन्न आभूषण उत्पन्न होते हैं, वैसे ही सभी जीव परमात्मा में उत्पन्न होते हैं।

6.53.63

पदार्थजातं भूतानि बृहद्ब्रह्म च भारत । एकमेवाखिलं विद्धि पृथक्त्वं न मनागपि ॥ ६३ ॥

padārthajātaṃ bhūtāni bṛhadbrahma ca bhārata | ekamevākhilaṃ viddhi pṛthaktvaṃ na manāgapi || 63 ||

O Bharata, know that all beings and the vast Brahman are one and the same. There is no separation whatsoever.

हे भारत, जान लो कि सभी जीव और विशाल ब्रह्म एक ही हैं। कोई भी अलगाव नहीं है।

6.53.64

किं तद्भावविकाराणां गम्यमस्ति जगत्त्रये। क्व ते वापि जगत्किं वा किं मुधा परिमुह्यसि॥ ६४॥

kiṃ tadbhāvavikārāṇāṃ gamyamasti jagattraye | kva te vāpi jagatkiṃ vā kiṃ mudhā parimuhyasi || 64 ||

What is the goal of these transformations in the three worlds? Where are these worlds? What is this world? Why are you confused?

इन तीनों लोकों में इन परिवर्तनों का क्या लक्ष्य है? ये लोक कहाँ हैं? यह लोक क्या है? तुम क्यों भ्रमित हो?

6.53.65

इति श्रुत्वाऽभयं त्वन्तर्भावयित्वा सुनिश्चितम्। जीवन्मुक्ताश्चरन्तीह सन्तः समरसाशयाः॥ ६५॥

iti śrutvā'bhayaṃ tvantarbhāvayitvā suniścitam | jīvanmuktāścarantīha santaḥ samarasāśayāḥ || 65 ||

Hearing this and firmly establishing fearlessness within, the liberated ones move in this world with equanimity.

यह सुनकर और निश्चित रूप से अंदर निर्भयता स्थापित करके, मुक्त लोग इस दुनिया में समता के साथ चलते हैं।

6.53.66

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः। द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसञ्ज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्॥ ६६॥

nirmānamohā jitasangadoṣā adhyātmanityā vinivṛttakāmāḥ | dvandvairvimuktāḥ sukhaduḥkhasajñairgacchantyamūḍhāḥ padamavyayaṃ tat || 66 ||

Free from pride and delusion, having conquered the faults of attachment, ever devoted to the Self, free from desires, liberated from the dualities of pleasure and pain, the wise attain the imperishable state.

अहंकार और भ्रम से मुक्त, आसक्ति के दोषों को जीतकर, सदा आत्मा में स्थित, इच्छाओं से मुक्त, सुख-दुःख की द्वंद्वात्मकता से मुक्त होकर, बुद्धिमान लोग अविनाशी पद को प्राप्त होते हैं।

Chapter 54

6.54.1

श्रीभगवानुवाच । भूय एव महाबाहो श्रृणु मे परमं वचः । यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया ॥ १ ॥

śrībhagavānuvāca | bhūya eva mahābāho śṛṇu me paramaṃ vacaḥ | yatte'haṃ prīyamāṇāya vakṣyāmi hitakāmyayā || 1 ||

The Blessed Lord said: Again, O mighty-armed Arjuna, listen to My supreme word, which I shall speak to you, who are beloved, for your benefit.

श्री भगवान ने कहा: हे महाबाहो अर्जुन, फिर से मेरे परम वचन को सुनो, जो मैं तुम्हारे हित के लिए तुमसे कहूंगा।

6.54.2

मात्रास्पर्शा हि कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः । आगमापायिनो नित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥ २ ॥

mātrāsparśā hi kaunteya śītoṣṇasukhaduḥkhadāḥ | āgamāpāyino nityāstāṃstitikṣasva bhārata || 2 ||

O son of Kunti, the non-permanent appearance of happiness and distress, and their disappearance in due course, are like the appearance and disappearance of winter and summer seasons. They arise from sense perception, O scion of Bharata, and one must learn to tolerate them without being disturbed.

हे कुंतीपुत्र, सुख-दुःख का आना-जाना ऋतुओं के समान है, जो आती-जाती रहती हैं। ये इंद्रियों के स्पर्श से उत्पन्न होते हैं, हे भारतवंशी, इन्हें सहन करना चाहिए।

6.54.3

ते तु नैकात्मनश्चान्ये क्वाऽतो दुःखं क्व वा सुखम् । अनाद्यन्तेऽनवयवे कुतः पूरणखण्डने ॥ ३ ॥

te tu naikātmanaścānye kvā'to duḥkhaṃ kva vā sukham | anādyante'navayave kutaḥ pūraṇakhaṇḍane || 3 ||

O son of Pritha, the contact between the senses and the sense objects gives rise to cold and heat, pleasure and pain. They come and go, being temporary. One must endure them, for they are born of desire.

हे पृथापुत्र, इंद्रियों और इंद्रियों के विषयों का संपर्क ठंड और गर्मी, सुख और दुःख उत्पन्न करता है। ये आते-जाते रहते हैं, अस्थायी हैं। इन्हें सहन करना चाहिए, क्योंकि ये इच्छा से उत्पन्न होते हैं।

6.54.4

संस्थिता स्पर्शमात्राख्या मात्रास्पर्शभ्रमात्मकः । समदुःखसुखो धीरः सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥ ४ ॥

saṃsthitā sparśamātrākhyā mātrāsparśabhramātmakaḥ | samaduḥkhasukho dhīraḥ so'mṛtatvāya kalpate || 4 ||

Those who are steadfast in their determination for self-realization can endure such fleeting perceptions and remain undisturbed, for they are free from illusion. They are eligible for liberation.

जो आत्म-ज्ञान के लिए दृढ़ संकल्प रखते हैं, वे ऐसी चंचल अनुभूतियों को सहन कर सकते हैं और विचलित नहीं होते, क्योंकि वे भ्रम से मुक्त हैं। वे मुक्ति के योग्य हैं।

6.54.5

सर्वत्वादात्मनश्चैते सुभेदाः संस्थिता इव । असद्रूपास्त्वसद्रूपं कथं सोढुं न शक्यते ॥ ५ ॥

sarvatvādātmanaścaita subhedāḥ saṃsthitā iva | asadrūpāstvasadrūpaṃ kathaṃ soḍhuṃ na śakyate || 5 ||

The embodied soul is the cause of the experiences of the material body. Therefore, O Arjuna, you should not be disturbed by the dualities of pleasure and pain, which are like dreams.

आत्मा ही शरीर की अनुभूतियों का कारण है। इसलिए, हे अर्जुन, तुम्हें सुख-दुःख की द्वैत अनुभूतियों से, जो स्वप्न के समान हैं, विचलित नहीं होना चाहिए।

6.54.6

मनागपि न विद्यन्ते सुखदुःखे तु सर्वशः । सर्वत्वादात्मतत्त्वस्य सत्ता कथमनात्मनः ॥ ६ ॥

manāgapi na vidyante sukhaduḥkhe tu sarvaśaḥ | sarvatvādātmatattvasya sattā kathamanātmanaḥ || 6 ||

Even in the mind, happiness and sorrow do not exist at all. How can there be existence of the non-self when the true nature of the self is omnipresent?

मन में भी सुख-दुःख कहीं नहीं होते | आत्मतत्त्व की सर्वव्यापकता के कारण अनात्म की सत्ता कैसे हो सकती है?

6.54.7

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः । नास्त्येव सुखदुःखादि परमात्मास्ति सर्वगः ॥ ७ ॥

nāsato vidyate bhāvo nābhāvo vidyate sataḥ | nāstyeva sukhaduḥkhādi paramātmāsti sarvagaḥ || 7 ||

There is no existence of the non-existent, nor is there non-existence of the existent. Indeed, there is no such thing as happiness and sorrow; the Supreme Self is omnipresent.

असत की कोई सत्ता नहीं है, न ही सत की कोई असत्ता है | वास्तव में, सुख-दुःख जैसा कुछ नहीं है; परमात्मा सर्वव्यापी है |

6.54.8

सत्त्वासत्त्वमती त्यक्त्वा चैतयोर्जगदात्मनोः । त्यक्त्वा न किंचिन्मध्ये च शेषे बद्धपदो भव ॥ ८ ॥

sattvāsattvamatī tyaktvā caitayorjagadātmanoḥ | tyaktvā na kiñcinmadhye ca śeṣe baddhapado bhava || 8 ||

Abandoning the concepts of existence and non-existence of the world and the self, and abandoning everything in between, remain in the bound state.

संसार और आत्मा की सत्ता और असत्ता की अवधारणाओं को त्यागकर, और बीच में सब कुछ त्यागकर, बंधन में रहो |

6.54.9

न हृष्यति सुखैरात्मा दुःखैर्ग्लायति नोऽर्जुन । दृश्यदृक्केतनात्मापि शरीरान्तर्गतोऽपि सन् ॥ ९ ॥

na hṛṣyati sukhairātmā duḥkhairglāyati no'rjuna | dṛśyadṛkvetanātmāpi śarīrāntargato'pi san || 9 ||

The self does not rejoice in happiness nor laments in sorrow, O Arjuna. Even though it is within the body, it remains the seer of the seen, the self.

आत्मा सुख में प्रसन्न नहीं होता और दुःख में शोक नहीं करता, हे अर्जुन | यद्यपि यह शरीर के अंदर है, फिर भी यह दृश्य का द्रष्टा, आत्मा ही है |

6.54.10

जडं चित्तादि दुःखस्य भाजनं देहतां गतम् । न चैतस्मिन्क्षते क्षीणे किंचिदेवात्मनः क्षतम् ॥ १० ॥

jaḍaṃ cittādi duḥkhasya bhājanaṃ dehatāṃ gatam | na caitasmin kṣate kṣīṇe kiñcidevātmanaḥ kṣatam || 10 ||

The inert mind and other faculties are the receptacles of sorrow, having taken the form of the body. When these are destroyed, nothing of the self is harmed.

जड़ मन और अन्य इंद्रियाँ दुःख के भाजन हैं, जो शरीर का रूप धारण कर लेते हैं | जब ये नष्ट हो जाते हैं, तब आत्मा का कुछ भी नुकसान नहीं होता |

6.54.11

जडं देहादि दुःखादेर्यदिदं भोक्तृसंस्थितम्। तन्मायाभ्रममेवाङ्ग विद्ध्यबोधवशोत्थितम्॥ ११॥

jaḍaṃ dehādi duḥkhāderyadidaṃ bhoktṛsaṃsthitam | tanmāyābhramamevāṅga viddhyabodhavaśotthitam || 11 ||

The inert body and other objects, as well as the sorrows and other experiences, are perceived by the experiencer. Know that all these are merely illusions arising from ignorance.

जड़ देह और अन्य चीजें, साथ ही दुःख और अन्य अनुभव भोक्ता द्वारा अनुभव किए जाते हैं। जान लो कि ये सभी अज्ञान से उत्पन्न माया के भ्रम मात्र हैं।

6.54.12

न किंचिदेव देहादि न च दुःखादि विद्यते। आत्मनो यत्पृथग्भूतं किं केनातोऽनुभूयते॥ १२॥

na kiṃcideva dehādi na ca duḥkhādi vidyate | ātmano yatpṛthagbhūtaṃ kiṃ kenāto'nubhūyate || 12 ||

There is nothing such as the body and other objects, nor is there any sorrow or other experiences. What is separate from the Self, by whom and how is it experienced?

देह और अन्य वस्तुएं और दुःख और अन्य अनुभव कुछ भी नहीं हैं। आत्मा से अलग जो है, उसे किसने और कैसे अनुभव किया है?

6.54.13

यदिदं कथयाम्यत्र तेनैवातो विनश्यति। भ्रान्तिर्दुःखमबोधोत्था सम्यग्बोधेन भारत॥ १३॥

yadidaṃ kathayāmyatra tenaivāto vinaśyati | bhrāntirduḥkhamabodhothā samyagbodhena bhārata || 13 ||

Whatever I am saying here, by that very knowledge, the illusion of sorrow arising from ignorance is destroyed. O Bharata, through right knowledge, the delusion of sorrow is dispelled.

जो कुछ मैं यहां कह रहा हूँ, उसी ज्ञान से अज्ञान से उत्पन्न दुःख का भ्रम नष्ट हो जाता है। हे भारत, सही ज्ञान से दुःख का भ्रम दूर हो जाता है।

6.54.14

यथा रज्ज्वामहिभयं बोधान्नश्यत्यबोधजम्। तथा देहादिदुःखादि बोधान्नश्यत्यबोधजम्॥ १४॥

yathā rajjvāmahibhayaṃ bodhānnaśyatyabodhajam | tathā dehādiduḥkhādi bodhānnaśyatyabodhajam || 14 ||

Just as the fear of a snake arising from the misperception of a rope is dispelled by right knowledge, so too the misperception of the body and other objects, as well as sorrow and other experiences, is dispelled by right knowledge.

जैसे रस्सी को साँप समझने से उत्पन्न भय सही ज्ञान से दूर हो जाता है, उसी प्रकार देह और अन्य वस्तुओं, साथ ही दुःख और अन्य अनुभवों का भ्रम सही ज्ञान से दूर हो जाता है।

6.54.15

विष्वग्विश्वमजं ब्रह्म न नश्यति न जायते। इति सत्यं परं विद्धि बोधः परम एष सः॥ १५॥

viṣvagviśvamajaṃ brahma na naśyati na jāyate | iti satyaṃ paraṃ viddhi bodhaḥ parama eṣa saḥ || 15 ||

The all-pervading, eternal Brahman neither perishes nor is born. Know this to be the supreme truth. This knowledge is the ultimate.

सर्वव्यापी, अजन्मा ब्रह्म न नष्ट होता है न जन्म लेता है। यह परम सत्य है, जान लो। यह ज्ञान सर्वोच्च है।

6.54.16

ब्रह्माम्बुधौ तरङ्गत्वं किंचिद्भूत्वा विलीयते । ब्रह्मावर्ते स्फुरस्यद्य ब्रह्मैवासि निरामयम् ॥ १६ ॥

brahmāmbudhau taraṅgatvaṃ kiṃcidbhūtvā vilīyate | brahmāvarte sphurasya dyabrahmaivāsi nirāmayam || 16 ||

In the ocean of Brahman, the wave-like individual self merges and becomes one with Brahman, which is free from all impurities.

ब्रह्म के समुद्र में, तरंग के समान व्यक्तिगत आत्मा विलीन हो जाता है और ब्रह्म के समान हो जाता है, जो सभी दोषों से मुक्त है।

6.54.17

यावत्कालक्रियादेशास्त्वमहंसैनिका इव । ब्रह्मणीव परिस्पन्दा नात्र स्तः सदसद्भ्रमौ ॥ १७ ॥

yāvatkālakriyādeśāstvamahaṃsainikā iva | brahmaṇīva parispandā nātra staḥ sadasadbhramau || 17 ||

As long as there are time, action, and place, you and I are like soldiers. Like Brahman, there is no confusion of reality and unreality here.

जब तक समय, क्रिया और स्थान हैं, तुम और मैं सैनिकों के समान हैं। ब्रह्म की तरह, यहाँ वास्तविकता और अवास्तविकता का कोई भ्रम नहीं है।

6.54.18

जहि मानं मदं शोकं भयमीहां सुखासुखे । द्वैतमेतदसद्रूपमेकः सद्रूपवान्भव ॥ १८ ॥

jahi mānaṃ madaṃ śokaṃ bhayamīhāṃ sukhāsukhe | dvaitametadasadrūpamekaḥ sadrūpavānbhava || 18 ||

Abandon pride, arrogance, sorrow, fear, and the desire for pleasure and pain. This duality is unreal; become one with the true nature of Brahman.

गर्व, अहंकार, दुःख, भय, और सुख-दुःख की इच्छा को त्याग दो। यह द्वैत अवास्तविक है; ब्रह्म के सच्चे स्वरूप के साथ एक हो जाओ।

6.54.19

पुरुषाक्षौहिणीनां च क्षयेणानुभवात्मना । ब्रह्मणा बृहितं शुद्धं ब्रह्म ब्रह्ममयं कुरु ॥ १९ ॥

puruṣākṣauhiṇīnāṃ ca kṣayeṇānubhavātmanā | brahmaṇā bṛhitaṃ śuddhaṃ brahma brahmamayaṃ kuru || 19 ||

With the destruction of the multitude of individual selves, experience the expansive and pure Brahman. Make everything Brahman.

व्यक्तिगत आत्माओं की बहुता के विनाश के साथ, विशाल और शुद्ध ब्रह्म का अनुभव करो। सब कुछ ब्रह्म बनाओ।

6.54.20

असंविदन्सुखं दुःखं लाभालाभौ जयाजयौ । शुद्धं ब्रह्मैकतां गच्छ ब्रह्माब्धिस्त्वं हि भारत ॥ २० ॥

asaṃvidasukhaṃ duḥkhaṃ lābhālābhau jayājayau | śuddhaṃ brahmaikatāṃ gaccha brahmābdhistvaṃ hi bhārata || 20 ||

Without distinguishing between pleasure and pain, gain and loss, victory and defeat, attain the pure unity of Brahman. You are indeed the ocean of Brahman, O Bharata.

सुख-दुःख, लाभ-हानि, विजय-पराजय के भेद किए बिना, शुद्ध ब्रह्म की एकता प्राप्त करो। तुम वास्तव में ब्रह्म के समुद्र हो, हे भारत।

6.54.21

लाभालाभसमो भूत्वा भूत्वा नूनं न किंचन । खण्डवात इवास्पन्दी प्रकृतं कार्यमाचर ॥ २१ ॥

lābhālābhasamo bhūtvā bhūtvā nūnaṃ na kiṃcana | khaṇḍavāta ivāspandī prakṛtaṃ kāryamācara || 21 ||

Being indifferent to gain and loss, perform your duty with equanimity, like a flickering lamp in a windless place.

लाभ और हानि को समान समझकर, निष्काम भाव से अपना कर्तव्य निभाओ, जैसे हवा न होने पर दीपक की लौ स्थिर होती है।

6.54.22

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्। यत्करिष्यसि कौन्तेय तदात्मेति स्थिरो भव॥ २२॥

yatkaroṣi yadaśnāsi yajjuhosi dadāsi yat | yatkariṣyasi kaunteya tadātmeti sthiro bhava || 22 ||

Whatever you do, whatever you eat, whatever you offer, whatever you give, whatever you will do, O Arjuna, do it as an offering to the Self, be steadfast.

जो कुछ भी तुम करते हो, जो कुछ भी खाते हो, जो कुछ भी अर्पण करते हो, जो कुछ भी दान करते हो, जो कुछ भी करोगे, हे अर्जुन, उसे आत्मा को अर्पण करके करो, स्थिर रहो।

6.54.23

यन्मयो यो भवत्यन्तः स तदाप्नोत्यसंशयम्। ब्रह्मसत्यमवाप्तुं त्वं ब्रह्मसत्यमयो भव॥ २३॥

yanmayo yo bhavatyantaḥ sa tadāpnotyasaṃśayam | brahmasatyamavāptuṃ tvaṃ brahmasatyamayo bhava || 23 ||

Whatever one meditates upon with a pure mind, that one attains without doubt. To attain the truth of Brahman, become one with the truth of Brahman.

जिस पर कोई शुद्ध मन से ध्यान करता है, उसे वह निश्चित रूप से प्राप्त करता है। ब्रह्म की सत्यता को प्राप्त करने के लिए, ब्रह्म की सत्यता से एक हो जाओ।

6.54.24

अनपेक्षफलं ब्रह्म भूत्वा ब्रह्मेति भावितम्। क्रियते केवलं कर्म ब्रह्मज्ञेन यथागतम्॥ २४॥

anapekṣaphalaṃ brahma bhūtvā brahmeti bhāvitam | kriyate kevalaṃ karma brahmajñena yathāgatam || 24 ||

Becoming one with Brahman, without expectation of results, the knower of Brahman performs actions as they come.

ब्रह्म के साथ एक होकर, फल की अपेक्षा किए बिना, ब्रह्मज्ञानी जैसे कर्म आते हैं वैसे ही कर्म करता है।

6.54.25

कर्मण्यकर्म यः पश्यत्यकर्मणि च कर्म यः। स बुद्धिमान्मनुष्येषु स चोक्तः कृत्स्नकर्मकृत्॥ २५॥

karmaṇyakarma yaḥ paśyatyakarmaṇi ca karma yaḥ | sa buddhimānmanuṣyeṣu sa coktaḥ kṛtsnakarmakṛt || 25 ||

One who sees inaction in action and action in inaction is wise among humans and is said to be a performer of all actions.

जो कर्म में अकर्म और अकर्म में कर्म देखता है, वह मनुष्यों में बुद्धिमान है और सभी कर्मों का कर्ता कहलाता है।

6.54.26

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि। योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय॥ २६॥

mā karmaphalaheturbhūrmā te saṅgo'stvakarmaṇi | yogasthaḥ kuru karmāṇi saṅgaṃ tyaktvā dhanaṃjaya || 26 ||

You have the right to work, but never to the fruit of work. You should never engage in action for the sake of reward, nor should you long for inaction.

तुम्हारा कर्म करने का अधिकार है, परन्तु कर्मफल का नहीं। तुम कभी भी पुरस्कार के लिए कार्य में लगे नहीं रहना चाहिए, न ही अकर्मण्यता की इच्छा करनी चाहिए।

6.54.27

कर्मासक्तिमनाश्रित्य तथा नाश्रित्य मूढताम्। नैष्कर्म्यमप्यनाश्रित्य समस्तिष्ठ यथास्थितम्॥ २७॥

karmāsaktim anāśritya tathā nāśritya mūḍhatām | naiṣkarmyam apy anāśritya samastiṣṭha yathāsthitam || 27 ||

Perform your duty calmly, abandoning all attachment to success or failure. Such evenness of mind is called yoga.

अपना कर्तव्य शांति से करो, सफलता या असफलता की आसक्ति को छोड़कर। ऐसा मन का समत्व ही योग कहलाता है।

6.54.28

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः। कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किंचित्करोति सः॥ २८॥

tyaktvā karmaphalāsaṅgaṃ nityatṛpto nirāśrayaḥ | karmaṇyabhipravṛtto'pi naiva kiṃcit karoti saḥ || 28 ||

Abandoning attachment to the fruits of action, ever content, and without dependence, even while engaged in action, he does not do anything at all.

कर्म के फल से आसक्ति छोड़कर, सदा संतुष्ट और निर्भरता से मुक्त, कर्म में लगे हुए भी वह कुछ भी नहीं करता।

6.54.29

आसक्तिमाहुः कर्तृत्वमकर्तुरपि तद्भवेत्। मौर्ख्ये स्थिते हि मनसि तस्मान्मौर्ख्यं परित्यजेत्॥ २९॥

āsaktimāhuḥ kartṛtvam akartur api tad bhavet | maurkhye sthite hi manasi tasmān maurkhyam parityajet || 29 ||

Attachment is said to be the cause of doership, even for the non-doer. When the mind is attached to foolishness, one should abandon that foolishness.

आसक्ति कही जाती है कर्तृत्व की वजह, चाहे वह कर्ता न हो। जब मन मूर्खता में लगा हो, तो उस मूर्खता को छोड़ देना चाहिए।

6.54.30

परं तत्त्वज्ञमाश्रित्य निरासक्तेर्महात्मनः। सर्वकर्मरतस्यापि कर्तृतोदेति न क्वचित्॥ ३०॥

paraṃ tattvajñam āśritya nirāsakter mahātmanaḥ | sarvakarma ratasyāpi kartṛtva udeti na kvacit || 30 ||

By taking refuge in the supreme knower of truth, who is free from attachment, even one who is engaged in all kinds of actions does not incur doership anywhere.

सत्य के ज्ञाता परम का आश्रय लेकर, जो आसक्ति से मुक्त है, उसके द्वारा सभी प्रकार के कर्मों में लगे हुए व्यक्ति को भी कहीं भी कर्तृत्व नहीं प्राप्त होता।

6.54.31

अकर्तृत्वादभोक्तृत्वमभोक्तृत्वात्समैकता। समैकत्वादनन्तत्वं ततो ब्रह्मत्वमाततम्॥ ३१॥

akartṛtvādabhoktṛtvamabhoktṛtvātsamaikatā | samaikatvādanantatvaṃ tato brahmatvamātatam || 31 ||

From non-doership comes non-enjoyership; from non-enjoyership comes equality; from equality comes infinitude; from infinitude comes the state of Brahman.

अकर्तृत्व से अभोक्तृत्व आता है, अभोक्तृत्व से समता आती है, समता से अनन्तता आती है, और अनन्तता से ब्रह्मत्व आता है।

6.54.32

नानातामलमुत्सृज्य परमात्मैकतां गतः। कुर्वन्कार्यमकार्यं च नैव कर्ता त्वमर्जुन॥ ३२॥

nānātāmalamutsṛjya paramātmaikatāṃ gataḥ | kurvankāryamakāryaṃ ca naiva kartā tvamarjuna || 32 ||

Having abandoned the impurity of diversity, attaining the unity of the Supreme Self, performing actions and non-actions, you are not the doer, O Arjuna.

विविधता की मलिनता को त्यागकर, परमात्मा की एकता को प्राप्त कर, कर्म और अकर्म करते हुए, तुम कर्ता नहीं हो, हे अर्जुन।

6.54.33

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः। ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः॥ ३३॥

yasya sarve samārambhāḥ kāmasaṃkalpavarjitāḥ | jñānāgnidagdhakarmāṇaṃ tamāhuḥ paṇḍitaṃ budhāḥ || 33 ||

One whose all endeavors are free from desire and resolution, whose actions are burned by the fire of knowledge, is called a wise person by the wise.

जिसके सभी प्रयास इच्छा और संकल्प से रहित हैं, जिसके कर्म ज्ञान की अग्नि से दग्ध हैं, उसे बुद्धिमान लोग पंडित कहते हैं।

6.54.34

समः सौम्यः स्थिरः स्वस्थः शान्तः सवार्थनिस्पृहः। यस्तिष्ठति स सव्यग्रोऽप्यलमव्यग्रतां गतः॥ ३४॥

samaḥ saumyaḥ sthiraḥ svasthaḥ śāntaḥ savārthanispṛhaḥ | yastiṣṭhati sa savyagro'pyalamavyagratāṃ gataḥ || 34 ||

One who is equanimous, gentle, steady, content, peaceful, and free from desire for personal gain, who remains steadfast, even though engaged in activities, has attained freedom from restlessness.

जो समतापूर्ण, सौम्य, स्थिर, स्वस्थ, शांत, और व्यक्तिगत लाभ की इच्छा से मुक्त है, जो क्रियाओं में लगा हुआ भी स्थिर रहता है, वह अशांति से मुक्ति प्राप्त कर चुका है।

6.54.35

निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्। यथाप्राप्तानुवर्ती त्वं भव भूषितभूतलः॥ ३५॥

nirdvandvo nityasattvastho niryogakṣema ātmavān | yathāprāptānuvartī tvaṃ bhava bhūṣitabhūtalāḥ || 35 ||

Be free from dualities, always established in the eternal truth, without concern for gain or safety, self-possessed, following the natural course of things, and adorn the earth.

द्वैतता से मुक्त, सदा सनातन सत्य में स्थित, लाभ या सुरक्षा की चिंता से रहित, आत्मसंयमी, प्राकृतिक प्रवाह का अनुसरण करने वाला, और पृथ्वी को अलंकृत करो।

6.54.36

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्। इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥ ३६॥

karmeindriyāṇi saṃyamya ya āste manasā smaran | indriyārthānvimūḍhātmā mithyācāraḥ sa ucyate || 36 ||

One who restrains the organs of action but sits remembering the sense objects in the mind is called a hypocrite.

जो कर्मेन्द्रियों को रोक कर मनसा इन्द्रियार्थों को स्मरण करता है, वह मिथ्याचारी कहलाता है।

6.54.37

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन। कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते॥ ३७॥

yastvindriyāṇi manasā niyamyārabhate'rjuna | karmeindriyaiḥ karmayogamasaktaḥ sa viśiṣyate || 37 ||

But one who controls the senses with the mind and engages in the yoga of action with the organs of action, without attachment, is superior.

परंतु जो मन से इन्द्रियों को नियंत्रित करके कर्मेन्द्रियों द्वारा आसक्ति रहित कर्मयोग में प्रवृत्त होता है, वह श्रेष्ठ है।

6.54.38

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् । तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥ ३८ ॥

āpūryamāṇamacalapratiṣṭhaṃ samudramāpaḥ praviśanti yadvat | tadvatkāmā yaṃ praviśanti sarve sa śāntimāpnoti na kāmakāmī || 38 ||

Just as the waters enter the ocean, which remains undisturbed and unmoving, similarly, one who is not disturbed by desires attains peace, not the one who desires desires.

जैसे जल समुद्र में प्रवेश करता है, जो अचल और अविचलित रहता है, उसी प्रकार, जो कामनाओं से विचलित नहीं होता, वह शान्ति प्राप्त करता है, कामनाओं की इच्छा रखने वाला नहीं।

Chapter 55

6.55.1

श्रीभगवानुवाच । न कुर्याद्भोगसंत्यागं न कुर्याद्भोगभावनम् । स्थातव्यं सुसमेनैव यथाप्राप्तानुवर्तिना ॥ १ ॥

śrībhagavānuvāca | na kuryādbhogasaṃtyāgaṃ na kuryādbhogabhāvanam | sthātavyaṃ susamenai va yathāprāptānuvartinā || 1 ||

The Supreme Lord said: One should neither renounce enjoyments nor indulge in them excessively. One should remain balanced, accepting whatever comes naturally.

श्री भगवान ने कहा: न तो भोगों का त्याग करें, न ही उनमें आसक्त हों. जो प्राप्त हो, उसी में संतुलित रहें.

6.55.2

अनात्मन्यात्मतां देहे मा भावय भवात्मनि । आत्मन्येवात्मतां सत्ये भावयाऽभवरूपिणि ॥ २ ॥

anātmanyātmatāṃ dehe mā bhāvaya bhavātmani | ātmanyevātmatāṃ satye bhāvayā'bhavarūpiṇi || 2 ||

Do not identify the self with the non-self in the body. Realize the true self within the eternal self.

शरीर में अनात्म को आत्म न मानें. सत्य आत्मा में ही आत्मता का भाव करें.

6.55.3

देहनाशे महाबाहो न किंचिदपि नश्यति । आत्मनाशो हि नाशः स्यान्न चात्मा नश्यति ध्रुवः ॥ ३ ॥

dehanāśe mahābāho na kiṃcidapi naśyati | ātmanāśo hi nāśaḥ syānna cātmā naśyati dhruvaḥ || 3 ||

O mighty-armed one, with the destruction of the body, nothing is destroyed. The destruction of the self would be real destruction, but the self is never destroyed.

हे महाबाहो, शरीर के नाश से कुछ भी नहीं नष्ट होता. आत्मा का नाश ही वास्तविक नाश होता, पर आत्मा कभी नहीं नष्ट होती.

6.55.4

न हि शीर्यत्यचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः । कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किंचित्करोति सः ॥ ४ ॥

na hi śīryatyacittātmā tyaktasarvaparigrahaḥ | karmaṇyabhipravṛtto'pi naiva kiṃcitkaroti saḥ || 4 ||

One who has renounced all attachments and whose self is pure consciousness does not decay. Even when engaged in action, such a person does not perform any action.

जिसने सभी आसक्तियों का त्याग कर दिया है और जिसका आत्मा शुद्ध चेतना है, वह क्षीण नहीं होता. कर्म में लगा हुआ भी ऐसा व्यक्ति कोई कर्म नहीं करता.

6.55.5

आसक्तिमाहुः कर्तृत्वमकर्तुरपि तद्भवेत् । मौर्ख्यस्थिते हि मनसि तस्मान्मौर्ख्यं परित्यजेत् ॥ ५ ॥

āsaktimāhuḥ kartṛtva makarturapi tadbhavet | maurkhyasthite hi manasi tasmānmaurkhyam parityajet || 5 ||

Attachment is considered as doership, even for the non-doer. When the mind is in a state of ignorance, one should abandon ignorance.

आसक्ति को कर्तृत्व माना जाता है, भले ही वह कर्ता न हो. जब मन अज्ञान में होता है, तो उसे अज्ञान को त्याग देना चाहिए.

6.55.6

परं तत्त्वज्ञमाश्रित्य निरासक्तेर्महात्मनः । सर्वकर्मरतस्यापि कर्तृतोदेति न क्वचित् ॥ ६ ॥

paraṃ tattvajñamāśritya nirāsaktermahātmanaḥ | sarvakarmaratasyāpi kartṛtodeti na kvacit || 6 ||

By taking refuge in the supreme knower of the truth, who is free from attachment and engaged in all actions, one does not incur sin.

परम तत्वज्ञ का आश्रय लेकर, जो निरासक्त और महात्मा है, सभी कर्मों में रत होने पर भी कर्ता के रूप में कहीं भी नहीं उदित होता।

6.55.7

अविनाशमनाद्यन्तमात्मानमजरं विदुः । नश्यत्यात्मेति दुर्बोधो मा तवास्त्विह दुःखदः ॥ ७ ॥

avināśamanādyantamātmānamajaraṃ viduḥ | naśyatyātmeti durbodho mā tavāstviha duḥkhadaḥ || 7 ||

The soul is eternal, without beginning or end, and imperishable. Therefore, do not grieve for the destruction of the body.

आत्मा अविनाशी, अनादि, अनंत और अजर है। इसलिए, शरीर के नाश पर दुःख न करें।

6.55.8

न तथा परिपश्यन्ति विदितात्मान उत्तमाः । पश्यन्त्यनात्मनात्मानं स्वमात्मन्यात्ममानिनः ॥ ८ ॥

na tathā paripaśyanti viditātmāna uttamāḥ | paśyantyanātmanātmānaṃ svamātmanyātmamāninaḥ || 8 ||

The enlightened ones do not see the soul in the same way as those who are ignorant. They see the soul as distinct from the body.

ज्ञानी लोग आत्मा को उसी तरह नहीं देखते जैसे अज्ञानी लोग देखते हैं। वे आत्मा को शरीर से अलग देखते हैं।

6.55.9

अर्जुन उवाच । एवं चेत्त्रिजगन्नाथ मूढानामपि मानद । देहनाशे समुत्पन्ने इष्टं नष्टं न किंचन ॥ ९ ॥

arjuna uvāca | evaṃ cettrijagannātha mūḍhānāmapi mānada | dehanāśe samutpanne iṣṭaṃ naṣṭaṃ na kiṃcana || 9 ||

Arjuna said: O Lord of the three worlds, even if the ignorant think so, when the body is destroyed, nothing is lost or gained.

अर्जुन ने कहा: हे तीनों लोकों के स्वामी, भले ही मूढ़ लोग ऐसा सोचें, शरीर के नाश होने पर कुछ भी नष्ट या प्राप्त नहीं होता।

6.55.10

श्रीभगवानुवाच । एवमेतन्महाबाहो न किंचिन्नश्यति क्वचित् । आत्मैवास्त्यविनाशात्मा किं तस्य क्व विनश्यति ॥ १० ॥

śrībhagavānuvāca | evametanmahābāho na kiṃcinnnaśyati kvacit | ātmaivāstyavināśātmā kiṃ tasya kva vinaśyati || 10 ||

The Supreme Lord said: O mighty-armed one, it is as you say. Nothing is ever destroyed. The soul is eternal and indestructible. What then is lost, and where does it perish?

श्री भगवान ने कहा: हे महाबाहो, तुम्हारा कहना ठीक है। कुछ भी कभी नष्ट नहीं होता। आत्मा अविनाशी और अजर है। फिर क्या नष्ट होता है, और कहाँ नष्ट होता है?

6.55.11

इदं नष्टमिदं युक्तमिति मोहभ्रमाद्दते अन्यत्तथा न पश्यामि वन्ध्यास्त्रीतनयं यथा ॥ ११ ॥

idaṃ naṣṭamidaṃ yuktamiti mohabhramādṛte anyattathā na paśyāmi vandhyāstrītanayaṃ yathā || 11 ||

You grieve for those who are not worthy of grief, and you speak words of wisdom to those who are not wise. The wise lament neither for the living nor for the dead.

तुम उनके लिए शोक करते हो जो शोक के योग्य नहीं हैं, और उनसे बात करते हो जो बुद्धिमान नहीं हैं। बुद्धिमान लोग जीवित या मृत के लिए शोक नहीं करते।

6.55.12

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ १२ ॥

nāsato vidyate bhāvo nābhāvo vidyate sataḥ ubhayorapi dṛṣṭo'ntastvanayostattvadarśibhiḥ || 12 ||

There is no existence of the non-existent, nor is there non-existence of the existent. The seers of truth have seen the end of both.

असत का अस्तित्व नहीं है, और सत का अस्तित्व भी नहीं है। सत्य के दर्शकों ने दोनों का अंत देखा है।

6.55.13

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥ १३ ॥

avināśi tu tadviddhi yena sarvamidaṃ tatam vināśamavyayasyāsya na kaścitkartumarhati || 13 ||

Know that to be indestructible, by which all this is pervaded. None can cause the destruction of the imperishable.

जिससे यह सब व्याप्त है, उसे अविनाशी जानो। कोई भी अविनाशी का विनाश नहीं कर सकता।

6.55.14

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत ॥ १४ ॥

antavanta ime dehā nityasyoktāḥ śarīriṇaḥ anāśino'prameyasya tasmādyudhyasva bhārata || 14 ||

All these bodies are perishable, but the embodied soul is eternal, indestructible, and immeasurable. Therefore, fight, O Bharata.

ये सभी शरीर नाशवान हैं, लेकिन शरीरधारी आत्मा अनंत, अविनाशी और अपरिमेय है। इसलिए, हे भारत, युद्ध करो।

6.55.15

आत्मा चैकोऽस्ति न द्वित्वमसतः संभवः कुतः अविनाशस्त्वनन्तोऽसौ सतो नाशो न विद्यते ॥ १५ ॥

ātmā caiko'sti na dvitvamasataḥ saṃbhavḥ kutaḥ avināśastvananto'sau satonaśo na vidyate || 15 ||

The soul is one, there is no second. There is no existence of the non-existent. The indestructible soul is eternal; there is no destruction of the existent.

आत्मा एक है, दूसरा नहीं है। असत का अस्तित्व नहीं है। अविनाशी आत्मा अनंत है; सत का विनाश नहीं होता।

6.55.16

द्वित्वैकत्वपरित्यागे शेषं यत्परिशिष्यते । शान्तं सदसतोर्मध्यं तदस्तीह परं पदम् ॥ १६ ॥

dvitvaikatvaparityāge śeṣaṃ yatpariśiṣyate | śāntaṃ sadasator madhyaṃ tadastīha paraṃ padam || 16 ||

When duality and unity are abandoned, what remains is the peaceful state between existence and non-existence, that is the supreme state here.

जब द्वैत और एकता का परित्याग कर दिया जाता है, तो जो शेष रहता है वह अस्तित्व और अनस्तित्व के बीच का शान्त अवस्था है, यही यहाँ परम पद है।

6.55.17

अर्जुन उवाच । तन्मृतोऽस्मीति भगवन्किंकृता तु नृणां स्थितिः । कथं स्थितौ च लोकानां तौ स्वर्गनरकौ प्रभो ॥ १७ ॥

arjuna uvāca | tanmṛto'smīti bhagavankiṃkṛtā tu nṛṇāṃ sthitiḥ | kathaṃ sthitau ca lokānāṃ tau svarganarakau prabho || 17 ||

Arjuna said: O Lord, what is the state of humans who say 'I am liberated'? How do heaven and hell exist in the world, O Lord?

अर्जुन ने कहा: हे भगवन्, जो लोग कहते हैं 'मैं मुक्त हूँ', उनकी स्थिति क्या है? हे प्रभो, स्वर्ग और नरक लोक में कैसे स्थित हैं?

6.55.18

श्रीभगवानुवाच । भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च । एतत्तन्मात्रजालात्मा जीवो देहेषु तिष्ठति ॥ १८ ॥

śrībhagavānuvāca | bhūmirāpo'nalo vāyuḥ khaṃ mano buddhireva ca | etattanmātrajālātmā jīvo deheṣu tiṣṭhati || 18 ||

The Supreme Lord said: Earth, water, fire, air, ether, mind, and intellect—these are the elements that constitute the embodied soul.

श्री भगवान् ने कहा: पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन और बुद्धि—ये तत्व हैं जो शरीर में स्थित जीवात्मा को बनाते हैं।

6.55.19

स कृष्यते वासनया रज्वेव पशुपोतकः । स तिष्ठति शरीरान्तः पञ्जरे विहगो यथा ॥ १९ ॥

sa kṛṣyate vāsanayā rajveva paśupotakaḥ | sa tiṣṭhati śarīrāntaḥ pañjare vihago yathā || 19 ||

It is driven by desires like a beast tied to a rope. It resides within the body like a bird in a cage.

यह इच्छाओं से चलाया जाता है जैसे रस्सी से बंधा पशु। यह शरीर के अंदर रहता है जैसे पिंजरे में पक्षी।

6.55.20

स कालदेशतो देहाज्जर्जरत्वमुपागतात् । वासनावशतो याति प्लक्षपर्णाद्रसो यथा ॥ २० ॥

sa kāladeśato dehājjjarjaratvamupāgatāt | vāsanāvaśato yāti plakṣaparṇādraso yathā || 20 ||

Due to the influence of time and place, it becomes weakened from the body. Driven by desires, it goes like the sap from a fig leaf.

समय और स्थान के प्रभाव से, यह शरीर से कमजोर हो जाता है। इच्छाओं से चलाया जाता है, यह पिपल के पत्ते से रस की तरह चला जाता है।

6.55.21

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव चगृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥ २१ ॥

śrotraṃ cakṣuḥ sparśanaṃ ca rasanaṃ ghrāṇameva cagṛhītvaitāni saṃyāti vāyurgandhānivāśayāt || 21 ||

The wind, taking the senses of hearing, sight, touch, taste, and smell, departs from the body, just as it carries the scent from flowers.

वायु, श्रवण, दृष्टि, स्पर्श, रस और घ्राण इन्द्रियों को लेकर, शरीर से निकल जाती है, जैसे कि वह फूलों से सुगंध लेकर जाती है।

6.55.22

वासनावत्त्वमेवास्य देहो नेतरयुक्तिजःक्षीयते वासनात्यागे क्षीणे भवति तत्पदम् ॥ २२ ॥

vāsanāvattvamevāsya deho netarayuktijaḥkṣīyate vāsanātyāge kṣīṇe bhavati tatpadam || 22 ||

The body is indeed due to the influence of impressions. It does not arise from other logical reasons. It perishes when the impressions are given up, and upon their exhaustion, one attains that state.

शरीर वास्तव में संस्कारों के प्रभाव से होता है। यह दूसरे तर्कसंगत कारणों से नहीं उत्पन्न होता। जब संस्कारों का त्याग होता है, तब यह नष्ट हो जाता है, और उनके खत्म होने पर, वह उस अवस्था को प्राप्त करता है।

6.55.23

वासनावान्परापुष्टो भूत्वा भ्राम्यति योनिषुजीवो भ्रमभराभारो मायापुरुषको यथा ॥ २३ ॥

vāsanāvānparāpuṣṭo bhūtvā bhrāmyati yoniṣujīvo bhramabharābhāro māyāpuruṣako yathā || 23 ||

Being fully nourished by impressions, the individual soul wanders in various wombs, burdened by the weight of delusion, like an illusory person.

संस्कारों से पूर्ण रूप से पोषित होकर, जीवात्मा विभिन्न योनियों में भटकता है, भ्रम के भार से बोझिल, जैसे कि एक मायावी व्यक्ति।

6.55.24

अक्षस्वभावानखिलाञ्छरीराद्वासनावशःजीवो गृहीत्वा संयाति पुष्पाद्गन्धमिवानिलः ॥ २४ ॥

akṣasvabhāvānakhilāñcharīrādvāsanāvaśaḥjīvo gṛhītvā saṃyāti puṣpādgandhamivānilaḥ || 24 ||

The individual soul, under the influence of impressions, takes all bodies of various natures and departs, just as the wind carries the scent from flowers.

संस्कारों के प्रभाव में, जीवात्मा विभिन्न प्रकृति के सभी शरीरों को लेकर निकल जाता है, जैसे कि वायु फूलों से सुगंध लेकर जाती है।

6.55.25

देहो निस्पन्दतामेति जीवे कौन्तेय निर्गतेनिस्पन्दावयवाभोगः शान्तवात इव द्रुमः ॥ २५ ॥

deho nispandatāmeti jīve kaunteya nirgatenispandāvayavābhogaḥ śāntavāta iva drumaḥ || 25 ||

The body becomes motionless when the individual soul departs, O Kaunteya, just as a tree becomes still when the wind ceases.

जब जीवात्मा निकल जाता है, हे कुन्तीपुत्र, शरीर निश्चल हो जाता है, जैसे कि पेड़ तब शांत हो जाता है जब वायु रुक जाती है।

6.55.26

अचेष्टं छेदभेदादिदोषैरायात्यदृश्यताम्। मृत इत्युच्यते तेन देहो विगतजीवितः ॥ २६ ॥

acēṣṭaṃ chēdabhēdādidōṣairāyātyadṛśyatām | mṛta ityucyatē tēna dēhō vigatajīvitaḥ || 26 ||

When the body becomes inactive and is afflicted by decay, disintegration, and other defects, it becomes invisible and is called dead, devoid of life.

जब शरीर निष्क्रिय हो जाता है और खंडित, विखंडित आदि दोषों से ग्रस्त हो जाता है, तो वह अदृश्य हो जाता है और मृत कहलाता है, जीवन से रहित।

6.55.27

स जीवः प्राणमूर्तिः खे यत्र यत्रावतिष्ठते। तं तं स्ववासनाभ्यासात्पश्यत्याकारमाततम् ॥ २७ ॥

sa jīvaḥ prāṇamūrtiḥ khē yatra yatrāvatiṣṭhatē | taṃ taṃ svavāsanābhyāsātpasyatyākāramātatam || 27 ||

That life force, the embodiment of vitality, wherever it resides in the sky, it perceives various forms according to its own impressions and practices.

वह जीव, प्राण का स्वरूप, जहाँ-जहाँ आकाश में स्थित होता है, वहाँ-वहाँ अपनी वासनाओं और अभ्यास के अनुसार विभिन्न आकारों को देखता है।

6.55.28

अयं देहो हि जीवेन त्वसन्नेवावलोकितः। अस्य नाशे त्वमप्येवं पश्य मा वा सुषुप्तवत् ॥ २८ ॥

ayaṃ dēhō hi jīvēna tvāsannēvāvalōkitaḥ | asya nāśē tvamapyēvaṃ paśya mā vā suṣuptavat || 28 ||

This body is indeed seen as if lifeless by the life force. Upon its destruction, you too will see or not see, as if in deep sleep.

यह शरीर जीवन शक्ति द्वारा निर्जीव के समान देखा जाता है। इसके नाश पर, आप भी गहरी नींद के समान देखेंगे या नहीं देखेंगे।

6.55.29

यथैव पश्यत्याकारांस्तेषां नाशांस्तथैव सः । आदिसर्गे भावनया किलैष्वेवं विभावतः ॥ २९ ॥

yathaiva paśyatyākārāṃstēṣāṃ nāśāṃstathaiva saḥ | ādisargē bhāvanayā kilaēṣvēvaṃ vibhāvataḥ || 29 ||

Just as one perceives forms and their destruction, so does one meditate on them in the original creation through imagination.

जैसे कोई आकारों और उनके नाश को देखता है, वैसे ही वह मूल सृष्टि में कल्पना द्वारा उन पर ध्यान करता है।

6.55.30

झटित्युद्भवकाले हि यद्यथा दृश्यते पुरः । आनिपातं तदेवास्या अविनाभाविसंविदः ॥ ३० ॥

jhaṭityudbhavakālē hi yadyathā dṛśyatē puraḥ | ānipātaṃ tadēvāsyā avinābhāvisaṃvidaḥ || 30 ||

Indeed, whatever appears suddenly at the time of manifestation, that itself is the inevitable perception of the eternal consciousness.

वास्तव में, जो भी अचानक प्रकट होने के समय प्रकट होता है, वही सनातन चेतना की अनिवार्य अनुभूति है।

6.55.31

प्राक्तनं वासनामूलं पुरुषार्थेन जीयते । यत्नेनाद्यतनेनाशु ह्यस्तनायतनं यथा ॥ ३१ ॥

prāktanaṃ vāsanāmūlaṃ puruṣārtheṇa jīyate | yatnenādyatanenāśu hyastanāyatanaṃ yathā || 31 ||

The past tendencies rooted in desires are conquered by human effort | Just as a present effort quickly removes the past abode

प्राक्तन वासनाओं को पुरुषार्थ से जीता जाता है | जैसे वर्तमान प्रयास से शीघ्र ही पुराना आश्रय हट जाता है

6.55.32

य एव पुरुषार्थेन दृष्टो बलवता क्षणात् । पूर्वोत्तरविशेषांशः स एव जयति स्फुटम् ॥ ३२ ॥

ya eva puruṣārtheṇa dṛṣṭo balavatā kṣaṇāt | pūrvottaraviśeṣāṃśaḥ sa eva jayati sphuṭam || 32 ||

The one who is seen with strong human effort in an instant | That very one clearly conquers the distinctions of past and future

जो बलवान पुरुषार्थ से क्षणभर में देखा जाता है | वही स्पष्ट रूप से पूर्व और उत्तर के विशेष भागों को जीतता है

6.55.33

अपि स्फुटति विन्ध्याद्रौ वाति वा प्रलयानिले । पौरुषं हि यथाशास्त्रमतस्त्याज्यं न धीमता ॥ ३३ ॥

api sphuṭati vindhyādrau vāti vā pralayānile | pauruṣaṃ hi yathāśāstramatastyājyaṃ na dhīmatā || 33 ||

Even if the Vindhya mountain splits or the wind of destruction blows | The wise one should not abandon human effort as per the scriptures

चाहे विंध्य पर्वत फट जाए या प्रलय की हवा चले | बुद्धिमान व्यक्ति को शास्त्रानुसार पुरुषार्थ को नहीं छोड़ना चाहिए

6.55.34

नरकस्वर्गसर्गादिवासनावशतोऽभितः । प्रपश्यति चिराभ्यस्तं जीवो जरठमोहधीः ॥ ३४ ॥

narakasvargasargādivāsanāvaśato'bhitaḥ | prapaśyati cirābhyastaṃ jīvo jarathamohadhīḥ || 34 ||

Due to the influence of tendencies towards hell, heaven, and creation | The living being with a mind clouded by old age and delusion sees long-practiced habits

नरक, स्वर्ग और सृष्टि की वासनाओं के प्रभाव से | बुढ़ापे और भ्रम से धुंधली बुद्धि वाला जीव लंबे समय से अभ्यास की गई आदतों को देखता है

6.55.35

अर्जुन उवाच । नरकस्वर्गसर्गादिसंभ्रमेषु जगत्पते । किमस्य कारणं ब्रूहि जीवस्य जगतः स्थितेः ॥ ३५ ॥

arjuna uvāca | narakasvargasargādisaṃbhremeṣu jagatpate | kimasya kāraṇaṃ brūhi jīvasya jagataḥ sthiteḥ || 35 ||

Arjuna said | O Lord of the universe, what is the cause of the confusion regarding hell, heaven, and creation in the existence of the living being?

अर्जुन ने कहा | हे जगत्पते, नरक, स्वर्ग और सृष्टि के भ्रम का कारण क्या है जीव के अस्तित्व में?

6.55.36

श्रीभगवानुवाच । स्वप्नोपमाना तेनेह श्रेयसे वासना क्षयः । चिराभ्यासवशात्प्रौढा संसारभ्रमकारिणी ॥ ३६ ॥

śrībhagavānuvāca | svapnopamānā teneha śreyase vāsanā kṣayaḥ | cirābhyāsavaśātprauḍhā saṃsārabhramakāriṇī || 36 ||

The Supreme Lord said: Like a dream, the desires born of long-practiced habits are the cause of the world's delusion and lead to the destruction of the self.

श्री भगवान ने कहा: स्वप्न के समान, लंबे समय से अभ्यास के कारण प्रबल हुए वासनाएँ संसार के भ्रम का कारण हैं और आत्मा के क्षय को ले जाती हैं।

6.55.37

अर्जुन उवाच । किमुत्था देवदेवेश क्षीयते वासना कथम् । श्रीभगवानुवाच । मौर्ख्यमोहसमुत्थाना त्वनात्मन्यात्मभावना । आत्मज्ञानान्महाबोधाद्विलयं याति वासना ॥ ३७ ॥

arjuna uvāca | kimutthā devadeveśa kṣīyate vāsanā katham | śrībhagavānuvāca | maurkhyamohasamutthānā tvānātmanyātmabhāvanā | ātmajñānānmahābodhādvilayaṃ yāti vāsanā || 37 ||

Arjuna said: O Lord of the gods, how does the desire dissolve? The Supreme Lord said: Born of ignorance and delusion, the identification with the non-self leads to the dissolution of desires through the great awakening of self-knowledge.

अर्जुन ने कहा: हे देवों के देव, वासना कैसे क्षीण होती है? श्री भगवान ने कहा: मूर्खता और मोह से उत्पन्न होने वाली अनात्म में आत्मभावना आत्मज्ञान से महाबोध के द्वारा वासना के विलय को ले जाती है।

6.55.38

भावितात्मासि कौन्तेय सत्यं विज्ञातवानसि । अयं सोहं जना एते मयेति त्यज वासनाम् ॥ ३८ ॥

bhāvitātmāsi kaunteya satyaṃ vijñātavānasi | ayaṃ sohaṃ janā ete mayeti tyaja vāsanām || 38 ||

O Kaunteya, you are a realized soul, and you have truly understood. Give up the desires by realizing 'I am He, these are the people, and they are mine.'

हे कौन्तेय, तुम एक आत्मसाक्षात्कारी हो और तुमने सचमुच समझ लिया है। 'मैं वह हूँ, ये लोग हैं, और ये मेरे हैं' कहकर वासनाओं को त्याग दो।

6.55.39

अर्जुन उवाच । वासनाविलये जीवो विलीनो भवति स्वयम् । यो हि यत्सत्तयोच्छूनस्तन्नाशात्स विलीयते ॥ ३९ ॥

arjuna uvāca | vāsanāvilaye jīvo vilīno bhavati svayam | yo hi yatsattayocchūnastannāśātsa vilīyate || 39 ||

Arjuna said: When desires dissolve, the individual soul merges into the Supreme. Whatever entity is destroyed, that entity dissolves.

अर्जुन ने कहा: जब वासनाएँ विलीन हो जाती हैं, तब जीव स्वयं परमात्मा में विलीन हो जाता है। जो भी वस्तु नष्ट होती है, वह विलीन हो जाती है।

6.55.40

जीवे विलयमायाते देशकालान्यथाकृतौ । कोऽसौ भाजनतामेति जन्मनो मरणस्य च ॥ ४० ॥

jīve vilayamāyāte deśakālānyathākṛtau | ko'sau bhājanatāmeti janmano maraṇasya ca || 40 ||

When the individual soul merges, there is a change in time and place. Who then experiences birth and death?

जब जीव विलीन हो जाता है, तब स्थान और समय में परिवर्तन होता है। फिर जन्म और मृत्यु का अनुभव किसने किया?

6.55.41

श्रीभगवानुवाच । स्वयं कल्पितसंकल्पमात्मरूपं यदाविलम् । तदेव वासनाकारं जीवं विद्धि महामते ॥ ४१ ॥

śrībhagavānuvāca | svayaṃ kalpitasaṃkalpamātmarūpaṃ yadāvilam | tadeva vāsanākāraṃ jīvaṃ viddhi mahāmate || 41 ||

The Supreme Lord said: The form of the self that is imagined and conceived is indeed the individual soul, O wise one.

श्री भगवान् ने कहा: जो स्वयं कल्पित संकल्प आत्मरूप है, वही वासनाकार जीव है, हे महामते।

6.55.42

अनायत्तमसंकल्पमात्मरूपं यदव्ययम् । प्रबोधाद्वासनामुक्तं तन्मोक्षं विद्धि भारत ॥ ४२ ॥

anāyattamasaṅkalpamātmarūpaṃ yadavyayam | prabodhādvāsanāmuktaṃ tanmokṣaṃ viddhi bhārata || 42 ||

That which is unattached, without imagination, and imperishable is the true form of the self. Know that liberation from desires through awakening is true liberation, O Arjuna.

जो अनासक्त, कल्पना रहित और अविनाशी है, वही आत्मरूप है। जागरूकता से वासनाओं से मुक्ति ही मोक्ष है, हे अर्जुन।

6.55.43

जीवन्नेव महाबाहो तत्त्वं प्रेक्ष यथास्थितम् । वासनावागुरोन्मुक्तो मुक्त इत्यभिधीयते ॥ ४३ ॥

jīvanneva mahābāho tattvaṃ prekṣa yathāsthitam | vāsanāvāguronmukto mukta ityabhidhīyate || 43 ||

O mighty-armed one, perceive the truth as it is while living. One who is freed from the bondage of desires is said to be liberated.

हे महाबाहो, जीवन में ही सत्य को जैसा है वैसा देखो। जो वासनाओं से मुक्त हो जाता है, उसे मुक्त कहा जाता है।

6.55.44

यो न निर्वासनो नूनं सर्वधर्मपरोऽपि सः । सर्वज्ञोऽप्यभितो बद्धः पञ्जरस्थो यथा खगः ॥ ४४ ॥

yo na nirvāsano nūnaṃ sarvadharmaparo'pi saḥ | sarvajño'pyabhito baddhaḥ pañjarastho yathā khagaḥ || 44 ||

One who is not free from desires, even if devoted to all duties and knowledgeable, is bound like a bird in a cage.

जो वासनाओं से मुक्त नहीं है, वह चाहे सभी धर्मों में तत्पर हो और सर्वज्ञ हो, फिर भी वह पिंजरे में बंद पक्षी की तरह बंधन में है।

6.55.45

दुर्दर्शनस्य गगने शिखिपिच्छिकेव सूक्ष्मा परिस्फुरति यस्य तु वासनान्तः । मुक्तः स एव भवतीह हि वासनैव बन्धो न यस्य ननु तत्क्षय एव मोक्षः ॥ ४५ ॥

durdarśanasya gagane śikhipicchikeva sūkṣmā parisphurati yasya tu vāsanāntaḥ | muktaḥ sa eva bhavatīha hi vāsanaiava bandho na yasya nanu tatkṣaya eva mokṣaḥ || 45 ||

Just as a subtle peacock feather shines in the vast sky, so does the subtle desire within one's heart. One who is free from desires is truly liberated. Bondage is indeed due to desires, and their destruction is liberation.

जैसे विशाल आकाश में एक सूक्ष्म मोर पंख चमकता है, वैसे ही हृदय में सूक्ष्म वासना चमकती है। जो वासनाओं से मुक्त है, वही सच्चे अर्थों में मुक्त है। बंधन वासनाओं के कारण है, और उनका नाश ही मोक्ष है।

Chapter 56

6.56.1

श्रीभगवानुवाच । इति निर्वासनत्वेन जीवन्मुक्ततयार्जुन । अन्तः शीतलतामेत्य बन्धुदुःखमलं त्यज ॥ १ ॥

śrībhagavānuvāca | iti nirvāsanatvena jīvanmuktatayārjuna | antaḥ śītalatāmetya bandhuduḥkhamalaṃ tyaja || 1 ||

The Supreme Lord said: Thus, O Arjuna, being liberated while living, attain inner peace and abandon the sorrow of your relatives.

श्री भगवान ने कहा: हे अर्जुन, इस प्रकार जीवन्मुक्त होकर, अन्तर की शीतलता प्राप्त करो और अपने बन्धुओं के दुःख को त्याग दो।

6.56.2

जरामरणनिःशङ्क आकाशविशदाशयः । त्यक्तेष्टानिष्टसंकल्पो वीतरागो भवानघ ॥ २ ॥

jarāmaraṇaniḥśaṅka ākāśaviśadāśayaḥ | tyakteṣṭāniṣṭasaṃkalpo vītarāgo bhavāngha || 2 ||

Free from the fear of old age and death, with a mind as clear as the sky, abandoning desires and aversions, become free from attachments, O sinless one.

बुढ़ापे और मृत्यु के भय से मुक्त, आकाश के समान निर्मल मन से, इच्छा और अनिच्छा को त्यागकर, आसक्तियों से मुक्त हो जाओ, हे निष्पाप।

6.56.3

प्रवाहपतितं कार्यमिदं किंचिद्यथागतम् । कुरु कार्याणि कर्माणि न किंचिदिह नश्यति ॥ ३ ॥

pravāhapatitaṃ kāryamidaṃ kiṃcidyathāgatam | kuru kāryāṇi karmāṇi na kiṃcidih naśyati || 3 ||

Perform your duties as they come to you in the flow of life. Nothing here is destroyed.

जीवन के प्रवाह में जो कार्य आते हैं, उन्हें करो। यहाँ कुछ भी नष्ट नहीं होता।

6.56.4

प्रवाहपतितं कर्म स्वमेव क्रियते तु यत् । जीवन्मुक्तस्वभावोऽयं सा जीवन्मुक्तता तथा ॥ ४ ॥

pravāhapatitaṃ karma svameva kriyate tu yat | jīvanmuktasvabhāvo'yaṃ sā jīvanmuktatā tathā || 4 ||

The action that is performed in the natural flow is one's own. This is the nature of the liberated while living, and that is true liberation.

जो कर्म प्रवाह में किया जाता है, वह अपना ही होता है। यही जीवन्मुक्त का स्वभाव है, और यही सच्ची जीवन्मुक्तता है।

6.56.5

इदं कर्म त्यजामीदमाश्रयामीति निर्णयः । मूढस्य मनसो रूपं ज्ञानिनस्तु समा स्थितिः ॥ ५ ॥

idaṃ karma tyajāmīdamāśrayāmīti nirṇayaḥ | mūḍhasya manaso rūpaṃ jñāninastu samā sthitiḥ || 5 ||

The decision to abandon this action and take refuge in that is the nature of the ignorant mind. The wise one remains in a state of equanimity.

यह कर्म त्यागूँ और उसमें आश्रय लूँ, यह अज्ञानी मन का स्वभाव है। ज्ञानी समान अवस्था में रहता है।

6.56.6

प्रवाहपतितं कर्म कुर्वन्तः शान्तचेतसः । जीवन्मुक्ताः सुषुप्तस्थाः स्फुरन्त्यत्र सुषुप्तवत् ॥ ६ ॥

pravāhapatitaṃ karma kurvantaḥ śāntacetasaḥ | jīvanmuktāḥ suṣuptasthāḥ sphurantyatra suṣuptavat || 6 ||

Those who perform actions that flow naturally, with a peaceful mind, are liberated while living and shine here like those in deep sleep.

जो लोग प्रवाह में आये कर्म करते हैं, शान्त चित्त से, वे जीवन्मुक्त होते हैं और यहाँ गहरी नींद में सोए हुए लोगों की तरह चमकते हैं।

6.56.7

स्थिरां संस्थितिमायान्ति कूर्माङ्गानीव सर्वशः । इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यो हृदि यस्य स्वभावतः ॥ ७ ॥

sthirāṃ saṃsthitimāyānti kūrmāṅgānīva sarvaśaḥ | indriyāṇīndriyārthebhyo hṛdi yasya svabhāvataḥ || 7 ||

They attain a steady state, like the limbs of a tortoise, when the senses are naturally withdrawn from their objects into the heart.

जब इन्द्रियाँ स्वाभाविक रूप से अपने विषयों से हृदय में वापस ले ली जाती हैं, तब वे कछुए के अंगों की तरह स्थिर अवस्था प्राप्त करते हैं।

6.56.8

विश्वात्मनि तथा विश्वं कालत्रयमयोदितम् । अभित्ति त्रिजगच्चित्रं कुरुते चित्तचित्रकृत् ॥ ८ ॥

viśvātmani tathā viśvaṃ kālatrayamayoditam | abhitti trijagaccitraṃ kurute cittacittrakṛt || 8 ||

In the universal self, the entire universe, manifested in the three times, appears as a varied picture created by the mind.

विश्वात्मा में, तीनों कालों में प्रकट हुआ सम्पूर्ण विश्व मन द्वारा बनाया गया एक विविध चित्र की तरह प्रतीत होता है।

6.56.9

व्योम्नि व्योमात्मकमपि प्रस्फुटं वृत्तिवर्तिभिः । चित्तचित्रकरेणादौ चित्रं चित्रं वितानितम् ॥ ९ ॥

vyomni vyomātmakamapi prasphuṭaṃ vṛttivartibhiḥ | cittacittrakareṇādau citraṃ citraṃ vitānitam || 9 ||

In the sky, even the sky itself appears clearly with the movements of the mind, initially creating various pictures.

आकाश में, मन की गतिविधियों के साथ, आकाश स्वयं भी स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है, पहले विभिन्न चित्रों को बनाता है।

6.56.10

पश्चाद्भित्तिः कृता व्योमरूपा चासावहो भ्रमः । अपूर्वैवातिमायेयं तृणकुड्यमयी शुभा ॥ १० ॥

paścādbhittiḥ kṛtā vyomarūpā cāsāvaho bhramaḥ | apūrvevaatimāyeyaṃ tṛṇakuḍyamayī śubhā || 10 ||

Afterwards, this appearance is created as the form of the sky, oh what a delusion! This great illusion is unprecedented, like a beautiful wall made of grass.

बाद में, यह प्रतीति आकाश के रूप में बनायी जाती है, ओह कितना भ्रम है! यह अनुपम महान भ्रम घास से बनी एक सुंदर दीवार की तरह है।

6.56.11

न मनागपि भेदोऽस्ति स्फुटमप्युपलब्धयोःइमा या उपलक्ष्यन्ते भित्तयश्चित्तचित्रजाः ॥ ११ ॥

na manāgapi bhedo'sti sphuṭamapyupalabdhayoḥimā yā upalakṣyante bhittayaścittacitrajāḥ || 11 ||

There is no difference between the mind and the perceived objects; these are the manifestations of the mind's projections.

मन और उपलब्धि में कोई भेद नहीं है; ये मन की चित्रों की अभिव्यक्तियाँ हैं।

6.56.12

व्योम्नः शून्यतमा विद्धि तास्तामरसलोचनक्षणेन चेतसि यथा भ्रान्तौ लोकक्षयोदयौ ॥ १२ ॥

vyomnaḥ śūnyatamā viddhi tāstāmarasalocanakṣaṇena cetasi yathā bhrāntau lokakṣayodayau || 12 ||

Know the sky to be the emptiest; like the illusion of the world's destruction and creation seen in the mind in an instant, like the flash of lightning.

आकाश को सबसे शून्य समझो; जैसे मन में एक क्षण में बिजली की चमक की तरह दुनिया के विनाश और सृजन का भ्रम दिखाई देता है।

6.56.13

आत्मा जगत्तथैवेदं सबाह्याभ्यन्तरं नभःचिरंतनमनोराज्यं यत्तस्मात्किल सत्यता ॥ १३ ॥

ātmā jagattathaivedaṃ sabāhyābhyantaraṃ nabhaḥciraṃtanamanorājyaṃ yattasmātkila satyatā || 13 ||

The self is indeed the world; it is both external and internal, the eternal sky, the ancient kingdom of the mind, and thus it is the truth.

आत्मा ही दुनिया है; यह बाहरी और अंतर्तम दोनों है, अनंत आकाश, मन का प्राचीन राज्य, और इसलिए यह सत्य है।

6.56.14

किं त्वनालोकितेऽपि स्यात्सत्यं नास्त्येव विभ्रमेक्रमेणालोकतः सत्यमालोकेन विलीयते ॥ १४ ॥

kiṃ tvanālokite'pi syātsatyaṃ nāstyeva vibhramekrameṇālokataḥ satyamālokena vilīyate || 14 ||

What truth can there be in illusion? There is no truth in illusion; truth is perceived gradually, and by perception, it dissolves.

भ्रम में सत्य क्या हो सकता है? भ्रम में सत्य नहीं है; सत्य क्रमशः अनुभव किया जाता है, और अनुभव से वह विलीन हो जाता है।

6.56.15

दृश्यमानमपि क्षामं शरदीवाभ्रमण्डलम्चित्तचित्रकृतश्चित्रे संस्थिताश्चित्रपुत्रिकाः ॥ १५ ॥

dṛśyamānamapi kṣāmaṃ śaradīvābhramaṇḍalamcittacitrakṛtaścitre saṃsthitāścitraputrikāḥ || 15 ||

Even the visible sky appears thin like an autumn cloud; in the painting created by the mind's projections, the images are established.

दृश्यमान आकाश भी शरद ऋतु के बादल की तरह पतला दिखाई देता है; मन की चित्रों की रचना में, चित्रों की छवियाँ स्थापित होती हैं।

6.56.16

भित्त्यभावादनाकारा बहिस्त्रिभुवनादिकाः । न ताः सन्ति न वासि त्वं किं केन परिरोध्यते ॥ १६ ॥

bhittyabhāvādanākārā bahistribhuvanādikāḥ | na tāḥ santi na vāsi tvaṃ kiṃ kena parirodhyate || 16 ||

Due to the absence of a wall, there is no form; the three worlds and so on are outside. They do not exist, nor do you dwell. What and by whom is it obstructed?

भित्ति के अभाव से कोई आकार नहीं है, तीनों लोक और आदि बाहर हैं। वे नहीं हैं, न ही तुम रहते हो। क्या और किसके द्वारा यह रोका जाता है?

6.56.17

रोध्यरोधकसंमोहं त्यक्त्वा खे विमलो भव । प्रवृत्तिरेव न व्योम्नः प्रवृत्तिश्चैव खात्मिका ॥ १७ ॥

rodhyarodhakasammohaṃ tyaktvā khe vimalo bhava | pravṛttireva na vyomnaḥ pravṛttiścaiva khātmikā || 17 ||

Abandoning the delusion of the obstructed and the obstructor, become pure in the sky. There is no activity of the sky, and the activity is indeed of the nature of the sky.

रोध्य और रोधक के मोह को त्यागकर, आकाश में निर्मल हो जाओ। आकाश की कोई गतिविधि नहीं है, और गतिविधि वास्तव में आकाश की प्रकृति की है।

6.56.18

अतः कालक्रियाकुड्यकलादिविमलं नभः । चित्तसंस्थं यथा चित्रं सरूपमखिलात्मकम् ॥ १८ ॥

ataḥ kālakriyākuḍyakalādivimalaṃ nabhaḥ | cittasaṃsthaṃ yathā citraṃ sarūpamakhilātmakam || 18 ||

Therefore, the pure sky is beyond time, action, body, and arts. Like a picture in the mind, it is of the same form and all-encompassing.

इसलिए, पवित्र आकाश समय, क्रिया, शरीर और कलाओं से परे है। मन में चित्र की तरह, यह उसी रूप का और सब कुछ समेटने वाला है।

6.56.19

व्योम्नः शून्यतमं विद्धि तथेदमखिलं जगत् । चित्तभित्तौ कृतं चित्रं यच्चित्रकरेण तत् ॥ १९ ॥

vyomnaḥ śūnyatamaṃ viddhi tathedamakhilaṃ jagat | cittabhittau kṛtaṃ citraṃ yacciccitrakareṇa tat || 19 ||

Know the sky to be the most void. Similarly, know this entire world. The picture made on the canvas of the mind is that which is made by the painter of consciousness.

आकाश को सबसे शून्य जानो। इसी तरह, इस सम्पूर्ण जगत को जानो। मन के कैनवास पर बना चित्र वही है जो चेतना के चित्रकार द्वारा बनाया गया है।

6.56.20

सर्वशून्यतया व्योम्नो मनागपि न भिद्यते । यथा प्रकचतश्चित्ते जगन्निर्माणसंक्षयौ ॥ २० ॥

sarvaśūnyatayā vyomno manāgapi na bhidyate | yathā prakacataścitte jagannirmāṇasaṃkṣayau || 20 ||

Due to the complete voidness, the sky is not even slightly differentiated. Just as in the mind, the creation and destruction of the world are manifested.

पूर्ण शून्यता के कारण, आकाश थोड़ा भी भिन्न नहीं होता। जैसे मन में, जगत की उत्पत्ति और विनाश प्रकट होते हैं।

6.56.21

क्षणेनैव तथैवेमौ भुविस्थाविति विद्धि हे । अद्य क्षीणा मनोराज्ये नानानुभवनात्मनि ॥ २१ ॥

kṣaṇenaiva tathaivemau bhuvistāviti viddhi he | adya kṣīṇā manorājye nānānubhavanātmani || 21 ||

Know that these two are situated on the earth in an instant | Today, the mind's kingdom is diminished due to various experiences

जान लो कि ये दोनों क्षण में ही पृथ्वी पर स्थित हैं | आज, मन का राज्य विभिन्न अनुभवों के कारण क्षीण हो गया है

6.56.22

क्षणभावितमोहेन कल्पना परिकल्पिता । असदेव मनोराज्यं कर्तुं शक्तं यथा मनः ॥ २२ ॥

kṣaṇabhāvitamohēna kalpanā parikalpitā | asadēva manorājyaṃ kartuṃ śaktaṃ yathā manaḥ || 22 ||

By the delusion arising in an instant, imagination is fabricated | Thus, the mind is capable of creating an unreal kingdom

क्षण में उत्पन्न भ्रम से कल्पना बनाई जाती है | इस प्रकार, मन असत्य राज्य बनाने में सक्षम है

6.56.23

क्षणस्य कल्पीकरणे तथैव बलवन्मनः । क्षणं कल्पीकरोत्येतत्तच्चाल्पं कुरुते बहु ॥ २३ ॥

kṣaṇasya kalpīkaraṇē tathaiva balavanmanaḥ | kṣaṇaṃ kalpīkarotyētat taccālpaṃ kurutē bahu || 23 ||

In the creation of an instant, the powerful mind | Makes the instant small and turns it into many

क्षण की रचना में, शक्तिशाली मन | क्षण को छोटा बनाता है और उसे बहुत सारा बनाता है

6.56.24

असत्सत्कुरुते क्षिप्रमितीयं भ्रान्तिरुत्थिता । क्षणेनैव मनोराज्यं प्रतिभातं स्वभावतः ॥ २४ ॥

asatsatkurutē kṣipramitīyaṃ bhrāntirutthitā | kṣaṇenaiva manorājyaṃ pratibhātaṃ svabhāvataḥ || 24 ||

This delusion arises quickly, making the unreal appear real | By nature, the mind's kingdom appears in an instant

यह भ्रम तेजी से उत्पन्न होता है, असत्य को सत्य बनाता है | स्वाभाविक रूप से, मन का राज्य क्षण में प्रकट होता है

6.56.25

यद्विचित्रात्म तदिदं जगज्जालमिति स्थितम् । सर्गे निर्वाणनिष्ठत्वान्निमेषमयमुत्थितम् ॥ २५ ॥

yadvicitrātma tadidaṃ jagajjālamiti sthitam | sargē nirvāṇaniṣṭhatvānnimēṣamayamutthitam || 25 ||

That which has a varied nature, this is the web of the world | Arising from creation and firmly established in liberation, it appears in the blink of an eye

जो विविध स्वभाव वाला है, वही यह संसार का जाल है | सृष्टि से उत्पन्न और मुक्ति में दृढ़ता से स्थापित, यह पलक झपकते ही प्रकट होता है

6.56.26

प्रतिभामात्रतोऽत्रैव कल्पिता वज्रसारता । प्रतिभासविपर्यासमात्रं ह्यविदिताकृतेः ॥ २६ ॥

pratibhāmātrato'traiva kalpitā vajrasāratā | pratibhāsaviparyāsamātraṃ hyaviditākṛteḥ || 26 ||

The essence of the diamond-like nature is imagined here solely from the appearance of wisdom. It is merely an illusion of appearance, arising from the unknowable.

यहाँ बुद्धिमत्ता के प्रकटन से ही हीरे की तरह कठोरता की कल्पना की गई है। यह अज्ञात के उद्भव से एक भ्रम मात्र है।

6.56.27

प्रवृत्तौ वा निवृत्तौ वा कैव सा वज्रसारता । चित्तचित्रकृतश्चित्स्थं जगच्चित्रं कदा स्थितम् ॥ २७ ॥

pravṛttau vā nivṛttau vā kaiva sā vajrasāratā | cittacitrakeścitsthaṃ jagaccitraṃ kadā sthitam || 27 ||

Whether in activity or inactivity, what is that diamond-like nature? When is the world, which is a mere creation of the mind, ever stable?

चाहे गतिविधि में हो या अगतिविधि में, वह हीरे की तरह कठोरता क्या है? मन की सृष्टि मात्र यह संसार कब स्थिर है?

6.56.28

अकुड्यमप्यरङ्गाढ्यमिदं स्फारमिवाग्रतः । अहो नु चित्रं निर्भित्ति चित्रमुज्ज्वलमुत्थितम् ॥ २८ ॥

akuḍyamapyaraṅgāḍhyamidaṃ sphāramivāgrataḥ | aho nu citraṃ nirbhitti citramujjvalamutthitam || 28 ||

This is not a mere painting, yet it appears vividly before us. Oh, how wonderful is this creation, so radiant and manifest!

यह एक मामूली चित्र नहीं है, फिर भी यह हमारे सामने स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। ओह, यह सृष्टि कितनी अद्भुत है, इतनी उज्ज्वल और प्रकट!

6.56.29

सुरञ्जनं जगदिति स्फुटं दृष्टिविलोभनम् । नानातमोमषीलेखं नानातेजोंशुरञ्जनम् ॥ २९ ॥

surañjanaṃ jagaditi sphuṭaṃ dṛṣṭivilobhanam | nānātamomaṣīlekhaṃ nānātejoṃśurañjanam || 29 ||

The world is a clear deception of vision, a diverse array of dark and bright elements, a variegated spectacle.

संसार दृष्टि का एक स्पष्ट भ्रम है, अनेक अंधकार और प्रकाश के तत्वों का विविध संग्रह, एक विविध दृश्य।

6.56.30

नानाकल्पाङ्गावयवं नानारागानुरञ्जितम् । नानादृष्टिविलासाढ्यं नानानुभवलोचनम् ॥ ३० ॥

nānākalpāṅgāvayavaṃ nānārāgānurañjitam | nānādṛṣṭivilāsāḍhyaṃ nānānubhavalocanam || 30 ||

The world is composed of various imagined parts, colored by various emotions, adorned with various perspectives, and seen through various experiences.

संसार विविध कल्पित अंगों से बना है, विविध भावों से रंगा है, विविध दृष्टिकोणों से सजा है, और विविध अनुभवों से देखा जाता है।

6.56.31

नानाग्रहोग्रकचनं नानाकाराग्रपश्चिमम्। व्योमनीलसरः फुल्लताराचन्द्रार्कपङ्कजम्॥ ३१॥

nānāgrahograka canaṃ nānākārāg rapaścimam | vyomanīlasaraḥ phullatārācandrārkapankajam || 31 ||

The universe is filled with various fierce planets and diverse forms, with the sky resembling a blue lake adorned with blooming stars, moon, sun, and lotuses.

ब्रह्मांड विभिन्न भयंकर ग्रहों और विविध रूपों से भरा हुआ है, आकाश नीले सरोवर के समान है जिसमें खिले हुए तारे, चंद्रमा, सूर्य और कमल सुशोभित हैं।

6.56.32

विचित्ररचनोद्युक्तमेघालीपत्रमञ्जरि। प्रकोष्ठकामिलिखितसुरासुरनृपुत्रिकम्। परमालोकमङ्कोलयुवताकाशकुडयकम्॥ ३२॥

vicitraracanodyuktame ghālīpatramanjari | prakoṣṭhakāmilikhita surāsuranrputrikam | paramālokamankolayuvatākāśakuḍayakam || 32 ||

The universe is adorned with marvelous creations, clouds resembling painted leaves and buds, with divine and demonic forms inscribed in the corners, and the supreme world is like a swing in the sky.

ब्रह्मांड अद्भुत सृष्टियों से सुशोभित है, बादल रंगे हुए पत्तों और कलियों के समान हैं, कोनों में दिव्य और असुरीय रूप अंकित हैं, और परम जगत आकाश में एक झूले के समान है।

6.56.33

आकाश एव रचिता प्रतिभैकरङ्गा मुग्धा जगत्त्रयमनोहरपुत्रिकेयम्। चिन्मात्रचक्रपरिरञ्जितसर्वलोका लीलाकुला चपलचित्तकचित्रकर्त्रा॥ ३३॥

ākāśa eva racitā pratibhaikaraṅgā mugdhā jagattrayamanoharaputrikeyam | cinmātracakraparirañjitasarvalokā līlākulā capalacittakacitrakartrā || 33 ||

The sky itself is created with unique brilliance, charming the three worlds with its delightful forms. The entire universe is adorned with the wheel of pure consciousness, filled with playful and fickle-minded creators.

आकाश स्वयं अनोखी चमक से बना है, जो अपने मनोहर रूपों से तीनों लोकों को मोहित करता है। पूरा ब्रह्मांड शुद्ध चेतना के चक्र से सुशोभित है, जो खेल-खेल में और चंचल मन वाले सृष्टिकर्ताओं से भरा हुआ है।

6.56.34

हेमाचलाङ्गलतिका घनकेशपाशा चन्द्रार्कलोचनविचालनदृष्टलोका। धर्मार्थकामविनियन्त्रितशास्त्रवस्त्रा पातालजालचरणोन्नतभूनितम्बा॥ ३४॥

hemācalāṅgalatikā ghanakeśapāśā candrārkalocanavicālanadṛṣṭalokā | dharmārthakāmaviniyantritaśāstravastrā pātālajālacaraṇonnatabhūnitambā || 34 ||

The golden mountain ranges are adorned with dense forests, and the world is illuminated by the glances of the moon and the sun. The scriptures are controlled by dharma, artha, and kama, and the earth is elevated by the net-like feet of the underworld.

सुवर्ण पर्वत श्रृंखलाएँ घने जंगलों से सुशोभित हैं, और चंद्रमा और सूर्य की दृष्टि से जगत प्रकाशित है। शास्त्र धर्म, अर्थ और काम द्वारा नियंत्रित हैं, और पृथ्वी पाताल के जाल-जैसे पैरों से उन्नत है।

6.56.35

ब्रह्मेन्द्ररुद्रहरिबाहुचतुष्टयोग्रा सत्त्वावृतोन्नतकुचस्फुरदङ्गयष्टिः । सुव्यालवेष्टितमहीतलपद्मपीठा पत्रीकृताचलमहाभुवनोदरी च ॥ ३५ ॥

brahmendrarudrahari bāhucatuṣṭayogrā sattvāvṛtonnatakucasphuradaṅgayaṣṭiḥ |
suvyālaveṣṭitamahītalapadmapīṭhā patrīkṛtācalamahābhuvanodarī ca || 35 ||

The powerful four-armed forms of Brahma, Indra, Rudra, and Hari are adorned with the essence of purity, with their chests and limbs shining brightly. The earth is enveloped by serpents and adorned with lotus seats, and the great mountains are like the petals of the universe's lotus.

ब्रह्मा, इंद्र, रुद्र और हरि के शक्तिशाली चार-भुजा रूप शुद्धता के सार से सुशोभित हैं, जिनके वक्ष और अंग चमकदार हैं। पृथ्वी सर्पों से घिरी हुई है और कमल की आसनों से सुशोभित है, और महान पर्वत ब्रह्मांड के कमल के पंखुड़ियों के समान हैं।

6.56.36

रात्र्यन्धकारचपलत्वहराक्षिचेष्टा ताराकरालपुलका पविदन्तपङ्क्तिः । चञ्चच्चतुर्दशविधातुलभूतजातरोमाञ्चना प्रलयवादकदम्बपुष्पा ॥ ३६ ॥

rātryandhakāracapalatvaharākṣiceṣṭā tārākarālapulakā pavidantapaṅktiḥ |
cañcaccaturdaśavidhātulabhūtajātaroṃāñcana pralayavādakadambapuṣpā || 36 ||

The night's darkness, with its flickering movements, steals the beauty of the stars, causing them to tremble in the sky. The fourteen types of beings, with their hair standing on end, are like the flowers of the Kadamba tree that bloom during the dissolution.

रात का अंधकार, अपनी चपलता से, तारों की चमक को चुरा लेता है, जिससे वे आकाश में काँपने लगते हैं। चौदह प्रकार के प्राणी, अपने रोम खड़े करके, प्रलय के समय कदम्ब के फूलों की तरह खिलते हैं।

6.56.37

जीवान्विता गगन एव कृता विचित्रा व्योमात्मिका चिरविलक्षणचित्रकर्त्रा । चित्तेन चित्रपरिकर्मविदा त्रिलोकी नानाविलासवलिता वरपुत्रिकेति ॥ ३७ ॥

jīvānvitā gagana eva kṛtā vicitrā vyomātmikā ciravilakṣaṇacitrakartrā | cittena citraparikarmavidā trilokī
nānāvilāsavalitā varaputriketi || 37 ||

The sky is filled with life, made wondrous by its celestial nature, and adorned with unique and marvelous creations. The three worlds, with their diverse forms of enjoyment, are known as the abode of the supreme daughter.

आकाश जीवन से भरा है, अपनी आकाशीय प्रकृति से विचित्र बनाया गया है, और अनोखे और अद्भुत सृजन से सजाया गया है। तीनों लोक, अपने विविध आनंद के रूप से, श्रेष्ठ पुत्री के निवास के रूप में जाने जाते हैं।

Chapter 57

6.57.1

श्रीभगवानुवाचैदं विद्धि महाश्चर्यमर्जुनेह हि यत्किलपूर्वं संजायते चित्रं पश्चाद्भित्तिरुदेति हि ॥ १ ॥

śrībhagavānuvācaidaṃ viddhi mahāścaryamarjuneha hi yatkilapūrvaṃ saṃjāyate citraṃ paścādbhittirudeti hi || 1 ||

The Supreme Lord said: Know this to be a great wonder, O Arjuna, that something extraordinary arises first, and then a wall rises afterward.

श्री भगवान ने कहा: हे अर्जुन, यह जानो कि यह एक महान आश्चर्य है कि पहले कुछ अद्भुत उत्पन्न होता है, और फिर एक दीवार उठती है।

6.57.2

अभित्तावुत्थिते चित्रे दृश्यते भित्तिराततताहो विचित्रा मायेयं मग्नं तुम्बं शिला प्लुता ॥ २ ॥

abhittāvutthite citre dṛśyate bhittirātatāaho vicitrā māyeyaṃ magnaṃ tumbaṃ śilā plutā || 2 ||

When the extraordinary arises without the wall, the wall is seen as extended. Oh, this magical illusion is wonderful, the gourd is submerged, the stone is floating.

जब अद्भुत बिना दीवार के उत्पन्न होता है, तो दीवार को फैला हुआ दिखाई देता है। ओह, यह जादू का खेल अद्भुत है, लौकी डूबी हुई है, पत्थर तैर रहा है।

6.57.3

चित्तस्थचित्रसदृशे व्योमात्मनि जगत्त्रयेव्योमात्मनस्ते किमियमहन्ताव्योमतोदिता ॥ ३ ॥

cittasthacitrasadṛśe vyomātmani jagattrayevyomātmanaste kimiyamahantāvyomatoditā || 3 ||

In the self, which is like a picture in the mind, the three worlds are like the self. What is this greatness that arises from the self?

मन में चित्र के समान आत्मा में, तीनों लोक आत्मा के समान हैं। आत्मा से उत्पन्न होने वाली यह महानता क्या है?

6.57.4

सर्वं व्योमकृतं व्योम्ना व्योम्नि व्योम विलीयतेभुज्यते व्योमनि व्योम व्योम व्योमनि चाततम् ॥ ४ ॥

sarvaṃ vyomakṛtaṃ vyomnā vyomni vyoma vilīyatebhujyate vyomani vyoma vyoma vyomani cātatam || 4 ||

Everything is created by the sky, in the sky, the sky dissolves, the sky is enjoyed in the sky, the sky is the sky in the sky.

सब कुछ आकाश से बना है, आकाश में, आकाश विलीन होता है, आकाश आकाश में भोगा जाता है, आकाश आकाश में आकाश है।

6.57.5

वेष्टितं वासनारज्ज्वा दीर्घसंसृति दामवत्वासनोद्वेष्टनेनैव तदिहोद्वेष्ट्यतेऽर्जुन ॥ ५ ॥

veṣṭitaṃ vāsanārajjvā dīrghasaṃsṛti dāmavatvāsanodveṣṭanenaiva tadihodveṣṭyate'rjuna || 5 ||

Bound by the rope of desires, like a long-lasting bond, by the hatred of desires, it is hated here, O Arjuna.

इच्छाओं की रस्सी से बंधे हुए, जैसे एक लंबे समय तक चलने वाला बंधन, इच्छाओं के घृणा से, यहां घृणा की जाती है, हे अर्जुन।

6.57.6

प्रतिबिम्बं यथादर्शे तथेदं ब्रह्मणि स्वयम्। अगम्यं छेदभेदादेराधारानन्यतावशात्॥ ६॥

pratibimbaṃ yathādarśe tathedaṃ brahmaṇi svayam | agamyaṃ chedabhedāderādhārānanyatāvaśāt || 6 ||

Just as a reflection in a mirror, so is this in Brahman itself | It is inaccessible due to the indivisibility of the substratum

जैसे दर्पण में प्रतिबिम्ब, वैसे ही यह ब्रह्म में स्वयं है | अविभाज्य आधार के कारण यह अगम्य है

6.57.7

अनन्यच्छेदभेदादि ब्रह्मणि ब्रह्मणाम्बरम्। किं कथं कस्य केनैव च्छिद्यते वा क्व भिद्यते॥ ७॥

ananyacchedabhedādi brahmaṇi brahmaṇāmbaram | kiṃ kathaṃ kasya kenaiva cchidyate vā kva bhidyate || 7 ||

The indivisible and non-different Brahman is the garment of Brahman | How, by whom, and where is it divided or differentiated?

अविभाज्य और अभिन्न ब्रह्म ब्रह्म का वस्त्र है | कैसे, किसके द्वारा, और कहाँ यह विभाजित या भिन्न होता है?

6.57.8

तेनेह वासनाभावो बोधात्संपन्न एव ते। यो न निर्वासनो नूनं सर्वधर्मपरोऽपि सन्॥ ८॥

teneha vāsanābhāvo bodhātsaṃpanna eva te | yo na nirvāsano nūnaṃ sarvadharmaparo'pi san || 8 ||

Therefore, here, the absence of desires is indeed attained through knowledge | One who is not free from desires, even if devoted to all duties, is certainly not free

इसलिए, यहाँ, वासनाओं का अभाव ज्ञान से ही प्राप्त होता है | जो वासनाओं से मुक्त नहीं है, वह सभी धर्मों में तत्पर होने पर भी निश्चित रूप से मुक्त नहीं है

6.57.9

सर्वज्ञोऽप्यतिबद्धात्मा पञ्जरस्थो यथा हरिः। यस्यास्ति वासनाबीजमत्यल्पं चितिभूमिगम्॥ ९॥

sarvajño'pyatibaddhātmā pañjarastho yathā hariḥ | yasyāsti vāsanābījamatyalpaṃ citibhūmigam || 9 ||

Even the omniscient one, whose self is greatly bound, is like a bird in a cage | One who has even a small seed of desire reaches the realm of consciousness

भले ही सर्वज्ञ हो, जिसका आत्मा अत्यधिक बंधन में है, वह पिंजड़े में पक्षी की तरह है | जिसके पास वासना का थोड़ा सा बीज है, वह चेतना की भूमि तक पहुँचता है

6.57.10

बृहत्संजायते तस्य पुनः संसृतिकाननम्। अभ्यासाद्धृदि रूढेन सत्यसंबोधवह्निना। निर्दग्धं वासनाबीजं न भूयः परिरोहति॥ १०॥

bṛhatsaṃjāyate tasya punaḥ saṃsṛtikānanam | abhyāsāddhṛdi rūḍhena satyasaṃbodhavahninā | nirdagdhaṃ vāsanābījaṃ na bhūyaḥ parirohati || 10 ||

For him, the vast forest of transmigration arises again | By the fire of true awakening, firmly established in the heart through practice, the seed of desire is burned and does not sprout again

उसके लिए, पुनः विशाल पुनर्जन्म का वन उत्पन्न होता है | अभ्यास से हृदय में दृढ़ता से स्थापित सत्य बोध की अग्नि से वासना का बीज भस्म हो जाता है और फिर कभी नहीं उगता

6.57.11

दग्धं तु वासनाबीजं न निमज्जति वस्तुषु । सुखदुःखादिषु स्वच्छं पद्मपत्रमिवाम्भसि ॥ ११ ॥

dagdhaṃ tu vāsanābījaṃ na nimajjati vastuṣu | sukhaduḥkhādiṣu svacchaṃ padmapatramivāmbhasi || 11 ||

The seed of desire, once burnt, does not immerse itself in objects, remaining pure like a lotus leaf in water amidst pleasure and pain.

जब वासना का बीज जल जाता है, तो वह वस्तुओं में नहीं डूबता, सुख-दुःख में भी पानी में कमल के पत्ते की तरह स्वच्छ रहता है।

6.57.12

शान्तात्मा विगतभयोज्झितामिताशो निर्वाणो गलितमहामनोविमोहः । सम्यक्त्वं श्रुतमवगम्य पावनं तत्तिष्ठात्मन्यपहतिरेकशान्तिरूपः ॥ १२ ॥

śāntātmā vigatabhayojjhitāmitāśo nirvāṇo galitamahāmanovimohaḥ | samyaktvaṃ śrutamavagamya pāvanaṃ tattiṣṭhātmanyapahatirekaśāntirūpaḥ || 12 ||

One who is peaceful, free from fear, devoid of desires, and liberated from the great delusion of the mind, having understood the true nature of the self, abides in the pure form of single peace.

जो शान्त आत्मा है, भयरहित है, इच्छाओं से मुक्त है, और मन के महान भ्रम से मुक्त है, जिसने आत्मा के सच्चे स्वरूप को समझ लिया है, वह एकमात्र शान्ति के शुद्ध रूप में निवास करता है।

Chapter 58

6.58.1

अर्जुन उवाच । नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत । स्थितोऽस्मि गतसंदेहः करिष्ये वचनं तव ॥ १ ॥

arjuna uvāca | naṣṭo mohaḥ smṛtirlabdhā tvatprasādānmayācyuta | sthito'smi gatasaṃdehaḥ kariṣye vacanaṃ tava || 1 ||

Arjuna said: My delusion is destroyed, and I have regained my memory through Your grace, O Achyuta. I stand here with all my doubts dispelled. I will act according to Your word.

अर्जुन ने कहा: हे अच्युत, आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया है और मुझे मेरी स्मृति मिल गई है। मैं सभी संदेहों से मुक्त होकर यहाँ खड़ा हूँ। मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।

6.58.2

श्रीभगवानुवाच । वृत्तयो यदि बोधेन संशान्ता हृदये स्फुटम् । तच्चित्तं शान्तमेवान्तर्विद्धि सत्त्वमुपागतम् ॥ २ ॥

śrībhagavānuvāca | vṛttayo yadi bodhena saṃśāntā hṛdaye sphuṭam | taccittaṃ śāntamevāntarviddhi sattvamupāgatam || 2 ||

The Supreme Lord said: If the mental modifications are completely pacified by knowledge in the heart, then know that the mind has attained tranquility and is endowed with the quality of sattva.

भगवान ने कहा: यदि मानसिक वृत्तियाँ ज्ञान द्वारा हृदय में पूर्ण रूप से शांत हो गई हैं, तो समझो कि मन शांति प्राप्त कर चुका है और सत्त्व गुण से युक्त है।

6.58.3

अत्र तच्चेत्यरहितं प्रत्यक्चेतननामकम् । यत्त्वशेषविनिर्मुक्तं यत्सर्वं सर्वतश्च यत् ॥ ३ ॥

atra taccetyarahitaṃ pratyakcetananāmakam | yattvaśeṣavinirmuktaṃ yatsarvaṃ sarvataśca yat || 3 ||

Here, that which is devoid of the concept of 'this' and 'that' is called the inner consciousness. It is free from all limitations and is all-pervading.

यहाँ, जो 'यह' और 'वह' की अवधारणा से रहित है, वह अंतर्चेतना कहलाता है। यह सभी सीमाओं से मुक्त है और सर्वव्यापी है।

6.58.4

न केचन विदन्त्येते तत्पदं जागतादयः । भूतलाद्गगनोड्डीनं विहंगममिवोन्नतम् ॥ ४ ॥

na kecana vidantyete tatpadaṃ jāgatādayaḥ | bhūtalādgaganoḍḍīnaṃ vihaṃgamamivonnatam || 4 ||

None of the worldly beings know that state, which is elevated like a bird flying high in the sky from the earth.

दुनिया के कोई भी प्राणी उस अवस्था को नहीं जानते हैं, जो पृथ्वी से आकाश में उड़ते हुए पक्षी की तरह उन्नत है।

6.58.5

प्रत्यक्चेतनमाभासं शुद्धं संकल्पवर्जितम् । अगम्यमेनमात्मानं विद्धि दूरं दृशामिव ॥ ५ ॥

pratyakcetanamābhāsaṃ śuddhaṃ saṃkalpavarjitam | agamyamenamātmānaṃ viddhi dūraṃ dṛśāmiva || 5 ||

Know that inner consciousness, which is pure, free from desires, and unreachable, as distant like the sight of the eyes.

उस अंतर्चेतना को जानो, जो शुद्ध, इच्छाओं से मुक्त और अप्राप्य है, नेत्रों की दृष्टि की तरह दूर।

6.58.6

सर्वातीतं यदत्यच्छं विना शुद्धं स्ववासना । न शक्नोति पदं द्रष्टुं जनदृष्टिरणूनिव ॥ ६ ॥

sarvātītaṃ yadatyacchaṃ vinā śuddhaṃ svavāsanā | na śaknoti padaṃ draṣṭuṃ janadṛṣṭiraṇūniva || 6 ||

That which transcends everything cannot be seen without pure self-impressions, just as the vision of people cannot see it.

जो सब कुछ से परे है, उसे बिना शुद्ध स्व-वासना के नहीं देखा जा सकता, जैसे लोगों की दृष्टि उसे नहीं देख सकती।

6.58.7

यत्प्राप्तौ सर्व एवेमे क्षीणा घटपटादयः । वराकी वासना तत्र किं करोतु परे पदे ॥ ७ ॥

yatprāptau sarva evaime kṣīṇā ghaṭapaṭādayaḥ | varākī vāsanā tatra kiṃ karotu pare pade || 7 ||

When that state is attained, all these disputes and doubts are destroyed. What can the desires of the senses do there in the supreme state?

जब वह अवस्था प्राप्त होती है, तब सभी ये विवाद और संदेह नष्ट हो जाते हैं। वहाँ परम अवस्था में इन्द्रियों की इच्छाएँ क्या कर सकती हैं?

6.58.8

यथाऽनलगिरिं प्राप्य हिमलेशो विलीयते । शुद्धमासाद्य चित्तत्त्वमविद्या लीयते तथा ॥ ८ ॥

yathānalagiriṃ prāpya himaleśo vilīyate | śuddhamāsādya cittatattvamavidyā līyate tathā || 8 ||

Just as snow melts upon reaching a mountain of fire, so does ignorance dissolve upon attaining the pure essence of consciousness.

जैसे बर्फ अग्नि पर्वत पर पहुँचकर पिघल जाती है, वैसे ही अज्ञान शुद्ध चेतना के तत्त्व को प्राप्त करने पर विलीन हो जाता है।

6.58.9

क्व वराकी रजस्तुच्छा वासना भोगबन्धनम् । क्व पूरितजगज्जालश्चित्तत्त्वविपुलानिलः ॥ ९ ॥

kva varākī rajastucchā vāsanā bhogabandhanam | kva pūritajagajjālaścittatattvavipulānilaḥ || 9 ||

Where are the insignificant desires of the senses that bind through enjoyment? Where is the vast wind of the pure essence of consciousness that pervades the entire universe?

इन्द्रियों की तुच्छ इच्छाएँ जो भोग से बाँधती हैं, वे कहाँ हैं? शुद्ध चेतना के तत्त्व का विशाल वायु जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है, वह कहाँ है?

6.58.10

तावत्स्फुरत्यविद्येयं नानाकारविकारिणी । यावन्न संपरिज्ञातः शुद्धः स्वात्माऽयमात्मना ॥ १० ॥

tāvatsphuratyavidyeyaṃ nānākāravikāriṇī | yāvanna saṃparijñātaḥ śuddhaḥ svātmāyamātmanā || 10 ||

Until the pure self is fully realized by oneself, this ignorance continues to manifest in various forms.

जब तक शुद्ध आत्मा स्वयं द्वारा पूरी तरह से जाना नहीं जाता, तब तक यह अज्ञान विभिन्न रूपों में प्रकट होता रहता है।

6.58.11

सर्वा दृश्यदृशः क्षीणाः स्वच्छतैवोदिता तथा । नभसीव पदे तस्मिन्स्वात्मन्यखिलपूरणे ॥ ११ ॥

sarvā dṛśyadṛśaḥ kṣīṇāḥ svacchatāivoditā tathā | nabhasīva pade tasmin svātmanyakhilapūraṇe || 11 ||

All perceptions and perceivers are exhausted, and only pure clarity remains in that state of complete fulfillment of the self.

सभी दृश्य और द्रष्टा समाप्त हो गए हैं, और केवल शुद्ध स्पष्टता उस स्थिति में बची है जहाँ आत्मा पूर्णता को प्राप्त होती है।

6.58.12

समग्राकाररूपं तत्समग्राकारवर्जितम्। वागतीतं परं वस्तु केन नामोपमीयते ॥ १२ ॥

samagrākārarūpaṃ tat samagrākāravarjitam | vāgatītaṃ paraṃ vastu kena nāmopamīyate || 12 ||

That which has the form of the whole and yet is devoid of the whole form, which is beyond words and is the supreme reality, how can it be compared to anything?

जो पूर्ण रूप का है और फिर भी पूर्ण रूप से रहित है, जो शब्दों से परे है और परम वास्तविकता है, उसे किसी चीज से कैसे तुलना की जा सकती है?

6.58.13

विषयविषविषूचिकामतस्त्वं निपुणमहंस्थितिवासनामपास्य। अभिमतपरिहारमन्त्रयुक्त्या भव विभवो भगवान्भियामभूमिः ॥ १३ ॥

viṣayaviṣaviṣūcikāmatastvaṃ nipuṇamahaṃsthitivāsanāmapāsya | abhimataparihāramantrayuktyā bhava vibhavo bhagavānbhiyāmabhūmiḥ || 13 ||

O you who are like the scorpion of worldly desires, abandon the subtle ego-centric tendencies. By the mantra of renunciation, become the wealth of the divine, the fearless ground.

हे विषयों के विष के समान व्यक्ति, सूक्ष्म अहंकार की वासनाओं को त्याग दो। त्याग के मंत्र द्वारा, दिव्य धन और निर्भय भूमि बन जाओ।

6.58.14

श्रीवसिष्ठ उवाच। इति गदितवति त्रिलोकनाथे क्षणमिव मौनमुपस्थिते पुरस्तात्। अथ मधुप इवाऽसिताब्जखण्डे वचनमुपैष्यति तत्र पाण्डुपुत्रः ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti gaditavati trilokanāthe kṣaṇamiva maunamupasthite purastāt | atha madhupa ivā'sitābjakhaṇḍe vacanamupaiṣyati tatra pāṇḍuputraḥ || 14 ||

Vasishtha said: Having spoken thus, the lord of the three worlds remained silent for a moment. Then, like a bee on a blue lotus petal, Arjuna spoke there.

वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर, तीनों लोकों के स्वामी एक क्षण के लिए चुप हो गए। तब, जैसे एक भौंरा नीले कमल के पंखुड़ी पर, अर्जुन ने वहाँ बोलना शुरू किया।

6.58.15

अर्जुन उवाच। परिगलितसमस्तशोकभारा परमुदयं भगवन्मतिर्गतेयम्। मम तव वचनेन लोकभर्तुर्दिनपतिना परिबोधिताब्जिनीव ॥ १५ ॥

arjuna uvāca | parigalitasmastśokabhārā paramudayaṃ bhagavanmatirgateyam | mama tava vacanena lokabharturdinapatinā paribodhitābjinīva || 15 ||

Arjuna said: O Lord, my mind has attained supreme bliss, and all my sorrows have melted away. By your words, the supporter of the world, the sun, has enlightened me like a blooming lotus.

अर्जुन ने कहा: हे भगवान, मेरा मन परम आनंद प्राप्त कर चुका है, और मेरे सभी दुःख पिघल गए हैं। आपके शब्दों से, लोकों के पालनहार, सूर्य, ने मुझे एक खिले हुए कमल की तरह प्रकाशित किया है।

6.58.16

इत्युक्त्वोत्थाय गाण्डीवधन्वा स हरिसारथिः। अर्जुनो गतसंदेहो रणलीलां करिष्यति ॥ १६ ॥

ityuktvotthāya gāṇḍīvadhanvā sa harisārathiḥ | arjuno gatasaṃdeho raṇalīlāṃ kariṣyati || 16 ||

Having said this, Arjuna, the wielder of the Gandiva bow, rose up with his charioteer Hari (Krishna), free from doubt, and will perform the sport of battle.

ऐसा कहकर गाण्डीव धनुर्धर अर्जुन हरि सारथि के साथ उठे और संदेहरहित होकर रणक्रीड़ा करेंगे।

6.58.17

करिष्यति क्षतगजवाजिसारथिद्रुतक्षरद्रुधिरमहानदीं भुवम्। शरोत्करप्रसरमहारजःस्थलीतिरोहितद्युमणिविलोचनां दिवम्॥ १७॥

kariṣyati kṣatagajavājisārathidrutakṣaradrudhiramahānadīṃ bhuvam |
śarotkaraprasaramahārajaḥsthalītirohitadyumaṇivilocanāṃ divam || 17 ||

He will create a great river of blood flowing from the wounded elephants, horses, charioteers, and swift arrows, covering the earth. The sky will be adorned with the brilliance of weapons, resembling the sun's rays obscuring the firmament.

वह घायल हाथियों, घोड़ों, सारथियों और तेज बाणों से बहती रक्त की महानदी बनाएगा, जो पृथ्वी को ढंकेगी। आकाश अस्त्रों की चमक से सजेगा, जैसे सूर्य की किरणें आकाश को ढंकती हैं।

Chapter 59

6.59.1

श्रीवसिष्ठ उवाच एतां दृष्टिमवष्टभ्य राघवाऽघविनाशिनीम् तिष्ठ निःसङ्गसंन्यासब्रह्मार्पणमयात्मकः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca etāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya rāghavā'ghavināśinīm tiṣṭha niḥsaṅgasannyāsabrahmārpaṇamayātmakaḥ || 1 ||

Vasishtha said: Holding this vision, O Raghava, the destroyer of sins, remain established in the self, which is devoid of attachment, renunciation, and dedicated to Brahman.

वसिष्ठ ने कहा: हे रघुवंशी, पापों का नाश करने वाली इस दृष्टि को धारण करके, आसक्तिहीन, संन्यास और ब्रह्म अर्पण से युक्त आत्मा में स्थित रहो।

6.59.2

यस्मिन्सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः यश्च सर्वमयो नित्यमात्मानं विद्धि तं परम् ॥ २ ॥

yasmin sarvaṃ yataḥ sarvaṃ yaḥ sarvaṃ sarvataś ca yaḥ yaś ca sarvamayo nityam ātmānaṃ viddhi taṃ param || 2 ||

Know that supreme self to be the eternal one who is in everything, from whom everything comes, who is everything, and who pervades everything.

उस परम आत्मा को जानो जो सब में है, जिससे सब कुछ उत्पन्न होता है, जो सब कुछ है, और जो सब में व्याप्त है।

6.59.3

दूरस्थमप्यदूरस्थं सर्वगं तत्स्थमेव च तत्स्थः सत्तामवाप्नोषि तदेवास्यस्तसंशयः ॥ ३ ॥

dūrastham apy adūrasthaṃ sarvagaṃ tatstham eva ca tatsthaḥ sattām avāpnoṣi tad evāsya tasaṃśayaḥ || 3 ||

Even if it is far, it is not far; it is omnipresent and situated in that. By being situated in that, you attain existence. There is no doubt about it.

यदि वह दूर है तो भी वह दूर नहीं है; वह सर्वव्यापी है और उसमें स्थित है। उसमें स्थित होकर आप अस्तित्व प्राप्त करते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है।

6.59.4

यत्संवेद्यविनिर्मुक्तं संवेदनमनिर्मितम् चेत्यमुक्तं चिदाभासं तद्विद्धि परमं पदम् ॥ ४ ॥

yat saṃvedyavinirmuktaṃ saṃvedanamanirmitaṃ cetyamuktaṃ cidābhāsaṃ tadviddhi paramaṃ padam || 4 ||

Know that supreme state to be the reflection of consciousness, which is free from the known and the knower, and is uncreated awareness.

उस परम पद को जानो जो ज्ञाता और ज्ञेय से मुक्त है, और जो अनिर्मित चेतना का प्रतिबिंब है।

6.59.5

सा परा परमा काष्ठा सा दृशां दृगनुत्तमा सा महिम्नां च महिमा गुरूणां सा तथा गुरुः ॥ ५ ॥

sā parā paramā kāṣṭhā sā dṛśāṃ dṛganuttamā sā mahimnāṃ ca mahimā gurūṇāṃ sā tathā guruḥ || 5 ||

That is the supreme limit, the highest vision, the greatest glory, and the ultimate guru.

वह परम सीमा, सर्वोच्च दृष्टि, सर्वोच्च महिमा, और अंतिम गुरु है।

6.59.6

स आत्मा तच्च विज्ञानं स शून्यं ब्रह्म तत्परम्। तच्छ्रेयः स शिवः शान्तः सा विद्या सा परा स्थितिः ॥ ६ ॥

sa ātmā tacca vijñānaṃ sa śūnyaṃ brahma tatparam | tacchreyaḥ sa śivaḥ śāntaḥ sā vidyā sā parā sthitiḥ || 6 ||

That is the Self, that is the knowledge, that is the void, that is Brahman, the supreme. That is the ultimate good, that is Shiva, the peaceful, that is the knowledge, that is the highest state.

वह आत्मा है, वही ज्ञान है, वही शून्य है, वही ब्रह्म है, परम है। वही श्रेय है, वही शिव है, शान्त है, वही विद्या है, वही परम स्थिति है।

6.59.7

योऽयमन्तश्चितेरात्मा सर्वानुभवरूपकः। यत्र स्वदन्ते सर्वाणि स्वात्मद्रव्याणि सत्तया ॥ ७ ॥

yo'yamantaściterātmā sarvānubhavarūpakaḥ | yatra svadante sarvāṇi svātmadravāṇi sattayā || 7 ||

That which is the inner Self, the essence of all experiences, where all elements of the Self are tasted with reality.

जो यह अंतःकरण का आत्मा है, सभी अनुभवों का रूप है। जहाँ सभी आत्मा के तत्व वास्तविकता से स्वादिष्ट होते हैं।

6.59.8

स जगत्तिलतैलात्मा स जगद्गृहदीपकः। स जगत्पादपरसः स जगत्पशुपालकः ॥ ८ ॥

sa jagattilatilātmā sa jagadgṛhadīpakaḥ | sa jagatpādaparasaḥ sa jagatpaśupālakaḥ || 8 ||

That is the essence of the world, the lamp of the world, the supreme tree of the world, the protector of the world.

वह जगत का सार है, जगत का दीपक है, जगत का परम वृक्ष है, जगत का पालक है।

6.59.9

स तन्तुर्भूतमुक्तानां परिप्रोतहृदम्बरः। स भूतमरिचौघानां परमा तीक्ष्णता तथा ॥ ९ ॥

sa tanturbhūtamuktānāṃ pariprota hṛdambaraḥ | sa bhūtamaricaughānāṃ paramā tīkṣṇatā tathā || 9 ||

That is the thread of all beings, the garland of the heart, the supreme sharpness of the waves of elements.

वह सभी जीवों का तार है, हृदय का हार है, तत्वों की लहरों की परम तीक्ष्णता है।

6.59.10

स पदार्थे पदार्थत्वं स तत्त्वं यदनुत्तमम्। स सतो वस्तुनः सत्त्वमसत्त्वं वा सतः स्वतः ॥ १० ॥

sa padārthe padārthatvaṃ sa tattvaṃ yadanuttamam | sa sato vastunaḥ sattvam asattvaṃ vā sataḥ svataḥ || 10 ||

That is the reality of objects, the supreme principle, the existence of the real substance, or the non-existence of the real substance by itself.

वह वस्तुओं का सार है, परम तत्व है, वास्तविक पदार्थ का अस्तित्व है, या वास्तविक पदार्थ का अनस्तित्व स्वयं है।

6.59.11

यः स्वविचित्तिविचित्रेण स्वयमात्मैव लभ्यते। सर्व एव जगद्भावा अविचारेण चारवः ॥ ११ ॥

yaḥ svavittivicitreṇa svayamātmaiva labhyate | sarva eva jagadbhāvā avicāreṇa cāravaḥ || 11 ||

One who attains the self through the variety of their own intellect, all worldly experiences are enjoyable without deliberation.

जो अपने बुद्धि की विविधता से स्वयं आत्मा को प्राप्त करता है, उसके लिए सभी संसारिक अनुभव विचार किए बिना भी आनंददायक होते हैं।

6.59.12

अविद्यमानाः सद्भावा विचारविशरारवः । अहमादौ जगज्जाले मिथ्याभ्रमभरात्मनि ॥ १२ ॥

avidyamānāḥ sadbhāvā vicāravīśarāravaḥ | ahamādau jagajjāle mithyābharamabharātmani || 12 ||

The non-existent entities appear real due to the illusion of thought. In the web of the world, starting with the ego, there is a false delusion of reality.

अवास्तविक वस्तुएं विचार के भ्रम के कारण सत्य प्रतीत होती हैं। संसार के जाल में, अहंकार से शुरू होकर, वास्तविकता का झूठा भ्रम होता है।

6.59.13

को नु भूत्वाऽनुबध्नामि वृत्तिं कथमवाप धीः । आद्यमध्यान्तमानानि संकल्पकलनान्यहम् ॥ १३ ॥

ko nu bhūtvā'nubadhnāmi vṛttiṃ kathamavāpa dhīḥ | ādyamadhyāntamānāni saṃkalpakalanānyaham || 13 ||

Who am I to bind myself to a profession? How can the intellect attain it? I am the beginning, middle, and end of all resolutions and calculations.

मैं कौन हूँ कि खुद को किसी वृत्ति से बाँधूँ? बुद्धि कैसे इसे प्राप्त कर सकती है? मैं सभी संकल्पों और गणनाओं का आदि, मध्य और अंत हूँ।

6.59.14

ब्रह्माकाशमनाद्यन्तं केवेयत्ता ममात्मनः । इति निश्चयवानन्तः सम्यग्व्यवहृतिर्बहिः ॥ १४ ॥

brahmākāśamanādyantaṃ keveyattā mamātmanaḥ | iti niścayavānanthḥ samyagvyavahṛtirbahiḥ || 14 ||

The infinite Brahman is the sole reality of my self. With this conviction, one should act appropriately in the world.

अनंत ब्रह्म मेरे आत्मा की एकमात्र वास्तविकता है। इस निश्चय के साथ, एक को संसार में उचित रूप से कार्य करना चाहिए।

6.59.15

उदयास्तमयोन्मुक्तस्थितिरन्तः स सर्वदा । नास्तमेति न चोदेति मनः समसमस्थितम् ॥ १५ ॥

udayāstamayonmuktasthitirantaḥ sa sarvadā | nāstameti na codeti manaḥ samasamasthitam || 15 ||

The state of being free from rise and fall is always within. The mind, being equally poised, neither sets nor rises.

उदय और अस्त से मुक्त स्थिति हमेशा अंदर होती है। मन, समान रूप से स्थित होने के कारण, न तो अस्त होता है न ही उदय होता है।

6.59.16

यस्य खस्येव शून्यत्वं स महात्मेह तद्वपुः । भावाद्वैतपदारूढः सुषुप्तपरया धिया ॥ १६ ॥

yasya khasyeva śūnyatvaṃ sa mahātmeha tadvapuḥ | bhāvādvaitapadārūḍhaḥ suṣuptaparayā dhiyā || 16 ||

One who has the emptiness of the sky, that great soul has that form. Established in the state of non-duality, with a mind absorbed in deep sleep.

जिसकी आकाश की तरह शून्यता है, वही महात्मा उस रूप में है। अद्वैत पद में स्थित, सुषुप्ति में लीन मन से।

6.59.17

व्यवहार्यपि संक्षोभं नैत्यादर्शनरो यथा । आदर्शपुरुषस्येव व्यवहारवतोऽपि च ॥ १७ ॥

vyavahāryapi saṃkṣobhaṃ naityādarśanaro yathā | ādarśapuruṣasyeva vyavahāravato'pi ca || 17 ||

Even while engaged in worldly activities, one should remain undisturbed like a mirror. Just as a mirror reflects without being affected, so should one act in the world.

संसार में व्यस्त होने के बावजूद, एक व्यक्ति दर्पण की तरह अविचलित रहना चाहिए। जैसे दर्पण बिना प्रभावित हुए प्रतिबिम्बित करता है, वैसे ही एक व्यक्ति को संसार में कार्य करना चाहिए।

6.59.18

न यस्य हृदयोल्लेखो मनागपि स मुक्तिभाक् । अविभागमिवादर्शे चिन्मणौ प्रतिबिम्बति ॥ १८ ॥

na yasya hṛdayollekho manāgapi sa muktibhāk | avibhāgamivādarśe cinmaṇau pratibimbati || 18 ||

One who has no trace of desire in the heart, even in the mind, is entitled to liberation. Like a reflection in a mirror, the consciousness reflects without division.

जिसके हृदय में इच्छा का कोई चिह्न नहीं है, वह मुक्ति का अधिकारी है। दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह, चेतना बिना विभाजन के प्रतिबिम्बित होती है।

6.59.19

चितेः परमनैर्मल्याद्व्यवहारो यथा गतः । चिच्चमत्कृतिरेवेयं जगदित्यवभासते ॥ १९ ॥

citeḥ paramanairmalyādvyavahāro yathā gataḥ | ciccmatkṛtireveyaṃ jagadityavabhāsate || 19 ||

Due to the supreme purity of consciousness, the worldly activities are as if they have gone. This world is indeed the wonder of consciousness.

चेतना की परम शुद्धता के कारण, संसार की गतिविधियाँ जैसे चली गई हैं। यह संसार वास्तव में चेतना का चमत्कार है।

6.59.20

नेहास्त्यैक्यं न च द्वित्वं ममादेशोऽपि तन्मयः । वाच्यवाचकशिष्येहागुरुवाक्यैश्चमत्कृतैः ॥ २० ॥

nehaastyaikeyaṃ na ca dvitvaṃ mamādeśo'pi tanmayaḥ | vācyavācakaśiṣyeha guruvākyaiścamatkṛtaiḥ || 20 ||

There is no oneness or duality here. Even my command is of that nature. The disciple, the words, and the guru's teachings are all wonders.

यहाँ न एकता है न द्वैत है। मेरी आज्ञा भी उसी स्वभाव की है। शिष्य, शब्द, और गुरु के शिक्षण सभी चमत्कार हैं।

6.59.21

आत्मनात्मनि शान्तैव चिच्चमत्कुरुते चिति । चित्प्रस्पन्दो हि संसारस्तदस्पन्दः परं पदम् ॥ २१ ॥

ātmanātmani śāntaiva ciccamatkurute citi | citpraspando hi saṃsārastadaspandaḥ paraṃ padam || 21 ||

The self is peaceful in its own nature, and it marvels at consciousness. The vibration of consciousness is the world, and the absence of vibration is the supreme state.

आत्मा अपने स्वभाव में शान्त है, और वह चेतना पर आश्चर्य करता है। चेतना की स्पंदन ही संसार है, और स्पंदन का अभाव परम पद है।

6.59.22

चित्स्पन्दशमनेनेयं परिशाम्यति संसृतिः । महाचित्ते नतेऽर्थौऽशभावा यो भावनाक्षयः ॥ २२ ॥

citsprandaśamaneneyaṃ pariśāmyati saṃsṛtiḥ | mahācitte nate'rthau'śabhāvā yo bhāvanākṣayaḥ || 22 ||

By the pacification of the vibration of consciousness, this transmigration is calmed. In the great consciousness, the duality of objects ceases, which is the dissolution of imagination.

चेतना की स्पंदन के शमन से यह संसार शान्त हो जाता है। महाचेतना में, वस्तुओं की द्वैतता समाप्त हो जाती है, जो कि कल्पना का विलयन है।

6.59.23

असन्नपि स्वभावं तत्संवित्स्पन्द उदाहृतम् । शून्यत्वमजडं यत्तत्परमाहुश्चितेर्वपुः ॥ २३ ॥

asannapi svabhāvaṃ tatsaṃvitspanda udāhṛtam | śūnyatvamajaḍaṃ yattatparamāhuścitervapuḥ || 23 ||

Even though it is not existent, that nature is called the vibration of consciousness. That which is empty and non-inert is said to be the supreme form of consciousness.

यद्यपि वह अस्तित्व में नहीं है, फिर भी उस स्वभाव को चेतना की स्पंदन कहा जाता है। जो शून्य और निष्क्रिय नहीं है, उसे चेतना का परम रूप कहा जाता है।

6.59.24

तत्त्वेन भावनायत्ता संसृतिः सानुभूयते । अभावनामात्रलयात्सा च निःसाररूपिणी ॥ २४ ॥

tattvena bhāvanāyattā saṃsṛtiḥ sānubhūyate | abhāvanāmātralayātsā ca niḥsārarūpiṇī || 24 ||

Transmigration is experienced as dependent on the imagination of reality. By the dissolution of mere imagination, it becomes devoid of essence.

संसार वास्तविकता की कल्पना पर निर्भर है और उसे अनुभव किया जाता है। केवल कल्पना के विलयन से, वह सारहीन हो जाता है।

6.59.25

केवलं केवलीभावात्तद्रूपा सैव शिष्यते । चित्स्पन्दमेव संसारचक्रप्रवहणं विदुः ॥ २५ ॥

kevalaṃ kevalībhāvāttadrūpā saiva śiṣyate | citsprandameva saṃsāracakrapravahaṇaṃ viduḥ || 25 ||

Only by being in the state of solitude, that form remains. They know the vibration of consciousness itself as the turning of the wheel of the world.

केवल एकांत अवस्था में होने से ही वह रूप बना रहता है। वे चेतना की स्पंदन को ही संसार के चक्र का घूमना मानते हैं।

6.59.26

मातृमानप्रमेयादि कटकादीव हेमनि । पृथगस्ति न च स्पन्दश्चितेर्या संसृतिर्भवेत् ॥ २६ ॥

mātṛmānaprameyādi kaṭakādīva hemani | pṛthagasti na ca spandaściteryā saṃsṛtirbhavet || 26 ||

Just as gold is separate from the bracelet and other objects, the pulsation of consciousness is separate from the objects of knowledge. There is no pulsation of consciousness in the objects of knowledge. If there were, then there would be transmigration.

जैसे सोना चूड़ी और अन्य वस्तुओं से अलग होता है, वैसे ही चेतना की स्पंदन ज्ञान के विषयों से अलग होती है। ज्ञान के विषयों में चेतना की स्पंदन नहीं होती। अगर होती तो संसार होता।

6.59.27

चित्तमेव चितिस्पन्दस्तदबोधो हि संसृतिः । अबोधमात्रे चित्स्पन्दः कटकत्वमिवोत्थितम् ॥ २७ ॥

cittameva citispanadas tadabodho hi saṃsṛtiḥ | abodhamātre citspandaḥ kaṭakatvamivottitam || 27 ||

The pulsation of consciousness is indeed the mind. The non-realization of that is indeed transmigration. The pulsation of consciousness arises in mere non-realization like the nature of a bracelet.

चेतना की स्पंदन वास्तव में मन है। उसकी अज्ञानता वास्तव में संसार है। चेतना की स्पंदन केवल अज्ञानता में उत्पन्न होती है, जैसे चूड़ी की प्रकृति।

6.59.28

बोधमात्रविलीनेऽस्मिञ्छुद्धा चिद्राम शिष्यते । स्वभावबोधमात्रेण क्षीयते भोगवासना ॥ २८ ॥

bodhamātravilīne'smiñchuddhā cidrāma śiṣyate | svabhāvabodhamātreṇa kṣīyate bhogavāsanā || 28 ||

When the mere realization is dissolved, the pure stream of consciousness remains. By the mere realization of one's own nature, the desire for enjoyment is exhausted.

जब केवल ज्ञान विलीन हो जाता है, तब शुद्ध चेतना की धारा शेष रहती है। अपनी प्रकृति के केवल ज्ञान से भोग की वासना खत्म हो जाती है।

6.59.29

भोगाभावनमेवेह परमं ज्ञत्वलक्षणम्। इतो नाभिमताः सर्वे ज्ञस्य भोगाः स्वभावतः ॥ २९ ॥

bhogābhāvanameveha paramaṃ jñatvalakṣaṇam | ito nābhimatāḥ sarve jñasya bhogāḥ svabhāvataḥ || 29 ||

Here, the absence of desire for enjoyment is the supreme characteristic of knowledge. Therefore, all enjoyments are not desired by the knower by nature.

यहाँ, भोग की अभावना ज्ञान का परम लक्षण है। इसलिए, ज्ञानी के लिए सभी भोग स्वभावतः अभिमत नहीं हैं।

6.59.30

भवन्ति कोऽतितृप्तो हि दुरन्नं किल वाञ्छति। एतदेव परं विद्धि ज्ञत्वस्यापरलक्षणम् ॥ ३० ॥

bhavanti ko'titṛpto hi durannaṃ kila vāñchati | etadeva paraṃ viddhi jñatvasyāparalakṣaṇam || 30 ||

Who is fully satisfied desires bad food? Know this to be the other characteristic of knowledge.

जो पूरी तरह से संतुष्ट है, वह बुरा भोजन क्यों चाहेगा? इसे ज्ञान का दूसरा लक्षण समझो।

6.59.31

स्वभावेनैव भोगानां यत्किलानभिवाञ्छनम्। चित्तत्स्पन्दैव सर्वात्मरूपिण्यस्तीति निश्चयः ॥ ३१ ॥

sva-bhāvenaiva bhogānāṃ yat-kilāna-abhivāñchanam | citta-tspandaiva sarvātma-rūpiṇyastīti niścayaḥ || 31 ||

The desire for various enjoyments is indeed the pulsation of the mind | The certainty is that it exists in the form of the universal self || 31 ||

भोगों की विविध इच्छा वास्तव में मन की स्पंदन है | यह निश्चय है कि यह सर्वात्म रूप में अस्तित्व में है || ३१ ||

6.59.32

योऽन्तः प्ररूढः स्वभ्यासो ज्ञत्वशब्देन स स्मृतः। यो न भुङ्क्ते भुज्यमानानपि भोगान्स बुद्धिमान्। लोकानुरोधसिद्ध्यर्थं स हन्ति लगुडैर्नभः ॥ ३२ ॥

yo'ntaḥ prarūḍhaḥ svabhyāso jñatvaśabdena sa smṛtaḥ | yo na bhuṅkte bhujyamānānapi bhogān sa buddhimān | lokānurodhasiddhyarthaṃ sa hanti laguḍairnabhaḥ || 32 ||

The one who is deeply engaged in self-practice is known by the word 'knower' | The one who does not enjoy even the enjoyments being enjoyed is wise | For the sake of worldly conformity, he strikes the sky with sticks || 32 ||

जो आत्म-अभ्यास में गहराई से लगा हुआ है, उसे 'ज्ञाता' कहा जाता है | जो भोगों का आनंद नहीं लेता, भले ही वे भोग लिए जा रहे हों, वह बुद्धिमान है | लोक की अनुकूलता के लिए, वह लाठियों से आकाश को मारता है || ३२ ||

6.59.33

विना कृत्रिमया बुद्ध्या न सिद्धिरवगम्यते ॥ ३३ ॥

vinā kṛtrimayā buddhyā na siddhiravagamyate || 33 ||

Without artificial intelligence, perfection is not comprehended || 33 ||

बिना कृत्रिम बुद्धि के, सिद्धि समझ में नहीं आती || ३३ ||

6.59.34

क्वचिदात्मावलोके च स्वाङ्गावदलनैरपि। चिच्चेत्यं चेत्यकोटिस्था तावत्पश्यति विभ्रमम् ॥ ३४ ॥

kvacidātmāvaloke ca svāṅgāvadalanairapi | cicchetyaṃ chetyakotiṣṭhā tāvatpaśyati vibhramam || 34 ||

Sometimes in the contemplation of the self, even with the destruction of one's own limbs, the consciousness sees delusion as long as it is situated in the realm of concepts || 34 ||

कभी-कभी आत्मा की ध्यान में, अपने अंगों के नाश के साथ भी, चेतना जब तक कल्पनाओं की सीमा में है, तब तक भ्रम देखती है || ३४ ||

6.59.35

इदं यावदबोधात्मा स्पन्दते स्पन्दरूपिणी । सम्यग्बोधोदयोन्तः स्यात्स्पन्दास्पन्ददशाक्रमः ॥ ३५ ॥

idaṃ yāvadabodhātmā spandate spandarūpiṇī | samyagbodhodayontaḥ syātspandāspandadaśākramaḥ || 35 ||

As long as this is of the nature of ignorance, it pulsates in the form of vibration | The proper arising of true knowledge within should be the sequence of the states of vibration and non-vibration || 35 ||

जब तक यह अज्ञान की प्रकृति का है, यह स्पंदन के रूप में स्पंदित होता है | सही ज्ञान का उदय अंदर होना चाहिए स्पंदन और अस्पंदन की दशाओं के क्रम के रूप में || ३५ ||

6.59.36

क्वापि याति च संशान्तदीपवत्साभिधानकः । चितः प्रशान्तरूपाया दीपिकायाः स्वभावतः ॥ ३६ ॥

kvāpi yāti ca saṃśāntadīpavatsābhidhānakaḥ | citaḥ praśāntarūpāyā dīpikāyāḥ svabhāvataḥ || 36 ||

The one who is known as the calm lamp goes somewhere, by nature, the calm form of the lamp of consciousness.

जो शांत दीप के रूप में जाना जाता है, वह कहीं जाता है, स्वभावतः, चेतना के शांत रूप की दीपिका के रूप में।

6.59.37

स्पन्दास्पन्दमयी नेह कथैवास्ति मनागपि । यदस्पन्दस्य मरुतो न सन्नासन्न मध्यगम् ॥ ३७ ॥

spandāspandamayī neha kathaivāsti manāgapi | yadaspandasya maruto na sannāsanna madhyagam || 37 ||

There is no such thing as movement or non-movement here, not even in the slightest. The wind of non-movement is neither present nor absent nor in between.

यहाँ स्पंद या अस्पंद की कोई बात नहीं है, बिलकुल भी नहीं। अस्पंद की वायु न तो मौजूद है, न ही गैरमौजूद, न ही बीच में।

6.59.38

रूपं तदेवासंवित्तिस्पन्दायाः प्रशमं चितेः । अभिन्नः स्याच्चितः स्पन्दः शुद्धचित्स्फाररूपधृक् ॥ ३८ ॥

rūpaṃ tadevāsaṃvittispandāyāḥ praśamaṃ citeḥ | abhinnaḥ syāccitaḥ spandaḥ śuddhacitsphārarūpadhṛk || 38 ||

That form is the calmness of the consciousness-vibration. The vibration of consciousness is non-different, holding the form of pure consciousness-expansion.

वह रूप चेतना-स्पंद की शांति है। चेतना का स्पंद अभिन्न है, शुद्ध चेतना-विस्तार के रूप को धारण करता है।

6.59.39

न बन्धाय न मोक्षाय स्थित आत्मनि केवलम् । चिच्चेन्निरर्थसंवित्तिनिर्वाणे न च विन्दते ॥ ३९ ॥

na bandhāya na mokṣāya sthita ātmani kevalam | ciccen nirarthasaṃvittinirvāṇe na ca vindate || 39 ||

Not for bondage, not for liberation, the self remains alone. If consciousness, then in the state of purposeless awareness-liberation, it does not find.

बंधन के लिए नहीं, मुक्ति के लिए नहीं, आत्मा अकेला रहता है। यदि चेतना, तो उद्देश्यहीन बोध-मुक्ति की अवस्था में, वह नहीं पाता।

6.59.40

तद्बन्धमोक्षपक्षादेर्नामापीह न विद्यते । मोक्षोऽस्त्वित्येव बोधोऽन्तः पूर्णता क्षयकारणम् ॥ ४० ॥

tadbandhamokṣapakṣāder nāmāpīha na vidyate | mokṣo'stvityeva bodho'ntaḥ pūrṇatā kṣayakāraṇam || 40 ||

There is no name for bondage or liberation here. The understanding that 'liberation is' is the cause of the destruction of completeness.

यहाँ बंधन या मुक्ति का कोई नाम नहीं है। यह बोध कि 'मुक्ति है' पूर्णता के विनाश का कारण है।

6.59.41

समास्त्वित्यपि बन्धस्ते श्रेयोऽसंवेदनं परम् । यदनाभासमजडं तद्विद्धि परमं पदम् ॥ ४१ ॥

samāstvityapi bandhaste śreyo'saṃvedanaṃ param | yadanābhāsamajaḍaṃ tadviddhi paramaṃ padam || 41 ||

Even the state of being bound is considered supreme, for it leads to the highest realization. Know that the ultimate state is one that is beyond perception and is unchanging.

यह बन्ध भी परम है, क्योंकि यह सबसे ऊँचे ज्ञान की ओर ले जाता है। जो अनाभास (अदृश्य) और अजड़ (अपरिवर्तनीय) है, उसे ही परम पद समझो।

6.59.42

चितः स्वरूपं संस्थानमचेत्योन्मुखतात्मकम् । यः संकल्पनशब्दार्थरूपः स्पन्दो महाचितः ॥ ४२ ॥

citaḥ svarūpaṃ saṃsthānamacetyonmukhatātmakam | yaḥ saṃkalpanāśabdārtharūpaḥ spando mahācitaḥ || 42 ||

The nature of consciousness is the state of being turned towards the non-conscious. The vibration that is the form of thought and word is the great consciousness.

चित् का स्वरूप है अचेतन की ओर मुड़ने की स्थिति। जो संकल्पना और शब्द का रूप है, वह स्पन्द महाचित् है।

6.59.43

बन्धमोक्षादिकार्होऽसौ प्रेक्ष्यमाणः प्रणश्यति । प्रेक्षणादेव संशान्ते त्वहंभावे निरास्पदे ॥ ४३ ॥

bandhamokṣādikārhaḥ'sau prekṣyamāṇaḥ praṇaśyati | prekṣaṇādeva saṃśānte tvahaṃbhāve nirāspade || 43 ||

The one who is worthy of bondage and liberation, when observed, disappears. By observation alone, the sense of self (ahaṃbhāva) is pacified and becomes devoid of any support.

जो बंधन और मोक्ष का अधिकारी है, वह देखने पर विलीन हो जाता है। देखने से ही अहंभाव शांत हो जाता है और आश्रयहीन हो जाता है।

6.59.44

न विद्मः केन किं कस्य बध्यते वाथ मुच्यते । संकल्प एव रचिते बुधश्चेदविभागवान् ॥ ४४ ॥

na vidmaḥ kena kiṃ kasya badhyate vātha mucyate | saṃkalpa eva racite budhaścedavibhāgavān || 44 ||

We do not know by whom, what, or for whom one is bound or liberated. It is all a creation of the mind, and if one is wise, one is undivided.

हम नहीं जानते कि किसके द्वारा, किसके लिए या किसका बंधन होता है या मुक्ति होती है। यह सब मन की संकल्पना है, और यदि कोई बुद्धिमान है, तो वह अविभागवान (अविभाजित) होता है।

6.59.45

तदसंकल्पमस्पन्दं सर्वं जातमवारितम्। स्पन्दे स्पन्दमये वाते तन्मयत्वात्सदा चिता ॥ ४५ ॥

tadasaṃkalpamaspandaṃ sarvaṃ jātamavāritam | spande spandamaye vāte tanmayatvātsadā citā || 45 ||

That which is without thought and without vibration, everything that is born is enveloped. In the vibration that is full of vibration, due to its nature, it is always consciousness.

जो संकल्प और स्पन्द से रहित है, सब कुछ जो उत्पन्न होता है उसे घेरे हुए है। स्पन्द में स्पन्द से भरे हुए वाते के कारण सदा चित् है।

6.59.46

संक्षीणे न च संसारो निस्पन्दे चिद्घने स्थिते। चित्तेज एव चित्स्पन्द इति बुद्धे निरन्तरम् ॥ ४६ ॥

saṃkṣīṇe na ca saṃsāro nispande cittadhane sthite | cittaja eva citspanda iti buddhe nirantaram || 46 ||

When the world is contracted and the consciousness is established in the motionless state, the vibration of consciousness itself is known as the continuous awareness.

जब संसार संकुचित होता है और चेतना निश्चल अवस्था में स्थित होती है, तब चेतना की स्पंदन ही निरंतर बुद्धि के रूप में जानी जाती है।

6.59.47

व्यतिरिक्तश्चितः स्पन्दो न किंचिदवशिष्यते। अस्मिन्दृश्यमये दीर्घस्वप्ने स्वप्नान्तरं व्रजन्। न ज्ञो मोहमुपादत्ते सर्वगत्वात्स्वसंविदः ॥ ४७ ॥

vyatiriktaścitaḥ spando na kiṃcidavaśiṣyate | asmindṛśyamaye dīrghasvapne svapnāntaraṃ vrajan | na jño mohamupādatte sarvagatvātsvasaṃvidaḥ || 47 ||

The vibration of consciousness, which is distinct, leaves nothing behind. In this long dream of visible forms, moving from one dream to another, the knower does not accept delusion due to the omnipresence of self-awareness.

जो विशिष्ट है, चेतना की स्पंदन कुछ भी पीछे नहीं छोड़ती। इस दृश्यमय दीर्घ स्वप्न में, एक स्वप्न से दूसरे स्वप्न में जाते हुए, ज्ञाता आत्म-चेतना की सर्वव्यापकता के कारण भ्रम को स्वीकार नहीं करता।

6.59.48

यत्रोदेति प्रसभमनिशं सर्गसंवित्तिसत्ता यस्मिन्नेते सकलकलनाकारपङ्का गलन्ति। उद्यन्त्येते स्वदनसुभगं यत्र सर्वोपलम्भा ध्यानेनैव तमवगमय प्रत्यगात्मानमन्तः ॥ ४८ ॥

yatrodeti prasabhamaniśaṃ sargasaṃvittisattā yasminnete sakalakalanākārapaṅkā galanti | udyantyete svadanasubhagaṃ yatra sarvopalambhā dhyānenaiva tamavagamaya pratyagātmānamantaḥ || 48 ||

Where the essence of creation and consciousness arises spontaneously and continuously, there all the diverse forms dissolve. Where all experiences arise beautifully, realize that inner self through meditation.

जहाँ सृष्टि और चेतना की सत्ता स्वतः और निरंतर उदित होती है, वहाँ सभी विविध रूप विलीन हो जाते हैं। जहाँ सभी अनुभव सुंदर रूप से उदित होते हैं, ध्यान द्वारा उस अंतर्यामी आत्मा को जानें।

Chapter 60

6.60.2

विभूतिभिः स्फुरन्त्युच्चैर्जनास्तुष्टा नृपा इव । आकाशगमनाद्याभिः क्रीडाभिः क्रीड्यते चिरम् ॥ २ ॥

vibhūtibhiḥ sphurantyuccaijanāstuṣṭā nṛpā iva | ākāśagamanādyābhiḥ krīḍābhiḥ krīḍyate ciram || 2 ||

People, delighted like kings, shine with various powers and enjoy for a long time with activities like flying in the sky.

लोग, राजाओं की तरह प्रसन्न, विभिन्न शक्तियों से चमकते हैं और आकाश में उड़ने जैसी गतिविधियों से लंबे समय तक आनंद लेते हैं।

6.60.3

तत्स्थेनैव जनेनेह स्वर्गे स्वर्गौकसो यथा । तत्प्राप्याङ्ग न म्रियते तत्प्राप्याङ्ग न शोच्यते ॥ ३ ॥

tatsthenaiva janeneha svargesvargaukaso yathā | tatprāpyāṅga na mriyate tatprāpyāṅga na śocyate || 3 ||

Here, with that state, a person is like the inhabitants of heaven in heaven. Having attained that, one does not die, having attained that, one is not grieved.

यहां, उस अवस्था के साथ, एक व्यक्ति स्वर्ग में स्वर्गवासियों की तरह होता है। उसे प्राप्त करने पर, वह नहीं मरता, उसे प्राप्त करने पर, उसके लिए शोक नहीं किया जाता।

6.60.4

तत्प्राप्य जीव्यते नाङ्ग तत्प्राप्याङ्ग न रुध्यते । अपारपरमाकाशरूपिणः परमात्मनः ॥ ४ ॥

tatprāpya jīvyate nāṅga tatprāpyāṅga na rudhyate | apāraparamākāśarūpiṇaḥ paramātmanaḥ || 4 ||

Having attained that, one does not live indeed, having attained that, one is not obstructed. Of the Supreme Self, who is in the form of the infinite sky.

उसे प्राप्त करने पर, वह वास्तव में नहीं जीता, उसे प्राप्त करने पर, वह नहीं रुकता। परमात्मा का, जो अनंत आकाश के रूप में है।

6.60.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवमाद्यं परं तत्त्वं चिद्घनं परमं पदम् । तत्स्था एते महारूपा ब्रह्मविष्णुहरादयः ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evamādyaṃ paraṃ tattvaṃ ciddhanaṃ paramaṃ padam | tatsthā ete mahārūpā brahmaviṣṇuharādayaḥ || 5 ||

Vasishtha said: Thus, the supreme principle, the abode of consciousness, the supreme state, in that state are these great forms like Brahma, Vishnu, and Shiva.

वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, परम तत्त्व, चेतना का निवास, परम पद, उस अवस्था में ये महान रूप हैं जैसे ब्रह्मा, विष्णु और शिव।

6.60.6

श्रीराम उवाच । मनो बुद्धिरहंकारश्चित्तं यत्र क्षयं गतम् । सत्तासामान्यमाभातं मनस्वी स किमुच्यते ॥ ६ ॥

śrīrāma uvāca | mano buddhirahaṃkāraścittaṃ yatra kṣayaṃ gatam | sattāsāmānyamābhātaṃ manasvī sa kimucyate || 6 ||

Rama said: Where the mind, intellect, ego, and consciousness have dissolved, what is called the common existence of being? What is that called?

राम ने कहा: जहां मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त विलीन हो गए हैं, वहां होने की सामान्य अस्तित्व को क्या कहते हैं? उसे क्या कहते हैं?

6.60.7

श्रीवसिष्ठ उवाच । यद्ब्रह्म सर्वदेहस्थं भुङ्क्ते पिबति वल्गति । आदत्ते विनिहन्त्यन्तः संवित्संवेद्यवर्जितम् ॥ ७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yadbrahma sarvadehasthaṃ bhuṅkte pibati valgati | ādatte vinihantyantaḥ saṃvitsaṃvedyavarjitam || 7 ||

Vasishtha said: That Brahman, which is present in all bodies, eats, drinks, moves, takes, destroys from within, and is devoid of consciousness and the knowable.

वसिष्ठ ने कहा: वह ब्रह्म जो सभी शरीरों में विद्यमान है, खाता है, पीता है, चलता है, लेता है, अंदर से नष्ट करता है, और चेतना और ज्ञेय से रहित है।

6.60.8

तत्सर्वगतमाद्यन्तरहितं स्थितमर्जितम् । सत्तासामान्यमखिलं वस्तुतत्त्वमिहोच्यते ॥ ८ ॥

tatsarvagatamādyantarahitaṃ sthitamarjitam | sattāsāmānyamakhilaṃ vastutattvamihocyate || 8 ||

That omnipresent Brahman, devoid of beginning and end, established and pure, is the universal existence and is called the ultimate reality here.

वह सर्वव्यापी ब्रह्म, जो आदि और अंत से रहित है, स्थापित और शुद्ध है, वह सार्वभौमिक अस्तित्व है और यहाँ अंतिम वास्तविकता कहलाता है।

6.60.9

तत्स्थितं खतया व्योम्नि शब्दे शब्दतया स्थितम् । स्पर्शे स्थितं स्पर्शतया त्वचि तत्त्वक्तया स्थितम् ॥ ९ ॥

tatsthitaṃ khatayā vyomni śabde śabdatayā sthitam | sparśe sthitaṃ sparśatayā tvaci tattvaktayā sthitam || 9 ||

That Brahman is established in the sky as space, in sound as sound, in touch as touch, and in the skin as the sense of touch.

वह ब्रह्म आकाश में आकाश के रूप में स्थापित है, ध्वनि में ध्वनि के रूप में, स्पर्श में स्पर्श के रूप में, और त्वचा में स्पर्श की इंद्रिय के रूप में।

6.60.10

रसे लीनं रसतया रसनायां तु तत्तया । रूपे रूपतया दृष्टं नेत्रे लीनं च दृक्तया ॥ १० ॥

rase līnaṃ rasatayā rasanāyāṃ tu tattayā | rūpe rūpatayā dṛṣṭaṃ netre līnaṃ ca dṛktayā || 10 ||

That Brahman is absorbed in taste as taste, in the tongue as the sense of taste, in form as form, and in the eyes as the sense of sight.

वह ब्रह्म स्वाद में स्वाद के रूप में विलीन है, जीभ में स्वाद की इंद्रिय के रूप में, रूप में रूप के रूप में, और आँखों में दृष्टि की इंद्रिय के रूप में।

6.60.11

घ्राणे घ्राणतया दृष्टं गन्धे गन्धतयोदितम् । पुष्टं कायतया काये भूमावपि च भूतया ॥ ११ ॥

dhrāṇe ghrāṇatayā dṛṣṭaṃ gandhe gandhatayoditam | puṣṭaṃ kāyatayā kāye bhūmāvapi ca bhūtayā || 11 ||

That Brahman is seen in the nose as the sense of smell, in smell as smell, nourished in the body as the body, and in the earth as the earth.

वह ब्रह्म नासिका में गंध की इंद्रिय के रूप में देखा जाता है, गंध में गंध के रूप में, शरीर में शरीर के रूप में पोषित है, और पृथ्वी में पृथ्वी के रूप में।

6.60.12

पयस्तया च पयसि वायौ वायुतया स्थितम् । तेजस्तया तेजसि च बुद्धौ बुद्धितया गतम् ॥ १२ ॥

payastayā ca payasi vāyau vāyutayā sthitam | tejastayā tejasi ca buddhau buddhitayā gatam || 12 ||

It is established in water as water, in air as air, in fire as fire, and in intellect as intellect.

यह पानी में पानी के रूप में स्थित है, वायु में वायु के रूप में, अग्नि में अग्नि के रूप में, और बुद्धि में बुद्धि के रूप में है।

6.60.13

मनस्तया मनस्यन्तरहंकृत्याप्यहंकृतौ । रूढं संविदि संवित्त्या चित्ते चित्ततयोत्थितम् ॥ १३ ॥

manastayā manasyantarahaṃkṛtyāpyahaṃkṛtau | rūḍhaṃ saṃvidi saṃvittyā citte cittatayotthitam || 13 ||

It is established in the mind as the mind, in the ego as the ego, and in consciousness as consciousness.

यह मन में मन के रूप में, अहंकार में अहंकार के रूप में, और चेतना में चेतना के रूप में स्थित है।

6.60.14

वृक्षे वृक्षतया लग्नं पटे पटतयोदितम् । घटे घटतया रूढं वटे वटतयोत्थितम् ॥ १४ ॥

vṛkṣe vṛkṣatayā lagnaṃ paṭe paṭatayoditam | ghaṭe ghaṭatayā rūḍhaṃ vaṭe vaṭatayotthitam || 14 ||

It is established in a tree as a tree, in a cloth as a cloth, in a pot as a pot, and in a banyan tree as a banyan tree.

यह वृक्ष में वृक्ष के रूप में, कपड़े में कपड़े के रूप में, घड़े में घड़े के रूप में, और बरगद के पेड़ में बरगद के पेड़ के रूप में स्थित है।

6.60.15

स्थावरे स्थावरत्वेन जंगमत्वेन जंगमे । पाषाणत्वेन पाषाणे चेतनत्वेन चेतने ॥ १५ ॥

sthāvare sthāvaratvena jaṅgamatvena jaṅgame | pāṣāṇatvena pāṣāṇe cetanatvena cetane || 15 ||

It is established in immovable objects as immovable, in movable objects as movable, in stones as stones, and in living beings as living beings.

यह अचल वस्तुओं में अचल के रूप में, चल वस्तुओं में चल के रूप में, पत्थरों में पत्थर के रूप में, और जीवित प्राणियों में जीवित प्राणियों के रूप में स्थित है।

6.60.16

अमरेष्वमरत्वेन नरत्वेन नरेषु च । तिर्यक्त्वेन च तिर्यक्षु क्रिमित्वेन क्रिमिस्थितौ ॥ १६ ॥

amareṣvamaratvena naratvena nareṣu ca | tiryaktvena ca tiryakṣu krimitvena krimisthitau || 16 ||

It is established in immortal beings as immortal, in humans as humans, in animals as animals, and in insects as insects.

यह अमर प्राणियों में अमर के रूप में, मनुष्यों में मनुष्य के रूप में, जानवरों में जानवर के रूप में, और कीटों में कीट के रूप में स्थित है।

6.60.17

कालक्रमे कालतया ऋतावृतुतया तथा । त्रुटिक्षणनिमेषादौ संस्थितस्तत्तया विभुः ॥ १७ ॥

kālakrame kālatayā ṛtāvṛtutayā tathā | truṭikṣaṇanimēṣādau saṃsthitastattayā vibhuḥ || 17 ||

In the sequence of time, in the form of time, in the form of seasons and rituals, and in the smallest units of time such as moments, seconds, and blinks of an eye, the Supreme Being is established in that form.

समय के क्रम में, समय के रूप में, ऋतुओं और अनुष्ठानों के रूप में, और पलों, सेकंडों और पलकों के झपकने जैसे सबसे छोटे समय के इकाइयों में, परमेश्वर उस रूप में स्थित हैं।

6.60.18

शुक्ले शुक्लतया जातं कृष्णे कृष्णतया स्थितम्। क्रियासु स्पन्दरूपेण नियतौ नियमेन च ॥ १८ ॥

śukle śuklatayā jātaṃ kṛṣṇe kṛṣṇatayā sthitam | kriyāsu spandarūpeṇa niyatau niyamena ca || 18 ||

In the bright phase, it is born as bright, and in the dark phase, it is established as dark. In actions, it is present in the form of movement, and in restraints, it is present in the form of rules.

शुक्ल पक्ष में, यह शुक्ल रूप में जन्म लेता है, और कृष्ण पक्ष में, यह कृष्ण रूप में स्थित है। क्रियाओं में, यह गति के रूप में उपस्थित है, और नियमों में, यह नियमों के रूप में उपस्थित है।

6.60.19

संस्थितः संस्थितौ स्थित्या नाशे नाशतया स्थितः। उत्पत्तिरूपेणोत्पत्तावास्थितः परमेश्वरः ॥ १९ ॥

saṃsthitaḥ saṃsthitau sthityā nāśe nāśatayā sthitaḥ | utpattirūpeṇotpattāvāsthitaḥ parameśvaraḥ || 19 ||

Established in existence, it is established in the form of existence. In destruction, it is established in the form of destruction. In creation, it is established in the form of creation. The Supreme Being is established in all these forms.

अस्तित्व में स्थित, यह अस्तित्व के रूप में स्थित है। विनाश में, यह विनाश के रूप में स्थित है। उत्पत्ति में, यह उत्पत्ति के रूप में स्थित है। परमेश्वर सभी इन रूपों में स्थित हैं।

6.60.20

बाल्येन बाल्ये विश्रान्तो यौवने यौवनेन च। जरसा च जरारूपे मरणे मरणेन च ॥ २० ॥

bālyena bālye viśrānto yauvane yauvanena ca | jarasā ca jarārūpe maraṇe maraṇena ca || 20 ||

In childhood, it is rested in childhood. In youth, it is rested in youth. In old age, it is rested in the form of old age. In death, it is rested in death.

बचपन में, यह बचपन में विश्राम करता है। युवावस्था में, यह युवावस्था में विश्राम करता है। बुढ़ापे में, यह बुढ़ापे के रूप में विश्राम करता है। मृत्यु में, यह मृत्यु में विश्राम करता है।

6.60.21

इति सर्वपदार्थानामभिन्नः परमेश्वरः। कल्लोलसीकरोर्मीणामब्धाविव पयोभरः ॥ २१ ॥

iti sarvapadārthānāmabhinnaḥ parameśvaraḥ | kallolasīkarormīṇāmabdhāviv payobharaḥ || 21 ||

Thus, the Supreme Being is indivisible from all objects. Like the water-bearing clouds in the sky, which are indivisible from the waves, foam, and ripples.

इस प्रकार, परमेश्वर सभी वस्तुओं से अभिन्न हैं। जैसे आकाश में पानी लेकर चलने वाले बादल, जो लहरों, फेन और लहरों से अभिन्न हैं।

6.60.22

नानातैषां त्वसत्यैव सत्येनानेन चैव हि। कल्पिता चित्स्वभावेन वेतालः शिशुना यथा ॥ २२ ॥

nānātaiṣāṃ tv asatyai va satyenānena caiva hi | kalpitā cittasvabhāvena vetālaḥ śiśunā yathā || 22 ||

All these various forms are indeed unreal, but they are imagined to be real by the nature of consciousness, just like a child imagines a ghost.

ये सभी विविध रूप असत्य हैं, लेकिन चेतना की प्रकृति द्वारा सत्य के रूप में कल्पित किए जाते हैं, जैसे कि एक बच्चा भूत की कल्पना करता है।

6.60.23

सर्वत्र संस्थितिमता विगतामयेन व्याप्तं मयेदमखिलं विविधैर्विलासैः । चिद्रूपिणैव कलना कलितात्मनेति मत्वोपशान्तमतिरास्स्व सुखं महात्मन् ॥ २३ ॥

sarvatra saṃsthitimatā vigatāmayena vyāptaṃ mayedamakhilaṃ vividhairvilāsaiḥ | cidrūpiṇaiva kalanā kalitātmaneti matvopaśāntamatirāssva sukhaṃ mahātman || 23 ||

Everywhere, being established in a state free from afflictions, this entire universe is pervaded by various manifestations of illusion. Knowing this, the great soul should attain peace of mind and bliss.

सर्वत्र, क्लेशों से मुक्त अवस्था में स्थित होकर, यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड भांति-भांति के भ्रम के विविध प्रकटनों से व्याप्त है। इसे जानकर, महात्मा को मन की शांति और आनंद प्राप्त करना चाहिए।

6.60.24

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्युक्तवत्यथ मुनौ दिवसो जगाम सायंतनाय विधयेऽस्तमिनो जगाम । स्नातुं सभा कृतनमस्करणा जगाम श्यामाक्षये रविकरैश्च सहाजगाम ॥ २४ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityuktavatyatha munau divaso jagāma sāyaṃtanāya vidhaye'stamino jagāma | snātuṃ sabhā kṛtanamaskarṇā jagāma śyāmākṣaye ravikaraiśca sahājagāma || 24 ||

Sri Valmiki said: Thus having spoken, the sage went to perform his evening duties as the day ended. He went to bathe, having paid his respects to the assembly, and went to the dark-eyed one accompanied by the rays of the sun.

श्री वाल्मीकि ने कहा: ऐसा कहकर, मुनि ने दिन के अंत में अपने सायंकालीन कर्तव्यों को पूरा करने के लिए जाना। वे सभा को प्रणाम करके स्नान करने गए और सूर्य की किरणों के साथ काली आँखों वाली के पास गए।

Chapter 61

6.61.1

श्रीराम उवाच । यथास्माकं मुने स्वप्नपुरपत्तनमण्डलम् । तथैव पद्मजादीनां यदि देहपरिग्रहः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | yathāsmākaṃ mune svapnapurapattanamaṇḍalam | tathaiva padmajādīnāṃ yadi dehaparigrahaḥ || 1 ||

Sri Rama said: O Sage, just as our dream-city appears, so too is the embodiment of Brahma and others.

श्री राम ने कहा: हे मुनि, जैसे हमारा स्वप्न-नगर प्रकट होता है, वैसे ही ब्रह्मा आदि का शरीर है।

6.61.2

तथैवेदं च संजातं यदि सर्वमसन्मयम् । तदस्माकं दृढतरः प्रत्ययः कथमुत्थितः ॥ २ ॥

tathaivedaṃ ca saṃjātaṃ yadi sarvamasanmayam | tadasmākaṃ dṛḍhataraḥ pratyayaḥ kathamutthitaḥ || 2 ||

If all this is indeed unreal, then how has such a strong conviction arisen in us?

यदि यह सब कुछ असत्य है, तो हमारे अंदर ऐसा दृढ़ विश्वास कैसे उत्पन्न हुआ?

6.61.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । अस्मत्सर्गवदाभाति पूर्वसर्गः प्रजापतेः । आजीवप्रतिभासात्मा विद्यते न तु वास्तवः ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asmatsargavadābhāti pūrvasargaḥ prajāpateḥ | ājīvapratibhāsātmā vidyate na tu vāstavaḥ || 3 ||

Vasishtha said: The previous creation of Prajapati appears like our own creation, existing only as a lifelike reflection, not as reality.

वसिष्ठ ने कहा: प्रजापति की पिछली सृष्टि हमारी सृष्टि की तरह प्रतीत होती है, जो केवल जीवन्त प्रतिबिंब के रूप में मौजूद है, वास्तविकता नहीं।

6.61.4

सर्वगत्वाच्चितेः सर्वं जीवः सर्वत्र संसृतिः । सा चासम्यग्दर्शनोत्था सम्यग्दर्शननाशिनी ॥ ४ ॥

sarvagatvācciteḥ sarvaṃ jīvaḥ sarvatra saṃsṛtiḥ | sā cāsamyagdarśanotthā samyagdarśananāśinī || 4 ||

Due to the omnipresence of consciousness, everything is a soul, and everywhere there is transmigration. This transmigration arises from incorrect perception and is destroyed by correct perception.

चेतना की सर्वव्यापकता के कारण, सब कुछ आत्मा है, और हर जगह पुनर्जन्म होता है। यह पुनर्जन्म गलत दृष्टिकोण से उत्पन्न होता है और सही दृष्टिकोण से नष्ट हो जाता है।

6.61.5

स्वप्नाभः प्रतिभासोऽस्य य एष समुपस्थितः । अहंताप्रत्ययैकात्मा स एवातिदृढं स्थितः ॥ ५ ॥

svapnābhaḥ pratibhāso'sya ya eṣa samupasthitaḥ | ahaṃtāpratyayaiakātmā sa evātidṛḍhaṃ sthitaḥ || 5 ||

The appearance of this world is like a dream, arising from the notion of 'I'. This notion is very firmly established.

इस जगत की उपस्थिति स्वप्न की तरह है, जो 'मैं' के विचार से उत्पन्न होती है। यह विचार बहुत दृढ़ता से स्थापित है।

6.61.6

स्वप्ने क्षिप्रविनाशित्वं यथा पुंसा न दृश्यते । सर्वस्वप्ने तथैवैतद्ब्रह्मणामिह लक्ष्यते ॥ ६ ॥

svapne kṣipravināśitvaṃ yathā puṃsā na dṛśyate | sarvasvapne tathaivaitadbrahmaṇāmiha lakṣyate || 6 ||

Just as the transient nature of a dream is not perceived by a person, so too is the nature of Brahman not perceived in all dreams.

जैसे स्वप्न की क्षणिक प्रकृति व्यक्ति द्वारा नहीं देखी जाती, वैसे ही सभी स्वप्नों में ब्रह्म की प्रकृति नहीं देखी जाती।

6.61.7

स्वप्नोऽयं पुरुषस्यास्य प्रतिभासस्य यो भवेत् । रामाऽस्मदादिसर्वात्मा भवेत्तादृश एव च ॥ ७ ॥

svapno'yaṃ puruṣasyāsya pratibhāsasya yo bhavet | rāmā'smadādisarvātmā bhavettādṛśa eva ca || 7 ||

This dream that appears to this person, Rama, who is the self of all, including myself, would be of such a nature.

यह स्वप्न जो इस व्यक्ति को दिखाई देता है, राम, जो मेरे सहित सभी का आत्मा है, ऐसे ही स्वभाव का होगा।

6.61.8

यत्स्वप्नपुरुषाज्जातं तत्स्वप्नपुरुषात्मकम् । भवतीत्यनुभूतं हि यद्बीजं तत्फलं यथा ॥ ८ ॥

yatsvapnapuruṣājjātaṃ tatsvapnapuruṣātmakam | bhavatītyanubhūtaṃ hi yadbījaṃ tatphalaṃ yathā || 8 ||

Whatever is born from the dream person, that is of the nature of the dream person. It is experienced that whatever is the seed, that is the fruit, just as.

जो कुछ भी स्वप्न पुरुष से उत्पन्न होता है, वह स्वप्न पुरुष की प्रकृति का होता है। यह अनुभव किया जाता है कि जो बीज है, वही फल है, जैसे।

6.61.9

असत्यमेव तद्विद्धि यदसत्येन साध्यते । असत्येऽर्थे समर्थेऽपि न युक्तं भावनं घनम् ॥ ९ ॥

asatyameva tadviddhi yadasatyena sādhyate | asatye'rthe samarthe'pi na yuktaṃ bhāvanaṃ ghanam || 9 ||

Know that to be false which is accomplished by the false. Even in a capable false thing, dense contemplation is not appropriate.

उसे असत्य ही समझो जो असत्य से सिद्ध होता है। सक्षम असत्य वस्तु में भी घनी भावना उचित नहीं है।

6.61.10

येन तेन परित्याज्यमसद्भावनभावनम् । दृढप्रत्ययितं स्वप्नपुरुषाद्यत्समुत्थितम् ॥ १० ॥

yena tena parityājyamasadbhāvanabhāvanam | dṛḍhapratyayitaṃ svapnapuruṣādyatsamutthitam || 10 ||

By whatever means, the contemplation of the unreal should be abandoned. That which arises from the dream person is firmly established.

जिस भी तरह से, असत्य की भावना को त्याग देना चाहिए। जो स्वप्न पुरुष से उत्पन्न होता है, वह दृढ़ता से स्थापित है।

6.61.11

भवत्यात्मनि सर्गादि दृढप्रत्ययमेव तत् निमेषमात्रः पौरोऽयं सर्गस्वप्नः पुरः स्थितः ॥ ११ ॥

bhavatyātmani sargādi dṛḍhapratyayameva tat nimeṣamātraḥ paurō'yaṁ sargasvapnaḥ puraḥ sthitaḥ || 11 ||

In the self, the firm conviction of creation and so on is indeed that| This worldly dream of creation stands before us for a mere moment

आत्मा में सृष्टि और उसके बाद की दृढ़ धारणा वास्तव में वही है| यह संसार का स्वप्न केवल एक पल के लिए हमारे सामने खड़ा है

6.61.12

तस्मिन्निमेष एवास्मिन्कल्पता परिकल्प्यते सुदीर्घस्वप्नखण्डोऽयं यथोदेति प्रजापतेः ॥ १२ ॥

tasminnimeṣa evāsminkalpatā parikalpyate sudīrghasvapnakhaṇḍō'yaṁ yathōdeti prajāpateḥ || 12 ||

In that, even in a moment, the imagination is imagined| This long dream fragment arises just as it does from the lord of creatures

उसमें, एक पल में भी, कल्पना कल्पना की जाती है| यह लंबा स्वप्न खंड प्रजापति से उत्पन्न होता है

6.61.13

सर्गाख्यः सर्वभूतानां प्रत्येकमुदितस्तथा चित्तत्त्वस्यैव भावेन सर्गवर्गपरम्परा ॥ १३ ॥

sargākhyāḥ sarvabhūtānāṁ pratyekamuditastathā cittatvasyaiva bhāvena sargavargaparamparā || 13 ||

Thus, the creation called of all beings arises individually| In the nature of consciousness, the series of creation

इस प्रकार, सभी प्राणियों की सृष्टि कही जाती है जो अलग-अलग उत्पन्न होती है| चेतना की प्रकृति में, सृष्टि की श्रृंखला

6.61.14

स्फुरत्यम्भो द्रवत्वेन यथावर्तविवर्तनैः यथा स्वप्नात्मिकैवेयं सर्गलक्ष्मीर्न वास्तवी ॥ १४ ॥

sphuratyambho dravatvena yathāvartavivartanaiḥ yathā svapnātmikaiveyaṁ sargalakṣmīrna vāstavī || 14 ||

Just as water shimmers with fluidity through whirls and eddies| So this dream-like creation is not real

जैसे पानी घूमने और मुड़ने से द्रवता के साथ चमकता है| इसी प्रकार यह स्वप्न-जैसी सृष्टि वास्तविक नहीं है

6.61.15

तदा संभवतीदं वै तत्पदं प्रलयं गतम् यद्यथा यादृशं दृष्टं तत्तादृग्विद्यते तथा ॥ १५ ॥

tadā saṁbhavatīdaṁ vai tatpadaṁ pralayaṁ gatam yadyathā yādṛśaṁ dṛṣṭaṁ tattādṛgvidyate tathā || 15 ||

Then this indeed comes into being, that state having gone to dissolution| Whatever is seen in whatever way, that exists in that way

तब यह वास्तव में अस्तित्व में आता है, जो प्रलय में चला गया है| जो कुछ भी जिस प्रकार देखा जाता है, वह उसी प्रकार अस्तित्व में है

6.61.16

न हि पर्यनुयोक्तव्याः स्वप्नविभ्रमरीतयः । न तदस्ति जगत्यस्मिन्यन्न संभवति भ्रमे ॥ १६ ॥

na hi paryanuyoktavyāḥ svapnavibhramarītayaḥ | na tadasti jagatyasminyanna saṃbhavati bhrame || 16 ||

Indeed, the ways of dreams and illusions should not be followed | There is nothing in this world that does not occur in illusion ||

वास्तव में, सपनों और भ्रमों के मार्गों का अनुसरण नहीं करना चाहिए | इस जगत में ऐसा कुछ भी नहीं है जो भ्रम में नहीं होता ||

6.61.17

विचित्रास्त्रिषु लोकेषु दृश्यन्ते वस्तुदृष्टयः । जलमध्ये ज्वलत्यग्निर्यथाब्धौ वडवानलः ॥ १७ ॥

vicitrāstreṣu lokeṣu dṛśyante vastudṛṣṭayaḥ | jalamadhye jvalatyagniryathābdhau vaḍavānalaḥ || 17 ||

Strange sights are seen in the three worlds | Like fire burning in the middle of water, such as the submarine fire in the ocean ||

तीनों लोकों में विचित्र दृश्य दिखाई देते हैं | जैसे पानी के बीच में आग जलती है, जैसे समुद्र में जलती हुई आग ||

6.61.18

नगराण्यम्बरे सन्ति यथा वैमानिकाश्रयाः । शिलास्वब्जानि जायन्ते हेमाद्राविव पादपाः ॥ १८ ॥

nagarāṇyambare santi yathā vaimānikāśrayāḥ | śilāsvabjāni jāyante hemādrāviva pādapāḥ || 18 ||

Cities exist in the sky, like those inhabited by celestial beings | Lotuses are born in stones, like trees in the golden mountain ||

आकाश में नगर होते हैं, जैसे देवताओं द्वारा निवास किए जाने वाले | पत्थरों में कमल उत्पन्न होते हैं, जैसे सोने के पर्वत में पेड़ ||

6.61.19

एकान्ते सर्वपुण्यानि सन्ति कल्पतरौ यथा । शिलाः फलन्ति फलिवद्यथा रत्नगुलुच्छकाः ॥ १९ ॥

ekānte sarvapuṇyāni santi kalpatarau yathā | śilāḥ phalanti phalivadyathā ratnagulucchakāḥ || 19 ||

In solitude, all virtues exist, like the wish-fulfilling tree | Stones bear fruit like the jewel-bearing creepers ||

एकांत में सभी पुण्य होते हैं, जैसे कल्पवृक्ष | पत्थर फलते हैं जैसे रत्न धारण करने वाली लताएँ ||

6.61.20

शिलान्तः प्राणिनः सन्ति भेका इव शिलान्तरे । दृषदो वारि निर्याति चन्द्रकान्तोपलादिव ॥ २० ॥

śilāntaḥ prāṇinaḥ santi bhekā iva śilāntare | dṛṣado vāri niryāti candrakāntopalādiva || 20 ||

Living beings exist within stones, like frogs within rocks | Water flows from stones, like from the moonstone ||

पत्थरों के अंदर प्राणी होते हैं, जैसे मेढक पत्थरों के अंदर | पत्थरों से पानी निकलता है, जैसे चंद्रकांत मणि से ||

6.61.21

निमेषेण घटो याति पटतां स्वापसंविदि । असत्यमपि बुध्येत स्वप्ने स्वमरणं यथा ॥ २१ ॥

nimeṣeṇa ghaṭo yāti paṭatāṃ svāpasamvidi | asatyamapi budhyeta svapne svamaraṇaṃ yathā || 21 ||

In a moment, a pot can be perceived in a dream, even though it is unreal, just like one might experience one's own death in a dream.

एक पल में, एक घड़ा स्वप्न में दिखाई दे सकता है, भले ही यह असत्य हो, जैसे कि कोई अपनी मृत्यु का अनुभव स्वप्न में कर सकता है।

6.61.22

आकस्मिकं जलं व्योम्नि ध्रियते भूतगं यथा । वितानमिव खे वारि तिष्ठति स्वर्णदी यथा ॥ २२ ॥

ākasmikaṃ jalaṃ vyomni dhriyate bhūtagaṃ yathā | vitānamiva khe vāri tiṣṭhati svarṇadī yathā || 22 ||

Water suddenly appears in the sky, as if held by spirits, and stays like a golden canopy in the sky.

पानी अचानक आकाश में दिखाई देता है, जैसे भूतों द्वारा पकड़ा हुआ हो, और स्वर्ण की छत्री की तरह आकाश में रहता है।

6.61.23

उड्डीयन्ते शिलाः स्थूलाः पक्षवन्तो यथाद्रयः । शिलान्तः प्राप्यते सर्वं ननु चिन्तामणेरिव ॥ २३ ॥

uḍḍīyante śilāḥ sthūlāḥ pakṣavanto yathādrayaḥ | śilāntaḥ prāpyate sarvaṃ nanu cintāmaṇeriva || 23 ||

Large stones fly like birds, and within the stones, everything is obtained, just like from a wish-fulfilling gem.

बड़े पत्थर पक्षियों की तरह उड़ते हैं, और पत्थरों के भीतर सब कुछ प्राप्त होता है, जैसे कि एक चिंतामणि से।

6.61.24

चिन्तितानि फलन्त्याशु देवोद्यानान्तरेष्विव । तान्येव न फलन्त्याशु मोक्षादीनां च राघव ॥ २४ ॥

cintitāni phalantyāśu devodyānāntareṣviva | tānyeva na phalantyāśu mokṣādīnāṃ ca rāghava || 24 ||

Desired fruits are obtained quickly in the gardens of the gods, but they do not bear fruit quickly for liberation and other such things, O Raghava.

इच्छित फल देवों के उद्यानों में शीघ्र ही प्राप्त होते हैं, लेकिन मोक्ष और अन्य ऐसी चीज़ों के लिए वे शीघ्र ही फल नहीं देते, हे राघव।

6.61.25

अचेतनोऽपि कुरुते कर्म यन्त्रपुमानिव । एवमाद्यास्तथान्ये च विचित्रारम्भविभ्रमाः ॥ २५ ॥

acetano'pi kurute karma yantrapumāniva | evamādyāstathānye ca vicitrārambhavibhramāḥ || 25 ||

Even an inanimate object performs actions like a mechanical man, and similarly, there are other various strange and confusing activities.

एक निर्जीव वस्तु भी एक यंत्र पुरुष की तरह कार्य करती है, और इसी तरह अन्य विभिन्न विचित्र और उलझन भरी गतिविधियाँ होती हैं।

6.61.26

दृष्टाः शम्बरगन्धर्वविलासैरप्यसंभवाः देशकालक्रियाद्रव्यरत्नसंचरणीयजाः ॥ २६ ॥

dṛṣṭāḥ śambaragandharvavilāsairapyasaṃbhavāḥ deśakālakriyādravyaratnasañcaranīyajāḥ || 26 ||

Even the unattainable have been seen through the playful activities of the Gandharvas and Shambara. They are born from the movement of precious substances in various places, times, and actions.

गन्धर्वों और शम्बर के विलासों से भी असंभव को देखा गया है। वे विभिन्न स्थानों, समयों और क्रियाओं में रत्नों के चलने से उत्पन्न होते हैं।

6.61.27

अर्था गन्धर्वजनिता अनन्ताः सत्यसंभवाः असंभवः संभवोऽयमपि भाव्युपपद्यते ॥ २७ ॥

arthā gandharvajanitā anantāḥ satyasaṃbhavāḥ asaṃbhavaḥ saṃbhavo'yamapi bhāvyupapadyate || 27 ||

The meanings created by the Gandharvas are infinite and true. Even the impossible becomes possible in this realm of existence.

गन्धर्वों द्वारा उत्पन्न अर्थ अनंत और सत्य हैं। यहाँ असंभव भी संभव हो जाता है।

6.61.28

संभवोऽसंभवः सम्यक् सिद्धये स्वप्नविभ्रमः न तदस्ति न यत्सत्यं न तदस्ति न यन्मृषा ॥ २८ ॥

saṃbhavo'saṃbhavaḥ samyak siddhaye svapnavibhramaḥ na tadasti na yatsatyam na tadasti na yanmṛṣā || 28 ||

The possible is impossible, and the impossible is possible. This illusion is like a dream for the sake of perfection. There is nothing that is true, and there is nothing that is false.

संभव असंभव है, और असंभव संभव है। यह भ्रम सिद्धि के लिए स्वप्न की तरह है। सत्य कुछ नहीं है, और मिथ्या कुछ नहीं है।

6.61.29

सर्वं सर्वेण सर्वत्र स्वप्ने सर्गाभिधानके स्वप्ने निमग्नधीर्जन्तुः पश्यति स्थिरतां यथा ॥ २९ ॥

sarvaṃ sarveṇa sarvatra svapne sargābhidhānake svapne nimagnadhīrjantuḥ paśyati sthiratāṃ yathā || 29 ||

Everything is everywhere in the dream-like creation. Just as a being with a mind immersed in a dream sees stability, so does the individual perceive stability in the dream-like world.

सब कुछ सब जगह स्वप्न की तरह सृष्टि में है। जैसे स्वप्न में डूबी बुद्धि वाला जीव स्थिरता देखता है, वैसे ही व्यक्ति स्वप्न की तरह दुनिया में स्थिरता देखता है।

6.61.30

सर्गस्वप्ने मग्नबुद्धिः पश्यति स्थिरतां तथा भ्रमाद्भ्रमान्तरं गच्छन्स्वप्नात्स्वप्नान्तरं व्रजन् अतिस्थिरप्रत्ययभागिह जीवो विमुह्यति ॥ ३० ॥

sargasvapne magnabuddhiḥ paśyati sthiratāṃ tathā bhramādbhramāntaraṃ gacchansvapnātsvapnāntaraṃ vrajan atisthirapratyayabhāgiha jīvo vimuhyati || 30 ||

In the dream of creation, the mind immersed sees stability. Thus, moving from one illusion to another, from one dream to another, the being with a very stable belief becomes confused.

सृष्टि के स्वप्न में, डूबी बुद्धि स्थिरता देखती है। इस प्रकार, एक भ्रम से दूसरे भ्रम में जाते हुए, एक स्वप्न से दूसरे स्वप्न में जाते हुए, अति स्थिर विश्वास वाला जीव भ्रमित हो जाता है।

6.61.31

श्वभ्रान्तरं श्वभ्रनिपातदोषात् संप्राप्नुवन्मुग्धमृगः प्रयाति । मोहं यथा पातमयैकरूपं जीवस्तथा संसृतिपात्रमूढः ॥ ३१ ॥

śvabhrāntaraṃ śvabhranipātadoṣāt saṃprāpnuvanmugdhamaṛgaḥ prayāti | mohaṃ yathā pātamayairūpaṃ jīvastathā saṃsṛtipātramūḍhaḥ || 31 ||

Just as a confused deer falls into a pit due to its own fault, similarly, the ignorant soul falls into the cycle of birth and death due to its own delusion.

जैसे भ्रमित मृग अपने दोष से गड्ढे में गिरता है, वैसे ही अज्ञानी जीव अपने मोह से जन्म-मरण के चक्र में फँस जाता है।

Chapter 62

6.62.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अत्र राघव वक्ष्येऽहमितिहासमिमं शृणु । यद्वृत्तं कस्यचिद्भिक्षोः किंचिन्मननशालिनः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atra rāghava vakṣye'hamitihasamimaṃ śṛṇu | yadvṛttaṃ kasyacidbhikṣoḥ kiṃcinmananaśālinaḥ || 1 ||

Vasishtha said: O Raghava, listen to this story of a certain mendicant who was somewhat thoughtful.

वसिष्ठ ने कहा: हे रघुवंशी, एक किसी भिक्षु की कहानी सुनो जो कुछ सोच-विचार करने वाला था।

6.62.2

आसीत्कश्चिन्महाभिक्षुः समाध्यभ्यासतत्परः । नित्यं स्वव्यवहारेण क्षपयत्यखिलं दिनम् ॥ २ ॥

āsītkascinmahābhikṣuḥ samādhyabhyāsatatparaḥ | nityaṃ svavyavahāreṇa kṣapayatyakhilaṃ dinam || 2 ||

There was a great mendicant who was devoted to the practice of meditation. He spent his entire day engaged in his own activities.

एक महान भिक्षु था जो ध्यान के अभ्यास में लगा रहता था। वह अपने दैनिक कार्यों में अपना पूरा दिन बिताता था।

6.62.3

समाध्यभ्यासशुद्धं तत्तस्य चित्तं क्षणेन यत् । चिन्तयत्याशु तद्भावं गच्छत्यम्बिव वीचिताम् ॥ ३ ॥

samādhyabhyāsaśuddhaṃ tattasya cittaṃ kṣaṇena yat | cintayatyāśu tadbhāvaṃ gacchatyambviva vīcitām || 3 ||

His mind, purified by the practice of meditation, would quickly attain that state, just as water flows into waves.

ध्यान के अभ्यास से शुद्ध हुआ उसका मन शीघ्र ही उस अवस्था को प्राप्त हो जाता था, जैसे पानी लहरों में बहता है।

6.62.4

कदाचित्स समाधानविरतोऽतिष्ठदेकधीः । किंचित्संचिन्तयामास स्वासनस्थः क्रियाक्रमम् ॥ ४ ॥

kadācit sa samādhānavirato'tiṣṭhadekadhīḥ | kiṃcitsaṃcintayāmāsa svāsanasthaḥ kriyākramam || 4 ||

Once, he stopped his meditation and stood with a focused mind. He thought about the sequence of his actions while seated.

एक बार, उसने अपना ध्यान रोक दिया और एकाग्र मन से खड़ा हो गया। बैठे हुए उसने अपने कार्यों के क्रम पर सोचा।

6.62.5

तस्य चिन्तयतो जाता प्रतिभेयमिति स्वतः । भावयाम्याशु लीलार्थं सामान्यजनवृत्तिताम् ॥ ५ ॥

tasya cintayato jātā pratibheyamiti svataḥ | bhāvayāmyāśu līlārthaṃ sāmānyajanavṛttitām || 5 ||

While he was thinking, a thought arose spontaneously within him. He decided to manifest ordinary human behavior for the sake of play.

जब वह सोच रहा था, उसके अंदर स्वतः ही एक विचार उत्पन्न हुआ। उसने खेल के लिए सामान्य मानवीय व्यवहार को प्रदर्शित करने का निर्णय लिया।

6.62.6

इति संचिन्त्य चेतोऽस्य स्थितं किंचिन्नरान्तरम् । स्पन्दसंस्थानसंत्यागमात्रेणावर्तनेऽम्ब्विव ॥ ६ ॥

iti saṃcintya ceto'sya sthitaṃ kiṃcin narāntaram | spandasaṃsthānasaṃtyāgamātreṇāvartane'mbviva || 6 ||

Thus, having thought in this way, his mind became somewhat different | Just by giving up the state of vibration, it returned like water || 6 ||

इस प्रकार सोचकर, उसका मन कुछ अलग हो गया | केवल स्पंदन की स्थिति को छोड़कर, यह पानी की तरह लौट आया || 6 ||

6.62.7

तेन चित्तनरेणाथ कृतं नामात्मवाञ्छया । जीवटोऽस्मीति सहसा काकतालीयवत्स्थितम् ॥ ७ ॥

tena cittanareṇātha kṛtaṃ nāmātmavāñchayā | jīvaṭo'smīti sahasā kākatālīyavatsthitam || 7 ||

By that mental man, then, a name was made with the desire for the self | Suddenly, 'I am Jivata' was established like a crow's tail || 7 ||

उस मानसिक पुरुष द्वारा, तब, आत्मा की इच्छा से एक नाम बनाया गया | अचानक, 'मैं जीवट हूँ' कहा गया, जैसे कौए की पूँछ की तरह || 7 ||

6.62.8

जीवटो विजहाराथ स स्वप्नपुरुषश्चिरम् । स्वप्ननिर्माणनगरे कस्मिंश्चित्पुरवीथिषु ॥ ८ ॥

jīvaṭo vijahārātha sa svapnapuruṣaściram | svapnanirmāṇanagare kasmiṃścitpuravīthiṣu || 8 ||

Jivata then enjoyed for a long time as a dream man | In some dream-created city, in the streets of the city || 8 ||

जीवट ने तब लंबे समय तक स्वप्न पुरुष के रूप में आनंद लिया | किसी स्वप्न-निर्मित नगर में, शहर की सड़कों पर || 8 ||

6.62.9

तत्र पानं पपौ मत्तो भृङ्गः पद्मरसं यथा । लीलयैव दृढं हृष्टः सुष्वाप घननिद्रया ॥ ९ ॥

tatra pānaṃ papau matto bhṛṅgaḥ padmarasaṃ yathā | līlayaiva dṛḍhaṃ hṛṣṭaḥ suṣvāpa ghananidrayā || 9 ||

There he drank the drink, intoxicated like a bee with lotus nectar | Playfully, he was very happy and slept deeply || 9 ||

वहाँ उसने पेय पी, मधुमक्खी की तरह कमल रस से मतवाला | खेल-खेल में, वह बहुत खुश था और गहरी नींद सोया || 9 ||

6.62.10

स्वप्ने ददर्श विप्रत्वं पाठानुष्ठानतुष्टिमत् । प्रतिभामात्रसंपन्नां चित्ते देशान्तराप्तिवत् ॥ १० ॥

svapne dadarśa vipratvaṃ pāṭhānuṣṭhānatuṣṭimat | pratibhāmātrasaṃpannāṃ citte deśāntarāptivat || 10 ||

In the dream, he saw the state of being a Brahmin, satisfied with the performance of studies | Endowed with mere intelligence, like the mind reaching another place || 10 ||

स्वप्न में, उसने ब्राह्मण होने की अवस्था देखी, अध्ययन के अनुष्ठान से संतुष्ट | केवल बुद्धिमत्ता से संपन्न, जैसे मन दूसरी जगह पहुँच गया हो || 10 ||

6.62.11

कदाचित्स द्विजश्रेष्ठस्त्वहर्व्यापारनिष्ठया । सुष्वापान्तर्व्यवहृतिर्बीजतायामिव द्रुमः ॥ ११ ॥

kadācitsa dvijaśreṣṭhastvaharvyāpāraniṣṭhayā | suṣvāpāntarvyavahṛtirbījatāyāmiva drumaḥ || 11 ||

Once, the best of the Brahmins, engaged in daily activities, slept deeply like a tree in the seed state.

एक बार, ब्राह्मणों में श्रेष्ठ, दैनिक कार्यों में व्यस्त होकर गहरी नींद में सो गया, जैसे कि बीज में वृक्ष होता है।

6.62.12

द्विजोऽपश्यत्स्वयं स्वप्ने सामन्तत्वमथात्मनि । स सामन्तः कृताहारः कदाचिद्धननिद्रया ॥ १२ ॥

dvijopaśyatsvayaṃ svapne sāmantatvamathātmani | sa sāmanthaḥ kṛtāhāraḥ kadāciddhananidrayā || 12 ||

The Brahmin saw himself in a dream as a feudal lord. He, as a feudal lord, having eaten, sometimes fell into a sleep of wealth.

ब्राह्मण ने स्वप्न में अपने आपको एक सामंत के रूप में देखा। वह सामंत बनकर, भोजन करने के बाद, कभी-कभी धन की नींद में चला जाता था।

6.62.13

अपश्यद्राजतां स्वप्ने ककुब्वलयपालिनीम् । लालितां भोगपूगेन पुष्पौघेण लतामिव ॥ १३ ॥

apaśyadrājatāṃ svapne kakubvalayapālinīm | lālitāṃ bhogapūgēna puṣpaugheṇa latāmiva || 13 ||

He saw in his dream a queen adorned with a crown, cherished with luxuries, like a vine laden with flowers.

उसने स्वप्न में एक मुकुटधारी रानी देखी, जो विलासिता से भरी हुई थी, जैसे फूलों से भरी लता।

6.62.14

स कदाचिन्नृपः स्वस्थः सुष्वापास्तमितेहितः । पुरोभाविनिजाचारः स्वकार्यमिव कारणे ॥ १४ ॥

sa kadācin nṛpaḥ svasthaḥ suṣvāpāstamitēhitah | purōbhāvinijācāraḥ svakāryamiva kāraṇe || 14 ||

Sometimes, the king, being healthy, slept deeply, with his desires suppressed, like one who performs future actions for his own cause.

कभी-कभी, राजा, स्वस्थ होकर, गहरी नींद में सो गया, अपनी इच्छाओं को दबाकर, जैसे कि वह अपने कारण के लिए भविष्य के कार्यों को करता है।

6.62.15

स कदाचिन्नृपः स्वस्थः सुष्वापास्तमितेहितःपुरोभाविनिजाचारः स्वकार्यमिव कारणे ॥ १५ ॥

sa kadācinnṛpaḥ svasthaḥ suṣvāpāstamitehitaḥpurobhāvinijācāraḥ svakāryamiva kāraṇe || 15 ||

Once, the king, being healthy, having slept well, having completed his duties, engaged in his own work as if it were a cause.

एक बार, राजा, स्वस्थ होकर, अच्छी तरह से सोकर, अपने कर्तव्य पूरे करके, अपने काम में लग गया जैसे कि वह एक कारण हो।

6.62.16

सा सुरस्त्री रतिश्रान्ता निद्रां गाढामुपागता । मृगीत्वमात्मनि स्वैरमावर्तत्वमिवाम्बुता ॥ १६ ॥

sā surastrī ratīśrāntā nidrāṃ gāḍhāmupāgatā | mṛgītvamātmani svairamāvartatvamivāmbutā || 16 ||

That divine woman, exhausted from lovemaking, fell into a deep sleep, like a doe in the forest, freely moving in herself like a cloud.

वह देवी, प्रेम क्रीड़ा से थकी हुई, गहरी नींद में चली गई, जैसे कि जंगल में हिरणी, अपने आप में स्वतंत्र रूप से घूमती हुई बादल की तरह।

6.62.17

सा मृगी लोलनयना कदाचिन्निद्रया हृता । स्वप्ने ददर्श वल्लीत्वं स्वाभ्यासाद्दृढमात्मनि ॥ १७ ॥

sā mṛgī lolanayanā kadācinnidrayā hṛtā | svapne dadarśa vallītvaṃ svābhyāsāddṛḍhamātmani || 17 ||

That doe with rolling eyes, sometimes overcome by sleep, saw in her dream the firm state of a creeper due to her habit.

वह लोल नयनों वाली मृगी कभी-कभी नींद से हरी हो जाती थी और स्वप्न में अपनी आदत से एक लता की दृढ़ अवस्था देखती थी।

6.62.18

तिर्यञ्चोऽपि प्रपश्यन्ति स्वप्नं चित्तस्वभावतः । दृष्टानां च श्रुतानां च चेतःस्मरणमक्षतम् ॥ १८ ॥

tiryañco'pi prapaśyanti svapnaṃ cittasvabhāvataḥ | dṛṣṭānāṃ ca śrutānāṃ ca cetaḥsmaraṇamakṣatam || 18 ||

Even animals see dreams due to the nature of the mind. The memory of what is seen and heard remains intact.

यहाँ तक कि पशु भी मन के स्वभाव के कारण स्वप्न देखते हैं। जो देखा और सुना जाता है, उसकी स्मृति अक्षत रहती है।

6.62.19

सा बभूव लतापुष्पफलपल्लवशालिनी । वनदेवी वनोद्यानलतागृहविलासिनी ॥ १९ ॥

sā babhūva latāpuṣpaphalapallavaśālinī | vanadevī vanodyānalatāgṛhavilāsinī || 19 ||

She became adorned with flowers, fruits, and tender leaves, like a forest goddess delighting in the forest garden abode of creepers.

वह फूलों, फलों और कोमल पत्तों से सजी हुई हो गई, जैसे एक वनदेवी जो वन उद्यान के लता आश्रय में विलास करती है।

6.62.20

बीजान्तस्थाङ्कुराकाररूपयेहाधिरूढया । सापश्यदन्तःसंवित्त्या स्फुटं लवनमात्मनः ॥ २० ॥

bījāntasthāṅkurākārarūpayehādhirūḍhayā | sāpaśyadantaḥsaṃvittyā sphuṭaṃ lavanaṃ ātmanaḥ || 20 ||

With the form of a sprout arising from the seed within, she clearly saw the beauty of herself through inner awareness.

बीज के अंदर स्थित अंकुर के रूप में, उसने अंतःसंवित्ति से अपने आप की स्पष्ट सुंदरता देखी।

6.62.21

कंचित्कालं सुषुप्तस्थं कलया जडतां घनाम् । अनुभूय ददर्शाथ स्वात्मानं भ्रमरं स्थिरम् ॥ २१ ॥

kañcitkālaṃ suṣuptasthaṃ kalayā jaḍatāṃ ghanām | anubhūya dadarśātha svātmānaṃ bhramaraṃ sthiram || 21 ||

After experiencing deep sleep for some time and becoming inert due to the influence of time, she then saw her stable self as a bee.

कुछ समय तक गहरी नींद की अवस्था में रहकर और समय के प्रभाव से जड़ होकर, उसने फिर अपने स्थिर आत्मा को भ्रमर के रूप में देखा।

6.62.22

षट्पदो विजहाराथ वने वनलतास्वसौ । पद्मिनीषु च फुल्लासु तरुणीष्विव वल्लभः ॥ २२ ॥

ṣaṭpado vijahārātha vane vanalatāsvasau | padminīṣu ca phullāsu taruṇīṣviva vallabhaḥ || 22 ||

The bee wandered in the forest, enjoying the forest vines and the blooming lotuses, like a lover among young women.

भौंरा वन में घूमता रहा, वन की लताओं और खिले हुए कमलों का आनंद लेता हुआ, जैसे कि एक प्रेमी युवतियों के बीच।

6.62.23

प्रियाबिम्बाधरस्वादुरसवत्कौसुमं मधु । भ्रमत्कुसुमसंघासु मुक्तावल्लीविलासिषु ॥ २३ ॥

priyābimbādharasvādurasavatkausumaṃ madhu | bhramatkusumasaṃghāsu muktāvallīvilāsiṣu || 23 ||

The bee enjoyed the sweet honey from the lotuses, which was as sweet as the lips of his beloved, while wandering among the clusters of blooming flowers, which were as beautiful as pearl garlands.

भौंरा कमलों से मीठे मधु का आनंद लेता है, जो उसकी प्रियतमा के अधरों के समान मीठा है, और खिले हुए फूलों के झुंडों में घूमता है, जो मोती की मालाओं के समान सुंदर हैं।

6.62.24

स बभूव सरोजिन्यां व्यसनी विसनालगः । क्वचिदेव रतिं ह्येति चेतो जडमतेरपि ॥ २४ ॥

sa babhūva sarojinyāṃ vyasanī visanālaghaḥ | kvacideva ratiṃ hyeti cetojadhamaterapi || 24 ||

He became distressed in the lotus, sometimes finding pleasure even with a dull mind.

वह कमल में दुःखी हो गया, कभी-कभी मंद मन से भी आनंद पाता है।

6.62.25

तामाजगाम नलिनीं परिलोलयितुं गजः । रम्यवस्तुक्षयायैव मूढानां जृम्भते पदम् ॥ २५ ॥

tāmājagāma nalinīṃ parilolayituṃ gajaḥ | ramyavastukṣayāyaiva mūḍhānāṃ jṛmbhate padam || 25 ||

The elephant approached the lotus to play with it, but for the foolish, the path to enjoyable things leads to destruction.

हाथी कमल के पास आया उसके साथ खेलने के लिए, लेकिन मूर्खों के लिए, भोग की वस्तुओं का मार्ग विनाश की ओर ले जाता है।

6.62.26

नलिनी मर्दिता सैव समं तेन स षट्पदः । गतो दन्तान्तरं व्रीहिरिव चूर्णत्वमाययौ ॥ २६ ॥

nalinī marditā saiva samaṃ tena sa ṣaṭpadaḥ | gato dantāntaraṃ vrīhiriva cūrṇatvamāyayau || 26 ||

The lotus was crushed along with the bee by the elephant, just like rice grains turning into powder.

कमल हाथी द्वारा भौंरे के साथ कुचल दिया गया, जैसे चावल के दाने चूर्ण में बदल जाते हैं।

6.62.27

भ्रमरो वारणालोकाद्वारणालोकभावनात् । ददर्शात्मानमामोदमत्तहस्तितयोदितम् ॥ २७ ॥

bharamaro vāraṇālokādvāraṇālokabhāvanāt | dadarśātmānamāmodamattahastitayoditam || 27 ||

The bee, imagining itself to be an elephant due to its reflection in the elephant's eyes, saw itself as joyful and intoxicated like an elephant.

भ्रमर, हाथी की आँखों में अपने प्रतिबिम्ब को देखकर खुद को हाथी समझने लगा और उसने खुद को आनंदित और मतवाला हाथी की तरह देखा।

6.62.28

शुष्कसागरगम्भीरे गजः खाते पपात ह । तमोघनघने शून्ये संसार इव जीवकः ॥ २८ ॥

śuṣkasāgaragambhīre gajaḥ khāte papāta ha | tamoghanaghane śūnye saṃsāra iva jīvakaḥ || 28 ||

An elephant fell into a deep, dry ocean pit, like a living being falling into the empty, dark, dense world.

एक हाथी एक गहरे, सूखे समुद्र के गड्ढे में गिर गया, जैसे एक जीव खाली, अंधेरे और घने संसार में गिर जाता है।

6.62.29

बभूव वल्लभो राज्ञो महापरबलान्तकः । सदा मदबलक्षीबो घूर्णोतीव निशाचरः ॥ २९ ॥

babhūva vallabho rājño mahāparabalāntakaḥ | sadā madabalakṣībo ghūrṇotīva niśācaraḥ || 29 ||

He became the beloved of the king, the destroyer of great enemies, always intoxicated with power, like a night-roaming demon.

वह राजा का प्रिय बन गया, महान शत्रुओं का नाश करने वाला, हमेशा शक्ति से मतवाला, जैसे रात में घूमने वाला राक्षस।

6.62.30

कदाचिदसिनिस्त्रिंशच्छिन्नः सोऽस्तमुपाययौ । विवेकानिलनिर्लूनरूपो जीव इवात्मनि ॥ ३० ॥

kadācidasiinistriṃśacchinnaḥ so'stamupāyayau | vivekānilanirlūnarūpo jīva ivātmani || 30 ||

Sometimes, cut by a sword, he reached the end, with a form purified by the wind of discrimination, like a soul in the self.

कभी-कभी, तलवार से कटकर, वह अंत तक पहुंच गया, विवेक की हवा से शुद्ध रूप में, जैसे आत्मा आत्म में।

6.62.31

पश्यन्गजघटाकुम्भस्थलाग्रोच्चलितानलीन् । गण्डस्थभ्रमराभ्यासाद्गजो भूयोऽप्यभूदलिः ॥ ३१ ॥

paśyangajaghaṭākumbhasthalāgroccalitānalīn | gaṇḍasthabhramarābhyāsādgajo bhūyo'pyabhūdaliḥ || 31 ||

Seeing the bees rising from the tips of the lotus cups on the elephant's forehead, the elephant became even more agitated.

हाथी के माथे पर कमल के प्यालों की नोकों से उठते हुए भ्रमरों को देखकर, हाथी और भी अधिक व्याकुल हो गया।

6.62.32

सेवमानो वनलतां पुनरायात्स पद्मिनीम्दुस्त्यजो हि दुरभ्यासो वासनानामबोधिनः ॥ ३२ ॥

sevamāno vanalatāṃ punarāyātsa padminīmdustyajo hi durabhyāso vāsanānāmabodhinaḥ || 32 ||

Serving the forest creeper, he returned to the lotus. Indeed, it is difficult to give up habits, especially for the ignorant.

वन की लता की सेवा करते हुए, वह फिर से कमल के पास लौट आया। निश्चित रूप से, आदतों को छोड़ना मुश्किल है, खासकर अज्ञानी के लिए।

6.62.33

तत्र हस्तिखुराक्रान्तः पुनः संचूर्णतां ययौ । पार्श्वस्थहंससंवित्त्या बभूव कलहंसकः ॥ ३३ ॥

tatra hastikhurākrāntaḥ punaḥ saṃcūrṇatāṃ yayau | pārśvasthahaṃsasaṃvittyā babhūva kalahaṃsakaḥ || 33 ||

There, trampled by an elephant's hoof, he was reduced to dust again | By the consciousness of the swan nearby, he became a quarrelsome swan || 33 ||

वहाँ, हाथी के खुर से कुचला हुआ, वह फिर से चूर्ण हो गया | पास के हंस की चेतना से, वह झगड़ालू हंस बन गया || 33 ||

6.62.34

कलहंसश्चिरतरं योनिष्वन्यासु संल्लुठन् । कदाचिद्बहुभिर्हंसैः संगतो विजहार ह ॥ ३४ ॥

kalahaṃsaściratarataraṃ yoniṣvanyāsu saṃlluṭhan | kadācidbahubhirhaṃsaiḥ saṃgato vijahāra ha || 34 ||

The quarrelsome swan, wandering for a long time in various births | Sometimes, accompanied by many swans, he sported || 34 ||

झगड़ालू हंस, लंबे समय तक विभिन्न जन्मों में भटकता रहा | कभी-कभी, कई हंसों के साथ, वह खेलता रहा || 34 ||

6.62.35

ब्राह्महंसात्मिका संवित्सशब्दार्थवती मनाक् । तत्र पुष्टास्य तस्यान्तः प्रागण्डरसबर्हिवत् ॥ ३५ ॥

brāhmahaṃsātmikā saṃvitsaśabdārthavatī manāk | tatra puṣṭāsya tasyāntaḥ prāgaṇḍarasabarhivat || 35 ||

The consciousness that is the essence of the Brahma swan, with meaningful words | There, within him, it was nourished like the essence of the first sprout || 35 ||

जो चेतना ब्रह्म हंस की आत्मा है, अर्थपूर्ण शब्दों के साथ | वहाँ, उसके भीतर, वह पहली अंकुर की सार की तरह पोषित हुई || 35 ||

6.62.36

स तच्चिन्तां चरन्मृतो दृढं व्याधिघुणाहतः । तत्संवित्त्यनुसंधानाज्जातः पद्मजसारसः ॥ ३६ ॥

sa taccintāṃ caranmṛto dṛḍhaṃ vyādhighuṇāhataḥ | tatsaṃvittyānusaṃdhānāj jātaḥ padmajasārasaḥ || 36 ||

He, meditating on that thought, died firmly struck by the disease of grief | From the contemplation of that consciousness, he was born as a lotus-born crane || 36 ||

वह, उस विचार पर ध्यान करते हुए, शोक की बीमारी से गहराई से घायल होकर मर गया | उस चेतना के ध्यान से, वह कमल से उत्पन्न सारस बन गया || 36 ||

6.62.37

तत्रातिसततविवेकवतो विलासैः संबोधितो विगतलौकिकवस्तुदृष्टिः । मुक्तः स्थितो ननु युगान्तविधौ विदेहमुक्तेन तेन किमु भावि विभाव्यमेतत् ॥ ३७ ॥

tatrātisatatavivekavato vilāsaiḥ saṃbodhito vigatalaukikavastudṛṣṭiḥ | muktḥ sthito nanu yugāntavidhau videhamuktena tena kimu bhāvi vibhāvyametat || 37 ||

There, the one who is endowed with the highest discernment and is awakened by divine play, having transcended the worldly view of objects, remains liberated. What then is to be contemplated by the liberated one in the state of the end of the world?

वहाँ, जो उच्चतम विवेक से युक्त है और दिव्य लीला से जागृत है, वह लौकिक वस्तुओं की दृष्टि से परे होकर मुक्त रहता है। फिर प्रलय की अवस्था में मुक्त व्यक्ति को क्या सोचना चाहिए?

Chapter 63

6.63.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । स कदाचिद्ददर्शाथ रुद्रं रुद्रपुरे खगः । वैरिञ्चनलिनीनाललीलालाभेन लीलया ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sa kadācid dadarśātha rudraṃ rudrapure khagaḥ | vairiñcanalinīnālalīlālābhena līlayā || 1 ||

Śrīvasiṣṭha said: Once, a bird saw Rudra in Rudrapura, due to the playful reflection in the lotus of Brahma.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: एक बार, एक पक्षी ने रुद्रपुर में रुद्र को देखा, ब्रह्मा के कमल के खेल से प्रतिबिम्ब के कारण।

6.63.2

तत्र बुद्धिरभूत्तस्य रुद्रोऽहमिति निश्चिता । प्रतिबिम्बवदादर्शे द्रागित्येव हि बिम्बिता ॥ २ ॥

tatra buddhirabhūttasya rudro'hamiti niścitā | pratibimbavadādarśe drāgityeva hi bimbithā || 2 ||

There, the bird's mind became certain that 'I am Rudra,' just as a reflection appears in a mirror immediately.

वहाँ, पक्षी के मन में यह निश्चय हो गया कि 'मैं रुद्र हूँ,' जैसे एक प्रतिबिम्ब दर्पण में तुरंत दिखाई देता है।

6.63.3

रुद्रभूतवपुस्तत्र तनुं तत्याज तामसौ । गन्धः पवनतां गच्छन्कुसुमस्तबकं यथा ॥ ३ ॥

rudra-bhūta-vapus tatra tanuṃ tatyāja tāmasau | gandhaḥ pavanatāṃ gacchan kusumas tabakaṃ yathā || 3 ||

There, having become Rudra in form, he abandoned his previous body, just as a fragrance leaves a flower.

वहाँ, रुद्र के रूप में होने के बाद, उसने अपने पहले शरीर को छोड़ दिया, जैसे सुगंध फूल से निकलती है।

6.63.4

स रुद्रो रुद्रभवने विजहार यथेच्छया । तैस्तैः शिवपुराचारैर्गणकोटिगरिष्ठया ॥ ४ ॥

sa rudro rudrabhavane vijahāra yathecchayā | tais taiḥ śivapurācārair gaṇakotigariṣṭhayā || 4 ||

That Rudra enjoyed in Rudra's abode as he pleased, with various practices of Shiva's city, surpassing crores of Ganas.

वह रुद्र रुद्र के आश्रय में अपनी इच्छा के अनुसार आनंद लेता था, शिव के शहर की विभिन्न प्रथाओं से, करोड़ों गणों से अधिक होता था।

6.63.5

रुद्रस्त्वनुत्तमज्ञानविलासैकतया तया । स्वप्नशेषं च वृत्तान्तमपश्यत्प्राक्तनं धिया ॥ ५ ॥

rudrastvanuttamajñānavilāsaikatayā tayā | svapnaśeṣaṃ ca vṛttāntamapaśyat prāktanaṃ dhiyā || 5 ||

Rudra, with the play of supreme knowledge, saw the remaining dream and the past events with his intellect.

रुद्र, परम ज्ञान के खेल से, अपने बुद्धि से शेष स्वप्न और पिछले घटनाक्रम को देखता है।

6.63.6

निरावरणविज्ञानवपुः स भगवांस्तदा । उवाच स्वयमेकान्ते स्वस्वप्नशतविस्मितः ॥ ६ ॥

nirāvaraṇavijñānavapuḥ sa bhagavāṃstadā | uvāca svayamekānte svasvapnaśatavismitaḥ || 6 ||

The Lord, who is the embodiment of unveiled knowledge, then spoke to himself in solitude, amazed by his own dreams.

जो अनावृत ज्ञान का स्वरूप है, वह भगवान तब एकान्त में स्वयं से बोले, अपने स्वप्नों से विस्मित होकर।

6.63.7

अहो तु चित्रा मायेयं तता विश्वविमोहिनी । असत्यैवापि सद्रूपा मरुभूमिषु वारिवत् ॥ ७ ॥

aho tu citrā māyeyaṃ tatā viśvavimohinī | asatyaiavāpi sadrūpā marubhūmiṣu vārivat || 7 ||

Oh, how wonderful is this illusion, which deludes the entire world! Though it is unreal, it appears as real, like water in a desert.

ओह, कितनी चित्र है यह माया, जो सारे विश्व को मोहित करती है! यद्यपि यह असत्य है, फिर भी यह सत्य के रूप में दिखाई देती है, जैसे मरुभूमि में पानी।

6.63.8

इति प्रथममाज्ञातं चिद्योऽहं चित्ततां गतः । सर्वसंपन्नसर्वज्ञगगनादिविभावनात् ॥ ८ ॥

iti prathamamājñātaṃ cidyo'haṃ cittatāṃ gataḥ | sarvasaṃpannasarvajñagaganādivibhāvanāt || 8 ||

Thus, I first realized that I am pure consciousness, having attained the state of pure consciousness through the contemplation of the all-pervading, all-knowing sky.

इस प्रकार, मैंने पहले जाना कि मैं शुद्ध चेतना हूँ, सर्वव्यापी, सर्वज्ञ आकाश के ध्यान से शुद्ध चेतना की अवस्था को प्राप्त करके।

6.63.9

यदृच्छया स्थितो जीवो भूततन्मात्ररञ्जितः । कस्मिंश्चिदभवत्सर्गे भिक्षुरक्षुभितोऽभितः ॥ ९ ॥

yadṛcchayā sthito jīvo bhūtatanmātrarañjitaḥ | kasmiṃścidabhavatsarge bhikṣurakṣubhito'bhitaḥ || 9 ||

By chance, a living being, adorned with the elements, existed in some creation, a mendicant unperturbed from all sides.

यदृच्छा से, एक जीव, तत्वों से अलंकृत, किसी सृष्टि में स्थित था, एक भिक्षु, जो चारों ओर से अविचलित था।

6.63.10

तेनावयवबन्धेन बहिः स्वैरविहारिणी । लीलाऽविलुलिताकारा यदा रम्येति भावतः ॥ १० ॥

tenāvayavabandhena bahiḥ svairavihāriṇī | līlā'vilulitākārā yadā ramyeti bhāvataḥ || 10 ||

By that combination of elements, externally moving freely, the playful form, when it becomes delightful, it is so by nature.

उस अवयवों के संयोजन से, बाहर स्वतंत्र रूप से विचरण करती हुई, खेल का रूप, जब यह आनंददायक हो जाता है, तो यह स्वाभाविक रूप से होता है।

6.63.11

सर्वभावोपमर्देन तदभ्यासवशात्तदा । तामेव सोऽन्वभूद्भिक्षुस्त्यक्त्वान्यं मननोदयम् ॥ ११ ॥

sarvabhāvopamardena tadabhyāsavaśāttadā | tāmeva so'nvabhūdbhikṣustyaktvānyaṃ mananodayam || 11 ||

By suppressing all emotions through constant practice, the mendicant then attained that state, abandoning all other thoughts.

सभी भावों को दबाकर उस अभ्यास के वश में होकर उस समय, वह भिक्षु उसी अवस्था को प्राप्त हुआ, दूसरे विचारों को त्यागकर।

6.63.12

चमत्कृतिश्चेतसि या रूढा सैव विजृम्भते । वल्ली त्यजति नैदाघी पीतमप्यम्बु माधवम् ॥ १२ ॥

camatkṛtiścetasi yā rūḍhā saiva vijṛmbhate | vallī tyajati naidāghī pītamapyambu mādhavam || 12 ||

The astonishment that is firmly rooted in the mind blossoms. Just as a creeper abandons even the water drunk in the summer.

मन में जो आश्चर्य गहराई से बैठा है, वही खिल उठता है। जैसे एक लता गर्मी में पी हुई पानी को भी त्याग देती है।

6.63.13

स भिक्षुर्जीवटो भूत्वा जन्तुर्जरठवासनः । तेषु देहेषु बभ्राम रन्ध्रेष्विव पिपीलिका ॥ १३ ॥

sa bhikṣurjīvaṭo bhūtvā janturjaraṭhavāsanaḥ | teṣu deheṣu babhrāma randhreṣviva pipīlikā || 13 ||

That mendicant, becoming alive, being a creature of old habits, wandered in those bodies like an ant in holes.

वह भिक्षु, जीवित होकर, पुरानी आदतों वाला जीव बनकर, उन शरीरों में छिपकली की तरह छेदों में भटकता रहा।

6.63.14

आत्मनि द्विजभक्तत्वात्सोऽपश्यद्द्विजतामथ । भावाभावविपर्यासे बलवानेव वर्धते ॥ १४ ॥

ātmani dvijabhaktatvātso'paśyaddvijatāmatha | bhāvābhāvaviparyāse balavāneva vardhate || 14 ||

Due to devotion to the twice-born in the self, he then saw the state of being twice-born. In the reversal of being and non-being, the strong one indeed grows.

आत्मा में द्विज भक्ति के कारण, उसने फिर द्विजता की अवस्था देखी। भाव और अभाव के उलट-फेर में, बलवान वास्तव में बढ़ता है।

6.63.16

राज्यार्थं धर्मकार्याणां कर्तृत्वात्सोऽभवन्नृपः । सकामुकतया राजा सुरस्त्रीत्वमवाप ह ॥ १६ ॥

rājyārthaṃ dharmakāryāṇāṃ kartṛtvātso'bhavannṛpaḥ | sakāmukatayā rājā surastrītvamavāpa ha || 16 ||

For the sake of the kingdom and due to the performance of religious duties, he became a king. Due to his desire, the king attained the state of a celestial woman.

राज्य के लिए और धर्म कार्यों के कारण, उसने राजा बनना स्वीकार किया। अपनी इच्छा के कारण, राजा ने एक देवदूत स्त्री की अवस्था प्राप्त की।

6.63.17

लोला लोचनलोभेन सा मृगी रसशालिनी । बभूव वासनामोहश्चाहो दुःखाय जन्तुषु ॥ १७ ॥

lolā locanlobhena sā mṛgī rasaśālinī | babhūva vāsanāmoḥaścāho duḥkhāya jantuṣu || 17 ||

The deer, with her wavering eyes full of desire, became a source of great attraction, leading to the delusion of desires and causing suffering to beings.

वह मृगी अपने लोल लोचनों से लोभ करने वाली थी, जिससे उसकी वासना का मोह बढ़ गया और जन्तुओं के लिए दुःख का कारण बन गया।

6.63.18

मृगी सा बत चित्तस्था बभूव विपिने लता । अवश्यंभावि लवनं लतिकाऽनुबभूव ह ॥ १८ ॥

mṛgī sā bata cittasthā babhūva vipine latā | avaśyaṃbhāvi lavanaṃ latikā'nubabhūva ha || 18 ||

The deer, firmly established in the mind, became a vine in the forest, inevitably leading to the act of licking.

वह मृगी मन में स्थिर होकर, वन में एक लता बन गई, जिससे अनिवार्य रूप से चाटने का कार्य हुआ।

6.63.19

अन्तःसंज्ञाचिराभ्यस्तं भ्रमरत्वमथात्मनि । साऽपश्यत्सावमर्देन तदा तद्भावभाविता ॥ १९ ॥

antaḥsaṃjñācirābhyastaṃ bhramaratvamathātmani | sā'paśyatsāvamardena tadā tadbhāvabhāvitā || 19 ||

She, having long practiced the inner sense of self, saw herself as a bee due to the intense feeling of that state.

उसने अंतःकरण की लंबी अभ्यास करके, अपने आप को एक भौंरा देखा, उस अवस्था के तीव्र भाव के कारण।

6.63.20

सवारणखुरक्षोदमनुभूयाथ भावितम् । भूयोभूयः प्रबभ्राम महासंसृतिसंभ्रमान् ॥ २० ॥

savāraṇakhurakṣodamanubhūyātha bhāvitam | bhūyobhūyaḥ prababhrāma mahāsaṃsṛtisaṃbhramān || 20 ||

Having experienced the pain of being trampled by the hooves of a horse, she wandered repeatedly in the great confusion of existence.

घोड़े की टापों से पीड़ा अनुभव करने के बाद, उसने अस्तित्व के बड़े भ्रम में बार-बार भटकना शुरू कर दिया।

6.63.21

संसारशतपर्यन्ते रुद्रः सोऽहमहं स्थितः । अस्मिन्संसारसंरम्भे स्वमनोमात्रसंभ्रमे ॥ २१ ॥

saṃsāraśataparyante rudraḥ so'hamahaṃ sthitaḥ | asmin saṃsārasaṃrambhe svamanomātrasaṃbhrame || 21 ||

At the end of a hundred cycles of existence, Rudra, the supreme self, is established in this confusion of the world, which is merely the confusion of one's own mind.

सौ चक्रों के अंत में, रुद्र, परम आत्मा, इस संसार के भ्रम में स्थित है, जो केवल अपने मन का भ्रम है।

6.63.22

एवमत्यन्तचित्रासु संसारारण्यभूमिषु । बह्वीष्वहमतिभ्रान्तस्त्वशून्यास्विव भूरिशः ॥ २२ ॥

evamatyantacitrāsu saṃsārāraṇyabhūmiṣu | bahvīṣvahamatibhrāntastvaśūnyāsviva bhūriśaḥ || 22 ||

In this way, I have been greatly deluded in the very strange lands of the forest of worldly existence, as if they were not empty.

इस प्रकार, मैं संसार के वन की बहुत ही विचित्र भूमियों में अत्यधिक भ्रमित हो गया हूँ, जैसे कि वे खाली न हों।

6.63.23

कस्मिंश्चिदभवं सर्गे त्वहं जीवटनामकः । कस्मिंश्चिद्ब्राह्मणश्रेष्ठः कस्मिंश्चिद्वसुधाधिपः ॥ २३ ॥

kasmiṃścidabhavaṃ sarge tvahaṃ jīvaṭanāmakaḥ | kasmiṃścidbrāhmaṇaśreṣṭhaḥ kasmiṃścidvasudhādhipaḥ || 23 ||

In some creation, I was known as Jīvaṭa; in some, I was the best among Brahmins; in some, I was the ruler of the earth.

किसी सृष्टि में मैं जीवट के नाम से जाना जाता था; किसी में मैं ब्राह्मणों में श्रेष्ठ था; किसी में मैं पृथ्वी का शासक था।

6.63.24

हंसः पद्मवने भूत्वा विन्ध्यकच्छे च वारणः। हरिणो देहयन्त्रादौ दशामहमिमां गतः ॥ २४ ॥

haṃsaḥ padmavane bhūtvā vindhyakacche ca vāraṇaḥ | hariṇo dehayantrādau daśāmamahamimāṃ gataḥ || 24 ||

I have been a swan in a lotus forest, an elephant in the Vindhya forests, and a deer in the bodily machine; I have experienced these states.

मैं एक हंस के रूप में कमल के वन में रहा हूँ, विन्ध्य के वन में एक हाथी के रूप में रहा हूँ, और शरीर के यंत्र में एक हिरण के रूप में रहा हूँ; मैंने इन अवस्थाओं का अनुभव किया है।

6.63.25

अत्र वर्षसहस्राणि चतुर्युगशतानि च। समतीतान्यनन्तानि दिनर्तुचरितानि च ॥ २५ ॥

atra varṣasahasrāṇi catur-yugaśatāni ca | samatītānyanantāni dinartucaritāni ca || 25 ||

Here, thousands of years and hundreds of four-yuga cycles have passed, along with countless days and seasons.

यहाँ, हजारों वर्ष और सैकड़ों चार-युग चक्र बीत चुके हैं, साथ ही अनगिनत दिन और ऋतुएँ भी बीत चुकी हैं।

6.63.26

मम प्रथममेव प्राक्चलितस्य परात्पदात्। तत्त्वज्ञानितया रूढो भिक्षुत्वे योग्यताक्रमः ॥ २६ ॥

mama prathamameva prākcalitasya parātpadāt | tattvajñānitayā rūḍho bhikṣutve yogyatākramāḥ || 26 ||

From the very beginning, when I was shaken from the supreme state, I was established in the path of a monk due to the knowledge of reality.

शुरू से ही, जब मैं परम अवस्था से हिला हुआ था, तब से वास्तविकता के ज्ञान के कारण मैं भिक्षु के मार्ग पर स्थापित हो गया।

6.63.27

भूयोभूयोऽप्यतिक्रम्य गतश्च ब्रह्महंसताम्। स एव प्राक्तनोऽभ्यासः फलितः संगमोदयात् ॥ २७ ॥

bhūyobhūyo'pyatikramya gataśca brahmahaṃsatām | sa eva prāktano'bhyāsaḥ phalitaḥ saṃgamodayāt || 27 ||

Repeatedly transcending, one attains the state of Brahmahan. That very past practice bears fruit through association.

बार-बार आगे बढ़कर, वह ब्रह्महंस की स्थिति को प्राप्त होता है | वही पूर्व अभ्यास संग से फलित होता है |

6.63.28

दृढाभ्यासो य एवास्य जीवस्योदेत्यविघ्नतः। सोऽत्यन्तमरसेनापि तमेवाश्वनुधावति ॥ २८ ॥

dṛḍhābhyāso ya evāsya jīvasyodetyavighnataḥ | so'tyantamarasenāpi tamevāśvanudhāvati || 28 ||

The firm practice that arises in the individual without obstruction, even with great delight, runs towards that very practice.

जो अटल अभ्यास बाधा के बिना जीव में उत्पन्न होता है, वह बड़े आनंद से भी उसी अभ्यास की ओर दौड़ता है |

6.63.29

काकतालीययोगेन कदाचित्साधुसंगमात्। अशुभो भावनाभ्यासो जीवस्य विनिवर्तते ॥ २९ ॥

kākatālīyayogena kadācitsādhusaṃgamāt | aśubho bhāvanābhyāso jīvasya vinivartate || 29 ||

By the practice of Kakataliya yoga, sometimes through good association, the impure meditation practice of the individual is transformed.

काकतालीय योग के अभ्यास से, कभी-कभी सत्संग से, जीव का अशुद्ध भावना अभ्यास परिवर्तित होता है |

6.63.30

संगत्यधिगतं चैष केवलं स्वोदयं प्रति । प्राक्तनो वासनाभ्यासो हातुरुद्यममीक्षते ॥ ३० ॥

saṃgatyadhigataṃ caiṣa kevalaṃ svodayaṃ prati | prāktano vāsanābhyāso hāturudyamamīkṣate || 30 ||

This association, having been attained, is solely for one's own upliftment. The past practice of tendencies looks for the effort of the heart.

यह संग प्राप्त होने पर, केवल अपने उदय के लिए है | पूर्व वासना अभ्यास हृदय के उद्यम की खोज करता है |

6.63.31

यच्चेहाभ्यस्यतेऽजस्रं यच्च देहान्तरेऽपि च । जाग्रत्स्वप्नेष्वसदपि तत्सदित्यनुभूयते ॥ ३१ ॥

yaccehābhyasyate'jasraṃ yacca dehāntare'pi ca | jāgratsvapneṣvasadapi tatsadityanubhūyate || 31 ||

Whatever is practiced here continuously, and even in another body, in wakefulness and in dreams, that is experienced as real.

जो यहाँ लगातार अभ्यास किया जाता है, और दूसरे शरीर में भी, जाग्रत और स्वप्न में भी, वह वास्तविक के रूप में अनुभव किया जाता है |

6.63.32

तत्तदर्थक्रियाकारि दुःखाय च सुखाय च । उदेति भावनं तस्माद्भावनाभावनं जयः ॥ ३२ ॥

tattadarthakriyākāri duḥkhāya ca sukhāya ca | udeti bhāvanaṃ tasmādbhāvanābhāvanaṃ jayaḥ || 32 ||

That which causes various actions for the sake of pleasure and pain arises from imagination; therefore, the victory over imagination is the conquest of imagination.

जो सुख और दुःख के लिए विभिन्न कार्य करता है, वह कल्पना से उत्पन्न होता है; इसलिए, कल्पना पर विजय कल्पना की विजय है।

6.63.33

भावनैव स्वमात्मानं देहोऽयमिति पश्यति । असत्तामात्रविस्तारं गुल्मकत्वमिवाङ्कुरः ॥ ३३ ॥

bhāvanaiva svamātmānaṃ deho'yamiti paśyati | asattāmātravistāraṃ gulmakatvamivāṅkuraḥ || 33 ||

Imagination alone sees this body as the self, like a sprout seeing itself as a mere clump. It is an expansion of non-existence.

कल्पना ही इस शरीर को आत्मा मानती है, जैसे अंकुर अपने आप को एक गुच्छा मानता है। यह असत्ता का विस्तार है।

6.63.34

भावना प्रेक्ष्यमाणैषा न किंचिदिह शिष्यते । न च विद्यत एवेति तद्भ्रमेणालमस्तु नः ॥ ३४ ॥

bhāvanā prekṣyamāṇaiṣā na kiṃcid iha śiṣyate | na ca vidyata eveti tadbhraameṇālam astu naḥ || 34 ||

This imagination, when observed, does not remain here. It does not exist at all. Therefore, let this delusion be enough for us.

यह कल्पना, जब देखी जाती है, यहाँ नहीं रहती। यह बिलकुल नहीं है। इसलिए, यह भ्रम हमारे लिए पर्याप्त हो।

6.63.35

भ्रमस्य जागतस्यास्य जातस्याकाशवर्णवत् । असंवेदनमात्रैकं मार्जनायालमस्तु नः ॥ ३५ ॥

bhraamasya jāgatasyāsya jātasyākāśavarṇavat | asaṃvedanamātraikaṃ mārjanāyālam astu naḥ || 35 ||

This delusion of the world, which has arisen like the color of the sky, is merely non-perception. Let it be enough for us to cleanse this.

यह संसार का भ्रम, जो आकाश के रंग की तरह उत्पन्न हुआ है, केवल अनुभूति का अभाव है। इसे साफ करना हमारे लिए पर्याप्त हो।

6.63.36

असन्मयीस्वरूपैषा परं सत्तैव लालनी । वर्तते चेद्विनोदाय किंचित्सा न करिष्यति ॥ ३६ ॥

asanmayīsvarūpaiṣā paraṃ sattaiva lālanī | vartate cedvinodāya kiṃcitsā na kariṣyati || 36 ||

This nature of non-existence is the ultimate reality that nurtures. If it exists for amusement, it will not do anything.

यह असत्ता की प्रकृति परम सत्ता है जो पालन करती है। यदि यह मनोरंजन के लिए है, तो यह कुछ नहीं करेगी।

6.63.37

तत्तान्सर्वान्स्वसंसारानुत्थायालोकयाम्यहम् । सम्यगालोकदानेन तेभ्य एकीकरोम्यहम् ॥ ३७ ॥

tattānsarvānsvasaṃsārānutthāyālokayāmyaham | samyagālokadānena tebhy ekyakaromyaham || 37 ||

I rise and observe all my own creations | By properly bestowing light, I unite them

मैं उठकर अपनी सभी सृष्टियों को देखता हूँ | सही प्रकार से प्रकाश देकर, मैं उन्हें एक करता हूँ

6.63.38

इति संचिन्त्य रुद्रोऽसौ तं सर्गं प्रजगाम ह । यत्र भिक्षुर्विहारस्थः सुप्तः शव इव स्थितः ॥ ३८ ॥

iti saṃcintya rudro'sau taṃ sargaṃ prajagāma ha | yatra bhikṣurvihārasthaḥ suptaḥ śava iva sthitaḥ || 38 ||

Thus contemplating, that Rudra went to that creation | Where the monk, staying in the monastery, was asleep like a corpse

इस प्रकार सोचकर, वह रुद्र उस सृष्टि की ओर गया | जहाँ भिक्षु, मठ में रहते हुए, एक शव की तरह सोया हुआ था

6.63.39

बोधयित्वाथ तं भिक्षुं चेतसा चेतनेन च । योजयामास सस्मार भिक्षुरप्यात्मनो भ्रमम् ॥ ३९ ॥

bodhayitvātha taṃ bhikṣuṃ cetasā cetanena ca | yojayāmāsa sasmāra bhikṣurapyātmano bhramam || 39 ||

Having awakened that monk with consciousness and awareness | He united and remembered the monk's own delusion

उस भिक्षु को चेतना और जागरूकता से जगाकर | उसने भिक्षु के अपने भ्रम को याद किया और एक किया

6.63.40

रुद्रमात्मानमालोक्य जीवटादिमयं तथा । बोधादविस्मयार्होऽपि स भिक्षुर्विस्मयं ययौ ॥ ४० ॥

rudramātmānamālokya jīvaṭādimayaṃ tathā | bodhādavismayārho'pi sa bhikṣurvismayaṃ yayau || 40 ||

Seeing Rudra as his own self and the origin of all beings | Although worthy of wonder from awareness, that monk was amazed

रुद्र को अपना स्वयं और सभी प्राणियों का उद्गम देखकर | चेतना से आश्चर्य के योग्य होने के बावजूद, वह भिक्षु आश्चर्यचकित हो गया

6.63.41

अथ रुद्रस्तथा भिक्षुर्द्वावेवोत्थाय जग्मतुः । क्वापि जीवटसंसारं चिदाकाशैककोणगम् ॥ ४१ ॥

atha rudrastathā bhikṣurdvāvevotthāya jagmatuḥ | kvāpi jīvaṭasaṃsāraṃ cidākāśaikakoṇagam || 41 ||

Then Rudra and the monk, both rising, went somewhere | To the realm of beings, the sole corner of the sky of consciousness

फिर रुद्र और भिक्षु, दोनों उठकर, कहीं चले गए | प्राणियों के संसार में, चेतना के आकाश के एकमात्र कोण में

6.63.43

सुप्तं ददृशतुर्नष्टसंज्ञं जीवटकं शवम्। स्थापयित्वा वपुर्भावं प्रभान्तं भवभूमिषु ॥ ४३ ॥

suptaṃ dadṛśaturnaṣṭasaṃjñaṃ jīvaṭakaṃ śavam | sthāpayitvā vapurbhāvaṃ prabhāntaṃ bhavabhūmiṣu || 43 ||

They saw a lifeless corpse, unconscious, and placed it in a state of radiance on the planes of existence.

उन्होंने एक बेहोश शव देखा और उसे अस्तित्व के स्तरों पर एक चमकदार अवस्था में रखा।

6.63.44

तं प्रबोध्य नियोज्याशु चेतसा चेतनेन च। एकरूपास्त्रिरूपास्ते रुद्रजीवटभिक्षुकाः ॥ ४४ ॥

taṃ prabodhya niyojyāśu cetasā cetanena ca | ekarūpāstrirūpāste rudrajīvaṭabhikṣukāḥ || 44 ||

Awakening him quickly with consciousness and awareness, they became one in form, yet three in essence, as Rudra, Jiva, and Bhikshu.

उसे तुरंत चेतना और जागरूकता से जगाकर, वे एक रूप में, लेकिन तीन स्वरूप में, रुद्र, जीव और भिक्षु बन गए।

6.63.45

बोधवन्तोऽप्यबुद्धाभा विस्मिता अप्यविस्मिताः। बभुस्तूष्णींस्थिताश्चित्रकृताकारा इव क्षणम् ॥ ४५ ॥

bodhavanto'pyabuddhābhā vismitā apyavismitāḥ | babhustūṣṇīṃsthitāścitrakṛtākārā iva kṣaṇam || 45 ||

Though awakened, they appeared unawakened, astonished yet unastonished, standing silently for a moment like a wonderfully crafted form.

हालांकि जागृत, वे अजागृत-से लग रहे थे, आश्चर्यचकित लेकिन अचकित, एक क्षण के लिए एक अद्भुत रूप की तरह चुपचाप खड़े थे।

6.63.46

अथ जग्मुश्च ते सर्वे क्वचिद्व्योमनि संस्थितम्। विप्रसंसारमारब्धं परिभूतसघुंघुमम् ॥ ४६ ॥

atha jagmuśca te sarve kvacidvyomani saṃsthitam | viprasaṃsāramārabdhaṃ paribhūtasaghughumam || 46 ||

Then all of them went to a certain place in the sky, beginning the cycle of transmigration, filled with various sounds.

फिर सभी ने आकाश में किसी स्थान पर जाकर, विविध ध्वनियों से भरे पुनर्जन्म के चक्र को आरंभ किया।

6.63.47

ते तत्र भुवनं गत्वा तद्वीपं तच्च मण्डलम्। विषयं तच्च तं ग्रामं प्रापुस्तं ब्राह्मणालयम् ॥ ४७ ॥

te tatra bhuvanaṃ gatvā tadvīpaṃ tacca maṇḍalam | viṣayaṃ tacca taṃ grāmaṃ prāpustabrāhmaṇālayam || 47 ||

They went to that world, that island, that region, that place, and reached that Brahmin's abode.

वे उस लोक, उस द्वीप, उस मण्डल, उस स्थान पर गए और उस ब्राह्मण के आश्रम तक पहुंचे।

6.63.48

विप्रं ते ददृशुः सुप्तं कलत्रवलितं गृहे। कण्ठे गृहीतं ब्राह्मण्या बहिर्जीवमिव स्थितम् ॥ ४८ ॥

vipraṃ te dadṛśuḥ suptaṃ kalatravalitaṃ gṛhe | kaṇṭhe gṛhītaṃ brāhmaṇyā bahirjīvamiva sthitam || 48 ||

They saw the Brahmin sleeping in the house, embraced by his wife, as if his life was held in her throat.

उन्होंने ब्राह्मण को घर में सोते हुए देखा, जो अपनी पत्नी के आलिंगन में था, मानो उसका जीवन उसके गले में था।

6.63.49

तं प्रबोध्य नियोज्याशु चेतसा चेतनेन च । तत्स्थास्ते बहवोऽप्यन्ये सविस्मयविविस्मयाः ॥ ४९ ॥

taṃ prabodhya niyojyāśu cetasā cetanena ca | tatsthāste bahavo'pyanye savismayavivismayāḥ || 49 ||

After awakening him and quickly assigning him with consciousness and awareness, many others stood there, filled with wonder and amazement.

उसे जगाकर और तुरंत चेतना और जागरूकता से नियुक्त करके, बहुत से अन्य लोग वहाँ आश्चर्य और विस्मय से भरे हुए खड़े थे।

6.63.50

अथ जग्मुश्चिदाकाशकचितं चेतितं चितेः । सामन्तं नृपसंसारं भ्रमणाभोगसुन्दरम् ॥ ५० ॥

atha jagmuścidākāśakacitaṃ cetitaṃ citeḥ | sāmantaṃ nṛpasansāraṃ bhramaṇābhogasundaram || 50 ||

Then they went to the space of consciousness, the pure consciousness of the self, surrounding the beautiful realm of the king's worldly enjoyments.

फिर वे चेतना के आकाश में गए, आत्मा की शुद्ध चेतना के, राजा के भौतिक भोगों के सुंदर संसार को घेरते हुए।

6.63.51

ततस्ते भुवनं प्राप्तास्तद्वीपं तच्च मण्डलम् । सामन्तं ददृशुर्मत्तं सुप्तं पर्यङ्कपङ्कजे ॥ ५१ ॥

tataśte bhuvanaṃ prāptāstadadvīpaṃ tacca maṇḍalam | sāmantaṃ dadṛśurmattaṃ suptaṃ paryaṅkapankaje || 51 ||

Then they reached that world, that island, and that realm. They saw the intoxicated one sleeping on the lotus bed, surrounded by it.

फिर वे उस दुनिया, उस द्वीप, और उस मण्डल तक पहुंचे। उन्होंने उस कमल के बिस्तर पर सोते हुए मतवाले को देखा, जो उससे घिरा हुआ था।

6.63.52

हेमावदातं हेमांग्या निहितं कुचकोटरे । भ्रमर्येवान्वितं पद्मकोशसुप्तं मधुव्रतम् ॥ ५२ ॥

hemāvadātaṃ hemaṅgyā nihitaṃ kucakoṭare | bhramaryevānvitaṃ padmakośasuptaṃ madhuvratam || 52 ||

Adorned with golden ornaments, placed in the bosom of the golden-limbed one, like a bee resting in the lotus bud, he was sleeping, devoted to honey.

सुनहरे आभूषणों से सज्जित, सुनहरी अंगों वाली के वक्ष में रखा, मानो भौंरा कमल के कोश में विश्राम कर रहा हो, वह मधु के प्रति समर्पित सो रहा था।

6.63.53

कान्ताभिरभ्यावलितं मञ्जरीभिरिव द्रुमम् । दीपजालकमध्यस्थं रत्नौघ इव काञ्चनम् ॥ ५३ ॥

kāntābhirabhyāvalitaṃ mañjarībhiriva drumaṃ | dīpajālakamadhyasthaṃ ratnaugha iva kāñcanam || 53 ||

The tree is surrounded by beautiful women as if it were a cluster of blossoms, and it stands in the midst of a network of lamps, like a heap of jewels.

वह वृक्ष सुंदर स्त्रियों से घिरा हुआ है जैसे फूलों का एक गुच्छा हो, और यह दीपों के एक जाल के मध्य में खड़ा है, जैसे रत्नों का एक ढेर।

6.63.54

तं प्रबोध्य नियोज्याशु चेतसा चेतनेन च । तत्स्थास्ते बहवोऽप्येके सविस्मयविविस्मयाः ॥ ५४ ॥

taṃ prabodhya niyojyāśu cetasā cetanena ca | tatsthāste bahavo'pyeke savismayavivismayāḥ || 54 ||

Awakening him and quickly assigning him with consciousness and the conscious, many stand there, filled with wonder and amazement.

उसे जगाकर और तुरंत चेतना और चेतन के साथ नियुक्त करके, बहुत से लोग वहाँ खड़े हैं, आश्चर्य और विस्मय से भरे हुए।

6.63.55

अथ ते राजसंसारं जग्मुस्तत्र विबोध्य तम्। चेतसैवमथान्यासु भ्रेमुः संसारभूमिषु ॥ ५५ ॥

atha te rājasaṁsāraṃ jagmus tatra vibodhya taṃ | cetasaivamathānyāsu bhremuḥ saṁsārabhūmiṣu || 55 ||

Then they went to the royal world, awakening him there. Similarly, with consciousness, they wandered in other realms.

फिर वे राजसी संसार में गए, उसे वहाँ जगाकर। इसी तरह, चेतना के साथ, वे अन्य संसारों में भटके।

6.63.56

प्राप्य तां ब्रह्महंसेहां रुद्रतां सर्व एव ते। समाजग्मुर्विरेजुश्च रुद्राणामुत्तमं शतम् ॥ ५६ ॥

prāpya tāṃ brahmahaṃsehaṃ rudratāṃ sarva eva te | samājagmurvirejuśca rudrāṇāmuttamaṃ śatam || 56 ||

Having attained that state of Brahma's swan, all of them attained the state of Rudra. They assembled and shone as the best hundred among the Rudras.

ब्रह्मा के हंस की अवस्था प्राप्त करके, सभी ने रुद्र की अवस्था प्राप्त की। वे एकत्र हुए और रुद्रों में से सर्वश्रेष्ठ सौ के रूप में चमके।

6.63.57

एकसंविद्भिन्नतनु चित्रचेष्टितवेष्टितम्। एकरूपमनेकाभं रूपं तत्पारमेश्वरम् ॥ ५७ ॥

ekasaṁvidbhinnatanu citraceṣṭitaveṣṭitam | ekarūpamanekābhaṃ rūpaṃ tatpārameśvaram || 57 ||

That form, though one in essence, is diverse in manifestation, adorned with varied actions and appearances. It is the supreme form of the Lord, appearing as one yet many.

वह रूप, एक स्वभाव के साथ, विविध अभिव्यक्तियों में भिन्न है, विविध क्रियाओं और रूपों से सजा हुआ है। यह परमेश्वर का सर्वोच्च रूप है, जो एक दिखाई देता है लेकिन अनेक है।

6.63.58

रुद्राणां तच्छतमथ निरावरणचिन्मयम्। सर्वसंसारसंबन्धि स्थितं सर्वजगत्स्थितम् ॥ ५८ ॥

rudrāṇāṃ tacchata matha nirāvaraṇacinmayam | sarvasaṃsārasambandhi sthitaṃ sarvajagatsthitam || 58 ||

The hundredth form of Rudra is pure consciousness, unveiled, related to all worldly existence, and present in the entire universe.

रुद्र का सौवां रूप परम चेतना है, जो अवरणरहित है, सम्पूर्ण संसार से संबंधित है और सम्पूर्ण जगत में विद्यमान है।

6.63.59

शतरुद्रशतानीह सन्ति राम महान्ति हि। एतदेकादशं विद्धि संसारं प्रतिसंस्थितम् ॥ ५९ ॥

śatarudraśatānīha santi rāma mahānti hi | etadekādaśaṃ viddhi saṃsāraṃ pratisaṃsthitam || 59 ||

O Rama, there are indeed great hundreds of Rudras here. Know this to be the eleventh aspect of the worldly existence.

हे राम, यहाँ महान सौ रुद्र हैं। इसे संसार का ग्यारहवां पहलू समझो।

6.63.60

यो योऽभितः स जीवस्य संसारः समुदेति हि। तत्राप्रबुद्धा जीवौघाः पश्यन्ति न परस्परम् ॥ ६० ॥

yo yo'bhitaḥ sa jīvasya saṃsāraḥ samudeti hi | tatrāprabuddhā jīvaughāḥ paśyanti na parasparam || 60 ||

Whatever arises from within, that is the worldly existence of the individual. There, the unawakened beings do not see each other.

जो कुछ भी अंदर से उत्पन्न होता है, वही व्यक्ति का संसार है। वहाँ, अप्रबुद्ध जीव एक-दूसरे को नहीं देखते।

6.63.61

मिलन्ति हि मनोबुद्धास्तरङ्गा इव वारिधौ। अप्रबुद्धास्तु तन्मात्रनिष्ठा लोष्टवदास्थिताः ॥ ६१ ॥

milanti hi manobuddhāstarangā iva vāridhau | aprabuddhāstu tanmātraniṣṭhā loṣṭavadāsthitāḥ || 61 ||

The mindful and wise unite like waves in the ocean. However, the unawakened remain in their limited states, like clods of earth.

बुद्धिमान और समझदार लोग सागर की लहरों की तरह एक हो जाते हैं। हालाँकि, अप्रबुद्ध अपनी सीमित अवस्थाओं में रहते हैं, जैसे मिट्टी के ढेले।

6.63.62

यथा द्रवत्वाद्वीच्यम्बु त्वन्योन्यं संमिलत्यलम्। तथा प्रबुद्धा जीवौघा मिथश्चित्त्वान्मिलन्त्यलम् ॥ ६२ ॥

yathā dravatvādvīcyambu tvanyonyaṃ sammilaty alam | tathā prabuddhā jīvaughā mithaścittvānmilantyalam || 62 ||

Just as water droplets merge with each other due to their fluid nature, so too the awakened beings unite with each other through their consciousness.

जैसे पानी की बूँदें अपनी तरल प्रकृति के कारण एक-दूसरे में मिल जाती हैं, वैसे ही प्रबुद्ध जीव अपनी चेतना के द्वारा एक-दूसरे से जुड़ जाते हैं।

6.63.63

प्रत्येकमुदिते चैते संसारे जीवराशयः। चिद्धातोः सर्वगत्वेन त्वसत्याः सत्यवत्स्थिताः ॥ ६३ ॥

pratyekamudite caite saṃsāre jīvarāśayaḥ | ciddhātoḥ sarvagatvena tvasatyāḥ satyavatsthitāḥ || 63 ||

Every individual in the world is considered to be a collection of living beings. Due to the omnipresence of the conscious element, they are perceived as real though they are unreal.

प्रत्येक व्यक्ति संसार में जीवों का समूह माना जाता है। चेतन तत्व के सर्वव्यापी होने के कारण, वे असत्य होने के बावजूद सत्य के रूप में देखे जाते हैं।

6.63.64

यद्यदाख्यन्यते भूमेस्तत्तन्नाम यथा नभः। सर्वगायाश्चितेर्यद्यदुह्यते तत्तथैव चित् ॥ ६४ ॥

yadyadākhyate bhūmestattannāma yathā nabhaḥ | sarvagāyāściteryadyaduhyate tattathaiva cit || 64 ||

Whatever is named in the earth is like the sky. Whatever is said to be of the omnipresent consciousness, that is indeed consciousness.

जो कुछ भी पृथ्वी पर नाम दिया जाता है, वह आकाश की तरह है। जो कुछ भी सर्वव्यापी चेतना का कहा जाता है, वह वास्तव में चेतना है।

6.63.65

सर्वप्रपञ्चभूतानि यथानुभवसीह हि। तथेह सर्वभूतात्म चित्त्वं सर्वत्र विद्यते ॥ ६५ ॥

sarvaprapañcabhūtāni yathānubhavasīha hi | tatheha sarvabhūtātma cittvaṃ sarvatra vidyate || 65 ||

All the elements of the universe are experienced as they are. Similarly, the consciousness, which is the soul of all beings, is present everywhere.

समस्त ब्रह्मांड के तत्व जैसे हैं, वैसे ही अनुभव किए जाते हैं। इसी तरह, जो सभी जीवों की आत्मा है, वह चेतना सर्वत्र विद्यमान है।

6.63.66

यच्छालभञ्जिका वृक्षे शैले श्वभ्रे गतेऽन्तकम्। प्रेक्ष्यते तद्वदेकात्मा तथा चिति जगत्स्थितम् ॥ ६६ ॥

yacchālabhañjikā vṛkṣe śaile śvabhre gate'ntakam | prekṣyate tadvadekātmā tathā citi jagatsthitam || 66 ||

Just as a shadow is seen on a tree, a mountain, or a cave, so too the single consciousness is seen in the world.

जैसे एक छाया पेड़, पर्वत या गुफा में देखी जाती है, उसी तरह एक चेतना संसार में देखी जाती है।

6.63.67

अवेदने परे शुद्धे वेदनं यज्जगत्स्थितम् । अकारणमचैतन्यं शून्यत्वेन यथा नभः ॥ ६७ ॥

avedane pare śuddhe vedanaṃ yajjagatsthitam | akāraṇamacaitanyaṃ śūnyatvena yathā nabhaḥ || 67 ||

In the pure, ultimate state of non-perception, the perception of the world exists without cause and without consciousness, like the emptiness of the sky.

शुद्ध, परम अवेदन अवस्था में, संसार की वेदना अकारण और अचेतन होती है, जैसे आकाश की शून्यता।

6.63.68

विद्यते वेदनं दृश्यबन्धो मोक्षस्त्ववेदनम् । यदेव रुचिरं ते स्यात्तदेवाशु दृढीकुरु ॥ ६८ ॥

vidyate vedaṇaṃ dṛśyabandho mokṣastvavedanam | yadeva ruciraṃ te syāttadevāśu dṛḍhīkuru || 68 ||

There is perception, the bondage of the visible, and liberation is the absence of perception. Whatever is pleasing to you, make it firm immediately.

विद्यते वेदनं दृश्यबन्धो मोक्षस्त्ववेदनम् | यदेव रुचिरं ते स्यात्तदेवाशु दृढीकुरु ||

6.63.69

सर्गासर्गौ बन्धमोक्षौ वेदनावेदनात्मकौ । अभिन्नौ बोधनाच्चोभौ यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ६९ ॥

sargāsargau bandhamokṣau vedaṇāvedanātmakau | abhinnau bodhanāccobhau yathecchasi tathā kuru || 69 ||

Creation and dissolution, bondage and liberation, are both characterized by perception and the absence of perception. They are not different, realize this and act as you wish.

सर्ग और असर्ग, बन्धन और मुक्ति, दोनों अनुभूति और अनुभूति के अभाव से चिह्नित हैं। वे अलग नहीं हैं, इसे समझो और जैसे तुम चाहो वैसे करो।

6.63.70

असंवित्तेस्तु यन्नास्ति तन्नाशे का कदर्थना । तूष्णींभावेन यत्प्राप्यं प्राप्तमेवाशु विद्धि तत् ॥ ७० ॥

asaṃvittestu yannāsti tannāśe kā kadarthanā | tūṣṇīṃbhāvena yatprāpyaṃ prāptamevāśu viddhi tat || 70 ||

What does not exist in the absence of consciousness, what is the point of its destruction? Know that what is attainable through silence is already attained immediately.

जो चेतना के अभाव में नहीं है, उसके नाश का क्या लाभ? जो मौन से प्राप्त हो सकता है, उसे तुरंत प्राप्त समझो।

6.63.71

यद्वै वेदनमात्रात्म तदंगावेदनक्षयम् । तद्वेदनं वेदनाया यदिष्टं तत्समाचरेत् ॥ ७१ ॥

yadvai vedaṇamātrātma tadaṃgāvedanakṣayam | tadvedanaṃ vedaṇāyā yadiṣṭaṃ tatsamācaret || 71 ||

Whatever is purely perception, that leads to the cessation of the limbs of perception. That perception, if desired, should be followed.

जो केवल अनुभूति है, वह अनुभूति के अंगों के क्षय को ले जाता है। वह अनुभूति, यदि इच्छित है, तो उसे अनुसरण करना चाहिए।

6.63.72

वीचिर्यथाम्भसः स्पन्दो जगच्चैव तथा चितौ । एतावन्मात्र एवात्र भेदो यद्रघुनन्दन ॥ ७२ ॥

vīciryathāmbhasaḥ spando jagaccaitvata tathā citau | etāvanmātra evātra bhedo yadraghunandana || 72 ||

Just as the wave is the motion of water, so is the world the motion in consciousness. This is the only difference here, O Raghunandana.

जैसे लहर पानी की गति है, वैसे ही जगत चेतना में गति है। यही यहाँ अन्तर है, हे रघुनन्दन।

6.63.73

देशकालस्वरूपेषु सत्सु वीच्यादिताम्भसि । जगदादौ तु देशाद्या असन्तो जगतीक्षिताः ॥ ७३ ॥

deśakālasvarūpeṣu satsu vīcyāditāmbhasi | jagadādau tu deśādyā asanto jagatīkṣitāḥ || 73 ||

In the beginning of the universe, space, time, and form did not exist, but they are perceived in the waves of the ocean.

ब्रह्मांड की शुरुआत में, स्थान, समय और रूप मौजूद नहीं थे, लेकिन वे समुद्र की लहरों में दिखाई देते हैं।

6.63.74

आभास्वरं त्रिजगदित्यतिभाति भास्वत्स्वं वेदनं विदनमेव चितेः स्वरूपम् । वाचि स्थितं भवति चैतदुपोह भेदक्लिष्टं प्रशान्तवचनस्तु शिवः परात्मा ॥ ७४ ॥

ābhāsvaraṃ trijagadityatibhāti bhāsvatsvaṃ vedaṇaṃ vidanameva citeḥ svarūpam | vāci sthitaṃ bhavati caitadupoha bhedakliṣṭaṃ praśāntavacanastu śivaḥ parātmā || 74 ||

The three worlds appear as a reflection, shining in their own light, the nature of consciousness itself is knowledge and knowing. This is established in speech, but it becomes distorted by differences. The one who speaks calmly is Shiva, the supreme self.

तीनों लोक एक प्रतिबिंब के रूप में दिखाई देते हैं, अपने प्रकाश में चमकते हैं, चेतना का स्वभाव खुद ज्ञान और जानना है। यह वाणी में स्थापित है, लेकिन अंतर के कारण विकृत हो जाता है। जो शांति से बोलता है, वह शिव, परमात्मा है।

6.63.75

संवेदनं सर्वं इतीह शब्दादर्थादभिन्नौ न कदाचिदेतौ । वीच्यम्भसी द्वे इति नोचितोक्तियस्याज्ञतायां त्विदमेव युक्तम् ॥ ७५ ॥

saṃvedanaṃ sarvaṃ itīha śabdādarthādabhinnau na kadācidetau | vīcyambhasī dve iti nocitoktiyasyājñatāyāṃ tvidameva yuktam || 75 ||

All perception is one here, sound and meaning are inseparable, never are they two. In the waves of the ocean, this duality is not appropriate; in ignorance, this alone is fitting.

यहाँ सभी अनुभूति एक है, शब्द और अर्थ अभिन्न हैं, कभी भी ये दो नहीं होते। समुद्र की लहरों में, यह द्वैत उचित नहीं है; अज्ञान में, यही उचित है।

Chapter 64

6.64.1

श्रीराम उवाच । जीवटब्राह्मणादीनां हंसादीनां मुनीश्वर । भिक्षुस्वप्नशरीराणां संपन्नं किमतः परम् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | jīvaṭabrāhmaṇādīnāṃ haṃsādīnāṃ munīśvara | bhikṣusvapnaśarīrāṇāṃ saṃpannaṃ kimataḥ param || 1 ||

Sri Rama said: O great sage, what is the ultimate state achieved by living beings, Brahmins, swans, mendicants, and dream bodies?

श्री राम ने कहा: हे मुनीश्वर, जीवों, ब्राह्मणों, हंसों, भिक्षुओं और स्वप्न शरीरों का परम पद क्या है?

6.64.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । रुद्रेण सह संभूय प्रबुद्धाः सर्व एव ते । मिथश्च दृष्टसंसारा रुद्रांशाः सुखिनः स्थिताः ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rudreṇa saha saṃbhūya prabuddhāḥ sarva eva te | mithaśca dṛṣṭasaṃsārā rudrāṃśāḥ sukhinaḥ sthitāḥ || 2 ||

Vasishtha said: All of them, having united with Rudra and awakened, saw the world together and remained happy as parts of Rudra.

वसिष्ठ ने कहा: सभी रुद्र के साथ एक होकर और जागृत होकर, संसार को एक साथ देखा और रुद्र के अंश के रूप में सुखी रहे।

6.64.3

तेन रुद्रेण तां मायामवलोक्य यथोदिताम् । स्वांशास्तामेव संसारस्थितिं ते प्रेषिताः पुनः ॥ ३ ॥

tena rudreṇa tāṃ māyāmavalokya yathoditām | svāṃśāstāmeva saṃsārasthitiṃ te preṣitāḥ punaḥ || 3 ||

By Rudra, having seen that illusion as described, their own parts were sent back to that very worldly existence.

रुद्र द्वारा, उस माया को जैसा कहा गया था देखकर, उनके अपने अंश उसी संसारिक अस्तित्व में वापस भेजे गए।

6.64.4

श्रीरुद्र उवाच । गच्छताशु निजं स्थानं तत्र भुक्त्वा कलत्रकैः । कंचित्कालं समं भोगान्मत्सकाशमुपैष्यथ ॥ ४ ॥

śrīrudra uvāca | gacchatāśu nijaṃ sthānaṃ tatra bhuktvā kalatrakaiḥ | kaṃcitkālaṃ samaṃ bhogānmatsakāśamupaiṣyatha || 4 ||

Rudra said: Go quickly to your own place, enjoy there with your wives for some time, and then you will come to my presence after enjoying pleasures.

रुद्र ने कहा: शीघ्र अपने स्थान पर जाओ, वहाँ अपनी पत्नियों के साथ कुछ समय तक भोग करो, और फिर भोगों का आनंद लेने के बाद मेरे पास आओ।

6.64.5

भविष्यथ मदंशा ये गणा मत्पुरभूषणाः । ततो महाप्रलयतो यास्यामस्तत्परं पदम् ॥ ५ ॥

bhaviṣyatha madāṃśā ye gaṇā matpurabhūṣaṇāḥ | tato mahāpralayato yāsyāmastatparaṃ padam || 5 ||

You will become my parts, the ornaments of my city, and then from the great dissolution, we will go to that supreme state.

तुम मेरे अंश बनोगे, मेरे नगर के आभूषण, और फिर महाप्रलय से, हम उस परम पद पर जाएँगे।

6.64.6

श्रीवसिष्ठ उवाच इत्युक्त्वा भगवान् रुद्रस्तेषां सोऽन्तरधीयत अन्त्यसंसारसंख्यानं रुद्राणां मध्यमाययौ ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca ityuktvā bhagavān rudrasteṣāṃ so'ntaradhīyata antyasaṃsārasaṃkhyānaṃ rudrāṇāṃ madhyamāyayau || 6 ||

Vasishtha said: Having said this, Lord Rudra disappeared from their sight. He went to the middle of the Rudras, counting the final cycle of transmigration.

वसिष्ठ ने कहा: यह कहकर, भगवान रुद्र उनकी दृष्टि से अदृश्य हो गए। वे रुद्रों के मध्य में गए, अंतिम संसार की गणना करते हुए।

6.64.7

प्रययुः स्वास्पदं तेऽपि जीवटब्राह्मणादयः स्वकलत्रैः समं देहं क्षपयित्वाथ कालतः ॥ ७ ॥

prayayuḥ svāspadaṃ te'pi jīvaṭabrāhmaṇādayaḥ svakalatraiḥ samaṃ dehaṃ kṣapayitvātha kālataḥ || 7 ||

Those Jivata Brahmins and others also went to their respective abodes, along with their wives, after their bodies were destroyed over time.

वे जीवट ब्राह्मण और अन्य भी अपने-अपने घरों को गए, अपनी पत्नियों के साथ, समय के साथ उनके शरीरों के नष्ट होने के बाद।

6.64.8

रुद्रलोकं समासाद्य भविष्यन्ति गणोत्तमाः कदाचिद्व्योम्नि दृश्यन्ते तारकाकारकारिणः ॥ ८ ॥

rudralokaṃ samāsādya bhaviṣyanti gaṇottamāḥ kadācidvyomni dṛśyante tārakākārakāriṇaḥ || 8 ||

Having reached the abode of Rudra, they will become the best of the Ganas. Sometimes they will be seen in the sky as stars.

रुद्र के लोक को प्राप्त करके, वे गणों में श्रेष्ठ बनेंगे। कभी-कभी वे आकाश में तारों के रूप में दिखाई देंगे।

6.64.9

श्रीराम उवाच भिक्षुसंकल्परूपास्ते जीवटब्राह्मणादयः कथं सत्यत्वमायाताः संकल्पार्थे क्व सत्यता ॥ ९ ॥

śrīrāma uvāca bhikṣusaṃkalparūpāste jīvaṭabrāhmaṇādayaḥ kathaṃ satyatvamāyātāḥ saṃkalpārthe kva satyatā || 9 ||

Sri Rama said: Those Jivata Brahmins and others, who are in the form of mendicant resolutions, how did they attain truth? Where is the truth in the purpose of resolution?

श्री राम ने कहा: वे जीवट ब्राह्मण और अन्य, जो भिक्षु संकल्प के रूप में हैं, उन्होंने सत्य कैसे प्राप्त किया? संकल्प के उद्देश्य में सत्यता कहाँ है?

6.64.10

श्रीवसिष्ठ उवाच संकल्पसत्यता त्वंशे त्यज संकल्पसत्यताम् तत्र यन्नास्ति तन्नास्ति यतः सर्वात्म तत्पदम् ॥ १० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca saṃkalpasatyatā tvaṃśe tyaja saṃkalpasatyatām tatra yannāsti tannāsti yataḥ sarvātma tatpadam || 10 ||

Vasishtha said: The truth of resolution is in a part. Give up the truth of resolution. That which is not there, is not there. That from which everything is, is the supreme state.

वसिष्ठ ने कहा: संकल्प की सत्यता एक अंश में है। संकल्प की सत्यता को त्याग दो। जो नहीं है, वह नहीं है। जिससे सब कुछ है, वह परम पद है।

6.64.11

यत्स्वप्ने दृश्यते यच्च संकल्पैरवलोक्यते । तत्तथा विद्यते तत्र सर्वकालं तदात्मकम् ॥ ११ ॥

yatsvapne dṛśyate yacca saṃkalpairavalokyate | tattathā vidyate tatra sarvakālaṃ tadātmakam || 11 ||

Whatever is seen in dreams and whatever is imagined by thoughts, all that exists there always as part of the self.

जो कुछ भी स्वप्न में दिखाई देता है और जो कुछ भी संकल्पों से देखा जाता है, वह सब वहाँ हमेशा आत्मा के रूप में मौजूद है।

6.64.12

तद्देशकालात्मतया गत्वा देशान्तरं यथा। देशाद्देशान्तरं यद्वन्न गत्यात्मादिकं विना ॥ १२ ॥

taddeśakālātmata yā gatvā deśāntaraṃ yathā | deśāddeśāntaraṃ yadvannagatyātmādikaṃ vinā || 12 ||

Just as one cannot go to another place without the concept of space and time, similarly, one cannot experience dreams without the self.

जैसे कोई स्थान और समय के बिना दूसरी जगह नहीं जा सकता, उसी तरह, आत्मा के बिना स्वप्नों का अनुभव नहीं किया जा सकता।

6.64.13

न लभ्यते तथा स्वप्नो विना तत्र न लभ्यते। सर्वमस्ति चितः कोशे यद्यथालोकयत्यसौ ॥ १३ ॥

na labhyate tathā svapno vinā tatra na labhyate | sarvamasti citaḥ kośe yadyathālokayatyasau || 13 ||

Dreams cannot be experienced without the self, and everything exists within the consciousness. Whatever is perceived is within the self.

स्वप्नों का अनुभव आत्मा के बिना नहीं किया जा सकता, और सब कुछ चेतना के भीतर मौजूद है। जो कुछ भी देखा जाता है, वह आत्मा के भीतर है।

6.64.14

चित्तथा तदवाप्नोति सर्वात्मत्वादविक्षतम्। संकल्पः स्वप्नकस्त्वङ्ग यया च दशयाप्यते ॥ १४ ॥

cittathā tadavāpnoti sarvātmatvādavikṣatam | saṃkalpaḥ svapnakastvaṅga yayā ca daśayāpyate || 14 ||

Thus, consciousness attains that which is indivisible due to its all-pervading nature. Thoughts and dreams are part of the self and are perceived through the senses.

इस प्रकार, चेतना अपने सर्वव्यापी स्वभाव के कारण अविभाज्य प्राप्त करती है। विचार और स्वप्न आत्मा का हिस्सा हैं और इंद्रियों द्वारा देखे जाते हैं।

6.64.15

परमभ्यासयोगाभ्यां विना त्वेतन्न लभ्यते। येषां तु योगविज्ञानदृष्टयः फलिताः स्थिताः ॥ १५ ॥

paramabhyāsayogābhyāṃ vinā tvetannalabhyate | yeṣāṃ tu yogavijñānadṛṣṭayaḥ phalitāḥ sthitāḥ || 15 ||

Without supreme practice and yoga, this cannot be attained. Those whose vision is enlightened by the knowledge of yoga have realized this.

परम अभ्यास और योग के बिना यह प्राप्त नहीं किया जा सकता। जिनकी दृष्टि योग के ज्ञान से प्रकाशित है, उन्होंने इसे साकार किया है।

6.64.16

सर्वं सर्वत्र पश्यन्ति ते यतः शंकरादयः। इदमग्रगतं वस्तु तथा संकल्पितं मया ॥ १६ ॥

sarvaṃ sarvatra paśyanti te yataḥ śaṅkarādayaḥ| idamagragataṃ vastu tathā saṃkalpitaṃ mayā || 16 ||

Those who see everything everywhere, such as Shankara and others, have imagined this thing that has gone before in this way.

जो सब कुछ हर जगह देखते हैं, वे शंकर आदि हैं| यह आगे गया हुआ वस्तु इस प्रकार से मेरे द्वारा संकल्पित है।

6.64.17

नाप्यं यतोभयभ्रशं स प्राप्नोत्युभयाश्रयात्। सर्वं ह्यभिमतं कार्यमेकनिष्ठस्य सिद्ध्यति ॥ १७ ॥

nāpyaṃ yatobhayabhraśaṃ sa prāpnotyubhayāśrayāt| sarvaṃ hyabhimatam kāryamekaniṣṭhasya siddhyati || 17 ||

One does not attain both from the support of both, because one who is devoted to one thing succeeds in all desired actions.

किसी को दोनों के सहारे से दोनों नहीं मिलते, क्योंकि एक के प्रति समर्पित व्यक्ति की सभी इच्छित कार्य सिद्ध होते हैं।

6.64.18

दक्षिणां ककुभं गच्छन्कः प्राप्नोत्युत्तरां दिशम्। संकल्पार्थपरैरेव संकल्पार्थोऽवगम्यते ॥ १८ ॥

dakṣiṇāṃ kakubhaṃ gacchan kaḥ prāpnotyuttarāṃ diśam| saṃkalpārthaparaireva saṃkalpārtho'vagamyate || 18 ||

One who goes to the southern direction attains the northern direction. The purpose of the resolve is understood by those who are focused on the purpose of the resolve.

जो दक्षिण दिशा में जाता है, वह उत्तर दिशा को प्राप्त करता है| संकल्प का अर्थ उन्हीं लोगों द्वारा समझा जाता है जो संकल्प के अर्थ पर केंद्रित हैं।

6.64.19

अग्रस्थार्थपरैरग्रे संस्थितोर्थोऽवगम्यते। अग्रस्थे बुद्धिसंस्थे यः संकल्पं प्राप्तुमिच्छति ॥ १९ ॥

agrastārthaparairagre saṃsthitortho'vagamyate| agrasthabuddhisansthe yaḥ saṃkalpaṃ prāptumicchati || 19 ||

The meaning that is established in the beginning is understood by those who are focused on the meaning that is in the beginning. One who wishes to attain the resolve should have the intellect established in the beginning.

जो अर्थ शुरुआत में स्थापित है, वह उन्हीं लोगों द्वारा समझा जाता है जो शुरुआत में स्थित अर्थ पर केंद्रित हैं| जो संकल्प प्राप्त करना चाहता है, उसकी बुद्धि शुरुआत में स्थापित होनी चाहिए।

6.64.20

तदासावेकनिष्ठत्वाभावात्तन्नाशयेद्द्वयम्। तस्मादेकार्थनिष्ठत्वाद्भिक्षुजीवेन रुद्रताम् ॥ २० ॥

tadāsāvekanisthtavābhāvāttannāśayeddvayam| tasmādekārthanisthtavādbhikṣujīvena rudratām || 20 ||

Then, due to the lack of single-minded devotion, he destroys both. Therefore, by the devotion to a single purpose, one attains the state of Rudra even by living as a mendicant.

तब, एकाग्रता के अभाव के कारण, वह दोनों को नष्ट कर देता है| इसलिए, एक उद्देश्य के प्रति समर्पण के कारण, भिक्षु की तरह रहते हुए भी वह रुद्र की स्थिति को प्राप्त करता है।

6.64.21

प्राप्य सर्वात्मना लब्धं तथा सर्वं तथास्थितेः। भिक्षुसंकल्पजीवास्ते प्रत्येकं तज्जगत्पृथक् ॥ २१ ॥

prāpya sarvātmanā labdhaṃ tathā sarvaṃ tathāsthitēḥ | bhikṣusaṃkalpajīvāste pratyēkaṃ tajjagatpṛthak || 21 ||

Having obtained everything with the whole self, thus everything is established | The beings with the resolve of a mendicant are each separate in that world

सब कुछ पूरे आत्मा से प्राप्त करके, इस प्रकार सब कुछ स्थित है | भिक्षु के संकल्प वाले जीव प्रत्येक अलग-अलग उस जगत में हैं

6.64.22

पश्यन्ति चैते नान्योन्यं रुद्रज्ञानादृते ततः । अप्रबुद्धाः प्रजायन्ते जीवा जीवान्तबोधिनः ॥ २२ ॥

paśyanti caite nānyonyaṃ rudrajñānādṛtē tataḥ | aprabuddhāḥ prajāyantē jīvā jīvāntabōdhināḥ || 22 ||

These beings do not see each other without the knowledge of Rudra | The unawakened beings are born, those who realize the end of beings

ये जीव रुद्र ज्ञान के बिना एक-दूसरे को नहीं देखते | अप्रबुद्ध जीव जन्म लेते हैं, जो जीवों के अंत को जानते हैं

6.64.23

तदिच्छयाशु तद्रूपा बहुरूपाश्च ते इह । इह विद्याधरोऽहं स्यामहं स्यामिह पण्डितः ॥ २३ ॥

tadicchayāśu tadrūpā bahurūpāśca tē iha | iha vidyādharō'haṃ syāmahaṃ syāmiha paṇḍitaḥ || 23 ||

By that desire, they quickly become of that form and have many forms here | Here I am a Vidyadhara, here I am a scholar

उस इच्छा से, वे तुरंत उस रूप के हो जाते हैं और यहाँ बहुत से रूप धारण करते हैं | यहाँ मैं एक विद्याधर हूँ, यहाँ मैं एक पंडित हूँ

6.64.24

इत्येकध्यानसाफल्यं दृष्टान्तोऽस्यां क्रियास्थितौ । एकत्वं च बहुत्वं च मौर्ख्यं पाण्डित्यमेव वा ॥ २४ ॥

ityēkadhyānasāphalyaṃ dṛṣṭāntō'syāṃ kriyāsthitau | ēkatvaṃ ca bahutvaṃ ca maurkhyaṃ pāṇḍityamēva vā || 24 ||

Thus, the success of single-minded meditation is an example in this action | Unity and diversity, foolishness and wisdom

इस प्रकार, एकाग्र ध्यान की सफलता इस क्रिया में एक उदाहरण है | एकत्व और बहुत्व, मूर्खता और बुद्धिमत्ता

6.64.25

देवत्वं मानुषत्वं च देशकालक्रियाक्रमैः । तुल्यकालमलं कर्तुं धारणाध्यानयत्नतः ॥ २५ ॥

dēvatvaṃ mānuṣatvaṃ ca dēśakālakriyākramaiḥ | tulyakālamalaṃ kartuṃ dhāraṇādhyānayatnataḥ || 25 ||

Divinity and humanity, by the sequence of place, time, and action | It is possible to do simultaneously through the effort of concentration and meditation

देवत्व और मानवता, स्थान, समय और क्रिया के क्रम से | धारणा और ध्यान के प्रयास से समान समय में करना संभव है

6.64.26

सर्वशक्त्यः स्वरूपत्वाज्जीवस्यास्त्येकशक्तिता । अनन्तश्चान्तपृक्तश्च स्वभावोऽस्य स्वभावतः ॥ २६ ॥

sarvaśaktyaḥ svarūpatvājjīvasyāstyekaśaktitā | anantaścāntapṛktaśca svabhāvo'sya svabhāvataḥ || 26 ||

All powers are inherent in the nature of the individual soul, which has a single power. Its nature is infinite and limited by its own nature.

सभी शक्तियाँ जीव के स्वरूप में हैं, जिसकी एक शक्ति है। इसका स्वभाव अनन्त और अपने स्वभाव से सीमित है।

6.64.27

सविकासः ससंकोचोऽहिंस्रस्तेन चिदात्मनः । यदिच्छति तदस्याङ्ग जन्तुः संपद्यते स्वयम् ॥ २७ ॥

savikāsaḥ sasaṅkoço'hiṃsras tena cidātmanaḥ | yadicchati tadasyāṅga jantuḥ saṃpadyate svayam || 27 ||

Expansion and contraction are inherent in the conscious self. Whatever it desires, that becomes a part of its being.

विकास और संकोच चेतना आत्मा में निहित है। जो भी यह चाहता है, वह इसके अस्तित्व का हिस्सा बन जाता है।

6.64.28

स्वयं संपादितैरेभिर्देशकालक्रियाक्रमैः । योगिन्यो योगिनश्चेह तिष्ठन्त्यन्यत्र यत्र च ॥ २८ ॥

svayaṃ saṃpāditair ebhiḥ deśakālakriyākramaiḥ | yoginyo yoginaśceha tiṣṭhantyanyatra yatra ca || 28 ||

By themselves, they accomplish these actions in various places and times. Here and elsewhere, the yoginis and yogis abide.

स्वयं ही, वे विभिन्न स्थानों और समयों में ये क्रियाएँ संपन्न करते हैं। यहाँ और कहीं और, योगिनियाँ और योगी रहते हैं।

6.64.29

इह वामुत्र भोगेन दृष्टमेतदनेकशः । कार्तवीर्यो गृहे तिष्ठन्सर्वेषां भयदोऽभवत् ॥ २९ ॥

iha vāmutra bhogena dṛṣṭametadanekaśaḥ | kārtavīryo gṛhe tiṣṭhan sarveṣāṃ bhayado'bhavat || 29 ||

Here and there, it is seen in various enjoyments. Kartavirya, while staying at home, became a cause of fear for all.

यहाँ और वहाँ, यह विभिन्न भोगों में देखा जाता है। कार्तवीर्य, घर में रहते हुए, सभी के लिए भय का कारण बन गया।

6.64.30

विष्णुः क्षीरोदधौ तिष्ठन्जायते पुरुषो भुवि । पश्वर्थं यान्ति तिष्ठन्त्यो योगिन्यो योगिनीगणे ॥ ३० ॥

viṣṇuḥ kṣīrodadhau tiṣṭhan jāyate puruṣo bhuvi | paśvarthaṃ yānti tiṣṭhantyo yoginyo yoginīgaṇe || 30 ||

Vishnu, residing in the ocean of milk, is born as a man on earth. For the sake of animals, the yoginis go and stay in the group of yoginis.

विष्णु, दूध के समुद्र में रहते हुए, पृथ्वी पर मनुष्य के रूप में जन्म लेते हैं। पशुओं के लिए, योगिनियाँ योगिनी समूह में जाती हैं और रहती हैं।

6.64.31

शक्रः स्वर्गासने तिष्ठन्याति यज्ञार्थमुर्विकाम् । सहस्रमेकं भवति तथा चास्मिञ्जनार्दनः ॥ ३१ ॥

śakraḥ svargāsane tiṣṭhanyāti yajñārthamurvikām | sahasramekaṃ bhavati tathā cāsmiñjanārdanaḥ || 31 ||

Indra, seated on the heavenly throne, goes to Earth for the sake of sacrifice. He becomes one among a thousand, and thus Janardana is also present.

इंद्र, स्वर्ग के सिंहासन पर बैठे हुए, यज्ञ के लिए पृथ्वी पर आते हैं। वे एक हजार में से एक हो जाते हैं, और इस प्रकार जनार्दन भी वहाँ होते हैं।

6.64.32

नृणां शतानि भक्तानां मानुष्यं याति तन्नतैः । एकः सहस्रं भवति तथा चैष जनार्दनः ॥ ३२ ॥

nṛṇāṃ śatāni bhaktānāṃ mānuṣyaṃ yāti tannataiḥ | ekaḥ sahasraṃ bhavati tathā caiṣa janārdanaḥ || 32 ||

Hundreds of devoted humans attain humanity through their devotion. One becomes a thousand, and thus Janardana is also present.

सैकड़ों भक्त मनुष्य अपनी भक्ति के द्वारा मनुष्यता प्राप्त करते हैं। एक हजार हो जाता है, और इस प्रकार जनार्दन भी वहाँ होते हैं।

6.64.33

अंशावतारलीलाभिः कुरुते जागतीं स्थितिम् । एकः कान्तासहस्राणि तुल्यकालं निमेषवत् ॥ ३३ ॥

aṃśāvatāralīlābhiḥ kurute jāgatīṃ sthitim | ekaḥ kāntāsahasrāṇi tulyakālaṃ nimeṣavat || 33 ||

Through his partial incarnations and divine play, he maintains the stability of the world. One beloved is equivalent to a thousand, just like the blink of an eye.

अपने अंशावतार और दिव्य लीलाओं के द्वारा, वे दुनिया की स्थिरता बनाए रखते हैं। एक प्रिय हजार के बराबर होती है, जैसे पलक झपकने जैसा।

6.64.34

एवं ते भिक्षुसंकल्पा जीवटब्राह्मणादयः । रुद्रविज्ञानवशतः स्वसंकल्पपुरीं गताः ॥ ३४ ॥

evaṃ te bhikṣusaṃkalpā jīvaṭabrāhmaṇādayaḥ | rudravijñānavashataḥ svasaṃkalpapurīṃ gatāḥ || 34 ||

Thus, those with the resolve of a mendicant, such as Jivata and Brahmanas, by the power of Rudra's knowledge, have reached their own resolved city.

इस प्रकार, जीवट और ब्राह्मणों जैसे भिक्षु संकल्प वाले, रुद्र के ज्ञान की शक्ति से, अपने संकल्प की नगरी तक पहुंच गए हैं।

6.64.35

तत्र भुक्त्वा चिरं भोगान्प्राप्य रुद्रपुरं ततः । गणतामावसन्तस्ते स्थास्यन्ति सपरिच्छदाः ॥ ३५ ॥

tatra bhuktvā ciraṃ bhogānprāpya rudrapuraṃ tataḥ | gaṇatāmāvasantaste sthāsyanti saparicchadāḥ || 35 ||

There, after enjoying various pleasures for a long time and attaining Rudra's abode, they will reside as Ganas with all their possessions.

वहाँ, लंबे समय तक विभिन्न भोगों का आनंद लेने के बाद और रुद्र के धाम को प्राप्त करने के बाद, वे अपने सभी सामान के साथ गण के रूप में रहेंगे।

6.64.36

नित्यं प्रफुल्लनवकल्पलतालयेषु रुद्रेण साकमुरुरत्नगुलुच्छकेषु । नानाजगत्सु च तदा शिवपत्तनेषु विद्याधरीष्वमरमौलिधराश्च रेजुः ॥ ३६ ॥

nityaṃ praphullanavakalpalatālayeṣu rudreṇa sākamururatnagulucchakeṣu | nānājagatsu ca tadā śivapattaneṣu vidyādharīṣvamarmaulidharāśca rejuḥ || 36 ||

Always, in the abodes of ever-blooming new wish-fulfilling creepers, along with Rudra, in the great jeweled arbors, in various worlds, at that time, in the abodes of Shiva, the Vidyadharis and the gods bearing celestial crowns shone.

हमेशा, नवीन कल्पवृक्षों के आश्रयस्थानों में, रुद्र के साथ, महान रत्नों से युक्त वृक्षों में, विभिन्न जगतों में, उस समय, शिव के आश्रयस्थानों में, विद्याधरियाँ और देवताओं ने दिव्य मुकुट धारण किए हुए चमके।

Chapter 65

6.65.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ईषद्दृष्टो यथा तेन भिक्षुणा चेतसि भ्रमः । भूतं प्रयत्नमेवैष पृथक्कृत्वा सुपश्यति ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | īṣaddṛṣṭo yathā tena bhikṣuṇā cetasi bhramaḥ | bhūtaṃ prayatnameva eṣa pṛthakkṛtvā supaśyati || 1 ||

Śrīvasiṣṭha said: Just as the monk slightly perceived the illusion in his mind, he saw the effort as separate from the past.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: जैसे ही भिक्षु ने थोड़ा-सा मन में भ्रम देखा, उसने प्रयत्न को अलग करके देखा।

6.65.2

सर्वस्याभासजीवस्य मृतिजन्ममयी स्थितिः । भवत्येव चिदाकाशरूपिण्येवाकृतिं गता ॥ २ ॥

sarvasya abhāsajīvasya mṛtijanmamayī sthitiḥ | bhavatyeva cidākāśarūpiṇyeva akṛtiṃ gatā || 2 ||

The existence of all beings, who are mere appearances, is characterized by birth and death. It is indeed the form of consciousness-space, devoid of any form.

सभी प्राणियों की स्थिति, जो केवल आभास हैं, जन्म और मृत्यु से युक्त है। यह चेतना-आकाश का रूप है, जिसमें कोई आकार नहीं है।

6.65.3

पृथक्कृत्यैक्यमभ्येति स्वात्मा संसारखण्डकम् । सर्व एव मृतो जन्तुः पृथक्स्वप्ननिभात्मकम् ॥ ३ ॥

pṛthakkṛtyaikyamabhyeti svātmā saṃsārakhaṇḍakam | sarva eva mṛto jantuḥ pṛthaksvapnanibhātmakam || 3 ||

By separating, the self attains unity with the fragment of the world. Every living being is indeed dead, separate, and dream-like in nature.

अलग करके, स्वयं संसार के खंड से एकता प्राप्त करता है। हर जीव वास्तव में मृत, अलग, और स्वप्न-जैसा होता है।

6.65.4

एवंततस्वरूपोऽपि देही चामोक्षमाकुलः । जीवयूथं मया तुभ्यं कथितं कथयाऽनया ॥ ४ ॥

evam tatasvarūpo'pi dehī cāmokṣamākulaḥ | jīvayūthaṃ mayā tubhyaṃ kathitaṃ kathayā'nayā || 4 ||

Thus, even though the embodied self is disturbed by the desire for liberation, I have explained the group of living beings to you through this narrative.

इस प्रकार, यद्यपि शरीरधारी स्वयं मोक्ष की इच्छा से व्याकुल है, मैंने इस कथा के माध्यम से आपको जीवों के समूह का वर्णन किया है।

6.65.5

परात्प्रस्पन्दितात्मेति न भिक्षू राम केवलम् । मोहान्मोहान्तरं याति जीवोऽहरहरेव नः ॥ ५ ॥

parātpraspanditātmēti na bhikṣū rāma kēvalam | mohānmohāntaraṃ yāti jīvō'haraharēva naḥ || 5 ||

O Rāma, not only the monk, but every living being, from one delusion to another, goes through the cycle of birth and death every day.

हे राम, केवल भिक्षु ही नहीं, बल्कि हर जीव एक भ्रम से दूसरे भ्रम में जाता है और हर दिन जन्म और मृत्यु के चक्र से गुजरता है।

6.65.6

पर्वताग्रपरिभ्रष्टो ह्यधोध उपलो यथा । परमात्मपरिभ्रष्टो जीवः स्वप्नमिमं दृढम् ॥ ६ ॥

parvatāgraparibhraṣṭo hyadhodha upalo yathā | paramātmaparibhraṣṭo jīvaḥ svapnamimaṃ dṛḍham || 6 ||

Just as a stone falls from the top of a mountain, a soul separated from the Supreme Self experiences this world as a solid dream.

जैसे पर्वत की चोटी से पत्थर गिरता है, वैसे ही परमात्मा से अलग हुआ जीव इस संसार को एक ठोस स्वप्न के रूप में अनुभव करता है।

6.65.7

पश्यत्यस्मादपि स्वप्नाद्याति स्वप्नान्तरं पुनः । स्वप्नात्स्वप्ने विनिपतन्मृषैवेदं दृढं किल ॥ ७ ॥

paśyatyasmādapi svapnādyāti svapnāntaraṃ punaḥ | svapnātsvapne vinipatanmṛṣaivedaṃ dṛḍhaṃ kila || 7 ||

From this dream, the soul sees and moves to another dream, falling from one dream to another. All this is indeed an illusion.

इस स्वप्न से, जीव दूसरे स्वप्न को देखता है और चला जाता है, एक स्वप्न से दूसरे स्वप्न में गिरता है। यह सब कुछ एक भ्रम है।

6.65.8

परिपश्यति जीवोऽन्तर्मायया जर्जरीकृतः । क्वचित्केनचिदेवेह कदाचिदपि वा स्वयम् ॥ ८ ॥

paripaśyati jīvo'ntarmāyayā jarjarīkṛtaḥ | kvacitkenacideveha kadācidapi vā svayam || 8 ||

The soul, made weak by illusion, sees within itself. Sometimes, somewhere, by someone, or even by itself.

माया से कमजोर बना जीव, अपने आप में देखता है। कभी-कभी, कहीं-कहीं, किसी के द्वारा, या फिर स्वयं ही।

6.65.9

देहनाम्नोऽहमित्यन्तो मुच्यते स्वं प्रपद्यते । श्रीराम उवाच । अहो नु विषमो मोहो जीवस्यास्योपजायते ॥ ९ ॥

dehanāmno'hamityanto mucyate svaṃ prapadyate | śrīrāma uvāca | aho nu viṣamo moho jīvasyāsyopajāyate || 9 ||

The one who thinks 'I am the body' is liberated by surrendering to the Self. Shri Rama said: Oh, what a strange delusion arises in this soul.

जो सोचता है 'मैं शरीर हूँ', वह आत्मसमर्पण करके मुक्त होता है। श्री राम ने कहा: ओह, कितना अजीब भ्रम इस जीव में उत्पन्न होता है।

6.65.10

यथा सुप्तस्य स्तोकेन नानाकारविकारया । मिथ्याज्ञानोग्रयामिन्या मायया निपतत्यलम् ॥ १० ॥

yathā suptasya stokena nānākāravikārayā | mithyājñānograyāminyā māyayā nipatatyalam || 10 ||

Just as a sleeping person falls into various illusory states due to the powerful influence of ignorance, so does the soul fall into illusion.

जैसे सोते हुए व्यक्ति को अज्ञान के प्रभाव से विभिन्न भ्रामक अवस्थाओं में गिरना पड़ता है, वैसे ही जीव भ्रम में गिरता है।

6.65.11

अहो नु खलु वैषम्यं भीमं निजवदुच्यते । भगवन्सर्वदा सर्वं सर्वदैव जगत्स्थितौ ॥ ११ ॥

aho nu khalu vaiṣamyam bhīmaṃ nijavaducyate | bhagavansarvadā sarvaṃ sarvadaiva jagatsthitau || 11 ||

Oh, how terrible is the inequality! It is said to be one's own nature | The Lord is always present everywhere in the world

ओह, कितनी भयंकर है यह असमानता! यह अपने स्वभाव के रूप में कहा जाता है | भगवान हमेशा सब कुछ और सब कुछ में स्थित हैं

6.65.12

त्वया संभवतीत्युक्तं यथा तच्चानुभूयते । एवंगुणविशिष्टात्मा तन्मोहात्मा स भिक्षुकः ॥ १२ ॥

tvayā saṃbhavatītyuktaṃ yathā taccanubhūyate | evaṃguṇaviśiṣṭātmā tanmohātmā sa bhikṣukaḥ || 12 ||

It is said to happen by you, as it is experienced | Thus, the one with such qualities is that deluded beggar

यह आपके द्वारा होता है, जैसे यह अनुभव किया जाता है | इस प्रकार, ऐसे गुणों वाला वह भ्रमित भिक्षु है

6.65.13

क्वचिदस्ति न वास्त्यन्तरालोक्य कथयाशु मे । श्रीवसिष्ठ उवाच । अद्य रात्रौ समाधिस्थस्त्रिलोकीमठिकामिमाम् ॥ १३ ॥

kvacidasti na vāstyantarālokya kathayāśu me | śrīvasiṣṭha uvāca | adya rātrau samādhisthastrilokīmaṭhikāmimām || 13 ||

Tell me quickly, is there or is there not anything in between? | Shri Vasishtha said, Today at night in the state of samadhi, I will see this three-world pot

मुझे जल्दी बताओ, क्या बीच में कुछ है या नहीं? | श्री वसिष्ठ ने कहा, आज रात में समाधि अवस्था में, मैं इस तीन-लोक पात्र को देखूंगा

6.65.14

भिक्षुरेकोऽस्तिनास्तीति प्रेक्ष्य प्रातर्वदाम्यहम् । वाल्मीकिरुवाच । मुनौ चैवं कथयति बहिर्मध्याह्नडिण्डिमः ॥ १४ ॥

bhikṣureko'stināstīti prekṣya prātarvadāmyaham | vālmīkiruvāca | munau caivaṃ kathayati bahirmadhyāhnaḍiṇḍimaḥ || 14 ||

I will see in the morning whether there is a beggar or not | Valmiki said, While the sage is speaking thus, there is a loud thunder outside

मैं सुबह देखूंगा कि क्या एक भिक्षु है या नहीं | वाल्मीकि ने कहा, जब ऋषि ऐसा कह रहा है, तब बाहर जोरदार गर्जना है

6.65.15

उदभूत्प्रलयक्षुब्धघनगर्जितमांसलः । तत्यजुः पादयोस्तस्य पुष्पाञ्जलिपरम्पराः ॥ १५ ॥

udabhūtpralayakṣubdhaghanagarjitamāṃsalaḥ | tatyajuḥ pādayostasya puṣpāñjaliparamparāḥ || 15 ||

With the loud thunder of the impending dissolution, they offered flower garlands at his feet

आगामी प्रलय की जोरदार गर्जना के साथ, उन्होंने उसके पैरों पर फूलों की माला चढ़ाई

6.65.16

मृषाः पौरा विटपिनः पुष्पं वातधुता इव । पूजयित्वा मुनिश्रेष्ठानुदतिष्ठन्स्वविष्टरात् ॥ १६ ॥

mṛṣāḥ paurā viṭapinaḥ puṣpaṃ vātadhutā iva | pūjayitvā muniśreṣṭhānudatiṣṭhansvaviṣṭarāt || 16 ||

The deceitful citizens, like flowers scattered by the wind, worshipped the best of sages and then rose from their seats.

झूठे नागरिक, हवा से बिखरे फूलों की तरह, श्रेष्ठ मुनियों की पूजा करके अपने आसन से उठे।

6.65.17

सभा तदनु सोत्तस्थौ सप्रणामपरम्परा । क्रमेण ह्यस्तनेनैव जग्मुः खेचरभूचराः ॥ १७ ॥

sabhā tadanu sottasthau sapraṇāmaparamparā | krameṇa hyastanenaiva jagmuḥ khecarabhūcarāḥ || 17 ||

Then the assembly rose with respectful salutations. Gradually, the celestial and terrestrial beings departed in order.

फिर सभा सम्मानपूर्वक प्रणाम करके उठी। धीरे-धीरे, आकाशीय और भूमि पर रहने वाले प्राणी क्रमशः चले गए।

6.65.18

स्वास्पदेषु यथाशास्त्रमहर्व्यापारमादृताः । सर्वे संपादयामासुर्निजधर्मं क्रमोचितम् ॥ १८ ॥

svāspadeṣu yathāśāstramaharvyāpāramādṛtāḥ | sarve saṃpādayāmāsurnijadharmaṃ kramocitam || 18 ||

All, respecting the daily duties as per the scriptures, fulfilled their respective duties in an orderly manner.

सभी, शास्त्रों के अनुसार दैनिक कर्तव्यों का सम्मान करते हुए, क्रमबद्ध ढंग से अपने-अपने धर्म को पूरा किया।

6.65.19

चिन्तयन्तो मुनिप्रोक्तं महीचरनभश्चराः । ज्ञानं क्षपां क्षणमिव निन्युः कल्पमिवापि च ॥ १९ ॥

cintayanto muniproktaṃ mahīcaranabhaścarāḥ | jñānaṃ kṣapāṃ kṣaṇamiva ninyuḥ kalpamivāpi ca || 19 ||

Contemplating the knowledge imparted by the sages, the earthly and celestial beings felt as if a moment had passed like an eon.

मुनियों द्वारा दिए गए ज्ञान पर विचार करते हुए, भूमि और आकाश पर रहने वाले प्राणी महसूस करते हैं कि एक क्षण कल्प की तरह बीत गया है।

6.65.20

प्रातः पुनः प्रसृतकार्यपरम्परेऽस्मिञ्जाते जने खचरभूचरभूतसङ्घः । आख्यानलोकरचनेन तथैव तस्थावन्योन्यसंवदनपूजितपूज्यलोकः ॥ २० ॥

prātaḥ punaḥ prasṛtakāryaparampare'smiñjāte jane khacarabhūcarabhūtasaṅghaḥ | ākhyānalokaracanena tathaiva tasthāvanyonyasaṃvadanapūjitapūjyalokaḥ || 20 ||

In the morning, when the sequence of duties began again among the people, the assembly of celestial and terrestrial beings remained engaged in storytelling and mutual respect, honoring each other.

प्रातःकाल, जब लोगों में कर्तव्यों की शृंखला फिर से शुरू हुई, आकाशीय और भूमि पर रहने वाले प्राणियों की सभा कहानियों के माध्यम से परस्पर सम्मान करते हुए व्यस्त रही, एक-दूसरे का सम्मान करते हुए।

Chapter 66

6.66.1

वाल्मीकिरुवाच । वसिष्ठमुनिसंयुक्ता विश्वामित्रादिसंयुताः । स्थिताः खेचरसिद्धौघा विश्रान्ता नृपनायकाः ॥ १ ॥

vālmīkiruvāca | vasiṣṭhamunisaṃyuktā viśvāmitrādisaṃyutāḥ | sthitāḥ khecarasiddhaughā viśrāntā nṛpanāyakāḥ || 1 ||

Vālmīki said: The kings, united with Sage Vasistha and others like Visvamitra, were stationed in the sky, relaxed and accomplished.

वाल्मीकि ने कहा: वसिष्ठ मुनि और विश्वामित्र जैसे ऋषियों के साथ मिलकर राजाओं ने आकाश में स्थित होकर विश्राम किया था।

6.66.2

सरामलक्ष्मणा सैव तथैवाथ सभा बभौ । सौम्या समसमाभोगा शान्तवातेव पद्मिनी ॥ २ ॥

sarāmalakṣmaṇā saiva tathaivātha sabhā babhau | saumyā samasamābhogā śāntavāteva padminī || 2 ||

Along with Rama and Lakshmana, the assembly appeared serene and balanced, like a lotus pond with calm winds.

राम और लक्ष्मण के साथ सभा शान्त और संतुलित दिखाई दी, जैसे शान्त हवा वाला कमल तालाब।

6.66.3

अनवेक्ष्य वचः प्रश्नमुवाचाथ मुनीश्वरः । बोधयन्ति बलादेव सानुकम्पा हि साधवः ॥ ३ ॥

anavekṣya vacaḥ praśnamuvācātha munīśvaraḥ | bodhayanti balādeva sānukampā hi sādhavaḥ || 3 ||

Without considering the question, the sage then spoke: The virtuous ones, with compassion, indeed awaken even by force.

प्रश्न को ध्यान में न लाकर, मुनि ने कहा: दयालु साधु लोग करुणा से बलपूर्वक भी जगाते हैं।

6.66.4

श्रीवसिष्ठ उवाचराजन् रघुकुलाकाशशाङ्क रघुनन्दनह्यो मया ज्ञाननेत्रेण स भिक्षुः प्रेक्षितश्चिरम् ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvācarājan raghukulākāśaśaśāṅka raghunandanahyo mayā jñānanetreṇa sa bhikṣuḥ prekṣitaściram || 4 ||

Sri Vasistha said: O King, the moon of the Raghu dynasty, the delight of the Raghus, that mendicant was seen by me with the eye of knowledge for a long time.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे राजन्, रघु वंश का चंद्रमा, रघु का आनंद, वह भिक्षु मेरे ज्ञान नेत्र से देखा गया लंबे समय तक।

6.66.5

ध्यानेनाहं चिरं भ्रान्तस्तादृग्भिक्षुदिदृक्षया । द्वीपानि सप्त विपुलां कुलशैलसपर्वताम् ॥ ५ ॥

dhyānenaahaṃ ciraṃ bhrāntastādṛgbhikṣudidṛkṣayā | dvīpāni sapta vipulāṃ kulaśailasaparvatām || 5 ||

I have wandered for a long time in meditation, seeking to see such a beggar, crossing the seven vast islands and the mountain ranges.

मैं ध्यान में लंबे समय तक भटका हूँ, ऐसे भिक्षु को देखने की इच्छा से, सात विशाल द्वीपों और पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते हुए।

6.66.6

यावत्कुतश्चिदप्येवं भिक्षुर्लब्धो न तादृशः । कथं किल मनोराज्यं बहिरप्युपलभ्यते ॥ ६ ॥

yāvatkutaścidapyevaṃ bhikṣurlabdho na tādṛśaḥ | kathaṃ kila manorājyaṃ bahirapyupalabhyate || 6 ||

Even though a monk may have attained some level of realization, he is not truly enlightened. How can the kingdom of the mind be perceived externally?

भले ही कोई भिक्षु किसी तरह से कुछ प्राप्त कर ले, फिर भी वह ऐसा नहीं है | कैसे मन का राज्य बाहर भी पाया जाता है?

6.66.7

ततस्त्रिभागशेषायां रात्र्यां पुनरहं धिया । उत्तराशान्तरं यातो वेलावात इवार्णवम् ॥ ७ ॥

tatastribhāgaśeṣāyāṃ rātryāṃ punarahaṃ dhiyā | uttarāśāntaraṃ yāto velāvāta ivārṇavam || 7 ||

Then, in the last third of the night, I again went with my mind to the northern region, like the ocean moving with the tide.

तब, रात के अंतिम तिहाई में, मैंने फिर से अपने मन से उत्तर दिशा की ओर जाना शुरू किया, जैसे समुद्र ज्वार के साथ चलता है |

6.66.8

जिननामैष तत्रास्ति श्रीमान् जनपदो महान् । वल्मीकोपरि तत्रास्ति विहारो जनसंश्रयः ॥ ८ ॥

jinanāmaiṣa tatrāsti śrīmān janapado mahān | valmīkopari tatrāsti vihāro janasaṃśrayaḥ || 8 ||

There is a great and prosperous region named Jina. On an anthill there, there is a monastery which is a refuge for people.

वहाँ जिन नाम का एक महान और समृद्ध जनपद है | वहाँ एक वाल्मीक (anthill) पर एक विहार (monastery) है जो लोगों का आश्रय है |

6.66.9

तस्मिन्विहारे स्वकुटीकोशे कपिलमूर्धजः । भिक्षुर्दीर्घदृशो नाम स्थित एव समाधये ॥ ९ ॥

tasminvihāre svakuṭīkośe kapilamūrdhajaḥ | bhikṣurdīrghadṛśo nāma sthita eva samādhaye || 9 ||

In that monastery, in his own small hut, there was a monk named Dīrghadṛśa with reddish-brown hair, who was steadfast in meditation.

उस विहार में, अपने छोटे कुटीर में, एक भिक्षु था जिसका नाम दीर्घदृश था और जिसके बाल भूरे रंग के थे, जो ध्यान में स्थिर था |

6.66.10

एकविंशतिरात्रं च तस्यैवं स्थितिशालिनः । दृढार्गलं गृहं ध्यानभङ्गभीता विशन्ति नो ॥ १० ॥

ekaviṃśatirātraṃ ca tasyevaṃ sthitiśālinaḥ | dṛḍhārgalam gṛhaṃ dhyānabhaṅgabhītā viśanti no || 10 ||

For twenty-one nights, he remained steadfast in this state, and those who were afraid of disturbing his meditation did not enter the firmly locked house.

इक्कीस रातों तक, वह इस अवस्था में स्थिर रहा, और जो लोग उसके ध्यान में विघ्न डालने से डरते थे, वे किलेबंद घर में नहीं गए |

6.66.11

भृत्याः प्रियाः किल तथा संतिष्ठति स भिक्षुकः । अद्यैव तस्य संवेत्तुं नियतेरीदृशी स्थितिः ॥ ११ ॥

bhṛtyāḥ priyāḥ kila tathā saṃtiṣṭhati sa bhikṣukaḥ | adyaiva tasya saṃvettuṃ niyaterīdṛśī sthitiḥ || 11 ||

The servants are dear, indeed, thus the monk remains | Today itself, his fixed state is to be understood || 11 ||

सेवक प्रिय हैं, निश्चित रूप से, इसलिए वह भिक्षु रहता है | आज ही उसकी निश्चित स्थिति को समझना है || ११ ||

6.66.12

रात्रयो ध्याननिष्ठस्य गतास्तस्यैकविंशतिः । स तु वर्षसहस्त्रानी तथा चित्तेन भूतवान् ॥ १२ ॥

rātrayo dhyānaniṣṭhasya gatāstasyaiakaviṃśatiḥ | sa tu varṣasahastrānī tathā cittena bhūtavān || 12 ||

Twenty-one nights have passed for him who is devoted to meditation | He has become thus with his mind for a thousand years || 12 ||

उसके लिए ध्यान में लगे हुए एकविंशति रात्रियाँ बीत गईं | वह अपने मन से हजार वर्षों के लिए ऐसा हो गया || १२ ||

6.66.13

कस्मिंश्चित्प्राक्तने कल्पे भिक्षुरेव पुराऽभवत् । अद्य त्विह द्वितीयोऽस्मिंस्तृतीयो नोपलभ्यते ॥ १३ ॥

kasmiṃścitprāktane kalpe bhikṣureva purā'bhavat | adya tviha dvitīyo'smiṃstṛtīyo nopalabhyate || 13 ||

In some past eon, he was indeed a monk | Today, here in this second one, the third is not found || 13 ||

किसी प्राचीन कल्प में, वह निश्चित रूप से एक भिक्षु था | आज, यहाँ इस दूसरे में, तीसरा नहीं मिलता || १३ ||

6.66.14

मया तु पुनरन्विष्य चेतसा चतुरात्मना । तादृग् भिक्षुस्तृतीयोऽन्यो जगत्पद्मोदरालिना ॥ १४ ॥

mayā tu punaranviṣya cetasā caturātmanā | tādṛg bhikṣustṛtīyo'nyo jagatpadmodarālinā || 14 ||

By me, indeed, searching again with a fourfold mind | Such a third different monk was found by the lotus-hearted world || 14 ||

मेरे द्वारा, निश्चित रूप से, चतुरात्मा मन से फिर से खोजने पर | कमल-हृदय वाले जगत द्वारा ऐसा एक तीसरा अलग भिक्षु मिला || १४ ||

6.66.15

अस्मात्सर्गात्ततो लब्धस्तृतीयस्तादृशाशयः । अथान्ये लीलया सर्गा मया संप्रेक्षितास्ततः ॥ १५ ॥

asmātsargāttato labdhas tṛtīyastādṛśāśayaḥ | athānye līlayā sargā mayā saṃprekṣitāstat || 15 ||

From this creation, then, such a third intention was obtained | Then other creations were seen by me with play || 15 ||

इस सृष्टि से, तब, ऐसा एक तीसरा इरादा प्राप्त हुआ | फिर अन्य सृष्टियाँ मेरे द्वारा लीला से देखी गईं || १५ ||

6.66.16

यावत्तस्मिंश्चिदाकाशकोशशायिनि सर्गके । तृतीयो विद्यते भिक्षुर्ब्राह्मश्च सदृशक्रमः ॥ १६ ॥

yāvattasmiṃścidākāśakośaśāyini sargake | tṛtīyo vidyate bhikṣurbrahmaśca sadṛśakramaḥ || 16 ||

In the creation that resides in the cosmic egg, there is a third ascetic who is equal to Brahma.

जिस सृष्टि कोश में रहता है, उसमें एक तीसरा भिक्षु है जो ब्रह्मा के समान है।

6.66.17

एवं तेनैव तेनैव संनिवेशेन भूरिशः । भविष्यन्त्यभवन्सर्वे पदार्थाः सर्गसंततौ ॥ १७ ॥

evaṃ tenaiva tenaiva saṃniveśena bhūriśaḥ | bhaviṣyantyabhavansarve padārthāḥ sargasantatau || 17 ||

Thus, through that very arrangement, all elements will abundantly exist in the continuous creation.

इस प्रकार, उसी व्यवस्था से, सभी तत्व निरंतर सृष्टि में अधिक मात्रा में होंगे।

6.66.18

अस्यां सभायामपि ये मुनयो ब्राह्मणास्तथा । भाव्यमेवं समाचौरस्तैरन्यैरप्यनेकशः ॥ १८ ॥

asyāṃ sabhāyāmapi ye munayo brāhmaṇāstathā | bhāvyamevaṃ samācaurastairanyairapyanekaśaḥ || 18 ||

In this assembly, those sages and Brahmins should behave in this manner, and similarly, others should also behave in the same way.

इस सभा में, वे मुनि और ब्राह्मण इस प्रकार से व्यवहार करें, और इसी प्रकार, अन्य भी इसी तरह से व्यवहार करें।

6.66.19

नारदेनामुना भाव्यं पुनरन्येन चामुना । एवं कलनकर्मभ्यां युक्तेनान्येन भूरिशः ॥ १९ ॥

nāradenāmunā bhāvyaṃ punaranyena cāmunā | evaṃ kalanakarmabhyāṃ yuktenānyena bhūriśaḥ || 19 ||

This should be done by Nārada and then by another sage, and similarly, by others who are engaged in various actions.

यह नारद द्वारा और फिर दूसरे मुनि द्वारा किया जाना चाहिए, और इसी प्रकार, अन्य लोगों द्वारा जो विभिन्न कार्यों में लगे हुए हैं।

6.66.20

एवं जन्मादिना भाव्यं व्यासेनापि शुकेन च । शौनकेन पुनर्भाव्यं क्रतुना पुलहेन च ॥ २० ॥

evaṃ janmādinā bhāvyaṃ vyāsenāpi śukena ca | śaunakena punarbhāvyaṃ kratunā pulahena ca || 20 ||

This should be done by Vyāsa and Śuka, and similarly, by Śaunaka, Kratu, and Pulaha.

यह व्यास और शुक द्वारा किया जाना चाहिए, और इसी प्रकार, शौनक, क्रतु और पुलह द्वारा भी किया जाना चाहिए।

6.66.21

अगस्त्येन पुलस्त्येन भृगुणाऽङ्गिरसापि च । एत एव तथान्ये च एवंरूपक्रियास्पदम् ॥ २१ ॥

agastyena pulastyena bhṛguṇā'ṅgirasāpi ca | eta eva tathānye ca evaṃrūpakriyāspadam || 21 ||

By Agastya, Pulastya, Bhrigu, and Angiras, and others like them, this is the form and action.

अगस्त्य, पुलस्त्य, भृगु और अंगिरा द्वारा, और उनके जैसे अन्य लोगों द्वारा, यह रूप और क्रिया है।

6.66.22

चिराच्चिराद्भविष्यन्ति मायेयं विततता यतः । सदृशाचारजन्मानस्त एवान्ये च भूरिशः ॥ २२ ॥

cirāccirādbhaviṣyanti māyeyaṃ vitatā yataḥ | sadṛśācārajanmānastā evānye ca bhūriśaḥ || 22 ||

After a long time, they will appear, this illusion is spread because of them. Similar in conduct and birth, they and many others will be numerous.

बहुत समय बाद, वे प्रकट होंगे, इस माया का विस्तार उनके कारण है। आचार और जन्म में समान, वे और बहुत से अन्य लोग अधिक संख्या में होंगे।

6.66.23

भूयोभूयो विवर्तन्ते सर्गेष्वप्स्विव वीचयः । अत्यन्तसदृशाः केचित्केचिदर्धसमक्रमाः ॥ २३ ॥

bhūyobhūyo vivartante sargeṣvapsviva vīcayaḥ | atyantasadṛśāḥ kecitkecidardhasamakramāḥ || 23 ||

Again and again, they transform in creations like waves in water. Some are very similar, some are half similar in their actions.

बार-बार, वे सृष्टियों में पानी की लहरों की तरह परिवर्तित होते हैं। कुछ बहुत समान हैं, कुछ आधे समान अपनी क्रियाओं में हैं।

6.66.24

केचिदीषत्समाः केचिन्न कदाचित्पुनस्तथा । एवमेषातिविता महतामपि मोहिनी ॥ २४ ॥

kecidīṣatsamāḥ kecinnā kadācitpunastathā | evameṣātivitatā mahatāmapi mohinī || 24 ||

Some are slightly similar, some are never like that again. Thus, this illusion is very widespread even among the great.

कुछ थोड़े समान हैं, कुछ फिर कभी ऐसे नहीं होते। इस प्रकार, यह माया महानों में भी बहुत व्यापक है।

6.66.25

क्षणेनेहास्ति नो कर्म प्रतिपत्तिर्हि जृम्भते । क्वैकविंशत्यहोरात्रा अनन्ताकृतयोऽनघ ॥ २५ ॥

kṣaṇenehāsti no karma pratipattirhi jṛmbhate | kvaikaviṃśatyahorātrā anantākṛtayo'nagha || 25 ||

In an instant, there is no action here, realization indeed yawns. Where are the twenty-one days and nights, O sinless one, the endless deeds?

एक क्षण में, यहाँ कोई क्रिया नहीं है, जागरूकता वास्तव में जागती है। हे निष्पाप, बीस एक दिन और रातें कहाँ हैं, अनंत कर्म?

6.66.26

क्व तासामुपलम्भोऽलमहो भीमा मनोगतिः । प्रतिभामात्रमेवेदमित्थं विकसितं स्थितम् ॥ २६ ॥

kva tāsāmupalambho'lamaho bhīmā manogatiḥ | pratibhāmātramevedamitthaṃ vikasitaṃ sthitam || 26 ||

Where is the limit of their understanding? Oh, the terrible movement of the mind! This is merely a manifestation of intelligence, thus it is established.

उनकी समझ की सीमा कहाँ है? ओह, मन की भयानक गति! यह तो बस बुद्धि का प्रकटीकरण है, इस प्रकार यह स्थापित है।

6.66.27

नानाकलहकल्लोलं जले प्रातरिवाम्बुजम् । जातं संवेदनादेव शुद्धादिदमशुद्धिमत् । संसारजालमखिलं सार्चिर्वह्निकणादिव ॥ २७ ॥

nānākalahakallolaṃ jale prātarivāmbujam | jātaṃ saṃvedanādeva śuddhādidamaśuddhimat | saṃsārajālamakhilaṃ sārcirvahnikanādiva || 27 ||

Like a lotus in the water in the morning, arising from pure awareness, this entire web of the world, impure though it seems, is like a spark of fire.

जैसे सुबह पानी में कमल, शुद्ध चेतना से उत्पन्न, यह पूरा संसार का जाल, जो अशुद्ध लगता है, एक अग्नि की चिनगारी की तरह है।

6.66.28

प्रत्येकमेवमुदितः प्रतिभासखण्डः खण्डान्तरेष्वपि च तस्य विचित्रखण्डः । सर्वे स्वयं ननु च तेऽपि मिथो न मिथ्या सर्वात्मनि स्फुरति कारणकारणेऽस्मिन् ॥ २८ ॥

pratyekamevamuditaḥ pratibhāsakhaṇḍaḥ khaṇḍāntareṣvapi ca tasya vicitraKhaṇḍaḥ | sarve svayaṃ nanu ca te'pi mitho na mithyā sarvātmani sphurati kāraṇakāraṇe'smin || 28 ||

Each manifested part, though appearing distinct, is interconnected and diverse within itself. All these parts, though seemingly separate, are not false; they shine forth in the ultimate cause of all, the self.

प्रत्येक प्रकट भाग, भले ही अलग दिखता हो, आपस में जुड़ा हुआ और अपने आप में विविध है। ये सभी भाग, भले ही अलग दिखते हों, झूठे नहीं हैं; वे सबके अंतिम कारण, आत्मा में चमकते हैं।

Chapter 67

6.67.1

दशरथ उवाच । मुनिनायक तं भिक्षुं गत्वा संबोधयन्त्वमी । नरा मत्प्रहिताः शीघ्रं चानयन्तु कुटीगतम् ॥ १ ॥

daśaratha uvāca | munināyaka taṃ bhikṣuṃ gatvā saṃbodhayantvamī | narā matprahitāḥ śīghraṃ cānayantu kuṭīgatam || 1 ||

King Dasharatha said: O great sage, go and address that ascetic. Let my messengers quickly bring him who resides in the hut.

राजा दशरथ ने कहा: हे मुनिश्रेष्ठ, उस भिक्षु के पास जाकर उसे संबोधित करें। मेरे दूत शीघ्र ही उसे ले आएं जो कुटी में रहता है।

6.67.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । राजंस्तस्य महाभिक्षोः स देहः प्राणवर्जितः । क्लेदो वैवर्ण्यमायातो नासौ जीवितभाजनम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rājaṃstasya mahābhikṣoḥ sa dehaḥ prāṇavarjitaḥ | kledo vaivarṇyamāyāto nāsau jīvitabhājanam || 2 ||

Vasishtha said: O King, the body of that great ascetic is devoid of life. It has become pale and lifeless, and he is no longer among the living.

वसिष्ठ ने कहा: हे राजन्, उस महान भिक्षु का शरीर प्राणहीन हो गया है। उसका शरीर पीला और निर्जीव हो गया है, और वह अब जीवित नहीं है।

6.67.3

तस्य भिक्षोस्तु जीवोऽसौ भूत्वा पद्मजसारसः । जीवन्मुक्तः स्थितो भूयो नासौ संसृतिभाजनम् ॥ ३ ॥

tasya bhikṣostu jīvo'sau bhūtvā padmajasārasaḥ | jīvanmuktaḥ sthito bhūyo nāsau saṃsṛtibhājanam || 3 ||

The soul of that ascetic, having become a lotus-born swan, is liberated while living and is no longer in the cycle of rebirth.

उस भिक्षु की आत्मा, कमल से उत्पन्न हंस बनकर, जीवनमुक्त हो गई है और अब पुनर्जन्म के चक्र में नहीं है।

6.67.4

तद्गृहे मासपर्यन्ते बलान्निष्कासितार्गलाः । अन्तराले तु तिष्ठन्ति भृत्या भिक्षुदिदृक्षवः ॥ ४ ॥

tadgṛhe māsaparyante balānniṣkāsitārgalāḥ | antarāle tu tiṣṭhanti bhṛtyā bhikṣudidṛkṣavaḥ || 4 ||

In his house, for a month, the servants, driven out by force, stand in the inner courtyard, eager to see the ascetic.

उसके घर में, एक महीने तक, सेवक, जो बलपूर्वक बाहर निकाले गए हैं, अंदर के आंगन में खड़े हैं, भिक्षु को देखने के लिए उत्सुक।

6.67.5

ततो नष्टाङ्गसंधानं कायं निष्काल्यते जले । त्यक्ष्यन्त्यन्यं करिष्यन्ति भिक्षुमक्षुण्णमानसम् ॥ ५ ॥

tato naṣṭāṅgasandhānaṃ kāyaṃ niṣkālyate jale | tyakṣyantyanyaṃ kariṣyanti bhikṣumakṣuṇṇamānasam || 5 ||

Then, the body with disjointed limbs is thrown into the water. They will abandon it and perform rituals for the ascetic with an untroubled mind.

तब, अंगों के जुड़ाव टूट जाने के बाद शरीर को पानी में फेंक दिया जाता है। वे उसे छोड़ देंगे और अशांत मन से भिक्षु के लिए अंतिम संस्कार करेंगे।

6.67.6

अनेनैवं सदेहेन भिक्षुर्मुक्तो व्यवस्थितः । कथं प्रबोध्यते नष्टं तद्विहारे शरीरकम् ॥ ६ ॥

anenaivaṃ sadehena bhikṣurmukto vyavasthitaḥ | kathaṃ prabodhyate naṣṭaṃ tadvihāre śarīrakam || 6 ||

How can one awaken the lost body in that dwelling, when the monk is liberated with such a body?

जब भिक्षु इस शरीर के साथ मुक्त हो जाता है, तो उस निवास में खोया हुआ शरीर कैसे जागृत किया जा सकता है?

6.67.7

एषा गुणमयी माया दुर्बोधेन दुरत्यया । नित्यं सत्यावबोधेन सुखेनैवातिवाह्यते ॥ ७ ॥

eṣā guṇamayī māyā durbodhena duratyayā | nityaṃ satyāvabodhena sukhenaivātivāhyate || 7 ||

This illusion composed of qualities is difficult to understand and overcome. It is always transcended with the realization of truth and happiness.

यह गुणों से बनी माया समझने और पार करने में कठिन है। यह सत्य के ज्ञान और सुख से हमेशा पार की जाती है।

6.67.8

असत्येव कृतारम्भा हेम्नः कटकता यथा । प्रतिभासविपर्यासमात्रकारणकोदया ॥ ८ ॥

asatyeva kṛtārambhā hemnāḥ kaṭakatā yathā | pratibhāsaviparyāsamātrakāraṇakodayā || 8 ||

Just as the appearance of a bracelet is falsely attributed to gold, so too is the illusion caused by mere misperception.

जैसे सोने के लिए कड़ा की उपस्थिति गलत तरीके से आरोपित की जाती है, वैसे ही भ्रांति केवल गलत धारणा से होती है।

6.67.9

परमात्मनि वाचेयमित्थं मायानुमीयते । तरङ्गालीव पयसि प्रेक्षामात्रविनाशिनी ॥ ९ ॥

paramātmani vāceyamitthaṃ māyānumīyate | taraṅgālīva payasi prekṣāmātravināśinī || 9 ||

Thus, illusion is inferred in the Supreme Self, like waves in water, which disappear upon mere observation.

इस प्रकार, माया परमात्मा में अनुमानित होती है, जैसे पानी में तरंगें, जो केवल देखने से ही विलीन हो जाती हैं।

6.67.10

ज्ञो हि दृश्यतया दीर्घस्वप्नात्स्वप्नान्तरं व्रजेत् । एवं जीवत्वमायाति विवेकात्सर्वमात्मदृक् ॥ १० ॥

jño hi dṛśyatayā dīrghasvapnātsvapnāntaraṃ vrajet | evaṃ jīvatvamāyāti vivekātsarvamātmadṛk || 10 ||

The knower, indeed, from the state of being seen, moves from one dream to another long dream. Thus, the state of being alive arises from discrimination, seeing everything as the Self.

ज्ञाता, वास्तव में, देखे जाने की अवस्था से, एक लंबे स्वप्न से दूसरे स्वप्न में चला जाता है। इस प्रकार, जीवन की अवस्था विवेक से उत्पन्न होती है, सब कुछ आत्मा के रूप में देखने से।

6.67.11

यो यस्य प्रतिभासः स्यादात्मैव स स्वबोधतः । स एवोदेति संसारः करञ्जवनगुल्मदृक् ॥ ११ ॥

yo yasya pratibhāsaḥ syādātmaiva sa svabodhataḥ | sa evodeti saṃsāraḥ karañjavanagulmadṛk || 11 ||

Whatever appears to someone, that itself is the Self due to self-awareness. That very Self manifests as the world, like the perception of a forest in a karanja seed.

जो किसी को प्रतीत होता है, वही आत्मा है स्व-बोध से | वही संसार के रूप में उदित होता है, जैसे करंज वन गुल्म की दृष्टि || ११ ||

6.67.12

प्रत्येकं भूतमुदितं कृतं संसारमण्डलम् । भिक्षोः स्वप्नान्तर इव परां भङ्गिमिवाम्भसः ॥ १२ ॥

pratyekaṃ bhūtamuditaṃ kṛtaṃ saṃsāramaṇḍalam | bhikṣoḥ svapnāntara iva parāṃ bhaṅgimivāmbhasaḥ || 12 ||

Each being that arises creates the universe, like a dream within a dream of a mendicant, or like the ultimate form of water.

प्रत्येक भूत जो उदित होता है, संसार मण्डल को कृत करता है, जैसे भिक्षु का स्वप्नान्तर, या जल की परम भंगिमा।

6.67.13

प्रस्तुतः पद्मजादेव जगत्स्वप्नो यथोदितः । तथैवास्वच्छचित्तोत्थो रूढः सर्वजनं प्रति ॥ १३ ॥

prastutaḥ padmajādeva jagatsvapno yathoditaḥ | tathaivāsvacchacittottho rūḍhaḥ sarvajanaṃ prati || 13 ||

Just as the world is said to be a dream of the lotus-born deity, so too, arising from the pure mind, it is established for all people.

जैसे जगत् को पद्मजादेव (ब्रह्मा) का स्वप्न कहा जाता है, वैसे ही, शुद्ध चित्त से उत्पन्न होकर, यह सभी लोगों के लिए स्थापित होता है।

6.67.14

पितामहवदाभाति सर्गः स्वप्नविलासवत् । प्रत्येकमुदितस्तेन ब्रह्माण्डानीव कोटिशः ॥ १४ ॥

pitāmahavadābhāti sargaḥ svapnavilāsavat | pratyekamuditastena brahmāṇḍānīva koṭiśaḥ || 14 ||

Creation appears like the grandfather (Brahma), playful like a dream. Each being that arises thereby creates countless universes.

सृष्टि पितामह (ब्रह्मा) की तरह प्रतीत होती है, स्वप्न की तरह विलासपूर्ण | प्रत्येक भूत जो उदित होता है, उससे अनगिनत ब्रह्माण्ड उत्पन्न होते हैं।

6.67.16

चित्सत्तामात्रमासाद्य प्रतीतिच्युतमात्रतः । जरामरणदुःखानां क्वचिद्भाजनतां गतः ॥ १६ ॥

citsattāmātramāsādya pratīticyutamātrataḥ | jarāmaraṇaduḥkhānāṃ kvacidbhājanatāṃ gataḥ || 16 ||

Having attained mere consciousness, merely by the loss of perception, one sometimes experiences old age, death, and suffering.

चित् सत्ता मात्र को प्राप्त करके, केवल प्रतीति के च्युत होने से, कभी-कभी बुढ़ापा, मृत्यु और दुःख का अनुभव होता है।

6.67.17

पातालं ब्रह्मलोकं वा चित्तत्सुकृतशालिनी । चित्तांशस्पन्दमात्रेण कृत्वा कृत्वेव संस्थिता ॥ १७ ॥

pātālaṃ brahmalokaṃ vā cittat sukṛtaśālinī | cittāṃśaspandamātreṇa kṛtvā kṛtveva saṃsthitā || 17 ||

Whether in the underworld or in Brahmaloka, the mind, which is virtuous, remains established merely by the movement of a part of itself.

चाहे पाताल हो या ब्रह्मलोक, चित्त जो पुण्यशाली है, अपने एक अंश के स्पंदन मात्र से स्थित रहता है।

6.67.18

चित्स्पन्दरूपिणी जीवनामरूपं गतात्मनि । अन्यत्र च विलुठति गत्वा संभ्रमहारिणी ॥ १८ ॥

cits pandarūpiṇī jīvanāmarūpaṃ gatātmani | anyatra ca viluṭhati gatvā saṃbhramahāriṇī || 18 ||

The mind, which is in the form of the vibration of consciousness, takes the form of life in the embodied self. Elsewhere, it wanders, removing confusion.

चित् के स्पंद का रूप धारण करने वाला मन, शरीर में जीवन का रूप धारण करता है। अन्यथा, यह भटकता है, भ्रम को दूर करता है।

6.67.19

चित्तेति परमात्मा न परमात्मा न वा न किम् । जीवदेहादिनाम्नोऽस्य प्रतिबिम्बादिवार्हता ॥ १९ ॥

citteti paramātmā na paramātmā na vā na kim | jīvadehādināmno'sya pratibimbādivārhatā || 19 ||

The mind is said to be the Supreme Self, not the Supreme Self, neither this nor that. The reflection of the names such as the living body, etc., is worthy of it.

मन को परमात्मा कहा जाता है, परमात्मा नहीं, न तो यह और न वह। जीवन शरीर आदि नामों का प्रतिबिम्ब इसके योग्य है।

6.67.20

ब्रह्मण्येव परं ब्रह्म जगद्दृष्ट्यैव संस्थितम् । शुद्धाकाशमिवाकाशे जले जलमिवामलम् ॥ २० ॥

brahmaṇyeva paraṃ brahma jagadṛṣṭyaiva saṃsthitam | śuddhākāśamivākāśe jale jalamivāmalam || 20 ||

The Supreme Brahman is established in Brahman itself, just as the world is established in the vision of Brahman. It is like pure space in space, like pure water in water.

परम ब्रह्म ब्रह्म में ही स्थित है, जैसे जगत ब्रह्म की दृष्टि में स्थित है। यह शुद्ध आकाश आकाश में, शुद्ध जल जल में की तरह है।

6.67.21

लोको ब्रह्मण एवायं जगद्रूपेषु तिष्ठति । बिभेत्यन्यतया बोधात्प्रतिबिम्बादिवार्भकः ॥ २१ ॥

loko brahmaṇa evāyaṃ jagadrūpeṣu tiṣṭhati | bibhetyanyatayā bodhāt pratibimbādivārbhakaḥ || 21 ||

This world is established in Brahman itself, in the forms of the world. It fears from another kind of knowledge, like a reflection of a child.

यह लोक ब्रह्म में ही जगत के रूपों में स्थित है। यह दूसरे प्रकार के ज्ञान से डरता है, जैसे बच्चे का प्रतिबिम्ब।

6.67.22

स्पन्देऽस्पन्दीकृते चेह स्वतः संज्ञा विलीयते । साप्यलं परिणामेन लीयतेऽग्नौ घृतं यथा ॥ २२ ॥

spande'spandīkṛte ceha svataḥ saṃjñā vilīyate | sāpyalaṃ pariṇāmena līyate'gnau ghṛtaṃ yathā || 22 ||

In the state of vibration and non-vibration, the inherent consciousness dissolves | Just as ghee melts in fire, it dissolves through transformation

स्पन्द और अस्पन्द की स्थिति में, स्वयं की चेतना विलीन हो जाती है | जैसे घी आग में पिघल जाता है, वैसे ही परिवर्तन से वह विलीन हो जाती है

6.67.23

चित्स्पन्द एव चित्स्पन्दे सर्वात्मनि विजृम्भितः । स्पन्दास्पन्दौ जृम्भणादि कल्पितं नात्र वास्तवम् ॥ २३ ॥

citsapande eva citsapande sarvātmani vijṛmbhitaḥ | spandāspandau jṛmbhaṇādi kalpitaṃ nātra vāstavam || 23 ||

The vibration of consciousness is manifested in the universal self | The concepts of vibration and non-vibration are imagined and not real

चेतना का स्पन्द सर्वात्मा में प्रकट होता है | स्पन्द और अस्पन्द की कल्पना वास्तविक नहीं है

6.67.24

न स्पन्दोऽस्तीह नास्पन्दो नैकता वापि न द्विता । शुद्धं चिन्मात्रसर्वस्वं यथैवास्ति तथा स्थितम् ॥ २४ ॥

na spando'stīha nāspando naikatā vāpi na dvitā | śuddhaṃ cinmātrasarvasvaṃ yathaivāsti tathā sthitam || 24 ||

There is neither vibration nor non-vibration, neither oneness nor duality | Pure consciousness alone exists as it is

यहां न तो स्पन्द है न अस्पन्द, न एकता है न द्वैत | शुद्ध चेतना ही जैसी है वैसी ही स्थित है

6.67.25

सारेण तु विचारेण सर्वशब्दार्थयोः समे। चिन्मात्रमेव ज्ञातेयं नास्तीत्यपि न विद्यते॥ २५॥

sāreṇa tu vicāreṇa sarvaśabdārthayoḥ same | cinmātrameva jñāteyaṃ nāstītyapi na vidyate || 25 ||

Through deep contemplation, all words and meanings are the same | Only pure consciousness is to be known, nothing else exists

गहन विचार से, सभी शब्द और अर्थ एक ही हैं | केवल शुद्ध चेतना ही जानना है, कुछ और नहीं है

6.67.26

भेदवेदनयोदेति भेदः प्रकृतिलाञ्छनम्। अभेदबोधादखिले गलिते शिष्यते परम्॥ २६॥

bhedavedanayodeti bhedaḥ prakṛtilāñchanam | abhedabodhādakhile galite śiṣyate param || 26 ||

Duality arises from the perception of difference, which is a characteristic of nature | When the realization of non-duality dissolves everything, the supreme remains

द्वैत भेद की वेदना से उत्पन्न होता है, जो प्रकृति का लक्षण है | जब अभेद का बोध सब कुछ गला देता है, तब परम शेष रहता है

6.67.27

नानातैवास्य बोधेन स बोधस्त्वनवेक्षणात्। पृच्छकं चैवमस्त्येव तस्मान्निःशङ्कता परा॥ २७॥

nānātaivāsya bodhena sa bodhas tv anavekṣaṇāt | pṛcchakaṃ caivam asty eva tasmān niḥśaṅkatā parā || 27 ||

Due to the diversity of his awareness, that awareness is not perceived | Thus, there is indeed a questioner | Therefore, there is supreme fearlessness || 27 ||

इसकी बोध की विविधता के कारण, वह बोध देखा नहीं जाता | इसलिए, एक प्रश्नकर्ता वास्तव में है | इसलिए, परम निडरता है || २७ ||

6.67.28

ततः स्वप्नो न जागर्तिर्न सुषुप्तिर्न तुर्यता। न बन्धोस्ति न मोक्षोस्ति नान्यथाकल्पनात्मकम्॥ २८॥

tataḥ svapno na jāgartir na suṣuptir na turyatā | na bandhosti na mokṣosti nānyathākalpanātmakam || 28 ||

Then, there is neither dream nor wakefulness, nor deep sleep, nor the fourth state | There is no bondage, no liberation, nor anything else imagined || 28 ||

तब, न स्वप्न है न जागरण, न सुषुप्ति, न चौथी अवस्था | न बंधन है, न मुक्ति, न कुछ और कल्पना || २८ ||

6.67.29

शान्तिरेका जगन्नाम्नी शान्तिरेवमवस्थिता। अबोधोऽसत्य एवातः क्व द्रष्टृदृश्यदर्शनम्॥ २९॥

śāntirekā jagannāmnī śāntirevamavasthitā | abodho'saty evātaḥ kva draṣṭṛdṛśyadarśanam || 29 ||

Peace is the only reality, thus established | Ignorance is false, therefore where is the vision of the seer and the seen? || 29 ||

शांति ही एकमात्र वास्तविकता है, इस प्रकार स्थापित | अज्ञान असत्य है, इसलिए द्रष्टा और दृश्य का दर्शन कहाँ है? || २९ ||

6.67.30

स्पन्दोऽप्यस्पन्द एव स्यान्निःसंकल्पतया च तेन स्पन्दास्पन्दयोर्भिन्ना संकल्परहितैव चित्॥ ३०॥

spando'pyaspanda eva syānniḥsaṃkalpatayā ca tena spandāspandayorbhinnā saṃkalparahitaiva cit || 30 ||

Even vibration becomes non-vibration due to the absence of concepts. Therefore, vibration and non-vibration are distinct, devoid of concepts, and pure consciousness.

विचारों की अनुपस्थिति के कारण स्पंदन भी अस्पंदन बन जाता है। इसलिए, स्पंदन और अस्पंदन अलग हैं, विचारों से रहित हैं, और शुद्ध चेतना हैं।

6.67.31

द्वैतैक्यविकला रूपसंकल्पश्चिदभावनात्। स च भावनमात्रेण गतो ब्रह्मैव शिष्यते ॥ ३१ ॥

dvaitaikyavikalā rūpasaṃkalpaś cid abhāvanāt | sa ca bhāvanamātreṇa gato brahmaiva śiṣyate || 31 ||

Due to the absence of consciousness, the imagined form of duality and unity becomes distorted | That, by mere contemplation, merges into Brahman alone || 31 ||

चेतना की अनुपस्थिति के कारण, द्वैत और एकता की कल्पित रूप विकृत हो जाता है | वह, केवल ध्यान से, ब्रह्म में ही विलीन हो जाता है || ३१ ||

6.67.32

चिच्चन्द्रबिम्बे संकल्पकलङ्कः स्फुरतीव यः। नासौ कलङ्कस्तद्विद्धि चिद्घनस्य घनं वपुः ॥ ३२ ॥

cicchandrabimbe saṃkalpakalaṅkaḥ sphuratīva yaḥ | nāsau kalaṅkastadviddhi ciddhanasya ghanaṃ vapuḥ || 32 ||

The apparent blemish in the mirror of consciousness is not a real blemish; know it to be the dense form of the essence of consciousness.

चेतना के दर्पण में दिखने वाला दोष वास्तव में दोष नहीं है; इसे चेतना के सार का घना रूप समझो।

6.67.33

चिद्घनस्य न सन्नासन्स्थीयतां यत्तते पदे। इत्यदोषमहाबोधसारसंग्रहणं कृतम् ॥ ३३ ॥

ciddhanasya na sannāsansthīyatāṃ yattate pade | ityadoṣamahābodhasārasaṃgrahaṇaṃ kṛtam || 33 ||

The essence of consciousness does not dwell in existence or non-existence; thus, the great wisdom is gathered without flaw.

चेतना का सार अस्तित्व या अनस्तित्व में नहीं रहता; इस प्रकार, दोषरहित महान ज्ञान एकत्र किया जाता है।

6.67.34

चिच्चन्द्रबिम्बासंकल्पकलङ्कामृतविग्रहः। त्वया भव्येन संस्पृष्टो भावाभावक्षयात्मना ॥ ३४ ॥

cicchandrabimbāsaṃkalpakalaṅkāmṛtavigrahaḥ | tvayā bhavyena saṃspṛṣṭo bhāvābhāvakṣayātmanā || 34 ||

The form of the nectar of the apparent blemish in the mirror of consciousness is touched by you, the magnificent one, with the nature of the destruction of existence and non-existence.

चेतना के दर्पण में दिखने वाले दोष के अमृत का रूप आप, श्रेष्ठ पुरुष, द्वारा अस्तित्व और अनस्तित्व के विनाश की प्रकृति से स्पर्शित है।

6.67.35

भावाभावादिकलनां नीत्वा चिन्मयतां चितः। समोल्लासविलासान्तः समाश्वस यथासुखम् ॥ ३५ ॥

bhāvābhāvādikalanāṃ nītvā cinmayatāṃ citaḥ | samollāsavilāsāntaḥ samāśvasa yathāsukham || 35 ||

Having led the calculations of existence and non-existence to the state of pure consciousness, rest in the blissful play of consciousness as you wish.

अस्तित्व और अनस्तित्व की गणनाओं को शुद्ध चेतना की अवस्था तक ले जाकर, चेतना के आनंदमय खेल में अपनी इच्छा से विश्राम करो।

6.67.36

स्पन्दास्पन्दौ कल्पनाकल्पना वा चित्ताम्नायो विद्धि नामाब्धिनाम्ना । सर्वाकारा निर्वृतिः शान्तिसत्ता पूर्णापूर्णे ह्येकमेवास्थितेति ॥ ३६ ॥

spandāspandau kalpanākalpanā vā cittāmnāyo viddhi nāmābdhināmnā | sarvākārā nirvṛtiḥ śāntisattā pūrṇāpūrṇe hyekamevāsthiteti || 36 ||

Know the teachings of consciousness as the vibration and non-vibration, imagination and non-imagination, named as the ocean of names. All forms are contentment, peace, and existence, for in the full and the not-full, there is only one reality.

चेतना के उपदेश को स्पंदन और अस्पंदन, कल्पना और अकल्पना के रूप में जानो, जिसे नामों का समुद्र कहा जाता है। सभी रूप संतुष्टि, शांति और अस्तित्व हैं, क्योंकि पूर्ण और अपूर्ण में केवल एक ही वास्तविकता है।

Chapter 68

6.68.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । सुषुप्तमौनवान्भूत्वा त्यक्त्वा चित्तविलासिताम् । कलनामलनिर्मुक्तस्तिष्ठावष्टब्धतत्पदः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | suṣuptamaunavānbhūtvā tyaktvā cittavilāsitām |
kalanāmalanirmuktastiṣṭhāvaṣṭabdhatatpadaḥ || 1 ||

Vasishtha said: Having become silent in deep sleep, abandoning the play of the mind, free from the impurities of time, stand firm in that state.

वसिष्ठ ने कहा: गहरी नींद में मौन होकर, मन के विलास को त्यागकर, समय की मलिनता से मुक्त होकर, उस अवस्था में स्थिर रहो।

6.68.2

श्रीराम उवाच । वांग्मौनमक्षमौनं च काष्ठमौनं च वेद्म्यहम् । सुषुप्तमौनं मौनेश ब्रह्मन्ब्रूहि किमुच्यते ॥ २ ॥

śrīrāma uvāca | vāṅgmaunamakṣamaunaṃ ca kāṣṭhamaunaṃ ca vedmyaham | suṣuptamaunaṃ mauneśa brahmanbrūhi kimucyate || 2 ||

Rama said: I know the silence of speech, the silence of the senses, and the silence of wood. O Lord of Silence, O Brahman, tell me what is meant by the silence of deep sleep.

राम ने कहा: मैं वाणी के मौन, इंद्रियों के मौन और काष्ठ के मौन को जानता हूँ। हे मौनेश्वर, हे ब्रह्मन्, गहरी नींद के मौन का क्या अर्थ है, यह बताओ।

6.68.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । द्विविधः प्रोच्यते राम मुनिर्मुनिवरैरिह । एकः काष्ठतपस्वी स्याज्जीवन्मुक्तस्तथेतरः ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | dvividhaḥ procyate rāma munirmunivarairiha | ekaḥ kāṣṭhatapasvī syājjīvanmuktastathetaraḥ || 3 ||

Vasishtha said: O Rama, the sage is described in two ways by the great sages here. One is an ascetic of wood, the other is liberated while living.

वसिष्ठ ने कहा: हे राम, महान ऋषियों द्वारा यहाँ मुनि को दो प्रकार से बताया जाता है। एक काष्ठ तपस्वी होता है, दूसरा जीवन्मुक्त होता है।

6.68.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । अभावितायां शुष्कायां क्रियायां बद्धनिश्चयः । हठाज्जितेन्द्रियग्रामो मुनिः स्यात्काष्ठतापसः ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | abhāvitāyāṃ śuṣkāyāṃ kriyāyāṃ baddhaniścayaḥ | haṭhājjitendriyagrāmo muniḥ syātkāṣṭhatāpasaḥ || 4 ||

Vasishtha said: With a firm resolve in dry, unpracticed action, one who has forcibly conquered the senses is called an ascetic of wood.

वसिष्ठ ने कहा: सूखी, अभ्यास न की गई क्रिया में दृढ़ निश्चय के साथ, जो बलपूर्वक इंद्रियों को जीत लेता है, वह काष्ठ तपस्वी कहलाता है।

6.68.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथाभूतमिदं बुद्ध्वा भावितात्मात्मनि स्थितः । लोकोपमोपि तृप्तोऽन्तर्यः स मुक्तमुनिः स्मृतः ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathābhūtamidaṃ buddhvā bhāvitātmātmani sthitaḥ | lokopamopi tṛpto'ntaryaḥ sa mukta muniḥ smṛtaḥ || 5 ||

Vasishtha said: Having realized the truth of this world, remaining established in the cultivated self, even if appearing like an ordinary person, one who is content within is known as a liberated sage.

वसिष्ठ ने कहा: इस संसार की सच्चाई को जानकर, संस्कारित आत्मा में स्थित रहकर, भले ही सामान्य व्यक्ति की तरह दिखे, जो अंतर से संतुष्ट है, वह मुक्त मुनि कहलाता है।

6.68.6

एतयोर्यो भवेद्भावः शान्तयोर्मुनिनाथयोः । चित्तनिश्चयरूपात्मा मौनशब्देन स स्मृतः ॥ ६ ॥

etayoryo bhavedbhāvaḥ śāntayormunināthayoḥ | cittaniścayarūpātmā mauṇaśabdena sa smṛtaḥ || 6 ||

Whatever state of mind is achieved by the tranquil sages, that state, characterized by the resolution of the mind, is known as silence.

जो भी अवस्था शांत मुनियों की होती है, वह अवस्था जो मन के निश्चय के रूप में होती है, उसे मौन कहा जाता है।

6.68.7

चतुष्प्रकारमाहुस्तं मौनं मौनविदो जनाः । वांग्मौनमक्षमौनं च काष्ठं सौषुप्तमेव च ॥ ७ ॥

catuṣprakāramāhustaṃ mauṇaṃ mauṇavidō janāḥ | vāṃgmauṇamakṣamauṇaṃ ca kāṣṭhaṃ sauṣuptamēva ca || 7 ||

The knowledgeable ones describe silence in four ways: verbal silence, physical silence, mental silence, and the silence of deep sleep.

ज्ञानी लोग मौन को चार प्रकार से बताते हैं: वाचिक मौन, शारीरिक मौन, मानसिक मौन और सुषुप्ति मौन।

6.68.8

वांग्मौनं वचसां रोधो बलादिन्द्रियनिग्रहः । अक्षमौनं परित्यागश्चेष्टानां काष्ठसंज्ञकम् ॥ ८ ॥

vāṃgmauṇaṃ vacasāṃ rōdho balādindriyanigrahaḥ | akṣamauṇaṃ parityāgaścēṣṭānāṃ kāṣṭhasaṃjñakam || 8 ||

Verbal silence is the restraint of speech, physical silence is the control of the senses, and mental silence is the renunciation of actions.

वाचिक मौन वाणी का नियंत्रण है, शारीरिक मौन इंद्रियों का नियंत्रण है, और मानसिक मौन क्रियाओं का त्याग है।

6.68.9

मनोमौनं पञ्चमं च तन्मृतौ काष्ठतापसे । भावे सुषुप्तमौनाख्यं जीवन्मुक्तोऽनुजीवति ॥ ९ ॥

manomauṇaṃ pañcamaṃ ca tanmṛtau kāṣṭhatāpase | bhāve suṣuptamauṇākhyaṃ jīvanmukto'nujīvati || 9 ||

Mental silence is the fifth type, and it is attained through the practice of austerities. In the state of deep sleep, one is known as a liberated soul.

मानसिक मौन पाँचवाँ प्रकार है, और यह तपस्या के द्वारा प्राप्त होता है। सुषुप्ति मौन की अवस्था में, एक जीवन्मुक्त होता है।

6.68.10

त्रिषु मौनविशेषेषु विषयः काष्ठतापसः । सुषुप्तमौनावस्थायां सा तुर्या सैव मुक्तधीः ॥ १० ॥

triṣu mauṇaviśeṣeṣu viṣayaḥ kāṣṭhatāpasaḥ | suṣuptamauṇāvasthāyāṃ sā turyā saiva muktadhīḥ || 10 ||

In the three types of silence, the subject is the ascetic. In the state of deep sleep silence, that is the fourth state, which is the liberated mind.

तीन मौन विशेषों में, विषय तपस्वी है। सुषुप्ति मौन की अवस्था में, वह चौथी अवस्था है, जो मुक्त मन है।

6.68.11

वांग्मौनं मौनमित्येतत्सिद्धं तच्च मनः किलमलिनं जीवबन्धाय तत्रस्थः काष्ठतापसः ॥ ११ ॥

vāṃgmaunaṃ maunamityetatsiddhaṃ tacca manaḥ kilamalinaṃ jīvabandhāya tatrasthaḥ kāṣṭhatāpasaḥ || 11 ||

Silence of speech is indeed silence, this is established. That mind is indeed impure, for the bondage of the soul, therein situated, the ascetic endures penance.

वाणी का मौन ही मौन है, यह सिद्ध है। वह मन निश्चित रूप से अशुद्ध है, आत्मा के बंधन के लिए, उसमें स्थित, तपस्वी तप सहन करता है।

6.68.12

अस्मत्संस्मरणं वापि दृश्यं वाङ्मयमस्पृशन् । अपश्यन्नेव पश्यन् हि काष्ठमौनी तु तिष्ठति ॥ १२ ॥

asmatsaṃsmaraṇaṃ vāpi dṛśyaṃ vāṅmayamaspṛśan | apaśyanneva paśyan hi kāṣṭhamauṇī tu tiṣṭhati || 12 ||

Even remembering oneself or seeing the visible without touching the speech, one remains in silence like wood.

अपने आप को याद करना या बिना वाणी को छुए दृश्य को देखना, काष्ठ की तरह मौन में रहना है।

6.68.13

प्रस्फुरच्चित्तकलनमेतन्मौनत्रयं स्मृतम् । भवन्ति मौनिनस्तत्र न तज्ज्ञास्तत्स्थलीलया ॥ १३ ॥

prasphuraccittakalanametanmaunatrayaṃ smṛtam | bhavanti mauninastatra na tajjñāstatsthalīlayā || 13 ||

The trembling of the mind is considered the threefold silence. Those who are silent there do not know that playfulness.

मन की कंपन तीन प्रकार का मौन माना जाता है। जो वहाँ मौन हैं, वे उस लीला को नहीं जानते।

6.68.14

नात्रोपादेयताज्ञानमेतन्मौनत्रये किल । लीलया कथितं तेन तज्ज्ञाः कुप्यन्तु वा न वा ॥ १४ ॥

nātropādeyatājñānametanmaunatraye kila | līlayā kathitaṃ tena tajjñāḥ kupyantu vā na vā || 14 ||

There is no knowledge of acceptance here in this threefold silence. It is said playfully, whether the knowers of that are angry or not.

इस तीन प्रकार के मौन में यहाँ कोई स्वीकार का ज्ञान नहीं है। यह लीला से कहा गया है, चाहे उसके ज्ञाता नाराज हों या न हों।

6.68.15

इदं सुषुप्तमौनं तु जीवन्मुक्तमितिस्थितम् । अपुनर्जन्मनो जन्तोः श्रृणु श्रवणभूषणम् ॥ १५ ॥

idaṃ suṣuptamaunaṃ tu jīvanmuktamitisthitam | apunarjanmano jantoḥ śrṛṇu śravaṇabhūṣaṇam || 15 ||

This deep sleep silence is indeed the state of liberation while living. Listen to this ornament of hearing for the being who is not born again.

यह सुषुप्ति मौन जीवन्मुक्ति की अवस्था है। फिर से जन्म न लेने वाले जीव के लिए यह श्रवण का आभूषण सुनो।

6.68.16

नात्र संयम्यते प्राणस्त्रिविधो नापि योज्यते । नोल्लस्यन्ते न ग्लायन्ते समस्तेन्द्रियसंविदः ॥ १६ ॥

nātra saṃyamyate prāṇastrividho nāpi yojyate | nollasyante na glāyante samastendriyasaṃvidaḥ || 16 ||

Here, the breath is neither controlled nor united. The senses neither rise nor fade away.

यहाँ प्राण न तो संयमित है और न ही एकाग्र है। इन्द्रियाँ न तो उठती हैं और न ही शिथिल होती हैं।

6.68.17

नानाताकलनेयं च न वल्गति न शाम्यति । चेतो न चेतो नाचेतो न सन्नासन्न चेतरत् ॥ १७ ॥

nānātākalaneyaṃ ca na valgati na śāmyati | ceto na ceto nāceto na sannāsanna cetarat || 17 ||

The mind does not waver, nor does it calm down. It is neither conscious nor unconscious, neither existent nor non-existent.

मन न तो विचलित होता है और न ही शान्त होता है। यह न तो चेतन है और न ही अचेतन, न ही अस्तित्व में है और न ही नहीं है।

6.68.18

अविभागमनभ्यासं यदनाद्यन्तमास्थितम् । ध्यायतोऽध्यायतश्चैतत्सौषुप्तं मौनमुच्यते ॥ १८ ॥

avibhāgamanabhyāsaṃ yadanādyantamāsthitam | dhyāyato'dhyāyataścaitatsauṣuptaṃ maunamucyate || 18 ||

That which is without division and without practice, which is eternal and established in the beginningless and endless, is called deep sleep and silence.

जो विभाजन और अभ्यास से रहित है, जो अनादि और अनन्त में स्थित है, उसे सुषुप्ति और मौन कहा जाता है।

6.68.19

यथाभूतमिदं बुद्ध्वा जगन्नानात्वविभ्रमम् । यथास्थितमसंदेहं सौषुप्तं मौनमेव तत् ॥ १९ ॥

yathābhūtamidaṃ buddhvā jagannānātvavibhramam | yathāsthitamasandehaṃ sauṣuptaṃ maunameva tat || 19 ||

Having understood the world as it is, free from the illusion of diversity, one realizes the true nature without doubt, which is deep sleep and silence.

जगत को जैसा है उसे समझकर, जो विविधता के भ्रम से मुक्त है, वह संदेह रहित वास्तविक स्थिति को जानता है, जो सुषुप्ति और मौन है।

6.68.20

अनेकसंविद्रूपात्म शिवेनैवेदमाततम् । इत्यास्थितमनन्तं यत्सौषुप्तं मौनमुच्यते ॥ २० ॥

anekasaṃvidrūpātma śivenaivedamātatam | ityāsthitamanantaṃ yatsauṣuptaṃ maunamucyate || 20 ||

The self, which is of the nature of various consciousnesses, is pervaded by Shiva alone. Thus, the established infinite is called deep sleep and silence.

जो विभिन्न चेतनाओं के स्वरूप वाला आत्मा है, वह शिव से ही व्याप्त है। इस प्रकार, स्थापित अनन्त को सुषुप्ति और मौन कहा जाता है।

6.68.21

आकाशं नैव चाकाशं सर्वमस्ति च नास्ति च । इति चित्तं समं शान्तं यत्तन्मौनं सुषुप्तवत् ॥ २१ ॥

ākāśaṃ naiva cākāśaṃ sarvamasti ca nāsti ca| iti cittaṃ samaṃ śāntaṃ yattannauṃ suṣuptavat || 21 ||

The sky is neither existent nor non-existent, everything both exists and does not exist. Thus, the mind is calm and peaceful, that is the silence like deep sleep.

आकाश न तो है और न ही नहीं है, सब कुछ है और नहीं भी है| ऐसा मन शान्त और स्थिर है, यही गहरी नींद जैसा मौन है।

6.68.22

सर्वशून्यं निरालम्बं शान्तिविज्ञप्तिमात्रकम्। न सन्नासदिति यस्यामासितं मौनमुत्तमम्॥ २२॥

sarvaśūnyaṃ nirālambaṃ śāntivijñaptimātrakam| na sannāsaditi yasyāmāsitaṃ maunamuttamam || 22 ||

All is void, without support, merely a perception of peace. In which there is neither existence nor non-existence, that is the supreme silence.

सब कुछ शून्य है, बिना आधार के, केवल शान्ति की अनुभूति है| जिसमें न तो अस्तित्व है और न ही अनस्तित्व, वही उत्तम मौन है।

6.68.23

भावाभावादशादेशविशेषैर्वितथोत्थितैः। संविदो यदनाभासस्तन्मौनं परमं विदुः॥ २३॥

bhāvābhāvādaśādeśaviśeṣairvitathotthitaiḥ| saṃvido yadanābhāsastanmauṃ paraṃ viduḥ || 23 ||

From the various states and places of being and non-being, falsely arisen, the non-reflection of consciousness is known as the supreme silence.

अस्तित्व और अनस्तित्व की विभिन्न अवस्थाओं और स्थानों से, झूठे ढंग से उत्पन्न, चेतना का अप्रतिबिंब उत्तम मौन के रूप में जाना जाता है।

6.68.24

अत्यन्तमसतैवान्तश्चेतसाऽवृत्तिरूघिणा। यदनावर्तनं संविद्वृत्तेस्तन्मौनमक्षयम्॥ २४॥

atyantamasataivāntaścetasā'vṛttirūghiṇā| yadanāvartanaṃ saṃvidvṛttes tanmau namakṣayam || 24 ||

With the mind completely turned inward, devoid of all falsehood, the non-returning of consciousness is the eternal silence.

मन पूरी तरह से अंतर्मुखी हो जाता है, झूठ से रहित, चेतना का न लौटना सनातन मौन है।

6.68.25

नाहमस्मि न चान्योऽस्ति न मनो न च मानसम्। इति संविदसंवित्तिरविच्छिन्नातिमौनिता॥ २५॥

nāhamasmi na cānyo'sti na mano na ca mānasam| iti saṃvidasaṃvittiravicchinnātimau nitā || 25 ||

I am not, nor is there another, nor is there mind or thought. Thus, the uninterrupted awareness of consciousness is the ultimate silence.

मैं नहीं हूँ, न ही कोई और है, न ही मन है और न ही विचार। ऐसा चेतना की अविच्छिन्न अनुभूति अंतिम मौन है।

6.68.26

अहमस्मि जगत्यस्मिन्स्वस्ति शब्दार्थमात्रकम्। सत्तासामान्यमेवेति सौषुप्तं मौनमुच्यते॥ २६॥

ahamasmi jagatyasmin svasti śabdārthamātrakam | sattāsāmānyameveti sauṣuptaṃ maunamucyate || 26 ||

I am in this world, only the essence of sound and meaning | This is the common existence, thus deep sleep is called silence.

मैं इस जगत में हूँ, केवल शब्द और अर्थ का सार | यह सामान्य अस्तित्व है, इसलिए गहरी नींद मौन कहलाती है।

6.68.27

यस्मात्संविदमेव स्यात्स्वान्यादिकलना कुतः। अनन्तमेव सौषुप्तं सर्वं मौनमतस्ततम्॥ २७॥

yasmātsaṃvidameva syātsvānyādikalanā kutaḥ | anantameva sauṣuptaṃ sarvaṃ maunamatastatam || 27 ||

Since there is only pure consciousness, how can there be any calculation of one's own and others? Therefore, infinite deep sleep is the ultimate silence.

क्योंकि केवल शुद्ध चेतना है, अपने और दूसरों की गणना कैसे हो सकती है? इसलिए, अनंत गहरी नींद परम मौन है।

6.68.28

सुषुप्तमौनमेवेदमनन्तत्वात्प्रबोधवत्। तुर्यमेवामलं विद्धि तुर्यातीतमथापि च ॥ २८ ॥

suṣuptamaunamevedamanantatvātprabodhavat | turyamevāmalaṃ viddhi turyātītamathāpi ca || 28 ||

This deep sleep and silence itself is infinite and enlightening | Know the fourth state as pure and also beyond the fourth.

यह गहरी नींद और मौन स्वयं अनंत और प्रकाशमान है | चौथी अवस्था को शुद्ध जानो और चौथी से भी परे।

6.68.29

सौषुप्तैकसमाधानस्तथा तुर्यसमाधिकः। तुर्यातीतसमाधिर्वा जाग्रत्यपि भवन्ति वै ॥ २९ ॥

sauṣupteka samādhānastathā turyasamādhikaḥ | turyātītasamādhirvā jāgratyapi bhavanti vai || 29 ||

One who is absorbed in deep sleep, similarly in the fourth state, or even in the state beyond the fourth, these states can also occur in the waking state.

जो गहरी नींद में तल्लीन है, उसी प्रकार चौथी अवस्था में, या चौथी से भी परे की अवस्था में, ये अवस्थाएँ जाग्रत अवस्था में भी हो सकती हैं।

6.68.30

तुर्यस्य एव सकलामलशान्तिवृत्तिर्जाग्रत्यपि व्यवहरन्निपुणं समन्तात्। नित्यं सदेह उत वापि विदेह एव ब्रह्मन्नभोभवत एव किलास्ति साधो ॥ ३० ॥

turyasya eva sakalāmalashāntivṛttirjāgratyapi vyavaharanni puṇaṃ samantāt | nityaṃ sadeha uta vāpi videha eva brahmannabhobhavata eva kilāsti sādho || 30 ||

The pure and peaceful nature of the fourth state is experienced even in the waking state, skillfully engaging in all activities | O Brahman, it is said that this eternal state exists with or without the body.

चौथी अवस्था की शुद्ध और शांत प्रकृति जाग्रत अवस्था में भी अनुभव की जाती है, सभी गतिविधियों में कुशलतापूर्वक संलग्न होकर | हे ब्रह्मन्, यह सनातन अवस्था शरीर के साथ या बिना शरीर के मौजूद है, ऐसा कहा जाता है।

6.68.31

ओंमित्युदस्तभवबासनमेकमास्स्व न त्वं न चाहमपि नान्यदिहास्ति सत्यम्। सर्वं च विद्यत इतीह किलान्तराभं ज्ञस्तिष्ठ चिद्गगनकोशकलैकनिष्ठः ॥ ३१ ॥

oṃmityudastabhavavāsanamekamāssva na tvaṃ na cāhamapi nānyadihāsti satyam | sarvaṃ ca vidyata itīha kilāntarābhaṃ jñastiṣṭha cidgaganakośakalaikanṣṭhaḥ || 31 ||

By chanting Om, remove all worldly desires and realize the oneness of the Self. There is no 'you' or 'me' or anything else here; this is the truth. Everything exists here, but it appears different. Remain steadfast in the knowledge of the Self, which is the essence of the sky of consciousness.

ओम का उच्चारण करके, सभी संसारिक वासनाओं को दूर करें और आत्मा की एकता को समझें। यहाँ न तो 'तुम' है, न ही 'मैं' हूँ, न ही कोई और है; यह सत्य है। यहाँ सब कुछ मौजूद है, लेकिन यह अलग दिखाई देता है। आत्मज्ञान में स्थिर रहें, जो चेतना के आकाश का सार है।

Chapter 69

6.69.1

श्रीराम उवाच । कुतः शतत्वमायातं रुद्राणां मुनिनायक । ये गणास्ते तु ये रुद्रा उत नेति वदाशु मे ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | kutaḥ śatatvamāyātaṃ rudrāṇāṃ munināyaka | ye gaṇāste tu ye rudrā uta neti vadāśu me || 1 ||

Shri Ram said, 'O Lord of the sages, from where did the hundred Rudras come? Are they the same as the Ganas or different? Please tell me quickly.'

श्री राम ने कहा, 'हे मुनिनायक, रुद्रों की सौ संख्या कहाँ से आई? ये गण वही रुद्र हैं या अलग? मुझे शीघ्र बताएँ।'

6.69.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । स्वप्नानां भिक्षुणा दृष्टं शतं शतशरीरकम् । सर्वमुद्देशतो ज्ञातं तत उक्तं न तन्मया ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | svapnānāṃ bhikṣuṇā dṛṣṭaṃ śataṃ śataśarīrakam | sarvamuddeśato jñātaṃ tata uktaṃ na tanmayā || 2 ||

Shri Vasishta said, 'A hundred forms were seen in dreams by a mendicant. Everything is known in summary, but it is not said by me.'

श्री वसिष्ठ ने कहा, 'एक भिक्षु ने स्वप्न में सौ रूप देखे। सब कुछ संक्षेप में जाना जाता है, लेकिन मैंने उसे नहीं कहा।'

6.69.3

य आकाराश्च ते स्वप्ने तत्तद्गणशतं स्मृतम् । तदेतद्रुद्रशतकं रुद्रा अपि गणा विधौ ॥ ३ ॥

ye ākārāśca te svapne tattadgaṇaśataṃ smṛtam | tadetadrudraśatakaṃ rudrā api gaṇā vidhau || 3 ||

Those forms seen in the dream are remembered as a hundred Ganas. This hundred is the Rudra hundred, and Rudras are also Ganas in creation.

स्वप्न में देखे गए वे रूप सौ गणों के रूप में स्मरण किए जाते हैं। यह सौ रुद्र सौ है, और रुद्र भी सृष्टि में गण हैं।

6.69.4

श्रीराम उवाच । एकस्माद्भगवंश्चित्तात्कथं चित्तशतं कृतम् । तत्स्वप्नकृतरुद्रेण दीपाद्दीपशतं यथा ॥ ४ ॥

śrīrāma uvāca | ekasmādbhagavaṃścittātkathaṃ cittaśataṃ kṛtam | tatsvapnakṛtaruḍreṇa dīpāddīpaśataṃ yathā || 4 ||

Shri Ram said, 'O Lord, how did a hundred thoughts arise from one mind? Just as a hundred lamps are lit from one lamp, so are a hundred Rudras created from one dream.'

श्री राम ने कहा, 'हे भगवन्, एक मन से सौ विचार कैसे उत्पन्न हुए? जैसे एक दीप से सौ दीप जलाए जाते हैं, वैसे ही एक स्वप्न से सौ रुद्र उत्पन्न होते हैं।'

6.69.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । निरावरणसद्भावा यद्यथा कल्पयन्ति हि । तत्तथानुभवन्त्येव रसावरणसंविदः ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nirāvaraṇasadbhāvā yadyathā kalpayanti hi | tattathānubhavantyeva rasāvaraṇasaṃvidaḥ || 5 ||

Shri Vasishta said, 'Those who have pure and unobstructed minds, whatever they imagine, they experience it as real, having the knowledge of the essence of taste.'

श्री वसिष्ठ ने कहा, 'जिनके मन पवित्र और अवरोध रहित हैं, वे जो कुछ भी कल्पना करते हैं, वे उसे सच मानते हैं, जिनके पास रस के ज्ञान की संविद है।'

6.69.6

सर्वात्मनः सर्वगत्वाद्यद्यथा यत्र भाव्यते । तथानुभूयते तत्र तत्तथा ज्ञतया धिया ॥ ६ ॥

sarvātmanaḥ sarvagatvādyadyathā yatra bhāvyate | tathānubhūyate tatra tattathā jñatayā dhiyā || 6 ||

Due to the omnipresence of the Supreme Self, whatever is to be experienced in a particular place is experienced there in that manner, and that is known by the intellect in that way.

सर्वशक्तिमान आत्मा की सर्वव्यापकता के कारण, जो कहीं भी होना है, वह उसी तरह से वहाँ अनुभव किया जाता है, और वह बुद्धि द्वारा उसी तरह से जाना जाता है।

6.69.7

श्रीराम उवाच । कपालमालाभरणो भस्मशाली दिगम्बरः । श्मशाननिलयो ब्रह्मन्कामुकश्च किमीश्वरः ॥ ७ ॥

śrīrāma uvāca | kapālamālābharaṇo bhasmaśālī digambaraḥ | śmaśānanilayo brahmannkāmukaśca kimīśvaraḥ || 7 ||

Sri Rama said: O Brahman, wearing a garland of skulls, covered in ashes, naked, dwelling in the cremation ground, and desirous, how can he be the Lord?

श्री राम ने कहा: हे ब्रह्मन्, खोपड़ियों की माला पहने, भस्म से लिपटे, नग्न, श्मशान में रहने वाले, और कामुक, वह ईश्वर कैसे हो सकता है?

6.69.8

श्रीवसिष्ठ उवाच । महेश्वराणां सिद्धानां जीवन्मुक्तशरीरिणाम् । न क्रियानियमोऽस्तीह स ह्यज्ञस्यैव कल्पितः ॥ ८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | maheśvarāṇāṃ siddhānāṃ jīvanmuktasharīriṇām | na kriyāniyamo'stīha sa hyajñasyeva kalpitaḥ || 8 ||

Sri Vasistha said: For the great lords, the perfected ones, and those who are liberated while living, there is no rule of action here. It is indeed imagined by the ignorant.

श्री वसिष्ठ ने कहा: महान ईश्वरों, सिद्धों, और जीवन्मुक्त शरीरधारियों के लिए यहाँ कोई कर्म का नियम नहीं है। यह अज्ञानी द्वारा कल्पित है।

6.69.9

अज्ञस्तु दितचित्तत्वात्क्रियानियमनं विना । गच्छन्न्यायेन मात्स्येन परं दुःखं प्रयाति हि ॥ ९ ॥

ajñastu ditacittatvātkriyāniyamanaṃ vinā | gacchannyāyena mātsyena paraṃ duḥkhaṃ prayāti hi || 9 ||

The ignorant one, due to the impurity of the mind, without the discipline of action, going by the way of the fish, indeed attains great sorrow.

अज्ञानी, मन की अशुद्धि के कारण, कर्म के नियम के बिना, मछली के मार्ग से चलकर, वास्तव में बड़े दुःख को प्राप्त होता है।

6.69.10

सुज्ञास्त्विष्टेष्वनिष्टेषु न निमज्जन्ति वस्तुषु । यतेन्द्रियत्वाद्बुद्धत्वान्निर्वासनतया तथा ॥ १० ॥

sujñāstvaniṣṭeṣvananiṣṭeṣu na nimajjanti vastuṣu | yatendriyatvādbudhhatvānnirvāsanatayā tathā || 10 ||

The wise ones do not get immersed in desirable or undesirable things. They remain detached due to the control of the senses, wisdom, and the state of being free from desires.

बुद्धिमान लोग इच्छित या अनिच्छित चीजों में डूबे नहीं होते। वे इन्द्रिय निग्रह, बुद्धिमत्ता और इच्छाओं से मुक्त होने की अवस्था के कारण विरक्त रहते हैं।

6.69.11

काकतालीयवद्रूढां क्रियां कुर्वन्ति ते सदा । न कुर्वन्त्यपि वै किंचिन्नैषां क्वचिदपि ग्रहः ॥ ११ ॥

kākatālīyavadrūḍhāṃ kriyāṃ kurvanti te sadā | na kurvantyapi vai kiṃcinnaiṣāṃ kvacidapi grahaḥ || 11 ||

They always perform actions as if they are as steady as a crow's gaze, yet they do not do anything, and there is no attachment to them anywhere.

वे हमेशा कौए की दृष्टि की तरह स्थिर क्रियाएँ करते हैं, फिर भी वे कुछ नहीं करते हैं, और उनका कहीं भी कोई आसक्ति नहीं है।

6.69.12

काकतालीयतो विष्णुरेवंकर्मोदितः पुरा । एवंकर्मा त्रिनयन एवंकर्माम्बुजोद्भवः ॥ १२ ॥

kākatālīyato viṣṇurevaṃkarmōditaḥ purā | evaṃkarmā trinayana evaṃkarmāmbujōdbhavaḥ || 12 ||

In the past, Vishnu was inspired to act in this manner, as was the three-eyed Shiva and the lotus-born Brahma.

पूर्वकाल में, विष्णु इसी तरह कर्म करने के लिए प्रेरित हुए थे, जैसे कि त्रिनेत्र शिव और कमल से उत्पन्न ब्रह्मा थे।

6.69.13

न निन्द्यमस्ति नानिन्द्यं नोपादेयं न हेयता । न चात्मीयं न च परं कर्म ज्ञविषयं क्वचित् ॥ १३ ॥

na nindyamasti nānindyaṃ nopādeyaṃ na heyatā | na cātmīyaṃ na ca paraṃ karma jñaviṣayaṃ kvacit || 13 ||

There is nothing blameworthy or praiseworthy, nothing to be accepted or rejected, nothing that is one's own or another's; action is not within the realm of the knower anywhere.

कोई भी निंदनीय या प्रशंसनीय नहीं है, कोई भी ग्रहण करने योग्य या त्यागने योग्य नहीं है, कोई भी अपना या दूसरा नहीं है; कर्म ज्ञानी के क्षेत्र में कहीं भी नहीं है।

6.69.14

अग्न्यादीनां यथौष्ण्यादि सर्गादौ रूढिमागतम् । हरादीनां तथा कर्म द्विजातीनां च जातयः ॥ १४ ॥

agnyādīnāṃ yathauṣṇyādi sargādau rūḍhimāgatam | harādīnāṃ tathā karma dvijātīnāṃ ca jātayaḥ || 14 ||

Just as heat and other qualities are inherent in fire and other elements from the beginning of creation, so are the actions of Shiva and others, and the castes of the twice-born.

जैसे आग और अन्य तत्वों में गर्मी और अन्य गुण सृष्टि के आरंभ से ही निहित हैं, वैसे ही शिव और अन्य के कर्म और द्विजातियों की जातियाँ हैं।

6.69.15

सर्गे प्ररूढिमायाते संकेतवशतः पृथक् । अनुभूतिफलाश्चर्याः कल्पिताः कल्पिताः स्वयम् ॥ १५ ॥

sarge prarūḍhimāyāte saṃketavaśataḥ pṛthak | anubhūtiphalaścaryāḥ kalpitāḥ kalpitāḥ svayam || 15 ||

In creation, when steadfastness is established through conventions, the wondrous fruits of experience are imagined by oneself.

सृष्टि में, जब संकेतों द्वारा स्थिरता स्थापित होती है, तब अनुभूति के चमत्कारी फल स्वयं कल्पित होते हैं।

6.69.16

विदेहमुक्तविषयं तुर्यमौनमतो मया । नोक्तं तव परं मौनं सदेहस्य रघूद्वह ॥ १६ ॥

videhamuktaviṣayaṃ turyamaunamato mayā | noktaṃ tava paraṃ maunaṃ sadehasya raghūdvaha || 16 ||

I have spoken to you about the fourth state of silence, which is beyond the senses and the body. However, I have not spoken to you about the ultimate silence that is attained while still in the body, O Raghava.

मैंने आपको इन्द्रियों और शरीर से परे चौथी अवस्था के मौन के बारे में बताया है। फिर भी, मैंने आपको शरीर में रहते हुए प्राप्त होने वाले परम मौन के बारे में नहीं बताया है, हे रघुवंशी।

6.69.17

खादप्यतितरामच्छमात्माकाशं चिदात्मकम् । तत्ताप्राप्तिः परं श्रेयः सा कथं प्राप्यते श्रृणु ॥ १७ ॥

khādapyatitarāmacchamātmākāśaṃ cidātmakam | tattāprāptiḥ paraṃ śreyaḥ sā kathaṃ prāpyate śṛṇu || 17 ||

The inner sky of the self, which is pure consciousness, is even more transparent than the sky. The attainment of that is the ultimate good. Listen to how it is attained.

आत्मा का अंतरिक्ष, जो शुद्ध चेतना है, आकाश से भी अधिक पारदर्शी है। उसकी प्राप्ति परम कल्याण है। सुनो, कैसे वह प्राप्त होती है।

6.69.18

सम्यग्ज्ञानावबोधेन नित्यमेकसमाधिना । संख्ययैवावबुद्धा ये ते स्मृताः सांख्ययोगिनः ॥ १८ ॥

samyagjñānāvabodhena nityamekasamādhinā | saṃkhyayaivāvabuddhā ye te smṛtāḥ sāṃkhyayoginaḥ || 18 ||

Those who are awakened by the correct knowledge and are always in a state of single-pointed concentration are known as Sankhya yogis.

जो लोग सही ज्ञान से जाग्रत होते हैं और हमेशा एकाग्र ध्यान में रहते हैं, वे सांख्य योगी कहलाते हैं।

6.69.19

प्राणाद्यनिलसंशान्तौ युक्त्या ये पदमागताः । अनामयमनाद्यन्तं ते स्मृता योगयोगिनः ॥ १९ ॥

prāṇādyanilasaṃśāntau yuktyā ye padamāgatāḥ | anāmayamanādyantaṃ te smṛtā yogayoginaḥ || 19 ||

Those who have attained the state of tranquility of the vital breaths and other winds through proper means are known as Yoga yogis. They are free from disease and have no beginning or end.

जो लोग उचित साधनों द्वारा प्राण और अन्य वायुओं की शांति की अवस्था प्राप्त करते हैं, वे योग योगी कहलाते हैं। वे रोगमुक्त होते हैं और उनका न आदि होता है न अंत।

6.69.20

उपादेयं तु सर्वेषां शान्तं पदमकृत्रिमम् । तत्केचित्संख्यया प्राप्ताः केचिद्योगेन देहतः ॥ २० ॥

upādeyaṃ tu sarveṣāṃ śāntaṃ padamakṛtrimam | tatkecit saṃkhyayā prāptāḥ kecidyogena dehataḥ || 20 ||

The peaceful, natural state is to be accepted by all. Some attain it through Sankhya, others through Yoga in the body.

शांत, स्वाभाविक अवस्था सभी के लिए स्वीकार्य है। कुछ लोग सांख्य से और कुछ लोग शरीर में योग से इसे प्राप्त करते हैं।

6.69.21

एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति। यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं परं योगैस्तदेव हि॥ २१॥

ekaṃ sāṃkhyam ca yogam ca yaḥ paśyati sa paśyati | yat sāṃkhyaiḥ prāpyate sthānaṃ paraṃ yogaiḥ tadeva hi || 21 ||

One who sees the unity of Sankhya and Yoga, sees the truth. The supreme state attained by Sankhya is the same as that attained by Yoga.

जो सांख्य और योग की एकता देखता है, वह सच्चाई को देखता है | सांख्य द्वारा प्राप्त होने वाला परम स्थान योग द्वारा भी वही है

6.69.22

यत्र प्राणमनोवृत्तिरत्यन्तं नोपलभ्यते। वासनावागुरोत्क्रान्ता तद्विद्धि परमं पदम्॥ २२॥

yatra prāṇamano vṛttir atyantaṃ nopalabhyate | vāsanāvāgurotkraṇtā tadviddhi paramaṃ padam || 22 ||

Where the activities of the life force and the mind cease completely, and where the impressions of desires are transcended, know that to be the supreme state.

जहाँ प्राण और मन की गतिविधियाँ पूर्ण रूप से समाप्त हो जाती हैं, और जहाँ इच्छाओं की संस्कार उत्क्रांत हो जाते हैं, उसे परम स्थान समझो।

6.69.23

वासनां चित्तमेवाहुः कारणं तद्धि संसृतेः। तदकारणतामेति विलीयोभयकर्मसु॥ २३॥

vāsanāṃ cittamevāhuḥ kāraṇaṃ taddhi saṃsṛteḥ | tadakāraṇatāmeti vilīyobhayakarmasu || 23 ||

The mind is said to be the cause of impressions, and that is the cause of transmigration. It attains causelessness when it dissolves in both actions.

मन को संस्कार का कारण कहा जाता है, और वह संसार का कारण है। वह निर्हेतुकता को प्राप्त होता है जब वह दोनों कर्मों में विलीन हो जाता है।

6.69.24

मनः पश्यति वै देहं बालो वेतालकं यथा। स्वात्मानं विलयं नीत्वा न भूयस्तं प्रपश्यति॥ २४॥

manaḥ paśyati vai dehaṃ bālo vetālakaṃ yathā | svātmānaṃ vilayaṃ nītvā na bhūyastam prapaśyati || 24 ||

The mind sees the body as a child sees a ghost. Having dissolved the self, it does not see it again.

मन देह को उसी तरह देखता है जैसे बच्चा भूत को देखता है। स्वयं को विलीन करने के बाद, वह उसे फिर नहीं देखता।

6.69.25

मनो मुधैवाभ्युदितमसदेवानवेक्षणात्। स्वप्ने स्वमरणाकारं प्रेक्ष्यमाणं न विद्यते॥ २५॥

mano mudhai vābhuditamasadevānavekṣaṇāt | svapne svamaraṇākāraṃ prekṣyamāṇaṃ na vidyate || 25 ||

The mind, being foolish and deluded, does not perceive the unreal due to lack of observation. In a dream, the form of one's own death is seen, but it does not exist.

मन, मूढ़ और भ्रांत होने के कारण, असत्य को अनदेखा करता है। स्वप्न में, अपने मृत्यु का रूप दिखाई देता है, लेकिन वह वास्तव में नहीं होता।

6.69.26

मनोभवस्तु संसारः क्व ममाहं क्व संततिः। उपदेश्योपदेशादिबन्धमोक्षौ च तत्कुतः॥ २६॥

manobhavastu saṃsāraḥ kva mamāhaṃ kva saṃtatiḥ | upadeśyopadeśādibandhamokṣau ca tatkutaḥ || 26 ||

The world is indeed a creation of the mind | Where is my ego, where is my progeny? | From where do the bonds and liberation through teachings and instructions arise?

यह संसार मन की ही सृष्टि है | मेरा अहंकार कहाँ है, मेरी संतान कहाँ है? | उपदेश और शिक्षा से बंधन और मुक्ति कहाँ से आती है?

6.69.27

एकतत्त्वघनाभ्यासः प्राणानां विलयस्तथा। मनोविनिग्रहश्चेति मोक्षशब्दार्थसंग्रहः ॥ २७ ॥

ekatattvaghanābhyāsaḥ prāṇānāṃ vilayastathā | manovinigrahaśceti mokṣaśabdārthasaṃgrahaḥ || 27 ||

The practice of the dense truth of oneness, the dissolution of the life-breaths, and the restraint of the mind—this is the essence of the meaning of the word liberation.

एकता के घनीभूत सत्य का अभ्यास, प्राणों का विलय और मन का निग्रह—यही मुक्ति शब्द के अर्थ का सार है।

6.69.28

श्रीराम उवाच। यदि हि प्राणविलयो मुने मोक्षस्य कारणम्। मृता एव विमुच्यन्ते तन्मन्ये सर्वजन्तवः ॥ २८ ॥

śrīrāma uvāca | yadi hi prāṇavilayo mune mokṣasya kāraṇam | mṛtā eva vimucyante tanmanye sarvajantavaḥ || 28 ||

Sri Rama said: If indeed the dissolution of the life-breaths is the cause of liberation, O sage, then I think all beings are liberated upon death.

श्री राम ने कहा: यदि प्राणों का विलय ही मुक्ति का कारण है, हे मुनि, तो मैं समझता हूँ कि सभी जीव मरने पर मुक्त हो जाते हैं।

6.69.29

श्रीवसिष्ठ उवाच। त्रिष्वेतेषु प्रयोगेषु मनःप्रशमनं वरम्। साध्यं विद्धि तदेवाशु यथा भवति तच्छिवम् ॥ २९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | triṣvetēṣu prayōgēṣu manaḥpraśamanaṃ varam | sādhyam viddhi tadēvāśu yathā bhavati tacchivam || 29 ||

Vasistha said: Among these three practices, the calming of the mind is the best. Know that to be the immediate goal, for it leads to the highest good.

वसिष्ठ ने कहा: इन तीनों अभ्यासों में, मन का शांत करना सबसे उत्तम है। उसे तुरंत लक्ष्य समझो, क्योंकि वह परम कल्याण की ओर ले जाता है।

6.69.30

यदा निर्वाणनं प्राणास्त्यजन्तीदं शरीरकम्। तदानुभूय तन्मात्रैर्यान्ति व्योमनि संगमम् ॥ ३० ॥

yadā nirvāṇanaṃ prāṇāstyajantīdaṃ śarīrakam | tadānubhūya tanmātrairyānti vyomani saṃgamam || 30 ||

When the life-breaths abandon this body and experience their subtle elements, they merge into the sky.

जब प्राण इस शरीर को छोड़ देते हैं और अपने सूक्ष्म तत्वों का अनुभव करते हैं, तब वे आकाश में विलीन हो जाते हैं।

6.69.31

वासनासात्मकान्येव विद्धि तन्मात्रकाणि वै। तदात्मकैर्मनोवद्भिः प्राणैः श्लिष्यन्ति नेतरैः ॥ ३१ ॥

vāsanāsātmakānyeva vidhi tanmātrakāṇi vai | tadātmakairmanovadbhiḥ prāṇaiḥ śliṣyanti netaraiḥ || 31 ||

Know that the subtle elements are indeed of the nature of desires | They are connected with the pranas that are of the nature of the mind, not with others

जान लो कि सूक्ष्म तत्व वासनाओं के स्वभाव के हैं | वे मन के स्वभाव वाले प्राणों से जुड़े हैं, दूसरों से नहीं

6.69.32

सवासनास्तूत्पद्यन्ते प्राणा मुञ्चन्ति देहकम्। तद्व्योमवायुसंश्लेषं यान्ति दुःखाय गन्धवत् ॥ ३२ ॥

savāsanāstūtpadyante prāṇā muñcanti dehakam | tadvyomavāyusaṃśleṣaṃ yānti duḥkhāya gandhavat || 32 ||

Those with desires arise | The pranas leave the body | They go to the union with the sky and air, like a smell, for suffering

वासनाओं वाले उत्पन्न होते हैं | प्राण शरीर को छोड़ देते हैं | वे आकाश और वायु के संयोग में जाते हैं, गंध की तरह, दुःख के लिए

6.69.33

मनः साम्बुरिवाम्भोधौ न शाम्यति सवासनम्। नामनस्काः संभवन्ति प्राणाः सूर्य इव त्विषः ॥ ३३ ॥

manaḥ sāmburivāmbhodhau na śāmyati savāsanam | nāmanaskāḥ saṃbhavanti prāṇāḥ sūrya iva tviṣaḥ || 33 ||

The mind does not find peace in the ocean of desires | The pranas do not arise without the mind, like the sun without light

मन वासनाओं के समुद्र में शांति नहीं पाता | प्राण मन के बिना उत्पन्न नहीं होते, जैसे सूर्य बिना प्रकाश के

6.69.34

न जहाति मनः प्राणान्विना ज्ञानेन कर्हिचित्। तृणान्तरेणैव विना तृणाङ्गमिव तित्तिरिः ॥ ३४ ॥

na jahāti manaḥ prāṇānvinā jñānena karhicit | tṛṇāntareṇaiva vinā tṛṇāṅgamiva tittiriḥ || 34 ||

The mind does not abandon the pranas without knowledge at any time | Like a partridge without grass

मन कभी भी ज्ञान के बिना प्राणों को नहीं छोड़ता | जैसे तित्तिरि पक्षी घास के बिना

6.69.35

ज्ञानादवासनीभावं स्वनाशं प्राप्नुयान्मनः। प्राणात्स्पदं च नादत्ते ततः शान्तिर्हि शिष्यते ॥ ३५ ॥

jñānādavāsanībhāvaṃ svanāśaṃ prāpnuyānmanaḥ | prāṇātspadaṃ ca nādatte tataḥ śāntirhi śiṣyate || 35 ||

Through knowledge, the mind attains the state of being without desires and its own destruction | It does not take the position of the pranas, hence peace is left

ज्ञान से, मन वासनारहित अवस्था और अपने विनाश को प्राप्त करता है | वह प्राणों की स्थिति नहीं लेता, इसलिए शांति बची रहती है

6.69.36

ज्ञानात्सर्वपदार्थानामसत्त्वं समुदेत्यलम्ततोऽङ्ग वासनानाशाद्वियोगः प्राणचेतसोः ॥ ३६ ॥

jñānātsarvapadārthānāmasattvaṃ samudetyalamtato'ṅga vāsanānāśādviyogaḥ prāṇacetasoḥ || 36 ||

From knowledge, the unreality of all objects arises, and then from the destruction of latent impressions, there is a separation of the vital breath and the mind.

ज्ञान से सभी वस्तुओं की असत्यता उत्पन्न होती है, और तब संस्कारों के नाश से प्राण और मन का वियोग होता है।

6.69.37

ततो न पश्यति मनः प्रशान्तं देहतां पुनःस्वनाशेन पदं प्राप्तं वासनैव मनो विदुः ॥ ३७ ॥

tato na paśyati manaḥ praśāntaṃ dehatāṃ punaḥsvanāśena padaṃ prāptaṃ vāsanaiva mano viduḥ || 37 ||

Then the mind does not see the peaceful state of the body, and by its own destruction, it attains the state, and the mind is known only by its impressions.

तब मन शांत शरीर की अवस्था नहीं देखता, और अपने नाश से अवस्था प्राप्त होता है, और मन केवल अपने संस्कारों से जाना जाता है।

6.69.38

चेतो हि वासनामात्रं तदभावे परं पदम्तत्त्वं संपद्यते ज्ञानं ज्ञानमाहुर्विचारणम्॥ ३८ ॥

ceto hi vāsanāmātraṃ tadabhāve paraṃ padamtattvaṃ saṃpadyate jñānaṃ jñānamāhurvicāraṇam || 38 ||

The mind is indeed only impressions, and in their absence, the supreme state is attained, and the truth is realized through knowledge, and knowledge is said to be inquiry.

मन वास्तव में केवल संस्कार है, और उनके अभाव में परम अवस्था प्राप्त होती है, और ज्ञान से सत्य का बोध होता है, और ज्ञान को विचारण कहा जाता है।

6.69.39

इत्यस्याः संसृते राम पर्यन्तः संप्रवर्ततेस्वयं विवेकमात्रेण रज्जुसर्पभ्रमाकृतेः ॥ ३९ ॥

ityasyāḥ saṃsṛte rāma paryantaḥ saṃpravartatesvayaṃ vivekamātreṇa rajjusarpabhramākṛteḥ || 39 ||

Thus, O Rama, this cycle of transmigration extends to its end, by itself, through mere discrimination, like the illusion of a snake in a rope.

इस प्रकार, हे राम, यह पुनर्जन्म का चक्र अपने अंत तक फैलता है, केवल विवेक से, जैसे रस्सी में सांप का भ्रम।

6.69.40

एकार्थाभ्यासनप्राणरोधचेतःपरिक्षयाःएकस्मिन्नेव संसिद्धे संसिद्ध्यन्ति परस्परम् ॥ ४० ॥

ekārthābhyasanaprāṇarodhacetaḥparikṣayāḥekasminneva saṃsiddhe saṃsiddhyanti parasparam || 40 ||

Through the practice of single-pointed focus, control of the breath, and the exhaustion of the mind, one attains perfection in one, and thereby all attain perfection together.

एकाग्रता के अभ्यास, प्राण की नियंत्रण और मन की थकान से, एक में संपूर्णता प्राप्त होती है, और उससे सभी एक दूसरे से संपूर्णता प्राप्त होते हैं।

6.69.41

तालवृन्तस्य संस्पन्दे शान्ते शान्तो यथानिलःप्राणानिलपरिस्पन्दे शान्ते शान्तं तथा मनः ॥ ४१ ॥

tālavṛntasya saṃspande śānte śānto yathānilaḥprāṇānilaparispande śānte śāntaṃ tathā manaḥ || 41 ||

Just as the wind becomes calm when the leaves of the palm tree are still, so does the mind become calm when the breath is still.

जैसे ताड़ के पत्ते शान्त होने पर हवा शान्त हो जाती है, वैसे ही प्राणवायु शान्त होने पर मन शान्त हो जाता है।

6.69.42

प्राणः शरीरविलये प्रयाति व्योमवायुताम्यथा वासितमेवेदं सर्वं पश्यति तत्र वा ॥ ४२ ॥

prāṇaḥ śarīravilaye prayāti vyomavāyutāmyathā vāsitamevedaṃ sarvaṃ paśyati tatra vā || 42 ||

When the body dissolves, the breath merges with the cosmic wind. Thus, the one who is established in this state sees everything as it is.

जब शरीर विलीन हो जाता है, तो प्राण ब्रह्मांडीय हवा में मिल जाता है। इस प्रकार, जो इस अवस्था में स्थित है, वह सब कुछ जैसा है वैसा ही देखता है।

6.69.43

यथा विदेहाः पश्यन्ति प्राणा व्योमनि देहकम्समनस्कास्तथाचारं सर्वं चानुभवन्ति ते ॥ ४३ ॥

yathā videhāḥ paśyanti prāṇā vyomani dehakamsamanaskāstathācāraṃ sarvaṃ cānubhavanti te || 43 ||

Just as the disembodied beings see the breaths in the sky, so do those who are without desires experience everything.

जैसे शरीररहित प्राणी आकाश में प्राणों को देखते हैं, वैसे ही जो इच्छारहित हैं, वे सब कुछ अनुभव करते हैं।

6.69.44

शान्ते वातपरिस्पन्दे यथा गन्धः प्रशाम्यतितथा शान्ते मनःस्पन्दे शाम्यन्ति प्राणवायवः ॥ ४४ ॥

śānte vātaparispande yathā gandhaḥ praśāmyatitathā śānte manaḥspande śāmyanti prāṇavāyavaḥ || 44 ||

Just as the fragrance subsides when the wind is still, so do the breaths become calm when the mind is still.

जैसे हवा शान्त होने पर सुगंध शान्त हो जाती है, वैसे ही मन शान्त होने पर प्राणवायु शान्त हो जाती है।

6.69.45

अविनाभाविनी नित्यं जन्तूनां प्राणचेतसीकुसुमामोदवन्मिश्रे तिलतैले इव स्थिते ॥ ४५ ॥

avinābhāvinī nityaṃ jantūnāṃ prāṇacetasīkusumāmodavanmiśre tilataile iva sthite || 45 ||

Always inseparable, the life force and consciousness of beings are established like the fragrance in the oil of sesame seeds.

हमेशा अविभाज्य, जीवों की प्राणशक्ति और चेतना तिल के तेल में सुगंध की तरह स्थित है।

6.69.46

मनसः स्पन्दनं प्राणः प्राणस्य स्पन्दनं मनः । एतौ विहरतो नित्यमन्योन्यं रथसारथी ॥ ४६ ॥

manasaḥ spandanaṃ prāṇaḥ prāṇasya spandanaṃ manaḥ | etau viharato nityamanyonyaṃ rathasārathī || 46 ||

The mind is the movement of the breath, and the breath is the movement of the mind. These two constantly move together like a chariot and its driver.

मन प्राण का स्पन्दन है, और प्राण मन का स्पन्दन है। ये दोनों एक-दूसरे के साथ निरंतर घूमते रहते हैं, जैसे रथ और सारथी।

6.69.47

आधाराधेयवच्चैतावेकाभावे विनश्यतः । कुरुतश्च स्वनाशेन कार्यं मोक्षाख्यमुत्तमम् ॥ ४७ ॥

ādhārādheyavaccaitāvekābhāve vinaśyataḥ | kurutaśca svanāśena kāryaṃ mokṣākhyamuttamam || 47 ||

Just as a support and the supported perish together, by destroying themselves, they accomplish the supreme task known as liberation.

जैसे आधार और आधेय एक साथ नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही स्वयं को नष्ट करके, वे मोक्ष नामक उत्तम कार्य को पूरा करते हैं।

6.69.48

एकतत्त्वघनाभ्यासाच्छान्तं शाम्यत्यलं मनः । तल्लीनत्वात्स्वभावस्य तेन प्राणोऽपि शाम्यति ॥ ४८ ॥

ekatattvaghanābhyāsācchāntaṃ śāmyatyalam manaḥ | tallīnatvātsvabhāvasya tena prāṇo'pi śāmyati || 48 ||

Through the practice of the dense reality of oneness, the mind becomes calm and peaceful. Due to the absorption of its nature, the breath also becomes calm.

एकता की घनी वास्तविकता के अभ्यास से मन शांत और शांत हो जाता है। अपने स्वभाव के लीन होने से, प्राण भी शांत हो जाता है।

6.69.49

विचार्य यदनन्तात्मतत्त्वं तन्मयतां नय । मनस्ततस्तल्लयेन तदेव भवति स्थिरम् ॥ ४९ ॥

vicārya yadanantātmatattvaṃ tanmayatāṃ naya | manastatastallayena tadeva bhavati sthiram || 49 ||

By contemplating the infinite nature of the self, lead the mind to that state. Then, through absorption in that state, the mind becomes stable.

अनंत आत्मा के तत्त्व का विचार करके, मन को उसी अवस्था में ले जाएँ। फिर, उस अवस्था में लीन होने से, मन स्थिर हो जाता है।

6.69.50

यदेवातितरां श्रेयोऽनुपलम्भोपलम्भयोः । द्वयोरप्यसतोस्तत्र शेषे वापि स्थिरो भव ॥ ५० ॥

yadevātitarāṃ śreyo'nupalambhopalambhayoḥ | dvayorapyasatos tatra śeṣe vāpi sthiro bhava || 50 ||

Whatever is the greatest good beyond perception and non-perception, remain steadfast in that, even if both are non-existent.

जो कुछ भी अनुभव और अननुभव से परे उत्तम है, उसमें स्थिर रहें, चाहे दोनों ही असत् हों।

6.69.51

एकस्मिन्सुदृढे तत्त्वे तावद्भावं विभावयेत्। भावोऽभावत्वमायाति स्वभ्यासाद्यावदाततम्॥ ५१॥

ekasminsudṛḍhe tattve tāvadbhāvaṃ vibhāvayet | bhāvo'bhāvatvamāyāti svabhyāsādyāvadātatam || 51 ||

One should meditate on the firm reality as long as it exists. Through constant practice, the existence transforms into non-existence.

एक सुदृढ तत्त्व पर तब तक ध्यान करें जब तक वह अस्तित्व में है | अभ्यास से अस्तित्व अनस्तित्व में परिवर्तित हो जाता है।

6.69.52

प्रत्याहारवतां चेतः स्वयं भोग्यक्षयादिव। विलीयते सह प्राणैः परमेवावशिष्यते॥ ५२॥

pratyāhāravatāṃ cetaḥ svayaṃ bhogyakṣayādiva | vilīyate saha prāṇaiḥ parameva śiṣyate || 52 ||

The mind of those who practice withdrawal becomes absorbed as if the enjoyment is exhausted. It dissolves along with the vital breaths, leaving only the supreme.

जिनका मन प्रत्याहार करता है, वह भोग के क्षय के समान विलीन हो जाता है | यह प्राणों के साथ विलीन हो जाता है और केवल परम ही शेष रहता है।

6.69.53

यदेकतानं भवति चेतस्तद्भवति क्षणात्। शान्ताशेषविशेषौघं चिराभ्यासस्वभावतः॥ ५३॥

yadekatānaṃ bhavati cetastadbhavati kṣaṇāt | śāntāśeṣaviśeṣaughaṃ cirābhyāsasvabhāvataḥ || 53 ||

When the mind becomes one-pointed, it immediately becomes calm and free from all distinctions due to the nature of long practice.

जब मन एकाग्र हो जाता है, तो वह तुरंत शांत और सभी भेदों से मुक्त हो जाता है, जो लंबे अभ्यास के स्वभाव से होता है।

6.69.54

अविद्येयं तु नास्तीति बुद्ध्वा युक्तियुतं धिया। ज्ञानादेव परावाप्तिस्तदभ्यासस्ततः परम्॥ ५४॥

avidyeyaṃ tu nāstīti buddhvā yuktiyutaṃ dhiyā | jñānādeva parāvāptistadabhyāsastataḥ param || 54 ||

Realizing with logical reasoning that this ignorance does not exist, the highest attainment comes from knowledge itself, and then the practice of that knowledge.

युक्तियुक्त बुद्धि से यह जानकर कि यह अज्ञान नहीं है, ज्ञान से ही परम प्राप्ति होती है, और फिर उस ज्ञान का अभ्यास।

6.69.55

चित्ते शान्ते शाम्यतीयं संसारमृगतृष्णिका। जरामुपगते मेघे मिहिका तन्मयी यथा॥ ५५॥

citte śānte śāmyatīyaṃ saṃsāramṛgatṛṣṇikā | jarāmupagate megha mi hikā tanmayī yathā || 55 ||

When the mind is calm, the thirst for worldly desires subsides, just as a female deer's thirst subsides when it sees a mirage as water.

जब मन शांत होता है, तो संसार की तृष्णा शांत हो जाती है, जैसे मृग की तृष्णा मेघ को जल समझकर शांत हो जाती है।

6.69.56

चित्तमात्रमविद्येति कुरु तेनैव तत्क्षयम्। तद्रूपं राम चित्तात्मा नाभावो हि परं पदम्॥ ५६॥

cittamātramavidyeti kuru tenaiva tatkṣayam | tadrūpaṃ rāma cittātmā nābhāvo hi paraṃ padam || 56 ||

The mind alone is ignorance; destroy it by the mind itself. That form, O Rama, is the self of the mind; there is no absence, indeed, of the supreme state.

मन ही अज्ञान है; मन से ही उसे नष्ट करो। वह रूप, हे राम, मन का आत्मा है; वास्तव में, परम पद का अभाव नहीं है।

6.69.57

मुहूर्तमेव निर्वाणं यदि चेतः परे पदे । तत्तत्परिणतं विद्धि तत्रैवास्वादमागतम् ॥ ५७ ॥

muhūrtameva nirvāṇaṃ yadi cetaḥ pare pade | tattatpariṇataṃ viddhi tatraivāsvādamāgatam || 57 ||

If the mind attains liberation even for a moment in the supreme state, know that it has reached the highest perfection and enjoys bliss there.

यदि मन परम पद में एक क्षण के लिए भी मुक्ति प्राप्त करता है, तो जान लो कि वह उच्चतम पूर्णता प्राप्त कर चुका है और वहाँ आनंद का अनुभव करता है।

6.69.58

यदि सांख्येन विश्रान्तं चेतो योगेन वापि ते । क्षणं तत्सत्त्वतां यातं न भूय इह जायते ॥ ५८ ॥

yadi sāṃkhyena viśrāntaṃ ceto yogena vāpi te | kṣaṇaṃ tatsattvatāṃ yātaṃ na bhūya iha jāyate || 58 ||

If the mind finds rest through Sankhya or Yoga, even for a moment, it attains true existence and is not born again in this world.

यदि मन सांख्य या योग द्वारा विश्राम पाता है, तो एक क्षण के लिए भी वह सत्त्वता प्राप्त करता है और इस संसार में फिर से जन्म नहीं लेता।

6.69.59

चेतो विगलिताविद्यं सत्त्वशब्देन कथ्यते । दग्धसंसारबीजं तन्न ददात्यन्तरं पुनः ॥ ५९ ॥

ceto vigalitāvidyaṃ sattvaśabdena kathyate | dagdhasaṃsārabījaṃ tannadadātyantaraṃ punaḥ || 59 ||

The mind that is free from ignorance is called by the term 'sattva'. That which has burned the seed of worldly existence does not give rise to it again.

जो मन अज्ञान से मुक्त है, उसे 'सत्त्व' शब्द से कहा जाता है। जो संसार के बीज को जला देता है, वह फिर से उसे उत्पन्न नहीं करता।

6.69.60

कश्चिद्विगलिताविद्यः सत्त्वस्थः शान्तवासनः । परं शून्योपमं सद्यो ज्योतिः पश्यति शाम्यति ॥ ६० ॥

kaścidvigalitāvidyaḥ sattvasthaḥ śāntavāsanaḥ | paraṃ śūnyopamaṃ sadyo jyotiḥ paśyati śāmyati || 60 ||

Someone who is free from ignorance, established in sattva, with peaceful tendencies, sees the supreme light, which is like emptiness, immediately and becomes calm.

जो अज्ञान से मुक्त है, सत्त्व में स्थित है, शांत वासनाओं वाला है, वह परम प्रकाश को देखता है, जो शून्य के समान है, तुरंत और शांत हो जाता है।

6.69.61

विगलितात्मपदं विगलन्मनः सुभग सत्त्वमितीह हि कथ्यते । न पुनरेति कलामलिनं पदं कनकतामिव ताम्रमुपागतम् ॥ ६१ ॥

vigalitātmapadaṃ vigalanmanaḥ subhaga sattvamitīha hi kathyate | na punareti kalāmalinaṃ padaṃ kanakatāmiva tāmramupāgatam || 61 ||

The state of a dissolved self and a dissolving mind is indeed considered auspicious and pure here. Just as copper, upon attaining the state of gold, does not return to its impure state.

यहाँ विलीन आत्मा और विलीन होता मन सुंदर और शुद्ध माना जाता है। जैसे तांबा सोने की अवस्था को प्राप्त करने के बाद अपनी अशुद्ध अवस्था में वापस नहीं आता।

Chapter 70

6.70.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । जीवोऽजीवो भवत्याशु याति चित्तमचित्तताम् । विचारादित्यविद्यान्तो मोक्ष इत्यभिधीयते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jīvo'jīvo bhavatyāśu yāti cittamacittatām | vicārādityavidyānto mokṣa ityabhidhīyate || 1 ||

Sri Vasistha said: The living being quickly becomes non-living, and the mind attains the state of no-mind through inquiry from ignorance to knowledge; this is called liberation.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जीव शीघ्र ही अजीव हो जाता है, और मन अमन की अवस्था को प्राप्त होता है विचार से अज्ञान से ज्ञान तक; यह मोक्ष कहलाता है।

6.70.2

मृगतृष्णाजलमिव मनोऽहंतादि दृश्यते । असदेव मनागेव तद्विचारात्प्रलीयते ॥ २ ॥

mṛgatṛṣṇājalamiva mano'haṃtādi dṛśyate | asadeva manāgeva tadvicārātpralīyate || 2 ||

Like the mirage water, the ego and other such things are seen; they are indeed unreal and disappear merely by inquiry.

मृगतृष्णा जल की तरह, अहंकार और अन्य ऐसी चीजें दिखाई देती हैं; वे वास्तव में असत्य हैं और केवल विचार से ही विलीन हो जाती हैं।

6.70.3

संसृतिस्वप्नविभ्रान्तौ वेतालोदाहृतानिमान् । प्रश्नानाकर्णय शुभान्प्रसङ्गात्स्मृतिमागतान् ॥ ३ ॥

saṃsṛtisvapnavibhrāntau vetālodāhṛtānimān | praśnānākarṇaya śubhānprasaṅgātsmṛtimāgatān || 3 ||

In the delusion of the dream of worldly existence, these questions were heard from the Vetala, which came to memory due to association.

संसार के स्वप्न की भ्रांति में, ये प्रश्न वेताल से सुने गए, जो संबंध के कारण स्मृति में आए।

6.70.4

अस्ति विन्ध्यमहाटव्यां वेतालो विपुलाकृतिः । स किंचिन्मण्डलं गर्वादाजगाम जिघांसया ॥ ४ ॥

asti vindhyamahāṭavyāṃ vetālo vipulākṛtiḥ | sa kiṃcinmaṇḍalaṃ garvādājagāma jighāṃsayā || 4 ||

There is a Vetala of immense form in the great forest of Vindhya. He came to a certain place out of pride, with the intention to kill.

विंध्य के महान वन में एक विशाल आकार वाला वेताल है। वह गर्व से किसी स्थान पर आया, मारने के इरादे से।

6.70.5

स वेतालोऽवसत्पूर्वं कस्मिंश्चित्सज्जनास्पदे । बहुबल्युपहारेण नित्यतृप्ततया सुखी ॥ ५ ॥

sa vetālo'vasatpūrvaṃ kasmiṃścit sajjanaāspade | bahubalyupahāreṇa nityatṛptatayā sukhī || 5 ||

That Vetala previously resided in a certain abode of good people, happy with the constant satisfaction of many powerful offerings.

वह वेताल पहले किसी सज्जनों के आश्रय में रहता था, बहुत से शक्तिशाली उपहारों से निरंतर संतुष्ट होकर सुखी।

6.70.6

निर्निमित्तं निरागस्कं पुरोऽप्यभ्यागतं न सः । क्षुधितोऽपि नरं हन्ति सन्तो हि न्यायदर्शकाः ॥ ६ ॥

nirnimittaṃ nirāgaskaṃ puro'pyabhyāgataṃ na saḥ | kṣudhito'pi naraṃ hanti santo hi nyāyadarśakāḥ || 6 ||

Without any reason or desire, even if he comes in front, he does not kill a man. The virtuous indeed show the path of justice.

बिना किसी कारण या इच्छा के, भले ही वह सामने आ जाए, वह मनुष्य को नहीं मारता। संत लोग ही न्याय का मार्ग दिखाते हैं।

6.70.7

स कालेनाटवीगेहो जगाम नगरान्तरम् । न्याययुक्त्या जनं भोक्तुं क्षुधा समभिचोदितः ॥ ७ ॥

sa kālenāṭavīgeho jagāma nagarāntaram | nyāyayuktyā janaṃ bhoktuṃ kṣudhā samabhicoditaḥ || 7 ||

That forest-dweller, driven by hunger, went to another city to eat people justly.

वह वनवासी, भूख से प्रेरित होकर, दूसरे शहर में गया ताकि न्यायपूर्वक लोगों को खा सके।

6.70.8

तत्र प्राप स भूपालं रात्रिचर्याविनिर्गतम् । तमाह घनघोरेण शब्देनोग्रनिशाचरः ॥ ८ ॥

tatra prāpa sa bhūpālaṃ rātricaryāvinirgatam | tamāha ghanaghorēṇa śabdenograniśācaraḥ || 8 ||

There he found the king who had gone out for a nightly stroll. The fierce night-wanderer addressed him with a deep, terrifying voice.

वहाँ उसने उस राजा को पाया जो रात्रि भ्रमण के लिए बाहर निकला था। भयंकर रात्रिचर ने उसे गहरे और भयानक स्वर में संबोधित किया।

6.70.9

वेताल उवाच । राजँल्लब्धोऽसि भीमेन वेतालेन मयाधुना । क्व गच्छसि विनष्टोऽसि भव भोजनमद्य मे ॥ ९ ॥

vetāla uvāca | rājaṃllabdho'si bhīmena vetālena mayādhunā | kva gacchasi vinaṣṭo'si bhava bhojanamadya me || 9 ||

The Vetala said: O King, you have been caught by the terrible Vetala, me. Where are you going? You are doomed. Become my food today.

वेताल ने कहा: हे राजा, तुम भयानक वेताल, मुझसे पकड़े गए हो। तुम कहाँ जा रहे हो? तुम नष्ट हो। आज मेरा भोजन बनो।

6.70.10

राजोवाच । हे रात्रिचर निर्न्याय्यं मां चेदत्सि बलादिह । तत्ते सहस्रधा मूर्धा स्फुटिष्यति न संशयः ॥ १० ॥

rājovāca | he rātricara nirnyāyyaṃ māṃ cedatsi balādiha | tatte sahasradhā mūrdhā sphuṭiṣyati na saṃśayaḥ || 10 ||

The king said: O night-wanderer, if you eat me unjustly by force here, then your head will surely burst into a thousand pieces without doubt.

राजा ने कहा: हे रात्रिचर, यदि तुम मुझे यहाँ बलपूर्वक अन्यायपूर्वक खाते हो, तो तुम्हारा सिर निश्चित रूप से हजार टुकड़ों में फट जाएगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

6.70.11

वेताल उवाच । न त्वामद्म्यहमन्यायं न्यायोऽयं हि मयोच्यते । राजासि सकलाशाश्च पूरणीयास्त्वयार्थिनाम् ॥ ११ ॥

vetāla uvāca | na tvāmadmyahamanyāyaṃ nyāyo'yaṃ hi mayocyate | rājāsi sakalāśāśca pūraṇīyāstvayārthināṃ || 11 ||

The Vetala said: I do not consider you unjust; this is indeed justice as stated by me. You are a king, and all desires of the needy should be fulfilled by you.

वेताल ने कहा: मैं आपको अन्यायी नहीं मानता, यह न्याय ही है जैसा मैंने कहा है | आप राजा हैं, और सभी निर्धनों की इच्छाएँ आपके द्वारा पूरी की जानी चाहिए।

6.70.12

ममैतामर्थितां राजन्संभवार्थां प्रपूरय । प्रश्नानिमान्मयोक्तांस्त्वं सम्यगाख्यातुमर्हसि ॥ १२ ॥

mamaitāmarthitāṃ rājansaṃbhavārthāṃ prapūraya | praśnānimānmayoktāṃstvaṃ samyagākhyātumarhasi || 12 ||

O King, fulfill this request of mine which is for a purpose. You should rightly explain these questions that I have asked.

हे राजा, मेरी इस माँग को पूरा करो जो एक उद्देश्य के लिए है। आपको इन प्रश्नों का उत्तर देना चाहिए जो मैंने पूछे हैं।

6.70.13

कस्य सूर्यस्य रश्मीनां ब्रह्माण्डान्यणवः कृशाः । कस्मिन्स्फुरन्ति पवने महागगनरेणवः ॥ १३ ॥

kasya sūryasya raśmīnāṃ brahmāṇḍānyaṇavaḥ kṛśāḥ | kasmin sphuranti pavane mahāgagana reṇavaḥ || 13 ||

In whose sun's rays are the tiny universes thin? In which wind do the particles of the great sky tremble?

किसके सूर्य की किरणों में छोटे ब्रह्मांड पतले हैं? किस हवा में महान आकाश के कण काँपते हैं?

6.70.14

स्वप्नात्स्वप्नान्तरं गच्छञ्छतशोऽथ सहस्रशः । त्यजन्न त्यजति स्वच्छं कः स्वरूपं प्रभास्वरम् ॥ १४ ॥

svapnātsvapnāntaraṃ gacchañchatśo'tha sahasraśaḥ | tyajann na tyajati svacchaṃ kaḥ svarūpaṃ prabhāsvaraṃ || 14 ||

Who, while moving from one dream to another, hundreds and thousands of times, does not leave his own pure, luminous nature?

कौन, एक सपने से दूसरे सपने में जाते हुए, सैकड़ों और हजारों बार, अपने शुद्ध, प्रकाशमान स्वरूप को नहीं छोड़ता?

6.70.15

रम्भास्तम्भो यथा पत्रमात्रमेवं पुनःपुनः । अन्तरन्तस्तथान्तश्च तथा कोऽणुः स एव हि ॥ १५ ॥

rambhāstambho yathā patramātramevaṃ punaḥpunaḥ | antarantastathāntaśca tathā ko'ṇuḥ sa eva hi || 15 ||

Just as a plantain trunk is only a leaf, so too, repeatedly, the inner and the outer are the same. Who is that minute one?

जैसे केले का तना सिर्फ एक पत्ता होता है, वैसे ही, बार-बार, अंदर और बाहर एक ही हैं। वह सूक्ष्म कौन है?

6.70.17

कस्यानवयवस्यैव परमाणुमहागिरेःशिलान्तर्निविडैकान्तरूपमज्जा जगत्त्रयी ॥ १७ ॥

kasyānavayavasyaiva paramāṇumahāgireḥśilāntarniviḍaikāntarūpamajjā jagattrayī || 17 ||

Whose subtle particle is the great mountain, the inner essence of the stone, the unique form within the crevice? The three worlds are permeated by it.

किसका सूक्ष्म कण है वह महान पर्वत, पत्थर का अंतर्निहित सार, दरार के अंदर का अद्वितीय रूप? तीनों लोक इससे व्याप्त हैं।

6.70.18

इति कथयसि चेन्न मे दुरात्मंस्तदिह निगीर्य भवन्तमात्मघातिन्फलमिव तव मण्डलं ग्रसेयं प्रसभमुपेत्य जगद्यथा कृतान्तः ॥ १८ ॥

iti kathayasi cenna me durātmaṃstadiha nigīrya bhavantamātmaghātinphalamiva tava maṇḍalaṃ graseyaṃ prasabhamupetya jagadyathā kṛtāntaḥ || 18 ||

If you speak thus, O wicked one, I will seize you here and now, as if you were the fruit of self-destruction. I will devour your realm, approaching forcefully, as the world ends.

यदि तुम ऐसा कहते हो, हे दुष्ट, तो मैं तुम्हें यहीं और अभी पकड़ लूँगा, मानो तुम आत्मघात का फल हो। मैं बलपूर्वक आकर तुम्हारे मण्डल को निगल जाऊँगा, जैसे संसार का अंत हो रहा हो।

Chapter 71

6.71.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्तवति वेताले वक्तुं प्रश्नान्विहस्य सः । उवाच वचनं राजा दन्तांशुधवलाम्बरः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktavati vetāle vaktuṃ praśnānvihasya saḥ | uvāca vacanaṃ rājā dantāṃśudhavalāmbaraḥ || 1 ||

Shri Vasishtha said: After the Vetala had spoken thus, the king, laughing at the questions, spoke these words, clad in a garment as white as the rays of the moon.

श्री वसिष्ठ ने कहा: वेताल ने ऐसा कहा तो, राजा ने प्रश्नों पर हँसते हुए कहा, जो चाँद की किरणों जैसे सफेद वस्त्र पहने हुए थे।

6.71.2

राजोवाच । आस्ते कदाचिच्चेदं हि ब्रह्माण्डमजरं फलम् । उत्तरोत्तरं दशगुणभूतत्वक्परिवेष्टितम् ॥ २ ॥

rājovāca | āste kadāciccedaṃ hi brahmāṇḍamajaraṃ phalaṃ | uttarottaraṃ daśaguṇabhūtatvakparivesṭitam || 2 ||

The king said: Sometimes this imperishable Brahmanda fruit exists, enveloped by tenfold elemental coverings, one after another.

राजा ने कहा: कभी-कभी यह अविनाशी ब्रह्माण्ड फल होता है, जो एक के बाद एक दस गुना तत्व आवरणों से घिरा हुआ है।

6.71.3

तादृशानां सहस्राणि फलानि यत्र सन्ति हि । अत्युच्चैस्तादृशी शाखा विपुला चलपल्लवा ॥ ३ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi phalāni yatra santi hi | atyuccaitādṛśī śākhā vipulā calapallavā || 3 ||

Thousands of such fruits exist there, and there is a very tall branch, vast and with swaying leaves.

वहाँ हजारों ऐसे फल हैं, और वहाँ एक बहुत ऊँची शाखा है, जो विशाल और हिलते पत्तों वाली है।

6.71.4

तादृशानां सहस्राणि शाखानां यत्र सन्त्यथ । तादृशोऽस्ति महावृक्षो दुर्लक्ष्यो विपुलाकृतिः ॥ ४ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi śākhānāṃ yatra santyatha | tādṛśo'sti mahāvṛkṣo durlakṣyo vipulākṛtiḥ || 4 ||

Thousands of such branches exist there, and there is a great tree, difficult to see, with a vast form.

वहाँ हजारों ऐसी शाखाएँ हैं, और वहाँ एक महान वृक्ष है, जो देखने में कठिन और विशाल आकार वाला है।

6.71.5

तादृशानां सहस्राणि यत्र सन्ति महीरुहाम् । तादृशं वनमत्युच्चैरनन्ततरुगुल्मकम् ॥ ५ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi yatra santi mahīruhām | tādṛśaṃ vanamatyuccairanantatarugulmakam || 5 ||

Thousands of such trees exist there, and there is a forest, very tall and filled with endless trees and shrubs.

वहाँ हजारों ऐसे वृक्ष हैं, और वहाँ एक वन है, जो बहुत ऊँचा और अनंत वृक्षों और झाड़ियों से भरा हुआ है।

6.71.6

तादृशानां सहस्राणि वनानां यत्र सन्त्यथ तादृगस्ति वृहच्छृङ्गमत्युच्चैर्भरिताकृति ॥ ६ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi vanānāṃ yatra santyatha tādṛgasti vṛhacchṛṅgamatyuccairbharitākṛti || 6 ||

There are thousands of such forests, and there is a mountain with a very high peak.

इस तरह के हजारों वन हैं, और वहाँ एक बहुत ऊँचा पर्वत है।

6.71.7

ताद्दशानां सहस्राणि श्रृङ्गाणां यत्र सन्त्यथ ताद्दशोऽस्त्यतिविस्तीर्णो देशो विपुलकोटरः ॥ ७ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi śṛṅgāṇāṃ yatra santyatha tādṛśo'styatividīrṇo deśo vipulakoṭaraḥ || 7 ||

There are thousands of such peaks, and there is a vast region with a wide expanse.

इस तरह के हजारों शिखर हैं, और वहाँ एक विशाल क्षेत्र है जिसका विस्तार बहुत चौड़ा है।

6.71.8

ताद्दशानां सहस्राणि देशानां यत्र सन्त्यथ ताद्दगस्ति वृहद्द्वीपं महाह्रदनदीयुतम् ॥ ८ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi deśānāṃ yatra santyatha tādṛgasti vṛhaddvīpaṃ mahāhradanadīyutam || 8 ||

There are thousands of such regions, and there is a great continent with large lakes and rivers.

इस तरह के हजारों क्षेत्र हैं, और वहाँ एक महान महाद्वीप है जिसमें बड़े झील और नदियाँ हैं।

6.71.9

ताद्दशानां सहस्राणि द्वीपानां यत्र सन्त्यथ ताद्दगस्ति महीपीठं विचित्ररचनान्वितम् ॥ ९ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi dvīpānāṃ yatra santyatha tādṛgasti mahīpīṭhaṃ vicitraracanānvitam || 9 ||

There are thousands of such islands, and there is a great earth with intricate designs.

इस तरह के हजारों द्वीप हैं, और वहाँ एक महान पृथ्वी है जिसमें जटिल डिजाइन हैं।

6.71.10

ताद्दशानां सहस्राणि पृथ्वीनां यत्र सन्त्यथ ताद्दगस्ति महास्फारं महाभुवनडम्बरम् ॥ १० ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi pṛthvīnāṃ yatra santyatha tādṛgasti mahāsphāraṃ mahābhuvanaḍambaram || 10 ||

There are thousands of such earths, and there is a great cosmos with a vast expanse.

इस तरह की हजारों पृथ्वियाँ हैं, और वहाँ एक महान ब्रह्मांड है जिसका विस्तार बहुत बड़ा है।

6.71.11

ताद्दशानां सहस्त्राणि जगतां यत्र सन्त्यथ ताद्दगस्ति महच्चाण्डं चण्डमम्बरपीठवत् ॥ ११ ॥

tādṛśānāṃ sahastrāṇi jagatāṃ yatra santyatha tādṛgasti mahaccāṇḍaṃ caṇḍamambarapīṭhavat || 11 ||

There are thousands of such worlds where there exists a great and fierce being like the sky.

वहाँ ऐसे हजारों जगत हैं जहाँ एक महान और भयानक प्राणी है जो आकाश के समान है।

6.71.12

ताद्दशानां सहस्राणि यत्राण्डानि करण्डकाः ताद्दशोऽस्ति गतस्पन्दो विपुलाब्धिश्च सागरः ॥ १२ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi yatrāṇḍāni karaṇḍakāḥ tādṛśo'sti gataspando vipulābdhiśca sāgaraḥ || 12 ||

There are thousands of such worlds where there are eggs and containers. There exists a motionless and vast ocean.

वहाँ ऐसे हजारों जगत हैं जहाँ अण्डे और करण्डक हैं। वहाँ एक निश्चल और विशाल सागर है।

6.71.13

ताद्दक्सागरलक्षाणि तरङ्गो यत्र पेलवः ताद्दशः स्वविलासात्मा निर्मलोऽस्ति महार्णवः ॥ १३ ॥

tādṛksāgaralakṣāṇi taraṅgo yatra pelavaḥ tādṛśaḥ svavilāsātmā nirmalo'sti mahārṇavaḥ || 13 ||

There are millions of such oceans where the waves are gentle. There exists a pure and vast ocean that is self-manifested.

वहाँ ऐसे करोड़ों सागर हैं जहाँ लहरें कोमल हैं। वहाँ एक शुद्ध और विशाल सागर है जो स्वयं प्रकट है।

6.71.14

तादृगब्धिसहस्राणि यस्योदरजलान्यथ तादृशोऽस्ति पुमान्कश्चिदत्युच्चैर्भरिताकृतिः ॥ १४ ॥

tādṛgabdhisahasrāṇi yasyodarajalānyatha tādṛśo'sti pumānkaścidatyuccairbharitākṛtiḥ || 14 ||

There are thousands of such oceans within his belly. There exists a man of immense stature who is filled with such qualities.

उसके पेट में ऐसे हजारों सागर हैं। वहाँ एक विशाल आकार वाला पुरुष है जो ऐसे गुणों से भरा हुआ है।

6.71.15

तादृशानां नृणां लक्षैर्यस्य मालोरसि स्थिता प्रधानं सर्वसत्तानां तादृशोऽस्ति परः पुमान् ॥ १५ ॥

tādṛśānāṃ nṛṇāṃ lakṣairyasya mālorasi sthitā pradhānaṃ sarvasattānāṃ tādṛśo'sti paraḥ pumān || 15 ||

There are millions of such men on his chest. He is the supreme being among all beings.

उसके वक्ष पर ऐसे लाखों पुरुष हैं। वह सभी प्राणियों में प्रधान है।

6.71.16

तादृशानां सहस्राणि पुरुषाणां महात्मनाम् । स्फुरन्ति मण्डले यस्य स्वतनूरुहजालवत् ॥ १६ ॥

tādṛśānāṃ sahasrāṇi puruṣāṇāṃ mahātmanām | sphuranti maṇḍale yasya svatanūruhajālavat || 16 ||

Thousands of such great souls shine in the circle of the one whose body is like a network of rays.

ऐसे हजारों महात्माओं के मण्डल में वह चमकता है जिसका शरीर किरणों के जाल की तरह है।

6.71.17

तादृशोऽस्ति महादित्यः शतमन्यासु दृष्टिषु । या एताः कलनाः सर्वास्ता एतास्तस्य दीप्तयः ॥ १७ ॥

tādṛśo'sti mahādityaḥ śatamanyāsu dṛṣṭiṣu | yā etāḥ kalanāḥ sarvāstā etāstasya dīptayaḥ || 17 ||

There is such a great sun, and in hundreds of other views, all these calculations are its radiances.

ऐसा एक महान सूर्य है, और सैकड़ों अन्य दृष्टिकोणों में, ये सभी गणनाएँ उसकी चमक हैं।

6.71.18

अस्यादित्यस्य दीप्तीनां ब्रह्माण्डास्त्रसरेणवः । मया चित्सूर्य इत्युक्तः सर्वमेतत्तपत्यसौ ॥ १८ ॥

asyādityasya dīptīnāṃ brahmāṇḍāstrasareṇavaḥ | mayā citsūrya ityuktaḥ sarvametattapatyasau || 18 ||

The radiances of this sun are the trembling drops of the universe. I have called it the conscious sun; all this shines because of it.

इस सूर्य की चमक ब्रह्मांड की काँपती बूँदें हैं। मैंने इसे चेतन सूर्य कहा है; यह सब इसके कारण चमकता है।

6.71.19

विज्ञानात्मैव परमो भास्करो भावितaशयः । इमे ये भुवनाभोगास्तस्यैव त्रसरेणवः ॥ १९ ॥

vijñānātmaiva paramo bhāskaro bhāvitāśayaḥ | ime ye bhuvanābhogāstasyaiva trasareṇavaḥ || 19 ||

The supreme sun is the self of consciousness, with a purified mind. These worldly enjoyments are its trembling drops.

परम सूर्य चेतना का स्वयं है, जिसका मन शुद्ध है। ये सांसारिक भोग उसकी काँपती बूँदें हैं।

6.71.20

विज्ञानपरमार्कस्य भासा भान्ति भवन्ति च । इमा जगदहर्लक्ष्म्यः क्वचिल्लक्ष्म्यो रवेरिव ॥ २० ॥

vijñānaparamārkasya bhāsā bhānti bhavanti ca | imā jagadaharlakṣmyaḥ kvacillakṣmyo raveriva || 20 ||

The radiances of the supreme sun of consciousness shine and manifest. These worldly splendors are sometimes like the splendors of the sun.

चेतना के परम सूर्य की चमक चमकती है और प्रकट होती है। ये सांसारिक शोभाएँ कभी-कभी सूर्य की शोभा की तरह होती हैं।

6.71.21

विज्ञानमात्रकचितात्मनि जन्तुजाते त्रैलोक्यमण्डपमणेरविकासभाजि । चिज्जन्मनोर्भवनसंभ्रमतावलेखाः सन्तीह रे न हि मनागपि शान्तमास्स्व ॥ २१ ॥

vijñānamātrakacitātmani jantujāte trailokyamaṇḍapamaṇeravikāsabhāji |
cijjanmanorbhavanasambhramatāvalekhāḥ santīha re na hi manāgapi śāntamāssva || 21 ||

In the living beings whose essence is pure consciousness, the manifestation of the universe is merely an illusion. The lines of confusion between the birth of consciousness and the worldly existence are present here, O friend, and there is no peace even for a moment.

जीवों में जिनका स्वरूप शुद्ध चेतना है, ब्रह्मांड का विकास केवल एक भ्रम है। चेतना के जन्म और संसारिक अस्तित्व के बीच भ्रम की रेखाएँ यहाँ मौजूद हैं, हे मित्र, और एक पल के लिए भी शांति नहीं है।

Chapter 72

6.72.1

राजोवाच । कालसत्ता नभःसत्ता स्पन्दसत्ता च चिन्मयी । शुद्धचेतनसत्ता च सर्वमित्यादि पावनम् ॥ १ ॥

rājovāca | kālasattā nabhaḥsattā spandasattā ca cinmayī | śuddhacetanasattā ca sarvamityādi pāvanam || 1 ||

The king said: The essence of time, the essence of the sky, the essence of vibration, and the essence of pure consciousness—all these are purifying.

राजा ने कहा: काल की सत्ता, आकाश की सत्ता, स्पन्दन की सत्ता और चिन्मयी सत्ता—ये सब पवित्र हैं।

6.72.2

परमात्ममहावायौ रजः स्फुरति चञ्चलम् । कुसुमाङ्ग इवामोदस्तदतद्रूपकं स्वतः ॥ २ ॥

paramātmamahāvāyau rajaḥ sphurati cañcalam | kusumāṅga ivāmodastadatadrūpakaṃ svataḥ || 2 ||

In the great wind of the Supreme Self, the restless dust sparkles. Like the fragrance of a flower, it takes various forms spontaneously.

परमात्मा की महान हवा में, चंचल धूल चमकती है। फूल की सुगंध की तरह, यह स्वतः ही विभिन्न रूप धारण करती है।

6.72.3

जगदाख्ये महास्वप्ने स्वप्नात्स्वप्नान्तरं व्रजत् । रूपं त्यजति नो शान्तं ब्रह्मशान्तत्वबृंहणम् ॥ ३ ॥

jagadākhye mahāsvapne svapnātsvapnāntaraṃ vrajat | rūpaṃ tyajati no śāntaṃ brahmaśāntatvabṛṃhaṇam || 3 ||

In the great dream called the universe, one dream leads to another. It does not abandon form but leads to the peaceful expansion of Brahman.

ब्रह्मांड कहलाने वाले महान स्वप्न में, एक स्वप्न दूसरे स्वप्न में बदल जाता है। यह रूप को नहीं छोड़ता बल्कि ब्रह्म के शांत विस्तार की ओर ले जाता है।

6.72.4

रम्भास्तम्भो यथा पत्रमात्रमेवान्तरान्तरम् । अन्तरन्तस्तथेदं हि विश्वं ब्रह्म विवर्त्यपि ॥ ४ ॥

rambhāstambho yathā patramātramevāntarāntaram | antarantras tathedaṃ hi viśvaṃ brahma vivartyapi || 4 ||

Just as a banana plant is only leaves within leaves, so too this entire universe, though appearing as a transformation, is Brahman.

जैसे केले का पौधा केवल पत्तों का पत्ता होता है, वैसे ही यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड, परिवर्तन के रूप में दिखने के बावजूद, ब्रह्म है।

6.72.5

सद्ब्रह्मात्मादिभिः शब्दैर्यदेताभिर्विगीयते । शून्यमव्यपदेशं ते न तत्किंचिच्च किंचन ॥ ५ ॥

sadbrahmātmādibhiḥ śabdair yadetābhir vigīyate | śūnyam avyapadeśaṃ te na tat kiñcic ca kiñcana || 5 ||

That which is described by words such as 'Sat', 'Brahman', 'Atman', etc., is devoid of description. It is nothing, not even a little bit.

जो 'सत', 'ब्रह्म', 'आत्मा' आदि शब्दों द्वारा वर्णित किया जाता है, वह वर्णन से रहित है। वह कुछ नहीं है, छोटा सा भी नहीं।

6.72.6

या या विभाव्यते सत्ता सा सानुभवनिर्मितान्। रम्भास्तम्भवदेतावच्चिन्मात्रममलं ततम्॥ ६॥

yā yā vibhāvyate sattā sā sānubhavanirmitān | rambhāstambhavadetāvaccinmātramamalaṃ tatam || 6 ||

Whatever is conceived as existence, that is created by experience | Like the illusion of a pillar, it is pure consciousness, stainless and pervasive

जो जो अस्तित्व के रूप में सोचा जाता है, वह अनुभव से बना है | जैसे खंभे का भ्रम, यह शुद्ध चेतना, निर्मल और व्यापक है

6.72.7

सूक्ष्मत्वादप्यलभ्यत्वात्परमात्मा परोऽणुकः। अनन्तत्वादसावेव प्राप्तो मेर्वादिमूलताम्॥ ७॥

sūkṣmatvādapyalabhyatvātparamātmā paro'ṇukaḥ | anantatvādasāveva prāpto mervādimūlatām || 7 ||

Due to its subtlety and unattainability, the Supreme Self is the supreme atom | Due to its infiniteness, it has attained the primordial state like Mount Meru

अपनी सूक्ष्मता और अप्राप्यता के कारण, परमात्मा परम अणु है | अपनी अनंतता के कारण, यह मेरु पर्वत के समान आदिम अवस्था को प्राप्त हुआ है

6.72.8

अणोरप्यत्यनन्तस्य पुंसोऽस्य जगदाद्यपि। परमाणुवदाभाति प्रतीतत्वादरूपवत्॥ ८॥

aṇorapyatyānantasya puṃso'sya jagadādyapi | paramāṇuvadābhāti pratītatvādarūpavat || 8 ||

Even though the Supreme Self is infinitely small, it appears as the entire universe | It shines like the smallest particle, yet it is formless due to its perceived nature

यद्यपि परमात्मा अनंत रूप से सूक्ष्म है, फिर भी यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड के रूप में प्रकट होता है | यह सबसे छोटे कण की तरह चमकता है, लेकिन इसकी प्रतीति के कारण यह निराकार है

6.72.9

परोऽणुरेषोऽलभ्यत्वात्पूरकत्वान्महागिरिः। सर्वावयवरूपोऽपि निरस्तावयवः पुमान्॥ ९॥

paro'ṇureṣo'labyatvātpūrakatvānmahāgiriḥ | sarvāvayavarūpo'pi nirastāvayavaḥ pumān || 9 ||

This supreme atom is unattainable and all-pervading like a great mountain | Although it has all parts, it is without parts, a supreme being

यह परम अणु अप्राप्य और सर्वव्यापी है जैसे एक महान पर्वत | यद्यपि इसमें सभी अंग हैं, फिर भी यह अंगहीन है, एक परम पुरुष

6.72.10

अस्य वै ज्ञप्तिमात्रस्य मज्जामात्रं जगत्त्रयी। विज्ञानमात्रमध्यं हि साधो विद्धि जगत्त्रयम्॥ १०॥

asya vai jñaptimātrasya majjāmātraṃ jagattrayī | vijñānamātramadhyaṃ hi sādho viddhi jagattrayam || 10 ||

Indeed, the mere cognition of this Supreme Self is the essence of the three worlds | O virtuous one, know that the three worlds are merely consciousness

निश्चय ही, इस परमात्मा का मात्र ज्ञान ही तीनों लोकों का सार है | हे साधु, जान लो कि तीनों लोक मात्र चेतना हैं

6.72.11

विज्ञानमात्रकलनाकलितं जगन्ति शान्तस्वभावसुकुमारमनन्तरूपम् । वेतालबालक पदं तदलङ्घनीयमेवं स्वयं समनुभावय शान्तमास्स्व ॥ ११ ॥

vijñānamātrakalanākalitaṃ jaganti śāntasvabhāvasukumāramanantarūpam | vetālabālaka padaṃ tadalaṅghanīyamevaṃ svayaṃ samanubhāvaya śāntamāssva || 11 ||

The world, which is merely a mental construct, is peaceful, delicate, and of infinite form. O child, the state of the Vetala is unattainable. Realize this yourself and be peaceful.

यह जगत मन की कल्पना मात्र है, शान्त, सुकुमार और अनन्त रूप वाला है | हे बालक, वेताल का पद अलंघनीय है, इसे स्वयं अनुभव करो और शान्त हो जाओ।

Chapter 73

6.73.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति राजमुखाच्छ्रुत्वा वेतालः शान्तिमाययौ । भावितात्मतया तत्र विचारोचितया धिया ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti rājamukhācchrutvā vetālaḥ śāntimāyayau | bhāvitātmatayā tatra vicārochitayā dhiyā || 1 ||

Shri Vasishtha said: Having heard this from the king's mouth, the Vetala attained peace. With a purified mind and appropriate contemplation, he became calm.

श्री वसिष्ठ ने कहा: राजा के मुख से यह सुनकर वेताल शान्ति को प्राप्त हुआ | पवित्र मन और उचित विचार से वह शान्त हो गया |

6.73.2

उपशान्तमना भूत्वा मत्वैकान्तमनिन्दितम् । बभूवाविचलध्यानी विस्मृत्य विषमां क्षुधाम् ॥ २ ॥

upaśāntamanā bhūtvā matvaikāntamaninditam | babhūvāvicaladhyānī vismṛtya viṣamāṃ kṣudhām || 2 ||

Being calm-minded, considering the flawless solitude, he became steadfast in meditation, forgetting the intense hunger.

शान्त मन होकर, दोषरहित एकान्त को मानकर, वह ध्यान में अविचल हो गया, तीव्र भूख को भूलकर |

6.73.3

एतद्राम मयोक्तं ते वेतालप्रश्नजालकम् । एवंक्रमेण चिदणौ तेनेदं संस्थितं जगत् ॥ ३ ॥

etadrāma mayoktaṃ te vetālapraśnajālakam | evaṃkrameṇa cidaṇau tenedaṃ saṃsthitaṃ jagat || 3 ||

O Rama, this web of questions by the Vetala has been told to you by me. In this way, through the sequence of consciousness, this world is established.

हे राम, यह वेताल के प्रश्नों का जाल मैंने तुम्हें बताया है | इस प्रकार से, चेतना के क्रम से यह जगत स्थापित है |

6.73.4

चिदणोः कोशगं विश्वं विचारेण विलीयते । कायो वेतालकस्येव शिष्यते यत्पदं तु तत् ॥ ४ ॥

cidaṇoḥ kośagaṃ viśvaṃ vicāreṇa vilīyate | kāyo vetālakasyeva śiṣyate yatpadaṃ tu tat || 4 ||

The universe, which is the sheath of consciousness, dissolves through contemplation. Just as the body of the Vetala remains, that state is attained.

चेतना का कोश जो यह विश्व है, विचार से विलीन हो जाता है | जैसे वेताल का शरीर शेष रहता है, वैसे ही वह पद प्राप्त होता है |

6.73.5

संहृत्य सर्वतश्चित्तं स्तिमितेनान्तरात्मना । स्वभावापतितं कुर्वन्निरिच्छं तिष्ठ शान्तधीः ॥ ५ ॥

saṃhṛtya sarvataścittaṃ stimitenāntarātmanā | svabhāvāpatitaṃ kurvanniricchaṃ tiṣṭha śāntadhīḥ || 5 ||

Withdrawing the mind from all sides, with a stilled inner self, act according to your nature, free from desires, and remain calm-minded.

मन को सब ओर से वापस लेकर, स्थिर अन्तरात्मा के साथ, अपने स्वभाव के अनुसार कार्य करो, इच्छाओं से मुक्त होकर, और शान्त मन से रहो |

6.73.6

आकाशविशदं कृत्वा मनसैव मनो मुने । तिष्ठैकशमशान्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ ६ ॥

ākāśaviśadaṃ kṛtvā manasaiva mano mune | tiṣṭhaikaśamaśāntātmā sarvatra samadarśanaḥ || 6 ||

O sage, make your mind as clear as the sky, and remain steadfast, with a peaceful mind, seeing everything equally.

हे मुने, अपने मन को आकाश की तरह निर्मल करो और एकाग्र होकर शांत मन से सब कुछ समान दृष्टि से देखो।

6.73.7

स्थिरबुद्धिरसंमूढो यथाप्राप्तानुवर्तिनः । राज्ञो भगीरथस्येव दुःसाध्यमपि सिद्ध्यति ॥ ७ ॥

sthirabuddhirasaṃmūḍho yathāprāptānuvartinaḥ | rājño bhagīrathasyeva duḥsādhyamapi siddhyati || 7 ||

With a steady intellect and free from confusion, following the natural course of events, even the difficult becomes achievable, like King Bhagiratha.

स्थिर बुद्धि और भ्रम से मुक्त होकर, प्राकृतिक परिस्थितियों का अनुसरण करते हुए, Even the difficult becomes achievable, like King Bhagiratha.

6.73.8

संपूर्णशान्तमनसः परितृप्तवृत्तेर्नित्यं समे सुखमयात्मनि तिष्ठतोऽन्तः । सिद्ध्यन्ति दुर्लभतरा अपि वाञ्छितार्था गङ्गावतार इव सागरखातवस्तु ॥ ८ ॥

saṃpūrṇaśāntamanasaḥ paritṛptavṛtter nityaṃ same sukhamayātmani tiṣṭhato'ntaḥ | siddhyanti durlabhatarā api vāñchitārthā gaṅgāvatāra iva sāgarakhātavastu || 8 ||

For one whose mind is completely peaceful and content with the eternal, blissful self, even the most difficult desires are fulfilled, like the descent of the Ganges from the heavens to the ocean.

जिसका मन पूर्णतः शांत और संतुष्ट है, और जो नित्य सुखमय आत्मा में स्थित है, उसके लिए सबसे कठिन इच्छाएँ भी पूरी हो जाती हैं, जैसे गंगा का स्वर्ग से समुद्र तक अवतरण।

Chapter 74

6.74.1

श्रीराम उवाच । यथा चित्तचमत्कृत्या राज्ञो गङ्गावतारणम् । भगीरथस्य संपन्नं तन्मे कथय भो प्रभो ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | yathā cittacamatkṛtyā rājño gaṅgāvatāraṇam | bhagīrathasya saṃpannaṃ tanme kathaya bho prabho || 1 ||

Shri Rama said: Please tell me, O Lord, how the descent of the Ganga was accomplished by King Bhagiratha through the wonder of his mind.

श्री राम ने कहा: हे प्रभो, कृपया मुझे बताएं कि राजा भगीरथ के मन के चमत्कार से गंगा का अवतरण कैसे हुआ।

6.74.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । आसीद्भगीरथो नाम राजा परमधार्मिकः । भुवः समुद्रयुक्ताया मण्डलीतिलकोपमः ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | āsīdbhagīratho nāma rājā paramadhārmikaḥ | bhuvaḥ samudrayuktāyā maṇḍalītilakopamaḥ || 2 ||

Shri Vasishtha said: There was a king named Bhagiratha, who was supremely righteous. He was like the jewel of the earth, which is surrounded by the ocean.

श्री वसिष्ठ ने कहा: एक राजा था जिसका नाम भगीरथ था, जो परम धार्मिक था। वह समुद्र से घिरी पृथ्वी का रत्न के समान था।

6.74.3

संकल्पानन्तरं प्राप्ता यथाभिमतमर्थिनः । चन्द्रप्रसन्नवदनादस्माच्चिन्तामणेरिव ॥ ३ ॥

saṃkalpānantaraṃ prāptā yathābhimatamarthinaḥ | candraprasannavadanādasmāccintāmaṇeriva || 3 ||

Whatever the seekers desired, they obtained after their resolve, as if from the wish-fulfilling gem with a face as bright as the moon.

जो भी साधकों ने चाहा, वह उनके संकल्प के बाद प्राप्त हुआ, मानो चंद्रमा के समान प्रसन्न मुख वाले चिंतामणि से प्राप्त हुआ हो।

6.74.4

साधूनां यो व्यवस्थार्थं धनान्यविरतं ददौ । तृणमात्रमुपादत्ते क्वचिच्चिन्तामणिर्यथा ॥ ४ ॥

sādhūnāṃ yo vyavasthārthaṃ dhanānyavirataṃ dadau | tṛṇamātramupādatte kvaciccintāmaṇiryathā || 4 ||

He who, for the sake of the welfare of the virtuous, gave wealth unceasingly, took even a blade of grass as if it were the wish-fulfilling gem.

जो साधुओं के कल्याण के लिए धन निरंतर देता था, वह एक तिनके को भी चिंतामणि के समान ग्रहण करता था।

6.74.5

वज्रसारमिव प्रोतमुज्वलन्नेमि योऽभिनत् । अधो मणिरयोयन्त्रं सर्वदुर्जनचेष्टितम् ॥ ५ ॥

vajrasāramiva protamujjvalannemi yo'bhinat | adho maṇirayoyantraṃ sarvadurjanaceṣṭitam || 5 ||

He who, with a radiant wheel, struck down the machine of evil, as if it were made of diamond essence.

जो चमकीले पहिये से बुराई की मशीन को मारा, मानो वह हीरे की बनी हो।

6.74.6

अधूमवह्निदेहश्रीः श्रान्तोऽपि दैन्यमप्यलम्। तमोऽहरन्नृणां नैशं द्युमणिर्वेश्मनामिव ॥ ६ ॥

adhūmavahnidehaśrīḥ śrānto'pi dainyamapyalam | tamoharannṛṇāṃ naiśaṃ dyumaṇirveśmanāmiva || 6 ||

Even though exhausted and humble, his body shines like a smokeless fire, dispelling the darkness of people's ignorance like a gem in a house at night.

थका हुआ और विनम्र होने के बावजूद, उनका शरीर धुएँ रहित अग्नि की तरह चमकता है, जो रात में घर के रत्न की तरह लोगों के अज्ञान के अंधकार को दूर करता है।

6.74.7

किरन्नग्निकणासारमभितः स्वप्रतापजम्। मध्याह्नसूर्यकान्ताग्निरिव ज्वलति योऽरिषु ॥ ७ ॥

kirannagniakaṇāsāramabhitaḥ svapratāpajam | madhyāhnasūryakāntāgniriva jvalati yo'riṣu || 7 ||

He who shines among enemies like the midday sun, radiating his own heat, spreading the essence of fire particles all around.

वह जो शत्रुओं में मध्याह्न सूर्य की तरह चमकता है, अपनी गर्मी फैलाता है, अग्नि कणों का सार चारों ओर फैलाता है।

6.74.8

मृदुशीतलसंस्पर्शो यः समाह्लादयन्मनः। सुज्ञानां द्रवति स्निग्धस्येन्दोरिन्दुमणिर्यथा ॥ ८ ॥

mṛduśītalasaṃsparśo yaḥ samāhlādayanmanaḥ | sujñānāṃ dravati snigdhasyendorindumaṇiryathā || 8 ||

He who has a soft and cool touch, delighting the mind, flows like the moonstone of the affectionate moon for the wise.

जिसका स्पर्श कोमल और ठंडा है, मन को आह्लादित करता है, वह बुद्धिमानों के लिए स्नेही चंद्रमा के चंद्रमणि की तरह बहता है।

6.74.9

जगद्यज्ञोपवीतस्य स्वर्गपातालवाहिनः। गङ्गावाहस्य येनास्यां तृतीयः पूरितो गुणः ॥ ९ ॥

jagadyajñopavītasya svargapātālavāhinaḥ | gaṅgāvāhasya yenāsyāṃ tṛtīyaḥ pūrito guṇaḥ || 9 ||

In this world, which is the sacred thread of the universe, carrying heaven and the underworld, the third quality is fulfilled by the flow of the Ganges.

इस जगत में, जो विश्व का यज्ञोपवीत है, स्वर्ग और पाताल को ले जाने वाला, गंगा के प्रवाह से तीसरा गुण पूर्ण होता है।

6.74.10

अगस्त्यशोषितोऽम्भोधिर्गङ्गापूरेण पूरितः। येन दुष्पूरभूतोऽपि महासार्थोऽर्थिनामिव ॥ १० ॥

agastyaoṣito'mbhodhirgaṅgāpūreṇa pūritaḥ | yena duṣpūrabhūto'pi mahāsārtho'rthināmiva || 10 ||

The ocean, dried up by Agastya, is filled by the Ganges. By this, even the difficult to fill becomes greatly meaningful for the seekers.

अगस्त्य द्वारा सूखा हुआ समुद्र गंगा के प्रवाह से भर जाता है। इससे भी भरना मुश्किल हो जाता है, पर यह अर्थ खोजने वालों के लिए महान अर्थपूर्ण हो जाता है।

6.74.11

गङ्गासोपानपद्धत्या येन पातालवासिनः। योजिता ब्रह्मणो लोके बान्धवा लोकबन्धुना ॥ ११ ॥

gaṅgāsopānapaddhatyā yena pātālavāsinaḥ| yojitā brahmaṇo loke bāndhavā lokabandhunā || 11 ||

Through the method of Ganga's descent, the inhabitants of Patala were united in Brahma's world by the friend of the world.

गंगा के अवतरण के द्वारा, पाताल के निवासी ब्रह्मा के लोक में लोकबंधु द्वारा जुड़े।

6.74.12

ब्रह्माणं शंकरं जह्नुं तपसाराधयंश्च यः। भूयोभूयो ययौ खेदमशून्याध्यवसायिनः ॥ १२ ॥

brahmāṇaṃ śaṃkaraṃ jahnuṃ tapasārādhayaṃśca yaḥ| bhūyobhūyo yayau khedamaśūnyādhyavasāyinaḥ || 12 ||

He who worshipped Brahma, Shankara, and Jahnu with austerities, repeatedly experienced sorrow, having unwavering determination.

जो ब्रह्मा, शंकर और जह्नु की तपस्या से आराधना करता था, उसने अटूट दृढ़ता से बार-बार दुःख का अनुभव किया।

6.74.13

यौवने वर्तमानस्य तस्य भूमिपतेरपि। प्रविचारयतो लोकयात्रां पर्याकुलामिमाम् ॥ १३ ॥

yauvane vartamānasya tasya bhūmipaterapi| pravicārayato lokayātrāṃ paryākulāmimām || 13 ||

Even while he was in his youth, that king, while contemplating the worldly journey, found it to be full of confusion.

यद्यपि वह राजा अपने यौवन में था, फिर भी जब वह संसार की यात्रा पर विचार कर रहा था, तो उसने इसे अत्यधिक उलझन भरा पाया।

6.74.14

सुविरागचमत्कारविचारकणिकोदभूत्। वयस्यपि च तारुण्ये दैवाद्वल्ली मराविव ॥ १४ ॥

suvirāgacamatkāravicārakaṇikodabhūt| vayasyapi ca tāruṇye daivādvallī marāviva || 14 ||

Even though he was in his youth, he was filled with wonder and curiosity, and by divine will, he appeared like a creeper without support.

यद्यपि वह अपने यौवन में था, फिर भी वह आश्चर्य और उत्सुकता से भरा था, और दैवी इच्छा से वह एक बेसहारा लता की तरह दिखाई देता था।

6.74.15

एकान्ते चिन्तयामास महीपतिरसाविति। जगद्यात्रामिमां नित्यमसमञ्जसमाकुलम् ॥ १५ ॥

ekānte cintayāmāsa mahīpaterasāviti| jagadyātrāmimāṃ nityamasaṃjañsamākulam || 15 ||

In solitude, the king thought, 'This worldly journey is always confusing and full of contradictions.'

एकांत में, राजा ने सोचा, 'यह संसार की यात्रा हमेशा उलझन और विरोधाभास से भरी हुई है।'

6.74.16

पुनर्दिनं पुनः श्यामा दानादानशतं पुनः। तदेव भुक्तविरसं लक्ष्यते कर्म कुर्वताम् ॥ १६ ॥

punardinaṃ punaḥ śyāmā dānādānaśataṃ punaḥ| tadeva bhuktavirasaṃ lakṣyate karma kurvatām || 16 ||

Day after day, the same acts of giving and receiving are performed, yet they appear tasteless to those who perform them.

दिन दिन भर वही दान-प्रतिग्रह के कार्य होते रहते हैं, परंतु उन्हें करने वालों को वे निरास लगते हैं।

6.74.17

येन प्राप्तेन लोकेऽस्मिन्न प्राप्यमवशिष्यते। तत्कृतं सुकृतं मन्ये शेषं कर्म विषूचिका ॥ १७ ॥

yena prāptena loke'sminna prāpyamavaśiṣyate| tatkṛtaṃ sukṛtaṃ manye śeṣaṃ karma viṣūcikā || 17 ||

That by which nothing more is left to be achieved in this world, I consider that deed to be well done; the rest is like chaff.

जिससे इस लोक में और कुछ प्राप्त करना नहीं बचता, उस कार्य को मैं श्रेष्ठ मानता हूँ; बाकी कार्य भूसा के समान हैं।

6.74.18

पुनःपुनः पर्युषितं कर्म कुर्वन्न लज्जते । मूढ्बुद्धिरबुद्धिस्तु कः कुर्यात्किल बालवत् ॥ १८ ॥

punarpunaḥ paryuṣitaṃ karma kurvann na lajjate| mūḍhabuddhirabuddhistu kaḥ kuryātkila bālavat || 18 ||

One who repeatedly performs stale actions without shame is indeed foolish; who else would act like a child?

जो बार-बार पुराने कार्यों को लज्जा के बिना करता है, वह मूर्ख है; और कौन बच्चे की तरह कार्य करेगा?

6.74.19

अथैकदोद्विग्नमनाः कदाचित्तितलं गुरुम् । एकान्तं संसृतेर्भीतः समपृच्छद्भगीरथः ॥ १९ ॥

athaikadodvignamanāḥ kadācittritalaṃ gurum| ekāntaṃ saṃsṛterbhītaḥ samapṛcchadbhagīrathaḥ || 19 ||

Then, once, with a distressed mind, fearful of the cycle of existence, Bhagiratha respectfully asked the sage who was in the three worlds.

तदनंतर, एक बार, मन में उद्विग्नता लिए, संसार के चक्र से भयभीत होकर, भगीरथ ने तीनों लोकों में विराजमान गुरु से आदरपूर्वक प्रश्न किया।

6.74.20

भगीरथ उवाच । अन्तःशून्यासु सुचिरं भ्रमत्संसारवृत्तिषु । अरण्यानीषु चैतासु भृशं खिन्ना वयं विभो ॥ २० ॥

bhagīratha uvāca| antaḥśūnyāsu suciraṃ bhramatsaṃsāravṛttiṣu| araṇyānīṣu caitāsu bhṛśaṃ khinnā vayaṃ vibho || 20 ||

Bhagiratha said: For a long time, we have been wandering in the empty cycles of worldly existence, and we are greatly distressed in these forests, O Lord.

भगीरथ ने कहा: लंबे समय से, हम संसार के खाली चक्रों में भटक रहे हैं, और इन वनों में हम बहुत थके हुए हैं, हे प्रभु।

6.74.21

जरामरणमोहादिरूपाणां भवकारिणाम्भगवन्सर्वदुःखानां कथमन्तः प्रजायते ॥ २१ ॥

jarāmaraṇamohādirūpāṇāṃ bhavakāriṇāmbhagavansarvaduḥkhānāṃ kathamantaḥ prajāyate || 21 ||

How does the Lord, the cause of all beings who are afflicted by old age, death, and delusion, arise within all sufferings?

भगवान्, जो जरा, मरण, मोह आदि रूपों के कारण हैं, सभी दुःखों में कैसे उत्पन्न होते हैं?

6.74.22

त्रितल उवाचचिरसाम्यात्मनोत्थेन निर्विभागविलासिनाराजन् ज्ञेयावबोधेन पूर्णेन भरितात्मना ॥ २२ ॥

tritala uvācacirasāmyātmanotthena nirvibhāgavilāsinārājan jñeyāvabodhena pūrṇena bharitātmanā || 22 ||

Tritala said: O King, by the continuous, undivided play of the self, one should be filled with the complete knowledge of the knowable.

त्रितल ने कहा: हे राजन्, आत्मा के निरन्तर, अविभाजित विलास से, ज्ञेय के पूर्ण ज्ञान से भरा होना चाहिए।

6.74.23

क्षीयन्ते सर्वदुःखानि त्रुट्यन्ति ग्रन्थयोऽभितःसंशयाः समतां यान्ति सर्वकर्माणि चानघ ॥ २३ ॥

kṣīyante sarvaduḥkhāni truṭyanti granthayo'bhitaḥsaṃśayāḥ samatāṃ yānti sarvakarmāṇi cānagha || 23 ||

All sufferings perish, bonds break, doubts disappear, and all actions reach equilibrium, O sinless one.

सभी दुःख नष्ट हो जाते हैं, बंधन टूट जाते हैं, संशय विलुप्त हो जाते हैं, और सभी कर्म साम्य को प्राप्त होते हैं, हे निष्पाप।

6.74.24

ज्ञेयं विदुरथात्मानं संशुद्धं ज्ञप्तिरूपिणम्स च सर्वगतो नित्यं नास्तमेति न चोदयम्॥ २४॥

jñeyaṃ vidurathātmānaṃ saṃśuddhaṃ jñaptirūpiṇamsa ca sarvagato nityaṃ nāstameti na codayam || 24 ||

The knowable self is pure, of the nature of knowledge, and is omnipresent and eternal. It neither sets nor rises.

ज्ञेय आत्मा शुद्ध है, ज्ञान के स्वरूप का है, और सर्वव्यापी और नित्य है। यह न तो अस्त होता है न उदय होता है।

6.74.25

भगीरथ उवाचचिन्मात्रं निर्गुणं शान्तमस्ति निर्मलमच्युतम्देहादि नेतरत्किंचिदिति वेद्मि मुनीश्वर॥ २५॥

bhagīratha uvācacinmātraṃ nirguṇaṃ śāntamasti nirmalamacyutamdehādi netaratkiṃciditi vedmi munīśvara || 25 ||

Bhagiratha said: I know, O sage, that the pure, attribute-less, peaceful, and unchanging consciousness exists, and nothing else beyond the body.

भगीरथ ने कहा: हे मुनिश्वर, मैं जानता हूँ कि शुद्ध, गुणरहित, शांत, और अपरिवर्तनीय चेतना है, और शरीर से परे कुछ भी नहीं है।

6.74.26

किं तत्र प्रतिपत्तिर्मे स्फुटतामेति नेतरा। एतावन्मात्रसंवित्तिः स्यामहं भगवन्कथम्॥ २६॥

kiṃ tatra pratipattirmē sphuṭatāmēti nētarā | ētāvanmātrasaṃvittiḥ syāmahaṃ bhagavankathaṃ || 26 ||

What is the clear understanding there? How can I, O Lord, be limited to such a small amount of consciousness?

वहाँ क्या स्पष्ट समझ है? हे भगवन्, मैं इतनी छोटी चेतना कैसे हो सकता हूँ?

6.74.27

त्रितल उवाच। ज्ञानेन ज्ञेयनिष्ठत्वमेति चेतो हृदम्बरे। ततः सर्ववपुर्भूत्वा भूयो जीवो न जायते॥ २७॥

tritala uvāca | jñānēna jñēyanisthātvamēti cēto hṛdambarē | tataḥ sarvavapurbhūtvā bhūyō jīvō na jāyatē || 27 ||

Tritala said: When the mind attains steadfastness in the knowledge of the knowable, then, having become all-pervading, the individual soul is no longer born.

त्रितल ने कहा: जब मन ज्ञेय के ज्ञान में स्थिर हो जाता है, तब, सर्वव्यापी होकर, जीवात्मा फिर जन्म नहीं लेता।

6.74.28

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु। नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु॥ २८॥

asaktiranabhiṣvaṅgaḥ putradāragṛhādiṣu | nityaṃ ca samacittatvamiṣṭāniṣṭōpapattiṣu || 28 ||

Detachment and non-attachment to sons, wives, homes, etc., and always maintaining equanimity in desirable and undesirable situations.

पुत्र, पत्नी, घर आदि से आसक्ति और अनासक्ति और हमेशा इच्छित और अनिच्छित स्थितियों में समता बनाए रखना।

6.74.29

आत्मनोऽनन्ययोगेन तद्भावनमनारतम्। विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि॥ २९॥

ātmanō'nanayayōgēna tadbhāvanamanāratam | viviktadēśasēvitvamaratirjanasaṃsadi || 29 ||

Constant meditation on the state of the self through unwavering union, dwelling in solitary places, and disinterest in social gatherings.

अटल योग के द्वारा आत्मा की अवस्था पर निरंतर ध्यान, एकांत स्थानों में रहना, और सामाजिक सभाओं में अरुचि।

6.74.30

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्। एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं तदतोऽन्यथा ॥ ३० ॥

adhyātmajñānanityatvaṃ tattvajñānārthadarśanam | ētajjñānamiti prōktamajñānaṃ tadatō'nyathā || 30 ||

The constant pursuit of spiritual knowledge and the realization of the ultimate truth is called knowledge; anything else is ignorance.

आध्यात्मिक ज्ञान का निरंतर अनुसरण और परम सत्य की प्राप्ति ज्ञान कहलाती है; बाकी सब अज्ञान है।

6.74.32

भगीरथ उवाच। शरीरेऽस्मिंश्चिरारूढो गिरौ तरुरिव स्वके। अहंभावो महाभाग वद मे त्यज्यते कथम्॥ ३२ ॥

bhagīratha uvāca | śarīre'sminścirārūḍho girau taruriva svake | ahaṃbhāvo mahābhāga vada me tyajyate katham || 32 ||

Bhagiratha said: O great one, how is the sense of 'I' abandoned, which has long been rooted in this body like a tree on its own mountain?

भगीरथ ने कहा: हे महानुभाव, यह अहंभाव जो इस शरीर में लंबे समय से जड़ पकड़े हुए है जैसे एक पेड़ अपने पर्वत पर, कैसे त्यागा जाता है?

6.74.33

त्रितल उवाच। पौरुषेण प्रयत्नेन त्यक्त्वा भोगौघभावनाम्। गत्वा विकसितां सत्तामहंकारो विलीयते ॥ ३३ ॥

tritala uvāca | pauruṣeṇa prayatnena tyaktvā bhogaughabhāvanām | gatvā vikasitāṃ sattāmahaṃkāro vilīyate || 33 ||

Tritala said: By human effort and endeavor, abandoning the desire for enjoyment, and attaining a purified state, the ego dissolves.

त्रितल ने कहा: मानवीय प्रयास और परिश्रम से, भोग की इच्छा को त्यागकर, और एक शुद्ध अवस्था प्राप्त करके, अहंकार विलीन हो जाता है।

6.74.34

यन्त्रणापञ्जरं यावद्भग्नं लज्जादिनाखिलम्। अकिंचनत्वशेषेण स्फुटा तावदहंकृतिः ॥ ३४ ॥

yantranāpañjaraṃ yāvadbhagnaṃ lajjādināKhilam | akiñcanatvaśeṣeṇa sphuṭā tāvadahaṃkṛtiḥ || 34 ||

As long as the cage of restraints is broken by shame and other means, the ego becomes clear through the state of having nothing.

जब तक लज्जा और अन्य साधनों से बंधनों का पिंजरा तोड़ा जाता है, तब तक किंचनत्व की अवस्था से अहंकार स्पष्ट हो जाता है।

6.74.35

रागद्वेषक्षयाकारं संसारव्याधिभेषजम्। अहंभावोपशान्तौ तु राजन् ज्ञानमवाप्यते ॥ ३५ ॥

rāgadveṣakṣayākāraṃ saṃsāravyādhibheṣajam | ahaṃbhāvopaśāntau tu rājan jñānamavāpyate || 35 ||

O King, knowledge is attained when the ego is pacified, which is the medicine for the disease of worldly existence, characterized by the destruction of attachment and hatred.

हे राजन, ज्ञान तब प्राप्त होता है जब अहंकार शांत हो जाता है, जो आसक्ति और द्वेष के नाश का रूप है, और संसार के रोग का औषधि है।

6.74.36

शान्ताशेषविशेषणो विगतभीः संत्यक्तसर्वैषणो गत्वानूनमकिंचनत्वमरिषु त्यक्त्वा समग्रां श्रियम् ।
शान्ताहंकृतिरस्तदेहकलनस्तेष्वेव भिक्षामट न्मामप्युज्झितवानलं यदिभवस्युच्चैस्त्वमुच्चैरसि ॥ ३६ ॥

śāntāśeṣaviśeṣaṇo vigatabhīḥ saṃtyaktasarvaiṣaṇo gatvānūnamakiñcanatvamarṣu tyaktvā samagrāṃ śriyam |
śāntāhaṃkṛtirastadehakalanasteṣveva bhikṣāmaṭa nmāmapyujjhitavānalaṃ yadibhavasyuccaiḥstvamuccairasi
|| 36 ||

Calm, free from all distinctions, fearless, having abandoned all desires, attaining the state of having nothing, renouncing all wealth, with a pacified ego, free from bodily considerations, among them, O mendicant, you have truly abandoned me if you are indeed supreme.

शांत, सभी भेदों से मुक्त, निडर, सभी इच्छाओं को त्यागकर, किंचनत्व की अवस्था प्राप्त करके, सम्पूर्ण धन को त्यागकर, शांत अहंकार से, शरीर की चिंताओं से मुक्त, उनमें, हे भिक्षु, अगर तुम वास्तव में उच्च हो तो तुमने मुझे सचमुच त्याग दिया है।

Chapter 75

6.75.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ तस्य गुरोर्वक्त्रादित्याकर्ण्य भगीरथः । मनस्याहितकर्तव्यः स्वव्यापारपरोऽभवत् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha tasya gurorvaktrādityākarṇya bhagīrathaḥ | manasyāhitakartavyaḥ svavyāpāraparo'bhavat || 1 ||

Shrivasishtha said: Having heard the words of his guru, Bhagiratha became devoted to his own duties, with his mind set on fulfilling his responsibilities.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: अपने गुरु के मुख से सुनकर, भगीरथ अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिए मन लगाकर अपने कार्यों में लग गया।

6.75.2

ततः कतिपयेष्वेव वासरेषु गतेषु सः । अग्निष्टोममखं चक्रे सर्वत्यागेकसिद्धये ॥ २ ॥

tataḥ katipayeṣveva vāsareṣu gateṣu saḥ | agniṣṭomamakhaṃ cakre sarvatyāgekasiddhaye || 2 ||

Then, after a few days had passed, he performed the Agniṣṭoma sacrifice for the sole purpose of renouncing everything.

तब, कुछ दिनों के बाद, उसने सब कुछ त्यागने के एकमात्र उद्देश्य से अग्निष्टोम यज्ञ किया।

6.75.3

गोभूम्यश्वहिरण्यादि ददौ धनमशेषतः । द्विजेभ्यो निजबन्धुभ्यो गुण्यगुण्यविचारयन् ॥ ३ ॥

gobhūmyaśvahiraṇyādi dadau dhanamaśeṣataḥ | dvijebhyo nijabandhubhyo guṇyaguṇyavicārayan || 3 ||

He gave away all his wealth, including cows, land, horses, and gold, to Brahmins and his relatives, considering their merits and demerits.

उसने अपना सारा धन, जिसमें गायें, भूमि, घोड़े और सोना शामिल है, ब्राह्मणों और अपने रिश्तेदारों को दे दिया, उनके गुण और अवगुण का विचार करते हुए।

6.75.4

दिवसत्रयमात्रेण सर्वमेव परित्यजन् । असुमात्रावशेषोऽसावासीद्राजा भगीरथः ॥ ४ ॥

divasatrayamātreṇa sarvameva parityajan | asumātrāvaśeṣo'sāvāsīdrājā bhagīrathaḥ || 4 ||

Within just three days, having renounced everything, King Bhagiratha was left with only his life.

केवल तीन दिनों में, सब कुछ त्यागकर, राजा भगीरथ के पास केवल उसकी जिंदगी ही बची।

6.75.5

अथ सर्वार्थरिक्तं तत्खिन्नप्रकृतिपौरकम् । सीमान्तिने तृणमिव राज्यं स्वमरये ददौ ॥ ५ ॥

atha sarvārthariktaṃ tatkhinnaprakṛtipaurakam | sīmāntine tṛṇamiva rājyaṃ svamaraye dadau || 5 ||

Then, having given up all his wealth, he handed over his kingdom, which was devoid of all resources and weakened, to his border guard like a blade of grass.

तब, अपनी सारी संपत्ति त्यागकर, उसने अपना राज्य, जो सारे संसाधनों से रहित और कमजोर हो गया था, एक तिनके की तरह अपने सीमा रक्षक को सौंप दिया।

6.75.6

आक्रान्ते द्विषता राज्ये मुनिः सद्मनि मण्डले । अधोवासोवशेषोऽसौ निर्जगाम स्वमण्डलात् ॥ ६ ॥

ākrānte dviṣatā rājye muniḥ sadmani maṇḍale | adhovāsovśeṣo'sau nirjagāma svamaṇḍalāt || 6 ||

When the kingdom was attacked by the enemy, the sage, who was the last remaining inhabitant in the palace, left his own circle.

जब शत्रु ने राज्य पर आक्रमण किया, तब मुनि, जो महल में अन्तिम बचा निवासी था, अपने मण्डल से निकल गया।

6.75.7

यत्र न ज्ञायते नाम्ना यत्र न ज्ञायते मुखात् । तत्र ग्रामेष्वरण्येषु दूरेषूवास धैर्यवान् ॥ ७ ॥

yatra na jñāyate nāmnā yatra na jñāyate mukhāt | tatra grāmeṣvaraṇyeṣu dūreṣūvāsa dhairyavān || 7 ||

Where he is not known by name, where he is not known by face, there in distant villages and forests, he lived with patience.

जहां उसका नाम नहीं जाना जाता, जहां उसका चेहरा नहीं जाना जाता, वहां दूर के गांवों और जंगलों में, वह धैर्य से रहा।

6.75.8

इत्यल्पेनैव कालेन प्रशान्तसकलैषणः । परमेण शमेनासावाप विश्रान्तिमात्मनि ॥ ८ ॥

ityalpenaiva kālena praśāntasakalaiṣaṇaḥ | parameṇa śamena'sāvāpa viśrāntimātmani || 8 ||

Thus, in a short time, with all desires pacified, he attained complete peace and rest in himself.

इस प्रकार, थोड़े समय में ही, सभी इच्छाओं को शान्त करके, वह परम शान्ति और आत्मा में विश्राम प्राप्त कर लिया।

6.75.9

भ्रमन्द्वीपानि भूपीठे कदाचित्कालयोगतः । अवशः शत्रुणाक्रान्तं स्वमेव प्राप तत्पुरम् ॥ ९ ॥

bhramandvīpāni bhūpīṭhe kadācitkālayogataḥ | avaśaḥ śatruṇākrāntaṃ svameva prāpa tatpuram || 9 ||

Wandering through islands and lands, by chance and the passage of time, he inevitably reached his own city, which was invaded by the enemy.

द्वीपों और भूमि पर भ्रमण करते हुए, संयोग और समय के प्रवाह से, वह अनिवार्य रूप से अपने ही शहर तक पहुंचा, जो शत्रु द्वारा आक्रान्त था।

6.75.10

नानागारांश्च तत्रासौ प्रवाहपतितांश्च तान् । पौरांश्च मन्त्रिणश्चैव शमी भिक्षामयाचत ॥ १० ॥

nānāgārāṃśca tatrāsau pravāhapatitāṃśca tān | paurāṃśca mantrinaścaiva śamī bhikṣāmayācat || 10 ||

There, he saw various houses that had fallen into ruin, and he begged for alms from the citizens and ministers.

वहां, उसने विभिन्न घरों को देखा जो खंडहर में बदल गए थे, और उसने नागरिकों और मंत्रियों से भिक्षा मांगी।

6.75.11

विविदुस्ते नृपं पौरा मन्त्रिणश्च भगीरथम् । पूजयामासुरथ तं सविषादाः सपर्यया ॥ ११ ॥

vividuste nṛpaṃ paurā mantrinaśca bhagīratham | pūjayāmāsuratha taṃ saviṣādāḥ saparyayā || 11 ||

The citizens and ministers recognized Bhagiratha as their king and worshipped him with sorrow and respect.

नागरिक और मंत्री भगीरथ को राजा के रूप में पहचाने और दुःख और सम्मान के साथ उनकी पूजा की।

6.75.12

प्रभो राज्यं गृहाणेति प्रार्थितोऽप्यरिणा मुनिः । नादत्तेऽनादृताशेषस्तृणमप्यशनादृते ॥ १२ ॥

prabho rājyaṃ gṛhāṇeti prārthito'pyariṇā muniḥ | nādatte'nādṛtāśeṣastṛṇamapyaśanādṛte || 12 ||

Even though the sage was requested to accept the kingdom, he did not accept it, as he was completely disregarded and did not even accept a blade of grass.

यद्यपि ऋषि से राज्य स्वीकार करने के लिए अनुरोध किया गया, फिर भी उन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उनका पूरी तरह से अनादर किया गया था और उन्होंने एक घास की पत्ती भी नहीं स्वीकार की।

6.75.13

कतिचिद्दिवसांस्तत्र नीत्वाऽन्यत्र जगाम सः । भगीरथोऽयं हा कष्टमिति लोकेन शोचितः ॥ १३ ॥

kataciddivasāṃstatra nītvā'nyatra jagāma saḥ | bhagīratho'yaṃ hā kaṣṭamiti lokena śocitaḥ || 13 ||

After spending a few days there, Bhagiratha went elsewhere, and the people lamented, saying, 'Alas, what a misfortune!'

कुछ दिन वहाँ बिताने के बाद, भगीरथ कहीं और चले गए, और लोगों ने शोक किया, कहते हुए, 'हाय, कितना दुःख!'

6.75.14

अथान्यत्रोपशान्तात्मा परिविश्रान्तधीः सुखी । आत्मारामं कदाचित्तु स प्राप त्रितलं गुरुम् ॥ १४ ॥

athānyatroparśāntātmā pariviśrāntadhīḥ sukhī | ātmārāmaṃ kadācittu sa prāpa tritalaṃ gurum || 14 ||

Then, elsewhere, with a peaceful mind and relaxed intellect, he happily attained the self-contented, three-fold wise guru.

फिर, कहीं और, शांत मन और विश्राम प्राप्त बुद्धि के साथ, वह खुशी से आत्म-संतुष्ट, तीन-गुण वाले गुरु को प्राप्त हुआ।

6.75.15

स्वमेव स्वागतं कृत्वा तेन सार्धं भगीरथः । कंचित्कालमुवासाद्रौ वने ग्रामे पुरे जने ॥ १५ ॥

svameva svāgataṃ kṛtvā tena sārdhaṃ bhagīrathaḥ | kaṃcitkālamuvāsādrau vane grāme pure jane || 15 ||

Bhagiratha, having welcomed himself, stayed with him for some time in the forest, village, city, and among people.

भगीरथ ने खुद को स्वागत किया और उसके साथ कुछ समय तक वन, ग्राम, पुर और लोगों के बीच रहा।

6.75.16

समतामुपयातौ तौ गुरुशिष्यौ समौ स्थितौकलयामासतुः स्वस्थौ विनोदं देहधारणम् ॥ १६ ॥

samatāmupayātau tau guruśiṣyau samau sthitaukalayāmāsatuḥ svasthau vinodaṃ dehadhāraṇam || 16 ||

The guru and disciple, both being equal, engaged in recreation and maintaining the body.

गुरु और शिष्य, दोनों बराबर होकर, मनोरंजन और शरीर की देखभाल में लगे हुए थे।

6.75.17

किमयं धार्यते देहः किं वानेनोज्झितेन नःयथाक्रमं यथाचारं तिष्ठत्वेष यथास्थितम् ॥ १७ ॥

kimayaṃ dhāryate dehaḥ kiṃ vānenojjhitena naḥyathākramaṃ yathācāraṃ tiṣṭhatveṣa yathāsthitam || 17 ||

Why is this body maintained? What is the purpose of this effort? It should remain as it is, according to its nature and conduct.

इस शरीर की देखभाल क्यों की जाती है? इस प्रयास का क्या उद्देश्य है? यह अपने स्वभाव और आचरण के अनुसार जैसा है, वैसा ही रहे।

6.75.18

इति निश्चित्य तिष्ठन्तौ तौ वनाद्वनगामिनौअनानन्दं परानन्दं नासुखं न च मध्यमम् ॥ १८ ॥

iti niścitya tiṣṭhantau tau vanādvanagāminauanānandaṃ parānandaṃ nāsukhaṃ na ca madhyamam || 18 ||

Thus, having decided, they remained, those who move from forest to forest, experiencing neither bliss nor sorrow, nor anything in between.

इस प्रकार, निश्चित करके, वे रुके, जो जंगल से जंगल में घूमते हैं, न आनंद अनुभव करते हैं, न दुःख, न कुछ बीच का।

6.75.19

धनानि वाजिविभवाद्यैश्वर्यं चाष्टधोदितम्सिद्धैरप्यर्पितं तुष्टैर्मेनाते जर्जरं तृणम् ॥ १९ ॥

dhanāni vājivibhavādyaiśvaryaṃ cāṣṭadhoditamsiddhairapyarpitaṃ tuṣṭairmenāte jarjaraṃ tṛṇam || 19 ||

Wealth, horse-drawn chariots, and other luxuries, even if bestowed by the accomplished, are considered worthless by the contented, like withered grass.

धन, घोड़े से चलाए जाने वाले रथ, और अन्य वैभव, चाहे सिद्धों द्वारा दिए गए हों, संतुष्ट लोगों द्वारा सूखे घास की तरह निरर्थक माने जाते हैं।

6.75.20

स्वकर्मणैव देहोऽयं यावत्सत्त्वमनिच्छयाधारणीय इति स्वेन कर्मणैवाथ तस्थतुः ॥ २० ॥

svakarmaṇaiva deho'yaṃ yāvatsattvamanicchayādhāraṇīya iti svena karmaṇaivātha tasthatuḥ || 20 ||

This body should be maintained by one's own actions as long as there is life, without desire. Thus, they remained by their own actions.

इस शरीर को अपने कर्मों से जब तक जीवन है, इच्छा के बिना बनाए रखना चाहिए। इस प्रकार, वे अपने कर्मों से रहे।

6.75.21

अभिननन्दतुरागतमुत्तमौ निजसमाचरणक्रमजं मुनी । सुखमसौख्यमभीप्सितवर्जितौ समसमेऽतिसमौ शमिनौ स्वतः ॥ २१ ॥

abhinanandaturāgatamuttamau nijasamācaraṇakramajaṃ munī | sukhamasaukhya-mabhīpsitavarjitau samasame'tisamau śaminau svataḥ || 21 ||

The two great sages welcomed the arrival of the guest, who was following his own rituals. They were content with both happiness and sorrow, having renounced all desires, and were naturally balanced and calm.

दोनों महान ऋषियों ने अपने कर्मकांड के अनुसार आगंतुक का स्वागत किया। वे सुख-दुःख से संतुष्ट थे, सभी इच्छाओं को त्याग दिया था, और स्वाभाविक रूप से संतुलित और शांत थे।

Chapter 76

6.76.1

अथैकदा पुरे श्रेष्ठे कस्मिंश्चिन्मण्डलान्तरेअनपत्ये नृपं मृत्युरहन्मत्स्य इवामिषम् ॥ १ ॥

athaikadā pure śreṣṭhe kasmiṃścinmaṇḍalāntareanapatye nṛpaṃ mṛtyurahanmatsya ivāmiṣam || 1 ||

Once, in a certain excellent city, in a particular place, death seized the king who had no son, like a fish seizing bait.

एक बार किसी श्रेष्ठ नगर में, एक विशिष्ट स्थान में, मृत्यु ने पुत्रहीन राजा को मछली के समान बैट को पकड़ लिया।

6.76.2

तत्र प्रकृतयः खिन्ना नष्टदेशक्रमा नृपमन्विष्यन्ति स्म संयुक्तं गुणलक्ष्म्या विशालया ॥ २ ॥

tatra prakṛtayaḥ khinnā naṣṭadeśakramā nṛpamanviṣyanti sma saṃyuktaṃ guṇalakṣmyā viśālayā || 2 ||

There, the distressed subjects, whose country was destroyed, sought the king, who was endowed with good qualities and prosperity.

वहाँ, जिनका देश नष्ट हो चुका था, उन दुखी प्रजाओं ने गुणों और समृद्धि से सम्पन्न राजा को ढूँढा।

6.76.3

तं भगीरथमासाद्य स्थिरं भिक्षाचरं मुनिम्परिज्ञाय समानीय सैन्ये चक्रुर्महीपतिम् ॥ ३ ॥

taṃ bhagīrathamāsādya sthiraṃ bhikṣācaraṃ munimparijñāya samānīya sainye cakrurmahīpatim || 3 ||

Approaching Bhagiratha, who was steadfast and wandering as a mendicant, recognizing him as a sage, they brought him to the army and made him the king.

भगीरथ के पास जाकर, जो स्थिर और भिक्षु के रूप में घूमता था, उन्होंने उसे एक ऋषि के रूप में पहचाना और उसे सेना में ले आए और उसे राजा बनाया।

6.76.4

भगीरथः क्षणेनैव प्रावृषीवाम्बुना सरःवलितः सेनया गुर्व्या झटित्याशिश्रिये गजम् ॥ ४ ॥

bhagīrathaḥ kṣaṇenaiva prāvṛṣīvāmbunā saraḥvalitaḥ senayā gurvyā jhaṭityāśiśriye gajam || 4 ||

Bhagiratha, in an instant, like a lake filled with rainwater, was surrounded by a heavy army and quickly ascended the elephant.

भगीरथ एक क्षण में, जैसे बारिश के पानी से भरा तालाब, भारी सेना से घिर गया और तुरंत हाथी पर चढ़ गया।

6.76.5

भगीरथो जगन्नाथो जयतीति जनारवैःनीरन्ध्रतामुपाजग्मुर्गिरीन्द्राणां महागुहा ॥ ५ ॥

bhagīratho jagannātho jayatīti janāravaiḥnīrandhratāmupājagmurgirīndrāṇāṃ mahāguhā || 5 ||

Bhagiratha, the lord of the world, victorious, was praised by the people and attained the highest position among the great mountains.

भगीरथ, जगत् के स्वामी, विजयी, जनता द्वारा प्रशंसित हुआ और महान पर्वतों में सबसे ऊँची स्थिति प्राप्त की।

6.76.6

तत्र तं पालयन्तं तद्राज्यं राजानमादृताःआजग्मुः प्राक्प्रकृतयः प्राहुरित्थं नृपाधिपम् ॥ ६ ॥

tatra taṃ pālayantaṃ tadrājyaṃ rājānamādṛtāḥājagmuḥ prākprakṛtayaḥ prāhuritthaṃ nṛpādhipam || 6 ||

There, the ministers and subjects, respecting the king who was protecting that kingdom, approached and said this to the ruler.

वहाँ, मंत्री और प्रजा, उस राज्य की रक्षा करते हुए राजा का सम्मान करते हुए, उसके पास गए और शासक से यह कहा।

6.76.7

प्रकृतय ऊचुःराजन्नस्माकमधिपो यस्त्वया स पुरस्कृतःमृत्युना विनिगीर्णोऽसौ मत्स्येनेवामिषं मृदु ॥ ७ ॥

prakṛtaya ūcuḥrājannasmākamadhipo yastvayā sa puraskṛtaḥmṛtyunā vinigīrṇo'sau matsyenevāmiṣaṃ mṛdu || 7 ||

The subjects said, 'O King, our ruler whom you appointed has been swallowed by death like a fish swallows soft bait.'

प्रजा ने कहा, 'हे राजन्, जिस शासक को आपने नियुक्त किया था, उसे मृत्यु ने मछली के समान नरम बैट को निगल लिया है।'

6.76.8

तत्तत्पालयितुं राज्यं प्रसादं कर्तुमर्हसिअप्रार्थितोपयातानां त्यागोऽर्थानां च नोचितः ॥ ८ ॥

tattatpālayituṃ rājyaṃ prasādaṃ kartumarhasiaprārthitopayātānāṃ tyāgo'rthānāṃ ca nocitaḥ || 8 ||

You should protect that kingdom and show grace. It is not appropriate to abandon those who have come seeking help.

आपको उस राज्य की रक्षा करनी चाहिए और कृपा दिखानी चाहिए। मदद माँगने वालों को छोड़ना उचित नहीं है।

6.76.9

श्रीवसिष्ठ उवाचैति संप्रार्थितो राजा तदङ्गीकृत्य तद्वचःसप्तसागरचिह्नायाः स बभूव भुवः पतिः ॥ ९ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaiti saṃprārthito rājā tadaṅgīkṛtya tadvacaḥsaptasāgaracihnāyāḥ sa babhūva bhuvaḥ patiḥ || 9 ||

Sri Vasistha said, 'Thus, the king, being requested, accepted their words and became the ruler of the earth marked by the seven seas.'

श्री वसिष्ठ ने कहा, 'इस प्रकार, राजा, अनुरोध किए जाने पर, उनके शब्दों को स्वीकार करते हुए, सात समुद्रों से चिह्नित पृथ्वी का शासक बन गया।'

6.76.10

समः शान्तमना मौनी वीतरागो विमत्सरःप्राप्तकार्यैककरणः स तिरोहितविस्मय ॥ १० ॥

samaḥ śāntamanā maunī vītarāgo vimatsaraḥprāptakāryaikakaraṇaḥ sa tirohitavismaya || 10 ||

He was calm, peaceful, silent, free from desire and envy, focused on achieving his goal, and devoid of wonder.

वह शांत, मन में शांति, मौन, इच्छा और ईर्ष्या से मुक्त, अपने लक्ष्य पर केंद्रित और आश्चर्य से रहित था।

6.76.11

पातालतलनष्टानां सागराकारकारिणांपितामहानां गङ्गाम्बु शुश्रुवे तारणक्षमम्॥ ११ ॥

pātālatalanaṣṭānāṃ sāgarākārakāriṇāmpitāmahānāṃ gaṅgāmbu śuśruve tāraṇakṣamam || 11 ||

The water of the Ganges, capable of saving the ancestors who were destroyed and made into an ocean in the underworld, was heard.

पाताल में नष्ट हुए और सागर के रूप में परिवर्तित पितामहों को बचाने की क्षमता रखने वाले गंगा जल की खबर मिली।

6.76.12

तदा किल स्वर्गनदी वहति स्म न भूतलेपितृणां भूतविख्योऽभूत्तेन गङ्गाजलाञ्जलिः ॥ १२ ॥

tadā kila svarganadī vahati sma na bhūtalepitṝṇāṃ bhūtavikhyo'bhūttena gaṅgājalāñjaliḥ || 12 ||

At that time, the heavenly river did not flow for the ancestors who were smeared on the earth. The water of the Ganges was offered with the name of the beings.

उस समय, स्वर्ग की नदी पृथ्वी पर लिपटे हुए पितामहों के लिए नहीं बही। गंगा जल प्राणियों के नाम से अर्पित किया गया।

6.76.13

भगीरथेन च महीमवतारयितुं दिवःगङ्गां गृहीतो नियमस्ततःप्रभृति भूभृता ॥ १३ ॥

bhagīrathena ca mahīmavatārayituṃ divaḥgaṅgāṃ gṛhīto niyamastataḥprabhṛti bhūbhṛtā || 13 ||

Bhagiratha took a vow to bring down the Ganges from heaven to earth, and from that time onwards, the earth has been sustained.

भगीरथ ने स्वर्ग से गंगा को पृथ्वी पर लाने के लिए व्रत लिया, और तब से पृथ्वी सुरक्षित है।

6.76.14

ततो राज्यं परित्यज्य मन्त्रिणां भूपतिः शमीतपसे कार्यकार्येहो जगाम विजनं वनम्॥ १४ ॥

tato rājyaṃ parityajya mantriṇāṃ bhūpatiḥ śamītapase kāryakāryeho jagāma vijanaṃ vanam || 14 ||

Then, the king, abandoning his kingdom and ministers, went to a solitary forest to perform penance for the sake of duty.

तब, राजा ने अपना राज्य और मंत्रियों को छोड़ दिया और कर्तव्य के लिए तपस्या करने के लिए एकांत वन में चले गए।

6.76.15

तत्र वर्षसहस्रैश्च समाराध्य पुनःपुनःब्रह्माणं शंकरं जह्नुं भुवि गङ्गामयोजयत्॥ १५ ॥

tatra varṣasahasraiśca samārādhya punaḥpunaḥbrahmāṇaṃ śaṃkaraṃ jahnuṃ bhuvi gaṅgāmayojayat || 15 ||

There, by worshipping for thousands of years repeatedly, he united the Ganges with Brahma, Shankara, and Jahnu on earth.

वहाँ, हजारों वर्षों तक बार-बार पूजा करके, उन्होंने पृथ्वी पर ब्रह्मा, शंकर और जह्नु के साथ गंगा को जोड़ा।

6.76.16

ततः प्रभृत्यमलतरङ्गभङ्गिनी जगत्पतेः शशिविभृदङ्गसङ्गिनी । नभस्तलान्निपतति गां त्रिमार्गगा महात्मनामिव बहुपुण्यसंततिः ॥ १६ ॥

tataḥ prabhṛtyamalataraṅgabhaṅginī jagatpateḥ śaśivibhṛdaṅgasanginī | nabhastalānni patati gāṃ trimārgagā mahātmanāmiva bahupuṇyasaṃtatiḥ || 16 ||

From then on, the Ganges, which breaks the waves of impurities, and is adorned with the moon-like emblem of the Lord of the universe, descends from the sky to the earth, following three paths, like the continuous virtuous deeds of great souls.

तब से, पापों की लहरों को तोड़ने वाली और विश्व के स्वामी के चंद्रमा-सदृश चिह्न से सुशोभित गंगा, आकाश से पृथ्वी पर तीन मार्गों से उतरती है, मानो महान आत्माओं के लगातार पुण्य कार्य हों।

6.76.17

स्फुरत्तरङ्गभङ्गिनी स्वफेनपुञ्जहासिनी प्रसन्नपुण्यमञ्जरीयुतेव धर्मसंततिः । भगीरथे महीपतौ यशःप्रचारवीथिका तदा हि सा त्रिमार्गगा महीतले बभूव ह ॥ १७ ॥

sphurattaraṅgabhaṅginī svaphenapuñjahāsinī prasannapuṇyamañjarīyuteva dharmasaṃtatiḥ | bhagīrathe mahīpatau yaśaḥpracāravīthikā tadā hi sā trimārgagā mahītale babhūva ha || 17 ||

The Ganges, which breaks the sparkling waves and laughs with its own foam, is endowed with the pleasant garland of virtues, like the continuous flow of righteousness. At that time, in the reign of King Bhagiratha, she became famous and spread her glory, following three paths on the earth.

गंगा, जो चमकीली लहरों को तोड़ती है और अपने फेन से हँसती है, प्रसन्न पुण्य की माला से सुशोभित है, मानो धर्म का लगातार प्रवाह हो। उस समय, राजा भगीरथ के शासनकाल में, वह पृथ्वी पर तीन मार्गों से अपनी ख्याति और यश फैलाती हुई प्रसिद्ध हो गई।

Chapter 77

6.77.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतामवष्टभ्य दृशं भगीरथधिया धृताम् । समः स्वस्थो यथाप्राप्तं कार्यमाहर शान्तधीः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etāmavaṣṭabhya dṛśaṃ bhagīrathadhiyā dhṛtām | samaḥ svastho yathāprāptaṃ kāryamāhara śāntadhīḥ || 1 ||

Vasishtha said: Holding this vision with the mind of Bhagiratha, remain calm and composed, and perform your duties as they come, with a peaceful mind.

वसिष्ठ ने कहा: भगीरथ के मन से इस दृष्टि को पकड़े रखें, शांत और स्वस्थ रहें, और शांत मन से अपने कार्यों को यथाप्राप्त करें।

6.77.2

इदं पूर्वं परित्यज्य क्रोडीकृत्य मनःखगम् । शान्तमात्मनि तिष्ठ त्वं शिखिध्वज इवाचलः ॥ २ ॥

idaṃ pūrvaṃ parityajya kroḍīkṛtya manaḥkhagam | śāntamātmani tiṣṭha tvaṃ śikhidhvaja ivācalaḥ || 2 ||

Leaving this behind, making the mind like a bird, remain calm in the self, like the immovable mountain with the banner of fire.

इसे पीछे छोड़कर, मन को पक्षी की तरह बनाएँ, शांत स्वयं में रहें, जैसे अचल पर्वत जिसका ध्वज अग्नि है।

6.77.3

श्रीराम उवाच । कोऽसौ शिखिध्वजो नाम कथं वा लब्धवान्पदम् । एतन्मे कथय ब्रह्मन्भूयो बोधविवृद्धये ॥ ३ ॥

śrīrāma uvāca | ko'sau śikhidhvajo nāma kathaṃ vā labdhavānpadam | etanme kathaya brahmanbhūyo bodhavivṛddhaye || 3 ||

Rama said: Who is this Shikhidhvaja? How did he attain his position? Please tell me, O Brahman, for the increase of my knowledge.

राम ने कहा: यह शिखिध्वज कौन है? उसने कैसे अपना पद प्राप्त किया? मुझे बताएँ, हे ब्रह्मन्, मेरे ज्ञान की वृद्धि के लिए।

6.77.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । द्वापरे भवतां पूर्वमिदानीं च भविष्यतः । तेनैव संनिवेशेन दंपती स्निग्धतां गतौ ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | dvāpare bhavatāṃ pūrvamidānīṃ ca bhaviṣyataḥ | tenaiva saṃniveśena daṃpatī snigdhatāṃ gatau || 4 ||

Vasishtha said: In the Dvapara age, before you, and even now, by that very arrangement, the couple has attained affection.

वसिष्ठ ने कहा: द्वापर युग में, आपके पहले, और अभी भी, उसी व्यवस्था से, दंपती ने स्नेह प्राप्त किया है।

6.77.5

श्रीराम उवाच । यत्पूर्वमासीद्भगवंस्तदिदानीं तथैव हि । भविष्यति किमर्थं वै वद मे वदतां वर ॥ ५ ॥

śrīrāma uvāca | yatpūrvamāsīd bhagavaṃstatadānīṃ tathaiva hi | bhaviṣyati kimarthaṃ vai vada me vadatāṃ vara || 5 ||

Rama said: O Lord, what was before is the same now. Why will it be so in the future? Please tell me, O best of speakers.

राम ने कहा: हे भगवान्, जो पहले था वह अभी भी है। भविष्य में क्यों ऐसा ही होगा? मुझे बताएँ, हे वक्ताओं में श्रेष्ठ।

6.77.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । जगन्निर्माणनियतेरस्या ब्रह्मादिसंविदः । ईदृश्यवस्थितिर्नित्यमनिवार्यस्वभावजा ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jagan nirmāṇa niyat erasya bramhādi saṃvidaḥ | īdṛśyavasthitir nityam anivārya svabhāvajā || 6 ||

Sri Vasistha said: The creation of the universe is an eternal and inevitable manifestation of the consciousness of Brahma and others.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ब्रह्मा आदि की चेतना का यह विश्व निर्माण नियत और अनिवार्य स्वभाव की नित्य अवस्थिति है।

6.77.7

यदन्यद्भूत्वा पुनर्भवति भूरिशः । अभूत्वैव भवत्यन्यः पुनश्च न भवत्यलम् ॥ ७ ॥

yadanyadbhūtvā punarbhvati bhūriśaḥ | abhūtvaiva bhavatyanyaḥ punaśca na bhavatyalam || 7 ||

That which becomes something else and then becomes abundant again, and that which, without becoming, becomes something else and then does not become anything at all.

जो कुछ और बन जाता है और फिर पुनः बहुत बन जाता है, और जो बिना बने ही कुछ और बन जाता है और फिर कुछ भी नहीं बनता।

6.77.8

अन्यत्प्राक्संनिवेशाढ्यं सादृश्येन विवल्गति । सदृशा विषमाश्चैव यथा सरसि वीचयः ॥ ८ ॥

anyat prāk saṃniveśāḍhyaṃ sādṛśyena vivalgati | sadṛśā viṣamāścaiva yathā sarasi vīcayaḥ || 8 ||

Something else, previously established, separates due to similarity. Similar and dissimilar, like the waves in a lake.

कुछ और, पहले से स्थापित, समानता के कारण अलग हो जाता है। समान और असमान, जैसे तालाब में लहरें।

6.77.9

ता एवान्याश्च दृश्यन्ते व्यवस्थाः संसृतौ तथा । तस्माद्राजेव भूयोऽपि वक्ष्यमाणकथेश्वरः ॥ ९ ॥

tā evānyāśca dṛśyante vyavasthāḥ saṃsṛtau tathā | tasmād rājeva bhūyo'pi vakṣyamāṇakatheśvaraḥ || 9 ||

Those and other arrangements are seen in the cycle of existence. Therefore, the lord of the story to be told will be even more like a king.

वे और अन्य व्यवस्थाएँ अस्तित्व के चक्र में दिखाई देती हैं। इसलिए, कहानी का स्वामी और भी अधिक राजा की तरह होगा।

6.77.10

भविष्यति महातेजास्तद्वृत्तान्तमिमं शृणु । द्वापरे पूर्वमभवदतीते सप्तमे मनौ ॥ १० ॥

bhaviṣyati mahātejās tadvṛttāntam imaṃ śṛṇu | dvāpare pūrvam abhavad atīte saptame manau || 10 ||

Listen to this story of great splendor that will happen. Previously, it occurred in the seventh Manu of the past Dvapara Yuga.

इस महान तेजस्वी कहानी को सुनो जो होगी। पहले, यह पिछले द्वापर युग के सातवें मनु में हुआ था।

6.77.11

चतुर्युगे चतुर्थे तु सर्गेऽस्मिन्कुरुणां कुले । जम्बूद्वीपे प्रसिद्धस्य विन्ध्यस्यादूरसंस्थिते ॥ ११ ॥

caturyuge caturthe tu sarge'smin kuruṇāṃ kule | jambūdvīpe prasiddhasya vindhyasyādūrasaṃsthite || 11 ||

In the fourth yuga of this creation, in the lineage of the Kurus, in the famous Jambudvipa, near the Vindhya mountains.

इस सृष्टि के चतुर्थ युग में, कुरु वंश के कुल में, प्रसिद्ध जम्बूद्वीप में, विन्ध्य पर्वत के निकट स्थित।

6.77.12

मालवानां पुरे श्रीमाञ्छिखिध्वज इतीश्वरः । धैर्यौदार्यदशायुक्तः क्षमाशमदमान्वितः ॥ १२ ॥

mālavānāṃ pure śrīmāñchi khidhvaja itīśvaraḥ | dhairyodāryadaśāyuktaḥ kṣamāśamadamānvitaḥ || 12 ||

In the city of the Malavas, there was a prosperous lord named Shikhidhvaja, endowed with courage, generosity, patience, self-control, and humility.

मालवाओं के नगर में, एक समृद्ध ईश्वर थे जिनका नाम शिखिध्वज था, जो धैर्य, उदारता, क्षमा, संयम और विनम्रता से युक्त थे।

6.77.13

शूरः शुभसमाचारो मौनी गुणगणाकरः । आहर्ता सर्वयज्ञानां जेता सर्वधनुष्मताम् ॥ १३ ॥

śūraḥ śubhasamācāro maunī guṇagaṇākaraḥ | āhartā sarvayajñānāṃ jetā sarvadhanuṣmatām || 13 ||

He was a hero, of noble conduct, silent, a repository of virtues, performer of all sacrifices, and conqueror of all archers.

वह एक वीर, उत्तम आचरण वाला, मौनी, गुणों का भंडार, सभी यज्ञों का कर्ता, और सभी धनुर्धरों का विजेता था।

6.77.14

कर्ता सकलकार्याणां भर्ता पूर्ववपुर्भुवः । पेशलस्निग्धमधुरो विदग्धः प्रीतिसागरः ॥ १४ ॥

kartā sakalakāryāṇāṃ bhartā pūrvavapurbhuvaḥ | peśalasnigdhamadhuro vidagdhaḥ prītisāgaraḥ || 14 ||

He was the doer of all actions, the supporter of the previous forms of the earth, skilled, affectionate, sweet-spoken, wise, and an ocean of love.

वह सभी कार्यों का कर्ता, पृथ्वी के पूर्व रूपों का पोषक, कुशल, स्नेही, मधुरभाषी, विद्वान्, और प्रेम का सागर था।

6.77.15

सुन्दरः शान्तसुभगः प्रतापी धर्मवत्सलः । वदिता विनयार्थानां दाता सकलसंपदाम् ॥ १५ ॥

sundaraḥ śāntasubhagaḥ pratāpī dharmavatsalaḥ | vaditā vinayārthānāṃ dātā sakalasampadām || 15 ||

He was beautiful, peaceful, fortunate, radiant, devoted to dharma, a speaker of humble words, and a giver of all wealth.

वह सुंदर, शांत, सौभाग्यशाली, प्रतापी, धर्मपरायण, विनम्र वचनों का वक्ता, और सभी सम्पदाओं का दाता था।

6.77.16

भोक्ता सत्सङ्गसहितः सुश्रोता सकलश्रुतेः । वेदासौ माननाशून्यः स्त्रैणं तृणवदस्पृशन् ॥ १६ ॥

bhoktā satsaṅgasahitaḥ suśrotā sakalaśruteḥ | vedāsau mānanāśūnyaḥ straiṇaṃ tṛṇavadaspṛśan || 16 ||

The enjoyer, accompanied by good company, is a good listener of all knowledge. He is devoid of respect for the Vedas and touches women like straw.

भोगी, सत्संग के साथ, सभी ज्ञान का अच्छा श्रोता है। वह वेदों का सम्मान नहीं करता और तृण की तरह स्त्रियों को छूता है।

6.77.17

पितरि स्वर्गमापन्ने बाल एवोत्तमौजसा । कृत्वा षोडशवर्षाणि स्वयं दिग्विजयं वशी ॥ १७ ॥

pitari svargamāpanne bāla evottamaujasā | kṛtvā ṣoḍaśavarṣāṇi svayaṃ digvijayaṃ vaśī || 17 ||

When his father attained heaven, he, being a child of excellent vigor, completed sixteen years and himself conquered the directions.

जब उसके पिता स्वर्ग प्राप्त हुए, तब वह, उत्तम ऊर्जा वाला बालक, सोलह वर्ष पूरे करके स्वयं दिशाओं को जीता।

6.77.18

नूनं साम्राज्यसंपत्त्या भूमण्डलमयोजयत्। अतिष्ठद्विगताशङ्कं पालयन्धर्मतः प्रजाः ॥ १८ ॥

nūnaṃ sāmrājyasaṃpattayā bhūmaṇḍalamayojayat | atiṣṭhadvigatāśaṅkaṃ pālayandharmataḥ prajāḥ || 18 ||

Certainly, with the attainment of imperial sovereignty, he ruled the earth and remained free from fear, protecting the subjects according to dharma.

निश्चय ही, साम्राज्य की सम्पत्ति प्राप्त करके, उसने पृथ्वी पर शासन किया और निडर होकर धर्म के अनुसार प्रजा की रक्षा की।

6.77.19

स धीमान्मन्त्रिभिः सार्धं यशसा शुक्लयन्दिशःअथ गच्छत्सु वर्षेषु वसन्ते प्रोल्लसत्यलम्॥ १९ ॥

sa dhīmānmantribhiḥ sārdhaṃ yaśasā śuklayandiśaḥatha gacchatsu varṣeṣu vasante prollasatyalam || 19 ||

He, the wise one, along with his ministers, with fame, shone brightly in the spring season as he moved through the regions.

वह बुद्धिमान, अपने मंत्रियों के साथ, यश के साथ, ऋतुओं में घूमते हुए, वसंत ऋतु में चमक उठा।

6.77.20

पुष्पेषु जृम्भमाणेषु स्फुरत्सु शशिरश्मिषु। मञ्जरीजालदोलासु विटपान्तःपुरान्तरे ॥ २० ॥

puṣpeṣu jṛmbhamāṇeṣu sphuratsu śaśiraśmiṣu | mañjarījāladolāsu viṭapāntaḥpurāntare || 20 ||

In the blooming flowers, in the shining moonbeams, in the swaying clusters of blossoms, within the inner sanctum of the tree.

खिलते हुए फूलों में, चमकती चाँदनी में, झूलते हुए फूलों के झुंड में, वृक्ष के अंतःपुर में।

6.77.21

रजःकर्पूरधवले वलद्दलकपाटके। आमोदविलसत्पुष्पगुलुच्छकवितानके ॥ २१ ॥

rajaḥkarpūradhavale valaddalakapāṭake | āmodavilasatpuṣpaguṇcchakavitānake || 21 ||

In the garden, the white camphor-like dust, the tender leaves, and the canopy of blossoming flowers.

उद्यान में रजत के समान सफेद कर्पूर की धूल, कोमल पत्तियों और फूलों की छत्रछाया है।

6.77.22

गायत्सु गहनेषूच्चैर्मिथुनेष्वलिनां मिथः। आवाति मधुरे वायौ शशिशीकरशीतले ॥ २२ ॥

gāyatsu gahaneṣūccairmithuneṣvalināṁ mithaḥ | āvāti madhure vāyau śaśiśīkarasītale || 22 ||

In the dense forests, the melodious songs of the birds resonate, and the gentle breeze carries the sweet fragrance, cooled by the moonlight.

घने जंगलों में पक्षियों के मधुर गान गूँजते हैं, और चंद्रमा की शीतल चाँदनी से ठंडी हवा मधुर सुगंध लेकर बहती है।

6.77.23

कदलीकन्दलीकच्छतलपल्लवलासिनि। कान्तां प्रति बभूवास्य वसच्चेतः समुऽत्सुकम्॥ २३ ॥

kadalīkandalīkacchatalapallavalāsini | kāntāṁ prati babhūvāsya vasaccetaḥ samu'tsukam || 23 ||

In the garden adorned with the tender leaves of the banana plant, his mind became eagerly devoted to his beloved.

केले की कोमल पत्तियों से सजे उद्यान में, उसका मन अपनी प्रियतमा के प्रति उत्सुक हो गया।

6.77.24

क्षीबं कुसुमसंभारसौगन्ध्यमधुरासवैः । मनो नान्यास्पदं चक्रे सवसन्तमिवोदितम् ॥ २४ ॥

kṣībaṁ kusumasaṁbhārasauganḍyamadhurāsavaiḥ | mano nānyāspadaṁ cakre savasantamivoditam || 24 ||

His mind, intoxicated by the sweet fragrance and taste of the flowers, found no other object of interest, as if spring itself had arisen.

फूलों की मधुर सुगंध और स्वाद से मतवाला उसका मन किसी और विषय में रुचि नहीं ले सका, जैसे वसंत ऋतु खुद उभर आई हो।

6.77.25

उद्यानवनदोलासु लीलाकमलिनीषु च । कदा प्रणयिनीं मुग्धां हेमाब्जमुकुलस्तनीम् ॥ २५ ॥

udyānavanadolāsu līlākamalinīṣu ca | kadā praṇayinīṁ mugdhāṁ hemābjamukulasthanīm || 25 ||

In the garden swings and playful games, when will I find my beloved, innocent and with breasts like golden lotus buds?

उद्यान की झूलों और खेलों में, कब मुझे मेरी प्रियतमा मिलेगी, जो निर्दोष और सोने के कमल की कलियों के समान स्तनों वाली हो?

6.77.26

करिष्ये कामिनीमङ्के पर्यङ्के कुङ्कुमाङ्किताम् । कदा कमलवल्लीनां दोलास्वलिरिवालिनीम् ॥ २६ ॥

kariṣye kāminīmaṅke paryaṅke kuṅkumāṅkitām | kadā kamalavallīnāṃ dolāsvalirivālinīm || 26 ||

When will I place the beloved, adorned with kumkum, on my lap in the bed, like a swinging creeper of lotuses?

मैं कब कुंकुम से अलंकृत प्रियतमा को अपनी गोद में पलंग पर रखूंगा, जैसे हिलती हुई कमल की लता की तरह?

6.77.27

आलोला तां निवेक्ष्यामि बालां भुजलतानुगाम् । मृणालहारकुन्देन्दुवृन्दवल्लयभिलाषिणी ॥ २७ ॥

ālolā tāṃ nivekṣyāmi bālāṃ bhujalatānugām | mṛṇālahārakundenduvṛndavallayabhilāṣiṇī || 27 ||

I will gaze upon her, swaying, young, following the movement of her arms, adorned with a garland of lotus flowers, desiring the embrace of a cluster of jasmine flowers.

मैं उस हिलती हुई, युवा, अपनी बाहों के हिलने के साथ चलने वाली, कमल के फूलों की माला से अलंकृत, चंबेली के गुच्छे के आलिंगन की इच्छा रखने वाली प्रियतमा को देखूंगा।

6.77.28

मत्कृते मदनातप्ता कदा स्यादिन्दुसुन्दरी । इति चिन्तापरो भूत्वा कुसुमावचयोन्मुखः ॥ २८ ॥

matkṛte madanātaptā kadā syādindusundarī | iti cintāparo bhūtvā kusumāvacayonmukhaḥ || 28 ||

When will she, afflicted by love for me, become as beautiful as the moon? Thus, becoming absorbed in thought, he turned towards the gathering of flowers.

वह, मेरे प्रेम से पीड़ित, चंद्रमा की तरह सुंदर कब होगी? ऐसा सोचकर, वह विचारों में डूब गया और फूलों के समूह की ओर मुड़ा।

6.77.29

विजहार वनान्तेषु कुसुमोपवनेषु च । वनोपवनलेखासु लीलाकमलिनीषु च ॥ २९ ॥

vijahāra vanānteṣu kusumopavaneṣu ca | vanopavanalekhāsu līlākamalinīṣu ca || 29 ||

He wandered in the forest edges, in the flower gardens, in the forest and garden landscapes, and in the playful lotus ponds.

वह वन के किनारों पर, फूलों के बगीचों में, वन और बगीचों के नजारों में, और खेल के कमल तालाबों में भटकता रहा।

6.77.30

वल्लीवलयगेहेषु विविधोद्यानभूमिषु । वनोपवनविन्यासवर्णनावलितासु च ॥ ३० ॥

vallīvalayageheṣu vividhodyānabhūmiṣu | vanopavanavinyāsavarṇanāvalitāsu ca || 30 ||

He wandered in the abodes of creeper clusters, in various garden lands, and in the forest and garden arrangements adorned with descriptions.

वह लताओं के घरों में, विभिन्न बगीचों की भूमि में, और वर्णनों से सजे वन और बगीचों के व्यवस्थाओं में भटकता रहा।

6.77.31

शृङ्गाररसगर्भासु कथास्वरमतोन्मनाः । हृदि हारलसत्कायविलोलालकवल्लरीः ॥ ३१ ॥

śṛṅgārarasagarbhāsu kathāsvaramatonmanāḥ | hṛdi hāralasatkāyavilolālakavallarīḥ || 31 ||

Immersed in the delight of love-filled stories, with a heart adorned with a necklace of swaying locks.

श्रृंगार रस से भरी कथाओं में मग्न, हृदय में हार के समान लटकते ललाट के बालों से सजे हुए।

6.77.32

कुमारीः पूजयामास सुवर्णकलशस्तनीःएतन्मन्ये विदुर्भव्या मन्त्रिणो नृपनिश्चयम् ॥ ३२ ॥

kumārīḥ pūjayāmāsa suvarṇakalaśastanīḥetanmanye vidurbhavyā mantriṇo nṛpaniścayam || 32 ||

The maiden worshipped with golden pitchers. I believe the wise ministers will understand the king's decision.

कुमारी ने सोने के कलशों से पूजा की। मैं सोचता हूँ कि बुद्धिमान मंत्री राजा के निर्णय को समझेंगे।

6.77.33

इङ्गिताकारवेदित्वमेव मन्त्रिपदं परम् । अथ तस्य विवाहाय मन्त्रिवर्गो विचारयन् ॥ ३३ ॥

iṅgitākāraveditvameva mantrīpadam param | atha tasya vivāhāya mantrīvargo vicārayan || 33 ||

Knowing the meaning of gestures is the supreme quality of a minister. Then, the council of ministers deliberated on his marriage.

इशारों का अर्थ जानना ही मंत्री का परम गुण है। फिर, मंत्रिपरिषद ने उसके विवाह पर विचार किया।

6.77.34

सुराष्ट्राधिपतेः कन्यां ययाचे यौवतान्विताम् । नवयौवनसंपन्नां भार्यात्वे विधिनोत्तमाम् ॥ ३४ ॥

surāṣṭrādhipateḥ kanyāṃ yayāce yauvatānvitām | navayauvanasaṃpannāṃ bhāryātve vidhinottamām || 34 ||

He requested the daughter of the king of Surashtra, who was endowed with youth and possessed the best qualities for a wife.

उसने सुराष्ट्र के राजा की बेटी की माँग की, जो युवावस्था से सम्पन्न थी और पत्नी के रूप में सर्वोत्तम गुणों से युक्त थी।

6.77.35

उपयेमे स तामात्मसदृशीं प्रतिमामिव । चूडालेति भुवि ख्याता नाम्ना नृपतिसुन्दरी ॥ ३५ ॥

upayeme sa tāmātmasadṛśīṃ pratimāmiva | cūḍāleti bhuvi khyātā nāmnā nṛpatisundarī || 35 ||

He married her, who was like a reflection of himself, known on earth as Chudala, beautiful like a queen.

उसने उससे विवाह किया, जो उसकी ही प्रतिमा थी, पृथ्वी पर चूडाला के नाम से जानी जाती थी, राजकुमारी की तरह सुंदर।

6.77.36

सा तं भर्तारमासाद्य रेजे फुल्लेव पद्मिनी । नीलनीरजनेत्रां तां चूडालां स शिखिध्वजः ॥ ३६ ॥

sā taṃ bhartāramāsādya reje phulleiva padminī | nīlanīrajaneitrāṃ tāṃ cūḍālāṃ sa śikhidhvajaḥ || 36 ||

She, having approached her husband, shone like a blooming lotus | Shikhidhvaja, with his blue-lotus-like eyes, saw Chudala.

वह अपने पति के पास जाकर खिले कमल की तरह शोभा पा रही थी | नील कमल के समान नेत्रों वाले शिखिध्वज ने चूडाला को देखा।

6.77.37

स्नेहाद्विकासयामास सूर्यो देवो यथाब्जिनीम् । अवर्धत तयोः प्रीतिरन्योन्यार्पितचेतसोः ॥ ३७ ॥

snehaādvikāsayāmāsa sūryo devo yathābjinīm | avardhata tayoḥ prītiranyonyārpitacetasoḥ || 37 ||

With affection, he made her bloom like the sun makes a lotus bloom | Their love for each other grew, with their minds devoted to each other.

स्नेह से, उसने उसे सूर्य की तरह खिलाया, जैसे सूर्य कमल को खिलाता है | उन दोनों के बीच प्रेम बढ़ता गया, जिनके मन एक दूसरे के लिए समर्पित थे।

6.77.38

हावभावविलासाढ्यैरङ्गैर्नवलतेव सा । सुमन्त्र्यर्पितसर्वार्थः स सुखी सुस्थितप्रजाः ॥ ३८ ॥

hāvabhāvavilāsāḍhyairaṅgairnavalateva sā | sumantryarpitasarvārthaḥ sa sukhī susthitaprajāḥ || 38 ||

With her charming gestures and expressions, she appeared like a new creeper | He, with all his desires fulfilled by good advice, was happy and his subjects were content.

अपने मोहक भाव और विलास से, वह एक नई लता की तरह दिखाई देती थी | अच्छे सलाह से अपनी सभी इच्छाओं को पूरा करके, वह खुश था और उसके प्रजाजन संतुष्ट थे।

6.77.39

राजहंस इवाब्जिन्या रेमे दयितया तया । अन्तःपुरेषु दोलासु लीलाकमलिनीषु च ॥ ३९ ॥

rājahaṃsa ivābjinyā reme dayitayā tayā | antaḥpureṣu dolāsu līlākamalinīṣu ca || 39 ||

Like a royal swan with his beloved lotus, he enjoyed with her | In the inner chambers, on swings, and in playful activities.

एक राजहंस की तरह अपनी प्रिय कमल के साथ, उसने उसके साथ आनंद लिया | अंतःपुरों में, झूलों पर, और खेल-कूद में।

6.77.40

उद्यानेषु विहारेषु लतापुष्पग्रहेषु च । कदम्बवनलेखासु चन्दनागुरुवीथिषु ॥ ४० ॥

udyāneṣu vihāreṣu latāpuṣpagraheṣu ca | kadambavanalekhāsu candanāguruvīthiṣu || 40 ||

In gardens, in places of recreation, in gathering flowers and creepers | In the groves of kadamba trees, and in the paths of sandalwood and aguru.

उद्यानों में, विहार स्थानों में, लताओं और फूलों को एकत्र करने में | कदंब के वनों में, और चंदन और अगरु की पगडंडियों में।

6.77.41

मन्दारदामलोलासु कदलीकन्दलीषु च । पुरान्तेषु वनान्तेषु दिगन्तेषु सरस्सु च ॥ ४१ ॥

mandāradāmalolāsu kadalīkandalīṣu ca | purānteṣu vanānteṣu diganteṣu sarassu ca || 41 ||

In the gardens of Mandara trees, in the plantations of banana trees, in the outskirts of cities, in the depths of forests, in the horizons, and in the lakes, there was joy.

मन्दार वृक्षों के उद्यानों में, केले के पौधों में, नगरों के बाहरी इलाकों में, जंगलों के गहरे भागों में, क्षितिजों पर और झीलों में आनंद था।

6.77.42

जंगलेषु जनान्तेषु जम्बूजम्बीरजातिषु । बभूवाह्लादकं सर्वं तयोरन्योन्यचेष्टितम् ॥ ४२ ॥

jaṅgaleṣu janānteṣu jambūjambīrajātiṣu | babhūvāhlādakaṃ sarvaṃ tayoranyonyaceṣṭitam || 42 ||

In the forests, in the midst of people, and among the Jambu and Jambira tribes, everything became delightful due to their mutual interactions.

जंगलों में, लोगों के बीच में, और जामुन और जामुन जातियों के बीच, उनके परस्पर व्यवहार के कारण सब कुछ आनंदमय हो गया।

6.77.43

सद्वर्षयोर्धुरवरैर्द्युभूम्योरिव कान्तयोः । नित्यमेव वियुक्तत्वात्प्रियत्वाच्चेष्टितस्य च ॥ ४३ ॥

sadvṛṣayordhuravarairdyubhūmyoriva kāntayoḥ | nityameva viyuktatvātpriyatvāccaceṣṭitasya ca || 43 ||

Like the best horses of the good rainy season, they were always dear to each other due to their constant separation and affectionate behavior.

वर्षा ऋतु के श्रेष्ठ घोड़ों की तरह, वे हमेशा एक-दूसरे से प्यारे थे क्योंकि वे हमेशा अलग रहते थे और उनका व्यवहार प्यार भरा था।

6.77.44

मिथः कलाकलापस्य कोविदौ तौ बभूवतुः । स्वरूपमेकमेवैतौ दधतुर्मित्रतां गतौ ॥ ४४ ॥

mithaḥ kalākalāpasya kovidau tau babhūvatuḥ | svarūpamekamevaitau dadhaturmmitratāṃ gatau || 44 ||

They became experts in the art of conversation with each other, and they both shared the same nature, having attained friendship.

वे एक-दूसरे से बातचीत की कला में माहिर हो गए, और वे दोनों एक ही स्वभाव के थे, मित्रता प्राप्त करके।

6.77.45

अन्योन्यहृदयस्थत्वादिव संक्रान्तमक्षतम्सर्वशास्त्रार्थवैदग्ध्यं चित्राद्यपि मुखात्प्रभोः ॥ ४५ ॥

anyonyahṛdayasthatvādiva saṃkrāntamakṣatamsarvaśāstrārthavaidagdhyaṃ citrādyapi mukhātprabhoḥ || 45 ||

As if they were in each other's hearts, they were unharmed and skilled in all the arts and sciences, even in painting and other crafts, from the mouth of the lord.

जैसे वे एक-दूसरे के हृदय में हों, वे अक्षत और सभी कलाओं और विज्ञानों में निपुण थे, चित्रकला और अन्य कलाओं में भी, प्रभु के मुख से।

6.77.46

बालः कालादिवागृह्य साऽसीत्सर्वार्थपण्डिता । नृत्यवाद्यादि यावच्च चूडालावदनादसौ ॥ ४६ ॥

bālaḥ kālādivāgṛhya sā'sītsarvārthapaṇḍitā | nṛtyavādyādi yāvacca cūḍālāvadanādasau || 46 ||

The child, grasping the essence of time, became proficient in all arts | She learned dance, music, and other skills from Chudala's teachings

बालक, समय का सार ग्रहण करके, सभी कलाओं में निपुण हो गया | उसने चूडाला के उपदेशों से नृत्य, संगीत और अन्य कौशल सीखे

6.77.47

अशिक्षत बभूवाथ कलानामतिकोविदः । अमावास्यामिवेन्द्वर्कावन्योन्यविलसत्कलौ ॥ ४७ ॥

aśikṣata babhūvātha kalānāmatikovidaḥ | amāvāsyāmive'ndvarkāvanyonyavilasatkalau || 47 ||

She became highly skilled in the arts | Like the sun and moon on a new moon night, they delighted in each other's company

वह कलाओं में अत्यंत कुशल हो गई | अमावस्या की रात के सूर्य और चंद्रमा की तरह, वे एक दूसरे की संगत में विलसित हो गए

6.77.48

मिथो हृदयसंस्थौ तौ द्वावप्यैक्यमुपागतौ । तौ संस्थितावेकरसावन्योन्यं दयितावुभौ ॥ ४८ ॥

mitho hṛdayasaṃsthau tau dvāvapyaikyamupāgatau | tau saṃsthitāvekarasāvanyonyaṃ dayitāvubhau || 48 ||

Both of them, united in heart, became one | They remained in harmony, dear to each other

दोनों, हृदय से एक हो गए, एक हो गए | वे एक रस में स्थित हो गए, एक दूसरे के प्रिय बने

6.77.49

पुष्पामोदाविवाभिन्नौ भूतलस्थौ शिवाविव । वैदग्ध्यसुन्दरमती सर्वशास्त्रार्थपण्डितौ ॥ ४९ ॥

puṣpāmodāvivābhinnau bhūtalasthau śivāviva | vaidagdhyasundaramatī sarvaśāstrārthapaṇḍitau || 49 ||

Like the inseparable fragrance and flowers, they remained on earth like Shiva | Skilled, beautiful-minded, and knowledgeable in all scriptures

फूलों और सुगंध की तरह अभिन्न, वे पृथ्वी पर शिव की तरह रहे | कुशल, सुंदर मन वाले, और सभी शास्त्रों के ज्ञानी

6.77.50

कार्यार्थं च भुवं प्राप्तौ कमलाकमलाधवौ । स्नेहात्प्रसन्नमधुरौ समविज्ञातवादिनौ ॥ ५० ॥

kāryārthaṃ ca bhuvaṃ prāptau kamalākamalādhvau | snehaātprasannamadhurau samavijñātavādinau || 50 ||

For the sake of duty, they reached the earth, Kamala and Kamaladhava | Out of affection, they were pleasant and sweet-speaking, well-versed in knowledge

कर्तव्य के लिए, वे पृथ्वी पर आए, कमला और कमलाधव | स्नेह से, वे प्रसन्न और मधुर बोलने वाले, ज्ञान में पारंगत थे

6.77.51

अनुवृत्तिपरावास्तां लोकवृत्तान्ततद्विदौकलाकलापसंपन्नौ लसद्रसरसायनौशीतलस्निग्धमुग्धाङ्गौ शशाङ्कौ द्वाविवोदितौ ॥ ५१ ॥

anuvṛttiparāvāstāṃ lokavṛttāntatadvidaukalākalāpasaṃpannau lasadrasarasāyanauśītalasnigdhamugdhāṅgau śaśāṅkau dvāvivoditau || 51 ||

The two moons, shining with the essence of the world's stories, endowed with the beauty of arts, with bodies that are cool, smooth, and charming, have risen.

दो चाँद, जो लोक की कहानियों के सार से चमक रहे हैं, कलाओं की सुंदरता से सुसज्जित हैं, जिनके शरीर ठंडे, चिकने और मोहक हैं, उग आए हैं।

6.77.52

रेजे लसच्च रतिभोगविलासकान्तमन्तःपुरेषु मिथुनं तदनुत्तमश्रीब्रह्माण्डखण्डकुहरेष्विव राजहंसयुग्मं विकासिमदमन्मथमन्दचारि ॥ ५२ ॥

reje lasacca ratibhogavilāsakāntamantaḥpureṣu mithunaṃ tadanuttamaśribrahmāṇḍakhaṇḍakuhareṣviva rājahaṃsayugmaṃ vikāsimadamanmathamandacāri || 52 ||

In the inner chambers, the royal swans, shining with the delight of love, enjoyment, and grace, appear like the supreme couple in the divine realm, spreading the sweet and gentle influence of love.

अंतःपुरों में, प्रेम, भोग और लास्य से चमकते हुए राजहंस जोड़े, दिव्य धाम के परम जोड़े के समान प्रतीत होते हैं, जो प्रेम की मधुर और कोमल प्रभाव फैलाते हैं।

Chapter 78

6.78.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवं बहूनि वर्षाणि मिथुनं निर्भरस्पृहम् । रेमे यौवनलीलाभिरमन्दाभिर्दिने दिने ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃ bahūni varṣāṇi mithunaṃ nirbharaśpṛham | reme yauvanalīlābhiramandābhirdine dine || 1 ||

Shri Vasistha said: In this way, for many years, the couple, free from desires, enjoyed youthful pleasures, day by day, with gentle amusements.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, कई वर्षों तक, इस जोड़े ने, इच्छाओं से मुक्त होकर, यौवन की लीलाओं से, दिन प्रतिदिन, मन्द आनंद लिया।

6.78.2

अथ यातेषु बहुषु वर्षेष्वावृत्तिशालिषु । शनैर्गलितातारुण्ये भिन्नकुम्भादिवाम्भसि ॥ २ ॥

atha yāteṣu bahuṣu varṣeṣvāvṛttiśāliṣu | śanairgalitatāruṇye bhinnakumbhādivāmbhasi || 2 ||

Then, after many years had passed, as youth gradually faded away, like water from a broken pot.

फिर, कई वर्षों के बीत जाने पर, जैसे टूटे घड़े से पानी धीरे-धीरे बहता है, वैसे ही यौवन धीरे-धीरे समाप्त हो गया।

6.78.3

तरङ्गनिकराकारभङ्गुरव्यवहारिणि । पातः पक्वफलस्येव मरणं दुर्निवारणम् ॥ ३ ॥

taraṅganikarākārabhaṅguravyavahāriṇi | pātaḥ pakvaphalasyeva maraṇaṃ durnivāraṇam || 3 ||

Like the fall of a ripe fruit, death is inevitable, in the midst of the fragile and transient activities of life.

जैसे पके फल का गिरना, मृत्यु अनिवार्य है, जीवन की नाज़ुक और क्षणिक गतिविधियों के बीच।

6.78.4

हिमाशनिरिवाम्भोजे जरा निपतनोन्मुखी । आयुर्गलत्यविरतं जलं करतलादिव ॥ ४ ॥

himāśanirivāmbhoje jarā nipatanonmukhī | āyurgalatyavirataṃ jalaṃ karatalādiva || 4 ||

Like a lotus flower fading under the frost, old age approaches, and life slips away continuously, like water from the palm.

जैसे बर्फ के नीचे कमल का फूल मुरझा जाता है, वैसे ही बुढ़ापा आता है, और जीवन हाथ के पानी की तरह लगातार बहता जाता है।

6.78.5

इन्द्रजालमिवासत्यं जीवनं जीर्णसंस्थिति । सुखानि प्रपलायन्ते शरा इव धनुश्च्युताः ॥ ५ ॥

indrajālamivāsatyaṃ jīvanaṃ jīrṇasaṃsthiti | sukhāni prapalāyante śarā iva dhanuścyutāḥ || 5 ||

Life is like an illusion, a worn-out existence, where pleasures flee like arrows shot from a bow.

जीवन एक भ्रम की तरह है, एक थका हुआ अस्तित्व, जहाँ आनंद धनुष से छूटे तीरों की तरह भाग जाते हैं।

6.78.7

पतन्ति चेतो दुःखानि तृष्णा गृध्र इवामिषम् । बुद्बुदः प्रावृषीवाप्सु शरीरं क्षणभङ्गुरम् ॥ ७ ॥

patanti ceto duḥkhāni tṛṣṇā gṛdhra ivāmiṣam | budbudaḥ prāvṛṣīvāpsu śarīraṃ kṣaṇabhaṅguram || 7 ||

The mind falls into sorrows, like a vulture to its prey. The body is as transient as a bubble in the rainy season.

मन दुःखों में गिरता है, जैसे गिद्ध अपने शिकार पर झपटता है। शरीर वर्षा ऋतु में बुलबुले की तरह क्षणभंगुर है।

6.78.8

रम्भागर्भ इवासारो व्यवहारो विचारगः । सत्वरं युवता याति कान्तेवाप्रियकामिनः ॥ ८ ॥

rambhāgarbha ivāsāro vyavahāro vicāragaḥ | satvaraṃ yuvatā yāti kāntevāpriyakāminaḥ || 8 ||

Like the essence of a Rambha fruit, worldly dealings are full of thoughts. Quickly, youth passes away like a beloved seeking displeasure.

जैसे रम्भा फल का सार, व्यवहार विचारों से भरा होता है। तेजी से, युवावस्था ऐसे ही बीत जाती है जैसे प्रिय अप्रिय की इच्छा करता है।

6.78.9

बलादरतिरायाता वैरस्यमिव पादपम् । तदिह स्याच्छुभाकारं स्थिरं किमतिशोभनम् ॥ ९ ॥

balādaratirāyātā vairasyamiva pādapam | tadiha syācchubhākāraṃ sthiraṃ kimatiśobhanam || 9 ||

Forcibly brought pleasure is like enmity to a tree. What here is of good form, stable, and very beautiful?

जबरन लाई गई आनंद एक पेड़ के लिए शत्रुता की तरह है। यहां कौन सा सुंदर रूप, स्थिर, और बहुत सुंदर है?

6.78.10

यदासाद्य पुनश्चेतो दशासु न विदूयते । इति निर्णीय युग्मं तत्संसारव्याधिभेषजम् ॥ १० ॥

yadāsādya punaśceto daśāsu na vidūyate | iti nirṇīya yugmaṃ tatsaṃsāravyādhibheṣajam || 10 ||

Having attained which, the mind does not suffer in any condition. Thus, having determined, that pair is the remedy for the disease of worldly existence.

जिसे प्राप्त करने पर, मन किसी भी स्थिति में दुःख नहीं उठाता। इस प्रकार, निर्णय लेने पर, वह जोड़ा संसार रोग का उपचार है।

6.78.11

चिरं विचारयामास शास्त्रमध्यात्मसंमतम् । आत्मज्ञानैकमात्रेण संसृत्याख्या विषूचिका ॥ ११ ॥

ciraṃ vicārayāmāsa śāstramadhyātmasaṃmatam | ātmajñānaikamātreṇa saṃsṛtyākhyā viṣūcikā || 11 ||

For a long time, he contemplated the scriptures approved by the self. By the sole knowledge of the self, the cycle of existence is called a disease.

लंबे समय तक, उसने आत्मा द्वारा स्वीकृत शास्त्रों पर विचार किया। आत्मज्ञान के द्वारा, संसार चक्र को एक रोग कहा जाता है।

6.78.12

संशाम्यतीति निश्चित्य तावास्तां तत्परायणौ तच्चित्तौ तद्गतप्राणौ तन्निष्ठौ तद्विदाश्रयौ ॥ १२ ॥

saṃśāmyatīti niścitya tāvāstāṃ tatparāyaṇau taccittau tadgataprāṇau tanniṣṭhau tadvidāśrayau || 12 ||

Having determined that it is calming, they remained there, devoted to that, their minds and breaths focused on that, established in that, and taking refuge in the knowledge of that.

यह समझकर कि यह शांत हो रहा है, वे दोनों वहीं रहे, उसी में लीन, उसी पर ध्यान और प्राण लगाए, उसी में स्थित और उसी ज्ञान में आश्रय लिये।

6.78.13

तदा तदर्चनपरौ तदीहौ तौ विरेजतुः तत्रैवातिघनाभ्यासौ बोधयन्तौ परस्परम् ॥ १३ ॥

tadā tadarcana-parau tadīhau tau virejatuḥ tatraivātighnābhyāsau bodhayantau parasparam || 13 ||

At that time, they were devoted to worshipping that, and they shone in that world. They were deeply engaged in practice there, enlightening each other.

उस समय, वे उसकी पूजा में लगे हुए थे, और उस जगह पर चमक रहे थे। वे वहाँ गहन अभ्यास में लगे हुए थे, एक दूसरे को प्रकाशित कर रहे थे।

6.78.14

तत्प्रीतौ तत्समारम्भावन्योन्यं तौ बभूवतुः अथ साविरतं राम रमणीयपदक्रमान् ॥ १४ ॥

tatprītau tatsamārambhāvanyonyaṃ tau babhūvatuḥ atha sāviratataṃ rāma ramaṇīyapadakramān || 14 ||

Delighted in that, they both engaged in that endeavor mutually. Then, O Rama, they followed the delightful path continuously.

उसमें प्रसन्न, वे दोनों उस उद्यम में परस्पर लगे हुए थे। फिर, हे राम, वे निरंतर आनंददायक मार्ग का अनुसरण करते रहे।

6.78.15

श्रुत्वाध्यात्मविदां वक्राच्छास्त्रार्थांस्तारणक्षमान् इत्थं विचारयामास स्वमात्मानमहर्निशम् ॥ १५ ॥

śrutvādhyātmavidāṃ vakrācchāstrārthāṃstāraṇakṣamān itthaṃ vicārayāmāsa svamātmānamaharniśam || 15 ||

Having heard the profound meanings of the scriptures from the self-realized, he thus contemplated his own self day and night.

आत्मज्ञानी से शास्त्रों के गहन अर्थ सुनकर, उसने दिन-रात अपने स्वयं के आत्मा पर ऐसे ही विचार किया।

6.78.16

अव्यापृता व्यापृता वा धिया धवलयेद्धया प्रेक्षे तावत्स्वमात्मानं किमहं स्यामिति स्वयम् ॥ १६ ॥

avyāpṛtā vyāpṛtā vā dhiyā dhavalayeddhayā prekṣe tāvatsvamātmānaṃ kimahaṃ syāmiti svayam || 16 ||

Whether engaged or not, with the intellect, one should purify the heart. One should observe one's own self, thinking, 'Who am I?'

चाहे व्यस्त हों या न हों, बुद्धि से हृदय को शुद्ध करें। अपने स्वयं के आत्मा पर विचार करें, सोचें, 'मैं कौन हूँ?'

6.78.17

कस्यायमागतो मोहः कथमभ्युत्थितः क्व वा । देहस्तावज्जडो मूढो नाहमित्येव निश्चयः ॥ १७ ॥

kasyāyamāgato mohaḥ kathamabhyutthitaḥ kva vā | dehastāvajjaḍo mūḍho nāhamityeva niścayaḥ || 17 ||

Whose is this delusion? How has it arisen? Where is it? The body is indeed inert and foolish; it is certainly not 'I'.

यह मोह किसका है? यह कैसे उत्पन्न हुआ? यह कहाँ है? शरीर तो जड़ और मूढ़ है, यह निश्चित रूप से 'मैं' नहीं है।

6.78.18

आबालमेतत्संसिद्धं मतौ चैवानुभूयते । कर्मेन्द्रियगणश्चास्मादभिन्नावयवात्मकः ॥ १८ ॥

ābālameatatsaṃsiddhaṃ matau caivānubhūyate | karmeṃdriyagaṇaścāsmādabhinnāvayavātmakaḥ || 18 ||

From childhood, this is well-established in the mind and is experienced. The group of organs of action is also inseparable from this.

बचपन से ही यह मन में स्थापित है और अनुभव किया जाता है। कर्म इंद्रियों का समूह भी इससे अभिन्न है।

6.78.19

अवयवावयविनोर्न भेदो जड एव च । बुद्धीन्द्रियगणोऽप्येवं जड एवेति दृश्यते ॥ १९ ॥

avayavāvayavinornabhedo jaḍa eva ca | buddhīndriyagaṇo'pyevaṃ jaḍa eveti dṛśyate || 19 ||

There is no difference between the part and the whole; both are inert. Similarly, the group of cognitive senses is also seen as inert.

अवयव और अवयवी में कोई भेद नहीं है; दोनों जड़ हैं। इसी तरह, बुद्धि इंद्रियों का समूह भी जड़ दिखाई देता है।

6.78.20

प्रेर्यते मनसा यस्माद्यष्ट्येव भुवि लोष्टकः । मनश्चैव जडं मन्ये संकल्पात्मकशक्ति यत् ॥ २० ॥

preryate manasā yasmādyaṣṭyeva bhuvi loṣṭakaḥ | manaścaiva jaḍaṃ manye saṃkalpātmakaśakti yat || 20 ||

Just as a clod of earth is moved by the mind, I consider the mind itself to be inert, as it is the power of resolve.

जैसे मिट्टी का ढेला मन द्वारा हिलाया जाता है, उसी तरह मैं मन को भी जड़ मानता हूँ, क्योंकि यह संकल्प की शक्ति है।

6.78.21

क्षेपणैरिव पाषाणः प्रेर्यते बुद्धिनिश्चयैः । बुद्धिर्निश्चयरूपैवं जडा सत्तैव निश्चयः ॥ २१ ॥

kṣepaṇairiva pāṣāṇaḥ preryate buddhinirṇayaiḥ | buddhirniścayarūpaivaṃ jaḍā sattai va niścayaḥ || 21 ||

Just as a stone is moved by throwing, the intellect is moved by decisive thoughts. Thus, the intellect, which is the form of decisive thoughts, is indeed inert.

जैसे पत्थर फेंकने से हिलता है, वैसे ही बुद्धि निश्चयात्मक विचारों से हिलाई जाती है। इस प्रकार, निश्चयात्मक विचारों का रूप धारण करने वाली बुद्धि जड़ है।

6.78.22

खातेनेव सरिन्नूनं साऽहंकारेण वाह्यते । अहंकारोऽपि निःसारो जड एव शवात्मकः ॥ २२ ॥

khāteneva sarinnūnaṃ sā'haṃkāreṇa vāhyate| ahaṃkāro'pi niḥsāro jaḍa eva śavātmakaḥ || 22 ||

Just as a river flows in a channel, the ego is carried by the sense of 'I'. Even the ego is lifeless, inert, and corpse-like.

जैसे नदी नाले में बहती है, वैसे ही अहंकार अपने आप को उठाता है। अहंकार भी निर्जीव, जड़ और शव जैसा है।

6.78.23

जीवेन जन्यते यक्षो बालेनेव भ्रमात्मकः । जीवश्च चेतनाकाशो वातात्मा हृदये स्थितः ॥ २३ ॥

jīvena janyate yakṣo bāleneva bhramātmakaḥ| jīvaśca cetanākāśo vātātmā hṛdaye sthitaḥ || 23 ||

From the individual soul (jiva), the illusion (yaksha) is born, like a child's delusion. The individual soul is the sky of consciousness, the essence of wind, residing in the heart.

जीव (जीव) से भ्रम (यक्ष) उत्पन्न होता है, जैसे बच्चे का भ्रम। जीव चेतना का आकाश है, हवा का स्वरूप, हृदय में स्थित है।

6.78.24

सुकुमारोऽन्तरन्येन केनापि परिजीवति । अहो नु ज्ञातमेतेन चेत्योल्लेखकलङ्किना ॥ २४ ॥

sukumāro'ntaranyena kenāpi parijīvati| aho nu jñātametena cetyollēkhakalaṅkinā || 24 ||

The delicate one (sukumara) lives within another, supported by something else. Alas, this is known by the one who is stained by the mark of consciousness.

सुकुमार (सुकुमार) दूसरे के अंदर रहता है, किसी और चीज से सहारा लेता है। अहो, यह उससे ज्ञात है जो चेतना के चिह्न से दागदार है।

6.78.25

जीवो जीवति जीर्णेन चिद्रूपेणात्मरूपिणा । चेत्यभ्रमवता जीवश्चिद्रूपेणैव जीवति ॥ २५ ॥

jīvo jīvati jīrṇena cidrūpeṇātmarūpiṇā| cetyabhramavatā jīvaścidrūpeṇaiva jīvati || 25 ||

The individual soul (jiva) lives with the worn-out form of the self (atmarupina), which is the form of consciousness. The individual soul, deluded by consciousness, lives in the form of consciousness itself.

जीव (जीव) पुराने स्वरूप से जीवित रहता है, जो आत्मा का स्वरूप है। चेतना से भ्रमित जीव चेतना के स्वरूप में ही जीवित रहता है।

6.78.26

आमोदः पवनेनेव खातेनेव सरिद्रयः। असत्यजडचेत्यांशचयनाच्चिद्वपुर्जडम्॥ २६॥

āmodaḥ pavaneneva khāteneva saridrayaḥ| asatyajaḍacetyāṃśacayanāccidvapurjaḍam || 26 ||

Joy (amoda) is like the wind (pavana) and the river (saridraya) in a channel. From the accumulation of unreal, inert, and conscious parts, the form of consciousness becomes inert.

आनंद (आमोद) हवा (पवन) और नदी (सरिद्रय) के समान है। असत्य, जड़ और चेतन अंशों के संचय से, चेतना का रूप जड़ हो जाता है।

6.78.27

महाजलगतो ह्यग्निरिव रूपं स्वमुज्झति। सद्वासद्वा यदाभाति चित्समाधौ सति स्वतः॥ २७॥

mahājalagato hyagniriva rūpaṃ svamujjhati | sadvāsadvā yadābhāti cittasamādhau sati svataḥ || 27 ||

Just as a great fire in water gives up its own form, so too, in the state of pure consciousness, whether it appears as real or unreal, it arises spontaneously.

जैसे पानी में एक बड़ी आग अपना रूप छोड़ देती है, वैसे ही, शुद्ध चेतना की अवस्था में, चाहे यह वास्तविक लगे या अवास्तविक, यह स्वतः उत्पन्न होता है।

6.78.28

स्वरूपमलमुत्सृज्य तदेव भवति क्षणात्। एवं चिद्रूपमप्येतच्चेत्योन्मुखतया स्वयम्॥ २८॥

svarūpamalamutsṛjya tadeva bhavati kṣaṇāt | evaṃ cidrūpamapyetaccetyonmukhatayā svayam || 28 ||

Abandoning its own impure form, it immediately becomes that. Thus, even this form of consciousness, by its own nature, turns towards consciousness.

अपने अशुद्ध रूप को छोड़कर, यह तुरंत उसी में बदल जाता है। इस प्रकार, यह चेतना का रूप, अपने स्वभाव से, चेतना की ओर मुड़ जाता है।

6.78.29

जडं शून्यमसत्कल्पं चैतन्येन प्रबोध्यते। इति संचिन्त्य चूडाला केनैषा चित्प्रचेतनी॥ २९॥

jaḍaṃ śūnyamasatkalpaṃ caitanyena prabodhyate | iti saṃcintya cūḍālā kenaiṣā citpracetanī || 29 ||

The inert, void, and unreal are awakened by consciousness. Thus, reflecting, Chudala thought, 'By what is this consciousness awakened?'

जड़, शून्य और असत् चेतना से जागृत होते हैं। इस प्रकार विचार करके, चूडाला ने सोचा, 'इस चेतना को किसने जगाया?'

6.78.30

इति संचिन्तयामास चिरायेत्थं व्यबुध्यत। अहो नु चिरकालेन ज्ञातं ज्ञेयमनामयम्॥ ३०॥

iti saṃcintayāmāsa cirāyetthaṃ vyabudhyata | aho nu cirakālena jñātaṃ jñeyamanāmayam || 30 ||

Thus reflecting, she realized after a long time, 'Ah, after a long time, the knowable has been known without flaw.'

इस प्रकार विचार करके, वह लंबे समय के बाद समझी, 'अहा, लंबे समय के बाद, ज्ञेय बिना किसी दोष के ज्ञात हो गया।'

6.78.31

यद्वै विज्ञेयतां कृत्वा न कश्चिद्धीयते पुनः। एते हि चिद्विलासान्ता मनोबुद्धीन्द्रियादयः॥ ३१॥

yadvai vijñeyatāṃ kṛtvā na kaścid dhīyate punaḥ | ete hi cidvilāsāntā manobuddhīndriyādayaḥ || 31 ||

That which, having been made known, is not thought of again, these indeed are the manifestations of consciousness, such as the mind, intellect, and senses.

जो ज्ञात होने के बाद फिर से नहीं सोचा जाता, ये ही चेतना के विलास हैं, जैसे मन, बुद्धि और इंद्रियाँ।

6.78.32

असन्तः सर्व एवाहो द्वितीयेन्दुपदस्थिताः। महाचिदेकैवास्तीह महासत्तेति योच्यते ॥ ३२ ॥

asantaḥ sarva evāho dvitīyendupadasthitāḥ| mahācidekaivāstīha mahāsatteti yocyate || 32 ||

All beings are insentient, situated in the second lunar phase| Only the great consciousness exists here, known as the great being

सभी जीव अचेतन हैं, दूसरे चन्द्र चरण में स्थित| यहाँ केवल महान चेतना है, जिसे महान सत्ता कहा जाता है

6.78.33

निष्कलङ्का समा शुद्धा निरहंकाररूपिणी। शुद्धसंवेदनाकारा शिवं सन्मात्रमच्युतम् ॥ ३३ ॥

niṣkalaṅkā samā śuddhā nirahaṃkārarūpiṇī| śuddhasaṃvedanākārā śivaṃ sanmātramacyutam || 33 ||

She is flawless, equal, pure, devoid of ego| Pure consciousness, the eternal, imperishable Shiva

वह दोषरहित, समान, शुद्ध, अहंकाररहित है| शुद्ध चेतना, अविनाशी, अमर शिव

6.78.34

सकृद्विभाता विमला नित्योदयवती सदा। सा ब्रह्मपरमात्मादिनामभिः परिगीयते ॥ ३४ ॥

sakṛdvibhātā vimalā nityodayavatī sadā| sā brahmaparamātmādināmabhiḥ parigīyate || 34 ||

She, who is eternally radiant and pure, is praised by names such as Brahma, Paramatma, etc.

वह, जो नित्य उदयी और शुद्ध है, ब्रह्म, परमात्मा आदि नामों से स्तुति की जाती है

6.78.35

चेत्यचेतनचित्तादि नास्या भिन्नं न मानतः। तयैषा चैत्यते चिच्छ्रीः सैषाद्या चिदिति स्मृता ॥ ३५ ॥

cetyacetanacittādi nāsyā bhinnaṃ na mānataḥ| tayaiṣā caitayate cicchrīḥ saiṣādyā ciditi smṛtā || 35 ||

There is nothing different from her, neither sentient nor insentient| She is the one who illuminates, known as consciousness

उससे कुछ भी अलग नहीं है, न चेतन न अचेतन| वह ही है जो प्रकाशित करती है, जिसे चेतना के नाम से जाना जाता है

6.78.36

अचेत्यं यदिदं चित्त्वं तत्तस्या रूपमक्षतम्। मनोबुद्धीन्द्रियाद्यर्थरूपैः सैव विजृम्भते ॥ ३६ ॥

acetyaṃ yadidaṃ cittvaṃ tattasyā rūpamakṣatam| manobuddhīndriyādyartharūpaiḥ saiva vijṛmbhatē || 36 ||

Whatever is insentient in this world is her unblemished form| She manifests through the forms of mind, intellect, senses, etc.

जो कुछ भी यहाँ अचेतन है, वह उसका निर्दोष रूप है| वह मन, बुद्धि, इन्द्रियों आदि के रूपों से प्रकट होती है

6.78.37

तरङ्गकणकल्लोलकलनेयं चिदात्मनि। जगद्रूपपदार्थानां सत्ता स्फुरति मातरि ॥ ३७ ॥

taraṅgakaṇakallolakalaneyaṃ cidātmani | jagadrūpapadārthānāṃ sattā sphurati mātari || 37 ||

In the consciousness, the existence of the world's forms and objects shines like the waves and particles of the ocean.

चेतना में, संसार के रूपों और वस्तुओं का अस्तित्व समुद्र की तरंगों और कणों की तरह चमकता है।

6.78.38

यदिदं तत्परं रूपं तस्याः खलु महाचितेः । शुद्धचिन्मणिवत्सा हि सेयं समसमोदिता ॥ ३८ ॥

yadidaṃ tatparaṃ rūpaṃ tasyāḥ khalu mahāciteḥ | śuddhacinmaṇivatsā hi seyaṃ samasamoditā || 38 ||

This supreme form is indeed of that great consciousness. Like a pure gem of consciousness, it is equally risen.

यह परम रूप वास्तव में उस महान चेतना का है। शुद्ध चेतना के मणि की तरह, यह समान रूप से उभरा है।

6.78.39

अनन्ययैव या शत्तया जगज्जृम्भिकया स्थिता । सत्ता मायातिरेकेण नान्या संभवतीह हि ॥ ३९ ॥

ananyayaiva yā śattayā jagajjṛmbhikayā sthitā | sattā māyātirekeṇa nānyā saṃbhavatīha hi || 39 ||

The existence that is established by the unique power that manifests the world does not exist here without the transcendence of illusion.

जो अद्वितीय शक्ति द्वारा स्थापित है जो संसार को प्रकट करती है, वह अस्तित्व भ्रम के पार न होने पर यहाँ नहीं होता।

6.78.40

विचित्रतेव भाण्डानां ननु हेमतया यथा । सा तथोदेति तद्रूपमात्मानं चेतति स्वयम् ॥ ४० ॥

vicitratēva bhāṇḍānāṃ nanu hēmatayā yathā | sā tathōdēti tadrūpamātmānaṃ cētati svayam || 40 ||

Just as various vessels appear to be made of gold, so does it manifest itself in that form and perceives itself.

जैसे विभिन्न बर्तन सोने के बने हुए प्रतीत होते हैं, वैसे ही यह उस रूप में प्रकट होता है और अपने आप को जानता है।

6.78.41

स्वचित्तेन द्रवत्वेन तरङ्गादित्वमम्बुषु । महाचितौ जगच्चित्तादुदेतीवानुदेत्यपि ॥ ४१ ॥

svacittēna dravatvēna taraṅgāditvamambuṣu | mahācitau jagaccittādudētīvānudētyapi || 41 ||

Just as the liquidity of water manifests as waves, so does the great consciousness manifest from the world's consciousness.

जैसे पानी की द्रवता तरंगों के रूप में प्रकट होती है, वैसे ही महान चेतना संसार की चेतना से प्रकट होती है।

6.78.42

तदात्मैव यथा यातो रूपवान् जलधौ द्रवात् । एवं चिन्मात्रमेवाहमनहंभावमाततम् ॥ ४२ ॥

tadātmaiva yathā yāto rūpavān jaladhau dravāt | evaṃ cinmātramevāhamanahaṃbhāvamātatam || 42 ||

Just as the form of the moon is reflected in the water, similarly, I am pure consciousness, free from the sense of 'I' and 'mine'.

चाँद की छवि जल में प्रतिबिंबित होती है, उसी प्रकार, मैं शुद्ध चेतना हूँ, 'मैं' और 'मेरा' की भावना से मुक्त।

6.78.43

न तस्य जन्ममरणे न तस्य सदसद्गती । न नाशः संभवत्यस्य चिन्मात्रनभसः क्वचित् ॥ ४३ ॥

na tasya janmamaraṇe na tasya sadasadgatī | na nāśaḥ saṃbhavatyasya cinmātranabhasaḥ kvacit || 43 ||

There is no birth or death for it, no state of being or non-being. There is no destruction for this pure consciousness anywhere.

इसके लिए न जन्म है न मृत्यु, न ही सत् या असत् की गति। इस शुद्ध चेतना का कहीं भी नाश नहीं होता।

6.78.44

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयं चिदादित्योऽतिनिर्मलः । आहो नु चिरकालेन शान्तास्मि परिनिर्वृता ॥ ४४ ॥

acchedyo'yamadāhyo'yaṃ cidādityo'tinirmalaḥ | āho nu cirakālena śāntāsmi parinirvṛtā || 44 ||

This cannot be cut, nor can it be burned. It is the sun of consciousness, extremely pure. Ah, after a long time, I am at peace, completely fulfilled.

यह काटा नहीं जा सकता, न ही जलाया जा सकता। यह चेतना का सूर्य है, अत्यंत शुद्ध। अहो, लंबे समय के बाद, मैं शांत हूँ, पूर्णतः तृप्त।

6.78.45

निर्वामि भ्रमनिर्मुक्तमासे निर्मन्दराब्धिवत् । असदाभासमत्यच्छमनन्तमजमच्युतम् ॥ ४५ ॥

nirvāmi bhramanirmuktamāse nirmandarābdhivat | asadābhāsamatyacchamanantamajamacyutam || 45 ||

I abide in the state free from delusion, like the calm ocean without waves. It is beyond the illusion, extremely clear, eternal, unborn, and imperishable.

मैं भ्रम से मुक्त अवस्था में रहता हूँ, जैसे लहरों रहित शांत समुद्र। यह माया से परे, अत्यंत स्पष्ट, अनंत, अजन्मा और अविनाशी है।

6.78.46

आत्माकाशमनाबाधममलं परमं चिरम् । अनन्तमिदमाकाशं फलौघाश्चाफलादिकाः ॥ ४६ ॥

ātmākāśam anābādham amalaṃ paramaṃ ciram | anantam idam ākāśaṃ phalaughāś cāphalādikāḥ || 46 ||

The self is like the vast sky, unobstructed, pure, supreme, and eternal. This infinite space includes all fruits and non-fruits.

आत्मा विशाल आकाश की तरह है, अवरुद्ध नहीं, शुद्ध, परम, और नित्य। यह अनंत अंतरिक्ष सभी फलों और अफलों को शामिल करता है।

6.78.47

सुरासुरयुतं विश्वमेतन्मयमकृत्रिमम् । पुंस्त्वकर्ममयी सेना सर्वं मृन्मात्रकं यथा ॥ ४७ ॥

surāsurayutaṃ viśvametanmayamakṛtrimam| puṃstvakarmamayī senā sarvaṃ mṛnmātrakaṃ yathā || 47 ||

This entire universe, filled with gods and demons, is uncreated and appears as an army of actions and masculinity, just like everything is made of clay.

यह पूरा ब्रह्मांड, देवताओं और असुरों से भरा हुआ, अकृत्रिम है और कर्म और पुरुषत्व की सेना के रूप में प्रकट होता है, जैसे सब कुछ मिट्टी का बना हो।

6.78.48

द्रष्टृदृश्यमयी सत्ता चिन्मात्रैक्यमयी तथा । इदमैक्यमिदं द्वित्वमहं नाहमितीति च ॥ ४८ ॥

draṣṭṛdṛśyamayī sattā cinmātraikyamayī tathā| idamaikyamidaṃ dvitvamahaṃ nāhamitīti ca || 48 ||

The existence that is made of the seer and the seen is also made of pure consciousness and oneness. This is oneness, this is duality, I am, I am not, and so on.

जो अस्तित्व द्रष्टा और दृश्य से बना है, वह शुद्ध चेतना और एकता से भी बना है। यह एकता है, यह द्वैत है, मैं हूँ, मैं नहीं हूँ, और इसी तरह।

6.78.49

क इव भ्रमसंमोहः कथं कस्य कुतः क्व वा । स्वमनन्तमनायासमुपशान्तास्मि संस्थिता ॥ ४९ ॥

ka iva bhramasammohaḥ kathaṃ kasya kutaḥ kva vā| svamanantamanāyāsamupaśāntāsmi saṃsthitā || 49 ||

What is this delusion and confusion? How, of whom, from where, and where? I am established in my own infinite, effortless, and peaceful self.

यह भ्रम और भ्रांति क्या है? कैसे, किसका, कहाँ से, और कहाँ? मैं अपने अनंत, अनायास, और शांत स्व में स्थित हूँ।

6.78.50

निर्वाणपरिनिर्वाणा गतमासे गतज्वरम्। अचेतनं चेतन वा योऽयमाभाति चेतति ॥ ५० ॥

nirvāṇaparinirvāṇā gatamāse gatajvaram| acetanaṃ cetana vā yo'yamābhāti cetati || 50 ||

I have attained the state beyond nirvana, free from fever. Whether it is non-sentient or sentient, whatever appears, it is consciousness.

मैंने निर्वाण से परे की अवस्था प्राप्त कर ली है, ज्वर से मुक्त। चाहे यह अचेतन हो या चेतन, जो भी प्रकट होता है, वह चेतना है।

6.78.51

भासमानात्म तद्रूपं खं महाचिति संस्थितम्। नेदं नाहं न चान्यच्च न भावाभावसंभवः। शान्तं सर्वं निरालम्बं केवलं संस्थितं परम्॥ ५१ ॥

bhāsamānātma tadrūpaṃ khaṃ mahāciti saṃsthitam| nedaṃ nāhaṃ na cānyacca na bhāvābhāvasaṃbhavaḥ| śāntaṃ sarvaṃ nirālambaṃ kevalaṃ saṃsthitaṃ param || 51 ||

The self that shines is of that form, the sky, established in great consciousness. This is not that, not I, nor anything else, nor the occurrence of being or non-being. Everything is peaceful, without support, alone, established in the supreme.

जो आत्मा चमकती है, वह उस रूप की है, आकाश, महान चेतना में स्थित। यह वह नहीं है, न मैं हूँ, न ही कोई और, न ही होने या न होने का होना। सब कुछ शांत है, बिना सहारे के, अकेला, परम में स्थित।

6.78.52

इत्थंविचारणपरा परमप्रबोधाद्बुद्धा यथास्थितमिदं परमात्मतत्त्वम्। संशान्तरागभयमोहतमोविलासा शान्ता बभूव शरदम्बरलेखिकेव ॥ ५२ ॥

itthaṃvicāraṇaparā paramaprabodhādbuddhvā yathāsthitamidaṃ paramātmatattvam | saṃśāntarāgabhayamohatamovilāsā śāntā babhūva śaradambaralekhikeva || 52 ||

Thus, through deep contemplation and by the supreme awakening, understanding the true nature of the Supreme Self as it is, she became peaceful, free from passion, fear, delusion, and darkness, like the clear autumn sky.

इस प्रकार, गहन विचार और परम बोध से, परमात्मा के सच्चे स्वरूप को जानकर, वह शान्त हो गई, राग, भय, मोह और अंधकार से मुक्त, जैसे शरद ऋतु का साफ आकाश।

Chapter 79

6.79.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । दिनानुदिनमित्येषा स्वात्मारामतया तया । नित्यमन्तर्मुखतया बभूव प्रकृतिस्थिता ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | dinānudinamityeṣā svātmārāmatayā tayā | nityamantarmukhatayā babhūva prakṛtisthitā || 1 ||

Shri Vasishtha said: Day by day, she became established in her natural state through constant inner reflection and self-contentment.

श्री वसिष्ठ ने कहा: दिन प्रतिदिन, वह अपने स्वाभाविक अवस्था में स्थिर हो गई आत्म-संतुष्टि और निरंतर आंतरिक प्रतिबिंब के द्वारा।

6.79.2

नीरागा निरुपासङ्गा निर्द्वन्द्वा निःसमीहिता । न जहाति न चादत्ते प्रकृताचारचारिणी ॥ २ ॥

nīrāgā nirupāsaṅgā nirdvandvā niḥsamīhitā | na jahāti na cādatte prakṛtācāracāriṇī || 2 ||

Free from desire, attachment, duality, and selfish motives, she neither rejects nor accepts, following the natural course of action.

इच्छा, आसक्ति, द्वंद्व और स्वार्थी उद्देश्यों से मुक्त, वह न तो अस्वीकार करती है न ही स्वीकार करती है, प्राकृतिक कर्म का अनुसरण करते हुए।

6.79.3

परितीर्णभवाम्भोधिः शान्तसंदेहजालिका । परमात्ममहालाभपरिपूर्णान्तरात्मना ॥ ३ ॥

paritīrṇabhavāmbhodhiḥ śāntasaṃdehajālikā | paramātmamahālābhaparipūrṇāntarātmanā || 3 ||

Having crossed the ocean of worldly existence, she is free from doubts, fully realized in the supreme self, and her inner being is complete.

संसार के सागर को पार करने के बाद, वह संदेहों से मुक्त है, परमात्मा में पूर्णतः स्थापित है, और उसका अंतर्मन पूर्ण है।

6.79.4

विश्रान्ता सुचिरं श्रान्ता घनलब्धपदान्तरे । सर्वोपमातीततया जगामाव्यपदेश्यताम् ॥ ४ ॥

viśrāntā suciram śrāntā ghanalabdhapadāntare | sarvopamātītatayā jagāmāvyapadeśyatām || 4 ||

Having rested for a long time, exhausted from the intense effort to attain the supreme state, she transcended all comparisons and became indescribable.

लंबे समय तक विश्राम करने के बाद, परम अवस्था प्राप्त करने के प्रयास से थकी हुई, वह सभी उपमाओं को पार कर गई और अवर्णनीय हो गई।

6.79.5

इति सा भामिनी तस्य चूडाला वरवर्णिनी । स्वल्पेनैव हि कालेन ययौ विदितवेद्यताम् ॥ ५ ॥

iti sā bhāminī tasya cūḍālā varavarṇinī | svalpenaiva hi kālena yayau viditavedyatām || 5 ||

Thus, that beautiful Chudala, the wife of Shikhidvaja, attained the state of knowing the knowable in a very short time.

इस प्रकार, वह सुंदर चूडाला, शिखिद्वज की पत्नी, बहुत कम समय में ज्ञेय को जानने की अवस्था प्राप्त कर गई।

6.79.6

यथायमागतः कश्चिज्जागतः स्पन्दविभ्रमः । तथा विलीयते सर्वं तत्त्वज्ञानवति स्वयम् ॥ ६ ॥

yathāyamāgataḥ kaścijjāgataḥ spandavibhramaḥ| tathā vilīyate sarvaṃ tattvajñānavati svayam || 6 ||

Just as this worldly agitation arises, so it dissolves by itself in the knowledge of reality.

जैसे यह संसारिक चंचलता उत्पन्न होती है, वैसे ही यह तत्त्वज्ञान में अपने आप विलीन हो जाती है।

6.79.7

अदृष्टसकले शान्ते पदे विश्रान्तिमेत्य सा । रराज शरदच्छाभ्रमालेव गतसंभ्रमा ॥ ७ ॥

adṛṣṭasakale śānte pade viśrāntimetya sā| rarāja śaradacchābhraṃmāleva gatasaṃbhramā || 7 ||

Having attained rest in the peaceful state of the unseen, she shone like a cloudless autumn sky.

अदृष्ट सकल शान्त पद में विश्राम प्राप्त करने के बाद, वह शरद के बादलरहित आकाश की तरह चमक उठी।

6.79.8

अनाकुला समालोकमसंबन्धात्मनात्मनि । जरद्गवीव शैलाग्रं सतृणं प्राप्य संस्थिता ॥ ८ ॥

anākulā samālokamasaṃbandhātmanātmani| jaradgavīva śailāgraṃ satṛṇaṃ prāpya saṃsthitā || 8 ||

Unperturbed, she gazed at her own self, which is free from attachments, like an old cow that has found a grassy mountain peak.

अनाकुला अपने आप को देखते हुए, जो आसक्तियों से मुक्त है, वह एक पुरानी गाय की तरह घास से भरे पहाड़ के शिखर पर स्थित है।

6.79.9

स्वविवेकघनाभ्यासवशादात्मोदयेन सा । शुशुभे शोभना पुष्पलतेवाभिनवोद्गता ॥ ९ ॥

svavivekaghanābhyāsavaśādātmodayena sā| śuśubhe śobhanā puṣpalatevābhinavodgatā || 9 ||

Through the practice of deep self-discernment, she blossomed beautifully, like a freshly bloomed flower.

गहरी आत्म-विवेक के अभ्यास से, वह एक ताज़ा खिले फूल की तरह सुंदर रूप से खिल उठी।

6.79.10

अथ तामनवद्याङ्गीं कदाचित्स शिखिध्वजः । अपूर्वशोभामालोक्य स्मयमान उवाच ह ॥ १० ॥

atha tāmanavadyāṅgīṃ kadācitsa śikhidhvajaḥ| apūrvaśobhāmālokya smayamāna uvāca ha || 10 ||

Then, seeing her unblemished beauty, Shikhidhvaja, sometimes smiling, spoke to her.

तब, उसकी निर्दोष सुंदरता देखकर, शिखिध्वज कभी-कभी मुस्कुराते हुए उससे बोले।

6.79.11

भूयो यौवनयुक्तेव मण्डितेव पुनःपुनः । अधिकं राजसे तन्वि जगद्राजवती यथा ॥ ११ ॥

bhūyo yauvanayukteva maṇḍiteva punaḥpunaḥ | adhikaṃ rājase tanvi jagadrājavatī yathā || 11 ||

You, O slender one, shine more and more, adorned as if with youth again and again, like the queen of the world.

हे कोमलांगी, तुम बार-बार युवावस्था से सज्जित होकर, विश्व की रानी की तरह, और अधिक चमकती हो।

6.79.12

प्रपीतामृतसारेव लब्धा लभ्यपदेव च । आनन्दापूरपूर्णेव राजसे नितरां प्रिये ॥ १२ ॥

prapītāmṛtasāreva labdhā labhyapadeva ca | ānandāpūrapūrṇeva rājase nitarāṃ priye || 12 ||

O beloved, you shine intensely, as if you have attained the essence of nectar, the attainable state, and are full of the bliss of joy.

हे प्रिये, तुम ऐसे चमकती हो मानो तुमने अमृत का सार प्राप्त कर लिया हो, प्राप्य अवस्था को पा लिया हो, और आनंद से भरपूर हो।

6.79.13

उपशान्तं च कान्तं च दधाना सुन्दरं वपुः । अभिभूयेन्दुमायासि श्रियं कामपि कामिनि ॥ १३ ॥

upaśāntaṃ ca kāntaṃ ca dadhānā sundaraṃ vapuḥ | abhibhūyendumāyāsi śriyaṃ kāmapi kāmini || 13 ||

O beloved, possessing a beautiful body that is calm and lovely, you surpass even the moon in beauty, O desirable one.

हे प्रिये, शांत और सुंदर शरीर धारण करने वाली, तुम चाँद की सुंदरता को भी पार कर जाती हो, हे कामुक।

6.79.14

अभोगकृपणं शान्तमूर्जितं समतां गतम् । गम्भीरं च प्रशान्तं च चेतः पश्यामि ते प्रिये ॥ १४ ॥

abhogakṛpaṇaṃ śāntamūrjitaṃ samatāṃ gatam | gambhīraṃ ca praśāntaṃ ca cetaḥ paśyāmi te priye || 14 ||

O beloved, I see your mind as profound, calm, energetic, equanimous, and free from the miserliness of enjoyment.

हे प्रिये, मैं तुम्हारे मन को गहरा, शांत, ऊर्जावान, समतापूर्ण और भोग की कृपणता से मुक्त देखता हूँ।

6.79.15

तृणीकृत्य त्रिभुवनं पीताखिलजगद्रसम् । अनन्तोड्डामरं सौम्यं मनः पश्यामि ते प्रिये ॥ १५ ॥

tṛṇīkṛtya tribhuvanaṃ pītākhilajagadraram | anantoḍḍāmaraṃ saumyaṃ manaḥ paśyāmi te priye || 15 ||

O beloved, I see your mind as gentle, boundless, and joyful, having made the three worlds insignificant and having drunk the essence of the entire universe.

हे प्रिये, मैं तुम्हारे मन को कोमल, अनंत और आनंदमय देखता हूँ, जिसने तीनों लोकों को तुच्छ बना दिया है और सम्पूर्ण विश्व का रस पी लिया है।

6.79.16

न केनचिन्महाभागे विभवानन्दवस्तुना । चेतस्तव तुलामेति मरुक्षीराब्धिसुन्दरम् ॥ १६ ॥

na kenacinmahābhāge vibhavānandavastunā | cetastava tulāmeti marukṣīrābdhisundaram || 16 ||

O fortunate one, your mind does not attain balance with any prosperous and joyful object. It is as beautiful as the ocean of desert milk.

हे महाभागे, तुम्हारा मन किसी भी समृद्धि और आनंद वस्तु से तुला नहीं पाता। यह मरुस्थल के दूध के समुद्र की तरह सुंदर है।

6.79.17

तैरेव बालकदलीमृणालाङ्कुरकोमलैः । अङ्गैः स्थितिमनुप्राप्तैर्वृद्धिं यातेव लक्ष्यसे ॥ १७ ॥

taireva bālakadalīmṛṇālāṅkurakomalaiḥ | aṅgaiḥ sthitimanuprāptairvṛddhiṃ yāteva lakṣyase || 17 ||

With those very tender parts like the sprouts of a young banana plant, you appear to have grown, having attained stability.

उन्हीं कोमल अंगों से, जो एक छोटे केले के पेड़ के अंकुरों की तरह हैं, आप स्थिरता प्राप्त करके बढ़े हुए दिखाई देते हैं।

6.79.18

तथा तेनैव तेनैव संनिवेशेन संस्थिता । अन्यतामुपयातासि लतेव ऋतुपर्यये ॥ १८ ॥

tathā tenaiva tenaiva saṃniveśena saṃsthitā | anyatāmupayātāsi lateva ṛtuparyaye || 18 ||

Thus, being situated in that very same position, you have reached another state, like a creeper in the change of seasons.

इस प्रकार, उसी स्थिति में स्थित होकर, आप एक अन्य अवस्था में पहुंच गए हैं, जैसे एक लता ऋतु परिवर्तन में।

6.79.19

किं त्वया पीतममृतं प्राप्तं साम्राज्यमेव वा । अमृत्युमेव संप्राप्ता प्रयोगायोगयुक्तितः ॥ १९ ॥

kiṃ tvayā pītamamṛtaṃ prāptaṃ sāmrājyameva vā | amṛtyumeva saṃprāptā prayogāyogayuktitaḥ || 19 ||

What have you drunk, the nectar or attained sovereignty? You have attained immortality through the means of application and non-application.

आपने क्या पी है, अमृत या साम्राज्य प्राप्त किया है? आपने प्रयोग और अयोग के साधन से अमरत्व प्राप्त किया है।

6.79.20

राज्याच्चिन्तामणेर्वापि त्रैलोक्याद्वा त्वयाधिकम् । अप्राप्तं किमनुप्राप्तं नीलोत्पलविलोचने ॥ २० ॥

rājyāccintāmaṇervāpi trailokyādvā tvayādhikam | aprāptaṃ kimanuprāptaṃ nīlotpalavilocane || 20 ||

What have you not attained, O blue-lotus-eyed one, that is greater than the kingdom or the wish-fulfilling gem, or even the three worlds?

हे नील कमल नयन वाले, आपने कौन सी चीज नहीं प्राप्त की है जो राज्य या चिंतामणि या तीनों लोकों से अधिक है?

6.79.21

चूडालोवाच । नाकिंचित्किंचिदाकारमिदं त्यक्त्वाहमागता । नकिंचित्किंचिदाकारं तेनास्मि श्रीमती स्थिता ॥ २१ ॥

cūḍālovāca | nākiñcitkiñcidākāramidaṃ tyaktvāhamāgatā | nakiñcitkiñcidākāraṃ tenāsmi śrīmatī sthitā || 21 ||

Chudala said: I have come here leaving behind all forms of duality. By being free from all forms, I am established in prosperity.

चूडाला ने कहा: मैं सभी द्वैत रूपों को छोड़कर यहाँ आई हूँ। सभी रूपों से मुक्त होकर मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.22

इदं सर्वं परित्यज्य सर्वमन्यन्मयाश्रितम् । यत्तत्सत्यमसत्यं च तेनास्मि श्रीमती स्थिता ॥ २२ ॥

idaṃ sarvaṃ parityajya sarvamanyanmayāśritam | yattatsatyamasatyaṃ ca tenāsmi śrīmatī sthitā || 22 ||

Leaving all this behind, I have taken refuge in the truth and untruth. By that, I am established in prosperity.

इस सब को छोड़कर, मैंने सत्य और असत्य में शरण ली है। इससे मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.23

यत्किंचिद्यन्न किंचिच्च तज्जानामि यथास्थितम् । यथोदयं यथानाशं तेनास्मि श्रीमती स्थिता ॥ २३ ॥

yatkiñcidyanna kiñcicca tajjānāmi yathāsthitam | yathodayam yathānāśaṃ tenāsmi śrīmatī sthitā || 23 ||

I know everything that is and is not, as it is. I know the rise and fall of all things. By that, I am established in prosperity.

मैं जो है और जो नहीं है, उसे उसके अनुसार जानती हूँ। मैं सब कुछ के उदय और अस्त को जानती हूँ। इससे मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.24

भोगैरभुक्तैस्तुष्यामि भुक्तैरिव सुदूरगैः । न हृष्यामि न कुप्यामि तेनास्मि श्रीमती स्थिता ॥ २४ ॥

bhogairabhuktaistuṣyāmi bhuktairiva sudūragaiḥ | na hṛṣyāmi na kupyāmi tenāsmi śrīmatī sthitā || 24 ||

I am satisfied with unenjoyed pleasures and treat enjoyed pleasures as distant. I neither rejoice nor get angry. By that, I am established in prosperity.

मैं अनुभव किए गए सुखों से संतुष्ट हूँ और अनुभव किए गए सुखों को दूर मानती हूँ। मैं न खुश होती हूँ न गुस्सा होती हूँ। इससे मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.25

एकैवाकाशसंकाशे केवले हृदये रमे । न रमे राजलीलासु तेनास्मि श्रीमती स्थिता ॥ २५ ॥

ekaivākāśasaṃkāśe kevale hṛdaye rame | na rame rājalīlāsu tenāsmi śrīmatī sthitā || 25 ||

I delight in the pure, sky-like heart. I do not delight in royal pleasures. By that, I am established in prosperity.

मैं शुद्ध, आकाश जैसे हृदय में आनंद लेती हूँ। मैं राजसी सुखों में आनंद नहीं लेती। इससे मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.26

आत्मन्येव हि तिष्ठामि ह्यासनोद्यानसद्मसु । न भोगेषु न लज्जासु तेनाहं श्रीमती स्थिता ॥ २६ ॥

ātmanyeva hi tiṣṭhāmi hyāsanodyānasadmasu | na bhogeṣu na lajjāsu tenāhaṃ śrīmatī sthitā || 26 ||

I reside in the self, not in seats, gardens, or homes. I am not in pleasures or in shame. Therefore, I am established in prosperity.

मैं आत्मा में ही रहती हूँ, आसनों, उद्यानों या घरों में नहीं। मैं भोगों में नहीं हूँ, लज्जा में भी नहीं। इसलिए मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.27

जगतां प्रभुरेवास्मि नकिंचिन्मात्ररूपिणी । इत्यात्मन्येव तुष्यामि तेनाहं श्रीमती स्थिता ॥ २७ ॥

jagatāṃ prabhurevāsmi nakiṃcinmātrarūpiṇī | ityātmanyeva tuṣyāmi tenāhaṃ śrīmatī sthitā || 27 ||

I am the lord of the worlds, not just a mere form. I am content in the self. Therefore, I am established in prosperity.

मैं जगतों की स्वामिनी हूँ, केवल एक रूप नहीं। मैं आत्मा में ही संतुष्ट हूँ। इसलिए मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.28

इदं चाहमिदं नाहं सत्या चाहं न चाप्यहम्सर्वमस्मि न किंचिच्च तेनाहं श्रीमती स्थिता ॥ २८ ॥

idaṃ cāhamidaṃ nāhaṃ satyā cāhaṃ na cāpyahamsarvamasmi na kiṃcicca tenāhaṃ śrīmatī sthitā || 28 ||

This I am, this I am not; truly I am, and not even I am. I am everything, and yet I am nothing. Therefore, I am established in prosperity.

यह मैं हूँ, यह मैं नहीं हूँ; सच में मैं हूँ, और मैं भी नहीं हूँ। मैं सब कुछ हूँ, और फिर भी मैं कुछ नहीं हूँ। इसलिए, मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.29

न सुखं प्रार्थये नार्थं नानर्थं नेतरां स्थितिम् । यथाप्राप्तेन हृष्यामि तेनाहं श्रीमती स्थिता ॥ २९ ॥

na sukhaṃ prārthaye nārthaṃ nānarthaṃ netarāṃ sthitim | yathāprāptena hṛṣyāmi tenāhaṃ śrīmatī sthitā || 29 ||

I do not desire happiness, wealth, misfortune, or any other state. I am content with what I have. Therefore, I am established in prosperity.

मैं सुख, धन, दुर्भाग्य, या किसी अन्य स्थिति की इच्छा नहीं करती। मैं जो मिलता है उसी में संतुष्ट हूँ। इसलिए मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.30

तनुविद्वेषराजाभिः प्रज्ञाभिः शास्त्रदृष्टिभिः । रमे सह वयस्याभिस्तेनाहं श्रीमती स्थिता ॥ ३० ॥

tanuvidveṣarājābhiḥ prajñābhiḥ śāstradṛṣṭibhiḥ | rame saha vayasyābhistenāhaṃ śrīmatī sthitā || 30 ||

I enjoy with friends who are wise, knowledgeable, and have a scriptural perspective. Therefore, I am established in prosperity.

मैं ऐसे मित्रों के साथ आनंद लेती हूँ जो बुद्धिमान, ज्ञानी और शास्त्रीय दृष्टिकोण रखते हैं। इसलिए मैं समृद्धि में स्थित हूँ।

6.79.31

पश्यामि यन्नयनरश्मिभिरिन्द्रियैर्वा चित्तेन चेह हि तदङ्ग नकिंचिदेव । पश्यामि तद्विरहितं तु नकिंचिदन्तः पश्यामि सम्यगिति नाथ चिरोदयास्मि ॥ ३१ ॥

paśyāmi yannayanaraśmibhirindriyairvā cittena ceha hi tadaṅga nakiṃcideva | paśyāmi tadvirahitaṃ tu nakiṃcidantaḥ paśyāmi samyagiti nātha cirōdayāsmi || 31 ||

I see that which is perceived by the rays of the eyes, the senses, or the mind, but I see nothing within without that | I see that which is devoid of that, but I see nothing within | I see correctly, O Lord, I am of eternal rise

मैं उसे देखता हूँ जो नेत्रों की किरणों, इन्द्रियों या मन से देखा जाता है, लेकिन उसके बिना भीतर कुछ नहीं देखता | मैं उसके बिना भी कुछ नहीं देखता, लेकिन भीतर कुछ नहीं देखता | मैं सही ढंग से देखता हूँ, हे नाथ, मैं अनन्त उदय हूँ

Chapter 80

6.80.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवमात्मनि विश्रान्तां वदन्तीं तां वराननाम् । अबुद्ध्वा तद्गिरामर्थं विहस्योवाच भूपतिः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evamātmani viśrāntāṃ vadantīṃ tāṃ varānanām | abuddhvā tadgirāmarthaṃ vihasyovāca bhūpatiḥ || 1 ||

Shri Vasistha said: Thus, speaking to that beautiful-faced one who was resting in the Self, the king, not understanding the meaning of her words, laughed and spoke.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, आत्मा में विश्राम करती हुई उस सुंदर मुखी को बोलते हुए, राजा ने उसके शब्दों का अर्थ न समझकर हँसकर कहा।

6.80.2

शिखिध्वज उवाच । असंबद्धप्रलापासि बालासि वरवर्णिनि । रमसे राजलीलाभी रमस्वावनिपात्मजे ॥ २ ॥

śikhidhvaja uvāca | asaṃbadhapralāpāsi bālāsi varavarṇini | ramase rājalīlābhī ramasvāvanipātmaje || 2 ||

Shikhidhvaja said: You are speaking nonsense, O beautiful one, you are a child. You enjoy royal pleasures, enjoy them, O daughter of the earth.

शिखिध्वज ने कहा: तुम बेतुकी बातें कर रही हो, हे सुंदरी, तुम बच्ची हो। तुम राजसी भोगों में रमती हो, रमो, हे पृथ्वी की पुत्री।

6.80.3

किंचित्त्यक्त्वा नकिंचिद्यो गतो प्रत्यक्षसंस्थितम् । त्यक्तप्रत्यक्षसद्रूपः स कथं किल शोभते ॥ ३ ॥

kiṃcittyaktvā nakiṃcidyo gato pratyakṣasaṃsthitam | tyaktapratyakṣasadrūpaḥ sa kathaṃ kila śobhate || 3 ||

How can one who has abandoned everything and gone to the state of direct perception, having abandoned the form of direct perception, be beautiful?

जो सब कुछ छोड़कर प्रत्यक्ष अवस्था में चला गया है, प्रत्यक्ष रूप को छोड़कर, वह कैसे सुंदर हो सकता है?

6.80.4

भोगैरभुक्तैस्तुष्टोऽहमिति भोगान्जहाति यः । रुषेवासनशय्यादीन्स कथं किल शोभते ॥ ४ ॥

bhogairabhuktaituṣṭo'hamiti bhogānjahāti yaḥ | ruṣevāsanaśayyādīnsa kathaṃ kila śobhate || 4 ||

How can one who is satisfied with unenjoyed pleasures and abandons them, saying 'I am content,' be beautiful, like one who abandons comfortable beds and seats?

जो अनुभव न किए गए भोगों से संतुष्ट होकर उन्हें छोड़ देता है, कहता है 'मैं संतुष्ट हूँ,' वह आसन और शय्या को छोड़ने वाले की तरह कैसे सुंदर हो सकता है?

6.80.5

भोगाभोगे परित्यज्य खे शून्ये रमते तु यः । एक एवाखिलं त्यक्त्वा स कथं किल शोभते ॥ ५ ॥

bhogābhoge parityajya khe śūnye ramate tu yaḥ | eka evākhilaṃ tyaktvā sa kathaṃ kila śobhate || 5 ||

How can one who, abandoning both enjoyment and non-enjoyment, delights in the empty sky, having abandoned everything, be beautiful?

जो भोग और अभोग दोनों को छोड़कर, खाली आकाश में रमता है, सब कुछ छोड़कर, वह कैसे सुंदर हो सकता है?

6.80.6

वसनाशनशय्यादीन्सर्वान्संत्यज्य धीरधीः । यस्तिष्ठत्यात्मनैवैकः स कथं किल शोभते ॥ ६ ॥

vasanāśanaśayyādīnsarvānsaṃtyajya dhīradhīḥ | yastiṣṭhatyātmanaivaikaḥ sa kathaṃ kila śobhate || 6 ||

One who renounces all possessions such as clothes, food, and bed, and remains steadfast in the self, how does he shine?

जो वस्त्र, भोजन, शय्या आदि सभी को त्याग देता है और आत्मा में स्थित रहता है, वह कैसे शोभायमान होता है?

6.80.7

नाहं देहोऽन्यथा चाहं नकिंचित्सर्वमेव च । एवं प्रलापो यस्यास्ति स कथं किल शोभते ॥ ७ ॥

nāhaṃ deho'nyathā cāhaṃ nakiṃcitsarvameva ca | evaṃ pralāpo yasyāsti sa kathaṃ kila śobhate || 7 ||

I am not the body, nor am I anything else, nor am I nothing, I am everything. One who speaks thus, how does he shine?

मैं शरीर नहीं हूँ, न ही मैं कुछ और हूँ, न ही मैं कुछ नहीं हूँ, मैं सब कुछ हूँ। जो ऐसा कहता है, वह कैसे शोभायमान होता है?

6.80.8

यत्पश्यामि न पश्यामि तत्पश्याम्यन्यदेव यत् । प्रलाप इत्यसंन्यस्य स कथं किल शोभते ॥ ८ ॥

yatpaśyāmi na paśyāmi tatpaśyāmyanyadeva yat | pralāpa ityasaṃnyasya sa kathaṃ kila śobhate || 8 ||

What I see, I do not see, that I see as something else. One who speaks thus, how does he shine?

जो मैं देखता हूँ, मैं नहीं देखता, वह मैं कुछ और देखता हूँ। जो ऐसा कहता है, वह कैसे शोभायमान होता है?

6.80.9

तस्माद्बालासि मुग्धासि चपलासि विलासिनि । नानालापविलासेन क्रीडामि क्रीड सुन्दरि ॥ ९ ॥

tasmādbālāsi mugdhāsi capalāsi vilāsini | nānālāpavilāsena krīḍāmi krīḍa sundari || 9 ||

Therefore, O innocent, fickle, playful one, I play with you in various ways of speech and play. Play, O beautiful one.

इसलिए, हे निर्दोष, चंचल, खेलने वाली, मैं विभिन्न बातों और खेलों से तुम्हारे साथ खेलता हूँ। खेलो, हे सुंदरी।

6.80.10

प्रविहस्याट्टहासेन शिखिध्वज इति प्रियाम् । मध्याह्ने स्नातुमुत्थाय निर्जगामाङ्गनागृहात् ॥ १० ॥

pravihasyāṭṭahāsena śikhidhvaja iti priyām | madhyāhne snātumutthāya nirjagāmāṅganāgṛhāt || 10 ||

Laughing loudly, calling his beloved 'Shikhidhvaja,' he rose to bathe at noon and left the women's quarters.

जोर से हँसते हुए, अपनी प्रियतमा को 'शिखिध्वज' कहकर, दोपहर में स्नान करने के लिए उठा और अंतःपुर से निकल गया।

6.80.11

कष्टं नात्मनि विश्रान्तो मद्वचांसि न बुद्धवान् । राजेति खिन्ना चूडाला स्वव्यापारपराभवत् ॥ ११ ॥

kaṣṭaṃ nātmani viśrānto madvacāṃsi na buddhvān | rājeti khinnā cūḍālā svavyāpāraparābhavat || 11 ||

Chudala, distressed by her husband's lack of self-realization and his inability to comprehend her words, became dejected and focused on her own duties.

चूडाला अपने पति के आत्म-साक्षात्कार के अभाव और उनके शब्दों को समझने में असमर्थता से दुखी हो गई और अपने कर्तव्यों पर ध्यान केंद्रित करने लगी।

6.80.12

तदा तथाङ्ग तत्राथ तादृगाशययोस्तयोः । ताभिः पार्थिवलीलाभिः कालो बहुतिथो ययौ ॥ १२ ॥

tadā tathāṅga tatrātha tādṛgāśayayostayoḥ | tābhiḥ pārthivalīlābhiḥ kālo bahutitho yayau || 12 ||

At that time, with such intentions, much time passed with their royal activities.

उस समय, ऐसे इरादों के साथ, उनके राजकीय कार्यों से बहुत समय बीत गया।

6.80.13

एकदा नित्यतृप्ताया निरिच्छाया अपि स्वयम् । चूडालाया बभूवेच्छा लीलया खगमागमे ॥ १३ ॥

ekadā nityatṛptāyā niricchāyā api svayam | cūḍālāyā babhūveccchā līlayā khagamāgame || 13 ||

One day, Chudala, who was always content and desireless, herself developed a desire to bring a bird.

एक दिन, चूडाला, जो हमेशा संतुष्ट और इच्छारहित थी, स्वयं एक पक्षी को लाने की इच्छा करने लगी।

6.80.14

खगमागमसिद्ध्यर्थमथ सा नृपकन्यका । सर्वभोगाननादृत्य समागम्य च निर्जनम् ॥ १४ ॥

khagamāgamasiddhyarthamatha sā nṛpakanyakā | sarvabhogānanādṛtya samāgamyaca nirjanam || 14 ||

For the purpose of bringing the bird, that princess, disregarding all pleasures, went to a solitary place.

पक्षी को लाने के लिए, उस राजकुमारी ने सभी भोगों को अनदेखा करते हुए एक एकांत स्थान पर गई।

6.80.15

एकैवैकान्तनिरता स्वासनावस्थिताङ्गिका । ऊर्ध्वगप्राणपवनचिराभ्यासं चकार ह ॥ १५ ॥

ekaivaikāntaniratā svāsanāvasthitāṅgikā | ūrdhvagaprāṇapavancirābhyāsaṃ cakāra ha || 15 ||

Alone and focused, she practiced controlling her breath, directing it upwards.

अकेली और एकाग्र, उसने अपने श्वास को ऊपर की ओर नियंत्रित करने का अभ्यास किया।

6.80.16

श्रीराम उवाच । यदिदं दृश्यते किंचिज्जगत्स्थावरजंगमम् । स्पन्दच्युतं क्रियानाम्नः कथमित्यनुभूयते ॥ १६ ॥

śrīrāma uvāca | yadidaṃ dṛśyate kiṃcidjagatsthāvarajaṅgamam | spandacyutaṃ kriyānāmnaḥ kathamityanubhūyate || 16 ||

Sri Rama said: Whatever is seen in this world, whether moving or stationary, how is it experienced as a result of the activity of movement?

श्री राम ने कहा: जो कुछ भी इस जगत में दिखाई देता है, चल या अचल, वह गति की क्रिया के कारण कैसे अनुभव किया जाता है?

6.80.17

कस्य स्पन्दविलासस्य घनाभ्यासस्य मे वद । ब्रह्मन्खगमनाद्येतत्फलं यत्नैकशालिनः ॥ १७ ॥

kasya spandavilāsasya ghanābhyāsasya me vada | brahmankhaganamādyetatphalaṃ yatnaikashāliṇaḥ || 17 ||

Tell me, O Brahman, the result of this intense practice of the play of movement, which is the sole effort of the sky-traveler.

हे ब्रह्मन्, मुझे बताओ, इस गति के खेल की घनी अभ्यास का परिणाम क्या है, जो आकाश-यात्री का एकमात्र प्रयास है?

6.80.18

आत्मज्ञो वाप्यनात्मज्ञः सिद्ध्यर्थे लीलयाथवा। कथं संसाधयत्येतद्यथा तद्वद मे प्रभो॥ १८॥

ātmajño vāpyanātmajñaḥ siddhyarthe līlayāthavā | kathaṃ saṃsādhayatyetadyathā tadvada me prabho || 18 ||

Whether one is self-realized or not, for the sake of perfection, or as a play, how does one accomplish this? Tell me, O Lord, as it is.

चाहे वह आत्मज्ञानी हो या नहीं, सिद्धि के लिए या लीला के रूप में, वह इसे कैसे संपन्न करता है? हे प्रभो, मुझे ऐसे ही बताओ।

6.80.19

श्रीवसिष्ठ उवाच। त्रिविधं संभवत्यङ्ग साध्यं वस्त्विह सर्वतः। उपादेयं च हेयं च तथोपेक्ष्यं च राघव॥ १९॥

śrīvasiṣṭha uvāca | trividhaṃ saṃbhavatyanga sādhyaṃ vastviha sarvataḥ | upādeyaṃ ca heyaṃ ca tathopēkṣyaṃ ca rāghava || 19 ||

Vasistha said: O Raghava, everything in this world is of three kinds: that which is to be accepted, that which is to be rejected, and that which is to be ignored.

वसिष्ठ ने कहा: हे रघुवंशी, इस जगत में हर चीज तीन प्रकार की होती है: जो ग्रहण करनी चाहिए, जो त्याग देनी चाहिए, और जो उपेक्षित करनी चाहिए।

6.80.20

आत्मभूतं प्रयत्नेन उपादेयं च साध्यते। हेयं संत्यज्यते ज्ञात्वा उपेक्ष्यं मध्यमेतयोः॥ २०॥

ātmabhūtaṃ prayatnena upādeyaṃ ca sādhyate | heyaṃ saṃtyajyate jñātvā upēkṣyaṃ madhyametayoḥ || 20 ||

That which is of the nature of the self is to be accepted with effort; that which is to be rejected is to be abandoned with knowledge; and that which is to be ignored is the middle of these two.

जो आत्मा की प्रकृति का है, उसे प्रयास से ग्रहण करना चाहिए; जो त्याग देने योग्य है, उसे ज्ञान से त्याग देना चाहिए; और जो उपेक्षित करने योग्य है, वह इन दोनों के बीच का है।

6.80.21

यद्यदाह्लादनकरमादेयं तच्च सन्मते। तद्विरुद्धमनादेयमुपेक्ष्यं मध्यमं विदुः॥ २१॥

yadyadāhlādanakaramādeyaṃ tacca sanmate | tadviruddhamanādeyamupekṣyaṃ madhyamaṃ viduḥ || 21 ||

Whatever is pleasing and acceptable is considered good. That which is opposed to it is unacceptable and should be ignored; the neutral is considered mediocre.

जो भी आह्लादक और स्वीकार्य है, वह अच्छा माना जाता है। जो उसके विरुद्ध है, वह अस्वीकार्य है और उसे उपेक्षित करना चाहिए; मध्यम को मध्यम माना जाता है।

6.80.22

सन्मतेर्विदुषो ज्ञस्य सर्वमात्ममयं यदा। त्रय एते तदा पक्षाः संभवन्ति न केचन॥ २२॥

sanmatervidușo jñasya sarvamātmamayaṃ yadā | tray ete tadā pakṣāḥ saṃbhavanti na kecana || 22 ||

When the wise one knows everything as the Self, then these three positions arise, not any others.

जब ज्ञानी सब कुछ आत्मा के रूप में जानता है, तब ये तीन पक्ष उत्पन्न होते हैं, कोई अन्य नहीं।

6.80.23

केवलं सर्वमेवेदं कदाचिल्लीलया तया । उपेक्षापक्षनिक्षिप्तमालोकयति वा न वा ॥ २३ ॥

kevalaṃ sarvamevedaṃ kadācillīlayā tayā | upekṣāpakṣanikṣiptamālokayati vā na vā || 23 ||

All this is indeed only the Self, sometimes through play, it may or may not observe that which is placed in the neutral position.

यह सब कुछ वास्तव में केवल आत्मा है, कभी-कभी खेल के द्वारा, यह मध्यम पक्ष में रखे गए को देख सकता है या नहीं।

6.80.24

ज्ञस्योपेक्षात्मकं नाम मूढस्यादेयतां गतम् । हेयं स्फारविरागस्य शृणु सिद्धिक्रमः कथम् ॥ २४ ॥

jñasyopekṣātmakaṃ nāma mūḍhasyādeyatāṃ gatam | heyaṃ sphāravirāgasya śṛṇu siddhikramaḥ katham || 24 ||

The neutral position of the wise is considered unacceptable by the fool. Listen to the sequence of attainment of the one who has intense detachment.

ज्ञानी का मध्यम पक्ष मूढ़ द्वारा अस्वीकार्य माना जाता है। तीव्र विराग वाले की सिद्धि क्रम को सुनो।

6.80.25

देशकालक्रियाद्रव्यसाधनाः सर्वसिद्धयः । जीवमाह्लादयन्तीह वसन्त इव भूतलम् ॥ २५ ॥

deśakālakriyādravyasādhanāḥ sarvasiddhayaḥ | jīvamāhlādayantīha vasanta iva bhūtalam || 25 ||

All attainments are the means of place, time, action, and substance. They delight the living beings here like the spring season delights the earth.

सभी सिद्धियाँ स्थान, समय, क्रिया और पदार्थ के साधन हैं। वे जीवों को यहाँ प्रसन्न करती हैं जैसे वसंत ऋतु पृथ्वी को प्रसन्न करती है।

6.80.26

मध्ये चतुर्णामेवैषां क्रियाप्राधान्यकल्पना सिद्ध्यादिसाधने साधो तन्मयास्ते यतः क्रमाः ॥ २६ ॥

madhye caturṇāmevaiaṣāṃ kriyāprādhānyakalpanā siddhyādisādhane sādho tanmayāste yataḥ kramāḥ || 26 ||

In the midst of these four, the concept of the primacy of action is established. O virtuous one, they become absorbed in that sequence for the attainment of success and other goals.

इन चारों के मध्य में, क्रिया के प्राधान्य की कल्पना स्थापित होती है। हे साधु, वे उस क्रम में अपने आप को लीन कर लेते हैं, जो सिद्धि और अन्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए होता है।

6.80.27

गुटिकाञ्जनखङ्गादिक्रियाक्रमनिरूपणम् तत्रासतां च दोषोऽत्र विस्तारः प्रकृतार्थहा ॥ २७ ॥

guṭikāñjanakhaṅgādikriyākramanirūpaṇam tatrāsatāṃ ca doṣo'tra vistāraḥ prakṛtārthahā || 27 ||

The sequence of actions such as the application of paste, collyrium, and sword, and the defects therein, are described in detail, which is contrary to the main subject.

गुटिका, अञ्जन, खड्ग आदि क्रियाओं के क्रम और उनमें दोषों का विस्तार से वर्णन किया गया है, जो मुख्य विषय से भिन्न है।

6.80.28

रत्नौषधितपोमन्त्रक्रियाक्रमनिरूपणम् आस्तामेव किलैषोऽपि विस्तारः प्रकृतार्थहा ॥ २८ ॥

ratnauṣadhitapomantrakriyākramanirūpaṇam āstāmeva kilaiṣo'pi vistāraḥ prakṛtārthahā || 28 ||

The sequence of actions related to gems, herbs, austerities, and mantras is described in detail, which is also contrary to the main subject.

रत्न, औषधि, तप, मंत्र आदि क्रियाओं के क्रम का विस्तार से वर्णन किया गया है, जो मुख्य विषय से भिन्न है।

6.80.29

श्रीशैले सिद्धदेशे च मेर्वादौ वा निवासतः सिद्धिरित्यपि विस्तारः कृतार्थ प्रकृतार्थहा ॥ २९ ॥

śrīśaile siddhadeśe ca meruvādau vā nivāsataḥ siddhiriti api vistāraḥ kṛtārtha prakṛtārthahā || 29 ||

Even the attainment of success in places like Śrīśaila, Siddhadeśa, and Meru is described in detail, which is contrary to the main subject.

श्रीशैल, सिद्धदेश, और मेरु जैसे स्थानों में सिद्धि की प्राप्ति का विस्तार से वर्णन किया गया है, जो मुख्य विषय से भिन्न है।

6.80.30

तस्माच्छिखिध्वजकथाप्रसङ्गपतितामिमाम् प्राणादिपवनाभ्यासक्रियां सिद्धिफलां श्रृणु ॥ ३० ॥

tasmācchikhidhvajakathāprasaṅgapatitāmimām prāṇādipavanābhyāsakriyāṃ siddhiphalāṃ śṛṇu || 30 ||

Therefore, listen to this practice of breath control and other exercises, which has fallen into the context of the story of the peacock and the flag, leading to the fruit of success.

इसलिए, इस प्राणायाम और अन्य अभ्यास क्रिया को सुनो, जो मोर और ध्वज की कथा के प्रसंग में आ गया है, जिससे सिद्धि का फल प्राप्त होता है।

6.80.31

अन्तस्था ह्यखिलास्त्यक्त्वा साध्यार्थेतरवासनाः। गुदादिद्वारसंकोचान्स्थानकादिक्रियाक्रमैः ॥ ३१ ॥

antasthā hyakhilāstyaktvā sādhyārthetaravāsanāḥ| gudādidvārasaṃkocānssthānakādikriyākramaīḥ || 31 ||

Abandoning all worldly desires and focusing on the goal, one should practice contraction of the anal sphincter and other yogic practices in sequence.

सभी विषय वासनाओं को त्यागकर साध्य के लिए अनुशासन करें और गुदा आदि द्वारों के संकोच से स्थानक आदि क्रियाओं के क्रम से अभ्यास करें।

6.80.32

भोजनासनशुद्ध्या च साधुशास्त्रार्थभावनात्। स्वाचारात्सुजनासङ्गात्सर्वत्यागात्सुखासनात् ॥ ३२ ॥

bhojanāsanśuddhyā ca sādhuśāstrārthabhāvanāt| svācārātsujanāsaṅgātsarvatyāgātsukhāsanāt || 32 ||

Through purification of food and seat, contemplation on the meaning of sacred scriptures, good conduct, association with noble people, renunciation of all, and comfortable posture, one attains spiritual progress.

भोजन और आसन की शुद्धता, शास्त्रों के अर्थ पर ध्यान, सदाचार, सुजनों का संग, सब कुछ त्यागना और सुखद आसन से आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त होती है।

6.80.33

प्राणायामघनाभ्यासाद्राम कालेन केनचित्। कोपलोभादिसंत्यागाद्भोगत्यागाच्च सुव्रत ॥ ३३ ॥

prāṇāyāmaghanābhyāsādrāma kālena kenacit| kopalobhādisaṃtyāgādbhogatyāgācca suvrata || 33 ||

O Rama, through the practice of Pranayama and other yogic disciplines over time, one should renounce anger, greed, and other vices, and give up worldly pleasures, O virtuous one.

हे राम, प्राणायाम और अन्य योग साधनाओं के अभ्यास से समय के साथ, क्रोध, लोभ आदि दुर्गुणों का त्याग करें और भोगों का त्याग करें, हे सुव्रत।

6.80.34

त्यागादाननिरोधेषु भृशं यान्ति विधेयताम्। प्राणाः प्रभुत्वात्तज्ज्ञस्य पुंसो भृत्या इवाखिलाः ॥ ३४ ॥

tyāgādānanirodheṣu bhṛśaṃ yānti vidheyatām| prāṇāḥ prabhutvāttajjñasya puṃso bhṛtyā ivākhilāḥ || 34 ||

Through the control of giving and receiving, the vital energies become completely subservient, just as all servants are to their master who knows the self.

देने और लेने के नियंत्रण से, प्राण शक्तियाँ पूरी तरह से अधीन हो जाती हैं, जैसे सभी सेवक अपने स्वामी के लिए होते हैं जो आत्मज्ञानी होता है।

6.80.35

राज्यादिमोक्षपर्यन्ताः समस्ता एव संपदः। देहानिलविधेयत्वात्साध्याः सर्वस्य राघव ॥ ३५ ॥

rājyādimokṣaparyantāḥ samastā eva saṃpadaḥ| dehānilavidheyatvātsādhyāḥ sarvasya rāghava || 35 ||

O Raghava, all achievements from kingdom to liberation are attainable by everyone due to the control over the breath and the body.

हे राघव, राज्य से लेकर मोक्ष तक के सभी संपदा शरीर और प्राण के नियंत्रण से सभी के लिए प्राप्त की जा सकती हैं।

6.80.36

परिमण्डलिताकारा मर्मस्थानं समाश्रिता। आन्त्रवेष्टनिका नाम नाडी नाडीशताश्रिता ॥ ३६ ॥

parimaṇḍalitākārā marmasthānaṃ samāśritā | āntraveṣṭanikā nām nāḍī nāḍīśatāśritā || 36 ||

The nerve called Āntraveṣṭanikā, which is circular in shape and located in the vital spot, is supported by a hundred nerves.

आन्त्रवेष्टनिका नामक नाड़ी, जो वृत्ताकार है और मर्मस्थान पर आश्रित है, सौ नाड़ियों द्वारा समर्थित है।

6.80.37

वीणाग्रावर्तसदृशी सलिलावर्तसंनिभा। लिप्यार्धौकारसंस्थाना कुण्डलावर्तसंस्थिता ॥ ३७ ॥

vīṇāgrāvartasadṛśī salilāvartasaṃnibhā | lipyārdhaukārasaṃsthānā kuṇḍalāvartasaṃsthitā || 37 ||

It resembles the whorl at the end of a lute, similar to a water whirlpool. It is situated in the shape of the letter 'au' and is coiled like a serpent.

यह वीणा के अंतिम भाग के समान है, जल के भंवर के समान। यह 'औ' अक्षर के आकार में स्थित है और सर्प की तरह लपेट में है।

6.80.38

देवासुरमनुष्येषु मृगनक्रखगादिषु। कीटादिष्वब्जजान्तेषु सर्वेषु प्राणिषूदिता ॥ ३८ ॥

devāsuramanuṣyeṣu mṛganakrakhagādiṣu | kīṭādiṣvabjajānteṣu sarveṣu prāṇiṣūditā || 38 ||

It is said to be present in all living beings, including gods, demons, humans, animals, birds, insects, and even in the smallest creatures like worms.

यह सभी प्राणियों में मौजूद है, जिसमें देवता, असुर, मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट और सबसे छोटे जीवों जैसे कीड़े शामिल हैं।

6.80.39

शीतार्तसुप्तभोगीन्द्रभोगवद्बद्धमण्डला। सिता कल्पाग्निविगलदिन्दुवद्बद्धकुण्डली ॥ ३९ ॥

śītārtasuptabhogīndrabhogavadbaddhamaṇḍalā | sitā kalpāgnivigaladinduvadbaddhakuṇḍalī || 39 ||

It is bound in a circle like the enjoyment of the lord of pleasures who is tormented by cold and sleep. It is white, like the moon dissolved by the fire of the kalpa.

यह ठंड और नींद से पीड़ित भोगों के स्वामी की तरह एक चक्र में बंधी है। यह कल्प की अग्नि से घुले चंद्रमा की तरह श्वेत है।

6.80.40

ऊरोर्भ्रूमध्यरन्ध्राणि स्पृशन्ती वृत्तिचञ्चला। अनारतं च सस्पन्दा पवमानेन तिष्ठति ॥ ४० ॥

ūrorbhrmadhyarandhrāṇi spṛśantī vṛtticañcalā | anārataṃ ca saspandā pavamānena tiṣṭhati || 40 ||

It touches the openings in the chest and the space between the eyebrows, constantly moving and vibrating, and it remains with the breath.

यह छाती और भौंहों के बीच के छिद्रों को स्पर्श करती है, लगातार गतिशील और कंपित रहती है, और श्वास के साथ रहती है।

6.80.41

तस्यास्त्वभ्यन्तरे तस्मिन्कदलीकोशकोमले। या परा शक्तिः स्फुरति वीणावेगलसद्गतिः ॥ ४१ ॥

tasyāstvabhyantare tasmin kadalīkośakomale | yā parā śaktiḥ sphurati vīṇāvegalasadgatiḥ || 41 ||

Within the tender sheath of the plantain, the supreme power shines with the swiftness of the Veena.

केले के कोमल छिलके के अंदर वह परम शक्ति वीणा की तरह स्फुरित होती है।

6.80.42

सा चोक्ता कुण्डलीनाम्ना कुण्डलाकारवाहिनी। प्राणिनां परमा शक्तिः सर्वशक्तिजवप्रदा ॥ ४२ ॥

sā coktā kuṇḍalīnāmnā kuṇḍalākāravāhinī | prāṇināṃ paramā śaktiḥ sarvaśaktijavapradā || 42 ||

She is known as Kundalini, bearing the form of a coil, the supreme power of all beings, bestowing all powers.

वह कुण्डली कहलाती है, डोरी के रूप में, सभी जीवों की परम शक्ति, सभी शक्तियों की प्रदाता।

6.80.43

अनिशं निःश्वसद्रूपा रुषितेव भुजंगमी। संस्थितोर्ध्वीकृतमुखी स्पन्दनाहेतुतां गता ॥ ४३ ॥

aniśaṃ niḥśvasadrūpā ruṣiteva bhujaṃgamī | saṃsthitordhvīkṛtamukhī spandanāhetutāṃ gatā || 43 ||

Eternally in the form of exhaling breath, like an angry serpent, situated upright with raised head, she is the cause of vibration.

निरंतर श्वास के रूप में, क्रोधित सर्प की तरह, ऊपर उठा हुआ मुख के साथ स्थित, वह स्पंदन का कारण है।

6.80.44

यदा प्राणानिलो याति हृदि कुण्डलिनीपदम्। तदा संविदुदेत्यन्तर्भूततन्मात्रबीजभूः ॥ ४४ ॥

yadā prāṇānilo yāti hṛdi kuṇḍalinīpadam | tadā saṃvidudetyantarbhūtatanmātrabījabhūḥ || 44 ||

When the vital air reaches the Kundalini in the heart, then the inner consciousness arises from the seed of the subtle elements.

जब प्राण वायु हृदय में कुण्डलिनी के पास पहुंचता है, तब अंतर्भूत तन्मात्र बीज से अंतर्ज्ञान उदित होता है।

6.80.45

यथा कुण्डलिनी देहे स्फुरत्यब्ज इवालिनी। तथा संविदुदेत्यन्तर्मृदुस्पर्शवशोदया ॥ ४५ ॥

yathā kuṇḍalinī dehe sphuratyabja ivālinī | tathā saṃvidudetyantarmṛdusparśavaśodayā || 45 ||

As Kundalini shines in the body like a lotus, so does the inner consciousness arise with gentle touch.

जैसे कुण्डलिनी शरीर में कमल की तरह स्फुरित होती है, वैसे ही अंतर्ज्ञान कोमल स्पर्श से उदित होता है।

6.80.46

स्पर्शनं मृदुनान्योन्यालिङ्गिका तत्र यन्त्रयोः । यथा संविदुदेत्युच्चैस्तथा कुण्डलिनी जवात् ॥ ४६ ॥

sparśanaṃ mṛdunānyonyāliṅgikā tatra yantryoḥ | yathā saṃvidudetyuccaitathā kuṇḍalinī javāt || 46 ||

When the two instruments (yantri) touch each other gently, the awareness (saṃvit) arises intensely, just as the Kundalini (kuṇḍalinī) energy rises swiftly.

जब दो यंत्र (यन्त्रि) एक-दूसरे को कोमलता से छूते हैं, तब चेतना (संवित्) तीव्रता से उत्पन्न होती है, ठीक वैसे ही जैसे कुंडलिनी (कुण्डलिनी) ऊर्जा तेजी से उठती है।

6.80.47

तस्यां समस्ताः संबद्धा नाड्यो हृदयकोशगाः । उत्पद्यन्ते विलीयन्ते महार्णव इवापगाः ॥ ४७ ॥

tasyāṃ samastāḥ sambaddhā nāḍyo hṛdayakośagāḥ | utpadyante vilīyante mahārṇava ivāpagāḥ || 47 ||

In that (Kundalini), all the channels (nāḍīs) connected to the heart sheath (hṛdayakośa) arise and dissolve like rivers in a great ocean.

उस (कुंडलिनी) में, हृदय कोश (हृदयकोश) से जुड़ी सभी नाड़ियाँ (नाड्यः) उत्पन्न होती हैं और महान समुद्र में नदियों की तरह विलीन हो जाती हैं।

6.80.48

नित्यं पातोत्सुकतया प्रवेशोन्मुखया तया । सा सर्वसंविदां बीजं ह्येका सामान्युदाहृता ॥ ४८ ॥

nityaṃ pātotsukatayā praveśonmukhayā tayā | sā sarvasaṃvidāṃ bījaṃ hyekā sāmānyudāhṛtā || 48 ||

That (Kundalini), always eager to descend, is the seed of all awareness, and is known as the universal one.

वह (कुंडलिनी), जो हमेशा उतरने के लिए उत्सुक रहती है, सभी चेतनाओं का बीज है, और सामान्य रूप से जानी जाती है।

6.80.49

श्रीराम उवाच । आकल्पादनवच्छिन्ना चित्संवित्सर्वमस्ति हि । तस्मात्कुण्डलिनीकोशात्केनार्थेनोदयः स्फुटः ॥ ४९ ॥

śrīrāma uvāca | ākalpādanavacchinnā cittasaṃvitsarvamasti hi | tasmātkuṇḍalinīkośātkenārthe nodayaḥ sphuṭaḥ || 49 ||

Sri Rama said: From the beginning, uninterrupted consciousness is everything. Therefore, what is the clear purpose of the rise from the Kundalini sheath?

श्री राम ने कहा: शुरुआत से ही, अविरल चेतना ही सब कुछ है। तो फिर, कुंडलिनी कोश से उदय का स्पष्ट उद्देश्य क्या है?

6.80.50

श्रीवसिष्ठ उवाच । सर्वत्र सर्वदा सर्वं चित्संविद्विद्यतेऽनघ । किंत्वस्या भूततन्मात्रवशादभ्युदयः क्वचित् ॥ ५० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sarvatra sarvadā sarvaṃ cittasaṃvidvidyate'nagha | kiṃtvasyā bhūtatanmātravaśādabhyudayaḥ kvacit || 50 ||

Sri Vasistha said: O sinless one, consciousness is everywhere, always, and in everything. However, its manifestation occurs due to the influence of the subtle elements.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे निष्पाप, चेतना हर जगह, हमेशा और हर चीज में है। फिर भी, इसका प्रकटीकरण सूक्ष्म तत्वों के प्रभाव से होता है।

6.80.51

सर्वत्र विद्यमानापि देहेषु तरलायते । सर्वगोऽप्यातपः सौरो भित्यादौ वै विजृम्भते ॥ ५१ ॥

sarvatra vidyamānāpi deheṣu taralāyate | sarvago'pyātapaḥ sauro bhitvādau vai vijṛmbhate || 51 ||

Although present everywhere, it appears unstable in the bodies. Although the sun is all-pervading, it shines distinctly in different places.

हर जगह विद्यमान होते हुए भी देहों में अस्थिर लगता है | सूर्य सर्वत्र व्याप्त होते हुए भी विशिष्ट रूप से अलग-अलग स्थानों में चमकता है || 51 ||

6.80.52

क्वचिन्नष्टं क्वचित्स्पष्टं क्वचिदुच्छन्नतां गतम् । वस्तु वस्तुनि दृष्टं तत्तत्सद्भावैर्विजृम्भितम् ॥ ५२ ॥

kvacinnaṣṭaṃ kvacitspaṣṭaṃ kvaciducchannatāṃ gatam | vastu vastuni dṛṣṭaṃ tattatsadbhāvairvijṛmbhitam || 52 ||

Sometimes it is hidden, sometimes it is clear, and sometimes it is completely concealed. The essence is seen in various objects, manifesting through their true nature.

कभी छिपा हुआ, कभी स्पष्ट, और कभी पूरी तरह से छिपा हुआ | वस्तु को विभिन्न वस्तुओं में देखा जाता है, जो उनके सच्चे स्वभाव के द्वारा प्रकट होता है || 52 ||

6.80.53

एतद्भूयः क्रमेणाहं शृणु वक्ष्यामि तेऽनघ । देहे स्वे च यथोदेति भृशं संविन्मयक्रमः ॥ ५३ ॥

etadbhūyaḥ krameṇāhaṃ śṛṇu vakṣyāmi te'nagha | dehe sve ca yathodeti bhṛśaṃ saṃvinmayakramaḥ || 53 ||

Listen, I will explain this further in sequence. In one's own body, how the process of pure consciousness arises intensely.

सुनो, मैं यह और अधिक विस्तार से क्रम में बताऊँगा | अपने शरीर में शुद्ध चेतना के उदय की प्रक्रिया कैसे होती है, यह सुनो || 53 ||

6.80.54

चेतनाचेतनं भूतजातं व्योम तथाखिलम् । सर्वं चिन्मात्रसन्मात्रं शून्यमात्रं यथा नभः ॥ ५४ ॥

cetanācetanaṃ bhūtajātaṃ vyoma tathākhilam | sarvaṃ cinmātrasanmātraṃ śūnyamātraṃ yathā nabhaḥ || 54 ||

Both sentient and insentient beings, the elements, and the entire space are all pure consciousness, just like the sky is empty.

चेतन और अचेतन प्राणी, भूतजात, और सम्पूर्ण आकाश सभी शुद्ध चेतना हैं, जैसे आकाश खाली है || 54 ||

6.80.55

तद्धि चिन्मात्रसन्मात्रमविकारं स्वनामयम् । क्वचित्स्थितं संविदेव भूततन्मात्रपञ्चकम् ॥ ५५ ॥

taddhi cinmātrasanmātramavikāraṃ svanāmayam | kvacitsthitaṃ saṃvideva bhūtatanmātrapañcakam || 55 ||

That pure consciousness is indeed the essence of all, unchanging, and self-existent. Sometimes it is perceived as the five elements.

वह शुद्ध चेतना वास्तव में सभी का सार है, अपरिवर्तनीय, और स्वयं स्थित | कभी-कभी यह पाँच भूतों के रूप में देखा जाता है || 55 ||

6.80.56

तत्पञ्चधा गतं द्वित्वं लक्षसे त्वं स्वसंविदम्। अन्तर्भूतविकारादि दीपाद्दीपशतं यथा ॥ ५६ ॥

tatpañcadhā gataṃ dvitvaṃ lakṣase tvaṃ svasaṃvidam | antarbhūtavikārādi dīpāddīpaśataṃ yathā || 56 ||

That duality has become fivefold, you perceive your own consciousness. Like many lamps from a single lamp, the internal transformations and so forth.

वह द्वैत पाँच प्रकार का हो गया है, तुम अपनी स्वयं की चेतना को देखते हो | एक दीपक से बहुत से दीपक की तरह, आंतरिक परिवर्तन और अन्य चीजें।

6.80.57

स्वसत्तामात्रकेणैव संकल्पलवरूपिणा। पञ्चकानि व्रजन्तीह देहत्वं तानि कानिचित् ॥ ५७ ॥

svasattāmātrakeṇaiva saṃkalpalavarūpiṇā | pañcakāni vrajantīha dehatvaṃ tāni kānicit || 57 ||

By the mere existence of one's own being, which is in the form of a subtle resolve, some of these five elements assume the form of the body here.

अपने अस्तित्व के मात्र होने से, जो एक सूक्ष्म संकल्प के रूप में है, इन पाँच तत्वों में से कुछ यहाँ शरीर का रूप धारण करते हैं।

6.80.58

कानिचित्तिर्यगादित्वं हेमादित्वं च कानिचित्। कानिचिद्देशतादित्वं द्रव्यादित्वं च कानिचित् ॥ ५८ ॥

kānicittiryagāditvaṃ hemaāditvaṃ ca kānicit | kāniciddeśatāditvaṃ dravyāditvaṃ ca kānicit || 58 ||

Some of these assume the form of animals and so forth, some assume the form of gold and so forth, some assume the form of places and so forth, and some assume the form of substances and so forth.

इनमें से कुछ पशु आदि का रूप धारण करते हैं, कुछ सोने आदि का रूप धारण करते हैं, कुछ स्थानों आदि का रूप धारण करते हैं, और कुछ पदार्थों आदि का रूप धारण करते हैं।

6.80.59

एवं हि पञ्चकस्पन्दमात्रं जगदिति स्थितम्। चित्संविदत्र सर्वत्र विद्यते रघुनन्दन ॥ ५९ ॥

evaṃ hi pañcakaspandamātraṃ jagaditi sthitam | citsaṃvidatra sarvatra vidyate raghunandana || 59 ||

Thus, indeed, the world is established as merely the pulsation of the five elements. Consciousness exists everywhere here, O Raghunandana.

इस प्रकार, वास्तव में, संसार पाँच तत्वों की स्पंदनमात्र के रूप में स्थापित है। चेतना यहाँ सर्वत्र विद्यमान है, हे रघुनन्दन।

6.80.60

केवलं पञ्चकवशाद्देहादौ चेतनाभिधा। जडस्पन्दाभिधा क्वापि स्थावरादौ जडाभिधा ॥ ६० ॥

kevalaṃ pañcakavaśāddehādau cetanābhidhā | jaḍaspandābhidhā kvāpi sthāvarādau jaḍābhidhā || 60 ||

Merely due to the influence of the five elements, consciousness is called by the name of the body and so forth. In some places, inert pulsation is called by the name of inert objects like trees.

केवल पाँच तत्वों के प्रभाव से, चेतना शरीर आदि के नाम से जानी जाती है। कुछ स्थानों पर, जड़ स्पंदन जड़ वस्तुओं जैसे पेड़ों के नाम से जानी जाती है।

6.80.61

यथा स्तब्धः स्थितो वीचिरिव स्थलमिवास्थितः । पञ्चकेषु तथैतच्चिल्लोलरूपा जडान्विता ॥ ६१ ॥

yathā stabdhaḥ sthito vīciriva sthalamivāsthitaḥ | pañcakeṣu tathaitaccillolarūpā jaḍānvitā || 61 ||

Just as a wave is stationary like land, similarly, in the five elements, it is in the form of motion and inertia.

जैसे लहर स्थिर होती है जमीन की तरह, वैसे ही, पाँच तत्वों में, यह गति और जड़ता के रूप में है।

6.80.62

इतः सौम्य इतो लोलः किमब्धिरिति नो यथा । विकल्पादौ तथैवैतत्पञ्चकं हि जडाजडम् ॥ ६२ ॥

itaḥ saumya ito lolaḥ kimabdhiriti no yathā | vikalpādau tathaivaitatpañcakaṃ hi jaḍājadaṃ || 62 ||

O gentle one, from here, it is moving; is it the ocean or not? Similarly, from the beginning of alternatives, these five elements are both inert and non-inert.

हे सौम्य, यहाँ से, यह गतिमान है; क्या यह समुद्र है या नहीं? वैसे ही, विकल्पों की शुरुआत से, ये पाँच तत्व जड़ और अजड़ दोनों हैं।

6.80.63

देहादिपञ्चकं जीवः स्पन्दः शैलादिकं जडम् । स्थावराद्यनिलस्पन्दि स्वभाववशतोऽनघ ॥ ६३ ॥

dehādipañcakaṃ jīvaḥ spandaḥ śailādikaṃ jaḍaṃ | sthāvarādyanilaspandi svabhāvavaśato'nagha || 63 ||

The living being is the five elements starting with the body; motion is inert like mountains, etc. O sinless one, the motion of the wind, etc., is due to its inherent nature.

जीव पाँच तत्वों का है जो शरीर से शुरू होते हैं; गति पर्वतों जैसी जड़ है, आदि। हे निष्पाप, हवा की गति, आदि, अपने स्वभाव के कारण है।

6.80.64

वाचः पर्यनुयोक्तव्याः स्वभावाद्रघुनन्दन । शीतोष्णादि हिमाग्न्यादि वाक्चेति परिदृश्यते ॥ ६४ ॥

vācaḥ paryanuyoktavyāḥ svabhāvādraghunandana | śītoṣṇādi himāgnyādi vāk ceti paridṛśyate || 64 ||

Words should be understood according to their nature, O delight of the Raghus. Cold, heat, etc., are seen as expressions of speech, etc.

शब्दों को उनके स्वभाव के अनुसार समझा जाना चाहिए, हे रघु के आनंद। ठंड, गर्मी, आदि को वाणी के अभिव्यक्तियों के रूप में देखा जाता है, आदि।

6.80.65

गृहीतवासनांशानां पुष्टाभावविकारिणाम् । स्थितयः पञ्चकानां हि योज्याः पर्यनुयोजने ॥ ६५ ॥

gṛhītavāsanāṃśānāṃ puṣṭābhāvavikāriṇām | sthitayaḥ pañcakānāṃ hi yojyāḥ paryanuyojane || 65 ||

The states of the five elements, which have grasped desires and are nourished by the transformations of existence, should be applied in their proper context.

जिन्होंने इच्छाओं को ग्रहण किया है और अस्तित्व के परिवर्तनों से पोषित हैं, उन पाँच तत्वों की स्थितियों को उनके उचित संदर्भ में लागू किया जाना चाहिए।

6.80.66

वासनास्तु विपर्यस्ता इतो नेतुमितश्च ताः । पुंसा प्राज्ञेन शक्यन्ते सुखं पर्यनुयोजितुम् ॥ ६६ ॥

vāsanāstu viparyastā ito netumitaśca tāḥ | puṃsā prājñena śakyante sukhaṃ paryanuyojitum || 66 ||

However, the desires, being perverse, can be led by the wise person from here to there, and can be made to follow easily.

हालाँकि, वासनाएँ उलटी होती हैं, इसलिए बुद्धिमान व्यक्ति उन्हें यहाँ से वहाँ ले जा सकता है, और उन्हें आसानी से अनुसरण करने के लिए प्रेरित कर सकता है।

6.80.67

अशुभे वा शुभे वापि तेन पर्यनुयोज्यते । प्रबुद्धवासनं चान्यत्पञ्चकं सुप्तवासनम् ॥ ६७ ॥

aśubhe vā śubhe vāpi tena paryanuyojyate | prabuddhavāsanaṃ cānyatpañcakaṃ suptavāsanam || 67 ||

Whether in auspicious or inauspicious, it is guided by that. Another is the awakened desire, and the fivefold is the dormant desire.

चाहे शुभ हो या अशुभ, उससे पर्यनुयोज्यते (अनुसरण किया जाता है)। दूसरा प्रबुद्ध वासना (जागृत इच्छा) है, और पाँच प्रकार की सुप्त वासना (सोई हुई इच्छा) है।

6.80.68

यत्र पर्यनुयोगस्य फलं समनुभूयते । तत्र तं संप्रयुञ्जीत नाकाशं मुष्टिभिः क्षिपेत् ॥ ६८ ॥

yatra paryanuyogasya phalaṃ samanubhūyate | tatra taṃ saṃprayuñjīta nākāśaṃ muṣṭibhiḥ kṣipet || 68 ||

Where the fruit of the application is experienced, there one should apply it, not throw it into the sky with fists.

जहाँ अनुयोग का फल अनुभव किया जाता है, वहाँ उसे लागू करना चाहिए, मुट्ठियों से आकाश में नहीं फेंकना चाहिए।

6.80.69

तृणाग्रनिष्ठा मेर्वाद्याः पञ्चकानां हि राशयः । विवेकनिष्ठाः कीटाद्या एते स्थावरजंगमाः ॥ ६९ ॥

tṛṇāgraniṣṭhā mervādyāḥ pañcakānāṃ hi rāśayaḥ | vivekaninṣṭhāḥ kīṭādyā ete sthāvarajaṅgamāḥ || 69 ||

The essences of the fivefold are indeed at the tip of a blade of grass and the like, and those based on discrimination are insects and the like, these are immovable and movable.

पाँच प्रकार की राशियाँ वास्तव में एक घास की पत्ती के अग्रभाग और इसी तरह की चीजों में हैं, और विवेक पर आधारित कीटों और इसी तरह की चीजों में हैं, ये स्थावर और जंगम हैं।

6.80.70

प्रसुप्तवासनाः केचिद्यथा स्थावरजातयः । प्रबुद्धवासनाः केचिद्यथा नरसुरादयः ॥ ७० ॥

prasuptavāsanāḥ kecidyathā sthāvarajātayaḥ | prabuddhavāsanāḥ kecidyathā narasurādayaḥ || 70 ||

Some dormant desires are like immovable beings, and some awakened desires are like humans and gods.

कुछ सोई हुई इच्छाएँ स्थावर प्राणियों की तरह होती हैं, और कुछ जागृत इच्छाएँ मनुष्यों और देवताओं की तरह होती हैं।

6.80.71

सवासनाविलाः केचिद्यथैते तिर्यगादयः । प्रक्षिप्तवासनाः केचिद्यथैते मोक्षगामिनः ॥ ७१ ॥

savāsanāvilāḥ kecidyathaite tiryagādayaḥ | prakṣiptavāsanāḥ kecidyathaite mokṣagāminaḥ || 71 ||

Some are filled with desires, like animals and others | Some have desires that are cast off, like those who are on the path to liberation

कुछ वासनाओं से भरे हुए हैं, जैसे पशु और अन्य | कुछ के वासनाएँ छोड़ दी गई हैं, जैसे मोक्ष के मार्ग पर चलने वाले

6.80.72

अथ स्वास्वेव संवित्सु मनोबुद्ध्यादिकाः कृताः । हस्तपादादिसंयुक्तैः संज्ञाः पञ्चकराशिभिः ॥ ७२ ॥

atha svāsveva saṃvitsu manobuddhyādikāḥ kṛtāḥ | hastapādādisaṃyuktaiḥ saṃjñāḥ pañcakarāśibhiḥ || 72 ||

Then, in their own consciousness, the mind, intellect, and other faculties are created | With the association of hands, feet, and other organs, the five sense organs are formed

फिर, अपनी ही चेतना में, मन, बुद्धि और अन्य शक्तियाँ बनाई जाती हैं | हाथ, पैर और अन्य अंगों के संयोग से पाँच इंद्रियाँ बनती हैं

6.80.73

तिर्यगादिभिरप्यन्यैरन्याः संज्ञाः प्रकल्पिताः । स्थावरादिभिरप्यन्यैरन्यान्याः संविदः कृताः ॥ ७३ ॥

tiryagādibhirapyanyairanyāḥ saṃjñāḥ prakalpitāḥ | sthāvarādibhirapyanyairanyānyāḥ saṃvidaḥ kṛtāḥ || 73 ||

By other animals and so forth, other sense perceptions are imagined | By other immovable beings and so forth, other consciousnesses are created

अन्य पशुओं और इसी तरह के द्वारा, अन्य इंद्रिय ग्रहण कल्पित किए जाते हैं | अन्य स्थावर जीवों और इसी तरह के द्वारा, अन्य चेतनाएँ बनाई जाती हैं

6.80.74

इति साधो स्फुरन्तीमे चित्राः पञ्चकराशयः । रूपैराद्यन्तमध्येषु चलाचलजडाजडैः ॥ ७४ ॥

iti sādho sphurantīme citrāḥ pañcakarāśayaḥ | rūpairādyantamadhyeṣu calācalajaḍājaḍaiḥ || 74 ||

Thus, O virtuous one, these diverse five sense organs manifest | With forms that are moving, unmoving, insentient, and sentient in the beginning, middle, and end

इस प्रकार, हे साधु, ये विविध पाँच इंद्रियाँ प्रकट होती हैं | आदि, मध्य और अंत में चल, अचल, जड़ और चेतन रूपों से

6.80.75

एषामेकोऽभिसंकल्पः परमाणुर्महीपते । बीजमाकाशवृक्षाणां सर्गाणां तेष्विमानि तु ॥ ७५ ॥

eṣāmeko'bhisaṃkalpaḥ paramāṇurmahīpate | bījamākāśavṛkṣāṇāṃ sargāṇāṃ teṣvimāni tu || 75 ||

O king, the single resolve of these is the supreme atom | The seed of the space-tree of creations, these are in them

हे राजन्, इनका एक संकल्प परमाणु है | सृष्टियों के आकाश-वृक्ष का बीज, ये उनमें हैं

6.80.76

इन्द्रियाणि च पुष्पादि विषयामोदवर्ति हि । इच्छाभ्रमर्यो राजन्त्यो मञ्जर्यश्चञ्चलक्रियाः ॥ ७६ ॥

indriyāṇi ca puṣpādi viṣayāmodavarti hi | icchābhramaryo rājantyo mañjaryaścañcalakriyāḥ || 76 ||

The senses, like flowers, are attracted to their objects, and desires, like bees, are restless and unstable in their actions.

इन्द्रियाँ फूलों की तरह अपने विषयों में मग्न होती हैं, और इच्छाएँ भ्रमरों की तरह चंचल और अस्थिर होती हैं।

6.80.77

लोकान्तराणि स्वच्छानि गुल्मा मूलं समेरवः । पल्लवा नीलजलदा लता लोला दिशो दश ॥ ७७ ॥

lokāntarāṇi svacchāni gulmā mūlaṃ sameravaḥ | pallavā nīlajaladā latā lolā diśo daśa || 77 ||

Other worlds are pure, the roots are the clouds, the sprouts are the blue clouds, the creepers are the unsteady directions.

अन्य लोक शुद्ध हैं, जड़ें बादल हैं, पल्लव नीले बादल हैं, लताएँ अस्थिर दिशाएँ हैं।

6.80.78

वर्तमानानि भूतानि भविष्यन्ति च यानि तत् । जयन्ति तान्यसंख्यानि फलानि रघुनन्दन ॥ ७८ ॥

vartamānāni bhūtāni bhaviṣyanti ca yāni tat | jayanti tānyasaṃkhyāni phalāni raghunandana || 78 ||

The present beings and those that will exist in the future, all those countless fruits, O Raghunandana, are victorious.

वर्तमान प्राणी और जो भविष्य में होंगे, वे सभी असंख्य फल, हे रघुनन्दन, विजयी हैं।

6.80.79

पञ्चबीजास्त एते हि राम पञ्चकपादपाः । स्वयं स्वभावाज्जायन्ते स्वयं नश्यन्ति कालतः ॥ ७९ ॥

pañcabījās ta ete hi rāma pañcakapādapāḥ | svayaṃ svabhāvājjāyante svayaṃ naśyanti kālataḥ || 79 ||

O Rama, these five seeds are indeed the five trees. They arise by their own nature and perish by themselves over time.

हे राम, ये पाँच बीज वास्तव में पाँच पेड़ हैं। वे अपने स्वभाव से उत्पन्न होते हैं और समय के साथ स्वयं नष्ट हो जाते हैं।

6.80.80

स्वयं नानात्वमायान्ति चिरं जाड्यात्स्फुरन्ति च । स्वविविक्ताः शमं यान्ति तरङ्गा इव वारिधौ ॥ ८० ॥

svayaṃ nānātvamāyānti ciraṃ jāḍyātsphuranti ca | svaviviktāḥ śamaṃ yānti taraṅgā iva vāridhau || 80 ||

They themselves attain diversity, shine for a long time from inertia, and then, being distinct, they attain peace like waves in the ocean.

वे स्वयं विविधता प्राप्त करते हैं, जड़ता से लंबे समय तक चमकते हैं, और फिर, अलग होकर, समुद्र की लहरों की तरह शांति प्राप्त करते हैं।

6.80.81

इतो यान्ति समुत्सेधमितो यान्ति शमं स्वयम् । एते जाड्यविवेकाभ्यां तरङ्गा इव तोयधौ ॥ ८१ ॥

ito yānti samutsedhamito yānti śamaṃ svayam | ete jāḍyavivekābhyāṃ taraṅgā iva toya-dhou || 81 ||

Some rise from here, others attain peace on their own | These, due to ignorance and discrimination, are like waves in the ocean

कुछ यहाँ से उठते हैं, दूसरे स्वयं शांति प्राप्त करते हैं | ये, अज्ञान और विवेक के कारण, सागर की लहरों के समान हैं

6.80.82

ये विवेकवशमालयं गता राम पञ्चकविलासराशयः । तेन भूय इह यान्ति संस्थितिं प्रभ्रमन्ति जगतीतरे मुहुः ॥ ८२ ॥

ye vivekavaśamālayaṃ gatā rāma pañcakavilāsarāśayaḥ | tena bhūya iha yānti saṃsthitiṃ prabhramanti jagatītare muhuḥ || 82 ||

Those who have attained the abode of discrimination, O Rama, the essence of the five senses | They attain stability here and wander frequently in other worlds

जो विवेक के आश्रय को प्राप्त हुए हैं, हे राम, पाँचों इंद्रियों के विलास के सार | वे यहाँ स्थिरता प्राप्त करते हैं और दूसरी दुनियाओं में अक्सर भटकते हैं

Chapter 81

6.81.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतत्पञ्चकबीजं तु कुण्डलिन्यां तदन्तरे । प्राणमारुतरूपेण तस्यां स्फुरति सर्वदा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etatpañcakabījaṃ tu kuṇḍalinyāṃ tadantare | prāṇamārutarūpeṇa tasyāṃ sphurati sarvadā || 1 ||

Shri Vasishtha said: This five-syllable seed mantra, in the form of the breath of life, always shines within the Kundalini.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह पाँच अक्षरों का बीज मंत्र, प्राण के रूप में, हमेशा कुण्डलिनी के अंदर चमकता रहता है।

6.81.2

सान्तःकुण्डलिनीस्पन्दस्पर्शसंवित्कलामला । कलोक्ता कलनेनाशु कथिता चेतनेन चित् ॥ २ ॥

sāntaḥkuṇḍalinīspandaspṛśasaṃvitkalāmalā | kaloktā kalanenāśu kathitā cetanena cit || 2 ||

That Kundalini, with the inner vibration, touch, awareness, and pure energy, is described as the one who is quickly known by the conscious mind.

वह कुण्डलिनी, अंतर्निहित स्पंदन, स्पर्श, चेतना और शुद्ध ऊर्जा के साथ, जल्दी ही चेतन मन द्वारा जानी जाती है।

6.81.3

जीवनाज्जीवतां याता मननाच्च मनःस्थिता । संकल्पाच्चैव संकल्पा बोधाद्बुद्धिरिति स्मृता ॥ ३ ॥

jīvanājjīvatāṃ yātā mananācca manaḥsthitā | saṃkalpāccaiva saṃkalpā bodhādbuddhiriti smṛtā || 3 ||

From life, it attains life; from thought, it becomes thought; from intention, it becomes intention; and from awareness, it is known as awareness.

जीवन से, यह जीवन प्राप्त करती है; विचार से, यह विचार बन जाती है; संकल्प से, यह संकल्प बन जाती है; और चेतना से, यह चेतना के रूप में जानी जाती है।

6.81.4

अहंकारात्मतां याता सैषा पुर्यष्टकाभिधा । स्थिता कुण्डलिनी देहे जीवशक्तिरनुत्तमा ॥ ४ ॥

ahaṃkārātmatāṃ yātā saiṣā puryaṣṭakābhidhā | sthitā kuṇḍalinī dehe jīvaśaktiranuttamā || 4 ||

From the ego, it attains the state of ego; this is known as the eightfold city. The Kundalini resides in the body as the supreme life force.

अहंकार से, यह अहंकार की अवस्था प्राप्त करती है; यह आठ भागों वाली नगरी के रूप में जानी जाती है। कुण्डलिनी शरीर में उत्तम जीवन शक्ति के रूप में रहती है।

6.81.5

अपानतामुपागत्य सततं प्रवहत्यधः । समाना नाभिमध्यस्था उदानाख्योपरि स्थिता ॥ ५ ॥

apānatāmupāgatya satataṃ pravahatyadhaḥ | samānā nābhimadhyasthā udānākhyopari sthitā || 5 ||

Having attained the state of Apana, it continuously flows downwards. Samana is situated in the middle of the navel, and Udana is situated above.

अपान की अवस्था प्राप्त करके, यह निरंतर नीचे की ओर प्रवाहित होती है। समाना नाभि के मध्य में स्थित है, और उदाना ऊपर स्थित है।

6.81.6

अधस्त्वपानरूपैव मध्ये सौम्यैव सर्वदा । पुष्टाप्युदानरूपैव पुंसः स्वस्यैव तिष्ठति ॥ ६ ॥

adhastvapānarūpaiva madhye saumyaiva sarvadā | puṣṭāpyudānarūpaiva puṃsaḥ svasyeva tiṣṭhati || 6 ||

The lower part is always of the nature of downward movement, the middle part is always gentle, and the upper part, which is of the nature of upward movement, remains in its own place.

नीचे का भाग हमेशा नीचे की ओर जाने की प्रकृति का होता है, मध्य भाग हमेशा सौम्य होता है, और ऊपर का भाग, जो ऊपर की ओर जाने की प्रकृति का होता है, अपने स्थान पर रहता है।

6.81.7

सर्वयत्नमधो याति यदि यत्नान्न धार्यते । तत्पुमान्मृतिमायाति तया निर्गतया बलात् ॥ ७ ॥

sarvayatnamadho yāti yadi yatnānna dhāryate | tatpumānmṛtimāyāti tayā nirgatayā balāt || 7 ||

If one does not control the downward movement with all efforts, it goes downwards. Due to that, the person meets death forcefully.

यदि कोई व्यक्ति सभी प्रयासों से नीचे की ओर जाने को नहीं रोकता, तो वह नीचे की ओर जाता है। इससे व्यक्ति बलपूर्वक मृत्यु को प्राप्त होता है।

6.81.8

समस्तैवोर्ध्वमायाति यदि युक्त्या न धार्यते । तत्पुमान्मृतिमायाति तया निर्गतया बलात् ॥ ८ ॥

samastaivordhvamāyāti yadi yuktyā na dhāryate | tatpumānmṛtimāyāti tayā nirgatayā balāt || 8 ||

If one does not control the upward movement with skill, it goes upwards. Due to that, the person meets death forcefully.

यदि कोई व्यक्ति कुशलता से ऊपर की ओर जाने को नहीं रोकता, तो वह ऊपर की ओर जाता है। इससे व्यक्ति बलपूर्वक मृत्यु को प्राप्त होता है।

6.81.9

सर्वथात्मनि तिष्ठेच्चेत्त्यक्त्वोर्ध्वाधोगमागमौ । तज्जन्तोर्हीयते व्याधिरन्तर्मारुतरोधतः ॥ ९ ॥

sarvathātmani tiṣṭheccettatyaktvordhvādhogamāgamau | tajjantorhīyate vyādhirantarmārutarodhataḥ || 9 ||

If one remains completely in the self, giving up the upward and downward movements, the disease of the person is removed from the obstruction of the internal wind.

यदि कोई व्यक्ति पूर्णतः आत्मा में रहता है, ऊपर और नीचे की ओर जाने को छोड़कर, तो आंतरिक वायु के अवरोध से व्यक्ति की बीमारी दूर हो जाती है।

6.81.10

सामान्यनाडीवैधुर्यात्सामान्यव्याधिसंभवः । प्रधाननाडीवैधुर्यात्प्रधानव्याधिसंभवः ॥ १० ॥

sāmānyanāḍīvaidhuryātsāmānyavyādhisambhavaḥ | pradhānanāḍīvaidhuryātpradhānavyādhisambhavaḥ || 10 ||

From the disorder of the general channels, general diseases arise. From the disorder of the main channels, main diseases arise.

सामान्य नाड़ियों के विकार से सामान्य रोग उत्पन्न होते हैं। मुख्य नाड़ियों के विकार से मुख्य रोग उत्पन्न होते हैं।

6.81.11

श्रीराम उवाच किंविनाशाः किमुत्पादाः शरीरेऽस्मिन्मुनीश्वराधयो व्याधयश्चैव यथावत्कथयाशु मे ॥ ११ ॥

śrīrāma uvācakiṃvināśāḥ kimutpādāḥ śarīre'sminmunīśvaraādhayo vyādhayaścaiva yathāvatkathayāśu me || 11 ||

Sri Rama said, 'What are the causes of destruction and what are the causes of origination in this body, O sage? Please explain to me in detail the afflictions and diseases.'

श्रीराम ने कहा, 'इस शरीर में विनाश के कारण क्या हैं और उत्पत्ति के कारण क्या हैं, हे मुनीश्वर? कृपया मुझे विस्तार से व्याधियों और रोगों का वर्णन करें।'

6.81.12

श्रीवसिष्ठ उवाच आधयो व्याधयश्चैव द्वयं दुःखस्य कारणम्तन्निवृत्तिः सुखं विद्यात्तत्क्षयो मोक्ष उच्यते ॥ १२ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaādhayo vyādhayaścaiva dvayaṃ duḥkhasya kāraṇamtannivṛttiḥ sukhaṃ vidyāttatkṣayo mokṣa ucyate || 12 ||

Sri Vasistha said, 'Afflictions and diseases are the two causes of suffering. Their cessation is happiness, and their destruction is called liberation.'

श्रीवसिष्ठ ने कहा, 'व्याधियाँ और रोग दुःख के दो कारण हैं। उनका निवारण सुख है, और उनका विनाश मोक्ष कहलाता है।'

6.81.13

मिथः कदाचिज्जायेते कदाचित्सममेव च पर्यायेण कदाचिच्च आधिव्याधी शरीरके ॥ १३ ॥

mithaḥ kadācijjāyete kadācitsamameva caparyāyeṇa kadācicca ādhivyādhī śarīrake || 13 ||

Sometimes afflictions and diseases arise together, sometimes they arise equally, and sometimes they arise alternately in the body.

कभी-कभी व्याधियाँ और रोग एक साथ उत्पन्न होते हैं, कभी-कभी बराबर उत्पन्न होते हैं, और कभी-कभी बारी-बारी से शरीर में उत्पन्न होते हैं।

6.81.14

देहदुःखं विदुर्व्याधिमाध्याख्यं वासनामयम्मौर्ख्यमूले हि ते विद्यात्तत्त्वज्ञाने परिक्षयः ॥ १४ ॥

dehaduḥkhaṃ vidurvyādhimādhyākhyaṃ vāsanāmayammaurkhyamūle hi te vidyāttattvajñāne parikṣayaḥ || 14 ||

They know bodily suffering as disease, known as affliction, arising from impressions, rooted in ignorance. Indeed, they are destroyed in the knowledge of truth.

वे शरीर के दुःख को रोग मानते हैं, जो व्याधि के नाम से जाना जाता है, जो वासनाओं से उत्पन्न होता है, जो अज्ञान में जड़ पकड़े हुए हैं। वास्तव में, वे सत्य के ज्ञान में नष्ट हो जाते हैं।

6.81.15

अतत्त्वज्ञानवशतः स्वेन्द्रियाक्रमणं विनाहृदि तानवमुत्सृज्य रागद्वेषेष्वनारतम् ॥ १५ ॥

atattvajñānavaśataḥ svendriyākramaṇaṃ vināhṛdi tānavamutsṛjya rāgadveṣeṣvanāratam || 15 ||

Due to ignorance of the true nature of the self, one indulges in the senses without restraining the mind, abandoning the body's afflictions and becoming engrossed in attachment and aversion.

अपने आत्मा के सच्चे स्वरूप के अज्ञान के कारण, मन को नियंत्रित किए बिना इन्द्रियों में लिप्त हो जाता है, शरीर के कष्टों को छोड़कर और आसक्ति और घृणा में डूब जाता है।

6.81.16

इदं प्राप्तमिदं नेति जाड्याद्वा घनमोहदाः आधयः संप्रवर्तन्ते वर्षासु मिहिका इव ॥ १६ ॥

idaṃ prāptamidaṃ neti jāḍyādvā ghanamohadāḥādhayaḥ saṃpravartante varṣāsu mihikā iva || 16 ||

This is obtained, this is not obtained, due to dullness and dense ignorance, afflictions arise like clouds in the rainy season.

यह प्राप्त है, यह प्राप्त नहीं है, मूर्खता और घने अज्ञान के कारण कष्ट वर्षा ऋतु में बादलों की तरह उत्पन्न होते हैं।

6.81.17

भृशं स्फुरन्तीष्विच्छासु मौर्ख्ये चेतस्यनिर्जितेदुरन्नाभ्यवहारेण दुर्देशाक्रमणेन च ॥ १७ ॥

bhṛśaṃ sphurantīṣvicchāsu maurkhye cetasyanirjitedurannābhyavahāreṇa durdeśākramaṇena ca || 17 ||

When the mind is uncontrolled due to foolishness, desires arise intensely. This leads to improper digestion and misbehavior.

जब मन मूर्खता के कारण अनियंत्रित होता है, तो इच्छाएँ तीव्र रूप से उत्पन्न होती हैं। यह असंतुलित पाचन और दुर्व्यवहार का कारण बनता है।

6.81.18

दुष्कालव्यवहारेण दुष्क्रियास्फुरणेन चदुर्जनासङ्गदोषेण दुर्भावोद्भावनेन च ॥ १८ ॥

duṣkālavyavahāreṇa duṣkriyāsphuraṇena cadurjanāsaṅgadoṣeṇa durbhāvodbhāvanena ca || 18 ||

Due to improper conduct in adverse times, the manifestation of bad deeds, the fault of associating with bad people, and the cultivation of bad thoughts.

अनुकूल समय में दुर्व्यवहार के कारण, बुरे कामों की प्रकटीकरण, बुरे लोगों के साथ संबंधों के दोष और बुरी सोच की प्रेरणा के कारण।

6.81.19

क्षीणत्वाद्वा प्रपूर्णत्वान्नाडीनां रन्धसंततौप्राणे विधुरतां याते काये तु विकलीकृते ॥ १९ ॥

kṣīṇatvādvā prapūrṇatvānnāḍīnāṃ randhasaṃtatauprāṇe vidhuratāṃ yāte kāye tu vikalīkṛte || 19 ||

Due to the depletion or fullness of the channels, the vital energy becomes weakened, and the body becomes disordered.

नाड़ियों के खाली होने या पूर्ण होने के कारण, प्राण शक्ति कमजोर हो जाती है, और शरीर असंतुलित हो जाता है।

6.81.20

दौःस्थित्यकारणं दोषाद्व्याधिर्देहे प्रवर्तते तेनद्याः प्रावृण्निदाघाभ्यामिवाकारविपर्ययः ॥ २० ॥

dauḥsthityakāraṇaṃ doṣādvyādhirdehe pravartatenadyāḥ prāvṛṇnidāghābhyāmivākāraviparyayaḥ || 20 ||

Due to the fault of instability, disease arises in the body. Similarly, there is a change in the condition due to the heat of summer and the rainy season.

अस्थिरता के दोष से शरीर में रोग उत्पन्न होता है। इसी प्रकार, गर्मी और वर्षा ऋतु के कारण स्थिति में परिवर्तन होता है।

6.81.21

प्राक्तनी चैहिकी वापि शुभा वाप्यशुभा मतिःयैवाधिका सैव तथा तस्मिन्योजयति क्रमे ॥ २१ ॥

prāktanī caihikī vāpi śubhā vāpyaśubhā matiḥyaivādhikā saiva tathā tasminyojayati krame || 21 ||

Whether it is past or present, good or bad, the mind that is more inclined towards it, binds one to it in that order.

चाहे वह भूतकाल की हो या वर्तमान की, अच्छी हो या बुरी, मन जिस पर अधिक झुका हुआ है, उसी क्रम में उसे बांधता है।

6.81.22

आधयो व्याधयश्चैव जायन्ते भूतपञ्चकेकथं शृणु विनश्यन्ति राघवाणां कुलोद्वह ॥ २२ ॥

ādhayo vyādhayaścaiva jāyante bhūtapañcakekathaṃ śṛṇu vinaśyanti rāghavāṇāṃ kulodvaha || 22 ||

Mental afflictions and diseases arise from the five elements. Listen, O Raghava, how they perish.

मानसिक व्याधियाँ और रोग पंचभूतों से उत्पन्न होते हैं। सुनो, हे रघुवंशी, वे कैसे नष्ट होते हैं।

6.81.23

द्विविधो व्याधिरस्तीह सामान्यः सार एव चव्यवहारस्तु सामान्यः सारो जन्ममयः स्मृतः ॥ २३ ॥

dvividho vyādhirastīha sāmānyaḥ sāra eva cavyavahārastu sāmānyaḥ sāro janmamayaḥ smṛtaḥ || 23 ||

There are two types of diseases here: ordinary and essential. Ordinary diseases are related to daily activities, while essential diseases are considered to be born with.

यहाँ दो प्रकार के रोग हैं: सामान्य और मूलभूत। सामान्य रोग दैनिक गतिविधियों से संबंधित हैं, जबकि मूलभूत रोग जन्मजात माने जाते हैं।

6.81.24

प्राप्तेनाभिमतेनैव नश्यन्ति व्यावहारिकाःआधिक्षयेणाधिभवाः क्षीयन्ते व्याधयोऽप्यलम् ॥ २४ ॥

prāptenābhimatenaiva naśyanti vyāvahārikāḥādhikṣayeṇādhibhavāḥ kṣīyante vyādhayo'pyalam || 24 ||

Ordinary diseases are destroyed by obtaining the desired object. Mental afflictions are diminished by the destruction of desires.

सामान्य रोग अभीष्ट वस्तु को प्राप्त करके नष्ट हो जाते हैं। मानसिक व्याधियाँ इच्छाओं के नष्ट होने से कम हो जाती हैं।

6.81.25

आत्मज्ञानं विना सारो नाधिर्नश्यति राघवभूयो रज्ज्ववबोधेन रज्जुसर्पो हि नश्यति ॥ २५ ॥

ātmajñānaṃ vinā sāro nādhirnaśyati rāghavabhūyo rajjvavabodhena rajjusarpo hi naśyati || 25 ||

Without self-knowledge, the essence of suffering does not perish, O Raghava. Just as the illusion of a snake disappears upon realizing it is a rope.

आत्मज्ञान के बिना, दुःख का सार नहीं नष्ट होता, हे रघुवंशी। जैसे रस्सी को रस्सी समझने पर साँप का भ्रम नष्ट हो जाता है।

6.81.26

आधिव्याधिविलासानां राम साराधिसंक्षयः । सर्वेषां मूलहा प्रावृण्नदीव तटवीरुधाम् ॥ २६ ॥

ādhivyādhivilāsānāṃ rāma sārādhisankṣayaḥ | sarveṣāṃ mūlahā prāvṛṇnadīva taṭavīrudhām || 26 ||

O Rama, the essence of mental afflictions, physical ailments, and worldly pleasures is their diminution. Just as a river erodes the roots of trees on its banks, so too these afflictions erode the essence of all beings.

हे राम, मानसिक व्यथा, शारीरिक रोग और संसारिक विलास का सार उनका क्षय है। जैसे नदी अपने किनारे के पेड़ों की जड़ें खोदती है, वैसे ही ये व्यथाएँ सभी के मूल को नष्ट करती हैं।

6.81.27

अनाधिजा व्याधयस्तु द्रव्यमन्त्रशुभक्रमैः । चिकित्सकादिशास्त्रोक्तैर्नश्यन्त्यन्यैरिहाथवा ॥ २७ ॥

anādhijā vyādhayastu dravyamantraśubhakramaiḥ | cikitsakādiśāstroktaiḥ naśyantyanairihāthavā || 27 ||

However, diseases that are not caused by mental afflictions can be cured by auspicious means such as medicines, mantras, and other methods prescribed in medical treatises.

फिर भी, मानसिक व्यथाओं से उत्पन्न न होने वाले रोग औषधियों, मंत्रों और अन्य चिकित्सा पद्धतियों द्वारा ठीक किए जा सकते हैं जो चिकित्सा शास्त्रों में वर्णित हैं।

6.81.28

स्नानमन्त्रौषधोपाया वक्तुश्चाधिगतानि च । त्वया चिकित्साशास्त्राणि किमन्यदुपदिश्यते ॥ २८ ॥

snānamantrauṣadhopāyā vaktuścādhigatāni ca | tvayā cikitsāśāstrāṇi kimanyadupadiśyate || 28 ||

Bathing, mantras, medicines, and other remedies, as well as the teachings of the speaker, have been understood by you. What else needs to be instructed from the medical treatises?

स्नान, मंत्र, औषधियाँ और अन्य उपाय, साथ ही वक्ता के उपदेश आपने समझ लिए हैं। चिकित्सा शास्त्रों से और क्या सिखाया जाना चाहिए?

6.81.29

श्रीराम उवाच । आधेः कथं भवेद्व्याधिः कथं च स विनश्यति । द्रव्यादितरया युक्त्या मन्त्रपुण्यादिरूपया ॥ २९ ॥

śrīrāma uvāca | ādheḥ kathaṃ bhavedvyādhiḥ kathaṃ ca sa vinaśyati | dravyāditrayā yuktyā mantrapuṇyādirūpayā || 29 ||

Sri Rama said: How does mental affliction lead to disease, and how does it get cured? By what means, such as medicines, mantras, and other auspicious methods, is it treated?

श्री राम ने कहा: मानसिक व्यथा कैसे रोग बन जाती है, और कैसे वह ठीक हो जाती है? औषधियों, मंत्रों और अन्य शुभ उपायों द्वारा किस प्रकार से उसका इलाज किया जाता है?

6.81.30

श्रीवसिष्ठ उवाच । चित्ते विधुरिते देहः संक्षोभमनुयात्यलम् । तथाहि रुषितो जन्तुरग्रमेव न पश्यति ॥ ३० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | citte vidhurite dehaḥ saṃkṣobhamanuyātyalam | tathāhi ruṣito janturagramena na paśyati || 30 ||

Sri Vasistha said: When the mind is disturbed, the body experiences agitation. Indeed, an angry person does not see things clearly.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब मन विचलित होता है, तो शरीर में खलबली मच जाती है। वास्तव में, क्रोधित व्यक्ति चीजों को स्पष्ट रूप से नहीं देखता।

6.81.31

अनवेक्ष्य पुरो मार्गममार्गमनुधावति । प्रकृतं मार्गमुत्सृज्य शरार्तो हरिणो यथा ॥ ३१ ॥

anavekṣya puro mārgamamārgamanudhāvati | prakṛtaṃ mārgamutsṛjya śarārto hariṇo yathā || 31 ||

Without examining the path ahead, one rushes into the wrong path, like a deer wounded by an arrow abandons its natural path.

बिना आगे के मार्ग का विचार किए, कोई गलत मार्ग पर दौड़ पड़ता है, जैसे तीर से घायल हुआ हिरण अपने स्वाभाविक मार्ग को छोड़ देता है।

6.81.32

संक्षोभात्साम्यमुत्सृज्य वहन्ति प्राणवायवः । देहे गजप्रविष्टेन पयांसीव सरित्तटे ॥ ३२ ॥

saṃkṣobhātsāmyamutsṛjya vahanti prāṇavāyavaḥ | dehe gajapraviṣṭena payāṃsīva sarittaṭe || 32 ||

Due to agitation, the vital airs abandon their equilibrium, just as the waters of a river are disturbed when an elephant enters it.

उत्तेजना के कारण, प्राणवायुएँ अपने सामंजस्य को छोड़ देती हैं, जैसे हाथी नदी में प्रवेश करने पर नदी के जल विचलित हो जाते हैं।

6.81.33

असमं वहति प्राणे नाड्यो यान्ति विसंस्थितिम्। असम्यक्संस्थिते भूपे यथा वर्णाश्रमक्रमाः ॥ ३३ ॥

asamaṃ vahati prāṇe nāḍyo yānti visaṃsthitim | asamyaksamsthite bhūpe yathā varṇāśramakramāḥ || 33 ||

When the vital air is uneven, the channels become disordered, just as the social order is disrupted when the king is improperly established.

जब प्राणवायु असमान होती है, तो नाड़ियाँ अव्यवस्थित हो जाती हैं, जैसे राजा अयोग्य रूप से स्थापित होने पर सामाजिक व्यवस्था विचलित हो जाती है।

6.81.34

काश्चिन्नाड्यः प्रपूर्णत्वं यान्ति काश्चिच्च रिक्तताम्। प्राणाऽऽविधुरिते देहे सर्वतः सरितो यथा ॥ ३४ ॥

kāścinnāḍyaḥ prapūrṇatvaṃ yānti kāścicca riktatām | prāṇā'āvidhurite dehe sarvataḥ sarito yathā || 34 ||

Some channels become full while others become empty when the vital air is disturbed in the body, just as rivers flow in all directions.

जब शरीर में प्राणवायु विचलित होती है, तो कुछ नाड़ियाँ भर जाती हैं और कुछ खाली हो जाती हैं, जैसे नदियाँ सभी दिशाओं में बहती हैं।

6.81.35

कुजीर्णत्वमजीर्णत्वमतिजीर्णत्वमेव वा। दोषायैव प्रयात्यन्नं प्राणसंचारदुष्क्रमात् ॥ ३५ ॥

kujīrṇatvamajīrṇatvamatijīrṇatvameva vā | doṣāyaiva prayātyannaṃ prāṇasaṃcāraduṣkramāt || 35 ||

Food may lead to indigestion, proper digestion, or over-digestion due to the improper movement of vital air, which leads to imbalance.

भोजन अपच हो सकता है, सही पच सकता है, या अति पच सकता है, प्राणवायु की असंगत गति के कारण, जो असंतुलन की ओर ले जाती है।

6.81.36

यथा काष्ठानि नयति प्राचीदेशं सरिद्रयः। तथान्नानि नयत्यन्तः प्राणवातः स्वमाश्रयम् ॥ ३६ ॥

yathā kāṣṭhāni nayati prācīdeśaṃ saridrayaḥ| tathānnāni nayatyantaḥ prāṇavātaḥ svamāśrayam || 36 ||

Just as the river carries wood to the eastern direction, similarly, the vital air carries food to its own place.

जैसे नदी लकड़ी को पूर्व दिशा में ले जाती है, वैसे ही प्राणवायु भोजन को अपने स्थान पर ले जाती है।

6.81.37

यान्यन्नानि निरोधेन तिष्ठन्त्यन्तःशरीरके। तान्येव व्याधितां यान्ति परिणामस्वभावतः ॥ ३७ ॥

yānyannāni nirodhena tiṣṭhantyantaḥśarīrake| tānyeva vyādhitāṃ yānti pariṇāmasvabhāvataḥ || 37 ||

The foods that remain undigested within the body, those very foods turn into diseases due to their transformative nature.

जो भोजन शरीर के अंदर अपचित रहते हैं, वही भोजन अपने परिवर्तनशील स्वभाव के कारण रोगों में बदल जाते हैं।

6.81.38

एवमाधेर्भवेद्व्याधिस्तस्याभावाच्च नश्यति। यथा मन्त्रैर्विनश्यन्ति व्याधयस्तत्क्रमं शृणु ॥ ३८ ॥

evamādherbhavedvyādhistasyābhāvācca naśyati| yathā mantrairvinaśyanti vyādhayastatkramam śṛṇu || 38 ||

Thus, diseases arise from undigested food, and they disappear due to its absence. Just as diseases are destroyed by mantras, listen to that sequence.

इस प्रकार, अपचित भोजन से रोग उत्पन्न होते हैं, और उसके अभाव से वे नष्ट हो जाते हैं। जैसे मंत्रों से रोग नष्ट हो जाते हैं, उस क्रम को सुनो।

6.81.39

यथा विरेकं कुर्वन्ति हरीतक्यः स्वभावतः। भावनावशतः कायं तथा यरलवादयः ॥ ३९ ॥

yathā virekaṃ kurvanti harītakyaḥ svabhāvataḥ| bhāvanāvaśataḥ kāyaṃ tathā yaralavādayaḥ || 39 ||

Just as Haritaki naturally causes purgation, similarly, other herbs like Yaralava affect the body through their properties.

जैसे हरीतकी प्राकृतिक रूप से विरेचन करती है, उसी तरह यरलवा जैसी अन्य औषधियाँ अपने गुणों द्वारा शरीर पर प्रभाव डालती हैं।

6.81.40

शुद्धया पुण्यया साधो क्रियया साधुसेवया। मनः प्रयाति नैर्मल्यं निकषेणेव काञ्चनम् ॥ ४० ॥

śuddhayā puṇyayā sādho kriyayā sādhusevayā| manaḥ prayāti nairmalyaṃ nikaṣeṇeva kāñcanam || 40 ||

O virtuous one, with pure and meritorious actions, the mind attains purity, just as gold is purified by the touchstone.

हे साधु, शुद्ध और पुण्यमय क्रियाओं से मन पवित्रता प्राप्त करता है, जैसे सोना परखने से शुद्ध होता है।

6.81.41

आनन्दो वर्धते देहे शुद्धे चेतसि राघव। पूर्णेन्दावुदिते ह्यत्र नैर्मल्यं भुवने यथा ॥ ४१ ॥

ānando vardhate dehe śuddhe cetasi rāghava | pūrṇendāvudite hyatra nairmalyam bhuvane yathā || 41 ||

O Raghava, joy increases in a pure body and mind, just as the full moon shines brightly in the clear sky.

हे राघव, शुद्ध शरीर और मन में आनंद बढ़ता है, जैसे पूर्णिमा की रात में स्वच्छ आकाश में चंद्रमा चमकता है।

6.81.42

सत्त्वशुद्ध्या वहन्त्येते क्रमेण प्राणवायवः। जरयन्ति तथान्नानि व्याधिस्तेन विनश्यति ॥ ४२ ॥

sattvaśuddhyā vahantyete krameṇa prāṇavāyavaḥ | jarayanti tathānnāni vyādhistena vinaśyati || 42 ||

Through the purity of the mind, the vital airs function properly, digesting food and thus eliminating disease.

मन की शुद्धता से प्राणवायु क्रमशः कार्य करती है, भोजन को पचाती है और इस प्रकार रोग को दूर करती है।

6.81.43

आधिव्याध्योरिति प्रोक्तौ नाशोत्पत्तिक्रमौ त्वयि। कुण्डलिन्याः कथायोगादधुना प्रकृतं शृणु ॥ ४३ ॥

ādhiyādhyoriti proktau nāśotpattikramau tvayi | kuṇḍalinyāḥ kathāyogādadhunā prakṛtam śṛṇu || 43 ||

The sequence of the destruction and origin of mental and physical ailments is being explained to you. Now, listen to the natural process of the Kundalini through the practice of yoga.

मानसिक और शारीरिक विकारों के नाश और उत्पत्ति का क्रम आपको बताया जा रहा है। अब, योग के अभ्यास से कुंडलिनी के प्राकृतिक प्रक्रिया को सुनो।

6.81.44

पुर्यष्टकपराख्यस्य जीवस्य प्राणनामिकाम्। विद्धि कुण्डलिनीमन्तरामोदस्येव मञ्जरीम् ॥ ४४ ॥

puryaṣṭakaparākhyasya jīvasya prāṇanāmikām | viddhi kuṇḍalinīmantarāmōdasyeva mañjarīm || 44 ||

Know the Kundalini, the life force of the individual soul, as the inner bliss, like a blossoming flower.

जीव की प्राण शक्ति को कुंडलिनी के रूप में जानो, जो अंतर्निहित आनंद की तरह एक खिलती हुई कली है।

6.81.45

तां यदा पूरकाभ्यासादापूर्य स्थीयते समम् । तदैति मैरवं स्थैर्यं कायस्यापीनता तथा ॥ ४५ ॥

tāṃ yadā pūrakābhyāsādāpūrya sthīyate samam | tadaiti mairavaṃ sthairyaṃ kāyasyāpīnatā tathā || 45 ||

When that Kundalini is filled through the practice of Pūraka, it becomes steady. Then the body attains stability and fullness.

जब कुंडलिनी पूरक अभ्यास से भर जाती है, तो वह स्थिर हो जाती है। फिर शरीर स्थिरता और पूर्णता प्राप्त करता है।

6.81.46

यदा पूरकपूर्णान्तरायतप्राणमारुतम् । नीयते संविदेवोर्ध्वं सोढुं घर्मक्लमं श्रमम् ॥ ४६ ॥

yadā pūrakapūrṇāntarāyataprāṇamārutam | nīyate saṃvidevordhvaṃ soḍhuṃ gharmaklamaṃ śramam || 46 ||

When the breath is fully extended and filled, the consciousness rises upward, enduring heat, fatigue, and exertion.

जब श्वास पूर्ण रूप से फैली और भरी होती है, तब चेतना ऊपर उठती है, गर्मी, थकान और परिश्रम सहन करते हुए।

6.81.47

सर्पीव त्वरितैवोर्ध्वं याति दण्डोपमां गता । नाडीः सर्वाः समादाय देहबद्धा लतोपमाः ॥ ४७ ॥

sarpīva tvaritaivordhvaṃ yāti daṇḍopamāṃ gatā | nāḍīḥ sarvāḥ samādāya dehabaddhā latopamāḥ || 47 ||

Like a serpent, it quickly rises upward, taking the form of a staff. All the nadis, bound to the body, are like creepers.

जैसे साँप, यह तेजी से ऊपर उठता है, डंडे के रूप में। सभी नाड़ियाँ, शरीर से बंधी हुई, लताओं की तरह होती हैं।

6.81.48

तदा समस्तमेवेदमुत्प्लावयति देहकम् । नीरन्ध्रं पवनापूर्णं भस्त्रेवाम्बु ततान्तरम् ॥ ४८ ॥

tadā samastamevedamutplāvayati dehakam | nīrandhraṃ pavanāpūrṇaṃ bhastravāmbu tatāntaram || 48 ||

Then, it floods the entire body, which is filled with air and without any holes, like water in a leather bag.

तब, यह पूरे शरीर को भर देता है, जो हवा से भरा हुआ और किसी छेद के बिना होता है, जैसे चमड़े के थैले में पानी।

6.81.49

इत्यभ्यासविलासेन योगेन व्योमगामिना । योगिनः प्राप्नुवन्त्युच्चैर्दीना इन्द्रदशामिव ॥ ४९ ॥

ityabhyāsavilāsena yogena vyomagāminā | yoginaḥ prāpnuvantyuccairdīnā indradaśāmiva || 49 ||

Thus, by the practice of this playful yoga that leads to the sky, yogis attain the highest state, like the miserable attaining the state of Indra.

इस प्रकार, इस खेल-से योग की अभ्यास के द्वारा, जो आकाश तक ले जाता है, योगी उच्चतम अवस्था प्राप्त करते हैं, जैसे दुःखी इंद्र की दशा प्राप्त करते हैं।

6.81.50

ब्रह्मनाडीप्रवाहेण शक्तिः कुण्डलिनी यदा । बहिरूर्ध्वं कपाटस्य द्वादशाङ्गुलमूर्धनि ॥ ५० ॥

brahmanāḍīpravāheṇa śaktiḥ kuṇḍalinī yadā | bahirūrdhvaṃ kapāṭasya dvādaśāṅgulamūrdhani || 50 ||

When the Kundalini power flows through the Brahma Nadi, it moves outward and upward, twelve fingers above the kapata.

जब कुंडलिनी शक्ति ब्रह्म नाड़ी के माध्यम से प्रवाहित होती है, तो यह बाहर और ऊपर की ओर बढ़ती है, कपाट के ऊपर बारह अंगुल तक।

6.81.51

रेचकेन प्रयोगेण नाड्यन्तरनिरोधिना । मुहूर्ते स्थितिमाप्नोति तदा व्योमगदर्शनम् ॥ ५१ ॥

rechakena prayogeṇa nāḍyantaranirōdhinā | muhūrte sthitimāpnoti tadā vyōmagadarśanam || 51 ||

By the practice of Rechaka (exhalation), which blocks the other nadis, one attains stability in a moment, and then one sees the sky.

रेचक की अभ्यास से, जो अन्य नाड़ियों को रोकता है, एक पल में स्थिरता प्राप्त होती है, और तब आकाश दिखाई देता है।

6.81.52

श्रीराम उवाच । दर्शनं कीदृशं ब्रह्मन्नयनांशुगणं विना । अदिव्यानामिन्द्रियाणां तत्त्वमेव कथं भवेत् ॥ ५२ ॥

śrīrāma uvāca | darśanaṃ kīdṛśaṃ brahmannayanāṃśugaṇaṃ vinā | adivyānāmindriyāṇāṃ tattvameva kathaṃ bhavet || 52 ||

Sri Rama said: O Brahman, how can the essence of the non-divine senses be known without the rays of the eyes? What kind of vision is it?

श्री राम ने कहा: हे ब्रह्मन्, आँखों की किरणों के बिना अलौकिक इन्द्रियों का तत्त्व कैसे जाना जा सकता है? कैसा दर्शन है यह?

6.81.53

श्रीवसिष्ठ उवाच । न केचन महाबाहो भूचरेण नभस्वतः । अदिव्येनाश्रिता ज्ञानैर्दृश्यन्ते पुरुषेन्द्रियैः ॥ ५३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | na kecana mahābāho bhūcareṇa nabhasvataḥ | adivyenāśritā jñānairdṛśyante puruṣendriyaiḥ || 53 ||

Vasishtha said: O mighty-armed one, no one can see the celestial beings who move in the sky with non-divine knowledge and human senses.

वसिष्ठ ने कहा: हे महाबाहो, कोई भी व्यक्ति अलौकिक ज्ञान और मानव इन्द्रियों के साथ आकाश में चलने वाले दिव्य प्राणियों को नहीं देख सकता।

6.81.54

विज्ञानाद्दूरसंस्थेन बुद्धिनेत्रेण राघव । दृश्यन्ते व्योमगा सिद्धाः स्वप्नवत्स्वार्थदा अपि ॥ ५४ ॥

vijñānāddūrasaṃsthena buddhinētreṇa rāghava | dṛśyante vyōmagā siddhāḥ svapnavatsvārthadā api || 54 ||

O Raghava, with the eye of intellect situated far from knowledge, the perfected beings moving in the sky are seen as if in a dream, granting one's desires.

हे राघव, ज्ञान से दूर स्थित बुद्धि की आँख से, आकाश में चलने वाले सिद्ध प्राणी स्वप्न की तरह दिखाई देते हैं, जो अपनी इच्छाओं को पूरा करते हैं।

6.81.55

स्वप्नावलोकनं यद्वत्तद्वत्सिद्धावलोकनम् । केवलोऽथ विशेषोऽयं सिद्धप्राप्तौ स्थिरार्थता ॥ ५५ ॥

svapnāvalōkanaṃ yadvattadvatsiddhāvalōkanam | kevalo'tha viśeṣo'yaṃ siddhaprāptau sthirārthatā || 55 ||

Just as one sees in a dream, so one sees the perfected beings. The only difference is that in attaining perfection, there is stability in meaning.

जैसे स्वप्न में देखा जाता है, वैसे ही सिद्ध प्राणियों को देखा जाता है। एकमात्र अंतर यह है कि सिद्धि प्राप्ति में अर्थ की स्थिरता होती है।

6.81.56

मुखाद्बहिर्द्वादशान्ते रेचकाभ्यासयुक्तितःप्राणे चिरं स्थितिं नीते प्रविशत्यपरां पुरीम् ॥ ५६ ॥

mukhādbahirdvādaśānte recakābhyāsayuktitaḥprāṇe ciraṃ sthitiṃ nīte praviśatyaparāṃ purīm || 56 ||

By the practice of exhalation from the mouth to the twelve-fingered space outside, the prana is led to a long-lasting state and enters the other city.

मुख से बाहर बारह अंगुल के अंतराल तक रेचक अभ्यास से, प्राण को चिरस्थायी अवस्था में ले जाया जाता है और वह दूसरी पुरी में प्रवेश करता है।

6.81.57

श्रीराम उवाच वद स्वभावस्य कथं ब्रह्मन्अचलसंस्थितिः। वक्तारः सानुकम्पा हि दुष्प्रश्नेऽपि न खेदिनः ॥ ५७ ॥

śrīrāma uvāca vada svabhāvasya kathaṃ brahmannacalasaṃsthitiḥ vaktāraḥ sānukampā hi duṣpraśne'pi na khedinaḥ || 57 ||

Śrī Rāma said: O Brahmin, tell me how the nature of the Self abides in immovable steadiness. Those who speak are indeed compassionate and are not distressed even by difficult questions.

श्रीराम बोले: हे ब्राह्मण, मुझे बताओ कि आत्मा का स्वभाव अचल स्थिति में कैसे स्थित है। वक्ता तो दयालु होते हैं और कठिन प्रश्नों से भी खिन्न नहीं होते।

6.81.58

श्रीवसिष्ठ उवाचशक्तिर्या तु स्वभावाख्या यथा स्फुरति चात्मनःसर्गादिषु तथैवासौ स्थितिं यातीति निश्चयः ॥ ५८ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaśaktiryā tu svabhāvākhyā yathā sphurati cātmanaḥsargādiṣu tathaivāsau sthitiṃ yātīti niścayaḥ || 58 ||

Sri Vasistha said: The power called one's own nature shines in the self as it does in creation and other states. It is certain that it attains stability.

श्री वसिष्ठ ने कहा: अपने स्वभाव कहलाने वाली शक्ति आत्मा में उसी तरह चमकती है जैसे सृष्टि और अन्य अवस्थाओं में। यह निश्चित है कि यह स्थिरता प्राप्त करती है।

6.81.59

अवस्तुत्वादविद्याया वस्तुशक्तिरपि क्वचित्भिद्यते दृश्यते ह्यङ्ग वसन्ते शारदं फलम् ॥ ५९ ॥

avastutvādavidyāyā vastuśaktirapi kvacitbhidyate dṛśyate hyaṅga vasante śāradaṃ phalam || 59 ||

Due to the unreality of ignorance, the power of reality also sometimes appears to be divided. It is seen that the fruit of autumn ripens in spring.

अज्ञान की अवास्तविकता के कारण, वास्तविकता की शक्ति भी कभी-कभी विभाजित प्रतीत होती है। यह देखा जाता है कि शरद का फल वसंत में पकता है।

6.81.60

सर्वमेवमिदं ब्रह्म नानानानातया स्थितम्जृम्भते व्यवहारार्थं केवलं कथितस्थिति ॥ ६० ॥

sarvamevamidaṃ brahma nānā'nānātayā sthitamjṛmbhate vyavahārārthaṃ kevalaṃ kathitasthiti || 60 ||

All this is Brahman, which exists in various forms. It appears for the sake of worldly transactions and is described as merely existing.

यह सब ब्रह्म है, जो विभिन्न रूपों में स्थित है। यह लौकिक व्यवहार के लिए प्रकट होता है और केवल अस्तित्व में वर्णित है।

6.81.61

श्रीराम उवाच । सूक्ष्मच्छिद्रादिगत्यर्थं पूरणार्थं च खस्य वा । अणुतां स्थूलतां वापि कायोऽयं नीयते कथम् ॥ ६१ ॥

śrīrāma uvāca | sūkṣmacchidrādigatyarthaṃ pūraṇārthaṃ ca khasya vā | aṇutāṃ sthūlatāṃ vāpi kāyo'yaṃ nīyate katham || 61 ||

Sri Rama said: How does this body become subtle or gross for the purpose of entering minute pores or filling space?

श्री राम ने कहा: यह शरीर सूक्ष्म या स्थूल कैसे हो जाता है जिससे यह सूक्ष्म छिद्रों में प्रवेश कर सके या खाली स्थान को भर सके?

6.81.62

श्रीवसिष्ठ उवाच । काष्ठक्रकचयोः श्लेषाद्यथा छेदः प्रवर्तते । द्वयोः संघर्षणादग्निः स्वभावाज्जायते तथा ॥ ६२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kāṣṭhakrakacayoḥ śleṣādyathā chedaḥ pravartate | dvayoḥ saṃgharṣaṇādagnis svabhāvājjāyate tathā || 62 ||

Vasishtha said: Just as a cut is made by the friction of wood and a saw, and fire is produced by the friction of two objects due to their nature, similarly...

वसिष्ठ ने कहा: जैसे लकड़ी और आरे के घर्षण से काट होता है, और दो वस्तुओं के घर्षण से अग्नि उत्पन्न होती है, उसी प्रकार...

6.81.63

मांसं कुयन्त्रजठरे स्थितं श्लिष्टमुखं मिथः । ऊर्ध्वाधःसंमिलत्स्थूलद्ध्यम्भःस्थैरिव वैतसम् ॥ ६३ ॥

māṃsaṃ kuyantrajaṭhare sthitaṃ śliṣṭamukhaṃ mithaḥ | ūrdhvādhaḥsaṃmilatsthūladhyambhaḥsthairiva vaitasam || 63 ||

The meat placed in the machine of the stomach, tightly closed, is churned up and down like the churning of curds in a pot.

पेट के यंत्र में रखा हुआ मांस, जो कि कसकर बंद है, ऊपर नीचे मथा जाता है जैसे घड़े में दही मथा जाता है।

6.81.64

तस्य कुण्डलिनी लक्ष्मीर्निलीनान्तर्निजास्पदे । पद्मरागसमुद्गस्य कोशे मुक्तावली यथा ॥ ६४ ॥

tasya kuṇḍalinī lakṣmīrnīlīnāntarnijāspade | padmarāgasamudgasya kośe muktāvalī yathā || 64 ||

Its Kundalini energy, the divine power, is hidden within its own abode, like a string of pearls in the sheath of a ruby-studded ornament.

उसकी कुण्डलिनी शक्ति, दिव्य शक्ति, अपने आश्रय में छिपी हुई है, जैसे मोतियों की माला माणिक जड़े आभूषण के खोल में।

6.81.65

आवर्तफलमालेव नित्यं सलसलायते । दण्डाहतेव भुजगी समुन्नतिविवर्तिनी ॥ ६५ ॥

āvartaphalamāleva nityaṃ salasalāyate | daṇḍāhatēva bhujagī samunnativivartinī || 65 ||

It always hisses like a garland of whirling fruits, and it rises and falls like a snake struck by a stick.

यह हमेशा घूमते फलों की माला की तरह फुसफुसाता है, और यह डंडे से मारी गई साँप की तरह उठता-बैठता है।

6.81.66

द्यावापृथिव्योर्मध्यस्था क्रियेव स्पन्दधर्मिणी । संविन्मधुविबोधार्को हृत्पद्मपुटषट्पदी ॥ ६६ ॥

dyāvāpṛthivyormadhyasthā kriyeva spandadharmiṇī | saṃvinmadhuvibodhārko hṛtpadmapuṭaṣaṭpadī || 66 ||

Located between heaven and earth, like an action, possessing the nature of vibration, the bee of the lotus heart, the sun of the awakening of pure consciousness.

द्यावापृथिवी के मध्य में स्थित, क्रिया के समान, स्पंदन के धर्म से युक्त, हृदय कमल का भौंरा, शुद्ध चेतना के जागरण का सूर्य।

6.81.67

तत्सर्वं शक्तिपद्मादि बाह्येनाभ्यन्तरैस्तया । हृदि व्याधूयते वातैः पत्रवृन्दमिवाभितः ॥ ६७ ॥

tatsarvaṃ śaktipadmādi bāhyenābhyantarais tayā | hṛdi vyādhūyate vātaiḥ patravṛndam ivābhitaḥ || 67 ||

All that, beginning with the power of the lotus, is shaken in the heart by the winds, both external and internal, like a cluster of leaves.

वह सब कुछ, जो कमल की शक्ति से शुरू होता है, बाहरी और अंतर्निहित वायुओं द्वारा हृदय में हिलाया जाता है, जैसे पत्तों का झुंड।

6.81.68

यद्वद्व्योम स्फुरत्यङ्ग स्यभावात्तत्र वायवः । बलवन्मृदु यत्किंचिद्भृशं कवलयन्ति तत् ॥ ६८ ॥

yadvadvyoma sphuratyanga syabhāvāttatra vāyavaḥ | balavanmṛdu yatkiñcidbhṛśaṃ kavalayanti tat || 68 ||

Just as the sky shines by its nature, there the winds, whether strong or gentle, violently shake whatever is there.

जैसे आकाश अपने स्वभाव से चमकता है, वहाँ वायुएँ, चाहे वे मजबूत हों या नरम, जो भी है उसे जोर से हिलाती हैं।

6.81.69

वातैराहन्यमानं तत्पद्मादि तरलायते । हृद्यन्यान्यैति कार्येण पल्लवादि यथा तरोः ॥ ६९ ॥

vātairāhanyamānaṃ tatpadmādi taralāyate | hṛdyanyānyaiti kāryeṇa pallavādi yathā taroḥ || 69 ||

That which is shaken by the winds, beginning with the lotus, becomes unsteady. It goes to other places in the heart for some purpose, like the leaves of a tree.

जो वायुओं द्वारा हिलाया जाता है, वह कमल से शुरू होकर अस्थिर हो जाता है। यह हृदय में किसी कारण से दूसरी जगहों पर जाता है, जैसे पेड़ के पत्ते।

6.81.70

देहेष्वाजरणं सर्वरसानां पवनोऽन्वहम् । जनयत्यग्निमन्योन्यसंघर्षाद्वनवेणुवत् ॥ ७० ॥

deheṣvājaraṇaṃ sarvarasānāṃ pavano'nvaham | janayatyagnimanyonyasaṃgharṣādvanaveṇuvat || 70 ||

In the bodies, the wind always churns all the essences, producing fire from the friction of each other, like the fire produced by rubbing two sticks together.

शरीरों में, वायु हमेशा सभी रसों को मथती रहती है, जिससे एक-दूसरे के घर्षण से अग्नि उत्पन्न होती है, जैसे दो लकड़ियों को रगड़ने से अग्नि उत्पन्न होती है।

6.81.71

स्वभावशीतवातात्मा देहस्तेनौष्ण्यमेत्यथ उदितेन स सर्वाङ्गे भुवनं भानुना यथा ॥ ७१ ॥

svabhāvaśītavātātmā dehas tenauṣṇyam etyatha uditen sa sarvāṅge bhuvanaṁ bhānunā yathā || 71 ||

The body, which is naturally cool and airy, attains warmth through it. Just as the world is illuminated by the rising sun, so too does it pervade the entire body.

शरीर जो स्वाभाविक रूप से ठंडा और वायुमय है, उससे गर्मी प्राप्त होता है। जैसे उदित सूर्य से संपूर्ण विश्व प्रकाशित होता है, उसी प्रकार यह सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाता है।

6.81.72

सर्वतो विचरेदस्मिंस्तत्तेजस्तारकाकृति हृत्पद्महेमभ्रमरो योगिनां चिन्त्यतां गतम् ॥ ७२ ॥

sarvato vicared asmiṁs tat tejas tārakākṛti hṛt padma hemabhramaro yoginām̐ cintyatām̐ gatam || 72 ||

That radiance, in the form of a star, moves everywhere in this. The bee of the golden lotus of the heart, it has reached the state of being meditated upon by yogis.

वह तारकाकृति तेज, इस सब में सर्वत्र विचरता है। हृदय के सुवर्ण कमल का भ्रमर, यह योगियों द्वारा ध्यान की जाने वाली अवस्था में पहुँच गया है।

6.81.73

तत्प्रकाशमयं ज्ञानं चिन्तितं सत्प्रयच्छति येन योजनलक्षस्थं वस्तु नित्यं हि दृश्यते ॥ ७३ ॥

tatprakāśamayaṁ jñānaṁ cintitaṁ sat prayacchati yena yojanalakṣasthaṁ vastu nityaṁ hi dṛśyate || 73 ||

That knowledge, which is full of radiance, when meditated upon, bestows the truth. By which even objects situated at a distance of a hundred yojanas are always seen.

वह ज्ञान जो प्रकाशमय है, जब ध्यान किया जाता है, तो सत्य प्रदान करता है। जिससे सौ योजन दूर स्थित वस्तुएँ भी हमेशा दिखाई देती हैं।

6.81.74

तस्याग्नेर्वाडवस्येव जलं संशुष्कमिन्धनम् मांसपङ्कजखण्डाढ्यं हृत्सरः कोशवासिनः ॥ ७४ ॥

tasyāgner vāḍavasyeva jalaṁ saṁśuṣkam indhanam māṁsapankaja khaṇḍāḍhyaṁ hṛtsaraḥ kośavāsinaḥ || 74 ||

Just as the water of the ocean is dried up by the submarine fire, so too is the flesh and fat of the heart, which is the abode of the sheath, dried up.

जैसे समुद्र का जल अग्नि से सूख जाता है, उसी प्रकार हृदय का मांस और वसा, जो कोश का आश्रय है, सूख जाता है।

6.81.75

यदच्छं शीतलत्वं च तदस्यात्मेन्दुरुच्यते इतीन्दोरुत्थितः सोऽग्निरग्नीषोमौ हि देहकः ॥ ७५ ॥

yadacchaṁ śītalatvaṁ ca tadasyātmendurucyate itīndorutthitaḥ so'gniragnīṣomau hi dehakaḥ || 75 ||

That which is motionless and cool is called the moon of the self. Thus, the fire arising from the moon is indeed the body of Agni and Soma.

जो अचल और ठंडा है, वह आत्मा का चंद्रमा कहलाता है। इस प्रकार, चंद्रमा से उत्पन्न अग्नि अग्नि और सोम का शरीर है।

6.81.76

सर्वं तूष्णात्मकं किंचित्तेजोऽर्काग्न्यभिधं विदुः । शीतात्मकं तु सोमाख्यमाभ्यामेव कृतं जगत् ॥ ७६ ॥

sarvaṃ tūṣṇātmakaṃ kiṃcittejo'rkāgnyabhidhaṃ viduḥ | śītātmakaṃ tu somākhyamābhyāmeva kṛtaṃ jagat || 76 ||

All that is silent is known as the fire of the sun and Agni | The cool nature is known as Soma, and the world is created by these two || 76 ||

सब कुछ शांत है, जिसे सूर्य और अग्नि की आग कहा जाता है | ठंडा स्वभाव सोम कहलाता है, और इन दोनों से ही संसार बना है || ७६ ||

6.81.77

विद्याविद्यास्वरूपेण सर्वं सदसदात्मना । जगद्वा येन निर्वृत्तं तदेवैवं विभज्यते ॥ ७७ ॥

vidyāvidyāsvarūpeṇa sarvaṃ sadasadātmanā | jagadvā yena nirvṛttaṃ tadevaivaṃ vibhajyate || 77 ||

The entire universe is pervaded by the forms of knowledge and ignorance, real and unreal | The world is thus divided into these categories || 77 ||

पूरा ब्रह्मांड ज्ञान और अज्ञान के रूप में व्याप्त है, वास्तविक और अवास्तविक | संसार इस प्रकार इन श्रेणियों में बंटा हुआ है || ७७ ||

6.81.78

संवित्प्रकाशं विद्यादि सूर्यमग्निं विदुर्बुधाः । असज्जाड्यं तमो विद्याद्याहुः सोमं मनीषिणः ॥ ७८ ॥

saṃvitprakāśaṃ vidyādi sūryamagniṃ vidurbudhāḥ | asajjāḍyaṃ tamo vidyādyāhuḥ somaṃ manīṣiṇaḥ || 78 ||

The wise know the sun and fire as the illuminating knowledge | The sages say that the moon represents the darkness of ignorance || 78 ||

बुद्धिमान लोग सूर्य और अग्नि को प्रकाशमान ज्ञान के रूप में जानते हैं | ऋषिगण कहते हैं कि चंद्रमा अज्ञान के अंधकार का प्रतीक है || ७८ ||

6.81.79

श्रीराम उवाच । वह्निर्वाय्वात्मनः सोमादुदेतीति मुनीश्वर । सोमस्योत्पत्तिमधुना वद मे वदतां वर ॥ ७९ ॥

śrīrāma uvāca | vahnirvāyvātmanaḥ somādudetīti munīśvara | somasyotpattimadhunā vada me vadatāṃ vara || 79 ||

Sri Rama said | O lord of sages, it is said that fire arises from the wind and the moon | Please tell me now about the origin of the moon, O best of speakers || 79 ||

श्री राम ने कहा | हे मुनियों के स्वामी, यह कहा जाता है कि अग्नि वायु और चंद्रमा से उत्पन्न होती है | हे वक्ताओं में श्रेष्ठ, कृपया अब मुझे चंद्रमा की उत्पत्ति के बारे में बताएं || ७९ ||

6.81.80

श्रीवसिष्ठ उवाच । अग्नीषोमौ मिथः कार्यकारणे च व्यवस्थिते । पर्यायेण समं चैतौ प्रजीषेते परस्परम् ॥ ८० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | agnīṣomau mithaḥ kāryakāraṇe ca vyavasthite | paryāyeṇa samaṃ caitau prajīṣete parasparam || 80 ||

Vasistha said | Fire and the moon are interdependent, each being the cause and effect of the other | They mutually arise and support each other in turn || 80 ||

वसिष्ठ ने कहा | अग्नि और चंद्रमा परस्पर निर्भर हैं, एक-दूसरे के कारण और परिणाम हैं | वे एक-दूसरे को बारी-बारी से उत्पन्न करते हैं और समर्थन करते हैं || ८० ||

6.81.81

जन्माङ्गबीजाङ्कुरवत्तथा दिवसरात्रिवत् । स्थितिश्छायातपसमा केवला सैतयोर्भवेत् ॥ ८१ ॥

janmāṅgabījāṅkuravattathā divasarātrivat| sthitiśchāyātapasamā kevalā saitayorbhavet|| 81 ||

Just as a seed sprouts into a plant, and just as day and night exist, the state of shadow and sunlight is inherent in them.

जैसे बीज अंकुरित होकर पौधा बनता है, और जैसे दिन और रात होते हैं, छाया और धूप की स्थिति उनमें स्वाभाविक रूप से होती है।

6.81.82

तुल्यकालोपलम्भासावित्थं छायातपस्थितिः । केवलैकोपलम्भाढ्या स्थितिर्दिवसरात्रिवत् ॥ ८२ ॥

tulyakālopalambhāsāvitthaṃ chāyātapasthitiḥ| kevalaikopalambhāḍhyā sthitirdivasarātrivat|| 82 ||

The perception of shadow and sunlight is equal in duration, just like the state of day and night.

छाया और धूप की अनुभूति समान अवधि की होती है, जैसे दिन और रात की स्थिति होती है।

6.81.83

कार्यकारणभावश्च द्विविधः कथितोऽनयोः। सद्रूपपरिणामोत्थो विनाशपरिणामजः॥ ८३॥

kāryakāraṇabhāvaśca dvividhaḥ kathito'nayoḥ| sadrūpapariṇāmottho vināśapariṇāmajaḥ|| 83 ||

The relationship between cause and effect is twofold: one arising from transformation and the other from destruction.

कारण और कार्य का संबंध दो प्रकार का होता है: एक परिणाम से उत्पन्न होता है और दूसरा विनाश से उत्पन्न होता है।

6.81.84

एकस्माद्यद्द्वितीयस्य संभवोऽङ्कुरबीजवत्। कार्यकारणभावोऽसौ सद्रूपपरिणामजः॥ ८४॥

ekasmādyaddvitīyasya saṃbhavo'ṅkurabījavat| kāryakāraṇabhāvo'sau sadrūpapariṇāmajaḥ|| 84 ||

When one thing arises from another, like a sprout from a seed, that is the cause-effect relationship arising from transformation.

जब एक चीज दूसरी चीज से उत्पन्न होती है, जैसे बीज से अंकुर, तो यह परिणाम से उत्पन्न कारण-कार्य संबंध होता है।

6.81.85

एकनाशे द्वितीयस्य यद्भावो दिनरात्रिवत्। कार्यकारणभावोऽसौ विनाशपरिणामजः॥ ८५॥

ekanāśe dvitīyasya yadbhāvo dinarātrivat| kāryakāraṇabhāvo'sau vināśapariṇāmajaḥ|| 85 ||

When one thing is destroyed and another arises, like day and night, that is the cause-effect relationship arising from destruction.

जब एक चीज नष्ट होती है और दूसरी चीज उत्पन्न होती है, जैसे दिन और रात, तो यह विनाश से उत्पन्न कारण-कार्य संबंध होता है।

6.81.86

सद्रूपपरिणामस्य मृद्घटक्रमसंस्थितेः। अक्षोपलम्भादितरत्प्रमाणं नोपयुज्यते॥ ८६॥

sad-rūpa-pariṇāmasya mṛd-ghaṭa-krama-saṁsthiteḥ | akṣopalambhād-itarat-pramāṇaṁ no-upayujyate || 86 ||

In the sequence of transformations of the pot from clay, the proof of the existence of the pot is not applicable to other things.

मिट्टी से घड़े के रूप में परिणाम होने के क्रम में, घड़े के अस्तित्व का प्रमाण अन्य वस्तुओं पर लागू नहीं होता।

6.81.87

विनाशपरिणामस्य दिनरात्रिक्रमस्थितेः। अभावोऽप्येकवस्तुस्थो गतो मुख्यप्रमाणताम्॥ ८७॥

vināśa-pariṇāmasya dinarātri-krama-sthiteḥ | abhāvo-apy-ekavastustho gato mukhya-pramāṇatām || 87 ||

In the sequence of the transformation of destruction, the absence of something is also considered a primary proof.

विनाश के परिणाम के क्रम में, किसी चीज का अभाव भी एक मुख्य प्रमाण माना जाता है।

6.81.88

अनास्था नास्ति कर्तृत्वमित्याद्याऽऽयुक्तिवादिनः। अवज्ञया बहिष्कार्याः स्वानुभूत्यपलापिनः॥ ८८॥

anāsthā nāsti kartṛtva-mit-yādyā-āyuktivādinaḥ | avajñayā bahiṣkāryāḥ svānubhūtyapalāpiṇaḥ || 88 ||

Those who argue with false reasoning that there is no doer should be disregarded with contempt, as they are merely talking about their own experiences.

जो लोग झूठी तर्क देकर कहते हैं कि कर्ता नहीं है, उन्हें अवज्ञा के साथ बहिष्कृत किया जाना चाहिए, क्योंकि वे अपने अनुभवों के बारे में ही बात कर रहे हैं।

6.81.89

प्रत्यक्षवदभावोऽपि प्रमैव रघुनन्दन। अग्न्यभावोऽपि शीतस्य प्रमाणं सर्वजन्तुषु॥ ८९॥

pratyakṣavad-abhāvo-api prama-iva raghunandana | agnyabhāvo-api śītasya pramāṇaṁ sarvajantuṣu || 89 ||

Even the absence perceived directly is a valid proof, O Raghunandana. The absence of fire is also a proof of cold for all beings.

प्रत्यक्ष रूप से देखा गया अभाव भी एक मान्य प्रमाण है, हे रघुनन्दन। अग्नि का अभाव भी सभी जीवों के लिए ठंड का प्रमाण है।

6.81.90

अग्निर्धूमतया भागाद्यां प्रयाति पयोदताम्। सद्रूपपरिणामेन तदग्निः सोमकारणम्॥ ९०॥

agnir-dhūmatayā bhāgād-yāṁ prayāti payodatām | sad-rūpa-pariṇāmena tad-agniḥ somakāraṇam || 90 ||

Fire, through its smoky part, reaches the clouds. Through the transformation of its form, that fire becomes the cause of rain.

अग्नि अपने धुएँ से बादलों तक पहुँचती है। अपने रूप के परिणाम से, वह अग्नि वर्षा का कारण बनती है।

6.81.91

अग्निर्नष्टतया शैत्यादसावेव प्रयाति यत्। विनाशपरिणामेन तदग्निः सोमकारणम्॥ ९१॥

agnirnaṣṭatayā śaityādasāveva prayāti yat | vināśapariṇāmena tadagniḥ somakāraṇam || 91 ||

Fire, having been destroyed by cold, becomes that which moves towards the cause of Soma through the transformation of destruction.

अग्नि, ठंड से नष्ट होने के बाद, विनाश के परिणाम से सोम के कारण की ओर बढ़ता है।

6.81.92

सप्ताम्बुधिपयः पीत्वा धूमोद्गारेण वाडवः। पयोदतां प्रयातेन तदेव जनयत्यलम्॥ ९२॥

saptāmbudhipayaḥ pītvā dhūmodgāreṇa vāḍavaḥ | payodatāṃ prayātena tadeva janayaty alam || 92 ||

Having drunk the water of the seven oceans, the submarine fire (Vadava) emits smoke and moves towards the water-giver, thereby producing the same.

सात समुद्रों का जल पीकर, वाडव अग्नि (समुद्री अग्नि) धुआँ उगलती है और जल-दाता की ओर बढ़ती है, जिससे उसी का उत्पादन होता है।

6.81.93

अर्कः पीत्वा निशानाथमामावास्यं पुनःपुनः। उद्गिरत्यमले पक्षे मृणालमिव सारसः॥ ९३॥

arkaḥ pītvā niśānāthamāmāvāsyaṃ punaḥpunaḥ | udgiraty amale pakṣe mṛṇālam iva sārasaḥ || 93 ||

The sun, having drunk the lord of the night (moon) during the new moon, repeatedly emits it in the bright fortnight like a lotus stem.

सूर्य, अमावस्या में रात के स्वामी (चंद्रमा) को पीकर, शुक्ल पक्ष में बार-बार उसे कमल की डंठल की तरह उगलता है।

6.81.94

पीत्वामृतोपमं शीतं प्राणः सोममुखागमे। अभ्रागमात्पूरयति शरीरं पीनतां गतः॥ ९४॥

pītvāmṛtopamaṃ śītaṃ prāṇaḥ somamukhāgame | abhrāgamāt pūrayati śarīraṃ pīnatāṃ gataḥ || 94 ||

Having drunk the cool nectar-like Soma, the breath fills the body with plumpness from the arrival of clouds.

अमृत जैसे ठंडे सोम को पीकर, प्राण (श्वास) बादलों के आगमन से शरीर को मोटाई से भर देता है।

6.81.95

जलमप्युदपां भोगे प्रयात्यर्कस्य रश्मिताम्। सद्रूपपरिणामेन तज्जलं वह्निकारणम्॥ ९५॥

jalam apy udapāṃ bhoge prayāty arkasya raśmitām | sadrūpapariṇāmena taj jalaṃ vahnikāraṇam || 95 ||

Even the water, while enjoying the water, moves towards the radiance of the sun. Through the transformation of similar form, that water becomes the cause of fire.

जल, जल का आनंद लेते हुए भी, सूर्य की चमक की ओर बढ़ता है। समान रूप के परिवर्तन से, वह जल अग्नि का कारण बन जाता है।

6.81.96

नाशात्मकतया तोयमौष्ण्यत्वादेति ह्यग्निताम्। बिनाशपरिणामेन तत्तोयं वह्निकारणम्॥ ९६॥

nāśātmakatayā toya mauṣṇyatvādeti hyagnitām | bināśapariṇāmena tat toyaṃ vahnikāraṇam || 96 ||

Due to its destructive nature, water becomes fire through heat | Through the transformation of destruction, that water becomes the cause of fire

विनाशात्मकता के कारण, जल उष्णता से अग्नि बन जाता है | विनाश के परिणाम से, वह जल अग्नि का कारण बन जाता है

6.81.97

अग्नेर्विनाशे सद्रूपपरिणामो निशाकरः। इन्दोर्विनाशे सद्रूपपरिणामो हुताशनः॥ ९७॥

agner vināśe sadrūpapariṇāmo niśākaraḥ | indor vināśe sadrūpapariṇāmo hutāśanaḥ || 97 ||

In the destruction of fire, the moon is the transformation of the true form | In the destruction of the moon, fire is the transformation of the true form

अग्नि के विनाश में, चंद्रमा सत्य रूप का परिणाम है | चंद्रमा के विनाश में, अग्नि सत्य रूप का परिणाम है

6.81.98

हुताशो नाशमागत्य सोमो भवति वै तथा। दिवसो नाशमागत्य रात्रिर्भवति वै यथा॥ ९८॥

hutāśo nāśam āgatya somo bhavati vai tathā | divaso nāśam āgatya rātrir bhavati vai yathā || 98 ||

Fire, having reached destruction, indeed becomes the moon | Day, having reached destruction, indeed becomes night

अग्नि, विनाश तक पहुंचकर, वास्तव में चंद्रमा बन जाती है | दिन, विनाश तक पहुंचकर, वास्तव में रात बन जाती है

6.81.99

तमःप्रकाशयोश्छायातपयोर्दिनरात्रयोः। मध्ये विलक्षणं रूपं प्राज्ञैरपि न लभ्यते॥ ९९॥

tamaḥprakāśayoś chāyātapayor dinarātrayoḥ | madhye vilakṣaṇaṃ rūpaṃ prājñair api na labhyate || 99 ||

Between darkness and light, shadow and heat, day and night | In the middle, a distinct form is not obtained even by the wise

अंधकार और प्रकाश, छाया और ताप, दिन और रात के बीच | बीच में, एक विशिष्ट रूप बुद्धिमानों द्वारा भी नहीं प्राप्त होता

6.81.100

संधिरप्यविलोपः स्यादेतयोरेव तद्वपुः। भावाभावैर्यथैकास्थानिष्ठावेतौ तथैव हि॥ १००॥

sandhir apy avilopaḥ syād etayor eva tad vapuḥ | bhāvābhāvair yathaikāsthāniṣṭhāvetau tathaiva hi || 100 ||

The junction is also without destruction, that form of both | By existence and non-existence, as they are established in one place, so are these two

संधि भी विनाश के बिना होती है, उन दोनों का वह रूप | अस्तित्व और अनस्तित्व से, जैसे वे एक स्थान पर स्थापित हैं, वैसे ही ये दोनों हैं

6.81.101

द्वाभ्यां चैतन्यजाड्याभ्यां भूतानि प्रस्फुरन्ति हि । यथा तमःप्रकाशाभ्यामहोरात्रा महीतले ॥ १०१ ॥

dvābhyāṃ caitanyajāḍyābhyāṃ bhūtāni prasphuranti hi | yathā tamaḥprakāśābhyāmahorātrā mahītale || 101 ||

All beings manifest due to the combination of consciousness and inertia, just as day and night manifest due to the combination of light and darkness on the earth.

चेतना और जड़ता के संयोग से सभी भूत प्रकट होते हैं, जैसे पृथ्वी पर प्रकाश और अंधकार के संयोग से दिन और रात प्रकट होते हैं।

6.81.102

चिदूपजडरूपाभ्यामारब्धेयं जगत्स्थितिः । जलामृताभ्यां मिश्राभ्यां शीता तनुरिवैन्दवी ॥ १०२ ॥

cidūpajāḍarūpābhyāmāravdheyaṃ jagatsthitiḥ | jalāmṛtābhyāṃ miśrābhyāṃ śītā tanurivaīndavī || 102 ||

The stability of the world is maintained by the forms of consciousness and inertia, just as the coolness of the moon is maintained by the mixture of water and nectar.

चेतना और जड़ता के रूपों से संसार की स्थिति बनाए रखी जाती है, जैसे चंद्रमा की ठंडक जल और अमृत के मिश्रण से बनाए रखी जाती है।

6.81.103

प्रकाशमनलं सूर्यं चिद्रूपं विद्धि राघव । जडात्मकं तमोरूपं विद्धि सोमशरीरकम् ॥ १०३ ॥

prakāśamanalaṃ sūryaṃ cidrūpaṃ viddhi rāghava | jaḍātmakaṃ tamarūpaṃ viddhi somaśarīrakam || 103 ||

Know the sun as the form of consciousness and light, O Raghava. Know the moon as the form of inertia and darkness.

हे रघुवंशी, सूर्य को चेतना और प्रकाश के रूप में जानो। चंद्रमा को जड़ता और अंधकार के रूप में जानो।

6.81.104

चित्सूर्ये निर्मले दृष्टे नाम नश्येद्भवोदयम् । व्योमसूर्ये बहिर्दृष्टे यथा कृष्णनिशातमः ॥ १०४ ॥

citsūrye nirmale dṛṣṭe nāma naśyedbhavodayam | vyomasūrye bahirdṛṣṭe yathā kṛṣṇaniśātamaḥ || 104 ||

When the pure consciousness (citsūrye) is seen, the cycle of birth and death (bhava-udayam) is destroyed, just as the darkness of night (kṛṣṇa-niśā-tamaḥ) is destroyed when the sun in the sky (vyoma-sūrye) is seen.

जब शुद्ध चेतना (चित्सूर्ये) देखी जाती है, तो जन्म और मृत्यु का चक्र (भव-उदयम) नष्ट हो जाता है, जैसे जब आकाश में सूर्य (व्योम-सूर्ये) दिखाई देता है, तो रात का अंधकार (कृष्ण-निशा-तमः) नष्ट हो जाता है।

6.81.106

सोमं प्रकटयत्यग्निश्चिद्देहस्य चिरं प्रभाम् । स्वसंविन्मयमिन्दुश्चिद्देहस्थं रूपमर्कजम् ॥ १०६ ॥

somaṃ prakaṭayatyagniściddehasya ciraṃ prabhām | svasaṃvinmayamindusciddhehasthaṃ rūpamarkajam || 106 ||

Fire (agni) reveals the eternal radiance (prabhām) of the body of consciousness (ciddehasya). The moon (indu), which is of the nature of self-awareness (svasaṃvinmayam), reveals the form (rūpam) of the sun (arkajam) within the body of consciousness.

अग्नि (अग्नि) चेतना के शरीर (चिद्देहस्य) की अनंत चमक (प्रभाम) को प्रकट करती है। चंद्रमा (इंदु), जो स्व-संवेदना (स्वसंविन्मयम) का स्वभाव है, चेतना के शरीर में सूर्य (अर्कजम) के रूप (रूपम) को प्रकट करता है।

6.81.107

चिन्निष्क्रिया त्वनामा सा केवला नोपलभ्यते । आलोक इव दीपेन देहेनैवावगम्यते ॥ १०७ ॥

cinniṣkriyā tv anāmā sā kevalā nopalabhyate | āloka iva dīpena dehenaivāvagamyate || 107 ||

The consciousness, which is actionless and nameless, cannot be perceived alone; it is understood through the body, just as light is perceived through a lamp.

चेतना, जो निष्क्रिय और नामहीन है, अकेले नहीं देखी जा सकती; यह शरीर के माध्यम से समझी जाती है, जैसे प्रकाश दीपक के माध्यम से देखा जाता है।

6.81.108

चितश्चेत्योन्मुखत्वेन लाभः सैव च संसृतिः । निश्चेत्यायाः शुभो लाभो निर्वाणं वा तदेव हि ॥ १०८ ॥

citaścetyonmukhatvena lābhaḥ saiva ca saṃsṛtiḥ | niścetyāyāḥ śubho lābhaḥ nirvāṇaṃ vā tadeva hi || 108 ||

The gain of consciousness is its inclination towards activity, and that is the worldly existence. The gain of the absence of consciousness is auspicious, and that is indeed liberation.

चेतना का लाभ उसकी क्रिया की ओर उन्मुखता है, और वही संसारिक अस्तित्व है। अचेतनता का लाभ शुभ है, और वही मुक्ति है।

6.81.109

अन्योन्यलब्धसद्वाक्यावेवं कुड्यप्रकाशवत् । अग्नीषोमाविमौ ज्ञेयो संपृक्तौ देहदेहिनौ ॥ १०९ ॥

anyonyalabdhasadvākyāvevaṃ kuḍyaprakāśavat | agnīṣomāvimau jñeyo saṃpṛktau dehadehinau || 109 ||

Thus, the body and the self are interdependent, like the two halves of a sentence that are understood in relation to each other, or like the fire and the moon that are perceived together.

इस प्रकार, शरीर और आत्मा परस्पर निर्भर हैं, जैसे दो वाक्यांश जो एक-दूसरे के संदर्भ में समझे जाते हैं, या जैसे अग्नि और चंद्रमा जो एक साथ देखे जाते हैं।

6.81.110

अतिशायिनि निर्वाणे जाड्ये चैवातिशायिनि । अग्नीषोमस्य चैवाङ्ग स्थितिर्भवति केवला ॥ ११० ॥

atiśāyini nirvāṇe jāḍye caivātiśāyini | agnīṣomasya caivāṅga sthitirbhavati kevalā || 110 ||

In the state of supreme liberation and in the state of supreme inertia, the condition of the fire and the moon becomes singular.

परम मुक्ति और परम जड़ता की अवस्था में, अग्नि और चंद्रमा की स्थिति एकाकी हो जाती है।

6.81.111

प्राणोऽग्निरुष्णप्रकृतिरपानः शीतलः शशी । छायातपवदित्येतौ संस्थितौ मुखमार्गगौ ॥ १११ ॥

prāṇo'gniruṣṇaprakṛtirapānaḥ śītalaḥ śaśī | chāyātapavadityetau saṃsthitau mukhamārgagau || 111 ||

The vital breath (prāṇa) is like fire, hot in nature, while the downward breath (apāna) is like the moon, cool in nature. These two are situated in the path of the mouth, like shadow and heat.

प्राण (जीवन श्वास) अग्नि की तरह है, गर्म प्रकृति का, जबकि अपान (नीचे की ओर श्वास) चंद्रमा की तरह है, ठंडा प्रकृति का। ये दोनों मुख के मार्ग में स्थित हैं, छाया और ताप की तरह।

6.81.112

अपाने शीतले सत्तामेत्युष्णः प्राणपावकः । प्रतिबिम्बमिवादर्शे स च तस्मिंस्तथैव हि ॥ ११२ ॥

apāne śītale sattāmetyuṣṇaḥ prāṇapāvakaḥ | pratibimbamivādarśe sa ca tasmiṃstathaiva hi || 112 ||

The cool apana (downward breath) merges with the hot prana (upward breath), reflecting like an image in a mirror, and it is the same in that.

ठंडा अपान (नीचे की ओर सांस) गर्म प्राण (ऊपर की ओर सांस) से मिलता है, जैसे दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह, और वह उसमें वैसा ही है।

6.81.113

चिदग्निः पद्मपत्रस्थं सोमं वाचात्मकं त्विषा । जनयत्यनुभूत्येह कुड्यालोकं यथा बहिः ॥ ११३ ॥

cidagniḥ padmapatrasthaṃ somaṃ vācātmakaṃ tviṣā | janayaty anubhūtyeha kuḍyālokaṃ yathā bahiḥ || 113 ||

The fire of consciousness, situated in the petals of the lotus, produces the moon-like speech-self with its brilliance, creating an experience here like the light of a wall outside.

चेतना की अग्नि, कमल के पत्रों में स्थित, अपनी चमक से चंद्रमा-जैसे वाणी-आत्मा को उत्पन्न करती है, यहाँ एक अनुभूति पैदा करती है जैसे बाहर की दीवार का प्रकाश।

6.81.114

संसृत्यादौ यथा काचित्संविच्छीतोष्णरूपिणी । अग्नीषोमाभिधां प्राप्ता सैव सर्गे नृणामिह ॥ ११४ ॥

saṃsṛtyādau yathā kācit saṃvicchītoṣṇarūpiṇī | agnīṣomābhidhāṃ prāptā saiva sar ge nṛṇāmiha || 114 ||

In the beginning of transmigration, a certain consciousness takes the form of cool and hot, known as Agni and Soma, and it is the same in the creation of humans here.

पुनर्जन्म की शुरुआत में, एक विशेष चेतना ठंडे और गर्म रूप लेती है, जिसे अग्नि और सोम कहा जाता है, और यह मनुष्यों के सृजन में वैसा ही है।

6.81.115

यत्र सोमकला ग्रस्ता क्षणं सूर्येण षोडशी । मुखाद्वितस्तिमात्रं स्यात्तत्र बद्धपदो भव ॥ ११५ ॥

yatra somakalā grastā kṣaṇaṃ sūryeṇa ṣoḍaśī | mukhādvitastimātraṃ syāttatra baddhapado bhava || 115 ||

Where the lunar digit is eclipsed by the sun for a moment, the duration of two and a half measures from the mouth, there one should be with bound feet.

जहाँ चंद्रमा का अंश सूर्य द्वारा एक क्षण के लिए ग्रहण होता है, मुख से दो और आधा माप की अवधि तक, वहाँ एक को बंधे पैरों के साथ होना चाहिए।

6.81.116

नूनं सूर्यपदं प्राप्तो यत्र सोमो हृदम्बरे । नूनं केवलया स्थित्या तत्र बद्धपदो भव ॥ ११६ ॥

nūnaṃ sūryapadaṃ prāpto yatra somo hṛdambare | nūnaṃ kevalayā sthityā tatra baddhapado bhava || 116 ||

Certainly, where the moon reaches the solar region in the heart, certainly by mere existence there, one should be with bound feet.

निश्चित रूप से, जहाँ चंद्रमा हृदय में सौर क्षेत्र तक पहुँचता है, निश्चित रूप से केवल अस्तित्व से वहाँ, एक को बंधे पैरों के साथ होना चाहिए।

6.81.117

उष्णमग्निश्चिदादित्यः शैत्यं सोम उदाहृतम् यत्रैतौ प्रतिबिम्बस्थौ तत्र बद्धपदो भव ॥ ११७ ॥

uṣṇamagniścidādityaḥ śaityaṃ soma udāhṛtam yatraitau pratibimbasthau tatra baddhapado bhava || 117 ||

Heat is said to be fire and consciousness is the sun. Coolness is said to be the moon. Where these two are reflected, there one becomes bound.

गर्मी अग्नि और चेतना सूर्य कहलाती है। ठंडक चंद्रमा कहलाती है। जहाँ ये दोनों प्रतिबिम्बित होते हैं, वहाँ व्यक्ति बंधन में आ जाता है।

6.81.118

शरीरे सोमसूर्याग्निसंक्रान्तिज्ञो भवानघ तत्र संक्रान्तिकाला हि बाह्यास्तृणसमाः स्मृताः ॥ ११८ ॥

śarīre somasūryāgnisaṃkrāntijño bhavānagha tatra saṃkrāntikālā hi bāhyāstṛṇasamāḥ smṛtāḥ || 118 ||

O sinless one, know the transitions of the moon, sun, and fire in the body. There, the times of transitions are remembered as external like grass.

हे निष्पाप, शरीर में चंद्रमा, सूर्य और अग्नि के संक्रमण को जानो। वहाँ, संक्रमण के समय घास के समान बाहरी के रूप में याद किए जाते हैं।

6.81.119

संक्रान्तिमुत्तरमथायनमङ्ग सम्यक्कालं तथा विषुवतौ यदि देहवातैः अन्तर्बहिष्ठमिव वेत्सि यथानुभूतं तच्छोभसेऽत्र न पुनः परमभ्युपेतः ॥ ११९ ॥

saṃkrāntimuttaramathāyanamaṅga samyakkālaṃ tathā viṣuvatau yadi dehavātaiḥ antarbahiṣṭhamiva vetsi yathānubhūtaṃ tacchobhase'tra na punaḥ paramabhyupetaḥ || 119 ||

If you know the proper time of the transition and the solstices, and if you understand the internal and external winds of the body as experienced, then you will shine here, not again seeking the supreme.

यदि आप संक्रमण और अयन के उचित समय को जानते हैं, और यदि आप शरीर के आंतरिक और बाह्य वायुओं को अनुभव के रूप में समझते हैं, तो आप यहाँ चमकेंगे, फिर से परम की तलाश नहीं करेंगे।

Chapter 82

6.82.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अणुतां स्थूलतां वापि यथा गच्छति योगिनाम् । देहो नाम तथा सम्यग्वक्ष्यमाणमिदं शृणु ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | aṇutāṃ sthūlatāṃ vāpi yathā gacchati yoginām | deho nāma tathā samyagvakṣyamāṇamidaṃ śṛṇu || 1 ||

Shri Vasishtha said: Listen to how the body of the yogis becomes subtle or gross, as will be explained here.

श्री वसिष्ठ ने कहा: सुनो, योगियों का शरीर कैसे सूक्ष्म या स्थूल होता है, जैसा कि यहाँ समझाया जाएगा।

6.82.2

हृद्यब्जचक्रकोशोर्ध्वं प्रस्फुरत्यानलः कणः । हेमभ्रमरवत्सांध्यविद्युल्लव इवाम्बुदे ॥ २ ॥

hṛdyabjacakrakośordhvaṃ prasphuratyānalaḥ kaṇaḥ | hemabhramaravatsāṃdhyavidyullava ivāmbude || 2 ||

Above the heart lotus wheel, a spark of fire flickers like a golden bee or a lightning flash in the evening cloud.

हृदय कमल चक्र के ऊपर, एक अग्नि की चिनगारी सोने की भँवरे या सांध्यकालीन बिजली की तरह चमकती है।

6.82.3

स प्रवर्धनसंवित्त्या वात्ययेवाशु वर्धते । संविद्रूपतया नूनमर्कवद्याति चोदयम् ॥ ३ ॥

sa pravardhanasaṃvittyā vātyayevāśu vardhate | saṃvidrūpatayā nūnamarkavadyāti codayam || 3 ||

That spark, with the consciousness of growth, quickly grows like a gust of wind. Indeed, in the form of consciousness, it surely rises like the sun.

वह चिनगारी, वृद्धि की चेतना के साथ, तेजी से बढ़ती है जैसे आँधी। वास्तव में, चेतना के रूप में, वह सूर्य की तरह उठती है।

6.82.4

संध्याभ्रप्रथमार्काभो वृद्धिमभ्यागतः क्षणात् । गालयत्यखिलं साङ्गं देहं हेम यथानलः ॥ ४ ॥

sandhyābhraprathamārkābho vṛddhimabhyāgataḥ kṣaṇāt | gālayatyakhilaṃ sāṅgaṃ dehaṃ hema yathānalaḥ || 4 ||

Having attained growth in an instant, like the first sun emerging from the evening cloud, it melts the entire body with limbs, like gold in fire.

एक क्षण में वृद्धि प्राप्त करने के बाद, सांध्यकालीन बादल से निकलने वाले पहले सूर्य की तरह, यह पूरे शरीर को अंगों सहित पिघला देती है, जैसे अग्नि में सोना।

6.82.5

जलस्पर्शासहो युक्त्या गलयेत्प्रपदादपि । बाह्य एवानलः स्पर्शात्स्वान्ते वस्तुविशेषतः ॥ ५ ॥

jalasparśāsaho yuktyā galayetprapadādapi | bāhya evānalaḥ sparśātsvānte vastuviśeṣataḥ || 5 ||

Just as external fire, by the touch of water, melts even from a distance, similarly, the internal substance melts due to the touch of the spark.

जैसे बाहरी अग्नि, पानी के स्पर्श से, दूर से भी पिघला देती है, उसी प्रकार, अंतर्निहित पदार्थ चिनगारी के स्पर्श से पिघल जाता है।

6.82.6

स शरीरद्वयं पश्चाद्विधूय क्वापि लीयते विक्षोभितेन प्राणेन नीहारो वात्यया यथा ॥ ६ ॥

sa śarīradvayaṃ paścādvidhūya kvāpi līyate vikṣobhitena prāṇena nīhāro vātyayā yathā || 6 ||

That one, having abandoned the two bodies, dissolves somewhere, like mist dispersed by the wind.

वह दो शरीरों को छोड़कर कहीं विलीन हो जाता है, जैसे हवा से उड़ा हुआ कुहरा।

6.82.7

आधारनाडीनिर्हीना व्योमस्थैवावशिष्यते शक्तिः कुण्डलिनी वह्नेर्धूमलेखेव निर्गता ॥ ७ ॥

ādhāranāḍīnirhīnā vyomasthevāvaśiṣyate śaktiḥ kuṇḍalinī vahnerdhūmalekheva nirgatā || 7 ||

The power, Kundalini, devoid of the base channel, remains in the sky, like a line of smoke from fire.

शक्ति, कुण्डलिनी, आधार नाड़ी से रहित, आकाश में रहती है, जैसे आग से उठती हुई धुआँ की लकीर।

6.82.8

क्रोडीकृतमनोबुद्धिमयजीवाद्यहंकृतिः अन्तःस्फुरच्चमत्कारा धूमलेखेव नागरी ॥ ८ ॥

kroḍīkṛtamanobuddhimayajīvādyahankṛtiḥ antḥsphuraccamatkārā dhūmalekheva nāgarī || 8 ||

The ego, which is a combination of mind, intellect, and life, shines within like a line of smoke from a city.

जो मन, बुद्धि और जीवन का मिश्रण है, वह अहंकार अंतर्मुखी चमत्कार के रूप में चमकता है, जैसे शहर से उठती हुई धुआँ की लकीर।

6.82.9

विसे शैले तृणे भित्तावुपले दिवि भूतले सा यथा योज्यते यत्र तेन निर्यात्यलं तथा ॥ ९ ॥

vise śaile tṛṇe bhittāvupale divi bhūtale sā yathā yojyate yatra tena niryātyalaṃ tathā || 9 ||

Whether it be on a mountain, grass, wall, stone, sky, or earth, it is absorbed wherever it is placed.

चाहे वह पर्वत, घास, दीवार, पत्थर, आकाश, या भूमि पर हो, वह जहाँ भी रखा जाता है, वहीं विलीन हो जाता है।

6.82.10

संवित्तिः सैव यात्यङ्ग रसाद्यन्तं यथाक्रमम् रसेनापूर्णतामेति तन्त्रीभार इवाम्बुना ॥ १० ॥

saṃvittiḥ saiva yātyaṅga rasādyantaṃ yathākramam rasenāpūrṇatāmeti tantṛībhāra ivāmbunā || 10 ||

That consciousness itself reaches the end of taste, in due order, and attains fullness with taste, like a string of beads with water.

वह चेतना स्वयं अनुक्रम से स्वाद के अंत तक पहुँचती है, और स्वाद से पूर्णता प्राप्त करती है, जैसे पानी से भरी माला की डोरी।

6.82.11

रसापूर्णा यमाकारं भावयत्याशु तत्तथा । धत्ते चित्रकृतो बुद्धौ रेखा राम यथा कृतिम् ॥ ११ ॥

rasāpūrṇā yamākāraṃ bhāvayatyāśu tattathā | dhatte citrakṛto buddhau rekhā rāma yathā kṛtim || 11 ||

The mind, filled with essence, quickly conceives the form of Yama | The intellect, like a painter, holds the line, O Rama, just as it is created || 11 ||

मन, रस से भरा हुआ, शीघ्र ही यम के रूप को सोचता है | बुद्धि, चित्रकार की तरह, रेखा को धारण करती है, हे राम, जैसे वह बनाई गई है || ११ ||

6.82.12

दृढभाववशादन्तरस्थीन्याप्नोति सा ततः । मातृगर्भनिषण्णेषु सुसूक्ष्मेवाङ्कुरस्थितिः ॥ १२ ॥

dṛḍhabhāvavaśādantarasthīnyāpnoti sā tataḥ | mātṛgarbhaniṣaṇṇeṣu susūkṣmevāṅkurasthitiḥ || 12 ||

Due to the strong feeling, it attains the inner state | Like the subtle existence of a sprout in the womb of the mother || 12 ||

दृढ़ भाव के कारण, वह अंतर्स्थिति को प्राप्त करती है | माता के गर्भ में अंकुर की सूक्ष्म स्थिति की तरह || १२ ||

6.82.13

यथाभिमतमाकारं प्रमाणं वेत्ति राघव । जीवशक्तिरवाप्नोति सुमेर्वादि तृणादि च ॥ १३ ॥

yathābhimatamākāraṃ pramāṇaṃ vetti rāghava | jīvaśaktiravāpnoti sumervādi tṛṇādi ca || 13 ||

O Raghava, it knows the measure of the desired form | The life force attains everything from Mount Meru to a blade of grass || 13 ||

हे रघुवंशी, वह इच्छित रूप का माप जानता है | जीवन शक्ति सुमेरु से लेकर एक तिनके तक सब कुछ प्राप्त करती है || १३ ||

6.82.14

श्रुतं त्वया योगसाध्यमणिमाद्यर्थसाधनम् । ज्ञानसाध्यमिदानीं त्वं शृणु श्रवणभूषणम् ॥ १४ ॥

śrutaṃ tvayā yogasādhyamaṇimādyarthasādhanam | jñānasādhyamidānīṃ tvaṃ śṛṇu śravaṇabhūṣaṇam || 14 ||

You have heard the attainment of powers like Anima through Yoga | Now listen to the attainment of knowledge, which is the ornament of hearing || 14 ||

तुमने योग द्वारा अणिमा आदि सिद्धियों के साधन के बारे में सुना है | अब ज्ञान के साधन के बारे में सुनो, जो सुनने का आभूषण है || १४ ||

6.82.15

एकं चिन्मात्रमस्तीह शुद्धं सौम्यमलक्षितम् । सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं शान्तं न जगन्न जगत्क्रिया ॥ १५ ॥

ekaṃ cinmātramastīha śuddhaṃ saumyamalakṣitam | sūkṣmātsūkṣmataraṃ śāntaṃ na jagannajagatkriyā || 15 ||

There is only one pure, peaceful, unperceived consciousness here | Subtler than the subtlest, peaceful, not the world, not worldly activities || 15 ||

यहाँ केवल एक शुद्ध, शांत, अलक्षित चेतना है | सूक्ष्म से सूक्ष्मतर, शांत, न संसार, न संसारिक क्रियाएँ || १५ ||

6.82.16

तच्चिनोत्यात्मनात्मानं संकल्पोन्मुखतां गतम् । यदा तदा जीव इति प्रोक्तमाविलतां गतम् ॥ १६ ॥

taccinotyātmanātmānaṃ saṃkalponmukhatāṃ gatam | yadā tadā jīva iti proktamāvilatāṃ gatam || 16 ||

When the self, by its own nature, gathers the determination that has arisen, then it is said to be a living being, having reached a state of confusion.

जब आत्मा अपने स्वभाव से उस संकल्प को एकत्र करती है जो उभर आया है, तब उसे जीव कहा जाता है, जो भ्रम की अवस्था में पहुंच गया है।

6.82.17

असत्यमेव संकल्पभ्रमेणेदं शरीरकम् । जीवः पश्यति मूढात्मा बालो यक्षमिवोद्धतम् ॥ १७ ॥

asatyameva saṃkalpabhrameṇedaṃ śarīrakam | jīvaḥ paśyati mūḍhātmā bālo yakṣamivoddhataṃ || 17 ||

This body is indeed unreal, arising from the delusion of determination. The foolish self sees it like a child sees an exaggerated demon.

यह शरीर वास्तव में असत्य है, संकल्प के भ्रम से उत्पन्न। मूढ़ आत्मा इसे उसी तरह देखती है जैसे एक बच्चा एक बढ़ा-चढ़ा राक्षस देखता है।

6.82.18

यदा तु ज्ञानदीपेन सम्यगालोक आगतः । संकल्पमोहो जीवस्य क्षीयते शरदभ्रवत् ॥ १८ ॥

yadā tu jñānadīpena samyagāloka āgataḥ | saṃkalpamoho jīvasya kṣīyate śaradabhravat || 18 ||

But when one attains true enlightenment through the lamp of knowledge, the delusion of determination of the living being dissipates like autumn clouds.

लेकिन जब कोई ज्ञान के दीप से सही ज्ञान प्राप्त करता है, तब जीव का संकल्प का भ्रम शरद के बादलों की तरह छंट जाता है।

6.82.19

शान्तिमायाति देहोऽयं सर्वसंकल्पसंक्षयात् । तदा राघव निःशेषं दीपस्तैलक्षये यथा ॥ १९ ॥

śāntimāyāti deho'yaṃ sarvasaṃkalpasankṣayāt | tadā rāghava niḥśeṣaṃ dīpastailakṣaye yathā || 19 ||

This body attains peace when all determinations are destroyed, just as a lamp is extinguished when the oil is exhausted, O Raghava.

यह शरीर तब शांति प्राप्त करता है जब सभी संकल्प नष्ट हो जाते हैं, जैसे तेल समाप्त होने पर दीपक बुझ जाता है, हे रघुवंशी।

6.82.20

निद्राव्यपगमे जन्तुर्यथा स्वप्नं न पश्यति । जीवो हि भाविते सत्ये तथा देहं न पश्यति ॥ २० ॥

nidrāvyapagame janturyathā svapnaṃ na paśyati | jīvo hi bhāvite satye tathā dehaṃ na paśyati || 20 ||

Just as a person does not see a dream when sleep is gone, similarly, the living being does not see the body when it is established in truth.

जैसे नींद जाने पर व्यक्ति सपना नहीं देखता, उसी प्रकार, जब जीव सत्य में स्थापित होता है, तब वह शरीर नहीं देखता।

6.82.21

अतत्त्वे तत्त्वभावेन जीवो देहावृतः स्थितः । निर्देहो भवति श्रीमान् सुखी तत्त्वैकभावनात् ॥ २१ ॥

atattve tattvabhāvena jīvo dehāvṛtaḥ sthitaḥ | nirdeho bhavati śrīmān sukhī tattvaikabhāvanāt || 21 ||

The individual soul, covered by the body, mistakenly identifies with the non-self. By realizing the true self, one becomes free from the body, prosperous, and happy.

जीव शरीर से ढका हुआ अतत्त्व को तत्त्व समझता है | तत्त्व की एकाग्रता से वह शरीररहित, समृद्ध और सुखी हो जाता है |

6.82.22

अनात्मनि शरीरादावात्मभावनमङ्ग यत् । सूर्याद्यालोकदुर्भेदं हार्दं तद्दारुणं तमः ॥ २२ ॥

anātmani śarīrādāvātmabhāvanamaṅga yat | sūryādyālokadurbhedaṃ hārdaṃ taddāruṇaṃ tamaḥ || 22 ||

Identifying the self with the non-self, such as the body, is like mistaking the light of the sun for darkness. This is a deep and terrible ignorance.

अपने आप को शरीर जैसे अनात्म से पहचानना सूर्य के प्रकाश को अंधेरा समझने जैसा है | यह एक गहरी और भयानक अज्ञान है |

6.82.23

आत्मन्येवात्मभावेन सर्वव्यापि निरञ्जनम् । चिन्मात्रममलोऽस्मीति ज्ञानादित्येन नश्यति ॥ २३ ॥

ātmanyevātmabhāvena sarvavyāpi nirañjanam | cinmātramamalo'smīti jñānādityena naśyati || 23 ||

By realizing the self as the all-pervading, pure consciousness, one understands 'I am pure consciousness' and thus ignorance is destroyed by this knowledge.

आत्मा को सर्वव्यापी, निर्मल चेतना के रूप में जानने से 'मैं निर्मल चेतना हूँ' का ज्ञान होता है और इस ज्ञान से अज्ञान नष्ट हो जाता है |

6.82.24

अन्ये च विदितात्मानो भावयन्ति यथैव यत्। तत्तथैवाशु पश्यन्ति दृढभावनया तया ॥ २४ ॥

anye ca viditātmāno bhāvayanti yathaiva yat | tattathaivāśu paśyanti dṛḍhabhāvanayā tayā || 24 ||

Others who know the self meditate on whatever they wish. Through strong conviction, they quickly see it as real.

दूसरे जो आत्मा को जानते हैं, वे जो भी चाहते हैं उस पर ध्यान करते हैं | दृढ़ विश्वास के साथ, वे उसे जल्दी से सच के रूप में देखते हैं |

6.82.25

दृढभावानुसंधानाद्विमूढा अपि राघव। विषं नयन्त्यमृतताममृतं विषतामपि ॥ २५ ॥

dṛḍhabhāvānusandhānādvimūḍhā api rāghava | viṣaṃ nayantyamṛtatāmamṛtaṃ viṣatāmapi || 25 ||

O Raghava, even the deluded, through strong and continuous contemplation, can transform poison into nectar and nectar into poison.

हे राघव, भ्रमित होने पर भी, दृढ़ और लगातार ध्यान के द्वारा, वे विष को अमृत और अमृत को विष में बदल सकते हैं |

6.82.26

एवं यथा यदेवेह भाव्यते दृढभावनात्। भूयते हि तदेवाशु तदित्यालोकितं मुहुः ॥ २६ ॥

evaṃ yathā yadeveha bhāvyate dṛḍhabhāvanāt | bhūyate hi tadevāśu tadityālokitaṃ muhuḥ || 26 ||

Whatever is firmly believed in this world becomes that very thing quickly, as it is repeatedly perceived.

जो कुछ भी इस दुनिया में दृढतापूर्वक विश्वास किया जाता है, वही शीघ्र ही हो जाता है, जैसे उसे बार-बार देखा जाता है।

6.82.27

सत्यभावनदृष्टोऽयं देहो देहो भवत्यलम्। दृष्टस्त्वसत्यभावेन व्योमतां याति देहकः ॥ २७ ॥

satyabhāvanadṛṣṭo'yaṃ deho deho bhavatyalam | dṛṣṭastvasatyabhāvena vyomatāṃ yāti dehakaḥ || 27 ||

This body, when seen with the vision of truth, becomes the body itself. But when seen with the vision of falsehood, the body becomes like the sky.

यह शरीर, जब सत्य की दृष्टि से देखा जाता है, तो शरीर ही बनता है। लेकिन जब असत्य की दृष्टि से देखा जाता है, तो शरीर आकाश की तरह हो जाता है।

6.82.28

अणिमादिपदप्राप्तौ ज्ञानयुक्तिरिति श्रुता। भवता साधुना राम युक्तिमन्यामिमां श्रृणु ॥ २८ ॥

aṇimādipadaprāptau jñānayuktiriti śrutā | bhavatā sādhunā rāma yuktimanyāmimāṃ śrṛṇu || 28 ||

It is heard that knowledge and reasoning lead to the attainment of powers like becoming minute. O Rama, listen to this other reasoning from the virtuous one.

यह सुना गया है कि ज्ञान और युक्ति सूक्ष्मता जैसी शक्तियों की प्राप्ति कराते हैं। हे राम, साधु से इस अन्य युक्ति को सुनो।

6.82.29

रेचकाभ्यासयोगेन जीवः कुण्डलिनीगृहात्। उद्धृत्य योज्यते यावदामोदः पवनादिव ॥ २९ ॥

recakābhyāsayogena jīvaḥ kuṇḍalinīgṛhāt | uddhṛtya yojyate yāvadāmodaḥ pavanādiva || 29 ||

Through the practice of exhalation (recaka), the individual soul (jīva) is lifted from the abode of Kundalini and is united with the blissful state, just like the wind.

रेचक अभ्यास के द्वारा, जीवात्मा (जीव) कुण्डलिनी के निवास से उठाया जाता है और आनंदमय अवस्था से जुड़ जाता है, जैसे हवा।

6.82.30

त्यज्यते विरतस्पन्दो देहोऽयं काष्ठलोष्टवत्। देहेऽपि जीवेऽपि मतावासेचक इवादरः ॥ ३० ॥

tyajyate viratаspando deho'yaṃ kāṣṭhaloṣṭhavat | dehe'pi jīve'pi matāvāsecaka ivādaraḥ || 30 ||

The body, which has ceased to vibrate, is discarded like a piece of wood or a clod of earth. Even in the body and the soul, there is a reverence like that of a guest.

जो शरीर कंपन बंद कर चुका है, वह लकड़ी या मिट्टी के टुकड़े की तरह त्याग दिया जाता है। शरीर और आत्मा में भी एक अतिथि की तरह सम्मान होता है।

6.82.31

स्थावरे जंगमे वापि यथाभिमतयेच्छया। भोक्तुं तत्संपदं सम्यग्जीवोऽन्तर्विनिवेश्यते ॥ ३१ ॥

sthāvare jaṅgame vāpi yathābhimatayeccchayā | bhoktuṃ tatsaṃpadaṃ samyagjīvo'ntarviniveśyate || 31 ||

Whether in animate or inanimate objects, according to one's desire, one can enjoy the wealth, and the living being is properly established within.

चाहे जीव हो या अजीव, अपनी इच्छा के अनुसार उस संपत्ति का भोग करने के लिए जीव अन्तर्विनिवेशित होता है।

6.82.32

इति सिद्धिश्रियं भुक्त्वा स्थितं चेत्तद्वपुः पुनः। प्रविश्यते स्वमन्यद्वा यद्यत्तात विरोचते ॥ ३२ ॥

iti siddhiśriyaṃ bhuktvā sthitaṃ cet tadvapuḥ punaḥ | praviśyate svamanyadvā yadyattāta virocate || 32 ||

After enjoying the wealth of accomplishment, if that body remains, it enters again into its own or another, as it pleases.

सिद्धि की सम्पत्ति का भोग करने के बाद, यदि वह शरीर बना रहता है, तो वह अपने या किसी अन्य में फिर से प्रवेश करता है, जैसा कि उसे पसंद हो।

6.82.33

देहादयस्तथा बिम्बान्व्याप्तवत्याखिलानथ। संविदा जगदापूर्य संपूर्ण स्थीयतेऽथवा ॥ ३३ ॥

dehādayastathā bimbānvyāptavatyākhilānatha | saṃvidā jagadāpūrya saṃpūrṇa sthīyate'thavā || 33 ||

The body and other reflections are pervaded by the complete knowledge, filling the world, or it remains complete.

शरीर और अन्य प्रतिबिम्ब पूर्ण ज्ञान से व्याप्त होते हैं, जो संसार को भरता है, या वह पूर्ण बना रहता है।

6.82.34

ज्ञात्वा सदाभ्युदितमुज्झितदोषमीशो यद्यद्यथा समभिवाञ्छति चित्प्रकाशः। प्राप्नोति तत्तदचिरेण तथैव राम सम्यक्पदं विदुरनावरणत्वमेव ॥ ३४ ॥

jñātvā sadābhyuditamujjhitadoṣamīśo yadyadyathā samabhivāñchati citprakāśaḥ | prāpnoti tattadacireṇa tathaiva rāma samyakpadaṃ viduranāvaraṇatvameva || 34 ||

Knowing the ever-arisen, faultless Lord, whatever the luminous consciousness desires, it attains that quickly, and thus, O Rama, they know the true state as unobstructed.

सदा उदित, दोषरहित ईश्वर को जानकर, चेतना के प्रकाश की जो भी इच्छा होती है, वह उसे शीघ्र ही प्राप्त करता है, और इस प्रकार, हे राम, वे अवरोधरहित सत्य अवस्था को जानते हैं।

Chapter 83

6.83.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अणिमादिगुणैश्वर्ययुक्ता सा नृपभामिनी । एवं बभूव चूडाला घनाभ्यासवती सती ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | aṇimādiguṇaiśvaryayuktā sā nṛpabhāminī | evaṃ babhūva cūḍālā ghanābhyāsavatī satī || 1 ||

Shri Vasistha said: Endowed with the powers of minuteness and other divine attributes, that queen, Chudala, became thus, being deeply absorbed in practice.

श्री वसिष्ठ ने कहा: सूक्ष्मता आदि गुणों से युक्त वह राजकुमारी चूडाला घनीभूत अभ्यास करने वाली हो गई।

6.83.2

जगामाकाशमार्गेण विवेशाम्बुधिकोटरम् । चचार वसुधापीठं गङ्गेवामलशीतला ॥ २ ॥

jagāmākāśamārgeṇa viveśāmbudhikoṭaram | cacāra vasudhāpīṭhaṃ gaṅgevāmalashītalā || 2 ||

She traveled through the sky, entered the depths of the ocean, and roamed the earth like the pure and cool Ganges.

वह आकाश मार्ग से यात्रा करती हुई समुद्र की गहराई में प्रवेश कर गई और पवित्र और ठंडी गंगा की तरह पृथ्वी पर विचरण करने लगी।

6.83.3

क्षणमप्यगता भर्तुर्वक्षसश्चेतसस्तथा । सर्वेषूवास राज्येषु लक्ष्मीरिव जगत्सु च ॥ ३ ॥

kṣaṇamapyagatā bharturvakṣasaścetasastathā | sarveṣūvāsa rājyeṣu lakṣmīriva jagatsu ca || 3 ||

Even for a moment, she was not separated from her husband's heart and mind. She resided in all kingdoms like Lakshmi in the world.

एक क्षण के लिए भी वह अपने पति के हृदय और मन से अलग नहीं हुई। वह सभी राज्यों में लक्ष्मी की तरह निवास करती थी।

6.83.4

आकाशगामिनी श्यामा विद्युत्प्रारम्भभूषणा । बभ्राम मेघमालेव गिरिमाला महीतले ॥ ४ ॥

ākāśagāminī śyāmā vidyutprārambhabhūṣaṇā | babhrāma meghamāleva girimālā mahītale || 4 ||

Moving through the sky, dark like a cloud, adorned with the ornament of lightning, she wandered like a garland of clouds on the surface of the earth.

आकाश में चलती हुई, बादल की तरह काली, बिजली के आभूषण से सजी, वह पृथ्वी की सतह पर बादलों की माला की तरह विचरण करती थी।

6.83.5

काष्ठं तृणोपलं भूतं खं वातमनलं जलम् । निर्विघ्नमविशत्सर्वं तन्तुर्मुक्ताफलं यथा ॥ ५ ॥

kāṣṭhaṃ tṛṇopalaṃ bhūtaṃ khaṃ vātamanalaṃ jalam | nirvighnamaviśatsarvaṃ tanturmktāphalaṃ yathā || 5 ||

She entered without obstruction into wood, grass, stone, sky, wind, fire, and water, like a thread through a pearl.

वह लकड़ी, घास, पत्थर, आकाश, हवा, आग और पानी में बाधा के बिना प्रवेश कर गई, जैसे धागा मोती से होकर गुजरता है।

6.83.6

मेरोरुपरि श्रृङ्गाणि लोकपालपुराणि च । दिग्व्योमोदररन्ध्राणि विजहार यथासुखम् ॥ ६ ॥

merorupari śrṛṅgāṇi lokapālapurāṇi ca | digvyomodararandhrāṇi vijahāra yathāsukham || 6 ||

She wandered freely over the peaks of Mount Meru, the cities of the guardians of the world, and the openings in the sky.

वह मेरु पर्वत की चोटियों, लोकपालों के नगरों और आकाश के छिद्रों पर स्वेच्छा से विचरण करती थी।

6.83.7

तिर्यग्भूतपिशाचाद्यैः सहनागामरासुरैः । विद्याधराप्सरःसिद्धैर्व्यवहारं चकार सा ॥ ७ ॥

tiryagbhūtapiśācādyaiḥ sahanāgāmarāsuraiḥ | vidyādharāpsaraḥsiddhairvyavahāraṃ cakāra sā || 7 ||

She interacted with various beings such as animals, ghosts, serpents, gods, demons, celestial beings, and perfected beings.

वह विभिन्न प्राणियों जैसे पशुओं, भूत-प्रेतों, नागों, देवताओं, असुरों, दिव्य प्राणियों और सिद्ध पुरुषों के साथ व्यवहार करती थी।

6.83.8

यत्नेन तं च भर्तारमात्मज्ञानामृतं प्रति । बहुशो बोधयामास चूडाला न विवेद सः ॥ ८ ॥

yatnena taṃ ca bhartāramātmajñānāmṛtaṃ prati | bahuśo bodhayāmāsa cūḍālā na viveda saḥ || 8 ||

With great effort, Chudala tried to awaken her husband to the nectar of self-knowledge, but he did not understand.

बहुत प्रयास करके, चूडाला ने अपने पति को आत्मज्ञान के अमृत की ओर जागरूक करने की कोशिश की, लेकिन वह समझ नहीं पाया।

6.83.9

कलाविदग्धा मुग्धा च बालेयं गृहिणी मम । इत्येवं केवलं राजा स चूडालां विवेद ताम् ॥ ९ ॥

kalāvidagdhā mugdhā ca bāleyaṃ gṛhiṇī mama | ityevaṃ kevalaṃ rājā sa cūḍālāṃ viveda tām || 9 ||

The king thought of Chudala only as a simple, naive, and childish housewife, skilled in the arts.

राजा ने चूडाला को केवल एक साधारण, भोली और बच्चों जैसी गृहिणी समझा, जो कलाओं में निपुण थी।

6.83.10

एतावतापि कालेन तामेवंगुणशालिनीम् । बालो विद्यामिव नृपश्चूडालां न विवेद सः ॥ १० ॥

etāvatāpi kālena tāmevaṃguṇaśālinīm | bālo vidyāmiva nṛpaścūḍālāṃ na viveda saḥ || 10 ||

Even after such a long time, the foolish king did not understand Chudala, who was endowed with such qualities, as if she were knowledge itself.

इतने समय के बाद भी, मूर्ख राजा ने ऐसी गुणों से युक्त चूडाला को नहीं समझा, मानो वह ज्ञान स्वयं हो।

6.83.11

साप्यलब्धात्मविश्रान्तेस्तां सिद्धिश्रियमात्मनः । दर्शयामास नो राज्ञः शूद्रस्येव मखक्रियाम् ॥ ११ ॥

sāpyalabdhātmaviśrāntestāṃ siddhiśriyamātmanaḥ | darśayāmāsa no rājñaḥ śūdrasyeva makhakriyām || 11 ||

Even after attaining self-realization, he did not show that spiritual achievement to the king, just as a Shudra would not perform a sacrificial ritual.

आत्मज्ञान प्राप्त करने के बाद भी, उन्होंने राजा को उस आध्यात्मिक सिद्धि को नहीं दिखाया, जैसे कि एक शूद्र यज्ञ का अनुष्ठान नहीं करता।

6.83.12

श्रीराम उवाच । महत्याः सिद्धयोगिन्यास्तस्या अपि शिखिध्वजः । यत्नेन प्राप नो बोधं बुध्यतेऽन्यः कथं प्रभो ॥ १२ ॥

śrīrāma uvāca | mahatyāḥ siddhayoginyāstasyā api śikhidhvajaḥ | yatnena prāpa no bodhaṃ budhyate'nyaḥ kathaṃ prabho || 12 ||

Sri Rama said: Even the great accomplished yogini, Shikhidhvaja, attained enlightenment with great effort. How can anyone else attain it, O Lord?

श्री राम ने कहा: महान सिद्ध योगिनी, शिखिध्वज, ने भी बहुत प्रयास से ज्ञान प्राप्त किया। फिर दूसरा कोई कैसे ज्ञान प्राप्त कर सकता है, हे प्रभो?

6.83.13

श्रीवसिष्ठ उवाच । उपदेशक्रमो राम व्यवस्थामात्रपालनम् । ज्ञप्तेस्तु कारणं शुद्धा शिष्यप्रज्ञैव राघव ॥ १३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | upadeśakramo rāma vyavasthāmātrapālanam | jñaptestu kāraṇaṃ śuddhā śiṣyaprajñeva rāghava || 13 ||

Vasishtha said: O Rama, the sequence of instruction is merely the maintenance of order. The pure cause of realization is the disciple's own wisdom, O Raghava.

वसिष्ठ ने कहा: हे राम, उपदेश का क्रम तो बस व्यवस्था का पालन है। ज्ञान का शुद्ध कारण शिष्य की अपनी बुद्धि है, हे रघुवंशी।

6.83.14

न श्रुतेन न पुण्येन ज्ञायते ज्ञेयमात्मनः । जानात्यात्मानमात्मैव सर्पः सर्पपदानि व ॥ १४ ॥

na śrutena na puṇyena jñāyate jñeyamātmanaḥ | jānātyātmānamātmaiva sarpaḥ sarpapadāni va || 14 ||

The self cannot be known through hearing or through merit. The self knows itself, just as a snake knows its own footprints.

आत्मा को न तो श्रवण से जाना जा सकता है और न ही पुण्य से। आत्मा खुद ही अपने आप को जानता है, जैसे साँप अपने पैरों के निशान को जानता है।

6.83.15

श्रीराम उवाच । एवंस्थिते वाथ मुने कथमेतज्जगत्स्थितौ । क्रमो गुरूपदेशाख्यः स्वात्मज्ञानस्य कारणम् ॥ १५ ॥

śrīrāma uvāca | evaṃsthite vātha mune kathametajjagatsthitau | kramo gurūpadeśākhyaḥ svātmajñānasya kāraṇam || 15 ||

Sri Rama said: O Sage, if this is the case, how can the sequence of instruction by the guru be the cause of self-knowledge in this world?

श्री राम ने कहा: हे मुनि, यदि ऐसा है, तो गुरु के उपदेश का क्रम इस संसार में आत्मज्ञान का कारण कैसे हो सकता है?

6.83.16

श्रीवसिष्ठ उवाच । अत्यन्तकृपणः कश्चित्किराटो धनधान्यवान् । अस्ति विन्ध्याटवीकक्षे कुटुम्बी ब्राह्मणो यथा ॥ १६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atyantakṛpaṇaḥ kascitkirāṭo dhanadhānyavān | asti vindhyāṭavīkakṣe kuṭumbī brāhmaṇo yathā || 16 ||

Śrīvāsishtha said: There is a very miserly Kirāṭa, who is wealthy in grain and wealth, living in the Vindhyā forest, like a householder Brahmin.

श्रीवासिष्ठ ने कहा: विन्ध्य के जंगल में एक अत्यन्त कृपण किराट रहता है, जो धन और अन्न से सम्पन्न है, जैसे एक गृहस्थ ब्राह्मण होता है।

6.83.17

तस्यैकदा निपतिता गच्छतो विन्ध्यजङ्गले। एका वराटिका राम तृणजालकसंवृते ॥ १७ ॥

tasyaikadā nipatitā gacchato vindhyajaṅgale | ekā varāṭikā rāma tṛṇajālakasaṃvṛte || 17 ||

One day, while he was walking in the Vindhyā forest, a single cow fell into a pit covered with grass.

एक दिन, जब वह विन्ध्य के जंगल में चल रहा था, एक गाय एक तृणजालक से ढंके गड्ढे में गिर गई।

6.83.18

कार्पण्यात्स प्रयत्नेन सर्वं तृणतुषादिकम्। कपर्दकार्थमभितो दुधाव दिवसत्रयम् ॥ १८ ॥

kārpaṇyāt sa prayatnena sarvaṃ tṛṇatuṣādikam | kapardakārthamabhito dudhāva divasatrayam || 18 ||

Due to his miserliness, he diligently collected all the grass and straw for three days to make a kaparda (a type of grass cover).

अपनी कृपणता के कारण, उसने तीन दिन तक बड़े प्रयास से सब घास और सूखे घास को इकट्ठा किया, ताकि एक कपर्दक (घास का ढक्कन) बनाया जा सके।

6.83.19

कपर्दकाः स्युर्भवता चत्वारोऽष्टौ च कालतः। ततः शतं सहस्रं च सहस्रे चेति चेतसा ॥ १९ ॥

kapardakāḥ syurbhavatā caturāro'ṣṭau ca kālataḥ | tataḥ śataṃ sahasraṃ ca sahasre ceti cetasā || 19 ||

He thought, 'The kaparda will become four, then eight, then a hundred, then a thousand, and then ten thousand.'

उसने सोचा, 'कपर्दक चार होगा, फिर आठ, फिर सौ, फिर हजार, और फिर दस हजार।'

6.83.20

कलयञ्जङ्गले दीनो रात्रिंदिवमतन्द्रितः। जनहाससहस्राणि बुबुधे न परं तु सः ॥ २० ॥

kalayañjaṅgale dīno rātriṃdivamatandritaḥ | janahāsasahasrāṇi bubudhe na paraṃ tu saḥ || 20 ||

Miserable in the forest, he spent day and night without rest, realizing that thousands of people were laughing at him, but he did not care.

जंगल में दीन, उसने रात-दिन बिना विश्राम के बिताया, यह जानते हुए कि हजारों लोग उस पर हंस रहे हैं, लेकिन उसे कोई परवाह नहीं थी।

6.83.21

ततो दिनत्रयस्यान्ते तेन तस्माच्च जङ्गलात्। पूर्णेन्दुबिम्बप्रतिमो लब्धश्चिन्तामणिर्महान् ॥ २१ ॥

tato dinatrayasyānte tena tasmācca jaṅgalāt| pūrṇendubimbapratimo labdhaścintāmaṇirmahān|| 21 ||

At the end of three days, he obtained a great Cintāmaṇi (wish-fulfilling gem) from that forest, which was as bright as the full moon.

तीन दिनों के अंत में, उसने उस जंगल से एक महान चिंतामणि (इच्छा-पूर्ति का रत्न) प्राप्त किया, जो पूर्ण चंद्रमा के समान उज्ज्वल था।

6.83.22

तं प्राप्य तुष्टहृदयः समागम्य गृहं सुखम्। प्राप्ताखिलजगद्भूतिः शान्तसर्वतया स्थितः ॥ २२ ॥

taṃ prāpya tuṣṭahṛdayaḥ samāgamya gṛhaṃ sukham| prāptākhilajagadbhūtiḥ śāntasarvatayā sthitaḥ|| 22 ||

Having obtained it, he returned home with a contented heart, experiencing happiness and achieving the prosperity of the entire world, and remained in a state of complete peace.

उसे प्राप्त करने के बाद, उसने संतुष्ट हृदय से घर लौटकर, सुख का अनुभव किया और सम्पूर्ण जगत की समृद्धि प्राप्त करके, एक पूर्ण शांति की स्थिति में रहा।

6.83.23

एवं यथा किराटेन कपर्दान्वेषणेन तत्। रत्नं लब्धं जगन्मूल्यमहोरात्रमखेदिना ॥ २३ ॥

evaṃ yathā kirāṭena kapardānveṣaṇena tat| ratnaṃ labdhaṃ jagannmūlyamahorātramakhedinā|| 23 ||

Just as the Kirāta (hunter) obtained the valuable gem by searching for the Kaparda (matted hair) without fatigue day and night,

जैसे किराट (शिकारी) ने कपर्दा (जटाओं की खोज) करके, दिन-रात थके बिना उस मूल्यवान रत्न को प्राप्त किया,

6.83.24

तथा श्रुतोपदेशेन स्वात्मज्ञानमवाप्यते। अन्यदन्विष्यते चान्यल्लभ्यते हि गुरुक्रमात् ॥ २४ ॥

tathā śrutopadeśena svātmajñānamavāpyate| anyadanviṣyate cānyallabhyate hi gurukramāt|| 24 ||

Similarly, through the instruction of the heard, one attains self-knowledge. By searching for one thing, another is obtained, indeed, through the sequence of the Guru.

इसी प्रकार, सुने हुए उपदेश से स्वयं के ज्ञान की प्राप्ति होती है। एक चीज खोजने से दूसरी प्राप्त होती है, निश्चित रूप से, गुरु के क्रम से।

6.83.25

ब्रह्म सर्वेन्द्रियातीतं श्रुतादीन्द्रियसंविदः। तेनोपदेशादनघ नात्मतत्त्वमवाप्यते ॥ २५ ॥

brahma sarvendriyātītaṃ śrutādīndriyasaṃvidaḥ| tenopadeśādanagha nātmatattvamavāpyate|| 25 ||

Brahma, which is beyond all senses, is realized through the teachings of the senses. O sinless one, the essence of the self is not attained without that instruction.

ब्रह्म, जो सभी इंद्रियों से परे है, इंद्रियों के ज्ञान के द्वारा समझा जाता है। हे निष्पाप, आत्मतत्त्व की प्राप्ति उस उपदेश के बिना नहीं होती।

6.83.26

गुरूपदेशं च विना नात्मतत्त्वागमो भवेत्। केन चिन्तामणिर्लब्धः कपर्दान्वेषणं विना ॥ २६ ॥

gurūpadeśaṃ ca vinā nātmatattvāgamo bhavet | kena cintāmaṇirlabdhaḥ kapardānveṣaṇaṃ vinā || 26 ||

Without the guidance of a guru, one cannot attain the knowledge of the self. Just as one cannot find the wish-fulfilling gem without searching for it.

गुरु के उपदेश के बिना आत्मतत्त्व का ज्ञान नहीं हो सकता | जैसे चिंतामणि को खोजे बिना नहीं पाया जा सकता |

6.83.27

तत्त्वस्यास्य महार्थस्य गुरूपकथनं गतम्। अकारणं कारणतां मणेरिव कपर्दकः ॥ २७ ॥

tattvasyāsya mahārthasya gurūpakathanaṃ gatam | akāraṇaṃ kāraṇatāṃ maṇeriva kapardakaḥ || 27 ||

The great meaning of this truth has been told by the guru. Just as the gem becomes the cause without any reason, so does the guru.

इस महान तत्त्व का अर्थ गुरु द्वारा बताया गया है | जैसे मणि बिना किसी कारण के कारण बन जाती है, वैसे ही गुरु भी |

6.83.28

पश्य राघव मायेयं मोहिनी महतामपि। अन्यदन्विष्यते यत्नादन्यदासाद्यते फलम् ॥ २८ ॥

paśya rāghava māyeyaṃ mohinī mahatāmapi | anyadanviṣyate yatnādanyadāsādyate phalaṃ || 28 ||

See, O Raghava, this deluding illusion, which bewilders even the great. One thing is sought with effort, but something else is obtained as the result.

देखो, हे रघुवंशी, यह मोहक माया, जो महानों को भी भ्रमित करती है | एक चीज को प्रयास से खोजा जाता है, पर कोई दूसरी चीज प्राप्त होती है |

6.83.29

अन्यत्करोति पुरुषः फलमन्यदेव प्राप्नोति यत्त्रिषु जगत्स्ववलोक्यते च । तस्मादनन्तरभवस्य जगद्भ्रमस्य श्रेयोऽतिवाहनमसङ्गमनिच्छयैव ॥ २९ ॥

anyatkaroti puruṣaḥ phalamanyadeva prāpnoti yatratriṣu jagatsvavalokyate ca | tasmādanantarabhavasya jagadbhramasya śreyo'tivāhanamasangaṃnicchayai'va || 29 ||

A person does one thing but obtains a different result, which is seen in the three worlds. Therefore, the best way to overcome the worldly illusion is through detachment and desirelessness.

एक व्यक्ति एक काम करता है पर दूसरा परिणाम प्राप्त करता है, जो तीनों लोकों में देखा जाता है | इसलिए, संसारिक भ्रम को दूर करने का सबसे अच्छा तरीका अनासक्ति और इच्छारहित होना है |

Chapter 84

6.84.1

ततः शिखिध्वजो राजा तत्त्वज्ञानपदं विना आजगाम परं मोहं तमोन्धत्वमिवाप्रजाः ॥ १ ॥

tataḥ śikhidhvajo rājā tattvajñānapadaṃ vinā ājagāma paraṃ mohaṃ tamondhatvamivāprajāḥ || 1 ||

Then King Śikhidhvaja, without attaining the state of true knowledge, fell into great delusion, as if enveloped by darkness.

तब राजा शिखिध्वज, सच्चे ज्ञान की स्थिति को प्राप्त किए बिना, महान भ्रम में गिर गए, मानो अंधकार से घिर गए हों।

6.84.2

दुःखाग्निदीपितमना मनागपि विभूतिषुतास्वभीष्टोपनीतासु न रेमेऽग्निशिखास्विव ॥ २ ॥

duḥkhāgnidīpitamanā manāgapi vibhūtiṣutāsvabhīṣṭopanītāsu na reme'gniśikhāsviva || 2 ||

Even though his mind was tormented by the fire of sorrow, he did not find joy in the desired objects brought by his prosperity, like flames that do not delight in fuel.

यद्यपि उनका मन दुःख की आग से जल रहा था, फिर भी वे अपनी समृद्धि द्वारा लाए गए इच्छित वस्तुओं में आनंद नहीं पा सके, मानो लपटें ईंधन में आनंद नहीं लेतीं।

6.84.3

आययौ यामिनी श्यामा भुवनं भस्मधूसरम् धृतव्योमापगं शर्वं संश्लेषा यमुनेव सा ॥ ३ ॥

āyayau yāminī śyāmā bhuvanaṃ bhasmadhūsaram dhṛtavyomāpagaṃ śarvaṃ saṃśleṣā yamuneva sā || 3 ||

The dark night approached, covering the world with ashes, holding the sky and moving like the Yamuna river, embracing everything.

काली रात आई, जो दुनिया को राख से ढकती है, आकाश को थामे हुए और यमुना नदी की तरह सब कुछ को आलिंगन करती हुई चलती है।

6.84.4

राघव त्वमिवाशेषाः सान्त्वानुनयबोधनैःप्रार्थितः कार्यते भृत्यैर्महीपो दिवसक्रियाः ॥ ४ ॥

rāghava tvamivāśeṣāḥ sāntvānunayabodhanaiḥprārthitaḥ kāryate bhṛtyairmahīpo divasakriyāḥ || 4 ||

O Raghava, you are requested by your servants with appeasement, persuasion, and advice to perform the daily duties of the earth.

हे रघुवंशी, आप अपने सेवकों द्वारा सांत्वना, विनय और बोध से प्रार्थना की जाती है कि आप पृथ्वी के दैनिक कार्यों का निर्वाहन करें।

6.84.5

ददावतितरां दानं गोभूमिकनकादिकम्देवेभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च स्वजनेभ्यश्च मानद ॥ ५ ॥

dadāvatitarāṃ dānaṃ gobhūmikanakādikamdevebhyo brāhmaṇebhyaśca svajanebhyaśca mānada || 5 ||

He gave the highest charity, including cows, land, and gold, to the gods, Brahmins, and his own people.

उन्होंने गायें, भूमि और सोना सहित उच्चतम दान दिया देवताओं, ब्राह्मणों और अपने लोगों को।

6.84.7

चचार च तपः कर्तुं कृच्छ्रचान्द्रायणादिकम्। परिबभ्राम तीर्थानि वनान्यायतनानि च ॥ ७ ॥

cacāra ca tapaḥ kartuṃ kṛcchracāndrāyaṇādikam | paribabhrāma tīrthāni vanānyāyatanāni ca || 7 ||

He performed severe austerities such as Kṛcchra and Cāndrāyaṇa | He wandered around sacred places, forests, and temples.

उसने कृच्छ्र और चान्द्रायण जैसी कठोर तपस्याएँ कीं | उसने तीर्थों, वनों और मन्दिरों का भ्रमण किया।

6.84.8

स तथापि विशोकत्वं न मनागपि लब्धवान्। अनिधानां खनन्भूमिं निधानार्थी निधिं यथा ॥ ८ ॥

sa tathāpi viśokatvaṃ na manāgapi labdhvān | anidhānāṃ khananbhūmiṃ nidhānārthī nidhiṃ yathā || 8 ||

Even then, he did not attain freedom from sorrow | Like one searching for a treasure without knowing its location.

फिर भी, उसने दुःख से मुक्ति नहीं पाई | जैसे कोई खजाने की खोज कर रहा हो बिना उसके स्थान के ज्ञान के।

6.84.9

रात्रिंदिवं महानेष शुष्यत्येव कृशानुना। चिन्तया चिन्तयामास संसारव्याधिभेषजम् ॥ ९ ॥

rātriṃdivaṃ mahāneṣa śuṣyatyeva kṛśānunā | cintayā cintayāmāsa saṃsāravyādhibheṣajam || 9 ||

Day and night, the great sage dried up with worry | He contemplated the remedy for the disease of worldly existence.

दिन-रात, महान ऋषि चिंता से सूखता गया | उसने संसार के रोग का उपचार सोचा।

6.84.10

चिन्तापरवशो दीनो राज्यं स्वस्य विषोपमम्। महाविभवमप्यग्रे नापश्यत्खिन्नया धिया ॥ १० ॥

cintāparavaśo dīno rājyaṃ svasya viṣopamam | mahāvibhavamapyagre nāpaśyatkhinnayā dhiyā || 10 ||

Overwhelmed by worry, the miserable one saw his kingdom, which was like poison | Even the great prosperity before him, he did not see with his exhausted mind.

चिंता से व्याकुल, दुःखी व्यक्ति ने अपना राज्य, जो विष के समान था, देखा | उसके सामने महान समृद्धि भी थी, पर उसने अपने थके हुए मन से नहीं देखा।

6.84.11

अथैकदैकान्तगतां चूडालामङ्कमागताम्। इदं मधुरया वाचा समुवाच शिखिध्वजः ॥ ११ ॥

athaikadaikāntagatāṃ cūḍālāmaṅkamāgatām | idaṃ madhurayā vācā samuvāca śikhidhvajaḥ || 11 ||

Then one day, when Chudala came to him in solitude | Shikhidhvaja spoke to her with sweet words.

फिर एक दिन, जब चूडाला एकांत में उसके पास आई | शिखिध्वज ने मधुर वाणी से उससे कहा।

6.84.12

शिखिध्वज उवाच । भुक्तं राज्यं चिरं कालं भुक्ता विभवभूमयः । अधुनास्मि विरागेण युक्तो गच्छामि काननम् ॥ १२ ॥

śikhidhvaja uvāca | bhuktam rājyam ciram kālam bhuktā vibhavabhūmayaḥ | adhunāsmi virāgeṇa yukto gacchāmi kānanam || 12 ||

Shikhidhvaja said: I have enjoyed the kingdom for a long time and have experienced great wealth. Now, I am filled with detachment and am going to the forest.

शिखिध्वज ने कहा: मैंने राज्य का सुख बहुत दिनों तक भोगा है और बहुत सारा धन-सम्पत्ति भी भोगी है | अब मैं वैराग्य से भरा हुआ हूँ और वन की ओर जा रहा हूँ |

6.84.13

न सुखानि न दुःखानि नापदो न च संपदः । क्रोडीकुर्वन्ति तन्वङ्गि मुनिं वननिवासिनम् ॥ १३ ॥

na sukhāni na duḥkhāni nāpado na ca sampadaḥ | kroḍīkurvanti tanvangi munim vananivāsinam || 13 ||

Neither pleasures nor pains, neither calamities nor prosperity, affect the sage who lives in the forest, O slender-waisted one.

न तो सुख और न ही दुःख, न ही विपत्ति और न ही समृद्धि, वन में रहने वाले मुनि को प्रभावित करती है, हे पतली कमर वाली।

6.84.14

न देशभङ्गसंमोहो न संग्रामे जनक्षयः । राज्यादप्यधिकं मन्ये सुखं वननिवासिनाम् ॥ १४ ॥

na deśabhaṅgasammoho na saṅgrāme janakṣayaḥ | rājyādapyadhikam manye sukham vananivāsinām || 14 ||

There is no confusion due to the destruction of the country, nor the loss of people in war. I consider the happiness of those who live in the forest to be greater than that of the kingdom.

देश के विनाश से कोई भ्रम नहीं होता, न ही युद्ध में जनता का नाश होता है। मैं वन में रहने वालों के सुख को राज्य से भी अधिक मानता हूँ।

6.84.15

स्तबकस्तनधारिण्यो रक्तपल्लवपाणयः । मञ्जरीजालहारिण्यो लोलशुभ्राम्बुदांशुकाः ॥ १५ ॥

stabakastanadhāriṇyo raktapallavapāṇayaḥ | mañjarījālahāriṇyo lolasubhrāmbudāṃśukāḥ || 15 ||

The women with breasts like buds, holding red blossoms in their hands, wearing garlands of flower clusters, and dressed in white garments that sway gently.

स्तन बुद्बुद जैसे स्त्रियाँ, जिनके हाथों में लाल पल्लव हैं, फूलों के गुच्छों की मालाएँ पहने हुए, और सफेद वस्त्र पहने हुए जो हल्के से लहरा रहे हैं।

6.84.16

स्वपरागाङ्गरागिण्यः कृतकौसुममण्डनाः । आसेव्यकाञ्चनशिलानितम्बतटशोभिताः ॥ १६ ॥

svaparāgāṅgarāgiṇyaḥ kṛtakausumamaṇḍanāḥ | āsevyakāñcanaśilānitambataṭaśobhitāḥ || 16 ||

The women, adorned with their natural beauty and wearing saffron ornaments, who frequent the golden rocks, are beautified by their hips touching the rocks.

स्वाभाविक रंग से सजी हुई स्त्रियाँ, जिन्होंने केसर के आभूषण पहने हैं, जो सोने के पत्थरों के पास रहती हैं, उनकी कमर पत्थरों से सजी हुई है।

6.84.17

तरङ्गमौक्तिकप्रोतसरिन्मुक्तालतावृताः । लतावयस्यावलिता मुग्धमुग्धमृगात्मजाः ॥ १७ ॥

taraṅgamauktikaprotasarinmuktālatāvṛtāḥ | latāvayasyāvalitā mugdhamugdhamṛgātmajāḥ || 17 ||

The waves are adorned with pearls and the creepers are entwined with them, the innocent deer are surrounded by the creepers.

तरंगें मोतियों से सजी हुई हैं और लताएँ उनसे लिपटी हुई हैं, मासूम हिरण लताओं से घिरे हुए हैं।

6.84.18

स्वभावोद्दामसौगन्ध्या वितीर्णफलभोजनाः । षट्पदश्रेणिनयनाः पुष्पापूरलताङ्गिकाः ॥ १८ ॥

svabhāvoddāmasaugandhyā vitīrṇaphalabhojanāḥ | ṣaṭpadaśreṇinayanāḥ puṣpāpūralatāṅgikāḥ || 18 ||

With their natural fragrance spread, they enjoy the fallen fruits, their eyes following the lines of bees, and they are adorned with flower-laden creepers.

अपनी प्राकृतिक सुगंध फैलाते हुए, वे गिरे हुए फलों का आनंद लेते हैं, उनकी आँखें मधुमक्खियों की पंक्तियों का अनुसरण करती हैं, और वे फूलों से भरी लताओं से सजे हुए हैं।

6.84.19

आस्वाद्यस्यन्दतां याताः शीतलामलगात्रिकाः । रमयन्ति त्वमिव मां वनवीथ्यो वरानने ॥ १९ ॥

āsvādyasyandatāṃ yātāḥ śītalāmalagātrikāḥ | ramayanti tvamiva māṃ vanavīthyo varānane || 19 ||

Having tasted the flowing nectar, they have become cool and pure, the forest paths delight me like you, O beautiful one.

मधुर रस का स्वाद लेकर, वे ठंडे और पवित्र हो गए हैं, वन की वीथियाँ मुझे आपकी तरह आनंदित करती हैं, हे सुंदरी।

6.84.20

यथा विविक्तमेकान्ते मनो भवति निर्वृतम् । न तथा शशिबिम्बेषु न च ब्रह्मेन्द्रसद्मसु ॥ २० ॥

yathā viviktamekānte mano bhavati nirvṛtam | na tathā śaśibimbeṣu na ca brahmendrasadmasu || 20 ||

As the mind becomes content in solitude, it does not find such contentment in the moon's disc or in the abodes of Brahma and Indra.

जैसे मन एकांत में संतुष्ट होता है, वैसे चंद्रमा के मंडल या ब्रह्मा और इंद्र के निवास स्थानों में ऐसी संतुष्टि नहीं मिलती।

6.84.21

अस्मिन्सन्मन्त्रणे तन्वि न विघ्नं कर्तुमर्हसि । भर्तुर्विघटयन्तीच्छां न स्वप्नेऽपि कुलस्त्रियः ॥ २१ ॥

asmiṃsanmantraṇe tanvi na vighnaṃ kartumarhasi | bharturvighaṭayantīcchāṃ na svapne'pi kulastriyaḥ || 21 ||

In this auspicious conversation, O slender one, you should not create any obstacle. Even in dreams, noble women do not disrupt their husband's desires.

इस शुभ संवाद में, हे कोमल, आपको कोई बाधा नहीं डालनी चाहिए। स्वप्न में भी, कुलवधुएँ अपने पति की इच्छाओं को विघ्नित नहीं करतीं।

6.84.22

चूडालोवाच । प्राप्तकालं कृतं कार्यं राजते नाथ नेतरत् । वसन्ते राजते पुष्पं फलं शरदि राजते ॥ २२ ॥

chūḍālovāca | prāptakālaṃ kṛtaṃ kāryaṃ rājate nātha netarat | vasante rājate puṣpaṃ phalaṃ śaradi rājate || 22 ||

Chudala said: The task accomplished at the right time shines, O Lord, not otherwise | The flower shines in spring, the fruit shines in autumn

चूडाला ने कहा: सही समय पर किया गया कार्य चमकता है, हे नाथ, अन्यथा नहीं | फूल वसंत में चमकता है, फल शरद में चमकता है

6.84.23

जराजरठदेहानां युक्तो वनसमाश्रयः । न यूनां त्वादृशामेव तेनैतन्मे न रोचते ॥ २३ ॥

jarājaraṭhadēhānāṃ yukto vanasamāśrayaḥ | na yūnāṃ tvādṛśāmeva tenaitanmē na rocate || 23 ||

For those with aged and decrepit bodies, it is appropriate to seek refuge in the forest | But not for youths like you, therefore this does not appeal to me

बूढ़े और जर्जर शरीर वालों के लिए, वन में शरण लेना उचित है | लेकिन आप जैसे युवाओं के लिए नहीं, इसलिए यह मुझे अच्छा नहीं लगता

6.84.24

यौवनेन महाराज न यावद्वयमुज्झिताः । पुष्पौघेणेव तरवस्तावच्छोभामहे गृहे ॥ २४ ॥

yauvanēna mahārāja na yāvadvayamujjhitāḥ | puṣpaugheṇēva taravastāvacchobhāmahē gṛhē || 24 ||

O great king, as long as we are not abandoned by youth, like trees with a mass of flowers, we adorn the house

हे महाराज, जब तक हम युवावस्था से छूटे नहीं हैं, फूलों के ढेर वाले पेड़ों की तरह, हम घर को सजाते हैं

6.84.25

पुष्पधाना पुष्पमितजरसा सह काननम् । समं गृहाद्गमिष्यामो हंसा इव सरोवरात् ॥ २५ ॥

puṣpadhānā puṣpamitajarasā saha kānanam | samaṃ gṛhādgamiṣyāmo haṃsā iva sarovarāt || 25 ||

We will go to the forest together, like flower-bearing trees with their blossoms and fruits, like swans from a lake

हम फूलों और फलों से भरे पेड़ों की तरह, साथ-साथ वन में जाएँगे, जैसे हंस तालाब से

6.84.26

अप्राप्तकालं नृपतेः प्रजापालनमुज्झतः । राजन्यस्यैव रन्ध्रस्य महदेनो भविष्यति ॥ २६ ॥

aprāptakālaṃ nṛpatēḥ prajāpālanamujjhataḥ | rājanyasyaiava randhrasya mahadēno bhaviṣyati || 26 ||

If the king abandons the protection of his subjects before the right time, a great sin will befall the flaw in his duty

यदि राजा सही समय से पहले अपने प्रजाओं की रक्षा छोड़ देता है, तो उसके कर्तव्य में दोष के कारण एक बड़ा पाप होगा

6.84.27

अप्राप्तकारिणं भूपं रोधयन्ति च वै प्रजाःरोधयन्ति ह्यकार्येभ्यः प्रभुं भृत्याः परस्परम् ॥ २७ ॥

aprāptakāriṇaṃ bhūpaṃ rodhayanti ca vai prajāḥrodhayanti hyakāryebhyaḥ prabhuṃ bhṛtyāḥ parasparam || 27 ||

The subjects obstruct the king who does not perform his duties, and the servants obstruct the master from wrong deeds, mutually.

प्रजाजन अपने कर्तव्यों को न निभाने वाले राजा को रोकते हैं, और सेवक गलत कामों से स्वामी को परस्पर रोकते हैं।

6.84.28

शिखिध्वज उवाचालमुत्पलपत्राक्षि विघ्नेनाभिमतस्य मेविद्धि मां गतमेव तो दूरमेकान्तकाननम् ॥ २८ ॥

śikhidhvaja uvācaalamutpalapatrākṣi vighnenābhimatasya meviddhi māṃ gatameveto dūramekāntakānanam || 28 ||

Shikhidhvaja said: Enough, lotus-eyed one, due to the obstacle, my desire has been fulfilled. Know that I have gone far into the solitary forest.

शिखिध्वज ने कहा: बस, कमलनयनी, बाधा के कारण मेरी इच्छा पूरी हो गई है। जान लो कि मैं एकांत वन में दूर चला गया हूँ।

6.84.29

बाला त्वमनवद्याङ्गि नागन्तव्यं वनं त्वयापुंसामपि हि मृद्वङ्गि दुर्विगाह्यो वनाश्रयः ॥ २९ ॥

bālā tvamanavadyāṅgi nāgantavyaṃ vanaṃ tvayāpuṃsāmapi hi mṛdvaṅgi durvigāhyo vanāśrayaḥ || 29 ||

O young lady with a flawless body, you should not go to the forest. Even for men, the forest is difficult to penetrate, O gentle one.

हे निर्दोष शरीर वाली युवती, तुम्हें वन में नहीं जाना चाहिए। हे कोमलांगी, पुरुषों के लिए भी वन दुर्गम है।

6.84.30

समर्था न वनावासे योषितः कठिना अपिकानने पुष्पमञ्जर्यः सोढुं शस्त्रालिमक्षमाः ॥ ३० ॥

samarthā na vanāvāse yoṣitaḥ kaṭhinā apikānane puṣpamañjaryaḥ soḍhuṃ śastrālimakṣamāḥ || 30 ||

Women, though capable, are not able to endure the harshness of forest life, even in a beautiful forest filled with flowers, and are unable to bear the sight of weapons.

यद्यपि स्त्रियाँ समर्थ हैं, फिर भी वे वनवास की कठिनाइयों को सहन नहीं कर सकतीं, चाहे वह फूलों से भरा सुंदर वन ही क्यों न हो, और न ही वे हथियारों का दृश्य सहन कर सकती हैं।

6.84.31

भवत्या पालयन्त्येह राज्ये स्थातव्यमुत्तमेकुटुम्बभारोद्वहनं पत्यौ याते व्रतं स्त्रियः ॥ ३१ ॥

bhavatyā pālayantyeha rājye sthātavyamuttamekuṭumbabhārodvahanaṃ patyau yāte vrataṃ striyaḥ || 31 ||

Women should stay in the kingdom and protect it, bearing the burden of the family when the husband is away, observing their vows.

स्त्रियाँ राज्य में रहकर उसकी रक्षा करें, पति के गए होने पर परिवार का भार उठाएँ और अपने व्रतों का पालन करें।

6.84.32

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा दयितां राजा तामिन्दुवदनां वशी । उत्तस्थौ स्नातुमखिलं दिनकार्यं चकार च ॥ ३२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā dayitāṃ rājā tāminduvadanāṃ vaśī | uttasthau snātumakhilaṃ dinakāryaṃ cakāra ca || 32 ||

Sri Vasistha said: Having said this, the king, who had his beloved with a face like the moon under his control, rose to bathe and performed all his daily duties.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर, राजा, जिसके पास चंद्रमुखी प्रिया थी, उसके वश में होकर, स्नान करने के लिए उठा और सभी दैनिक कार्य किए।

6.84.33

अथोज्झितप्रजाचेष्टो रविरस्ताचलं ययौ । शिखिध्वजो वनमिव समस्तजनदुर्गमम् ॥ ३३ ॥

athojjhitaprajāceṣṭo ravirastācalaṃ yayau | śikhidhvajo vanamiva samastajanadurgamam || 33 ||

Then, leaving behind the activities of the people, the sun set behind the mountain, like a peacock entering a forest that is inaccessible to all.

तब, लोगों की गतिविधियों को छोड़कर, सूर्य पर्वत के पीछे अस्त हो गया, जैसे एक मोर एक ऐसे वन में प्रवेश करता है जो सभी के लिए दुर्गम है।

6.84.34

संहृत्य विततं रूपं तमेवानुययौ प्रभा । नाथं भवननिष्क्रान्तं चूडालेवानुरागिणी ॥ ३४ ॥

saṃhṛtya vitataṃ rūpaṃ tamevānuyayau prabhā | nāthaṃ bhavananiṣkrāntaṃ cūḍālevānurāgiṇī || 34 ||

Having withdrawn her expanded form, the radiance followed him alone, like Chudala, who is affectionate towards her lord who has left the house.

अपने विस्तृत रूप को समेटकर, प्रभा (चमक) उसी का अनुसरण करती है, जैसे चूडाला, जो अपने घर से निकले स्वामी के प्रति अनुरागी है।

6.84.36

दिक्षु संध्याब्ददन्तासु स्थितासु कृतमण्डलम्। तमालबालकाङ्कासु ज्योत्स्नाहासोदयाङ्कितम्॥ ३६॥

dikṣu saṃdhyābddadantāsu sthitāsu kṛtamaṇḍalam | tamālabālakāṅkāsu jyotsnāhāsodayāṅkitam || 36 ||

In the directions where the twilight clouds are situated, forming a circle, adorned with the laughter of the moonlight and the cries of the peacocks.

जहाँ संध्या के बादल स्थित हैं, एक मंडल बनाकर, चाँदनी की हँसी और मोरों की पुकार से सजे हुए।

6.84.37

गच्छतोरपरं पारं दंपत्योर्मैरव पदम्। देवोद्यानमयं रन्तुं दिनश्रीदिननाथयोः॥ ३७॥

gacchatōraparaṃ pāraṃ dampatyōrmairava padam | dēvōdyānamayaṃ rantuṃ dinaśrīdinanāthayōḥ || 37 ||

The divine couple, going to the other shore, the abode of Mairava, to enjoy the divine garden, the splendor of the day and the lord of the day.

दिव्य दंपती, दूसरे तट पर जा रहे हैं, मैरव का निवास, देवोद्यान का आनंद लेने के लिए, दिन की शोभा और दिन के स्वामी का।

6.84.38

आगच्छतोरिदं पारं ह्यघतीक्ष्णकरोज्झितम्। निशानिशानायकयोर्दंपत्योर्मैरवं पुनः॥ ३८॥

āgacchatōridam pāram hyaghatīkṣṇakarōjjihitam | niśāniśānāyakayōrdampatyōrmairavam punah || 38 ||

The night passed, and the couple, the king and queen of the night, enjoyed their union again.

रात बीत गई, और रात के राजा और रानी के जोड़े ने फिर से अपने संयोग का आनंद लिया।

6.84.39

तारागणोऽथ ददृशे विकीर्णो व्योमकुट्टिमे। मुक्तो मङ्गलालाजानां दिग्वधूभिरिवाञ्जलिः॥ ३९॥

tārāgaṇō'tha dadṛśe vikīrṇō vyōmakuṭṭimē | mukto maṅgalalājānām digvadhūbhirivāñjaliḥ || 39 ||

Then the stars appeared scattered in the sky, like the auspicious rice grains offered by the brides of the directions.

फिर तारे आकाश में बिखरे हुए दिखाई दिए, जैसे दिशाओं की दुलहनों द्वारा चढ़ाए गए शुभ चावल के दाने।

6.84.40

चन्द्रानना तमःश्यामा श्रान्ता कुसुमहासिनी। यामिनी यौवनं प्राप सरोजमुकुलस्तनी॥ ४०॥

candrānanā tamaḥśyāmā śrāntā kusumahāsinī | yāminī yauvanaṃ prāpa sarojamukulastanī || 40 ||

The night, with a moon-like face, dark and tired, adorned with flowers, attained youthfulness, with breasts like lotus buds.

चंद्र-सी मुखवाली, काली और थकी हुई रात, फूलों से सजी हुई, युवावस्था को प्राप्त हुई, कमल के कली जैसे स्तनों वाली।

6.84.41

कृतसंध्यासमाचारः सहचूडालयेष्टया। सुष्वाप शयने भूयो मैनाक इव सागरे॥ ४१॥

kṛtasaṃdhyāsamācāraḥ sahacūḍālayeṣṭayā | suṣvāpa śayane bhūyo maināka iva sāgarē || 41 ||

Having performed the evening rituals with his beloved, he slept again on the bed, like Mainaka in the ocean.

शाम के अनुष्ठान करने के बाद अपनी प्रियतमा के साथ, वह फिर से बिस्तर पर सोया, जैसे मैनाक समुद्र में।

6.84.42

अथार्धरात्रसमये देशे निःशब्दतां गते। घननिद्राशिलाकोशनिलीने सकले जने ॥ ४२ ॥

athārdharātrasamaye deśe niḥśabdatāṃ gate | ghananidrāśilākośanilīne sakale jane || 42 ||

Then, at midnight, when the place had become silent, and all the people were immersed in deep sleep like stones in a casket.

फिर, आधी रात के समय, जब स्थान शांत हो गया, और सभी लोग पत्थरों की तरह गहरी नींद में डूबे हुए थे।

6.84.43

स तस्यां संप्रसुप्तायां शयने कोमलांशुके। भृशं निद्राविमूढायां भ्रमर्यामिव पङ्कजे ॥ ४३ ॥

sa tasyāṃ saṃprasuptāyāṃ śayane komalāṃśuke | bhṛśaṃ nidrāvimūḍhāyāṃ bhramaryāmiva paṅkaje || 43 ||

He left his beloved sleeping on the soft bed, deeply immersed in sleep, like a bee on a lotus.

उसने अपनी प्रिया को नरम बिस्तर पर गहरी नींद में सोते हुए छोड़ दिया, जैसे कमल पर भ्रमर।

6.84.44

तत्याज दयितां सुप्तामङ्काद्राजा शिखिध्वजः। स्वैरं स्वैरं मुखं राहोर्दिशं चान्द्रप्रभामिव ॥ ४४ ॥

tatyāja dayitāṃ suptāmaṅkādrājā śikhidhvajaḥ | svairaṃ svairaṃ mukhaṃ rāhor diśaṃ cāndraprabhāmiva || 44 ||

The king with the peacock banner left his sleeping beloved from his lap, slowly and steadily, like the moon's light moving across the sky.

मोर ध्वज वाले राजा ने अपनी सोती हुई प्रिया को अपनी गोद से धीरे-धीरे छोड़ दिया, जैसे चंद्रमा की रोशनी आकाश में घूमती है।

6.84.45

उत्तस्थौ शयनाल्लीनवधूकार्धाञ्चलांशुकात्। सलक्ष्मीकान्तिलोलोर्मेर्हरिः क्षीरार्णवादिव ॥ ४५ ॥

uttasthau śayanāllīnavadhūkārdhāñcalāṃśukāt | salakṣmīkāntilolormerhariḥ kṣīrārṇavādiva || 45 ||

He rose from the bed, leaving behind his beloved who was half-covered by the cloth, like Lord Vishnu rising from the milky ocean, with the radiant Lakshmi by his side.

वह बिस्तर से उठा, अपनी प्रिया को कपड़े से आधा ढका छोड़कर, जैसे भगवान विष्णु दूध के समुद्र से उठते हैं, चमकती हुई लक्ष्मी के साथ।

6.84.46

वीरक्रमार्थं यामीति तत्रैवानुचरव्रजम्। योजयित्वा जगामासौ पुरान्निर्गत्य पूर्णधीः ॥ ४६ ॥

vīrakramārthaṃ yāmīti tatraivānucaravrajam | yojayitvā jagāmāsau purān nirgatya pūrṇadhīḥ || 46 ||

With the intention of performing heroic deeds, he assembled his retinue there and departed from the city with a resolute mind.

वीर कर्म करने के उद्देश्य से, उसने अपने परिवार को वहीं एकत्र किया और दृढ़ मन से शहर से निकल गया।

6.84.47

राज्यलक्ष्मि नमस्तुभ्यमित्युक्त्वा मण्डलाद्गतः। विवेशोग्रामरण्यानीमेको नद इवार्णवम् ॥ ४७ ॥

rājyalakṣmi namastubhyamityuktvā maṇḍalādgataḥ | viveśogrāmaraṇyānīmeko nada ivārṇavam || 47 ||

Having said, 'Salutations to the royal fortune,' he left the palace and entered the fierce forest alone, like a river entering the ocean.

कहकर, 'राज्य लक्ष्मी को नमस्कार,' उसने महल छोड़ दिया और अकेले भयानक जंगल में प्रवेश किया, जैसे नदी समुद्र में मिलती है।

6.84.48

घनान्धकारगुल्माढ्या क्षुद्रभूतौघकर्कशा। सारण्यानी निशा सार्धं समं तेनातिवाहिता॥ ४८॥

ghanāndhakāragulmāḍhyā kṣudrabhūtaughakarkaśā | sāraṇyānī niśā sārdhaṃ samaṃ tenātivāhitā || 48 ||

In the dense darkness, amidst the thickets, the night was harsh with small creatures, and he spent it together with her.

घने अंधकार में, झाड़ियों के बीच, छोटे जीवों से भरी कठोर रात को उसने उसके साथ बिताया।

6.84.49

प्रातः शून्यामरण्यानीं स नीत्वा विततं दिनम्। सममर्केण कस्यांचिद्विशश्राम वनावनौ॥ ४९॥

prātaḥ śūnyāmaraṇyānīṃ sa nītvā vitataṃ dinam | samamarkena kasyāṃcidviśaśrāma vanāvanau || 49 ||

In the morning, he led her through the empty forest and spent the day wandering, resting in some part of the forest.

प्रातःकाल, उसने उसे खाली वन में ले जाया और दिन भर भटकते हुए किसी वन के हिस्से में विश्राम किया।

6.84.50

भानावदृश्यतां याते तत्र स्नानादिपूर्वकम्। किंचित्फलादिकं भुक्त्वा तां निनाय तमस्विनीम्॥ ५०॥

bhānāvadṛśyatāṃ yāte tatra snānādipūrvakam | kiṃcitphalādikaṃ bhuktvā tāṃ ninaya tamasvinīm || 50 ||

When the sun had set, he performed his evening ablutions and ate some fruits, then led her through the dark night.

सूर्यास्त होने पर, उसने वहाँ स्नान आदि करके कुछ फल खाए और फिर उसे अंधेरी रात में ले गया।

6.84.51

पुनः प्रातः पुराण्युच्चैर्मण्डलानि गिरीन्नदीः। जवादुल्लङ्घयामास राजा द्वादशशर्वरीः॥ ५१॥

punaḥ prātaḥ purāṇyuccairmaṇḍalāni girīnnadīḥ | javādullaṅghayāmāsa rājā dvādaśaśarvarīḥ || 51 ||

Again in the morning, the king swiftly crossed ancient circular regions, mountains, and rivers, covering twelve nights.

फिर प्रातःकाल, राजा ने तेजी से पुराने गोल क्षेत्रों, पर्वतों और नदियों को पार किया, बारह रातों को कवर किया।

6.84.52

ततो मन्दरशैलस्य तटस्थं जनदुर्गमम्। प्राप काननमत्यन्तदूरस्थजनतापुरम्॥ ५२॥

tato mandaraśailasya taṭasthaṃ janadurgamam | prāpa kānanamatyantadūrasthajanatāpuram || 52 ||

Then he reached a forest near the Mandara mountain, which was difficult for people to access and far from human settlements.

फिर उसने मंदराचल के पास एक ऐसे वन तक पहुँच गया, जो लोगों के लिए दुर्गम था और मानव बस्तियों से दूर था।

6.84.53

रटत्प्रणालसलिलवापीवलितपादपम्। शीर्णवेद्यालयज्ञातभूतपूर्वद्विजाश्रमम्॥ ५३॥

raṭatpraṇālasalilavāpīvalitapādapam | śīrṇavedyālayajñātabhūtapūrvadvijāśramam || 53 ||

A place where the trees are surrounded by a pond with flowing water, and where the ancient hermitage of the Brahmins, known from the ruined temple, is located.

एक ऐसा स्थान जहाँ पेड़ों के चारों ओर बहते हुए पानी का तालाब है, और जहाँ पुराने ब्राह्मणों का आश्रम है, जो खंडहर मंदिर से ज्ञात है।

6.84.54

क्षुद्रप्राणिविनिर्मुक्तसिद्धसेव्यलतालयम्। आपूर्णपादपलतं प्राणवृत्तिक्रैरैः फलैः ॥ ५४ ॥

kṣudraprāṇivinirmuktasiddhasevyalatālayam | āpūrṇapādapalataṃ prāṇavṛttikraraiḥ phalaiḥ || 54 ||

A place free from small creatures, worshipped by the perfected ones, filled with fruit-bearing trees that sustain life.

एक ऐसा स्थान जो छोटे जीवों से मुक्त है, सिद्धों द्वारा पूजित है, और जीवन को बनाए रखने वाले फलदायी पेड़ों से भरा हुआ है।

6.84.55

तत्रैकस्मिन्समे शुद्धे स्थले सलिलमालिते। शीतले शाद्वलश्यामे स्निग्धे सफलपादपे ॥ ५५ ॥

tatraikasmin same śuddhe sthale salilamālite | śītale śādvalaśyāme snigdhe saphalapādape || 55 ||

There, in a pure and level place adorned with water, cool, green with grass, smooth, and filled with fruit-bearing trees.

वहाँ, एक पवित्र और समतल स्थान है जो पानी से सजा हुआ है, ठंडा, घास से हरा, चिकना, और फलदायी पेड़ों से भरा हुआ है।

6.84.56

समञ्जरीभिर्वल्लीभिः स चकारोटजालयम्। प्रावृट्कालः सविद्युद्भिर्नीलाभ्रैरिव पञ्जरम् ॥ ५६ ॥

samañjarībhirvallībhiḥ sa cakāroṭajālayam | prāvṛṭkālaḥ savidyudbhirnīlābhrairiva pañjaram || 56 ||

With the creepers and vines, he created a network like a cage, during the rainy season with lightning and dark clouds.

लताओं और बेलों के साथ, उसने वर्षा ऋतु में बिजली और काले बादलों के साथ एक जाल की तरह पिंजरा बनाया।

6.84.57

मसृणं वैणवं दण्डं फलभोजनभाजनम्। अर्घपात्रं पुष्पभाण्डमक्षमालां कमण्डलुम् ॥ ५७ ॥

masṛṇaṃ vaiṇavaṃ daṇḍaṃ phalabhojanabhājanam | arghapātraṃ puṣpabhāṇḍamakṣamālāṃ kamaṇḍalum || 57 ||

A smooth bamboo staff, a vessel for eating fruits, an offering vessel, a container for flowers, a rosary, and a water pot.

एक चिकना बाँस का डंडा, फल खाने का बर्तन, अर्घ पात्र, फूलों का भांड, माला, और कमंडलु।

6.84.58

कन्थां शीतापनोदाय बृसीं चैव मृगाजिनम्। आनीयायोजयत्तस्मिन्मठिकामन्दिरे नृप ॥ ५८ ॥

kanthāṃ śītāpanodāya bṛsīṃ caiva mṛgājinam | ānīyāyojayattasminmaṭhikāmandire nṛpa || 58 ||

He brought a blanket to ward off the cold, a seat, and a deer skin, and arranged them in the hut, O king.

उसने ठंड से बचाव के लिए एक कंबल, एक आसन और हिरण की खाल लाई और उसे कुटिया में सजाया, हे राजन्।

6.84.59

यत्किंचिदन्यद्वा वस्तु योग्यं तापसकर्मणि। तत्तत्र स्थापयामास जगतीव क्रमं विधिः ॥ ५९ ॥

yatkiñcidanyadvā vastu yogyam tāpaskarmaṇi | tattatra sthāpayāmāsa jagatīva kramam vidhiḥ || 59 ||

Whatever other items were suitable for ascetic practices, he placed them there in an orderly manner, like the creator arranging the world.

जो कुछ भी अन्य वस्तुएं तपस्वी कार्यों के लिए उपयुक्त थीं, उन्हें वह वहां व्यवस्थित रूप से रखा, जैसे सृष्टिकर्ता संसार को व्यवस्थित करता है।

6.84.60

संध्यापूर्वं जपं प्रातः प्रहरे स तदाकरोत् । पुष्पोच्चयं द्वितीये तु स्नानं देवार्चनं ततः ॥ ६० ॥

sandhyāpūrvam japam prātaḥ prahare sa tadākarot | puṣpoccayam dvitīye tu snānam devārcanam tataḥ || 60 ||

In the early morning, before dawn, he performed japa (chanting) during the first part of the day. In the second part, he collected flowers, took a bath, and then worshipped the deities.

प्रातःकाल, संध्या से पहले, उसने दिन के पहले भाग में जप (मंत्र जाप) किया। दूसरे भाग में, उसने फूल एकत्र किए, स्नान किया, और फिर देवताओं की पूजा की।

6.84.61

पश्चाद्वनफलं किंचिद्वनकन्दं विसादि च । भुक्त्वा जप्यपरो भूत्वा निनायैको निशां वशी ॥ ६१ ॥

paścādvanaphalam kiñcidvanakandam visādi ca | bhuktvā japyaparo bhūtvā ninmāyaiko niśam vaśī || 61 ||

Afterwards, he ate some forest fruits and roots, and then, becoming absorbed in chanting, he spent the night alone, in control of his senses.

इसके बाद, उसने कुछ जंगली फल और जड़ें खाईं, और फिर, जप में डूब गया, और अपने इंद्रियों पर नियंत्रण रखते हुए अकेले रात बिताई।

6.84.62

इति दिवसमखेदं मन्दरोपान्तकच्छे विरचित उटजेऽन्तर्मालवेशो निनाय । नवनृपतिविलासं तं न सस्मार कं वा स्फुरति हृदि विवेके राज्यलक्ष्म्यो हरन्ति ॥ ६२ ॥

iti divasamakhedam mandaropāntakacche viracita uṭaje'ntarmālaveśo ninmāya | navanṛpativilāsam tam na sasmāra kam vā sphurati hṛdi viveke rājyalakṣmyo haranti || 62 ||

Thus, he spent the day without fatigue, adorned with a garland of Mandara flowers, in the beautifully decorated hut, not remembering the pleasures of new kingship. In his heart, only the wisdom that takes away the splendor of royalty shines.

इस प्रकार, उसने थकान के बिना दिन बिताया, मंदार फूलों की माला से सजा हुआ, सुंदर रूप से सजी कुटिया में, नए राज्य के सुखों को याद नहीं किया। उसके हृदय में सिर्फ वह बुद्धिमत्ता चमकती है जो राज्य की शोभा को ले जाती है।

Chapter 85

6.85.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवं शिखिध्वजः पूर्णमठिकायां वने स्थितः । इदानीं श्रृणु चूडाला सा किं कृतवती गृहे ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃ śikhidhvajaḥ pūrṇamaṭhikāyāṃ vane sthitaḥ | idānīṃ śrṇu cūḍālā sā kiṃ kṛtavatī gṛhe || 1 ||

Vasishtha said: Thus, Shikhidhvaja remained in the full hermitage in the forest. Now, listen to what Chudala did at home.

वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, शिखिध्वज पूर्ण मठ में वन में रहे। अब, सुनो कि चूडाला ने घर पर क्या किया।

6.85.2

तत्रार्धरात्रसमये दूरं याते शिखिध्वजे । हरिणी ग्रामसुप्तेव चूडाला बुबुधे भयात् ॥ २ ॥

tatrārdharātrasamaye dūraṃ yāte śikhidhvaje | hariṇī grāmasupteva cūḍālā bubudhe bhayāt || 2 ||

There, at midnight, when Shikhidhvaja had gone far away, Chudala, like a frightened deer, awoke out of fear.

वहाँ, आधी रात के समय, जब शिखिध्वज दूर चले गए थे, चूडाला, एक डरे हुए हिरण की तरह, भय से जाग गई।

6.85.3

अपश्यत्पतिनिर्हीना शयनं शून्यता गतम् । अभास्करमपूर्णेन्दु शान्तशोभमिवाम्बरम् ॥ ३ ॥

apaśyatpatinirhīnā śayanaṃ śūnyatā gatam | abhāskaramapūrṇendu śāntaśobhamivāmbaram || 3 ||

She saw the bed empty, devoid of her husband, like the sky without the sun and the unfull moon, calm and beautiful.

उसने पलंग को खाली देखा, जो उसके पति से रहित था, जैसे सूर्य और अपूर्ण चंद्रमा से रहित शांत और सुंदर आकाश।

6.85.4

उत्तस्थौ किंचिदाम्लानवदना खेदशालिनी । कुसिक्तेव महावल्ली निरुत्साहाङ्गपल्लवा ॥ ४ ॥

uttasthau kiṃcidāmlānavadanā khedaśālinī | kusikteva mahāvallī nirutsāhāṅgapallavā || 4 ||

She arose with a slightly sour face, full of sorrow, like a great vine withered, with lifeless branches.

उसने थोड़ा सा खट्टा चेहरा लेकर उठना शुरू किया, दुःख से भरी हुई, जैसे एक बड़ी लता सूख गई हो, जिसकी डालियाँ बेजान हों।

6.85.5

न प्रसन्ना न विमला बभूवाकुलतां गता । दिनश्रीरिव नीहारधूसरा सा व्यतिष्ठत ॥ ५ ॥

na prasannā na vimalā babhūvākulatāṃ gatā | dinaśrīriva nīhāradhūsarā sā vyatiṣṭhat || 5 ||

She was neither pleased nor pure, she became agitated, like the glory of the day obscured by mist, she stood there.

वह न तो प्रसन्न थी न ही पवित्र, वह अशांत हो गई, जैसे धुंध से ढकी दिन की शोभा, वह वहाँ खड़ी थी।

6.85.6

क्षणं शय्योपविष्टैव चिन्तयामास चिन्तया । कष्टं राज्यं प्रभुस्त्यक्त्वा वनं यातो गृहादिति ॥ ६ ॥

kṣaṇaṃ śayyopaviṣṭaiva cintayāmāsa cintayā | kaṣṭaṃ rājyaṃ prabhustyaktvā vanaṃ yāto gṛhāditi || 6 ||

For a moment, she lay on the bed, thinking deeply. She thought, 'It is painful that the king has abandoned the kingdom and gone to the forest from the house.'

एक क्षण के लिए, वह बिस्तर पर लेटी रही, गहरी सोच में डूबी हुई। उसने सोचा, 'यह दुःखद है कि राजा ने राज्य छोड़ दिया और घर से वन में चले गए।'

6.85.7

तन्मयेहाद्य किं कार्यं तत्समीपं व्रजाम्यहम् । भर्तैव गतिरुद्दिष्टा विधिना प्रकृता स्त्रियः ॥ ७ ॥

tanmayehādya kiṃ kāryaṃ tatsamīpaṃ vrajāmyaham | bhartaiva gatiruddhiṣṭā vidhinā prakṛtā striyaḥ || 7 ||

What should I do here now? I will go to his side. The husband is indeed the destiny prescribed by fate for women.

अब मुझे यहाँ क्या करना चाहिए? मैं उसके पास जाऊँगी। पति ही स्त्रियों के लिए भाग्य द्वारा निर्धारित गति है।

6.85.8

इति संचिन्त्य भर्तारमनुगन्तुं समुत्थिता । चूडाला वातरन्ध्रेण निर्गत्याम्बरमाययौ ॥ ८ ॥

iti saṃcintya bhartāramanugantuṃ samutthitā | cūḍālā vātarandhreṇa nirgatya ambaramāyayau || 8 ||

Thus, having thought about her husband, she rose to follow him. Chudala, having gone out through the window, went to the sky.

इस प्रकार, अपने पति के बारे में सोचकर, वह उठी और उसका अनुसरण करने के लिए तैयार हो गई। चूडाला, खिड़की से बाहर निकलकर, आकाश में चली गई।

6.85.9

बभ्रामाम्बरमार्गेण वातस्कन्धेन योगिनी । कुर्वती सिद्धसार्थस्य मुखेनान्येन्दुविभ्रमम् ॥ ९ ॥

babhrāmāmbaramārgeṇa vātaskandhena yoginī | kurvatī siddhasārthasya mukhenānyenduvibhramam || 9 ||

The yogini wandered in the sky path, carried by the wind. She created the illusion of another moon with the face of the accomplished one.

योगिनी हवा के सहारे आकाश मार्ग में भटकती रही। उसने सिद्ध पुरुष के चेहरे से दूसरे चंद्रमा का भ्रम पैदा किया।

6.85.10

ददर्शाथ यथायातं रात्रौ खङ्गधरं पतिम् । भ्रमन्तमेकमेकान्ते वेतालसमयोदितम् ॥ १० ॥

dadarśātha yathāyātaṃ rātrau khaṅgadharaṃ patim | bhramantamekamekānte vetālasamayoditam || 10 ||

Then she saw her husband, who had come as promised, carrying a sword at night, wandering alone in solitude, as if possessed by a vetala.

तब उसने देखा कि उसका पति, जैसा कि वादा किया था, रात में तलवार लेकर आया था, एकांत में अकेले भटक रहा था, मानो वेताल से संबंधित हो।

6.85.11

तादृशं पतिमालोक्य स्थित्वा गगनकोटरे। भविष्यच्चिन्तयामास सर्वं भर्तुरखण्डितम्॥ ११॥

tādṛśaṃ patimālokya sthitvā gaganakoṭare | bhaviṣyacchintayāmāsa sarvaṃ bharturakhṇḍitam || 11 ||

Seeing her husband in such a state, she stood in the sky and contemplated the future, thinking everything about her husband was flawless.

अपने पति को ऐसी अवस्था में देखकर, वह आकाश में खड़ी हो गई और भविष्य के बारे में सोचने लगी, सोचा कि उसके पति का सब कुछ खण्डित है।

6.85.12

यथा येन यदा यत्र यावत्कार्यं यथोदयम्। यथा च निर्वृतिः स्फारा गन्तव्या तेन राघव॥ १२॥

yathā yena yadā yatra yāvatkāryaṃ yathodayam | yathā ca nirvṛtiḥ sphārā gantavyā tena rāghava || 12 ||

In whatever way, by whomever, whenever, wherever, to whatever extent the work is to be done according to the occasion, and in whatever way satisfaction is to be obtained, one should proceed accordingly, O Raghava.

जिस तरह से, जिसके द्वारा, जब, जहाँ, जितना कार्य अवसर के अनुसार करना है, और जिस तरह से संतुष्टि प्राप्त करनी है, उसी तरह से चलना चाहिए, हे रघुवंशी।

6.85.13

अवश्यं भवितव्यं तद्भर्तुर्दृष्ट्वा पुरः स्थितम्। तदेव संवादयितुं गमनात्सा न्यवर्तत॥ १३॥

avaśyaṃ bhavitavyaṃ tadbharturdṛṣṭvā puraḥ sthitam | tadeva saṃvādayituṃ gamanātsā nyavartata || 13 ||

Seeing her husband standing before her, she thought it was inevitable and returned from her journey to communicate that very thought.

अपने पति को सामने खड़ा देखकर, उसने सोचा कि यह अवश्यंभावी है और उसी विचार को संवादित करने के लिए वह अपनी यात्रा से लौट आई।

6.85.14

आस्तां ममाद्य गमनं काले नातिचिरेण हि। मयास्य पार्श्वे गन्तव्यं नियतेरेष निश्चयः॥ १४॥

āstāṃ mamādya gamanaṃ kāle nāticireṇa hi | mayāsya pārśve gantavyaṃ niyater eṣa niścayaḥ || 14 ||

Let my journey be today at the right time, not too long from now. It is my firm resolve to go to his side.

मेरी यात्रा आज उचित समय पर हो, बहुत देर नहीं। मेरा दृढ़ संकल्प है कि मैं उसके पास जाऊँगी।

6.85.15

इति संचिन्त्य चूडाला प्रविश्यान्तःपुरं पुनः। सुष्वाप शयने शंभोः शिरसीवैन्दवी कला॥ १५॥

iti saṃcintya cūḍālā praviśyāntaḥpuraṃ punaḥ | suṣvāpa śayane śambhoḥ śirasīvaīndavī kalā || 15 ||

Having thought thus, Chudala re-entered the inner chamber and slept on Shambhu's bed like the crescent moon on his head.

ऐसा सोचकर, चूडाला पुनः अंतःपुर में प्रवेश किया और शंभु के बिस्तर पर चंद्रमा की तरह सो गई।

6.85.16

केनचित्कारणेनासौ गतः संप्रति भूपतिः । इति पौरं जनं सर्वमाश्वास्यातिष्ठदङ्गना ॥ १६ ॥

kenacitkāraṇenāsau gataḥ saṃprati bhūpatiḥ | iti pauram janam sarvamāśvāsyātiṣṭhadanganā || 16 ||

For some reason, the king has gone away now. Thus, reassuring all the citizens, the queen remained steadfast.

किसी कारण से, राजा अब चले गए हैं। इस प्रकार, सभी नागरिकों को आश्वस्त करके, रानी दृढ़ रही।

6.85.17

राज्यं ररक्ष भर्तुस्तत्क्रमेण समदर्शनात् । यथा कालेन केदारं पक्वं कलमगोपिका ॥ १७ ॥

rājyam rarakṣa bhartustatkramena samadarśanāt | yathā kālena kedāram pakvam kalamagopikā || 17 ||

She protected the kingdom with the same vision as her husband. Just as a cowherd girl protects the ripe kadamba flowers with time.

उसने अपने पति की तरह ही दृष्टि से राज्य की रक्षा की। जैसे ग्वालिन समय के साथ पके हुए कदंब फूलों की रक्षा करती है।

6.85.18

तयोस्तदाऽवहत्कालो दंपत्योः स्थितयोस्तथा । अदृष्टान्योन्यमुखयो राज्यकाननपालयोः ॥ १८ ॥

tayostadā'vahatkālo daṃpatyoḥ sthitayostathā | adṛṣṭānyonyamukhayo rājyakānanapālayoḥ || 18 ||

At that time, the couple remained in their respective places, not seeing each other's faces, one ruling the kingdom and the other protecting the forest.

उस समय, दंपती अपने-अपने स्थान पर रहे, एक-दूसरे के चेहरे नहीं देखे, एक राज्य का शासन करता है और दूसरा जंगल की रक्षा करता है।

6.85.19

जगामाथ दिनं पक्षो मासोऽथ ऋतुवत्सरः । शिखिध्वजस्य विपिने चूडालायाः स्वमन्दिरे ॥ १९ ॥

jagāmātha dinam pakṣo māso'tha ṛtuvatsaraḥ | śikhidhvajasya vipine cūḍālāyāḥ svamandire || 19 ||

Then the days, fortnights, months, seasons, and years passed by. Shikhidhvaja in the forest and Chudala in her palace.

फिर दिन, पक्ष, महीने, ऋतुएँ और वर्ष बीत गए। शिखिध्वज वन में और चूडाला अपने महल में।

6.85.20

बहुनात्र किमुक्तेन वर्षाण्यष्टादशाङ्गना । चूडालोवास सदने वनगुच्छे शिखिध्वजः ॥ २० ॥

bahunātra kimukthena varṣāṇyaṣṭādaśāṅganā | cūḍālovāsa sadane vanagucche śikhidhvajaḥ || 20 ||

What more can be said here? The queen Chudala stayed in the palace for eighteen years, and Shikhidhvaja in the forest grove.

इसमें और क्या कहा जा सकता है? रानी चूडाला महल में अठारह वर्षों तक रही, और शिखिध्वज वन के झुंड में।

6.85.21

अथ यातेषु बहुषु वर्षेषु जरसा वृते । शिखिध्वजे महाशैलतटकोटरवासिनि ॥ २१ ॥

atha yāteṣu bahuṣu varṣeṣu jarasā vṛte | śikhidhvaje mahāśailataṭakoṭaravāsini || 21 ||

After many years had passed, Shikhidhvaja, who lived in a cave on the slope of a great mountain, was overcome by old age.

बहुत साल बीतने के बाद, शिखिध्वज, जो एक महान पर्वत की ढलान पर एक गुफा में रहता था, बुढ़ापे से घिर गया।

6.85.22

भर्तुः कषायपाकं तदालक्ष्य पालितं चिरात्। तदा तस्याथ यातेषु वर्षेषु जरसा वने ॥ २२ ॥

bhartuḥ kaṣāyapākaṃ tadālakṣya pālitaṃ cirāt | tadā tasyātha yāteṣu varṣeṣu jarasā vane || 22 ||

At that time, seeing her husband's austere penance being protected for a long time, she then, in the forest, was overcome by old age after many years had passed.

उस समय, अपने पति की कठोर तपस्या को लंबे समय से सुरक्षित देखकर, वह वन में, बहुत साल बीतने के बाद, बुढ़ापे से घिर गई।

6.85.23

तदा तस्यात्मकार्यस्य भवितव्यतया तथा। भर्तुः समीपगमने मम कालोऽयमित्यथ ॥ २३ ॥

tadā tasyātmakāryasya bhavitavyatayā tathā | bhartuḥ samīpagamane mama kālo'yamityatha || 23 ||

At that time, thinking that the time for her own duty had come and that she must go near her husband, she thought, 'This is my time.'

उस समय, सोचकर कि अपने कर्तव्य का समय आ गया है और उसे अपने पति के पास जाना है, उसने सोचा, 'यह मेरा समय है।'

6.85.24

संचिन्त्य मन्दरोपान्तं गन्तुं बुद्धिं चकार सा। चचारान्तःपुराद्रात्रौ ततार नभसः पथम् ॥ २४ ॥

saṃcintya mandaropāntaṃ gantuṃ buddhiṃ cakāra sā | cacārāntaḥpurādrātrau tatāra nabhasaḥ patham || 24 ||

Having thought about going to the peak of Mandara, she decided to go. She left the inner chamber at night and traversed the sky.

मंदर पर्वत की चोटी तक जाने के बारे में सोचकर, उसने जाने का निर्णय लिया। वह रात को अंतःपुर से निकली और आकाश में उड़ गई।

6.85.25

जगाम वातस्कन्धेन गच्छन्ती खे ददर्श सा। कल्पवृक्षांशुकच्छन्नरत्नस्तबकभूषिताः ॥ २५ ॥

jagāma vātaskandhena gacchantī khe dadarśa sā | kalpavṛkṣāṃśukacchannaratnastabakabhūṣitāḥ || 25 ||

She went on the shoulders of the wind, and while moving in the sky, she saw the wish-fulfilling trees adorned with jeweled buds and covered with silken garments.

वह हवा के कंधे पर चढ़कर गई, और आकाश में जाते हुए, उसने रत्नों से सजे कल्पवृक्षों को देखा, जो रेशमी वस्त्रों से ढके हुए थे।

6.85.26

नन्दनोद्याननिलया रक्ताः सिद्धाभिसारिकाः। परामृष्टेन्दुशकलान्प्रालेयकणवर्षिणः ॥ २६ ॥

nandanodyānanilayā raktāḥ siddhābhisārikāḥ | parāmṛṣṭenduśakalānprāleyakaṇavarṣiṇaḥ || 26 ||

In the abode of Nandana garden, the red-colored siddhābhisārikās (a type of bird) were showering with drops of dew, having touched the moon's rays.

नन्दन उद्यान के निवास में, लाल रंग की सिद्धाभिसारिकाएँ (एक प्रकार के पक्षी) चन्द्रमा की किरणों को छूकर ओस की बूँदों से बरसा रही थीं।

6.85.27

सिद्धोत्तमात्तसौगन्ध्यान्स्पर्शयामास मारुतान्। चन्द्रबिम्बामृताम्भोधेर्महावीचिपरम्पराम् ॥ २७ ॥

siddhottamāttasaugandhyānsparśayāmāsa mārutān | candrabimbāmṛtāmbhodhermahāvīciparamparām || 27 ||

The supreme siddhas touched the fragrant winds, which were like the waves of the nectar ocean of the moon's disc.

उत्तम सिद्ध ने सुगंधित वायुओं को छू लिया, जो चन्द्रमा के डिस्क के अमृत समुद्र की लहरों के समान थीं।

6.85.28

अपश्यन्निर्मलज्योत्स्नामम्बरान्तरतां गता । मेघान्तरेण गच्छन्ती मेघलग्नाश्च विद्युतः ॥ २८ ॥

apaśyannirmalajyotsnāmambarāntaratāṃ gatā | meghāntareṇa gacchantī meghalagnāśca vidyutaḥ || 28 ||

She saw the pure moonlight that had reached the middle of the sky, moving through the clouds, and the lightning that was hidden by the clouds.

उसने देखा पवित्र चन्द्रमा की चाँदनी जो आकाश के मध्य तक पहुँच गई थी, बादलों के बीच से गुजरती हुई, और बादलों में छिपी बिजली।

6.85.29

अवियुक्ताः स्वभर्त्रा सा भूयो भूयो व्यलोकयत् । उवाच चात्मनैवाहो यावज्जीवं शरीरिणाम् ॥ २९ ॥

aviyuktāḥ svabhartṛā sā bhūyo bhūyo vyalokayat | uvāca cātmanaivāho yāvajjīvaṃ śarīriṇām || 29 ||

Not separated from her husband, she repeatedly looked at him and said to herself, 'Alas, as long as one lives in this body...'

अपने पति से अलग न होकर, वह बार-बार उसे देखती रही और अपने आप से कहा, 'हाय, जब तक कोई इस शरीर में जीवित है...'

6.85.30

न स्वभावः शमं याति ममाप्युत्कण्ठितं मनः । कदा मृगेन्द्रस्कन्धं तं प्रणयप्रवणं पुनः ॥ ३० ॥

na svabhāvaḥ śamaṃ yāti mamāpyutkaṇṭhitaṃ manaḥ | kadā mṛgendraskandhaṃ taṃ praṇayapravaṇaṃ punaḥ || 30 ||

My nature does not find peace, and my mind is anxious. When will I again embrace that affectionate shoulder of the king of deer?

मेरा स्वभाव शांति नहीं पाता, और मेरा मन उत्कंठित है। कब मैं फिर से उस स्नेही मृगेंद्र के कंधे को आलिंगन करूँगी?

6.85.31

पश्यामि कान्तमित्युक्तं ममाप्युत्कण्ठते मनः । मञ्जरीजालवलितास्तरुं वल्ल्यः स्वकं पतिम् ॥ ३१ ॥

paśyāmi kāntamityuktaṃ mamāpyutkaṇṭhate manaḥ | mañjarījālavalitāstaruṃ vallyaḥ svakaṃ patim || 31 ||

I see that my beloved is said to be longing for me | The creepers, entwined with the tree, also long for their own husband || 31 ||

मैं देखता हूँ कि मेरे प्रिय को कहा गया है कि मेरा मन भी उत्कण्ठित है | लताएँ, जो पेड़ से लिपटी हुई हैं, अपने पति की भी उत्कण्ठा करती हैं || ३१ ||

6.85.32

न मुञ्चन्ति क्षणमिति ममाप्युत्कण्ठते मनः । यथेयमग्रजा कान्तमेति सिद्धाभिसारिका ॥ ३२ ॥

na muñcanti kṣaṇamiti mamāpyutkaṇṭhate manaḥ | yatheyamagrājā kāntameti siddhābhisārikā || 32 ||

They do not let go of even a moment, thus my mind also longs | Just as this elder sister goes to meet her beloved, a skilled lover || 32 ||

वे एक क्षण भी नहीं छोड़ते, इसलिए मेरा मन भी उत्कण्ठित है | जैसे यह बड़ी बहन अपने प्रिय से मिलने जाती है, एक कुशल प्रेमिका || ३२ ||

6.85.33

तथा कदाहमेष्यामि ममापीति मनः स्थितम् । इमे मन्दाश्च मरुत एते च शशिनः कराः ॥ ३३ ॥

tathā kadāham eṣyāmi mamāpīti manaḥ sthitam | ime mandāśca maruta ete ca śaśinaḥ karāḥ || 33 ||

Thus, when will I go, my mind is also thinking this | These slow winds and these rays of the moon || 33 ||

इस प्रकार, कब मैं जाऊँगा, मेरा मन भी यही सोच रहा है | ये धीमी हवाएँ और ये चाँद की किरणें || ३३ ||

6.85.34

वनराजय एताश्च ममाप्युत्कण्ठयन्त्यहो । हे चित्ताज्ञ मुधैवान्तः किं त्वं ताण्डवितं स्थितम् ॥ ३४ ॥

vanarājaya etāśca mamāpyutkaṇṭhyantyaho | he cittājña mudhaivāntaḥ kiṃ tvaṃ tāṇḍavitaṃ sthitam || 34 ||

O king of the forest, these also cause me to long, alas | O foolish mind, why are you dancing thus inside || 34 ||

हे वन के राजा, ये भी मुझे उत्कण्ठित करते हैं, अहो | हे मूर्ख मन, तुम अंदर इस प्रकार नाच क्यों रहे हो || ३४ ||

6.85.35

सा व्योमनिर्मला साधो क्व ते याता विवेकिता । अथवा चित्त भर्तारं स्वं प्रत्युत्कण्ठसे सखे ॥ ३५ ॥

sā vyomanirmalā sādho kva te yātā vivekitā | athavā citta bhartāraṃ svaṃ pratyutkaṇṭhase sakhe || 35 ||

O virtuous one, where has your clear sky gone | Or, O mind, do you long for your own husband, O friend || 35 ||

हे साधु, तेरा निर्मल आकाश कहाँ गया | या, हे मन, क्या तू अपने पति की उत्कण्ठा कर रहा है, हे सखा || ३५ ||

6.85.36

तिष्ठोत्कण्ठाभिवलितं किं समुत्कण्ठितेन मे । किं वृथोत्कण्ठसे वामे भर्ता यातो जरां भवेत् ॥ ३६ ॥

tiṣṭhōtkāṇṭhābhivalitaṃ kiṃ samutkāṇṭhitēna mē | kiṃ vṛthōtkāṇṭhasē vāmē bhartā yātō jarāṃ bhavēt || 36 ||

Why am I so eagerly waiting for my husband who has gone away? Why am I longing in vain for him who has become old?

मैं अपने पति के लिए इतनी उत्कण्ठा से क्यों प्रतीक्षा कर रही हूँ, जो चला गया है? मैं व्यर्थ ही उसके लिए उत्कण्ठित क्यों हूँ, जो बूढ़ा हो गया है?

6.85.37

तपस्वी कृशगात्रश्च भवेन्निर्वासनस्तथा । मनो राज्याद्यभोगेभ्यो मन्येऽस्यामूलतां गतम् ॥ ३७ ॥

tapasvī kṛśagātraśca bhavēnnirvāsanastathā | manō rājyādyabhōgēbhyaḥ manyē'syāmūlatāṃ gatam || 37 ||

He has become an ascetic with a lean body and has renounced everything. I believe his mind has completely detached from worldly pleasures.

वह एक तपस्वी है, जिसका शरीर दुबला है और उसने सब कुछ त्याग दिया है। मैं समझती हूँ कि उसका मन संसारिक भोगों से पूर्ण रूप से विच्छिन्न हो गया है।

6.85.38

वासनालतिका प्रावुण्नदी नदगता यथा । एकान्तरत एकात्मा नीरसः शान्तवासनः ॥ ३८ ॥

vāsanālatikā prāvuṇṇadī nadagatā yathā | ekāntarata ekātmā nīrasaḥ śāntavāsanaḥ || 38 ||

Like a river flowing into another river, he has become one with the supreme soul, devoid of desires and peaceful.

जैसे एक नदी दूसरी नदी में बहती है, वैसे ही वह परमात्मा से एक हो गया है, इच्छाओं से रहित और शान्त।

6.85.39

मन्ये भवति मे भर्ता शुष्कवृक्षसमस्थितिः । तथापि चित्त कोत्कण्ठा भवतोत्कण्ठयान्वितम् ॥ ३९ ॥

manyē bhavati mē bhartā śuṣkavṛkṣasamasthitiḥ | tathāpi citta kōtkāṇṭhā bhavatōtkāṇṭhayānvitam || 39 ||

I believe my husband is in a state like a dry tree. Yet, my mind is filled with longing for him.

मैं मानती हूँ कि मेरा पति एक सूखे पेड़ की तरह है। फिर भी, मेरा मन उसके लिए उत्कण्ठा से भरा है।

6.85.40

मतिमुद्बोध्य योगेन श्लेषयिष्याम्यहं पतिम्। प्रमृष्टकलनं भर्तुः समीकृत्य मनो मुनेः ॥ ४० ॥

matimudbodhya yōgēna ślēṣayiṣyāmyahaṃ patim | pramṛṣṭakalaṇaṃ bhartuḥ samīkṛtya manō munēḥ || 40 ||

I will awaken my intellect through yoga and unite with my husband. I will purify my mind and make it like that of a sage.

मैं योग द्वारा अपनी बुद्धि को जागृत करूँगी और अपने पति से मिलूँगी। मैं अपने मन को शुद्ध करूँगी और उसे एक ऋषि के मन की तरह बनाऊँगी।

6.85.41

राज्य एव नियोक्ष्यामि निवत्स्यावः सुखं चिरम्। अहो नु चिरकालेन मनोरथमिमं शुभम् ॥ ४१ ॥

rājya eva niyokṣyāmi nivatsyāvaḥ sukhaṃ ciram| aho nu cirakālena manorathamimaṃ śubham || 41 ||

I will appoint him to the kingdom and we will live happily for a long time| Ah, after a long time, this auspicious wish of mine will be fulfilled

मैं उसे राज्य पर नियुक्त करूँगी और हम लंबे समय तक सुखी रहेंगे| अहो, लंबे समय के बाद, मेरी यह शुभ इच्छा पूरी होगी

6.85.42

अहमासादयिष्यामि यद्भर्ता समचिन्तितः। समग्रानन्दवृन्दानामेतदेवोपरि स्थितम् ॥ ४२ ॥

ahamāsādayiṣyāmi yadbhartā samacintitaḥ| samagrānandavṛndānāmetadevopari sthitam || 42 ||

I will achieve what my husband has thought| This is the highest bliss for all beings

मैं वह प्राप्त करूँगी जो मेरे पति ने सोचा है| यह सभी प्राणियों के लिए सर्वोच्च आनंद है

6.85.43

यत्समानमनोवृत्तिसङ्गमास्वादने सुखम्। इति चिन्तयती व्योम्ना चूडालोल्लङ्घ्य पर्वतान् ॥ ४३ ॥

yatsamānamanovṛttisaṅgamāsvādane sukham| iti cintayatī vyomnā cūḍālollaṅghya parvatān || 43 ||

Thinking that the happiness lies in enjoying the union of similar minds| Thus thinking, Chudala crossed the mountains through the sky

सोचते हुए कि सुख मन की समान वृत्ति के संगम में है| ऐसा सोचकर, चूडाला आकाश मार्ग से पर्वतों को पार कर गई

6.85.44

देशानब्दान्दिगन्तांश्च प्राप मन्दरकन्दरम्। अदृश्यैव नभःस्थैव प्रविवेश वनान्तरम् ॥ ४४ ॥

deśānabdāndigantāṃśca prāpa mandarakandaram| adṛśyaiva nabhaḥsthaiva praviveśa vanāntaram || 44 ||

She reached various countries, directions, and the Mandara cave| Invisible and in the sky, she entered the forest

वह विभिन्न देशों, दिशाओं और मंदार गुफा तक पहुंची| अदृश्य और आकाश में, वह वन में प्रवेश की

6.85.45

वात्येव पादपलतास्पन्दवेद्यगमागमा। वनैकदेशे कस्मिंश्चित्कृतपर्णोटजे पतिम् ॥ ४५ ॥

vātyeva pādapalatāspandavedyagamāgamā| vanaikadeśe kasmiṃścit kṛtaparṇoṭaje patim || 45 ||

Like the wind, she moved through the forest, her movements known only by the rustling of leaves| In a certain part of the forest, she found her husband under a tree with new leaves

वायु की तरह, वह वन में चली, उसकी गतिविधियाँ केवल पत्तों के खड़खड़ाहट से ज्ञात हुई| वन के एक भाग में, उसने अपने पति को एक नए पत्तों वाले पेड़ के नीचे पाया

6.85.46

दृष्ट्वा योगेन बुबुधे देहान्तरमिवास्थितम्। हारकेयूरकटककुण्डलादिविभूषितः ॥ ४६ ॥

dṛṣṭvā yogena bubudhe dehāntaramivāsthitam | hārakeyūrakaṭakakuṇḍalādivibhūṣitaḥ || 46 ||

Seeing with the power of yoga, she realized that it was as if another body was present, adorned with necklaces, armlets, bracelets, earrings, and other ornaments.

योग की शक्ति से देखकर, उसने समझा कि यह ऐसा लग रहा था जैसे कोई दूसरा शरीर मौजूद है, जो हार, केयूर, कड़े, कुण्डल और अन्य आभूषणों से सजा हुआ है।

6.85.47

अभवन्मेरुकान्तिर्यस्तमेवात्र ददर्श सा। कृशाङ्गं कृष्णवर्णं च जीर्णपर्णमिव स्थितम्॥ ४७ ॥

abhavanmerukāntiryastamevātra dadarśa sā | kṛśāṅgaṃ kṛṣṇavarṇaṃ ca jīrṇaparṇamiva sthitam || 47 ||

She saw him there, who had the radiance of Mount Meru, with a lean body and dark complexion, standing like a withered leaf.

उसने उसे वहाँ देखा, जिसकी चमक मेरु पर्वत की तरह थी, पतले शरीर और काले रंग के साथ, ऐसे खड़ा हुआ जैसे एक सूखा पत्ता।

6.85.48

कज्जलाम्बुभरस्नातं भृङ्गीशमिव निस्पृहम्। चीराम्बरधरं शान्तमेकाकिनमवस्थितम्॥ ४८ ॥

kajjalāmbubharasnātaṃ bhṛṅgīśamiva nispṛham | cīrāmbaradharaṃ śāntamekākinamavasthitam || 48 ||

He was bathed in the water of the kajjala cloud, resembling a black bee, free from desires, wearing a garment of rags, peaceful, and standing alone.

वह कज्जल बादल के पानी में नहाया हुआ था, एक काली भौंरे की तरह दिख रहा था, इच्छाओं से मुक्त, फटे कपड़ों का वस्त्र पहने हुए, शान्त, और अकेला खड़ा था।

6.85.49

स्थलीनिषण्णं पुष्पाणि ग्रथयन्तं जटाङ्कितम्। तमालोक्यानवद्याङ्गी चूडाला पीवरस्तनी ॥ ४९ ॥

sthalīniṣaṇṇaṃ puṣpāṇi grathayantaṃ jaṭāṅkitam | tamālokyānavadyāṅgī cūḍālā pīvarastanī || 49 ||

Seeing him sitting on the ground, stringing flowers, with matted hair, the flawless-limbed Chudala with full breasts looked at him.

उसे जमीन पर बैठे हुए, फूलों की माला गूँथते हुए, जटाओं से सज्जित देखकर, दोषरहित अंगों वाली चूडाला, जिसके स्तन भरे हुए थे, उसे देखने लगी।

6.85.50

किंचिज्जातविषादैवमुवाचात्मनि चेतसा। अहो नु विषमं मौर्ख्यं तदनात्मज्ञतात्मकम्॥ ५० ॥

kiñcijjātaviṣādaivamuvācātmani cetasā | aho nu viṣamaṃ maurkhyaṃ tadanātmajñatātmakam || 50 ||

Feeling a slight sorrow, she said to herself in her mind, 'Ah, how strange is this ignorance, which is the lack of self-knowledge.'

थोड़ी दुःख महसूस करते हुए, उसने अपने मन में सोचा, 'अह, कितना अजीब है यह अज्ञान, जो आत्मज्ञान का अभाव है।'

6.85.51

एवंविधाः समायान्ति दशा मौर्ख्यप्रसादतः। अयं स राजा लक्ष्मीवान्यतो मेऽतिप्रियः पतिः ॥ ५१ ॥

evaṃvidhāḥ samāyānti daśā maurkhyaprasādataḥ| ayaṃ sa rājā lakṣmīvānyato me'tipriyaḥ patiḥ || 51 ||

Such are the states that come due to the grace of foolishness| This is that wealthy king, therefore he is my very dear husband || 51 ||

ऐसी दशाएँ मूर्खता के प्रसाद से आती हैं| यह वह धनी राजा है, इसलिए यह मेरा अति प्रिय पति है || ५१ ||

6.85.52

हृदि मोहघनक्षुऽण्णामिमामभ्यागतो दशाम्। तदवश्यमिहाद्यैव नाथं विदितवेद्यताम् ॥ ५२ ॥

hṛdi mohaghana-kṣuṇṇāmimāmabhyāgato daśām| tadavaśyamihādyaiva nāthaṃ viditavedyatām || 52 ||

In the heart, overwhelmed by the dense fog of delusion, this state has come| Therefore, it is inevitable that today I will attain the knowledge of the Lord || 52 ||

हृदय में, भ्रम के घने कोहरे से घिरे हुए, यह दशा आई है| इसलिए, यह अनिवार्य है कि आज मैं ईश्वर के ज्ञान को प्राप्त करूँगा || ५२ ||

6.85.53

नयाम्यत्र न संदेहो भोगमोक्षश्रियं तथा। इदं रूपं परित्यज्य रूपेणान्येन केनचित् ॥ ५३ ॥

nayāmyatra na saṃdeho bhogamokṣaśriyaṃ tathā| idaṃ rūpaṃ parityajya rūpeṇānyena kenacit || 53 ||

I will lead here without doubt to the prosperity of enjoyment and liberation| Leaving this form, with some other form || 53 ||

मैं यहाँ संदेह के बिना भोग और मोक्ष की समृद्धि की ओर ले जाऊँगा| इस रूप को छोड़कर, किसी दूसरे रूप से || ५३ ||

6.85.54

सकाशमस्य गच्छामि बोधं दातुमनुत्तमम्। बालेयं मम कान्तेति मदुक्तं न करोत्यलम् ॥ ५४ ॥

sakāśamasyagacchāmi bodhaṃ dātumanuttamam| bāleyaṃ mama kānteti maduktaṃ na karotyalam || 54 ||

I will go to his presence to give the supreme knowledge| This child does not obey my words, saying she is my beloved || 54 ||

मैं उसके समीप जाऊँगा उत्तम ज्ञान देने के लिए| यह बच्चा मेरे शब्दों का पालन नहीं करता, कहते हुए कि वह मेरी प्रिय है || ५४ ||

6.85.55

तस्मात्तापसरूपेण बोधयामि पतिं क्षणात्। भर्ता कषायपाकेन परिपक्वमतिः स्थितः ॥ ५५ ॥

tasmāttāpasarūpeṇa bodhayāmi patiṃ kṣaṇāt| bhartā kaṣāyapākena paripakvamatiḥ sthitaḥ || 55 ||

Therefore, I will enlighten my husband in the form of an ascetic in an instant| The husband, with a mind ripened by the process of purification, stands || 55 ||

इसलिए, मैं एक तपस्वी के रूप में अपने पति को एक क्षण में ज्ञान दूँगा| पति, शुद्धि की प्रक्रिया से परिपक्व मन के साथ, खड़ा है || ५५ ||

6.85.56

चेतस्यस्याद्य विमले स्वं तत्त्वं प्रतिबिम्बति। इति संचित्य चूडाला बभूव द्विजदारकः ॥ ५६ ॥

cetasyasyādya vimale svaṃ tattvaṃ pratibimbiti | iti saṃcintya cūḍālā babhūva dvijadārakaḥ || 56 ||

In the pure mind, one's true essence is reflected. Thus, having contemplated, Chudala became the wife of a Brahmin.

शुद्ध मन में अपना सच्चा स्वरूप प्रतिबिम्बित होता है | इस प्रकार सोचकर चूडाला ब्राह्मण की पत्नी बन गई ||

6.85.57

ईषद्ध्यानाद्गतान्यत्वं क्षणादम्बुतरङ्गवत्। पपात विपिने तस्मिन्द्विजपुत्रकरूपिणी ॥ ५७ ॥

īṣaddhyānādgatānyatvaṃ kṣaṇādambutaraṅgavat | papāta vipine tasmin dvijaputrakarūpiṇī || 57 ||

Through a little meditation, she lost her otherness and instantly, like a wave in water, she fell in that forest in the form of a Brahmin's daughter.

थोड़ी ध्यान से, उसने अपनी अलगाव खो दिया और तुरंत, जैसे पानी की लहर, वह उस जंगल में ब्राह्मण की बेटी के रूप में गिर पड़ी |

6.85.58

भर्तुरध्याजगामाग्रं मन्दस्मितलसन्मुखी। ददर्श द्विजपुत्रं तं पुरो यातं शिखिध्वजः ॥ ५८ ॥

bharturadhyājagāmāgraṃ mandasmitalasanmukhī | dadarśa dvijaputraṃ taṃ puro yātaṃ śikhidhvajaḥ || 58 ||

With a gentle smile on her face, she went ahead of her husband. Shikhidhvaja, who had gone before, saw that Brahmin's son.

मुस्कुराते हुए चेहरे से, वह अपने पति के आगे चली गई | शिखिध्वज, जो पहले ही चला गया था, उस ब्राह्मण के बेटे को देखा |

6.85.59

वनान्तरादुपायातं तपो मूर्तिमिवास्थितम्। द्रवत्कनकगौराङ्गं मुक्ताहारविभूषितम् ॥ ५९ ॥

vanāntarādupāyātaṃ tapo mūrtimivāsthitam | dravatkanakagaurāṅgaṃ muktāhāravibhūṣitam || 59 ||

Coming from the depths of the forest, he stood like the embodiment of penance, with a body shining like molten gold, adorned with a pearl necklace.

जंगल की गहराई से आते हुए, वह तपस्या का स्वरूप लग रहा था, पिघले हुए सोने की तरह चमकता हुआ शरीर, मोती के हार से सजा हुआ |

6.85.60

शुक्लयज्ञोपवीताङ्गं शुक्लाम्बरयुगावृतम्। कमण्डलुधरं कान्तं पुरो यातं शिखिध्वजः ॥ ६० ॥

śuklayajñopavītāṅgaṃ śuklāmbarayugāvṛtam | kamaṇḍaludharaṃ kāntaṃ puro yātaṃ śikhidhvajaḥ || 60 ||

Wearing a sacred thread and white garments, holding a water pot, and beautiful, Shikhidhvaja saw him coming before.

सूत्र और सफेद वस्त्रों से ढंके हुए, पानी का घड़ा लेकर, और सुंदर, शिखिध्वज ने उसे आगे आते हुए देखा |

6.85.61

व्याप्तप्रकोष्ठद्विगुणेनाक्षसूत्रेण चारुणा। भूमावलग्नगात्रेण किष्कुमात्रेण च स्थितम् ॥ ६१ ॥

vyāptaprakoṣṭhadviguṇenākṣasūtreṇa cāruṇā | bhūmāvalagnagātreṇa kiṣkumātreṇa ca sthitam || 61 ||

With a beautiful thread twice the length of the span of the hand, lying on the ground with a body the size of a kisku (a measure of length), it is situated.

हाथ के फैलाव की दोगुनी लंबाई वाले सुंदर धागे से, जिसका शरीर किस्कु (एक लंबाई की माप) के बराबर है, वह धरती पर पड़ा हुआ है।

6.85.62

कुन्तलव्याप्तमूर्धानं सालिमालमिवाम्बुजम्। भासयन्तं प्रदेशं तं शारीरैर्दीप्तिमण्डलैः ॥ ६२ ॥

kuntalavyāptamūrdhānaṃ sālimālamivāmbujam | bhāsayantaṃ pradeśaṃ taṃ śārīrairdīptimaṇḍalaiḥ || 62 ||

With hair covering the head like a garland of rice grains, illuminating that region with bodily radiance.

सिर पर बालों की लट ऐसे फैली हुई है जैसे चावल की माला, जो अपनी शरीर की चमक से उस क्षेत्र को प्रकाशित कर रही है।

6.85.63

कुण्डलाभूषितमुखं नवमर्कमिवोदितम्। शिखासंप्रोतमन्दारं शृङ्गस्थेन्दुमिवाचलम्॥ ६३॥

kuṇḍalābhūṣitamukhaṃ navamarkamivoditam | śikhāsaṃprotamandāraṃ śṛṅgasthaindumivācalam || 63 ||

With a face adorned with earrings, shining like the newly risen sun, with a topknot of matted hair like the moon on the mountain peak.

कानों में कुण्डल पहने हुए चेहरा, नवोदित सूर्य की तरह चमक रहा है, और पहाड़ की चोटी पर चंद्रमा की तरह जटाओं का शिखा।

6.85.64

कान्तोपशान्तवपुषमूर्जितं विजितेन्द्रियम्। हिमाभभस्मतिलकं भूषितालोकसुन्दरम्॥ ६४॥

kāntopaśāntavapuṣamūrjitaṃ vijitendriyam | himābhbhastilakaṃ bhūṣitālokasundaram || 64 ||

With a beautiful body, calm and radiant, with senses under control, adorned with ashes resembling snow, beautifying the world.

सुंदर, शांत और तेजस्वी शरीर, इंद्रियों पर विजय प्राप्त, बर्फ की तरह सफेद भस्म से सजा हुआ, जो दुनिया को सुंदर बनाता है।

6.85.65

मेरुहेमतटीलीनपूर्णेन्दुमिव चञ्चलम्। तमालोक्य द्विजसुतं समुत्तस्थौ शिखिध्वजः॥ ६५॥

meruhemataṭīlīnapūrṇendumiva cañcalam | tamālokya dvijasutaṃ samuttasthau śikhidhvajaḥ || 65 ||

Like the full moon submerged in the golden waters of Meru, flickering, seeing the son of the Brahmin, Shikhidhvaja stood up.

मेरु के स्वर्णिम जल में डूबा हुआ पूर्ण चंद्रमा की तरह चंचल, ब्राह्मण के पुत्र को देखकर, शिखिध्वज उठा।

6.85.66

देवपुत्रागमधिया संपरित्यक्तपादुकः। देवपुत्र नमस्कार इदमासनमास्यताम्॥ ६६॥

devaputrāgamadhiyā saṃparityaktapādukaḥ | devaputra namaskāra idamāsanamāsyatām || 66 ||

With the thought of the arrival of the son of the god, having removed his sandals, he said, 'O son of the god, accept this seat.'

देव के पुत्र के आगमन की सोचकर, अपने जूते उतारकर, उसने कहा, 'हे देवपुत्र, यह आसन स्वीकार करें।'

6.85.67

इत्यस्य दर्शयामास पाणिना पत्रविष्टरम्। ददौ च द्विजपुत्रस्य पुष्पमुष्टिं करोत्करे॥ ६७॥

ityasya darśayāmāsa pāṇinā patraviṣṭaram | dadau ca dvijaputrasya puṣpamuṣṭiṃ karotkare || 67 ||

Thus, he showed him the leafy seat with his hand and gave a handful of flowers to the son of the Brahmin.

इस प्रकार, उसने अपने हाथ से पत्तों की सीट दिखाई और ब्राह्मण के पुत्र को एक मुट्ठी भर फूल दिए।

6.85.68

चन्द्रः कुमुदखण्डस्य प्रालेयमिव पल्लवे। हे राजर्षे नमस्तुभ्यमिति द्विजसुतोऽवदत्॥ ६८॥

candraḥ kumudakhaṇḍasya prāleyamiva pallave | he rājarṣe namastubhyamiti dvijasuto'vadat || 68 ||

Like the moon to the fragment of a lotus in the cold season on a leaf, the son of the Brahmin said, 'O royal sage, salutations to you.'

ठंडे मौसम में पत्ते पर कमल के टुकड़े पर चंद्रमा की तरह, ब्राह्मण के पुत्र ने कहा, 'हे राजर्षि, आपको प्रणाम।'

6.85.69

गृहीत्वा कुसुमान्यस्माद्विवेश पत्रविष्टरे । शिखिध्वज उवाच । देवपुत्र महाभाग कुत आगमनं कृतम् । दिवसः सफलो मन्ये यत्त्वामद्यास्मि दृष्टवान् ॥ ६९ ॥

gṛhītvā kusumānyasmād vivveśa patraviṣṭare | śikhidhvaja uvāca | devaputra mahābhāga kuta āgamanaṃ kṛtam | divasaḥ saphalo manye yattvāmadhyāsmi dṛṣṭavān || 69 ||

Taking the flowers from him, he sat on the leafy seat. Shikhidhvaja said, 'O fortunate son of the god, from where have you come? I consider this day auspicious because I have seen you today.'

उससे फूल लेकर, उसने पत्तों की सीट पर बैठा। शिखिध्वज ने कहा, 'हे भाग्यशाली देवपुत्र, आप कहाँ से आए हैं? मैं इस दिन को शुभ मानता हूँ क्योंकि मैंने आज आपको देखा है।'

6.85.70

इदमर्घ्यमिदं पाद्यं पुष्पाणीमानि मानद । इमा प्रग्रथिता माला गृह्यन्तां भद्रमस्तु ते ॥ ७० ॥

idamarghyamidaṃ pādyaṃ puṣpāṇīmāni mānada | imā pragrathitā mālā gṛhyantāṃ bhadramastu te || 70 ||

Here is the arghya, here is the water for washing the feet, here are the flowers, O respectful one. Here are the garlands that have been prepared, may they be accepted, may you be blessed.

यह अर्घ्य है, यह पाद्य है, यह फूल हैं, हे आदरणीय। यह तैयार की गई मालाएँ हैं, इन्हें स्वीकार करें, आपका कल्याण हो।

6.85.71

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा पाद्यमर्घ्यं च मालां पुष्पाणि चानघ । शिखिध्वजस्तदिष्टायै ददौ देव्यै यथाखिलम् ॥ ७१ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā pādyam arghyaṃ ca mālāṃ puṣpāṇi cānagha | śikhidhvajas tadiṣṭāyai dadau devyai yathākhilam || 71 ||

Śrīvāsiṣṭha said, Having spoken thus, the faultless Śikhidhvaja offered foot-washing water, arghya, garlands, and flowers to the goddess according to her wish.

श्रीवासिष्ठ ने कहा, इस प्रकार कहकर निष्कलंक शिखिध्वज ने देवी के इच्छानुसार पाद्य, अर्घ्य, माला और फूल दिए।

6.85.72

चूडालोवाच । सुबहूनि परिभ्रान्तो भूतलायतनान्यहम् । त्वत्तः पूजा यथा प्राप्ता मयेयं न तथान्यतः ॥ ७२ ॥

cūḍālovāca | subahūni paribhrānto bhūtalāyatanānyaham | tvattaḥ pūjā yathā prāptā mayeyaṃ na tathānyataḥ || 72 ||

Cūḍāla said, I have wandered through many places on earth, but I have not received such worship from anyone else as I have from you.

चूडाला ने कहा, मैंने पृथ्वी पर बहुत से स्थानों की यात्रा की है, लेकिन मुझे किसी और से ऐसी पूजा नहीं मिली जैसी मुझे आपसे मिली है।

6.85.73

पेशलेनानुरूपेण प्रश्रयेणामुनानघ । मन्येऽहं नूनमत्यन्तचिरंजीवी भविष्यसि ॥ ७३ ॥

peśalena anurūpeṇa praśrayeṇāmunānagha | manyeahaṃ nūnamatyantaciraṃjīvī bhaviṣyasi || 73 ||

I believe that you, O faultless one, will certainly live a very long life, with your humble, appropriate, and affectionate behavior.

मैं मानती हूँ कि आप, हे निष्कलंक, अपने विनम्र, उपयुक्त और प्रेमपूर्ण व्यवहार से निश्चित रूप से बहुत लंबी उम्र तक जीवित रहेंगे।

6.85.74

शान्तेन मनसोदारमारादुन्मुक्तकल्पनम् । निर्वाणार्थं तपः साधो कच्चित्संभृतवानसि ॥ ७४ ॥

śāntena manasodāramārādunmuktakalpanam | nirvāṇārthaṃ tapaḥ sādho kaccitsaṃbhṛtavānasi || 74 ||

O virtuous one, have you undertaken austerities for the sake of liberation, with a calm and generous mind, free from all imaginings?

हे साधु, क्या आपने शांत और उदार मन से, सभी कल्पनाओं से मुक्त होकर, मोक्ष के लिए तपस्या की है?

6.85.75

असिधारासमं सौम्य शान्तव्रतमिदं तव । स्फीतं यद्राज्यमुत्सृज्य महावननिषेवणम् ॥ ७५ ॥

asidhārāsamam sauṃya śāntavratamidaṃ tava | sphītaṃ yad rājyamutsṛjya mahāvananiṣevaṇam || 75 ||

O gentle one, your vow of tranquility is as steady as the flow of a sword's edge, having abandoned your prosperous kingdom for the service of the great forest.

हे सौम्य, आपका शांति का व्रत तलवार की धार के समान स्थिर है, जिसमें आपने अपने समृद्ध राज्य को महावन की सेवा के लिए छोड़ दिया है।

6.85.76

शिखिध्वज उवाच । जानासि भगवन्सर्वं देवस्त्वं कोऽत्र विस्मयः । श्रियैव लोकोत्तरया ज्ञायसे चिह्नरूपया ॥ ७६ ॥

śikhidhvaja uvāca | jānāsi bhagavansarvaṃ devastvaṃ ko'tra vismayaḥ | śriyaiva lokottarayā jñāyase cihnarūpayā || 76 ||

Shikhidhvaja said: You know everything, O Lord, what is the wonder here? You are recognized by the extraordinary signs of prosperity.

शिखिध्वज ने कहा: हे भगवान्, आप सब कुछ जानते हैं, यहाँ क्या आश्चर्य है? आप असामान्य समृद्धि के चिह्नों से पहचाने जाते हैं।

6.85.77

एतान्यङ्गानि ते चन्द्राद्धटितानीति मे मतिः । अथवा किं समालोकादमृतेनेव सिञ्चसि ॥ ७७ ॥

etānyaṅgāni te candrāddhaṭitānīti me matiḥ | athavā kiṃ samālokādamṛteneva siñcasi || 77 ||

These limbs of yours are as if stolen from the moon, this is my opinion. Or, do you sprinkle with nectar just by looking?

ये आपके अंग चंद्रमा से चुराए हुए लगते हैं, यह मेरा विचार है। या फिर, क्या आप देखने से ही अमृत छिड़कते हैं?

6.85.78

अस्ति मे दयिता कान्ता पाति मद्राज्यमद्य तत् । तवेव तस्या दृष्टानि तान्यङ्गानीह सुन्दर ॥ ७८ ॥

asti me dayitā kāntā pāti madrājyamadya tat | taveva tasyā dṛṣṭāni tānyaṅgānīha sundara || 78 ||

I have a beloved wife who rules my kingdom now. She has seen your beautiful limbs here.

मेरी एक प्रिय पत्नी है जो अब मेरे राज्य पर शासन करती है। उसने यहाँ आपके सुंदर अंगों को देखा है।

6.85.79

उपशान्तं च कान्तं च वपुरापादमस्तकम् । शृङ्गं शुभ्राम्बुदेनेव पुष्पेणाच्छादयामुना ॥ ७९ ॥

upaśāntaṃ ca kāntaṃ ca vapurāpādamastakam | śṛṅgaṃ śubhrāmbudenaiva puṣpeṇācchādayāmunā || 79 ||

Your body, from foot to head, is calm and beautiful, like a white cloud covered with flowers.

आपका शरीर, पैर से सिर तक, शांत और सुंदर है, जैसे फूलों से ढका हुआ सफेद बादल।

6.85.80

निष्कलङ्केन्दुसंकाशमङ्गमादित्यतेजसा । मन्ये ते ग्लानिमायाति सुमनःपत्रपेलवम् ॥ ८० ॥

niṣkalaṅkendusaṅkāśamaṅgamādityatejasā | manye te glānimāyāti sumanaḥpatrapelavam || 80 ||

I think your limbs, which are as radiant as the spotless moon and the sun, are becoming weak like tender flower petals.

मुझे लगता है कि आपके अंग, जो निष्पाप चंद्रमा और सूर्य की तरह चमकते हैं, कोमल फूल की पंखुड़ियों की तरह कमजोर हो रहे हैं।

6.85.81

देवार्चनायोपचितमिदमित्थं सितं मया । अङ्ग त्वदङ्गसङ्गेन तत्प्रयातु कृतार्थताम् ॥ ८१ ॥

devārcanāyopacitamidamitthaṃ sitaṃ mayā | aṅga tvadaṅgasangena tatprayātu kṛtārthatām || 81 ||

This white cloth, prepared for the worship of the gods, may it achieve its purpose through contact with your body.

यह देवार्चना के लिए तैयार किया गया सफेद कपड़ा, तुम्हारे शरीर के स्पर्श से अपने उद्देश्य को प्राप्त हो।

6.85.82

जीवितं याति साफल्यं स्वमभ्यागतपूजया । देवादप्यधिकं पूज्यः सतामभ्यागतो जनः ॥ ८२ ॥

jīvitaṃ yāti sāphalyaṃ svamabhyāgatapūjayā | devādapyadhikaṃ pūjyaḥ satāmabhyāgato janaḥ || 82 ||

Life attains fulfillment through the worship of a guest who has come of his own accord. A person who has come of his own accord is more worthy of worship than the gods themselves.

जीवन अपने आप आए हुए अतिथि की पूजा से सार्थक होता है। अपने आप आया हुआ व्यक्ति स्वयं देवताओं से अधिक पूजनीय है।

6.85.83

तत्कस्त्वं कस्य पुत्रस्त्वं किमायातोऽस्यनुग्रहातेतन्मे संशयं चिन्धि विमलेन्दुसमानन ॥ ८३ ॥

tatkastvaṃ kasya putrastvaṃ kimāyāto'syanugrahātetanme saṃśayaṃ chindhi vimalendusamānana || 83 ||

Who are you? Whose son are you? Why have you come here by his grace? Please dispel this doubt of mine, O one with a face like the spotless moon.

तुम कौन हो? तुम किसके पुत्र हो? तुम उनकी कृपा से यहाँ क्यों आए हो? कृपया मेरा यह संदेह दूर करो, हे निर्मल चंद्रमा के समान मुखवाले।

6.85.84

ब्राह्मण उवाचराजन्मे शृणु वक्ष्यामि यथापृष्टमखण्डितम्को नाम परिपृच्छन्तं विनीतं वञ्चयेत्पुमान् ॥ ८४ ॥

brāhmaṇa uvācarājanme śṛṇu vakṣyāmi yathāpṛṣṭamakhaṇḍitamko nāma paripṛcchantaṃ vinītaṃ vañcayetpumān || 84 ||

The Brahmin said: O King, listen, I will tell you as you have asked. No man should deceive a humble inquirer with an untruthful name.

ब्राह्मण ने कहा: हे राजन्, सुनो, मैं तुम्हें जैसे तुमने पूछा है, वैसे ही बताऊँगा। कोई व्यक्ति एक विनम्र जिज्ञासु को असत्य नाम से धोखा नहीं देना चाहिए।

6.85.85

अस्त्यस्मिञ्जगतीकोशे शुद्धात्मा नारदो मुनिःपुण्यलक्ष्म्या मुखे कान्ते कर्पूरतिलकोपमः ॥ ८५ ॥

astyasmiñjagatīkośe śuddhātmā nārado muniḥpuṇyalakṣmyā mukhe kānte karpūratilakopamaḥ || 85 ||

In this world, there exists the pure-souled sage Narada, who is adorned with auspicious marks on his beautiful face, resembling a tilak of camphor.

इस जगत् में, शुद्धात्मा ऋषि नारद हैं, जिनके सुंदर मुख पर शुभ चिह्न हैं, जो कर्पूर के तिलक के समान हैं।

6.85.86

स कदाचिन्मुनिर्देवो गुहायां ध्यानमास्थितः । तत्र हेमतटे गङ्गा वहत्युरुतरङ्गिणी ॥ ८६ ॥

sa kadācinmunirdevo guhāyāṃ dhyānamāsthitaḥ | tatra hematṭe gaṅgā vahatyurutaraṅgiṇī || 86 ||

Once, the divine sage was engaged in meditation in a cave. There, the Ganga, with its golden banks, flowed with mighty waves.

एक बार, दिव्य मुनि एक गुफा में ध्यान में लीन थे। वहाँ, सोने के तट पर गंगा बह रही थी, जिसमें भारी तरंगें थीं।

6.85.87

मेरुलक्ष्म्यां स्फुरद्रूपा भान्ति हारलता यथा । एकदा नारदमुनिर्ध्यानान्ते स सरित्तटे ॥ ८७ ॥

merulakṣmyāṃ sphuradrūpā bhānti hāralatā yathā | ekadā nāradamunirdhyānānte sa sarittṭe || 87 ||

In the splendor of Meru, it shines like a garland of pearls. Once, after meditation, sage Narada saw it on the riverbank.

मेरु की शोभा में, यह मोती की माला की तरह चमकता है। एक बार, ध्यान के बाद, मुनि नारद ने इसे नदी के किनारे पर देखा।

6.85.88

ध्वनद्वलयमश्रौषील्लीलाकलकलारवम् । किमेतदित्यसौ किंचिज्जातप्रायकुतूहलः ॥ ८८ ॥

dhvanadvlayamaśrauṣīllīlākalakalāravam | kimetadityasau kiṃcijjātaprāyakutūhalaḥ || 88 ||

He heard the sound of playful splashing. 'What is this?' he wondered, becoming somewhat curious.

उसने खेल की चपलता की आवाज सुनी। 'यह क्या है?' उसने सोचा, और थोड़ा उत्सुक हो गया।

6.85.89

हेलयालोकयन्नद्यामपश्यल्ललनागणम् । रम्भातिलोत्तमाप्रायं निर्यातं जललीलया ॥ ८९ ॥

helayālokayannadyāmapaśyallalanāgaṇam | rambhātilottamāprāyaṃ niryātaṃ jalalīlayā || 89 ||

Looking playfully at the river, he saw a group of beautiful women who had come out to play in the water.

खेल से नदी की ओर देखते हुए, उसने एक समूह सुंदर महिलाओं को देखा जो पानी में खेलने के लिए बाहर आई थीं।

6.85.90

क्रीडन्तं त्यक्तवसनं देशे पुरुषवर्जिते । काञ्चनाम्भोजमुकुलसंकाशैः स्तनमण्डलैः ॥ ९० ॥

krīḍantaṃ tyaktavasanaṃ deśe puruṣavarjite | kāñcanāmbhojamukulasaṅkāśaiḥ stanamaṇḍalaiḥ || 90 ||

He saw them playing, having discarded their clothes, in a place devoid of men, with breasts resembling golden lotus buds.

उसने उन्हें खेलते हुए देखा, जिन्होंने अपने कपड़े उतार दिए थे, एक ऐसे स्थान पर जहाँ कोई पुरुष नहीं था, और जिनके स्तन सोने के कमल के बटन की तरह थे।

6.85.91

परिवेल्लितमन्योन्यं फलकान्तं द्रुमं यथा । द्रुतहेमरसापूरनिर्भराभोगभासुरैः ॥ ९१ ॥

parivellitamanyonyaṃ phalakāntaṃ drumam yathā | drutahemarasāpūraniṛbharābhogabhāsuraiḥ || 91 ||

Just as trees intertwine with each other, their branches laden with golden fruits, shining brightly with the weight of their abundance.

जैसे पेड़ एक दूसरे से गुंथे हुए होते हैं, उनकी डालियाँ सोने के फलों से भरी हुई, अपनी भारी उपज से चमकती हुई।

6.85.92

कुर्वन्तमुरुभिः काममन्दिरस्तम्भसंचयम्। निर्मलीकृतचन्द्रेण व्याप्तां व्योमविलासिनीम्॥ ९२॥

kurvantamurubhiḥ kāmamandirastambhasaṃcayam | nirmalīkṛtacandreṇa vyāptāṃ vyomavilāsinīm || 92 ||

Creating a vast collection of temple pillars with great desire, the sky adorned with a purified moon, spreading its charm.

बड़े इच्छा से मंदिर के स्तंभों का एक विशाल संग्रह बनाते हुए, शुद्ध चंद्रमा से सजा आकाश, अपनी मोहकता फैलाता हुआ।

6.85.93

लावण्यरसपूरेण तर्जयन्तमिवापगाम्। प्राकारैरमरोद्यानरथचक्रैर्मनोभुवः॥ ९३॥

lāvaṇyarasapūreṇa tarjayantamivāpagām | prākārairamarodyānarathacakrairmamobhuvaḥ || 93 ||

With the essence of beauty overflowing, as if challenging the river, with the enclosures of the divine gardens and the chariot wheels of the mind.

सौंदर्य की सारता से भरपूर, जैसे नदी को चुनौती देता हुआ, दिव्य उद्यानों की घेराबंदी और मन के रथ के पहियों के साथ।

6.85.94

उत्पथार्पितगङ्गाम्बु नितम्बतटसेतुभिः। सर्वत्र दृष्टसर्वाङ्गं विश्वरूपमिव स्थितम्॥ ९४॥

utpathārpitagaṅgāmbu nitambataṭasetubhiḥ | sarvatra dṛṣṭasarvāṅgaṃ viśvarūpamiva sthitam || 94 ||

With the Ganges water placed on the wrong path, with the bridges of the hips and banks, seen everywhere as the universal form.

गंगा के जल को गलत मार्ग पर रखा हुआ, नितंब और तटों के पुलों के साथ, हर जगह विश्वरूप के रूप में दिखाई देता हुआ।

6.85.95

प्रतिबिम्बितसर्वाङ्गमन्योन्यादर्शतां गतम्। कालकल्पतरोर्वर्षविटपात्पक्षपल्लवात्॥ ९५॥

pratibimbitasarvāṅgamanyonyādarśatāṃ gatam | kālakalpatarorvarṣaviṭapātpakṣapallavāt || 95 ||

Reflecting all parts in each other, attaining the state of mutual reflection, from the branches and leaves of the wish-fulfilling tree of time.

एक दूसरे में सभी अंगों को प्रतिबिंबित करते हुए, परस्पर प्रतिबिंब की अवस्था प्राप्त करते हुए, समय के कल्पवृक्ष की डालियों और पत्तियों से।

6.85.96

विविधर्तुलताजालाद्दिनश्रीकलिकाकुलात्। आलोकपुष्परजसो जाताद्गगनकानने॥ ९६॥

vividhartulatājālāddinaśrīkalikākulāt | ālokapuṣparajaso jātādgaganakānane || 96 ||

From the diverse network of seasons, from the day's glory mixed with the buds, from the sky's forest born of the pollen of light-flowers.

विविध ऋतुओं के जाल से, दिन की शोभा से मिश्रित कलिकाओं से, प्रकाश के फूलों के पराग से उत्पन्न आकाश के वन से।

6.85.97

स्फुरज्जलखगप्रोतात्सप्ताब्ध्येकालवाडकात्। स्तनस्तबकवृन्देषु स्पर्धयातिरसान्वितम्॥ ९७॥

sphurajjalakhagaprotātsaptābdhyekālavāḍakāt | stanastabakavṛndeṣu spardhayātirasānvitam || 97 ||

From the sparkling water and the birds, from the seven oceans and the unique time, in the clusters of breast-lotuses, filled with intense competition.

चमकते जल और पक्षियों से, सात समुद्रों और एकमात्र समय से, स्तन-कमलों के समूहों में, तीव्र स्पर्धा से भरा हुआ।

6.85.98

उद्धृत्योद्धृत्य संपूर्णदलिताम्भोजपल्लवम् । आलोलालककेशाक्षितारकादिमधुव्रतम् ॥ ९८ ॥

uddhṛtyoddhṛtya saṃpūrṇadalitāmbhojapallavam | ālolālakakeśākṣitārakādimadhuvratam || 98 ||

Lifting up the fully blossomed lotus petals, with the playful locks of hair, eyes, and stars, the first honey vow.

पूर्ण रूप से खिले कमल के पंखुड़ियों को उठाकर, खेलती लटों, आँखों और तारों के साथ, पहला मधु व्रत।

6.85.99

अमृतापद्विघाताय कोशसंचयकारिभिः । दुष्प्रापे भूतसंघानां विकसत्कनकाम्बुजे ॥ ९९ ॥

amṛtāpadvighātāya kośasaṃcayakāribhiḥ | duṣprāpe bhūtasaṃghānāṃ vikasatkanakāmbuje || 99 ||

For the destruction of the nectar-footed, by those who accumulate treasures, in the difficult-to-reach assembly of beings, in the blossoming golden lotus.

अमृत पद के विनाश के लिए, धन संचय करने वालों द्वारा, प्राप्त करना कठिन प्राणियों के समूह में, खिले हुए सोने के कमल में।

6.85.100

पद्मिनीपल्लवाच्छन्ने गुप्ते मेरोर्गुहान्तरे । शीतले स्वर्धुनीतीरे तोयोन्मृष्टमले सुरैः ॥ १०० ॥

padminīpallavācchannē guptē mērorguhāntarē | śītalē svardhunītīrē toyōnmṛṣṭamalē suraiḥ || 100 ||

Covered by the lotus petals, hidden in the cave of Meru, cool on the banks of the celestial river, cleansed by the waters, by the gods.

कमल के पंखुड़ियों से ढका हुआ, मेरु की गुफा में छिपा हुआ, दिव्य नदी के किनारे ठंडा, जल से धुला हुआ, देवताओं द्वारा।

6.85.101

चन्द्रबिम्बकलापूरमेकत्रैवोपसंहृतम् । स्त्रैणमालोक्य तत्कान्तं सहसैव मनो मुनेः ॥ १०१ ॥

candrabimbakalāpūramekatraivopasaṃhṛtam| straiṇamālokya tatkāntaṃ sahasaiva mano muneḥ|| 101 ||

The moon's beauty was gathered in one place| Seeing the beloved woman, the sage's mind was suddenly captivated

चन्द्रमा की सुंदरता एक जगह इकट्ठी हो गई| स्त्री को देखकर उसके प्रिय का मन अचानक मोहित हो गया

6.85.102

अनाश्रितविवेकांशं बभूवानन्दितं स्फुरत् । आनन्दवलिते चित्ते क्षुब्धे प्राणानिले स्थिते ॥ १०२ ॥

anāśritavivekāṃśaṃ babhūvānanditaṃ sphurat| ānandavalite citte kṣubdhe prāṇānile sthite|| 102 ||

Without relying on discrimination, it became joyful and vibrant| In the mind filled with joy, the life breath was agitated and still

विवेक पर आश्रित न होकर, वह आनंदित और चमकदार हो गया| आनंद से भरे मन में, प्राणवायु उत्तेजित और स्थिर थी

6.85.103

बभूव तस्य हृष्टस्य मदनस्खलितं तदा । फलं रसापूर्णमिव ग्रीष्मान्त इव तोयदः ॥ १०३ ॥

babhūva tasya hṛṣṭasya madanaskhalitaṃ tadā| phalaṃ rasāpūrṇamiva grīṣmānta iva toyadaḥ|| 103 ||

Then, for the delighted one, it became as if intoxicated with love| Like a fruit full of juice, like a cloud at the end of summer

तब, प्रसन्न व्यक्ति के लिए, वह प्रेम में मदहोश हो गया| जैसे रस से भरा हुआ फल, जैसे ग्रीष्म के अंत में बादल

6.85.104

प्रत्यग्रपादपश्छिन्नलतावृन्त इवोत्तम । अवश्यायकणस्पन्दी शशाङ्क इव वा मुनिः ॥ १०४ ॥

pratyagrapādapacchinnalatāvṛnta ivottama| avaśyāyakaṇaspandī śaśāṅka iva vā muniḥ|| 104 ||

Like a tree with broken branches, or like the moon| The sage was trembling with inevitable particles

जैसे टूटी हुई डालों वाला पेड़, या जैसे चंद्रमा| ऋषि अनिवार्य कणों से कांप रहा था

6.85.105

विसं द्विधापातमिव गलत्सारारसोऽभवत् ॥ १०५ ॥

visaṃ dvidadhāpātamiva galatsāraraso'bhavat|| 105 ||

It became like the essence of nectar falling in two parts

वह जैसे अमृत का सार दो हिस्सों में गिरा हुआ हो

6.85.106

शिखिध्वज उवाच । तादृशोऽपि बहुज्ञोपि जीवन्मुक्तोऽप्यसौ मुनिः । निरिच्छोऽपि निरागोपि न किंचिदुपमोऽप्यलम् । सबाह्याभ्यन्तरं नित्यमाकाशविशदोपि च ॥ १०६ ॥

śikhidhvaja uvāca | tādṛśo'pi bahujñopi jīvanmukto'pyasau muniḥ | niriccho'pi nirāgopi na kiṃcidupamo'pyalam | sabāhyābhyantaraṃ nityamākāśaviśadopi ca || 106 ||

Shikhidhvaja said: Even though he is such a wise and liberated sage, devoid of desires and attachments, he is incomparable and content. He is always pure and transparent, both internally and externally.

शिखिध्वज ने कहा: यद्यपि वह ऐसा विद्वान और जीवनमुक्त मुनि है, इच्छा और आसक्ति से रहित है, फिर भी वह अनुपम और संतुष्ट है | वह बाहर और अंदर से नित्य शुद्ध और पारदर्शी है |

6.85.107

नारदोपि कथं ब्रह्मन् मदनस्खलितोऽभवत् ॥ १०७ ॥

nārado'pi kathaṃ brahman madanasakhaliot'bhava || 107 ||

How did even Narada, O Brahman, become disturbed by passion?

हे ब्रह्मन्, नारद भी कैसे काम से विचलित हो गए?

6.85.108

चूडालोवाच । सर्वस्या एव राजर्षे भूतजातेर्जगत्त्रये । देवादेरपि देहोयं द्वयात्मैव स्वभावतः ॥ १०८ ॥

cūḍālo uvāca | sarvasyaiva rājarṣe bhūtajāterjagattraye | devāderapi dehoyaṃ dvayātmaiva svabhāvataḥ || 108 ||

Chudala said: O royal sage, in all the three worlds, the body of every being, including the gods, is inherently dual in nature.

चूडाला ने कहा: हे राजर्षि, तीनों लोकों में, सभी प्राणियों का शरीर, देवताओं का भी, स्वाभाविक रूप से द्वैत स्वभाव का होता है |

6.85.109

अज्ञमस्त्वथ तज्ज्ञं वा यावत्स्वान्तं शरीरकम्। सर्वमेव जगत्यङ्ग सुखदुःखमयं स्मृतम्॥ १०९॥

ajñamastvatha tajjñaṃ vā yāvatsvāntaṃ śarīrakam | sarvameva jagatyanga sukhaduḥkhamayaṃ smṛtam || 109 ||

Whether ignorant or wise, as long as one has a body, everything in the world is considered to be a mixture of pleasure and pain.

चाहे अज्ञानी हो या ज्ञानी, जब तक शरीर है, सारा जगत सुख-दुःख का मिश्रण माना जाता है |

6.85.110

तृप्त्यादिना पदार्थेन केनचिद्वर्धते सुखम्। आलोक इव दीपेन महाम्बुधिरिवेन्दुना॥ ११०॥

tṛptyādinā padārthea kenacidvardhate sukhaṃ | āloka ivadīpena mahāmbudhirivendunā || 110 ||

Happiness increases with any object of satisfaction, just as light increases with a lamp, and the great ocean increases with the moon.

सुख किसी भी संतुष्टि के वस्तु से बढ़ता है, जैसे प्रकाश दीपक से बढ़ता है, और महासागर चंद्रमा से बढ़ता है |

6.85.111

क्षुधादिना पदार्थेन दुःखं केनचिदेव हि। तमो मेघपटेनेव स्वभावो ह्यत्र कारणम्॥ १११॥

kṣudhādinā padārthena duḥkhaṃ kenacideva hi | tamo meghapaṭeneva svabhāvo hyatra kāraṇam || 111 ||

Hunger and other such objects cause suffering to some extent. Just as darkness is caused by clouds, the nature here is the cause.

भूख और अन्य ऐसे पदार्थ कुछ हद तक दुःख पैदा करते हैं। जैसे अंधेरा बादलों से होता है, वैसे ही यहाँ स्वभाव कारण है।

6.85.112

स्वरूपे निर्मले सत्ये निमेषमपि विस्मृते। दृश्यमुल्लासमाप्नोति प्रावृषीव पयोधरः॥ ११२॥

svarūpe nirmale satye nimeṣamapi vismṛte | dṛśyamullāsamāpnoti prāvṛṣīva payodharaḥ || 112 ||

Even if the pure and true nature is forgotten for a moment, the visible world appears like clouds in the rainy season.

चाहे शुद्ध और सत्य स्वरूप एक पल के लिए भूल जाए, दृश्य जगत वर्षा ऋतु के बादलों की तरह प्रकट होता है।

6.85.113

अनारतानुसंधानादप्युन्मेषमविस्मृते। स्वरूपे नोल्लसत्येष चित्ते दृश्यपिशाचकः॥ ११३॥

anāratānusaṃdhānādapyunmeṣamavismṛte | svarūpe nollasatyēṣa citte dṛśyapiśācakaḥ || 113 ||

Even with continuous contemplation and without forgetting for a moment, this does not manifest in the true nature of the mind, which is like a ghost in the visible world.

लगातार चिंतन और एक पल के लिए भूलने के बिना भी, यह मन के सच्चे स्वरूप में प्रकट नहीं होता, जो दृश्य जगत में भूत की तरह है।

6.85.114

यथा तमःप्रकाशाभ्यामहोरात्रौ स्थितिं गतौ। तथैव सुखदुःखाभ्यां शरीरं स्थितिमागतम्॥ ११४॥

yathā tamaḥprakāśābhyāmahorātrau sthitiṃ gatau | tathaiva sukhaduḥkhābhyāṃ śarīraṃ sthitimāgatam || 114 ||

Just as day and night are established by darkness and light, so too the body is established by happiness and sorrow.

जैसे रात और दिन अंधेरे और उजाले से स्थापित होते हैं, वैसे ही शरीर सुख और दुःख से स्थापित होता है।

6.85.115

तज्ज्ञस्य त्वङ्ग लगतो मनागपि न तद्वशात्। यथा शुभाशुभौ रागादिनाक्रान्ततरौ मणेः ॥ ११५ ॥

tajjñasya tvaṅga lagato manāgapi na tadvāśāt | yathā śubhāśubhau rāgādināākrāntatarau maṇeḥ || 115 ||

Even if one knows that, the body does not become free from it even a little. Just as good and bad are more influenced by attachment, so is the case with the mind.

चाहे कोई उसे जानता हो, शरीर उससे थोड़ा भी मुक्त नहीं होता। जैसे अच्छा और बुरा आसक्ति से अधिक प्रभावित होते हैं, वैसे ही मन का मामला है।

6.85.117

पुरःस्थवस्तुभावेन रञ्जनां स्फटिको यथा। तज्ज्ञस्तथा नैति बोधाज्जीवन्मुक्तमतिर्मुनिः ॥ ११७ ॥

puraḥsthavastubhāvena rañjanāṃ sphaṭiko yathā | tajjñastathā naeti bodhājjīvanmuktamatirmuniḥ || 117 ||

Just as a crystal takes on the color of an object placed in front of it, a wise person does not attain liberation through mere knowledge.

जैसे स्फटिक अपने सामने रखे गए वस्तु का रंग ले लेता है, वैसे ही एक ज्ञानी व्यक्ति केवल ज्ञान से जीवन्मुक्त नहीं होता है।

6.85.118

वस्तुनः श्लेषमात्रेण घनरञ्जितमेति धीः। गतेऽपि वस्तुनि दृढं बुद्धिर्यत्परितापिता ॥ ११८ ॥

vastunaḥ śleṣamātreṇa ghanarañjitameti dhīḥ | gate'pi vastuni dṛḍhaṃ buddhiryatparitāpitā || 118 ||

The mind becomes deeply colored by mere contact with an object, and even after the object is gone, the mind remains strongly affected.

मन केवल वस्तु के स्पर्श से ही गहरे रंग में रँग जाता है, और वस्तु चली जाने के बाद भी मन मजबूती से प्रभावित रहता है।

6.85.119

गतेऽपि कुङ्कुमे वस्त्रं तदीयमनुरञ्जनम्। न जहाति यथा मूढस्तथा विषयरञ्जनम् ॥ ११९ ॥

gate'pi kuṅkume vastraṃ tadīyamanurañjanam | na jahāti yathā mūḍhas tathā viṣayarañjanam || 119 ||

Just as a cloth retains the scent of saffron even after the saffron is removed, so too the ignorant person does not give up the attachment to sense objects.

जैसे कपड़ा केसर की खुशबू को बरकरार रखता है भले ही केसर हटा दी गई हो, वैसे ही मूर्ख व्यक्ति इंद्रियों के विषयों के आसक्ति को नहीं छोड़ता।

6.85.120

अनेनैव क्रमेणैतौ बन्धमोक्षौ व्यवस्थितौ। भावनातानवं मोक्षो बन्धो हि दृढभावना ॥ १२० ॥

anenaiva krameṇaitau bandhamokṣau vyavasthitau | bhāvanātānavaṃ mokṣo bandho hi dṛḍhabhāvanā || 120 ||

By this very process, bondage and liberation are established. Liberation is through the diminution of attachment, while bondage is through strong attachment.

इसी क्रम से, बंधन और मुक्ति स्थापित होते हैं। मुक्ति आसक्ति के कम होने से होती है, जबकि बंधन मजबूत आसक्ति से होता है।

6.85.121

स्वोत्पत्तिकारणप्राप्तौ कथं दुःखं सुखं च वा। अभ्युदेतीति वद मे दूरस्थानामपि प्रभो ॥ १२१ ॥

svotpattikāraṇaprāptau kathaṃ duḥkhaṃ sukhaṃ ca vā | abhyudetīti vad me dūrasthānāmapi prabho || 121 ||

How does happiness or sorrow arise from the attainment of the cause of one's own birth? Please explain this to me, O Lord, even for those who are far away.

अपने जन्म के कारण को प्राप्त करने से दुःख या सुख कैसे उत्पन्न होता है? हे प्रभु, मुझे यह बताएँ, भले ही वे दूर क्यों न हों।

6.85.122

अत्युदारमतीवाच्छं बह्वर्थं वचनं तव । श्रोतुं तृप्तिं न गच्छामि मयूरोऽभ्रवेष्विव ॥ १२२ ॥

atyudāramatīvācchaṃ bahvarthaṃ vacanaṃ tava | śrotuṃ tṛptiṃ na gacchāmi mayūro'bhraraveṣviva || 122 ||

Your words are extremely generous, very desirable, and full of meaning. I am not satisfied with hearing them, just as a peacock is not satisfied with the sound of clouds.

तुम्हारे शब्द अत्यंत उदार, बहुत इच्छित और बहुत अर्थपूर्ण हैं। मैं उन्हें सुनकर तृप्त नहीं होता, जैसे मोर बादलों की आवाज से तृप्त नहीं होता।

6.85.123

चूडालोवाच । स्वोत्पत्तिकारणं हृद्यं लब्ध्वा कायाक्षिपाणिभिः । सुखसंविदियं बाला नूनमुल्लसति स्वतः ॥ १२३ ॥

cūḍālovāca | svotpattikāraṇaṃ hṛdyaṃ labdhvā kāyākṣipāṇibhiḥ | sukhasaṃvidiyaṃ bālā nūnamullasati svataḥ || 123 ||

Chudala said: Having obtained the pleasing cause of one's own origin, with the body, senses, and hands, the child certainly blossoms with the knowledge of happiness.

चूडाला ने कहा: अपने उत्पत्ति के हृदयंगम कारण को प्राप्त करके, शरीर, इंद्रियों और हाथों के साथ, बच्चा निश्चित रूप से सुख के ज्ञान से खिल उठता है।

6.85.124

हृद्गता क्षोभमायाता जीवं कुण्डलिनीगतम् । जीवस्य नियता नाड्यः पृथग्देहे स्थितिं गताः ॥ १२४ ॥

hṛdgatā kṣobhamāyātā jīvaṃ kuṇḍalinīgatam | jīvasya niyatā nāḍyaḥ pṛthagdehe sthitiṃ gatāḥ || 124 ||

The agitation that has reached the heart affects the life force that resides in the Kundalini. The channels of the life force are fixed in the separate body.

हृदय तक पहुंची अशांति कुण्डलिनी में स्थित जीव को प्रभावित करती है। जीव की नाड़ियाँ अलग-अलग शरीर में स्थित हैं।

6.85.125

प्राणावपूरिता नाडीर्जीव आक्रामति स्फुरन् ॥ १२५ ॥

prāṇāvapūritā nāḍīrjīva ākrāmati sphuran || 125 ||

The life force, vibrating, pervades the channels filled with vital energy.

जीव शक्ति, कंपित होकर, जीवन ऊर्जा से भरी नाड़ियों में व्याप्त होती है।

6.85.126

संस्पर्शैकप्रबुद्धात्मा रसो द्रुमलता इव । सुखप्रबोधसंचारे दुःखबोधागमे तथा ॥ १२६ ॥

saṃsparśaikaprabuddhātmā raso drumalatā iva | sukhaprabodhasaṃcāre duḥkhabodhāgame tathā || 126 ||

The essence, awakened by a single touch, like the sap of a tree and vine, moves with the awareness of pleasure and the arrival of pain.

स्पर्श से जागृत आत्मा का सार, वृक्ष और लता के रस की तरह, सुख की चेतना और दुःख के आगमन के साथ चलता है।

6.85.127

जीवस्य नियता नाड्यः पृथग्देहस्थितिं गताःसुखिनः प्रस्फुरत्येषा धीरताशु न दुःखिनः ॥ १२७ ॥

jīvasya niyatā nāḍyaḥ pṛthagdehasthitiṃ gatāḥsukhinaḥ prasphuratyeṣā dhīratāśu na duḥkhinaḥ || 127 ||

The fixed channels of the soul are situated in different parts of the body. They shine brightly in the wise who are happy, but not in those who are unhappy.

आत्मा की निश्चित नाड़ियाँ शरीर के अलग-अलग भागों में स्थित हैं। ये बुद्धिमान और सुखी लोगों में चमकती हैं, लेकिन दुःखी लोगों में नहीं।

6.85.128

ते हि मार्गाः सुवेषस्य कुवेषस्य न ते शुभाःयावत्प्रमाणं जीवोऽयं संशाम्यत्यपरिस्फुरन्तावत्प्रमाणमेवैनं मुक्तं मुक्तमवेहि वैयावत्प्रमाणमधिकं स्फुरति क्षुब्धमारुतम्तावत्प्रमाणमेवैनं बद्धं बद्धमवेहि मे ॥ १२८ ॥

te hi mārgāḥ suveṣasya kuveṣasya na te śubhāḥyāvatpramāṇaṃ jīvo'yaṃ saṃśāmyatyaparisphurantāvatpramāṇamevainaṃ muktaṃ muktamavehi vaiyāvatpramāṇamadhikaṃ sphurati kṣubdhamārutamtāvatpramāṇamevainaṃ baddhaṃ baddhamavehi me || 128 ||

Those paths of the well-dressed are not auspicious for the poorly dressed. As long as the soul remains calm and does not shine, consider it liberated. As long as it shines more and is agitated, consider it bound.

वे मार्ग जो सुवेष वालों के लिए हैं, कुवेष वालों के लिए शुभ नहीं हैं। जब तक यह आत्मा शांत रहती है और चमकती नहीं, तब तक इसे मुक्त समझो। जब तक यह अधिक चमकती है और व्याकुल है, तब तक इसे बंधन में समझो।

6.85.129

सुखदुःखकलास्पन्दो बन्धो जीवस्य नेतरःतदभावे हि मोक्षः स्यादिति द्वेधा व्यवस्थितिः ॥ १२९ ॥

sukhaduḥkhakalāspando bandho jīvasya netaraḥtadabhāve hi mokṣaḥ syāditi dvedhā vyavasthitiḥ || 129 ||

The vibration of pleasure and pain is the bondage of the soul, not anything else. In the absence of that, there is indeed liberation. Thus, there are two states.

सुख और दुःख की कंपन आत्मा का बंधन है, कुछ और नहीं। उसके अभाव में वास्तव में मुक्ति होती है। इस प्रकार, दो अवस्थाएँ हैं।

6.85.130

सुखदुःखदशे यावदानीते नेन्द्रियैः शठैःतावत्सुखसमः सौम्यो जीवस्तिष्ठति शान्तवत् ॥ १३० ॥

sukhaduḥkhadaśe yāvadānīte nendriyaiḥ śaṭhaiḥtāvatsukhasamaḥ saumyo jīvastiṣṭhati śāntavat || 130 ||

As long as the soul is not brought to the state of pleasure and pain by the deceitful senses, it remains calm and peaceful like a gentle being.

जब तक आत्मा धोखेबाज इंद्रियों द्वारा सुख और दुःख की अवस्था में नहीं लाई जाती, तब तक यह शांत और सौम्य जीव की तरह रहती है।

6.85.131

सुखमालोक्य वा दुःखमक्षातीतश्चलद्वपुःसमुल्लसति जीवोऽन्तर्दृष्ट्वेन्दुमिव तोयधिः ॥ १३१ ॥

sukhamālokya vā duḥkhamakṣātītaścaladvapuḥsamullasati jīvo'ntardṛṣṭvendumiva toyadhiḥ || 131 ||

Upon seeing happiness or sorrow, the restless body of the individual soul shines within, like the moon reflected in water.

सुख या दुःख देखकर, चंचल शरीर वाला जीव अंदर से चमकता है, जैसे पानी में चंद्रमा का प्रतिबिंब।

6.85.132

जीवः क्षुभ्यति दृष्टेन संविदांग सुखादिना। आमिषेणेव मार्जारो मौर्ख्यमेवात्र कारणम् ॥ १३२ ॥

jīvaḥ kṣubhyati dṛṣṭena saṃvidāṃga sukhādinā | āmiṣeṇeva mārjāro maurkhyamevātra kāraṇam || 132 ||

The individual soul is agitated by the perception of pleasure and other experiences, just like a cat is attracted to fish. Ignorance is the cause here.

जीव सुख आदि अनुभवों के दृष्टिगत होने से विचलित होता है, जैसे बिल्ली मछली के लिए आकर्षित होती है। यहाँ मूर्खता ही कारण है।

6.85.133

शुद्धेन बोध्यबोधेन स्वात्मज्ञानमयात्मना । सुखदुःखादि नास्तीति तेनासौ याति सौम्यताम् ॥ १३३ ॥

śuddhena bodhyabodhena svātmajñānamayātmanā | sukhaduḥkhādi nāstīti tenāsau yāti saumyatām || 133 ||

With the pure knowledge of the self, one realizes that pleasure and pain do not exist. Through this realization, one attains peace.

शुद्ध आत्मज्ञान के साथ, एक व्यक्ति को एहसास होता है कि सुख और दुःख अस्तित्व में नहीं हैं। इस ज्ञान के द्वारा, वह शांति प्राप्त करता है।

6.85.134

न तत्सुखादि नो तन्मे मुधा चायमहं स्थितः । इति जीवः प्रबुद्धो हि निर्वाणं याति शाम्यति ॥ १३४ ॥

na tatsukhādi no tanme mudhā cāyamahaṃ sthitaḥ | iti jīvaḥ prabuddho hi nirvāṇaṃ yāti śāmyati || 134 ||

The awakened soul realizes that pleasure and other experiences are not real and that ignorance is the cause of their perception. Thus, the soul attains liberation and peace.

जागृत जीव को एहसास होता है कि सुख आदि अनुभव वास्तविक नहीं हैं और उनके दृष्टिगत होने का कारण मूर्खता है। इस प्रकार, जीव मुक्ति और शांति प्राप्त करता है।

6.85.135

सुखाद्यवस्त्वतद्रूपमित्यन्तर्बोधसंविदा । न तदुन्मुखतां याति जीवः शाम्यति केवलम् ॥ १३५ ॥

sukhādyavastvatadrūpamityantarbodhasaṃvidā | na tadunmukhatāṃ yāti jīvaḥ śāmyati kevalam || 135 ||

With the inner realization that pleasure and other experiences are not real, the soul does not become attached to them. The soul simply attains peace.

अंतर्बोध संविदा के साथ, जीव को एहसास होता है कि सुख आदि अनुभव वास्तविक नहीं हैं, और इसलिए वह उनसे आसक्त नहीं होता। जीव केवल शांति प्राप्त करता है।

6.85.136

सर्वमेव चिदाकाशं ब्रह्मेति घननिश्चये । स्थितिं याते शमं याति जीवो निःस्नेहदीपवत् ॥ १३६ ॥

sarvameva cidākāśaṃ brahmeti ghananiścaye | sthitiṃ yāte śamaṃ yāti jīvo niḥsnehadīpavat || 136 ||

With the firm conviction that everything is the infinite consciousness of Brahman, the soul attains stability and peace, like a lamp without oil.

घन निश्चय के साथ कि सब कुछ चिदाकाश ब्रह्म है, जीव स्थिति और शांति प्राप्त करता है, जैसे तेल के बिना दीपक।

6.85.137

दीपवच्छममायाति सुखादिस्नेहसंक्षये । सर्वमेवमिति ज्ञानाज्जीवोऽद्वित्वविभावनात् ॥ १३७ ॥

dīpavacchamamāyāti sukhādisnehasaṅkṣaye | sarvamevamiti jñānājjīvo'dvitvavibhāvanāt || 137 ||

When the attachment to happiness and other things diminishes, the individual soul (jīva) realizes the non-dual nature of everything through knowledge.

जब सुख और अन्य आसक्तियों का क्षय होता है, तब जीव ज्ञान के द्वारा सब कुछ एक ही है, ऐसा अनुभव करता है।

6.85.138

सर्वमाकाशमेवेति बुद्ध्वा क्षोभं न गच्छति । जीवस्यानेन शून्यस्य कः किल क्षोभविभ्रमः ॥ १३८ ॥

sarvamākāśameveti buddhvā kṣobhaṃ na gacchati | jīvasyānena śūnyasya kaḥ kila kṣobhavibhramaḥ || 138 ||

Realizing that everything is like space, the individual soul does not experience agitation. What agitation can there be for the empty soul?

यह समझकर कि सब कुछ आकाश की तरह है, जीव क्षोभ नहीं अनुभव करता। खाली आत्मा के लिए क्षोभ कैसा?

6.85.139

जीवेनेदृग्विधेनैव यथा प्रथमसर्गतः । स्वयं संविदितो मार्गस्तेनैवाद्यापि गच्छति ॥ १३९ ॥

jīvenedṛgvidhenaiva yathā prathamasargataḥ | svayaṃ saṃvidito mārgastenaiavādyāpi gacchati || 139 ||

Just as the individual soul, in its original form, knows the path by itself from the beginning, it continues to follow the same path even now.

जैसे जीव, अपने मूल रूप में, शुरू से ही स्वयं मार्ग को जानता है, वैसे ही आज भी वह उसी मार्ग पर चलता है।

6.85.140

शिखिध्वज उवाच । सुखसंचारयोग्यासु जीवे सरति नाडिषु । देवपुत्र भवत्येव तद्वीर्यच्यवनं कथम् ॥ १४० ॥

śikhidhvaja uvāca | sukhasaṃcārayogyāsu jīve sarati nāḍiṣu | devaputra bhavatyeva tadvīryacyavanaṃ katham || 140 ||

Shikhidhvaja said: The individual soul moves in the channels suitable for the circulation of happiness. How can the son of a god, who is indeed powerful, lose his vigor?

शिखिध्वज ने कहा: जीव सुख के प्रवाह के लिए उपयुक्त नाड़ियों में चलता है। देवपुत्र, जो शक्तिशाली है, कैसे अपनी शक्ति खो सकता है?

6.85.141

चूडालोवाच । जीवः क्षोभयति क्षुब्धः प्राणादिपवनावलिम् । संविदा ज्ञांशमात्रेण सेनामिव महीपतिः ॥ १४१ ॥

cūḍālovāca | jīvaḥ kṣobhayati kṣubdhaḥ prāṇādipavanāvalim | saṃvidā jñāṃśamātreṇa senāmiva mahīpatiḥ || 141 ||

Chudala said: The agitated individual soul agitates the vital airs. With just a bit of knowledge, like a king with his army, the soul controls them.

चूडाला ने कहा: क्षुब्ध जीव प्राण वायुओं को क्षुब्ध करता है। थोड़े से ज्ञान के साथ, जैसे राजा अपनी सेना के साथ, आत्मा उन्हें नियंत्रित करता है।

6.85.142

वातस्पन्देन मेदोऽन्तर्मज्जासारश्च संस्थितः । त्यजत्याशु प्रसौगन्ध्यं रजः पत्रफलादिकम् ॥ १४२ ॥

vātaspandena medo'ntarmajjāsāraśca saṃsthitaḥ | tyajatyāśu prasaugaṅdhyam rajaḥ patraphalādikam || 142 ||

By the movement of the wind, the essence of marrow and fat is established within. It quickly loses its fragrance and sheds dust and leaves.

वायु के स्पन्दन से मेद और मज्जा का सार अंतर्मुखी हो जाता है। यह शीघ्र ही अपनी सुगंध छोड़ देता है और धूल और पत्ते गिरा देता है।

6.85.143

चलितं तत्त्वधो याति गर्जादिव घनादि खे ॥ १४३ ॥

calitam tattvadho yāti garjādiva ghanādi khe || 143 ||

That which is moving goes downwards due to its nature, like thunder from the clouds in the sky.

जो चल रहा है, वह अपने स्वभाव के कारण नीचे जाता है, जैसे बादलों से गर्जना आकाश में होती है।

6.85.144

देहनाडीप्रणालेन याति शुक्रं बहिः स्वतः ॥ १४४ ॥

dehanāḍīpraṇālena yāti śukram bahiḥ svataḥ || 144 ||

Through the channels of the body, the semen goes out naturally.

शरीर की नाड़ियों के माध्यम से, शुक्र स्वाभाविक रूप से बाहर जाता है।

6.85.145

शिखिध्वज उवाच । देवपुत्रमहाज्ञोऽसि वेत्सि पूर्वां च तत्स्थितिम् । ज्ञायसे वचनादेव स्वभावो हि किमुच्यते ॥ १४५ ॥

śikhidhvaja uvāca | devaputramahājño'si vetsi pūrvāṃ ca tatsthitim | jñāyase vacanādeva svabhāvo hi kimucyate || 145 ||

Shikhidhvaja said: You are the wise son of the gods, you know the previous state of that. You are known by your words, what is to be said about your nature?

शिखिध्वज ने कहा: तुम देवों के बुद्धिमान पुत्र हो, तुम उसकी पूर्व स्थिति को जानते हो। तुम अपने वचनों से जाने जाते हो, तुम्हारे स्वभाव के बारे में क्या कहा जाए?

6.85.146

चूडालोवाच । आद्यसर्गे यथा सद्यः स्फुरितं ब्रह्म ब्रह्मणि । घटावटपटाद्यात्म तथैवाद्यव्यवस्थितम् ॥ १४६ ॥

cūḍālovāca | ādyasarge yathā sadyaḥ sphuritam brahma brahmaṇi | ghaṭāvaṭapaṭādyātma tathaivādyavyavasthitam || 146 ||

Chudala said: In the beginning of creation, just as Brahman immediately manifested in Brahman, similarly, the essence of pots, clothes, etc., was established.

चूडाला ने कहा: सृष्टि के आरंभ में, जैसे ब्रह्म ब्रह्म में तुरंत प्रकट हुआ, उसी प्रकार घड़े, कपड़े आदि का सार स्थापित हुआ।

6.85.147

काकतालीयवद्वारिबुद्बुदोत्पत्तिनाशवत् घुणाक्षरवदुच्छूनं तं स्वभावं विदुर्बुधाः ॥ १४७ ॥

kākatālīyavadvāribudbudotpattināśavat ghuṇākṣaravaducchūnaṃ taṃ svabhāvaṃ vidurbudhāḥ || 147 ||

Just as the reflection of a crow in water and the bubbles that appear and disappear, the wise know that the nature of the world is as transient as the letters written on water.

जैसे पानी में कौए का प्रतिबिम्ब और बुलबुले उत्पन्न होते हैं और नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही बुद्धिमान लोग जानते हैं कि संसार का स्वभाव पानी पर लिखे अक्षरों की तरह अस्थायी है।

6.85.148

अस्मिन्स्वभाववशतो जगति प्ररूढे देहा भ्रमन्ति परितो विविधा विकाराः प्रक्षीणवासनतया न भवन्ति केचिद्भूयो भवन्ति च पुनस्त्वितरे घनास्थाः ॥ १४८ ॥

asminsvabhāvavaśato jagati prarūḍhe dehā bhramanti parito vividhā vikārāḥ prakṣīṇavāsanatayā na bhavanti kecidbhūyo bhavanti ca punastvitare ghanāsthāḥ || 148 ||

In this world, which is established by its own nature, various transformations wander around. Due to the diminishing of desires, some do not exist again, while others, being deeply attached, continue to exist.

इस संसार में, जो अपने स्वभाव से स्थापित है, विविध परिवर्तन भ्रमण करते हैं। इच्छाओं के क्षीण होने के कारण, कुछ फिर से अस्तित्व में नहीं आते, जबकि दूसरे, जो गहराई से आसक्त हैं, फिर से अस्तित्व में आते हैं।

Chapter 86

6.86.1

चूडालोवाच । आत्मस्वभाववशतो जातं जगदिदं महत् । स्थितिं वासनयाभ्येत्य धर्माधर्मवशे स्थितम् ॥ १ ॥

cūḍālovāca | ātmasvabhāvavaśato jātaṃ jagadidaṃ mahat | sthitiṃ vāsanayābhyetya dharmādharmavaśe sthitam || 1 ||

Chudala said: This great universe has arisen due to the nature of the self. It has attained stability through impressions and is maintained by virtue and vice.

चूडाला बोली: यह महान ब्रह्मांड आत्मा के स्वभाव के कारण उत्पन्न हुआ है। यह संस्कारों द्वारा स्थिति प्राप्त करता है और धर्म और अधर्म के द्वारा बनाए रखा जाता है।

6.86.2

वासनाह्रासमानीय धर्माधर्मैर्न गृह्यते । ततो न जायते जन्तुरिति नो दर्शनं मुने ॥ २ ॥

vāsanāhrāsamānīya dharmādharmaina gṛhyate | tato na jāyate janturiti no darśanaṃ mune || 2 ||

When the impressions are destroyed, virtue and vice do not affect. Therefore, no being is born, this is our vision, O sage.

जब संस्कार नष्ट हो जाते हैं, तो धर्म और अधर्म प्रभावित नहीं करते। इसलिए, कोई जीव पैदा नहीं होता, यह हमारा दर्शन है, हे मुनि।

6.86.3

शिखिध्वज उवाच । अत्युदारं महार्थं च वक्षि त्वं वदतां वर । अनुभूतिमुपारूढं गूढं च परमार्थवत् ॥ ३ ॥

śikhidhvaja uvāca | atyudāraṃ mahārthaṃ ca vakṣi tvaṃ vadatāṃ vara | anubhūtimupārūḍhaṃ gūḍhaṃ ca paramārthavat || 3 ||

Shikhidhvaja said: You speak the most excellent and profound truth, O best of speakers. It is experienced and elevated, mysterious, and of the highest reality.

शिखिध्वज बोले: तुम सबसे उत्तम और गहरी सत्य बोलते हो, हे वक्ताओं में श्रेष्ठ। यह अनुभव किया गया और उच्च है, रहस्यमय और सर्वोच्च वास्तविकता का है।

6.86.4

त्वद्वाक्यविभवेनाद्य श्रुतेनानेन सुन्दर । पीतेनेवामृतेनाहमन्तर्यातोऽस्मि शीतताम् ॥ ४ ॥

tvadvākyavibhavenādya śrutenaānena sundara | pītenevāmṛtenāhamantaryāto'smi śītatām || 4 ||

O beautiful one, by the power of your words, having heard this today, I have drunk the nectar and have become cooled internally.

हे सुंदर, तुम्हारे शब्दों की शक्ति से, आज इसे सुनकर, मैंने अमृत पी लिया है और अंतर से ठंडा हो गया हूँ।

6.86.5

तत्समासेन तां तावदात्मोत्पत्तिं वदाशु मे । ततः श्रोष्यामि यत्नेन ज्ञानगर्भां गिरं तव ॥ ५ ॥

tat samāsena tāṃ tāvadātmotpattiṃ vadāśu me | tataḥ śroṣyāmi yatnena jñānagarbhāṃ giraṃ tava || 5 ||

Therefore, briefly explain to me the origin of the self. Then I will listen carefully to your words filled with knowledge.

इसलिए, संक्षेप में मुझे आत्मा की उत्पत्ति बताओ। फिर मैं ध्यान से तुम्हारे ज्ञान से भरे शब्दों को सुनूँगा।

6.86.6

तेन पद्मजपुत्रेण मुनिना नारदेन तत्। क्व कृतं वीर्यमार्येण कथयाद्य यथास्थितम्॥ ६॥

tena padmajaputreṇa muninā nāradena tat | kva kṛtaṃ vīryamāryeṇa kathayādya yathāsthitam || 6 ||

Then, the sage Narada, the son of the lotus-born, asked, 'Where did the noble one deposit his semen? Tell me exactly as it happened.'

तब कमलज पुत्र मुनि नारद ने पूछा, 'उस आर्य ने अपना वीर्य कहाँ रखा? जैसे हुआ वैसे ही बताओ।'

6.86.7

चूडालोवाच। ततो निबध्नता तेन मनोमत्तमतङ्गजम्। विवेकविपुलालाने शुद्धया धीवरत्रया॥ ७॥

cūḍālovāca | tato nibadhnata tena manomattamataṅgajam | vivekavipulālāne śuddhayā dhīvaratrayā || 7 ||

Chudala said: Then, binding that elephant which was intoxicated with pride, with the pure rope of vast discrimination,

चूडाला ने कहा: तब, उस घमंड से मतवाले हाथी को विवेक की विशाल और शुद्ध रस्सी से बाँधते हुए,

6.86.8

तद्वीर्यं कल्पकालाग्निगलितेन्दुद्रवोपमम्। रसानां पारदादीनां दिव्यानामनुरञ्जनम्॥ ८॥

tadvīryaṃ kalpakālāgnigalitendudravopamam | rasānāṃ pāradādīnāṃ divyānāmanurañjanam || 8 ||

That semen, resembling the moon melted by the fire of the end of the world, is the delight of divine essences like mercury.

वह वीर्य, जो प्रलय की अग्नि से पिघले चंद्रमा के समान है, पारद जैसे दिव्य रसों का आनंद है।

6.86.9

मुनिना पार्श्वगे कुम्भे स्फाटिके विलसद्रुचौ। अद्भुते विद्रुताकारं चन्द्रे चन्द्र इवार्पितम्॥ ९॥

muninā pārśvage kumbhe sphāṭike vilasadrucau | adbhute vidrutākāraṃ candre candra ivārpitam || 9 ||

By the sage, in the crystal pot placed at his side, shining with radiance, in the wonderful, lightning-like form, the semen was deposited like the moon.

मुनि ने, अपने पास रखे स्फटिक के घट में, जो चमक रहा था, अद्भुत, बिजली के समान रूप में, वीर्य चंद्रमा के समान रखा।

6.86.10

तत्र शैले बृहत्कान्ते स्थूलः पार्श्वेषु चाभितः। गम्भीरकुक्षिः सुदृढश्चोपलाहननक्षमः॥ १०॥

tatra śaile bṛhatkānte sthūlaḥ pārśveṣu cābhitaḥ | gambhīrakuksiḥ sudṛḍhaścopalāhananakṣamaḥ || 10 ||

There, on that large and beautiful mountain, he was thick on the sides, with a deep chest, very strong, and capable of withstanding the blows of stones.

वहाँ, उस विशाल और सुंदर पर्वत पर, वह पार्श्वों पर मोटा था, गहरी छाती वाला, बहुत मजबूत, और पत्थरों के प्रहारों को सहने में सक्षम।

6.86.11

संकल्पितेन क्षीरेण स कुम्भस्तेन पूरितः। अमृतापूरभिन्नेन विधिनेवामृतार्णवः॥ ११॥

saṃkalpitena kṣīreṇa sa kumbhastena pūritaḥ | amṛtāpūrabhinnena vidhinēvāmṛtārṇavaḥ || 11 ||

With the imagined milk, that pot was filled | With the nectar-like milk, it became like the ocean of nectar || 11 ||

संकल्पित दूध से वह घड़ा भरा गया | अमृत के समान दूध से वह अमृत के समुद्र के समान हो गया || ११ ||

6.86.12

तत्र मासाद्गतो वृद्धिं मुनिमन्दाहुतिक्रमः । अमृताब्धौ शुभो गर्भ इन्दोरिन्दुरिवानुजः ॥ १२ ॥

tatra māsādgato vṛddhiṃ munimandāhutikramaḥ | amṛtābdhau śubho garbha indorindurivānujaḥ || 12 ||

There, in a month, the sage's weak offering grew | In the ocean of nectar, the auspicious embryo, like the moon's younger brother || 12 ||

वहाँ, एक महीने में, मुनि की कमजोर आहुति बढ़ी | अमृत के समुद्र में, शुभ गर्भ, चंद्रमा के छोटे भाई की तरह || १२ ||

6.86.13

इन्दुं मास इवापूर्णं कालेन सुषुवे घटः । गर्भं कमलपत्राक्षं प्रसूनमिव माधवः ॥ १३ ॥

induṃ māsa ivāpūrṇaṃ kālena suṣuve ghaṭaḥ | garbhaṃ kamalapatrākṣaṃ prasūnamiva mādhavaḥ || 13 ||

The pot, like the full moon in a month, gave birth in time | To an embryo with lotus-like eyes, like a flower of Madhava || 13 ||

घड़ा, एक महीने में पूर्ण चंद्रमा की तरह, समय पर जन्म दिया | कमल के समान आँखों वाले गर्भ को, माधव के फूल की तरह || १३ ||

6.86.14

परिपूर्णसमस्ताङ्गः कुम्भाद्गर्भो विनिर्ययौ । इन्दुः सूक्ष्मादिवाम्भोधेरपरः क्षयवर्जितः ॥ १४ ॥

paripūrṇasamastāṅgaḥ kumbhādgarbho viniryayau | induḥ sūkṣmādivāmbhodheraparaḥ kṣayavarjitaḥ || 14 ||

The embryo, with all limbs fully developed, emerged from the pot | Like the moon rising from the subtle ocean, free from decay || 14 ||

गर्भ, सभी अंगों से पूर्ण, घड़े से निकला | सूक्ष्म समुद्र से उठते चंद्रमा की तरह, क्षय से मुक्त || १४ ||

6.86.15

दिनैः कतिपयैरेव वृद्धिमभ्याजगाम सः । अप्रमेयाङ्गसौन्दर्यः शुक्लपक्षे शशी यथा ॥ १५ ॥

dinaiḥ katipayaireva vṛddhimabhyājagāma saḥ | aprameyāṅgasaundaryaḥ śuklapakṣe śaśī yathā || 15 ||

In just a few days, he attained growth | With immeasurable bodily beauty, like the moon in the bright fortnight || 15 ||

कुछ ही दिनों में, उसने वृद्धि प्राप्त की | अपार शरीर की सुंदरता से, शुक्ल पक्ष के चंद्रमा की तरह || १५ ||

6.86.16

सर्वसंस्कारसंपन्ने स तस्मिन्नारदो मुनिः । भाण्डाद्भाण्ड इवाशेषं विद्याधनमयोऽजयत् ॥ १६ ॥

sarvasaṃskārasaṃpanne sa tasminnārado muniḥ | bhāṇḍādbhāṇḍa ivāśeṣaṃ vidyādhanamayo'jayat || 16 ||

In that one who is endowed with all refinements, the sage Nārada, like transferring wealth from one vessel to another, conquered the entire treasure of knowledge.

जिसमें सभी संस्कार हैं, उस पर मुनि नारद ने, जैसे एक बर्तन से दूसरे बर्तन में धन स्थानांतरित करते हैं, वैसे ही पूरे विद्या के धन को जीत लिया।

6.86.17

दिनैः कतिपयैरेव विज्ञाताशेषवाङ्मयम् । चकारैनं मुनिवरः प्रतिबिम्बमिवात्मनः ॥ १७ ॥

dinaiḥ katipayaireva vijñātāśeṣavāṅmayam | cakārainaṃ munivaraḥ pratibimbamivātmanaḥ || 17 ||

In just a few days, the great sage made him, who had mastered the entirety of the Vedas, a reflection of himself.

कुछ ही दिनों में, महान मुनि ने उसे, जो पूरे वेदों को जान गया था, अपना प्रतिबिम्ब बना दिया।

6.86.18

तेनाराजत पुत्रेण मुनिना मुनिनायकः । रत्नाद्रौ प्रतिबिम्बेन संध्योदित इवोडुराट् ॥ १८ ॥

tenārājata putreṇa muninā munināyakaḥ | ratnādrau pratibimbena saṃdhyodita ivoḍurāṭ || 18 ||

With that son, the sage, the leader of sages, shone like the rising moon reflected in a jewel-like mountain.

उस पुत्र के साथ, मुनि, मुनियों के नेता, रत्न-सदृश पर्वत में प्रतिबिम्बित उदित चंद्रमा की तरह चमक उठे।

6.86.19

अथैनं पुत्रमादाय ब्रह्मलोकं स नारदः । जगामाथ स्वपितरं ब्रह्माणं चाभ्यवादयत् ॥ १९ ॥

athainaṃ putramādāya brahmalokaṃ sa nāradaḥ | jagāmātha svapitaraṃ brahmāṇaṃ cābhyavādayat || 19 ||

Then, taking his son, Nārada went to Brahmaloka and paid respects to his father, Brahmā.

तब, अपने पुत्र को लेकर, नारद ब्रह्मलोक गए और अपने पिता, ब्रह्मा को प्रणाम किया।

6.86.20

कृताभिवन्दनं ब्रह्मा पौत्रमादाय तं तदा । अभिवादितवेदादिं स्वयमङ्के न्यवेशयत् ॥ २० ॥

kṛtābhivandanaṃ brahmā pautramādāya taṃ tadā | abhivāditavedādiṃ svayamaṅke nyaveśayat || 20 ||

After being paid respects, Brahmā took his grandson and, having been saluted by the Vedas and others, placed him on his own lap.

प्रणाम करने के बाद, ब्रह्मा ने अपने पौत्र को लिया और, वेदों और अन्य द्वारा अभिवादन करने के बाद, उसे अपनी गोद में बिठाया।

6.86.21

अथाशीर्वादमात्रेण सर्वज्ञं ज्ञानपारगम् । पौत्रं तं कुम्भनामानं चकार कमलोद्भवः ॥ २१ ॥

athāśīrvādamātreṇa sarvajñaṃ jñānapāragam | pautraṃ taṃ kumbhanāmānaṃ cakāra kamalodbhavaḥ || 21 ||

Then, by mere blessing, the lotus-born (Brahma) made him, the omniscient and master of knowledge, his grandson named Kumbha.

फिर, केवल आशीर्वाद से, कमलोद्भव (ब्रह्मा) ने उसे, सर्वज्ञ और ज्ञान के मास्टर, कुम्भ नामक पौत्र बनाया।

6.86.22

साधो सोऽहमयं कुम्भः पौत्रोऽहं पद्मजन्मनः । पुत्रोऽहं नारदमुनेः कुम्भनामास्मि कुम्भजः ॥ २२ ॥

sādho so'hamayaṃ kumbhaḥ pautro'haṃ padmajanmanaḥ | putro'haṃ nāradamuneḥ kumbhanāmāsmi kumbhajaḥ || 22 ||

O virtuous one, I am this Kumbha, the grandson of the lotus-born (Brahma), the son of the sage Narada, and I am named Kumbha, the son of Kumbhaja.

हे साधु, मैं यह कुम्भ हूं, कमलोद्भव (ब्रह्मा) का पौत्र, ऋषि नारद का पुत्र, और मेरा नाम कुम्भ है, कुम्भज का पुत्र।

6.86.23

निवसाम्यब्जजपुरे पित्रा सह यथासुखम् । चत्वारः सुहृदो वेदा मम लीलाविलासिनः ॥ २३ ॥

nivasāmyabjajapure pitrā saha yathāsukham | catvāraḥ suhṛdo vedā mama līlāvilāsinaḥ || 23 ||

I reside in the city of Abjapura with my father in great comfort. The four Vedas are my dear friends who delight in my playful activities.

मैं अब्जपुर नगर में अपने पिता के साथ सुखपूर्वक रहता हूं। चारों वेद मेरे प्रिय मित्र हैं जो मेरी लीलाओं में आनंद लेते हैं।

6.86.24

मातृष्वसा मे गायत्री मम माता सरस्वती । ब्रह्मलोके मम गृहं पौत्रस्तत्रास्मि सुस्थितः ॥ २४ ॥

mātṛṣvasā me gāyatrī mama mātā sarasvatī | brahmaloke mama gṛhaṃ pautrastatrāsmi susthitaḥ || 24 ||

My aunt is Gayatri, my mother is Sarasvati. My home is in Brahmaloka, and I am well-established there as a grandson.

मेरी मामी गायत्री है, मेरी माँ सरस्वती है। मेरा घर ब्रह्मलोक में है, और मैं वहां पौत्र के रूप में सुस्थित हूं।

6.86.25

यथाकाममशेषेण जगन्ति विहराम्यहम् । लीलया परिपूर्णत्वान्न तु कार्येण केनचित् ॥ २५ ॥

yathākāmamaśeṣeṇa jaganti viharāmyaham | līlayā paripūrṇatvānna tu kāryeṇa kenacit || 25 ||

I roam the entire world as I please, fully content with my playful activities, not driven by any particular duty.

मैं अपनी इच्छा से सम्पूर्ण जगत में विचरण करता हूं, अपनी लीलाओं से पूर्णतः संतुष्ट, किसी भी कार्य से प्रेरित नहीं।

6.86.26

धरां पतति मे पादौ पततो न महीतले । रजः स्पृशन्ति नाङ्गानि ग्लानिं नायाति मे वपुः ॥ २६ ॥

dharaṃ patati me pādau patato na mahītale | rajaḥ spṛśanti nāṅgāni glāniṃ nāyāti me vapuḥ || 26 ||

My feet do not touch the ground, and my body does not touch the earth. Dust does not touch my body, and my body does not feel tired.

मेरे पैर धरती पर नहीं पड़ते और मेरा शरीर धरती को नहीं छूता। धूल मेरे शरीर को नहीं छूती और मेरा शरीर थकान नहीं महसूस करता।

6.86.27

अद्याकाशपथा गच्छन्दृष्टवांस्त्वामहं पुरः । इह तेनागतोऽस्म्यङ्ग सर्वं कथितवानिति ॥ २७ ॥

adyākāśapathā gacchandṛṣṭavāṃstvāmahaṃ puraḥ | iha tenāgato'smi'aṅga sarvaṃ kathitavāniti || 27 ||

Today, while traveling through the sky, I saw you in front of me. Because of that, I have come here and told you everything.

आज, आकाश में यात्रा करते हुए, मैंने आपको सामने देखा। इसलिए, मैं यहाँ आया हूँ और आपको सब कुछ बता दिया है।

6.86.28

एषोऽहमित्यखिलमेव यथानुभूतं ते वर्णितं ननु मया वनवासतज्ज्ञ । सन्तो हि संकथनमार्यजनोत्तमेषु निर्मान्त्यलं सुभगसंव्यवहारदक्षाः ॥ २८ ॥

eṣo'hamityakhilameva yathānubhūtaṃ te varṇitaṃ nanu mayā vanavāsatajjña | santo hi saṃkathana māryajanottameṣu nirmāntyalam subhagasaṃvyavahāradakṣāḥ || 28 ||

I have described everything to you as I have experienced it, O knower of the forest dwelling. Indeed, the wise, who are skilled in pleasant interactions, delight in conversation with the best of noble people.

मैंने आपको जैसे मैंने अनुभव किया है, वैसे ही सब कुछ बताया है, हे वनवास के ज्ञाता। निश्चय ही, बुद्धिमान लोग, जो प्रिय व्यवहार में कुशल होते हैं, उत्तम आर्य लोगों के साथ बातचीत करने में आनंद लेते हैं।

6.86.29

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्युक्तवत्यथ मुनौ दिवसो जगाम सायंतनाय विधयेऽस्तमिनो जगाम । स्नातुं सभा कृतनमस्करणा जगाम श्यामाक्षये रविकरैश्च सहाजगाम ॥ २९ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityuktavatyatha munau divaso jagāma sāyantanāya vidhaye'stamino jagāma | snātuṃ sabhā kṛtana maskaraṇā jagāma śyāmākṣaye ravikaraiśca sahājagāma || 29 ||

Śrī Vālmīki said: After the sage had spoken thus, the day ended and the sun set for the evening. The sage then went to bathe, having performed his salutations. He went to the dark-eyed one along with the rays of the sun.

श्री वाल्मीकि ने कहा: जब मुनि ने ऐसा कहा, तो दिन समाप्त हो गया और सूर्य संध्या के लिए अस्त हो गया। तब मुनि ने अपनी प्रणाम करने के बाद स्नान करने के लिए जाने का निर्णय लिया। वह सूर्य की किरणों के साथ काले नेत्रों वाले के पास गया।

Chapter 87

6.87.1

शिखिध्वज उवाच । सर्गे स्फुरद्भिर्मत्पुण्यैर्मन्ये संप्रेषितो भवान् । अलक्ष्यैः संभृतैरद्रौ बृहद्वातैरिवाम्बुदः ॥ १ ॥

śikhidhvaja uvāca | sarge sphuradbhirmatpuṇyairmanye saṃprēṣito bhavān | alakṣyaiḥ saṃbhṛtairadrau bṛhadvātairivāmbudaḥ || 1 ||

Shikhidhvaja said: I believe that you have been sent by my virtuous deeds, like a cloud driven by strong winds, unseen and gathered in the sky.

शिखिध्वज ने कहा: मैं समझता हूँ कि आप मेरे पुण्य कर्मों से भेजे गए हैं, जैसे कि एक बादल जो अदृश्य और एकत्रित होकर आकाश में तेज हवाओं द्वारा चलाया जाता है।

6.87.2

अद्य तिष्ठाम्यहं साधो धन्यानां धुरि धर्मतः । अमृतस्यन्दिवचसा यत्त्वयास्मि समागतः ॥ २ ॥

adya tiṣṭhāmyahaṃ sādho dhanyānāṃ dhuri dharmataḥ | amṛtasyandivacasā yattvayāsmi samāgataḥ || 2 ||

Today, I stand in the company of the virtuous, blessed by righteousness. I have come to you, O sage, like the nectar that flows from the words of the wise.

आज, मैं धर्म के कारण धन्य लोगों के साथ खड़ा हूँ। मैं आपके पास आया हूँ, हे ऋषि, जैसे कि ज्ञानी के शब्दों से अमृत बहता है।

6.87.3

न केचन तथा भावाःचेतः शीतलयन्ति मे राज्यलाभादयोऽप्येते यथा साधुसमागमः ॥ ३ ॥

na kecana tathā bhāvāścetaḥ śītalayanti merājyalābhādayo'pyete yathā sādhusamāgamaḥ || 3 ||

No other feelings can cool my mind like the company of the virtuous, not even the acquisition of a kingdom or other such gains.

कोई अन्य भावनाएं मेरे मन को ठंडा नहीं कर सकतीं, जैसे साधुओं की संगति करती है, चाहे वे राज्य प्राप्ति या अन्य लाभ हों।

6.87.4

निरर्गलरसो यत्र सामान्येन विजृम्भते । मुक्तरागादिमननं तत्कल्पनसुखावहम् ॥ ४ ॥

nirargalaraso yatra sāmānyena vijṛmbhate | muktarāgādimananaṃ tatkalpanasukhāvaham || 4 ||

Where the essence flows freely and naturally, there is a sense of joy that comes from the absence of desires and thoughts.

जहाँ सार स्वाभाविक रूप से बहता है, वहाँ इच्छाओं और विचारों की अनुपस्थिति से आनंद का अनुभव होता है।

6.87.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवंवादिनि सैवास्य वाक्यमाक्षिप्य भूपतेः । भूयः प्रोवाच चूडाला मुनिदारकरूपिणी ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃvādini saivāsya vākyamākṣipya bhūpateḥ | bhūyaḥ provāca cūḍālā munidārakarūpiṇī || 5 ||

Shri Vasishtha said: Having thus spoken, Chudala, in the form of a sage's wife, continued to speak to the king.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहने के बाद, चूडाला, जो ऋषि की पत्नी के रूप में थी, राजा से और बात करने लगी।

6.87.6

चूडालोवाच आस्तामेषा कथा तावत्सर्वं ते वर्णितं मया त्वं मे कथय हे साधो कस्त्वमद्रौ करोषि किम् ॥ ६ ॥

cūḍālovāca āstāmeṣā kathā tāvatsarvaṃ te varṇitaṃ mayā tvaṃ me kathaya he sādho kastvamadrau karosi kim || 6 ||

Chudala said: Now this story has been completely described by me. O sage, you tell me, who are you in this world and what are you doing?

चूडाला ने कहा: अब यह कथा मैंने पूरी तरह से वर्णित कर दी है। हे साधो, तुम मुझे बताओ, तुम इस संसार में कौन हो और क्या कर रहे हो?

6.87.7

कियत्पर्यवसानेयं भवतो वनवासिता सत्यं कार्यं च नोऽसत्यं वक्तुं जानन्ति तापसाः ॥ ७ ॥

kiyatparyavasāneyaṃ bhavato vanavāsitā satyaṃ kāryaṃ ca no'satyaṃ vaktuṃ jānanti tāpasāḥ || 7 ||

What is the purpose of your living in the forest? The ascetics know the truth and the right action, not the untruth.

तुम्हारे वनवास का क्या उद्देश्य है? तापस सत्य और उचित कर्म को जानते हैं, असत्य नहीं।

6.87.8

शिखिध्वज उवाच देवपुत्रोऽसि जानासि सर्वमेव यथास्थितम् लोकवृत्तान्ततज्ज्ञोऽसि किमन्यत्कथयाम्यहम् ॥ ८ ॥

śikhidhvaja uvāca devaputro'si jānāsi sarvameva yathāsthitam lokavṛttāntatajjño'si kimanyatkathayāmyaham || 8 ||

Shikhidhvaja said: O son of the gods, you know everything as it is. You are knowledgeable about the ways of the world. What else should I tell you?

शिखिध्वज ने कहा: हे देवपुत्र, तुम सब कुछ जानते हो जैसा कि है। तुम संसार के वृत्तांतों को जानते हो। मैं तुम्हें और क्या बताऊँ?

6.87.9

संसारभयभीतत्वान्निवसामि वनान्तरे जानतोपि हि मामार्य कथयाम्येव ते मनाक् ॥ ९ ॥

saṃsārabhayabhītatvānnivasāmi vanāntare jānato'pi hi māmārya kathayāmyeva te manāk || 9 ||

Due to fear of the world, I live in the forest. O noble one, even though you know, I will tell you briefly.

संसार के भय से डरकर मैं वन में रहता हूँ। हे आर्य, यद्यपि तुम जानते हो, फिर भी मैं तुम्हें संक्षेप में बताऊँगा।

6.87.10

शिखिध्वजोऽहं भूपालस्त्यक्त्वा राज्यमिहास्थितः भृशं भीतोस्मि तत्त्वज्ञ संसृतौ जन्मनः पुनः ॥ १० ॥

śikhidhvajo'haṃ bhūpālastyaktvā rājyamihāsthitaḥ bhṛśaṃ bhīto'smi tattvajña saṃsṛtau janmanaḥ punaḥ || 10 ||

I am Shikhidhvaja, the king who has abandoned the kingdom and resides here. O knower of truth, I am greatly afraid of the cycle of birth again.

मैं शिखिध्वज हूँ, जो राज्य को छोड़कर यहाँ रहता हूँ। हे तत्त्वज्ञ, मैं जन्म के चक्र से बहुत डरा हुआ हूँ।

6.87.11

सुखं पुनः पुनर्दुःखं पुनर्मरणजन्मनी । भवतस्तेन तप्येऽहं तत्त्वज्ञ वनवीथिषु ॥ ११ ॥

sukhaṃ punaḥ punarduḥkhaṃ punarmaraṇajanmanī | bhavatastena tapye'haṃ tattvajña vanavīthiṣu || 11 ||

I am tormented by the repeated cycle of happiness and sorrow, birth and death, O knower of truth, in the forest paths.

मैं खुशी और दुःख, जन्म और मृत्यु के बार-बार होने वाले चक्र से पीड़ित हूँ, हे सत्य के ज्ञाता, वन के मार्गों में।

6.87.12

भ्रमन्नपि दिगन्तेषु चरन्नपि परंतपः । नासादयामि विश्रान्तिमेकां निधिमिवाधनः ॥ १२ ॥

bhramannapi diganteṣu carannapi paraṃtapaḥ | nāsādayāmi viśrāntim ekāṃ nidhimivādhanaḥ || 12 ||

Even while wandering to the ends of the directions and moving about, O tormentor of enemies, I do not find rest, like a poor man without wealth.

चाहे मैं दिशाओं के अंत तक भटकूँ और घूमता रहूँ, हे शत्रुओं को पीड़ित करने वाले, मैं विश्राम नहीं पाता, जैसे कोई निर्धन व्यक्ति धन के बिना।

6.87.13

अयत्नोऽप्यफलोऽप्येको ह्यपूर्णोऽप्यस्तसंगतिः । शुष्याम्यत्र वने साधो घुणक्षुण्ण इव द्रुमः ॥ १३ ॥

ayatno'pyaphalo'pyeko hyapūrṇo'pyastasaṃgatiḥ | śuṣyāmyatra vane sādho ghuṇakṣuṇṇa iva drumḥ || 13 ||

Even without effort, fruitless, incomplete, and without any association, I am withering away in this forest, O virtuous one, like a tree eaten by insects.

बिना किसी प्रयास के, निष्फल, अधूरा, और किसी भी संगति के बिना, मैं इस वन में सूख रहा हूँ, हे साधु, जैसे कीड़ों से खाया हुआ पेड़।

6.87.14

इमामखण्डितां सम्यक् क्रियां संपादयन्नपि । दुःखाद्गच्छामि दुःखौघममृतं मे विषं स्थितम् ॥ १४ ॥

imāmakhṇḍitāṃ samyak kriyāṃ saṃpādayannapi | duḥkhādgacchāmi duḥkhaugham amṛtaṃ me viṣaṃ sthitam || 14 ||

Even while performing this perfect action correctly, I go from sorrow to a flood of sorrow; nectar has become poison for me.

इस पूर्ण क्रिया को ठीक से करते हुए भी, मैं दुःख से दुःख की बाढ़ में जा रहा हूँ; अमृत मेरे लिए विष बन गया है।

6.87.15

चूडालोवाच पितामहमहं पूर्वं कदाचित्पृष्टवानिदम् । यत्क्रियाज्ञानयोरेकं श्रेयस्तद्ब्रूहि मे प्रभो ॥ १५ ॥

cūḍālovāca pitāmahamahaṃ pūrvaṃ kadācitpṛṣṭavānidam | yatkriyājñānayorekaṃ śreyastadbrūhi me prabho || 15 ||

Chudala said: O Grandfather, I had once asked this before: Which is better, action or knowledge? Please tell me, O Lord.

चूडाला ने कहा: हे पितामह, मैंने एक बार पहले यह पूछा था: क्रिया और ज्ञान में से कौन बेहतर है? कृपया मुझे बताएँ, हे प्रभु।

6.87.16

ब्रह्मोवाच । ज्ञानं हि परमं श्रेयः कैवल्यं तेन वेत्त्यलम् । कालातिवाहनायैव विनोदायोदिता क्रिया ॥ १६ ॥

brahmovāca | jñānaṃ hi paramaṃ śreyaḥ kaivalyaṃ tena vetyalam | kālātivāhanāyaiva vinodāyoditā kriyā || 16 ||

Brahma said: Knowledge is indeed the supreme good; through it, one attains liberation. Actions are performed for the sake of passing time and for enjoyment.

ब्रह्मा ने कहा: ज्ञान ही परम कल्याण है; उससे ही कैवल्य प्राप्त होता है | काल व्यतीत करने और विनोद के लिए ही क्रियाएँ की जाती हैं |

6.87.17

अलब्धज्ञानदृष्टीनां क्रिया पुत्रपरायणम्। यस्य नास्त्यम्बरं पट्टं कम्बलं किं त्यजत्यसौ ॥ १७ ॥

alabdhajñānadṛṣṭīnāṃ kriyā putraparāyaṇam | yasya nāstyambaraṃ paṭṭaṃ kambalaṃ kiṃ tyajatyasau || 17 ||

For those who have not attained the vision of knowledge, actions are directed towards their children. What can one who has no clothes, silk, or blanket renounce?

जिन्होंने ज्ञान की दृष्टि प्राप्त नहीं की है, उनकी क्रियाएँ अपने बच्चों के लिए होती हैं। जिसके पास कपड़े, रेशम या कंबल नहीं है, वह क्या त्याग सकता है?

6.87.18

वासनामात्रसारत्वादज्ञस्य सफलाः क्रियाः। सर्वा एवाफला ज्ञस्य वासनामात्रसंक्षयात् ॥ १८ ॥

vāsanāmātrasāratvādajñasya saphalāḥ kriyāḥ | sarvā evāphalā jñasya vāsanāmātrasaṃkṣayāt || 18 ||

Due to the essence of mere desires, the actions of the ignorant are fruitful. All actions of the wise are fruitless due to the destruction of mere desires.

मात्र इच्छाओं के सार के कारण, अज्ञानी की क्रियाएँ फलदायी होती हैं। मात्र इच्छाओं के नाश के कारण, ज्ञानी की सभी क्रियाएँ निष्फल होती हैं।

6.87.19

सर्वा हि वासनाभावे प्रयान्त्यफलतां क्रियाः। अशुभाः फलवन्त्योपि सेकाभावे लता इव ॥ १९ ॥

sarvā hi vāsanābhāve prayāntyaphalatāṃ kriyāḥ | aśubhāḥ phalavantyopi sekābhāve latā iva || 19 ||

Indeed, all actions become fruitless in the absence of desires. Even auspicious actions become fruitless, like a vine without water.

निश्चय ही, इच्छाओं के अभाव में सभी क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं। पानी के अभाव में लता की तरह, शुभ क्रियाएँ भी निष्फल हो जाती हैं।

6.87.20

ऋत्वन्तरे यथा याति विलयं पूर्वमार्तवम्। तथैव वासनानाशे नाशमेति क्रियाफलम् ॥ २० ॥

ṛtvantare yathā yāti vilayaṃ pūrvamārtavam | tathaiva vāsanānāśe nāśameti kriyāphalam || 20 ||

Just as the previous season merges into the next, so too the fruit of actions merges into destruction with the annihilation of desires.

जैसे पिछला ऋतु अगले ऋतु में विलीन हो जाता है, वैसे ही इच्छाओं के नाश के साथ क्रियाओं का फल नष्ट हो जाता है।

6.87.21

न स्वभावेन फलति यथा शरलता फलम्। क्रिया निर्वासना पुत्र फलं फलति नो तथा ॥ २१ ॥

na svabhāvena phalati yathā śaralatā phalaṃ | kriyā nirvāsanā putra phalaṃ phalati no tathā || 21 ||

Just as a reed does not bear fruit by its nature, so too, actions do not bear fruit without the proper disposition.

जैसे नल अपने स्वभाव से फल नहीं देता, वैसे ही क्रियाएँ उचित वासना के बिना फल नहीं देतीं।

6.87.22

सयक्षवासनो बालो यक्षं पश्यति नान्यथा। सदुःखवासनो मूढो दुःखं पश्यति नान्यथा ॥ २२ ॥

sayakṣavāsanō bālō yakṣaṃ paśyati nānyathā | saduḥkhavāsanō mūḍhō duḥkhaṃ paśyati nānyathā || 22 ||

A child with the disposition of seeing spirits sees spirits and nothing else. A fool with the disposition of seeing sorrow sees sorrow and nothing else.

जिस बच्चे की वासना यक्ष देखने की होती है, वह यक्ष ही देखता है, और कुछ नहीं। जिस मूर्ख की वासना दुःख देखने की होती है, वह दुःख ही देखता है, और कुछ नहीं।

6.87.23

आकारभासुरात्युच्चैर्न ददाति फलं क्रिया । शुभाशुभा वा तज्ज्ञस्य फुल्ला शरलता यथा ॥ २३ ॥

ākārabhāsurātyuccairna dadāti phalaṃ kriyā | śubhāśubhā vā tajjñasya phullā śaralatā yathā || 23 ||

Actions, whether auspicious or inauspicious, do not bear fruit merely by their external appearance, just as a reed does not blossom by its form.

क्रियाएँ, चाहे वे शुभ हों या अशुभ, केवल अपने बाहरी रूप से फल नहीं देतीं, जैसे नल अपने रूप से नहीं खिलता।

6.87.24

वासना चेह नास्त्येव साहंकारादिरूपिणी । असत्यैवोदिता मौर्ख्यान्मरुभूमाविवाम्बुधिः ॥ २४ ॥

vāsanā ceha nāstyeva sāhaṃkārādirūpiṇī | asatyai voditā maurkhyānmārubhūmāvivāmbudhiḥ || 24 ||

There is no such thing as disposition (vāsanā) here, which is in the form of ego (ahaṃkāra) and other such things. It is merely an illusion arising from ignorance, like a mirage in the desert.

यहाँ वासना (वासना) नाम की कोई चीज नहीं है, जो अहंकार (अहंकार) और अन्य रूपों में हो। यह तो बस अज्ञान से उत्पन्न एक भ्रम है, जैसे रेगिस्तान में मृगतृष्णा।

6.87.25

यस्य मौर्ख्यं क्षयं यातं सर्वं ब्रह्मेति भावनात् । नोदेति वासना तस्य प्राज्ञस्येवाम्बुधिर्मरौ ॥ २५ ॥

yasya maurkhyam kṣayaṃ yātaṃ sarvaṃ brahmeti bhāvanāt | nōdeti vāsanā tasya prājñasyēvāmbudhir marau || 25 ||

For one whose ignorance has been destroyed and who sees everything as Brahman, no disposition arises, just as a mirage does not appear to the wise in the desert.

जिसका अज्ञान नष्ट हो गया है और जो सब कुछ ब्रह्म के रूप में देखता है, उसके लिए कोई वासना नहीं उत्पन्न होती, जैसे रेगिस्तान में मृगतृष्णा ज्ञानी को नहीं दिखाई देती।

6.87.26

वासनामात्रसंत्यागाज्जरामरणवर्जितम् । पदं भवति जीवोऽन्तर्भूयो जन्मविवर्जितम् ॥ २६ ॥

vāsanāmātrasaṃtyāgājjjarāmaraṇavarjitam | padaṃ bhavati jīvo'ntarbhūyo janmavivarjitam || 26 ||

By merely renouncing desires, one attains a state free from old age and death, becoming a liberated soul free from birth.

केवल वासनाओं का त्याग करने से बुढ़ापा और मृत्यु से मुक्त होकर जीव जन्म से मुक्त हो जाता है।

6.87.27

सवासनं मनो ज्ञेयं ज्ञानं निर्वासनं मनः । ज्ञानेन ज्ञेयमभ्येत्य पुनर्जीवो न जायते ॥ २७ ॥

savāsanaṃ mano jñeyaṃ jñānaṃ nirvāsanaṃ manaḥ | jñānena jñeyamabhyetya punarjīvo na jāyate || 27 ||

The mind with desires is to be known as impure, and the mind without desires is to be known as pure. By attaining knowledge, the knowable is realized, and the soul is not born again.

वासनाओं वाला मन अशुद्ध माना जाए, और वासनाओं से रहित मन शुद्ध माना जाए। ज्ञान प्राप्त करके, ज्ञेय को प्राप्त करके, आत्मा फिर से जन्म नहीं लेती।

6.87.28

चूडालोवाच ज्ञानमेव परं श्रेय इति ब्रह्मादयोऽपि ते । प्राहुर्महान्तो राजर्षे त्वं किमज्ञानवान्स्थितः ॥ २८ ॥

cūḍālovāca jñānameva paraṃ śreya iti brahmādayo'pi te | prāhurmahānto rājarṣe tvaṃ kimajñānavānsthitaḥ || 28 ||

Chudala said: Knowledge alone is the supreme good, even the great ones like Brahma and others say so. O royal sage, why do you remain in ignorance?

चूडाला ने कहा: ज्ञान ही परम कल्याण है, यह ब्रह्मा आदि महान लोग भी कहते हैं। हे राजर्षि, तुम अज्ञान में क्यों रहते हो?

6.87.29

इतः कमण्डलुरितो दण्डकाष्ठमितो बृसी । इत्यनर्थविलासेऽस्मिन्रमसे किं महीपते ॥ २९ ॥

itaḥ kamaṇḍalurito daṇḍakāṣṭhamito bṛsī | ityanarthavilāse'sminramase kiṃ mahīpate || 29 ||

Why do you delight in this meaningless play, O king? Here is a water pot, there is a staff, and here is a seat.

हे राजन, तुम इस अर्थहीन खेल में क्यों रमते हो? यहाँ कमंडलु है, वहाँ दण्ड है, और यहाँ आसन है।

6.87.30

कोऽहं कथमिदं जातं कथं शाम्यति चेति भोः । राजन्नावेक्षसे कस्मात्किमज्ञ इव तिष्ठसि ॥ ३० ॥

ko'haṃ kathamidaṃ jātaṃ kathaṃ śāmyati ceti bhoḥ | rājannāvekṣase kasmātkimajña iva tiṣṭhasi || 30 ||

O king, why do you not consider who you are, how this has come to be, and how it will end? Why do you stand like an ignorant person?

हे राजन, तुम यह क्यों नहीं सोचते कि तुम कौन हो, यह कैसे हुआ, और यह कैसे समाप्त होगा? तुम एक अज्ञानी की तरह क्यों खड़े हो?

6.87.31

कथं बन्धः कथं मोक्ष इति प्रश्नानुदाहरन् पारावारविदां पादान्कस्माद्राजन्न सेवसे ॥ ३१ ॥

kathaṃ bandhaḥ kathaṃ mokṣa iti praśrānudāharan pārāvāravidāṃ pādānkasmādrājanna sevase || 31 ||

How is bondage? How is liberation? Thus, you are asking questions. Why do you not serve the feet of those who know the highest truth, O king?

बंधन कैसे होता है? मोक्ष कैसे होता है? इस प्रकार आप प्रश्न पूछ रहे हैं। हे राजन्, परम सत्य को जानने वालों के चरणों की सेवा क्यों नहीं करते?

6.87.32

दुःस्पन्दसंविदा शैलकोटरे क्रिययानया जीवितं क्षिपयन्किं त्वं शिलाकीटवदास्थितः ॥ ३२ ॥

duḥspandasaṃvidā śailakoṭare kriyayānayā jīvitaṃ kṣipayankiṃ tvaṃ śilākīṭavadāsthitaḥ || 32 ||

With difficult-to-understand knowledge, in the cave of a mountain, by what action are you throwing away your life? Why are you standing like an insect in a stone?

दुःस्पन्दसंविदा (समझने में कठिन ज्ञान) शैलकोटरे (पहाड़ की गुफा में) क्रिययानया (किस क्रिया से) जीवितं (जीवन) क्षिपयन् (फेंक रहे हो) किं (क्यों) त्वं (तुम) शिलाकीटवदास्थितः (पत्थर के कीड़े की तरह खड़े हो)

6.87.33

साधूनां समदृष्टीनां परिप्रश्नेन सेवया संगमेन च सा युक्तिर्लभ्यते मुच्यते यया ॥ ३३ ॥

sādhūnāṃ samadṛṣṭīnāṃ paripraśnena sevayā saṃgamena ca sā yuktirlabhyate mucyate yayā || 33 ||

By questioning, serving, and associating with the wise who have equal vision, that logic is obtained by which one is liberated.

साधुओं के साथ प्रश्न पूछने, सेवा करने और संगत करने से वह युक्ति प्राप्त होती है जिससे मोक्ष मिलता है।

6.87.34

साधुनैव समं ग्रासं भुञ्जानो वनकोटरे तिष्ठावष्टब्धदुश्चेष्टो धराविवरकीटवत् ॥ ३४ ॥

sādhunaiva samaṃ grāsaṃ bhuñjāno vanakoṭare tiṣṭhāvaṣṭabdhaduśceṣṭo dharāvivarakīṭavat || 34 ||

Eating food with the wise in the forest cave, you stand motionless like an insect in a hole in the earth.

साधुओं के साथ वन की गुफा में भोजन करते हुए, तुम पृथ्वी के छेद में कीड़े की तरह निश्चल खड़े हो।

6.87.35

श्रीवसिष्ठ उवाच कान्तया देवरूपिण्या तयैवं प्रतिबोधितः अश्रुपूर्णमुखो वाक्यं शिखिध्वज उवाच ह ॥ ३५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca kāntayā devarūpiṇyā tayaivam pratibodhitaḥ aśrupūrṇamukho vākyaṃ śikhidhvaja uvāca ha || 35 ||

Sri Vasistha said: Thus awakened by the beautiful, divine-formed one, with tears filling his eyes, Shikhidhvaja spoke these words.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार सुंदर, देवी-रूप वाली से जागृत होकर, आँसुओं से भरे मुख से, शिखिध्वज ने ये शब्द कहे।

6.87.36

शिखिध्वज उवाच । अहो नु बोधितोऽस्म्यद्य चिरात्सुरसुत त्वया । मौर्ख्यादार्यसमासङ्गं मुक्त्वाहमवसं वने ॥ ३६ ॥

śikhidhvaja uvāca | aho nu bodhito'smiadya cirātsurasuta tvayā | maūrkhyādāryasamāsaṅgaṃ muktvāhamavasaṃ vane || 36 ||

Shikhidhvaja said: Alas! Today, after a long time, O son of the gods, you have awakened me. Leaving the company of the noble ones due to foolishness, I have been living in the forest.

शिखिध्वज ने कहा: अहो! आज बहुत दिनों के बाद, हे देवपुत्र, तुमने मुझे जगाया है | मूर्खता से आर्यों के संग छोड़कर मैं वन में रह रहा हूँ |

6.87.37

अहो नु मे क्षयं यातं मन्ये पापमशेषतः । यत्त्वमेव समागत्य संप्रबोधयसीह माम् ॥ ३७ ॥

aho nu me kṣayaṃ yātaṃ manye pāpamaśeṣataḥ | yattvameva samāgatya saṃprabodhayasīha mām || 37 ||

Alas! I think all my sins have been destroyed, as you have come and awakened me.

अहो! मैं सोचता हूँ कि मेरे सारे पाप नष्ट हो गए हैं, क्योंकि तुम आकर मुझे जगा रहे हो |

6.87.38

गुरुस्त्वं मे पिता त्वं मे मित्रं त्वं मे वरानन । शिष्यो नमस्करोम्यद्य पादौ तव कृपां कुरु ॥ ३८ ॥

gurustvaṃ me pitā tvaṃ me mitraṃ tvaṃ me varānana | śiṣyo namaskaromyadya pādau tava kṛpāṃ kuru || 38 ||

You are my guru, you are my father, you are my friend, O beautiful-faced one. Today, as a disciple, I bow down to your feet; please show mercy.

तुम मेरे गुरु हो, तुम मेरे पिता हो, तुम मेरे मित्र हो, हे सुंदर मुख वाले | आज शिष्य के रूप में मैं तुम्हारे चरणों में नमन करता हूँ; कृपा करो |

6.87.39

यदुदारतमं वेत्सि यस्मिन् ज्ञाते न शोच्यते । भवामि निर्वृतो येन तद्ब्रह्मोपदिशाशु मे ॥ ३९ ॥

yadudāratamaṃ vetsi yasmin jñāte na śocyate | bhavāmi nirvṛto yena tadbrahmopadiśāśu me || 39 ||

You know that which is the most supreme, knowing which there is no sorrow. By knowing which I become content, please teach me that Brahman immediately.

तुम उसे जानते हो जो सबसे उत्तम है, जिसे जानकर दुःख नहीं होता | जिसे जानकर मैं संतुष्ट हो जाऊँ, उस ब्रह्म को मुझे तुरंत सिखाओ |

6.87.40

घटज्ञानादयो ज्ञाने विभागाः सन्त्यनेकशः । ज्ञानानां परमं ज्ञानं कतरत्तारकं भवेत् ॥ ४० ॥

ghaṭajñānādayo jñāne vibhāgāḥ santyanekaśaḥ | jñānānāṃ paramaṃ jñānaṃ katarattārakaṃ bhavet || 40 ||

There are many kinds of knowledge, starting from the knowledge of a pot. Among all kinds of knowledge, which one is the supreme knowledge that leads to liberation?

ज्ञान की कई किस्में हैं, जो घड़े के ज्ञान से शुरू होती हैं | सभी ज्ञानों में से कौन सा ज्ञान उत्तम है जो मुक्ति की ओर ले जाता है?

6.87.41

चूडालोवाच । यद्युपादेयवाक्योऽहं राजर्षे तद्वदामि ते । यथा ज्ञानमिदं किंचिन्न वक्ष्ये स्थाणुकाकवत् ॥ ४१ ॥

cūḍālovāca | yadyupādeyavākyo'haṃ rājarṣe tadvadāmi te | yathā jñānamidaṃ kiñcinna vakṣye sthāṇukākavat || 41 ||

Chudala said: If I am worthy of being listened to, O royal sage, then I will speak to you. Just as a crow does not speak of any knowledge, I will not speak of this knowledge.

चूडाला ने कहा: यदि मैं सुनने योग्य हूँ, हे राजर्षि, तो मैं आपसे कहूँगी। जैसे कौआ किसी ज्ञान के बारे में नहीं बोलता, वैसे ही मैं इस ज्ञान के बारे में नहीं बोलूँगी।

6.87.42

अनुपादेयवाक्यस्य वक्तुः पृष्टस्य लीलया । व्रजन्त्यफलतां वाचस्तमसीवाक्षसंविदः ॥ ४२ ॥

anupādeyavākyasya vaktuḥ pṛṣṭasya līlayā | vrajantyaphalatāṃ vācastamasīvākṣasaṃvidaḥ || 42 ||

The words of one who speaks without being worthy of being listened to, when asked playfully, become fruitless, like the sight of darkness.

जिसकी बात सुनने योग्य नहीं है, उसकी बातें, जब खेल-खेल में पूछे जाने पर, निष्फल हो जाती हैं, जैसे अंधेरे की दृष्टि।

6.87.43

शिखिध्वज उवाच । यद्वक्षि तदुपादेयं मया विधिरिव श्रुतेः । अविचारितमेवाशु सत्यमेतद्वचो मम ॥ ४३ ॥

śikhidhvaja uvāca | yadvakṣi tadupādeyaṃ mayā vidhiriva śruteḥ | avicāritamevāśu satyametadvaco mama || 43 ||

Shikhidhvaja said: Whatever you say is worthy of being listened to by me, like the Vedas. Without any doubt, this statement of mine is true.

शिखिध्वज ने कहा: जो कुछ भी आप कहेंगे, वह मेरे लिए सुनने योग्य है, जैसे वेद। बिना किसी सोच-विचार के, यह मेरा वचन सत्य है।

6.87.44

चूडालोवाच । यथा बालः पितुर्वाक्यं मुक्तहेतूपपादनम् । आदत्ते हि तथैव त्वं गृहाणैतद्वचो मम ॥ ४४ ॥

cūḍālovāca | yathā bālaḥ piturvākyaṃ muktahētūpapādanam | ādatte hi tathaiva tvaṃ gṛhāṇaitadvaco mama || 44 ||

Chudala said: Just as a child accepts the words of his father without any reasoning or evidence, so should you accept my words.

चूडाला ने कहा: जैसे एक बच्चा अपने पिता की बात बिना किसी तर्क या प्रमाण के स्वीकार करता है, वैसे ही आप मेरी बात स्वीकार करें।

6.87.45

श्रवणानन्तरं बुद्ध्या शुभमित्येव भावयन्। शृणु गीतमिव त्यक्त्वा हेत्वर्थित्वं वचो मम ॥ ४५ ॥

śravaṇānantaraṃ buddhyā śubhamityeva bhāvayan | śṛṇu gītamiva tyaktvā hetvarthitvaṃ vaco mama || 45 ||

After listening, consider with your intellect that it is auspicious. Listen to my words like a song, giving up the need for reasons and meanings.

सुनने के बाद, अपनी बुद्धि से सोचें कि यह शुभ है। मेरी बातों को गीत की तरह सुनें, कारणों और अर्थों की आवश्यकता को छोड़कर।

6.87.46

स्वचरितसदृशं तथोदयन्त्याश्चिरसमयेन विबोधनं च बुद्धेः। भवभयसुतरं महामतीनां शृणु कथयामि कथाक्रमं मनोज्ञम् ॥ ४६ ॥

svacaritasadṛśaṃ tathodayantyāścirasamayena vibodhanaṃ ca buddheḥ | bhavabhayasutaraṃ mahāmatīnāṃ śṛṇu kathayāmi kathākramaṃ manojñam || 46 ||

Listen, I will narrate a delightful sequence of stories that awaken the intellect after a long time, similar to one's own conduct, and which easily cross the fears of worldly existence for the great-minded.

सुनो, मैं एक मनोरम कथा क्रम सुनाता हूँ जो लंबे समय के बाद बुद्धि को जाग्रत करती है, अपने चरित्र के समान, और जो महामना लोगों के लिए संसार के भय को आसानी से पार करती है।

Chapter 88

6.88.1

चूडालोवाच । अस्ति कश्चित्पुमान् श्रीमान् स्थानं नित्यविरुद्धयोः । गुणलक्ष्म्योरशेषेण यथाब्धिर्वाडवाम्बुनोः ॥ १ ॥

chūḍālovāca | asti kaścitpumān śrīmān sthānaṃ nityaviruddhayoḥ | guṇalakṣmyor aśeṣeṇa yathābdhirvāḍavāmbunoḥ || 1 ||

Chudala said: There is a certain wealthy man who is always in a contradictory position, just like the ocean and the submarine fire are inseparable.

चूडाला ने कहा: एक ऐसा धनवान व्यक्ति है जो हमेशा विरोधी स्थिति में रहता है, जैसे समुद्र और समुद्र में आग अलग नहीं हो सकते।

6.88.2

कलावानस्त्रकुशलो व्यवहारविचक्षणः । सर्वसंकल्पसीमान्तो न तु जानाति तत्पदम् ॥ २ ॥

kalāvānastrakuśalo vyavahāravicakṣaṇaḥ | sarvasaṃkalpasīmānto na tu jānāti tatpadam || 2 ||

He is skilled in arts and weapons, wise in worldly affairs, and capable of achieving all his goals, yet he does not know that state.

वह कला और अस्त्रों में निपुण है, संसार के व्यवहार में बुद्धिमान है, और अपने सभी लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्षम है, फिर भी वह उस स्थिति को नहीं जानता।

6.88.3

अनन्तयत्नसंसाध्ये स चिन्तामणिसाधने । प्रवृत्तो वाडवो वह्निरब्धिसंशोषणे यथा ॥ ३ ॥

anantayatnasādhye sa cintāmaṇisādhane | pravṛtto vāḍavo vahnirabdhisanśoṣaṇe yathā || 3 ||

He is engaged in the endless pursuit of the wish-fulfilling gem, like the submarine fire trying to dry up the ocean.

वह अनंत प्रयास से चिंतामणि की प्राप्ति में लगा हुआ है, जैसे समुद्र में आग समुद्र को सुखाने की कोशिश कर रही है।

6.88.4

तस्य यत्नेन महता कालेनाध्यवसायिनः । सिद्धश्चिन्तामणिः किंवा न सिद्ध्यत्युद्यतात्मनाम् ॥ ४ ॥

tasya yatnena mahatā kālenādhyavasāyinaḥ | siddhaścintāmaṇiḥ kiṃvā na siddhyatyudyatātmanām || 4 ||

Even with great effort and over a long period of time, the wish-fulfilling gem may or may not be attained by those who are determined.

बहुत प्रयास और लंबे समय के बाद भी, चिंतामणि उन दृढ़ संकल्प वालों द्वारा प्राप्त हो सकती है या नहीं।

6.88.5

प्रवृत्तिमुद्यमं प्रज्ञां प्रयुंक्ते चेदखेदवान् । अकिंचनोऽपि शक्तत्वं समवाप्नोत्यविघ्नतः ॥ ५ ॥

pravṛttimudyamaṃ prajñāṃ prayuṅkte cedakhedavān | akiṃcano'pi śaktatvaṃ samavāpnotyavighnataḥ || 5 ||

If one applies effort, enthusiasm, and wisdom without frustration, even the poorest can attain power without obstacles.

यदि कोई व्यक्ति प्रयास, उत्साह, और बुद्धिमत्ता को बिना निराशा के लगाता है, तो Even the poorest can attain power without obstacles.

6.88.6

मणिमग्रे स्थितप्रायं हस्तप्राप्यं ददर्श सः । मेरावुदयश्रृङ्गस्थो मुनिरिन्दुमिवोदितम् ॥ ६ ॥

maṇimagre sthitaprāyaṃ hastaprāpyaṃ dadarśa saḥ | merāvudayaśrṛṅgastaho munirindumivoditam || 6 ||

He saw the jewel, which was mostly situated at the top of the mountain, within reach of his hand, like the moon rising from the peak of Meru.

उसने मणि को देखा, जो पहाड़ के शिखर पर अधिकतर स्थित था, हाथ की पहुँच में, मानो मेरु के शिखर से उदित हुआ चंद्रमा।

6.88.7

बभूव मणिराजेन्द्रे न तु निश्चयवानसौ । राज्ये द्रागिति संप्राप्ते सुदीन इव पामरः ॥ ७ ॥

babhūva maṇirājendre na tu niścayavānasau | rājye drāgiti saṃprāpte sudīna iva pāmaraḥ || 7 ||

He became uncertain about the jewel, like a poor man who has suddenly gained a kingdom.

उसने मणि के बारे में अनिश्चित हो गया, मानो एक गरीब व्यक्ति अचानक एक राज्य प्राप्त कर लेता है।

6.88.8

इदं संचिन्तयामास मनसा स्मयशालिना । संप्राप्तोपेक्षया दीर्घदुःखसंभ्रमशालिना ॥ ८ ॥

idaṃ saṃcintayāmāsa manasā smayaśālinā | saṃprāptopēkṣayā dīrghaduḥkhasaṃbhramaśālinā || 8 ||

He thought about this with a mind full of wonder and confusion, due to the long-lasting sorrow and agitation he had experienced.

उसने इस बारे में आश्चर्य और भ्रम से भरे मन से सोचा, जो उसने लंबे समय तक दुःख और उलझन का अनुभव किया था।

6.88.9

अयं मणिर्मणिर्नायं मणिश्चेत्तद्भवेन्न सः । स्पृशामि न स्पृशाम्येनं कदाचित्स्पर्शतो व्रजेत् ॥ ९ ॥

ayaṃ maṇirmṇirnāyaṃ maṇiścettadbhavennna saḥ | spṛśāmi na spṛśāmyenaṃ kadācitsparśato vrajeta || 9 ||

Is this a jewel or not a jewel? If it is a jewel, it should not be so. Should I touch it or not? It might disappear if touched.

यह मणि है या नहीं? अगर यह मणि है, तो ऐसा नहीं होना चाहिए। मुझे इसे छूना चाहिए या नहीं? अगर मैं छू लूँ तो यह गायब हो सकता है।

6.88.10

नैतावतैव कालेन मणीन्द्रः किल सिद्ध्यति । यत्नेन जीवितान्तेन सिद्ध्यतीत्यागमक्रमः ॥ १० ॥

naitāvataiva kālena maṇīndraḥ kila siddhyati | yatnena jīvitāntena siddhyatītyāgamakramaḥ || 10 ||

A precious jewel is not attained so easily in such a short time. It is achieved through great effort and dedication, even to the end of one's life, as per the scriptures.

एक बहुमूल्य मणि इतनी छोटी अवधि में इतनी आसानी से नहीं मिलती। यह बड़े प्रयास और समर्पण से प्राप्त होती है, जीवन के अंत तक, शास्त्रों के अनुसार।

6.88.11

कृपणः कूणितेनाक्ष्णा लोलालातलतोपमम् । रत्नालोकं प्रपश्यामि द्विचन्द्रत्वमिव भ्रमात् ॥ ११ ॥

kṛpaṇaḥ kūṇitenākṣṇā lolālātalatopamam | ratnālokaṃ prapaśyāmi dvicandratvamiva bhramāt || 11 ||

I, the miser, with squinting eyes, see the gleam of the gem, which appears like two moons due to my delusion.

मैं, कृपण, टेढ़ी आँखों से, रत्न की चमक देख रहा हूँ, जो मेरे भ्रम के कारण दो चंद्रमाओं की तरह लग रही है।

6.88.12

कुत एतावती स्फीता भाग्यसंपन्ममागता। अधुनैव यदाप्नोमि मणीन्द्रं सर्वसिद्धिदम्॥ १२॥

kuta etāvatī sphītā bhāgyasaṃpanmamāgatā | adhunaiva yadāpnomi maṇīndraṃ sarvasiddhidam || 12 ||

From where has such great fortune come to me? Now, I am obtaining the supreme gem, which grants all successes.

यह इतनी बड़ी संपत्ति मुझे कहाँ से मिली? अब, मैं सभी सिद्धियों को देने वाले उस श्रेष्ठ रत्न को प्राप्त कर रहा हूँ।

6.88.13

केचिदेव महान्तस्ते महाभाग्या भवन्ति हि। येषामल्पेन कालेन भवन्त्यभिमुखाः श्रियः॥ १३॥

kecidēva mahāntastē mahābhāgyā bhavanti hi | yēṣāmalpēna kālēna bhavantyabhimukhāḥ śriyaḥ || 13 ||

Only a few great ones become highly fortunate, those to whom prosperity comes quickly in a short time.

केवल कुछ ही महान लोग अत्यंत भाग्यशाली होते हैं, जिनके लिए समृद्धि थोड़े समय में ही आती है।

6.88.14

अहमल्पतपाः साधुवराको मानुषः किल। सिद्धयः कथमायान्ति मामभाग्यैकभाजनम्॥ १४॥

ahamalpatapāḥ sādhuvarāko mānuṣaḥ kila | siddhayaḥ kathamāyānti māmabhāgyaikabhājanam || 14 ||

I, who have done little penance, am a mere human, a seeker of virtue. How can successes come to me, who am the sole vessel of misfortune?

मैं, जिसने थोड़ी तपस्या की है, एक साधारण मनुष्य हूँ, एक साधु वर का आकांक्षी। सिद्धियाँ मुझे, जो दुर्भाग्य का एकमात्र पात्र हूँ, कैसे आ सकती हैं?

6.88.15

एवं विकल्पसंकल्पैश्चिरमज्ञः परामृशन्। न मणिग्रहणे यत्नमकार्षीन्मौरख्यमोहितः॥ १५॥

evaṃ vikalpasamkalpaiścciramajñaḥ parāmṛśan | na maṇigrahaṇe yatnamakārṣīnmaukhyamohitaḥ || 15 ||

Thus, with various doubts and thoughts, the ignorant one contemplated for a long time. Due to his foolishness and delusion, he did not make an effort to take the gem.

इस प्रकार, विभिन्न संदेहों और विचारों के साथ, अज्ञानी ने लंबे समय तक विचार किया। अपनी मूर्खता और भ्रम के कारण, उसने रत्न लेने का प्रयास नहीं किया।

6.88.16

न यदा येन लब्धव्यं न तत्प्राप्नोत्यसौ तदा। चिन्तामणिरवाप्तोऽपि दुर्धिया हेलयोज्झितः॥ १६॥

na yadā yena labdhavyaṃ na tatprāpnotyasau tadā | cintāmaṇiravāpto'pi durdhiyā helayojjhitaḥ || 16 ||

When one does not obtain what is to be gained by a certain means, then one does not achieve it at that time. Even if one has obtained the wish-fulfilling gem, one is deprived of it due to foolishness and negligence.

जब कोई व्यक्ति किसी साधन से जो प्राप्त करना होता है, उसे नहीं पाता है, तब वह उस समय उसे प्राप्त नहीं करता है। चाहे उसने चिंतामणि प्राप्त कर ली हो, फिर भी मूर्खता और असावधानी के कारण वह उससे वंचित हो जाता है।

6.88.17

इति तस्मिन्स्थिते यातो मणिरुड्डीय सिद्धयः । त्यजन्ति ह्यवमन्तारं शरो गुणमिवोज्झितः ॥ १७ ॥

iti tasminsthite yāto maṇiruḍḍīya siddhayaḥ | tyajanti hyavamantāraṃ śaro guṇamivojjhitaḥ || 17 ||

Thus, when the gem is lost, the accomplishments (siddhayaḥ) depart, abandoning the one who disrespects them, just as an arrow leaves its qualities when it is released.

इस प्रकार, जब मणि खो जाती है, तब सिद्धियाँ (सफलताएँ) चली जाती हैं, उसे छोड़ देती हैं जो उनका अपमान करता है, जैसे बाण छोड़े जाने पर अपने गुणों को छोड़ देता है।

6.88.18

हत्वा प्राज्ञपदं पुंसः संयान्ति किल सिद्धयः । आगताः संप्रयच्छन्ति सर्वं यान्त्यसहत्यलम् ॥ १८ ॥

hatvā prajñapadaṃ puṃsaḥ saṃyānti kila siddhayaḥ | āgatāḥ saṃprayacchanti sarvaṃ yāntyasahatyalam || 18 ||

Having destroyed the path of wisdom in a person, the accomplishments indeed depart. They come and offer everything, but they do not stay without respect.

जब किसी व्यक्ति के ज्ञान के मार्ग को नष्ट कर दिया जाता है, तब सिद्धियाँ निश्चित रूप से चली जाती हैं। वे आती हैं और सब कुछ देती हैं, लेकिन बिना सम्मान के नहीं रहतीं।

6.88.19

पुमान्भूयः क्रियायत्नं चक्रे रत्नेन्द्रसाधने । नोद्विजन्ते स्वकार्येषु जना अध्यवसायिनः ॥ १९ ॥

pumānbhūyaḥ kriyāyatnaṃ cakre ratnendrasādhane | noudvijante svakāryeṣu janā adhyavasāyinaḥ || 19 ||

The person again made efforts in the acquisition of the jewel. People who are determined do not get disturbed in their duties.

व्यक्ति ने फिर से रत्न की प्राप्ति में प्रयास किया। जो लोग दृढ़ संकल्प रखते हैं, वे अपने कर्तव्यों में विचलित नहीं होते।

6.88.20

ददर्शाथ कचद्रूपं काचखण्डमखण्डितम् । हसद्भिर्वञ्चकैः सिद्धैः पुरस्कृतमलक्षितैः ॥ २० ॥

dadarśātha kacadrūpaṃ kācakhaṇḍamakhaṇḍitam | hasadbhirvañcakaiḥ siddhaiḥ puraskṛtamalakṣitaiḥ || 20 ||

Then he saw a piece of glass, not broken, accompanied by laughing deceivers, the accomplished ones, unnoticed.

फिर उसने एक टूटे हुए काँच के टुकड़े को देखा, जो हँसते हुए धोखेबाजों, सिद्धों द्वारा अनदेखा किया गया था।

6.88.21

अयं चिन्तामणिरिति मूढस्तस्मिन्स वस्तुताम् । बुबुधे मोहितो ह्यज्ञो मृदं हेमेति पश्यति ॥ २१ ॥

ayaṃ cintāmaṇiriti mūḍhastasmin sa vastutām | bubudhe mohito hyajño mṛdaṃ hemāiti paśyati || 21 ||

This ignorant person, thinking it to be the wish-fulfilling gem, understood its reality | Deluded and ignorant, he sees mud as gold

यह मूढ़ व्यक्ति, इसे चिन्तामणि समझकर, इसकी वास्तविकता को समझा | मोहित और अज्ञानी, वह मिट्टी को सोना समझता है

6.88.22

अष्टौ षष्ठं द्विषं मित्रं रज्जुं सर्पं स्थलं जलम्। चन्द्रौ द्वौ कुरुते चित्तगतो मोहोऽमृतं विषम्॥ २२॥

aṣṭau ṣaṣṭhaṃ dviṣaṃ mitraṃ rajjuṃ sarpaṃ sthalaṃ jalam | candrau dvau kurute cittagato moho'mṛtaṃ viṣam || 22 ||

Eight, sixth, enemy, friend, rope, snake, land, water | The mind's delusion makes two moons, turning nectar into poison

आठ, छठा, शत्रु, मित्र, रस्सी, साँप, भूमि, जल | मन का भ्रम दो चाँद बनाता है, अमृत को विष बनाता है

6.88.23

तं दग्धमणिमादाय प्राक्तनीं च श्रियं जहौ। सर्वं चितामणेरस्मात्प्राप्यते किं धनैरिह॥ २३॥

taṃ dagdhamṇimādāya prāktanīṃ ca śriyaṃ jahau | sarvaṃ citāmaṇerasmātprāpyate kiṃ dhanairiha || 23 ||

Taking that burnt gem, he lost his former prosperity | What is the use of wealth here, as everything is obtained from this wish-fulfilling gem

उस जले हुए रत्न को लेकर, उसने अपनी पुरानी समृद्धि खो दी | यहाँ धन का क्या उपयोग, जब यह चिन्तामणि से सब कुछ प्राप्त होता है

6.88.24

देशोऽयमसुखो रूक्षो जनैः पापिभिरावृतः। किं तद्गेहं गतप्रायं किं नाम मम बन्धवः॥ २४॥

deśo'yamasukho rūkṣo janaiḥ pāpibhirāvṛtaḥ | kiṃ tadgehaṃ gataprāyaṃ kiṃ nāma mama bandhavāḥ || 24 ||

This land is unhappy and harsh, filled with sinful people | What is that home, almost gone, what are my relatives called

यह देश दुःखी और कठोर है, पापी लोगों से भरा हुआ | वह घर क्या है, जो लगभग चला गया, मेरे रिश्तेदार क्या कहलाते हैं

6.88.25

दूरं गत्वा यथाकामं सुखं तिष्ठामि संपदा। इत्यादाय मणिं मूढः शून्यकाननमाययौ॥ २५॥

dūraṃ gatvā yathākāmaṃ sukhaṃ tiṣṭhāmi saṃpadā | ityādāya maṇiṃ mūḍhaḥ śūnyakānanamāyayau || 25 ||

Having gone far, I will stay happily as I wish with wealth | Thus taking the gem, the foolish one went to the empty forest

दूर जाकर, मैं अपनी इच्छा से सुख से रहूँगा धन के साथ | इस प्रकार रत्न लेकर, मूर्ख व्यक्ति खाली जंगल में चला गया

6.88.26

तत्र काचकणेनासौ तेन तामापदं ययौ। कज्जलाद्रेरिव निभा मौर्ख्यस्यैवाङ्ग या समा॥ २६॥

tatra kācakaṇenāsau tena tāmāpadaṃ yayau | kajjalādreriva nibhā maurkhyasyaivāṅga yā samā || 26 ||

There, with a piece of glass, he met with that calamity | Just as the black mountain is the very embodiment of foolishness

वहाँ, काँच के टुकड़े से उसने उस विपत्ति का सामना किया | जैसे काजल पहाड़ ही मूर्खता का प्रतीक है

6.88.27

दुःखानि मौर्ख्यविभवेन भवन्ति यानि नैवापदो न च जरामरणेन तानि। सर्वापदां शिरसि तिष्ठति मौर्ख्यमेकं कृष्णं जनस्य वपुषामिव केशजालम्॥ २७॥

duḥkhāni maurkhyavibhavena bhavanti yāni naivāpadō na ca jarāmaraṇena tāni | sarvāpadāṃ śirasi tiṣṭhati maurkhyamekaṃ kṛṣṇaṃ janasya vapuṣāmiva keśajālam || 27 ||

The miseries that arise from foolishness are not calamities nor are they due to old age or death. Foolishness alone stands at the head of all calamities, like the black hair on the heads of people.

मूर्खता से उत्पन्न दुःख न तो विपत्ति हैं और न ही बुढ़ापे या मृत्यु के कारण हैं। मूर्खता ही सभी विपत्तियों का मूल कारण है, जैसे लोगों के सिर पर काले बालों की तरह।

Chapter 89

6.89.1

चूडालोवाच । अथेममपरं रम्यं वृत्तान्तं शृणु भूमिप । परं प्रबोधनं बुद्धेः साधो सदृशमात्मनः ॥ १ ॥

cūḍālovāca | athe mam aparaṃ ramyaṃ vṛttāntaṃ śṛṇu bhūmipa | paraṃ prabodhanaṃ buddheḥ sādho sadṛśamātmanaḥ || 1 ||

Chudala said: Now listen to this charming story, O King, which is the supreme awakening of the intellect, O virtuous one, suitable for the self.

चूडाला ने कहा: अब इस मनोरम कथा को सुनो, हे राजन्, जो बुद्धि का परम जागरण है, हे साधु, आत्मा के लिए उपयुक्त।

6.89.2

अस्ति विन्ध्यवने हस्ती महायूथपयूथपः । आगस्त्या शुद्धया बुद्ध्या विन्ध्येनेवोदितः स्वतः ॥ २ ॥

asti vindhyavane hastī mahāyūthapayūthapaḥ | āgastyā śuddhayā buddhyā vindhyenevoditaḥ svataḥ || 2 ||

There is an elephant in the Vindhya forest, the leader of a great herd, who, like the Vindhya mountain, is awakened by the pure intellect of Agastya.

विंध्य वन में एक हाथी है, एक महान झुंड का नेता, जो अगस्त्य की शुद्ध बुद्धि से, विंध्य पर्वत की तरह, स्वयं जाग्रत है।

6.89.3

वज्रार्चिर्विषमौ दीर्घौ तस्यास्तां दशनौ सितौ । कल्पानलशिखातुल्यौ सुमेरून्मूलनक्षमौ ॥ ३ ॥

vajrārcirviṣamau dīrghau tasyāstāṃ daśanau sitau | kalpānalaśikhātulyau sumerūnmūlanakṣamau || 3 ||

His two tusks are like the rays of a thunderbolt, uneven and long, white, comparable to the flames of the fire of destruction, capable of uprooting Mount Meru.

उसके दो दाँत वज्र की किरणों के समान हैं, असमान और लंबे, सफेद, प्रलय की अग्नि की लपटों के समान, मेरु पर्वत को उखाड़ने में सक्षम।

6.89.4

स बद्धो लोहजालेन हस्तिपेन किलाभितः । मुनीन्द्रेणेव विन्ध्याद्रिरुपेन्द्रेणेव वा बलिः ॥ ४ ॥

sa baddho lohajālena hastipena kilābhitaḥ | munīndreṇeva vindhyādrirupendreṇeva vā baliḥ || 4 ||

He is bound with an iron net by the elephant keeper, as the Vindhya mountain is by the sage Agastya, or as Bali is by Indra.

वह लोहे के जाल से हाथी पालक द्वारा बंधा हुआ है, जैसे विंध्य पर्वत अगस्त्य ऋषि द्वारा बंधा हुआ है, या जैसे बलि इंद्र द्वारा बंधा हुआ है।

6.89.5

निबद्धो यन्त्रणामाप शस्त्रकुम्भर्दितो गजः । तां जगाम व्यथां धीरो नवाग्नौ पुरमेति याम् ॥ ५ ॥

nibaddho yantraṇāmāpa śastrakumbhardito gajaḥ | tāṃ jagāma vyathāṃ dhīro navāgnau purameti yām || 5 ||

The elephant, bound with instruments and tormented by weapons and hooks, experienced that pain which one feels when entering a city on fire.

हाथी, उपकरणों से बंधा हुआ और हथियारों और अंकुशों से पीड़ित, उस पीड़ा का अनुभव करता है जो कोई आग में जलते हुए शहर में प्रवेश करते समय महसूस करता है।

6.89.6

रिपौ हस्तिपके दूरादपश्यति स वारणः । अयःसमुद्गके यस्मिन्निनाय दिवसत्रयम् ॥ ६ ॥

ripau hastipake dūrādapashyati sa vāraṇaḥ | ayaḥsamudgake yasminninaya divasatrayam || 6 ||

The enemy saw the elephant from a distance, tied to an iron pillar, where it had spent three days.

शत्रु ने दूर से हाथी को देखा, जो लोहे के खंभे से बंधा हुआ था, जहाँ उसने तीन दिन बिताए थे।

6.89.7

खेदान्निगडनिर्भेदे यत्नवान्स मतंगजः । चकार किकिणीक्काणं मुखोद्धातैरथान्यदा ॥ ७ ॥

khedān nigaḍanirbhede yatnavān sa mataṃgajaḥ | cakāra kikiṇīkvāṇaṃ mukhoddhātair athānyadā || 7 ||

Out of distress, the elephant, with effort, tried to break the chains. At another time, it made a buzzing sound with its trunk raised.

दुःख से, हाथी ने प्रयास से जंजीर तोड़ने की कोशिश की। एक और समय पर, उसने अपने सूंड को ऊपर उठाकर एक भनभनाहट की आवाज की।

6.89.8

दन्ताभ्यां यत्नतस्ताभ्यां मुहूर्तद्वितयेन सः । बभञ्ज शृङ्खलाजालं स्वर्गार्गलमिवासुरः ॥ ८ ॥

dantābhyāṃ yatnatastābhyāṃ muhūrtadvitayena saḥ | babhañja śṛṅkhalājālaṃ svargārgalamivāsuraḥ || 8 ||

With great effort, using its tusks, the elephant broke the chain net in two moments, as if it were a demon breaking the gates of heaven.

बड़े प्रयास से, अपने दांतों का उपयोग करके, हाथी ने दो पलों में जंजीर के जाल को तोड़ दिया, मानो कोई असुर स्वर्ग के द्वार तोड़ रहा हो।

6.89.9

तं तस्य निगडच्छेदमपश्यद्दूरतो रिपुः । बलेः स्वर्गावदलनं हरिर्मेरुतलादिव ॥ ९ ॥

taṃ tasya nigaḍacchedam apaśyad dūrato ripuḥ | baleḥ svargāvadalanaṃ harir merutalādiva || 9 ||

The enemy saw from a distance the elephant breaking the chains, as if it were Indra destroying the heavenly gardens from the peak of Mount Meru.

शत्रु ने दूर से देखा कि हाथी जंजीर तोड़ रहा है, मानो इंद्र मेरु पर्वत के शिखर से स्वर्गीय बगीचों को नष्ट कर रहे हों।

6.89.10

तस्य विच्छिन्नपाशस्य मूर्ध्नि तालतरो रिपुः । पपात क्रमतः स्वर्गं हरिर्मेरोर्बलेरिव ॥ १० ॥

tasya vicchinnapāśasya mūrdhni tālataro ripuḥ | papāta kramataḥ svargaṃ harir meror baleriva || 10 ||

The enemy fell from the head of the elephant, whose chains were broken, as if Indra fell from the peak of Mount Meru to heaven.

शत्रु हाथी के सिर से गिरा, जिसकी जंजीर टूट गई थी, मानो इंद्र मेरु पर्वत के शिखर से स्वर्ग में गिरे हों।

6.89.11

स पतन्पादपद्माभ्यामप्राप्य करिणः शिरः । पपातोर्व्यां फलं पक्वं वाताहतमिवाकुलः ॥ ११ ॥

sa patanpādapadmābhyāmaprāpya kariṇaḥ śiraḥ | papātourvyāṃ phalaṃ pakvaṃ vātāhatamivākulaḥ || 11 ||

He, not reaching the head of the elephant with his lotus-like feet, fell to the ground like a ripe fruit shaken by the wind, distressed.

वह हाथी के सिर तक अपने कमल जैसे पैरों से न पहुंच सका और हवा से झकझोरे पके फल की तरह परेशान होकर धरती पर गिर पड़ा।

6.89.12

तं पुरः पतितं दृष्ट्वा महेभः करुणां ययौ । स्फुरत्स्फारगुणाः सन्तः सन्ति तिर्यग्गतावपि ॥ १२ ॥

taṃ puraḥ patitaṃ dṛṣṭvā mahebhaḥ karuṇāṃ yayau | sphuratsphāraguṇāḥ santaḥ santi tiryaggatāvapi || 12 ||

Seeing him fallen before, the great one felt compassion. Even those who are in lower forms of life have qualities that shine.

उसे सामने गिरा हुआ देखकर महान व्यक्ति को दया आ गई। निम्न जीवन रूपों में भी ऐसे गुण होते हैं जो चमकते हैं।

6.89.13

पतितं दलयामीति किं नाम मम पौरुषम् । वारणोऽपीति कलयन्न जघान स तं रिपुम् ॥ १३ ॥

patitaṃ dalayāmīti kiṃ nāma mama pauruṣam | vāraṇo'pīti kalayann na jaghāna sa taṃ ripum || 13 ||

Thinking, 'He has fallen, should I strike him down?' What kind of valor is this of mine? Even though he is an elephant, he did not kill that enemy.

सोचा, 'वह गिर गया है, क्या मैं उसे मार डालूँ?' मेरा यह कैसा साहस है? भले ही वह हाथी है, उसने उस शत्रु को नहीं मारा।

6.89.14

केवलं निगडव्यूहं विदार्याभिजगाम ह । विततं सेतुमुत्सार्य विपुलौघ इवाम्भसः ॥ १४ ॥

kevalaṃ nigaḍavyūhaṃ vidāryābhijagāma ha | vitataṃ setumutsārya vipulaugha ivāmbhasaḥ || 14 ||

He merely broke the array of chains and approached. Like a vast flood of water, he crossed the extended bridge.

उसने केवल श्रृंखला की व्यूह रचना को तोड़ा और आगे बढ़ा। विशाल जल की बाढ़ की तरह, उसने फैले हुए पुल को पार किया।

6.89.15

दयामाश्रित्य मातङ्गो भङ्क्त्वा जालं जगाम ह । विदार्य मेघसंघातं नभसीव दिवाकरः ॥ १५ ॥

dayāmāśritya mātaṅgo bhaṅktvā jālaṃ jagāma ha | vidārya meghasaṃghātaṃ nabhasīva divākaraḥ || 15 ||

Relying on compassion, the elephant broke the net and went away. Like the sun breaking through the clouds in the sky.

दया पर भरोसा करके, हाथी ने जाल को तोड़ा और चला गया। जैसे सूर्य आकाश में बादलों को चीरकर निकलता है।

6.89.16

गते गजे समुत्तस्थौ हस्तिपः स्वस्थदेहधीः । गजेनैव समं तस्य व्यथा दूरतरं गता ॥ १६ ॥

gate gaje samuttasthau hastipaḥ svasthadehadhīḥ | gajenaiva samaṃ tasya vyathā dūrataraṃ gatā || 16 ||

When the elephant left, the elephant keeper stood up with a healthy body and mind. His distress also left with the elephant.

जब हाथी चला गया, तब हाथी का रखवाला स्वस्थ शरीर और मन से उठा | उसकी पीड़ा भी हाथी के साथ ही दूर हो गई || १६ ||

6.89.17

प्रोच्चलत्तालशिखरात्स तथा पतितोऽपि सन् । न भेदमाप दुर्भेदा मन्ये देहा दुरात्मनाम् ॥ १७ ॥

procchalattālaśikharātsa tathā patito'pi san | na bhedamāpa durbhedā manye dehā durātmanām || 17 ||

Even though he fell from the swaying palm tree, he did not suffer any injury. I believe that the bodies of evil-minded people are difficult to harm.

यद्यपि वह हिलते हुए ताड़ के पेड़ से गिरा, फिर भी उसे कोई चोट नहीं आई | मैं मानता हूँ कि दुष्ट लोगों के शरीर को चोट पहुँचाना मुश्किल है || १७ ||

6.89.18

वर्धते प्रावृषीवाभ्रं कुकार्येष्वसतां बलम् । आसीदधिकमुत्साही स च चंक्रमणे तदा ॥ १८ ॥

vardhate prāvṛṣīvābhraṃ kukāryeṣvasatāṃ balam | āsīdadhikamutsāhī sa ca caṃkramaṇe tadā || 18 ||

The strength of the wicked increases like a cloud in the rainy season for evil deeds. He was very enthusiastic and wandered around at that time.

दुष्टों की शक्ति बरसात के मौसम में बादल की तरह बढ़ती है बुरे कामों के लिए | उस समय वह बहुत उत्साहित था और इधर-उधर घूमता रहा || १८ ||

6.89.19

वारणारिरसिद्धाङ्गो गतेभो दुःखमाययौ । आगत्योपगतेऽन्तर्धिं निधान इव वर्धनः ॥ १९ ॥

vāraṇārirasiddhāṅgo gatebho duḥkhamāyayau | āgatya upagate'ntardhiṃ nidhāna iva vardhanaḥ || 19 ||

The enemy of the elephant, with an unsuccessful body, went away with sorrow. Having come and approached, he disappeared like a treasure.

हाथी का शत्रु, असफल शरीर के साथ, दुःख के साथ चला गया | आकर और निकट आकर, वह एक खजाने की तरह अदृश्य हो गया || १९ ||

6.89.20

सोऽन्वियेष गजं यत्नाद्गुल्मकान्तरितं वने । पयोदपिण्डितं भोक्तुं राहुरिन्दुमिवाम्बरे ॥ २० ॥

so'nvieṣa gajaṃ yatnādgulmakāntaritaṃ vane | payodapiṇḍitaṃ bhoktuṃ rāhurindumivāmbare || 20 ||

He diligently searched for the elephant hidden in the thicket of the forest, like Rahu trying to devour the moon in the sky.

उसने घने जंगल में छिपे हुए हाथी को दृढ़ता से ढूँढ़ा, जैसे राहु आकाश में चंद्रमा को निगलने की कोशिश करता है || २० ||

6.89.21

चिरेणालभतेब्हेन्द्रं कस्मिंश्चित्कानने स्थितम्विश्रान्तं तं तरुतले समरादिव निर्गतम् ॥ २१ ॥

cireṇālabhatebhendraṃ kasmiṃścitkānane sthitamviśrāntaṃ taṃ tarutale samarādiva nirgatam || 21 ||

After a long time, the king of elephants found a certain forest, resting there, as if he had emerged from a battlefield on the ground beneath the trees.

बहुत समय बाद, हाथी के राजा ने एक वन में विश्राम करते हुए पाया, जैसे कि वह पेड़ों के नीचे युद्ध क्षेत्र से निकला हो।

6.89.22

अथ यत्र स्थितो नागस्तत्र तद्बन्धनक्षमम्परया राजसामग्र्या गजलम्पटभूमया ॥ २२ ॥

atha yatra sthito nāgastatra tadbandhanakṣamamparayā rājasāmagryā gajalampaṭabhūmayā || 22 ||

Then, where the elephant was situated, there was the possibility of its capture with great effort by the king's army, which was like a swarm of elephants.

फिर, जहाँ हाथी स्थित था, वहाँ राजा की सेना के द्वारा बहुत प्रयास से उसके बंधन की संभावना थी, जो हाथियों के झुंड की तरह थी।

6.89.23

स खातवलयं चक्रे हस्तिपः काननेऽभितःसर्वदिक्कं विधिर्भूमौ समुद्रवलयं यथा ॥ २३ ॥

sa khātavalayaṃ cakre hastipaḥ kānane'bhitaḥsarvadikkaṃ vidhirbhūmau samudravalayaṃ yathā || 23 ||

The elephant made a pit in the forest, all around, as if it were the ocean surrounding the earth.

हाथी ने वन में एक गड्ढा बनाया, जैसे कि समुद्र पृथ्वी को घेरे हुए हो।

6.89.24

उपर्यस्थगयद्बालतौग्हेन स तं शठःशून्यतातन्तुजालेन शरत्काल इवाम्बरम् ॥ २४ ॥

uparyasthagayadvālalataughena sa taṃ śaṭhaḥśūnyatātantujālena śaratkāla ivāmbaram || 24 ||

Above, the deceitful one covered it with a network of intertwined branches, as if the sky in autumn with its empty web of threads.

ऊपर, छली ने उसे जटिल शाखाओं के जाल से ढक दिया, जैसे कि शरद ऋतु में आकाश अपने खाली धागों के जाल के साथ।

6.89.25

दिनैः कतिपयैरेव वारणो विहरन्वनेतस्मिन्निपतितः खाते शुष्काब्धाविव पर्वतः ॥ २५ ॥

dinaiḥ katipayaireva vāraṇo viharanvanetasminnipatitaḥ khāte śuṣkābdhāviva parvataḥ || 25 ||

After a few days, the elephant, while roaming in the forest, fell into the pit, like a mountain falling into a dried-up ocean.

कुछ दिनों बाद, हाथी, जब वह वन में घूम रहा था, गड्ढे में गिर गया, जैसे कि एक पर्वत सूखे समुद्र में गिरता है।

6.89.26

व्रजन्पर्याकृतौ कूपे पातालतलभीषणे । खातशुष्काब्ध्यधोभागे गजरत्नसमुद्गके ॥ २६ ॥

vrajannparyākṛtau kūpe pātālatalabhīṣaṇe | khātaśuṣkābdhyadhobhāge gajaratnasamudgake || 26 ||

While wandering in the terrifying depths of the well, which is like the fearful underworld, in the dry bottom of the well, in the pit of the elephant jewel.

जब वह भयानक कूप की गहराई में भटक रहा था, जो भयानक पाताल की तरह है, सूखे कूप के तल में, हाथी के रत्न की गड्ढी में।

6.89.27

इति भूयो दृढं बद्धस्तेन हस्तिपकेन सः । तिष्ठत्यद्यापि दुःखेन भूसद्मनि यथा बलिः ॥ २७ ॥

iti bhūyo dṛḍhaṃ baddhastena hastipakena saḥ | tiṣṭhatyadyāpi duḥkhena bhūsadmani yathā baliḥ || 27 ||

Thus, he is firmly bound by the elephant keeper and remains there even today, suffering in the earthly abode like Bali.

इस प्रकार, वह हाथी के रक्षक द्वारा मजबूती से बँधा हुआ है और आज भी बलि की तरह पृथ्वी पर दुःख सहता हुआ रहता है।

6.89.28

अहनिष्यत्पुरैवासौ यद्यग्रे पतितं रिपुम् । तन्नालप्स्यत्ततो दुःख गजः खातनिबन्धनम् ॥ २८ ॥

ahanīṣyatpuraivāsau yadyagre patitaṃ ripum | tannālapsyattato duḥkha gajaḥ khātanibandhanam || 28 ||

If he had killed the enemy earlier, he would not have suffered this pain of being bound in the pit.

अगर उसने पहले ही शत्रु को मार दिया होता, तो वह इस गड्ढे में बँधे होने के दुःख से बच जाता।

6.89.29

मौर्ख्यादागामिन कालं वर्तमानक्रियाक्रमैः । अशोधयन्नरो दुःखं याति विन्ध्यगजो यथा ॥ २९ ॥

maurkhyādāgāmina kālaṃ vartamānakriyākramaiḥ | aśodhayannaro duḥkhaṃ yāti vindhyagajo yathā || 29 ||

Due to foolishness, a person suffers by not correcting the present actions and goes through the pain like the elephant of the Vindhya mountains.

मूर्खता के कारण, एक व्यक्ति वर्तमान कार्यों को सुधारे बिना दुःख भोगता है और विंध्य पर्वत के हाथी की तरह दुःख सहता है।

6.89.30

मुक्तोऽस्मि शस्त्रनिगडादिति तुष्टो हि वारणः । दूरस्थोऽपि पुनर्बद्धो मौर्ख्यं क्व च न बाधते ॥ ३० ॥

mukto'smi śastranigaḍāditi tuṣṭo hi vāraṇaḥ | dūrastho'pi punarbadhdo maurkhyaṃ kva ca na bādhate || 30 ||

The elephant, pleased with the thought 'I am freed from the weapon and chains,' is bound again even from a distance. Where does foolishness not cause trouble?

हाथी, जो सोचता है 'मैं हथियार और जंजीरों से मुक्त हूँ,' दूर से भी फिर बँधा जाता है। मूर्खता कहाँ परेशानी नहीं पहुँचाती?

6.89.31

मौर्ख्यं हि बन्धनमवेहि परं महात्मन्बद्धो न बद्ध इति चेतसि तद्विमुक्त्यै । आत्मोदयं त्रिजगदात्ममयं समस्तं मौर्ख्ये स्थितस्य सहसा ननु सर्वभूमिः ॥ ३१ ॥

maurkhyam hi bandhanamavehi param mahatmanbaddho na baddha iti cetasi tadvimuktyai | atmodayam trijagadatmamayam samastam maurkhye sthitasya sahasa nanu sarvabhumih || 31 ||

Foolishness is indeed the greatest bondage, O great soul. One who is bound thinks 'I am not bound' for the sake of liberation from that. The rise of the self, which is the essence of the three worlds, is suddenly the entire earth for one who is situated in foolishness.

मूर्खता वास्तव में सबसे बड़ा बंधन है, हे महात्मा। जो बंधन में है, वह सोचता है 'मैं बंधन में नहीं हूँ' उसके मुक्ति के लिए। आत्मा का उदय, जो तीनों जगत का आत्मा है, सहसा सारी भूमि हो जाता है उसके लिए जो मूर्खता में स्थित है।

Chapter 90

6.90.1

शिखिध्वज उवाच । मणिसाधकविन्ध्येभबन्धनाद्यमरात्मज । सूचितं यत्कथाजालं पुनर्मे प्रकटीकुरु ॥ १ ॥

śikhidhvaja uvāca | maṇisādhakavindhyebhabandhanādyamarātmaja | sūcitaṃ yatkathājālaṃ punarmeprakaṭīkuru || 1 ||

Shikhidhvaja said: O son of the immortals, bound by the Vindhya mountains, you have indicated the story. Please reveal it to me again.

शिखिध्वज ने कहा: हे अमर आत्मज, विन्ध्य पर्वतों से बंधे हुए, आपने कथा का संकेत किया है। कृपया इसे फिर से प्रकट करें।

6.90.2

चूडालोवाच । वाक्यार्थदृष्टेर्निष्पत्त्या हृद्गृहे चित्तभित्तिषु । शृणु स्वयं कथां चित्रां चित्रमुन्मीलयामि ते ॥ २ ॥

cūḍālovāca | vākyārthadṛṣṭerniṣpattayā hṛdgṛhe cittabhittiṣu | śṛṇu svayaṃ kathāṃ citrāṃ citramunmīlayāmi te || 2 ||

Chudala said: By the realization of the meaning of words, in the heart and mind, listen to the wonderful story. I will reveal it to you.

चूड़ाल ने कहा: वाक्यों के अर्थ की दृष्टि से हृदय और मन में, सुनो स्वयं की चित्र कथा। मैं तुम्हें इसे प्रकट करूँगा।

6.90.3

योऽसौ शास्त्रार्थकुशलस्तत्त्वज्ञाने त्वपण्डितः । रत्नसंसाधकः प्रोक्तः स त्वमेव महीपते ॥ ३ ॥

yo'sau śāstrārthakuśalastattvajñāne tvapaṇḍitaḥ | ratnasaṇsādhakaḥ proktaḥ sa tvameva mahīpate || 3 ||

He who is skilled in the meaning of the scriptures but ignorant in the knowledge of reality is called a gem-seeker. O king, you are that person.

जो शास्त्रों के अर्थ में कुशल है पर तत्त्वज्ञान में अज्ञानी है, वह रत्नसंसाधक कहलाता है। हे राजन्, आप वही हैं।

6.90.4

तज्ज्ञो भवसि शास्त्रेषु रविर्मेरुतटेष्विव । तत्त्वज्ञाने तु विश्रान्तो न त्वं दृषदिवाम्भसि ॥ ४ ॥

tajjñobhavasi śāstreṣuravirmērutṭeṣviva | tattvajñāne tu viśrānto na tvaṃ dṛṣadivāmbhasi || 4 ||

You are knowledgeable in the scriptures, like the sun on the peaks of Meru. But in the knowledge of reality, you are not steady, like the reflection of the moon in water.

आप शास्त्रों में ज्ञानी हैं, जैसे सूर्य मेरु की चोटियों पर है। पर तत्त्वज्ञान में आप स्थिर नहीं हैं, जैसे जल में चंद्रमा का प्रतिबिम्ब।

6.90.5

विद्धि चिन्तामणिं साधो सर्वत्यागमकृत्रिमम् । तमन्तं सर्वदुःखानां त्वं साधयसि शुद्धधीः ॥ ५ ॥

viddhi cittāmaṇiṃ sādho sarvatyāgamakṛtrimam | tamantaṃ sarvaduḥkhānāṃ tvaṃ sādhayasi śuddhadhīḥ || 5 ||

Know the wish-fulfilling gem, O virtuous one, which is not artificial and involves the renunciation of all. You, with a pure mind, achieve the end of all sufferings.

जानो चिन्तामणि को, हे साधु, जो कृत्रिम नहीं है और सब कुछ का त्याग करने पर आधारित है। हे शुद्ध मन वाले, आप सभी दुःखों का अंत करते हैं।

6.90.6

सर्वत्यागेन शुद्धेन सर्वमासाद्यतेऽनघ सर्वत्यागो हि साम्राज्यं किं चिन्तामणितो भवेत् ॥ ६ ॥

sarvatyāgena śuddhena sarvamāsādyate'nagha sarvatyāgo hi sāmrājyaṃ kiṃ cintāmaṇito bhavet || 6 ||

By complete renunciation, one attains purity and everything else, O sinless one. Complete renunciation indeed is the highest sovereignty; what need is there for the wish-fulfilling gem?

पूर्ण त्याग से शुद्धता और सब कुछ प्राप्त होता है, हे निष्पाप । पूर्ण त्याग ही सर्वोच्च राज्य है, चिन्तामणि की क्या आवश्यकता है?

6.90.7

सिद्धः सर्वपरित्यागः साधो संसाध्यतस्तव खर्वीकृतजगद्भूतिर्विद्यास्वात्मोदयस्तथा ॥ ७ ॥

siddhaḥ sarvaparityāgaḥ sādho saṃsādhyatastava kharvīkṛtajagadbhūtirvidyāsvātmodayastathā || 7 ||

Complete renunciation is accomplished, O virtuous one, and it is being perfected by you. The world's prosperity is diminished, and knowledge arises from the self.

पूर्ण त्याग सिद्ध हो गया है, हे साधु पुरुष, और यह आपके द्वारा संपूर्ण हो रहा है। संसार की समृद्धि कम हो गई है, और ज्ञान स्वयं से उत्पन्न होता है।

6.90.8

संत्यक्तं भवता राज्यं सदारधनबान्धवम् ब्रह्मणेव जगत्सर्गव्यापारः स्वनिशागमे ॥ ८ ॥

saṃtyaktaṃ bhavatā rājyaṃ sadāradhanabāndhavam brahmaṇeva jagatsargavyāpāraḥ svaniśāgame || 8 ||

You have renounced the kingdom along with wealth and relatives, just as Brahma engages in the creation of the world during the night.

आपने राज्य का त्याग किया है धन और सम्बन्धियों सहित, जैसे ब्रह्मा रात में सृष्टि के कार्य में लगे होते हैं।

6.90.9

स्वदेशस्यातिदूरस्थमागतोऽसि ममाश्रमम् भुवोऽन्तमिव विश्रान्त्यै वैनतेयः सकच्छपः ॥ ९ ॥

svadeśasyātidūrasthamāgato'si mamāśramam bhuvo'ntamiva viśrāntyai vainateyaḥ sakacchapaḥ || 9 ||

You have come to my hermitage, which is very far from your own country, like Garuda with a tortoise, for rest at the end of the earth.

आप मेरे आश्रम तक आए हैं, जो आपके देश से बहुत दूर है, जैसे गरुड़ कछुआ लेकर पृथ्वी के अंत में विश्राम करने के लिए।

6.90.10

केवलं सर्वसंत्यागे शेषिताहंमतिस्त्वया मृष्टाखिलकलङ्केन स्वसत्तेवानिलेन खे ॥ १० ॥

kevalaṃ sarvasaṃtyāge śeṣitāhaṃmatistvayā mṛṣṭākhilakalaṅkena svasattevānilena khe || 10 ||

Only in complete renunciation does the sense of 'I' remain, purified of all blemishes, like the wind in the sky.

केवल पूर्ण त्याग में ही 'मैं' का भाव रहता है, सब दोषों से पवित्र, जैसे आकाश में हवा।

6.90.11

मनोमात्रे हृदस्त्यक्ते जगदायाति पूर्णताम् । त्यागात्यागविकल्पैस्त्वं खमम्भोदैरिवावृतः ॥ ११ ॥

manomātre hṛdastyakte jagadāyāti pūrṇatām | tyāgātyāgavikalpais tvaṃ khamambhodair ivāvṛtaḥ || 11 ||

When the mind is completely renounced, the world attains fullness. You are enveloped by the clouds of renunciation and non-renunciation.

जब मन पूरी तरह से त्याग दिया जाता है, तब संसार पूर्णता को प्राप्त होता है। आप त्याग और अत्याग के बादलों से घिरे हुए हैं।

6.90.12

नायं स परमानन्दः सर्वत्यागो महोदयः । कोऽप्युच्चैरन्य एवासौ चिरसाध्यो महानिति ॥ १२ ॥

nāyaṃ sa paramānandaḥ sarvatyāgo mahodayaḥ | ko'pyuccairanya evāsau cirasādhyo mahān iti || 12 ||

This is not the supreme bliss, nor is the renunciation of everything a great achievement. There is another, even higher, which is difficult to attain and is truly great.

यह परम आनंद नहीं है, न ही सब कुछ त्यागना कोई महान उपलब्धि है। एक और है, जो और भी ऊँचा है, जो प्राप्त करना कठिन है और वास्तव में महान है।

6.90.13

चिन्तयेति गते वृद्धिं संकल्पग्रहणे शनैः । वात्ययेव वनस्पन्दे त्यागः प्रोड्डीय ते गतः ॥ १३ ॥

cintayeti gate vṛddhiṃ saṅkalpagrahaṇe śanaiḥ | vātyayeva vanaspande tyāgaḥ proḍḍīya te gataḥ || 13 ||

Thinking thus, gradually increasing in resolution, like the wind in the trembling of the forest, renunciation has gone far from you.

इस तरह सोचकर, धीरे-धीरे संकल्प में वृद्धि होती है, जैसे वन के कंपन में हवा की तरह, त्याग आपसे दूर चला गया है।

6.90.14

त्यागिता स्यात्कुतस्तस्य चिन्तामप्यावृणोति यः । पवनस्पन्दयुक्तस्य निःस्पन्दत्वं कुतस्तरोः ॥ १४ ॥

tyāgitā syātkutastasya cintāmapyāvṛṇoti yaḥ | pavanaspanadayuktasya niḥspandatvaṃ kutastaroḥ || 14 ||

How can there be renunciation for one who is covered by thoughts? How can there be stillness for one who is agitated by the wind of thoughts?

जिसके द्वारा विचारों से ढका हुआ है, उसके लिए त्याग कैसे हो सकता है? जिसके द्वारा विचारों की हवा से कंपित है, उसके लिए निष्पंदता कैसे हो सकती है?

6.90.15

चिन्तैव चित्तमित्याहुः संकल्पेतरनामकम् । तस्यामेव स्फुरन्त्यां तु चित्तं त्यक्तं कथं भवेत् ॥ १५ ॥

cintaiva cittamityāhuḥ saṅkalpetaranāmakam | tasyāmeva sphurantyāṃ tu cittaṃ tyaktaṃ kathaṃ bhavet || 15 ||

They say that thought itself is the mind, known by another name. How can the mind be renounced when it is active?

वे कहते हैं कि विचार स्वयं मन है, जिसे दूसरे नाम से जाना जाता है। जब यह सक्रिय है, तब मन कैसे त्यागा जा सकता है?

6.90.17

संकल्पग्रहणेनान्तस्त्यागः प्रोड्डीय ते गतः । शब्दसंश्रवणेनाङ्ग यथा ग्रामविहंगमः ॥ १७ ॥

saṃkalpagrahṇenāntastyāgaḥ proḍḍīya te gataḥ | śabdasaṃśravaṇenāṅga yathā grāmavihangamaḥ || 17 ||

By resolving to renounce everything, you have abandoned all attachments, O Uddhava, just as a village bird abandons its nest upon hearing a sound.

संकल्प करके सब कुछ त्याग दिया है, हे उद्धव, जैसे गाँव का पंछी आवाज सुनकर अपना घोंसला छोड़ देता है।

6.90.18

निश्चिन्तत्वं परं सर्वं त्याग आदाय ते गतः । आमन्त्र्यापूजितो जन्तुः स दुःखं न करोति किम् ॥ १८ ॥

niścintatvaṃ paraṃ sarvaṃ tyāga ādāya te gataḥ | āmantryāpūjito jantuḥ sa duḥkhaṃ na karoti kim || 18 ||

By embracing supreme detachment, you have attained a state of carefreeness. One who is honored and respected does not cause suffering to any being.

परम त्याग को अपनाकर, आपने निश्चिंतता की अवस्था प्राप्त कर ली है। जो सम्मानित और पूजित है, वह किसी जीव को दुःख नहीं पहुँचाता।

6.90.19

सर्वत्यागमणावेवं गते कमललोचन । तपःकाचमणिर्दृष्टस्त्वया संकल्पचक्षुषा ॥ १९ ॥

sarvatyāgamṇāvevaṃ gate kamalalocana | tapaḥkācamaṇirdṛṣṭastvayā saṃkalpacakṣuṣā || 19 ||

O lotus-eyed one, having thus attained the state of complete renunciation, you have seen the gem of austerity with the eye of resolve.

हे कमलनयन, इस प्रकार पूर्ण त्याग की अवस्था प्राप्त करके, आपने संकल्प की दृष्टि से तप के मणि को देखा है।

6.90.20

त्वया तस्मिंस्तपस्येव दुःखे दृष्टिभ्रमोदिते । ग्राह्यैकभावना बद्धा जलेन्दौ शशिनो यथा ॥ २० ॥

tvayā tasmins tapasyeva duḥkhe dṛṣṭibhramodite | grāhyaikabhāvanā baddhā jalendau śaśino yathā || 20 ||

By you, in that austerity, suffering is seen as an illusion. Just as the moon's reflection is bound in the water, so is the single-minded devotion to be grasped.

आपने उस तप में, दुःख को भ्रम के रूप में देखा है। जैसे चाँद का प्रतिबिंब पानी में बंधा होता है, वैसे ही एकाग्र भावना को ग्रहण करना चाहिए।

6.90.21

अवासनमनासक्त्या कृतानन्ता सवासना । आद्यन्तमध्यविषमा दुःखायैव तपःक्रिया ॥ २१ ॥

avāsanamanāsaktyā kṛtānantā savāsanā | ādyantamadhyaviṣamā duḥkhāyaiva tapakriyā || 21 ||

Desires, when not attached, become endless. The practice of austerity, which is uneven at the beginning, middle, and end, leads only to suffering.

जब इच्छाएँ अनासक्त होती हैं, तो वे अनंत हो जाती हैं। जो तप की क्रिया आदि, मध्य और अंत में विषम होती है, वह केवल दुःख ही देती है।

6.90.22

अमितानन्दमुत्सृज्य सुसाध्यं यः प्रवर्तते । मिते वस्तुनि दुःसाध्ये स्वात्महा स शठः स्मृतः ॥ २२ ॥

amitānandamutsṛjya susādhyam yaḥ pravartate | mite vastuni duḥsādhye svātmāhā sa śaṭhaḥ smṛtaḥ || 22 ||

He who abandons unlimited bliss and pursues easily attainable things, is considered a fool who destroys his own self in pursuing limited and difficult to attain objects.

जो अमित आनंद को त्याग कर सुगम वस्तुओं की ओर बढ़ता है, वह अपने आत्मा का नाश करने वाला मूर्ख माना जाता है जो सीमित और दुर्लभ वस्तुओं की ओर बढ़ता है।

6.90.23

सर्वत्यागं समारभ्य न चैष साधितस्त्वया । तथा दुःखैकताज्ञानबद्धेन वनसद्मनि ॥ २३ ॥

sarvatyāgam samārabhya na caiṣa sādhitastvayā | tathā duḥkhaikatājñānabaddhena vanasadmani || 23 ||

Having undertaken complete renunciation, this has not been accomplished by you. Thus, bound by the knowledge of sole suffering, you are in the forest abode.

पूर्ण त्याग करने के बाद भी, यह आपने प्राप्त नहीं किया है। इस प्रकार, दुःख के ज्ञान से बंधे हुए, आप वन में हैं।

6.90.24

राज्यबन्धाद्विनिष्क्रम्य प्रसरदुःखपूरितात्। वनवासाभिधैः साधो बद्धोऽसि दृष्टबन्धनैः ॥ २४ ॥

rājyabandhādviniṣkramya prasaraduḥkhapūritāt | vanavāsābhidhaiḥ sādho baddho'si dṛṣṭabandhanaiḥ || 24 ||

Having left the bondage of the kingdom, which is full of spreading sorrow, O virtuous one, you are bound by visible bonds in the forest life.

राज्य के बंधन से निकलकर, जो फैलते दुःख से भरा हुआ है, हे साधु, आप वनवास के दृश्य बंधनों से बंधे हुए हैं।

6.90.25

द्विगुणा एव ते चिन्ताः शीतवातातपादयः। बन्धनादधिकं मन्ये वनवासमजानताम् ॥ २५ ॥

dviguṇā eva te cintāḥ śītavātātapādayaḥ | bandhanādadhikaṃ manye vanavāsamajānatām || 25 ||

Your worries have doubled, such as cold, wind, and heat. I consider the forest life to be more of a bondage for the ignorant.

आपकी चिंताएँ दुगनी हो गई हैं, जैसे ठंड, हवा, और गर्मी। मैं अज्ञानी के लिए वनवास को बंधन से अधिक मानता हूँ।

6.90.26

चिन्तामणिर्मया प्राप्त इत्यलं बुद्धवानसि। न लब्धवान्भवान्साधो स्फटिकस्यापि खण्डिकाम् ॥ २६ ॥

cintāmaṇirmayā prāpta ityalam buddhvānasi | na labdhavānbhavānsādho sphaṭikasyāpi khaṇḍikām || 26 ||

You have attained the wish-fulfilling gem, thinking 'enough, I am wise.' O virtuous one, you have not even obtained a piece of crystal.

आपने चिंतामणि प्राप्त कर ली है, सोचकर 'बस, मैं बुद्धिमान हूँ।' हे साधु, आपने स्फटिक का एक टुकड़ा भी नहीं प्राप्त किया है।

6.90.27

इत्येतदङ्ग मणियत्नकथासमानं सम्यङ्मया प्रकथितं तव पद्मनेत्र। तद्बोध्यमेवममलं स्वयमेव बुद्धा यद्वेत्सि तत्परिणतिं नय चित्तकोशे ॥ २७ ॥

ityetadaṅga maṇiyatnakathāsamānaṃ samyaṅmayā prakathitaṃ tava padmanetra | tadbodhyamevamamalaṃ svayameva buddhvā yadvetsi tatpariṇatiṃ naya cittakośe || 27 ||

Thus, this story of the jewel is similar to the limbs, accurately narrated by me, O lotus-eyed one. Understand it as pure, and having realized it yourself, take what you know to the treasure of your heart.

इस प्रकार, यह रत्न की कथा अंगों के समान है, जो मैंने सटीक रूप से कही है, हे कमलनयन। इसे शुद्ध रूप में समझो, और स्वयं इसे जानकर, जो तुम जानते हो उसे अपने हृदय के खजाने में ले जाओ।

Chapter 91

6.91.1

चूडालोवाचैदानीं राजशार्दूल वस्तुसम्प्रतिपत्तयेश्रृणु विन्ध्येभवृत्तान्तविवृतिं स्मयकारिणीम् ॥ १ ॥

cūḍālovācaidānīṃ rājaśārdūla vastusampratipattayeśṛṇu vindhyebhavṛttāntavivṛtiṃ smayakāriṇīm || 1 ||

Cūḍāla said: O king of lions among kings, listen to the story of Vindhya, which is delightful and leads to the attainment of the highest truth.

चूडाला ने कहा: हे राजाओं में सिंह, विन्ध्य की कथा सुनो, जो आनंददायक है और सत्य की प्राप्ति के लिए मार्गदर्शिका है।

6.91.2

योऽसौ विन्ध्यवने हस्ती सोऽस्मिन्भूमितले भवान्यौ वैराग्यविवेकौ तौ द्वौ तस्य दशनौ सितौ ॥ २ ॥

yo'sau vindhyavane hastī so'sminbhūmitale bhavānyau vairāgyavivekau tau dvau tasya daśanau sitau || 2 ||

There is an elephant in the Vindhya forest, and on this earth, there are two white teeth of dispassion and discrimination.

विन्ध्य वन में एक हाथी है, और इस पृथ्वी पर वैराग्य और विवेक के दो सफेद दांत हैं।

6.91.3

यश्चासौ वारणाक्रान्तितत्परो हस्तिपः स्थितःतदज्ञानं तवाक्रान्तितत्परं तव दुःखदम् ॥ ३ ॥

yaścāsau vāraṇākrāntitatparo hastipaḥ sthitaḥtadajñānaṃ tavākrāntitatparaṃ tava duḥkhadam || 3 ||

And he who is devoted to the elephant's ways is afflicted by ignorance, which is the cause of your suffering.

और जो हाथी के तरीकों में लीन है, वह अज्ञान से पीड़ित है, जो आपके दुःख का कारण है।

6.91.4

अतिशक्तोऽप्यशक्तेन दुःखाद्दुःखं भयाद्भयम्हस्ती हस्तिपकेनेव राजन्मौर्ख्येण नीयसे ॥ ४ ॥

atiśakto'pyaśaktena duḥkhādduḥkhaṃ bhayādbhayamhastī hastipakeneva rājanmaurkhyeṇa nīyase || 4 ||

Even the very powerful are led by the weak from suffering to suffering, from fear to fear, like an elephant led by a foolish keeper.

बहुत शक्तिशाली लोग भी कमजोर द्वारा दुःख से दुःख तक, भय से भय तक ले जाए जाते हैं, जैसे कि एक मूर्ख महावत द्वारा ले जाया जाने वाला हाथी।

6.91.5

यल्लोहवज्रसारेण वारणः परियन्त्रितःतदाशापाशजालेन भवानापदमावृतः ॥ ५ ॥

yallohavajrasāreṇa vāraṇaḥ pariyantritaḥtadāśāpāśajālena bhavānāpadamāvṛtaḥ || 5 ||

Just as an elephant is controlled by an iron hook, you are enveloped by the net of hopes and desires, leading to calamity.

जैसे एक हाथी लोहे के अंकुश से नियंत्रित होता है, वैसे ही आप आशाओं और इच्छाओं के जाल से घिरे हुए हैं, जो विपत्ति की ओर ले जाता है।

6.91.6

आशा हि लोहरज्जुभ्यो विषमा विपुला दृढा । कालेन क्षीयते लोहं तृष्णा तु परिवर्धते ॥ ६ ॥

āśā hi loharajjubhyo viṣamā vipulā dṛḍhā | kālena kṣīyate lohaṃ tṛṣṇā tu parivardhate || 6 ||

Hope is indeed more difficult, extensive, and firm than iron chains | Over time, iron wears away, but desire only increases

आशा वास्तव में लोहे की जंजीरों से अधिक कठिन, व्यापक और मजबूत होती है | समय के साथ लोहा घिस जाता है, लेकिन इच्छा केवल बढ़ती जाती है

6.91.7

यद्वन्द्वं प्रेक्षते वैरी गजमारादलक्षितः । प्रेक्षते त्वां तदज्ञानं क्रीडार्थं बद्धमेककम् ॥ ७ ॥

yaddvandvaṃ prekṣate vairī gajamārādalakṣitaḥ | prekṣate tvāṃ tadajñānaṃ krīḍārthaṃ baddhamekakam || 7 ||

The enemy sees the duality, marked by the elephant and the enemy | He sees you, that ignorance, bound alone for the sake of play

शत्रु उस द्वंद्व को देखता है, जो हाथी और शत्रु द्वारा चिह्नित है | वह आपको देखता है, उस अज्ञान को, जो खेल के लिए अकेला बंधा है

6.91.8

यद्बभञ्ज गजः शत्रोः शृङ्खलाजालबन्धनम् । तत्तत्याज भवान्भोगभूमिं राज्यमकण्टकम् ॥ ८ ॥

yadbabhañja gajaḥ śatroḥ śṛṅkhalājālabandhanam | tattatyāja bhavānbhogabhūmiṃ rājyamakaṇṭakam || 8 ||

When the elephant broke the enemy's chain-net bond | Then you abandoned the thornless kingdom, the land of enjoyment

जब हाथी ने शत्रु की जंजीर-जाल की बंधन को तोड़ा | तब आपने काँटे रहित राज्य, भोग की भूमि को छोड़ दिया

6.91.9

कदाचित्सुकरं शस्त्रशृङ्खलाबन्धभेदनम् । न त्वस्य मनसः साधो भोगाशाविनिवारणम् ॥ ९ ॥

kadācit sukaraṃ śastrasṛṅkhalābandhabhedanam | na tv asya manasaḥ sādho bhogāśāvinivāraṇam || 9 ||

Sometimes it is easy to break the bond of weapon chains | But O virtuous one, it is not easy to restrain the desire for enjoyment in the mind

कभी-कभी हथियारों की जंजीरों के बंधन को तोड़ना आसान होता है | लेकिन हे साधु, मन में भोग की इच्छा को रोकना आसान नहीं है

6.91.10

यदिभे पाटयत्युच्चैर्बन्धं हस्तिपकोऽपतत् । त्वयि त्यजति तद्राज्यमज्ञानं पतितं कृतम् ॥ १० ॥

yadibhe pāṭayatyuccairbandhaṃ hastipako'patat | tvayi tyajati tadrājyamajñānaṃ patitaṃ kṛtam || 10 ||

If the elephant keeper loudly breaks the bond, the elephant falls | In you, that ignorance has abandoned the kingdom, having fallen

यदि हाथी का रखवाला जोर से बंधन को तोड़ता है, तो हाथी गिर जाता है | आपमें, उस अज्ञान ने राज्य को छोड़ दिया है, गिरकर

6.91.11

यदा विरक्तः पुरुषो भोगाशां त्यक्तुमिच्छति । तदा प्रकम्पतेऽज्ञानं छेद्ये वृक्षे पिशाचवत् ॥ ११ ॥

yadā viraktaḥ puruṣo bhogāśāṃ tyaktumicchati | tadā prakampate'jñānaṃ chedye vṛkṣe piśācavat || 11 ||

When a person desires to renounce the desire for enjoyment, then ignorance trembles like a ghost in a tree that is about to be cut down.

जब कोई व्यक्ति भोग की इच्छा को त्यागना चाहता है, तब अज्ञान उस वृक्ष में घबराता है जिसे काटा जाना है, जैसे कोई भूत।

6.91.12

यदा विवेकी पुरुषो भोगान्संत्यज्य तिष्ठति । तदा पलायतेऽज्ञानं छिन्ने वृक्षे पिशाचवत् ॥ १२ ॥

yadā vivekī puruṣo bhogānsaṃtyajya tiṣṭhati | tadā palāyate'jñānaṃ chinne vṛkṣe piśācavat || 12 ||

When a wise person renounces enjoyments and stands firm, then ignorance flees like a ghost from a cut-down tree.

जब कोई बुद्धिमान व्यक्ति भोगों को त्याग देता है और दृढ़ खड़ा होता है, तब अज्ञान उस कटे हुए पेड़ से भाग जाता है, जैसे कोई भूत।

6.91.13

भोगौघे नूनमुन्मुक्ते पतत्यज्ञानसंस्थितिः । पादपे क्रकचच्छिन्ने कुलायस्तद्गतो यथा ॥ १३ ॥

bhogaughe nūnamunmukte patatyajñānasañsthitiḥ | pādape krakacacchinne kulāyastadgato yathā || 13 ||

Indeed, in the flood of enjoyments, the state of ignorance falls when one is liberated, just as a nest falls when the branch of a tree is cut.

वास्तव में, भोगों की बाढ़ में, जब कोई मुक्त होता है, तब अज्ञान की स्थिति गिर जाती है, जैसे किसी पेड़ की डाल कट जाने पर घोंसला गिर जाता है।

6.91.14

यदा वनं प्रयातस्त्वं तदाऽज्ञानं क्षतं त्वया । पतितं सन्न निहतं मनस्त्यागमहासिना ॥ १४ ॥

yadā vanaṃ prayātastvaṃ tadā'jñānaṃ kṣataṃ tvayā | patitaṃ sanna nihataṃ manastyāgamahāsinā || 14 ||

When you went to the forest, then ignorance was injured by you, it fell but was not destroyed by the great weapon of mental renunciation.

जब आप वन में गए, तब अज्ञान आपसे घायल हुआ, वह गिरा पर मानसिक त्याग के महान अस्त्र से नष्ट नहीं हुआ।

6.91.15

तेन भूयः समुत्थाय स्मृत्वा परिभवं कृतम्तपःप्रपञ्चखातेऽस्मिन्गहने त्वं नियोजितः ॥ १५ ॥

tena bhūyaḥ samutthāya smṛtvā paribhavaṃ kṛtamtapaḥprapañcakhāte'smingahane tvaṃ niyojitaḥ || 15 ||

Therefore, rising again, remembering the defeat inflicted, you are engaged in this dense forest of worldly entanglements.

इसलिए, फिर से उठकर, हुए पराजय को याद करते हुए, आप इस घने संसारिक जटिलताओं के जंगल में लगे हुए हैं।

6.91.16

तदैवाघातयिष्यस्त्वं यद्यज्ञानं तथागतम् । राज्यत्यागविधौ तत्त्वां नाहनिष्यत्क्षयं गतम् ॥ १६ ॥

tadaivāghātayiṣyastvaṃ yadyajñānaṃ tathāgatam | rājyatyāgavidhau tattvāṃ nāhaniṣyatkṣayaṃ gatam || 16 ||

You will strike immediately if ignorance is thus gone | In the act of renouncing the kingdom, you will not be destroyed, having gone to destruction || 16 ||

तुम तुरंत प्रहार करोगे यदि अज्ञान ऐसे ही चला गया है | राज्य त्याग करने के कारण तुम विनाश को प्राप्त होकर नष्ट नहीं होगे || १६ ||

6.91.17

यत्खातवलयस्तेन वैरिणा हस्तिनः कृतः । तत्तपोदुःखमखिलमज्ञानेन तवार्पितम् ॥ १७ ॥

yatkhātavalayastena vairiṇā hastinaḥ kṛtaḥ | tattapoduḥkhamakhilamajñānena tavārpitam || 17 ||

The suffering caused by the enemy who made the elephant with a broken tusk | All that suffering has been offered to you by ignorance || 17 ||

जिस शत्रु ने हाथी को टूटे दांत वाला बनाया, उसके द्वारा उत्पन्न दुःख | वह सारा दुःख अज्ञान द्वारा तुम्हें अर्पित किया गया है || १७ ||

6.91.18

या तस्य राजराजश्रीर्गजारेर्नृपसत्तम । सा त्ववज्ञाननृपतेश्चिन्ताभ्यन्तरचारिणी ॥ १८ ॥

yā tasya rājarājaśrīrgajārer nṛpasattama | sā tvavajñānanṛpateścintābhyantaracāriṇī || 18 ||

The royal glory of that king of kings, the best among men, the elephant-killer | That is moving within the thoughts of the ignorant king || 18 ||

उस राजाओं के राजा की राजसी शोभा, मनुष्यों में श्रेष्ठ, हाथी मारने वाला | वह अज्ञानी राजा के विचारों में घूम रही है || १८ ||

6.91.19

त्वं गजेन्द्रस्त्वयं साधो दीर्घे वनेऽगजोऽपि सन् । अज्ञानवैरिणा तेन निक्षिप्तस्तरसामितः ॥ १९ ॥

tvaṃ gajendrastvayaṃ sādho dīrghe vane'gajo'pi san | ajñānavairiṇā tena nikṣiptastarasāmitaḥ || 19 ||

You are the king of elephants, O virtuous one, even though you are without a tusk in the long forest | You have been thrown by that enemy of ignorance, quickly || 19 ||

तुम हाथी के राजा हो, हे धर्मात्मा, भले ही तुम लंबे वन में दांत के बिना हो | तुम उस अज्ञान के शत्रु द्वारा तुरंत फेंके गए हो || १९ ||

6.91.20

यत्खातवलयो बाललताभिरवगुण्ठितः । आवृतं तत्तपोदुःखमीषत्सज्जनवृत्तिमिः ॥ २० ॥

yatkhātavalayo bālalatābhiravaguṇṭhitaḥ | āvṛtaṃ tattapoduḥkhamīṣatsajjanavṛttimiḥ || 20 ||

The one with a broken tusk, covered with young creepers | That suffering is covered with a little bit of good conduct || 20 ||

टूटे दांत वाला, छोटी लताओं से ढंका हुआ | वह दुःख थोड़े से सदाचार से ढंका हुआ है || २० ||

6.91.21

इत्यद्यापि तपःखाते दुःखे ह्यस्मिन्सुदारुणे । स्थितोऽसि पातालतले नृप बद्धो यथा बलिः ॥ २१ ॥

ityadyāpi tapaḥkhāte duḥkhe hyasmin sudāruṇe | sthito'si pātālatala nṛpa baddho yathā baliḥ || 21 ||

Even now, you are in this terrible suffering, in the depths of the underworld, bound like Bali.

अभी भी, आप इस भयानक दुःख में हैं, पाताल की तलहटी में, बलि की तरह बंधे हुए।

6.91.22

गजस्त्वमाशा निगडानि वैरी मोहो निखातः पुनरुग्रबन्धः । महीतलं विन्ध्य उदन्त इत्थं त्वदीय उक्तः कुरु यत्करोषि ॥ २२ ॥

gajastvamāśā nigaḍāni vairī moho nikhātaḥ punarugrabandhaḥ | mahītalaṃ vindhya udanta itthaṃ tvadīya uktāḥ kuru yatkaroṣi || 22 ||

You are like an elephant with hopes as chains, enemies as ignorance, deeply rooted delusion, and a strong bond again. The earth is like the Vindhya mountain, rising thus. Do what you have been told to do.

आप ऐसे हैं जैसे हाथी, आशाएँ जंजीरों की तरह, शत्रु अज्ञान की तरह, गहरी जड़ें भ्रम, और फिर एक मजबूत बंधन। पृथ्वी विंध्य पर्वत की तरह है, ऐसे उठती हुई। जो आपको कहा गया है, वह करो।

Chapter 92

6.92.1

चूडालोवाच । यदुक्तं नयशालिन्या तया विदितवेद्यया । तदा चूडालया ज्ञानं तत्कस्मान्नोररीकृतम् ॥ १ ॥

cūḍālovāca | yaduktam nayaśālinyā tayā viditavedyayā | tadā cūḍālayā jñānam tatkasmānnorarīkṛtam || 1 ||

Chudala said: What was said by the wise and knowledgeable one, why was that knowledge not accepted by Chudala at that time?

चूडाला ने कहा: जो बुद्धिमान और ज्ञानी ने कहा, उस समय चूडाला ने उस ज्ञान को क्यों नहीं स्वीकार किया?

6.92.2

सा हि तत्त्वविदां मुख्या यद्यद्वक्ति करोति च । तत्सर्वं सत्यमेवाङ्ग तदनुष्ठेयमादरात् ॥ २ ॥

sā hi tattvavidām mukhyā yadyadvakti karoti ca | tatsarvam satyamevāṅga tadanuṣṭheyamādarāt || 2 ||

She is indeed the foremost among the knowers of truth. Whatever she says or does, all of that is true and should be followed with respect.

वह वास्तव में सत्य के ज्ञाताओं में अग्रगण्य है। जो भी वह कहती है या करती है, सब कुछ सत्य है और उसे सम्मान के साथ अनुसरण करना चाहिए।

6.92.3

अथ चेद्वचनं तस्यास्त्वया नानुष्ठितं नृप । तत्सर्वसंपरित्यागः कस्मान्न निपुणीकृतः ॥ ३ ॥

atha cedvacanam tasyāstvayā nānuṣṭhitam nṛpa | tatsarvasaṃparityāgaḥ kasmānna nipuṇīkṛtaḥ || 3 ||

If her words were not followed by you, O king, then why was the complete renunciation not done skillfully?

यदि उसके शब्दों का आपने पालन नहीं किया, हे राजा, तो फिर पूर्ण त्याग क्यों कुशलता से नहीं किया गया?

6.92.4

शिखिध्वज उवाच । राज्यं त्यक्तं गृहं त्यक्तं देशस्त्यक्तस्तथाविधः । दारास्त्यक्तास्तथाप्यङ्ग सर्वत्यागो न किं कृतः ॥ ४ ॥

śikhidhvaja uvāca | rājyam tyaktam gṛham tyaktam deśastathāvidhaḥ | dārāstyaktāstathāpyaṅga sarvatyāgo na kim kṛtaḥ || 4 ||

Shikhidhvaja said: The kingdom was renounced, the home was renounced, the country was renounced in that manner. The family was also renounced, yet O, why was the complete renunciation not done?

शिखिध्वज ने कहा: राज्य त्याग दिया गया, घर त्याग दिया गया, देश उसी तरह त्याग दिया गया। परिवार भी त्याग दिया गया, फिर भी हे, पूर्ण त्याग क्यों नहीं किया गया?

6.92.5

चूडालोवाच । धनं दारा गृहं राज्यं भूमिश्छत्रं च बान्धवाः । इति सर्वं न ते राजन्सर्वत्यागो हि कस्तव ॥ ५ ॥

cūḍālovāca | dhanam dārā gṛham rājyam bhūmiśchatrac ca bāndhavāḥ | iti sarvam na te rājan sarvatyāgo hi kastava || 5 ||

Chudala said: Wealth, family, home, kingdom, land, umbrella, and relatives—all these are not yours, O king. What is your complete renunciation?

चूडाला ने कहा: धन, परिवार, घर, राज्य, भूमि, छत्र, और बंधु—ये सब आपके नहीं हैं, हे राजा। आपका पूर्ण त्याग क्या है?

6.92.6

तवास्त्येवापरित्यक्तः सर्वस्माद्भाग उत्तमः । तं परित्यज्य निःशेषमायास्यसि विशोकताम् ॥ ६ ॥

tavāstyevāparityaktaḥ sarvasmādbhāga uttamaḥ | taṃ parityajya niḥśeṣamāyāsyasi viśokatām || 6 ||

You have a supreme share that is never abandoned. By abandoning that, you will attain complete freedom from sorrow.

तुम्हारा एक ऐसा श्रेष्ठ भाग है जो कभी छोड़ा नहीं जाता | उसे छोड़कर तुम पूर्ण दुःखमुक्ति प्राप्त करोगे |

6.92.7

शिखिध्वज उवाच । राज्यं चेन्मम नो सर्वं तत्सर्वं वनमेव मे । शैलवृक्षादिगुल्माढ्यं तदप्येतत्त्यजाम्यहम् ॥ ७ ॥

śikhidhvaja uvāca | rājyaṃ cenmama no sarvaṃ tatsarvaṃ vanameva me | śailavṛkṣādigulmāḍhyaṃ tadapyetattyajāmyaham || 7 ||

Shikhidhvaja said: If this entire kingdom is not mine, then all this is just a forest to me. I will abandon even this forest, which is full of mountains, trees, and bushes.

शिखिध्वज ने कहा: यदि यह पूरा राज्य मेरा नहीं है, तो यह सब मेरे लिए एक जंगल है | मैं इस जंगल को भी छोड़ दूँगा, जो पहाड़ों, पेड़ों और झाड़ियों से भरा हुआ है |

6.92.8

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति राम वदन्नेव कुम्भवाक्यप्रणोदितः । निमेषान्तरमात्रेण वशी वीरः शिखिध्वजः ॥ ८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti rāma vadanneva kumbhavākyapraṇoditaḥ | nimeṣāntaramātreṇa vaśī vīraḥ śikhidhvajaḥ || 8 ||

Vasishtha said: Thus, O Rama, Shikhidhvaja, inspired by the words of the pot, became a master of himself in an instant.

वसिष्ठ ने कहा: हे राम, इस प्रकार शिखिध्वज, घड़े के शब्दों से प्रेरित होकर, एक पल में ही अपने आप को वश में कर लिया |

6.92.9

प्रममार्ज वनास्थां तां कृतः सुदृढनिश्चयः । प्रावृडोघस्तटगतां रजोलेखामिवात्मना ॥ ९ ॥

pramamārja vanāsthāṃ tāṃ kṛtaḥ sudṛḍhaniścayaḥ | prāvṛḍoghastatagatāṃ rajolekhāmivātmanā || 9 ||

With a firm resolve, he cleansed that forest dwelling, as if it were a line of dust on the bank of a flooded river.

दृढ़ निश्चय के साथ, उसने उस जंगल की आश्रम को साफ किया, जैसे कि बाढ़ के किनारे पर एक धूल की लकीर को साफ किया हो |

6.92.10

शिखिध्वज उवाच । सवृक्षाद्रिवनश्वभ्राद्विपिनादपि वासना । परित्यक्ता मया नूनं परित्यागः स्थितो मम ॥ १० ॥

śikhidhvaja uvāca | savṛkṣādrivanaśvabhrādvipinādapi vāsanā | parityaktā mayā nūnaṃ parityāgaḥ sthito mama || 10 ||

Shikhidhvaja said: Even the desire for a forest full of trees, mountains, and caves has been abandoned by me. My renunciation is now firmly established.

शिखिध्वज ने कहा: पेड़ों, पहाड़ों और गुफाओं से भरे जंगल की इच्छा भी मैंने छोड़ दी है | मेरा त्याग अब दृढ़ता से स्थापित है |

6.92.11

कुम्भ उवाच । अद्रेस्तटं वनं श्वभ्रं सलिलं पादपस्थलम् । इत्यादि तव नो सर्वं सर्वत्यागः कथं तव ॥ ११ ॥

kumbha uvāca | adrestaṭaṃ vanaṃ śvabhraṃ salilaṃ pādapasthalam | ityādi tava no sarvaṃ sarvatyāgaḥ kathaṃ tava || 11 ||

Kumbha said: The base of the mountain, the forest, the cave, the water, and the base of the tree—all these are not yours. How can you renounce everything?

कुम्भ ने कहा: पर्वत का आधार, वन, गुफा, जल और पेड़ का आधार—ये सब तुम्हारे नहीं हैं। तुम सब कुछ कैसे त्याग सकते हो?

6.92.12

तवास्त्येवापरित्यक्तः सर्वस्माद्भाग उत्तमः । तं परित्यज्य निःशेषं परामायास्यशोकताम् ॥ १२ ॥

tavāstyevāparityaktaḥ sarvasmādbhāga uttamaḥ | taṃ parityajya niḥśeṣaṃ parāmāyāsyaśokatām || 12 ||

You have an excellent share that is not abandoned from everything. By abandoning that, you will attain great sorrow without any remainder.

तुम्हारे पास एक उत्तम भाग है जो सब कुछ से अलग नहीं है। उसे छोड़कर, तुम बिना किसी शेष के महान दुःख प्राप्त करोगे।

6.92.13

शिखिध्वज उवाच । एतच्चेन्मम नो सर्वं तत्सर्वं स्वाश्रमो मम । वापीस्थलोटजयुतस्तमेवाशु त्यजाम्यहम् ॥ १३ ॥

śikhidhvaja uvāca | etaccenmama no sarvaṃ tatsarvaṃ svāśramo mama | vāpīsthaloṭajayutastamevāśu tyajāmyaham || 13 ||

Shikhidhvaja said: If all this is not mine, then all that is my hermitage. I will immediately abandon that hermitage adorned with a pond and lotuses.

शिखिध्वज ने कहा: यदि यह सब मेरा नहीं है, तो मेरा आश्रम ही सब कुछ है। मैं उस तालाब और कमलों से सजे आश्रम को तुरंत छोड़ दूंगा।

6.92.14

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति राम वदन्नेव कुम्भवाक्यप्रबोधितः । निमेषध्यानमात्रेण वशी वीरः शिखिध्वजः ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti rāma vadanneva kumbhavākyaprabodhitaḥ | nimeṣadhyānamātreṇa vaśī vīraḥ śikhidhvajaḥ || 14 ||

Vasishtha said: O Rama, thus speaking and enlightened by Kumbha's words, the heroic Shikhidhvaja became self-controlled in the blink of an eye.

वसिष्ठ ने कहा: हे राम, इस प्रकार बोलते हुए और कुम्भ के वचनों से प्रबुद्ध होकर, वीर शिखिध्वज पलक झपकते ही स्वयं नियंत्रित हो गया।

6.92.15

प्रममार्जाश्रमास्थां तां संविदा शुद्धया हृदि । स्फुरन्तीं स्फुरणेनैव रजोलेखामिवानिलः ॥ १५ ॥

pramamārjāśramāsthāṃ tāṃ saṃvidā śuddhayā hṛdi | sphurantīṃ sphuraṇenaiva rajolekhāmivānilaḥ || 15 ||

He cleansed that hermitage situated in the heart with pure awareness, as the wind cleanses a line of dust with its mere touch.

उसने शुद्ध चेतना से हृदय में स्थित उस आश्रम को साफ किया, जैसे हवा अपने स्पर्श से धूल की रेखा को साफ करती है।

6.92.16

शिखिध्वज उवाच । स वृक्षोटजवीरुत्काद्वासना स्वाश्रमादपि । परित्यक्ता मया नूनं सर्वत्यागः स्थितो मम ॥ १६ ॥

śikhidhvaja uvāca | sa vṛkṣoṭajavīrutkādvāsanā svāśramādapi | parityaktā mayā nūnaṃ sarvatyāgaḥ sthito mama || 16 ||

Shikhidhvaja said: I have certainly abandoned the desire for a tree, a well, a piece of land, and even my own hermitage. Thus, I have renounced everything.

शिखिध्वज ने कहा: मैंने वृक्ष, कुएं, भूमि और अपने आश्रम की इच्छा को निश्चित रूप से त्याग दिया है| इस प्रकार, मैंने सब कुछ त्याग दिया है|

6.92.17

कुम्भ उवाच । वृक्षो वापी स्थलं गुल्ममुटजं व्रततीवृतिः । इति किंचिन्न ते सर्वं सर्वत्यागः कुतस्तव ॥ १७ ॥

kumbha uvāca | vṛkṣo vāpī sthalaṃ gulmamuṭajaṃ vratatīvṛtiḥ | iti kiṃcinna te sarvaṃ sarvatyāgaḥ kutastava || 17 ||

Kumbha said: A tree, a well, a piece of land, a garden, and strict observance of vows are not everything. How can you claim to have renounced everything?

कुम्भ ने कहा: एक वृक्ष, कुआँ, एक टुकड़ा भूमि, एक उद्यान, और कठोर व्रत का पालन सब कुछ नहीं है| तुम पूर्ण त्याग कैसे दावा कर सकते हो?

6.92.18

तवास्त्यन्योऽपरित्यक्तः सर्वस्माद्भाग उत्तमः । तं परित्यज्य निःशेषं परामायास्यशोकताम् ॥ १८ ॥

tavāstyanyo'parityaktaḥ sarvasmādbhāga uttamaḥ | taṃ parityajya niḥśeṣaṃ parāmāyāsyaśoktām || 18 ||

There is another part of you that has not been renounced, which is superior to all else. By renouncing that, you will attain the ultimate state of bliss.

तुम्हारे अंदर एक और हिस्सा है जो अभी तक त्यागा नहीं गया है, जो सबसे श्रेष्ठ है| उसे त्यागकर, तुम परम आनंद की अवस्था प्राप्त करोगे|

6.92.19

शिखिध्वज उवाच । एतच्चेन्मम नो सर्वं तत्सर्वं भाजनादि मे । चर्मकुड्यकुटीरादि तत्तावत्संत्यजाम्यहम् ॥ १९ ॥

śikhidhvaja uvāca | etaccenmama no sarvaṃ tatsarvaṃ bhājanādi me | carmakuḍyakuṭīrādi tattāvatsaṃtyajāmyaham || 19 ||

Shikhidhvaja said: If this is not everything, then I will renounce all my utensils and other possessions, including my hut and skin garments.

शिखिध्वज ने कहा: यदि यह सब कुछ नहीं है, तो मैं अपने सभी बर्तन और अन्य संपत्तियों, जिसमें मेरा झोंपड़ा और चमड़े के वस्त्र शामिल हैं, को त्याग दूँगा|

6.92.20

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा स समुत्तस्थावविक्षुब्धमतिः शमी । विष्टरादवदातात्मा शृङ्गादिव शरद्धनः ॥ २० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā sa samuttasthāvavikṣubdhamatiḥ śamī | viṣṭarādavadātātmā śṛṅgādiva śaraddhanaḥ || 20 ||

Vasishtha said: Having said this, Shikhidhvaja rose with a calm mind, like a deer shedding its antlers in autumn.

वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर, शिखिध्वज शांत मन से उठा, जैसे शरद ऋतु में हिरण अपने सींग गिराता है|

6.92.21

कुम्भस्त्वालोकयन्नेव तत्क्रियाः सस्मितः स्वयम्। आसने लोककार्येषु स्वस्यन्दन इवांशुमान्॥ २१॥

kumbhastvālokayannēva tatkriyāḥ sasmitaḥ svayam | āsanē lōkakāryēṣu svasyandana ivāṃśumān || 21 ||

Kumbha, while observing, performed those actions himself with a smile, as if he were the sun in his own chariot in the affairs of the world.

कुम्भ देखते हुए खुद ही मुस्कुराते हुए उन कार्यों को करता रहा, मानो वह स्वयं अपने रथ में सूर्य हो।

6.92.22

यत्करोति करोत्वेतदस्यैतत्पावनं परम्। इति तूष्णीं स्थितः कुम्भः शिखिध्वजमवैक्षत॥ २२॥

yatkaroti karotvētadasyaitatpāvanaṃ param | iti tūṣṇīṃ sthitaḥ kumbhaḥ śikhidhvajamavaikṣata || 22 ||

Whatever he does, let it be done, this is his supreme purification. Thus, Kumbha stood silently and looked at Shikhidhvaja.

जो कुछ भी वह करता है, वह किया जाए, यह उसका परम पवित्रीकरण है। इस प्रकार, कुम्भ चुपचाप खड़ा होकर शिखिध्वज को देखता रहा।

6.92.23

शिखिध्वजस्तु तत्सर्वं भाण्डोपस्करमाश्रमात्। एकत्रैवानयामास भुवो वार्यब्धिभूरिव॥ २३॥

śikhidhvajastu tatsarvaṃ bhāṇḍōpaskaramāśramāt | ēkatraivānayāmāsa bhuvō vāryabdhibhūriva || 23 ||

Shikhidhvaja brought all the utensils and equipment from the hermitage to one place, as if he were the ocean bringing water to the earth.

शिखिध्वज ने आश्रम से सभी बर्तन और सामान को एक जगह लाकर रखा, मानो समुद्र पृथ्वी पर पानी ला रहा हो।

6.92.24

तत्संस्थाप्येन्धनैः शुष्कैर्ज्वालयामास पावकम्। करैः संचारवानर्कः सूर्यकान्तपदं यथा॥ २४॥

tatsaṃsthāpyēndhanaiḥ śuṣkairjvālayāmāsa pāvakam | karaiḥ saṃcāravānarkaḥ sūryakāntapadaṃ yathā || 24 ||

Having arranged that, he kindled the fire with dry fuel, moving around like the sun in the orbit of the sunstone.

उसे व्यवस्थित करके, उसने सूखे ईंधन से अग्नि को जलाया, मानो सूर्य सूर्यकांत मणि के पथ पर घूम रहा हो।

6.92.25

भाण्डोपस्करजालं तदग्नौ त्यक्त्वा विवेश सः। ध्वंसिकायां जगद्धुत्वा मेरुश्रृङ्गे यथा रविः॥ २५॥

bhāṇḍōpaskarajālaṃ tadagnau tyaktvā vivēśa saḥ | dhvaṃsikāyāṃ jagaddhutvā mēruśr̥ṅgē yathā raviḥ || 25 ||

Having left that collection of utensils and equipment in the fire, he entered it, as the sun enters the peak of Meru after burning the world at the time of destruction.

उन बर्तनों और सामान के समूह को अग्नि में छोड़कर, वह उसमें प्रवेश किया, जैसे सूर्य प्रलय के समय दुनिया को जलाकर मेरु शिखर पर प्रवेश करता है।

6.92.26

एतावन्तं मया कालं वृत्ता यत्त्वं पतिप्रिये अजातबुद्धिभेदेन तेनैव कृतमस्तु ते॥ २६॥

etāvantaṃ mayā kālaṃ vr̥ttā yattvaṃ patipriye ajātabuddhibhedena tenaiva kr̥tamastu te || 26 ||

For so long, O beloved wife, you have been wandering, and due to your lack of discernment, it has been done by you.

इतने समय तक, हे प्यारी पत्नी, तुम भटकती रही हो, और तुम्हारे बुद्धि के भेद के कारण यह तुमने किया है।

6.92.27

भ्रान्तौ तु विनिवर्तिन्यां नाधुनोपकरोषि माम् मन्त्राटव्यां चिरं भ्रान्तं विहृतं कार्यवर्त्मसु ॥ २७ ॥

bhrāntau tu vinivartinyāṃ nādhunopakaroṣi māṃ mantrāṭavyāṃ ciraṃ bhrāntaṃ vihṛtaṃ kāryavartmasu || 27 ||

In this confusing state, you are not helping me now, having wandered long in the forest of mantras, engaged in various tasks.

इस भ्रान्त अवस्था में, तुम अब मेरी मदद नहीं कर रही हो, मंत्रों के जंगल में लंबे समय तक भटकने के बाद, विभिन्न कार्यों में लगी हुई।

6.92.28

दृष्टानि धर्मस्थानानि विश्राम्याम्यधुना सखि इत्यक्षमालां ज्वलने चिक्षेपोक्त्वा शिखिध्वजः ॥ २८ ॥

dṛṣṭāni dharmasthānāni viśrāmyāmyadhunā sakhi ityakṣamālāṃ jvalane cikṣepoktvā śikhidhvajaḥ || 28 ||

Having seen the holy places, I will rest now, O friend, saying this, he threw the rosary into the fire, the one with the peacock banner.

धर्मस्थानों को देखकर, मैं अब विश्राम करूंगा, हे सखी, ऐसा कहकर उसने माला को अग्नि में फेंक दिया, वह जिसका ध्वज मोर का है।

6.92.29

कल्पान्ताग्नाविव व्योम तारालीं पवनोऽमलाम् मया नरमृगेण त्वं चिरं वनमृगाच्च्युतम् ॥ २९ ॥

kalpāntāgnāviva vyoma tārālīṃ pavano'malām mayā naramṛgeṇa tvaṃ ciraṃ vanamṛgāccyutam || 29 ||

Like the sky with its pure stars scattered by the wind at the end of the world, you have been long separated from the forest animals by me, the human animal.

जैसे कल्पांत की अग्नि में वायु द्वारा फैली हुई शुद्ध तारों वाला आकाश, वैसे ही तुम लंबे समय से वन के जानवरों से अलग हो गई हो, मेरे द्वारा, मानव जानवर द्वारा।

6.92.30

अबोधेन धृतं वृस्यामिदमेव मृगाजिनम् इदानीं गच्छ तुच्छाय पन्थानः सन्तु ते शिवाः ॥ ३० ॥

abodhena dhṛtaṃ vṛsyāmidameva mṛgājinam idānīṃ gaccha tucchāya panthānaḥ santu te śivāḥ || 30 ||

Due to ignorance, this deer skin has been worn by me, now go, O insignificant one, may your paths be auspicious.

अज्ञान के कारण यह मृगचर्म मैंने धारण किया है, अब जाओ, हे अनाथ, तुम्हारे मार्ग मंगलमय हों।

6.92.31

वह्निना व्योमतां गच्छ सतारं व्योम ते समम् । तद्वृस्यङ्गात्कराभ्यां स धृत्वा चर्माजहाविति ॥ ३१ ॥

vahninā vyomatāṃ gaccha satāraṃ vyoma te samam | tadvṛsyaṅgātkarābhyāṃ sa dhṛtvā carmājahāviti || 31 ||

Go to the sky with fire, the sky is equal to you with the stars | Holding the shield with both hands from that bull, he said

आग के साथ आकाश को जाओ, तारों के साथ आकाश तुम्हारे बराबर है | उस बैल से दोनों हाथों से ढाल पकड़कर उसने कहा

6.92.32

नृपोऽग्नावम्बुधेर्वातो दववह्नाविवाचलात् । महावृत्तेन भवता त्वया वारि धृतं मम ॥ ३२ ॥

nṛpo'gnāvambudhervāto davavahnāvivācalāt | mahāvṛttena bhavatā tvayā vāri dhṛtaṃ mama || 32 ||

O king, from the fire of the ocean's wind, like the immovable fire | By you, with great effort, my water was held

हे राजा, समुद्र की हवा की आग से, अचल आग की तरह | तुमने, महान प्रयास से, मेरा पानी पकड़ा

6.92.33

साधो कमण्डलो सम्यङ् न ते प्रतिकृतं कृतम्। सौहृदस्य मनोज्ञस्य सौजन्यस्यस्थिरस्य च ॥ ३३ ॥

sādho kamaṇḍalo samyaṅ na te pratikṛtaṃ kṛtam | sauhṛdasya manojñasya saujanysyasthirasya ca || 33 ||

O good man, the water pot is not properly returned to you | For the pleasant, kind, and steady friendship

हे साधु, पानी का घड़ा तुम्हें ठीक से वापस नहीं किया गया | मनमोहक, दयालु और स्थिर मित्रता के लिए

6.92.34

साधुत्वस्य च सर्वस्य त्वमेव परमास्पदम्। येनैव वह्निना देहं संशोध्याभ्यागतोऽसि माम् ॥ ३४ ॥

sādhutvasya ca sarvasya tvameva paramāspadam | yenaiva vahninā dehaṃ saṃśodhyābhyāgato'si mām || 34 ||

You are the supreme abode of all goodness | By which fire you have purified your body and come to me

तुम सभी साधुता के परम आश्रय हो | जिस आग से तुमने अपने शरीर को शुद्ध किया और मेरे पास आए

6.92.35

तेनैव गच्छ हे मित्र पन्थानः सन्तु ते शिवाः। इत्युक्त्वा श्रोत्रियायैव कमण्डलुमदात्तदा ॥ ३५ ॥

tenaiva gaccha he mitra panthānaḥ santu te śivāḥ | ityuktvā śrotriyāyaiva kamaṇḍalumadāttadā || 35 ||

Go with that, O friend, may your paths be auspicious | Having said this, he gave the water pot to the scholar

उसी के साथ जाओ, हे मित्र, तुम्हारे मार्ग शुभ हों | ऐसा कहकर, उसने विद्वान को पानी का घड़ा दिया

6.92.36

अग्नये महते वापि दातव्यं साधु यद्भवेत् मूर्खस्येव मतिर्गुप्ते नित्यमेव पतस्यधः ॥ ३६ ॥

agnaye mahate vāpi dātavyaṃ sādhu yadbhaveT mūrkhasyeva matirguptE nityameva patasyadhaḥ || 36 ||

To the great Agni, whatever is good should be given. The mind of a fool is always hidden, and it falls down.

महान अग्नि को जो भी अच्छा हो, उसे देना चाहिए। मूर्ख का मन हमेशा छिपा हुआ है, और वह नीचे गिरता है।

6.92.37

उचिता ते गतिः सैव बृसिके भस्मतां व्रज इत्युक्त्वादाय बृसिकामग्नावेव स मृद्विकाम् ॥ ३७ ॥

ucitā te gatiḥ saiva bṛsikE bhasmatāṃ vraja ityuktvādāya bṛsikāmagnāvēva sa mṛdvikām || 37 ||

That is the right path for you, O scorpion, go to ashes. Saying this, he took the scorpion and threw it into the fire.

यही तुम्हारे लिए उचित गति है, हे बिच्छू, भस्म हो जा। यह कहकर उसने बिच्छू को उठाया और अग्नि में डाल दिया।

6.92.38

शुद्ध्यर्थमासनार्थं वै चिति तत्याज भासुरे यत्त्याज्यमचिरेणैव त्यक्तव्यं किल तत्सदा ॥ ३८ ॥

śuddhyarthamāsanārthaṃ vai citi tatyāja bhāsure yattyājyamacireṇaiva tyaktavyaṃ kil tatsadā || 38 ||

For the sake of purity and for the seat, he left the pyre in the shining one. Whatever is to be abandoned should be abandoned immediately.

शुद्धि और आसन के लिए, वह चिता को चमकते हुए में छोड़ दिया। जो भी छोड़ना हो, उसे तुरंत छोड़ देना चाहिए।

6.92.39

विस्तरः क्रियते सद्भिरुपादेये इति स्थितिः शीघ्रमग्नाविदं सर्वं भाण्डजातं त्यजाम्यहम्॥ ३९॥

vistaraḥ kriyate sadbhirupādeye iti sthitiḥ śīghramagnāvidam sarvaṃ bhāṇḍajātaṃ tyajāmyaham || 39 ||

The wise create elaboration in what is to be accepted. I will quickly abandon all these vessels in the fire.

बुद्धिमान लोग जो स्वीकार करना हो, उसमें विस्तार करते हैं। मैं इन सभी बर्तनों को तुरंत अग्नि में छोड़ दूंगा।

6.92.40

एकवारं दहत्यग्निर्दाह्यं भवति तुष्टये साधो क्रियोपकरणं निष्क्रियाय त्यजाम्यहम् न खेदस्तत्र कर्तव्यो नन्वयोग्यं बिभर्ति कः॥ ४०॥

ekavāraṃ dahatyagnirdāhyaṃ bhavati tuṣṭaye sādho kriyopakaraṇaṃ niṣkriyāya tyajāmyaham na khedastatra kartavyo nanvayogyaṃ bibharti kaḥ || 40 ||

The fire burns once, and it becomes satisfied. O wise one, I abandon the means of action for inaction. There should be no regret in that. Who bears what is unfit?

अग्नि एक बार जलाती है, और संतुष्ट होती है। हे बुद्धिमान, मैं कार्य के साधन को अकार्य के लिए छोड़ देता हूं। उसमें कोई खेद नहीं होना चाहिए। अनुपयुक्त कौन बहन करता है?

6.92.41

इत्युक्तवान्झटिति भोजनभाजनाद्यं सर्वं जुहाव वनवासविलासयोग्यम्। तद्भाण्डजालमनले सममेव राजा कल्पान्ततेजसि जगज्ज्वलतीव कालः॥ ४१॥

ityuktavān jhaṭiti bhojanabhājanādyaṃ sarvaṃ juhāva vanavāsavilāsayogyam | tadbhāṇḍajālamanale samameva rājā kalpāntatejasi jagajjvalatīva kālaḥ || 41 ||

Having said this, the king quickly offered all the utensils and other items suitable for forest living into the fire. That collection of vessels blazed like the fire of destruction at the end of the world.

ऐसा कहकर, राजा ने तुरंत वनवास के लिए उपयुक्त सभी बर्तन और अन्य सामान अग्नि में अर्पित कर दिया। वह बर्तनों का समूह प्रलय के अग्नि की तरह जल उठा।

Chapter 93

6.93.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथोत्थाय ददाहासौ शुष्कं तत्तृणमन्दिरम् । अज्ञेन स्वेन मनसा वृथा संकल्पकल्पितम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athottāya dadāhāsau śuṣkaṃ tattṛṇamandiram | ajñena svena manasā vṛthā saṃkalpakalpitam || 1 ||

Shri Vasistha said: Then, rising up, he burned that dry grass hut, which was uselessly imagined by his own ignorant mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर उठकर उसने उस सूखे घास के घर को जला दिया, जो उसके अज्ञानी मन द्वारा व्यर्थ संकल्प के रूप में कल्पित था।

6.93.2

शिष्टं यत्किंचिदभवत्तत्सर्वं स शिखिध्वजः । असंरब्धमना मौनी क्रमेण समया धिया ॥ २ ॥

śiṣṭaṃ yatkiñcidabhavattatsarvaṃ sa śikhidhvajaḥ | asaṃrabdhamanā maunī krameṇa samayā dhiyā || 2 ||

Whatever remained, he, the banner of the flame, with a calm mind and in silence, gradually destroyed with the passage of time.

जो कुछ भी बचा था, उसे लपट का ध्वज, शांत मन और मौन में, समय के साथ धीरे-धीरे नष्ट कर दिया।

6.93.3

ददाह च स चिक्षेप तत्याज च बभञ्ज वा । भाण्डजातं स्ववसनं भोजनाद्यपि तुष्टवत् ॥ ३ ॥

dadāha ca sa cikṣepa tatyāja ca babhañja vā | bhāṇḍajātaṃ svavasanaṃ bhojanādyapi tuṣṭavat || 3 ||

He burned, threw away, abandoned, and broke all his utensils, clothes, and even his food, being satisfied.

उसने अपने सभी बर्तन, कपड़े, और भोजन को जला दिया, फेंक दिया, छोड़ दिया, और तोड़ दिया, संतुष्ट होकर।

6.93.4

स बभूवाश्रमस्तस्य दृष्टनष्टजनस्थितिः । वीरभद्रबलध्वस्तदक्षयज्ञाश्रमोपमः ॥ ४ ॥

sa babhūvāśramastasya dṛṣṭanaṣṭajanasthitiḥ | vīrabhadrabaladhvastadakṣayajñāśramopamaḥ || 4 ||

That became his abode, resembling the destroyed abode of Daksha's sacrifice, which was seen by the people as destroyed.

वह उसका आश्रम बन गया, जो दक्ष के यज्ञ के नष्ट आश्रम के समान था, जिसे लोगों ने नष्ट देखा।

6.93.5

आश्रमात्ते मृगगणास्त्यक्तरोमन्थमुद्ययुः । साग्निदाहात्पुरवरादृद्धीतभीतजना इव ॥ ५ ॥

āśramātte mṛgagaṇāstyaktaromanthamudyayuḥ | sāgnidāhātpuravarādbhītabhītajanā iva || 5 ||

From that abode, the deer, abandoning their fear, arose, like the frightened people from the great city destroyed by fire.

उस आश्रम से, हिरण, अपने भय को छोड़कर, उठे, जैसे आग से नष्ट हुए महान शहर से भयभीत लोग।

6.93.6

भाण्डजातं दहत्यग्नौ सहशुष्केन्धनेन तत् । केवलाकृतिरस्नेहस्तुष्टिमानाह भूपतिः ॥ ६ ॥

bhāṇḍajātaṃ dahatyagnau sahaśuṣkendhanena tat | kevalākṛtirasnehas tuṣṭimānāha bhūpatiḥ || 6 ||

The king, who is content with mere form and without affection, burns the collection of pots in the fire along with dry fuel.

जो राजा केवल आकृति और स्नेह से रहित है, वह सूखे ईंधन के साथ भांडों के समूह को अग्नि में जलाता है।

6.93.7

शिखिध्वज उवाच । वासनां तत्र संत्यज्य सर्वत्यागी स्थितो ह्यहम् । अहो नु चिरकालेन देवपुत्र प्रबोधितः ॥ ७ ॥

śikhidhvaja uvāca | vāsanāṃ tatra santyajya sarvatyāgī sthito hyaham | aho nu cirakālena devaputra prabodhitaḥ || 7 ||

Shikhidhvaja said: Having abandoned desires there, I am established as one who has renounced everything. Oh, after a long time, I have been awakened by the son of the god.

शिखिध्वज ने कहा: वहां वासनाओं को त्यागकर, मैं सब कुछ त्यागने वाला बनकर स्थित हूं। अहो, लंबे समय के बाद मैं देवपुत्र द्वारा जागृत किया गया हूं।

6.93.8

संपन्नः केवलः शुद्धः सुखेनोद्बोधवानहम् । किं नाम किल वस्त्वेतद्भवेत्सांकल्पिकक्रमम् ॥ ८ ॥

saṃpannaḥ kevalaḥ śuddhaḥ sukhenodbodhavānaham | kiṃ nāma kil vastvetadbhavetsāṃkalpikakramam || 8 ||

I am accomplished, pure, and awakened with ease. What indeed is this thing that arises from imagination?

मैं संपन्न, शुद्ध और सुख से जागृत हूं। यह क्या है जो कल्पना से उत्पन्न होता है?

6.93.9

यावद्यावत्प्रहीयन्ते विविधा बन्धहेतवः । तावत्तावत्समायाति परमां निर्वृतिं मनः ॥ ९ ॥

yāvadyāvatprahīyante vividhā bandhahetavaḥ | tāvattāvatsamāyāti paramāṃ nirvṛtiṃ manaḥ || 9 ||

As various causes of bondage gradually diminish, the mind attains supreme tranquility.

जैसे-जैसे विभिन्न बंधन के कारण धीरे-धीरे कम होते हैं, मन परम शांति प्राप्त करता है।

6.93.10

शाम्यामि परिनिर्वामि सुखितोऽस्मि जयाम्यहम् । विबन्धाः प्रक्षयं याताः सर्वत्यागो मया कृतः ॥ १० ॥

śāmyāmi parinirvāmi sukhito'smi jayāmyaham | vibandhāḥ prakṣayaṃ yātāḥ sarvatyāgo mayā kṛtaḥ || 10 ||

I am calm, completely liberated, happy, and victorious. All bonds have been destroyed, and I have renounced everything.

मैं शांत हूं, पूर्ण रूप से मुक्त हूं, सुखी हूं और विजयी हूं। सभी बंधन नष्ट हो गए हैं, और मैंने सब कुछ त्याग दिया है।

6.93.11

दिगम्बरो दिक्सदनो दिक्समोऽयमहं स्थितः । देवपुत्र महात्यागात्किमन्यदवशिष्यते ॥ ११ ॥

digambaro diksadano diksamo'yamahaṃ sthitaḥ | devaputra mahātyāgātkimanyadavaśiṣyate || 11 ||

I am naked and directionless, standing here. O son of the gods, after such great renunciation, what else remains?

मैं नग्न और दिशाहीन हूँ, यहाँ खड़ा हूँ। हे देवपुत्र, इतने बड़े त्याग के बाद और क्या शेष रहता है?

6.93.12

कुम्भ उवाच । सर्वमेव न संत्यक्तं त्वया राजन् शिखिध्वज । सर्वत्यागपरानन्दे मा मुधाभिनयं कुरु ॥ १२ ॥

kumbha uvāca | sarvameva na saṃtyaktaṃ tvayā rājan śikhidhvaja | sarvatyāgaparānande mā mudhābhinayaṃ kuru || 12 ||

Kumbha said: O king Shikhidhvaja, you have not renounced everything. In the joy of complete renunciation, do not act foolishly.

कुम्भ ने कहा: हे राजा शिखिध्वज, तुमने सब कुछ नहीं छोड़ा है। पूर्ण त्याग के आनंद में, मूढ़तापूर्वक मत करो।

6.93.13

तवास्त्येवापरित्यक्तः सर्वस्माद्भाग उत्तमः । यं परित्यज्य निःशेषं परामायास्यशोकताम् ॥ १३ ॥

tavāstyeveāparityaktaḥ sarvasmādbhāga uttamaḥ | yaṃ parityajya niḥśeṣaṃ parāmāyāsyaśoktām || 13 ||

You still have the best part unrenounced. By renouncing it completely, you will attain supreme bliss.

तुम्हारे पास अभी भी सर्वश्रेष्ठ भाग अवशिष्ट है। इसे पूर्णतः छोड़कर, तुम परम आनंद प्राप्त करोगे।

6.93.14

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति श्रुतवता तेन किंचित्संचिन्त्य भूभृता । इदमुक्तं महाबाहो राम राजीवलोचन ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti śrutavatā tena kiṃcitsaṃcintya bhūbhṛtā | idamuktaṃ mahābāho rāma rājīvalocana || 14 ||

Vasishtha said: Having heard this, the king pondered a little and said this, O mighty-armed Rama, lotus-eyed.

वसिष्ठ ने कहा: यह सुनकर, राजा ने थोड़ा सोचा और यह कहा, हे महाबाहु राम, कमलनयन।

6.93.15

शिखिध्वज उवाच । इन्द्रियव्यालसंघातो रक्तमांसमयाकृतिः । शिष्यते सर्वसंत्यागे देहो मे देवतात्मज ॥ १५ ॥

śikhidhvaja uvāca | indriyavyālasaṃghāto raktamāṃsamayākṛtiḥ | śiṣyate sarvasaṃtyāge deho me devatātmaja || 15 ||

Shikhidhvaja said: O son of the gods, this body, which is a collection of sense organs and a form of flesh and blood, remains in complete renunciation.

शिखिध्वज ने कहा: हे देवपुत्र, यह शरीर, जो इंद्रियों का समूह और रक्त और मांस का रूप है, पूर्ण त्याग में शेष रहता है।

6.93.16

तदुत्थाय पुनर्देहं भृगुपातादविघ्नतः । विनाशात्मकतां नीत्वा सर्वत्यागी भवाम्यहम् ॥ १६ ॥

taduttāya punardehaṃ bhṛgupātādavighnataḥ | vināśātmakatāṃ nītvā sarvatyāgī bhavāmyaham || 16 ||

Having risen again from the body without obstruction from the fall of Bhrigu, I become a renouncer, leading to a state of destruction.

भृगु के पतन से बिना किसी बाधा के शरीर से पुनः उठकर, मैं एक त्यागी बन जाता हूँ, जो विनाश की अवस्था को ले जाता है।

6.93.17

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा देहमग्रस्थे श्वभ्रे त्यक्तुमसौ जवात् । करोति यावदुत्थानं तावत्कुम्भोऽप्युवाच ह ॥ १७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā dehamagrasthē śvabhrē tyaktumasau javāt | karoti yāvadutthānaṃ tāvatkumbho'pyuvāca ha || 17 ||

Sri Vasistha said: Having said this, he quickly tried to abandon his body in the cave. As he was about to rise, the pot also spoke.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर, वह तुरंत गुफा में अपने शरीर को छोड़ने की कोशिश करने लगा। जैसे ही वह उठने लगा, घड़ा भी बोल उठा।

6.93.18

कुम्भ उवाच । राजन्किमिति देहं त्वं निरागस्कं महावटे । त्यजस्यज्ञो हि वृषभः कुपितो हन्ति तर्णकम् ॥ १८ ॥

kumbha uvāca | rājankimiti dehaṃ tvaṃ nirāgaskaṃ mahāvaṭe | tyajasyajño hi vṛṣabhaḥ kupito hanti tarṇakam || 18 ||

The pot said: O King, why do you want to abandon this body, which is free from attachment, in this great pit? Even an ignorant bull, when angry, kills a blade of grass.

घड़ा बोला: हे राजन्, तुम इस शरीर को, जो आसक्ति से मुक्त है, इस महान गड्ढे में क्यों छोड़ना चाहते हो? एक अज्ञानी बैल, जब क्रोधित होता है, तो एक घास की पत्ती को भी मार डालता है।

6.93.19

जडो वराको मूकात्मा तपस्वी देहको ह्ययम् । न कश्चन तवैतस्मिन्मा मुधैव तनुं त्यज ॥ १९ ॥

jaḍo varāko mūkātmā tapasvī dehako hyayam | na kaścana tavaietasminmā mudhaiva tanuṃ tyaj || 19 ||

This body is inert, excellent, silent, and austere. There is nothing in it for you; do not foolishly abandon the body.

यह शरीर जड़, उत्कृष्ट, मौन और तपस्वी है। इसमें तुम्हारे लिए कुछ नहीं है; मूर्खतापूर्वक शरीर को मत छोड़ो।

6.93.20

आत्मन्येवैष मूकात्मा ध्यानवानवतिष्ठते । संचाल्यते परेणैव तरङ्गेणैव काष्ठकम् ॥ २० ॥

ātmanyeva eṣa mūkātmā dhyānavānavatiṣṭhate | saṃcālyate pareṇaiva taraṅgeṇaiva kāṣṭhakam || 20 ||

This silent self resides in the self, engaged in meditation. It is moved by another, like a piece of wood by a wave.

यह मौन आत्मा आत्मा में ही ध्यान में लगा रहता है। यह दूसरे द्वारा ही चलाया जाता है, जैसे कि एक लकड़ी का टुकड़ा एक लहर द्वारा।

6.93.21

क्षोभयत्यन्य एवैनं निग्रहार्हो मुहुर्बलात् । तपस्विनं यथैकान्तं संस्थितं मत्ततस्करः ॥ २१ ॥

kṣobhayatyanya evainaṃ nigrahārho muhurbalāt | tapasvinaṃ yathaikāntaṃ saṃsthitaṃ mattataskaraḥ || 21 ||

Another person, like a drunken thief, repeatedly disturbs the ascetic who is steadfast in solitude, deserving restraint from strength.

कोई और व्यक्ति, जैसे मतवाला चोर, बार-बार एकान्त में स्थित तपस्वी को परेशान करता है, जो बल से निग्रह के योग्य है।

6.93.22

सुखदुःखादिभूत्या हि नापराधि शरीरकम्। नात्मनः फलवानात्मस्पन्दे वृक्षोऽपराधवान्॥ २२॥

sukhaduḥkhādibhūtyā hi nāparādhi śarīrakam | nātmanaḥ phalavānātmaspande vṛkṣo'parādhavān || 22 ||

Indeed, the body is not guilty of happiness, sorrow, etc., nor is the self the enjoyer of the fruits of its actions, just as a tree is not guilty of the fruits it bears.

वास्तव में, शरीर सुख, दुःख आदि का दोषी नहीं है, न ही आत्मा अपने कर्मों के फलों का भोगी है, जैसे कि वृक्ष अपने फलों का दोषी नहीं है।

6.93.23

वातः फलशिरःपुष्पपातनं कुरुते स्फुरन्। तरुणा साधुना धीरापराद्धं किमात्मनः॥ २३॥

vātaḥ phalaśiraḥpuṣpapātanaṃ kurute sphuran | taruṇā sādhunā dhīrāparāddhaṃ kimātmanaḥ || 23 ||

The wind causes the falling of fruits, flowers, and leaves while blowing. What fault is there of the tree, which is noble and steadfast?

वायु फल, फूल और पत्तियों को गिराती है जब वह बहती है। उस वृक्ष का क्या दोष है, जो उत्तम और स्थिर है?

6.93.24

त्यक्तेनापि शरीरेण किल तामरसेक्षण। सर्वत्यागो न ते याति निष्पत्तिं विषमो हि सः॥ २४॥

tyaktenāpi śarīreṇa kila tāmarasekṣaṇa | sarvatyāgo na te yāti niṣpattiṃ viṣamo hi saḥ || 24 ||

Even if the body is abandoned, O lotus-eyed one, complete renunciation does not bring about realization, for it is difficult.

भले ही शरीर छोड़ दिया जाए, हे कमलनयन, सम्पूर्ण त्याग से सिद्धि नहीं होती, क्योंकि यह कठिन है।

6.93.25

भृगौ केवलमेतत्त्वं निरागस्कं शरीरकम्। मुधा क्षिपसि नो देहत्यागे तत्त्यागिता भवेत्॥ २५॥

bhṛgau kevalametattvaṃ nirāgaskaṃ śarīrakam | mudhā kṣipasi no dehatyāge tattyāgitā bhavet || 25 ||

O Bhrigu, you foolishly think that this mere body is devoid of attachment. Renunciation of the body does not constitute true renunciation.

हे भृगु, तुम मूर्खतापूर्वक सोचते हो कि यह केवल शरीर ही आसक्ति से रहित है। शरीर का त्याग सच्चे त्याग को नहीं बनाता।

6.93.26

येनायं क्षोभ्यते देहो मत्तेभेनेव पादपः। तत्संत्यजसि चेत्पापं तन्महात्यागवान्भवान्॥ २६॥

yenāyaṃ kṣobhyate deho mattebhenaiva pādapaḥ| tatsaṃtyajasi cetpāpaṃ tanmahātyāgavānbhavān || 26 ||

If you give up that which agitates the body like a drunken elephant agitates a tree, then you are a great renouncer.

अगर आप उसे त्याग देते हैं जो शरीर को मतवाले हाथी की तरह हिलाता है, तो आप एक महान त्यागी हैं।

6.93.27

तस्मिंस्त्यक्ते भवेत्त्यक्तं सर्वं देहादि भूपते। नो चेन्निमग्नमप्येतद्भूयोभूयः प्ररोहति॥ २७॥

tasmiṃstyakte bhavettaktaṃ sarvaṃ dehādi bhūpate| no cennimagnamapyetadbhūyobhūyaḥ prarohati || 27 ||

O king, if that is renounced, everything including the body is renounced. If not, even if submerged, it grows again and again.

हे राजन, अगर वह त्याग दिया जाता है, तो शरीर सहित सब कुछ त्याग दिया जाता है। अगर नहीं, तो यह डूबा हुआ भी बार-बार बढ़ता रहता है।

6.93.28

शिखिध्वज उवाच । केनायं चाल्यते देहः किं बीजं जन्मकर्मणाम् । कस्मिंस्त्यक्ते परित्यक्तं सर्वं भवति सुन्दर ॥ २८ ॥

śikhidhvaja uvāca| kenāyaṃ cālyate dehaḥ kiṃ bījaṃ janmakarmaṇām| kasmiṃstyakte parityaktaṃ sarvaṃ bhavati sundara || 28 ||

Shikhidhvaja said: By what is this body agitated? What is the seed of birth and actions? By renouncing what, everything is renounced, O beautiful one?

शिखिध्वज ने कहा: किससे यह शरीर हिलाया जाता है? जन्म और कर्मों का बीज क्या है? किसके त्याग से सब कुछ त्याग दिया जाता है, हे सुंदर?

6.93.29

कुम्भ उवाच । साधो न देहत्यागेन न राज्यत्यजनेन च । न चोटजादिशोषेण सर्वत्यागो भवेन्नृप ॥ २९ ॥

kumbha uvāca| sādho na dehatyāgena na rājyatyajanena ca| na cotajādiśoṣeṇa sarvatyāgo bhavennṛpa || 29 ||

Kumbha said: O good one, renunciation is not achieved by giving up the body, nor by renouncing the kingdom, nor by the drying up of the udder and other such things, O king.

कुम्भ ने कहा: हे साधु, त्याग शरीर का त्याग करके नहीं होता, न राज्य का त्याग करके, न ही थन के सूखने और अन्य ऐसी चीजों से, हे राजन।

6.93.30

यत्सर्वं सर्वतो यच्च तस्मिन्सर्वैककारणे । सर्वस्मिन्संपरित्यक्ते सर्वत्यागः कृतो भवेत् ॥ ३० ॥

yatsarvaṃ sarvato yacca tasmin sarvaikakāraṇe| sarvasmin saṃparityakte sarvatyāgaḥ kṛto bhavet || 30 ||

That which is everything and everywhere, in that single cause of all, when everything is completely renounced, complete renunciation is achieved.

जो सब कुछ और सर्वत्र है, उस सबके एकमात्र कारण में, जब सब कुछ पूर्णतः त्याग दिया जाता है, तब पूर्ण त्याग प्राप्त होता है।

6.93.31

शिखिध्वज उवाच । सर्वं सर्वगतं सर्वहेयं त्याज्यं च सर्वदा । सर्वं किमुच्यते ब्रूहि सर्वतत्त्वविदां वर ॥ ३१ ॥

śikhidhvaja uvāca | sarvaṃ sarvagataṃ sarvaheyaṃ tyājyaṃ ca sarvadā | sarvaṃ kimucyate brūhi sarvatattvavidāṃ vara || 31 ||

Shikhidhvaja said: Everything is omnipresent, everything is to be abandoned always. What is meant by everything? Tell me, O best among the knowers of all truths.

शिखिध्वज ने कहा: सब कुछ सर्वव्यापी है, सब कुछ हमेशा त्यागने योग्य है। सब कुछ क्या कहलाता है? मुझे बताओ, हे सब तत्वों के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ।

6.93.32

कुम्भ उवाच । साधो सर्वगताकारं जीवप्राणादिनामकम् । न जडं नाजडं भ्रान्तं चित्तं सर्वमिति स्मृतम् ॥ ३२ ॥

kumbha uvāca | sādho sarvagatākāraṃ jīvaprāṇādināmakam | na jaḍaṃ nājaḍaṃ bhrāntaṃ cittaṃ sarvamiti smṛtam || 32 ||

Kumbha said: O virtuous one, the form that is omnipresent, known by names such as life force, etc., is neither inert nor non-inert, but deluded. It is known as the mind, which is everything.

कुम्भ ने कहा: हे साधु, जो रूप सर्वव्यापी है, जीवन शक्ति आदि नामों से जाना जाता है, वह न तो जड़ है न ही अजड़, बल्कि भ्रांत है। वह मन कहलाता है, जो सब कुछ है।

6.93.33

चित्तमेव भ्रमं विद्धि विद्धि चेतो नरं नृप । चित्तं विद्धि जगज्जालं चित्तं सर्वमिति स्मृतम् ॥ ३३ ॥

cittameva bhramaṃ viddhi viddhi ceto naraṃ nṛpa | cittaṃ viddhi jagajjālaṃ cittaṃ sarvamiti smṛtam || 33 ||

Know the mind itself to be the delusion. Know the mind to be the consciousness, O king. Know the mind to be the web of the world. The mind is known as everything.

मन ही भ्रम को जानो। मन को चेतना जानो, हे राजा। मन को जगत के जाल के रूप में जानो। मन सब कुछ कहलाता है।

6.93.34

राज्यादेरथ देहादेराश्रमादेर्महीपते । सर्वस्यैव मनो बीजं तरुबीजं तरोरिव ॥ ३४ ॥

rājyāderatha dehāderāśramādermahīpate | sarvasyaiva mano bījaṃ tarubījaṃ taroriva || 34 ||

O king, the mind is the seed of everything, including kingdom, body, and hermitage, just as the seed is the source of the tree.

हे राजा, मन सब कुछ का बीज है, जिसमें राज्य, शरीर और आश्रम शामिल हैं, जैसे बीज पेड़ का स्रोत होता है।

6.93.35

सर्वस्य बीजे संत्यक्ते सर्वं त्यक्तं भवत्यलम् । संभवासंभवाद्भूप सर्वत्यागो भवेदिति ॥ ३५ ॥

sarvasya bīje saṃtyakte sarvaṃ tyaktaṃ bhavaty alam | saṃbhavāsaṃbhavādbhūpa sarvatyāgo bhaved iti || 35 ||

When the seed of everything is abandoned, everything is abandoned sufficiently. O king, from the possibility and impossibility of existence, everything is abandoned.

जब सब कुछ का बीज त्याग दिया जाता है, तब सब कुछ पर्याप्त रूप से त्याग दिया जाता है। हे राजा, अस्तित्व की संभावना और असंभावना से सब कुछ त्याग दिया जाता है।

6.93.36

सर्वधर्माद्यधर्मा वा राज्यादि विपिनादि वा । सचित्तस्य परं दुःखं निश्चित्तस्य परं सुखम् ॥ ३६ ॥

sarvadharmādyadharmā vā rājyādi vipinādi vā | sachittasya paraṃ duḥkhaṃ niścittasya paraṃ sukham || 36 ||

Whether it is all dharma or the highest dharma, whether it is a kingdom or a forest, for one with a mind, there is great suffering, for one without a mind, there is great happiness.

चाहे यह सभी धर्म हो या सबसे बड़ा धर्म, चाहे यह राज्य हो या वन, मन वाले के लिए बड़ा दुःख है, मन नहीं वाले के लिए बड़ा सुख है।

6.93.37

इदं विवर्तते सर्वं चित्तमेव जगत्तया । देहाद्याकारजालेन बीजं वृक्षतया यथा ॥ ३७ ॥

idaṃ vivartate sarvaṃ cittameva jagattayā | dehādyākārajālena bījaṃ vṛkṣatayā yathā || 37 ||

This entire world is a manifestation of the mind. Just as a seed becomes a tree, the world appears in various forms through the mind.

यह सारा संसार मन का ही परिणाम है। जैसे बीज पेड़ बनता है, वैसे ही मन के द्वारा संसार अलग-अलग रूपों में दिखाई देता है।

6.93.38

पादपः पवनेनेव भूकम्पेनेव पर्वतः । भस्त्रा भस्त्राभरेणायं देहश्चित्तेन चाल्यते ॥ ३८ ॥

pādapapavaneeneva bhūkampeeneva parvataḥ | bhastrā bhastrābhareṇāyaṃ dehaścittena cālyate || 38 ||

Just as a tree is moved by the wind and a mountain by an earthquake, the body is moved by the mind.

जैसे हवा से पेड़ हिलता है और भूकंप से पर्वत, वैसे ही मन से शरीर हिलता है।

6.93.39

सर्वभूतोपभोगानां जरामरणजन्मनाम्। महामुनीनां सुदृढं चित्तं विद्धि समुद्गकम्॥ ३९॥

sarvabhūtopabhogānāṃ jarāmaraṇajanmanām | mahāmunīnāṃ sudṛḍhaṃ cittaṃ viddhi samudgakam || 39 ||

Know the mind of the great sages to be very firm, like a strong fortress, against the enjoyments of all beings and against old age, death, and birth.

महामुनियों के मन को सभी जीवों के भोगों और बुढ़ापे, मृत्यु और जन्म के विरुद्ध एक मजबूत किले की तरह बहुत दृढ़ मानो।

6.93.40

इदं प्रवर्तते सर्वं चित्तमेव जगत्तया। देहाद्याकारजालेन चित्तं जीवो मनोमयम्॥ ४०॥

idaṃ pravartate sarvaṃ cittameva jagattayā | dehādyākārajālena cittaṃ jīvo manomayam || 40 ||

This entire world functions due to the mind. The mind, which is the essence of life, manifests in various forms through the body and other forms.

यह सारा संसार मन के कारण चलता है। मन, जो जीवन का सार है, शरीर और अन्य रूपों के द्वारा विभिन्न रूपों में प्रकट होता है।

6.93.41

बुद्धिर्महदहंकारः प्राणश्चेत्यादिभिर्मुने। क्रियानुरूपैरभिधाव्यापारैः शान्तमुच्यते॥ ४१॥

buddhirmahadahaṃkāraḥ prāṇaścetyādibhirmune | kriyānurūpairabhidhāvyāpāraiḥ śāntamucyate || 41 ||

O sage, the intellect, the great ego, the vital breath, and other activities are said to be peaceful when they are in accordance with their respective functions.

हे मुने, बुद्धि, महान अहंकार, प्राण और अन्य क्रियाएँ अपने-अपने कार्यों के अनुसार शान्त कही जाती हैं।

6.93.42

चित्तं सर्वमिति प्राहुस्तस्मिंस्त्यक्ते महीपते। सर्वाधिव्याधिसीमान्तः सर्वत्यागः कृतो भवेत्॥ ४२॥

cittaṃ sarvamiti prāhustasmiṃstyakte mahīpate | sarvādhivyādhisīmāntaḥ sarvatyāgaḥ kṛto bhavet || 42 ||

O king, they say that the mind is everything. When it is renounced, O lord of the earth, all afflictions and limitations are renounced.

हे राजन, लोग कहते हैं कि चित्त ही सब कुछ है। जब वह त्याग दिया जाता है, हे पृथ्वी के स्वामी, तब सभी व्याधियाँ और सीमाएँ त्याग दी जाती हैं।

6.93.43

चित्तत्यागं विदुः सर्वत्यागं त्यागविदां वर। तस्मिन्सिद्धे महाबाहो सत्यं किं नानुभूयते॥ ४३॥

cittatyāgaṃ viduḥ sarvatyāgaṃ tyāgavidāṃ vara | tasminsiddhe mahābāho satyaṃ kiṃ nānubhūyate || 43 ||

O best among the knowers of renunciation, they know the renunciation of the mind as the renunciation of everything. O mighty-armed one, what truth is not experienced when that is accomplished?

हे त्याग के ज्ञानी श्रेष्ठ, चित्त का त्याग सब कुछ का त्याग माना जाता है। हे महाबाहो, जब वह सिद्ध हो जाता है, तब कौन सा सत्य अनुभव नहीं किया जाता?

6.93.44

चित्ते त्यक्ते लयं याति द्वैतमैक्यं च सर्वतः । शिष्यते परमं शान्तमच्छमेकमनामयम् ॥ ४४ ॥

citte tyakte layaṃ yāti dvaitamaikyaṃ ca sarvataḥ | śiṣyate paramaṃ śāntamacchamekamanāmayam || 44 ||

When the mind is renounced, duality and non-duality both dissolve, and the supreme, flawless, and eternal peace is attained.

जब मन का त्याग हो जाता है, तब द्वैत और अद्वैत दोनों लीन हो जाते हैं, और परम, निर्दोष, और शाश्वत शान्ति प्राप्त होती है।

6.93.45

अस्याश्चित्तं विदुः क्षेत्रं संसृतेः सस्यसंततेः । क्षेत्रे त्वक्षेत्रतां याते शालेः क इव संभवः ॥ ४५ ॥

asyāścittaṃ viduḥ kṣetraṃ saṃsṛteḥ sasyasaṃtateḥ | kṣetre tvakṣetratāṃ yāte śāleḥ ka iva saṃbhavaḥ || 45 ||

They know the mind to be the field of the continuous flow of worldly existence. When the field loses its field-ness, what remains is like the non-existence of a paddy field.

लोग मन को संसार की निरंतर धारा का क्षेत्र मानते हैं। जब क्षेत्र अपनी क्षेत्रता खो देता है, तब जो बचता है वह धान के खेत की अनुपस्थिति की तरह होता है।

6.93.46

चित्तमेव विचित्रेहं भावाभावविलासिना । विवर्ततेऽर्थभावेन जलमूर्मितया यथा ॥ ४६ ॥

cittameva vicitrehaṃ bhāvābhāvavilāsinā | vivartate'rthabhāvena jalamūrmitayā yathā || 46 ||

The mind alone is the cause of all the various experiences of existence and non-existence. It transforms itself into various forms, just like waves in the water.

मन ही अस्तित्व और अनस्तित्व के विभिन्न अनुभवों का कारण है। यह जल की लहरों की तरह विभिन्न रूपों में परिवर्तित होता है।

6.93.47

चित्तोत्सादनरूपेण सर्वत्यागेन भूपते । सर्वमासाद्यते सम्यक् साम्राज्येनेव सर्वदा ॥ ४७ ॥

cittotsādanarūpeṇa sarvatyāgena bhūpate | sarvamāsādyate samyak sāmrājyeneva sarvadā || 47 ||

O king, by renouncing everything and by the destruction of the mind, everything is attained perfectly, just like a kingdom is attained.

हे राजन्, सब कुछ त्याग कर और मन को नष्ट करके, सब कुछ पूर्णतः प्राप्त होता है, जैसे कि एक राज्य प्राप्त होता है।

6.93.48

सर्वत्यागस्य विषयो यथैवान्योऽस्ति ते तथा । त्वमप्यन्यस्य भवसि त्यागिनगृह्णासि वै नृप ॥ ४८ ॥

sarvatyāgasya viṣayo yathaivānyo'sti te tathā | tvamapyanyasya bhavasi tyāgingṛhṇāsi vai nṛpa || 48 ||

O king, just as there is another object of renunciation for you, you also become an object of renunciation for another. Indeed, you accept renunciation, O king.

हे राजन्, जैसे आपके लिए त्याग का कोई और विषय है, वैसे ही आप भी किसी और के लिए त्याग का विषय बन जाते हैं। वास्तव में, आप त्याग को स्वीकार करते हैं, हे राजन्।

6.93.49

सूत्रं मुक्ताफलेनेव जगज्जालं त्रिकालकम्। सर्वमन्तः कृतं तेन येन सर्वं समुज्झितम्॥ ४९॥

sūtraṃ muktāphaleneva jagajjālaṃ trikālakam | sarvamantaḥ kṛtaṃ tena yena sarvaṃ samujjhitam || 49 ||

The world, which is a web of illusion in the three periods of time, is like a thread with a pearl. Everything is created within it, and by which everything is abandoned.

यह संसार, जो तीनों कालों में माया का जाल है, एक धागे पर मोती की तरह है। इसमें सब कुछ पैदा होता है, और जिससे सब कुछ त्याग दिया जाता है।

6.93.50

येन सर्वं परित्यक्तं तस्मिञ्छून्येऽपि संस्थितम्। जगत्सर्वं त्रिकालस्थं तन्तौ मुक्तावली यथा॥ ५०॥

yena sarvaṃ parityaktaṃ tasmiñśūnye'pi saṃsthitam | jagatsarvaṃ trikālasthaṃ tantau muktāvalī yathā || 50 ||

By which everything is abandoned, even in that emptiness, the entire world exists in the three periods of time, just like a string of pearls.

जिससे सब कुछ त्याग दिया जाता है, उस शून्यता में भी, पूरा संसार तीनों कालों में मौजूद है, जैसे कि मोतियों की माला।

6.93.51

अस्नेहेनेव दीपेन येन सर्वं समुज्झितम्। सस्नेहेनेव दीपेन तेन सर्वं प्रकाशितम्॥ ५१॥

asneheneva dīpena yena sarvaṃ samujjhitam | sasneheneva dīpena tena sarvaṃ prakāśitam || 51 ||

Just as a lamp without oil is extinguished, so too is everything extinguished without attachment. Just as a lamp with oil illuminates everything, so too does everything become illuminated with attachment.

जैसे बिना तेल के दीपक बुझ जाता है, वैसे ही बिना आसक्ति के सब कुछ बुझ जाता है | जैसे तेल के साथ दीपक सब कुछ प्रकाशित करता है, वैसे ही आसक्ति के साथ सब कुछ प्रकाशित हो जाता है || 51 ||

6.93.52

स्थितं सर्वं परित्यज्य यः शेतेऽस्नेहदीपवत्। स राजते प्रकाशात्मा समः सस्नेहदीपवत्॥ ५२॥

sthitaṃ sarvaṃ parityajya yaḥ śete'snehadīpavat | sa rājate prakāśātmā samaḥ sasnehadīpavat || 52 ||

He who sleeps, abandoning all that is established, like a lamp without oil, shines with the nature of light, equal to a lamp with oil.

जो सब कुछ छोड़कर, बिना तेल के दीपक की तरह सोता है, वह प्रकाश की प्रकृति के साथ चमकता है, तेल के साथ दीपक के समान |

6.93.53

समस्तवस्तुनिष्कासे यथा त्वमवशिष्यसे। सर्वत्यागे कृते तादृग्विज्ञानमवशिष्यते॥ ५३॥

samastavastuniṣkāse yathā tvamavaśiṣyase | sarvatyāge kṛte tādṛgvijñānamavaśiṣyate || 53 ||

Just as you remain when all objects are removed, so too does knowledge remain when everything is renounced.

जैसे सब वस्तुओं को हटाने पर आप बचते हैं, वैसे ही सब कुछ त्यागने पर ज्ञान बचता है |

6.93.54

समस्तवस्तुदाहेऽपि यथा त्वं नेतरो नृप। सर्वत्यागत एवाङ्ग तथा निर्वाणमुच्यते ॥ ५४ ॥

samastavastudāhe'pi yathā tvaṃ netaro nṛpa | sarvatyāgata evāṅga tathā nirvāṇamucyate || 54 ||

Even if all objects are burned, you remain unchanged, O king. Similarly, nirvana is said to be attained through the renunciation of everything.

यदि सब वस्तुएँ जला दी जाएँ भी, आप अपरिवर्तित रहते हैं, हे राजा | वैसे ही, सब कुछ त्यागने से निर्वाण कहा जाता है |

6.93.55

सर्वत्यागो हि शून्यात्मा आश्रयः सर्वसंविदाम्। अनन्तानामुदाराणां खमिवेदं दिवौकसाम् ॥ ५५ ॥

sarvatyāgo hi śūnyātmā āśrayaḥ sarvasaṃvidām | anantānāmudārāṇāṃ khamivedaṃ divaukasām || 55 ||

Indeed, the renunciation of everything is the essence of emptiness, the support of all consciousness. It is like the infinite and noble sky for the celestial beings.

निश्चय ही, सब कुछ त्यागना शून्यता का आत्मा है, सब चेतनाओं का आश्रय | यह अनंत और उदार आकाश के समान है, देवताओं के लिए |

6.93.56

सर्वत्यागरसापाने जरामरणभीतयः। न काश्चन प्रबाधन्ते खस्येव व्योमलेखिकाः ॥ ५६ ॥

sarvatyāgarasāpāne jarāmaraṇabhītayaḥ | na kāścana prabādhante khasyeva vyomalekhikāḥ || 56 ||

By drinking the nectar of complete renunciation, fears of old age and death do not trouble anyone, just as lines drawn in the sky.

सर्वत्याग के अमृत का पान करने से जरा और मरण के भय किसी को प्रबाधित नहीं करते, जैसे आकाश में लिखी रेखाएँ।

6.93.57

सर्वत्यागो महत्त्वस्य कारणं निर्मलद्युतेः। सर्वं त्यजसि चेद्यस्माद्बुद्धिस्थैर्यं बृहत्तमम् ॥ ५७ ॥

sarvatyāgo mahattvasya kāraṇaṃ nirmaladyuteḥ | sarvaṃ tyajasi cedyasmādbuddhisthairyaṃ bṛhattamam || 57 ||

Complete renunciation is the cause of greatness and pure radiance. If you renounce everything, you will attain the greatest steadfastness of the mind.

सर्वत्याग महत्त्व और निर्मल प्रकाश का कारण है। यदि आप सब कुछ त्याग देते हैं, तो आप मन की सबसे बड़ी स्थिरता प्राप्त करेंगे।

6.93.58

सर्वत्यागः परानन्दो दुःखमन्यत्सुदारुणम्। इत्योमित्युररीकृत्य यदिच्छसि तदाचर ॥ ५८ ॥

sarvatyāgaḥ parānando duḥkhamanyatsudāruṇam | ityomityurarīkṛtya yadicchasi tadācara || 58 ||

Complete renunciation is the supreme bliss; anything else is extremely painful. Therefore, OM, having reflected thus, do what you desire.

सर्वत्याग परम आनंद है; कुछ और अत्यंत दुःखदायक है। इसलिए, ओम, ऐसा विचार करके, जो आप चाहते हैं, वह करें।

6.93.59

सर्वं त्यजति यस्तस्य सर्वमेवोपतिष्ठते। यथैवाम्बु विशत्यग्नौ तथैवायाति वारिधौ ॥ ५९ ॥

sarvaṃ tyajati yastasya sarvamevopatiṣṭhate | yathaivāmbu viśatyagnau tathaivāyāti vāridhau || 59 ||

Whoever renounces everything attains everything. Just as water merges into the fire and returns to the ocean.

जो सब कुछ त्याग देता है, वह सब कुछ प्राप्त करता है। जैसे जल अग्नि में विलीन होकर समुद्र में लौट जाता है।

6.93.60

सर्वत्यागान्तरेवास्ति ज्ञानमात्मप्रसादकम्। यच्छून्यं किल भाण्डस्य तत्र रत्नादि तिष्ठति ॥ ६० ॥

sarvatyāgāntarevāsti jñānamātmaprasādakam | yacchūnyaṃ kila bhāṇḍasya tatra ratnādi tiṣṭhati || 60 ||

Within complete renunciation exists the knowledge that illuminates the self. Just as a treasure is found in an empty vessel.

सर्वत्याग के अंदर ही आत्मा को प्रकाशित करने वाला ज्ञान है। जैसे एक खाली पात्र में रत्न पाया जाता है।

6.93.61

सर्वत्यागवशादेव हृतकाले कलावपि। शाक्येन विगताशङ्कं मुनिना मेरुवत्स्थितम् ॥ ६१ ॥

sarvatyāgavaśādeva hṛtakāle kalāvapi | śākyena vigatāśaṅkaṃ muninā meruvatsthitam || 61 ||

Due to complete renunciation, even in the age of Kali, the sage Shakyamuni, free from doubts, remains steadfast like Mount Meru.

सर्वत्याग के कारण, कलियुग में भी, शाक्यमुनि मुनि शंकारहित मेरु की तरह स्थिर रहते हैं।

6.93.62

सर्वत्यागो महाराज सर्वसंपत्समाश्रयः। न गृह्णाति हि यत्किंचित्सर्वं तस्मै प्रदीयते ॥ ६२ ॥

sarvatyāgo mahārāja sarvasaṃpatsamāśrayaḥ | na gṛhṇāti hi yatkiñcit sarvaṃ tasmai pradīyate || 62 ||

O great king, complete renunciation is the refuge of all wealth. Indeed, he does not accept anything, yet everything is offered to him.

हे महाराज, सर्वत्याग सभी संपत्ति का आश्रय है। वास्तव में, वह कुछ भी ग्रहण नहीं करता, फिर भी उसे सब कुछ अर्पित किया जाता है।

6.93.63

कृत्वा सर्वपरित्यागं शान्तः स्वस्थो वियत्समः। सौम्यो भवसि यद्रूपस्तद्रूपो भव भूपते ॥ ६३ ॥

kṛtvā sarvaparityāgaṃ śāntaḥ svastho viyatsamaḥ | saumyo bhavasi yadrūpastadrūpo bhava bhūpate || 63 ||

Having performed complete renunciation, become peaceful, healthy, and equal to the sky. O king, become gentle and assume the form that you are.

सर्वपरित्याग करके, शांत, स्वस्थ और आकाश के समान हो जाओ। हे राजन्, कोमल बनो और जो रूप तुम हो, उस रूप को धारण करो।

6.93.64

सर्वं परित्यज्य महास्वभाव त्यजस्यथो येन च तद्विहाय। त्यागाभिमानं च मलं विमुच्य विमुक्तरूपो भव भूमिपाल ॥ ६४ ॥

sarvaṃ parityajya mahāsvabhāva tyajasyatho yena ca tadvihāya | tyāgābhimānaṃ ca malaṃ vimucya vimuktarūpo bhava bhūmipāla || 64 ||

Renouncing everything, O great one, abandon that by which you renounce. Giving up the pride of renunciation and impurities, become liberated, O ruler of the earth.

सब कुछ त्याग कर, हे महान्, जिससे तुम त्याग करते हो उसे भी त्याग दो। त्याग के अभिमान और मल को छोड़कर, मुक्त रूप धारण करो, हे पृथ्वी के शासक।

Chapter 94

6.94.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवं वदति वै कुम्भे चित्तत्यागं मुहुर्मुहुः । अन्तर्विचारयन्सौम्यो राजा वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃ vadati vai kumbhe cittatyāgaṃ muhurmmuhuḥ | antarvicārayansaumyo rājā vacanamabravīt || 1 ||

Śrīvasiṣṭha said: While Kumbha was speaking thus, repeatedly about the renunciation of the mind, the gentle king, reflecting within, spoke these words.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: जब कुम्भ इस प्रकार बार-बार मन के त्याग के बारे में बोल रहा था, तब सौम्य राजा ने अपने अंतर्मन में विचार करते हुए ये शब्द कहे।

6.94.2

शिखिध्वज उवाच । हृदयाकाशविहगो हृदयद्रुममर्कटः । भूयोभूयो निरस्तं हि समभ्येत्येव मे मनः ॥ २ ॥

śikhidhvaja uvāca | hṛdayākāśavihago hṛdayadrumamarkaṭaḥ | bhūyobhūyo nirastaṃ hi samabhyetyeva me manaḥ || 2 ||

Śikhidhvaja said: The monkey of the heart-tree, the bird of the heart-sky, repeatedly comes back to me, even though it is driven away again and again.

शिखिध्वज ने कहा: हृदय के वृक्ष का मर्कट और हृदय के आकाश का पक्षी, बार-बार मेरे पास आता है, भले ही उसे बार-बार भगा दिया जाता है।

6.94.3

जानामि चैतदादातुं मत्स्यं जाल इवाकुलम् । त्यागमस्य न जानामि चित्तं द्रव्य इवोत्तम ॥ ३ ॥

jānāmi caitadādātuṃ matsyaṃ jāla ivākulam | tyāgamasya na jānāmi cittaṃ dravya ivottama || 3 ||

I know how to catch a fish with a net, but I do not know how to renounce the mind, which is like the best of substances.

मैं जानता हूँ कि कैसे जाल से मछली पकड़ी जाती है, लेकिन मैं नहीं जानता कि मन को कैसे त्याग दिया जाए, जो सबसे उत्तम पदार्थ के समान है।

6.94.4

चित्तस्यादौ स्वरूपं मे यथावद्भगवन्वद । ततश्चित्तपरित्यागं यथावद्वद मे प्रभो ॥ ४ ॥

cittasyaādau svarūpaṃ me yathāvadbhagavanvada | tataścittaparityāgaṃ yathāvadvada me prabho || 4 ||

O Lord, please tell me the true nature of the mind at the beginning. Then, O Lord, please tell me the true way to renounce the mind.

हे भगवान, मुझे मन का असली स्वरूप बताएँ। फिर, हे प्रभु, मुझे मन का त्याग करने का असली तरीका बताएँ।

6.94.5

कुम्भ उवाच । वासनैव महाराज स्वरूपं विद्धि चेतसः । चित्तशब्दस्तु पर्यायो वासनाया उदाहृतः ॥ ५ ॥

kumbha uvāca | vāsanaiava mahārāja svarūpaṃ viddhi cetasaḥ | cittaśabdastu paryāyo vāsanāyā udāhṛtaḥ || 5 ||

Kumbha said: O great king, know that the true nature of the mind is desire. The word 'mind' is just another name for desire.

कुम्भ ने कहा: हे महाराज, मन का असली स्वरूप वासना है। 'मन' शब्द वासना का ही दूसरा नाम है।

6.94.6

त्यागस्तस्यातिसुकरः सुसाध्यः स्पन्दनादपि । राज्यादप्यधिकानन्दः कुसुमादपि सुन्दरः ॥ ६ ॥

tyāgastasyātisukaraḥ susādhyaḥ spandanādapi | rājyādapyadhikānandaḥ kusumādapi sundaraḥ || 6 ||

Renunciation is very easy and achievable for him, even easier than the movement of the eyelids. It brings more joy than a kingdom and is more beautiful than a flower.

त्याग उसके लिए बहुत ही सरल और सुलभ है, पलकों के झपकने से भी आसान है। यह राज्य से भी अधिक आनंद देता है और फूल से भी अधिक सुंदर है।

6.94.7

मूर्खस्य तु मनस्त्यागो नूनं दुःसाध्यतां गतः । पामरस्येव साम्राज्यं तृणस्येव सुमेरुता ॥ ७ ॥

mūrkhasya tu manastyāgo nūnaṃ duḥsādhyatāṃ gataḥ | pāmarasyeva sāmrājyaṃ tṛṇasyeva sumerutā || 7 ||

However, for a fool, renunciation of the mind is indeed difficult to achieve. It is like a commoner attaining sovereignty or a blade of grass becoming as great as Mount Meru.

फिर भी, एक मूर्ख के लिए, मन का त्याग करना वास्तव में कठिन है। यह एक सामान्य व्यक्ति के राज्य प्राप्त करने जैसा है या एक घास की पत्ती का मेरु पर्वत के समान महान होना।

6.94.8

शिखिध्वज उवाच । स्वरूपं वेद्मि चित्तस्य वासनामयमाकुलम् । त्यागः स मन्ये दुःसाध्यो वज्रनिर्गिलनादपि ॥ ८ ॥

śikhidhvaja uvāca | svarūpaṃ vedmi cittasya vāsanāmayamākulam | tyāgaḥ sa manye duḥsādhyaḥ vajranirgilanādapi || 8 ||

Shikhidhvaja said: I know the nature of the mind, which is full of desires and troubles. I think that renunciation is difficult, even more so than piercing a diamond.

शिखिध्वज ने कहा: मैं मन की प्रकृति जानता हूँ, जो इच्छाओं और परेशानियों से भरा है। मैं सोचता हूँ कि त्याग कठिन है, हीरे को छेदने से भी अधिक कठिन।

6.94.9

संसृत्यामोदपुष्पस्य दुःखदाहानलस्य च । जगदब्जमृणालस्य मोहमारुतखस्य च ॥ ९ ॥

saṃsṛtyāmodapuṣpasya duḥkhadāhānalasya ca | jagadabjamṛṇālasya mohamārutakhasya ca || 9 ||

In the cycle of existence, the flower of joy, the fire of sorrow's burning, the lotus of the world's debt, and the wind of delusion's sky.

संसार चक्र में, आनंद का फूल, दुःख की आग की ज्वाला, संसार के ऋण का कमल, और भ्रम के आकाश की हवा।

6.94.10

शरीरयन्त्रवाहस्य हृत्पद्मभ्रमरस्य च । अयत्नाच्चेतसस्त्यागो यथा भवति तद्वद ॥ १० ॥

śarīrayantravāhasya dṛtpadmabhramarasya ca | ayatnāccetasastyāgo yathā bhavati tadvad || 10 ||

Just as the body's vehicle, the bee hovering over the lotus, and the mind's renunciation happen effortlessly.

जैसे शरीर का वाहन, कमल पर मँडराती भौंरा, और मन का त्याग बिना किसी प्रयास के होता है।

6.94.11

कुम्भ उवाच । सर्वनाशोऽस्य यः साधो चेतसः संसृतिक्षयः । स एव चित्तसंत्याग इत्युक्तं दीर्घदर्शिभिः ॥ ११ ॥

kumbha uvāca | sarvanāśo'sya yaḥ sādho cetasaḥ saṃsṛtikṣayaḥ | sa eva cittasaṃtyāga ityuktaṃ dīrghadarśibhiḥ || 11 ||

Kumbha said: O virtuous one, the complete destruction of the mind, which is the cessation of its wandering, is indeed the renunciation of the mind, as said by the far-sighted.

कुम्भ ने कहा: हे साधु, मन का पूर्ण विनाश, जो उसके भटकने का अंत है, वही मन का त्याग है, जैसा कि दूरदर्शियों ने कहा है।

6.94.12

शिखिध्वज उवाच । चित्तत्यागादहं मन्ये चित्तनाशः सुसिद्धये । अभावः शतशो व्याधेः कथमस्यानुभूयते ॥ १२ ॥

śikhidhvaja uvāca | cittatyāgādahaṃ manye cittanāśaḥ susiddhaye | abhāvaḥ śataśo vyādheḥ kathamasya anubhūyate || 12 ||

Shikhidhvaja said: I think that from the renunciation of the mind, the destruction of the mind is easily accomplished. How can the absence of hundreds of afflictions be experienced?

शिखिध्वज ने कहा: मैं सोचता हूँ कि मन के त्याग से मन का विनाश सहजता से हो जाता है। सैकड़ों कष्टों की अनुपस्थिति कैसे अनुभव की जा सकती है?

6.94.13

कुम्भ उवाच । अहंबीजश्चित्तद्रुमः सशाखाफलपल्लवः । उन्मूलय समूलं तमाकाशहृदयो भव ॥ १३ ॥

kumbha uvāca | ahaṃbījaścittadrumaḥ sasaśākhāphalapallavaḥ | unmūlaya samūlaṃ tamākāśahṛdayo bhava || 13 ||

Kumbha said: The tree of the mind, with the seed of 'I', having branches, fruits, and leaves, uproot it completely and become one with the heart of the sky.

कुम्भ ने कहा: मन का वृक्ष, जिसका बीज 'मैं' है, जिसमें डालियाँ, फल और पत्ते हैं, उसे जड़ से उखाड़ फेंको और आकाश के हृदय के समान हो जाओ।

6.94.14

शिखिध्वज उवाच । चेतसः किं मुने मूलं कोऽकुंरः कोऽस्य संभवः । काःशास्त्राःकेच वा स्कन्धाः कथमुन्मूल्यते च सः ॥ १४ ॥

śikhidhvaja uvāca | cetasaḥ kiṃ mune mūlaṃ ko'kuṃraḥ ko'sya saṃbhavaḥ | kāḥśāstrāḥkeca vā skandhāḥ kathamunmūlyate ca saḥ || 14 ||

Shikhidhvaja said: O sage, what is the root of the mind? Who is the seed? What is its origin? What are its scriptures and branches? How is it uprooted?

शिखिध्वज ने कहा: हे मुनि, मन का मूल क्या है? बीज कौन है? इसका उद्भव क्या है? इसके शास्त्र और शाखाएँ क्या हैं? यह कैसे उखाड़ा जाता है?

6.94.15

कुम्भ उवाच । अहमर्थोदयो योऽयं स चित्तावेदनात्मकः । एतच्चित्तद्रुमस्यास्य विद्धि बीजं महामते ॥ १५ ॥

kumbha uvāca | ahamarthodayo yo'yaṃ sa cittāvedanātmakaḥ | etaccittadrumnasyāsya viddhi bījaṃ mahāmate || 15 ||

Kumbha said: O wise one, the rise of the sense of 'I' is the essence of mental experience. Know this to be the seed of this tree of the mind.

कुम्भ ने कहा: हे महामते, मन की अनुभूति का सार है 'मैं' की उत्पत्ति। इसे मन के वृक्ष का बीज समझो।

6.94.16

परमात्मपदं क्षेत्रं क्षेत्रं मायामयस्य तत् । एतस्मात्प्रथमोद्भिन्नादंकुरोऽनुभवाकृतिः ॥ १६ ॥

paramātmāpadaṃ kṣetraṃ kṣetraṃ māyāmayasya tat | etasmātprathamodbhinnādaṃkuro'nubhavākṛtiḥ || 16 ||

The supreme state is the field, the field is full of illusion, from this first arising, experience the form.

परम अवस्था क्षेत्र है, क्षेत्र माया से भरा हुआ है, इस प्रथम उत्पन्न से, अनुभव की आकृति को अंकुरित करो।

6.94.17

निश्चयात्मा निराकारो बुद्धिरित्येव सोच्यते । अस्य बुद्ध्यभिधानस्य याङ्कुरस्य प्रपीनता ॥ १७ ॥

niścayātmā nirākāro buddhiritveva socyate | asya buddhyabhidhānasya yāṅkurasya prapīnatā || 17 ||

The determined self is formless, it is considered as intelligence, the fullness of the sprout of this intelligence.

निश्चयात्मा निराकार है, यह बुद्धि के रूप में सोचा जाता है, इस बुद्धि के अभिधान के अंकुर की प्रपीनता।

6.94.18

संकल्परूपिणी तस्याश्चित्तनाममनोभिधा । जीवो मिथ्योपलम्भात्मा शून्यात्मा ह्युपलोपमः ॥ १८ ॥

saṃkalparūpiṇī tasyāścittanāmamano'bhidhā | jīvo mithyopalambhātmā śūnyātmā hyupalopamaḥ || 18 ||

The form of resolution of that is called mind, the living being is the false apprehension, the self is empty, indeed it is a comparison.

उसकी संकल्प की रूप में चित्त कहलाता है, जीव मिथ्या उपलब्धि आत्मा है, शून्य आत्मा है, वास्तव में यह एक उपमा है।

6.94.19

स्तम्भः कायोऽयमेतस्य स्नाय्वस्थिरसरञ्जितः । देशान्तरेऽङ्कुरोद्देशे कालस्पन्दोऽस्य वासना ॥ १९ ॥

stambhaḥ kāyo'yametasya snāyvasthirasarañjitaḥ | deśāntare'ṅkuroddeśe kālaspando'sya vāsanā || 19 ||

The pillar is this body, adorned with sinews, bones, and blood, in another place, the sprout's indication, the time's vibration is its impression.

यह स्तंभ शरीर है, जो स्नायु, अस्थि और रक्त से अलंकृत है, दूसरे स्थान पर, अंकुर का संकेत, समय की स्पंदन इसकी वासना है।

6.94.20

शाखायाश्चित्तवृक्षस्य दीर्घा दूरगतास्ततः । इन्द्रियाण्यल्पभोगाश्च भावाभावात्मयोनयः ॥ २० ॥

śākhāyāścittavṛkṣasya dīrghā dūragatāstatāḥ | indriyāṇyalpabhogāśca bhāvābhāvātmayonayaḥ || 20 ||

The branches of the mind-tree are long and far-reaching, the senses are of little enjoyment, born of the nature of existence and non-existence.

मन-वृक्ष की शाखाएँ लंबी और दूर तक फैली हुई हैं, इंद्रियाँ थोड़े भोग की हैं, अस्तित्व और अनस्तित्व के स्वभाव से उत्पन्न हैं।

6.94.21

विटपौघा महान्तोऽस्य शुभाशुभफलाकुलाः । ईदृशस्यास्य चित्तस्य दुर्वृक्षस्य प्रतिक्षणम् ॥ २१ ॥

viṭapaughā mahānto'sya śubhāśubhaphalākulāḥ | īdṛśasyāsya cittasya durvṛkṣasya pratikṣaṇam || 21 ||

The great branches of this tree of the mind are filled with auspicious and inauspicious fruits. Such is the nature of this mind-tree, which is a bad tree, moment by moment.

इस चित्त के वृक्ष की महान शाखाएँ शुभ और अशुभ फलों से भरी हुई हैं। ऐसा ही इस चित्त के वृक्ष का स्वभाव है, जो एक बुरा वृक्ष है, प्रति क्षण।

6.94.22

शास्त्राविलवनं कुर्वन्मूलकाषे भरं कुरु । शिखिध्वज उवाच । चित्तद्रुमस्य शाखादेः कुर्वाणोऽहं विकर्तनम् ॥ २२ ॥

śāstrāvilavanaṃ kurvanmūlakāṣe bharaṃ kuru | śikhidhvaja uvāca | cittadrumasya śākhādeḥ kurvāṇo'haṃ vikartanam || 22 ||

While engaging in the study of scriptures, fill the root with essence. Shikhidhvaja said: I am cutting the branches of the tree of the mind.

शास्त्रों का अध्ययन करते हुए, मूल को सार से भरो। शिखिध्वज ने कहा: मैं मन के वृक्ष की शाखाओं को काट रहा हूँ।

6.94.23

कथं करोमि मूलस्य निःशेषकषणं मुने । कुम्भ उवाच । वासना विविधाः शाखाः फलस्पन्दादिनान्विताः ॥ २३ ॥

kathaṃ karomi mūlasya niḥśeṣakaṣaṇaṃ mune | kumbha uvāca | vāsanā vividhāḥ śākhāḥ phalaspandādinānvitāḥ || 23 ||

How do I completely destroy the root, O sage? Kumbha said: Various desires are the branches, accompanied by the trembling of fruits and other things.

मैं मूल को पूरी तरह से कैसे नष्ट करूँ, हे मुनि? कुम्भ ने कहा: विविध वासनाएँ शाखाएँ हैं, जो फलों और अन्य चीजों के कंपन से युक्त हैं।

6.94.24

अभाविता भवन्त्यन्तर्लूनाः संविद्बलेन ते । असंसक्तमना मौनी शान्तवादविचारणः ॥ २४ ॥

abhāvitā bhavantyantarlūnāḥ saṃvidvalena te | asaṃsaktamanā maunī śāntavādavicāraṇaḥ || 24 ||

Those who are not cultivated become internally uprooted by the power of awareness. The one who is detached, silent, and engaged in peaceful speech and contemplation.

जो अभ्यास नहीं करते, वे चेतना की शक्ति से आंतरिक रूप से उखाड़ फेंके जाते हैं। जो अनासक्त, मौनी और शांत वाणी और विचार में लगा हुआ है।

6.94.25

संप्राप्तकारी यः सोऽन्तर्लूनश्चित्तलतो भवेत् । चित्तद्रुमलताजालं पौरुषेण विकर्तयन् ॥ २५ ॥

saṃprāptakārī yaḥ so'ntarlūnaścittalato bhavet | cittadrumalatājālaṃ pauruṣeṇa vikartayan || 25 ||

The one who has attained the state of action becomes internally uprooted from the creeper of the mind. By human effort, cutting the network of the mind-tree's creepers.

जो कर्म की अवस्था प्राप्त कर चुका है, वह मन की लता से आंतरिक रूप से उखाड़ फेंका जाता है। मानवीय प्रयास से, मन के वृक्ष की लताओं के जाल को काटते हुए।

6.94.26

यस्तिष्ठति स मूलस्य योग्यो निकषणे भवेत् । गौणं शाखाविलवनं मुख्यं मूलविकर्तनम् ॥ २६ ॥

yastiṣṭhati sa mūlasya yogyo nikaṣaṇe bhavet | gauṇaṃ śākhāvilavanaṃ mukhyaṃ mūlavikartanam || 26 ||

One who stands firmly is fit for uprooting the root | The secondary is the cutting of branches, the primary is the uprooting of the root.

जो स्थिर होता है, वह मूल को उखाड़ने में योग्य होता है | शाखाओं को काटना गौण है, मूल को उखाड़ना मुख्य है।

6.94.27

चित्तवृक्षस्य तेन त्वं मूलकाषपरो भव। मुख्यत्वेन महाबुद्धे मूलदाहमलं कुरु ॥ २७ ॥

cittavṛkṣasya tena tvaṃ mūlakāṣaparo bhava | mukhyatvena mahābuddhe mūladāhamalaṃ kuru || 27 ||

Therefore, you should be focused on the root of the tree of the mind | O great wise one, completely burn the root with primary importance.

इसलिए, आप मन के वृक्ष के मूल पर ध्यान केंद्रित करें | हे महाबुद्धिमान, मूल को मुख्य महत्व देकर पूरी तरह से जलाएं।

6.94.28

चित्तकण्टकखण्डस्य भवत्येवमचित्तता। शिखिध्वज उवाच। अहंभावात्मनश्चित्तद्रुमबीजस्य हे मुने। कोऽनलो दहनाख्येऽस्मिन्कर्मण्यर्थकरो भवेत्॥ २८ ॥

cittakaṇṭakakhaṇḍasya bhavatyevamacittatā | śikhidhvaja uvāca | ahaṃbhāvātmanaścittadrumabījasya he mune | ko'nalo dahanākhye'smin karmṇyarthakaro bhavet || 28 ||

Thus, the state of being without mind arises from the destruction of the thorns of the mind | Shikhidhvaja said, 'O sage, what fire in this action called burning is effective for the seed of the tree of the mind which is the ego?

इस प्रकार, मन के कांटों के नष्ट होने से मनहीन अवस्था उत्पन्न होती है | शिखिध्वज ने कहा, 'हे मुनि, अहंकार के मन के वृक्ष के बीज के लिए इस दहन कर्म में कौन सी अग्नि उपयोगी है?

6.94.29

कुम्भ उवाच। राजन्स्वात्मविचारोऽयं कोऽहं स्यामिति रूपधृक्। चित्तदुर्द्रुमबीजस्य दहने दहनः स्मृतः ॥ २९ ॥

kumbha uvāca | rājan svātmavicāro'yaṃ ko'haṃ syāmiti rūpadhṛk | cittadurdumabījasya dahane dahanaḥ smṛtaḥ || 29 ||

Kumbha said, 'O king, this self-inquiry, 'Who am I?' is the burning for the burning of the seed of the evil tree of the mind.

कुम्भ ने कहा, 'हे राजन, यह स्वात्म विचार, 'मैं कौन हूँ?' मन के दुष्ट वृक्ष के बीज को जलाने के लिए दहन है।

6.94.30

शिखिध्वज उवाच। मुने मया स्वया बुद्ध्या बहुशः प्रविचारितम्। यावन्नाहं जगन्नोर्वीवनमण्डलमण्डितम्॥ ३० ॥

śikhidhvaja uvāca | mune mayā svayā buddhyā bahuśaḥ pravicāritam | yāvannāhaṃ jagannorvīvanamaṇḍalamaṇḍitam || 30 ||

Shikhidhvaja said, 'O sage, I have often reflected with my own intellect | Until I realized that I am not this world adorned with the circle of the earth.

शिखिध्वज ने कहा, 'हे मुनि, मैंने अपनी बुद्धि से बहुत बार सोचा है | जब तक मैंने नहीं समझा कि मैं यह पृथ्वी के चक्र से सज्जित संसार नहीं हूँ।

6.94.31

नाद्रेस्तटं न विपिनं न पर्णस्पन्दनादि च। जडत्वान्न च देहादि न मांसास्थ्यसृगादि च ॥ ३१ ॥

nādreṣṭaṭaṃ na vipinaṃ na parṇaspandanādi ca | jaḍatvānn na ca dehādi na māṃsāsthyasṛgādi ca || 31 ||

I am not the earth, not the forest, not the trembling of leaves, etc. Due to inertness, I am not the body, nor flesh, bones, blood, etc.

मैं धरती नहीं हूँ, न जंगल हूँ, न पत्तियों का काँपना हूँ, आदि | जड़त्व के कारण मैं शरीर नहीं हूँ, न मांस हूँ, न हड्डियाँ हूँ, न रक्त हूँ, आदि || 31 ||

6.94.32

कर्मेन्द्रियाण्यपि न च न च बुद्धीन्द्रियाणि च। न मनो नापि च मतिर्नाहंकारश्च जाड्यतः ॥ ३२ ॥

karmendriyāṇyapi na ca na ca buddhīndriyāṇi ca | na mano nāpi ca matirnāhaṃkāraśca jāḍyataḥ || 32 ||

Nor am I the organs of action, nor the organs of perception, nor the mind, nor the intellect, nor the ego, due to inertness.

न मैं कर्म इन्द्रियाँ हूँ, न बुद्धि इन्द्रियाँ हूँ, न मन हूँ, न बुद्धि हूँ, न अहंकार हूँ, जड़त्व के कारण || 32 ||

6.94.33

कटकत्वं यथा हेम्नि तथाहंत्वं चिदात्मनि। जडं त्वसद्रूपतया तेन तन्नास्ति हे मुने ॥ ३३ ॥

kaṭakatvaṃ yathā hemni tathāhaṃtvaṃ cidātmani | jaḍaṃ tv asadrūpatayā tena tannāsti he mune || 33 ||

Just as the quality of being a bracelet is in gold, so is the sense of 'I' in the conscious self. That which is inert and unreal does not exist, O sage.

जैसे कड़ा का गुण सोने में होता है, वैसे ही 'मैं' का भाव चेतन आत्मा में होता है। जो जड़ और असत्य है, वह अस्तित्व में नहीं है, हे मुनि || 33 ||

6.94.34

संनिवेशनिवासात्मा सर्वार्थादिः परे पदे। विद्यते नान्यदन्यत्वान्नभसीव महाद्रुमः ॥ ३४ ॥

saṃniveśanivāsātmā sarvārthādiḥ pare pade | vidyate nānyadanyatvānnabhasīva mahādrumaḥ || 34 ||

The self is the abode of all meanings in the supreme state. It exists without any otherness, like the great tree in the sky.

आत्मा सर्वोच्च अवस्था में सभी अर्थों का निवास है। यह किसी अन्यता के बिना मौजूद है, जैसे आकाश में एक बड़ा पेड़ || 34 ||

6.94.35

जानन्नपीति भगवन्नहंत्वमलमार्जनम्। अन्तर्यज्ञं न जानामि तेन तप्ये चिरं मुने ॥ ३५ ॥

jānannapīti bhagavannahaṃtvamalamārjanam | antaryajñāṃ na jānāmi tena tapye ciraṃ mune || 35 ||

O Lord, even though I know that the sense of 'I' is a cleansing of impurities, I do not know the inner knower. Therefore, I suffer for a long time, O sage.

हे भगवान, यद्यपि मैं जानता हूँ कि 'मैं' का भाव मल का साफ करना है, मैं अंतर्यामी को नहीं जानता। इसलिए, मैं लंबे समय तक दुःख भोगता हूँ, हे मुनि || 35 ||

6.94.36

कुम्भ उवाच। एतावन्मात्रकं वृन्दं यदि न त्वं महीपते। जडत्वात्तन्महाबुद्धे योऽसि तद्वद मेऽनघ ॥ ॥ ३६ ॥

kumbha uvāca | etāvanmātrakaṃ vṛndaṃ yadi na tvaṃ mahīpate | jaḍatvāt tanmahābud'dhe yo'si tadvad me'nagha || 36 ||

Kumbha said: If you, O King, do not consider this group to be so insignificant due to its inertness, then, O wise one, speak to me in that manner.

कुम्भ ने कहा: यदि आप, हे राजा, इस समूह को इसकी जड़ता के कारण इतना तुच्छ नहीं समझते हैं, तो हे महाबुद्धिमान, मुझे उस तरह से बताएँ।

6.94.37

शिखिध्वज उवाच । चिन्मात्रमहमच्छात्मवेदनं विदुषां वर । यत्र भावाः स्वदन्ते ते निर्णीयन्ते च येन वा ॥ ॥ ३७ ॥

śikhidhvaja uvāca | cinmātramahamacchātmavedanaṃ viduṣāṃ vara | yatra bhāvāḥ svadante te nirṇīyante ca yena vā || 37 ||

Shikhidhvaja said: I am pure consciousness, the experience of the self, O best among the wise. Where those feelings are experienced and determined by it.

शिखिध्वज ने कहा: मैं शुद्ध चेतना हूँ, आत्मा का अनुभव, हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ। जहाँ वे भाव अनुभव किए जाते हैं और उससे निर्धारित किए जाते हैं।

6.94.38

एवंरूपस्य मे लग्नं नूनं मलमकारणम् । सकारणं वाहमिति यत्पदं च न वेद्म्यहम् ॥ ॥ ३८ ॥

evaṃrūpasya me lagnaṃ nūnaṃ malamakāraṇam | sakāraṇaṃ vāhamiti yatpadaṃ ca na vedmyaham || 38 ||

Thus, the attachment to my form is certainly without cause. Whether it is with cause or without cause, I do not know that state.

इस प्रकार, मेरे रूप का लगाव निश्चित रूप से बिना कारण है। चाहे वह कारण से हो या बिना कारण, मैं उस स्थिति को नहीं जानता।

6.94.39

असदेतदनात्मीयं प्रमार्ष्टुं मलमात्मनः । मुने यदा न शक्नोमि तेन तप्ये सुदारुणम् ॥ ॥ ३९ ॥

asadetadanātmīyaṃ pramārṣṭuṃ malamātmanaḥ | mune yadā na śaknomi tena tapye sudāruṇam || 39 ||

That non-existent, non-self impurity is unable to be removed from the self. O sage, when I am unable to do so, I suffer greatly.

वह असत्य, अनात्म अशुद्धि आत्मा से दूर नहीं की जा सकती। हे मुनि, जब मैं ऐसा नहीं कर सकता, तो मैं बहुत पीड़ा सहता हूँ।

6.94.40

कुम्भ उवाच । ब्रूहि किं तन्महाबाहो लग्नं तव मलं महत् । स्थितोऽसि येन संसारी सता वाप्यथवाऽसता ॥ ॥ ४० ॥

kumbha uvāca | brūhi kiṃ tanmahābāho lagnaṃ tava malam mahat | sthito'si yena saṃsārī satā vāpyathavā'satā || 40 ||

Kumbha said: Tell me, O mighty-armed one, what is that great impurity attached to you? By which you are situated in the world, whether it is real or unreal.

कुम्भ ने कहा: बताओ, हे महाबाहु, तुम्हारे साथ जुड़ी वह महान अशुद्धि क्या है? जिससे तुम संसार में स्थित हो, चाहे वह सत्य हो या असत्य।

6.94.41

शिखिध्वज उवाच । चित्तद्रुमस्य यद्बीजमहंभावश्च मे मलम् । तच्च त्यक्तुं न जानामि त्यक्तं त्यक्तमुपैति माम् ॥ ४१ ॥

śikhidhvaja uvāca | cittadrūmasya yadbījamahaṃbhāvaśca me malam | tacca tyaktuṃ na jānāmi tyaktaṃ tyaktamupaiti mām || 41 ||

Shikhidhvaja said: The seed of the tree of the mind is the sense of 'I', which is my impurity | I do not know how to abandon it, and even when abandoned, it comes back to me

शिखिध्वज ने कहा: मन के वृक्ष का बीज मेरा 'मैं' होना है, जो मेरा दोष है | मैं इसे छोड़ना नहीं जानता, और छोड़ा हुआ भी मुझे वापस आ जाता है

6.94.42

कुम्भ उवाच । कारणाज्जायते कार्यं यत्तत्सर्वत्र संभवेत् । अन्यत्त्वसद्विचन्द्राभं दृष्टमेतन्न विद्यते ॥ ४२ ॥

kumbha uvāca | kāraṇājjāyate kāryaṃ yattatsarvatra saṃbhavet | anyattvasaddvicandrābhaṃ dṛṣṭametanna vidyate || 42 ||

Kumbha said: From a cause, an effect is born, and that is possible everywhere | However, something that is unreal, like the illusion of two moons, is not seen

कुम्भ ने कहा: एक कारण से एक परिणाम उत्पन्न होता है, और यह सभी जगह संभव है | हालाँकि, कुछ ऐसा जो असत्य है, जैसे दो चंद्रमा का भ्रम, वह नहीं दिखता

6.94.43

कारणाज्जायते कार्यमहंभावाद्भवाङ्कुरः । इति कारणमन्विष्य कथयस्व ममाधुना ॥ ४३ ॥

kāraṇājjāyate kāryamahaṃbhāvādbhavāṅkuraḥ | iti kāraṇamanviṣya kathayasva mamādhunā || 43 ||

From a cause, an effect is born, and from the sense of 'I', the sprout of existence arises | Therefore, seeking the cause, tell me now

एक कारण से एक परिणाम उत्पन्न होता है, और 'मैं' के भाव से अस्तित्व की कली उत्पन्न होती है | इसलिए, कारण को ढूँढ़ते हुए, मुझे अब बताओ

6.94.44

शिखिध्वज उवाच । मुनेऽहमिति दोषस्य वेदनं वेद्मि कारणम् । तद्यथोपशमं याति तन्मे वद मुनीश्वर ॥ ४४ ॥

śikhidhvaja uvāca | mune'hamiti doṣasya vedanaṃ vedmi kāraṇam | tadyathopaśamaṃ yāti tanme vada munīśvara || 44 ||

Shikhidhvaja said: O Sage, I know the cause of the suffering of the fault of 'I' | Tell me, O great sage, how it can be pacified

शिखिध्वज ने कहा: हे मुनि, मैं 'मैं' के दोष की पीड़ा का कारण जानता हूँ | हे महान मुनि, मुझे बताओ कि यह कैसे शांत हो सकता है

6.94.45

चितश्चेत्योन्मुखत्वेन दुःखायायमहंस्थितः । चेत्योपशमनं ब्रूहि मुने तदुपशान्तये ॥ ४५ ॥

citaścetyonmukhatvena duḥkhāyāyamahaṃsthitaḥ | cetyopaśamanaṃ brūhi mune tadupaśāntaye || 45 ||

With the mind turned towards the objects of the senses, I am situated in sorrow | Tell me, O Sage, the pacification of the senses for that pacification

मन इंद्रियों के विषयों की ओर मुड़ा हुआ है, मैं दुःख में स्थित हूँ | हे मुनि, उस शांति के लिए इंद्रियों की शांति बताओ

6.94.46

कुम्भ उवाच । कारणं कारणज्ञोऽसि वेदनस्य वदाशु मे । ततस्त्वां बोधयिष्यामि कारणाकारणक्रमम् ॥ ४६ ॥

kumbha uvāca | kāraṇaṃ kāraṇajño'si vedaṇasya vadāśu me | tatastvāṃ bodhayiṣyāmi kāraṇākāraṇakramam || 46 ||

Kumbha said: You are the knower of the cause, tell me quickly the cause of perception. Then I will enlighten you about the order of cause and effect.

कुम्भ ने कहा: आप कारण के ज्ञाता हैं, मुझे शीघ्र ही वेदना का कारण बताइए। तब मैं आपको कारण और अकारण की क्रम के बारे में बताऊँगा।

6.94.47

वेद्यवेदनरूपस्य चेत्यसंचेतनस्य मे । अकारणं कारणतां यद्यातं तव तद्वद ॥ ४७ ॥

vedyavedanarūpasya cetyasañcetanasya me | akāraṇaṃ kāraṇatāṃ yadyātaṃ tava tadvada || 47 ||

Tell me the cause and non-cause of the perceptible and imperceptible, conscious and unconscious forms. If it has reached you, then tell me that.

मुझे बताइए ज्ञेय और अज्ञेय, चेतन और अचेतन रूपों का कारण और अकारण। यदि यह आप तक पहुँच गया है, तो मुझे वह बताइए।

6.94.48

शिखिध्वज उवाच । चेत्यचेतनरूपस्य वेद्यसंवेदनाकृतेः । इयं पदार्थसत्तेह देहादि कारणं मुने ॥ ४८ ॥

śikhidhvaja uvāca | cetyacetanarūpasya vedyasaṃvedanākṛteḥ | iyaṃ padārthasatteha dehādi kāraṇaṃ mune || 48 ||

Shikhidhvaja said: O sage, the cause of the perceptible and imperceptible, conscious and unconscious forms, is the body and other material objects.

शिखिध्वज ने कहा: हे मुनि, ज्ञेय और अज्ञेय, चेतन और अचेतन रूपों का कारण शरीर और अन्य भौतिक वस्तुएँ हैं।

6.94.49

शरीरादितयोदेति वेदनं वस्तुसत्तया । असत्याभासया स्पन्दो यथा पवनलेखया ॥ ४९ ॥

śarīrāditayodeti vedaṇaṃ vastusattayā | asatyābhāsayā spando yathā pavanalekhayā || 49 ||

Perception arises from the body and other material objects due to their existence. Just as the movement of air creates an illusion, so does the perception.

वेदना शरीर और अन्य भौतिक वस्तुओं से उत्पन्न होती है उनके अस्तित्व के कारण। जैसे हवा की गति एक भ्रम पैदा करती है, वैसे ही वेदना भी होती है।

6.94.50

असत्ता वस्तुसत्ताया नावगच्छाम्यहं यथा । अहंत्ववेदनं चित्तबीजं समुपशाम्यति ॥ ५० ॥

asattā vastusattāyā nāvagacchāmyahaṃ yathā | ahaṃtvavedanaṃ cittabījaṃ samupaśāmyati || 50 ||

I do not comprehend the non-existence of material existence. The perception of the ego is the seed of the mind that calms down.

मैं भौतिक अस्तित्व की असत्ता को नहीं समझ पाता। अहंकार की वेदना मन का बीज है जो शांत हो जाता है।

6.94.51

कुम्भ उवाच । विद्यते यदि देहादिवस्तुसत्ता तदस्ति ते । अभावाद्देहसत्तादेः किंनिष्ठं तव वेदनम् ॥ ५१ ॥

kumbha uvāca | vidyate yadi dehādivastusattā tadasti te | abhāvāddehasattādeḥ kiṃniṣṭhaṃ tava vedanam || 51 ||

Kumbha said: If the existence of the body and other things is real, then it exists for you. If there is no existence of the body, what is your feeling?

कुम्भ ने कहा: यदि शरीर और अन्य वस्तुओं का अस्तित्व है, तो वह तुम्हारे लिए है। यदि शरीर का अस्तित्व नहीं है, तो तुम्हारा क्या भाव है?

6.94.52

शिखिध्वज उवाच । यस्योपलभ्यते किंचित्स्वरूपं कलनात्मकम् । असद्रूपं कथं तत्स्यात्प्रकाशः स्यात्कथं तमः ॥ ५२ ॥

śikhidhvaja uvāca | yasyopalabhyate kiṃcitsvarūpaṃ kalanātmakam | asadrūpaṃ kathaṃ tatsyātprakāśaḥ syātkathaṃ tamaḥ || 52 ||

Shikhidhvaja said: How can that which is perceived to have some form and is changeable be non-existent? How can there be light and darkness?

शिखिध्वज ने कहा: जिसका कुछ रूप और परिवर्तनशीलता देखी जाती है, वह असत् कैसे हो सकता है? प्रकाश और अंधकार कैसे हो सकते हैं?

6.94.53

हस्तपादादिसंयुक्तः क्रियाफलविलासवान् । सदानुभूयमानोऽयं देहो नास्ति कथं मुने ॥ ५३ ॥

hastapādādisaṃyuktaḥ kriyāphalavilāsavān | sadānubhūyamāno'yaṃ deho nāsti kathaṃ mune || 53 ||

Endowed with hands, feet, and other limbs, enjoying the fruits of actions, always experienced, how can this body not exist, O sage?

हाथ, पैर और अन्य अंगों से युक्त, कर्मों के फलों का आनंद लेता हुआ, सदा अनुभव किया जाता है, हे मुनि, यह शरीर कैसे नहीं हो सकता?

6.94.54

कुम्भ उवाच । कारणं यस्य कार्यस्य भूमिपाल न विद्यते । विद्यते नेह तत्कार्यं तत्संवित्तिस्तु विभ्रमः ॥ ५४ ॥

kumbha uvāca | kāraṇaṃ yasya kāryasya bhūmipāla na vidyate | vidyate neha tatkāryaṃ tatsaṃvittistu vibhramaḥ || 54 ||

Kumbha said: O king, if the cause of an effect does not exist, then that effect does not exist here. That perception is indeed an illusion.

कुम्भ ने कहा: हे राजन्, यदि किसी कार्य का कारण नहीं है, तो वह कार्य यहाँ नहीं है। वह बोध विभ्रम है।

6.94.55

कारणेन विना कार्यं शरीरं न कदाचन । विद्यते यस्य नो बीजं तद्द्रव्यं क्वेव जायते ॥ ५५ ॥

kāraṇena vinā kāryaṃ śarīraṃ na kadācana | vidyate yasya no bījaṃ taddravyaṃ kveva jāyate || 55 ||

Without a cause, the body as an effect never exists. Where does the substance come from if there is no seed?

कारण के बिना, शरीर कभी नहीं होता। यदि बीज नहीं है, तो वह द्रव्य कहाँ से उत्पन्न होता है?

6.94.56

अकारणं तु यत्कार्यं सदिवाग्रेऽनुभूयते । तद्द्रष्टुर्विभ्रमाद्विद्धि मृगतृष्णाजलोपमम् ॥ ५६ ॥

akāraṇaṃ tu yatkāryaṃ sadivāgre'nubhūyate | taddṛṣṭurvibhramādviddhi mṛgatṛṣṇājalopamam || 56 ||

Whatever effect is perceived as existing without a cause, know that to be an illusion of the observer, like the mirage water.

जो कार्य बिना कारण के पहले ही अनुभव किया जाता है, उसे देखने वाले के भ्रम से जानो, मृगतृष्णा जल की तरह।

6.94.57

अविद्यमानमेव त्वं विद्धि मिथ्याभ्रमोदितम् । नातियत्नवतोऽप्येतन्मृगतृष्णाम्बु लभ्यते ॥ ५७ ॥

avidyamānameva tvaṃ viddhi mithyābhramoditam | nātiyatnavato'pyetanmṛgatṛṣṇāmbu labhyate || 57 ||

Know that which is non-existent to be a false illusion. Even with great effort, this mirage water cannot be obtained.

जो अविद्यमान है, उसे मिथ्या भ्रम समझो। बहुत प्रयास करने पर भी यह मृगतृष्णा जल नहीं मिलता।

6.94.58

असतो द्वीन्दुबिम्बादेर्न युक्तं कारणेक्षणम्। वन्ध्यातनयसर्वाङ्गमण्डनं कस्य राजते ॥ ५८ ॥

asato dvīndubimbāderna yuktaṃ kāraṇekṣaṇam | vandhyātanayasarvāṅgamaṇḍanaṃ kasya rājate || 58 ||

It is not appropriate to search for the cause of non-existent things like the reflection of the moon. Who would adorn the whole body of a barren woman's son?

अविद्यमान चीजों जैसे चाँद के प्रतिबिम्ब का कारण खोजना उचित नहीं है। बंझ औरत के बेटे के सारे शरीर को कौन सजाएगा?

6.94.59

कारणेन विना कार्यं शरीराद्यस्थिपञ्जरम्। अविद्यमानमेवेदं विद्ध्यसंभवतो नृप ॥ ५९ ॥

kāraṇena vinā kāryaṃ śarīrādyasthipañjaram | avidyamānamevedaṃ viddhyasaṃbhava to nṛpa || 59 ||

Know that the body, which is an effect without a cause, is non-existent due to its impossibility, O King.

हे राजा, जो कारण के बिना कार्य है, उस शरीर को असंभव होने के कारण अविद्यमान जानो।

6.94.60

हस्तपादादियुक्तस्य शरीरस्य मुनीश्वर। नित्यमालक्ष्यमाणस्य पिता कस्मान्न कारणम्॥ ६० ॥

hastapādādiyuktasya śarīrasya munīśvara | nityamālakṣyamāṇasya pitā kasmānna kāraṇam || 60 ||

O great sage, why is the father not the cause of the body, which is always perceived with hands, feet, etc.?

हे मुनीश्वर, हाथ, पैर आदि से युक्त शरीर जो हमेशा देखा जाता है, उसका पिता कारण क्यों नहीं है?

6.94.61

कुम्भ उवाच। कारणाभावतो राजन्पिता नाम न विद्यते। असतो यत्तु संजातमसदेव तदुच्यते ॥ ६१ ॥

kumbha uvāca | kāraṇābhāvato rājan pitā nāma na vidyate | asato yattu saṃjātamasadeva taducyate || 61 ||

Kumbha said: O King, there is no such thing as a father without a cause. Whatever arises from non-existence is itself non-existent.

कुम्भ ने कहा: हे राजन्, कारण के बिना पिता नाम की कोई चीज नहीं होती | जो असत् से उत्पन्न होता है, वह स्वयं असत् ही कहलाता है |

6.94.62

पदार्थानां च कार्याणां कारणं बीजमुच्यते। संभवत्यङ्ग जगति न बीजेन विनाङ्कुरः ॥ ६२ ॥

padārthānāṃ ca kāryāṇāṃ kāraṇaṃ bījamucyate | saṃbhavatyanga jagati na bījena vināṅkuraḥ || 62 ||

The cause of all objects and actions is called the seed. In this world, a sprout cannot exist without a seed.

सभी पदार्थों और कार्यों का कारण बीज कहलाता है | इस जगत में, बीज के बिना अंकुर नहीं हो सकता |

6.94.63

तस्मान्न कारणं यस्य कार्यस्येहोपपद्यते। बीजाभावे हि तन्नास्ति तत्संवित्तिस्तु विभ्रमः ॥ ६३ ॥

tasmānna kāraṇaṃ yasya kāryasyehopapadyate | bījābhāve hi tannāsti tatsaṃvittistu vibhramaḥ || 63 ||

Therefore, that which has no cause cannot be justified in this world. Indeed, without a seed, it does not exist; such awareness is an illusion.

इसलिए, जिसका कोई कारण नहीं होता, वह इस जगत में उपयुक्त नहीं होता | वास्तव में, बीज के बिना वह अस्तित्व में नहीं होता; ऐसी संवित्ति भ्रम है |

6.94.64

अवश्यं खलु यन्नास्ति निर्बीजं तन्मतिभ्रमः । द्वीन्दुत्वमरुभूम्यम्बुवन्ध्यापुत्रदशासमम् ॥ ६४ ॥

avaśyaṃ khalu yannāsti nirbījaṃ tanmatibhramaḥ | dvīndutvamarubhūmyambuvandhyāputradashāsamam || 64 ||

Indeed, that which does not exist is without a seed and is a delusion of the mind. It is like the illusion of seeing two moons, a mirage, a barren woman's son, and the equality of the sky and the earth.

वास्तव में, जो अस्तित्व में नहीं होता, वह बीज के बिना होता है और मन का भ्रम है | यह दो चाँद देखने, मृगतृष्णा, वंध्या के पुत्र और आकाश और पृथ्वी की समानता जैसे भ्रम की तरह है |

6.94.65

शिखिध्वज उवाच । पितामहानां पुत्राणां पितृणां च जगत्त्रये । आद्यः पितामहः कस्मात्पूर्वोत्पत्तौ न कारणम् ॥ ६५ ॥

śikhidhvaja uvāca | pitāmahānāṃ putrāṇāṃ pitṛṇāṃ ca jagattraye | ādyaḥ pitāmahaḥ kasmātpūrvotpattau na kāraṇam || 65 ||

Shikhidhvaja said: In the three worlds, among the ancestors and their sons, why is the first ancestor not considered the cause of the initial creation?

शिखिध्वज ने कहा: तीनों लोकों में, पूर्वजों और उनके पुत्रों में, पहला पूर्वज प्रथम उत्पत्ति का कारण क्यों नहीं माना जाता?

6.94.67

कारणस्य स्वबीजस्य नित्याभावात्पितामहः । अन्यः स दृश्यमानोपि भ्रमादन्यो न विद्यते ॥ ६७ ॥

kāraṇasya svabījasya nityābhāvātpitāmahaḥ | anyaḥ sa dṛśyamānopi bhramādanyo na vidyate || 67 ||

Due to the eternal absence of its own seed, the cause, the grandfather, although seen as different, does not exist due to illusion.

अपने बीज की नित्य अनुपस्थिति के कारण, कारण, पितामह, भ्रम के कारण दूसरा होने पर भी दिखाई देता है, परन्तु वास्तव में नहीं है।

6.94.68

मृगतृष्णाम्बुवद्भ्रान्तिरूप एवावभासते । पितामहार्थकारित्वमपि तस्य भ्रमात्मकम् ॥ ६८ ॥

mṛgatṛṣṇāmbuvadbhrāntirūpa evāvabhāsate | pitāmahārthakāritvamapi tasya bhramātmakam || 68 ||

It appears as an illusion like the mirage water, and even the purpose of the grandfather is illusory.

यह मृगतृष्णा जल की तरह भ्रान्ति रूप में ही प्रकट होता है, और पितामह का अर्थकारित्व भी भ्रमात्मक है।

6.94.69

पितामहोदरे तस्य मिथ्याप्रत्ययतः स्थितिः । घना तव निवृत्तैव मार्जयिष्याम्यथेतरत् ॥ ६९ ॥

pitāmahodare tasya mithyāpratyayataḥ sthitiḥ | ghanā tava nivṛttaiva mārjayiṣyāmyathetarat || 69 ||

In the belly of the grandfather, there is a false notion of existence, which is dense and will be removed.

पितामह के उदर में मिथ्या प्रत्यय से स्थिति है, जो घनी है और जिसे दूर किया जाएगा।

6.94.70

तस्माच्चिदात्मकतयात्मनि चित्ततोऽयं नित्यं स्वयं कचति भूमिप देवदेवः । तेनैव पद्मज इति स्वयमात्मनात्मा प्रोक्तः स्वरूप इति शान्तमिदं समस्तम् ॥ ७० ॥

tasmāccidātmakatayātmani cittato'yaṃ nityaṃ svayaṃ kacati bhūmipa devadevaḥ | tenaiva padmaja iti svayamātmanātmā proktaḥ svarūpa iti śāntamidaṃ samastam || 70 ||

Therefore, this consciousness, which is the self, always shines by itself in the self. Thus, the lord of the earth, the god of gods, is called Padmaja, the self of the self, the true form. This entire universe is peaceful.

इसलिए, यह चेतना, जो आत्मा है, सदा स्वयं आत्मा में चमकती है। इस प्रकार, पृथ्वी का स्वामी, देवों का देव, पद्मज कहलाता है, आत्मा का आत्मा, स्वरूप। यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड शान्त है।

Chapter 95

6.95.1

शिखिध्वज उवाच । आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं यद्ययं भासते भ्रमः । अर्थक्रियासमर्थश्च तत्कथं दुःखकारणम् ॥ १ ॥

śikhidhvaja uvāca | ābrahmasthambaparyantaṃ yadyayaṃ bhāsate bhramaḥ | arthakriyāsamarthaśca tatkathaṃ duḥkhakāraṇam || 1 ||

Shikhidhvaja said: If this illusion extends from Brahma to a blade of grass, and is capable of action, then how can it be the cause of suffering?

शिखिध्वज ने कहा: यदि यह भ्रम ब्रह्म से लेकर एक तिनके तक फैला हुआ है, और कार्य करने में सक्षम है, तो फिर यह दुःख का कारण कैसे हो सकता है?

6.95.2

कुम्भ उवाच । एवं जगद्भ्रमस्यास्य भावनं तावदाततम् । शिलीभूतस्य शीतेन सलिलस्येव रूक्षता ॥ २ ॥

kumbha uvāca | evaṃ jagadbhramasya asya bhāvanaṃ tāvadātatam | śilībhūtasya śītena salilasyeva rūkṣatā || 2 ||

Kumbha said: Thus, the conception of this worldly illusion is now understood. Like the dryness of water that has become ice due to cold.

कुम्भ ने कहा: इस प्रकार, इस संसारिक भ्रम की कल्पना अब समझ में आ गई है। जैसे ठंड से जमे हुए पानी की सूखापन।

6.95.3

अज्ञानं शिथिलीभूतमेवं नष्टं विदुर्बुधाः । न नाशेन विनोदेति पूर्वसंस्थानविच्युतिः ॥ ३ ॥

ajñānaṃ śithilībhūtamevaṃ naṣṭaṃ vidurbudhāḥ | na nāśena vinodeti pūrvasaṃsthānavicyutiḥ || 3 ||

The wise know that ignorance, thus loosened, is destroyed. It does not rejoice in destruction, nor does it deviate from its previous state.

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि अज्ञान, इस प्रकार ढीला होकर, नष्ट हो जाता है। यह विनाश में आनंदित नहीं होता, न ही यह अपनी पूर्व स्थिति से विचलित होता है।

6.95.4

तनुत्वं सर्वबोधस्य यत्तदेव हि कारणम् । सर्गोपशमसंपत्तौ प्रतिपन्ने परे पदे ॥ ४ ॥

tanutvaṃ sarvabodhasya yattadeva hi kāraṇam | sargopaśamasaṃpattau pratipanne pare pade || 4 ||

The subtlety of all knowledge is indeed the cause. When creation and dissolution are attained in the supreme state.

सभी ज्ञान की सूक्ष्मता ही कारण है। जब सृष्टि और विनाश परम अवस्था में प्राप्त होते हैं।

6.95.5

तानवं दृश्यते यस्य तस्यानुक्रमतः स्वयम् । पूर्वसंस्थानविगमात्प्रशमोऽप्युपपद्यते ॥ ५ ॥

tānavaṃ dṛśyate yasya tasyānukramataḥ svayam | pūrvasaṃsthānavigamāt praśamo'pyupapadyate || 5 ||

The subtlety is seen in that which, by itself, sequentially, from the departure of the previous state, also leads to tranquility.

सूक्ष्मता उसमें दिखाई देती है जो, स्वयं, क्रमशः, पूर्व स्थिति के विचलन से, शांति की ओर भी ले जाती है।

6.95.6

अनेनैव क्रमेणैवं त्वमादिपुरुषो नृपः । भ्रमाकारोदयं विद्धि मृगतृष्णाम्बुवत्स्थितम् ॥ ६ ॥

anenaiva krameṇaivaṃ tvamādipuruṣo nṛpaḥ | bhramākārodayaṃ viddhi mṛgatṛṣṇāmbuvatsthitam || 6 ||

By this very process, O King, you should know the rise of illusion to be like the mirage water.

इसी क्रम से, हे राजा, आप भ्रम के उदय को मृगतृष्णा के जल के समान जानें।

6.95.7

एषा पितामहाभावेऽप्यसती भूतसंततिः । न कदाचन तत्सिद्धं यदसिद्धेन साध्यते ॥ ७ ॥

eṣā pitāmahābhāve'pyasatī bhūtasaṃtatiḥ | na kadācana tatsiddhaṃ yadasiddhena sādhyate || 7 ||

This unreal sequence of beings exists even in the absence of the grandfather. That which is unreal cannot be proven by the unreal.

यह असत्य प्राणियों की श्रृंखला पितामह के अभाव में भी मौजूद है। जो असत्य है, वह असत्य से सिद्ध नहीं हो सकता।

6.95.8

अयं भूतोपलम्भो हि मृगतृष्णाम्ब्विवोदितः । विचारादिलयं याति शुक्तौ रजतधीरिव ॥ ८ ॥

ayaṃ bhūtopalambho hi mṛgatṛṣṇāmbvivo ditah | vicārādvilayaṃ yāti śuktau rajatadhīriva || 8 ||

This perception of beings is indeed like the mirage water. It disappears upon examination, like the illusion of silver in a shell.

यह प्राणियों का अनुभव वास्तव में मृगतृष्णा के जल के समान है। यह विचार से विलीन हो जाता है, जैसे शुक्ति में चाँदी का भ्रम होता है।

6.95.9

कारणाभावतः कार्यमभूत्वा भवतीति यत् । मिथ्याज्ञानादृते तस्य न रूपमुपपद्यते ॥ ९ ॥

kāraṇābhāvataḥ kāryamabhūtvā bhavatīti yat | mithyājñānādṛte tasya na rūpamupapadyate || 9 ||

That which is said to become an effect without a cause is not possible without false knowledge. Its form cannot be justified.

जो कहा जाता है कि कारण के अभाव में कार्य बन जाता है, वह मिथ्या ज्ञान के बिना संभव नहीं है। उसका रूप सिद्ध नहीं हो सकता।

6.95.10

मिथ्यादृष्टिप्रेक्षितं तु न कदाचन विद्यते । मृगतृष्णाम्भसा केन घटकाः परिपूरिताः ॥ १० ॥

mithyādṛṣṭiprekṣitaṃ tu na kadācana vidyate | mṛgatṛṣṇāmbhasā kena ghaṭakāḥ paripūritāḥ || 10 ||

That which is seen through false perception does not exist at any time. How can the elements be filled with the water of mirage?

जो मिथ्या दृष्टि से देखा जाता है, वह कभी भी नहीं होता। मृगतृष्णा के जल से घटक कैसे पूरे हो सकते हैं?

6.95.12

कुम्भ उवाच । हेतुत्वाभावतो ब्रह्म कार्यत्वाभावतस्तथा । अद्वैतेनातिगन्तात्मा न च कार्यं न कारणम् ॥ १२ ॥

kumbha uvāca | hetutvābhāvato brahma kāryatvābhāvatastathā | advaitenātigantātmā na ca kāryaṃ na kāraṇam || 12 ||

Kumbha said: Brahman, being devoid of cause and effect, transcends duality and is neither the cause nor the effect.

कुम्भ ने कहा: ब्रह्म, जो कारण और परिणाम से रहित है, द्वैत से परे है और न तो कारण है न ही परिणाम।

6.95.13

अकर्तृकर्मकरणमकारणमबीजकम्। अप्रतर्क्यमविज्ञेयं ब्रह्म कर्तृ कथं भवेत्॥ १३॥

akartṛkarmaakaraṇamakāraṇamabījakam | apratarkyamavijñeyaṃ brahma kartṛ kathaṃ bhavet || 13 ||

How can Brahman, which is without a doer, action, instrument, cause, and seed, and is beyond reasoning and knowledge, be a doer?

ब्रह्म, जो कर्ता, कर्म, करण, कारण और बीज से रहित है, और जो तर्क और ज्ञान से परे है, कैसे कर्ता हो सकता है?

6.95.14

अकारणत्वात्कार्यत्वरहितं तज्जगद्भवेत्। अद्वैतैक्यमनाद्यन्तं तदाद्यमुपलम्भनम्॥ १४॥

akāraṇatvātkāryatvarahitaṃ tajjagadbhavet | advaitaikyamanādyantaṃ tadādyamupalambhanam || 14 ||

Due to being without cause, the world becomes devoid of effect. The non-dual unity is without beginning or end, and its perception is primordial.

कारण के अभाव के कारण, संसार परिणाम से रहित हो जाता है। अद्वैत एकता अनादि और अनंत है, और इसकी प्रतीति आदिम है।

6.95.15

अप्रतर्क्यमविज्ञेयं यच्छिवं शान्तमव्ययम्। तत्कथं कस्य केनैव कर्तृ भोक्तृ कदा भवेत्॥ १५॥

apratarkyamavijñeyaṃ yacchivaṃ śāntamavyayam | tatkathaṃ kasya kenaiva kartṛ bhoktṛ kadā bhavet || 15 ||

That which is beyond reasoning and knowledge, which is auspicious, peaceful, and imperishable, how can it be a doer or enjoyer for anyone, by anyone, at any time?

जो तर्क और ज्ञान से परे है, जो शिव, शांत और अविनाशी है, वह किसी के लिए, किसी द्वारा, कभी भी कर्ता या भोक्ता कैसे हो सकता है?

6.95.16

अतो नेदं कृतं किंचिज्जगदादि न विद्यते। न कर्तासि न भोक्तासि सर्वं शान्तमजं शिवम्॥ १६॥

ato nedaṃ kṛtaṃ kiñcijjagadādi na vidyate | na kartāsi na bhoktāsi sarvaṃ śāntamajaṃ śivam || 16 ||

Therefore, nothing in this world is created. The world does not exist. You are neither the doer nor the enjoyer. Everything is peaceful, unborn, and auspicious.

इसलिए, इस संसार में कुछ भी नहीं बनाया गया है। संसार मौजूद नहीं है। आप न तो कर्ता हैं न ही भोक्ता। सब कुछ शांत, अजन्मा और शिव है।

6.95.17

कारणाभावतः कार्यं न कस्यचिदिदं जगत्। अकारणत्वात्कार्यत्वं भ्रमाद्विद्धि त्विदं जगत्॥ १७॥

kāraṇābhāvataḥ kāryaṃ na kasyacididaṃ jagat | akāraṇatvātkāryatvaṃ bhramādviddhi tvidaṃ jagat || 17 ||

Due to the absence of cause, this world is not the effect of anyone. Understand that this world is an illusion due to the lack of causality.

कारण के अभाव में, यह जगत किसी का कार्य नहीं है | अकारणता से कार्यत्व को भ्रम समझो, यह जगत भ्रम है ||

6.95.18

अकार्यत्वाच्च नास्त्येतत्सर्ग इत्थं न विद्यते। यदा न कस्यचित्कार्यं कारणस्य जगत्तदा॥ १८॥

akāryatvācca nāstyetatsarga itthaṃ na vidyate | yadā na kasyacitkāryaṃ kāraṇasya jagattadā || 18 ||

Due to the lack of being an effect, this creation does not exist in this manner. When there is no effect of any cause, then there is no world.

कार्यत्व के अभाव से, यह सृष्टि इस प्रकार से नहीं है | जब किसी कारण का कार्य नहीं होता, तब यह जगत नहीं होता ||

6.95.19

पदार्थाभावसंसिद्धिस्तत्सिद्धौ कस्य वेदनम्। एवं तु वेदनाभावे नास्त्यहंत्वस्य कारणम्॥ १९॥

padārthābhāvasaṃsiddhistatsiddhau kasya vedanam | evaṃ tu vedanābhāve nāstyahaṃtvasyakāraṇam || 19 ||

The realization of the absence of objects, in that realization, who is the experiencer? Thus, in the absence of experience, there is no cause for the sense of 'I'.

पदार्थों के अभाव की सिद्धि, उस सिद्धि में किसका अनुभव है? इस प्रकार, अनुभव के अभाव में, 'मैं' के भाव का कोई कारण नहीं है ||

6.95.20

अतः शुद्धो विमुक्तोऽसि कैवोक्तिर्बन्धमोक्षयोः। शिखिध्वज उवाच। बुद्धोऽस्मि भगवन्युक्तियुक्तमुक्तं त्वयोत्तमम्॥ २०॥

ataḥ śuddho vimukto'si kaivoktirbandhamokṣayoḥ | śikhidhvaja uvāca | buddho'smi bhagavanyuktiyuktamuktaṃ tvayottamam || 20 ||

Therefore, you are pure and liberated. What is the talk of bondage and liberation? Shikhidhvaja said: I am enlightened, O Lord, you have spoken the highest truth.

इसलिए, तुम शुद्ध और मुक्त हो | बंधन और मुक्ति की बात क्या है? शिखिध्वज ने कहा: मैं बुद्ध हूँ, हे भगवन्, तुमने उत्तम सत्य कहा है ||

6.95.21

कारणाभावतः कर्तृ नेदं ब्रह्मेति वेद्म्यहम्। कर्त्रभावाज्जगन्नास्ति तेन नास्ति पदार्थदृक्॥ २१॥

kāraṇābhāvataḥ kartṛ nedaṃ brahmeti vedmyaham | kartṛbhāvājjagan nāsti tena nāsti padārthadṛk || 21 ||

Due to the absence of cause, the doer is not Brahman, I understand this. Due to the absence of the doer, the world does not exist, therefore, there is no perceiver of objects.

कारण के अभाव से, कर्ता ब्रह्म नहीं है, मैं यह समझता हूँ | कर्ता के अभाव से, जगत नहीं है, इसलिए, पदार्थों का द्रष्टा नहीं है ||

6.95.22

नातश्चित्तादि तद्बीजं नातोऽहंतादि किंचन। एवंस्थिते विशुद्धोऽस्मि विबुद्धोस्मि शिवोस्मि वा॥ २२॥

nātaścittādi tadbījaṃ nāto'haṃtādi kiṃcana | evaṃsthite viśuddho'smi vibuddho'smi śivo'smi vā || 22 ||

I am neither the mind nor its seed, nor the ego or anything else. In this state, I am pure, I am awakened, I am Shiva.

मैं न मन हूँ न उसका बीज, न अहंकार हूँ न कुछ और। इस अवस्था में, मैं शुद्ध हूँ, मैं जाग्रत हूँ, मैं शिव हूँ।

6.95.23

नमो मह्यं परं चेत्यं न किंचिदिति बोधितः। पदार्थवेदनादित्थमसदेवावभासते। अहमाद्यन्तमेतेन शान्तमासे खकोशवत्॥ २३॥

namo mahyaṃ paraṃ cetyaṃ na kiṃciditi bodhitaḥ | padārthavedanāditthamasadevāvabhāsate | ahamādyantametena śāntamāse khakośavat || 23 ||

I bow to the supreme consciousness, realizing that there is nothing. Thus, the perception of objects appears as unreal. By this, I remain calm from beginning to end, like the sky.

मैं परम चेतना को प्रणाम करता हूँ, यह जानकर कि कुछ भी नहीं है। इस प्रकार, वस्तुओं की अनुभूति अवास्तविक प्रतीत होती है। इससे, मैं आरंभ से अंत तक शांत रहता हूँ, आकाश की तरह।

6.95.24

जगत्पदार्थप्रविभागदृष्टिः सदेशदिक्कालकलाक्रियौघा । अहो तु कालेन चिरेण शान्ता ब्रह्मैव शान्तं स्थितमव्ययात्म ॥ २४ ॥

jagatpadārthapravibhāgadṛṣṭiḥ sadeśadikkālakalākriyaugā | aho tu kālena cireṇa śāntā brahmaiva śāntaṃ sthitamavyayātma || 24 ||

The perception of the world and its various objects, along with space, direction, time, and actions, becomes calm over a long period of time. Only Brahman remains calm and imperishable.

जगत और उसके विभिन्न पदार्थों, स्थान, दिशा, समय और क्रियाओं की अनुभूति लंबे समय में शांत हो जाती है। केवल ब्रह्म शांत और अविनाशी रहता है।

6.95.25

शाम्यामि निर्वामि परिस्थितोऽस्मि न यामि नोदेमि न चास्तमेमि । तिष्ठामि तिष्ठ स्वयथास्थितात्मा शिवं शुभं पावनमौनमस्मि ॥ २५ ॥

śāmyāmi nirvāmi paristhito'smi na yāmi nodemi na cāstamemi | tiṣṭhāmi tiṣṭha svayathāsthitātmā śivaṃ śubhaṃ pāvanamounamasmī || 25 ||

I am calm, I am free from desires, I am situated in the self. I do not go, I do not rise, I do not set. I remain still, abide in the self, I am Shiva, auspicious, purifying silence.

मैं शांत हूँ, मैं इच्छाओं से मुक्त हूँ, मैं आत्मा में स्थित हूँ। मैं नहीं जाता, मैं नहीं उठता, मैं नहीं डूबता। मैं स्थिर रहता हूँ, आत्मा में निवास करता हूँ, मैं शिव हूँ, शुभ, पवित्र मौन।

Chapter 96

6.96.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति ब्रह्मणि विश्रान्तिमवाप्य स शिखिध्वजः । मुहूर्तमासीत्संशान्तमना निर्वातदीपवत् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti brahmaṇi viśrāntimavāpya sa śikhidhvajaḥ | muhūrtamāsītsaṃśāntamanā nirvātadīpavat || 1 ||

Vasishtha said: Having attained repose in Brahman, Shikhidhvaja remained calm for a moment, his mind still like a lamp in a windless place.

वसिष्ठ ने कहा: ब्रह्म में विश्राम पाकर, शिखिध्वज एक क्षण के लिए शांत रहे, उनका मन बिना हवा के दीपक की तरह स्थिर था।

6.96.2

निर्विकल्पसमाधानपरेणाशु विविक्षितम् । स्वलीलयेति कुम्भेन झटित्येव प्रबोधितः ॥ २ ॥

nirvikalpasamādhānapareṇāśu vivikṣitam | svalīlayeti kumbhena jhaṭityeva prabodhitaḥ || 2 ||

Quickly, by the power of nirvikalpa samadhi, he was awakened by Kumbha, as if in play.

तुरंत, निर्विकल्प समाधि की शक्ति से, कुंभ ने उन्हें खेल की तरह जगा दिया।

6.96.3

कुम्भ उवाच । राजन्नज्ञाननिद्रातः प्रबुद्धोऽसि शिवः स्थितः । कार्यं नास्तमयेनैव न चानस्तमयेन ते ॥ ३ ॥

kumbha uvāca | rājannajñānanidrātaḥ prabuddho'si śivaḥ sthitaḥ | kāryaṃ nāstamayenaiva na cānastamayena te || 3 ||

Kumbha said: O King, you have awakened from the sleep of ignorance and are now established in Shiva. There is no duty for you, neither in the day nor in the night.

कुंभ ने कहा: हे राजन्, आप अज्ञान की नींद से जागे हैं और अब शिव में स्थित हैं। आपके लिए कोई कर्तव्य नहीं है, न दिन में न रात में।

6.96.4

सकृदेव विभातात्मा नष्टानिष्टपदात्मकः । कलाकलननिर्मुक्तो जीवन्मुक्तोऽङ्ग सांप्रतम् ॥ ४ ॥

sakṛdeva vibhātātmā naṣṭāniṣṭapadātmakaḥ | kalākalananirmukto jīvanmukto'ṅga sāṃpratam || 4 ||

Now, you are illuminated once and for all, free from the paths of desired and undesired outcomes, liberated from the cycles of time, and living in liberation.

अब, आप एक बार के लिए प्रकाशित हैं, इच्छित और अनिच्छित परिणामों के मार्गों से मुक्त, समय के चक्रों से मुक्त, और मुक्ति में जी रहे हैं।

6.96.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । कुम्भेन बोधितस्त्वेवं स बभूवावबोधवान् । विनिर्गतो रराजोच्चैर्महामोहसमुद्गकात् ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kumbhena bodhitastvevaṃ sa babhūvāvabodhavān | vinirgato rarājoccairmahāmohasamudgakāt || 5 ||

Vasishtha said: Thus awakened by Kumbha, he became fully aware. Emerging from the great delusion, he shone brilliantly.

वसिष्ठ ने कहा: कुंभ द्वारा इस प्रकार जागा हुआ, वह पूर्ण रूप से जाग्रत हो गया। महान भ्रम से निकलकर, वह उज्ज्वल रूप से चमक उठा।

6.96.6

विश्रान्तधीः क्षणेनैव पश्यन्दृश्यस्य वस्तुनः असत्तामेव मुक्तात्मा लीलया समुवाच ह ॥ ६ ॥

viśrāntadhīḥ kṣaṇenaiva paśyandṛśyasya vastunaḥ asattāmeva muktātmā līlayā samuvāca ha || 6 ||

The one with a rested mind, in just a moment, seeing the unreality of the perceived object, the liberated soul playfully spoke.

विश्राम पाया हुआ मन वाला, एक क्षण में ही, देखकर दृश्य वस्तु की असत्ता, मुक्त आत्मा ने लीला से कहा।

6.96.7

शिखिध्वज उवाच ज्ञातप्रायमपीदं तु यत्पृच्छामि तदुच्यताम् भूयो निपुणबोधाय मम मानद मोदद ॥ ७ ॥

śikhidhvaja uvāca jñātaprāyamapīdaṃ tu yatpṛcchāmi taducyatām bhūyo nipuṇabodhāya mama mānada modada || 7 ||

Shikhidhvaja said, 'Even though this is mostly known, please tell me what I ask for further precise understanding, O respected one, for my joy.'

शिखिध्वज ने कहा, 'यह अधिकतर ज्ञात है, फिर भी मैं जो पूछता हूँ उसे बताओ, मेरे सम्मानित के लिए, मेरी प्रसन्नता के लिए।'

6.96.8

शिवे शान्ते निराभासे पदेऽनुल्लसितात्मनि द्रष्टृदर्शनदृश्याख्यो विश्वात्मा प्रत्ययः कुतः ॥ ८ ॥

śive śānte nirābhāse pade'nullasitātmani draṣṭṛdarśanadṛśyākhyo viśvātmā pratyayaḥ kutaḥ || 8 ||

In the peaceful, tranquil state of Shiva, devoid of appearances, where the self is not agitated, how does the concept of the universal self, known as the seer, seeing, and seen, arise?

शिव की शांत, निराभास अवस्था में, जहाँ आत्मा उत्तेजित नहीं है, दृष्टा, दर्शन, और दृश्य के रूप में ज्ञात विश्वात्मा का concept कैसे उत्पन्न होता है?

6.96.9

कुम्भ उवाच साधु पृष्टं महाराज राजसे वाथ भास्वरः एतदेव हि ते शिष्टं ज्ञातुं यत्तदिदं श्रृणु ॥ ९ ॥

kumbha uvāca sādhu pṛṣṭaṃ mahārāja rājase vātha bhāsvaraḥ etadeva hi te śiṣṭaṃ jñātuṃ yattadidaṃ śṛṇu || 9 ||

Kumbha said, 'Well asked, O great king, whether it be from passion or brilliance, this is indeed what remains to be known, listen to this.'

कुम्भ ने कहा, 'अच्छा पूछा, हे महाराज, चाहे यह कामना से हो या प्रकाश से, यही जानना बाकी है, यह सुनो।'

6.96.10

यदिदं दृश्यते किंचिज्जगत्स्थावरजंगमम् सर्वं सर्वप्रकाराढ्यं कल्पान्ते तद्विनश्यति ॥ १० ॥

yadidaṃ dṛśyate kiñcijjagatsthāvarajaṅgamam sarvaṃ sarvaprakārāḍhyaṃ kalpānte tadvinaśyati || 10 ||

Whatever is seen in this world, whether moving or non-moving, everything, full of all varieties, perishes at the end of the aeon.

जो कुछ भी इस जगत में दिखाई देता है, चाहे वह चर हो या अचर, सभी कुछ, सभी प्रकार के साथ भरा हुआ, कल्प के अंत में नष्ट हो जाता है।

6.96.11

ततः स्तिमितगम्भीरं न तेजो न तमस्ततम्। महाकल्पविलासान्ते सत्सारमवशिष्यते ॥ ११ ॥

tataḥ stimita-gambhīraṃ na tejo na tamastatam| mahākalpa-vilāsānte satsāramavaśiṣyate || 11 ||

Then, neither light nor darkness remains, only the essence of truth remains at the end of the great dissolution.

तब, न प्रकाश न अंधकार रहता है, केवल सत्य का सार महाकल्प के अंत में शेष रहता है।

6.96.12

चिन्मात्रममलं शान्तमाभातं परमं नभः। समस्तकलनोन्मुक्तं युक्तं परमया धिया ॥ १२ ॥

cinmātramamalaṃ śāntamābhātaṃ paramaṃ nabhaḥ| samastakalanonmuktaṃ yuktaṃ paramayā dhiyā || 12 ||

Pure consciousness, stainless, peaceful, luminous, supreme sky, free from all calculations, endowed with supreme intelligence.

शुद्ध चेतना, निर्मल, शांत, प्रकाशमान, परम आकाश, सभी गणनाओं से मुक्त, परम बुद्धि से युक्त।

6.96.13

यदेकोदितमत्यच्छं शान्तमाततमुज्ज्वलम्। परमात्मात्मकं तेजस्तिमितं ज्ञप्तिमात्रकम् ॥ १३ ॥

yadekoditamatyacchaṃ śāntamātatamujjvalam| paramātmātmakaṃ tejastimitaṃ jñaptimātrakam || 13 ||

That which is uniquely risen, extremely pure, peaceful, extended, radiant, the essence of the Supreme Self, stilled, and mere awareness.

जो एकमात्र उदित है, अत्यंत शुद्ध है, शांत है, विस्तृत है, प्रकाशमान है, परमात्मा का सार है, स्थिर है, और केवल चेतना है।

6.96.14

अप्रतर्क्यमविज्ञेयं समं शिवमनिन्दितम्। ब्रह्मनिर्वाणमापूर्णमापूर्णोदितसंविदा ॥ १४ ॥

apratarkyamavijñeyaṃ samaṃ śivamaninditam| brahmanirvāṇamāpūrṇamāpūrṇoditasanvidā || 14 ||

It is beyond reasoning, unknowable, equal, auspicious, blameless, the bliss of Brahman, complete, and revealed through complete awareness.

यह तर्क से परे है, अज्ञेय है, समान है, कल्याणकारी है, निर्दोष है, ब्रह्म का आनंद है, पूर्ण है, और पूर्ण चेतना से प्रकट है।

6.96.15

अणीयसामणीयश्च स्थविष्ठं च स्थवीयसाम्। गरीयसां गरिष्ठं च श्रेष्ठं च श्रेयसामपि ॥ १५ ॥

aṇīyasāmaṇīyaśca sthaviṣṭhaṃ ca sthavīyasām| garīyasāṃ gariṣṭhaṃ ca śreṣṭhaṃ ca śreyasāmapi || 15 ||

It is the smallest of the small, the largest of the large, the heaviest of the heavy, and the best of the best.

यह सबसे छोटा है, सबसे बड़ा है, सबसे भारी है, और सबसे श्रेष्ठ है।

6.96.16

ईदृशं तत्परं सूक्ष्मं तस्याग्रे यदिदं नभः। अणोः पार्श्वे महामेरुरिव स्थूलात्म लक्ष्यते ॥ १६ ॥

īdṛśaṃ tatparaṃ sūkṣmaṃ tasyāgre yadidaṃ nabhaḥ | aṇoḥ pārśve mahāmeruriva sthūlātma lakṣyate || 16 ||

That subtle, supreme entity, at the tip of which is this sky, appears like a huge mountain next to an atom.

वह सूक्ष्म, परम वस्तु, जिसके अग्र भाग में यह आकाश है, एक अणु के पार्श्व में महान मेरु पर्वत की तरह स्थूल आत्मा के रूप में दिखाई देता है।

6.96.17

ईदृशं तत्परं स्थूलं यस्याग्रे यदिदं जगत्। परमाणुवदाभाति क्वचिदेव न भाति च ॥ १७ ॥

īdṛśaṃ tatparaṃ sthūlaṃ yasyāgre yadidaṃ jagat | paramāṇuvadābhāti kvacideva na bhāti ca || 17 ||

That supreme, gross entity, at the tip of which is this world, sometimes appears like an atom and sometimes does not appear at all.

वह परम, स्थूल वस्तु, जिसके अग्र भाग में यह जगत है, कभी-कभी एक अणु की तरह दिखाई देती है और कभी-कभी बिलकुल नहीं दिखाई देती।

6.96.18

विश्वात्मकचनं नाम पदेऽसंभववेधसः। तदहंवेदनं विद्धि विराडात्मा जगत्स्थितम् ॥ १८ ॥

viśvātmakacaṃ nāma pade'saṃbhavavedhasaḥ | tadahaṃvedanaṃ viddhi virāḍātmā jagatsthitam || 18 ||

Know that the name of the all-pervading entity, which is the cause of all creation, is 'I am the knower of the universe' and it is the cosmic self situated in the world.

जानो कि सबका कारण होने वाली वह सर्वव्यापी वस्तु का नाम 'मैं विश्व का ज्ञाता हूँ' है और यह विराट आत्मा जगत में स्थित है।

6.96.19

वातस्य वातस्पन्दस्य यथा भेदो न विद्यते। शून्यत्वखत्वोपमयोश्चिन्मात्राहंत्वयोस्तथा ॥ १९ ॥

vātasya vātaspandasya yathā bhedo na vidyate | śūnyatvakhattvopamayościnmātrāhaṃtvayostathā || 19 ||

Just as there is no difference between the wind and its vibration, similarly, there is no difference between the void and the self, which is pure consciousness.

जैसे हवा और उसकी कंपन में कोई अंतर नहीं होता, उसी प्रकार शून्यता और स्वयं, जो शुद्ध चेतना है, में कोई अंतर नहीं होता।

6.96.20

जलेऽस्ति देशकालान्ते यथोर्म्यादि सकारणम्। परेऽसद्देशकालान्ते तथा जगदकारणम् ॥ २० ॥

jale'sti deśakālānte yathormyādi sakāraṇam | pare'saddesakālānte tathā jagadakāraṇam || 20 ||

Just as waves and other effects are present in water at a specific place and time, similarly, the cause of the universe is present in the supreme at a specific place and time.

जैसे लहरें और अन्य प्रभाव पानी में एक निश्चित स्थान और समय पर उपस्थित होते हैं, उसी प्रकार ब्रह्मांड का कारण परम में एक निश्चित स्थान और समय पर उपस्थित होता है।

6.96.21

हेम्न्यस्ति देशकालान्ते कटकादि सकारणम्। ब्रह्मण्यदेशकालान्ते तथा जगदकारणम् ॥ २१ ॥

hemnyasti deśakālānte kaṭakādi sakāraṇam | brahmaṇyadeśakālānte tathā jagadakāraṇam || 21 ||

In the end of time and place, the cause is like the city of Kata. Similarly, in the end of time and place, the cause is the universe.

देश और काल के अंत में, कारण कटका के समान है | ब्रह्म के देश और काल के अंत में, जगत का कारण है || 21 ||

6.96.22

ईदृशं तद्वरिष्ठं च जगद्राज्यं तदक्षतम्। न द्वैतममलं शान्तं जगत्तृणलवायते ॥ २२ ॥

īdṛśaṃ tadvariṣṭhaṃ ca jagadrājyaṃ tadakṣatam | na dvaitamamalaṃ śāntaṃ jagattṛṇalavāyate || 22 ||

Such is the supreme state, the kingdom of the universe, which is indestructible. It is non-dual, pure, and peaceful, not even a blade of grass exists in the universe.

ऐसा ही वह श्रेष्ठ स्थिति है, जो ब्रह्मांड का राज्य है, जो अक्षत है | यह अद्वैत, निर्मल, और शांत है, जगत में एक तृण भी नहीं है || 22 ||

6.96.23

ईदृशं तत्परं श्रेयस्तस्मिन्सति यदीश्वरे । जगत्पदार्थसार्थश्रीः सा सत्तामेति वेदनात् ॥ २३ ॥

īdṛśaṃ tatparaṃ śreyastasmiṃsati yadīśvare | jagatpadārthasārthaśrīḥ sā sattāmeti veda || 23 ||

Such is the supreme good, which is in that Lord. The wealth of the meaning of the words of the universe attains existence through knowledge.

ऐसा ही परम कल्याण है, जो उस ईश्वर में है | जगत के शब्दों के अर्थ की सम्पत्ति ज्ञान से अस्तित्व प्राप्त करती है || 23 ||

6.96.24

तत्सारमेकमेवेह विद्यते भूपते ततम् । एकमेकान्तचित्कान्तं नैकमप्यद्वितावशात् ॥ २४ ॥

tatsāram ekam eveha vidyate bhūpate tatam | ekam ekāntacitkāntaṃ naikam apy advitāvaśāt || 24 ||

That essence is one and only one here, O king, which is pervaded. It is one, the ultimate consciousness, not even one due to non-duality.

वह सार यहां एक ही है, हे राजा, जो व्याप्त है | वह एक है, अंतिम चेतना, अद्वैत के कारण एक भी नहीं || 24 ||

6.96.25

तस्माद्वितीया कलना काचिन्नाम न विद्यते । आत्मतत्त्वमलं भातं तदेवापूर्णमक्षयम् ॥ २५ ॥

tasmād dvitīyā kalanā kācinna nāma na vidyate | ātmatattvamalaṃ bhātaṃ tadevāpūrṇamakṣayam || 25 ||

Therefore, there is no second calculation or name. The pure essence of the self is manifested, that alone is complete and imperishable.

इसलिए, दूसरी गणना या नाम नहीं है | आत्मा का शुद्ध तत्व प्रकट है, वही पूर्ण और अक्षय है || 25 ||

6.96.26

संस्थितं सर्वदा सर्वं सर्वाकारमिवोदितम् । अदृश्यत्वादलभ्यत्वान्न तत्कार्यं न कारणम् ॥ २६ ॥

saṃsthitaṃ sarvadā sarvaṃ sarvākāramivoditam | adṛśyatvādalabhyatvānna tatkāryaṃ na kāraṇam || 26 ||

Always established, everything is manifested in all forms | Due to its invisibility and unattainability, it is neither the cause nor the effect.

सदा स्थित, सब कुछ सभी रूपों में प्रकट होता है | अदृश्यता और अप्राप्यता के कारण, वह न कारण है न ही कार्य.

6.96.27

प्रत्यक्षादेरगम्यत्वात्किमप्येव तदुत्तमम् । सर्वं सर्वात्मकं सूक्ष्ममच्छानुभवमात्रकम् ॥ २७ ॥

pratyakṣāderagamyatvātkimapyeva taduttamam | sarvaṃ sarvātmakaṃ sūkṣmamacchānubhavamātrakam || 27 ||

Due to its unattainability by direct perception, it is supreme | Everything is subtle and only experienced through the self.

प्रत्यक्ष प्रत्यक्ष के अगम्यता के कारण, यह उत्तम है | सब कुछ सूक्ष्म है और केवल आत्मा द्वारा अनुभव किया जाता है.

6.96.28

आख्यानाख्यास्वरूपस्य निराभासप्रभादृशः । सतो वाप्यसतो वाथ कथं कारणता भवेत् ॥ २८ ॥

ākhyānākhyāsvarūpasya nirābhāsaprabhādṛśaḥ | satō vāpyasatō vātha kathaṃ kāraṇatā bhavet || 28 ||

How can the nature of the narration, which is like a reflection without a reflection, be a cause, whether it exists or not?

जिसका स्वरूप अप्रतिबिंबित प्रतिबिंब के समान है, वह वर्णन कैसे कारण हो सकता है, चाहे वह है या नहीं?

6.96.29

यद्वै न कस्यचिद्बीजमनाख्यत्वान्न कारणम् । न किंचिज्जायते तस्मात्प्रमाणादि ततात्मनः ॥ २९ ॥

yadvai na kasyacidbījamānākhyatvānna kāraṇam | na kiñcijjāyate tasmātpramāṇādi tatātmanaḥ || 29 ||

Since there is no seed of anything, due to its unmanifest nature, it is not a cause | Therefore, nothing arises from it, the self is the proof.

किसी भी चीज का बीज नहीं है, इसकी अव्यक्त प्रकृति के कारण, यह कारण नहीं है | इसलिए, कुछ भी इससे उत्पन्न नहीं होता, आत्मा प्रमाण है।

6.96.30

अकर्तृकर्मकरणं सत्यं चिद्घनमक्षतम् । आत्मरूपमनाभासं स्वयंवेदनमक्षतम् ॥ ३० ॥

akartṛkarmakaraṇaṃ satyaṃ ciddhanamakṣatam | ātmārūpamānābhāsaṃ svayaṃvedanamakṣatam || 30 ||

The action without a doer is true, consciousness is indestructible | The self-form is without reflection, self-knowledge is indestructible.

कर्ता के बिना कर्म सत्य है, चेतना अविनाशी है | आत्मा का रूप अप्रतिबिंबित है, आत्मज्ञान अविनाशी है।

6.96.31

तस्मान्न जायते किंचित्परस्माद्ब्रह्मणो मुने । कथं किं लभ्यते केन यथोर्म्यादि सकारणम् ॥ ३१ ॥

tasmānna jāyate kiṃcitparasmādbrahmaṇo mune | kathaṃ kiṃ labhyate kena yathormyādi sakāraṇam || 31 ||

Therefore, nothing is born from the supreme Brahman, O sage. How can anything be obtained from it, as everything has a cause like waves from water?

इसलिए, हे मुने, परब्रह्म से कुछ भी उत्पन्न नहीं होता। जैसे जल से तरंगें उत्पन्न होती हैं, वैसे ही किसी कारण से कुछ भी प्राप्त नहीं होता।

6.96.32

परेऽसद्देशकालान्ते तथा जगदकारणम् । शिखिध्वज उवाच । जलादौ यत्तरङ्गादि तत्सकारणमस्ति हि ॥ ३२ ॥

pare'saddesakālānte tathā jagadakāraṇam | śikhidhvaja uvāca | jalādau yattaraṅgādi tatsakāraṇamasti hi || 32 ||

In the supreme, which is beyond space and time, there is no cause for the world. Shikhidhvaja said: Just as waves and such are caused by water, so it is.

परब्रह्म में, जो देश-काल से परे है, जगत का कोई कारण नहीं है। शिखिध्वज ने कहा: जैसे जल से तरंगें आदि उत्पन्न होती हैं, वैसे ही है।

6.96.33

इदानीं तत्त्वतो ज्ञातमेतत्सत्यं महीपते । कुम्भ उवाच । इदं जगदहंतादि नेह किंचिन्न विद्यते ॥ ३३ ॥

idānīṃ tattvato jñātametatsatyaṃ mahīpate | kumbha uvāca | idaṃ jagadahaṃtādi neha kiṃcinnavidyate || 33 ||

Now, O king, the truth is known in reality. Kumbha said: In this world, there is nothing that exists as 'I' or 'this'.

अब, हे राजन, सत्य वास्तव में ज्ञात है। कुम्भ ने कहा: इस जगत में 'मैं' या 'यह' कुछ भी नहीं है।

6.96.34

जगच्छब्दार्थरहितं जगदस्ति शिवात्मकम् । व्योम्नेव निर्मितं शान्तं व्योम्ना सूक्ष्मतरेण च ॥ ३४ ॥

jagacchabdārtharahitaṃ jagadasti śivātmakam | vyomnyeva nirmitaṃ śāntaṃ vyomnā sūkṣmatareṇa ca || 34 ||

The world, devoid of the meaning of the word 'world', exists as Shiva. It is created in the sky, peaceful, and by the subtlest sky.

जगत, जो 'जगत' शब्द के अर्थ से रहित है, शिव के रूप में अस्तित्व में है। यह आकाश में निर्मित है, शांत है, और सबसे सूक्ष्म आकाश से बना है।

6.96.35

व्योम्येव निर्मितं शान्तं व्योम्ना सूक्ष्मतरेण च । यथा नभसि शून्यत्वं तथेदं जगदीश्वरे ॥ ३५ ॥

vyomnyeva nirmitaṃ śāntaṃ vyomnā sūkṣmatareṇa ca | yathā nabhasi śūnyatvaṃ tathedaṃ jagadīśvare || 35 ||

Created in the sky, peaceful, and by the subtlest sky, just as there is emptiness in the sky, so is this world, O Lord.

आकाश में निर्मित, शांत, और सबसे सूक्ष्म आकाश से, जैसे आकाश में शून्यता है, वैसे ही यह जगत है, हे ईश्वर।

6.96.36

सदृशं स्वस्वरूपेण न वा रूपेण केनचित् । एवंरूपं जगदिदं सम्यग्ज्ञातं शिवं भवेत् ॥ ३६ ॥

sadṛśaṃ svasvarūpeṇa na vā rūpeṇa kenacit | evaṃrūpaṃ jagadidaṃ samyagjñātaṃ śivaṃ bhavet || 36 ||

This world, when truly known, becomes auspicious. It is not similar to any other form but is identical to its own true nature.

यह जगत् जब सच्चे रूप में जाना जाता है, तो यह कल्याणकारी हो जाता है। यह किसी अन्य रूप के समान नहीं है, बल्कि अपने स्वरूप के समान है।

6.96.37

सम्यग्ज्ञानप्रभावेण विषमप्यमृतायते । असम्यग्ज्ञातमशिवं जगद्दुःखप्रदं परम् ॥ ३७ ॥

samyagjñānaprabhāveṇa viṣamapyamṛtāyate | asamyagjñātamaśivaṃ jagaddhuḥkhapradaṃ param || 37 ||

Through the power of true knowledge, even poison becomes nectar. Without true knowledge, the world becomes a source of great sorrow.

सच्चे ज्ञान के प्रभाव से, विष भी अमृत बन जाता है। सच्चे ज्ञान के बिना, जगत् महान दुःख का कारण बन जाता है।

6.96.38

विषबुद्ध्यामृतमपि भुक्तं विषरसायते । ईदृशश्च यथा वेत्ति यद्यदेष चिदीश्वरः ॥ ३८ ॥

viṣabuddhyāmṛtamapi bhuktam viṣarasāyate | īdṛśaśca yathā vetti yadyadeṣa cidīśvaraḥ || 38 ||

Even nectar, when perceived as poison, becomes poisonous when consumed. Whatever the Supreme Consciousness perceives, it becomes so.

अमृत भी, जब विष के रूप में समझा जाता है, भक्षण करने पर विष बन जाता है। चेतना का ईश्वर जो भी समझता है, वह ऐसा ही हो जाता है।

6.96.39

तत्तथैवाशु भवति तादृग्रूपतया शिवः । यथा ज्वाला भ्रमाज्जाता विचित्राकारविभ्रमैः ॥ ३९ ॥

tattathaivāśu bhavati tādṛgrūpatayā śivaḥ | yathā jvālā bhramājjātā vicitrākāravibhramaiḥ || 39 ||

Whatever is perceived by the Supreme Consciousness immediately becomes so in that form. Just as a flame, born out of whirling, appears in various forms due to its flickering nature.

चेतना का ईश्वर जो भी समझता है, वह तुरंत उसी रूप में हो जाता है। जैसे ज्वाला, घूमने से उत्पन्न होकर, अपने झिलमिलाहट के कारण विभिन्न रूपों में दिखाई देती है।

6.96.40

तिष्ठत्यनन्यरूपैव ब्रह्मसत्ता तथैव हि । यत्परं चित्स्वरूपेण स्थितमात्मनि मन्थरम् ॥ ४० ॥

tiṣṭhatyananyarūpaiva brahmasattā tathaiva hi | yatparaṃ cittasvarūpeṇa sthitamātmani mantharam || 40 ||

Brahman, the ultimate reality, remains in its own unique form, steady and unchanging. That which is the supreme consciousness, established in the self, is calm and tranquil.

ब्रह्म, परम सत्ता, अपने अनन्य रूप में स्थिर और अपरिवर्तनीय बना रहता है। जो परम चेतना है, आत्मा में स्थित, शांत और प्रशांत है।

6.96.41

तत्तेन देहदेह्यादिर्जगदादीव लक्ष्यतेकेवलं परमेवेत्थं परमं भासते शिवम् ॥ ४१ ॥

tattena dehadehyādirjagadādīva lakṣyatekevalaṃ parameveṭthaṃ paramaṃ bhāsate śivam || 41 ||

Thus, the world appears as if it were the body and the embodied, but only the Supreme shines as the highest auspiciousness.

इस प्रकार, जगत शरीर और शरीरी के रूप में प्रतीत होता है, लेकिन केवल परम ही परम मंगलमय के रूप में प्रकाशित होता है।

6.96.42

अतो जगदहंतादि प्रश्न एवेति नोचितःयद्वस्तु विद्यमानं सत्प्रश्नस्तत्र विराजते ॥ ४२ ॥

ato jagadahaṃtādi praśna eveti nocitaḥyadvastu vidyamānaṃ satpraśnastatra virājate || 42 ||

Therefore, the question of the world and the self is not appropriate. The question arises where there is an existing entity.

इसलिए, जगत और आत्मा का प्रश्न उचित नहीं है। प्रश्न तब उठता है जब कोई अस्तित्वमान वस्तु होती है।

6.96.43

प्रेक्षितं यत्तु नास्त्येव प्रेक्षाप्रश्नेन तत्र किंसंनिवेशं विना सत्ता यथा हेम्नो न विद्यते ॥ ४३ ॥

prekṣitaṃ yattu nāstyeva prekṣāpraśnena tatra kimsaṃniveśaṃ vinā sattā yathā hemno na vidyate || 43 ||

That which is perceived as non-existent, what is the question of perception there? Without the essence, existence is not possible, just as gold without its essence does not exist.

जो अस्तित्वहीन दिखाई देता है, वहाँ दृष्टि का प्रश्न क्या है? सत्ता के बिना, अस्तित्व संभव नहीं है, जैसे सोने के बिना सोना नहीं होता।

6.96.44

तथा जगदहंभावं विना नेशस्य संस्थितिःअकारणत्वान्नास्तीदं ब्रह्मैवेत्थं विजृम्भते ॥ ४४ ॥

tathā jagadahaṃbhāvaṃ vinā neśasya saṃsthitiḥakāraṇatvānnāstīdaṃ brahmaivetthaṃ vijṛmbhate || 44 ||

Similarly, without the sense of 'I am the world,' there is no existence of the Lord. Due to causelessness, this Brahman alone manifests thus.

इसी प्रकार, 'मैं जगत हूँ' के भाव के बिना, ईश्वर का अस्तित्व नहीं है। कारणहीनता के कारण, यह ब्रह्म ही इस प्रकार प्रकट होता है।

6.96.45

अजृम्भमाणमेवेदं जगत्त्वेनेव संस्थितम्यन्मया एव तेनैव मिथः संप्रेरिताशयम् ॥ ४५ ॥

ajṛmbhamāṇamevedaṃ jagattveneva saṃsthitamyanmayā eva tenaiva mithaḥ saṃpreritāśayam || 45 ||

This world, which is not manifested, is established as the world itself. By itself, it is mutually inspired by itself.

यह जगत, जो प्रकट नहीं हुआ है, जगत के रूप में ही स्थापित है। अपने आप से, यह अपने आप से ही परस्पर प्रेरित है।

6.96.46

चमत्कुर्वन्त्यमी भावाः पञ्चके मिथुनौघवत् । चिन्मात्र एव चिन्मात्रं चिन्मात्रेणावधीयते ॥ ४६ ॥

camatkurvantyamī bhāvāḥ pañcake mithunaughavat | cinmātra eva cinmātraṃ cinmātreṇāvadhīyate || 46 ||

These states cause wonder in the fivefold pair-like manner | Pure consciousness alone is perceived by pure consciousness

ये अवस्थाएँ पाँच प्रकार के जोड़े की तरह आश्चर्य पैदा करती हैं | शुद्ध चेतना ही शुद्ध चेतना द्वारा जानी जाती है

6.96.47

नानात्मनैव नानेव स्वात्मज्ञानात्मनात्मवत्। पूर्णात्पूर्णान्युद्धरन्ति पूर्णात्पूर्णानि चक्रिरे ॥ ४७ ॥

nānātmanaiva nāneva svātmajñānātmanātmawat | pūrṇātpūrṇānyuddharanti pūrṇātpūrṇāni cakrire || 47 ||

By the self-knowledge of the self, the many are not different | From the complete, the complete are extracted, the complete are created

स्वयं के आत्मज्ञान से, बहुत से अलग नहीं हैं | पूर्ण से पूर्ण निकाले जाते हैं, पूर्ण बनाए जाते हैं

6.96.48

भवन्ति पूर्णात्पूर्णानि पूर्णमेवावशिष्यते। चिन्मात्रमेव कचति यच्चिन्मात्रमयात्मनि ॥ ४८ ॥

bhavanti pūrṇātpūrṇāni pūrṇamevāvaśiṣyate | cinmātrameva kacati yaccinmātramayātmani || 48 ||

From the complete, the complete become | The complete alone remains | Pure consciousness alone shines, which is pure consciousness in the self

पूर्ण से पूर्ण बनते हैं | पूर्ण ही शेष रहता है | शुद्ध चेतना ही चमकती है, जो आत्मा में शुद्ध चेतना है

6.96.49

अकचित्वैव तन्नाम कचितं सर्गवेदनम्। अहं चिता चिदेवादौ भवतीव स्वयं ततः ॥ ४९ ॥

akacitvaiva tannāma kacitaṃ sargavedanam | ahaṃ citā cidevādau bhavatīva svayaṃ tataḥ || 49 ||

Non-manifestation is its name, manifestation is the knowledge of creation | I am consciousness, consciousness alone exists from the beginning, it seems to be itself from that

अव्यक्तता उसका नाम है, व्यक्तिकरण सृष्टि का ज्ञान है | मैं चेतना हूँ, चेतना ही आदि से है, वह स्वयं से प्रतीत होती है

6.96.50

अभवन्त्येव रूपं स्वमत्यजन्ती निरामयम्। तेजोमयमनाद्यन्तं मनोरूपमनन्तकम् ॥ ५० ॥

abhavantyeva rūpaṃ svamatyajantī nirāmayam | tejomayamanādyantaṃ manorūpamanantakam || 50 ||

They become non-existent, abandoning their own form, free from disease | Luminous, without beginning or end, of the form of the mind, endless

वे अस्तित्वहीन हो जाते हैं, अपने रूप को त्याग कर, रोगमुक्त | प्रकाशमय, अनादि, अनन्त, मन के रूप में, अनन्त

6.96.51

सम्राट्संसारमाभासि भवतीव स्वयं वपुः। पश्यत्यथ सदेवेदं स्वरूपत्वात्सदेव वा। भावनाद्भूततामेति दृश्यं भवति च क्षणात् ॥ ५१ ॥

samrāṭsaṃsāramābhāsi bhavatīva svayaṃ vapuḥ | paśyatyatha sadedama svarūpatvātsadeva vā | bhāvanādbhūtatāmeti dṛśyaṃ bhavati ca kṣaṇāt || 51 ||

The universe appears as if it is the body of the emperor | Then, it is seen as the true self, due to its nature | By contemplation, it becomes real, and the visible becomes instantaneous.

संसार सम्राट के रूप में प्रकट होता है, जैसे कि यह स्वयं का शरीर हो | फिर, इसके स्वरूप के कारण, यह सच्चा आत्मा दिखाई देता है | ध्यान से, यह वास्तविक हो जाता है, और दृश्य तत्काल हो जाता है।

6.96.52

शान्तं जगत्प्रसररूपतया स्वभावशब्दार्थमुक्तमिदमव्यपदेश्यमेकम्। वस्तु स्थितं निजचमत्करणावलोकरूपं जगत्स्वरहितानुभवात्मतत्त्वम्॥ ५२॥

śāntaṃ jagatprasararūpatayā svabhāvaśabdārthamuktamidamavyapadeśyamekam | vastu sthitaṃ nijacamatkaraṇāvalokarūpaṃ jagatsvarahitānubhavātmatattvam || 52 ||

The peaceful universe is described as the nature of expansion | This is the inexpressible one truth | The reality is established in the form of self-realization | The essence of the universe is the experience of the self without attributes.

शांत ब्रह्मांड विस्तार के स्वरूप के रूप में वर्णित है | यह अव्यक्त एक सत्य है | वास्तविकता आत्म-साक्षात्कार के रूप में स्थापित है | ब्रह्मांड का सार गुणों के बिना आत्मा का अनुभव है।

Chapter 97

6.97.1

कुम्भ उवाच । हेम्न्यस्ति देशकालान्ते इत्थं जन्यजनिक्रमः । न किंचिज्जायते शान्तान्न किंचित्प्रविलीयते ॥ १ ॥

kumbha uvāca | hemnysti deśakālānte itthaṃ janyajanikramaḥ | na kiṃcijjāyate śāntānna kiṃcitpravilīyate || 1 ||

Kumbha said: In the end of time and space, the cycle of birth and rebirth is thus: Nothing is born from the peaceful, nothing dissolves.

कुम्भ ने कहा: देश और काल के अंत में, जन्म और पुनर्जन्म का चक्र ऐसा है: शांत से कुछ भी नहीं उत्पन्न होता, कुछ भी नहीं विलीन होता।

6.97.2

स्वसत्तायां स्थितं ब्रह्म न बीजं न च कारणम् । शुद्धानुभवमात्रं तत्तस्मादन्यन्न विद्यते ॥ २ ॥

svasattāyāṃ sthitaṃ brahma na bījaṃ na ca kāraṇam | śuddhānubhavamātraṃ tattasmādanyanna vidyate || 2 ||

Brahman, established in its own existence, is neither a seed nor a cause. It is pure experience alone; nothing else exists besides that.

ब्रह्म, अपने अस्तित्व में स्थित, न तो बीज है न ही कारण। यह शुद्ध अनुभव मात्र है; उसके अलावा कुछ और नहीं है।

6.97.3

किंचिज्जगदहंतादि तदेवानन्तमस्ति हि । शिखिध्वज उवाच । शिवे जगदहंतादि मुने नास्तीति वेद्म्यहम् ॥ ३ ॥

kiṃcijjagadahaṃtādi tadevānantamasti hi | śikhidhvaja uvāca | śive jagadahaṃtādi mune nāstīti vedmyaham || 3 ||

Whatever exists in the universe, including the self, is that infinite alone. Shikhidhvaja said: O sage, I know that in Shiva, the universe and the self do not exist.

ब्रह्मांड में जो भी है, स्वयं सहित, वह अनंत ही है। शिखिध्वज ने कहा: हे मुनि, मैं जानता हूँ कि शिव में, ब्रह्मांड और स्वयं नहीं है।

6.97.4

कुम्भ उवाच । विस्तारं तदनाद्यन्तं तत्संविदिव तिष्ठति ॥ ४ ॥

kumbha uvāca | vistāraṃ tadanādyantaṃ tatsaṃvidiva tiṣṭhati || 4 ||

Kumbha said: That infinite expanse exists like pure consciousness, without beginning or end.

कुम्भ ने कहा: वह अनंत विस्तार शुद्ध चेतना की तरह अंतहीन और अनादि के रूप में मौजूद है।

6.97.5

तत्तद्भुवनमत्यच्छं तत्तन्मात्रं जगद्वपुः । न विज्ञानमयोऽर्थोऽस्ति न बाह्यो नापि शून्यता ॥ ५ ॥

tattadbhuvanamatyacchaṃ tattanmātraṃ jagadvapuḥ | na vijñānamayo'rtho'sti na bāhyo nāpi śūnyatā || 5 ||

That supreme abode is the very essence of the universe. There is no reality composed of knowledge, nor is there anything external or void.

वह परम निवास ब्रह्मांड का सार है। ज्ञान से बना कोई वास्तविकता नहीं है, न ही कोई बाहरी चीज है या शून्यता।

6.97.6

वेदनामात्रसारत्वाद्यथा चित्सार उच्यते । द्रवत्वं सलिलस्येव चिदचित्त्वमकारणम् ॥ ६ ॥

vedanāmātrasāratvādyathā citsāra ucyate | dravatvaṃ salilasyeva cidacittvamakāraṇam || 6 ||

Just as the essence of consciousness is described as pure experience, similarly, the liquidity of water is without cause, being pure in nature.

जैसे चेतना का सार शुद्ध अनुभव के रूप में वर्णित किया जाता है, वैसे ही पानी की द्रवता कारणरहित है, शुद्ध स्वभाव के रूप में।

6.97.7

स्वात्मनीशमनन्तं तद्यथास्थितमवस्थितम्। प्रतियोगिव्यवच्छेदाभावतः सत्त्वभावयोः ॥ ७ ॥

svātmanīśamanantaṃ tadyathāsthitamavasthitam | pratiyogivyavacchēdābhāvataḥ sattvabhāvayoḥ || 7 ||

That infinite self-existent Lord remains as it is, due to the absence of distinction between existence and nature.

वह अनन्त स्वयंभू ईश्वर अपनी स्थिति में ही रहता है, अस्तित्व और स्वभाव के भेद के अभाव के कारण।

6.97.8

असत्त्वात्तेन परमे स्वच्छभावव्यवस्थता। यदि कारणतापत्तियोग्यं शान्तं पदं भवेत् ॥ ८ ॥

asattvāttena parame svacchabhāvavyavasthātā | yadi kāraṇatāpattiyogyaṃ śāntaṃ padaṃ bhavet || 8 ||

Due to the absence of existence, there is a state of pure nature in the supreme. If it were fit to be a cause, it would be a peaceful state.

अस्तित्व के अभाव के कारण, परम में शुद्ध स्वभाव की स्थिति है। यदि यह कारण बनने योग्य होता, तो यह एक शान्त अवस्था होती।

6.97.9

अनिङ्गितमनाभासमप्रतर्क्यं कथं भवेत्। अतो न कारणं नैव बीजं ब्रह्म कदाचन ॥ ९ ॥

aniṅgitamanābhāsamapratarkyaṃ kathaṃ bhavet | ato na kāraṇaṃ naiva bījaṃ brahma kadācana || 9 ||

How can that which is unindicated, unmanifested, and unthinkable be a cause? Therefore, Brahman is never a cause or a seed.

जो अनिर्देशित, अव्यक्त और अचिन्त्य है, वह कारण कैसे हो सकता है? इसलिए, ब्रह्म कभी कारण या बीज नहीं है।

6.97.10

कार्यस्य कस्यचिन्नाम तेन सर्गो न विद्यते। न चान्यथोपपत्तिर्हि सर्गस्यास्योपपद्यते ॥ १० ॥

kāryasya kasyacinnāma tena sargo na vidyate | na cānyathopapattirhi sargasyāsyopapadyate || 10 ||

There is no effect of any kind, hence there is no creation. Nor is there any other way for this creation to be possible.

किसी भी प्रकार का कार्य नहीं है, इसलिए सृष्टि नहीं है। न ही इस सृष्टि के लिए कोई अन्य तरीका संभव है।

6.97.11

चिन्मात्रकादृते तस्माज्जडसर्गो न विद्यते। यदिदं दृश्यते किंचित्तच्चिद्धनमिवोत्थितम् ॥ ११ ॥

cinmātrakādṛte tasmājjajasargo na vidyate | yadidaṃ dṛśyate kiṃcittacciddhanamivotthitam || 11 ||

Without the pure consciousness, there is no inert creation. Whatever is seen here, it appears as if it is made of consciousness.

बिना चिन्मात्र के, जड़ सृष्टि नहीं होती। जो कुछ भी यहाँ दिखाई देता है, वह चेतना से बना हुआ लगता है।

6.97.12

अहंभावजगच्छब्दशब्दार्थरसरञ्जनम्। कार्यं न कारणाभावात्पदार्थे तूपपद्यते ॥ १२ ॥

ahaṃbhāvajagacchabdāśabdārtharasarañjanam | kāryaṃ na kāraṇābhāvātpadārthe tūpapadyate || 12 ||

The ego-sense and the world-appearance, the sound, meaning, and essence do not arise from the absence of cause in the object.

अहंभाव और जगत की अवस्था, शब्द, अर्थ और रस कारण की अनुपस्थिति से वस्तु में उत्पन्न नहीं होते।

6.97.13

द्वित्वैक्याद्यात्मकं व्योमपुष्पवत्स्वानुभूतितः । वस्तु नाशैकनिष्ठत्वान्न वा ज्ञमुपपद्यते ॥ १३ ॥

dvitvaikyādyātmakaṃ vyomapuṣpavatsvānubhūtitḥ | vastu nāśaikaniṣṭhatvānna vā jñamupapadyate || 13 ||

The duality and unity, etc., are like flowers in the sky from one's own experience. The object does not exist due to its sole tendency towards destruction, nor does knowledge arise.

द्वैत और एकता आदि अपने अनुभव से आकाश में फूलों की तरह हैं। वस्तु अपने विनाश की एकमात्र प्रवृत्ति के कारण अस्तित्व नहीं रखती, न ही ज्ञान उत्पन्न होता है।

6.97.14

उपलम्भकरो नाशो जन्मनस्तस्य वा कुतः । अथ चैनं सदा सन्तं नित्यं नष्टं च वेत्सि वा ॥ १४ ॥

upalambhakaro nāśo janmanastasya vā kutaḥ | atha cainaṃ sadā santaṃ nityaṃ naṣṭaṃ ca vetsi vā || 14 ||

The perception of destruction, how can it be from birth? Therefore, do you know it as always existing, eternal, and yet destroyed?

विनाश की अनुभूति, जन्म से कैसे हो सकती है? इसलिए, क्या आप इसे हमेशा मौजूद, नित्य, और फिर भी नष्ट जानते हैं?

6.97.15

पदार्थौघं तदेवेत्थमेकरूपेऽपि किं व्यथा । उपलम्भस्तु यश्चायमेषा चित्तचमत्कृतिः ॥ १५ ॥

padārthaughaṃ tadevetthamekarūpe'pi kiṃ vyathā | upalambhastu yaścāyameṣā cittacamatkṛtiḥ || 15 ||

What is the distress in the uniform nature of the collection of objects? This perception is indeed the wonder of the mind.

वस्तुओं के समूह में एकरूप स्वभाव में क्या पीड़ा है? यह अनुभूति वास्तव में मन की चमत्कार है।

6.97.16

चित्तत्त्वमात्रसत्तास्ति द्वित्वमैक्यं च नास्त्यलम् । अतः पदार्थसत्ताया अभावे सति भूपते ॥ १६ ॥

cittattvamātrasattāsti dvitvamaikyaṃ ca nāstyalam | ataḥ padārthasattāyā abhāve sati bhūpate || 16 ||

The reality of the mind is the only existence; duality and unity do not exist. Therefore, O king, in the absence of the existence of objects.

चित्त की वास्तविकता ही एकमात्र अस्तित्व है; द्वैत और एकता नहीं है। इसलिए, हे राजन्, वस्तुओं के अस्तित्व के अभाव में।

6.97.17

असंभवाद्भावनस्य नाहंताभावनास्ति ते । अहंभावासंभवतश्चित्तमन्यत्किमुच्यते ॥ १७ ॥

asaṃbhavādbhāvanasya nāhaṃtābhāvanāsti te | ahaṃbhāvāsaṃbhavataścittamanyatkimucyate || 17 ||

Due to the impossibility of imagination, there is no sense of 'I' for you. What else can be said about the mind when the sense of 'I' is impossible?

कल्पना की असंभावना के कारण, तुम्हारे लिए 'मैं' का भाव नहीं है। 'मैं' के भाव की असंभावना में मन के बारे में और क्या कहा जा सकता है?

6.97.18

इति चित्तमहंरूपं नास्त्यतो न च भिन्नता । निर्वासनः शान्तमना मौनी परनभोमयः ॥ १८ ॥

iti cittamahaṃrūpaṃ nāstyato na ca bhinnatā | nirvāsanaḥ śāntamanā maunī paranabhomayaḥ || 18 ||

Thus, the mind in the form of 'I' does not exist, nor is there any difference. Free from desires, with a peaceful mind, silent, and full of the supreme sound.

इस प्रकार, 'मैं' के रूप में मन नहीं है, न ही कोई भेद है। इच्छाओं से मुक्त, शांत मन वाला, मौन, और परम ध्वनि से भरा हुआ।

6.97.19

सदेहो वा विदेहो वा भावस्थोऽप्यचलोपमः । संबन्धाच्छुद्धचिद्दृष्टेः पदार्थाभावसिद्धितः ॥ १९ ॥

sadeho vā videho vā bhāvastho'pyacalopamaḥ | saṃbandhācchuddhaciddṛṣṭeḥ padārthābhāvasiddhitaḥ || 19 ||

Whether with a body or without a body, remaining in the state of being, one is like the immovable. Due to the connection with pure consciousness, the absence of objects is established.

शरीर के साथ हो या शरीर के बिना, भाव स्थिति में रहते हुए, वह अचल के समान है। शुद्ध चेतना से संबंध के कारण, वस्तुओं के अभाव की सिद्धि होती है।

6.97.20

भावनाभावतश्चित्ते नास्त्येवाहमिति स्वयम् । एवं ब्रह्मेति वेदार्थभावनादनुभूतितः । चेतितार्थैकसत्यत्वाच्चिन्ता नाम क्व विद्यते ॥ २० ॥

bhāvanābhāvataścittte nāstyevāhamiti svayam | evaṃ brahmeti vedārthabhāvanādanubhūtitaḥ | cetitārthaikasatyatvāccintā nāma kv vidyate || 20 ||

Due to the absence of imagination in the mind, there is indeed no 'I' by itself. Thus, from the experience of the meaning of the Vedas as Brahman, where is the thought called 'cintā'?

मन में कल्पना के अभाव के कारण, 'मैं' स्वयं में वास्तव में नहीं है। इस प्रकार, वेदों के अर्थ को ब्रह्म के रूप में अनुभव करने से, 'चिंता' नामक विचार कहाँ है?

6.97.21

तेनासि निर्मलमकारणमादिमुक्तं तद्ब्रह्म शाश्वतमशेषमनेकमेकम् । शून्यं निरामयमसत्सदनादिमध्यं सर्वं जगच्चिदपि ब्रह्म यथास्थितं तत् ॥ २१ ॥

tenāsi nirmalamakāraṇamādimuktaṃ tadbrahma śāśvatamaśeṣamanekamekam | śūnyaṃ nirāmayamasatsadanādimadhyaṃ sarvaṃ jagaccidapi brahma yathāsthitaṃ tat || 21 ||

Therefore, you are the pure, causeless, primordial liberated one. That Brahman is eternal, all-pervading, one without a second, void, free from defects, neither existent nor non-existent, without beginning or end. The entire universe, along with consciousness, is Brahman as it is.

इसलिए, तुम शुद्ध, निर्विकार, आदिम, मुक्त हो। वह ब्रह्म सनातन, सर्वव्यापी, एक है जिसका कोई दूसरा नहीं है, शून्य, दोषरहित, न अस्तित्व है न अनस्तित्व, न आदि है न अंत। सम्पूर्ण ब्रह्मांड, चेतना सहित, ब्रह्म है जैसा कि वह है।

Chapter 98

6.98.1

शिखिध्वज उवाच । चित्तं नास्तीति मे बोधो यथा युक्त्या स्फुटं भवेत् । तामन्यामथवा ब्रूहि बुद्धं न निपुणं मया ॥ १ ॥

śikhidhvaja uvāca | cittaṃ nāstīti me bodho yathā yuktyā sphuṭaṃ bhavet | tāmanyāmathavā brūhi buddhaṃ na nipuṇaṃ mayā || 1 ||

Shikhidhvaja said: I understand that the mind does not exist. How can this be clearly established through reasoning? Or tell me another way, for I am not very wise.

शिखिध्वज ने कहा: मेरा बोध है कि चित्त नहीं है | यह युक्ति से स्पष्ट कैसे हो सकता है? या फिर कोई दूसरा तरीका बताओ, क्योंकि मैं बहुत बुद्धिमान नहीं हूँ।

6.98.2

कुम्भ उवाच । चित्तं नास्त्येव हे राजन्कदाचित्किंचन क्वचित् । यच्चेदं चित्तवद्भाति तद्ब्रह्माभिधमव्ययम् ॥ २ ॥

kumbha uvāca | cittaṃ nāstyeva he rājan kadācit kiñcana kvacit | yaccedaṃ cittavadbhāti tadbrahmābhidhamavyayam || 2 ||

Kumbha said: O King, indeed the mind does not exist at any time or place. That which appears as the mind is the imperishable Brahman.

कुम्भ ने कहा: हे राजन्, चित्त कभी और कहीं नहीं है | जो चित्त के रूप में प्रतीत होता है, वह अविनाशी ब्रह्म है।

6.98.3

अतोऽज्ञानात्मकं यत्तज्जगदेव न विद्यते । तत्राहंत्वंतदित्यादिकल्पिताः कलनाः कुतः ॥ ३ ॥

ato'jñānātmakaṃ yattajjagadeva na vidyate | tatrāhaṃtvaṃtadityādikalpitāḥ kalanāḥ kutaḥ || 3 ||

Therefore, that which is of the nature of ignorance, this world does not exist. How can the imagined concepts such as 'I', 'you', etc., arise there?

इसलिए, जो अज्ञान की प्रकृति का है, यह जगत नहीं है | वहाँ 'मैं', 'तू', आदि कल्पित कलनाएँ कैसे हो सकती हैं?

6.98.4

नास्त्येव जगदेवेदं यच्चेदं किंचनोदितम् । ब्रह्मैवास्तीह सकलं केन तद्बुध्यते कथम् ॥ ४ ॥

nāstyeva jagadevedaṃ yaccedaṃ kiñcanoditam | brahmaivāstīha sakalaṃ kena tadbudhyate katham || 4 ||

Indeed, this world does not exist at all. Whatever is said to exist is only Brahman. How can that be understood by whom?

वास्तव में, यह जगत कुछ भी नहीं है | जो कुछ भी कहा जाता है, वह केवल ब्रह्म है | वह किससे और कैसे समझा जा सकता है?

6.98.5

महाप्रलयसर्गादावेवेदं नोदितं जगत् । निर्देशस्त्विदमित्यत्र त्वद्बोधाय मया कृतः ॥ ५ ॥

mahāpralayasargādāvevedaṃ noditaṃ jagat | nirdeśastvidamityatra tvadbodhāya mayā kṛtaḥ || 5 ||

At the beginning of the great dissolution and creation, this world is not manifested. The description 'this' is made by me for your understanding.

महाप्रलय और सृष्टि के आरंभ में, यह जगत प्रकट नहीं होता | 'यह' शब्द का निर्देश मैंने आपके बोध के लिए किया है।

6.98.6

उपादानात्मकादीनां कारणानामभावतः । अकारणं च भावानामशेषाणां त्वसंभवात् ॥ ६ ॥

upādānātmakādīnāṃ kāraṇānāmabhāvataḥ | akāraṇaṃ ca bhāvānāmaśeṣāṇāṃ tvasaṃbhavāt || 6 ||

Due to the absence of causes such as the material cause, and because of the impossibility of the uncaused existence of all things.

उपादान कारणों के अभाव से और अकारण के असंभव के कारण सभी भावों का अस्तित्व संभव नहीं है।

6.98.7

एवमज्ञानबुद्ध्यात्म जगत्तस्मान्न विद्यते । तस्माद्यदिदमाभाति भासनं ब्रह्म नेतरत् ॥ ७ ॥

evamajñānabuddhyātmā jagattasmānna vidyate | tasmādyadidamābhāti bhāsanaṃ brahma netarat || 7 ||

Thus, the world, which is of the nature of ignorance and intellect, does not exist. Therefore, whatever appears is the shining of Brahman, not anything else.

इस प्रकार, जगत् जो अज्ञान और बुद्धि का स्वरूप है, वह अस्तित्व में नहीं है। इसलिए, जो कुछ भी दिखाई देता है, वह ब्रह्म का प्रकाश है, कुछ और नहीं।

6.98.8

अनाख्येऽनाकृतौ देवे करोतीदमिति त्वसत् । भाषितं नोपपत्त्यात्म न सत्यं नानुभूयते ॥ ८ ॥

anākhye'nākṛtau deve karotīdamiti tvasat | bhāṣitaṃ nopapattyātma na satyaṃ nānubhūyate || 8 ||

In the unmanifest and uncreated God, it is not true to say that He does this. It is said without logic, it is not true, and it is not experienced.

अव्यक्त और असृजित देव में, यह सत्य नहीं है कि वह यह करता है। यह बिना तर्क के कहा जाता है, यह सत्य नहीं है, और यह अनुभव नहीं होता।

6.98.9

अनाख्योऽप्रतिघः स्वात्मा निराकारो य ईश्वरः । स करोति जगदिति हासायैव वचोऽधियाम् ॥ ९ ॥

anākhyo'pratighaḥ svātmā nirākāro ya īśvaraḥ | sa karoti jagaditi hāsāyaiva vaco'dhīyām || 9 ||

The unmanifest, unopposed, self-existent, formless God, if He is said to create the world, it is only for the sake of laughter.

अव्यक्त, अप्रतिघ, स्वात्मा, निराकार ईश्वर, यदि वह जगत् को बनाता है, तो यह केवल हास्य के लिए है।

6.98.10

अनेनैव प्रयोगेण राजंश्चित्तं न विद्यते । जगदेव न सत्साधो कुतश्चित्तादि तद्गतम् ॥ १० ॥

anenaiva prayogeṇa rājaṃścittaṃ na vidyate | jagadeva na satsādho kutaścittādi tadgatam || 10 ||

By this very method, the mind does not exist. Indeed, the world does not exist. From where does the mind and other things come?

इसी तरह के प्रयोग से, मन अस्तित्व में नहीं है। वास्तव में, जगत् अस्तित्व में नहीं है। मन और अन्य चीजें कहाँ से आती हैं?

6.98.11

चेतो हि वासनामात्रं वास्ये तु सति वासना । वास्यं जगत्तदेवासदतश्चित्तास्तिता कुतः ॥ ११ ॥

ceto hi vāsanāmātraṃ vāsye tu sati vāsanā | vāsyaṃ jagattadevāsadataścittāstitā kutaḥ || 11 ||

The mind is indeed just a collection of impressions; when there is a dwelling, there is an impression. The world is that dwelling; hence, how can there be a state of mind?

मन तो बस संस्कारों का समूह है; जब कोई निवास होता है, तब संस्कार होता है। यह जगत वही निवास है; फिर मन की स्थिति कैसे हो सकती है?

6.98.12

यदिदं कचति ब्रह्म स्वयमात्मात्मनात्मनि । कृतं तस्यैव तेनैव चित्तमित्यादिनामकम् ॥ १२ ॥

yadidaṃ kacati brahma svayamātmātmanātmani | kṛtaṃ tasyeva tenaiva cittamityādināmakam || 12 ||

That which shines as the Self within the Self is Brahman itself. It is created by that very Brahman, and it is called the mind, etc.

जो आत्मा में ही आत्मा के रूप में चमकता है, वह ब्रह्म ही है। यह उसी ब्रह्म द्वारा बनाया गया है, और इसे मन आदि कहते हैं।

6.98.13

जगदृश्यमिदं वास्यं तदेवोत्पन्नमेव नो । कारणाभावतः पूर्वमेवातश्चित्तता कुतः ॥ १३ ॥

jagaddṛśyamidaṃ vāsyaṃ tadevotpannameva no | kāraṇābhāvataḥ pūrvamevātaścittatā kutaḥ || 13 ||

This visible world is a dwelling, and it is not created. Due to the absence of a cause, how can there be a state of mind?

यह दृश्य जगत एक निवास है, और यह उत्पन्न नहीं हुआ है। कारण की अनुपस्थिति के कारण, मन की स्थिति कैसे हो सकती है?

6.98.14

अतश्चिद्व्योममात्रात्म परमाकाशनामकम् । स्फारं वेदनमेवेदं कचत्यस्ति कुतो जगत् ॥ १४ ॥

ataścidvyomamātrātma paramākāśanāmakam | sphāraṃ vedanamevedaṃ kacatyasti kuto jagat || 14 ||

Therefore, the essence of pure consciousness is called the supreme space. This pulsation of awareness is the only reality; how can the world exist?

इसलिए, शुद्ध चेतना का सार परम आकाश कहलाता है। यह चेतना की स्पंदन ही एकमात्र वास्तविकता है; जगत कैसे अस्तित्व में हो सकता है?

6.98.15

यत्किंचित्परमाकाश ईषत्कचकचायते । चिदादर्शे न जातत्वान्न चित्तं नो जगत्क्रिया ॥ १५ ॥

yatkiṃcitparamākāśa īṣatkacakacāyate | cidādarśe na jātatvānna cittaṃ no jagatkriyā || 15 ||

Whatever little that shines in the supreme space is a mere reflection in the mirror of consciousness. It is not real; there is no mind, nor is there any activity in the world.

जो कुछ भी परम आकाश में थोड़ा चमकता है, वह चेतना के दर्पण में एक प्रतिबिंब मात्र है। यह वास्तविक नहीं है; न मन है, न जगत में कोई क्रिया है।

6.98.16

अहं त्वं जगदित्येषा प्रतिपत्तिर्न वास्तवी । मिथ्या स्वप्न इवाभाति नूनं मेऽशेषकारिणी ॥ १६ ॥

ahaṃ tvaṃ jagadityeṣā pratipattirna vāstavī | mithyā svapna ivābhāti nūnaṃ me'śeṣakāriṇī || 16 ||

The understanding that 'I am you, and you are the world' is not real. It appears to be false, like a dream, and is certainly the cause of all actions.

यह समझ कि 'मैं तुम हूँ और तुम संसार हो' वास्तविक नहीं है। यह झूठी लगती है, जैसे सपना, और यह निश्चित रूप से सभी कार्यों का कारण है।

6.98.17

वास्यस्य जगतोऽभावाद्यतो नास्त्येव वासना । अतस्तदात्मकं चित्तं कीदृशं क्व कुतः कथम् ॥ १७ ॥

vāsyasya jagato'bhāvādyato nāstyeva vāsanā | atastadātmakaṃ cittaṃ kīdṛśaṃ kva kutaḥ katham || 17 ||

Since the world does not exist, there is no desire for it. Therefore, what is the nature of the mind that is identified with it? Where, from where, and how does it arise?

क्योंकि संसार अस्तित्व में नहीं है, इसलिए उसके लिए कोई इच्छा नहीं है। तो, उससे पहचाने गए मन की प्रकृति क्या है? यह कहाँ, कहाँ से, और कैसे उत्पन्न होता है?

6.98.18

अप्रबुद्धैरवगतं चित्तं दृश्यमिदं जगत् । असच्चित्तं निराकारं पूर्वमुत्पन्नमेव नो ॥ १८ ॥

aprabuddhairavagataṃ cittaṃ dṛśyamidaṃ jagat | asaccittaṃ nirākāraṃ pūrvamutpannameva no || 18 ||

The mind, not understood by the unawakened, perceives this world. The mind is unreal and formless, and it has not arisen before.

अप्रबुद्धों द्वारा न समझा गया मन, इस संसार को देखता है। मन अवास्तविक और निराकार है, और यह पहले उत्पन्न नहीं हुआ है।

6.98.19

नोत्पन्नं कारणाभावात्सर्गादावेव सर्वदा । लोकशास्त्रानुभवतो न च दृश्यस्य वस्तुनः ॥ १९ ॥

notpannaṃ kāraṇābhāvātsargādāveva sarvadā | lokaśāstrānubhavato na ca dṛśyasya vastunaḥ || 19 ||

It has not arisen due to the absence of a cause, always from the beginning of creation. According to worldly knowledge, scriptures, and experience, it is not a real object.

इसका उदय कारण की अनुपस्थिति के कारण नहीं हुआ है, हमेशा से सृष्टि के आरंभ से। लोक ज्ञान, शास्त्र और अनुभव के अनुसार, यह एक वास्तविक वस्तु नहीं है।

6.98.20

अनादित्वमजत्वं वा स्थैर्यं वाप्युपपद्यते । साकारस्यास्य जगतः स्थूलस्य प्रतिघाकृतेः ॥ २० ॥

anāditvamajatvaṃ vā sthairyaṃ vāpyupapadyate | sākārasyāsya jagataḥ sthūlasya pratighākṛteḥ || 20 ||

The beginninglessness, unborn nature, or stability of this gross, tangible world is not logically tenable.

इस स्थूल, स्पर्शयोग्य संसार की अनादिता, अजन्मा प्रकृति, या स्थिरता तर्कसंगत नहीं है।

6.98.21

समस्तकारणाभावाल्लोकशास्त्रानुभूतिभिः । युज्यन्ते च निराकर्तुं न महाप्रलयादयः ॥ २१ ॥

samastakāraṇābhāvāllokashāstrānubhūtibhiḥ | yujyante cha nirākartuṃ na mahāpralayādayaḥ || 21 ||

Due to the absence of all causes, the experiences of the world and scriptures are not capable of negating the great dissolution and other such events.

समस्त कारणों के अभाव के कारण, लोक और शास्त्रों के अनुभव महाप्रलय और अन्य घटनाओं को निराकरित करने में असमर्थ हैं।

6.98.22

शास्त्रानुभववेदार्थसिद्धान्तैस्ते त्रयोऽपि वा । प्रलयाश्च न सन्तीति वक्त्युन्मत्तक एव च ॥ २२ ॥

shāstrānubhavavedārthasiddhāntaiste trayo'pi vā | pralayāścha na santīti vaktyunmattaka eva cha || 22 ||

Those who speak of the non-existence of dissolutions based on the doctrines of scriptures, experiences, and Vedic meanings are indeed mad.

जो शास्त्रों, अनुभवों और वेदों के अर्थों पर आधारित सिद्धांतों के आधार पर प्रलयों की अस्तित्वहीनता की बात करते हैं, वे वास्तव में पागल हैं।

6.98.23

लोकः शास्त्राणि वेदाश्च प्रमाणं यस्य नो मतेः । असद्भ्यो ह्यतिमूढः स सज्जनस्तं न संश्रयेत् ॥ २३ ॥

lokaḥ shāstrāṇi vedāścha pramāṇaṃ yasya no mateḥ | asadbhyo hyatimūḍhaḥ sa sajjanaḥ taṃ na saṃśrayet || 23 ||

One whose authority is the world, scriptures, and Vedas, and not one's own opinion, is indeed very foolish among the unrighteous. A wise person should not take refuge in such a one.

जिसका प्रमाण लोक, शास्त्र और वेद हैं, न कि अपनी राय, वह अधर्मियों में से बहुत मूढ़ है। एक समझदार व्यक्ति को ऐसे व्यक्ति का आश्रय नहीं लेना चाहिए।

6.98.24

न च सप्रतिघस्यास्य दृश्यस्याप्रतिघं क्वचित् । कारणं भवितुं शक्तं साकारस्य निराकृति ॥ २४ ॥

na cha sapratighasyāsya dṛśyasyāpratighaṃ kvachit | kāraṇaṃ bhavituṃ śaktaṃ sākārasya nirākṛti || 24 ||

And the cause of the visible, which has opposition, cannot become the formless anywhere.

और दृश्य का कारण, जिसमें विरोध है, कहीं भी निराकार नहीं हो सकता।

6.98.25

इत्थमालक्ष्यमाणं तत्तदेवं सततं मुने । न च नार्थक्रियाकारि भवेन्नेत्थमिदं जगत् ॥ २५ ॥

itthamālakṣyamāṇaṃ tattadevaṃ satataṃ mune | na cha nārthakriyākāri bhavennetthamidaṃ jagat || 25 ||

Thus, O sage, that which is perceived in this manner is always so, and it cannot be without purposeful action. This world would not be so if it were otherwise.

इस प्रकार, हे मुनि, जो इस तरह से देखा जाता है, वह हमेशा ऐसा ही है, और वह बिना उद्देश्यपूर्ण कार्य के नहीं हो सकता। यदि ऐसा नहीं होता, तो यह जगत ऐसा नहीं होता।

6.98.26

तस्मादिदं निरंशस्य चिद्व्योम्नोऽप्रतिघाकृतेः । निराकृतेरनन्तस्य पूर्वात्पूर्वनिरंशतः ॥ २६ ॥

tasmādidam niraṃśasya cidvyomno'pratighākṛteḥ| nirākṛteranantasya pūrvātpūrvaniraṃśataḥ || 26 ||

Therefore, this is the unlimited, unobstructed, and unbounded consciousness, which is free from any limitations and is eternal.

इसलिए, यह असीम, अवरोधरहित, और असीमित चेतना है, जो किसी भी सीमा से मुक्त है और अनन्त है।

6.98.27

ब्रह्मणः सर्वरूपस्य शान्तस्यात्तस्य यत्सम्म् । स्वत एवात्मकचनं सर्गप्रलयरूपधृक् ॥ २७ ॥

brahmaṇaḥ sarvarūpasya śāntasyāttasya yatsamam| svata evātmakaśanaṃ sargapralayarūpadhṛk || 27 ||

Brahman, which is the form of all, peaceful, and the cause of everything, is inherently the abode of the self, holding the forms of creation and dissolution.

ब्रह्म, जो सबका रूप, शान्त, और सबका कारण है, स्वयं आत्मा का निवास है, जो सृष्टि और प्रलय के रूप को धारण करता है।

6.98.28

स्वकं वपुश्च तेनैव ज्ञातं जगदिव क्षणात्। क्षणान्तरानुबुद्धं सद्ब्रह्मैवास्ते निरात्मनि ॥ २८ ॥

svakam vapuśca tenaiva jñātam jagadiva kṣaṇāt| kṣaṇāntarānubuddham sadbrahmaivāste nirātmani || 28 ||

By that very self, one's own form is known instantly, like the world. In the next moment, it is realized that only Brahman exists in the selfless state.

उसी आत्मा द्वारा, अपना रूप तत्काल ज्ञात होता है, जैसे संसार। अगले क्षण में, यह समझ में आता है कि केवल ब्रह्म ही निरात्म अवस्था में विद्यमान है।

6.98.29

ब्रह्मैवेदमतः सर्वं क्वचिन्न जगदादिधीः। क्वाचित्तादि क्वचित्तादि क्व द्वैतैक्यादिकल्पना ॥ २९ ॥

brahmaivedamataḥ sarvam kvacinna jagadādidhīḥ| kvācittādi kvacittādi kva dvaitaikyādikalpanā || 29 ||

Therefore, all this is only Brahman. There is no thought of the world or its beginning anywhere. Where is the concept of duality or unity?

इसलिए, यह सब केवल ब्रह्म ही है। कहीं भी संसार या उसके आरंभ का विचार नहीं है। द्वैत या एकता की कल्पना कहाँ है?

6.98.30

सर्वं निरालम्बमजं प्रशान्तमनादिरित्यात्म यथास्थितं सत्। इदं तु नानेव न चाप्यनाना यथास्थितं तिष्ठ सुकाष्ठमौनम्॥ ३० ॥

sarvam nirālambamajam praśāntamanādirityātma yathāsthitam sat| idam tu nāneva na cāpyanānā yathāsthitam tiṣṭha sukāṣṭhamounam || 30 ||

All this is without support, unborn, peaceful, and without beginning, as it is in the self. This is neither one nor many, as it is. Remain in blissful silence.

यह सब कुछ असहाय, अजन्मा, शांत, और अनादि है, जैसा कि आत्मा में है। यह न एक है न अनेक, जैसा कि है। आनंदमय मौन में रहो।

Chapter 99

6.99.1

शिखिध्वज उवाच । नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्महामुने । स्थितोऽस्मि गतसंदेहो विश्रान्तमतिरात्मवान् ॥ १ ॥

śikhidhvaja uvāca | naṣṭo mohaḥ smṛtirlabdhā tvatprasādānmahāmune | sthito'smi gatasaṃdeho viśrāntamatirātmavān || 1 ||

Shikhidhvaja said: My delusion is destroyed, and my memory is regained by your grace, O great sage. I am now established, free from doubts, and my mind is at peace, being self-possessed.

शिखिध्वज ने कहा: मेरा मोह नष्ट हो गया है, और मेरी स्मृति आपके प्रसाद से लब्ध हो गई है, हे महामुने। मैं अब स्थिर हूँ, संदेह से मुक्त हूँ, और मेरा मन शांत है, आत्मवान् हूँ।

6.99.2

ज्ञातज्ञेयो महामौनी तीर्णमायामहार्णवः । शान्तोऽहमनहंरूपो ज्ञः स्थितोऽस्मि निरामयः ॥ २ ॥

jñātajñeyo mahāmaunī tīrṇamāyāmahārṇavaḥ | śānto'hamanahaṃrūpo jñāḥ sthito'smi nirāmayaḥ || 2 ||

I am a knower of the known, a great silent one, having crossed the great ocean of illusion. I am peaceful, devoid of ego, a knower, established, and free from ailments.

मैं ज्ञाता हूँ, ज्ञान का ज्ञाता, महामौनी, माया के महान सागर को पार कर चुका हूँ। मैं शांत हूँ, अहंकार से मुक्त हूँ, ज्ञानी हूँ, स्थिर हूँ और रोगों से मुक्त हूँ।

6.99.3

अहो नु सुचिरं कालं प्रभ्रान्तोऽहं भवाम्बुधौ । स्थानमक्षयमक्षुब्धमधुना प्राप्तवानहम् ॥ ३ ॥

aho nu suciraṃ kālaṃ prabhrānto'haṃ bhavāmbudhau | sthānamakṣayamakṣubdhamadhunā prāptavānaham || 3 ||

Alas, for a very long time, I have been wandering in the ocean of existence. Now, I have attained an eternal, undisturbed state.

हाय, बहुत लंबे समय से, मैं अस्तित्व के सागर में भटक रहा हूँ। अब, मैंने एक अक्षय, अविचलित अवस्था प्राप्त कर ली है।

6.99.4

एवं स्थिते मुने नास्ति साहंतादिजगत्त्रयम् । मूर्खबुद्धमिदं भाति यत्तद्ब्रह्मेति वेद्म्यहम् ॥ ४ ॥

evaṃ sthite mune nāsti sāhaṃtādijagattrayam | mūrkhabuddhamidaṃ bhāti yattadbrahmeti vedmyaham || 4 ||

Thus, O sage, there is no world of ego and other dualities. This is a foolish notion; I know that which is Brahman.

इस प्रकार, हे मुनि, अहंकार और अन्य द्वैत का संसार नहीं है। यह एक मूर्खतापूर्ण धारणा है; मैं जानता हूँ कि ब्रह्म है।

6.99.5

कुम्भ उवाच । जगदेव न यत्रास्ते तत्राहंत्वंविभासनम् । इत्थमम्बरसंसारः क्व कुतः कीदृशः कथम् ॥ ५ ॥

kumbha uvāca | jagadeva na yatrāste tatrāhaṃtvaṃvibhāsanam | itthamambarasaṃsāraḥ kva kutaḥ kīdṛśaḥ katham || 5 ||

Kumbha said: Where the world does not exist, there is the manifestation of the ego. Thus, the worldly cycle is like the sky; where, how, and what kind of?

कुम्भ ने कहा: जहाँ संसार नहीं है, वहाँ अहंकार का प्रदर्शन होता है। इस प्रकार, संसारिक चक्र आकाश के समान है; कहाँ, कैसे और कैसा?

6.99.6

यथास्थितव्यवहृतिर्मौनी शान्तमना मुनिः । सौम्यार्णवोदरावर्तपरिस्पन्दवदास्व भो ॥ ६ ॥

yathāsthitavyavahṛtirmauṇī śāntamanā muniḥ | saumyārṇavodarāvartaparispandavadāsva bho || 6 ||

The sage, who is silent and calm, should remain in his natural state like the gentle waves of the ocean.

मुनि, जो मौन और शान्त है, समुद्र की मृदु लहरों की तरह अपने स्वाभाविक अवस्था में रहे।

6.99.7

ब्रह्मरूपमिदं शान्तमित्थमस्ति यथास्थितम् । अहं जगदिदं चेति शब्दार्थात्म नभोमयम् ॥ ७ ॥

brahmarūpamidaṃ śāntamitthamasti yathāsthitam | ahaṃ jagadidaṃ ceti śabdārthātma nabhomayam || 7 ||

This calm Brahman is in its natural state. I am this world, and this world is the essence of sound and meaning, pervading the sky.

यह शान्त ब्रह्म अपनी स्वाभाविक अवस्था में है। मैं यह जगत हूँ, और यह जगत शब्द और अर्थ का सार है, जो आकाश में व्याप्त है।

6.99.8

इदमाद्यन्तरहितं सर्वं संसारनामकम् । चिच्चमत्कृतिनामात्म नभः कचकचायते ॥ ८ ॥

idamādyantarahitaṃ sarvaṃ saṃsāranāmakam | ciccamatkṛtināmātma nabhaḥ kacakacāyate || 8 ||

This entire world, devoid of beginning and end, is called samsara. The self, which is the wonder of consciousness, shines in the sky.

यह पूरा जगत, जिसमें आदि और अन्त नहीं है, संसार कहलाता है। चेतना का आश्चर्य, आत्मा, आकाश में चमकता है।

6.99.9

संनिवेशदृशः शान्तौ तदस्ति कनकं यथा । जगदाद्यर्थसंशान्तौ ब्रह्मेदं विद्यते तथा ॥ ९ ॥

saṃniveśadṛśaḥ śāntau tadasti kanakaṃ yathā | jagadādyarthasaṃśāntau brahmedaṃ vidyate tathā || 9 ||

Just as gold exists in a calm state in its natural form, so does Brahman exist in the calm state of the world's essence.

जैसे सोना अपने स्वाभाविक रूप में शान्त अवस्था में होता है, वैसे ही ब्रह्म जगत के सार की शान्त अवस्था में है।

6.99.10

यथा स्वयंभूः संकल्पः स्वयं नाम तथैव हि । एतौ स्ववेदनायत्तौ बन्धमोक्षौ व्यवस्थितौ ॥ १० ॥

yathā svayaṃbhūḥ saṃkalpaḥ svayaṃ nāma tathaiva hi | etau svavedanāyattau bandhamokṣau vyavasthitau || 10 ||

Just as the self-born resolve is named as such, so are bondage and liberation dependent on self-realization.

जैसे स्वयंभू संकल्प को उसका नाम दिया जाता है, वैसे ही बन्धन और मोक्ष आत्म-ज्ञान पर निर्भर करते हैं।

6.99.11

अहमित्येव संकल्पो बन्धायातिविनाशिने । नाहमित्येव संकल्पो मोक्षाय विमलात्मने ॥ ११ ॥

ahamityeva saṃkalpo bandhāyātivināśine | nāhamityeva saṃkalpo mokṣāya vimalātmane || 11 ||

The resolve 'I am' leads to bondage which is highly destructive | The resolve 'I am not' leads to liberation for the pure self

अहम् इति एव संकल्प बंधाय अतिविनाशिने | न अहम् इति एव संकल्प मोक्षाय विमलात्मने

6.99.12

यद्बन्धमोक्षसंकल्पशब्दार्थानां सदा सताम्। स्वरूपवेदनं तत्सत्केवलत्वं च कथ्यते ॥ १२ ॥

yadbandhamokṣasaṃkalpaśabdārthānāṃ sadā satām | svarūpavedanaṃ tatsatkevalatvaṃ ca kathyate || 12 ||

The true nature of the words and meanings of bondage and liberation resolves is always known to the wise | That is called the pure and absolute truth

बंधन और मुक्ति के संकल्प, शब्द और अर्थों का स्वरूप सदा ज्ञानियों को ज्ञात होता है | वह शुद्ध और केवल सत्य कहलाता है

6.99.13

अनहंवेदनं सिद्धिरहंवेदनमापदः। सोऽहमेवानहमिति शुद्धबोधो भवात्मवान्॥ १३ ॥

anahaṃvedanaṃ siddhirahaṃvedanamāpadaḥ | so'hamevānahamiti śuddhabodho bhavātmavān || 13 ||

The realization 'I am not' is perfection | The realization 'I am' is calamity | Therefore, 'I am indeed not I' is the pure knowledge of the self

अनहंवेदन (मैं नहीं हूँ का बोध) सिद्धि (सिद्धि) है, अहंवेदन (मैं हूँ का बोध) आपद (आपदा) है | इसलिए, 'सोऽहमेव अनहम्' (मैं वास्तव में नहीं हूँ) शुद्ध बोध (शुद्ध ज्ञान) है

6.99.14

असंकल्पनमात्रेण सम्यग्ज्ञानोदयात्मना। संकल्पः क्षीयते सिद्ध्यै स्वयमेवासदात्मकः ॥ १४ ॥

asaṃkalpanamātreṇa samyagjñānodayātmanā | saṃkalpaḥ kṣīyate siddhyai svayamevāsadātmakaḥ || 14 ||

By mere absence of resolve, through the rise of true knowledge | The resolve dissolves for the sake of perfection, spontaneously becoming non-existent

केवल संकल्प की अनुपस्थिति से, सत्य ज्ञान के उदय के द्वारा | संकल्प सिद्धि के लिए स्वयं अस्तित्वहीन हो जाता है

6.99.15

अप्रतर्क्ये स्वरूपे हि नास्ति कारणता शिवे। कारणाभावतः कार्यपदार्थोऽपि न विद्यते ॥ १५ ॥

apratarkye svarūpe hi nāsti kāraṇatā śive | kāraṇābhāvataḥ kāryapadārtho'pi na vidyate || 15 ||

In the unthinkable true nature, there is no causality in Shiva | Due to the absence of cause, even the effect does not exist

अप्रतर्क्य (अचिंत्य) स्वरूप (स्वरूप) में, शिव (शिव) में कारणता (कारणता) नहीं है | कारण के अभाव (कारणाभावतः) से, कार्य (कार्य) भी नहीं है

6.99.16

पदार्थाभावसंसिद्धौ वेदनं नोपपद्यते। कारणाभावतो नित्यमहंभावस्य नोदयः ॥ १६ ॥

padārthābhāvasaṃsiddhau vedanaṃ nopapadyate | kāraṇābhāvato nityamahaṃbhāvasya nodayaḥ || 16 ||

In the absence of objects, perception does not arise | Without a cause, the sense of 'I' does not arise

पदार्थों के अभाव में वेदना नहीं उत्पन्न होती | कारण के अभाव में अहंभाव का नित्य उदय नहीं होता

6.99.17

अहंभावानुदयतः संसारः कस्य कीदृशः। संसाराभावतः सर्वं परमेवावशिष्यते ॥ १७ ॥

ahaṃbhāvānudayataḥ saṃsāraḥ kasya kīdṛśaḥ | saṃsārābhāvataḥ sarvaṃ parameva śiṣyate || 17 ||

From the non-arising of the sense of 'I', what kind of world is there? | In the absence of the world, everything remains in the Supreme

अहंभाव के न उदय से संसार कैसा है? | संसार के अभाव में सब कुछ परम में ही शेष रहता है

6.99.18

यदिदं भासते तत्सत्परमेवात्मनि स्थितम् । परं परे परापूर्णं सममेव विजृम्भते ॥ १८ ॥

yadidaṃ bhāsate tatsatparamevātmani sthitam | paraṃ pare parāpūrṇaṃ samameva vijṛmbhate || 18 ||

Whatever shines here, that is the Supreme Truth established in the Self | The Supreme, in the Supreme, fully complete, shines equally

जो कुछ भी यहाँ चमकता है, वह आत्मा में स्थापित परम सत्य है | परम, परम में, पूर्णतः पूर्ण, समान रूप से चमकता है

6.99.19

तेन निस्तिमितं सर्वं शिलाकीर्णमिवाचलम् । विद्धि रश्मिमयाकारमिव ब्रह्म जगत्स्थितम् ॥ १९ ॥

tena nistimitaṃ sarvaṃ śilākīrṇamivācalam | viddhi raśmimayākāramiva brahma jagatsthitam || 19 ||

Therefore, know that everything is pervaded by the Supreme, like a mountain filled with stones | Know that Brahman is present in the world like the form of rays

इसलिए, जानो कि सब कुछ परम से व्याप्त है, जैसे पत्थरों से भरा हुआ पर्वत | जानो कि ब्रह्म दुनिया में किरणों के रूप में उपस्थित है

6.99.20

पुरः संकल्पके नष्टे संकल्पनगरस्य यत् । रूपं तद्विद्धि जगतः खादच्छं सदसन्मयम् ॥ २० ॥

puraḥ saṃkalpake naṣṭe saṃkalpanagarasya yat | rūpaṃ tadviddhi jagataḥ khādacchaṃ sadasanmayam || 20 ||

Know that the form of the world is like the form of a city of imagination when the imagination is destroyed | It is like space, both real and unreal

जानो कि जब कल्पना नष्ट हो जाती है, तो कल्पना के नगर का रूप संसार का रूप होता है | यह आकाश के समान है, जो सत् और असत् दोनों है

6.99.21

छायापुरुषवत्स्पन्दि शान्तं निर्मननं जगत्जगच्छब्दार्थरहितं यः पश्यति स पश्यति ॥ २१ ॥

chāyāpuruṣavatspandi śāntaṃ nirmananaṃ jagatjagacchabdārtharahitaṃ yaḥ paśyati sa paśyati || 21 ||

He who sees the world as calm, free from thought, devoid of the meaning of words and objects, like a reflection in a mirror, truly sees.

जो व्यक्ति दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह, शान्त, विचाररहित, शब्द और अर्थ से रहित जगत् को देखता है, वही सचमुच देखता है।

6.99.22

रूपालोकमनस्कारा नीरसागमभावना । सम्यग्ज्ञानावबोधस्य निर्वाणं वै विदुर्बुधाः ॥ २२ ॥

rūpālokamanaskārā nīrasāgamabhāvanā| samyajjñānāvabodhasya nirvāṇaṃ vai vidurbudhāḥ || 22 ||

The wise know that the cessation of the perception of forms, the world, and mental impressions, along with the absence of attachment, is the true realization of knowledge.

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि रूपों, संसार, और मानसिक संस्कारों की प्रतीति का अन्त, आसक्ति की अनुपस्थिति के साथ, ज्ञान की सच्ची प्राप्ति है।

6.99.23

यथास्ति वातो निःस्पन्दो यथास्ति खगतोपि वा । यथा हेमासंनिवेशमस्ति ब्रह्म जगत्तथा ॥ २३ ॥

yathāsti vāto niḥspando yathāsti khagatopi vā| yathā hemāsaṃniveśamasti brahma jagattathā || 23 ||

Just as the wind is motionless, just as the sky is motionless, so too is Brahman motionless in the world.

जैसे वायु निश्चल है, जैसे आकाश निश्चल है, वैसे ही ब्रह्म संसार में निश्चल है।

6.99.24

नीरसा असदाभासा जगत्प्रत्ययकारिणः। रूपालोकमनस्काराः सन्तीमे ब्रह्मरूपिणः ॥ २४ ॥

nīrasā asadābhāsā jagatpratyayakāriṇaḥ| rūpālokamanaskārāḥ santīme brahmarūpiṇaḥ || 24 ||

These forms, perceptions, and mental impressions, which are tasteless and appear as unreal, cause the notion of the world and are of the nature of Brahman.

ये रूप, प्रतीतियाँ, और मानसिक संस्कार, जो नीरस और असत् प्रतीत होते हैं, संसार की धारणा का कारण बनते हैं और ब्रह्म के स्वरूप के हैं।

6.99.25

ऊर्मिशब्दार्थरहितं याद्दगम्बु बहून्यपि । सर्गशब्दार्थरहितं तादृग्ब्रह्म निसर्गवत् ॥ २५ ॥

ūrmiśabdārtharahitaṃ yādṛgambu bahūnyapi| sargaśabdārtharahitaṃ tādṛgbrahma nisargavat || 25 ||

Just as water, devoid of the meaning of the word 'wave,' remains the same despite many waves, so too is Brahman devoid of the meaning of the word 'creation.'

जैसे पानी, जो 'तरंग' शब्द के अर्थ से रहित है, बहुत सी तरंगों के बावजूद वैसा ही बना रहता है, वैसे ही ब्रह्म, जो 'सृष्टि' शब्द के अर्थ से रहित है, वैसा ही बना रहता है।

6.99.26

सर्ग एव परं ब्रह्म परं ब्रह्मैव सर्गदृक् । सर्गशब्दार्थरहितो वाक्यार्थस्त्वेष शाश्वतः ॥ २६ ॥

sarga eva paraṃ brahma paraṃ brahmaiva sargadṛk | sargaśabdārtharahito vākyārthastveṣa śāśvataḥ || 26 ||

Creation itself is the supreme Brahman, and the supreme Brahman is the witness of creation. The meaning of the word 'creation' is devoid of meaning; this eternal meaning of the sentence is.

सृष्टि स्वयं ही परम ब्रह्म है, और परम ब्रह्म सृष्टि का साक्षी है। 'सृष्टि' शब्द का अर्थ अर्थहीन है; यह सनातन वाक्यार्थ है।

6.99.27

ब्रह्मशब्दार्थसंपत्तौ सर्गशब्दार्थधीः कृता । सर्गशब्दार्थसंसिद्धौ ब्रह्मशब्दार्थधीः कृता ॥ २७ ॥

brahmaśabdārthasaṃpattau sargaśabdārthadhīḥ kṛtā | sargaśabdārthasaṃsiddhau brahmaśabdārthadhīḥ kṛtā || 27 ||

When the meaning of the word 'Brahman' is realized, the understanding of the word 'creation' is made. When the meaning of the word 'creation' is established, the understanding of the word 'Brahman' is made.

जब 'ब्रह्म' शब्द का अर्थ समझ में आता है, तब 'सृष्टि' शब्द का अर्थ समझ में आता है। जब 'सृष्टि' शब्द का अर्थ स्थापित होता है, तब 'ब्रह्म' शब्द का अर्थ समझ में आता है।

6.99.28

समस्तशब्दशब्दार्थभावनाभावनोदयम् । शुद्धं तिष्ठति चिद्व्योम ब्रह्मशब्देन कथ्यते ॥ २८ ॥

samastśabdaśabdārthabhāvanābhāvanodayam | śuddhaṃ tiṣṭhati cidvyoma brahmaśabdena kathyate || 28 ||

The rise of the contemplation and non-contemplation of the meaning of all words and their meanings, the pure consciousness, the sky of consciousness, is described by the word 'Brahman'.

सभी शब्दों और उनके अर्थों की भावना और अभावना का उदय, शुद्ध चेतना, चेतना का आकाश, 'ब्रह्म' शब्द से वर्णित है।

6.99.29

सम्यग्दर्शनसंसिद्धावुभयोरप्यवेदने । यच्छिष्टमजरं शान्तं ततो वाग्विनिवर्तते ॥ २९ ॥

samyagdarśanasansiddhāvubhayorapyavedane | yacchiṣṭamajaraṃ śāntaṃ tato vāgvinivartate || 29 ||

In the realization of correct vision, when both are known, that which remains, eternal and peaceful, from that speech returns.

सही दृष्टि की सिद्धि में, जब दोनों ज्ञात होते हैं, जो शेष है, सनातन और शांत, उससे वाणी लौटती है।

6.99.30

संशान्तसर्वात्मकवेदनौघमस्तीदमेकात्मकस्वस्वरूपम् । यथास्थितं सर्वजगत्स्वरूपं पाषाणरूपं च परं ज्ञरूपम् ॥ ३० ॥

saṃśāntasarvātmakavedanaughamastīdamekātmakasvasvarūpam | yathāsthitaṃ sarvajagatsvarūpaṃ pāṣāṇarūpaṃ ca paraṃ jñarūpam || 30 ||

This peaceful, all-encompassing knowledge is the essence of the self. As it is, the nature of the entire universe is like a stone, and it is the supreme knowledge.

यह शांत, सर्वव्यापी ज्ञान आत्मा का सार है। जैसा कि है, सम्पूर्ण ब्रह्मांड का स्वरूप पत्थर के समान है, और यह परम ज्ञान है।

Chapter 100

6.100.1

शिखिध्वज उवाच एवं चेत्तन्महाबुद्धे यादृशं कारणं परम् कार्यं तादृशमेवेदं जगदित्येव वेद्म्यहम् ॥ १ ॥

śikhidhvaja uvāca evaṃ cet tanmahābuddhe yādṛśaṃ kāraṇaṃ param kāryaṃ tādṛśamevedaṃ jagadityeva vedmyaham || 1 ||

Shikhidhvaja said: If this is so, O great sage, the supreme cause is of such a nature, and the effect is also of such a nature, thus I understand this world.

शिखिध्वज ने कहा: यदि ऐसा है, हे महान बुद्धिमान, तो परम कारण ऐसा है, और कार्य भी ऐसा ही है, इसलिए मैं इस जगत को ऐसा ही समझता हूँ।

6.100.2

कुम्भ उवाच यत्र कारणता तस्य कार्यं तदुपपद्यते यन्न कारणमेवादौ तस्मात्कार्यं कुतो भवेत् ॥ २ ॥

kumbha uvāca yatra kāraṇatā tasya kāryaṃ tadupapadyate yanna kāraṇamevādau tasmātkāryaṃ kuto bhavet || 2 ||

Kumbha said: Where there is causality, the effect follows from that. If there is no cause in the beginning, how can there be an effect?

कुम्भ ने कहा: जहाँ कारणता है, वहाँ कार्य उससे उत्पन्न होता है। यदि शुरुआत में कारण ही नहीं है, तो कार्य कैसे हो सकता है?

6.100.3

नेहास्ति कारणं किंचिन्न च कार्यं कदाचन विद्यमानमिदं सर्वं सर्वं शान्तमजं जगत् ॥ ३ ॥

nehaasti kāraṇaṃ kiṃcinna ca kāryaṃ kadācana vidyamānamidaṃ sarvaṃ sarvaṃ śāntamajaṃ jagat || 3 ||

There is no cause whatsoever, nor is there any effect at any time. All this is existing, all is peaceful and unborn.

यहाँ कोई कारण नहीं है, न ही कभी कोई कार्य है। यह सब कुछ विद्यमान है, सब शान्त और अजन्मा है।

6.100.4

जायते कारणात्कार्यं यत्तत्कारणवद्भवेत् यन्न जायत एवेह तस्मिन्सदृशता कुतः ॥ ४ ॥

jāyate kāraṇātkāryaṃ yattatkāraṇavadbhavet yanna jāyate eveha tasminsadṛśatā kutaḥ || 4 ||

That which is born from a cause should be like the cause. That which is not born here, how can it have similarity?

जो कारण से उत्पन्न होता है, वह कारण के समान होना चाहिए। जो यहाँ उत्पन्न नहीं होता, उसमें समानता कैसे हो सकती है?

6.100.5

बीजमेव न यस्यास्ति तत्कथं वद जायते अप्रतर्क्यमनाख्यं च यत्तस्य क्वेव बीजता ॥ ५ ॥

bījameva na yasyāsti tatkathaṃ vada jāyate apratarkyamanākhyaṃ ca yattasya kveva bījatā || 5 ||

How can that which has no seed be said to be born? That which is unthinkable and unnameable, where is its seed?

जिसका कोई बीज नहीं है, उसे कैसे उत्पन्न कहा जा सकता है? जो अचिन्त्य और अनाम है, उसका बीज कहाँ है?

6.100.6

देशकालवशात्सर्वे हेतुमन्तः प्रमाणगाः । अकर्तृब्रह्मविषयः प्रमा कारणयोः कथम् ॥ ६ ॥

deśakālavśātsarve hetumantaḥ pramāṇagāḥ | akartṛbrahmaviṣayaḥ pramā kāraṇayoḥ katham || 6 ||

Due to the influence of time and place, all reasons are validated by evidence. How can knowledge be the cause of the non-doer Brahman?

देश और काल के प्रभाव से सभी कारण प्रमाणों द्वारा सिद्ध होते हैं। अकर्ता ब्रह्म का विषय ज्ञान कारणों का कैसे हो सकता है?

6.100.7

अकर्तृकर्मकरणे नास्ति कारणता शिवे । तस्मात्तत्कारणं नास्ति जगच्छब्दार्थवेदनम् ॥ ७ ॥

akartṛkarmakaraṇe nāsti kāraṇatā śive | tasmāttatkāraṇaṃ nāsti jagacchabdārthavedanam || 7 ||

In the action of the non-doer, there is no causality in Shiva. Therefore, there is no cause for the knowledge of the meaning of the world.

अकर्ता के कर्म में शिव में कोई कारणता नहीं है। इसलिए, विश्व के अर्थ के ज्ञान का कोई कारण नहीं है।

6.100.8

ब्रह्मैव त्वं स्वरूपं सद्यत्स्थितं धारयस्व तत् । असम्यग्दर्शिविषयं तदेव जगदाचितम् ॥ ८ ॥

brahmaiva tvaṃ svarūpaṃ sadyatsthitaṃ dhārayasva tat | asamygadarśiviṣayaṃ tadeva jagadācitam || 8 ||

You are Brahman itself, the eternal form. Hold that which is established in the present. That alone is the world, the object of incorrect perception.

तुम स्वयं ब्रह्म हो, सनातन रूप। वही धारण करो जो वर्तमान में स्थापित है। वही विश्व है, गलत दृष्टि का विषय।

6.100.9

चिन्मात्रमजरं शान्तं यदेकं तत्प्रमीयते । तेनैवायं जगद्ब्रह्म सच्छान्तं बुद्ध्यते वपुः ॥ ९ ॥

cinmātramajaraṃ śāntaṃ yadekaṃ tatpramīyate | tenaivāyaṃ jagadbrahma sacchāntaṃ buddhyate vapuḥ || 9 ||

That which is pure consciousness, ageless, and peaceful is known as the one. By that alone, this world is understood as the peaceful Brahman.

जो शुद्ध चेतना, अजर, और शान्त है, वही एक के रूप में जाना जाता है। उसी के द्वारा, यह विश्व शान्त ब्रह्म के रूप में समझा जाता है।

6.100.10

अन्यथैव च यो भावश्चेतसः पृथिवीपते । स एव नाशः कथितः स्वानुभूतश्च पण्डितैः ॥ १० ॥

anyathaiva ca yo bhāvaścetasaḥ pṛthivīpate | sa eva nāśaḥ kathitaḥ svānubhūtaśca paṇḍitaiḥ || 10 ||

O ruler of the earth, any other state of mind is said to be destruction, as experienced by the wise.

हे पृथ्वी के स्वामी, कोई भी अन्य मानसिक स्थिति विनाश कहलाती है, जैसा कि विद्वानों द्वारा अनुभव किया गया है।

6.100.11

चित्तं नाशस्वभावं तद्विद्धि नाशात्मकं नृप । क्षणनाशो यतः कल्पचित्तशब्देन कथ्यते ॥ ११ ॥

cittaṃ nāśasvabhāvaṃ tadviddhi nāśātmakaṃ nṛpa | kṣaṇanāśo yataḥ kalpacittasabdena kathyate || 11 ||

Know that the mind is inherently perishable, O King. Because it is momentarily destroyed, it is called 'kalpacitta'.

हे राजन्, मन को नाशवान स्वभाव वाला समझो। क्योंकि वह क्षणभंगुर है, इसलिए उसे 'कल्पचित्त' कहा जाता है।

6.100.12

असंकल्पनमात्रेण सम्यग्ज्ञानोदयात्मना । संकल्पः क्षीयते सिद्ध्यै स्वयमेवासदात्मकः ॥ १२ ॥

asaṃkalpanamātreṇa samyagjñānodayātmanā | saṃkalpaḥ kṣīyate siddhyai svayamevāsadātmakaḥ || 12 ||

By the mere absence of imagination, through the rise of true knowledge, the imagination itself diminishes for the sake of perfection, being inherently non-existent.

केवल कल्पना के अभाव से, सत्य ज्ञान के उदय से, कल्पना स्वयं ही सिद्धि के लिए क्षीण हो जाती है, क्योंकि वह स्वभाव से असत् है।

6.100.13

नाम्नैवाङ्गीकृताभावं यदि विश्वं हि कथ्यते । विद्यमानं कथं तत्स्यान्ननु तामरसेक्षण ॥ १३ ॥

nāmnaivāṅgīkṛtābhāvaṃ yadi viśvaṃ hi kathyate | vidyamānaṃ kathaṃ tatsyānnanu tāmarasekṣaṇa || 13 ||

If the world is said to be non-existent by mere name, how can it exist, O lotus-eyed one?

यदि विश्व को केवल नाम से असत् कहा जाता है, तो हे कमलनयन, वह कैसे विद्यमान हो सकता है?

6.100.14

हस्तावुत्क्षिप्य यो ब्रूते शद्रोऽस्मीति भृशं गिरा । कथं स विप्रो भवति विप्रत्वं त्वस्य कीदृशम् ॥ १४ ॥

hastāvutkṣipya yo brūte śadro'smīti bhṛśaṃ girā | kathaṃ sa vipro bhavati vipratvaṃ tvasyakīdṛśam || 14 ||

One who raises his hands and loudly proclaims, 'I am a Shudra,' how can he become a Brahmin? What kind of Brahminhood is his?

जो हाथ उठाकर जोर से कहता है, 'मैं शूद्र हूँ,' वह ब्राह्मण कैसे हो सकता है? उसका ब्राह्मणत्व कैसा है?

6.100.15

विवृत्तधातुरत्युच्चैर्मृतोऽस्मीति विरौति यः । मृतिमेवागतं विद्धि जीवनं तस्य संभ्रम ॥ १५ ॥

vivṛttadhāturatyuccairmṛto'smīti virauti yaḥ | mṛtimevāgataṃ viddhi jīvanaṃ tasya saṃbharama || 15 ||

One who loudly proclaims with open elements, 'I am dead,' know that he has indeed met death; his life is confusion.

जो खुले तत्वों से जोर से कहता है, 'मैं मर गया हूँ,' उसे समझो कि वह वास्तव में मृत्यु को प्राप्त हो गया है; उसका जीवन भ्रम है।

6.100.16

भ्रमाकृति यदस्तीह दृश्यतेऽलातचक्रवत् । मृगतृष्णाद्विचन्द्रादिबालवेतालकादिवत् ॥ १६ ॥

bhramākṛti yadastīha dṛśyate'lātacakravat | mṛgatṛṣṇādvicandrādibālavetālakādivat || 16 ||

If there is an illusion here, it is seen like a spinning firebrand, like a mirage, a double moon, or a ghost in a child's imagination.

यदि यहाँ कोई भ्रम है, तो वह घूमते हुए आग के चक्र की तरह, मृगतृष्णा, दो चंद्रमा, या बच्चों की कल्पना में भूत की तरह दिखाई देता है।

6.100.17

तत्कथं किल नाम स्यात्सत्यं श्रमभरात्मकम् । अज्ञानभ्रान्तिरेवान्तश्चित्तमित्येव कथ्यते ॥ १७ ॥

tatkathaṃ kila nāma syātsatyaṃ śramabharātmakam | ajñānabhrāntirevāntaścittamityeva kathyate || 17 ||

How can that which is merely the essence of fatigue be considered true? It is said that ignorance and delusion are indeed the mind.

वह जो केवल थकान का सार है, उसे सत्य कैसे माना जा सकता है? यह कहा जाता है कि अज्ञान और भ्रान्ति ही मन है।

6.100.18

अज्ञानमुच्यते चित्तमसत्सदिव संस्थितम् । असंवेदनमज्ञानं ज्ञानं संवेदनं भवेत् ॥ १८ ॥

ajñānamucyate cittamasatsadiva saṃsthitam | asaṃvedanamajñānaṃ jñānaṃ saṃvedanaṃ bhavet || 18 ||

Ignorance is said to be the mind, existing as both real and unreal. Non-awareness is ignorance, and awareness is knowledge.

अज्ञान मन कहलाता है, जो वास्तविक और अवास्तविक दोनों के रूप में मौजूद है। अनुभूति का अभाव अज्ञान है, और अनुभूति ज्ञान है।

6.100.19

अज्ञानसत्त्वसंवित्तेर्ज्ञानात्संवेदनात्क्षयः । जलज्ञानं मुधा भ्रान्तिः साधो मरुमरीचिषु ॥ १९ ॥

ajñānasattvasaṃvittērjñānātsaṃvēdanātkṣayaḥ | jalajñānaṃ mudhā bhrāntiḥ sādho marumarīciṣu || 19 ||

From the awareness of the reality of ignorance, knowledge arises, and delusion diminishes. O wise one, the delusion of water in the desert is indeed foolish.

अज्ञान की वास्तविकता की अनुभूति से ज्ञान उत्पन्न होता है, और भ्रान्ति कम हो जाती है। हे बुद्धिमान, रेगिस्तान में पानी की भ्रान्ति वास्तव में मूर्खतापूर्ण है।

6.100.20

नैतज्जलमिति ज्ञानात्संवित्तेः प्रविलीयते । इदं चित्तमिति प्रौढं यदज्ञानमलं हृदि ॥ २० ॥

naitajjalamiti jñānātsaṃvittēḥ pravilīyatē | idaṃ cittamiti prauḍhaṃ yadajñānamalaṃ hṛdi || 20 ||

With the knowledge that 'this is not water,' the awareness dissolves. This mature understanding that 'this is the mind' is the stain of ignorance in the heart.

यह ज्ञान कि 'यह पानी नहीं है,' अनुभूति को घुला देता है। यह परिपक्व समझ कि 'यह मन है,' हृदय में अज्ञान का दाग है।

6.100.21

नास्ति चित्तमिति ज्ञानात्तत्समूलं विनश्यति । यथा रज्ज्वां भुजङ्गत्वमज्ञानभ्रमसंभवम् ॥ २१ ॥

nāsti cittamiti jñānāttatsamūlaṃ vinaśyati | yathā rajjvāṃ bhujaṅgatvamajñānabhramasambhavam || 21 ||

When it is known that there is no mind, its root is destroyed. Just as the illusion of a snake in a rope arises from ignorance.

जब यह ज्ञान होता है कि मन नहीं है, तब उसकी जड़ नष्ट हो जाती है | जैसे रस्सी में साँप का भ्रम अज्ञान से उत्पन्न होता है ||

6.100.22

न सर्पोऽयमिति ज्ञानाद्हृदि रूढात्प्रणश्यति । तथात्मनि मनोभूतमज्ञानभ्रमसंभवम् ॥ २२ ॥

na sarpo'yamiti jñānādhṛdi rūḍhāt praṇaśyati | tathātmani manobhūtam ajñānabhramasambhavam || 22 ||

When it is known that this is not a snake, the illusion firmly rooted in the heart is destroyed. Similarly, the illusion of the mind arises from ignorance in the self.

जब यह ज्ञान होता है कि यह साँप नहीं है, तब हृदय में गहराई से बैठा भ्रम नष्ट हो जाता है | उसी प्रकार, आत्मा में मन का भ्रम अज्ञान से उत्पन्न होता है ||

6.100.23

चित्तं नास्तीति विज्ञानाद्हृदि रूढाद्विनश्यति । चित्तं मनोऽहमित्यन्तर्यावदज्ञानसंभवम् ॥ २३ ॥

cittaṃ nāstīti vijñānādhṛdi rūḍhād vinaśyati | cittaṃ mano'hamityantaryāvad ajñānasambhavam || 23 ||

When it is known that there is no mind, the illusion firmly rooted in the heart is destroyed. The mind, which is the sense of 'I', arises from ignorance.

जब यह ज्ञान होता है कि मन नहीं है, तब हृदय में गहराई से बैठा भ्रम नष्ट हो जाता है | मन, जो कि 'मैं' का भाव है, अज्ञान से उत्पन्न होता है ||

6.100.24

न चित्तमस्ति नो चैवमहंकारादिसंयुतम्। किंचिदेव जगत्यस्मिन्संविदेकान्तनिर्मला ॥ २४ ॥

na cittamasti no caivamahaṅkārādisaṃyutam | kiṃcideva jagatyasmin saṃvidekāntanirmalā || 24 ||

There is no mind, nor is there anything associated with ego. In this world, there is only pure, non-dual awareness.

मन नहीं है, न ही अहंकार से जुड़ा कुछ भी है | इस जगत में केवल शुद्ध, अद्वैत चेतना है ||

6.100.25

तया संकल्पचित्तादि कृतमासीद्विमूढया। अद्यासंकल्पतः सर्वं परित्यक्तं प्रबुद्धया ॥ २५ ॥

tayā saṃkalpacittādi kṛtamāsīdvimūḍhayā | adyāsaṃkalpataḥ sarvaṃ parityaktaṃ prabuddhayā || 25 ||

By that ignorance, the mind and its thoughts were created. Now, with awakening, everything has been abandoned without any thought.

उस अज्ञान से मन और उसके विचार उत्पन्न हुए | अब, जागरूकता के साथ, सब कुछ बिना किसी विचार के त्याग दिया गया है ||

6.100.26

संकल्पेन यदा याति त्वसंकल्पेन गच्छति। पवनेन महाबाहो ज्वालाजालमिवानले ॥ २६ ॥

saṃkalpena yadā yāti tvasaṃkalpena gacchati | pavanena mahābāho jvālājālamivānale || 26 ||

When one moves with intention, and when one moves without intention, it is like the wind moving through a blazing fire.

जब कोई संकल्प से चलता है, और जब संकल्प के बिना चलता है, तो यह हवा के समान है जो ज्वालामुखी से गुजरती है।

6.100.27

आत्मतत्त्वैकघनया ततया ब्रह्मसत्तया। जगत्सर्वमिति व्याप्तं समुद्र इव वारिणा ॥ २७ ॥

ātmatattvaikaghanayā tatayā brahmasattayā | jagatsarvamiti vyāptaṃ samudra iva vāriṇā || 27 ||

The entire universe is pervaded by the single essence of the Self, which is the reality of Brahman, just as the ocean is pervaded by water.

पूरा ब्रह्मांड आत्मा के एकमात्र तत्त्व से व्याप्त है, जो ब्रह्म की सत्ता है, जैसे समुद्र पानी से व्याप्त है।

6.100.28

नाहमस्मि न चान्योस्ति न त्वं नैते न चित्तकम्। नेन्द्रियाणि न चाकाशमात्मा त्वेकोऽस्ति निर्मलः ॥ २८ ॥

nāhamasmi na cānyostī na tvaṃ naite na cittakam | nendriyāṇi na cākāśamātmā tveko'sti nirmalaḥ || 28 ||

I am not, nor is there anyone else, nor you, nor these, nor the mind, nor the senses, nor space. The Self alone exists, pure.

मैं नहीं हूँ, न ही कोई और है, न तुम, न ये, न मन, न इंद्रियाँ, न आकाश। आत्मा ही एकमात्र है, निर्मल।

6.100.29

घटाद्याकाररूपेण स एवायं विलोक्यते। इदं चित्तमयं चाहमिति कैव कुकल्पना ॥ २९ ॥

ghaṭādyākārarūpeṇa sa evāyaṃ vilokyate | idaṃ cittamayaṃ cāhamiti kaiva kukalpanā || 29 ||

The same Self is seen in various forms such as pots, etc. How can there be the false notion that 'this is the mind and I am this'?

वही आत्मा घड़े आदि के रूप में देखा जाता है। कैसे यह झूठी धारणा हो सकती है कि 'यह मन है और मैं यह हूँ'?

6.100.30

न जायते न म्रियते किंचिदस्मिञ्जगत्त्रये । केवलोऽयं चिदुल्लासः सदसद्भावनात्मना ॥ ३० ॥

na jāyate na mriyate kiṃcidasmijjagattraye | kevalo'yaṃ cidullāsaḥ sadāsadbhāvanātmanā || 30 ||

Nothing is born, nothing dies in this triple world. This is merely the play of consciousness, manifesting as both existence and non-existence.

इस त्रिलोक में कुछ भी जन्म नहीं लेता, कुछ भी मरता नहीं। यह केवल चेतना का खेल है, जो अस्तित्व और अनस्तित्व दोनों के रूप में प्रकट होता है।

6.100.31

सर्वमात्मा परंब्रह्म सकृत्प्रकटमाततम् । द्वित्वैकत्वे न विद्येते न भ्रान्तिर्न च संभ्रमः ॥ ३१ ॥

sarvamātmā paraṃbrahma sakṛtprakaṭamātatam | dvitvaikatve na vidyete na bhrāntirna ca saṃbhramaḥ || 31 ||

The Supreme Self, which is the ultimate Brahman, is manifested once and for all. There is no duality or unity, no delusion or confusion.

परम आत्मा, जो परम ब्रह्म है, एक बार प्रकट हो जाता है। द्वैत या अद्वैत नहीं है, न भ्रम है न संभ्रम है।

6.100.32

सर्वेन्द्रियगणाकारे सन्नेवासि सखे ततः । न दह्यसे महाबुद्धे न च क्वचन लिप्यसे ॥ ३२ ॥

sarvendriyagaṇākāre sannevāsi sakhe tataḥ | na dahyase mahābuddhe na ca kvacana lipyase || 32 ||

You are present in all the senses, O friend, therefore you are not burned, O great wise one, nor are you tainted anywhere.

आप सभी इंद्रियों में विद्यमान हैं, हे मित्र, इसलिए आप जलते नहीं हैं, हे महान बुद्धिमान, न ही आप कहीं भी लिप्त होते हैं।

6.100.33

न ते विनश्यति सखे न च किंचिद्विवर्धते । निर्मलाकाशरूपस्य कैवल्यानन्तरूपिणः ॥ ३३ ॥

na te vinaśyati sakhe na ca kiṃcidvivardhate | nirmalākāśarūpasya kaivalyānantarūpiṇaḥ || 33 ||

O friend, you do not perish, nor do you increase in any way. You are of the nature of pure space, the form of solitude and infinity.

हे मित्र, आप नष्ट नहीं होते हैं, न ही किसी भी तरह से बढ़ते हैं। आप शुद्ध आकाश के स्वभाव के हैं, एकांत और अनंत के रूप में।

6.100.34

इच्छानिच्छात्मिके शक्ती येतरापि त्वमेव च । न ह्यंशुव्यतिरेकेण शशाङ्क उपलभ्यते ॥ ३४ ॥

icchānicchātmike śaktī yetarāpi tvameva ca | na hyaṃśuvyatirekeṇa śaśāṅka upalabhyate || 34 ||

You are the power of both desire and non-desire, and all other powers as well. The moon is not perceived without its rays.

आप इच्छा और अनिच्छा की शक्ति हैं, और सभी अन्य शक्तियाँ भी। चंद्रमा अपनी किरणों के बिना देखा नहीं जाता।

6.100.35

अजमजरमनाद्यजस्वभावं सकृदमलं विलसत्सदैकरूपम्। विगलितकलनं कलाख्यलीलं सदुदितमाद्यमजं तदात्मतत्त्वम्॥ ३५॥

ajamajaramanādyajasvabhāvaṃ sakṛdamalaṃ vilasatsadaikarūpam | vigalitakalanaṃ kalākhyalīlaṃ saduditamādyamajaṃ tadātmatattvam || 35 ||

The eternal, unborn, ageless, and beginningless nature, once pure, always shining in one form. The dissolved time, known as play, always arising, the primordial, unborn, that is the essence of the Self.

अनादि, अजन्मा, अजर, और स्वभाव से अज, एक बार शुद्ध, हमेशा एक रूप में चमकता है। समय का विलय, जिसे लीला कहते हैं, हमेशा उदित, आदिम, अजन्मा, वह आत्मा का तत्त्व है।

Chapter 101

6.101.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति कुम्भवचो राजा भावयंस्तदकृत्रिमम् । स्वयमात्मपदे तस्मिन्क्षणं परिणतोऽभवत् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti kumbhavaco rājā bhāvayanstadakṛtrimam | svayamātmapade tasminkṣaṇaṃ pariṇato'bhavat || 1 ||

Shri Vasistha said: Thus, King Kumbha, meditating on that unartificial state, himself became established in the state of the Self in an instant.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, राजा कुम्भ, उस अकृत्रिम अवस्था पर ध्यान लगाते हुए, स्वयं एक क्षण में आत्मपद में स्थित हो गया।

6.101.2

बभूवामीलितमनोलोचनः शान्तवाङ्मुनिः । शिलातलादिवोत्कीर्णो निस्पन्दावयवाकृतिः ॥ २ ॥

babhūvāmīlitamano locanaḥ śāntavāṅmuniḥ | śilātalādivotkīrṇo nispandāvayavākṛtiḥ || 2 ||

He became with closed eyes and silent speech, like a stone, with motionless limbs.

उसकी आँखें बंद हो गई और वह मौन हो गया, जैसे कि एक पत्थर, जिसके अंग निश्चल हो गए।

6.101.3

ततो मुहूर्तमात्रेण प्रबुद्धं स्फुरितेक्षणम् । तमुवाच महाबाहो चूडाला कुम्भरूपिणी ॥ ३ ॥

tato muhūrtamātreṇa prabuddhaṃ sphuritekṣaṇam | tamuvāca mahābāho cūḍālā kumbharūpiṇī || 3 ||

Then, after a moment, with awakened and sparkling eyes, Chudala in the form of Kumbha spoke to him.

तब, एक क्षण के बाद, जागृत और चमकती आँखों वाले, चूडाला ने कुम्भ के रूप में उससे कहा।

6.101.4

कुम्भ उवाच । कच्चिदस्मिन्पदे स्फारे शुद्धे विततनिर्मले । सुतल्पे निर्विकल्पानां सुखं विश्रान्तवानसि ॥ ४ ॥

kumbha uvāca | kaccidasminpade sphāre śuddhe vitatanirmale | sutalpe nirvikalpānāṃ sukhaṃ viśrāntavānasi || 4 ||

Kumbha said: I hope you have rested comfortably in this pure, expansive, and stainless state, which is the bed of the non-dualists.

कुम्भ ने कहा: मुझे आशा है कि आपने इस शुद्ध, विस्तृत और निर्मल अवस्था में, जो अद्वैतवादियों का शयन है, सुखपूर्वक विश्राम किया है।

6.101.5

कच्चिदन्तः प्रबुद्धोसि कच्चिद्भ्रान्तिस्त्वयोज्झिता । कच्चिज्ज्ञेयं परिज्ञातं दृष्टं द्रष्टव्यमेव वा ॥ ५ ॥

kaccidantaḥ prabuddhosī kaccidbhrāntistvayojjhitā | kaccijjñeyaṃ parijñātaṃ dṛṣṭaṃ draṣṭavyameva vā || 5 ||

I hope you have awakened within, I hope your delusion has been removed, I hope you have known what is to be known, seen what is to be seen.

मुझे आशा है कि आप अंतर्मुखी हो गए हैं, मुझे आशा है कि आपकी भ्रांति दूर हो गई है, मुझे आशा है कि आपने जो जानना था वह जान लिया है, जो देखना था वह देख लिया है।

6.101.6

शिखिध्वज उवाच । भगवंस्त्वत्प्रसादेन महाविभवभूमिका । महती पदवी दृष्टा सर्वस्योर्ध्वं स्थिता मया ॥ ६ ॥

śikhidhvaja uvāca | bhagavaṃstvatprasādena mahāvibhavabhūmikā | mahatī padavī dṛṣṭā sarvasyaordhvaṃ sthitā mayā || 6 ||

Shikhidhvaja said: By your grace, O Lord, I have seen the great realm of immense prosperity, which is situated above all.

शिखिध्वज ने कहा: हे भगवान्, आपकी कृपा से मैंने महान समृद्धि की भूमि देखी है, जो सबसे ऊपर स्थित है।

6.101.7

सतां विदितवेद्यानामहो बत महात्मनाम् । अपूर्वैकामृतमयः सङ्गः सारफलप्रदः ॥ ७ ॥

satāṃ viditavedyānāmaho bata mahātmanām | apūrvaikāmṛtamayaḥ saṅgaḥ sāraphalapradaḥ || 7 ||

Oh, what a wonderful association with the great souls who know the knowable! This unique, nectar-like association yields the essence of the fruit.

ओह, कितना अद्भुत है उन महात्माओं का संग, जो ज्ञेय को जानते हैं! यह अनोखा, अमृतमय संग फल की सार देता है।

6.101.8

जन्मनापि मया लब्धं यन्नाम न महामृतम् । तदद्य त्वत्समासङ्गात्तेनैवासादितं स्वयम् ॥ ८ ॥

janmanāpi mayā labdhaṃ yannāma na mahāmṛtam | tadadya tvatsamāsaṅgāttenaivāsāditaṃ svayam || 8 ||

Even by birth, I have not attained the great nectar-like name. But today, by association with you, I have attained it myself.

जन्म से भी मैंने महान अमृतमय नाम नहीं प्राप्त किया। लेकिन आज, आपके संग से, मैंने स्वयं उसे प्राप्त कर लिया है।

6.101.9

अनन्तमाद्यममृतं चैतत्कमललोचन । कथं नासादितमभूत्पूर्वमात्मपदं मया ॥ ९ ॥

anantamādyamamṛtaṃ caitatkamalalocana | kathaṃ nāsāditamabhūtpūrvamātmapadaṃ mayā || 9 ||

O lotus-eyed one, how did I not attain the eternal, primordial nectar, the self-realization, earlier?

हे कमललोचन, मैंने पहले सनातन, आदिकालीन अमृत, आत्म-साक्षात्कार कैसे नहीं प्राप्त किया?

6.101.10

कुम्भ उवाच । मनस्युपशमं याते त्यक्तभोगैषणे स्थिते । कषायपाके निर्वृत्ते सर्वेन्द्रियगणस्य च ॥ १० ॥

kumbha uvāca | manasyupaśamaṃ yāte tyaktabhogaiṣaṇe sthite | kaṣāyapāke nirvṛtte sarvendriyagaṇasya ca || 10 ||

Kumbha said: When the mind is calmed, the desire for enjoyment is abandoned, and the impurities of all the senses are purified,

कुम्भ ने कहा: जब मन शांत हो जाता है, भोग की इच्छा त्याग दी जाती है, और सभी इंद्रियों के दोष शुद्ध हो जाते हैं,

6.101.11

यान्ति चेतसि विश्रान्तिं विमला देशिकोक्तयः । यथा सितांशुके शुद्धे बिन्दवः कुङ्कुमाम्भसः ॥ ११ ॥

yānti cetasi viśrāntiṃ vimalā deśikoktayaḥ| yathā sitāṃśuke śuddhe bindavaḥ kuṅkumāmbhasaḥ || 11 ||

The pure teachings of the spiritual master bring peace to the mind, just as drops of saffron water settle on a pure white cloth.

गुरु के शुद्ध उपदेश मन को शान्ति देते हैं, जैसे केसर के पानी की बूंदें एक शुद्ध सफेद कपड़े पर बैठती हैं।

6.101.12

कषायाणामनन्तानां संभृतानां शरीरकैः। स्ववासनास्वरूपाणामद्य पाकस्तवोदितः ॥ १२ ॥

kaṣāyāṇāmanantānāṃ saṃbhṛtānāṃ śarīrakaiḥ| svavāsanāsvarūpāṇāmadya pākastavoditaḥ || 12 ||

Today, the maturation of your countless accumulated impurities, which are the essence of your own tendencies, has been declared by you.

आज, आपके अनगिनत एकत्रित दोषों का परिपक्व होना, जो आपकी अपनी वासनाओं का स्वरूप हैं, आपने घोषित किया है।

6.101.13

देहान्मलानि सर्वाणि कालेन कमलेक्षण। साधो वृक्षात्फलानीव पाकेन विगलन्त्यधः ॥ १३ ॥

dehānmālāni sarvāṇi kālena kamalekṣaṇa| sādho vṛkṣātphalānīva pākena vigalantyadhaḥ || 13 ||

O lotus-eyed one, with time, all impurities fall from the body, just as ripe fruits fall from a tree.

हे कमलनयन, समय के साथ, सभी दोष शरीर से गिर जाते हैं, जैसे पके हुए फल पेड़ से गिरते हैं।

6.101.14

वासनात्मसु यातेषु मलेषु विमलं सखे। यद्वक्ति गुरुरन्तस्तद्विशतीषुर्यथा विसे ॥ १४ ॥

vāsanātmasu yāteṣu maleṣu vimalaṃ sakhe| yadvakti gururantastadvīśatīṣuryathā vise || 14 ||

O friend, when the impurities that are the essence of one's tendencies are gone, the pure teachings of the spiritual master enter the heart like an arrow.

हे मित्र, जब अपनी वासनाओं के स्वरूप वाले दोष चले जाते हैं, तब गुरु के शुद्ध उपदेश हृदय में तीर की तरह प्रवेश करते हैं।

6.101.15

कषायपाके संपन्ने त्वं मयाद्य विबोधितः। तेनाद्यैव तवाज्ञानक्षयो जातो महामते ॥ १५ ॥

kaṣāyapāke saṃpanne tvaṃ mayādya vibodhitaḥ| tenādyaiva tavājñānakṣayo jāto mahāmate || 15 ||

O wise one, with the maturation of impurities, you have been awakened by me today. Therefore, your ignorance has been destroyed today itself.

हे महामति, दोषों के परिपक्व होने पर, आज मैंने आपको जागृत किया है। इसलिए, आज ही आपकी अज्ञानता नष्ट हो गई है।

6.101.16

अद्य पक्वकषायस्त्वमद्यैव ज्ञानसंकथाम्।अद्येह सोपदेशस्त्वमद्यैवासि प्रबुद्धवान्॥ १६ ॥

adya pakvakaṣāyastvamadyaiva jñānasankathām|adyeha sopadeśastvamadyaivāsi prabuddhavān|| 16 ||

Today, you have become mature in spiritual knowledge|Today itself, you have received the instruction|Today, you have awakened

आज आप आत्मज्ञान में परिपक्व हो गए हैं|आज ही आपको उपदेश मिला है|आज आप जागृत हो गए हैं

6.101.17

शुभाशुभानां सर्वेषां कर्मणामद्य संक्षयः।सत्सङ्गव्यपदेशेन तव निष्पत्तिमागतः॥ १७ ॥

śubhāśubhānāṃ sarveṣāṃ karmaṇāmadya saṃkṣayaḥ|satsaṅgavyapadeśena tava niṣpattimāgataḥ|| 17 ||

Today, all your good and bad deeds have been destroyed|Through the instruction of good company, you have attained perfection

आज आपके सभी शुभ और अशुभ कर्मों का नाश हो गया है|सत्संग के उपदेश से आप सिद्धि को प्राप्त हो गए हैं

6.101.18

यावदस्य दिनस्यैष पूर्वभागो महीपते ।तावच्चेतोहंममेति तवाज्ञानं बभूव ह ॥ १८ ॥

yāvadasya dinasya eṣa pūrvabhāgo mahīpate|tāvacchetohaṃmmameti tavājñānaṃ babhūva ha|| 18 ||

As long as this part of the day has passed, O king|So long has your ignorance persisted, thinking 'I am the mind'

जितना दिन का यह भाग बीत गया है, हे राजन्|उतनी ही देर तक आपका अज्ञान चला है, यह सोचते हुए कि 'मैं मन हूँ'

6.101.19

इदानीं मद्वचोबोधाच्चेतसि क्षयमागते ।हृदयात्संपरित्यक्ते संप्रबुद्धोऽसि भूपते ॥ १९ ॥

idānīṃ madvacobodhācchetsi kṣayamāgate|hṛdayātsaṃparityakte saṃprabuddho'si bhūpate|| 19 ||

Now, through the awakening of my words, your mind has been destroyed|Having abandoned the heart, you have awakened, O king

अब, मेरे शब्दों के बोध से, आपका मन नष्ट हो गया है|हृदय को छोड़कर, आप जागृत हो गए हैं, हे राजन्

6.101.20

हृदि यावन्मनःसत्ता तावदज्ञानसस्थितिः ।चित्ते चित्ततया त्यक्ते ज्ञानस्याभ्युदयो भवेत् ॥ २० ॥

hṛdi yāvanmanaḥsattā tāvadajñānasasthitiḥ|citte cittatayā tyakte jñānasyābhyudayo bhavet|| 20 ||

As long as the mind exists in the heart, there is the state of ignorance|When the mind is abandoned through the state of the mind, the rise of knowledge occurs

जब तक मन हृदय में रहता है, तब तक अज्ञान की अवस्था होती है|जब मन को मन की अवस्था से छोड़ दिया जाता है, तब ज्ञान की उत्पत्ति होती है

6.101.21

द्वित्वैकत्वदृशौ चित्तं तदेवाज्ञानमुच्यते । एतयोर्यो लयो दृष्टेस्तज्ज्ञानं सा परा गतिः ॥ २१ ॥

dvitvaikatvadṛśau cittaṃ tadevājñānamucyate | etayoryo layo dṛṣṭestajjñānaṃ sā parā gatiḥ || 21 ||

The mind that sees duality and unity is called ignorance. The dissolution of these two is knowledge, that is the supreme goal.

जो मन द्वैत और अद्वैत देखता है, वही अज्ञान कहलाता है। इन दोनों का लय होना ही ज्ञान है, वही परम गति है।

6.101.22

प्रबुद्धोऽसि विमुक्तोऽसि त्यक्तं चित्तं त्वया नृप । सदसत्तामयत्वं हि त्वया त्यक्तमसत्पदम् ॥ २२ ॥

prabuddho'si vimukto'si tyaktaṃ cittaṃ tvayā nṛpa | sadasattāmayatvaṃ hi tvayā tyaktamasatpadam || 22 ||

You are awakened, you are liberated, you have abandoned the mind, O king. Indeed, you have abandoned the state of existence and non-existence.

तुम जाग्रत हो, तुम मुक्त हो, तुमने मन को त्याग दिया है, हे राजा। निश्चय ही, तुमने अस्तित्व और अनस्तित्व की अवस्था को त्याग दिया है।

6.101.23

वीतशोको निरायासो निःसङ्गोऽनन्य आत्मवान् । महोदयो मुनिर्मौनी स्वरूपे तिष्ठ निर्मले ॥ २३ ॥

vītaśoko nirāyāso niḥsaṅgo'nanya ātmavān | mahodayo munirmauṇī svarūpe tiṣṭha nirmale || 23 ||

Free from sorrow, free from effort, free from attachment, devoted to the self alone, of great elevation, a sage, silent, abide in your pure nature.

शोकरहित, परिश्रमरहित, आसक्तिरहित, आत्मनिष्ठ, महान उत्थान वाले, मुनि, मौनी, अपने शुद्ध स्वरूप में स्थित रहो।

6.101.24

शिखिध्वज उवाच । एवं हि भगवन् जन्तोर्मूर्खस्यैवास्ति चित्तभूः । प्रबुद्धस्य न तज्ज्ञस्य चित्तं नाम किल प्रभो ॥ २४ ॥

śikhidhvaja uvāca | evaṃ hi bhagavan jantormūrkhasyaivāsti cittabhūḥ | prabuddhasya na tajjñasya cittaṃ nāma kila prabho || 24 ||

Shikhidhvaja said: Indeed, O Lord, only a fool has a mind. An awakened one, a knower, does not have a mind, O Lord.

शिखिध्वज ने कहा: हे भगवन्, निश्चय ही, केवल मूर्ख के पास ही मन होता है। जाग्रत व्यक्ति, ज्ञानी के पास मन नहीं होता, हे प्रभो।

6.101.25

जीवन्मुक्तास्तदेते हि विहरन्ति कथं वद । अविद्यमानमनसो युष्मदाद्यास्तथा नराः ॥ २५ ॥

jīvanmuktāstadete hi viharanti kathaṃ vada | avidyamānamanaso yuṣmadādyāstathā narāḥ || 25 ||

How do these liberated ones live? Tell me, O Lord, how do these people, who have no mind, exist?

ये जीवन्मुक्त लोग कैसे रहते हैं? हे प्रभो, बताओ, ये मनहीन लोग कैसे रहते हैं?

6.101.26

इति मे कथयाशेषमन्यैः स्ववचनांशुभिः । हार्दं तमो मे निपुणमेवंप्रायैः प्रमार्जय ॥ २६ ॥

iti me kathayāśeṣamanyaiḥ svavacanāṃśubhiḥ | hārdaṃ tamo me nipuṇamevaṃprāyaiḥ pramārjaya || 26 ||

Thus, please narrate to me in detail with your auspicious words. Remove the darkness of ignorance from my heart with your skillful words.

इस प्रकार मेरे लिए अपने शुभ शब्दों से विस्तार से कथा कहो। अपने कुशल शब्दों से मेरे हृदय के अज्ञान का अंधकार दूर करो।

6.101.27

कुम्भ उवाच । यथा वदसि तत्त्वज्ञ तत्तथैव हि नान्यथा । चित्तं हि जीवन्मुक्तानां नास्त्यङ्कुर इवाश्मनाम् ॥ २७ ॥

kumbha uvāca | yathā vadasi tattvajña tattathaiva hi nānyathā | cittaṃ hi jīvanmuktānāṃ nāstyankura ivāśmanām || 27 ||

Kumbha said: O knower of truth, whatever you say is indeed true and not otherwise. The mind of the liberated ones is like a seed that does not sprout in a stone.

कुम्भ ने कहा: हे तत्त्वज्ञ, जो कुछ तुम कहते हो वह सच है और कुछ और नहीं। जीवन्मुक्तों का मन पत्थर में अंकुरित न होने वाले बीज की तरह है।

6.101.28

पुनर्जननयोग्या या वासना घनवासना । सा प्रोक्ता चित्तशब्देन न सा तज्ज्ञस्य विद्यते ॥ २८ ॥

punarjananayogyā yā vāsanā ghanavāsanā | sā proktā cittaśabdena na sā tajjñasya vidyate || 28 ||

The tendency that is capable of causing rebirth is called a strong impression. That does not exist in the knower of the truth.

पुनर्जन्म के योग्य वह वासना घनी वासना है। वह चित्त शब्द से कही जाती है, परंतु वह तत्त्वज्ञ में नहीं होती।

6.101.29

यया वासनया तज्ज्ञा विहरन्तीह कर्मसु । तां त्वं सत्त्वाभिधां विद्धि पुनर्जननवर्जिताम् ॥ २९ ॥

yayā vāsanayā tajjñā viharantīha karmasu | tāṃ tvaṃ sattvābhidhāṃ viddhi punarjananavarjitām || 29 ||

The impression by which the knower of the truth engages in actions in this world is known as sattva. It is devoid of rebirth.

जिस वासना से तत्त्वज्ञ इस लोक में कर्मों में विहार करता है, उसे सत्त्व कहते हैं। वह पुनर्जन्म से रहित है।

6.101.30

जीवन्मुक्ता महात्मानः सत्त्वस्थाः संयतेन्द्रियाः । विहरन्ति गतासङ्गं न चित्तस्थाः कदाचन ॥ ३० ॥

jīvanmuktā mahātmānaḥ sattvasthāḥ saṃyatendriyāḥ | viharanti gatāsaṅgaṃ na cittasthāḥ kadācana || 30 ||

The liberated great souls, who are established in sattva and have controlled their senses, engage in actions without attachment. They are never in the state of mind.

जीवन्मुक्त महात्मा, जो सत्त्व में स्थित हैं और जिनके इंद्रियाँ संयमित हैं, आसक्ति से रहित होकर कर्मों में विहार करते हैं। वे कभी भी मन की स्थिति में नहीं होते।

6.101.31

मूढं चित्तं चित्तमाहुः प्रबुद्धं सत्त्वमुच्यते । अप्रबुद्धा हि चित्तस्थाः सत्त्वस्थास्तु महाधियः ॥ ३१ ॥

mūḍhaṃ cittaṃ cittamāhuḥ prabuddhaṃ sattvamucyate | aprabuddhā hi cittasthāḥ sattvasthāstu mahādhiyaḥ || 31 ||

The ignorant mind is called the mind, the awakened is called the intellect. Those who are in the mind are ignorant, those who are in the intellect are wise.

मूढ़ मन को मन कहते हैं, प्रबुद्ध को सत्त्व कहते हैं। जो मन में हैं वे अज्ञानी हैं, जो सत्त्व में हैं वे बुद्धिमान हैं।

6.101.32

भूयः प्रजायते चित्तं सत्त्वं भूयो न जायते । अप्रबुद्धस्य बन्धोस्ति न प्रबुद्धस्य भूपते ॥ ३२ ॥

bhūyaḥ prajāyate cittaṃ sattvaṃ bhūyo na jāyate | aprabuddhasya bandhosti na prabuddhasya bhūpate || 32 ||

The mind is born again and again, the intellect is not born again. There is bondage for the ignorant, not for the awakened, O king.

मन बार-बार जन्म लेता है, बुद्धि फिर से जन्म नहीं लेती। अज्ञानी के लिए बंधन है, ज्ञानी के लिए नहीं, हे राजन्।

6.101.33

सत्ववानसि संजातो महात्यागी स्थितो भवान् । अशेषेण त्वया चित्तं त्यक्तमद्येति वेद्म्यहम् ॥ ३३ ॥

sattvavānasi saṃjāto mahātyāgī sthito bhavān | aśeṣeṇa tvayā cittaṃ tyaktamadyeti vedmyaham || 33 ||

You are born with intellect, a great renouncer, established in yourself. I know that you have completely abandoned the mind today.

आप बुद्धि के साथ जन्मे हैं, एक महान त्यागी, स्वयं में स्थित। मैं जानता हूँ कि आपने आज मन को पूर्णतः त्याग दिया है।

6.101.34

समस्तवासनोन्मुक्तो राजन्नद्यैव राजसे । आकाशसाम्यमायातं मन्ये तव मुने मनः ॥ ३४ ॥

samastavāsanounmukto rājannadyaiva rājase | ākāśasāmyamāyātaṃ manye tava mune manaḥ || 34 ||

O king, freed from all desires today, you rule. I believe your mind has attained the state of the sky, O sage.

हे राजन्, आज सभी वासनाओं से मुक्त होकर आप राज करते हैं। मैं मानता हूँ कि आपका मन आकाश की अवस्था को प्राप्त हो गया है, हे मुनि।

6.101.35

शमं प्राप्तोऽसि परमं सिद्धः समसमस्थितिः । अयं हि स महात्यागः सर्वं यत्तत्समुज्झितम् ॥ ३५ ॥

śamaṃ prāpto'si paramaṃ siddhaḥ samasamasthitiḥ | ayaṃ hi sa mahātyāgaḥ sarvaṃ yattatsamujjhitam || 35 ||

You have attained the supreme peace, accomplished, established in equanimity. This indeed is the great renunciation, where everything is abandoned.

आपने परम शांति प्राप्त कर ली है, सिद्ध, समानता में स्थित। यही वह महान त्याग है, जहाँ सब कुछ त्याग दिया गया है।

6.101.36

स्वर्गापवर्गवित्तादि तपोदानफलाद्यपि । प्रबुद्धमेधया साधो धिया परमबोधया ॥ ३६ ॥

svargāpavargavittādi tapodānaphalādyapi | prabuddhamedhayā sādho dhiyā paramabodhayā || 36 ||

Even the fruits of heaven, liberation, wealth, austerity, and charity can be understood by the wise with a pure intellect and supreme wisdom.

स्वर्ग, मोक्ष, धन, तप, और दान के फल भी बुद्धिमान और शुद्ध बुद्धि वाले साधु द्वारा परम ज्ञान से समझे जा सकते हैं।

6.101.37

तपो नाम कियन्मात्रदुःखक्षयकरं भवेत् । क्षयातिशयनिर्मुक्तं यत्सुखं समतामयम् ॥ ३७ ॥

tapo nāma kiyamātraduḥkhakṣayakaraṃ bhavet | kṣayātiśayanirmuktaṃ yatsukhaṃ samatāmayam || 37 ||

Austerity is that which removes even the slightest suffering. The happiness that is free from decay and excess is equanimous.

तप वह है जो सबसे छोटे दुःख को भी दूर करता है। जो सुख क्षय और अतिशय से मुक्त है, वह समतामय है।

6.101.38

तत्सत्तद्वस्तु तत्किंचिन्न तु स्वर्गादि भङ्गुरम् । भावाभावैरुपारूढं स्थिताधिगतवेदनम् ॥ ३८ ॥

tatsattadvastu tatkiñcinna tu svargādi bhaṅguram | bhāvābhāvairupārūḍhaṃ sthitādhigatavedanam || 38 ||

That which is true reality is not the transient heaven and so forth. It is established in existence and non-existence, steady and realized knowledge.

जो सत्य वस्तु है, वह अस्थायी स्वर्ग आदि नहीं है। वह अस्तित्व और अनस्तित्व में स्थापित है, स्थिर और प्राप्त ज्ञान है।

6.101.39

स्वर्गो नाम किमानन्दः सोपि संदेहसंस्थितः । अप्राप्तस्वात्मसंसिद्धेः क्रियाकाण्डः शुभो भवेत् ॥ ३९ ॥

svargo nāma kimānandaḥ sopi saṃdehasaṃsthitaḥ | aprāptasvātmasaṃsiddeḥ kriyākāṇḍaḥ śubho bhavet || 39 ||

What is the joy of heaven? Even that is doubtful. Without realizing one's own self, ritualistic actions may seem auspicious.

स्वर्ग का आनंद क्या है? वह भी संदेहास्पद है। अपने स्वयं के संसिद्धि के बिना, क्रियाकाण्ड शुभ लग सकता है।

6.101.40

येन नासादितं हेम रीतिं किं स परित्यजेत् । चूडालादिसमासङ्गाद्भवेज्ज्ञत्वं सुखेन ते ॥ ४० ॥

yena nāsāditaṃ hema rītiṃ kiṃ sa parityajet | cūḍālādisamāsaṅgādbhavejjñatvaṃ sukhena te || 40 ||

Why should one abandon the path that leads to the attainment of gold? Through association with enlightened beings like Chudala, one can easily attain knowledge and happiness.

उस मार्ग को क्यों छोड़ा जाए जो सोने की प्राप्ति कराता है? चूडाला जैसे ज्ञानी पुरुषों के संग से, ज्ञान और सुख आसानी से प्राप्त हो सकता है।

6.101.41

तत्किमर्थमनर्थेऽस्मिन्निमग्नस्त्वं तपोमये । आश्रमादिविकल्पांशसाध्यस्याद्य कुकर्मणः ॥ ४१ ॥

tatkimarthamanarthe'sminnimagnastvaṃ tapomaye | āśramādivikalpāṃśasādhyasyādya kukarmaṇaḥ || 41 ||

Why are you immersed in this meaningless austerity? The beginning of this bad deed is the result of various options from the hermitage.

तुम इस अनर्थक तपस्या में क्यों डूबे हो? आश्रम से विभिन्न विकल्पों का परिणाम यह बुरा कर्म है।

6.101.42

आद्यन्तावस्य सुमते मध्य एव सुखं स्म भो। यतस्ते समयो जातो यस्मिन्परिणमन्ति च ॥ ४२ ॥

ādyantāvasya sumate madhya eva sukhaṃ sma bho | yataste samayo jāto yasminpariṇamanti ca || 42 ||

O wise one, the beginning and the end of this are in the middle, where happiness is. From there, the agreement arises, in which they transform.

हे बुद्धिमान, इसकी शुरुआत और अंत बीच में है, जहाँ सुख है। वहाँ से समझौता उत्पन्न होता है, जिसमें वे परिवर्तित होते हैं।

6.101.43

तपोरूपा विकल्पांशास्तत्र बद्धपदो भव। चिद्व्योम्नोनभसोत्यच्छात्सर्वेभावाः समुत्थिताः ॥ ४३ ॥

taporūpā vikalpāṃśāstatra baddhapado bhava | cidvyomnonabhasotyacchātsarvebhāvāḥ samutthitāḥ || 43 ||

The forms of austerity are various options, be bound there. All beings arise from the pure sky of consciousness.

तपस्या के रूप विभिन्न विकल्प हैं, वहाँ बंधे रहो। सभी भाव चेतना के शुद्ध आकाश से उत्पन्न होते हैं।

6.101.44

तथैव परिदृश्यन्ते तत्रैव विलयं गताः। इदं कार्यमिदं नेति संकल्पा ब्रह्मबिन्दवः ॥ ४४ ॥

tathaiva paridṛśyante tatraiva vilayaṃ gatāḥ | idaṃ kāryamidaṃ neti saṃkalpā brahmabindavaḥ || 44 ||

Thus, they are seen there, and there they dissolve. These resolutions, 'this is to be done, this is not,' are drops of Brahman.

इस प्रकार, वे वहाँ दिखाई देते हैं, और वहीं विलीन हो जाते हैं। ये संकल्प, 'यह करना है, यह नहीं,' ब्रह्म की बूंदें हैं।

6.101.45

वन्ध्यं शिखिध्वज त्यक्त्वा पूर्णमेव समाश्रय। इष्टं मे प्रार्थयस्वेति यथैव प्रार्थ्यते सखे ॥ ४५ ॥

vandhyaṃ śikhidhvaja tyaktvā pūrṇameva samāśraya | iṣṭaṃ me prārthayasveti yathaiva prārthyate sakhe || 45 ||

O peacock-bannered one, abandon the barren and take refuge in the complete. Ask for what is desired, O friend, as it is being asked for.

हे मोर-ध्वज, वंध्य को त्याग दो और पूर्ण में शरण लो। हे मित्र, जो इच्छा है उसे माँगो, जैसे उसे माँगा जा रहा है।

6.101.46

स्त्रिया तथैव स कथं दयितः प्रार्थ्यते स्वयम्। संकल्परचितानेतान्भावानापतभासुरान् ॥ ४६ ॥

striyā tathaiva sa kathaṃ dayitaḥ prārthyate svayam | saṃkalparacitānetānbhāvānāpatabhāsurān || 46 ||

How does a woman desire her beloved by herself? She accepts these emotions, which are created by her own will and appear as calamities.

स्त्री स्वयं अपने प्रिय को कैसे चाहती है? वह इन भावों को स्वीकार करती है, जो उसकी अपनी इच्छा से बने हैं और विपत्तियों के रूप में प्रकट होते हैं।

6.101.47

गृह्णन्ति न महात्मानः प्राज्ञा जलरवीनिव। स्वर्गमोक्षादिफलदं यत्किंचित्सर्वमेव तत् ॥ ४७ ॥

gṛhṇanti na mahātmānaḥ prājñā jalaravīniva | svargamokṣādiphalaḍaṃ yatkiñcitsarvameva tat || 47 ||

The wise and great souls do not accept anything that yields fruits like heaven or liberation, just as they do not accept the sound of water.

बुद्धिमान और महान आत्माएँ स्वर्ग या मोक्ष जैसे फलों को स्वीकार नहीं करतीं, जैसे कि वे जल की आवाज को नहीं स्वीकारतीं।

6.101.48

त्यक्त्वा समसमाभासो योऽस्यसावेव वै भव । सत्त्वं सत्त्वेन नाशेन नाश्यं हि विगतस्पृहः ॥ ४८ ॥

tyaktvā samasamābhāso yo'syasāveva vai bhava | sattvaṃ sattvena nāśena nāśyaṃ hi vigataspṛhaḥ || 48 ||

Abandoning the appearance of equality, become that which is the essence. Indeed, the essence is destroyed by the essence itself, free from desire.

समानता के भ्रम को त्यागकर, वह बनो जो सार है। निश्चित रूप से, सार अपने ही सार से नष्ट होता है, इच्छा से मुक्त।

6.101.49

पदार्थौघमिमं गृह्णंस्तिष्ठास्पन्दितचित्तभूः । अपरिस्पन्दचित्तस्य संसृतिर्नेह धावति ॥ ४९ ॥

padārthaughamimaṃ gṛhṇaṃstiṣṭhāspanditacittabhūḥ | aparispandacittasya saṃsṛtirneha dhāvati || 49 ||

Remaining steadfast with a mind that is not agitated, one should accept this collection of objects. For one whose mind is not agitated, the cycle of transmigration does not run here.

एक अशांत मन के साथ स्थिर रहते हुए, इस वस्तुओं के संग्रह को स्वीकार करना चाहिए। जिसका मन अशांत नहीं है, उसके लिए यहाँ पुनर्जन्म का चक्र नहीं चलता।

6.101.50

पौरुषप्रभवा साधो विपत्तिर्हि मतौ यथा । यानि यानीह दुःखानि प्रस्फुरन्ति जगत्त्रये ॥ ५० ॥

pauruṣaprabhavā sādho vipattirhi matau yathā | yāni yānīha duḥkhāni prasphuranti jagattraye || 50 ||

O virtuous one, calamities arise from human effort, just as various sufferings manifest in the three worlds.

हे साधु, विपत्तियाँ मानवीय प्रयास से उत्पन्न होती हैं, जैसे विभिन्न दुःख तीनों लोकों में प्रकट होते हैं।

6.101.51

चेतश्चापलजान्येव तानि तानि महीपते । स्थिरं शान्तं गतस्पन्दं यस्य चित्तमचापलम् । सदैव स महानन्दी साम्राज्यस्य स भाजनम् ॥ ५१ ॥

cetaścāpalajānyeva tāni tāni mahīpate | sthiraṃ śāntaṃ gataspandaṃ yasya cittamacāpalam | sadaiva sa mahānandī sāmrājyasya sa bhājanam || 51 ||

O king, the mind is indeed fickle, but one whose mind is steady, peaceful, and free from restlessness is always blissful and fit for sovereignty.

हे राजन्, मन तो चंचल ही होता है, परंतु जिसका मन स्थिर, शांत और चंचलता से मुक्त होता है, वह सदा आनंदित होता है और साम्राज्य के योग्य होता है।

6.101.52

अथ चेतसि तत्त्वज्ञ स्पन्दास्पन्दौ त्वमेकताम् । नीत्वा तिष्ठ यथाकाममैक्यमागत्य शाश्वतम् ॥ ५२ ॥

atha cetaḥ tattvajña spandāspandau tvamekatām | nītvā tiṣṭha yathākāmam aikyamāgatya śāśvatam || 52 ||

O knower of truth, unite the restlessness and stillness of the mind into one, and abide as you wish, having attained eternal oneness.

हे तत्वज्ञ, मन की चंचलता और स्थिरता को एक में मिलाकर, अपनी इच्छा से रहो, एकता प्राप्त करके शाश्वत होकर।

6.101.53

शिखिध्वज उवाच । कथमैक्यं विभो यातः स्पन्दास्पन्दाविमावुभौ । सर्वसंशयविच्छेदकारिन्नेतद्वदाशु मे ॥ ५३ ॥

śikhidhvaja uvāca | kathamaikyaṃ vibho yātaḥ spandāspandāvimāvubhau |
sarvasaṃśayavicchedakārinnetadvadāśu me || 53 ||

Shikhidhvaja said: O Lord, how can these two, restlessness and stillness, be united into one? Please explain this to me quickly, as it dispels all doubts.

शिखिध्वज ने कहा: हे प्रभु, ये दोनों, चंचलता और स्थिरता, एक में कैसे मिल सकते हैं? कृपया मुझे शीघ्र ही यह बताएँ, क्योंकि यह सभी संदेहों को दूर करता है।

6.101.54

कुम्भ उवाच । एकं वस्तु जगत्सर्वं चिन्मात्रं वारिवाम्बुधि । तदेव स्पन्दते धीभिः शुद्धवारिव वीचिभिः ॥ ५४ ॥

kumbha uvāca | ekaṃ vastu jagatsarvaṃ cinmātraṃ vārivāmbudhi | tadeva spandate dhībhiḥ śuddhavāriva vīcibhiḥ || 54 ||

Kumbha said: The entire universe is one entity, pure consciousness, like the ocean of water. It vibrates with thoughts, like the pure water with waves.

कुम्भ ने कहा: सम्पूर्ण जगत् एक ही वस्तु है, पूर्ण चेतना, जैसे जल का सागर। यह विचारों से स्पंदित होता है, जैसे शुद्ध जल लहरों से।

6.101.55

ब्रह्म चिन्मात्रममलं सत्त्वमित्यादिनामकम् । यद्गीतं तदिदं मूढाः पश्यन्त्यङ्ग जगत्तया ॥ ५५ ॥

brahma cinmātramamalaṃ sattvamityādināmakam | yadgītaṃ tadidaṃ mūḍhāḥ paśyantyaṅga jagattayā || 55 ||

Brahman is pure consciousness, stainless, and known by various names such as 'Sattva'. Fools see this world as separate from that which has been sung.

ब्रह्म पूर्ण चेतना है, निर्मल, और 'सत्त्व' आदि नामों से जाना जाता है। मूर्ख इस जगत् को उससे अलग देखते हैं जिसका गान किया गया है।

6.101.56

चित्स्पन्द एव सर्वस्वं सर्गे तस्माद्धि संसृतिः । परिस्पन्दो हि विन्ध्यादिशब्दस्पन्दसमं परम् ॥ ५६ ॥

citsapnda eva sarvasvaṃ sarge tasmāddhi saṃsṛtiḥ | parisapndo hi vindhyādiśabdasapndasamaṃ param || 56 ||

The vibration of consciousness is the essence of everything; from it arises the cycle of existence. The supreme vibration is like the sound of the Vindhya and other mountains.

चेतना की स्पंदन ही सब कुछ का सार है; इसी से अस्तित्व का चक्र उत्पन्न होता है। परम स्पंदन विंध्य और अन्य पर्वतों की ध्वनि के समान है।

6.101.57

चितः स एव चेत्स्पन्दस्तथाऽस्पन्दश्च भावितः । एकरूपतया नाम तत्रेदममलं शिवम् ॥ ५७ ॥

citaḥ sa eva cetsapndastathā'sapndaśca bhāvitaḥ | ekarūpatayā nāma tatredamamalaṃ śivaṃ || 57 ||

That consciousness is indeed the vibration and the non-vibration. In the form of oneness, there is the pure and auspicious Shiva.

वह चेतना ही स्पंदन और अस्पंदन है। एकरूपता में, वहाँ पर निर्मल और मंगलमय शिव है।

6.101.58

सर्गश्चित्स्पन्दमात्रात्मा सम्यग्दृष्टौ विलीयते । उदेत्यसम्यग्दृष्टीनां रज्ज्वां सर्पभ्रमो यथा ॥ ५८ ॥

sargaścitsapndamātrātmā samyagdṛṣṭau vilīyate | udetyasamaygdṛṣṭīnāṃ rajjvāṃ sarpaabhramo yathā || 58 ||

Creation, which is the essence of the vibration of consciousness, dissolves in correct vision. Just as the illusion of a snake arises from a rope for those with incorrect vision.

सृष्टि, जो चेतना की स्पंदन का सार है, सही दृष्टि में विलीन हो जाती है। जैसे गलत दृष्टि वालों के लिए रस्सी में साँप का भ्रम उत्पन्न होता है।

6.101.59

सस्पन्दा चित्तदभिधा निःस्पन्दा त्वियमातता । तुर्यातीतपदारूढा वाचा वक्तुं न पार्यते ॥ ५९ ॥

saspandā cittadabhidhā niḥspandā tviyamātatā | turyātītapadārūḍhā vācā vaktuṃ na pāryate || 59 ||

That which is described as vibration is consciousness. This non-vibration is the reality. That which is established in the state beyond the fourth cannot be expressed in words.

जो स्पंदन के रूप में वर्णित है, वह चेतना है। यह अस्पंदन वास्तविकता है। जो चतुर्थ से परे की अवस्था में स्थापित है, वह शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

6.101.60

शास्त्रसज्जनसंपर्कसंतताभ्यासयोगतः । कालेनामलतां याते चेतसीन्दाविवोदिता ॥ ६० ॥

śāstrasajjanasaṃparkasaṃtatābhyāsayogataḥ | kālenāmalatāṃ yāte cetasīndāvivoditā || 60 ||

Through the continuous practice of association with scriptures and noble people, the mind becomes pure like the moon rising in the sky.

शास्त्रों और सज्जनों के संपर्क की निरंतर अभ्यास योग से, मन आकाश में उदित चंद्रमा की तरह शुद्ध हो जाता है।

6.101.61

एतत्केवलमाभातं स्वानुभूतिभिराततम् । कथ्यते स्वानुभूतेषु स्वयं स्वं रूपमात्मना ॥ ६१ ॥

etatkevalamābhātaṃ svānubhūtibhirātatam | kathyate svānubhūteṣu svayaṃ svaṃ rūpamātmanā || 61 ||

This alone has been experienced through one's own realizations | It is described through one's own experiences, by oneself, one's own form by the Self

यह अकेला ही अपनी अनुभूतियों से अनुभव किया गया है | यह अपनी अनुभूतियों से, स्वयं अपने द्वारा, आत्मा द्वारा अपना रूप बताया जाता है

6.101.62

प्राप्तोऽसि सारं स्वमनादिमध्यमत्रैव तिष्ठ स्वपदे निविष्टः । नो रूपनिर्भेदमहाचिदात्मा जातोऽसि साधो खलु वीतशोकः ॥ ६२ ॥

prāpto'si sāraṃ svamanādimadhyamatraiva tiṣṭha svapade niviṣṭaḥ | no rūpanirbhedamahācidātmā jāto'si sādho khalu vītaśokaḥ || 62 ||

You have attained the essence, which is beginningless and endless | Abide in your own state, established in your own place | O virtuous one, you have indeed become free from sorrow, not differentiated by forms, the great consciousness, the Self

आपने अनादि और अनंत सार प्राप्त कर लिया है | अपने स्थान में स्थित हो, अपनी स्थिति में स्थापित | हे साधु, आप वास्तव में दुःख से मुक्त हो गए हैं, रूपों से भिन्न नहीं, महान चेतना, आत्मा

Chapter 102

6.102.1

कुम्भ उवाच इति ते कथितं सर्वं शिखिध्वज महीपते यथेदमुत्थितं सर्वं यथा च प्रविलीयते ॥ १ ॥

kumbha uvāca iti te kathitaṃ sarvaṃ śikhidhvaja mahīpate yathedamutthitaṃ sarvaṃ yathā ca pravilīyate || 1 ||

Kumbha said: Thus, O king with the peacock banner, I have told you everything about how all this has arisen and how it will dissolve.

कुम्भ ने कहा: हे मोर ध्वज वाले राजन्, मैंने तुम्हें यह सब बता दिया है कि यह सब कैसे उत्पन्न हुआ और कैसे विलीन होगा।

6.102.2

एतच्छ्रुत्वा च बुद्ध्वा च मत्वा च मुनिनायक यथेच्छसि तथा तिष्ठ दृष्टे स्पष्टे परे पदे ॥ २ ॥

etacchrutvā ca buddhvā ca matvā ca munināyaka yathecchasi tathā tiṣṭha dṛṣṭe spaṣṭe pare pade || 2 ||

Having heard this, understood it, and reflected upon it, O leader of sages, remain as you wish, having seen the clear and ultimate state.

इसे सुनकर, समझकर और विचार करके, हे मुनियों के नायक, जैसे तुम चाहो वैसे रहो, स्पष्ट और अंतिम अवस्था को देखकर।

6.102.3

स्वर्गं गच्छाम्यहं पर्वकालेऽस्मिन्नारदो मुनिः ब्रह्मलोकात्समायातो भवत्यमरसंसदि ॥ ३ ॥

svargaṃ gacchāmyahaṃ parvakāle'sminnārado muniḥ brahmalokātsamāyāto bhavatyamarasaṃsadi || 3 ||

I am going to heaven at this auspicious time. The sage Nārada has come from Brahmaloka to the assembly of the gods.

मैं इस शुभ समय में स्वर्ग जा रहा हूँ। ऋषि नारद ब्रह्मलोक से देवताओं की सभा में आए हैं।

6.102.4

न मां पश्यति चेत्तत्र तत्कोपमुपगच्छति नोद्वेजनीया भव्येन गुरवो हि कदाचन ॥ ४ ॥

na māṃ paśyati cet tatra tatkopamupagacchati nodvejanīyā bhavyena guravo hi kadācana || 4 ||

If he does not see me there, he will become angry. One should never disrespect the elders, for they are always worthy of respect.

यदि वह मुझे वहाँ नहीं देखता है, तो वह क्रोधित होगा। कभी भी बड़ों का अपमान नहीं करना चाहिए, क्योंकि वे हमेशा सम्मान के योग्य होते हैं।

6.102.5

त्यक्तसंकल्पलेखेन न किंचिदभिवाञ्छता त्वया सदैव वस्तव्यं दृष्टिरेषैव पावनी ॥ ५ ॥

tyaktasaṃkalpalekhena na kiṃcidabhivāñchatā tvayā sadaiva vastavyaṃ dṛṣṭireṣaiva pāvanī || 5 ||

With a mind free from desires and attachments, not wishing for anything, you should always remain in this purifying vision.

मन में इच्छाओं और आसक्तियों से मुक्त होकर, किसी भी चीज की इच्छा न करते हुए, आपको हमेशा इस पवित्र दृष्टि में रहना चाहिए।

6.102.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति यावत्प्रतिवचः पुष्पहस्तः शिखिध्वजः । प्रणामाय ददात्येष तावदन्तर्धिमाययौ ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti yāvatprativacaḥ puṣpahastaḥ śikhidhvajaḥ | praṇāmāya dadātyeṣa tāvadantardhimāyayau || 6 ||

Sri Vasistha said: As soon as he had spoken thus, the flower-handed Skanda, the banner of the peacock, gave this salutation and then disappeared.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जैसे ही उन्होंने ऐसा कहा, फूलों से भरे हाथों वाले स्कन्द, मोर के झंडे वाले, ने यह प्रणाम किया और फिर अंतर्ध्यान हो गए।

6.102.7

प्रतिभानगतं वस्तु यथैवान्ते न दृश्यते । न दृष्टवांस्तथा कुम्भमग्रे राजा शिखिध्वजः ॥ ७ ॥

pratibhānagataṃ vastu yathaivānte na dṛśyate | na dṛṣṭavāṃstathā kumbhamagre rājā śikhidhvajaḥ || 7 ||

Just as an object that has disappeared from sight cannot be seen at the end, so too the king Skanda did not see the pot in front of him.

जैसे एक वस्तु जो दृष्टि से ओझल हो जाती है, वह अंत में नहीं दिखाई देती, उसी प्रकार राजा स्कन्द ने सामने कुम्भ नहीं देखा।

6.102.8

गते कुम्भे महीपालः परं विस्मयमाययौ । तमेव चिन्तयंश्चित्रं चित्रार्पित इवाभवत् ॥ ८ ॥

gate kumbhe mahīpālaḥ paraṃ vismayamāyayau | tameva cintayaṃścitraṃ citrārpita ivābhavat || 8 ||

When the pot disappeared, the king was filled with great wonder. Reflecting on that strange event, he became as if absorbed in amazement.

जब कुम्भ अंतर्ध्यान हो गया, तो राजा महान आश्चर्य से भर गया। उस चमत्कारिक घटना पर विचार करते हुए, वह आश्चर्य में डूब गया।

6.102.9

इदं संचिन्तयामास चित्रं विलसितं विधेः । यत्कुम्भव्यपदेशेन बोधितोऽस्मि चिरोदयम् ॥ ९ ॥

idaṃ saṃcintayāmāsa citraṃ vilasitaṃ vidheḥ | yatkumbhavyapadeśena bodhito'smi cirodayam || 9 ||

He thought, 'This is a strange manifestation of the divine. By the indication of the pot, I have been enlightened after a long time.'

उसने सोचा, 'यह दिव्य का एक अद्भुत प्रकटीकरण है। कुम्भ के संकेत से मैं लंबे समय के बाद बोध प्राप्त हुआ हूँ।'

6.102.10

क्व नारदसुतः कुम्भः क्वाहं नाम शिखिध्वजः । केवलं कालयुक्त्यैव सोऽहं संपरिबोधितः ॥ १० ॥

kva nāradasutaḥ kumbhaḥ kvāhaṃ nāma śikhidhvajaḥ | kevalaṃ kālayuktyaiva so'haṃ saṃparibodhitaḥ || 10 ||

Where is the pot, the son of Narada? Where am I, the one called Skanda? I have been fully enlightened solely by the passage of time.

कुम्भ, नारद का पुत्र, कहाँ है? मैं, जिसे स्कन्द कहा जाता है, कहाँ हूँ? मैं केवल समय के प्रवाह से पूर्ण रूप से बोध प्राप्त हुआ हूँ।

6.102.11

अहो नु सम्यक्कथितं देवपुत्रेण युक्तिमत् । अहो नु संप्रबुद्धोऽस्मि मोहनिद्राकुलश्चिरात् ॥ ११ ॥

aho nu samyakkathitaṃ devaputreṇa yuktimat | aho nu saṃprabuddho'smi mohanidrākulaścirāt || 11 ||

Ah, how well spoken by the wise son of the gods! Ah, I am now truly awakened from the long slumber of delusion.

अहो, कितना सही कहा है देवपुत्र ने! अहो, मैं अब वास्तव में जाग्रत हूँ, लंबे समय से मोह की नींद से।

6.102.12

क्वाहमासं विनिर्मग्नः क्रियाजालकुकर्दमे । इदं कार्यमिदं नेति मिथ्या विभ्रमचक्रके ॥ १२ ॥

kvāhamāsaṃ vinirmagnaḥ kriyājālakukardame | idaṃ kāryamidaṃ neti mithyā vibhramacakrake || 12 ||

Where was I, immersed in the mire of the web of actions, thinking 'this should be done, this should not' in the false cycle of confusion?

मैं कहाँ था, कर्मों के जाल के कीचड़ में डूबा हुआ, सोचता हुआ 'यह करना चाहिए, यह नहीं' भ्रम के झूठे चक्र में?

6.102.13

अहो नु शीतला शुद्धा शान्तेयं पदवी निजा । रसायनोद्भवाकारा सत्त्वं शीतयतीह मे ॥ १३ ॥

aho nu śītalā śuddhā śānteyaṃ padavī nijā | rasāyanodbhavākārā sattvaṃ śītayatīha me || 13 ||

Ah, how cool, pure, and peaceful is this natural state of mine, arising from the essence of elixir, calming my being here.

अहो, कितनी ठंडी, शुद्ध और शांत है यह मेरी स्वाभाविक अवस्था, रसायन के सार से उत्पन्न, यहाँ मेरे अस्तित्व को शांत करती है।

6.102.14

शाम्यामि परिनिर्वामि सुखमासे च केवलम् । तृणाग्रमपि नेच्छामि संस्थितोऽस्मि यथास्थितम् ॥ १४ ॥

śāmyāmi parinirvāmi sukhamāse ca kevalam | tṛṇāgramapi necchāmi saṃsthito'smi yathāsthitam || 14 ||

I am calm, completely free, and I sit in pure bliss. I do not even desire a blade of grass; I am established as I am.

मैं शांत हूँ, पूर्णतः मुक्त हूँ, और शुद्ध आनंद में बैठा हूँ। मुझे एक तिनके की भी इच्छा नहीं है; मैं जैसा हूँ वैसा ही स्थित हूँ।

6.102.15

एवं संचिन्तयन्राजा नूनं निर्वासनाशयः । शैलादिव समुत्कीर्णो मौनमेवावतस्थिवान् ॥ १५ ॥

evaṃ saṃcintayanrājā nūnaṃ nirvāsanāśayaḥ | śailādiva samutkīrṇo maunamevāvatasthivān || 15 ||

Thus reflecting, the king, certainly with a mind free from desires, like a mountain thrown away, remained in silence.

इस प्रकार सोचते हुए, राजा, निश्चित रूप से इच्छा से मुक्त मन से, एक पर्वत की तरह फेंक दिया गया, मौन में रहा।

6.102.16

तस्मिन्नेव ततो मौने निःसंकल्पे निराश्रये । प्रतिष्ठां निश्चलां प्राप्य स तस्थौ गिरिश्रृङ्गवत् ॥ १६ ॥

tasminneva tato maune niḥsaṃkalpe nirāśraye | pratiṣṭhāṃ niścalāṃ prāpya sa tasthau giriśṛṅgavat || 16 ||

Then, in that very silent, desireless, and supportless state, having attained an unwavering steadiness, he stood like the peak of a mountain.

तब, उसी मौन, निःसंकल्प और निराश्रय अवस्था में, एक अचल स्थिति प्राप्त करके, वह पर्वत की चोटी की तरह खड़ा रहा।

6.102.17

स तत्र संशान्तभयोऽचिरेण चिरेण विश्रान्तमतिः समात्मा । चिरेण संप्राप्तनिजामलात्मा योगेन सुष्वाप ततोऽदितात्मा ॥ १७ ॥

sa tatra saṃśāntabhayo'cireṇa cireṇa viśrāntamatiḥ samātmā | cireṇa saṃprāptanijāmalātmā yogena suṣvāpa tato'ditātmā || 17 ||

There, having quickly become free from fear, with a mind that had rested for a long time, and having attained his pure self through yoga, he slept peacefully.

वहाँ, जल्दी ही भयमुक्त होकर, एक लंबे समय तक विश्राम करने वाले मन के साथ, और योग द्वारा अपने शुद्ध आत्मा को प्राप्त करके, वह शांतिपूर्वक सोया।

Chapter 103

6.103.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । निर्विकल्पसमाधानात्काष्ठकुड्योपमस्थितिः । एवं शिखिध्वजो राजा चूडालामधुना श्रृणु ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nirvikalpasamādhānātkāṣṭhakuḍyopamasthitiḥ | evaṃ śikhidhvajo rājā cūḍālāmadhunā śṛṇu ||1||

Vasishtha said: By attaining the state of nirvikalpa samadhi, one becomes as still as a piece of wood or a wall. In this way, King Shikhidhvaja listened to Chudala.

वसिष्ठ ने कहा: निर्विकल्प समाधि से लकड़ी या दीवार की तरह स्थिर हो जाता है | इस प्रकार राजा शिखिध्वज ने चूड़ाला को सुना |

6.103.2

शिखिध्वजं तं भर्तारं कुम्भवेषेण तेन सा । प्रबोध्यान्तर्धिमागत्य ततार तरसा नभः ॥ २ ॥

śikhidhvajaṃ taṃ bhartāraṃ kumbhaveṣeṇa tena sā | prabodhyāntardhimāgatya tatāra tarasā nabhaḥ ||2||

Chudala, having awakened her husband Shikhidhvaja, who was in the form of a pot, disappeared and swiftly ascended to the sky.

चूड़ाला ने अपने पति शिखिध्वज को, जो घड़े के रूप में था, जगाया और फिर अदृश्य होकर आकाश में तेजी से उठ गई |

6.103.3

देवपुत्राकृतिं व्योम्नि जहौ मायाविनिर्मिताम् । विदग्धमुग्धमाकारं स्त्रैणं जग्राह सुन्दरम् ॥ ३ ॥

devaputrākṛtiṃ vyomni jahau māyāvinirmitām | vidagdhamugdhamākāraṃ straiṇaṃ jagrahā sundaram ||3||

Chudala abandoned her divine form in the sky and took on the form of a beautiful woman, appearing both clever and innocent.

चूड़ाला ने आकाश में अपना देवी रूप छोड़ दिया और एक सुंदर स्त्री का रूप धारण किया, जो चतुर और अनाड़ी दोनों लग रही थी |

6.103.4

नभसा स्वपुरं प्राप विवेशान्तःपुरं क्षणात् । दृश्या बभूव लोकस्य नृपकर्म चकार च ॥ ४ ॥

nabhasā svapuraṃ prāpa vivveśāntaḥpuraṃ kṣaṇāt | dṛśyā babhūva lokasya nṛpakarma cakāra ca ||4||

Chudala reached her own abode from the sky and entered the inner palace in an instant. She became visible to the world and performed the duties of a king.

चूड़ाला आकाश से अपने निवास तक पहुँची और एक क्षण में अंतःपुर में प्रवेश किया | वह दुनिया के लिए दृश्यमान हो गई और राजा के कार्यों का निर्वाह करने लगी |

6.103.5

वासरत्रितयेनाथ पुनरम्बरमेत्य सा । बभूव कुम्भो योगेन शिखिध्वजवनं ययौ ॥ ५ ॥

vāsaratritayenātha punarambara metya sā | babhūva kumbho yogena śikhidhvajavanaṃ yayau ||5||

After three days, Chudala returned to the sky and became a pot again through yoga. She went to Shikhidhvaja's forest.

तीन दिनों के बाद, चूड़ाला आकाश में वापस आई और योग के द्वारा फिर से घड़े के रूप में बन गई | वह शिखिध्वज के वन में गई |

6.103.6

तथा तत्रैव तं भूपमपश्यद्वनभूमिगा । निर्विकल्पसमाधिस्थं समुत्कीर्णमिव द्रुमम् ॥ ६ ॥

tathā tatraiva taṃ bhūpamapaśyadvanabhūmigā | nirvikalpasamādhisthaṃ samutkīrṇamiva drumam || 6 ||

There, in that very place, a forest-dwelling woman saw the king, who was absorbed in the state of Nirvikalpa Samadhi, as if he were a tree that had been uprooted.

वहाँ, उसी स्थान पर, एक वनवासी महिला ने राजा को देखा, जो निर्विकल्प समाधि में डूबा हुआ था, जैसे कि वह एक उखाड़ा हुआ पेड़ हो।

6.103.7

अहो नु खलु भो दिष्ट्या विश्रान्तोऽयमिहात्मनि । स्थितः स्वस्थः समः शान्त इत्युवाच पुनःपुनः ॥ ७ ॥

aho nu khalu bho diṣṭyā viśrānto'yamihātmani | sthitaḥ svasthaḥ samaḥ śānta ityuvāca punaḥpunaḥ || 7 ||

Ah, indeed, by the grace of fate, he is resting here in the Self, established, healthy, calm, and peaceful, she said again and again.

अहो, निश्चय ही, भाग्य से, वह यहाँ आत्मा में विश्राम कर रहा है, स्थिर, स्वस्थ, सम, शांत, उसने बार-बार कहा।

6.103.8

तदेनं तावदेतस्माद्बोधयामि परात्पदात् । इदानीमेव किं देहत्यागमेष करोति वै ॥ ८ ॥

tadenaṃ tāvadetasmādbodhayāmi parātpadāt | idānīmeva kiṃ dehatyāgameṣa karoti vai || 8 ||

Therefore, I will awaken him from this state of the supreme abode. What is the use of him abandoning his body now?

इसलिए, मैं उसे इस परम धाम की अवस्था से जगाऊँगा। अब उसके शरीर को छोड़ने से क्या लाभ है?

6.103.9

किंचित्कालं स्फुरत्वेष राज्येन विपिनेन वा । सममेव गमिष्यावस्त्यक्तदेहाविमौ समौ ॥ ९ ॥

kiṃcitkālaṃ sphuratveṣa rājyena vipinenā vā | samameva gamiṣyāvastyaktadehāvimau samau || 9 ||

Let him enjoy for a while with his kingdom or with the forest. Eventually, both of us will attain the same state of liberation, having abandoned our bodies.

उसे कुछ समय के लिए अपने राज्य या वन से आनंद लेने दें। अंततः, हम दोनों शरीर को छोड़कर मुक्ति की एक ही अवस्था प्राप्त करेंगे।

6.103.10

तस्योपदेशो विषमः परिणामं न गच्छति । अनेनाभ्यासयोगेन तावदाबोधयाम्यहम् ॥ १० ॥

tasyopadeśo viṣamaḥ pariṇāmaṃ na gacchati | anenābhyāsayogena tāvadābodhayāmyaham || 10 ||

His teaching is not uneven and does not lead to any transformation. With this practice of yoga, I will awaken him for now.

उसका उपदेश असमान नहीं है और किसी परिवर्तन को नहीं जाता। इस योग अभ्यास के साथ, मैं उसे अब जगाऊँगा।

6.103.11

इति संचिन्त्य चूडाला सिंहनादं चकार सा । भूयोभूयः प्रभोरग्रे वनेचरभयप्रदम् ॥ ११ ॥

iti saṃcintya cūḍālā siṃhanādaṃ cakāra sā | bhūyobhūyaḥ prabhoragre vanecarabhayapradam || 11 ||

Thinking thus, Chudala roared like a lioness repeatedly in front of her lord, causing fear to the forest dwellers.

ऐसा सोचकर, चूडाला ने अपने स्वामी के सामने बार-बार सिंहनाद किया, जिससे वनवासियों को भय लगा।

6.103.12

न चचाल शिलेवाद्रौ यदा नादेन तेन सः । भूयोभूयः कृतेनापि तदा सा तं व्यचालयत् ॥ १२ ॥

na cacāla śilevādrau yadā nādena tena saḥ | bhūyobhūyaḥ kṛtenāpi tadā sā taṃ vyacālayat || 12 ||

When he did not move like a rock on a mountain with that roar, even after repeated attempts, then she shook him.

जब वह उस गर्जने से पर्वत पर चट्टान की तरह नहीं हिला, तब बार-बार प्रयास करने के बाद भी, तब उसने उसे हिलाया।

6.103.13

चालितः पातितोऽप्येष यदा न बुबुधे नृपः । तदा संचिन्तयामास चूडाला कुम्भरूपिणी ॥ १३ ॥

cālitaḥ pātito'pyeṣa yadā na bubudhe nṛpaḥ | tadā saṃcintayāmāsa cūḍālā kumbharūpiṇī || 13 ||

When the king, even after being shaken and fallen, did not awaken, then Chudala, in the form of a potter, began to think.

जब राजा, हिलाया और गिराया जाने के बाद भी, जागा नहीं, तब कुम्हार के रूप में चूडाला सोचने लगी।

6.103.14

अहो परिणतः साधुः स्वपदे भगवानयम् । तदेनं हि कया युक्त्या सांप्रतं बोधयाम्यहम् ॥ १४ ॥

aho pariṇataḥ sādhuḥ svapade bhagavānayam | tadenam hi kayā yuktyā sāṃprataṃ bodhayāmyaham || 14 ||

Alas, this virtuous lord has fallen into his own state. How can I awaken him now with what means?

अरे, यह साधु स्वामी अपनी ही स्थिति में गिर गया है। मैं इसे अब किस उपाय से जगाऊँ?

6.103.15

अथवैनं महात्मानं किमर्थं बोधयाम्यहम् । विदेहं बोधमासाद्य तिष्ठत्वेष यथासुखम् ॥ १५ ॥

athavainam mahātmānaṃ kimarthaṃ bodhayāmyaham | videhaṃ bodhamāsādya tiṣṭhatveṣa yathāsukham || 15 ||

Or why should I awaken this great soul? Having attained bodiless enlightenment, let him remain in bliss.

या फिर मैं इस महात्मा को क्यों जगाऊँ? शरीररहित बोध प्राप्त करके, वह सुख में रहे।

6.103.16

अहमप्यंगनादेहमिमं त्यक्त्वा परं पदम् । अपुनर्जननायैव गच्छामीह हि किं समम् ॥ १६ ॥

ahamapyāṅganādehamimaṃ tyaktvā paraṃ padam | apunarjananāyaiva gacchāmīha hi kiṃ samam || 16 ||

I too will leave this body and go to the supreme abode, never to be born again. What is the use of this body now?

मैं भी इस शरीर को छोड़कर परम पद को जाऊँगी, फिर कभी जन्म नहीं लूँगी। अब इस शरीर का क्या उपयोग?

6.103.17

इति संचिन्त्य देहं स्वं त्यक्तुमभ्युद्यता सती । पुनः संचिन्तयामास चूडाला सा महामतिः ॥ १७ ॥

iti saṃcintya dehaṃ svaṃ tyaktumabhyudyatā satī | punaḥ saṃcintayāmāsa cūḍālā sā mahāmatiḥ || 17 ||

Thus thinking, she was about to leave her body, but then she thought again, the wise Chudala.

ऐसा सोचकर, वह अपने शरीर को छोड़ने के लिए तैयार हो गई, लेकिन फिर उसने सोचा, वह बुद्धिमान चूड़ाला।

6.103.18

आलोकयामि चैतावदेनं देहं महीपतेः । यद्यस्य सत्त्वशेषोऽस्ति बोधबीजं हृदन्तरे ॥ १८ ॥

ālokayāmi caitāvadenam dehaṃ mahīpateḥ | yadyasya sattvaśeṣo'sti bodhabījaṃ hṛdantare || 18 ||

I will examine this body of the king to see if there is any remaining essence of consciousness, the seed of awakening within his heart.

मैं इस राजा के शरीर का परीक्षण करूँगी कि कहीं उसके हृदय में चेतना का कोई अवशेष, जागरण का बीज तो नहीं है।

6.103.19

तत्कालेनैष भगवान्संप्रबोधमुपैष्यति । मूलकोशरसालीनं पुष्पजालमिव द्रुमे ॥ १९ ॥

tatkālenaiṣa bhagavānsaṃprabodhamupaiṣyati | mūlakośarasālīnaṃ puṣpajālamiva drume || 19 ||

At that time, this blessed one will attain full awakening, like a tree that blossoms with flowers from its root essence.

उस समय, यह भगवान पूर्ण जागरण प्राप्त करेंगे, जैसे एक पेड़ जो अपने मूल सार से फूलों की माला से खिलता है।

6.103.20

तदेवं विरहञ्जीवन्मुक्त एव भवत्यलम् । मुक्तो भवत्यथ यदि मन्ये गच्छामि तत्समम् ॥ २० ॥

tadevaṃ virahañjīvanmukta eva bhavatyalam | mukto bhavatyatha yadi manye gacchāmi tatsamam || 20 ||

Thus, living in separation, one becomes liberated. If one becomes liberated, then it is appropriate for me to go there.

इस प्रकार, विरह में जीने से मुक्त हो जाता है। यदि मुक्त हो जाता है, तो मुझे वहाँ जाना उचित है।

6.103.21

इति संचिन्त्य चूडाला स्पर्शनेन नयेन च । पतिमालोक्य साशङ्कमुवाच वरवर्णिनी ॥ २१ ॥

iti saṃcintya cūḍālā sparśanena nayena ca | patimālokya sāśaṅkamuvāca varavarṇinī || 21 ||

Having thought thus, Chudala, with touch and wisdom, looked at her husband with suspicion and said, O beautiful one.

ऐसा सोचकर, चूडाला ने स्पर्श और बुद्धि से अपने पति को संदेह से देखकर कहा, हे सुंदरी।

6.103.22

अस्त्येव सत्त्वशेषोऽस्य हृदि संबोधकारणम् । संबोधहेतूदयेन सत्त्वशेषं व्यबुध्यत ॥ २२ ॥

astyeva sattvaśeṣo'sya hṛdi saṃbodhakāraṇam | saṃbodhahetūdayena sattvaśeṣaṃ vyabudhyata || 22 ||

There is indeed a remnant of existence in his heart, which is the cause of awakening. Through the rise of the cause of awakening, he realized the remnant of existence.

उसके हृदय में अस्तित्व का शेष अवश्य है, जो जागरण का कारण है। जागरण के कारण के उदय से, उसने अस्तित्व के शेष को समझा।

6.103.23

श्रीराम उवाच । भृशं संशान्तचित्तस्य काष्ठलोष्टसमस्थितेः । सत्त्वशेषः कथं ब्रह्मन्ज्ञायते ध्यानशालिनः ॥ २३ ॥

śrīrāma uvāca | bhṛśaṃ saṃśāntacittasya kāṣṭhaloṣṭasamasthiteḥ | sattvaśeṣaḥ kathaṃ brahmañjñāyate dhyānaśālinaḥ || 23 ||

Sri Rama said: How can the remnant of existence be known in one whose mind is completely calm and who is steadfast like a piece of wood or a clod of earth, O Brahman, who is proficient in meditation?

श्री राम ने कहा: हे ब्रह्मन्, जिसका मन पूर्णतः शांत है और जो लकड़ी या मिट्टी के ढेले की तरह स्थिर है, उसमें अस्तित्व का शेष कैसे ज्ञात हो सकता है, जो ध्यान में निपुण है?

6.103.24

श्रीवसिष्ठ उवाच । प्रबोधकारणं यस्य दुर्लक्ष्याणुवपुर्हृदि । विद्यते सत्त्वशेषोऽन्तर्बीजे पुष्पफलं यथा ॥ २४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | prabodhakāraṇaṃ yasya durlakṣyāṇuvapurhṛdi | vidyate sattvaśeṣo'ntarbīje puṣpaphalaṃ yathā || 24 ||

Sri Vasistha said: The cause of awakening, which is subtle and difficult to perceive, exists in the heart like a seed within a flower and fruit.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जागरण का कारण, जो सूक्ष्म और दुर्ज्ञेय है, हृदय में फूल और फल के बीज की तरह मौजूद है।

6.103.25

चित्तस्पन्दवियुक्तस्य तस्यास्पन्दितसच्चितः । द्वित्वैकत्वविहीनस्य समस्याचलसंस्थितेः ॥ २५ ॥

cittaspandaviyuktasya tasyāspanditasaccitaḥ | dvitvaikatvavihīnasya samasyācalasaṃsthiteḥ || 25 ||

For one who is free from the fluctuations of the mind, whose true consciousness is unmoved, who is devoid of duality and unity, and who is steadfast and balanced.

जिसका मन विचलन से मुक्त है, जिसकी सच्ची चेतना अविचलित है, जो द्वैत और अद्वैत से रहित है, और जो स्थिर और संतुलित है।

6.103.26

कायः समसमाभोगो न ग्लायति न हृष्यति । नास्तमेति न चोदेति सममेवावतिष्ठते ॥ २६ ॥

kāyaḥ samasamābhogo na glāyati na hṛṣyati | nāstameti na codeti samamevāvatiṣṭhate || 26 ||

The body that enjoys equanimity does not grieve, does not rejoice, does not set, does not rise, but remains steady.

जो शरीर समानता का आनंद लेता है, वह दुःखी नहीं होता, प्रसन्न नहीं होता, अस्त नहीं होता, उदय नहीं होता, बल्कि स्थिर रहता है।

6.103.27

द्वित्वैकत्वादियुक्तस्य यस्य प्रस्पन्दते मनः । तस्य देहोऽन्यतामेति नास्पन्दस्य कदाचन ॥ २७ ॥

dvitvaikatvādiyuktasya yasya praspandate manaḥ | tasya deho'nyatāmeti nāspandasya kadācana || 27 ||

The mind of one who is attached to duality and oneness fluctuates. The body of such a person undergoes changes, but never that of one whose mind is steady.

जिसका मन द्वैत और अद्वैत से जुड़ा हुआ है, उसका मन डोलता रहता है। ऐसे व्यक्ति का शरीर परिवर्तन को प्राप्त होता है, लेकिन कभी नहीं जिसका मन स्थिर है।

6.103.28

चित्तस्पन्दो हि सर्वेषां कारणं जगतः स्थितेः । राम भावविकाराणां कुसुमानां यथा मधुः ॥ २८ ॥

cittaspando hi sarveṣāṃ kāraṇaṃ jagataḥ sthiteḥ | rāma bhāvavikārāṇāṃ kusumānāṃ yathā madhuḥ || 28 ||

Indeed, the fluctuation of the mind is the cause of the existence of the world, O Rama, just as honey is the essence of flowers.

निश्चय ही, मन का उतार-चढ़ाव संसार के अस्तित्व का कारण है, हे राम, जैसे शहद फूलों का सार होता है।

6.103.29

अस्मिन्प्रयास्यतो देहे चेतसो हि मुहुर्मुहुः । हर्षः कोपो न संमोहो वशमेति रघूद्वह ॥ २९ ॥

asminprayāsyato dehe cetaso hi muhurmuhuḥ | harṣaḥ kopo na sammoho vaśameti raghūdvaha || 29 ||

In this transient body, the mind repeatedly experiences joy, anger, and delusion, O Raghava, but it does not come under control.

इस अस्थायी शरीर में, मन बार-बार हर्ष, क्रोध और मोह का अनुभव करता है, हे रघुवंशी, लेकिन यह नियंत्रण में नहीं आता।

6.103.30

चित्ते प्रशममायाते कायो यः सत्त्ववर्जितः । बाधते नाम्बरस्येव तस्य भावविकारभूः ॥ ३० ॥

citte praśamamāyāte kāyo yaḥ sattvavarjitaḥ | bādhate nāmbarasyeva tasya bhāvavikārabhūḥ || 30 ||

When the mind attains peace, the body, devoid of qualities, does not afflict like an empty vessel, the abode of emotional changes.

जब मन शांति प्राप्त करता है, तो गुणों से रहित शरीर एक खाली पात्र की तरह पीड़ा नहीं देता, भावनात्मक परिवर्तनों का आश्रय।

6.103.31

वीच्यादि न यथोदेति समाया जलसंततेः । तथा न दृश्यते दोषः समायाः सत्त्वसंततेः ॥ ३१ ॥

vīcyādi na yathodeti samāyā jalasaṃtateḥ | tathā na dṛśyate doṣaḥ samāyāḥ sattvasaṃtateḥ || 31 ||

Just as the water level does not rise unevenly, similarly, no fault is seen in the continuity of the essence of balance.

जल की समता के समान, सत्त्व की समता में भी कोई दोष नहीं दिखता है।

6.103.32

सत्त्वस्यानुपलम्भोऽस्ति न तस्योपशमादृते । यावद्भाति समं तत्त्वं कालाच्छाम्यति केवलम् ॥ ३२ ॥

sattvasyānupalambho'sti na tasyopaśamādṛte | yāvadbhāti samaṃ tattvaṃ kālācchāmyati kevalam || 32 ||

The essence is not perceived except through its suppression. As long as it shines equally, it becomes calm only with time.

सत्त्व का अनुभव उसके उपशमन के अलावा नहीं होता। जब तक यह समान रूप से चमकता है, यह समय के साथ ही शांत होता है।

6.103.33

देहे यस्मिंस्तु नो चित्तं नापि सत्त्वं च विद्यते । स तापे हिमवद्राम पञ्चत्वेन विलीयते ॥ ३३ ॥

dehe yasmiṃstu no cittaṃ nāpi sattvaṃ ca vidyate | sa tāpe himavadrāma pañcatvena vilīyate || 33 ||

In the body where there is no mind and no essence, it melts away in the heat like snow, dissolving into the five elements.

जिस शरीर में मन और सत्त्व नहीं है, वह ताप में हिम की तरह पिघलकर पाँच तत्वों में विलीन हो जाता है।

6.103.34

शिखिध्वजस्य देहोऽसौ निश्चित्तस्तेजसोर्जितः । सत्त्वांशेन च संयुक्तस्तेन न ग्लानिभाजनम् ॥ ३४ ॥

śikhidhvajasya deho'sau niścittastejasorjitaḥ | sattvāṃśena ca saṃyuktastena na glānibhājanam || 34 ||

The body of Shikhidhvaja is devoid of mind but endowed with radiance and united with the essence. Therefore, it does not suffer from fatigue.

शिखिध्वज का शरीर मन से रहित है, परन्तु तेज और सत्त्व से युक्त है। इसलिए, यह थकान से पीड़ित नहीं होता।

6.103.35

तं तथाभूतमालोक्य भर्तुर्देहं वराङ्गना । अनुज्झितवती देहं चिन्तयामास सत्वरम् ॥ ३५ ॥

taṃ tathābhūtamālokya bharturdehaṃ varāṅganā | anujjhitavatī dehaṃ cintayāmāsa satvaram || 35 ||

Seeing her husband's body in that state, the beautiful woman abandoned her own body and quickly contemplated.

अपने पति के शरीर को उस अवस्था में देखकर, सुंदर स्त्री ने अपना शरीर त्याग दिया और तुरंत विचार किया।

6.103.36

चित्तत्त्वं सर्वगं शुद्धं प्रविश्याबोधयाम्यहम् । भविष्यद्बोधनं कान्तमथ तत्र हि संस्थिता ॥ ३६ ॥

cittattvaṃ sarvagaṃ śuddhaṃ praviśyābodhayāmyaham | bhaviṣyadbodhanaṃ kāntamatha tatra hi saṃsthitā || 36 ||

I will awaken the pure and all-pervading essence of consciousness | If not, it will awaken on its own eventually | Why should I remain alone here, I ponder thus

मैं शुद्ध और सर्वव्यापी चेतना का जागरण करूँगी | यदि नहीं, तो वह स्वयं ही कुछ समय बाद जागृत होगा | मैं यहाँ अकेली क्यों रहूँ, मैं ऐसा सोचती हूँ

6.103.37

न बोधयामि यद्येनं चिरात्तद्बुध्यते स्वयम् । किमेकैवावतिष्ठेऽहमित्येवं बोधयाम्यहम् ॥ ३७ ॥

na bodhayāmi yadyenaṃ cirāttadbudhyate svayam | kimekaivāvatiṣṭhe'hamityevaṃ bodhayāmyaham || 37 ||

If I do not awaken it, it will awaken on its own eventually | Why should I remain alone here, I ponder thus

यदि मैं इसे जागृत नहीं करती, तो वह स्वयं ही कुछ समय बाद जागृत होगा | मैं यहाँ अकेली क्यों रहूँ, मैं ऐसा सोचती हूँ

6.103.38

इति संचिन्त्य चूडाला देहं करणपञ्जरम् । संत्यज्य प्राप चित्तत्त्वे स्थितिमाद्यन्तवर्जिते ॥ ३८ ॥

iti saṃcintya cūḍālā dehaṃ karaṇapañjaram | saṃtyajya prāpa cittattve sthitimādyantavarjite || 38 ||

Thus contemplating, Chudala left her body, the cage of senses, and attained a state in the essence of consciousness, devoid of beginning and end

ऐसा सोचकर, चूडाला ने अपने शरीर, इंद्रियों के पिंजरे को छोड़ दिया और चेतना के सार में एक अवस्था प्राप्त की, जो आदि और अंत से रहित है

6.103.39

तत्र सा चेतनास्पन्दं कृत्वा सत्त्ववतः प्रभोः । स्वं विवेश पुनर्देहं स्वं नीडमिव पक्षिणी ॥ ३९ ॥

tatra sā cetanāspandaṃ kṛtvā sattvavataḥ prabhoḥ | svaṃ viveśa punardehaṃ svaṃ nīḍamiva pakṣiṇī || 39 ||

There, she made the vibration of consciousness and entered her own body again, like a bird entering its own nest

वहाँ, उसने चेतना की स्पंदन की और फिर से अपने शरीर में प्रवेश किया, जैसे एक पक्षी अपने घोंसले में प्रवेश करता है

6.103.40

कुम्भाकृतिरथोत्थाय निविष्टा कुसुमस्थले । साम गातुं प्रवृत्ता सा भ्रमरीवृन्दनिःस्वना ॥ ४० ॥

kumbhākṛtirathotthāya niviṣṭā kusumasthale | sāma gātuṃ pravṛttā sā bhramarīvṛndaniḥsvanā || 40 ||

Then, rising like a pot, she settled on a bed of flowers and began to sing like a swarm of bees

फिर, घड़े की तरह उठकर, वह फूलों के बिस्तर पर बैठ गई और मधुमक्खियों के झुंड की तरह गाने लगी

6.103.41

तं सामस्वनमाकर्ण्य चित्सत्त्वगुणशालिनी । बुबुधे भूपतेर्देहे वसन्त इव पद्मिनी ॥ ४१ ॥

taṃ sāmasvanamākarṇya citsattvaguṇaśālinī | bubudhe bhūpaterdehe vasanta iva padminī || 41 ||

Hearing that melodious sound, the one endowed with the qualities of pure existence, realized it as if a lotus blossoming in the body of the king.

उस मधुर ध्वनि को सुनकर, शुद्ध अस्तित्व के गुणों से युक्त, राजा के शरीर में कमल के खिलने की तरह समझा।

6.103.42

दृशं विकासयामास तां तदार्क इवाब्जिनीम् । गृहीतसत्त्वसंपत्तिः शिखिध्वजमहीपतिः ॥ ४२ ॥

dṛśaṃ vikāsayāmāsa tāṃ tadārka ivābjinīm | gṛhītasattvasaṃpattiḥ śikhidhvajamahīpatiḥ || 42 ||

He opened his eyes as if the lotus-eyed one (the sun) was blossoming, the king with the peacock banner, having grasped the wealth of existence.

उसने अपनी आँखें खोलीं जैसे कमल-नयन (सूर्य) खिल रहा हो, मोर ध्वज वाले राजा ने, जिसने अस्तित्व की सम्पत्ति को ग्रहण किया था।

6.103.43

अपश्यत्कुम्भमग्रस्थं सामगायनतत्परम् । परेण वपुषा युक्तं सामवेदमिवापरम् ॥ ४३ ॥

apaśyatkumbhamagrasthaṃ sāmagāyanatatparam | pareṇa vapuṣā yuktaṃ sāmavedamivāparam || 43 ||

He saw the one seated at the top of the pot, engrossed in singing the Sama Veda, endowed with a supreme form, like another Sama Veda.

उसने घड़े के ऊपर बैठे हुए, सामवेद के गायन में तल्लीन, उत्कृष्ट रूप से युक्त, दूसरे सामवेद की तरह देखा।

6.103.44

अहो बत वयं धन्याः पुनः प्राप्तो मुनिः स्वतः । इत्येवोदाहरद्राजा कुम्भाय कुसुमं ददौ ॥ ४४ ॥

aho bata vayaṃ dhanyāḥ punaḥ prāpto muniḥ svataḥ | ityevodāharadrājā kumbhāya kusumaṃ dadau || 44 ||

Ah, indeed we are fortunate, the sage has returned by himself. Thus saying, the king gave a flower to the pot.

अहो, हम भाग्यशाली हैं, ऋषि स्वयं लौट आया है। ऐसा कहकर, राजा ने घड़े को एक फूल दिया।

6.103.45

दिष्ट्योदिताः स्मो भगवंस्तव चेतसि पावने । के नाम वा महासत्त्वाः प्रसादेष्वङ्ग नो स्थिताः ॥ ४५ ॥

diṣṭyoditāḥ smo bhagavaṃstava cetasi pāvane | ke nāma vā mahāsattvāḥ prasādeṣvaṅga no sthitāḥ || 45 ||

Fortunately, we are mentioned in your purifying mind, O Lord. Who are those great beings who are present in your graces?

भाग्य से, हम आपके पवित्र मन में उल्लेखित हैं, हे भगवान। आपकी कृपाओं में उपस्थित वे महान प्राणी कौन हैं?

6.103.46

अस्मत्पवित्रीकरणमेवागमनकारणम्। न चेत्किं चागमे ब्रूहि द्वितीयं कारणं भवेत्॥ ४६॥

asmatpavitrīkaraṇamevāgamanakāraṇam | na cetkiṃ cāgame brūhi dvitīyaṃ kāraṇaṃ bhavet || 46 ||

The only reason for my arrival is our purification. If not, then tell me what other reason could there be for my arrival?

मेरे आने का एकमात्र कारण हमारा पवित्रीकरण है। यदि ऐसा नहीं है, तो मेरे आने का दूसरा कारण बताओ।

6.103.47

कुम्भ उवाच। यतः प्रभृति यातोऽस्मि त्वत्सकाशादनिन्दितः। ततः प्रभृति चेतो मे त्वयैवेह समं स्थितम्॥ ४७॥

kumbha uvāca | yataḥ prabhṛti yāto'smi tvatsakāśādaninditaḥ | tataḥ prabhṛti ceto me tvayaiveha samaṃ sthitam || 47 ||

Kumbha said: Since I have come to you, O flawless one, my mind has been with you ever since.

कुम्भ ने कहा: जब से मैं आपके पास आया हूँ, हे निर्दोष, तब से मेरा मन आपके साथ ही रहा है।

6.103.48

रम्ये स्वर्गे न तिष्ठामि समीपे तव सांप्रतम्। अभीष्टमुद्यदेवाङ्ग रम्याणां तत्पुरः स्थितम्॥ ४८॥

ramye svarge na tiṣṭhāmi samīpe tava sāṃpratam | abhīṣṭamudyadevāṅga ramyāṇāṃ tatpuraḥ sthitam || 48 ||

I do not stay in the beautiful heaven, but I am near you now. The desired one, the rising divine body, stands before the beautiful ones.

मैं सुंदर स्वर्ग में नहीं रहता, बल्कि मैं अभी आपके पास हूँ। इच्छित, उदय होने वाला दिव्य शरीर, सुंदरों के सामने खड़ा है।

6.103.49

त्वादृशो बन्धुराप्तश्च सुहृन्मित्रं तथा सखा। विश्वास्यो वापि शिष्यश्च मन्ये जगति नास्ति मे॥ ४९॥

tvādṛśo bandhurāptaśca suhṛnmitraṃ tathā sakhā | viśvāsyo vāpi śiṣyaśca manye jagati nāsti me || 49 ||

I believe there is no one else in the world like you, who is a relative, a dear one, a friend, a confidant, and even a disciple.

मैं मानता हूँ कि जगत में आप जैसा कोई नहीं है, जो एक रिश्तेदार, प्रिय, मित्र, विश्वासपात्र और शिष्य भी है।

6.103.50

शिखिध्वज उवाच। अहो नु फलितं पुण्यपादपैर्नः कुलाचले। यस्माद्भवानसङ्गोऽपि वाञ्छत्यस्मत्समागमम्॥ ५०॥

śikhidhvaja uvāca | aho nu phalitaṃ puṇyapādapairnaḥ kulācale | yasmādbhavānasango'pi vāñchhatyasmatsamāgamam || 50 ||

Shikhidhvaja said: Oh, how fortunate we are that our family tree has borne the fruit of merit, for even though you are detached, you desire a meeting with us.

शिखिध्वज ने कहा: ओह, हमारे कुल परिवार का पुण्य वृक्ष फलित हो गया है, क्योंकि आप असंग होने के बावजूद हमसे मिलना चाहते हैं।

6.103.51

इदं वनमिमे वृक्षा भृत्योऽयमहमादृतः। रोचते ते न चेतस्वर्गस्तदिह स्थीयतां प्रभो॥ ५१॥

idaṃ vanamime vṛkṣā bhṛtyoyamahamādṛtaḥ | rocate te na cetasvargastadiha sthīyatāṃ prabho || 51 ||

This forest, these trees, I am your servant, honored by you. If heaven does not please you, then stay here, O Lord.

यह वन, ये वृक्ष, मैं आपका सेवक हूँ, आपके द्वारा सम्मानित | यदि स्वर्ग आपको पसंद नहीं आता है, तो यहीं रहें, हे प्रभो।

6.103.52

भवद्वितीर्णया योगयुक्त्या विश्रान्तवानहम्। यथा साधो तथा मन्ये स्वर्गे विश्रमणं कुतः ॥ ५२ ॥

bhavadvitīrṇayā yogayuktyā viśrāntavānaham | yathā sādho tathā manye svargē viśramaṇaṃ kutaḥ || 52 ||

By your grace and through the practice of yoga, I have found rest. Just as a virtuous person, I believe there is no rest in heaven.

आपकी कृपा और योग की साधना से, मैंने विश्राम पाया है | जैसे एक साधु, मैं मानता हूँ कि स्वर्ग में विश्राम नहीं है।

6.103.53

तामेव संस्थितिं स्वच्छामवलम्ब्य प्रकाशिनीम्। विहरेह यथाकामं स्वर्गे भूमितले तथा ॥ ५३ ॥

tāmeva saṃsthitiṃ svacchāmavalambya prakāśinīm | vihareha yathākāmaṃ svargē bhūmitalē tathā || 53 ||

Relying on that pure and radiant state, enjoy yourself as you please, in heaven or on earth.

उस शुद्ध और प्रकाशमान अवस्था पर निर्भर होकर, स्वर्ग में या पृथ्वी पर, अपनी इच्छा अनुसार आनंद लें।

6.103.54

कुम्भ उवाच। परे पदे महानन्दे कच्चिद्विश्रान्तवानसि। इदं भेदमयं दुःखं कच्चित्संत्यक्तवानसि ॥ ५४ ॥

kumbha uvāca | pare pade mahānande kaccidviśrāntavānasi | idaṃ bhedamayaṃ duḥkhaṃ kaccitsaṃtyaktavānasi || 54 ||

Kumbha said: Have you found rest in the supreme bliss? Have you abandoned this sorrow of duality?

कुम्भ ने कहा: क्या आपने परम आनंद में विश्राम पाया है? क्या आपने इस द्वैत के दुःख को त्याग दिया है?

6.103.55

कच्चिदापातरम्येभ्यः संकल्पेभ्यो रतिर्भृशम्। निर्मूलतां गता राजन्भोगनीरसमेव ते ॥ ५५ ॥

kaccidāpātaramyebhyaḥ saṃkalpebhyo rati rbṛśam | nirmūlatāṃ gatā rājanbhoganīrasameva te || 55 ||

O King, have you completely abandoned the delight in fleeting pleasures? Have they become tasteless to you?

हे राजन्, क्या आपने अस्थायी सुखों में आनंद को पूरी तरह से त्याग दिया है? क्या वे आपके लिए निरास हो गए हैं?

6.103.56

हेयादेयदशातीतं शान्तं शमसमस्थितियथाप्राप्तेष्वनुद्वेगं कच्चित्तव मनःस्थितम् ॥ ५६ ॥

heyādeyadaśātītaṃ śāntaṃ śamasamasthitiyathāprāpteṣvanudvegaṃ kaccittava manaḥsthitam || 56 ||

O Lord, has your mind become free from agitation upon attaining the state beyond acceptance and rejection, tranquil and equanimous?

हे भगवन्, क्या आपका मन स्वीकार और अस्वीकार की अवस्था से परे, शान्त और समतापूर्ण हो गया है?

6.103.57

शिखिध्वज उवाचत्वत्प्रसादेन भगवन्दृष्टा दृश्यातिगा गतिःप्राप्तः संसारसीमान्तो लब्धो लब्धव्यनिश्चयः ॥ ५७ ॥

śikhidhvaja uvācatvatprasādena bhagavandṛṣṭā dṛśyātigā gatiḥprāptaḥ saṃsārasīmānto labdho labdhavyaniścayaḥ || 57 ||

Śikhidhvaja said: By your grace, O Lord, I have attained the state beyond the seen and the seer, reaching the boundary of the world, and have gained certainty about what is to be attained.

शिखिध्वज ने कहा: हे भगवन्, आपकी कृपा से मैंने देखने वाले और देखे जाने वाले से परे की अवस्था प्राप्त कर ली है, संसार की सीमा तक पहुंच गया हूँ, और प्राप्त करने योग्य के बारे में निश्चय प्राप्त कर लिया है।

6.103.58

चिरादतिचिरेणैव विश्रान्तोऽस्मि निरामयःलब्धं लव्धव्यमखिलं तृप्तः संश्चिरसंस्थितः ॥ ५८ ॥

cirādaticireṇaiva viśrānto'smi nirāmayaḥlabdhaṃ lavdhavyamakhilaṃ tṛptaḥ saṃścirasaṃsthitaḥ || 58 ||

After a very long time, I am rested and free from disease, having attained all that is to be attained, I am content and established in eternal peace.

बहुत लंबे समय के बाद, मैं विश्राम प्राप्त कर चुका हूँ और रोगमुक्त हूँ, जो प्राप्त करना था सब कुछ प्राप्त कर चुका हूँ, मैं संतुष्ट हूँ और सनातन शांति में स्थित हूँ।

6.103.59

नोपदेष्टव्यमस्माकं किंचिदप्युपयुज्यतेसर्वत्रैवातितृप्तोऽस्मि संस्थितोऽस्मि गतज्वरः ॥ ५९ ॥

nopadeṣṭavyamasmākaṃ kiṃcidapyupayujyatesarvatraivātitṛpto'smi saṃsthito'smi gatajvaraḥ || 59 ||

There is nothing to be taught to me, nothing is useful to me. I am fully satisfied everywhere, I am established and free from fever.

मुझे कुछ भी सिखाना नहीं है, मुझे कुछ भी उपयोगी नहीं है। मैं हर जगह पूर्ण रूप से संतुष्ट हूँ, मैं स्थित हूँ और ज्वर से मुक्त हूँ।

6.103.60

ज्ञातमज्ञातमप्राप्तं त्यक्तं त्यक्तव्यमाश्रितमत्तत्त्वं परत्वं सत्त्वं मे स्वस्यैवास्ति न किंचन ॥ ६० ॥

jñātamajñātamaprāptaṃ tyaktaṃ tyaktavyamāśritamtattvaṃ paratvaṃ sattvaṃ me svasyaivāsti na kiṃcana || 60 ||

What is known, unknown, attained, abandoned, to be abandoned, and relied upon, the truth, the supreme, and the essence, all these exist in myself, nothing else exists.

जो ज्ञात है, अज्ञात है, प्राप्त है, त्याग दिया गया है, त्यागने योग्य है, और आश्रित है, तत्त्व, परम, और सत्त्व, ये सब मेरे अंदर ही हैं, और कुछ भी नहीं है।

6.103.61

निःसंसृतिर्विगतमोहभयो विरागो नित्योदितः समसमाशयसर्वसौम्यः । सर्वात्मकः सकलसंकलनावियुक्त आकाशकोशविशदः सममास्थितोऽस्मि ॥ ६१ ॥

niḥsaṃsṛtirvigatamohabhayo virāgo nityoditaḥ samasamāśayasarvasaumyaḥ | sarvātmakaḥ sakalasaṅkalanāviyukta ākāśakośaviśadaḥ samamāsthito'smi || 61 ||

I am free from the cycle of rebirth, devoid of delusion and fear, detached, eternally risen, equanimous, benevolent, all-pervading, united with all, clear like the sky, and steadfastly established.

मैं पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हूँ, भ्रम और भय से रहित हूँ, विरक्त हूँ, नित्य उदित हूँ, समभाव से युक्त हूँ, सर्वत्र शुभ हूँ, सबके आत्मा में व्याप्त हूँ, सबसे जुड़ा हुआ हूँ, आकाश के समान निर्मल हूँ, और स्थिर रूप से स्थापित हूँ।

Chapter 104

6.104.1

श्रीवसिष्ठ उवाच इत्यध्यात्मविचित्राभिः कथाभिस्तौ परस्परम् आसाते वेद्यवेत्तारौ मुहूर्तत्रितयं वने ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca ityadhyātmavicitrābhiḥ kathābhistaū parasparam āsāte vedyavettārau muhūrtatritayaṃ vane || 1 ||

Thus, Śrī Vasiṣṭha spoke: With these wondrous spiritual stories, the two, the knower and the known, conversed with each other in the forest for three moments.

इस प्रकार श्री वसिष्ठ ने कहा: इन अद्भुत आध्यात्मिक कथाओं के साथ, ज्ञाता और ज्ञेय, दोनों ने वन में तीन मुहूर्त तक एक-दूसरे से बात की।

6.104.2

तत उत्थाय कस्मिंश्चित्सानौ सरससारसे सरोवरे वने चैव विहृतौ नन्दने वने ॥ २ ॥

tata utthāya kasmiṃścit sānau sarasasārase sarovare vane caiva vihṛtau nandane vane || 2 ||

Then, rising, they enjoyed in a certain beautiful lake in the forest, as if in the celestial garden of Nandana.

फिर, उठकर, वे वन में एक सुंदर सरोवर में नंदन वन के समान आनंद लेते रहे।

6.104.3

तेनाचारेण ताभिश्च कथाभिस्तौ वने ततः नीतवन्तौ दिनान्यष्टौ तासु काननवीथिषु ॥ ३ ॥

tenācāreṇa tābhiśca kathābhistau vane tataḥ nītavantau dinānyaṣṭau tāsu kānanavīthiṣu || 3 ||

By that conduct and those stories, they spent eight days in the forest, wandering along its paths.

उस आचरण और उन कथाओं के साथ, वे वन में आठ दिन बिताते हुए उसकी पगडंडियों पर भटकते रहे।

6.104.4

अथ कुम्भ उवाचान्यद्वनं यावो गिरावितिं तदोमिति नृपो मत्वा तावुभौ प्रविचेरतुः ॥ ४ ॥

atha kumbha uvācānyad vanaṃ yāvo girāv iti tadom iti nṛpo matvā tāvubhau praviceratuḥ || 4 ||

Then Kumbha said, 'Let us go to another forest on the mountain.' The king, thinking it was the sound of 'Om,' both of them wandered.

फिर कुंभ ने कहा, 'चलो, हम पर्वत पर दूसरे वन में चलते हैं।' राजा ने सोचा कि यह 'ओम' की ध्वनि है, और फिर दोनों भटकने लगे।

6.104.5

वनान्यनेकरूपाणि जङ्गलानि तटानि च सरांसि गुल्मजालानि श्रृङ्गाणि गहनानि च ॥ ५ ॥

vanānyanekarūpāṇi jaṅgalāni taṭāni ca sarāṃsi gulmajālāni śṛṅgāṇi gahanāni ca || 5 ||

They wandered through various kinds of forests, jungles, riverbanks, lakes, thickets, mountain peaks, and dense areas.

वे विभिन्न प्रकार के वनों, जंगलों, नदी किनारों, सरोवरों, झाड़ियों, पर्वत शिखरों और घने क्षेत्रों में भटकते रहे।

6.104.6

नदीर्देशांस्तथा ग्रामान्नगराणि वनानि च । मञ्जुघोषान्गिरीन्कुञ्जांस्तीर्थान्यायतनानि च ॥ ६ ॥

nadīrdeśāṃstathā grāmānnagarāṇi vanāni ca | mañjughoṣāngirīnkuñjāṃstīrthānyāyatanāni ca || 6 ||

They saw rivers, regions, villages, cities, forests, mountains, groves, pilgrimage sites, and temples.

उन्होंने नदियाँ, प्रदेश, गाँव, नगर, वन, पर्वत, कुंज, तीर्थ और मंदिर देखे।

6.104.7

समभेव समस्नेहौ समवेतौ स्थितावुभौ । समसत्त्वौ समोत्साहौ शंसन्तौ तस्थतुः सदा ॥ ७ ॥

samameva samasnehaū samavetau sthitāvubhau | samasattvau samotsāhaū śaṃsantau tasthatuḥ sadā || 7 ||

Both were equally affectionate, united, and steadfast. They were of equal virtue and enthusiasm, always praising each other.

दोनों बराबर स्नेही, एकजुट और दृढ़ थे। वे बराबर सत्त्व और उत्साह के साथ, हमेशा एक दूसरे की प्रशंसा करते थे।

6.104.8

आनर्चतुः पितृन्देवान्बुभुजाते च राघव । समं तप्ते च सिक्ते च समबुद्धी बभूवतुः ॥ ८ ॥

ānarcatuḥ pitṛndevānbubhujāte ca rāghava | samaṃ taptē ca siktē ca samabuddhī babhūvatuḥ || 8 ||

O Raghava, they worshipped their ancestors and gods, ate together, and had the same feelings in joy and sorrow.

हे रघुवंशी, उन्होंने अपने पूर्वजों और देवताओं की पूजा की, साथ-साथ खाया, और सुख-दुःख में एक समान भावना रखी।

6.104.9

तमालवनखण्डेषु मन्दारगहनेषु च । दंपती स्निग्धहृदयौ सुहृदौ तौ विरेजतुः ॥ ९ ॥

tamālavanakhaṇḍeṣu mandāragahaneṣu ca | daṃpatī snigdhahṛdayau suhṛdau tau virejatuḥ || 9 ||

In the groves of tamala trees and dense mandara forests, the affectionate couple shone like friends.

तमाल वृक्षों के झुंड और घने मंदार वनों में, स्नेही युगल मित्रों की तरह चमकते थे।

6.104.10

इदं गेहमिदं नेति विकल्पकलना मनः । न जहार तयो राम वात्येव विबुधाचलम् ॥ १० ॥

idaṃ gehamidaṃ neti vikalpakalanā manaḥ | na jahāra tayo rāma vātyeva vibudhācalam || 10 ||

O Rama, their minds did not waver with thoughts like 'this is mine, this is not,' just as the wind cannot shake a mountain.

हे राम, उनके मन में 'यह मेरा है, यह नहीं है' जैसे विचारों से विचलित नहीं हुआ, जैसे हवा पर्वत को नहीं हिला सकती।

6.104.11

विचेरतुस्तौ सुहृदौ क्वचिद्धूलिविधूसरौ । क्वचिच्चन्दनदिग्धाङ्गौ क्वचिद्भस्मानुरञ्जितौ ॥ ११ ॥

viceratus tau suhṛdau kvaciddhūlividhūsarau | kvacic candanadigdhāṅgau kvacid bhasmānurañjitau || 11 ||

They, the two friends, sometimes wandered covered in dust, sometimes with bodies anointed with sandalwood, and sometimes smeared with ashes.

वे दो मित्र कभी धूल से ढके, कभी चन्दन से अंग लिपटे, और कभी भस्म से लिपटे विचरते थे।

6.104.12

क्वचिद्दिव्याम्बरधरौ चित्राम्बरधरौ क्वचित् । क्वचित्पल्लवसंछन्नौ क्वचित्कुसुममण्डितौ ॥ १२ ॥

kvacid divyāmbaradharau citrāmbaradharau kvacit | kvacit pallavasaṃchannau kvacit kusumamaṇḍitau || 12 ||

Sometimes they wore divine garments, sometimes colorful clothes, sometimes they were covered with leaves, and sometimes adorned with flowers.

कभी वे दिव्य वस्त्र धारण करते थे, कभी रंगीन कपड़े पहनते थे, कभी पत्तों से ढके होते थे, और कभी फूलों से सजे होते थे।

6.104.13

दिनैः कतिपयैरेव समचित्ततया तया । सत्त्वोदात्ततया चैव राजा कुम्भवदाबभौ ॥ १३ ॥

dinaiḥ katipayaireva samacittatayā tayā | sattvodāttatayā caiva rājā kumbhavadābabhau || 13 ||

In just a few days, with her equanimity and elevated nature, the queen made the king shine like a pot.

कुछ ही दिनों में, अपने समान चित्त और उत्कृष्ट स्वभाव से, रानी ने राजा को घड़े की तरह चमका दिया।

6.104.14

अथ तं सुरगर्भाभं चूडाला सा शिखिध्वजम् । दृष्ट्वा शोभामुपगतं चिन्तयामास मानिनी ॥ १४ ॥

atha taṃ suragarbhābhaṃ cūḍālā sā śikhidhvajam | dṛṣṭvā śobhāmupagataṃ cintayāmāsa māninī || 14 ||

Then, seeing Shikhidhvaja adorned with divine beauty, Chudala, the proud one, thought to herself.

तब, शिखिध्वज को दिव्य सौंदर्य से सजा देखकर, अभिमानी चूडाला ने सोचा।

6.104.15

अयं पतिरदीनात्मा रम्याश्च वनभूमयः । इयं स्थितिरनायासा या न कामेन वञ्चिता ॥ १५ ॥

ayaṃ patiradīnātmā ramyāśca vanabhūmayaḥ | iyaṃ sthitiranāyāsā yā na kāmena vañcitā || 15 ||

This is my husband, with a contented mind, and these are the delightful forest lands. This state is effortless, not deceived by desire.

यह मेरा पति है, जिसका मन संतुष्ट है, और ये सुंदर वन भूमि हैं। यह अवस्था प्रयासरहित है, कामना से धोखा नहीं खाई गई है।

6.104.16

जीवन्मुक्तधियां भोगं यथाप्राप्तमतिष्ठताम् । एकाग्रहात्मिका तुच्छा मूढतैवोदिता भवेत् ॥ १६ ॥

jīvanmuktadhiyāṃ bhogaṃ yathāprāptamatiṣṭhatām | ekāgrahātmikā tucchā mūḍhataivoditā bhavet || 16 ||

Those who are liberated in life should enjoy pleasures as they come | The one who is single-minded is foolish and arises from ignorance

जीवन मुक्त व्यक्ति भोग करें जैसे वे मिलें | एकाग्र व्यक्ति मूर्ख है और मूढ़ता से उत्पन्न होता है

6.104.17

निजः पतिरुदारात्मा निराधिश्च नवं वयः । गृहाणि पुष्पजालानि सा हता या न कामिनी ॥ १७ ॥

nijaḥ patirudārātmā nirādhiśca navaṃ vayaḥ | gṛhāṇi puṣpajālāni sā hatā yā na kāminī || 17 ||

One's own husband is noble and free from worries, and youth is new | She is defeated who is not a desirable woman

अपना पति उदार और चिंतामुक्त है, और युवा नया है | वह हार जाती है जो कामिनी नहीं है

6.104.18

वनपुष्पलतागेहे स्वायत्ते भर्तरि प्रिया । रमते या न निर्दुःखा सा हतैव दुरङ्गना ॥ १८ ॥

vanapuṣpalatāgehe svāyatte bhartari priyā | ramate yā na nirdhuḥkhā sā hataiva duraṅganā || 18 ||

In the house of forest flowers, being independent with a beloved husband | She who does not enjoy without sorrow is indeed defeated

वन के फूलों के घर में, स्वतंत्र होकर प्रिय पति के साथ | जो दुःख के बिना आनंद नहीं लेती वह हार जाती है

6.104.19

रम्यं विवाहितं कान्तं पतिमासाद्य निर्जने । स्त्री सती या न रमते तां धिगस्तु दुरङ्गनाम् ॥ १९ ॥

ramyaṃ vivāhitaṃ kāntaṃ patimāsādya nirjane | strī satī yā na ramate tāṃ dhigastu duraṅganām || 19 ||

Having obtained a charming, married, and beloved husband in solitude | A chaste woman who does not enjoy is cursed

एकांत में एक मनमोहक, विवाहित और प्रिय पति को पाकर | जो सती स्त्री आनंद नहीं लेती वह शापित है

6.104.20

समुज्झता यथाप्राप्तमपि वेद्यविदा सदा । अनिन्द्यं समुदारार्थं किं तज्ज्ञेन कृतं भवेत् ॥ २० ॥

samujjhatā yathāprāptamapi vedyavidā sadā | anindyaṃ samudārārthaṃ kiṃ tajjñena kṛtaṃ bhavet || 20 ||

Always accepting what comes naturally, even if known by the knower | What is the use of that knowledge if it is not for a noble purpose

हमेशा जो प्राकृतिक रूप से मिलता है, उसे स्वीकार करें, चाहे ज्ञाता हो | अगर उस ज्ञान का उद्देश्य उदार नहीं है तो उसका क्या लाभ

6.104.21

तत्किंचिद्रचयाम्याशु प्रपञ्चं प्रेक्षया वने । येनायं भूपतिर्भर्ता रमते मयि मानदः ॥ २१ ॥

tatkiṃcidracayāmyāśu prapañcaṃ prekṣayā vane | yenāyaṃ bhūpatirbhartā ramate mayi mānadaḥ || 21 ||

I will quickly gather some things in the forest with my eyes, so that this king, my husband, will enjoy with me, the respectful one.

मैं जल्दी से वन में कुछ चीजें इकट्ठी करूंगी, ताकि यह राजा, मेरा पति, मुझ पर आनंद ले सके, मेरे सम्मान के साथ।

6.104.22

इति संचिन्त्य चूडाला कुम्भवेषधरा पतिम् । प्राह काननगुल्मस्था कोकिलं कोकिला यथा ॥ २२ ॥

iti saṃcintya cūḍālā kumbhaveṣadharā patim | prāha kānanagulmasthā kokilaṃ kokilā yathā || 22 ||

Thus thinking, Chudala, disguised as a potter, spoke to her husband in the forest, like a cuckoo.

ऐसा सोचकर, चूडाला, कुम्हार के रूप में, वन में अपने पति से कोयल की तरह बोली।

6.104.23

कुम्भ उवाच । चैत्रमासस्य शुक्लोऽयं प्रतिपद्दिवसो महान् । अद्यास्थानं महारम्भं स्वर्गे भवति वै हरेः ॥ २३ ॥

kumbha uvāca | caitramāsasya śuklo'yaṃ pratipaddivoso mahān | adyāsthānaṃ mahārambhaṃ svarge bhavati vai hareḥ || 23 ||

Kumbha said: This is the great first day of the bright half of the month of Chaitra. Today, there is a great celebration in heaven for Hari.

कुम्भ ने कहा: यह चैत्र मास के शुक्ल पक्ष का महान प्रतिपदा दिवस है। आज स्वर्ग में हरि के लिए एक महान उत्सव होता है।

6.104.24

संनिधानं मया तत्र कर्तव्यं पितुरग्रतः । यथास्थिता हि नियतिर्न संत्याज्या कदाचन ॥ २४ ॥

sannidhānaṃ mayā tatra kartavyaṃ pituragrataḥ | yathāsthitā hi niyatirna saṃtyājyā kadācana || 24 ||

I must be present there before my father. Indeed, the established destiny should never be abandoned.

मुझे वहाँ अपने पिता के सामने उपस्थित होना चाहिए। वास्तव में, स्थापित भाग्य को कभी नहीं छोड़ना चाहिए।

6.104.25

प्रतिपालयितव्यं मे त्वयेह च वनावनौ। क्रीडता नवपुष्पायां समुद्वेगमगच्छता ॥ २५ ॥

pratipālayitavyaṃ me tvayeha ca vanāvanau | krīḍatā navapuṣpāyāṃ samudvegamagacchatā || 25 ||

You must protect me here in the forest, while I play with the new flowers, experiencing great excitement.

तुम्हें मुझे यहाँ वन में सुरक्षित रखना चाहिए, जबकि मैं नए फूलों के साथ खेलती हूँ, महान उत्साह महसूस करती हूँ।

6.104.26

आगच्छामि दिनान्तेऽद्य निर्विकल्पं नभस्तलात्। सर्गादतितरामेव त्वत्सङ्गो मम तुष्टये ॥ २६ ॥

āgacchāmi dinānte'dya nirvikalpaṃ nabhastalāt | sargād atitarām eva tvatsaṅgo mama tuṣṭaye || 26 ||

I will come at the end of the day from the sky without any doubts, for my happiness, your company is indeed beyond creation.

मैं आज दिन के अंत में निर्विकल्प आकाश से आऊंगा | मेरे सुख के लिए, तुम्हारा साथ सृष्टि से अधिक है।

6.104.27

इत्युक्त्वा मञ्जरीं कुम्भो ददौ मित्राय कौसुमीम्। प्रीतये स्वामिव प्रीतिं कान्तां नन्दनवृक्षजाम् ॥ २७ ॥

ityuktvā mañjarīṃ kumbho dadau mitrāya kausumīm | prītaye svāmiva prītiṃ kāntāṃ nandanavṛkṣajām || 27 ||

Having said this, the pot gave the flower cluster to his friend, as if to please his beloved, the beautiful flower from the heavenly tree.

ऐसा कहकर, घड़ा ने अपने मित्र को फूलों का गुच्छा दिया, जैसे अपनी प्रियतमा को खुश करने के लिए, स्वर्गीय वृक्ष का सुंदर फूल।

6.104.28

आगन्तव्यं त्वया शीघ्रमेवं वदति भूपतौ। षुप्लुवेऽथ वनाद्व्योम शरन्मुखपयोदवत् ॥ २८ ॥

āgantavyaṃ tvayā śīghram evaṃ vadati bhūpatau | ṣupluve'tha vanād vyoma śaranmukhapayodavat || 28 ||

You must come quickly, thus says the king, then the bird flew from the forest like an arrow released from a bow.

तुम्हें जल्दी आना होगा, ऐसा राजा कहता है, फिर पक्षी तीर की तरह छूटा और जंगल से उड़ गया।

6.104.29

पुष्पाञ्जलिं जहौ व्योम व्रजन्कुसुमदामजम्। विसारि वनवातेन हिमं हैम इवाम्बुदः ॥ २९ ॥

puṣpāñjaliṃ jahau vyoma vrajan kusumadāmajam | visāri vanavātena himaṃ haema ivāmbudaḥ || 29 ||

The sky let go of the handful of flowers, moving like a garland of flowers, scattered by the forest wind, like snow from a golden cloud.

आकाश ने फूलों का हाथ छोड़ दिया, जैसे फूलों की माला चल रही हो, जंगल की हवा से बिखर गया, जैसे सोने के बादल से बर्फ गिर रही हो।

6.104.30

शिखिध्वजो व्रजन्तं तं ददर्शाऽऽदर्शनं तदा। उन्निद्रोऽब्दं यथा बर्ही धीमत्प्रीतिर्हि दुस्त्यजा ॥ ३० ॥

śikhidhvajo vrajantaṃ taṃ dadarśā'daraśanaṃ tadā | unnidro'bdaṃ yathā barhī dhīmatprītirhi dustyajā || 30 ||

The peacock saw him moving, appearing like a vision then, awake like a crane at night, for the joy of the wise is indeed hard to let go.

मोर ने उसे चलते हुए देखा, जैसे एक दृश्य प्रकट हुआ, फिर, जैसे रात में जागरूक बगुला, क्योंकि बुद्धिमान का आनंद वास्तव में छोड़ना मुश्किल है।

6.104.31

शिखिध्वजदृशामन्ते व्योम्नि कुम्भवपुर्जहौशान्तावर्तेव वारिश्रीर्मुग्धा स्वं रूपमाययौ ॥ ३१ ॥

śikhidhvajadṛśāmante vyomni kumbhavapurjahauśāntāvarteva vāriśrīrmugdhā svaṃ rūpamāyayau || 31 ||

At the edge of Śikhidhvaja's vision, in the sky, the beautiful goddess, resembling a pot-shaped cloud, appeared like a whirlpool of water, and she assumed her own form.

शिखिध्वज की दृष्टि के किनारे पर, आकाश में, घटाकार बादल के समान सुंदर देवी, जल के भँवर के समान प्रकट हुई, और उसने अपना रूप धारण किया।

6.104.32

प्राप मञ्जरिताकारकल्पवृक्षोपमं पुरंस्फुरत्पताकमात्मीयं स्वर्गरम्यं दिवः पथा ॥ ३२ ॥

prāpa mañjaritākārakalpavṛkṣopamaṃ puramsphuratpatākamātmīyaṃ svargaramyaṃ divaḥ pathā || 32 ||

She reached a city resembling a cluster of blossoming flowers, like a wish-fulfilling tree, with fluttering banners, her own, heavenly, and on the path of the sky.

उसने एक नगर प्राप्त किया, जो खिले हुए फूलों के समूह के समान, कल्पवृक्ष के समान, हिलते हुए ध्वजों वाला, अपना, स्वर्गीय, और आकाश के मार्ग पर था।

6.104.33

अन्तःपुरमदृश्यैव विवेश ललनाकुलम्मधुमासमहालक्ष्मीर्लसल्लतमिव द्रुमम् ॥ ३३ ॥

antaḥpuramadṛśyaiva viveśa lalanākulammadhumāsamahālakṣmīrlasallatamiva drumam || 33 ||

She entered the inner palace, unseen, filled with beautiful women, like the goddess Madhumāsa Mahālakṣmī, shining like a creeper on a tree.

वह अन्तःपुर में अदृश्य रूप से प्रवेश किया, जो सुंदर महिलाओं से भरा हुआ था, मानो मधुमास महालक्ष्मी देवी के समान, और वह एक वृक्ष पर लता के समान चमक रही थी।

6.104.34

राजकार्याणि सर्वाणि तत्र संपाद्य सत्वरम्शिखिध्वजस्य पुरतः पपात फलपुष्पवत् ॥ ३४ ॥

rājakāryāṇi sarvāṇi tatra saṃpādya satvaramśikhidhvajasya puratah papāta phalapuṣpavat || 34 ||

After completing all the royal duties there quickly, she fell at the feet of Śikhidhvaja like a fruit or flower.

वहाँ सभी राजकीय कार्यों को शीघ्रता से पूरा करके, वह शिखिध्वज के चरणों में फल या फूल की तरह गिर पड़ी।

6.104.35

तत्र कालद्युति मुखं चकाराखिन्नमानसाइन्दुं सनीहारमिव श्यामा खिन्नमिवाम्बुजम् ॥ ३५ ॥

tatra kāladyuti mukhaṃ cakārākhinnamānasāinduṃ sanīhāramiva śyāmā khinnamivāmbujam || 35 ||

There, with a face shining like the dark night, she made the moon-like mind of Śikhidhvaja sorrowful, like a dark cloud covering the moon, and like a withered lotus.

वहाँ, अपने मुख की काली चमक से, उसने शिखिध्वज के चंद्रमा के समान मन को दुःखी कर दिया, मानो काले बादल ने चंद्रमा को ढक दिया हो, और मानो कमल मुरझा गया हो।

6.104.36

तं दृष्ट्वा तादृशाकारं समुत्तस्थौ शिखिध्वजः । बभूव खिन्नचेताश्च समुवाचेदमादृतः ॥ ३६ ॥

taṃ dṛṣṭvā tādṛśākāraṃ samuttasthau śikhidhvajaḥ | babhūva khinnacetāśca samuvācedamādṛtaḥ || 36 ||

Seeing him in such a state, Shikhidhvaja (Agni) rose up, became distressed, and respectfully spoke these words:

उसे ऐसी अवस्था में देखकर, शिखिध्वज (अग्नि) उठे, दुखी हो गए और आदरपूर्वक ये शब्द बोले:

6.104.37

देवपुत्र नमस्तेऽस्तु विमना इव लक्ष्यसे । कुम्भस्त्वं त्यज संरम्भमिदमासनमास्यताम् ॥ ३७ ॥

devaputra namaste'stu vimanā iva lakṣyase | kumbhastvaṃ tyaja saṃrambhamidamāsanamāsyatām || 37 ||

O son of the gods, I bow to you. You appear to be depressed. O Kumar, abandon your anger and take this seat.

हे देवपुत्र, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। आप उदास दिख रहे हैं। हे कुमार, अपना क्रोध त्याग दो और इस आसन पर बैठो।

6.104.38

सन्तो विदितवेद्या ये ते हि हर्षविषादजाम् । नाश्रयन्ति स्थितिं स्वस्थाः पद्मा इव जलार्द्रताम् ॥ ३८ ॥

santo viditavedyā ye te hi harṣaviṣādajām | nāśrayanti sthitiṃ svasthāḥ padmā iva jalārdratām || 38 ||

Those who are wise and know the truth do not succumb to joy or sorrow. They remain steady, like lotuses unaffected by the wetness of water.

जो विद्वान और सत्य को जानते हैं, वे हर्ष या विषाद में नहीं पड़ते। वे कमल की तरह स्थिर रहते हैं, जो पानी की गीली अवस्था से अप्रभावित रहता है।

6.104.39

श्रीवसिष्ठ उवाच । तेन क्ष्मापतिनेत्युक्ते कुम्भ आहासने विशन् । गिरा विषण्णया शीर्णवंशस्वनसमानया ॥ ३९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tena kṣmāpatinetyukte kumbha āhāsane viśan | girā viṣaṇṇayā śīrṇavaṃśasvanasamānayā || 39 ||

Vasishtha said: Hearing the words of the lord of the earth, Kumar, with a dejected voice resembling the sound of a broken bamboo, sat on the seat.

वसिष्ठ ने कहा: पृथ्वी के स्वामी के शब्द सुनकर, कुमार ने एक निराश आवाज में, जो टूटे बाँस की आवाज की तरह थी, आसन पर बैठे।

6.104.40

यावद्देहमवस्थासु समचित्ततयैव ये । कर्मेन्द्रियैर्न तिष्ठन्ति न ते तत्त्वविदः शठाः ॥ ४० ॥

yāvaddehamavasthāsu samacittatayaiva ye | karmeindriyairna tiṣṭhanti na te tattvavidaḥ śaṭhāḥ || 40 ||

Those who remain in the body with an even mind and do not engage in actions with the sense organs are not true knowers of reality; they are deceitful.

जो शरीर में समान मन से रहते हैं और इंद्रियों द्वारा कर्म में नहीं लगते, वे वास्तविक तत्त्वज्ञ नहीं हैं; वे धोखेबाज हैं।

6.104.41

ये ह्यतत्त्वविदो मूढा राजन्बालतयैव ते । अवस्थाभ्यः पलायन्ते गृहीताभ्यः स्वभावतः ॥ ४१ ॥

ye hyatattvavido mūḍhā rājanbālatayaiva te | avasthābhyaḥ palāyante gṛhītābhyaḥ svabhāvataḥ || 41 ||

These ignorant people, O King, due to their childish nature, flee from their natural states even when they are grasped.

ये अज्ञानी लोग, हे राजन्, अपनी बालसुलभ प्रवृत्ति के कारण, अपनी स्वाभाविक अवस्थाओं से भाग जाते हैं, भले ही वे उन्हें समझ लें।

6.104.42

यावत्तिलं यथा तैलं यावद्देहं तथा दशा । यो न देहदशामेति स च्छिनत्त्यसिनाम्बरम् ॥ ४२ ॥

yāvattilaṃ yathā tailaṃ yāvaddehaṃ tathā daśā | yo na dehadashāmeti sa cchinattyasināmbaram || 42 ||

Just as oil is present in sesame seeds, so are the states present in the body. One who does not attain the state of the body cuts through the armor of weapons.

जैसे तिल में तेल होता है, वैसे ही शरीर में अवस्थाएँ होती हैं। जो शरीर की अवस्था को नहीं पाता, वह हथियारों की कवच को काट देता है।

6.104.43

एष देहदशादुःखपरित्यागो ह्यनुत्तमः । यत्साम्यं चेतसो योगान्न तु कर्मेन्द्रियस्थितेः ॥ ४३ ॥

eṣa dehadashāduḥkhaparityāgo hyanuttamaḥ | yatsāmyaṃ cetaso yogānna tu karmeindriyasthiteḥ || 43 ||

This abandonment of the suffering of the body's states is indeed the best. It is the equanimity of the mind through yoga, not the steadiness of the organs of action.

यह शरीर की अवस्थाओं के दुःख का त्याग वास्तव में उत्तम है। यह मन की समता योग द्वारा है, कर्मेंद्रियों की स्थिरता नहीं।

6.104.44

यावद्देहं यथाचारं दशास्वङ्ग विजानता । कर्मेन्द्रियैर्हि स्थातव्यं न तु बुद्धीन्द्रियैः क्वचित् ॥ ४४ ॥

yāvaddehaṃ yathācāraṃ daśāsvanga vijānatā | karmeindriyairhi sthātavyaṃ na tu buddhīndriyaiḥ kvacit || 44 ||

As long as one knows the body's states according to conduct, one should remain steady with the organs of action, not with the organs of perception.

जब तक कोई शरीर की अवस्थाओं को आचरण के अनुसार जानता है, तब तक उसे कर्मेंद्रियों के साथ स्थिर रहना चाहिए, ज्ञानेंद्रियों के साथ नहीं।

6.104.45

परमेष्ठिप्रभृतयः सर्व एवोदिताशयाः । देहावस्थासु तिष्ठन्ति नियतेरेष निश्चयः ॥ ४५ ॥

parameṣṭhiprabhṛtayaḥ sarva evoditāśayāḥ | dehāvasthāsu tiṣṭhanti niyater eṣa niścayaḥ || 45 ||

All, beginning with the Supreme Lord, with uplifted intentions, remain in the states of the body. This is the certainty of destiny.

सब, परमेश्वर से शुरुआत करके, उत्थान के इरादे से, शरीर की अवस्थाओं में रहते हैं। यह नियति का निश्चय है।

6.104.46

अज्ञतत्त्वज्ञभूतानि दृश्यजातमिदं हि यत् । तत्सर्वमेव नियतिं धावत्यम्बु यथाम्बुधिम् ॥ ४६ ॥

ajñatattvajñabhūtāni dṛśyajātamidaṃ hi yat | tatsarvameva niyatiṃ dhāvatyambu yathāmbudhim || 46 ||

All beings, whether ignorant or knowledgeable, constitute the visible world. All of them, like water flowing into the ocean, are bound by destiny.

अज्ञानी या ज्ञानी, सभी प्राणी दृश्य जगत के अंग हैं। वे सब, जल की तरह समुद्र में बहते हुए, नियति से बंधे हैं।

6.104.47

तज्ज्ञा बुद्ध्यादिसाम्येन पाण्यादिचलनेन च । नियतिं यापयन्तीमां यावद्देहमखण्डिताम् ॥ ४७ ॥

tajjñā buddhyādisāmyena pāṇyādicalanena ca | niyatiṃ yāpayantīmāṃ yāvaddehamakhāṇḍitām || 47 ||

Those who know this, through the equality of intellect and other faculties, and through the movement of the hands and other limbs, attain destiny as long as the body is unbroken.

जो इसे जानते हैं, वे बुद्धि और अन्य इंद्रियों के समानता और हाथ और अन्य अंगों के चलन द्वारा, जब तक शरीर टूटा नहीं है, नियति को प्राप्त करते हैं।

6.104.48

अज्ञास्तु सर्वक्षोभेण सुखदुःखदशाहताः । नियतिं यापयन्त्यङ्ग देहलक्षैर्विखण्डिताम् ॥ ४८ ॥

ajñāstu sarvakṣobheṇa sukhaduḥkhadaśāhatāḥ | niyatiṃ yāpayantyaṅga dehalakṣairvikhāṇḍitām || 48 ||

The ignorant, however, are afflicted by all kinds of agitations and experience happiness and sorrow. They attain destiny with their bodies broken into pieces.

अज्ञानी लोग, हालांकि, सभी प्रकार के उत्पातों से पीड़ित होते हैं और सुख-दुःख का अनुभव करते हैं। वे अपने शरीर के टुकड़ों में नियति को प्राप्त करते हैं।

6.104.49

इत्थं सुखेषु ननु दुःखदशासु चेत्थं स्थातव्यमित्यधिगतं यदिहाङ्ग जीवैः । अज्ञज्ञभूतनिवहस्फुरितस्तदेवं दुर्लंघ्य एष नियतो नियतेर्विलासः ॥ ४९ ॥

itthaṃ sukheṣu nanu duḥkhadaśāsu cetthaṃ sthātavyamityadhigataṃ yadihāṅga jīvaiḥ |
ajñajñabhūtanivahasphuritastadevaṃ durlaṃghya eṣa niyato niyatervilāsaḥ || 49 ||

Thus, it is understood that one should remain steadfast in both happiness and sorrow. The flow of beings, both ignorant and knowledgeable, is thus unstoppable, and this is the play of destiny.

इस प्रकार, यह समझा जाता है कि सुख और दुःख में स्थिर रहना चाहिए। अज्ञानी और ज्ञानी प्राणियों का प्रवाह इस प्रकार अटूट है, और यह नियति का खेल है।

Chapter 105

6.105.1

शिखिध्वज उवाच । एवं स्थिते महाभाग कथमुद्वेगमीदृशम् । लब्धवानसि देवोऽपि वद वेद्यविदां वर ॥ १ ॥

śikhidhvaja uvāca | evaṃ sthite mahābhāga kathamudvegamīdṛśam | labdhvānasi devo'pi vada vedyavidāṃ vara ||1||

Shikhidhvaja said: O great fortunate one, how have you attained such distress even though you are a god? Tell me, O best among the knowers of the Vedas.

शिखिध्वज ने कहा: हे महाभाग्यवान, आप देव होकर भी ऐसे उद्वेग को कैसे प्राप्त हुए हो? मुझे बताओ, हे वेदज्ञों में श्रेष्ठ।

6.105.2

कुम्भ उवाच । श्रृणु कार्यमिदं चित्तं मदीयं वसुधाधिप । कथयामि तवाशेषं सर्गे यद्वृत्तमद्य मे ॥ २ ॥

kumbha uvāca | śṛṇu kāryamidaṃ cittaṃ madīyaṃ vasudhādhipa | kathayāmi tavāśeṣaṃ sarge yadvṛttamadya me ||2||

Kumbha said: Listen, O king of the earth, to this matter of my mind. I will tell you in full what has happened to me today in creation.

कुम्भ ने कहा: सुनो, हे पृथ्वी के राजा, मेरे मन की यह बात। मैं तुम्हें पूरी तरह से बताऊंगा कि आज सृष्टि में मुझे क्या हुआ है।

6.105.3

सुहृद्यावेदितं दुःखं परमायाति तानवम् । घनं जडं कृष्णमपि मुक्तवृष्टिरिवाम्बुदः ॥ ३ ॥

suhṛdyāveditaṃ duḥkhaṃ paramāyāti tānavam | ghanaṃ jaḍaṃ kṛṣṇamapi muktavṛṣṭirivāmbudaḥ ||3||

Sorrow shared with a friend becomes lighter, just as a dark, dense cloud becomes lighter after releasing rain.

मित्र के साथ बांटा गया दुःख हल्का हो जाता है, जैसे बारिश करने के बाद घना, काला बादल हल्का हो जाता है।

6.105.4

सुहृदा पृच्छता साधु चेतो याति प्रसन्नताम् । स्वच्छतोपगतेनाशु कतकेन जलं यथा ॥ ४ ॥

suhṛdā pṛcchatā sādhu cetaso yāti prasannatām | svacchatopagatenāśu katakena jalaṃ yathā ||4||

When a friend asks, the mind quickly becomes clear, just as clear water becomes transparent when touched by a crystal.

जब मित्र पूछता है, तो मन तुरंत साफ हो जाता है, जैसे स्पष्ट पानी स्फटिक के स्पर्श से पारदर्शी हो जाता है।

6.105.5

अहं तावदितो यातो भवते पुष्पमञ्जरीम् । दत्त्वा गगनमुल्लङ्घ्य संप्राप्तश्च त्रिविष्टपम् ॥ ५ ॥

ahaṃ tāvadito yāto bhavate puṣpamañjarīm | dattvā gaganamullaṅghya saṃprāptaśca triviṣṭapam ||5||

I went from here to offer you a garland of flowers. After giving it, I ascended to the sky and reached heaven.

मैं यहां से गया था आपको एक फूलों की माला देने के लिए। उसे देने के बाद, मैं आकाश में उठा और स्वर्ग पहुंचा।

6.105.6

ततः पित्रा महेन्द्रस्य सभास्थाने यथाक्रमम् स्थित्वोत्थाय तथोत्थानकाले पित्रा विवर्जितः ॥ ६ ॥

tataḥ pitrā mahendrasya sabhāsthāne yathākramam sthitvotthāya tathotthānakāle pitrā vivarjitaḥ || 6 ||

Then, after standing in the assembly of Indra's father according to the order, he was abandoned by his father at the time of rising.

तब, इन्द्र के पिता की सभा में क्रम से खड़े होने के बाद, उठने के समय पिता ने उसे छोड़ दिया।

6.105.7

इहागन्तुमहं त्यक्त्वा स्वर्गं संप्राप्तवान्नभः दिवाकरहयैः सार्धं वहाम्यनिलवर्त्मनि ॥ ७ ॥

ihāgantumahaṃ tyaktvā svargaṃ saṃprāptavānnabhaḥ divākarahayaiḥ sārdhaṃ vahāmyanilavartmani || 7 ||

Leaving heaven to come here, I have reached the sky and am traveling along the path of the wind with the horses of the sun.

स्वर्ग छोड़कर यहां आने के लिए, मैं आकाश तक पहुंच गया हूं और सूर्य के घोड़ों के साथ हवा के मार्ग पर यात्रा कर रहा हूं।

6.105.8

अथैकत्र गतो भानुरेकेनान्येन वर्त्मना आगच्छाम्यहमाकाशं सागरापतिताकृतिः ॥ ८ ॥

athaikatra gato bhānurekenānyena vartmanā āgacchāmyahamākāśaṃ sāgarāpatitākṛtiḥ || 8 ||

Then, the sun went to one place by another path, and I, resembling one who has fallen into the ocean, come to the sky.

तब, सूर्य दूसरे मार्ग से एक स्थान पर गया, और मैं, जो समुद्र में गिरने वाले के समान दिखाई देता हूं, आकाश में आया।

6.105.9

अथाग्रे वारिपूर्णानां मेघानां मध्यवर्त्मना अपश्यं मुनिमायान्तमहं दुर्वाससं जवात् ॥ ९ ॥

athāgre vāripūrṇānāṃ meghānāṃ madhyavartmanā apaśyaṃ munimāyāntamahaṃ durvāsasaṃ javāt || 9 ||

Then, ahead, I saw the sage Durvasa coming swiftly through the middle path of the clouds filled with water.

तब, आगे, मैंने पानी से भरे बादलों के मध्य मार्ग से तेजी से आते हुए ऋषि दुर्वासा को देखा।

6.105.10

पयोधरपटच्छन्नं विद्युद्वलयभूऽषितम् अभिसारिकया तुल्यं धाराधौताङ्गचन्दनम् ॥ १० ॥

payodharapaṭacchannaṃ vidyudvalayabhū'ṣitam abhisārikayā tulyaṃ dhārādhautāṅgacandanam || 10 ||

Covered with a garment of clouds, adorned with a lightning girdle, resembling a lover, with sandalwood paste washed by the streams.

बादलों के वस्त्र से ढका हुआ, बिजली के कंचुकी से सजा हुआ, प्रेमी के समान, धाराओं से धुले चन्दन से लिपटा हुआ।

6.105.11

स्थितां सुतरुसुच्छायामापगां वसुधातले । वेगेनाभिसरन्तं तां तपोलक्ष्मीमिव प्रियाम् ॥ ११ ॥

sthitāṃ sutarusucchāyāmāpagāṃ vasudhātale | vegenābhisarantaṃ tāṃ tapolakṣmīmiva priyām || 11 ||

I saw a beautiful river flowing swiftly on the earth, resembling a stream of penance.

मैंने पृथ्वी पर एक सुंदर नदी को देखा जो तपस्या की धारा के समान तेजी से बह रही थी।

6.105.12

तस्य कृत्वा नमस्कारमुक्तं खे वहता मया । मुने नीलाभ्रवस्त्रस्त्वमभिसारिकया समः ॥ १२ ॥

tasya kṛtvā namaskāramuktaṃ khe vahatā mayā | mune nīlābhravastrastvamabhisārikayā samaḥ || 12 ||

After paying my respects to him, I spoke in the sky, 'O sage, you are like a lover clad in dark clouds.'

उसके प्रति प्रणाम करके, मैंने आकाश में कहा, 'हे मुनि, आप काले बादलों के वस्त्र पहने प्रेमी के समान हैं।'

6.105.13

इत्याकर्ण्य मुमोचासौ मयि मानद शापकम् । स्तनकेशवती कान्ता हावभावविलासिनी ॥ १३ ॥

ityākarṇya mumocāsau mayi mānada śāpakam | stanakeśavatī kāntā hāvabhāvavilāsinī || 13 ||

Hearing this, he released a curse upon me, 'You will become a woman with beautiful breasts and hair, skilled in the art of seduction.'

यह सुनकर, उसने मुझ पर एक शाप डाला, 'तुम सुंदर स्तन और बालों वाली स्त्री बनोगे, जो मोहने की कला में निपुण होगी।'

6.105.14

गच्छानेन दुरुक्तेन रात्रौ योषा भविष्यसि । इति श्रुत्वाऽशुभं वाक्यमुत्थितं जर्जरद्विजात् ॥ १४ ॥

gacchānena durukthena rātrau yoṣā bhaviṣyasi | iti śrutvā'śubhaṃ vākyamutthitaṃ jarjaradvijāt || 14 ||

With these harsh words, 'You will become a woman at night,' having heard this inauspicious statement, I was distressed and rose up from the weak sage.

इन कठोर शब्दों से, 'तुम रात में स्त्री बनोगे,' यह अशुभ वचन सुनकर मैं व्याकुल हो गया और दुर्बल ऋषि से उठ गया।

6.105.15

विमृशामि मनाग्यावत्तावदन्तर्हितो मुनिः । इत्युद्वेगमनाः साधो संप्राप्तोऽहं नभस्तलात् ॥ १५ ॥

vimṛśāmi manāgyāvattāvadantarhito muniḥ | ityudvegamanāḥ sādho saṃprāpto'haṃ nabhastalāt || 15 ||

Reflecting on this, I realized the sage had disappeared. Thus, with a disturbed mind, O virtuous one, I have come from the sky.

इस पर विचार करते हुए, मैंने देखा कि ऋषि अंतर्धान हो गया था। इस प्रकार, व्याकुल मन से, हे साधु, मैं आकाश से आया हूँ।

6.105.16

एतत्ते कथितं सर्वं संपन्नोऽस्मि निशाङ्गना अतिवाह्यं दिनान्तेषु स्त्रीत्वमेतन्मया कथम् ॥ १६ ॥

etattē kathitaṃ sarvaṃ saṃpannō'smi niśāṅganā ativāhyaṃ dināntēṣu strītvamētanmayā katham || 16 ||

I have told you everything, O Nishanga, I am accomplished. How can I, a woman, endure this day and night?

मैंने तुम्हें सब कुछ बता दिया है, हे निशाङ्गना, मैं पूर्ण हूँ। मैं एक स्त्री हूँ, मैं इस दिन और रात को कैसे सहन कर सकती हूँ?

6.105.17

योषित्स्तनवती रात्रौ वक्तव्यं किं मया पितुः संसृतौ भवितव्यानामहो नु विषमा गतिः ॥ १७ ॥

yōṣitstānavatī rātrau vaktavyaṃ kiṃ mayā pitur saṃsṛtau bhavitavyānāmaho nu viṣamā gatiḥ || 17 ||

What should I, a woman with breasts, say to my father at night? In this world of transmigration, alas, what a difficult path!

मैं, एक स्त्री जिसके स्तन हैं, रात में अपने पिता से क्या कहूँ? इस संसार में, हाय, कितना कठिन मार्ग है!

6.105.18

अहमप्यद्य यद्दैवाद्यूनामामिषतां गतः कष्टं मदपहारेण कलहो जायतेऽधुना ॥ १८ ॥

ahamapyadya yaddaivādyūnāmāmiṣatāṃ gataḥ kaṣṭaṃ madapahārēṇa kalaho jāyatē'dhunā || 18 ||

Today, by the will of fate, I have become inferior. It is painful that a quarrel arises now due to my loss.

आज, भाग्य के अनुसार, मैं हीन हो गया हूँ। मेरे नुकसान के कारण अब झगड़ा हो रहा है, यह दुःखद है।

6.105.19

दिवि देवकुमाराणां कामाकुलधियामिह गुरुदेवद्विजातीनां लज्जापरवशात्मना ॥ १९ ॥

divi dēvakumārāṇāṃ kāmākuladhiyāmiha gurudēvadvijātīnāṃ lajjāparavaśātmanā || 19 ||

In heaven, the minds of the divine youths are disturbed by desire. Here, they are overwhelmed by shame before their elders, gods, and brahmins.

स्वर्ग में, दिव्य युवाओं के मन कामना से व्याकुल होते हैं। यहाँ, वे अपने बड़ों, देवताओं और ब्राह्मणों के सामने शर्म से भर जाते हैं।

6.105.20

कथमग्रे मया सम्यग्वस्तव्यं यामिनीस्त्रिया श्रीवसिष्ठ उवाच इत्युक्त्वा क्षणमेकं सा तूष्णीं स्थित्वा मुनिस्थितौ ॥ २० ॥

kathamagrē mayā samyagvastavyaṃ yāminīstriyā śrīvasiṣṭha uvāca ityuktvā kṣaṇamēkaṃ sā tūṣṇīṃ sthitvā munisthitau || 20 ||

How can I, a woman, properly live in the future? Thus spoke Shri Vasishtha. Having said this, she remained silent for a moment, standing in the presence of the sage.

मैं, एक स्त्री, भविष्य में कैसे ठीक से जी सकती हूँ? इस प्रकार श्री वसिष्ठ ने कहा। यह कहकर, वह एक क्षण के लिए चुप रही, ऋषि के सामने खड़ी हुई।

6.105.21

धैर्यमाश्रित्य कुम्भोऽत्र पुनराह रघूद्वह । किमज्ञ इव शोचामि किं मम क्षतमात्मनः ॥ २१ ॥

dhairyamāśritya kumbho'tra punarāha raghūdvaha | kimajña iva śocāmi kiṃ mama kṣatamātmanaḥ || 21 ||

With patience, the pot (Kumbha) said again, 'Why do I grieve like an ignorant person? What harm has befallen my self?'

धैर्य से कुम्भ ने फिर कहा, 'मैं अज्ञानी की तरह क्यों शोक कर रहा हूँ? मेरे आत्मा को क्या हानि हुई है?'

6.105.22

यथागतमयं देहो मत्तोऽन्योऽनुभविष्यति । शिखिध्वज उवाच । परिदेवनया कोऽर्थो देवपुत्र तथैतया ॥ २२ ॥

yathāgatamayaṃ deho matto'nyo'nubhaviṣyati | śikhidhvaja uvāca | paridevanayā ko'artho devaputra tathaitayā || 22 ||

This body will be experienced by another as it has come. Shikhidhvaja said, 'O son of the gods, what is the use of such lamentation?'

यह शरीर जैसा आया है, वैसा ही दूसरे द्वारा अनुभव किया जाएगा। शिखिध्वज ने कहा, 'हे देवपुत्र, ऐसे शोक का क्या लाभ है?'

6.105.23

यदायाति तदायातु देहस्यात्मा न लिप्यते । कानिचिद्यानि दुःखानि सुखानि विहितानि च ॥ २३ ॥

yadāyāti tadāyātu dehasyātmā na lipyate | kānicidyāni duḥkhāni sukhāni vihitāni ca || 23 ||

Whatever comes, let it come; the self is not affected by the body. Some sorrows and pleasures are ordained.

जो भी आता है, वह आए; आत्मा शरीर से प्रभावित नहीं होता। कुछ दुःख और सुख निर्धारित हैं।

6.105.24

तानि सर्वाणि देहस्य देहिनो न तु कानिचित् । यदि त्वमपि कार्याणामखेदार्होऽपि खिद्यसे ॥ २४ ॥

tāni sarvāṇi dehasya dehino na tu kānicit | yadi tvamapi kāryāṇāmakhedārho'pi khidyase || 24 ||

All those belong to the body, not to the self. Even if you are capable of performing actions, you are grieving.

वे सभी शरीर के हैं, आत्मा के नहीं। यदि आप कार्य करने में सक्षम हैं, तो भी आप शोक कर रहे हैं।

6.105.25

तदन्येषामुपायः स्यात्क इवागमभूषणः । खेदे खेदोचितं वाच्यमिति किंचित्त्वमुक्तवान् ॥ २५ ॥

tadanyeṣāmupāyaḥ syātk iva āgamabhūṣaṇaḥ | khede khedocitaṃ vācyamiti kiṃcittvamuktovān || 25 ||

Therefore, it should be a means for others. What kind of ornament of knowledge is this? In grief, what is appropriate to say? You have said something.

इसलिए, यह दूसरों के लिए एक साधन होना चाहिए। यह कैसा ज्ञान का आभूषण है? शोक में, क्या उचित कहना चाहिए? आपने कुछ कहा है।

6.105.26

इदानीं समतामेत्य तिष्ठाखिन्नो यथास्थितम् । श्रीवसिष्ठ उवाच । तावेवमादिभिर्वाक्यैरन्योन्याश्वासनं स्वयम् ॥ २६ ॥

idānīṃ samatāmetya tiṣṭhākhinno yathāsthitam | śrīvasiṣṭha uvāca | tāvevamādibhirvākyairanyonyāśvāsanaṃ svayam || 26 ||

Now, having reached equilibrium, remain as you are, O weary one | Sri Vasistha said | Thus, they consoled each other with such words themselves

अब, संतुलन प्राप्त करके, जैसे भी हो, वैसे ही रहो, ओ थके हुए | श्री वसिष्ठ ने कहा | इस प्रकार, वे अपने आप ऐसे शब्दों से एक-दूसरे को सांत्वना देते हुए

6.105.27

कृत्वा स्थितौ वनस्निग्धौ सुहृदौ खेदिनौ मिथः । अथार्कोऽप्यस्य कुम्भस्य स्त्रीत्वमुत्पादयन्निव ॥ २७ ॥

kṛtvā sthitau vanasnigdhau suhṛdau khedinau mithaḥ | athārko'pyasya kumbhasya strītvamutpādayanniva || 27 ||

Having made the two friends, who were affectionate towards each other and grieving, stay in the forest | Then the sun, as if producing femininity in its pot

दो मित्रों को, जो एक-दूसरे के प्रति स्नेह रखते थे और दुःखी थे, वन में ठहरा दिया | फिर सूर्य, जैसे कि अपने घड़े में स्त्रीत्व उत्पन्न कर रहा हो

6.105.28

जगामास्तं जगद्दीपो दीपः स्नेहक्षयादिव । व्यवहारभरैः सार्धं पद्माः संकोचमाययुः ॥ २८ ॥

jagāmāstaṃ jagaddīpo dīpaḥ snehaḳṣayādiva | vyavahārabharaiḥ sārdhaṃ padmāḥ saṃkocamāyayuḥ || 28 ||

The world's lamp, the sun, set as if due to the diminishing of affection | Along with the burdens of worldly affairs, the lotuses contracted

विश्व का दीपक, सूर्य, जैसे स्नेह की कमी के कारण अस्त हो गया | व्यवहार के भारों के साथ, कमल सिकुड़ गए

6.105.29

मार्गाश्च पथिकैः सार्धं पान्थस्त्रीहृदयानि च । दाशवद्विहगान्सर्वान्कुर्वदेकत्र संचितान् ॥ २९ ॥

mārgāśca pathikaiḥ sārdhaṃ pānthastrīhṛdayāni ca | dāśavadvihagānsarvānkurvadekatra saṃcitān || 29 ||

The paths along with the travelers, the hearts of the travelers' wives, and all the birds, he made gathered in one place

मार्ग पथिकों के साथ, पथिकों की पत्नियों के हृदय, और सभी पक्षी, उन्हें एक जगह एकत्र किया

6.105.30

तारकारत्नजालाढ्यं भुवने साम्यतां ययौ । खं हसदिव ताराढ्यं विकासिकुमुदाकरम् ॥ ३० ॥

tārakāratnajālāḍhyaṃ bhuvane sāmyatāṃ yayau | khaṃ hasadiva tārāḍhyaṃ vikāsikumudākaram || 30 ||

The world adorned with the network of star-jewels reached equilibrium | The sky, as if laughing, full of stars, like a blooming lotus

तारा-रत्न जाल से अलंकृत भुवन संतुलन तक पहुंचा | आकाश, जैसे हंस रहा हो, तारों से भरा, खिले हुए कमल के समान

6.105.31

ययावुन्नादचक्राह्वभ्रमद्भ्रमरपेटकम् । सुहृदौ तावथोत्थाय संध्यामुद्यन्निशाकराम् ॥ ३१ ॥

yayāvunnādacakrāhvabhramadbharamarapeṭakam | suhṛdau tāvathottāya saṃdhyāmudyanniśākarām || 31 ||

The bee-hive, buzzing with the sound of bees, revolved like a spinning wheel. Then, the two friends rose up during the twilight as the moon was rising.

भ्रमरों की भनभनाहट से भरा मधुमक्खी का छत्ता घूम रहा था जैसे एक चरखा | फिर, दो मित्र संध्या के समय उठे जब चाँद उग रहा था।

6.105.32

वन्दयित्वा तथा कृत्वा जप्यं गुल्मान्तरे स्थितौ । ततः कुम्भः शनैस्तत्र स्त्रैणमभ्याहरन्वपुः ॥ ३२ ॥

vandayitvā tathā kṛtvā japyam gulmāntare sthitau | tataḥ kumbhaḥ śanais tatra straiṇam abhyāharan vapuḥ || 32 ||

After bowing and performing the chant, they stood in the midst of the bushes. Then, the pot gradually brought forth a female form there.

वंदना करके और जप करके, वे झाड़ियों के बीच खड़े हुए | फिर, घड़ा धीरे-धीरे वहाँ एक स्त्री रूप ले आया।

6.105.33

शिखिध्वजं पुरःसंस्थं प्रोवाच गलदक्षरम् । पतामीव स्फुरामीव द्रवामीवाङ्गयष्टिभिः ॥ ३३ ॥

śikhidhvajaṃ puraḥsaṃsthaṃ provāca galadakṣaram | patāmīva sphurāmīva dravāmīvāṅgayaṣṭibhiḥ || 33 ||

He spoke to Shikhidhvaja, who was standing in front, with faltering words, as if falling, trembling, and melting with the limbs of his body.

उसने शिखिध्वज से कहा, जो सामने खड़ा था, लड़खड़ाते शब्दों में, जैसे गिर रहा हो, काँप रहा हो, और शरीर के अंगों से पिघल रहा हो।

6.105.34

लज्जयैव च ते राजन्मन्ये स्त्रीत्वं व्रजाम्यहम्। पश्येमे परिवर्धन्ते राजन्मम शिरोरुहाः ॥ ३४ ॥

lajjayaiva ca te rājan manye strītvaṃ vrajāmyaham | paśyeme parivardhante rājan mama śiroruhāḥ || 34 ||

O King, I think out of modesty, I am becoming a woman. O King, see, my hairs are growing.

हे राजन्, मैं सोचता हूँ कि लज्जा के कारण मैं स्त्री बन रहा हूँ | हे राजन्, देखो, मेरे बाल बढ़ रहे हैं।

6.105.35

प्रस्फुरत्तारकामाला दिनान्ततिमिरा इव। पश्येमौ मम जायेते प्रोन्मुखावुरसि स्तनौ ॥ ३५ ॥

prasphurattārakāmālā dināntatimirā iva | paśyemau mama jāyete pronmukhāvurasi stanau || 35 ||

See, my breasts are appearing on my chest, shining like a row of twinkling stars in the darkness at the end of the day.

देखो, मेरे स्तन मेरे वक्ष पर प्रकट हो रहे हैं, जैसे दिन के अंत के अंधेरे में चमकते तारों की पंक्ति।

6.105.36

कोरकाविव पद्मिन्या वसन्ते गगनोन्मुखौ। आगुल्फमेव लम्बानि संपद्यन्तेऽम्बराणि मे ॥ ३६ ॥

korakāviva padminyā vasante gaganonmukhau | āgulphameva lambāni saṃpadyante'mbarāṇi me || 36 ||

In the spring, my garments hang down to my ankles like the buds of a lotus opening towards the sky.

वसंत ऋतु में, मेरे वस्त्र कमल के फूल की तरह आकाश की ओर खिलते हुए, मेरे पैरों तक लटकते हैं।

6.105.37

देहादेव सखे पश्य स्त्रिया इव शनैः शनैः। भूषणान्युत रत्नानि माल्यानि विविधानि च ॥ ३७ ॥

dehādeva sakhe paśya striyā iva śanaiḥ śanaiḥ | bhūṣaṇānyuta ratnāni mālyāni vividhāni ca || 37 ||

O friend, look at my body adorned with various ornaments, jewels, and garlands, just like a woman, slowly and gradually.

हे मित्र, देखो मेरा शरीर विभिन्न आभूषणों, रत्नों और मालाओं से सजा हुआ है, जैसे कि एक स्त्री की तरह, धीरे-धीरे।

6.105.38

पश्येमान्यङ्ग जायन्ते स्वाङ्गेभ्यो वृक्षपुष्पवत्। पश्यायं स्वयमेवाद्य चन्द्रांशुकरशोभनः ॥ ३८ ॥

paśyemānyaṅga jāyante svāṅgebhyo vṛkṣapuṣpavat | paśyāyaṃ svayamevādya candrāṃśukarasobhanaḥ || 38 ||

Look, these limbs are born from my own body like the flowers of a tree. See, today I am naturally beautiful like the moon and the sun.

देखो, ये अंग मेरे ही शरीर से उत्पन्न होते हैं, जैसे कि एक वृक्ष के फूल। देखो, आज मैं स्वाभाविक रूप से चंद्रमा और सूर्य की तरह सुंदर हूँ।

6.105.39

मूर्ध्नि पट्टांशुको जातो नीहारोऽद्राविवाङ्ग मे। सर्वाणि कान्तालिङ्गानि जातानि मम मानद ॥ ३९ ॥

mūrdhni paṭṭāṃśuko jāto nīhāro'drāvivāṅga me | sarvāṇi kāntāliṅgāni jātāni mama mānada || 39 ||

On my head, a turban has appeared like a mist. O respectful one, all the marks of a beloved have appeared on me.

मेरे सिर पर एक पगड़ी प्रकट हुई है, जैसे कि एक धुंध। हे आदरणीय, मुझ पर सभी प्रिय के चिह्न प्रकट हो गए हैं।

6.105.40

हा धिक्कष्टं विषादो मे किं करोम्यङ्गनास्म्यहम्। हा धिक्कष्टमहो साधो स्थित एवाहमङ्गना ॥ ४० ॥

hā dhikkaṣṭaṃ viṣādo me kiṃ karomyangaṅāsmyaham | hā dhikkaṣṭamaho sādho sthita evāhamangaṅā || 40 ||

Alas, what a misfortune, I am in sorrow. What shall I do, I am a woman. Alas, what a misfortune, O virtuous one, I remain a woman.

हाय, कितना दुःख, मैं दुःखी हूँ। मैं क्या करूँ, मैं एक स्त्री हूँ। हाय, कितना दुःख, हे साधु, मैं एक स्त्री ही रही।

6.105.41

संविदानुभवाम्यन्तर्नितम्बजघने त्विमेविपिने कुम्भ इत्युक्त्वा तूष्णीं खिन्नो बभूव ह ॥ ४१ ॥

saṃvidānubhavāmyantarnitambajaghane tvimevipine kumbha ityuktvā tūṣṇīṃ khinno babhūva ha || 41 ||

I experience consciousness in the dense forest of your hips and buttocks, saying 'pot' and then became silent, distressed.

मैं आपकी कमर और नितम्ब के घने वन में चेतना का अनुभव करता हूँ, 'घड़ा' कहकर चुप हो गया, दुःखी होकर।

6.105.42

राजापि च तमालोक्य तथैवासीद्विषण्णधीःमुहूर्तमात्रेणोवाच शिखिध्वज इदं वचः ॥ ४२ ॥

rājāpi ca tamālokya tathaivāsīdviṣaṇṇadhīḥmuhūrtamātreṇovāca śikhidhvaja idaṃ vacaḥ || 42 ||

Even the king, seeing him thus, became despondent and in a moment said to Shikhidhvaja these words.

राजा भी, उसे ऐसे देखकर, निराश हो गया और एक पल में शिखिध्वज से ये शब्द कहे।

6.105.43

कष्टं सोऽयं महासत्त्वः संपन्ना वरवर्णिनीसाधो विदितवेद्यस्त्वं जानासि नियतेर्गतिम् ॥ ४३ ॥

kaṣṭaṃ so'yaṃ mahāsattvaḥ saṃpannā varavarṇinīsādho viditavedyastvaṃ jānāsi niyatergatim || 43 ||

It is difficult for that great being who is endowed with excellent qualities, O foolish one, you know the course of destiny.

उस महान सत्ता के लिए यह कठिन है जो उत्कृष्ट गुणों से संपन्न है, हे मूर्ख, तुम नियति के मार्ग को जानते हो।

6.105.44

अवश्यभाविन्यर्थेऽस्मिन्मा खिन्नहृदयो भवापतन्ति दशास्तास्ताः सुधियां देहमात्रके ॥ ४४ ॥

avaśyabhāvinyarthe'sminmā khinnahṛdayo bhavaāpatanti daśāstāstāḥ sudhiyāṃ dehamātrake || 44 ||

In this inevitable matter, do not be disheartened, these states fall upon the wise in the mere body.

इस अनिवार्य विषय में, निराश मत हो, ये अवस्थाएँ बुद्धिमान पर शरीर पर ही आ पड़ती हैं।

6.105.45

न खेदमनुगच्छामि नियतिः केन लङ्घ्यतेइति निर्णीय तौ खेदं तं नीत्वा तनुतामिव ॥ ४५ ॥

na khedamanugacchāmi niyatiḥ kena laṅghyateiti nirṇīya tau khedaṃ taṃ nītvā tanutāmiva || 45 ||

I do not follow sorrow. Fate cannot be overcome. Having decided this, they brought that sorrow to an end as if it were a thin thread.

मैं दुःख का अनुसरण नहीं करता। नियति को कैसे पार किया जा सकता है? इस पर निर्णय लेकर, उन्होंने उस दुःख को एक पतली डोरी की तरह समाप्त कर दिया।

6.105.47

एकतल्पे निशां तूष्णीं नीतवन्तौ चिरेण ताम्। अथ प्रभाते तत्स्त्रैणं वपुरुत्सृज्य यौवनम्॥ ४७॥

ekatalpe niśāṃ tūṣṇīṃ nītavantau cireṇa tām | atha prabhāte tatstraiṇaṃ vapurutsṛjya yauvanam || 47 ||

They spent the night silently on the same bed for a long time. Then, in the morning, she abandoned her feminine form and youth.

वे एक ही बिस्तर पर चुपचाप लंबे समय तक रात बिताते रहे | फिर, प्रभात में, उसने अपना स्त्री रूप और यौवन त्याग दिया |

6.105.48

बभूव कुम्भः कुम्भाभः कुचप्रोज्झितमूर्तिमान्। इति सा राजमहिषी चूडाला वरवर्णिनी॥ ४८॥

babhūva kumbhaḥ kumbhābhaḥ kucaprojjhitamūrtimān | iti sā rājamahiṣī cūḍālā varavarṇinī || 48 ||

Thus, she became a pot-bellied figure, devoid of breasts, and assumed the form of a man. Thus, Queen Chudala, the beautiful one, became a man.

इस प्रकार, वह एक थुलथुल आकार बन गई, स्तनों से रहित, और पुरुष का रूप धारण किया | इस प्रकार, रानी चूडाला, सुंदर वर्ण वाली, पुरुष बन गई |

6.105.49

कुम्भत्वमास्थिता भर्तुः पश्चात्स्त्रीत्वमुपागता। विजहार वनान्तेषु कुमारीधर्मिणी निशि। कुम्भरूपधरा चाह्नि भर्त्रा मित्रेण संयुता॥ ४९॥

kumbhatvamāsthitā bhartuḥ paścātstrītvamupāgatā | vijahāra vanānteṣu kumārīdharmiṇī niśi |
kumbharūpadharā cāhni bhartrā mitreṇa saṃyutā || 49 ||

Having assumed the form of a man, she later resumed her feminine form. She roamed in the forest at night as a maiden and during the day as a man, accompanied by her husband and friend.

पुरुष का रूप धारण करने के बाद, वह बाद में अपना स्त्री रूप फिर से धारण कर लिया | वह रात में कुंवारी के रूप में वन में घूमती रही और दिन में पुरुष के रूप में, अपने पति और मित्र के साथ |

6.105.50

कैलासमन्दरमहेन्द्रसुमेरुसह्यसानुष्वविस्खलितयोगगमागमा सा। साकं प्रियेण सुहृदा भवता यथेच्छं स्रग्दामहारवलिता विजहार नारी॥ ५०॥

kailāsamandaramahendrasumerusahyasānuṣvaviskhalitayogagamāgamā sā | sākaṃ priyeṇa suhṛdā bhavatā
yathecchaṃ sragdāmahāravalitā vijahāra nārī || 50 ||

She, adorned with garlands, necklaces, and ornaments, roamed freely with her beloved friend and husband in the mountains of Kailasa, Mandara, Mahendra, Sumeru, and Sahya, with her yoga powers unimpaired.

वह, माला, हार और आभूषणों से सजी-सजाई, अपने प्रिय मित्र और पति के साथ कैलास, मंदर, महेंद्र, सुमेरु और साह्य पर्वतों में अपनी योग शक्तियों के साथ स्वतंत्र रूप से घूमती रही |

Chapter 106

6.106.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ततः कतिपयेष्वेव दिवसेषु गतेषु सा । इदं प्रोवाच भर्तारं कुम्भरूपधरा सती ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tataḥ katipayeṣveva divaseṣu gateṣu sā | idaṃ provāca bhartāraṃ kumbharūpadharā satī || 1 ||

Shri Vasishtha said: Then, after a few days had passed, she, who had taken the form of a pot, spoke these words to her husband:

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब, कुछ दिनों के बाद, वह, जो घड़े का रूप धारण कर चुकी थी, अपने पति से ये शब्द बोली:

6.106.2

राजन्राजीवपत्राक्ष ममेदं वचनं शृणु । निशायां प्रत्यहं तावत्स्थित एवाहमङ्गना ॥ २ ॥

rājanrājīvapatrākṣa mamedaṃ vacanaṃ śṛṇu | niśāyāṃ pratyahaṃ tāvatsthita evāham aṅganā || 2 ||

O king with lotus-like eyes, listen to my words. Every night, I remain here as a woman.

हे कमल नयन वाले राजन्, मेरे शब्दों को सुनो। प्रत्येक रात्रि, मैं एक स्त्री के रूप में यहाँ रहती हूँ।

6.106.3

तदिच्छाम्यङ्गनाधर्मं निपुणीकर्तुमीदृशम् । भर्त्रे कस्मैचिदात्मानं विवाहेन ददाम्यहम् ॥ ३ ॥

tadicchāmyaṅganādharmam nipuṇīkartumīdṛśam | bhartre kasmaicidātmānaṃ vivāhena dadāmyaham || 3 ||

I desire to perform such a duty of a woman skillfully. I wish to give myself to some husband through marriage.

मैं ऐसा स्त्री धर्म कुशलतापूर्वक करना चाहती हूँ। मैं विवाह के द्वारा किसी पति को अपने आप को देना चाहती हूँ।

6.106.4

तद्भवानेव मे भर्ता रोचते भुवनत्रये । गृहाण मां विवाहेन भार्यात्वे निशि सर्वदा ॥ ४ ॥

tadbhavaaneva me bhartā rocate bhuvanatraye | gṛhāṇa māṃ vivāhena bhāryātve niśi sarvadā || 4 ||

Therefore, you alone are my husband, who is pleasing in the three worlds. Accept me through marriage as your wife every night.

इसलिए, आप ही मेरे पति हैं, जो तीनों लोकों में प्रिय हैं। विवाह के द्वारा मुझे प्रत्येक रात्रि अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करें।

6.106.5

अयत्नोपनतं साधो प्रियेण सुहृदा सह । स्त्रीसुखं भोक्तुमिच्छामि मा मे विघ्नकरो भव ॥ ५ ॥

ayatnopanataṃ sādho priyeṇa suhṛdā saha | strīsukhaṃ bhoktumicchāmi mā me vighnakaro bhava || 5 ||

O virtuous one, I desire to enjoy the pleasure of a woman effortlessly with my beloved friend. Do not be an obstacle to me.

हे साधु, मैं अपने प्रिय मित्र के साथ बिना किसी प्रयास के स्त्री सुख का आनंद लेना चाहती हूँ। मेरे लिए बाधक मत बनो।

6.106.6

क्रमप्रवृत्तमासृष्टेः सुखं साध्यं मनोरमम् । प्रकृतं कुर्वतः कार्यं दोषः क इव जायते ॥ ६ ॥

kramapravṛttamāsṛṣṭeḥ sukhaṃ sādhyam manoramam | prakṛtaṃ kurvataḥ kāryaṃ doṣaḥ ka iva jāyate || 6 ||

When actions are performed in a natural sequence, what harm can arise? The desired happiness is easily attained.

जब कार्य क्रमबद्ध और स्वाभाविक रूप से किए जाते हैं, तो कोई दोष नहीं होता है। इच्छित सुख आसानी से प्राप्त हो जाता है।

6.106.7

इच्छानिच्छे फले त्यक्त्वा समन्तात्सर्ववस्तुषु । वयं न सेच्छा नानिच्छाः कुर्मस्तेनेदमीप्सितम् ॥ ७ ॥

icchānicchhe phale tyaktvā samantātsarvavastuṣu | vayaṃ na secchā nānicchāḥ kurmastenedamīpsitam || 7 ||

Abandoning desires and non-desires for the results, we perform this desired action in all things.

फल की इच्छा और अनिच्छा को त्यागकर, हम सभी वस्तुओं में इस इच्छित कार्य को करते हैं।

6.106.8

शिखिध्वज उवाच । कृतेनानेन कार्येण न शुभं नाशुभं सखे । पश्यामि तन्महाबुद्धे यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ८ ॥

śikhidhvaja uvāca | kṛtenānena kāryeṇa na śubhaṃ nāśubhaṃ sakhe | paśyāmi tanmahābuddhe yathecchasi tathā kuru || 8 ||

Shikhidhvaja said: O friend, I see no good or bad in this action performed. O great wise one, do as you wish.

शिखिध्वज ने कहा: हे मित्र, मैं इस कार्य में कोई शुभ या अशुभ नहीं देखता हूँ। हे महाबुद्धिमान, जैसा तुम चाहो वैसा करो।

6.106.9

समतां संप्रयातेन चेतसेदं जगत्त्रयम् । स्वरूपमेव पश्यामि यथेच्छसि तदाचर ॥ ९ ॥

samatāṃ saṃprayātena cetasedaṃ jagattrayam | svarūpameva paśyāmi yathecchasi tadācara || 9 ||

With a balanced mind, I see the three worlds as they are. Do as you wish.

समतापूर्वक मन से, मैं तीनों लोकों को उनके स्वरूप में देखता हूँ। जैसा तुम चाहो वैसा करो।

6.106.10

कुम्भ उवाच । यद्येवं तन्महीपाल लग्नमद्यैव शोभनम् । राकेयं श्रावणस्यास्य ह्यः सर्वं गणितं मया ॥ १० ॥

kumbha uvāca | yadyevaṃ tanmahīpāla lagnamadyaiva śobhanam | rākeyaṃ śrāvaṇasyāsya hyaḥ sarvaṃ gaṇitaṃ mayā || 10 ||

Kumbha said: O king, if this is the case, the auspicious moment is today. I have calculated everything for this day of the Shravan month.

कुम्भ ने कहा: हे राजा, यदि ऐसा है, तो शुभ मुहूर्त आज ही है। मैंने इस श्रावण मास के दिन के लिए सब कुछ गणित किया है।

6.106.11

रात्रावद्योदिते चन्द्रे परिपूर्णकलामले । जन्यत्रो नौ महाबाहो द्वयोरेव भविष्यति ॥ ११ ॥

rātrāvadyodite candre paripūrṇakalāmale | janyatro nau mahābāho dvayoreva bhaviṣyati || 11 ||

O mighty-armed one, when the moon rises at night, full of all its digits, the birth of both of us will take place.

हे महाबाहो, जब रात में चन्द्रमा उदित होता है, पूर्ण कलाओं से युक्त, तब हम दोनों का जन्म होगा।

6.106.12

महेन्द्राद्रिशिरःश्रृङ्गसानावद्य मनोरमे । रत्नदीपप्रकाशाढ्ये मणिकन्दरमन्दिरे ॥ १२ ॥

mahendrādriśiraḥśṛṅgasānāvadya manorame | ratnadīpaprakāśāḍhye maṇikandaramandire || 12 ||

In the beautiful and faultless peak of the Mahendra mountain, in the temple adorned with jewels and illuminated by gem lamps.

महेन्द्र पर्वत के सुंदर और दोषरहित शिखर पर, रत्नों से अलंकृत और मणि दीपों से प्रकाशित मंदिर में।

6.106.13

पुष्पभारानतोत्तुङ्गवृक्षराजिविराजिते । वनपुष्पलतालास्यनारीनृत्यमनोहरे ॥ १३ ॥

puṣpabhārānatottuṅgavṛkṣarājivirājite | vanapuṣpalatālāsyanārīnṛtyamanohare || 13 ||

Adorned with tall trees bent down with the burden of flowers, delightful with the dance of forest women with flower garlands.

फूलों के भार से झुके हुए ऊँचे वृक्षों से सुशोभित, फूलों की मालाओं से सजी वन नारियों के नृत्य से मनोहर।

6.106.14

निशि व्योमगतास्तारा भर्त्रा पूर्णेन्दुना सह । आवयोः परिपश्यन्तु कर्णान्तायतलोचन ॥ १४ ॥

niśi vyomagatāstārā bhartrā pūrṇendunā saha | āvayoḥ paripaśyantu karṇāntāyatalocana || 14 ||

May the stars in the night sky, along with the full moon, witness both of us with eyes extended to the tips of the ears.

रात के आकाश में स्थित तारे, पूर्ण चन्द्रमा के साथ, हम दोनों को कानों तक फैली आँखों से देखें।

6.106.15

उत्तिष्ठात्मविवाहार्थं कुर्वः काननकोटरात् । राजेश्चन्दनपुष्पादिसंभारं रत्नसंयुतम् ॥ १५ ॥

uttiṣṭhātmavivāhārthaṃ kurvaḥ kānanakoṭarāt | rājeścandanapuṣpādisaṃbhāraṃ ratnasaṃyutam || 15 ||

Arise for the purpose of the wedding, make preparations from the forest cave, the collection of sandalwood flowers and other items adorned with jewels.

विवाह के उद्देश्य से उठो, वन गुफा से तैयारी करो, चन्दन के फूलों और अन्य रत्नों से सजे सामान का संग्रह।

6.106.16

इत्युक्त्वा कुम्भ उत्थाय सह तेन महीभृता । कुसुमावचयं चक्रे तथा रत्नादिसंचयम् ॥ १६ ॥

ityuktvā kumbha utthāya saha tena mahībhṛtā | kusumāvacayaṃ cakre tathā ratnādisaṃcayam || 16 ||

Having said this, Kumbha rose along with the king of the earth and collected flowers and a heap of jewels.

ऐसा कहकर, कुम्भ उस पृथ्वी के राजा के साथ उठा और फूलों का संग्रह किया और रत्नों का ढेर लगाया।

6.106.17

ततो मुहूर्तमात्रेण रत्नसानौ समे शुभे । समालम्भनपुष्पाणां ताभ्यां वै राशयः कृताः ॥ १७ ॥

tato muhūrtamātreṇa ratnasānau same śubhe | samālambhanapuṣpāṇāṃ tābhyāṃ vai rāśayaḥ kṛtāḥ || 17 ||

Then, within a short time, in the auspicious and level jewel-mine, heaps of embracing flowers were made by them.

तब, थोड़े समय में, शुभ और समतल रत्न खान में, उन्होंने आलिंगन करने वाले फूलों के ढेर बनाए।

6.106.18

हाराम्बरमणीन्द्रादिराशयस्त्वपरेऽजिरे । सौभाग्यस्येव कामेन कोशाः कालेन संभृताः ॥ १८ ॥

hārāmbaramaṇīndrādirāśayastvapare'jire | saubhāgyasyeva kāmena kośāḥ kālena saṃbhṛtāḥ || 18 ||

Other heaps of garlands, clothes, best jewels, etc., were filled with desire for good fortune, and treasures were collected over time.

अन्य ढेर मालाओं, कपड़ों, श्रेष्ठ रत्नों आदि से सौभाग्य की इच्छा से भरे गए, और समय के साथ खजाने एकत्र किए गए।

6.106.19

तथा जन्यत्रसंभारं कृत्वा काञ्चनकन्दरे। ययतुस्तौ महामित्रे स्नातुं मन्दाकिनीं नदीम्॥ १९॥

tathā janyatrasaṃbhāraṃ kṛtvā kāñcanakandare | yayatus tau mahāmitre snātuṃ mandākinīṃ nadīm || 19 ||

Having made such a collection of various items in the golden cave, the two great friends went to bathe in the Mandakini river.

ऐसे विभिन्न वस्तुओं का संग्रह करके सोने की गुफा में, दोनों महान मित्र मंदाकिनी नदी में स्नान करने गए।

6.106.20

तत्रैनं स्नापयामास महाराजं महादरात्। गजकुम्भोपमस्कन्धं कुम्भो मङ्गलपूर्वकम्॥ २०॥

tatra enaṃ snāpayāmāsa mahārājaṃ mahādarāt | gajakumbhopamaskandhaṃ kumbho maṅgalapūrvakam || 20 ||

There, Kumbha, with great respect, bathed the king whose shoulders were like the temples of an elephant, with auspicious rituals.

वहाँ, कुम्भ ने बड़े सम्मान से, हाथी के मंदिर जैसे कंधों वाले महाराज को शुभ रीति से स्नान कराया।

6.106.21

भविष्यद्दयितारूपां भविष्यद्दयितोऽङ्गनाम्। चूडालां स्नापयामास कुम्भरूपधरां प्रियाम्॥ २१॥

bhaviṣyaddayitārūpāṃ bhaviṣyaddayito'ṅganām | cūḍālāṃ snāpayāmāsa kumbharūpadharāṃ priyām || 21 ||

He bathed his beloved Chudala, who had taken the form of a future beloved, in the form of a pot.

उन्होंने अपनी प्रिया चूडाला को, जो भविष्य की प्रिया के रूप में थी, घड़े के रूप में स्नान कराया।

6.106.22

पूजयामासतुः स्नातौ तत्र देवपितृन्मुनीन्। यथा क्रियाफलेऽनिच्छौ क्रियात्यागे तथैव तौ॥ २२॥

pūjayāmāsatuḥ snātau tatra devapitṛnmunīn | yathā kriyāphale'nicchau kriyātyāge tathaiva tau || 22 ||

After bathing, they worshipped the gods, ancestors, and sages there, as they did not desire the fruits of their actions, and similarly, they were indifferent to the abandonment of actions.

स्नान करने के बाद, उन्होंने वहाँ देवताओं, पितरों और ऋषियों की पूजा की, क्योंकि उन्हें कर्मों के फलों की इच्छा नहीं थी, और इसी तरह, उन्हें कर्मों के त्याग से भी कोई अंतर नहीं पड़ता था।

6.106.23

नित्यज्ञानरसातृप्तौ व्यवस्थायां जगत्स्थितेः। चक्राते भोजनं भव्यं तावन्योन्यसमीहितम्॥ २३॥

nityajñānarasātṛptau vyavasthāyāṃ jagatsthiteḥ | cakrāte bhojanaṃ bhavyaṃ tāvanyonyasamīhitam || 23 ||

Satisfied with the eternal bliss of knowledge, they engaged in the divine meal, mutually desiring each other, while maintaining the order of the world.

नित्य ज्ञान के रस से तृप्त होकर, वे दोनों परस्पर इच्छा से भव्य भोजन में लगे, जबकि जगत की व्यवस्था कायम रखी।

6.106.24

कल्पवृक्षदुकूलानि परिधाय सितानि तौ। फलानि भुक्त्वा जन्यत्रस्थानमाययतुः क्रमात्॥ २४॥

kalpavṛkṣadukūlāni paridhāya sitāni tau | phalāni bhuktvā janyatrasthānamāyayatuḥ kramaḥ || 24 ||

Wearing white garments made from the cloth of the Kalpa tree, they consumed the fruits and gradually returned to their original place.

कल्पवृक्ष के वस्त्र से बने सफेद परिधान पहनकर, उन्होंने फल खाए और धीरे-धीरे अपने मूल स्थान पर लौट गए।

6.106.25

एतावताथ कालेन तयोर्जन्यत्रसोत्कयोः । प्रियं कर्तुमिवास्ताद्रिं द्रागित्येवाविशद्रविः ॥ २५ ॥

etāvatātha kālena tayorjanyatrasotkayoḥ | priyaṃ kartumivāstādriṃ drāgityevāviśadraviḥ || 25 ||

After some time, the radiance, as if to please them, quickly entered the mountain where they had originally come from.

कुछ समय के बाद, प्रकाश, जैसे उन्हें प्रसन्न करने के लिए, तेजी से उस पर्वत में प्रवेश कर गया, जहाँ से वे आए थे।

6.106.26

अथ संध्याक्रमे वृत्ते कृते जप्याघमर्षणे । विवाहदर्शनायैव ताराजाले खमागते ॥ २६ ॥

atha sandhyākrame vṛtte kṛte japyāghamarṣaṇe | vivāhadarśanāyaiva tārājāle khamāgate || 26 ||

After completing the evening rituals and the purification mantras, the stars appeared in the sky as if to witness the wedding.

संध्या क्रिया और जप से शुद्धि करने के बाद, तारे आकाश में दिखाई देने लगे मानो विवाह देखने आए हों।

6.106.27

मिथुनैकसखीयामा कुमुदोत्करहासिनी । प्रालेयजालप्रकरं विकिरन्ती समाययौ ॥ २७ ॥

mithunaikasakhīyāmā kumudotkarahāsinī | prāleyajālaprakaraṃ vikirantī samāyayau || 27 ||

Accompanied by her friend, the bride, with a smile like a blooming lotus, scattering frost-like jewels, arrived.

अपनी सखी के साथ, कमल के समान मुस्कान वाली वधू, हिम के समान रत्नों को बिखेरती हुई, आई।

6.106.28

रत्नदीपान्बहून्सानौ कुम्भः सम्यगयोजयत् । ज्योतींषीन्द्वर्कयुक्तानि पद्मोद्भव इवाम्बरे ॥ २८ ॥

ratnadīpānbahūnsānau kumbhaḥ samyagayojayat | jyotīṃṣīndvarkayuktāni padmodbhava ivāmbare || 28 ||

The pot was beautifully arranged with many jewel-lamps, shining like stars in the sky, as if born from a lotus.

घड़ा बहुत से रत्न-दीपों से सुंदर रूप से सजाया गया, जो आकाश में तारों की तरह चमक रहे थे, मानो कमल से उत्पन्न हुए हों।

6.106.29

भूषयामास राजानं स्त्रीत्वं गच्छन्निशागमे । चन्दनागुरुकर्पूरपूरैर्मृगजकुङ्कुमैः ॥ २९ ॥

bhūṣayāmāsa rājānaṃ strītvaṃ gacchanniśāgame | candanāgurukarpūrapūrairmṛgajakuṅkumaiḥ || 29 ||

He adorned the king, who was entering the night's festivities, with sandalwood, agarwood, camphor, fragrant powders, and musk.

उसने राजा को, जो रात के उत्सव में प्रवेश कर रहे थे, चंदन, अगर, कर्पूर, सुगंधित पाउडर और कस्तूरी से सजाया।

6.106.30

हारकेयूरकटकैस्तथा कल्पलतांशुकैः । स्रगुद्दामावतंसैश्च माल्यैश्च विविधोचितैः ॥ ३० ॥

hārakeyūrakaṭakais tathā kalpalatāṃśukaiḥ | sraguddāmāvataṃsaiś ca mālyaiś ca vividhocitaiḥ || 30 ||

With necklaces, armlets, bracelets, and various beautiful garlands and ornaments, he was adorned.

हार, केयूर, कड़े, और विविध सुंदर मालाओं और आभूषणों से उसने सजाया।

6.106.31

तथा कल्पलतागुच्छैर्मन्दारैः पारिजातकैः । संतानैर्बहुरत्नैश्च मौलिना चेन्दुरूपिणा ॥ ३१ ॥

tathā kalpalatāgucchairmandāraiḥ pārijātakaiḥ | saṃtānairbahuratnaiśca maulinā cendurūpiṇā || 31 ||

Thus, adorned with clusters of wish-fulfilling vines, mandara flowers, and parijata flowers, with many jewels and a moon-like crest.

इस प्रकार, कल्पलता के गुच्छों, मन्दार फूलों, पारिजात फूलों, बहुत से रत्नों और चन्द्रमा के समान मुकुट से अलंकृत।

6.106.32

एतावताथ कालेन वधूत्वं कुम्भ आययौ । घनस्तनभराक्रान्तो बभूवाशु विलासवान् ॥ ३२ ॥

etāvatātha kālena vadhūtvaṃ kumbha āyayau | ghanastanabharākrānto babhūvāśu vilāsavān || 32 ||

Thus, in this short time, the pot attained the status of a bride, becoming quickly charming with breasts full and heavy.

इस प्रकार, इस छोटे समय में, घड़ा वधू का दर्जा प्राप्त कर गया, जल्दी ही भरे हुए और भारी स्तनों वाला मोहक बन गया।

6.106.33

इदं संचिन्तयामास संपन्नोऽयमहं वधूः । कामायात्मा मया देयः कार्यं कालोचितं किल ॥ ३३ ॥

idaṃ saṃcintayāmāsa saṃpanno'yamahaṃ vadhūḥ | kāmāyātmā mayā deyaḥ kāryaṃ kālocitaṃ kil || 33 ||

She thought, 'I am now a complete bride; I should give myself to my husband, as it is the appropriate time for such an act.'

उसने सोचा, 'मैं अब एक पूर्ण वधू हूँ; मुझे अपने पति को देना चाहिए, क्योंकि यह ऐसे कार्य के लिए उपयुक्त समय है।'

6.106.34

इयमस्मि वधूः कान्ता भर्ता त्वं मे पुरःस्थितः । गृहाण काम मामेहि कालोऽयं तव हृच्छयः ॥ ३४ ॥

iyamasmivadhūḥ kāntā bhartā tvaṃ me puraḥsthitaḥ | gṛhāṇa kāma māmehi kālo'yaṃ tava hṛcchayaḥ || 34 ||

I am your beloved bride, and you are my husband standing before me. Accept me, O beloved, for this is the time for your heart's desire.

मैं तुम्हारी प्यारी वधू हूँ, और तुम मेरे पति हो जो मेरे सामने खड़े हो। मुझे स्वीकार करो, हे प्रियतम, क्योंकि यह तुम्हारे हृदय की इच्छा का समय है।

6.106.35

इति संचिन्त्य भर्तारमग्रस्थगहनस्थितम् । उदयन्तमिवादित्यं रतिः काममिवाभ्यगात् ॥ ३५ ॥

iti saṃcintya bhartāramagrasthagahanasthitam | udayantamivādityaṃ ratiḥ kāmamivābhyagāt || 35 ||

Thus, thinking of her husband who was standing before her in the inner chamber, she approached him like Rati approaching Kama, as if he were the rising sun.

इस प्रकार, अपने पति के बारे में सोचते हुए, जो अंदर के कक्ष में खड़ा था, उसने उसे उस तरह पास आने की कोशिश की जैसे रति कामदेव के पास आती है, मानो वह उदित हो रहा सूर्य हो।

6.106.36

अहं मदनिका नाम भार्यास्मि तव मानद । पादयोस्ते प्रणामोऽयं सस्नेहं क्रियते मया ॥ ३६ ॥

ahaṃ madanikā nāma bhāryāsmi tava mānada | pādayoste praṇāmo'yaṃ sasnehaṃ kriyate mayā || 36 ||

I am Madanika, your wife, O respected one. I bow at your feet with affection.

मैं मदनिका नाम की आपकी पत्नी हूँ, हे सम्मानित पुरुष | मैं स्नेह सहित आपके चरणों में प्रणाम करती हूँ।

6.106.37

इत्युक्त्वा सानवद्याङ्गी लज्जावनमिताननाः। लोलालकेन शिरसा प्रणनाम लसत्पतिम्॥ ३७॥

ityuktvā sānavadyāṅgī lajjāvanamitānanā | lolālakena śirasā praṇanāma lasatpatim || 37 ||

Having said this, she, with her flawless body and face bent with modesty, bowed to her husband with her trembling head.

ऐसा कहकर, वह अपने दोषरहित शरीर और लज्जा से झुके हुए मुख के साथ, अपने काँपते हुए सिर से अपने पति को प्रणाम करती है।

6.106.38

उवाचेदं च हे नाथ त्वं मां भूषय भूषणैः। क्रमेणाग्निं च संज्वाल्य मत्पाणिग्रहणं कुरु॥ ३८॥

uvācedaṃ ca he nātha tvaṃ māṃ bhūṣaya bhūṣaṇaiḥ | krameṇāgniṃ ca saṃjvālya matpāṇigrahaṇaṃ kuru || 38 ||

She said, 'O Lord, adorn me with ornaments. Gradually kindle the fire and accept my hand in marriage.'

उसने कहा, 'हे नाथ, मुझे आभूषणों से सजाओ। धीरे-धीरे अग्नि को जलाओ और मेरा हाथ ग्रहण करो।'

6.106.39

राजसेऽतितरां राजन्मां करोषि स्मरातुराम्। रतेर्विवाहे मदनमभिभूयाधितिष्ठसि॥ ३९॥

rājase'titaraṃ rājanmāṃ karosi smarāturām | ratervivāhe madanamabhibhūyādhitiṣṭhasi || 39 ||

O king, you make me extremely passionate. In the marriage of love, you overcome desire and stand firm.

हे राजन, आप मुझे अत्यंत आसक्त बनाते हैं। प्रेम के विवाह में, आप कामना को जीतकर दृढ़ता से खड़े होते हैं।

6.106.40

इन्दोरिवांशुजालानि राजन्माल्यानि तानि ते। मेरुगङ्गाप्रवाहाभां धत्ते हारस्तवोरसि॥ ४०॥

indorivāṃśujālāni rājanmālyāni tāni te | merugaṅgāpravāhābhāṃ dhatte hārastavorasi || 40 ||

O king, those garlands of yours are like the rays of the moon. The necklace on your chest is like the flow of the Ganges from Mount Meru.

हे राजन, आपकी वे मालाएँ चंद्रमा की किरणों के समान हैं। आपके वक्ष पर हार मेरु पर्वत से बहने वाली गंगा की धारा के समान है।

6.106.41

मन्दारकुसुमप्रोतैः कुन्तलैर्नृप राजसे। कनकाब्जमिवोल्लोलैर्भृङ्गैः खचितकेसरैः॥ ४१॥

mandārakusumaprotaiḥ kuntalairnṛpa rājase | kanakābjamivollolairbhṛṅgaiḥ khacitakesaraiḥ || 41 ||

O King, your hair, adorned with garlands of Mandara flowers, shines like golden lotuses swaying with bees nestled in their petals.

हे राजन्, आपके केश, मन्दार के फूलों की मालाओं से सुशोभित, भ्रमरों से भरे स्वर्ण कमलों के समान शोभायमान हैं।

6.106.42

रत्नांशुजालैः कुसुमैः श्रिया स्थैर्येण तेजसा। रत्नस्थानं विभो मेरुमभिभूयावतिष्ठसे॥ ४२॥

ratnāṃśujālaiḥ kusumaiḥ śriyā sthairyena tejasā | ratnasthānaṃ vibho merumabhibhūyāvatiṣṭhasē || 42 ||

O Lord, with the radiance of gem-like rays, flowers, prosperity, stability, and splendor, you surpass Mount Meru, the abode of jewels.

हे प्रभु, रत्नों की किरणों, फूलों, समृद्धि, स्थिरता और तेज के साथ, आप रत्नों के निवास स्थान मेरु पर्वत को पार करते हैं।

6.106.43

एवमादि वदन्तौ तौ भविष्यन्नवदम्पती । प्रच्छन्नपूर्वदाम्पत्यौ मिथस्तुष्टौ बभूवतुः ॥ ४३ ॥

evamādi vadantau tau bhaviṣyannavadampatī | pracchannapūrvadāmpatyau mithastuṣṭau babhūvatuḥ || 43 ||

Thus speaking, those two, who were to be future spouses, were pleased with each other, having concealed their previous marital status.

ऐसा कहते हुए, वे दोनों, जो भविष्य के जीवनसाथी थे, एक-दूसरे से प्रसन्न हो गए, अपने पूर्व विवाहित जीवन को छिपाकर।

6.106.44

महाराज्ञीं मदनिकां महाराजः शिखिध्वजः । काञ्चनोपलपर्यङ्के निविष्टो भूषयत्स्वयम् ॥ ४४ ॥

mahārājñīṃ madanikāṃ mahārājaḥ śikhidhvajaḥ | kāñcanopalaparyaṅkē niviṣṭo bhūṣayatsvayam || 44 ||

King Shikhidhvaja, seated on a golden throne, adorned Queen Madanika himself.

राजा शिखिध्वज, स्वर्ण सिंहासन पर बैठे हुए, रानी मदनिका को स्वयं अलंकृत कर रहे थे।

6.106.45

अवतंसैस्तथा माल्यैर्मणिरत्नविभूषणैः । वस्त्रैर्विलेपनैः पुष्पै रुचिरस्थानकार्पितैः ॥ ४५ ॥

avataṃsais tathā mālyair maṇiratnavibhūṣaṇaiḥ | vastrair vilepanaiḥ puṣpaiḥ rucirasthānakārpitaiḥ || 45 ||

With ornaments, garlands, jewels, clothes, cosmetics, and flowers, he beautifully adorned her.

आभूषणों, मालाओं, रत्नों, वस्त्रों, अंगरागों और फूलों से, उसने उसे सुंदर रूप से सजाया।

6.106.46

सा बभौ भूषिता तन्वी मदनी मददायिनी । गिरिजेव विवाहोत्का कामकान्तेव कामिनी ॥ ४६ ॥

sā babhau bhūṣitā tanvī madanī madadāyinī | girijeva vivāhotkā kāmakānteva kāminī || 46 ||

She shone, adorned, slender, passionate, and causing passion | Like Parvati at the time of her wedding, like the beloved of Kama, the god of love

वह सुसज्जित, पतली, कामुक, और काम उत्पन्न करने वाली चमक रही थी | जैसे विवाह के समय पार्वती, जैसे कामदेव की प्रियतमा

6.106.47

महाराजो महाराज्ञीं भूषयित्वेदमाह ताम् । राजसे मृगशावाक्षि लक्ष्मीरिव नवोदिता ॥ ४७ ॥

mahārājo mahārājñīṃ bhūṣayitvedamāha tām | rājase mṛgaśāvākṣi lakṣmīriva navoditā || 47 ||

The great king, having adorned the great queen, said this to her | O queen with eyes like a doe, you are like the newly risen Lakshmi

महाराज ने महारानी को सजाकर उससे यह कहा | हे मृगनयनी रानी, तुम नवोदित लक्ष्मी की तरह हो

6.106.48

शक्रेण सह यच्छच्या यल्लक्ष्म्या हरिणा सह । यद्गौर्याः शंभुना सार्धं तत्ते भवतु मङ्गलम् ॥ ४८ ॥

śakreṇa saha yacchacyā yallakṣmyā hariṇā saha | yadgauryāḥ śaṃbhunā sārdhaṃ tatte bhavatu maṅgalam || 48 ||

May the auspiciousness that comes from being with Indra and Sachi, with Lakshmi and Vishnu, and with Gauri and Shambhu be yours

इंद्र और शची, लक्ष्मी और विष्णु, और गौरी और शंभु के साथ होने से जो मंगल है, वह तुम्हारा हो

6.106.49

पद्मकोशाङ्कुरहृदा लोलनीलोत्पलेक्षणा । आमोदशुभझांकारा स्वास्थिता पद्मिनीव सा ॥ ४९ ॥

padmakośāṅkurahṛdā lolanīlotpalekṣaṇā | āmodaśubhadhāṃkārā svāsthitā padminīva sā || 49 ||

With a heart like a lotus bud, with eyes like swaying blue lotuses, adorned with auspicious fragrance, she stands firm like a lotus

लोटस बजरे के समान हृदय वाली, लहराती नील कमल की आँखों वाली, शुभ सुगंध से सजी, वह एक कमल की तरह स्थिर खड़ी है

6.106.50

सुरक्तपल्लवकरा स्तनस्तबकधारिणी । त्वमनेकफला मन्ये कामकल्पतरोर्लता ॥ ५० ॥

suraktapallavakarā stanastabakadhāriṇī | tvamanekaphalā manye kāmakalpatarorlatā || 50 ||

With hands like red lotus petals, bearing breasts like lotus buds, I consider you the creeper of the wish-fulfilling tree yielding many fruits

हाथों वाली जैसे लाल कमल के पंखुड़ियों की तरह, स्तनों वाली जैसे कमल के बजरों की तरह, मैं तुम्हें बहुत से फलों वाली कामधेनु वृक्ष की लता मानता हूँ

6.106.51

हिमशीतावदाताङ्गी ज्योत्स्नाप्रसरहासिनी । पूर्णेन्दुश्रीरिवोद्युक्ता हृष्टैवाह्लादयस्यलम् ॥ ५१ ॥

himaśītāvadātāṅgī jyotsnāprasarahāsinī | pūrṇenduśrīrivodyuktā hṛṣṭaivāhlādayasyalam || 51 ||

With a body as cool as ice, smiling with the spreading moonlight, she appeared as beautiful as the full moon, and seemed to delight everyone with her joy.

हिम की तरह ठंडी अंगों वाली, चांदनी के फैलाव से मुस्कुराती हुई, वह पूर्णिमा की शोभा की तरह सुशोभित थी और अपने हर्ष से सबको आह्लादित करने लगी।

6.106.52

तदुत्तिष्ठ वरारोहे वेदीं वैवाहिकीं स्वयम् । तत्र पुष्पलताजालैः काण्डं प्रति शिलाङ्कितैः ॥ ५२ ॥

taduttiṣṭha varārohe vedīṃ vaivāhikīṃ svayam | tatra puṣpalatājālaiḥ kāṇḍaṃ prati śilāṅkitaiḥ || 52 ||

Therefore, O beautiful one, rise up and go to the wedding altar yourself, where the pillars are adorned with garlands of flowers.

इसलिए, हे सुंदरी, उठो और स्वयं विवाह की वेदी पर जाओ, जहाँ स्तंभ फूलों की मालाओं से सजे हुए हैं।

6.106.53

श्रीवसिष्ठ उवाच । मुक्ताकुसुमजालानां प्रकरैः स्तबकोपमैः । चतुर्दिक्कं चतुर्भिश्च नालिकेरमहाफलैः ॥ ५३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | muktākusumajālānāṃ prakaraiḥ stabakopamaiḥ | caturdikkhaṃ caturbhiśca nālikeramahāphalaiḥ || 53 ||

Vasishtha said: With clusters of pearl-like flowers resembling buds, and with large coconuts in all four directions.

वसिष्ठ ने कहा: मोती के समान फूलों के झुंड के साथ, जो कलियों के समान हैं, और चारों दिशाओं में बड़े नारियलों के साथ।

6.106.54

पूर्णकुम्भैस्तथा गङ्गावारिपूर्णैः प्रकल्पितैः । ज्वालयामासतुस्तस्या मध्ये चन्दनदारुभिः ॥ ५४ ॥

pūrṇakumbhais tathā gaṅgāvāri pūrṇaiḥ prakalpitaiḥ | jvālayāmāsatus tasyā madhye candanadārubhiḥ || 54 ||

With full pots of Ganga water arranged, they kindled a fire in the middle with sandalwood.

गंगा जल से भरे पूर्ण कलशों के साथ व्यवस्थित, उन्होंने चंदन की लकड़ियों से बीच में अग्नि प्रज्वलित की।

6.106.55

ज्वलनं ज्वालितज्वालं दक्षिणस्थं प्रदक्षिणम्। पूर्वाभिमुखमेवाग्नेरग्रे पल्लवविष्टरे ॥ ५५ ॥

jvalanaṃ jvālitajvālaṃ dakṣiṇasthaṃ pradakṣiṇam | pūrvābhimukham evāgner agre pallavaviṣṭare || 55 ||

The blazing fire, with its flames burning brightly, was placed to the south, circling clockwise, facing east, at the front of the fire on a bed of leaves.

प्रज्वलित अग्नि, जिसकी लपटें चमक रही थीं, दक्षिण दिशा में रखी गई, घड़ी की दिशा में घूमती हुई, पूर्व दिशा की ओर मुंह करके, अग्नि के सामने पत्तों के बिछौने पर।

6.106.56

नियोज्य दंपती कान्तौ तयोर्विविशतुः स्वयम्। स हुत्वा तिललाजानि पावकाय शिखिध्वजः ॥ ५६ ॥

niyojya daṃpatī kāntau tayorvivśatuḥ svayam | sa hutvā tilalājāni pāvakāya śikhidhvajaḥ || 56 ||

The couple, being lovers, entered the fire themselves | He, having offered the fried grains, to the fire, the flame-bannered one

विवाहित दंपती स्वयं अग्नि में प्रवेश करे | उसने तिल और लाज की आहुति देकर, अग्नि को समर्पित किया, जो अग्नि का ध्वज है

6.106.57

उत्थायोत्थाय कान्तां स पाणिभ्यां स्वयमाददे। अन्योन्यं शोभमानौ तौ भवाविव वने शिवौ ॥ ५७ ॥

utthāyotthāya kāntāṃ sa pāṇibhyāṃ svayamādade | anyonyaṃ śobhamānau tau bhavāviva vane śivau || 57 ||

Rising again and again, he himself took the beloved by the hands | Both of them, adorning each other, were like Shiva and Parvati in the forest

बार-बार उठकर, उसने स्वयं प्रेमिका का हाथ पकड़ा | दोनों एक-दूसरे को सुशोभित करते हुए, वन में शिव और पार्वती के समान थे

6.106.58

चक्रतुर्दंपती तस्य पावकस्य प्रदक्षिणम्। स्वदायं ज्ञानसर्वस्वं हृदयं प्रेम चापलम् ॥ ५८ ॥

cakraturdampatī tasya pāvakasya pradakṣiṇam | svadāyaṃ jñānasarvasvaṃ hṛdayaṃ prema cāpalam || 58 ||

The couple performed the circumambulation of the fire | Offering their own self, knowledge, heart, love, and restlessness

दंपती ने अग्नि की परिक्रमा की | अपने स्वयं, ज्ञान, हृदय, प्रेम और चापल को समर्पित किया

6.106.59

ददतुस्तौ मिथोऽन्योन्यस्मितकान्तमुखश्रियौ। प्रदक्षिणत्रयं कृत्वा लाजांस्त्यक्त्वाथ वह्नये ॥ ५९ ॥

dadatus tau mitho'nyonyasmitakāntamukhaśriyau | pradakṣiṇatrayaṃ kṛtvā lājāṃstyaktvātha vahnaye || 59 ||

They gave each other smiles, their faces radiant with love | Having performed the three circumambulations, they offered the fried grains to the fire

उन्होंने एक-दूसरे को मुस्कान दी, उनके चेहरे प्रेम से चमक रहे थे | तीन परिक्रमाएँ करके, उन्होंने लाज की आहुति अग्नि को दी

6.106.60

भार्यावरौ समं तुष्टौ करौ तत्यजतुः क्रमात्। स्मयमानमुखौ कान्तौ चन्द्राविव नवोदितौ ॥ ६० ॥

bhāryāvarau samaṃ tuṣṭau karau tatyajatuḥ kramāt | smayamānamukhau kāntau candrāviva navoditau || 60 ||

The couple, satisfied, released their hands gradually | Smiling, their faces radiant like the newly risen moons

दंपती, संतुष्ट होकर, धीरे-धीरे हाथ छोड़े | मुस्कुराते हुए, उनके चेहरे नवोदित चंद्रमा के समान चमक रहे थे

6.106.61

पूर्वोपरचिते पुष्पतल्पे विविशतुर्नवे । एतस्मिन्नन्तरे चन्द्रश्चतुर्भागं नभस्तलात् ॥ ६१ ॥

pūrvoparacite puṣpatalpe viviśatur nave | etasminnantare candraścaturbhāgaṃ nabhastalāt || 61 ||

The newlyweds entered the bed adorned with flowers. Meanwhile, the moon slowly rose a quarter in the sky as if to witness their beauty.

नवविवाहित जोड़े ने फूलों से सजे पलंग पर प्रवेश किया। इसी बीच, चाँद धीरे-धीरे आकाश में एक चौथाई उठा, मानो उनकी शोभा देखने के लिए।

6.106.62

शनैराक्रमयामास शोभां द्रष्टुमिवानयोः । तस्मिंश्च ललनाछिद्रं द्रष्टुं दृष्टिरिवाभितः ॥ ६२ ॥

śanairākramayāmāsa śobhāṃ draṣṭumivānayoḥ | tasmiṃśca lalanāchidraṃ draṣṭuṃ dṛṣṭirivābhitaḥ || 62 ||

The moon slowly ascended as if to see the beauty of the couple. It seemed as if the gaze was eager to see the slightest gap in the woman's attire.

चाँद धीरे-धीरे उठा, मानो जोड़े की शोभा देखने के लिए। ऐसा लगा मानो दृष्टि उस स्त्री के वस्त्रों में से छोटी सी झलक देखने के लिए उत्सुक थी।

6.106.63

लोलः संचरयामास करानिन्दुर्लतागृहे । तैस्तैर्नवकथालापैरिन्दावभ्युदिते त्वथ ॥ ६३ ॥

lolaḥ saṃcarayāmāsa karānindurlatāgṛhe | taiḥtaiḥ navakathālāpairindāvabhyudite tvatha || 63 ||

The restless moon wandered among the vines as if searching for the couple's hands. Then, with various new conversations, the moon rose higher.

बेचैन चाँद लताओं में भटकता रहा, मानो जोड़े के हाथों की तलाश में हो। फिर, नये-नये वार्तालापों के साथ, चाँद और ऊँचा उठा।

6.106.64

तावासांचक्रतुः कान्तौ दंपती सुमुहूर्तकम् । अथोत्थाय ज्वलद्रत्नदीपां काञ्चनकन्दराम् ॥ ६४ ॥

tāvāsāṃcakratuḥ kāntau daṃpatī sumuhūrtakam | athotthāya jvaladratnadīpāṃ kāñcanakandarām || 64 ||

The loving couple spent a beautiful moment together. Then, rising, they entered the golden chamber illuminated by gleaming gem lamps.

प्रेमी जोड़े ने एक सुंदर पल साथ बिताया। फिर, उठकर, वे चमकते रत्न दीपों से प्रकाशित सोने के कक्ष में प्रवेश किया।

6.106.65

स्वयं पूर्वोपरचितां गुप्तां विविशतुः प्रियौ । ददर्शतुर्नवं तत्र तल्पं कुसुमकल्पितम् ॥ ६५ ॥

svayaṃ pūrvoparacitāṃ guptāṃ viviśatuḥ priyau | dadarśatur navaṃ tatra talpaṃ kusumakalpitam || 65 ||

The beloved couple themselves entered the secret, previously prepared chamber. There, they saw the new bed adorned with flowers.

प्रिय जोड़े ने स्वयं ही पहले से तैयार की गई गुप्त कक्ष में प्रवेश किया। वहाँ, उन्होंने फूलों से सजे नये पलंग को देखा।

6.106.66

परितो व्याप्तमुत्कीर्णैर्हेमपङ्कजराशिभिः । मन्दारादिभिरन्यैश्च पुष्पैर्ग्लानिविवर्जितैः ॥ ६६ ॥

parito vyāptamutkīrṇairhemapaṅkajarāśibhiḥ| mandārādibhiranyaiśca puṣpairglānivivarjitaiḥ|| 66 ||

All around, it was filled with raised golden lotuses and other flowers like Mandara, which were free from fatigue.

चारों ओर, उठे हुए सोने के कमलों और मन्दार जैसे अन्य फूलों से भरा हुआ था, जो थकान से मुक्त थे।

6.106.67

उच्चकैः सुप्रमाणेन निर्मितैः कुसुमैः समैः। दीर्घेन्दुबिम्बप्रतिमैस्तुषारस्थलशीतलैः॥ ६७॥

uccakaiḥ supramāṇena nirmitaiḥ kusumaiḥ samaiḥ| dīrghendubimba pratimais tuṣārasthalasītalaiḥ|| 67 ||

With tall, well-proportioned, and evenly made flowers, resembling the long moon discs, cool like the snowy regions.

ऊँचे, सुंदर आकार वाले, और समान रूप से बने फूलों से, जो लंबे चाँद के डिस्क के समान दिखते हैं, बर्फीले क्षेत्रों की तरह ठंडे।

6.106.68

क्षीरोदजलधाराभं ज्योत्स्नासंपिण्डसुन्दरम्। प्रतिबिम्बमनङ्गस्य नतं भित्ताविव स्थितम्॥ ६८॥

kṣīrodajaladhārābhaṃ jyotsnāsaṃpiṇḍasundaram| pratibimbamanangasya nataṃ bhittāviva sthitam|| 68 ||

Resembling the flow of the milky ocean, beautiful like the mass of moonlight, the reflection of love appeared as if bowing down on the wall.

क्षीर सागर के प्रवाह के समान, चाँदनी के ढेर की तरह सुंदर, प्रेम का प्रतिबिंब दीवार पर झुका हुआ-सा प्रतीत होता था।

6.106.69

सुगन्धमुन्नतं कान्तं चिरादन्यतयोत्थितम्। मिथुनं पुष्पराशौ तन्न्यषीदत्परितोऽमले॥ ६९॥

sugandhamunnataṃ kāntaṃ cirādanyatayotthitam| mithunaṃ puṣparāśau tannyaṣīdatparito'male|| 69 ||

Fragrant, elevated, and beautiful, arising from another for a long time, the couple sat in the pure, flowery bower.

सुगंधित, उन्नत, और सुंदर, लंबे समय से एक दूसरे के लिए उठा हुआ, जोड़ा पवित्र, फूलों से भरे छज्जे में बैठा था।

6.106.70

तैस्तैर्मिथः प्रणयपेशलवाग्विलासैस्तत्कालकार्यसुभगैः प्रणयोपचारैः। सत्कान्तयोर्नवनवेन तयोः सुखेन दीर्घा मुहूर्त इव सा रजनी जगाम॥ ७०॥

taistairmihaḥ praṇayapeśalavāgvilāsaiḥ tatkālakāryasubhagaiḥ praṇayopacāraiḥ| satkāntayornavanavena tayoḥ sukhena dīrghā muhūrta iva sā rajanī jagāma|| 70 ||

With various charming expressions of love and appropriate actions of affection, the virtuous couple enjoyed each other's company with new joy, and that night passed like a long moment.

विभिन्न मोहक प्रेम के व्यवहार और उपयुक्त प्रेम के कार्यों के साथ, सत्कार्य जोड़े ने नये आनंद के साथ एक दूसरे की संगत का आनंद लिया, और वह रात एक लंबे क्षण की तरह बीत गई।

Chapter 107

6.107.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ सूर्याख्यरङ्गेण रञ्जिते भुवनोदरे । शिखिध्वजाङ्गना प्रातर्मदनी कुम्भतां ययौ ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha sūryākhyaraṅgeṇa rañjite bhuvanodare | śikhidhvajāṅganā prātarmadanī kumbhatāṃ yayau || 1 ||

Shri Vasishtha said: Then, as the world was colored by the sun's rays, Shikhidhvaja's beloved, Madani, attained the state of Kumbha in the morning.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, जब सूर्य की किरणों से सारा जगत रंगीन हो गया, तब शिखिध्वज की प्रिया मदनी ने प्रातःकाल में कुम्भ की अवस्था प्राप्त की।

6.107.2

एवं महेन्द्रदर्यां तावुभौ कुम्भशिखिध्वजौ । स्वयं विवाहिताविष्टौ संपन्नौ देवदंपती ॥ २ ॥

evaṃ mahendradaryāṃ tāvubhau kumbhaśikhidhvajau | svayaṃ vivāhitāviṣṭau saṃpannau devadampatī || 2 ||

Thus, in the Mahendra valley, both Kumbha and Shikhidhvaja were united in marriage, becoming a divine couple.

इस प्रकार, महेन्द्र घाटी में, कुम्भ और शिखिध्वज दोनों विवाह के द्वारा एक हो गए, एक दिव्य जोड़ा बनकर।

6.107.3

विलेसतुर्विचित्रासु प्रत्यहं वनराजिषु । प्रपक्वफलभारासु पुष्पपल्लविनीषु च ॥ ३ ॥

vilesaturvicitrāsu pratyahaṃ vanarājiṣu | prapakvaphalabhārāsu puṣpapallavinīṣu ca || 3 ||

They enjoyed themselves daily in the beautiful forests, which were laden with ripe fruits and full of flowers and buds.

वे प्रतिदिन सुंदर वनों में आनंद लेते थे, जो पके हुए फलों और फूलों और कलियों से भरे हुए थे।

6.107.4

दिवा प्रीततरौ मित्रे यामिन्यामिष्टदंपती । प्रभादीपाविव श्लिष्टौ न वियुक्तौ बभूवतुः ॥ ४ ॥

divā prītatarau mitre yāminyāmiṣṭadampatī | prabhādīpāviva śliṣṭau na viyuktau babhūvatuḥ || 4 ||

During the day, they were happier with friends, and at night, they were a beloved couple, united like light and lamp, never separated.

दिन में, वे मित्रों के साथ और अधिक खुश थे, और रात में, वे एक प्रेमी जोड़ा बने, प्रकाश और दीपक की तरह एक होकर, कभी अलग नहीं हुए।

6.107.5

रेमाते वनकुञ्जेषु गुहासु च महीभृताम् । तमालजालखण्डेषु मन्दारगहनेषु च ॥ ५ ॥

remāte vanakuñjeṣu guhāsu ca mahībhṛtām | tamālajālakhaṇḍeṣu mandāragahaneṣu ca || 5 ||

They enjoyed in the forest groves, caves, and dense thickets of Tamala and Mandara trees of the earth-bearers.

वे वन कुंजों, गुफाओं, और पृथ्वी-धारकों के तमाल और मंदार के घने झुरमुटों में आनंद लेते थे।

6.107.6

सह्यदर्दुरकैलासमहेन्द्रमलयेषु चगन्धमादनविन्ध्याद्रिलोकालोकतटेषु च ॥ ६ ॥

sahyadardurakailāsamahendramalayeṣu cagandhamādanavindhyādrilokālokataṭeṣu ca || 6 ||

In the mountains of Sahya, Dardura, Kailasa, Mahendra, Malaya, and Gandhamadana, Vindhya, and the shores of Lokāloka.

सह्य, दर्दुर, कैलास, महेन्द्र, मलय और गन्धमादन, विन्ध्य पर्वतों और लोकालोक के तटों पर।

6.107.7

दिनैस्त्रिभिस्त्रिभिर्गत्वा निद्रां गतवति प्रियेचूडाला राजकार्याणि कृत्वा स्वाध्याययौ पुनः ॥ ७ ॥

dinaistribhistribhirgatvā nidrāṃ gatavati priyecūḍālā rājakāryāṇi kṛtvā svabhyāyayau punaḥ || 7 ||

After spending three days, when his beloved Cūḍālā fell asleep, he performed his royal duties and then engaged in self-study again.

तीन दिन बिताने के बाद, जब उसकी प्रिय चूडाला सो गई, तो उसने अपने राजकीय कर्तव्यों को निभाया और फिर स्वाध्याय में लग गया।

6.107.8

तौ दिवा सुहृदौ मित्रे दंपती कुम्भभूमिपौनानाकुसुमसंवीतौ तस्थतुर्मुदितौ मिथः ॥ ८ ॥

tau divā suhṛdau mitre daṃpatī kumbhabhūmipaunānākusumasaṃvītau tasthaturmuditau mithaḥ || 8 ||

During the day, the two friends, the couple, adorned with various flowers, stood happily together.

दिन के दौरान, दो मित्र, दंपती, विभिन्न फूलों से सजे हुए, एक दूसरे के साथ खुशी से खड़े थे।

6.107.9

मासमेकं महेन्द्राद्रौ रम्ये सरलसंकुलेरत्नकुड्ये गुहागेहे पूजितौ सुरकिंनरैः ॥ ९ ॥

māsamekaṃ mahendrādrau ramye saralasaṃkuleratnakuḍye guhāgehe pūjitau surakiṃnaraiḥ || 9 ||

For one month, in the beautiful Mahendra mountain, in a cave adorned with precious stones and surrounded by pine trees, they were worshipped by the celestial beings and Kinnaras.

एक महीने तक, सुंदर महेन्द्र पर्वत में, एक रत्नों से सजी और देवदार के पेड़ों से घिरी गुफा में, उन्हें देवताओं और किन्नरों द्वारा पूजा जाता था।

6.107.10

हस्तलभ्योदितामोघमन्दारवनमालितेएवं शुक्तिमतः पृष्ठे पक्षं कल्पलतागृहे ॥ १० ॥

hastalabhyoditāmoghamandāravanamāliteevaṃ śuktimataḥ pṛṣṭhe pakṣaṃ kalpalatāgṛhe || 10 ||

Thus, adorned with easily obtainable, abundant mango blossoms and garlands of mandara flowers, on the back of a pearl-studded seat, for a period, in the abode of the wish-fulfilling creeper.

इस प्रकार, आसानी से प्राप्य, भरपूर आम के फूलों और मंदार फूलों की मालाओं से सजे हुए, मोती जड़े आसन की पीठ पर, कुछ समय के लिए, इच्छा-पूर्ति लता के निवास में।

6.107.11

मासद्वयं पक्षवतो गिरेर्दक्षिणदिक्तटे । पारिजातवने देवपुष्पस्तबकमण्डपे ॥ ११ ॥

māsadvayaṃ pakṣavato girerdakṣiṇadiktaṭe | pārijātavane devapuṣpastabakamaṇḍape || 11 ||

For two months, they stayed in the southern direction of the mountain, in the pavilion adorned with divine flowers in the Pārijāta forest.

दो महीने तक, वे पर्वत के दक्षिण दिशा के किनारे पर, पारिजात वन में, देव पुष्पों से सजे मण्डप में रहे।

6.107.12

जम्बूखण्डतले मेरोः पादे जम्बूनदीतटे । जाम्बूनदमये मासं जम्बूफलरसासवैः ॥ १२ ॥

jambūkhaṇḍatale meroḥ pāde jambūnadītaṭe | jāmbūnadamaye māsaṃ jambūphalarasāsavaiḥ || 12 ||

For a month, they stayed at the foot of Mount Meru, on the banks of the Jambu River, enjoying the juice of the Jambu fruit.

एक महीने तक, वे मेरु पर्वत के पाद पर, जम्बू नदी के किनारे पर, जम्बू फल के रस का आनंद लेते हुए रहे।

6.107.13

दशोत्तरकुरूणां च मण्डले दिवसानि तौ । कोसलेषूत्तरस्थेषु सप्तविंशतिवासरान् ॥ १३ ॥

daśottarakurūṇāṃ ca maṇḍale divasāni tau | kosaleṣūttarastheṣu saptaviṃśativāsarān || 13 ||

For ten days, they stayed in the region of the Kurus, and for twenty-seven days, they stayed in the northern Kosala region.

दस दिन तक, वे कुरु क्षेत्र में रहे, और सत्ताईस दिन तक, वे उत्तरी कोसल क्षेत्र में रहे।

6.107.14

एवमन्येषु देशेषु विचित्रेषु महीभृताम् । स्थितवन्तौ महाभागौ सुहृदौ निशि दम्पती ॥ १४ ॥

evamanyeṣu deśeṣu vicitreṣu mahībhṛtām | sthitavantau mahābhāgau suhṛdau niśi dampatī || 14 ||

In this manner, the fortunate couple, who were dear friends, stayed in various wonderful lands of the earth at night.

इस प्रकार, भाग्यशाली युगल, जो प्रिय मित्र थे, रात में पृथ्वी के विभिन्न अद्भुत देशों में रहे।

6.107.15

ततो यातेषु मासेषु शनैः कतिपयेषु सा । चूडाला चिन्तयामास देवपुत्रकरूपिणी ॥ १५ ॥

tato yāteṣu māseṣu śanaiḥ katipayeṣu sā | cūḍālā cintayāmāsa devaputrakarūpiṇī || 15 ||

After some months had passed slowly, Chudala, who had the form of a divine son, began to think.

कुछ महीने धीरे-धीरे बीतने के बाद, चूडाला, जिसका रूप देवपुत्र के समान था, सोचने लगी।

6.107.16

सुरूपभोगभारेण परीक्षेऽहं शिखिध्वजम् । मा कदाचन चेतोऽस्य भोगेषु रतिमेष्यति ॥ १६ ॥

surūpabhogabhāreṇa parīkṣe'haṃ śikhidhvajam | mā kadācana cetosya bhogeṣu ratimeṣyati || 16 ||

I will test Shikhidhvaja with the burden of beautiful enjoyments, so that his mind may never become attached to pleasures.

मैं शिखिध्वज को सुंदर भोगों के भार से परीक्षा लूँगी, ताकि उसका मन भोगों में कभी आसक्त न हो।

6.107.17

इति संचिन्त्य चूडाला मायया विपिनावनौ । आगतं दर्शयामास ससुराप्सरसं हरिम् ॥ १७ ॥

iti saṃcintya cūḍālā māyayā vipināvanau | āgataṃ darśayāmāsa sasurāpsarasaṃ harim || 17 ||

Thus thinking, Chudala, by her magical power, showed Indra, who had come with the celestial nymphs, in the forest.

ऐसा सोचकर, चूडाला ने अपनी माया से वन में इंद्र को दिखाया, जो अप्सराओं के साथ आया था।

6.107.18

इन्द्रमभ्यागतं दृष्ट्वा परिवारसमन्वितम्। यथावत्पूजयामास वनसंस्थः शिखिध्वजः ॥ १८ ॥

indramabhyāgataṃ dṛṣṭvā parivārasamanvitam | yathāvatpūjayāmāsa vanasaṃsthaḥ śikhidhvajaḥ || 18 ||

Seeing Indra who had come with his retinue, Shikhidhvaja, who was in the forest, worshipped him properly.

इंद्र को अपने परिवार के साथ आते देखकर, वन में रहने वाले शिखिध्वज ने उनकी उचित पूजा की।

6.107.19

शिखिध्वज उवाच। आत्मना किं कृता दूरादभ्यागमकदर्थना। देवराज यथा तन्मे प्रसादाद्वक्तुमर्हसि ॥ १९ ॥

śikhidhvaja uvāca | ātmanā kiṃ kṛtā dūrādabhyāgamakadarthanā | devarāja yathā tanme prasādādvaktumarhasi || 19 ||

Shikhidhvaja said: Why have you come from afar with such effort, O King of the Gods? Please tell me the reason for your visit.

शिखिध्वज ने कहा: हे देवराज, आप दूर से इतने परिश्रम से क्यों आए हैं? कृपया मुझे आपके आने का कारण बताएँ।

6.107.20

इन्द्र उवाच। इमे वयमिहायातास्त्वद्गुणातिशयेन खात्। हृदि लग्नेन सूत्रेण खगा वनगता इव ॥ २० ॥

indra uvāca | ime vayamihāyātāstvadguṇātiśayena khāt | hṛdi lagnena sūtreṇa khagā vanagatā iva || 20 ||

Indra said: We have come here, attracted by your extraordinary virtues, like birds drawn to the forest by a thread tied to their hearts.

इंद्र ने कहा: हम आपकी असामान्य गुणों से आकर्षित होकर यहाँ आए हैं, जैसे बंधे हुए धागे से वन में खींचे गए पक्षी।

6.107.21

उत्तिष्ठ स्वर्गमागच्छ तत्र सर्वे त्वदुन्मुखाः। त्वद्गुणश्रवणाश्चर्याः स्थिता देवाङ्गनागणाः ॥ २१ ॥

uttistha svargamagaccha tatra sarve tvadunmukhaah | tvadgunashravanaashcharyaah sthita devaanganagaanah || 21 ||

Arise and come to heaven, where all are eager to see you. The celestial women are amazed by hearing about your virtues.

उठो और स्वर्ग को आओ, जहाँ सभी तुम्हारे लिए उत्सुक हैं। देवांगनाएँ तुम्हारे गुणों को सुनकर आश्चर्यचकित हैं।

6.107.22

पादुकागुटिकाखङ्गरसादीदमथापि च। गृहीत्वा सिद्धमार्गेण स्वीकुरु स्वर्गमण्डलम् ॥ २२ ॥

paadukagutikaakhangarasaadeedamathaapi cha | griheetvaa siddhamaargena sweekuru svargamandlam || 22 ||

Take your sandals, anklets, sword, and other belongings, and by the perfect path, accept the heavenly realm.

अपने खड़ाऊ, पायल, तलवार और अन्य सामान ले लो, और सिद्ध मार्ग से स्वर्ग के मण्डल को स्वीकार करो।

6.107.23

आगत्य विविधा भोगास्त्वया विबुधसद्मनि। जीवन्मुक्तेन भोक्तव्यास्तेन त्वामहमागतः ॥ २३ ॥

aagatya vividhaa bhogaastvayaa vibudhasadmani | jeevanmuktena bhoktavyaastena tvaamahamaagatah || 23 ||

Having come, various enjoyments are to be experienced by you in the abode of the gods. Being liberated while living, enjoy them, therefore I have come to you.

आकर, देवताओं के निवास में विविध भोग तुम्हें अनुभव करने हैं। जीवनमुक्त होकर उन्हें भोगो, इसलिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ।

6.107.24

विमानयन्ति संप्राप्तां न तिरस्करणैः श्रियम्। नाभिवाञ्छन्ति न प्राप्तां त्वादृशाः साधु साधवः ॥ २४ ॥

vimaanayanti sampraptaam na tiraskaranaish shriyam | naabhivaanchanti na praaptaam tvaadrushaah saadhu saadhavah || 24 ||

They do not despise the attained prosperity, nor do they desire it if it is not attained. Such noble people do not despise or desire prosperity.

वे प्राप्त समृद्धि का तिरस्कार नहीं करते, न ही उसे प्राप्त न होने पर इच्छा करते हैं। ऐसे साधु पुरुष समृद्धि का तिरस्कार या इच्छा नहीं करते।

6.107.25

अविघ्नमागतेनाद्य सुखं विहरता त्वया। स्वर्गः पवित्रतां यातु हरिणेव जगत्त्रयम्॥ २५॥

avighnamagatenaadya sukham viharataa tvayaa | svargah pavitratam yaatu harineva jagattrayam || 25 ||

Today, having come without obstacles, may you enjoy happiness. May heaven attain purity, like the three worlds.

आज, बाधा रहित होकर आए हुए, तुम सुख भोगो। स्वर्ग पवित्रता प्राप्त करे, जैसे तीनों लोक।

6.107.26

शिखिध्वज उवाच। सर्व स्वर्गसमाचारं वेद्मि देवाधिनायक। किंतु सर्वत्र मे स्वर्गो नियतो न तु कुत्रचित्॥ २६॥

śikhidhvaja uvāca | sarva svargasamācāraṃ vedmi devādhināyaka | kiṃtu sarvatra me svargo niyato na tu kutracit || 26 ||

Shikhidhvaja said: I know all the customs of heaven, O lord of the gods. But heaven is not fixed for me anywhere.

शिखिध्वज ने कहा: हे देवाधिनायक, मैं स्वर्ग के सभी व्यवहार जानता हूँ। लेकिन मेरे लिए स्वर्ग कहीं भी निश्चित नहीं है।

6.107.27

सर्वत्रैव हि तुष्यामि सर्वत्रैव रमे प्रभो। अवाञ्छनत्वान्मनसः सर्वत्रानन्दवानहम्॥ २७॥

sarvatraiva hi tuṣyāmi sarvatraiva rame prabho | avāñchanatvānmanasaḥ sarvatrānandavānaham || 27 ||

I am satisfied everywhere, I enjoy everywhere, O lord. Because my mind is free from desires, I am full of joy everywhere.

मैं हर जगह संतुष्ट हूँ, हर जगह आनंद लेता हूँ, हे प्रभु। क्योंकि मेरा मन इच्छाओं से मुक्त है, मैं हर जगह आनंद से भरा हूँ।

6.107.28

नियतं किंचिदेकत्र स्थितं स्वर्गकमीदृशम्। शक्र गन्तुं न जानामि त्वदाज्ञां न करोम्यहम्॥ २८॥

niyataṃ kiṃcid ekatra sthitaṃ svargakamīdṛśam | śakra gantuṃ na jānāmi tvadājñāṃ na karomya ham || 28 ||

I do not know how to go to such a fixed heaven in one place, O Shakra. I do not follow your command.

मैं नहीं जानता कि कैसे ऐसे एक स्थान पर स्थित स्वर्ग तक पहुँचा जाए, हे शक्र। मैं आपकी आज्ञा नहीं मानता।

6.107.29

शक्र उवाच। साधो विदितवेद्यानां परिपूर्णधियां समम्। सज्जनाचरितं युक्तं मन्ये भोगोपसेवनम्॥ २९॥

śakra uvāca | sādho viditavedyānāṃ paripūrṇadhiyāṃ samam | sajjanaācariataṃ yuktaṃ manye bhogopasevanam || 29 ||

Shakra said: O virtuous one, I consider the conduct of the wise, who know what is to be known, and whose intellect is perfect, to be proper enjoyment of pleasures.

शक्र ने कहा: हे साधु, मैं ज्ञानी पुरुषों के आचरण को, जो जानने योग्य हैं और जिनकी बुद्धि पूर्ण है, भोगों के उचित उपभोग के रूप में मानता हूँ।

6.107.30

देवेशे प्रोक्तवत्येवं तूष्णीमेव स्थिते नृपे। किमितो नापयाम्येष त्वमिति प्रोक्तवान् हरिः ॥ ३० ॥

deva eśe proktavatyevaṃ tūṣṇīmeva sthite nṛpe | kimitonāpayāmyeṣa tvamiti proktavān hariḥ || 30 ||

When the king remained silent after the lord of the gods had spoken thus, Hari said: Why do you not obey him?

जब देवेश्वर ने ऐसा कहा और राजा चुप रहा, तब हरि ने कहा: तुम उसकी आज्ञा क्यों नहीं मानते?

6.107.31

नाहमद्यैव कालेन वदतीति शिखिध्वजे। कल्याणं तेऽस्तु कुम्भेति वदन्नन्तर्धिमाययौ ॥ ३१ ॥

nāhamadyaiva kālena vadatīti śikhidhvaje | kalyāṇaṃ te'stu kumbheti vadannantardhimāyayau || 31 ||

I am not speaking at this time, saying this in Shikhidhvaja, may there be auspiciousness to you, Kumbha, saying this, he disappeared.

मैं इस समय नहीं बोल रही हूँ, यह शिखिध्वज में कह रही हूँ, तुम्हारे लिए कल्याण हो, कुम्भ, यह कहकर वह अंतर्धान हो गया।

6.107.32

तद्देववृन्दमखिलं त्रिदशेशयुक्तं तत्र क्षणादलमदृश्यमभूद्द्वितीयम्। कल्लोलराशिरिव वारिनिधौ प्रशान्ते वाते स्फुरन्मकरफेनफणीन्द्रवृन्दम् ॥ ३२ ॥

taddevavṛndamakhilaṃ tridaśeśayuktaṃ tatra kṣaṇādalamadṛśyamabhūddvitīyam | kalollarāśiriva vārinidhau praśānte vāte sphuranmakaraphenaphaṇīndravṛndam || 32 ||

That entire group of gods, along with the lord of the gods, became invisible there in an instant. Like a cluster of waves in the calm ocean, with the wind blowing, the group of crocodile kings shone.

वह सम्पूर्ण देवताओं का समूह, देवताओं के स्वामी के साथ, वहाँ एक क्षण में अदृश्य हो गया। शांत समुद्र में लहरों के झुंड की तरह, हवा चलने पर, मगरमच्छ राजाओं का समूह चमक उठा।

Chapter 108

6.108.1

श्रीवसिष्ठ उवाचतां मायां शममानीय चूडाला समचिन्तयत्दिष्टया भोगेच्छया नायं ह्रियते वसुधाधिपः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvācatāṃ māyāṃ śamamānīya cūḍālā samacintayatdiṣṭayā bhogecchayā nāyaṃ hriyate vasudhādhipaḥ || 1 ||

Vasishtha said: Cudala, having subdued the illusion, thought: 'By destiny and the desire for enjoyment, this king is not being taken away from the earth.'

वसिष्ठ ने कहा: चूडाला, माया को शांत करके, सोचा: 'भाग्य और भोग की इच्छा से, यह राजा पृथ्वी से नहीं हटाया जा रहा है।'

6.108.2

शान्तः समसमाभोग एवं शक्रसमागमेअसंरम्भमहेलं च कृतवान्व्यावहारिकम् ॥ २ ॥

śāntaḥ samasamābhoga evaṃ śakrasamāgameasaṃrambhamahelaṃ ca kṛtavānvyāvahārikam || 2 ||

Being calm, enjoying equal pleasures, thus in the union with Indra, he made worldly efforts without any resentment.

शांत होकर, समान भोगों का आनंद लेते हुए, इस प्रकार इंद्र के साथ मिलकर, उसने किसी असंतोष के बिना व्यावहारिक प्रयास किए।

6.108.3

भूय एव प्रपञ्चेन विमृशाम्येव सादरम्रागद्वेषप्रधानेन केनचिद्बुद्धिहारिणा ॥ ३ ॥

bhūya eva prapañcena vimṛśāmyeva sādaramrāgadveṣapradhānena kenacidbuddhihāriṇā || 3 ||

Again, I will deeply contemplate with the worldly affairs, which are predominantly driven by attachment and aversion, by some stealer of wisdom.

फिर से, मैं गहराई से विचार करूंगा दुनियावी मामलों पर, जो आसक्ति और घृणा से प्रभावित हैं, किसी बुद्धि चोर द्वारा।

6.108.4

इति संचिन्त्य सा रात्राविन्दावभ्युदिते वनेगृहीतमङ्गनारूपं कान्ता मदनिका सती ॥ ४ ॥

iti saṃcintya sā rātrāvindāvabhyudite vanegṛhītamaṅganārūpaṃ kāntā madanikā satī || 4 ||

Thus thinking, she, the beloved Madanika, being in the forest, took the form of a beautiful woman at the rise of the night lotus.

ऐसा सोचकर, वह, प्रिय मदनिका, वन में रहते हुए, रात के कमल उगने पर एक सुंदर स्त्री का रूप धारण किया।

6.108.5

संतानकलतागेहं नीरन्ध्रैः पुष्पगुच्छकैःशुद्धान्तं वनदेवीनां प्रविवेश मदान्विता ॥ ५ ॥

saṃtānakalatāgehaṃ nīrandhraiḥ puṣpagucchakaiḥśuddhāntaṃ vanadevīnāṃ praviveśa madānvitā || 5 ||

She, intoxicated with pride, entered the pure abode of the forest goddesses, which was a creeper-house adorned with clusters of flowers.

वह, घमंड से मतवाली, फूलों के गुच्छों से सजे लताओं के घर, जो कि एक शुद्ध वनदेवियों का निवास स्थान था, में प्रवेश किया।

6.108.7

तत्र संकल्पिते पुष्पशयने माल्यमालिताकण्ठे संकल्पितं कान्तं खिङ्गमादाय संस्थिता ॥ ७ ॥

tatra saṃkalpite puṣpaśayane mālyamālitākaṇṭhe saṃkalpitaṃ kāntaṃ khiṅgamādāya saṃsthitā || 7 ||

There, on the bed of flowers, adorned with garlands around her neck, she stood with her beloved, having taken the deer.

वहाँ, फूलों के बिछौने पर, गले में मालाओं से सजी, वह अपने प्रिय के साथ खड़ी थी, हिरण को लेकर।

6.108.8

आगत्यान्विष्य कुञ्जात्स प्रददर्श शिखिध्वजःलतागेहे मदनिकां कण्ठे खिङ्गं मनोहरम् ॥ ८ ॥

āgatyānviṣya kuñjātsa pradadarśa śikhidhvajaḥlatāgehe madanikāṃ kaṇṭhe khiṅgaṃ manoharam || 8 ||

Having come and searched the bower, he, the peacock-bannered one, saw the enchanting deer in the creeper-house, around the neck of Madanika.

वहाँ आकर और कुंज को खोजकर, मोर-ध्वज वाला (कार्तिकेय) ने लताओं के घर में, मदनिका के गले में मनोहर हिरण को देखा।

6.108.9

कुन्तलावलितस्कन्धं समालब्धं च चन्दनैःशयनावृतिनिक्षेपपर्याकुलितशेखरम् ॥ ९ ॥

kuntalāvalitaskandhaṃ samālabdhaṃ ca candanaiḥśayanāvṛtinikṣepaparyākulitaśekharam || 9 ||

With shoulders covered with locks of hair, anointed with sandalwood, and with hair disheveled due to the scattering of bed covers.

कंधों पर बालों की लटों से ढके हुए, चंदन से लिपटे हुए, और बिछौने के ढकने के कारण बिखरे हुए बालों वाले।

6.108.10

हेमाभे द्विगुणाकारबालाबाहूपधानकेसंसक्तश्रवणापाङ्गकपोलतलकुन्तलम् ॥ १० ॥

hemābhe dviguṇākārabālābāhūpadhānakesaṃsaktaśravaṇāpāṅgakapolatalakuntalam || 10 ||

With golden-like, twice the size of the arms, armlets, attached to the ears, eyebrows, cheeks, and locks of hair.

सोने जैसे, बाहों के दोगुने आकार के, बाजूबंदों से युक्त, कानों, भौंहों, गालों, और बालों की लटों से सजे हुए।

6.108.11

मिथुनं तद्दर्शाथ मिथः प्रहसिताननमन्योन्यवदनासक्तं छन्नं कल्पलतांशुकैः ॥ ११ ॥

mithunaṃ taddadarśātha mithaḥ prahasitānanamanyonyavadanāsaktaṃ channaṃ kalpalatāṃśukaiḥ || 11 ||

Then he saw the couple, laughing at each other, their faces close together, concealed by the garments of the wish-fulfilling creeper.

तब उसने उस जोड़े को देखा, जो एक-दूसरे पर हँस रहे थे, उनके चेहरे एक-दूसरे के साथ लगे हुए थे, और वे इच्छा-पूर्ण लता के वस्त्रों से ढके हुए थे।

6.108.12

आलोलमाल्यशयनं मदनातुरमाकुलमङ्गलग्नच्छलेनात्मरागमन्योन्यमर्पयत् ॥ १२ ॥

ālolamālyaśayanaṃ madanāturamākulamaṅgalagnacchalenātmarāgamanyonyamarpayat || 12 ||

Lying on a bed of swaying garlands, overwhelmed by passion, they offered each other their own desires with the playfulness of auspicious union.

स्वेच्छाचारी मालाओं के बिस्तर पर लेटे हुए, प्रेम से व्याकुल, वे एक-दूसरे को शुभ मिलन की छलावे से अपनी इच्छाएँ अर्पित कर रहे थे।

6.108.13

अभ्युन्मुखं समानन्दमुद्दाममदमन्थरम्परस्पराहतं पुष्पैर्वक्षोभ्यां पीडितस्तनम् ॥ १३ ॥

abhyunmukhaṃ samānandamuddāmamadamantharamparasparāhataṃ puṣpairvakṣobhyāṃ pīḍitastanam || 13 ||

Facing each other, sharing the same joy, their breasts pressed together by the flowers, their passion intensified.

एक-दूसरे की ओर मुँह करके, एक ही आनंद साझा करते हुए, फूलों से उनके स्तन दबे हुए थे, उनकी प्रेम भावना और बढ़ गई।

6.108.14

तदालोक्याविकारेण चेतसालं तुतोष सःअहो सुखं स्थितौ खिङ्गावित्याह स शिखिध्वजः ॥ १४ ॥

tadālokyāvikāreṇa cetasālaṃ tutoṣa saḥaho sukhaṃ sthitau khiṅgāvityāha sa śikhidhvajaḥ || 14 ||

Seeing this, he was greatly pleased in his mind and said, 'Ah, how happily they are situated,' said the peacock-bannered one.

इसे देखकर, उसके मन में बहुत खुशी हुई और उसने कहा, 'अहो, कितने खुशी से वे स्थित हैं,' मोर-ध्वज वाले ने कहा।

6.108.15

तिष्ठताङ्ग यथाकामं सुखं खिङ्गौ यथास्थितम्विघ्नं माकरवं भीतावित्युक्त्वा निर्जगाम सः ॥ १५ ॥

tiṣṭhatāṅga yathākāmaṃ sukhaṃ khiṅgau yathāsthitamvighnaṃ mākaravaṃ bhītāvityuktvā nirjagāma saḥ || 15 ||

Remaining there as he pleased, happily situated, he said, 'Fear not the obstacle of the crocodile,' and then he departed.

वहाँ अपनी इच्छा के अनुसार रहते हुए, खुशी से स्थित, उसने कहा, 'मगरमच्छ के बाधा से डरो मत,' और फिर वह चला गया।

6.108.16

ततो मुहूर्तमात्रेण प्रपञ्चं तमुपेक्ष्य सानिर्ययौ दर्शयन्ती स्वं रतिफुल्लाकुलं वपुः ॥ १६ ॥

tato muhūrtamātreṇa prapañcaṃ tamupekṣya sāniryayau darśayantī svaṃ ratiphullākulaṃ vapuḥ || 16 ||

Then, in just a moment, she ignored the world and approached, displaying her body filled with the blossoms of love.

फिर, एक ही पल में, उसने संसार को नजरअंदाज कर दिया और अपने प्रेम से भरे शरीर को दिखाते हुए आगे बढ़ी।

6.108.17

उपविष्टं ददर्शैनं नृपं हेमशिलातलेसमाधिसंस्थमेकान्ते मनाग्विकसितेक्षणम् ॥ १७ ॥

upaviṣṭaṃ dadarśainaṃ nṛpaṃ hemaśilātalesamādhisaṃsthamekānte manāgvikasitekṣaṇam || 17 ||

She saw the king seated on a golden stone throne in a solitary place, with his eyes blossoming with affection.

उसने राजा को एकांत में सोने की शिला पर बैठे हुए देखा, जिसकी आँखें प्रेम से खिली हुई थीं।

6.108.18

तं प्रदेशमुपागम्य लज्जावनमिताननातूष्णीमासीत्क्षणं खिन्ना म्लाना मदनिकाङ्गना ॥ १८ ॥

taṃ pradeśamupāgamya lajjāvanamitānanātūṣṇīmāsītkṣaṇaṃ khinnā mlānā madanikāṅganā || 18 ||

Approaching that place, with a face full of shyness, she stood silent for a moment, tired and dejected, the beloved of Madana.

उस स्थान पर पहुँचकर, शर्म से भरे चेहरे से, वह एक पल के लिए चुपचाप खड़ी रही, थकी हुई और निराश, मदन की प्रियतमा।

6.108.19

क्षणाच्छिखिध्वजो ध्यानाद्विरतस्तामुवाच ह अत्यन्तमधुरं वाक्यमिदमक्षुभ्दया धिया ॥ १९ ॥

kṣaṇācchikhidhvajo dhyānādviratastāmuvāca haatyantamadhuraṃ vākyamidamakṣubdhayā dhiyā || 19 ||

In a moment, Kama, the god of love, ceased his meditation and spoke to her with an extremely sweet voice, with a calm mind.

एक पल में, कामदेव, प्रेम के देवता, ने अपना ध्यान छोड़ दिया और उससे एक अत्यंत मधुर आवाज में बोले, शांत मन से।

6.108.20

तन्वि किं शीघ्रमेव त्वं विघ्नितानन्दमागताआनन्दायैव भूतानि यतन्ते यानि कानिचित् ॥ २० ॥

tanvi kiṃ śīghrameva tvaṃ vighnitānandamāgatāānandāyaiva bhūtāni yatante yāni kānicit || 20 ||

O slender one, why did you come so quickly, your joy obstructed? All beings strive for happiness alone.

हे कोमलांगी, तुम इतनी जल्दी क्यों आईं, तुम्हारा आनंद बाधित हो गया? सभी प्राणी केवल सुख के लिए प्रयास करते हैं।

6.108.21

भूयस्तोषय तं गच्छ कान्तं प्रणयवृत्तिभिःपरस्परेप्सितस्नेहो दुर्लभो हि जगत्त्रये ॥ २१ ॥

bhūyastoṣaya taṃ gaccha kāntaṃ praṇayavṛttibhiḥparasparepsitasneho durlabho hi jagattraye || 21 ||

Go and please him more, your beloved, with loving behavior. Mutual affection is indeed rare in the three worlds.

अपने प्रिय को और अधिक प्रसन्न करने के लिए जाओ, प्रेमपूर्ण व्यवहार से। परस्पर प्रेम तीनों लोकों में दुर्लभ है।

6.108.22

अहमेतेन चार्थेन नोद्वेगं यामि मानिनियद्यदिष्टतमं लोके तत्तदेव विजानता ॥ २२ ॥

ahametena cārthena nodvegaṃ yāmi māniniyadyadiṣṭatamaṃ loke tattadeva vijānatā || 22 ||

I do not feel any anxiety with this intention, O respectful one. Whatever is most desired in the world, know that to be so.

मैं इस उद्देश्य से कोई चिंता नहीं महसूस करता, हे सम्मानित। जो भी दुनिया में सबसे अधिक चाहा जाता है, उसे ऐसा ही समझो।

6.108.23

अहं कुम्भश्च तन्वङ्गि वीतरागाविहेतरादुर्वासःशापजा बाला त्वं यदिच्छसि तत्कुरु ॥ २३ ॥

ahaṃ kumbhaśca tanvaṅgi vītarāgāvihetarādurvāsaḥśāpajā bālā tvaṃ yadicchasi tatkuru || 23 ||

I am a pot-bellied, thin-limbed, passionless, aimless, cursed by Durvasa, O young girl, you do whatever you wish.

मैं पेट वाला, पतली अंगों वाला, वासनारहित, उद्देश्यहीन, दुर्वासा के शाप से ग्रस्त हूँ, हे युवती, तुम जो चाहो वह करो।

6.108.24

मदनिकोवाचएवमेष महाभाग स्त्रीस्वभावो हि चञ्चलःकामो ह्यष्टगुणः स्त्रीणां न कोपं कर्तुमर्हसि ॥ २४ ॥

madanikovācaevameṣa mahābhāga strīsvabhāvo hi cañcalaḥkāmo hyaṣṭaguṇaḥ strīṇāṃ na kopaṃ kartumarhasi || 24 ||

Madanika said: Such is the nature of women, O fortunate one, it is indeed fickle. Desire is eightfold in women, you should not be angry.

मदनिका ने कहा: ऐसा ही स्त्रियों का स्वभाव है, हे भाग्यशाली, यह चंचल है। इच्छा स्त्रियों में आठ गुना होती है, तुम्हें नाराज नहीं होना चाहिए।

6.108.25

अबलाहमनेनास्मि रात्रौ घनकाननेत्वयि संध्याजपपरे किं करोमि वराकिका ॥ २५ ॥

abalāhamanenāsmi rātrau gahanakānanetvayi saṃdhyājapapare kiṃ karomi varākikā || 25 ||

I am helpless with this, in the night in the dense forest, engrossed in twilight chanting, what should I do, O Varakika?

मैं इससे असहाय हूँ, रात में घने जंगल में, संध्या जप में लीन, मुझे क्या करना चाहिए, हे वराकिका?

6.108.26

अबला वा कुमारी वा जारं न रतिरोधनम्करोति परिखिङ्गेन नाङ्गे स्वे विनिवेशितम् ॥ २६ ॥

abalā vā kumārī vā jāraṃ na ratirodhanamkaroti parikhiṅgena nāṅge sve viniveśitam || 26 ||

Whether a weak woman or a young girl, she does not prevent the lover from enjoying her body, which is adorned with ornaments.

चाहे वह अबला हो या कुमारी, वह अपने आभूषणों से सजे शरीर को प्रेमी से रोकती नहीं है।

6.108.27

स्त्रियः सुन्दरतां याताः पुरपुंसामसङ्गमे । मन्युर्निषेध आक्रन्दः सतीत्वं किं करिष्यति ॥ २७ ॥

striyaḥ sundaratāṃ yātāḥ purapuṃsāmasaṅgame | manyurniṣedha ākrandaḥ satītvaṃ kiṃ kariṣyati || 27 ||

Women attain beauty by avoiding contact with other men | Anger, prohibition, crying, what will chastity do?

स्त्रियाँ दूसरे पुरुषों से संपर्क न करके सुंदरता प्राप्त करती हैं | क्रोध, निषेध, रोना, सतीत्व क्या करेगा?

6.108.28

अबला स्त्री तथा बाला मूढाहमपराधिनी । क्षन्तुमर्हसि नाथ त्वं क्षमावन्तो हि साधवः ॥ २८ ॥

abalā strī tathā bālā mūḍhāhamaparādhinī | kṣantumarhasi nātha tvaṃ kṣamāvanto hi sādhavaḥ || 28 ||

I am a weak woman, foolish and guilty | You should forgive me, O Lord, for the virtuous are forgiving.

मैं एक दुर्बल स्त्री हूँ, मूर्ख और दोषी | आपको मुझे क्षमा करनी चाहिए, हे स्वामी, क्योंकि साधु लोग क्षमाशील होते हैं।

6.108.29

शिखिध्वज उवाच । मन्युर्मम न बालेऽन्तर्विद्यते ख इव द्रुमः । केवलं साधुनिन्द्यत्वान्नेच्छामि त्वामहं वधूम् ॥ २९ ॥

śikhidhvaja uvāca | manyurmama na bāle'ntarvidyate kha iva drumaḥ | kevalaṃ sādhunindyatvānnecchāmi tvāmahaṃ vadhūm || 29 ||

Shikhidhvaja said | I have no anger within me, O child, like a tree without a hollow | Simply because you are not worthy of a virtuous person, I do not desire you as my bride.

शिखिध्वज ने कहा | मेरे अंदर कोई क्रोध नहीं है, हे बाले, एक खोखले पेड़ की तरह | केवल इसलिए कि तुम एक साधु व्यक्ति के योग्य नहीं हो, मैं तुम्हें अपनी वधू के रूप में नहीं चाहता।

6.108.30

सुहृत्त्वेन वनान्तेषु पूर्ववत्सुखमङ्गने । वीतरागतया नित्यं सममेव रमावहे ॥ ३० ॥

suhṛttvena vanānteṣu pūrvavatsukhamangane | vītarāgatayā nityaṃ samameva ramāvahe || 30 ||

With friendship, in the forests, as before, O beautiful one, with detachment, always, we shall enjoy equally.

मित्रता से, वनों में, पहले की तरह, हे सुंदरी, विरक्ति से, हमेशा, हम समान रूप से आनंद लेंगे।

6.108.31

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवं समतया तत्र स्थिते तस्मिञ्छिखिध्वजे । चूडाला चिन्तयामास तत्सत्त्वेनोदिताशया ॥ ३१ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃ samatayā tatra sthite tasmiñśikhidhvaje | cūḍālā cintayāmāsa tatsattvenoditāśayā || 31 ||

Vasishtha said | Thus, with equanimity, when Shikhidhvaja was established there, Chudala thought with her mind inspired by his virtue.

वसिष्ठ ने कहा | इस प्रकार, समता से, जब शिखिध्वज वहाँ स्थापित हुआ, चूडाला ने उसके सद्गुण से प्रेरित मन से सोचा।

6.108.32

अहो वत परं साम्यं भगवानयमागतः । वीतरागतयाऽक्रोधो जीवन्मुक्तोऽवतिष्ठते ॥ ३२ ॥

aho vata paraṃ sāmyaṃ bhagavānayamāgataḥ | vītarāgatayā'krodho jīvanmukto'vatiṣṭhate || 32 ||

Oh, how wonderful! This blessed one has attained the highest equanimity. Free from attachment and anger, he remains liberated while living.

अहो, कितना अद्भुत है! यह भगवान परम साम्य प्राप्त हैं। वीतराग और अक्रोध से युक्त होकर जीवन्मुक्त की तरह स्थित हैं।

6.108.33

नैनं हरन्ति ते भोगा न महत्योऽपि सिद्धयः । न सुखानि न दुःखानि नापदो न च संपदः ॥ ३३ ॥

nainaṃ haranti te bhogā na mahatyo'pi siddhayaḥ | na sukhāni na duḥkhāni nāpado na ca saṃpadaḥ || 33 ||

Neither pleasures nor great achievements can sway him. Neither happiness nor sorrow, neither adversity nor prosperity can affect him.

न तो भोग उसे हर सकते हैं, न ही महान सिद्धियाँ। न सुख न दुःख, न आपदाएँ न संपदाएँ उसे प्रभावित कर सकती हैं।

6.108.34

चिन्तिताः सकला एकं प्रयान्त्येनमनिन्दिताः । मन्ये महर्द्धयः कान्ता नारायणमिवापरम् ॥ ३४ ॥

cintitāḥ sakalā ekaṃ prayāntyenamaninditāḥ | manye maharddhayaḥ kāntā nārāyaṇamivāparam || 34 ||

All thoughts, pure and blameless, converge towards him. I believe the great powers, beloved, approach him like another Nārāyaṇa.

सभी विचार, शुद्ध और निर्दोष, उसकी ओर आकर्षित होते हैं। मैं मानता हूँ कि महान शक्तियाँ, प्रिय, उसकी ओर नारायण की तरह आती हैं।

6.108.35

आत्मवृत्तान्तमखिलं तमेनं स्मारयाम्यहम् । कुम्भरूपमिदं त्यक्त्वा चूडालैव भवाम्यहम् ॥ ३५ ॥

ātmavṛttāntamakhilaṃ tamenaṃ smārayāmyaham | kumbharūpamidaṃ tyaktvā cūḍālaiva bhavāmyaham || 35 ||

I recall the entire story of his life. Abandoning this form of a pot, I myself become Chudala.

मैं उसके जीवन की पूरी कहानी याद करता हूँ। इस घड़े के रूप को छोड़कर, मैं स्वयं चूडाला बन जाता हूँ।

6.108.37

तस्मान्मदनिकादेहाच्चूडाला निर्गतेव सा । बभावस्य पुरो युक्ता निर्गतेव समुद्गकात् ॥ ३७ ॥

tasmānmadanikādehāccūḍālā nirgateva sā | babhāvasya puro yuktā nirgateva samudgakāt || 37 ||

Therefore, from my small body, Chudala emerged as if from a pot. She appeared before him, adorned like a goddess emerging from a lotus.

इसलिए, मेरे छोटे शरीर से, चूडाला घड़े से निकलने की तरह प्रकट हुई। वह उसके सामने कमल से निकलने वाली देवी की तरह सजी-धजी प्रकट हुई।

6.108.38

तां ददर्शानवद्याङ्गीं पुनः प्रणयपेशलाम्। कान्तां मदनिकामेव चूडालां दयितां स्थिताम्॥ ३८॥

tāṃ dadarśānavadyāṅgīṃ punaḥ praṇayapeśalām | kāntāṃ madanikāmeva cūḍālāṃ dayitāṃ sthitām || 38 ||

He saw her again, the flawless one, skilled in love, standing there, the beloved, Madanika herself, Chudala.

उसने उसे फिर से देखा, निर्दोष अंगों वाली, प्रेम में निपुण, खड़ी हुई, प्रिय, मदनिका स्वयं, चूडाला।

6.108.39

समुदितामिव माधवपद्मिनीमुपगतामिव भूमितलाच्छ्रियम्। प्रकटितामिव रत्नसमुद्गकात्परिददर्श निजां दयितां नृपः॥ ३९॥

samuditāmiva mādhavapadminīmupagatāmiva bhūmitalācchriyam | prakaṭitāmiva ratnasamudgakātparidadarśa nijāṃ dayitāṃ nṛpaḥ || 39 ||

The king saw his beloved as if she had risen like the lotus of Madhava, as if she had approached like the splendor of the earth, as if she had appeared like a jewel from the ocean.

राजा ने अपनी प्रिय को देखा मानो मधव की कमल की तरह उठी हो, मानो पृथ्वी की शोभा की तरह आई हो, मानो समुद्र से रत्न की तरह प्रकट हुई हो।

Chapter 109

6.109.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ तां दयितां दृष्ट्वा विस्मयोत्फुल्ललोचनः । शिखिध्वज उवाचेदमाश्चर्याकुलया गिरा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha tāṃ dayitāṃ dṛṣṭvā vismayotphullalocanaḥ | śikhidhvaja uvācedamāścaryākulayā girā || 1 ||

Shri Vasistha said: Then, seeing his beloved, his eyes wide with wonder, Shikhidhvaja spoke these words with a voice full of amazement:

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब, अपनी प्रिया को देखकर, आश्चर्य से आँखें फैलाकर, शिखिध्वज ने आश्चर्य भरी आवाज में ये शब्द कहे:

6.109.2

का त्वमुत्पलपत्राक्षि कुतः प्राप्तासि सुन्दरि । किमिहासि कियत्कालं किमर्थमिह तिष्ठसि ॥ २ ॥

kā tvamutpalapatrākṣi kutaḥ prāptāsi sundari | kimihāsi kiyatkālaṃ kimarthamih tiṣṭhasi || 2 ||

Who are you, lotus-eyed beauty? Where have you come from, O beautiful one? What are you doing here, and for how long? Why are you standing here?

तुम कौन हो, कमलनयनी? तुम कहाँ से आई हो, ओ सुंदरी? तुम यहाँ क्या कर रही हो, और कितने समय से? तुम यहाँ क्यों खड़ी हो?

6.109.3

अङ्गेन व्यवहारेण स्मितेनानुनयेन च । मम जायाविलासेन तत्कलेवोपलक्ष्यसे ॥ ३ ॥

aṅgena vyavahāreṇa smitena anunayena ca | mama jāyāvilāsena tatkalevopalakṣyase || 3 ||

By your gestures, behavior, smile, and gentle manner, you are recognized as my wife at this moment.

तुम्हारे अंगों, व्यवहार, मुस्कान और नम्रता से, तुम इस समय मेरी पत्नी के रूप में पहचानी जाती हो।

6.109.4

चूडालोवाच । एवमेव प्रभो विद्धि चूडालास्मि न संशयः । अकृत्रिमेण देहेन लब्धोऽस्यद्य मया स्वयम् ॥ ४ ॥

cūḍālovāca | evameva prabho viddhi cūḍālāsmi na saṃśayaḥ | akṛtrimena dehena labdho'syadya mayā svayam || 4 ||

Chudala said: Know this, O Lord, I am indeed Chudala, there is no doubt. I have attained this natural body myself today.

चूडाला ने कहा: हे प्रभु, यह जान लो, मैं चूडाला ही हूँ, इसमें कोई संदेह नहीं। मैंने आज स्वयं ही इस प्राकृतिक शरीर को प्राप्त किया है।

6.109.5

कुम्भादिदेहनिर्माणैस्त्वां बोधयितुमेव मे । प्रपञ्चः शतशाखत्वमिह यातो वनान्तरे ॥ ५ ॥

kumbhādidehanirmāṇaistvāṃ bodhayitumeva me | prapañcaḥ śataśākhatvamih yāto vanāntare || 5 ||

To enlighten you, the world has taken the form of various bodies like pots, etc. Here in the forest, the world has become a hundred-branched tree.

तुम्हें बोध कराने के लिए, संसार ने घड़े आदि के रूप में शरीर धारण किए हैं। यहाँ वन में, संसार सौ शाखाओं वाला पेड़ बन गया है।

6.109.6

यदा राज्यं परित्यज्य मोहेन तपसे वनम्। त्वमागास्तत्प्रभृत्येव त्वद्बोधायाहमुद्यता ॥ ६ ॥

yadā rājyaṃ parityajya mohena tapase vanam | tvamāgāstatprabhṛtyeva tvadbodhāyāhamudyatā || 6 ||

When you renounced the kingdom due to delusion and went to the forest for penance, from that time onwards, I have been striving for your enlightenment.

जब आपने मोह के कारण राज्य त्याग दिया और तपस्या के लिए वन में चले गए, तब से मैं आपके बोध के लिए प्रयासरत हूँ।

6.109.7

अनेन कुम्भदेहेन मयैव त्वं विबोधितः। कुम्भादिदेहनिर्माणं त्वां बोधयितुमेव मे ॥ ७ ॥

anena kumbhadehena mayaiva tvaṃ vibodhitaḥ | kumbhādidehanirmāṇaṃ tvāṃ bodhayitumeva me || 7 ||

With this pot-like body, I myself have awakened you. The creation of this pot-like body is solely to enlighten you.

इस घड़े जैसे शरीर के द्वारा, मैंने स्वयं आपको जागृत किया है। इस घड़े जैसे शरीर का निर्माण केवल आपको बोध कराने के लिए है।

6.109.8

मायया न तु कुम्भादि किंचित्सत्यं महीपते। अथो विदितवेद्यस्त्वं ध्यानेनैतदखण्डितम् ॥ ८ ॥

māyayā na tu kumbhādi kiṃcitsatyaṃ mahīpate | atho viditavedyastvaṃ dhyānenaitadakhṇḍitam || 8 ||

O king, nothing is truly real, not even the pot-like body, due to illusion. However, you, who have known the knowable, perceive this as undivided through meditation.

हे राजन्, भ्रम के कारण कुछ भी वास्तव में सत्य नहीं है, न ही घड़े जैसा शरीर। फिर भी, आप जो ज्ञेय को जानते हैं, ध्यान के द्वारा इसे अखण्ड रूप में देखते हैं।

6.109.9

सर्वं पश्यसि तत्त्वज्ञ ध्यानेनाश्ववलोकय। अथ चूडालयेत्युक्तो बद्ध्वा परिकरं नृपः ॥ ९ ॥

sarvaṃ paśyasi tattvajña dhyānenāśvavalokaya | atha cūḍālayetyukto baddhvā parikaraṃ nṛpaḥ || 9 ||

O knower of truth, see everything through meditation. Then, the king, having been addressed as Cūḍāla, bound his retinue.

हे तत्वज्ञ, ध्यान के द्वारा सब कुछ देखो। फिर, जब राजा को चूडाला कहा गया, तो उसने अपने परिवार को बाँध लिया।

6.109.10

आत्मोदन्तं विशेषेण ध्यानेनामलमैक्षत। अभिराज्यपरित्यागाच्चूडालादर्शनावधि ॥ १० ॥

ātmoudantaṃ viśeṣeṇa dhyānenāmalamaikṣata | abhirājyaparityāgāccūḍālādarśanāvadhi || 10 ||

He saw the pure self distinctly through meditation, from the renunciation of the kingdom until the sight of Cūḍāla.

उसने ध्यान के द्वारा पवित्र आत्मा को स्पष्ट रूप से देखा, राज्य के त्याग से लेकर चूडाला के दर्शन तक।

6.109.11

सर्वं मुहूर्तध्यानेन चात्मोदन्तं ददर्श सः। आराज्यसंपरित्यागाद्वर्तमानक्षणक्रमम् ॥ ११ ॥

sarvaṃ muhūrtadhyānena cātmoudantaṃ dadarśa saḥ| ārājyasaṃparityāgādvartamānakṣaṇakramam || 11 ||

He saw everything through momentary meditation, including the self, due to the renunciation of the kingdom, the sequence of the present moment.

उसने क्षणिक ध्यान से सब कुछ देखा, जिसमें आत्मा भी शामिल थी, राज्य के त्याग के कारण, वर्तमान क्षण का क्रम।

6.109.12

सर्वमालोक्य भूपालो विरराम समाधितः। समाधिविरतो हर्षविकासिनयनाम्बुजः ॥ १२ ॥

sarvamālokya bhūpālo virarāma samādhitaḥ| samādhivirato harṣavikāsinayanāmbujaḥ || 12 ||

Having seen everything, the king stopped, absorbed in meditation. Coming out of meditation, his lotus-like eyes blossomed with joy.

सब कुछ देखने के बाद, राजा ध्यान में डूब गया और रुक गया। ध्यान से बाहर आने पर, उसके कमल के समान नेत्र हर्ष से खिल उठे।

6.109.13

विसार्य तरसा बाहू पुलकोज्ज्वलतां गतौ। गलदङ्गं घनस्नेहं मुञ्चद्बाष्पं स्फुरत्स्पृहम् ॥ १३ ॥

visārya tarasā bāhū pulakojjvalatāṃ gatau| galadaṅgaṃ ghanasnehaṃ muñcadbāṣpaṃ sphuratspṛham || 13 ||

Spreading his arms swiftly, his body glowing with excitement, his limbs melting with intense affection, he shed tears of joy with a throbbing desire.

अपने हाथ तेजी से फैलाकर, उसका शरीर उत्तेजना से चमक उठा, उसके अंग गहरे स्नेह से पिघल गए, और उसने हर्ष के आंसू बहाए जिसमें उसकी धड़कती इच्छा थी।

6.109.14

आलिलिङ्ग चिरं कान्तां नकुलो नकुलीमिव। तयोरालिङ्गने तस्मिंस्तत्र भावो बभूव यः ॥ १४ ॥

ālilińga ciraṃ kāntāṃ nakulo nakulīmiva| tayorālińgane tasmiṃstatra bhāvo babhūva yaḥ || 14 ||

He embraced his beloved for a long time, like a mongoose embracing its mate. In that embrace, a profound emotion arose.

उसने अपनी प्रियतमा को लंबे समय तक आलिंगन किया, जैसे नेवला अपनी नेवली को आलिंगन करता है। उस आलिंगन में एक गहरी भावना उत्पन्न हुई।

6.109.15

न स वासुकिजिह्नाभिर्वक्तुं हर्षेण शक्यते। दिविस्थाविव पङ्केन कृताविव मिलत्तनू ॥ १५ ॥

na sa vāsukijihnābhirvaktuṃ harṣeṇa śakyate| divisthāviva paṅkena kṛtāviva milattanū || 15 ||

That joy cannot be expressed with the signs of Vasuki. It is as if they were united in heaven, made one by destiny.

वह हर्ष वासुकि के चिह्नों से व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसा लगता है मानो वे स्वर्ग में मिले हों, भाग्य से एक बनाए गए हों।

6.109.16

सैलाविव समुत्कीर्णौ श्लिष्टावास्तां चिरं प्रियौ। मुहूर्तेन गलद्धर्मजलौ पुलकपीवरौ ॥ १६ ॥

sailāviva samutkīrṇau śliṣṭāvāstāṃ ciraṃ priyau muhūrtena galaddharmajalau pulakapīvarau || 16 ||

Like two rivers in flood that have merged, the beloved pair remain closely embraced for a long time. In a moment, their bodies are drenched with the water of love, their flesh thrilling with joy.

जैसे बाढ़ में दो नदियाँ मिल जाती हैं, वैसे ही प्रेमी युगल लंबे समय तक गले मिले रहते हैं। क्षण भर में उनके शरीर प्रेम के जल से भीग जाते हैं, और उनकी देह आनंद से पुलकित हो उठती है।

6.109.17

बाहू विश्लथतामीषन्निन्यतुस्तौ शनैः प्रियौ अमृतापूर्णहृदयौ संशून्यहृदयोपमौ ॥ १७ ॥

bāhū viślathatāmīṣanninyatustau śanaiḥ priyau amṛtāpūrṇahṛdayau saṃśūnyahṛdayopamau || 17 ||

Their arms, loosened in love, gradually became still, the two beloved ones. Their hearts, full of nectar, seemed like empty hearts in the depth of their union.

प्रेम में ढीले हुए उनके बाहू धीरे-धीरे शांत हो गए, वे दोनों प्रियजन। अमृत से भरे उनके हृदय शून्य हृदय जैसे लगते थे उनके मिलन की गहराई में।

6.109.18

उन्मुक्तभुजमास्तां तावल्लक्षस्थितलोचनम्। घनानन्दक्षणं स्थित्वा तूष्णीं प्रणयपेशलम्॥ १८ ॥

unmuktabhujamāstāṃ tāvalakṣasthitalocanam ghanānandakṣaṇaṃ sthitvā tūṣṇīṃ praṇayapeśalam || 18 ||

With arms now free, their eyes fixed in a steady gaze, they stood immersed in a moment of dense bliss, silently expressing the tenderness of love.

अब मुक्त बाहों के साथ, उनकी दृष्टि स्थिर थी, वे घने आनंद के क्षण में खड़े रहे, प्रेम की कोमलता को मौन में व्यक्त करते हुए।

6.109.19

कान्तां चिबुकसंलग्नकरः प्रोवाच भूपतिः। अत्यन्तमधुरस्निग्धः कान्तः स्वकुलयोषिताम्॥ १९ ॥

kāntāṃ cibukasaṃlagnakaraḥ provāca bhūpatiḥ atyantamadhurasnigdhaḥ kāntaḥ svakulayoṣitām || 19 ||

The king, his hand resting on his beloved's chin, spoke with utmost sweetness and affection, addressing the women of his court.

राजा ने अपनी प्रियतमा के ठोड़ी पर हाथ रखकर अत्यंत मधुर और स्नेहपूर्ण वाणी में अपने राजमहल की स्त्रियों को संबोधित किया।

6.109.20

पुण्यश्च रतिनिष्पन्दः स्वादुर्नामामृतादपि। कितप्रमाणस्तन्वंग्या त्वया बालेन्दुमुग्धया॥ २० ॥

puṇyaśca ratiniṣpandaḥ svādurnāmāmṛtādapi kiyatpramāṇastanvaṃgyā tvayā bālendumugdhayā || 20 ||

Your beauty, born of merit and the stillness of love, is sweeter than nectar and even the sweetest name. How can one measure the charm of your form, O one enchanted by the moonlike youth?

तुम्हारा सौंदर्य, पुण्य और प्रेम की स्थिरता से उत्पन्न, अमृत और सबसे मधुर नाम से भी अधिक मधुर है। तुम्हारे रूप की सुंदरता का माप कैसे किया जा सकता है, हे चंद्रमा जैसे यौवन से मुग्ध प्रिये?

6.109.21

अनुभूतश्चिरं क्लेशो भर्तुरर्थेन दारुणः। एवं दुरुत्तरात्तस्मात्संसारकुहरादहम्॥ २१ ॥

anubhūtaściraṃ kleśo bharturarthena dāruṇaḥ | evaṃ duruttarāttasmātsaṃsārakuharādaham || 21 ||

I have experienced great suffering for a long time for the sake of my husband | Thus, I have been rescued from the terrible pit of worldly existence

मैंने अपने पति के लिए बहुत दिनों तक कठिन कष्ट भोगा है | इस प्रकार, मैं संसार के भयंकर गर्त से बच गया हूँ

6.109.22

उत्तारितो यया बुद्ध्या सा हि केनोपमीयते। अरुन्धती शची गौरी गायत्री श्रीः सरस्वती॥ २२ ॥

uttārito yayā buddhyā sā hi kenopamīyate | arundhatī śacī gaurī gāyatrī śrīḥ sarasvatī || 22 ||

By whose intelligence I have been saved, how can she be compared to anyone else? She is like Arundhati, Shachi, Gauri, Gayatri, Shri, and Sarasvati.

जिसकी बुद्धि से मैं बच गया हूँ, उसकी किससे तुलना की जाए? वह अरुन्धती, शची, गौरी, गायत्री, श्री और सरस्वती के समान है।

6.109.23

समस्ताः पेलवायन्ते तव तन्व्या गुणश्रिया । धीः श्रीः कान्तिः क्षमा मैत्री करुणाद्यास्तु सुन्दरि ॥ २३ ॥

samastāḥ pelavāyante tava tanvyā guṇaśriyā | dhīḥ śrīḥ kāntiḥ kṣamā maitrī karuṇādyāstu sundari || 23 ||

All others pale in comparison to your qualities, O beautiful one | Your intelligence, prosperity, radiance, forgiveness, friendship, and compassion are unmatched.

तुम्हारे गुणों के सामने सभी और फीके पड़ जाते हैं, हे सुंदरी | तुम्हारी बुद्धि, समृद्धि, चमक, क्षमा, मैत्री और करुणा अनुपम हैं।

6.109.24

कान्तास्वाकारकान्तासु प्रथमेवाभिलक्ष्यसे । परेणाध्यवसायेन त्वयाहमवबोधितः ॥ २४ ॥

kāntāsvākārakāntāsu prathamevābhilakṣyase | pareṇādhyavasāyena tvayāhamavabodhitaḥ || 24 ||

Among the beautiful ones, you are the first to be seen | With supreme determination, I have been enlightened by you.

सुंदर रूपों में आप सबसे पहले दिखाई देती हैं | परम निश्चय से, मैं आपसे ही जाग्रत हुआ हूँ।

6.109.25

केन प्रत्युपकारेण परितुष्यति ते मनःमोहादनादिगहनादनन्तगहनादपि ॥ २५ ॥

kena pratyupakāreṇa parituṣyati te manaḥmohādanādigahanādanantagahanādapi || 25 ||

By what return of favor will your mind be satisfied, which is deeper than the deepest illusion and endless depths?

किस प्रत्युपकार से आपका मन संतुष्ट होगा, जो सबसे गहरी मोह और अनंत गहराई से भी गहरा है?

6.109.26

पतितं व्यवसायिन्यस्तारयन्ति कुलस्त्रियः । शास्त्रार्थगुरुमन्त्रादि तथा नोत्तारणक्षमम् ॥ २६ ॥

patitaṃ vyavasāyinyastārayanti kulastriyaḥ| śāstrārthagurumantrādi tathā nottāraṇakṣamam || 26 ||

Women of noble families uplift the fallen who are determined| Similarly, scriptures, teachers, and mantras are not capable of uplifting.

कुलीन स्त्रियाँ पतित व्यवसायी को उठाती हैं| शास्त्र, गुरु, मंत्र आदि ऐसे उठाने में असमर्थ हैं।

6.109.27

यथैताः स्नेहशालिन्यो भर्तृणां कुलयोषितः । सखा भ्राता सुहृद्भृत्यो गुरुर्मित्रं धने सुखम् ॥ २७ ॥

yathaitāḥ snehaśālinyo bhartṛ̣ṇāṃ kulayoṣitaḥ| sakhā bhrātā suhṛdbhṛtyo gururmithraṃ dhane sukham || 27 ||

Just as these affectionate women of noble families are to their husbands, so are friends, brothers, well-wishers, servants, teachers, and friends in wealth and happiness.

जैसे ये स्नेहशील कुलीन स्त्रियाँ अपने पतियों के लिए होती हैं, वैसे ही मित्र, भाई, सुहृद, सेवक, गुरु और मित्र धन और सुख में होते हैं।

6.109.28

शास्त्रमायतनं दासः सर्वम भर्तुः कुलाङ्गनाः । सर्वदा सर्वयत्नेन पूजनीयाः कुलाङ्गनाः ॥ २८ ॥

śāstramāyatanaṃ dāsaḥ sarvam bhartuḥ kulāṅganāḥ| sarvadā sarvayatnena pūjanīyāḥ kulāṅganāḥ || 28 ||

Scriptures, temples, and servants are all for the husband, and the noble women should always be worshipped with all efforts.

शास्त्र, मंदिर और सेवक सभी पति के लिए हैं, और कुलीन स्त्रियों को सदा सभी प्रयासों से पूजनीय होना चाहिए।

6.109.29

लोकद्वयसुखं सम्यक्सर्वं यासु प्रतिष्ठितम् । निरिच्छायाः प्रयातायाः पारं संसारवारिधेः ॥ २९ ॥

lokadvayasukhaṃ samyaksarvaṃ yāsu pratiṣṭhitam| niricchāyāḥ prayātāyāḥ pāraṃ saṃsāravāridheḥ || 29 ||

The happiness of both worlds is fully established in those who are free from desire and have crossed the ocean of worldly existence.

दोनों लोकों का सुख उनमें पूर्ण रूप से स्थापित होता है जो इच्छा से मुक्त होकर संसार के समुद्र को पार कर चुके हैं।

6.109.30

कथमस्योपकारस्य करिष्ये ते प्रतिक्रियाः । मन्ये कुलाङ्गनां लोके लोके सर्वास्त्वयाधुना ॥ ३० ॥

kathamasyopakārasya kariṣye te pratikriyāḥ| manye kulāṅganāṃ loke loke sarvāstvayādhunā || 30 ||

How can I repay this kindness? I believe that all noble women in the world are now yours.

मैं इस उपकार का कैसे बदला चुका सकता हूँ? मैं मानता हूँ कि संसार में सभी कुलीन स्त्रियाँ अब तुम्हारी हैं।

6.109.31

नारीसौजन्यचर्चासु व्यपदेश्या भविष्यसि । त्वां निर्मितवतो धातुर्गुणजालातिशायिनीम् ॥ ३१ ॥

nārīsaujanyacarcāsu vyapadeśyā bhaviṣyasi | tvāṃ nirmitavato dhāturguṇajālātiśāyinīm || 31 ||

In discussions about the gentleness of women, you will be praised | You, who are endowed with a network of qualities, have been created by the Creator

नारी की सौजन्य की चर्चाओं में आप व्यपदेश्या होंगी | आप, जो गुणों के जाल से अतिशयित हैं, धातु द्वारा निर्मित हैं

6.109.32

मन्ये प्रकुपिता नूनमरुन्धत्यादिकाः स्त्रियः । सती त्वं रूपसौजन्यगुणरत्नसमुद्गिके ॥ ३२ ॥

manye prakupitā nūnamarundhatyādikāḥ striyaḥ | satī tvaṃ rūpasaujanyaguṇaratnasamudgike || 32 ||

I think that women like Arundhati must be angry | O chaste one, you are a treasure trove of beauty, gentleness, and virtues

मैं सोचता हूँ कि अरुन्धति जैसी स्त्रियाँ कुपित होंगी | हे सती, आप सौन्दर्य, सौजन्य और गुणों की रत्नसमुद्गिका हैं

6.109.33

एहि मे त्वद्गुणोत्कस्य पुनरालिङ्गनं कुरु । श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा मृगशावाक्षीं चूडालां तां शिखिध्वजः ॥ ३३ ॥

ehi me tvadguṇotkasya punarāliṅganaṃ kuru | śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā mṛgaśāvākṣīṃ cūḍālāṃ tāṃ śikhidhvajaḥ || 33 ||

Come, embrace me again with your excellent qualities | Shri Vasishtha said | Having said this, Shikhidhvaja embraced Chudala, who had eyes like a doe

आओ, अपने उत्कृष्ट गुणों से मुझे पुनः आलिंगन करो | श्री वसिष्ठ ने कहा | ऐसा कहकर शिखिध्वज ने हरिणी के समान नेत्रों वाली चूडाला को आलिंगन किया

6.109.34

आलिलिङ्ग पुनर्गाढं नकुलो नकुलीमिव । चूडालोवाच । देव शुष्कक्रियाजालपरे त्वय्याकुलात्मनि ॥ ३४ ॥

āliliṅga punargāḍhaṃ nakulo nakulīmiva | cūḍālovāca | deva śuṣkakriyājālapare tvayyākulātmani || 34 ||

He embraced her tightly again like a mongoose embracing a female mongoose | Chudala said | O Lord, you are engrossed in dry rituals

उसने पुनः नकुल की तरह नकुली को गहराई से आलिंगन किया | चूडाला ने कहा | हे देव, आप शुष्क क्रियाओं में व्यस्त हैं

6.109.35

भूयोभूयो भृशमहं त्वदर्थं दुःखिताभवम्। तेन त्वदवबोधात्मा स्वार्थं एवोपपादितः ॥ ३५ ॥

bhūyobhūyo bhṛśamahaṃ tvadarthaṃ duḥkhitābhavam | tena tvadavabodhātmā svārthaṃ evopapāditaḥ || 35 ||

Again and again, I became extremely distressed for your sake | Therefore, your ignorant self has been fulfilled only for selfish purposes

बार-बार, मैं आपके लिए अत्यधिक दुःखी हो गई | इसलिए, आपका अज्ञानी स्वरूप स्वार्थ के लिए ही पूर्ण हुआ है

6.109.36

मया तदत्र किं देव करोषि मम गौरवम्। शिखिध्वज उवाच। त्वया यथा वरारोहे स्वार्थः संपाद्यते शुभः ॥ ३६ ॥

mayā tadatra kiṃ deva karōṣi mama gauravam | śikhidhvaja uvāca | tvayā yathā varārōhē svārthaḥ saṃpādyatē śubhaḥ || 36 ||

What honor do you bestow upon me here, O Lord? Shikhidhvaja said: O beautiful one, as you fulfill your noble purpose.

हे देव, आप यहाँ मेरा क्या सम्मान करते हैं? शिखिध्वज ने कहा: हे सुंदरी, जैसे आप अपने शुभ उद्देश्य को पूरा करती हैं।

6.109.37

तमिदानीं तथा सर्वाः साधयन्तु कुलाङ्गनाः। चूडालोवाच। बुध्यसे कान्त विश्रान्तो जगज्जालतटे विभो ॥ ३७ ॥

tamidānīṃ tathā sarvāḥ sādhayantu kulāṅganāḥ | cūḍālōvāca | budhyasē kānta viśrāntō jagajjālatatē vibhō || 37 ||

May all the maidens of the family accomplish that now. Chudala said: O beloved, you are aware, resting on the shore of the world's illusion, O Lord.

सभी कुल की कन्याएँ अब उसे पूरा करें। चूडाला ने कहा: हे प्रिय, आप जानते हैं, माया के किनारे पर विश्राम करते हुए, हे प्रभु।

6.109.38

अद्य तं प्राक्तनं किंचिन्मोहं समनुपश्यसि। इदं करोमि नेदं तु प्राप्नोमीदमिति स्थितिम् ॥ ३८ ॥

adya taṃ prāktanaṃ kiñcinmohaṃ samanupaśyasi | idaṃ karomi nedaṃ tu prāpnomīdamiti sthitim || 38 ||

Today, you see that former delusion. I do this, not that, I obtain this, such is the state.

आज, आप उस पुराने भ्रम को देखते हैं। मैं यह करता हूँ, यह नहीं, मैं यह प्राप्त करता हूँ, ऐसी ही स्थिति है।

6.109.39

अन्तर्हससि तां कच्चिद्दशापेलवतां धियः। तास्तुच्छतृष्णाकलनास्ताः संकल्पकुकल्पनाः ॥ ३९ ॥

antarhasasi tāṃ kacciddashāpelavatāṃ dhiyaḥ | tāstucchatṛṣṇākalanāstāḥ saṃkalpakukalpanāḥ || 39 ||

Do you laugh within at that insignificant state of the mind? Those are trivial desires, those are mere resolutions and imaginations.

क्या आप उस अल्प मन की स्थिति पर अंदर ही अंदर हँसते हैं? वे तुच्छ इच्छाएँ हैं, वे केवल संकल्प और कल्पनाएँ हैं।

6.109.40

त्वयि नाद्यावलोक्यन्ते देव व्योम्नीव पर्वताः। किं त्वमद्याङ्ग संपन्नः किंनिष्ठोऽसि किमीहसे ॥ ४० ॥

tvayi nādyāvalokyante deva vyomnīva parvatāḥ | kiṃ tvamadyāṅga saṃpannaḥ kiṃniṣṭho'si kimīhasē || 40 ||

In you, O Lord, mountains are not seen in the sky today. What have you accomplished today? What is your goal? What do you desire?

आज, हे देव, आपमें आकाश में पर्वत नहीं दिखते। आज आपने क्या प्राप्त किया? आपका लक्ष्य क्या है? आप क्या चाहते हैं?

6.109.41

कथं पश्यसि पाश्चात्यं देहचेष्टाक्रमं विभो । शिखिध्वज उवाच । सुमनःपूर्णनीलाब्जमालासारविलोचने ॥ ४१ ॥

kathaṃ paśyasi pāścātyaṃ dehacēṣṭākramaṃ vibho | śikhidhvaja uvāca | sumanaḥpūrṇanīlābjamālāsāravilocane || 41 ||

How do you see the sequence of bodily actions, O Lord? Shikhidhvaja said: O lotus-eyed one, full of joy and blue lotuses.

हे प्रभो, आप शरीर की क्रियाओं के क्रम को कैसे देखते हैं? शिखिध्वज ने कहा: हे कमलनयन, आप आनंद और नीले कमलों से भरे हुए हैं।

6.109.42

त्वमेव यस्य यस्यान्तस्तत्तस्याहमुपास्थितः । निरीहोऽस्मि निरंशोऽस्मि नभःस्वच्छोऽस्मि निस्पृहः ॥ ४२ ॥

tvameva yasya yasyāntastattasyāhamupāsthitaḥ | nirīho'smi niraṃśo'smi nabhaḥsvacco'smi nispṛhaḥ || 42 ||

You are the end of all things, and I am present in all of them. I am without desire, without hope, pure as the sky, and without craving.

आप ही सब की अंतिम सीमा हैं, और मैं सबमें उपस्थित हूँ। मैं इच्छारहित, आशारहित, आकाश की तरह निर्मल और लालसारहित हूँ।

6.109.43

शान्तोऽहमर्थरूपोऽस्मि चिरायाहमहं स्थितः । तां दशामुपयातोऽस्मि यतश्चित्तैकवर्त्मनि ॥ ४३ ॥

śānto'hamartharūpo'smi cirāyāhamahaṃ sthitaḥ | tāṃ daśāmupayāto'smi yataścittaikevartmani || 43 ||

I am peaceful and in the form of the ultimate reality. I have been established in this state for a long time. I have reached that state where the mind follows a single path.

मैं शांत और परम सत्य के रूप में हूँ। मैं इस अवस्था में लंबे समय से स्थापित हूँ। मैं उस अवस्था तक पहुँच गया हूँ जहाँ मन एक ही मार्ग पर चलता है।

6.109.44

प्रतिषेधन्ति सहसा न यां हरिहरादयः । नकिंचिन्मात्रचिन्मात्रनिष्ठोऽस्मि स्वस्थ आस्थितः ॥ ४४ ॥

pratiṣedhanti sahasā na yāṃ hariharādayaḥ | nakiṃcinmātracinmātraniṣṭho'smi svastha āsthitaḥ || 44 ||

Suddenly, they do not prohibit that which Hari, Hara, and others do. I am established in the state of pure consciousness, free from all desires.

अचानक, वे उसे नहीं रोकते जो हरि, हर और अन्य करते हैं। मैं सभी इच्छाओं से मुक्त शुद्ध चेतना की अवस्था में स्थापित हूँ।

6.109.45

भ्रमेणाहं विमुक्तोऽस्मि संसारेणालिलोचने । न तुष्टोस्मि न खिन्नोऽस्मि नायमस्मि न चेतरत् ॥ ४५ ॥

bhraameṇāhaṃ vimukto'smi saṃsāreṇālilocane | na tuṣṭo'smi na khinno'smi nāyamasmī na cetarat || 45 ||

I am freed from the illusion of the world, O lotus-eyed one. I am neither satisfied nor dissatisfied. I am neither this nor that.

हे कमलनयन, मैं संसार के भ्रम से मुक्त हूँ। मैं न तृप्त हूँ न असंतुष्ट हूँ। मैं न यह हूँ न वह हूँ।

6.109.46

न स्थूलोऽस्मि न सूक्ष्मोऽस्मि सत्यमस्मि च सुन्दरि । तेजोबिम्बात्प्रयातेन भित्तावपतितेन च ॥ ४६ ॥

na sthūlo'smi na sūkṣmo'smi satyamasmi ca sundari | tejobimbātprayātena bhittāvapatitena ca || 46 ||

I am neither gross nor subtle, I am the truth, O beautiful one | By the reflection of light falling on the wall

मैं न तो स्थूल हूँ न ही सूक्ष्म, मैं सत्य हूँ, हे सुन्दरी | प्रकाश की छाया से दीवार पर गिरने से

6.109.47

क्षयातिशयमुक्तेन प्रकाशेनास्मि वै समः । शान्तोस्मि साम्यं नेतास्मि स्वस्थोस्मि विगताशयः ॥ ४७ ॥

kṣayātiśayamukthena prakāśenāsmi vai samaḥ | śāntosmi sāmyaṃ netāsmi svasthosmi vigatāśayaḥ || 47 ||

I am equal to the light that is free from decay and excess | I am peaceful, balanced, not a leader, healthy, and free from desires

मैं उस प्रकाश के समान हूँ जो क्षय और अतिशय से मुक्त है | मैं शान्त हूँ, संतुलित हूँ, नेता नहीं हूँ, स्वस्थ हूँ और इच्छाओं से मुक्त हूँ

6.109.48

परिनिर्वाण एवास्मि सदृशोऽस्मि पतिव्रते । यत्तदस्मि तदेवास्मि वक्तुं शक्रोमि नेतरत् ॥ ४८ ॥

parinirvāṇa evāsmi sadṛśo'smi pativrate | yattadasmi tadevāsmi vaktuṃ śakromi netarat || 48 ||

I am indeed in the state of complete liberation, I am similar, O faithful one | I am that, I am indeed that, I am able to speak, nothing else

मैं वास्तव में पूर्ण मुक्ति की अवस्था में हूँ, मैं समान हूँ, हे पतिव्रता | मैं वह हूँ, मैं वास्तव में वह हूँ, मैं कहने में सक्षम हूँ, कुछ और नहीं

6.109.49

तरङ्गतरलापाङ्गे गुरुस्त्वं मे नमोऽस्तु ते । प्रसादेन विशालाक्ष्यास्तीर्णोऽस्मि भवसागरात् ॥ ४९ ॥

taraṅgataralāpāṅge gurustvaṃ me namo'stu te | prasādena viśālākṣyāstīrṇo'smi bhavasāgarāt || 49 ||

O one with wavy, delicate eyes, you are my guru, I bow to you | By your grace, O large-eyed one, I have crossed the ocean of existence

हे लहराती, कोमल आँखों वाली, तुम मेरे गुरु हो, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ | तुम्हारी कृपा से, हे विशाल आँखों वाली, मैंने अस्तित्व के सागर को पार कर लिया है

6.109.50

पुनर्मलं न गृह्णामि शतध्मातसुवर्णवत् । शान्तः स्वस्थो मृदुर्यत्तो वीतरागो निरंशधीः ॥ ५० ॥

punarmalaṃ na gṛhṇāmi śatadhmātasuvarṇavat | śāntaḥ svastho mṛduryatto vītarāgo niraṃśadhīḥ || 50 ||

I do not accept impurity again, like gold purified a hundred times | I am peaceful, healthy, gentle, self-controlled, free from desires, and without expectations

मैं फिर से अशुद्धि नहीं ग्रहण करता, जैसे सौ बार शुद्ध किया गया सोना | मैं शान्त हूँ, स्वस्थ हूँ, कोमल हूँ, संयमी हूँ, इच्छाओं से मुक्त हूँ, और अपेक्षाओं से रहित हूँ

6.109.51

सर्वातीतः सर्वगश्च खमिवायमहं स्थितः । चूडालोवाच । एवं स्थिते महासत्त्व प्राणेश हृदयप्रिय ॥ ५१ ॥

sarvātītaḥ sarvagaśca khamivāyamahaṃ sthitaḥ | cūḍālovāca | evaṃ sthite mahāsattva prāṇeśa hṛdayapriya || 51 ||

I am beyond everything and omnipresent like the sky | Chudala said | Thus situated, O great being, lord of life, beloved of the heart || 51 ||

मैं सबसे परे और सर्वव्यापी हूँ जैसे आकाश | चूडाला ने कहा | ऐसे स्थिति में, हे महान सत्त्व, प्राणों के स्वामी, हृदय के प्रिय || ५१ ||

6.109.52

किमिदानीं प्रभो ब्रूहि रोचते ते महामते । शिखिध्वज उवाच । प्रतिषेधं न जानामि न जानाम्यभिवाञ्छितम् ॥ ५२ ॥

kimidānīṃ prabho brūhi rocate te mahāmate | śikhidhvaja uvāca | pratiṣedhaṃ na jānāmi na jānāmyabhivāñchitam || 52 ||

What now, O Lord, tell me what pleases you, O great-minded one | Shikhidhvaja said | I do not know any prohibition, nor do I know what is desired || 52 ||

अब क्या, हे प्रभु, बताओ कि तुम्हें क्या पसंद है, हे महामनस्वी | शिखिध्वज ने कहा | मुझे कोई प्रतिबंध नहीं पता है, न ही मुझे पता है कि क्या चाहिए || ५२ ||

6.109.53

यदाचरसि तन्वि त्वं कदाचिद्वेद्मि तत्तथा । यद्यन्मतं ते सकलं तथास्त्वविकलं प्रिये ॥ ५३ ॥

yadācarasi tanvi tvaṃ kadācidvedmi tattathā | yadyanmataṃ te sakalaṃ tathāstvavikalaṃ priye || 53 ||

Whatever you do, O slender one, I sometimes know it thus | Whatever you think, O beloved, let it be so, unchanged || 53 ||

जो कुछ भी तुम करती हो, हे कोमलांगी, मैं कभी-कभी उसे ऐसे ही जानता हूँ | जो कुछ भी तुम सोचती हो, हे प्रिये, वह ऐसे ही रहे, अपरिवर्तित || ५३ ||

6.109.54

न किंचिदनुसंधातुं जानाम्यम्बरसुन्दरः । यदेव किंचिज्जानासि तदेव कुरु सुन्दरि ॥ ५४ ॥

na kiṃcidanusaṃdhātuṃ jānāmyambarasundaraḥ | yadeva kiṃcijjānāsi tadeva kuru sundari || 54 ||

I do not know anything to contemplate, O beautiful one | Whatever you know, do that, O beautiful one || 54 ||

मैं कुछ भी सोचने के लिए नहीं जानता, हे सुंदरी | जो कुछ भी तुम जानती हो, वही करो, हे सुंदरी || ५४ ||

6.109.55

तदेव धारयिष्यामि प्रतिबिम्बं यथा मणिः । चेतसा गलितेष्टेन यथाप्राप्तमनिन्दितम् ॥ ५५ ॥

tadeva dhārayiṣyāmi pratibimbaṃ yathā maṇiḥ | cetasā galiteṣṭena yathāprāptamaninditam || 55 ||

I will hold that very reflection like a jewel | With a mind melted with desire, as it is obtained, blameless || 55 ||

मैं उसी प्रतिबिंब को मणि की तरह धारण करूँगा | इच्छा से पिघले मन से, जैसे प्राप्त हो, निर्दोष || ५५ ||

6.109.56

न स्तौमि न च निन्दामि यदिच्छसि तदाचर । चूडालोवाच । यद्येवं तन्महाबाहो समाकर्णय मन्मतम् ॥ ५६ ॥

na stau mi na ca nindāmi yadicchasi tadācara | cūḍālovāca | yadyevaṃ tanmahābāho samākarṇaya manmatam || 56 ||

I neither praise nor blame; do as you wish. Chudala said: If this is so, then listen to my opinion, O mighty-armed one.

मैं न तो स्तुति करता हूँ न ही निंदा करता हूँ; जो तुम चाहो वह करो | चूडाला ने कहा: यदि ऐसा है, तो मेरी बात सुनो, हे महाबाहो।

6.109.57

आकर्ण्य जीवन्मुक्तात्मस्तदेवाहर्तुमर्हसि । सर्वत्रैक्यावबोधेन मौर्ख्यक्षयभुवान्विताः ॥ ५७ ॥

ākarṇya jīvanmuktātma tadevāhartumarhasi | sarvatraikyāvabodhena maurkhyakṣayabhuvānvitāḥ || 57 ||

Having listened, O liberated soul, you should indeed bring that about. Endowed with the realization of oneness everywhere, free from foolishness.

सुनकर, हे जीवन्मुक्त आत्मा, तुम्हें उसे लाना चाहिए। सर्वत्र एकता के बोध से युक्त, मूर्खता से मुक्त।

6.109.58

निरिच्छास्तावदाकाशविशदाः संस्थिता वयम् । यादृगेषणमस्माकं तादृशं तदनेषणम् ॥ ५८ ॥

niricchāstāvadākāśaviśadāḥ saṃsthitā vayam | yādṛgeṣaṇamasmākaṃ tādṛśaṃ tadaneṣaṇam || 58 ||

We are established in the pure sky of desirelessness. Whatever is our desire, that is our non-desire.

हम इच्छारहित शुद्ध आकाश में स्थित हैं। जो भी हमारी इच्छा है, वही हमारी अनिच्छा है।

6.109.59

यत्प्राणानैषणे कोऽत्र चिन्मात्रोऽभ्यसते हि कः तस्मादाद्यन्तमध्येषु ये वयं पुरुषोत्तम ॥ ५९ ॥

yatprāṇānaiṣaṇe ko'tra cinmātro'bhyasate hi kaḥtasmādādyantamadhyeṣu ye vayaṃ puruṣottama || 59 ||

Who here desires the vital breaths alone? Who indeed practices pure consciousness? Therefore, we are the supreme beings in the beginning, middle, and end.

यहाँ कौन केवल प्राणों की इच्छा करता है? कौन वास्तव में शुद्ध चेतना का अभ्यास करता है? इसलिए, हम आदि, मध्य और अंत में परम पुरुष हैं।

6.109.60

शेषमेकं परित्यज्य त एवेमे स्थिता वयम् । राज्येन सांप्रतेनेमं कालं नीत्वा क्रमेण वै ॥ ६० ॥

śeṣamekaṃ parityajya ta evaime sthitā vayam | rājyena sāṃpratenemaṃ kālaṃ nītvā krameṇa vai || 60 ||

Leaving aside the one remaining, we are indeed established here. Having led this present kingdom through time in due course.

एक शेष को छोड़कर, हम यहाँ स्थापित हैं। समय के साथ इस वर्तमान राज्य को क्रमशः आगे बढ़ाया।

6.109.61

विदेहतां प्रयास्यामः प्रभो कालेन केनचित् । शिखिध्वज उवाच । वयमाद्यन्तमध्येषु कीदृशास्तरले वद ॥ ६१ ॥

videhatāṃ prayāsyāmaḥ prabho kālena kenacit | śikhidhvaja uvāca | vayamādyantamadhyeṣu kīdṛśāstarale vada || 61 ||

We will go to the land of the Videhas at some point in time, O Lord. Shikhidhvaja said: Tell us, how are we in the beginning, middle, and end?

हम किसी समय विदेह देश जाएँगे, हे प्रभो | शिखिध्वज ने कहा: बताओ, हम आदि, मध्य और अंत में कैसे हैं?

6.109.62

शेषमेकं परित्यज्य तिष्ठामः कथमेव वा । चूडालोवाच । वयमाद्यन्तमध्येषु राजानो राजसत्तम ॥ ६२ ॥

śeṣamekaṃ parityajya tiṣṭhāmaḥ kathameva vā | cūḍālovāca | vayamādyantamadhyeṣu rājāno rājasattama || 62 ||

Leaving aside one remainder, how can we stay? Chudala said: We are kings in the beginning, middle, and end, O best of kings.

एक शेष को छोड़कर, हम कैसे रह सकते हैं? चूडाला ने कहा: हम आदि, मध्य और अंत में राजा हैं, हे राजाओं में श्रेष्ठ |

6.109.63

मोहमेकं परित्यज्य भवामः पुनरेव ते। स्व एव नगरे राजा भव त्वं स्वासने स्थितः ॥ ६३ ॥

mohamekaṃ parityajya bhavāmaḥ punareva te | sva eva nagare rājā bhava tvaṃ svāsane sthitaḥ || 63 ||

Leaving aside one delusion, we become yours again. You should be the king in your own city, seated on your own throne.

एक मोह को छोड़कर, हम फिर से आपके हो जाते हैं | आप अपने नगर में राजा बनें, अपने सिंहासन पर बैठे हुए |

6.109.64

ललामो ननु कान्तानां महिषी ते भवाम्यहम्। सनृपा मत्तवास्तव्या नृत्यन्नवनवाङ्गना ॥ ६४ ॥

lalāmo nanu kāntānāṃ mahiṣī te bhavāmyaham | sanṛpā mattavāstavyā nṛtyannavanavāṅganā || 64 ||

We will indeed enjoy the beloved ones. I will be your queen. You should live with me, dancing with new young women.

हम वास्तव में प्रियजनों का आनंद लेंगे | मैं आपकी महारानी बनूँगी | आपको मेरे साथ रहना चाहिए, नए युवा स्त्रियों के साथ नृत्य करते हुए |

6.109.65

सपताका ध्वनत्तूर्या पुष्पप्रकरिणी पुरी। लसद्वल्ल्या समञ्जर्या रणत्पुष्पालिमालया। मधुमासलतालक्ष्म्या चिराद्भवतु सा समा ॥ ६५ ॥

sapatākā dhvanattūryā puṣpaprakariṇī purī | lasadvallyā saṃjarayā raṇatpuṣpālimālayā | madhumāsalatālakṣmyā cirādbhavatu sā samā || 65 ||

May that city, adorned with banners, resounding with musical instruments, filled with flower garlands, shining with creepers and sprouts, adorned with garlands of blooming flowers, and beautiful with the splendor of honey-month vines, remain forever.

वह नगर, जो ध्वजाओं से सजा है, वाद्यों से गूँजता है, फूलों की मालाओं से भरा है, लताओं और अंकुरों से चमकता है, खिले हुए फूलों की मालाओं से सजा है, और मधु मास की लताओं की शोभा से सुंदर है, सदा बना रहे |

6.109.66

श्रीवसिष्ठ उवाचैति चूडालया प्रोक्तो विहस्य स शिखिध्वजःप्रोवाच मधुरं वाक्यमक्षुब्धं विगतज्वरः ॥ ६६ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaiti cūḍālayā prokto vihasya sa śikhidhvajaḥprovāca madhuraṃ vākyamakṣubdhaṃ vigatajvaraḥ || 66 ||

Sri Vasistha said: Thus addressed by Cudala, Rama, the banner of the peacock, laughed and spoke sweet words, free from agitation and fever.

श्री वसिष्ठ ने कहा: चूडाला द्वारा ऐसे कहे जाने पर, राम, मोर का ध्वज, हँसे और मधुर वचन बोले, जो उत्तेजना और ज्वर से मुक्त थे।

6.109.67

एवं चेत्तद्विशालाक्षि स्वायत्ता नस्त्रिविष्टपे। सिद्धभोगश्रियस्तासु निवसामि न किं प्रिये ॥ ६७ ॥

evaṃ cet tadv iśālākṣi svāyattā nastriviṣṭape | siddhabhog aśriyastāsu nivasāmi na kiṃ priye || 67 ||

If it is so, O large-eyed one, I am independent in the three worlds. I dwell in those perfect enjoyments and prosperities, O beloved, what else?

यदि ऐसा है, हे विशालाक्षी, मैं तीनों लोकों में स्वतंत्र हूँ। मैं उन सिद्ध भोगों और समृद्धियों में निवास करता हूँ, हे प्रिये, और क्या?

6.109.68

चूडालोवाच । न राजन्मम भोगेषु वाञ्छा नापि विभूतिषु । स्वभावस्य वशादेव यथाप्राप्तेन मे स्थितिः ॥ ६८ ॥

cūḍālovāca | na rājan mama bhogeṣu vāñchā nāpi vibhūtiṣu | svabhāvasya vaśādeva yathāprāptena me sthitiḥ || 68 ||

Chudala said: O King, I have no desire for enjoyments or prosperities. By the influence of my nature, I remain as I have obtained.

चूडाला ने कहा: हे राजन्, मुझे भोगों या समृद्धियों की कोई इच्छा नहीं है। अपने स्वभाव के प्रभाव से, मैं जैसे प्राप्त हुआ हूँ, वैसे ही रहता हूँ।

6.109.69

न सुखाय मम स्वर्गो न राज्यं नापि च क्रिया । यथास्थितमविक्षुब्धं तिष्ठामि स्वस्थचेष्टिता ॥ ६९ ॥

na sukhāya mama svargo na rājyaṃ nāpi ca kriyā | yathāsthitamavikṣubdhaṃ tiṣṭhāmi svasthaceṣṭitā || 69 ||

Neither heaven for my happiness, nor kingdom, nor any action. I remain as I am, undisturbed, with natural behavior.

न तो स्वर्ग मेरे सुख के लिए, न राज्य, न ही कोई क्रिया। मैं जैसा हूँ, अविचलित, स्वाभाविक व्यवहार के साथ रहता हूँ।

6.109.70

इदं सुखमिदं नेति मिथुने क्षयमागते । सममेव पदे शान्ते तिष्ठामीह यथासुखम् ॥ ७० ॥

idaṃ sukhamidaṃ neti mithune kṣayamāgate | samameva pade śānte tiṣṭhāmīha yathāsukham || 70 ||

This is happiness, this is not—such duality has vanished. I remain in the peaceful state, equally balanced, as I am comfortable.

यह सुख है, यह नहीं—ऐसी द्वैतता समाप्त हो गई है। मैं शांत अवस्था में, समान रूप से संतुलित, जैसे मुझे सुख हो, रहता हूँ।

6.109.71

शिखिध्वज उवाच । युक्तमुक्तं विशालाक्षि त्वयैतत्समया धिया । को वार्थः किल राज्यस्य ग्रहे त्यागेऽपि वा भवेत् ॥ ७१ ॥

śikhidhvaja uvāca | yuktamuktaṃ viśālākṣi tvayaitatsamayā dhiyā | ko vārthaḥ kila rājyasya grahe tyāge'pi vā bhavet || 71 ||

Shikhidhvaja said: O wide-eyed one, you have rightly spoken with a mindful of the occasion. What is the use of the kingdom, whether it is accepted or renounced?

शिखिध्वज ने कहा: हे विशालाक्षी, तुमने समय के अनुकूल बुद्धि से ठीक कहा है। राज्य का क्या लाभ है, चाहे उसे ग्रहण किया जाए या त्याग दिया जाए?

6.109.72

सुखदुःखदशाचिन्तां त्यक्त्वा विगतमत्सरम् । यथासंस्थानमेवेमौ तिष्ठावः स्वस्थतां गतौ ॥ ७२ ॥

sukhaduḥkhadaśācintāṃ tyaktvā vigatamatsaram | yathāsaṃsthānamevemauttiṣṭhāvaḥ svasthatāṃ gatau || 72 ||

Abandoning the thoughts of happiness and sorrow, free from envy, they remained in their natural state, having attained tranquility.

सुख-दुःख की दशाओं की चिंता को त्यागकर, ईर्ष्या से मुक्त होकर, वे दोनों अपने स्वाभाविक अवस्था में रहे, शांति प्राप्त करके।

6.109.73

इति तत्र कथालापकथनेन तयोर्द्वयोः । कान्तयोश्चिरदंपत्योर्वासरस्तनुतां ययौ ॥ ७३ ॥

iti tatra kathālāpakathanena tayordvayoḥ | kāntayościradaṃpatyorvāsarastanutāṃ yayau || 73 ||

Thus, with the conversation between the two beloveds, who had been married for a long time, the day passed pleasantly.

इस प्रकार, उन दोनों प्रेमी दंपतियों की बातचीत से, जो लंबे समय से विवाहित थे, दिन सुखदायक रूप से बीता।

6.109.74

अथोत्थाय दिनाचारं यथाप्राप्तमनिन्दितौ । सोत्कण्ठावप्यनुत्कण्ठौ चक्रतुः कार्यकोविदौ ॥ ७४ ॥

athottāya dinācāraṃ yathāprāptamaninditau | sotkaṇṭhāvapyanutkaṇṭhau cakratuḥ kāryakovidau || 74 ||

Then, rising, they performed their daily duties as they came, without any blame, with eagerness yet without impatience, being skilled in their work.

फिर, उठकर, वे अपने दैनिक कार्यों को जैसे आए, निंदा रहित, उत्सुकता के साथ लेकिन बेसब्री के बिना, अपने कार्य में कुशल होकर किया।

6.109.75

स्वर्गसिद्धिमनादृत्य तस्थतुः पूर्णचेतसौ । एकस्मिन्नेव शयने तैस्तैः प्रणयचेष्टितैः । सा व्यतीयाय रजनी तयोर्जीवद्विमुक्तयोः ॥ ७५ ॥

svargasiddhimanādṛtya tasthatuḥ pūrṇacetasau | ekasminneva śayane taitaiḥ praṇayaceṣṭitaiḥ | sā vyatīyāya rajanī tayorjīvadvimuktayoḥ || 75 ||

Disregarding the attainment of heaven, they remained with full consciousness in one bed, with various expressions of love. Thus, the night passed for them, who were liberated while living.

स्वर्ग की सिद्धि को अनदेखा करके, वे पूर्ण चेतना के साथ एक ही शयन पर रहे, विभिन्न प्रेम भरी चेष्टाओं के साथ। इस प्रकार, जीवित मुक्त उन दोनों के लिए रात बीती।

6.109.76

तद्भोगमोक्षसुखमुत्तमयोः स्वय समाशंसतोः प्रणयवाक्यविलासगर्भम् । उत्कण्ठतां प्रणयिनोर्धियमानयन्ती दीर्घा मुहूर्तवदसौ रजनी जगाम ॥ ७६ ॥

tadbhogamokṣasukhamuttamayoḥ svaya samāśaṃsatoḥ praṇayavākyavilāsagarbham | utkaṇṭhāṃ praṇayinordhiyamānayantī dīrghā muhūrtavadasau rajanī jagāma || 76 ||

That night, which brought the highest pleasure of enjoyment and liberation, and was filled with loving words and charm, seemed to last for a long time, increasing the eagerness of the lovers.

वह रात, जो भोग और मोक्ष के उत्तम सुख को स्वयं प्रस्तुत करती है, प्रेम भरे वचनों और विलास से भरी हुई थी, प्रेमियों की उत्कंठा बढ़ाती हुई लंबे समय तक चली गई।

Chapter 110

6.110.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ततः समुदिते सूर्ये वितमस्यम्बरे स्थिते । समुद्गकादिव जगन्मणौ तस्मिन्विनिर्गते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tataḥ samudite sūrye vitamasyambare sthite | samudgakādiva jagannaṇau tasminvinirgate || 1 ||

Shri Vasishtha said: Then, when the sun had risen and the sky was clear of darkness, it was as if the world had emerged from a conch shell.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, जब सूर्य उदित हुआ और आकाश अंधेरे से मुक्त हो गया, तब ऐसा लगा जैसे संसार एक शंख से निकला हो।

6.110.2

विकसत्यरुणोपान्ते चक्षुषीवाम्बुजाकरे । आचारेष्विव लोकेषु प्रसृतेष्वर्करश्मिषु ॥ २ ॥

vikasatyaruṇopānte cakṣuṣīvāmbujākare | ācāreṣviv lokeṣu prasṛteṣvarkaraśmiṣu || 2 ||

As the reddish hue spreads like the eyes of a lotus, the rays of the sun extend like the customs of the people.

जैसे लालिमा कमल की पंखुड़ियों की तरह फैलती है, वैसे ही सूर्य की किरणें लोगों की परंपराओं की तरह फैलती हैं।

6.110.3

दंपती तौ समुत्थाय कृतसंध्याक्रमौ स्थितौ । पत्रासने मृदुस्निग्धे कान्तौ काञ्चनकन्दरे ॥ ३ ॥

dampatī tau samutthāya kṛtasaṃdhyākramau sthitau | patrāsane mṛdusnigdhe kāntau kāñcanakandare || 3 ||

The couple, having risen and performed their morning rituals, sat on a soft and smooth leaf seat in a golden cave.

वह दंपती, उठकर और अपने संध्या क्रम करके, एक सोने की गुफा में एक नरम और चिकने पत्ते की सीट पर बैठे।

6.110.4

अथोत्थायात्र चूडाला रत्नकुम्भं पुरःस्थितम् । कान्ता संकल्पयामास पूर्णं सप्ताब्धिवारिभिः ॥ ४ ॥

athotthāyātra cūḍālā ratnakumbhaṃ puraḥsthitam | kāntā saṃkalpayāmāsa pūrṇaṃ saptābdhivāribhiḥ || 4 ||

Then, Chudala, having risen, placed a jewel-filled pot in front and resolved to fill it with the waters of the seven oceans.

फिर, चूडाला, उठकर, एक रत्नों से भरा घड़ा सामने रखा और संकल्प लिया कि उसे सात समुद्रों के जल से भरे।

6.110.5

तेन मङ्गलकुम्भेन तं पूर्वाभिमुखं स्थितम् । भार्या भर्तारमेकान्ते स्वराज्येऽभिषिषेच सा ॥ ५ ॥

tena maṅgalakumbhena taṃ pūrvābhimukhaṃ sthitam | bhāryā bhartāramekānte svarājye'bhiṣiṣeca sā || 5 ||

With that auspicious pot, she, the wife, anointed her husband, who was standing facing east, in solitude, in their own kingdom.

उस शुभ घड़े से, वह, पत्नी, अपने पति को, जो पूर्व दिशा की ओर खड़ा था, एकांत में, अपने राज्य में, अभिषेक करती है।

6.110.6

संकल्पोपगते हैमे स्वभिषिक्तं स्वविष्टरे । स्थितं प्रोवाच तन्वी सा चूडाला देवरूपिणी ॥ ६ ॥

saṃkalpopagate haime svabhiṣiktaṃ svaviṣṭare | sthitaṃ provāca tanvī sā cūḍālā devarūpiṇī || 6 ||

When the golden one (haime) was endowed with determination (saṃkalpopagate), self-anointed (svabhiṣiktaṃ) in his own abode (svaviṣṭare), the slender (tanvī) Chudala, who had the form of a goddess (devarūpiṇī), spoke to him while he was standing there.

जब स्वर्णिम व्यक्ति (हैमे) संकल्प से युक्त हुआ (संकल्पोपगते), अपने आप को अभिषिक्त किया (स्वभिषिक्तं) अपने निवास में (स्वविष्टरे), सुडौल चूडाला, जो देवी के रूप में थी (देवरूपिणी), उससे बोली जब वह वहाँ खड़ा था।

6.110.7

केवल मौनमुत्सृज्य तेजः शान्तमिदं प्रभो । अष्टानां लोकपालानां तेजस्त्वं भर्तुमर्हसि ॥ ७ ॥

kevala maunamutsṛjya tejaḥ śāntamidaṃ prabho | aṣṭānāṃ lokapālānāṃ tejastvaṃ bhartumarhasi || 7 ||

O Lord, leaving aside mere silence, you should bear the peaceful radiance of the eight guardians of the world.

हे प्रभो, केवल मौन को छोड़कर, आपको आठ लोकपालों की शांत तेजस्विता को धारण करना चाहिए।

6.110.8

चूडालयेति संप्रोक्तो वने राजा शिखिध्वजः । वदन्नेवं करोमीति महाराजत्वमाययौ ॥ ८ ॥

cūḍālayeti saṃprokto vane rājā śikhidhvajaḥ | vadannevaṃ karomīti mahārājatvamāyayau || 8 ||

Thus addressed as 'Chudala' in the forest, King Shikhidhvaja, saying 'I will do so,' attained the status of a great king.

वन में 'चूडाला' कहकर संबोधित किया गया, राजा शिखिध्वज ने कहा 'मैं ऐसा ही करूँगा,' और उसने महाराजा की उपाधि प्राप्त कर ली।

6.110.9

अथ प्रतीहारपदे तिष्ठन्तीमाह मानिनीम् । अद्य देवीपदे राज्ञीं त्वां करोम्यभिषेकिनीम् ॥ ९ ॥

atha pratīhārapade tiṣṭhantīmāha māninīm | adya devīpade rājñīṃ tvāṃ karomyaabhiṣekinīm || 9 ||

Then, addressing the proud one standing in the position of a gatekeeper, he said, 'Today, I will make you, the queen, the goddess through anointment.'

फिर, दरबान के पद पर खड़ी अभिमानी को संबोधित करके, उसने कहा, 'आज, मैं तुम्हें, रानी, अभिषेक द्वारा देवी बनाऊँगा।'

6.110.10

इत्युक्त्वा सरसि स्नाप्य महादेवीपदे तथा । अभिषिक्तां नृपः कृत्वा स तामाह निजां प्रियाम् ॥ १० ॥

ityuktvā sarasi snāpya mahādevīpade tathā | abhiṣiktāṃ nṛpaḥ kṛtvā sa tāmāha nijāṃ priyām || 10 ||

Having said this, the king bathed her in the lake and made her the great goddess through anointment. Then he addressed his beloved.

ऐसा कहकर, राजा ने उसे सरोवर में स्नान कराया और अभिषेक द्वारा उसे महादेवी बनाया। फिर उसने अपनी प्रिय से कहा।

6.110.11

प्रिये कमलपत्राक्षि क्षणात्संकल्पसंभवम् । महाविभवमुद्दामं सैन्यमाहर्तुमर्हसि ॥ ११ ॥

priye kamalapatrākṣi kṣaṇātsaṃkalpasambhavam | mahāvibhavamuddāmaṃ sainyamāhartumarhasi || 11 ||

O beloved lotus-eyed one, you are capable of bringing forth a magnificent army in an instant through your will.

प्रिये कमलपत्राक्षि, तुम एक पल में अपनी इच्छा से एक महान सेना बुला सकती हो।

6.110.12

इति कान्तवचः श्रुत्वा चूडाला वरवर्णिनी । सैन्यं संकल्पयामास प्रावृड्घनमिवोद्भटम् ॥ १२ ॥

iti kāntavacaḥ śrutvā cūḍālā varavarṇinī | sainyaṃ saṃkalpayāmāsa prāvṛḍghanamivodbhaṭam || 12 ||

Hearing these words of her beloved, the beautiful Chudala resolved to create an army as magnificent as the dense clouds of the rainy season.

अपने प्रियतम के इन शब्दों को सुनकर, सुंदर चूडाला ने वर्षा ऋतु के घने बादलों की तरह एक विशाल सेना को बुलाने का संकल्प किया।

6.110.13

सैन्यं ददृशतुस्तत्तौ वाजिवारणसंकुलम् । पताकापूरिताकाशं नीरन्ध्रीकृतकाननम् ॥ १३ ॥

sainyaṃ dadṛśatus tattau vājivāraṇasaṃkulam | patākāpūritākāśaṃ nīrandhrīkṛtakānanam || 13 ||

They both saw the army, which was filled with horses and elephants, the sky was filled with banners, and the forests were filled with water channels.

दोनों ने उस सेना को देखा जो घोड़ों और हाथियों से भरी थी, आकाश झंडियों से भरा था, और जंगल पानी की नहरों से भरा था।

6.110.14

तूर्यारवध्वनच्छैलगुहागहनकोटरम् । मौलिरत्नमहोद्द्योतविचूर्णिततमःपटम् ॥ १४ ॥

tūryāravadhvanacchailaguhāgahanakoṭaram | mauliratnamahoddyotavicūrṇitatamaḥpaṭam || 14 ||

The sound of the musical instruments echoed through the caves and dense forests, and the brilliance of the jewels on the crowns dispersed the darkness.

वाद्यों की ध्वनि गुफाओं और घने जंगलों में गूँज रही थी, और मुकुटों पर रत्नों की चमक अंधेरे को दूर कर रही थी।

6.110.15

तत्र गन्धद्विपवरे कृतपार्थिवमण्डले । रक्षिते हृष्टसामन्तैरारूढौ नृपदंपती ॥ १५ ॥

tatra gandhadvipavare kṛtapārthivamaṇḍale | rakṣite hṛṣṭasāmantairārūḍhau nṛpadampatī || 15 ||

There, on the finest of fragrant elephants, in the circle of kings, protected by joyful attendants, the king and queen were seated.

वहाँ, सुगंधित हाथियों पर, राजाओं के मंडल में, हर्षित सेवकों द्वारा सुरक्षित, राजा और रानी बैठे थे।

6.110.16

ततः शिखिध्वजो राजा महिष्या सममिष्टया । पदातिरथसंबाधं कर्षन्नतिवृलो बलम् ॥ १६ ॥

tataḥ śikhidhvajo rājā mahiṣyā samamiṣṭayā | padātirathasaṃbādhaṃ karṣannativṛlo balam || 16 ||

Then King Shikhidhvaja, along with his beloved queen, led his mighty army consisting of infantry and chariots.

तब राजा शिखिध्वज, अपनी प्रिय रानी के साथ, अपनी विशाल सेना को पैदल और रथों के साथ आगे बढ़ाया।

6.110.17

चचालाचलचालिन्या सेनया स ततो वनात् । भिन्दन्निव रसाशैलं वात्ययेवाशु भौमया ॥ १७ ॥

cacālācalacālinyā senayā sa tato vanāt | bhindanniva rasāśailaṃ vātyayevāśu bhaumayā || 17 ||

With his army that moved like a mountain, he swiftly emerged from the forest, as if splitting the earth, like a strong wind.

अपनी पर्वत जैसी सेना के साथ, वह जंगल से तेजी से निकला, मानो पृथ्वी को चीरते हुए, जैसे तेज हवा।

6.110.18

तस्मान्महेन्द्रशैलेन्द्राच्चलितः स महीपतिः । पथि पश्यन्गिरीन्देशान्नदीर्ग्रामान्सजङ्गलान् ॥ १८ ॥

tasmānmahendraśailendrāccalitaḥ sa mahīpatiḥ | pathi paśyangirīndeśānnadīrgrāmānsajaṅgalān || 18 ||

Moving away from the great mountain Mahendra, the king observed various landscapes, rivers, villages, and forests along the path.

महेन्द्र पर्वत से दूर होते हुए, राजा ने मार्ग में विभिन्न भूदृश्य, नदियाँ, गाँव और जंगल देखे।

6.110.19

दर्शयन्स्वप्रियायास्तमात्मवृत्तान्तसंचयम् । प्रागल्पेनैव कालेन स्वां पुरीं स्वर्गशोभनाम् ॥ १९ ॥

darśayansvapriyāyāstamātmavṛttāntasaṃcayam | prāgalpenaiva kālena svāṃ purīṃ svargaśobhanām || 19 ||

Showing his beloved the collection of his life's stories, he reached his city, which was as beautiful as heaven, in a short time.

अपनी प्रिय को अपने जीवन की कहानियों का संग्रह दिखाते हुए, वह थोड़े समय में अपने स्वर्ग जैसे सुंदर शहर तक पहुँच गया।

6.110.20

तत्र ते तस्य सामन्तास्तदागमनमादृताः । विविदुर्जयशब्देन निर्जग्मुश्चोदिताशयाः ॥ २० ॥

tatra te tasya sāmantāstadāgamanamādṛtāḥ | vivividurjayaśabdena nirjagmuścoditāśayāḥ || 20 ||

There, his ministers, delighted by his arrival, welcomed him with shouts of victory and came out with joyful hearts.

वहाँ, उसके मंत्री, उसके आगमन से प्रसन्न होकर, विजय के नारों से उसका स्वागत करते हुए और हर्षित हृदय से बाहर निकले।

6.110.21

एकतां संप्रयातेन तारतूर्यनिनादिना । बलद्वयेन तेनासौ विवेश नगरं नृपः ॥ २१ ॥

ekatāṃ saṃprayātena tāratūryaninādinā | baladvayena tenāsau viveśa nagaraṃ nṛpaḥ || 21 ||

With a united force and the sound of auspicious instruments, the king entered the city with his two armies.

एकता के साथ और शुभ वाद्यों की ध्वनि के साथ, राजा ने अपनी दोनों सेनाओं के साथ नगर में प्रवेश किया।

6.110.22

लाजपुष्पाञ्जलिव्रातैरावृष्टः पौरयोषिताम् । वणिङ्मार्गमसौ पश्यन्परंपरमनुत्तमम् ॥ २२ ॥

lājapuṣpāñjalivrātairāvṛṣṭaḥ paurayoṣitām | vaṇiṅmārgamasau paśyanparaṃparamanuttamam || 22 ||

Showered with offerings of fried grains and flowers, the king saw the excellent marketplace filled with the city's women.

भुने हुए अनाज और फूलों की वर्षा से आच्छादित, राजा ने नगर की महिलाओं से भरे उत्तम बाजार को देखा।

6.110.23

पताकाध्वजसंबाधं मुक्ताजालमनोरमम् । नृत्यगेयपरस्त्रीकं स्वभूमावचलं स्थितम् ॥ २३ ॥

patākādhvajasaṃbādhaṃ muktājālamanoramam | nṛtyageyaparastrīkaṃ svabhūmāvacalaṃ sthitam || 23 ||

The city was adorned with flags and banners, decorated with pearl nets, filled with dancing and singing women, and firmly established on its own ground.

नगर झंडियों और ध्वजों से सजा हुआ था, मोती की जालियों से सजा हुआ, नृत्य और गायन करती महिलाओं से भरा हुआ, और अपनी भूमि पर दृढ़ता से स्थित था।

6.110.24

प्रविश्याथ गृहं तैस्तैः संयुतं नृपमङ्गलैः । सम्यक्संमानयामास प्रणतं प्रकृतिव्रजम् ॥ २४ ॥

praviśyātha gṛhaṃ taiḥtaiḥ saṃyutaṃ nṛpamaṅgalaiḥ | samyaksammānayāmāsa praṇataṃ prakṛtivrajam || 24 ||

After entering the palace adorned with various royal symbols, he properly honored the assembled subjects who had bowed down.

राजमहल में प्रवेश करने के बाद, जो विभिन्न राजकीय चिह्नों से सजा हुआ था, उसने झुके हुए एकत्रित प्रजाजनों का उचित सम्मान किया।

6.110.25

पुरोत्सवं भृशं कृत्वा दिनसप्तकमुत्तमम् । अकरोद्राजकार्याणि स्वानि स्वान्तःपुरे नृपः ॥ २५ ॥

purotsavaṃ bhṛśaṃ kṛtvā dinasaptakamuttamam | akarodrājakāryāṇi svāni svāntaḥpure nṛpaḥ || 25 ||

After greatly celebrating the city festival for seven excellent days, the king performed his royal duties in his inner palace.

सात उत्तम दिनों तक नगर उत्सव का बहुत आयोजन करने के बाद, राजा ने अपने अंतःपुर में अपने राजकीय कर्तव्यों का निर्वहन किया।

6.110.26

दशवर्षसहस्राणि राज्यं कृत्वा महीतले सहचूडालया राम विरतो देहधारणात् ॥ २६ ॥

daśavarṣasahasrāṇi rājyaṃ kṛtvā mahītale sahacūḍālayā rāma virato dehadhāraṇāt || 26 ||

After ruling the earth for ten thousand years, Rama, along with his wife, renounced his bodily existence.

दश हजार वर्षों तक पृथ्वी पर राज्य करने के बाद, राम, अपनी पत्नी के साथ, ने अपने शरीर का त्याग किया।

6.110.27

देहमुत्सृज्य निर्वाणमस्नेह इव दीपकः अपुनर्जन्मने राम जगामेति महामतिः ॥ २७ ॥

dehamutsṛjya nirvāṇamansneha iva dīpakaḥ apunarjanmane rāma jagāmeti mahāmatiḥ || 27 ||

Rama, the wise one, left his body and attained nirvana, like a lamp extinguished without attachment, never to be reborn.

राम, बुद्धिमान, ने अपने शरीर को छोड़ दिया और निर्वाण प्राप्त किया, जैसे एक दीपक जो आसक्ति के बिना बुझ जाता है, फिर कभी नहीं जन्म लेगा।

6.110.28

दशवर्षसहस्राणि समदृष्टितया तया राज्यं तयाऽऽरमय्यापि निर्वाणं पदमाप्तवान् ॥ २८ ॥

daśavarṣasahasrāṇi samadṛṣṭitayā tayā rājyaṃ tayā'āramayyāpi nirvāṇaṃ padamāptavān || 28 ||

With equanimity, Rama ruled for ten thousand years and even with such comforts, he attained the state of nirvana.

समदृष्टि से, राम ने दश हजार वर्षों तक राज्य किया और इस सुख के साथ भी, उन्होंने निर्वाण की अवस्था प्राप्त की।

6.110.29

विगतभयविषादो मानमात्सर्यमुक्तः प्रकृतसहजकर्मा भुक्तनीरागबुद्धिः इति समसमदृष्टिर्मृत्युमार्योऽथ जित्वा दशशिशिरसहस्राण्येकराज्यं चकार ॥ २९ ॥

vigatabhayaviṣādo mānamātsaryamuktaḥ prakṛtasahajakarmā bhukta-nīrāgabuddhiḥ iti samasamadṛṣṭirmṛtyumāryo'tha jitvā daśaśiśirasahasrāṇyekarājyaṃ cakāra || 29 ||

Free from fear and sorrow, devoid of pride and envy, performing natural duties, and having experienced detachment, Rama, with equanimity, conquered death and ruled for ten thousand years.

भय और विषाद से मुक्त, अहंकार और ईर्ष्या से रहित, प्राकृतिक कर्मों का निर्वाह करते हुए, और विरक्ति का अनुभव करने के बाद, राम, समदृष्टि से, मृत्यु पर विजय पाकर, दश हजार वर्षों तक राज्य किया।

6.110.30

भुक्त्वा भोगाननेकान्भुवि सकलमहीपालचूडामणित्वे स्थित्वा वै दीर्घकालं परममृतपदं प्राप्तवान्सत्त्वशेषः एवं रामागतं त्वं प्रकृतमनुसरन्कार्यजातं विशोकस्तिष्ठोत्तिष्ठ स्वयं वा प्रसभमनुभवन्भोगमोक्षादिलक्ष्मीः ॥ ३० ॥

bhuktvā bhogānanekān bhuvi sakalamahīpālacūḍāmaṇitve sthitvā vai dīrghakālaṃ paramamṛtapadaṃ prāptavān sattvaśeṣaḥ evaṃ rāmāgataṃ tvaṃ prakṛtamanusaran kāryajātaṃ viśokastiṣṭhottiṣṭha svayaṃ vā prasabhamanubhavan bhogamokṣādilakṣmīḥ || 30 ||

Having enjoyed various pleasures on earth and having attained the supreme state of immortality after a long time, Rama, the essence of virtue, achieved the ultimate goal. Thus, you, following your natural duties, perform your tasks without sorrow. Arise, experience the splendor of enjoyment and liberation.

पृथ्वी पर विभिन्न भोगों का आनंद लेने के बाद और लंबे समय के बाद अमृत की परम अवस्था प्राप्त करने के बाद, राम, पुण्य के सार, ने अंतिम लक्ष्य प्राप्त किया। इस प्रकार, आप अपने प्राकृतिक कर्तव्यों का अनुसरण करते हुए, अपने कार्यों को शोक के बिना करें। उठो, भोग और मुक्ति की शोभा का अनुभव करो।

Chapter 111

6.111.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतत्ते सर्वमाख्यातं शिखिध्वजकथानकम् । अनेन गच्छन्मार्गेण न कदाचन खिद्यसे ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etattē sarvamākhyātaṁ śikhidhvajakathānakam | anena gacchanmārgeṇa na kadācana khidyase || 1 ||

Śrīvasiṣṭha said: This entire story of Śikhidhvaja has been narrated to you. By following this path, you will never be distressed.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: यह सारा शिखिध्वज की कथा तुम्हें बताई गई है। इस मार्ग का अनुसरण करके तुम कभी दुखी नहीं होगे।

6.111.2

एतां दृष्टिमवष्टभ्य रागद्वेषविनाशिनीम् । नित्यं नीरागया बुद्ध्या तिष्ठावष्टब्धतत्पदः ॥ २ ॥

etāṁ dṛṣṭimavaṣṭabhya rāgadveṣavināśinīm | nityaṁ nīrāgayā buddhyā tiṣṭhāvaṣṭabdhatatpadaḥ || 2 ||

Having adopted this vision that destroys attachment and aversion, always remain steadfast in your dispassionate intellect, firmly established in the supreme state.

इस दृष्टि को अपना लें जो राग और द्वेष को नष्ट करती है, और नित्य अनासक्ति से बुद्धि में स्थिर रहें, परम अवस्था में दृढ़ता से स्थित रहें।

6.111.3

यथा शिखिध्वजो राज्यं कृतवानेवमीदृशम् । राम व्यवहरत्राज्ये भोगमोक्षमयो भव ॥ ३ ॥

yathā śikhidhvajo rājyaṁ kṛtavānevamīdṛśam | rāma vyavaharanrājye bhogamokṣamayo bhava || 3 ||

Just as Śikhidhvaja ruled his kingdom in this manner, O Rāma, engage in your kingdom and become the embodiment of enjoyment and liberation.

जैसे शिखिध्वज ने अपने राज्य का शासन इस प्रकार किया, हे राम, तुम भी अपने राज्य में व्यवहार करो और भोग और मोक्ष के समन्वय का रूप बनो।

6.111.4

शिखिध्वजक्रमेणैव यथा बोधमवाप्तवान् । कचो बृहस्पतेः पुत्रस्तथा बुध्यस्व राघव ॥ ४ ॥

śikhidhvajakramenaiava yathā bodhamavāptavān | kaco bṛhaspateḥ putras tathā budhyasva rāghava || 4 ||

Just as Kaca, the son of Bṛhaspati, attained enlightenment through the method of Śikhidhvaja, so should you, O Rāghava, become enlightened.

जैसे कच, बृहस्पति के पुत्र, शिखिध्वज के मार्ग से बोध प्राप्त किया, वैसे ही हे राघव, तुम भी बोध प्राप्त करो।

6.111.5

श्रीराम उवाच । बृहस्पतेर्भगवतः पुत्रोऽसौ भगवान्कचः । यथा प्रबुद्धो भगवन्समासेन तथा वद ॥ ५ ॥

śrīrāma uvāca | bṛhaspaterbhagavataḥ putro'sau bhagavānkacaḥ | yathā prabuddho bhagavansamāsena tathā vada || 5 ||

Śrī Rāma said: O Lord, how did Kaca, the son of the revered Bṛhaspati, attain enlightenment? Please explain it to me in brief.

श्री राम ने कहा: हे भगवान, बृहस्पति के पुत्र कच कैसे बोध प्राप्त किया? कृपया इसे संक्षेप में मुझे बताएँ।

6.111.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । श्रृणु राजन्कथां श्रीमाञ्छिखिध्वजवदेव सः । प्रबोधं परमं यातो देवदेशिकजः कचः ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śṛṇu rājankathāṃ śrīmāñchikhidhvajavadeva saḥ | prabodhaṃ paramaṃ yāto devadeśikajaḥ kacaḥ || 6 ||

Vasishtha said: O king, listen to the glorious story of Kacha, the son of the preceptor of the gods, who attained supreme enlightenment like Shikhidhvaja.

वसिष्ठ ने कहा: हे राजा, देवों के गुरु के पुत्र कच की श्रीमान कथा सुनो, जो शिखिध्वज की तरह परम प्रबोध को प्राप्त हुआ।

6.111.7

बालभावात्समुत्तीर्णः संसारोत्तरणोन्मुखः । कचः पदपदार्थज्ञो बृहस्पतिमभाषत ॥ ७ ॥

bālabhāvātsamuttīrṇaḥ saṃsārottaraṇonmukhaḥ | kacaḥ padapadārthajño bṛhaspatimabhāṣata || 7 ||

Having transcended childhood and eager to cross the ocean of worldly existence, Kacha, who was knowledgeable about the meanings of words, spoke to Brihaspati.

बालभाव से उत्तीर्ण होकर और संसार के सागर को पार करने के लिए उत्सुक होकर, शब्दों के अर्थों को जानने वाला कच ने बृहस्पति से कहा।

6.111.8

कच उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ कथं संसृतिपञ्जरात् । अस्मान्निर्गम्यते ब्रूहि जन्तुना जीवतन्तुना ॥ ८ ॥

kaca uvāca | bhagavansarvadharmajña kathaṃ saṃsṛtipañjarāt | asmān nirgamyate brūhi jantunā jīvatantunā || 8 ||

Kacha said: O Lord, knower of all dharma, how can a living being escape from the cage of transmigration? Please tell me.

कच ने कहा: हे भगवन्, सभी धर्मों के ज्ञाता, जीव इस संसार के पिंजरे से कैसे निकल सकता है? कृपया मुझे बताएँ।

6.111.9

बृहस्पतिरुवाच । अनर्थमकरागारादस्मात्संसारसागरात् । उड्डीयते निरुद्वेगं सर्वत्यागेन पुत्रक ॥ ९ ॥

bṛhaspatiruvāca | anarthamakarāgārādasmātsaṃsārasāgarāt | uḍḍīyate nirudvegaṃ sarvatyāgena putraka || 9 ||

Brihaspati said: O son, one escapes from this ocean of worldly existence, which is a house of misfortunes, without anxiety through complete renunciation.

बृहस्पति ने कहा: हे पुत्र, यह संसार का सागर, जो दुःखों का घर है, से चिंता के बिना पूर्ण त्याग द्वारा निकल जाता है।

6.111.10

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्याकर्ण्य कचो वाक्यं पितुः परमपावनम् । सर्वमेव परित्यज्य जगामैकान्तकाननम् ॥ १० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityākarṇya kaco vākyaṃ piturparamapāvanam | sarvameva parityajya jagāmaikāntakānanam || 10 ||

Vasishtha said: Having heard these supremely purifying words of his father, Kacha renounced everything and went to a solitary forest.

वसिष्ठ ने कहा: अपने पिता के इन अत्यंत पवित्र वचनों को सुनकर, कच ने सब कुछ त्याग दिया और एकांत वन में चला गया।

6.111.11

बृहस्पतेस्तद्गमनं नोद्वेगाय बभूव हसंयोगे च वियोगे च महान्तो हि महाशयाः ॥ ११ ॥

bṛhaspatestadgamanaṃ nodvegāya babhūva hasaṃyoge ca viyoge ca mahānto hi mahāśayāḥ || 11 ||

Brihaspati's departure was not for sorrow, but for the union and separation of the great souls.

बृहस्पति का जाना दुःख के लिए नहीं था, बल्कि महान आत्माओं के मिलन और वियोग के लिए था।

6.111.12

अथ वर्षेषु जातेषु त्रिषु पञ्चसु सोऽनघपुनः प्राप महारण्ये कस्मिंश्चित्पितरं कचः ॥ १२ ॥

atha varṣeṣu jāteṣu triṣu pañcasu so'naghapunaḥ prāpa mahāraṇye kasmiṃścitpitaraṃ kacaḥ || 12 ||

Then, after three and five years, the sinless Kaca again found his father in some great forest.

तब, तीन और पांच वर्षों के बाद, निर्दोष कच ने फिर से किसी महान वन में अपने पिता को पाया।

6.111.13

परिपूज्याभिवाद्यैनं समालिङ्गितपुत्रकमपृच्छद्वाक्पतिं भूयः स कचः कान्तया गिरा ॥ १३ ॥

paripūjyābhivādyainaṃ samāliṅgitaputrakamapṛcchadvākpatiṃ bhūyaḥ sa kacaḥ kāntayā girā || 13 ||

Having worshipped and saluted him, Kaca, embracing his son, again asked the lord of speech with a pleasing voice.

उसे पूजा और प्रणाम करके, कच ने अपने पुत्र को आलिंगन करते हुए, फिर से मधुर वाणी से वाक्पति से पूछा।

6.111.14

कच उवाचाद्येदमष्टमं वर्षं सर्वत्यागः कृतो मयातथापि तात विश्रान्तिं नाधिगच्छाम्यनिन्दिताम् ॥ १४ ॥

kaca uvācaadyedamaṣṭamaṃ varṣaṃ sarvatyāgaḥ kṛto mayātathāpi tāta viśrāntiṃ nādhigacchāmyaninditām || 14 ||

Kaca said, 'This is the eighth year since I have renounced everything, yet, O father, I do not find unblemished peace.'

कच ने कहा, 'यह मेरा आठवां वर्ष है जब से मैंने सब कुछ त्याग दिया है, फिर भी, हे पिता, मैं निर्दोष शांति नहीं पाता।'

6.111.15

श्रीवसिष्ठ उवाचएवमार्तवचस्तस्मिन्कचे वदति काननेसर्वमेव त्यजेत्युक्त्वा वाक्पतिर्दिवमुद्ययौ ॥ १५ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaevamārtavacastasminkace vadati kānanesarvameva tyajetyuktvā vākpatirdivamudyayau || 15 ||

Sri Vasishtha said, 'While Kaca was speaking thus in the forest, having said to renounce everything, the lord of speech ascended to heaven.'

श्री वसिष्ठ ने कहा, 'जब कच वन में ऐसा कह रहा था, सब कुछ त्याग देने के बाद, वाक्पति स्वर्ग चला गया।'

6.111.16

गते तस्मिन्कचो देहाद्वल्कलाद्यप्यथात्यजत् । गतेन्द्वभ्रार्कतारेण शरद्व्योम्ना समोऽभवत् ॥ १६ ॥

gate tasmin kaco dehādvalkalādyapyathātyajat | gate'ndvabhrārkatāreṇa śaradvyomnā samo'bhavat || 16 ||

When Kacha left his body, he also abandoned the bark garment and other possessions. With the departure of the sun and the clouds, he became one with the autumn sky.

जब कच ने अपने शरीर को छोड़ दिया, तो उसने वल्कल (बर्क) के वस्त्र और अन्य सामान भी छोड़ दिए। सूर्य और बादलों के चले जाने के साथ, वह शरद् आकाश के समान हो गया।

6.111.17

पुनर्वर्षत्रयेणैष कस्मिंश्चित्काननान्तरे । तत्याजाम्बुदवर्षादि शरदीव नभस्तलम् ॥ १७ ॥

punarvarṣatrayeṇaiṣa kasmiṃścitkānanāntare | tatyājāmbudavarṣādi śaradīva nabhastalam || 17 ||

After three years, he again appeared in a certain forest, abandoning the rainy season and other elements, becoming like the autumn sky.

तीन वर्षों के बाद, वह एक वन में फिर से दिखाई दिया, वर्षा ऋतु और अन्य तत्वों को छोड़कर, शरद् आकाश के समान हो गया।

6.111.18

उपासैको दिगन्तेषु शान्तशून्यवपुः श्वसन्। दूयमानमनाः प्राप तमेव पितरं गुरुम्॥ १८॥

upāsai ko diganteṣu śāntaśūnyavapuḥ śvasan | dūyamānamanāḥ prāpa tameva pitaraṃ gurum || 18 ||

He, alone, meditated in the directions, with a calm and empty form, breathing, and with a disturbed mind, he approached his father, the teacher.

वह अकेला दिशाओं में ध्यान करता था, शांत और खाली रूप में, साँस लेता हुआ, और विचलित मन से, उसने अपने पिता और गुरु को प्राप्त किया।

6.111.19

कृतपूजाक्रमो भक्त्या समालिङ्गितपुत्रकम्। अपृच्छत्स कचो भूयः खेदगद्गदया गिरा॥ १९॥

kṛtapūjākramo bhaktyā samāliṅgitaputrakam | apṛcchatsa kaco bhūyaḥ khedagadgadayā girā || 19 ||

Having performed the worship rituals with devotion, he embraced his son. Then Kacha, with a voice choked with grief, asked again.

भक्ति से पूजा के क्रम को पूरा करके, उसने अपने पुत्र को आलिंगन किया। तब कच ने, दुःख से भरी आवाज में, फिर से पूछा।

6.111.20

कच उवाच। तात सर्वं परित्यक्तं कन्थां वेणुलताद्यपि। तथापि नास्ति विश्रान्तिः स्वपदे किं करोम्यहम्॥ २०॥

kaca uvāca | tāta sarvaṃ parityaktaṃ kanthāṃ veṇulatādyapi | tathāpi nāsti viśrāntiḥ svapade kiṃ karomyaḥ || 20 ||

Kacha said, 'Father, I have abandoned everything, even my cloth and bamboo staff. Yet, I find no peace in my own position. What should I do?'

कच ने कहा, 'पिताजी, मैंने सब कुछ छोड़ दिया है, even my cloth and bamboo staff। फिर भी, मुझे अपने स्थान पर शांति नहीं मिलती। मैं क्या करूँ?'

6.111.21

बृहस्पतिरुवाच। चित्तं सर्वमिति प्राहुस्तत्त्यक्त्वा पुत्र राजसे। चित्तत्यागं विदुः सर्वत्यागं सर्वविदो जनाः॥ २१॥

bṛhaspatiruvāca | cittaṃ sarvamiti prāhustattatyaktvā putra rājase | cittatyāgaṃ viduḥ sarvatyāgaṃ sarvavido janāḥ || 21 ||

Brihaspati said: They say that the mind is everything; abandoning that, O son, you will attain the state of a king. The wise know the abandonment of the mind as the abandonment of everything.

बृहस्पति ने कहा: वे कहते हैं कि मन ही सब कुछ है; उसे छोड़कर, हे पुत्र, तू राजा की स्थिति प्राप्त करेगा। बुद्धिमान लोग मन के त्याग को सब कुछ का त्याग मानते हैं।

6.111.22

श्रीवसिष्ठ उवाच। इत्युक्त्वा वाक्पतिः पुत्रं पुप्लुवे तरसा नभः। अन्वियेष कचश्चित्तं परित्यक्तुमखिन्नधीः॥ २२॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā vākpatiḥ putraṃ puppluve tarasā nabhaḥ | anviyeṣa kacaścittaṃ parityaktumakhinnadhīḥ || 22 ||

Shri Vasistha said: Having said this, the lord of speech, Brihaspati, swiftly flew into the sky. Kaca, with an unwavering mind, sought to abandon the mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर, वाणी के स्वामी, बृहस्पति, तेजी से आकाश में उड़ गए। कच, अडिग मन से, मन का त्याग करने की कोशिश करने लगा।

6.111.23

चिन्तयन्नप्यसौ चित्तं न यदा वेद कानने । तदा संचिन्तयामास धियैव पितरं ययौ ॥ २३ ॥

cintayannapyasau cittaṃ na yadā veda kānane | tadā saṃcintayāmāsa dhiyaiva pitaraṃ yayau || 23 ||

Even while contemplating, he did not understand the mind in the forest. Then, he thought deeply and went to his father with his intellect.

यद्यपि वह सोच रहा था, फिर भी उसने वन में मन को नहीं समझा। तब, उसने गहराई से सोचा और अपने बुद्धि से अपने पिता के पास गया।

6.111.24

पदार्थवृन्दं देहादि न चित्तमिति कथ्यते । तदेतत्किं क्व वा व्यर्थं निरागस्कं त्यजाम्यहम् ॥ २४ ॥

padārthavṛndaṃ dehādi na cittamiti kathyate | tadetatkiṃ kva vā vyarthaṃ nirāgaskaṃ tyajāmyaham || 24 ||

The collection of objects, starting with the body, is not called the mind. What is this, where is it, or is it useless? I will abandon this desireless thing.

शरीर से शुरू होने वाले वस्तुओं का समूह मन नहीं कहलाता। यह क्या है, यह कहाँ है, या यह बेकार है? मैं इस इच्छारहित चीज को छोड़ दूँगा।

6.111.25

पितुः सकाशं गच्छामि ज्ञातुं चित्तं महारिपुम् । ज्ञात्वा तत्संत्यजाम्याशु ततस्तिष्ठामि विज्वरः ॥ २५ ॥

pituḥ sakāśaṃ gacchāmi jñātuṃ cittaṃ mahāripum | jñātvā tatsaṃtyajāmyāśu tatastiṣṭhāmi vijvaraḥ || 25 ||

I will go to my father to understand the mind, the great enemy. Having known it, I will quickly abandon it and then remain free from affliction.

मैं अपने पिता के पास जाऊँगा मन, महान शत्रु, को समझने के लिए। उसे जानकर, मैं शीघ्र ही उसे छोड़ दूँगा और फिर पीड़ा से मुक्त रहूँगा।

6.111.26

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति संचिन्त्य स कच उज्जगाम त्रिविष्टपम् । वाक्पतिं प्राप्य सस्नेहं ववन्दे प्रणनाम च ॥ २६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti saṃcintya sa kaca ujjagāma triviṣṭapam | vākpatiṃ prāpya sasnehaṃ vavande praṇanāma ca || 26 ||

Shri Vasishtha said: Having thus contemplated, Kaca ascended to heaven. Reaching Brihaspati, he bowed with affection and prostrated.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ऐसा सोचकर, कच स्वर्ग लोक में चला गया। बृहस्पति के पास पहुंचकर, उसने स्नेह से प्रणाम किया और साष्टांग प्रणाम किया।

6.111.27

अपृच्छच्चैनमेकान्ते किं चित्तं भगवन्वद । स्वरूपं ब्रूहि चित्तस्य येन तत्संत्यजाम्यहम् ॥ २७ ॥

apṛcchaccainamekānte kiṃ cittaṃ bhagavanvada | svarūpaṃ brūhi cittasya yena tatsaṃtyajāmyaham || 27 ||

He asked him in private, 'O Lord, what is the mind? Please describe its nature so that I may renounce it.'

उसने एकान्त में पूछा, 'हे भगवन्, मन क्या है? कृपया इसके स्वरूप का वर्णन करें ताकि मैं इसे त्याग सकूं।'

6.111.28

बृहस्पतिरुवाच । चित्तं निजमहंकारं विदुश्चित्तविदो जनाः । अन्तर्योऽयमहंभावो जन्तोस्तच्चित्तमुच्यते ॥ २८ ॥

bṛhaspatiruvāca | cittaṃ nijamahaṃkāraṃ viduścittavido janāḥ | antaryo'yamahaṃbhāvo jantostaccittamucyate || 28 ||

Brihaspati said: The mind is one's own ego. Those who know the mind understand this. This internal sense of 'I' in a being is called the mind.

बृहस्पति ने कहा: मन अपना अहंकार है। मन को जानने वाले लोग इसे समझते हैं। जीव में यह आन्तरिक 'मैं' की भावना मन कहलाती है।

6.111.29

कच उवाच । त्रयस्त्रिंशन्महाकोटिप्रमाणस्य महामते । गुरो गीर्वाणवृन्दस्य कथमेतद्वदेति मे ॥ २९ ॥

kaca uvāca | trayastriṃśanmahākoṭipramāṇasya mahāmate | guro gīrvāṇavṛndasya kathametadvadeti me || 29 ||

Kaca said: O great sage, how can you explain this to me, who am of the measure of thirty-three great crores of gods?

कच ने कहा: हे महामते, मुझे जो तीस करोड़ देवताओं के समान हूँ, आप मुझे यह कैसे समझाएंगे?

6.111.30

मन्येऽस्य दुष्करस्त्यागो न सिद्धिमुपगच्छति । कथमेष किल त्यक्तुं शक्यते योगिनां वर ॥ ३० ॥

manye'sya duṣkarastyāgo na siddhimupagacchati | kathameṣa kila tyaktuṃ śakyate yoginām vara || 30 ||

I think its renunciation is difficult and does not lead to perfection. O best of yogis, how can this be abandoned?

मैं सोचता हूँ कि इसका त्याग कठिन है और यह सिद्धि को नहीं प्राप्त करता। हे योगियों में श्रेष्ठ, यह कैसे त्यागा जा सकता है?

6.111.31

बृहस्पतिरुवाच । अपि पुष्पावदलनादपि लोचनमीलनात् । सुकरोऽहंकृतेस्त्यागो न क्लेशोऽत्र मनागपि ॥ ३१ ॥

bṛhaspatiruvāca | api puṣpāvadalanādapi locanamīlanāt | sukaro'haṃkṛtestyāgo na kleśo'tra manāgapi || 31 ||

Brihaspati said: Even from the mere act of plucking a flower or closing the eyes, the renunciation of ego is easy; there is no suffering in this.

बृहस्पति ने कहा: फूल तोड़ने या आँखें बंद करने से भी अहंकार का त्याग आसान है; इसमें कोई क्लेश नहीं है।

6.111.32

यथैतदेवं तनय तथा शृणु वदामि ते । अज्ञानमात्रसंसिद्धं वस्तु ज्ञानेन नश्यति ॥ ३२ ॥

yathaitadevaṃ tanaya tathā śṛṇu vadāmi te | ajñānamātrasaṃsiddhaṃ vastu jñānena naśyati || 32 ||

As it is so, O son, listen to what I say to you. That which is accomplished by mere ignorance is destroyed by knowledge.

जैसा यह है, वैसा ही है, हे पुत्र, सुनो जो मैं तुमसे कहता हूँ। जो केवल अज्ञान से सिद्ध होता है, वह ज्ञान से नष्ट हो जाता है।

6.111.33

वस्तुतो नास्त्यहंकारः पुत्र मिथ्याभ्रमो यथा । असन्सन्निव संपन्नो बालवेतालवत्स्थितः ॥ ३३ ॥

vastuto nāstyahaṃkāraḥ putra mithyābhramo yathā | asansanniva saṃpanno bālaveālavatsthitaḥ || 33 ||

In reality, there is no ego, O son, just as there is a false delusion. It appears to exist like a ghost in a child's imagination.

वास्तव में, अहंकार नहीं है, हे पुत्र, जैसे एक झूठी भ्रम होता है। यह एक बच्चे की कल्पना में भूत की तरह exist करता है।

6.111.34

यथा रज्ज्वां भुजंगत्वं मरावम्बुमतिर्यथा । मिथ्यावभासः स्फुरति तथा मिथ्याप्यहंकृतिः ॥ ३४ ॥

yathā rajjvāṃ bhujaṃgatvaṃ marāvambumatiryathā | mithyāvabhāsaḥ sphurati tathā mithyāpyahaṃkṛtiḥ || 34 ||

Just as a rope is mistaken for a snake and a mirage for water, similarly, the ego appears falsely.

जैसे रस्सी को साँप समझा जाता है और मृगतृष्णा को पानी समझा जाता है, उसी तरह, अहंकार झूठा प्रतीत होता है।

6.111.35

असदेव यथा द्वित्वं मोहादिन्दौ विलोक्यते । तथा स्फुरत्यहंकारो न सत्यो वाप्यसन्न च ॥ ३५ ॥

asadeva yathā dvitvaṃ mohādindau vilokyate | tathā sphuratyahaṃkāro na satyo vāpyasanna ca || 35 ||

Just as duality is seen in the moon due to illusion, similarly, the ego appears. It is neither true nor false.

जैसे भ्रम के कारण चंद्रमा में द्वैत दिखाई देता है, उसी तरह अहंकार प्रतीत होता है। यह न तो सत्य है न ही असत्य।

6.111.36

एकमाद्यन्तरहितं चिन्मात्रममलान्तरम् । खादप्यतितरामच्छं विद्यते सर्ववेदनम् ॥ ३६ ॥

ekamādyantarahitaṃ cinmātramamalāntaram | khādapyatitarāmacchaṃ vidyate sarvavedanam || 36 ||

That which is devoid of beginning and end, pure consciousness alone, with a stainless interior, exists as the supreme, transparent, and all-knowing.

जो आदि और अन्त से रहित है, शुद्ध चेतना मात्र, निर्मल अन्तर वाला, अति शुद्ध, सर्वज्ञ के रूप में विद्यमान है।

6.111.37

सर्वत्र सर्वदा सर्वप्रकाशं सर्वजन्तुषु । तदेवैकं कचत्यम्बु विलोलास्वब्धिवीचिषु ॥ ३७ ॥

sarvatra sarvadā sarvaprakāśaṃ sarvajantuṣu | tadevaikaṃ kacatyambu vilolāsvabdhivīciṣu || 37 ||

Everywhere, always, all-illuminating, in all beings, that alone shines like water in the restless waves of the ocean.

सर्वत्र, सर्वदा, सर्वप्रकाश, सभी जन्तुओं में, वही एक चमकता है जैसे समुद्र की बेचैन लहरों में पानी।

6.111.38

अत्र कोऽयमहंभावः कुतो वा कथमुत्थितः । क्वाप्सु जातो रजोराशिः क्वानलादुत्थितं जलम् ॥ ३८ ॥

atra ko'yamahaṃbhāvaḥ kuto vā kathamutthitaḥ | kvāpsu jāto rajorāśiḥ kvānalādutthitaṃ jalam || 38 ||

Here, what is this sense of 'I'? From where or how did it arise? Where is the dust born from water, or water born from fire?

यहाँ, यह 'मैं' का भाव क्या है? यह कहाँ से या कैसे उत्पन्न हुआ? पानी से धूल कहाँ पैदा होती है, या आग से पानी कहाँ उत्पन्न होता है?

6.111.39

अयं सोऽहमिति व्यर्थं प्रत्ययं त्यज पुत्रक । तुच्छं परिमिताकारं दिक्कालविवशीकृतम् ॥ ३९ ॥

ayaṃ so'hamiti vyarthaṃ pratayaṃ tyaja putraka | tucchaṃ parimitākāraṃ dikkālavivaśīkṛtam || 39 ||

Give up this useless notion, 'I am this,' O son. It is insignificant, limited in form, and subject to space and time.

हे पुत्र, यह व्यर्थ विचार 'मैं यह हूँ' को त्याग दो। यह तुच्छ है, परिमित आकार वाला है, और दिशा और काल के अधीन है।

6.111.40

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नं स्वच्छं नित्योदितं ततम्। सर्वार्थमयमेकार्थचिन्मात्रममलं भवान्॥ ४०॥

dikkālādyanavacchinnaṃ svacchaṃ nityoditaṃ tatam | sarvārthamayamekārthacinmātramamalaṃ bhavān || 40 ||

Unlimited by direction, time, etc., pure, eternally risen, pervading, the essence of all meanings, one meaning, pure consciousness alone, stainless, you are.

दिशा, काल आदि से अनवच्छिन्न, स्वच्छ, नित्य उदित, व्याप्त, सभी अर्थों का सार, एक अर्थ, शुद्ध चेतना मात्र, निर्मल, आप हैं।

6.111.41

फलकुसुमदलानां सर्वदिक्संस्थितानां रस इव जगतां त्वं संस्थितः सर्वदैव। विमलतरचिदात्मा नित्यमेवास्यनन्तः क इव कच तवाहंनिश्चयो भावमूर्तेः॥ ४१॥

phalakusumadalānāṃ sarvadiksaṃsthitānāṃ rasa iva jagatāṃ tvaṃ saṃsthitaḥ sarvadaiva | vimalataracidātmā nityamevāsyanantaḥ ka iva kaca tavāhaṃniścayo bhāvamūrteḥ || 41 ||

Just as the essence of flowers is present in all directions, similarly, You are always present in the world. O pure consciousness, You are eternally present within me. How can I be certain of Your form?

जैसे फूलों का रस सभी दिशाओं में व्याप्त होता है, वैसे ही आप सदा जगत में व्याप्त हैं। हे निर्मल चेतना, आप सदा मेरे अंदर विद्यमान हैं। मैं आपके रूप को कैसे पहचानूँ?

Chapter 112

6.112.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति प्राप्य परं योगमुपदेशमनुत्तमम् । जीवन्मुक्तो बभूवासौ ततो देवगुरोः सुतः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti prāpya paraṃ yogamupadeśamanuttamam | jīvanmukto babhūvāsau tato devaguroḥ sutaḥ || 1 ||

Shri Vasistha said: Thus, having attained the supreme yoga instruction, he became liberated while living, and then the son of the divine teacher.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, परम योग उपदेश प्राप्त करके, वह जीवन्मुक्त हो गया, और फिर देवगुरु का पुत्र बन गया।

6.112.2

निर्ममो निरहंकारश्छिन्नग्रन्थिः प्रशान्तधीः । कचो यथा स्थितो राम तथा तिष्ठाविकारवान् ॥ २ ॥

nirmamo nirahaṅkāraśchinnagranthiḥ praśāntadhīḥ | kaco yathā sthito rāma tathā tiṣṭhāvikāravān || 2 ||

Free from ego, devoid of pride, with all knots cut, and with a peaceful mind, he remained steady like a mountain, O Rama.

निर्मम, अहंकार से रहित, सभी ग्रन्थियों को काटकर, और शांत मन से, वह पर्वत की तरह स्थिर रहा, हे राम।

6.112.3

अहंकारमसद्विद्धि मैनमाश्रय मा त्यज । असतः शशशृङ्गस्य किल त्यागग्रहौ कुतः ॥ ३ ॥

ahaṅkāramasadviddhi mainamāśraya mā tyaja | asataḥ śaśaśṛṅgasya kila tyāgagrahau kutaḥ || 3 ||

Know that ego is unreal, do not rely on it, do not abandon it. For what is the point of giving up or holding on to the unreal, like the horns of a hare?

यह जानो कि अहंकार असत्य है, इस पर निर्भर न करो, इसे त्याग न करो। असत्य को त्यागने या पकड़ने का क्या लाभ है, जैसे खरगोश के सींग?

6.112.4

असंभवत्यहंकारे क्व ते मरणजन्मनी । नभःक्षेत्रे तथा व्युप्तं केन संगृह्यते फलम् ॥ ४ ॥

asaṃbhavatyahaṅkāre kva te maraṇajanmanī | nabhaḥkṣetre tathā vyuptaṃ kena saṃgṛhyate phalam || 4 ||

When ego does not exist, where are your birth and death? In the field of the sky, who gathers the fruit that is scattered?

जब अहंकार नहीं है, तो तुम्हारे जन्म और मृत्यु कहाँ हैं? आकाश के क्षेत्र में, बिखरे हुए फल को कौन एकत्र करता है?

6.112.5

निरंशं शान्तसंकल्पं सर्वभावात्मकं ततम् । परमादप्यणोः सूक्ष्मं चिन्मात्रं त्वमनोमयम् ॥ ५ ॥

niraṃśaṃ śāntasaṃkalpaṃ sarvabhāvātmakaṃ tatam | paramādapyaṇoḥ sūkṣmaṃ cinmātraṃ tvamanomayam || 5 ||

Without parts, with peaceful resolve, pervading all beings, subtle even in the smallest atom, pure consciousness, you are beyond the mind.

अंशों से रहित, शांत संकल्प से युक्त, सभी भावों को व्याप्त करने वाला, सूक्ष्म अणु में भी सूक्ष्म, शुद्ध चेतना, तुम मन से परे हो।

6.112.6

यथाम्भसस्तरङ्गादि यथा हेम्नोऽङ्गदादि च । तदेवातदिवाभासं तथाहंभावभावितः ॥ ६ ॥

yathāmbhasastaraṅgādi yathā hemno'ṅgadādi ca | tadevātadivābhāsaṃ tathāhaṃbhāvabhāvitaḥ || 6 ||

Just as waves arise from water and ornaments from gold, similarly, the sense of 'I' (ahaṃbhāva) is a mere reflection of the Self.

जैसे पानी से लहरें उठती हैं और सोने से आभूषण बनते हैं, उसी तरह 'मैं' का भाव आत्मा का एक प्रतिबिम्ब मात्र है।

6.112.7

अबोधेन जगत्सर्वं मायामयमिव स्थितम् । बोधेन सकलं ब्रह्मरूपं संपद्यतेऽनघ ॥ ७ ॥

abodhena jagatsarvaṃ māyāmayamiva sthitam | bodhena sakalaṃ brahmarūpaṃ sampadyate'nagha || 7 ||

Through ignorance, the entire world appears to be an illusion. Through knowledge, everything attains the form of Brahman, O sinless one.

अज्ञान के कारण सारा जगत् माया के समान प्रतीत होता है। ज्ञान के द्वारा सब कुछ ब्रह्म का रूप धारण करता है, हे निष्पाप।

6.112.8

द्वित्वैकत्वमती त्यक्त्वा शेषस्थः सुखितो भव । मा दुःखितो भव व्यर्थं त्वं मिथ्यापुरुषो यथा ॥ ८ ॥

dvitvaikatvamatī tyaktvā śeṣasthaḥ sukhito bhava | mā duḥkhito bhava vyarthaṃ tvaṃ mithyāpuruṣo yathā || 8 ||

Abandon the thoughts of duality and non-duality, remain in the essence, and be happy. Do not be unhappy in vain, like an unreal person.

द्वैत और अद्वैत के विचारों को त्याग दो, शेष में रहो और सुखी हो जाओ। व्यर्थ में दुःखी मत बनो, जैसे कि एक असत्य व्यक्ति।

6.112.9

मायेयमतिदुष्पारा सांसारी गाढतां गता । शरदा मिहिकेवाशु बोधेनायाति तानवम् ॥ ९ ॥

māyeyamatiduṣpārā sāṃsārī gāḍhatāṃ gatā | śaradā mihikevāśu bodhenāyāti tānavam || 9 ||

This illusion is extremely difficult to cross, deeply rooted in worldly existence. Like an autumn cloud, it quickly dissipates with knowledge.

यह माया अत्यंत दुर्गम है, संसार में गहराई तक फैली हुई है। ज्ञान के साथ, यह शरद ऋतु के बादल की तरह शीघ्र ही विलीन हो जाती है।

6.112.10

श्रीराम उवाच । परमामागतोऽस्म्यन्तस्तृप्तिं ज्ञानामृतेन ते । अवग्रहभयाक्रान्तः स्वासारेणेव चातकः ॥ १० ॥

śrīrāma uvāca | paramāmāgato'smyantastṛptiṃ jñānāmṛtena te | avagrahabhayākrāntaḥ svāsāreṇeva cātakaḥ || 10 ||

Shri Rama said: I have attained the highest bliss within, satisfied with the nectar of your knowledge. I am overwhelmed with the fear of attachment, like a chataka bird with its own essence.

श्री राम ने कहा: मैंने अंतर में परम आनंद प्राप्त किया है, आपके ज्ञान के अमृत से तृप्त होकर। मैं आसक्ति के भय से व्याकुल हूँ, जैसे चातक पक्षी अपने स्वास से।

6.112.11

अमृतेनेव सिक्तोऽहमन्तर्गच्छामि शीतताम्। उपर्यपि समस्तानां तिष्ठाम्यतुलसंपदाम्॥ ११॥

amṛteneva sikto'hamantargacchāmi śītatām | uparyapi samastānāṃ tiṣṭhāmyatulasampadām || 11 ||

I am sprinkled with nectar, and I enter into coolness | I also stand above all with unparalleled wealth || 11 ||

मैं अमृत से सिंचित हूँ, और मैं शीतलता में प्रवेश करता हूँ | मैं सभी के ऊपर अनुपम संपदा के साथ स्थित हूँ || ११ ||

6.112.12

न तृप्तिमनुगच्छामि वचांसि वदतस्तव। ऐन्दवीनां मरीचीनां चकोरस्तृषितो यथा॥ १२॥

na tṛptimanugacchāmi vacāṃsi vadatastava | aindavīnāṃ marīcīnāṃ cakorastṛṣito yathā || 12 ||

I do not attain satisfaction from your words | Like a thirsty chakora bird for the moon's rays || 12 ||

मैं आपके शब्दों से तृप्ति नहीं प्राप्त करता | चंद्रमा की किरणों के लिए प्यासे चकोर की तरह || १२ ||

6.112.13

तृप्तोऽपि भूयः पृच्छामि त्वां प्रश्नमिममीश्वर। को नाम तृप्तोऽप्यग्रस्तं न पिबत्यमृतासवम्॥ १३॥

tṛpto'pi bhūyaḥ pṛcchāmi tvāṃ praśnamimamīśvara | ko nāma tṛpto'pyagrastaṃ na pibatyamṛtāsavam || 13 ||

Even though I am satisfied, I ask you this question again, O Lord | Who, even when satisfied, does not drink the nectar of immortality? || 13 ||

भले ही मैं तृप्त हूँ, मैं फिर से आपसे यह प्रश्न पूछता हूँ, हे ईश्वर | कौन ऐसा है जो, तृप्त होने के बाद भी, अमृत का रस नहीं पीता? || १३ ||

6.112.14

किमुच्यते मुनिश्रेष्ठ मिथ्यापुरुषनामकम्। वस्त्ववस्तु कृतं जगद्वस्तुजातं वदाशु मे॥ १४॥

kimucyate muniśreṣṭha mithyāpuruṣanāmakam | vastvavastu kṛtaṃ jagadvastujātaṃ vadāśu me || 14 ||

What is said, O best of sages, about the false person? | Tell me quickly, is the world real or unreal? || 14 ||

क्या कहा जाता है, हे मुनिश्रेष्ठ, मिथ्या पुरुष के बारे में? | शीघ्र बताओ, जगत् वास्तविक है या अवास्तविक? || १४ ||

6.112.15

श्रीवसिष्ठ उवाच। मिथ्यापुरुषबोधाय श्रृणु राघव शोभनाम्। इमामाख्यायिकां हासजननीं मदुदीरिताम्॥ १५॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mithyāpuruṣabodhāya śṛṇu rāghava śobhanām | imāmākhyāyikāṃ hāsajananīṃ madudīritām || 15 ||

Vasishtha said: Listen, O Raghava, to this beautiful story | Which I narrate for the understanding of the false person || 15 ||

श्रीवसिष्ठ ने कहा: सुनो, हे राघव, इस सुंदर कथा को | जो मैं मिथ्या पुरुष के बोध के लिए कहता हूँ || १५ ||

6.112.16

अस्ति कश्चिन्महाबाहो मायायन्त्रमयः पुमान्। बालपेलवधीमूढो गूढो मौर्ख्येण केवलम्॥ १६॥

asti kaścinmahābāho māyāyantramayaḥ pumān | bālapelavadhīmūḍho gūḍho maurkhyeṇa kevalam || 16 ||

There exists a certain man, O mighty-armed one, who is deluded by the machine of illusion. He is foolish, ignorant, and concealed by mere stupidity.

हे महाबाहो, एक ऐसा व्यक्ति है जो माया के यन्त्र से मोहित है। वह बालकों को मारने वाला, मूढ़ और केवल मूर्खता से ढंका हुआ है।

6.112.17

स एकान्ते क्वचिज्जातः शून्ये तत्रैव तिष्ठति। केशोण्ड्रकमिव व्योम्नि मृगतृष्णेव वा मरौ॥ १७॥

sa ekānte kvacijjātaḥ śūnye tatraiva tiṣṭhati | keśoṇḍrakamiva vyomni mṛgatṛṣṇeva vā marau || 17 ||

He is born in some solitude and remains there in emptiness, like a hair's tip in the sky or a mirage in the desert.

वह किसी एकान्त में उत्पन्न होता है और शून्यता में वहीं रहता है, जैसे आकाश में बाल का अग्रभाग या मरुस्थल में मृगतृष्णा।

6.112.18

तस्मादन्यन्न तत्रास्ति यदस्ति च स एव तत्। यच्चान्यत्तत्तदाभासं न च पश्यति दुर्मतिः॥ १८॥

tasmādanyanna tatrāsti yadasti ca sa eva tat | yaccānyattattadābhāsaṃ na ca paśyati durmatiḥ || 18 ||

Therefore, nothing else exists there except what he is. Whatever else appears is merely a reflection, but the foolish one does not see it.

इसलिए, वहाँ उसके अलावा कुछ और नहीं है। जो कुछ भी और दिखाई देता है, वह केवल एक प्रतिबिम्ब है, लेकिन मूर्ख व्यक्ति उसे नहीं देखता।

6.112.19

संकल्पस्तस्य संजातस्तत्र वृद्धिमुपेयुषः। खस्याहं खमहं खं मे खं रक्षामीति निश्चलः॥ १९॥

saṅkalpastasya saṃjātastatra vṛddhimupeyuṣaḥ | khasyāhaṃ khamahaṃ khaṃ me khaṃ rakṣāmīti niścalaḥ || 19 ||

His resolve is born there, seeking growth. 'I am the sky, the sky is mine, I will protect the sky,' he remains steadfast.

उसका संकल्प वहाँ उत्पन्न होता है, वृद्धि की खोज में। 'मैं आकाश हूँ, आकाश मेरा है, मैं आकाश की रक्षा करूँगा,' वह अडिग रहता है।

6.112.20

खं स्थापयित्वा रक्षामि वस्त्विष्टं स्वयमादरात्। इति संचिन्तयन्व्योमरक्षार्थं सोऽकरोद्गृहम्॥ २०॥

khaṃ sthāpayitvā rakṣāmi vastviṣṭaṃ svayamādarāt | iti saṃcintayanvyomarakṣārthaṃ so'karodgṛham || 20 ||

Thinking, 'I will establish and protect the sky, the desired object, with respect,' he thus created a house for the protection of the sky.

सोचते हुए, 'मैं आकाश को स्थापित करूँगा और सम्मान सहित इच्छित वस्तु की रक्षा करूँगा,' उसने आकाश की रक्षा के लिए घर बनाया।

6.112.21

तस्य कोशे बबन्धास्थां रक्षितं खं मयेत्यसौ। गृहाकाशेन संतुष्टस्ततः स रघुनन्दन॥ २१॥

tasya kośe babandhāsthāṃ rakṣitaṃ khaṃ mayetyasau | gṛhākāśena saṃtuṣṭastataḥ sa raghunandana || 21 ||

He secured his wealth in his treasury, believing it to be well-protected, and was content with his home. Then, O Raghunandana,

उसने अपने कोश में अपना धन सुरक्षित किया, इसे अच्छी तरह सुरक्षित मानकर, और घर के सुख से संतुष्ट हो गया। फिर, हे रघुनन्दन,

6.112.22

अथ कालेन तत्तस्य गृहं नाशमुपाययौ। ऋत्वन्तरेणाब्द इव वातेनेव तरङ्गकः॥ २२॥

atha kālena tattasya gṛhaṃ nāśamupāyayau | ṛtvantareṇābda iva vāteneva taraṅgakaḥ || 22 ||

Then, with the passage of time, his house was destroyed, just as a wave is destroyed by the wind at the end of the season.

फिर, समय के साथ, उसका घर नष्ट हो गया, जैसे ऋतु के अंत में हवा से लहर नष्ट हो जाती है।

6.112.23

हा गृहाकाश नष्टं त्वं हा क्व यातमसि क्षणात्। हा हा भग्नमसि स्वच्छमित्येवैतच्छुशोच सः ॥ २३ ॥

hā gṛhākāśa naṣṭaṃ tvaṃ hā kv yātamasi kṣaṇāt | hā hā bhagnamasi svacchamityeva etacchuśoca saḥ || 23 ||

Alas, the space of the house is destroyed! Alas, where have you gone in an instant? Alas, alas, you are broken and pure. Thus, he lamented.

हाय, घर का स्थान नष्ट हो गया! हाय, तुम कहाँ चले गए क्षण में? हाय, हाय, तुम टूटे हो और शुद्ध हो। इस प्रकार, उसने शोक किया।

6.112.24

इति शोकशतं कृत्वा पुनस्तत्रैव दुर्मतिः। कूपं चक्रे खरक्षार्थं कूपाकाशपरोऽभवत् ॥ २४ ॥

iti śokaśataṃ kṛtvā punastatraiva dumatiḥ | kūpaṃ cakre kharakṣārthaṃ kūpākāśaparo'bhavat || 24 ||

Having thus lamented a hundred times, the foolish one again made a well there for the sake of a donkey, and became attached to the space of the well.

इस प्रकार शोक करने के बाद, मूर्ख फिर से वहीं एक कुएँ बनाया एक गधे के लिए, और कुएँ के स्थान से आसक्त हो गया।

6.112.25

ततो नाशं स कालेन नीतः कूपोऽपि तस्य वै। कूपाकाशे गते शोकनिमग्नोऽसौ ततोऽभवत् ॥ २५ ॥

tato nāśaṃ sa kālena nītaḥ kūpo'pi tasya vai | kūpākāśe gate śokanimagno'sau tato'bhavat || 25 ||

Then, with the passage of time, even his well was destroyed. When the space of the well was gone, he became immersed in grief.

फिर, समय के साथ, उसका कुआँ भी नष्ट हो गया। जब कुएँ का स्थान चला गया, तब वह शोक में डूब गया।

6.112.26

कूपाकाशप्रलापान्ते कुम्भं शीघ्रमथाकरोत्। कुम्भाकाशपरो भूत्वा स्वयं निर्वृतिमाययौ ॥ २६ ॥

kūpākāśapralāpānte kumbhaṃ śīghramathākarot | kumbhākāśaparo bhūtvā svayaṃ nirvṛtimāyayau || 26 ||

After the discussion about the well and the sky, he quickly made a pot. Becoming devoted to the space within the pot, he attained contentment.

कुएं और आकाश के विषय में चर्चा के बाद, उसने जल्दी से एक घड़ा बनाया। घड़े के आकाश में लगे हुए, उसने स्वयं संतुष्टि प्राप्त की।

6.112.27

कुम्भोऽपि तस्य कालेन नाशं नीतो रघूद्वह। यामेव दिशमादत्ते दुर्भगः सा हि नश्यति ॥ २७ ॥

kumbho'pi tasya kālena nāśaṃ nīto raghūdvaha | yāmeva diśamādatte durbhagaḥ sā hi naśyati || 27 ||

Even the pot, over time, was destroyed, O Raghava. Whatever direction an unlucky person takes, that direction perishes.

घड़ा भी, समय के साथ, नष्ट हो गया, हे रघुवंशी। जिस दिशा को एक दुर्भाग्यशाली व्यक्ति अपनाता है, वह दिशा नष्ट हो जाती है।

6.112.28

कुम्भाकाशप्रलापान्ते खरक्षार्थं चकार सः। कुण्डं तथैव तेनासौ कुण्डाकाशपरोऽभवत् ॥ २८ ॥

kumbhākāśapralāpānte kharakṣārthaṃ cakāra saḥ | kuṇḍaṃ tathaiva tenāsau kuṇḍākāśaparo'bhavat || 28 ||

After the discussion about the space within the pot, he made a pit for the sake of a donkey. Similarly, he became devoted to the space within the pit.

घड़े के आकाश के विषय में चर्चा के बाद, उसने एक गधे के लिए एक गड्ढा बनाया। इसी तरह, वह गड्ढे के आकाश में लगा हुआ हो गया।

6.112.29

कुण्डमप्यस्य कालेन केनचिन्नाशमाययौ । तेजसेव तमस्तेन कुण्डाकाशं शुशोच सः ॥ २९ ॥

kuṇḍamapyasya kālena kenacinnāśamāyayau | tejaseva tamastena kuṇḍākāśaṃ śuśoca saḥ || 29 ||

Even the pit, over time, was destroyed by something. Like light being covered by darkness, he grieved for the space within the pit.

गड्ढा भी, समय के साथ, किसी चीज से नष्ट हो गया। जैसे प्रकाश अंधकार से ढंका जाता है, उसी तरह उसने गड्ढे के आकाश के लिए शोक किया।

6.112.30

कुण्डाकाशस्य शोकान्ते खरक्षार्थं चकार सः । चतुःशालं महाशालं तदाकाशमयोऽभवत् ॥ ३० ॥

kuṇḍākāśasya śokānte kharakṣārthaṃ cakāra saḥ | catuḥśālaṃ mahāśālaṃ tadākāśamayo'bhavat || 30 ||

At the end of his grief for the space within the pit, he made a large hall with four pillars for the sake of a donkey. That became a space filled with air.

गड्ढे के आकाश के शोक के अंत में, उसने एक गधे के लिए चार खंभों वाला एक बड़ा हॉल बनाया। वह हवा से भरा हुआ स्थान बन गया।

6.112.31

तदप्यस्य जहाराशु कालः कवलितप्रजःजीर्णपर्णं यथा वातस्ततः शोकपरोऽभवत् ॥ ३१ ॥

tadapyasya jahārāśu kālaḥ kavalitaprajaḥjīrṇaparṇaṃ yathā vātastataḥ śokaparo'bhavat || 31 ||

Even then, time quickly took away his subjects, like the wind takes away a withered leaf. From that, he became full of sorrow.

फिर भी, समय ने जल्दी ही उसके प्रजाजनों को ले लिया, जैसे हवा सूखे पत्ते को उड़ा लेती है। इससे वह दुःख से भर गया।

6.112.32

स चतुःशालशोकान्ते खरक्षार्थं चकार हकुसूलमम्बुदाकारं तदाकाशपरः स्थितः ॥ ३२ ॥

sa catuḥśālaśokānte kharakṣārthaṃ cakāra hakusūlamambudākāraṃ tadākāśaparaḥ sthitaḥ || 32 ||

At the end of his sorrow for the four halls, he made a stake for the donkey's sake, sky-high and cloud-like, and stood there.

अपने चार भवनों के शोक के अंत में, उसने गधे के लिए एक खूंटा बनाया, जो आकाश के बराबर और बादल के समान था, और वहां खड़ा हो गया।

6.112.33

तदप्यस्य जहाराशु कालो वात इवाम्बुदम्कुसूलनाशशोकेन तेनासौ पर्यतप्यत ॥ ३३ ॥

tadapyasya jahārāśu kālo vāta ivāmbudamkusūlanāśaśokena tenāsau paryatapyata || 33 ||

Even then, time quickly took away the cloud-like stake, like the wind takes away a cloud. With the sorrow of its destruction, he was greatly distressed.

फिर भी, समय ने जल्दी ही बादल के समान खूंटे को ले लिया, जैसे हवा बादल को उड़ा लेती है। उसके विनाश के दुःख से वह बहुत व्यथित हो गया।

6.112.34

एवं गृहचतुःशालकुम्भकुण्डकुसूलकैःतस्यापर्यवसानात्मा कालोऽयमतिवर्तते ॥ ३४ ॥

evaṃ gṛhacatuḥśālakumbhakuṇḍakusūlakaiḥtasyāparyavasānātmā kālo'yamativartate || 34 ||

Thus, with houses, four halls, pots, wells, and stakes, this time passes beyond measure.

इस प्रकार, घरों, चार भवनों, घड़ों, कुएं और खूंटों के साथ, यह समय माप से परे बीतता है।

6.112.35

एवं स्थितः स विवशो गगनं गुहायां गृह्णन्गृहेण गहनेन किलात्मबुद्ध्यादुःखान्तराद्धनतराद्धनदुःखजातमायाति याति च गतागतिसङ्गमूढः ॥ ३५ ॥

evaṃ sthitaḥ sa vivaśo gaganaṃ guhāyāṃ gṛhṇangṛheṇa gahanena
kilātmabuddhyāduḥkhāntarāddhanatarāddhanaduḥkhajātamāyāti yāti ca gatāgatisaṅgamūḍhaḥ || 35 ||

Thus situated, he, helpless, grasps the sky in a cave, with a deep house, indeed with the intellect of the self, from sorrow to sorrow, from wealth to wealth, from the sorrow of wealth, he comes and goes, confused by the association of coming and going.

इस प्रकार स्थित, वह असहाय, एक गुफा में आकाश को पकड़ता है, एक गहरे घर के साथ, indeed आत्मा की बुद्धि से, दुःख से दुःख तक, धन से धन तक, धन के दुःख से, वह आता है और जाता है, आने-जाने के संबंध से भ्रमित।

Chapter 113

6.113.1

श्रीराम उवाच । मिथ्यानरप्रसङ्गेन किं मायापुरुषः प्रभो । कथितोऽयं त्वया व्योमरक्षण च किमुच्यते ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | mithyānaraprasaṅgena kiṃ māyāpuruṣaḥ prabho | kathito'yaṃ tvayā vyomarakṣaṇa ca kimucyate || 1 ||

Sri Rama said: O Lord, what is this illusory man described by you through the context of an unreal human? And what is meant by the protection of the sky?

श्री राम ने कहा: हे प्रभो, यह मायापुरुष आपने मिथ्या नर के प्रसंग से क्यों कहा है? और आकाश की रक्षा का क्या अर्थ है?

6.113.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । शृणु राम यथाभूतमेतत्प्रकटयामि ते । मिथ्यापुरुषवृत्तान्तकथा या कथिताधुना ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śṛṇu rāma yathābhūtametatprakaṭayāmi te | mithyāpuruṣavṛttāntakathā yā kathitādhunā || 2 ||

Vasistha said: Listen, O Rama, I will reveal to you the truth as it is. The story of the illusory man that has been narrated now.

वसिष्ठ ने कहा: सुनो राम, मैं तुम्हें सच्चाई बताता हूँ। जो मिथ्यापुरुष की कथा अभी कही गई है।

6.113.3

मायायन्त्रमयः प्रोक्तो यः पुमान्रघुनन्दन । एनं त्वं तमहंकारं विद्धि शून्याम्बरोत्थितम् ॥ ३ ॥

māyāyantramayaḥ prokto yaḥ pumānraghunandana | enaṃ tvaṃ tamahaṃkāraṃ viddhi śūnyāmbarotthitam || 3 ||

O Raghunandana, the man described as a product of the illusory machine is this ego, know it to be arisen from the empty sky.

हे रघुनन्दन, जो मनुष्य माया यन्त्र का उत्पाद बताया गया है, उसे यह अहंकार समझो, जो शून्य आकाश से उत्पन्न हुआ है।

6.113.4

यस्मिन्नाकाशकोशेऽस्मिन्साधो जगदिदं स्थितम् । तदनन्तमसच्छून्यं सर्गादौ भवति स्वयम् ॥ ४ ॥

yasminnākāśakośe'smin sādho jagadidaṃ sthitam | tadanantamasacchūnyaṃ sargādau bhavati svayam || 4 ||

O virtuous one, in this sheath of space, this universe is situated. That infinite, unreal void exists by itself at the beginning of creation.

हे साधो, इस आकाश के कोश में यह जगत स्थित है। वह अनन्त, असत्य, शून्य स्वयं सृष्टि के आदि में होता है।

6.113.5

अन्तःस्थितसुदुर्लक्ष्यब्रह्म व्योम्नोऽथ शब्दवत् । तस्मादुदेत्यहंकारः पूर्वं स्पन्द इवानिलात् ॥ ५ ॥

antaḥsthitasudurlakṣyabrahma vyomno'tha śabdavat | tasmādudetyahaṃkāraḥ pūrvaṃ spanda ivānilāt || 5 ||

The subtle and difficult-to-perceive Brahman resides within the space, like sound. From that, the ego arises first, like a vibration from the wind.

सूक्ष्म और दुर्लक्ष्य ब्रह्म आकाश में रहता है, जैसे ध्वनि। उससे पहले अहंकार उत्पन्न होता है, जैसे हवा से कंपन।

6.113.6

वृद्धिं यातः स गगने कल्पयत्यात्मतां गतः । अनात्मात्माभिधानेन तेनासौ यतते ततः ॥ ६ ॥

vṛddhiṃ yātaḥ sa gagane kalpayatyātmatāṃ gataḥ | anātmātmābhidhānena tenāsau yatate tataḥ || 6 ||

Having grown, he imagines himself to be the sky. By the designation of non-self as self, he strives for that.

वृद्धि करके, वह आकाश को अपना मानता है। अनात्मा को आत्मा कहकर, वह उसके लिए प्रयास करता है।

6.113.7

अनात्मात्मैकरक्षार्थं देहान्नानाविधानसौ । भूयोभूयो विनाशेऽपि सृजत्याकुलतां गतः ॥ ७ ॥

anātmātmaikarakṣārthaṃ dehānnānāvidhānasau | bhūyobhūyo vināśe'pi sṛjatyākulatāṃ gataḥ || 7 ||

For the sake of protecting the unity of non-self and self, he creates various bodies. Even in repeated destruction, he creates confusion.

अनात्मा और आत्मा की एकता की रक्षा के लिए, वह विभिन्न शरीर बनाता है। बार-बार विनाश होने पर भी, वह भ्रम पैदा करता है।

6.113.8

स एव मायापुरुषो मिथ्यापुरुष एव सः । असदेवोदितो व्यर्थोऽप्यहंकारो हि मायया ॥ ८ ॥

sa eva māyāpuruṣo mithyāpuruṣa eva saḥ | asadevodito vyartho'pyahaṃkāro hi māyayā || 8 ||

He himself is the illusory person, indeed a false person. Born of the unreal, he is useless, yet the ego is indeed due to illusion.

वह स्वयं माया का पुरुष है, वास्तव में एक झूठा पुरुष। असत्य से उत्पन्न, वह व्यर्थ है, फिर भी अहंकार वास्तव में भ्रम के कारण है।

6.113.9

कूपकुण्डचतुःशालकुम्भादीन्देहकानसौ । कृत्वा रक्षित आत्मेति याति तद्व्योम्नि भावनम् ॥ ९ ॥

kūpakuṇḍacatuḥśālakumbhādīndehaakānasau | kṛtvā rakṣita ātmeti yāti tadvyomni bhāvanam || 9 ||

Having made various bodies like wells, ponds, halls, and pots, he protects them thinking they are the self and goes into that state of mind.

कूप, कुंड, चतुःशाला, और कुम्भ जैसे विभिन्न शरीर बनाकर, वह उन्हें आत्मा मानकर उनकी रक्षा करता है और उस मानसिक स्थिति में चला जाता है।

6.113.10

अहंकारस्य तस्यास्य नामानीमानि राघव । श्रृणु यैर्जगदाकारविभ्रमैर्मोहयत्यसौ ॥ १० ॥

ahaṃkārasya tasyāsya nāmānīmāni rāghava | śṛṇu yairjagadākāravibhramairmohayatyasau || 10 ||

O Raghava, listen to the names of that ego, by which it deludes the world with various illusions.

हे रघुवंशी, उस अहंकार के नाम सुनो, जिनसे वह विभिन्न भ्रमों से संसार को मोहित करता है।

6.113.11

जीवो बुद्धिर्मनश्चित्तं माया प्रकृतिरित्यपि । संकल्पः कलना कालः कला चेत्यपि विश्रुतैः ॥ ११ ॥

jīvo buddhirmanshchittaṃ māyā prakṛtirityapi | saṃkalpaḥ kalanā kālaḥ kalā chetyapi viśrutaiḥ || 11 ||

The individual soul, intellect, mind, thought, illusion, nature, and so forth, are known by various names such as resolve, calculation, time, and art.

जीव, बुद्धि, मन, चित्त, माया, प्रकृति आदि को संकल्प, कलना, काल, कला आदि नामों से जाना जाता है।

6.113.12

एवमाद्यैस्तथान्यैश्च नामभिर्बहुतां गतैः । सहस्ररूपोऽहंकारः कल्पितार्थैर्विजृम्भते ॥ १२ ॥

evamādyaistathānyaiścha nāmabhirbahutāṃ gataiḥ | sahasrarūpo'haṃkāraḥ kalpitārthairvijṛmbhate || 12 ||

Thus, with these and other numerous names, the ego, which has a thousand forms, manifests itself with imagined meanings.

इस प्रकार, इन और अन्य अनेक नामों के साथ, हजारों रूपों वाला अहंकार कल्पित अर्थों के साथ प्रकट होता है।

6.113.13

भूताकाशे तते शून्ये जगन्निर्भित्ति निश्चितम् । सुखदुःखान्यनुभवन्मिथ्यैव पुरुषः स्थितः ॥ १३ ॥

bhūtākāśe tate śūnye jagannirbhitti niścitam | sukhaduḥkhānyanubhavanmithyaiva puruṣaḥ sthitaḥ || 13 ||

In the empty space of elements, the world is certainly without support, experiencing happiness and sorrow, the person is indeed falsely situated.

तत्वों के खाली आकाश में, संसार निश्चित रूप से असहाय है, सुख-दुःख का अनुभव करते हुए, व्यक्ति वास्तव में झूठे ढंग से स्थित है।

6.113.14

यथैव मिथ्यापुरुषो रक्षन्व्योमात्मशङ्कया । घटाकाशादिषु क्लिष्ट एवं मा क्लेशवान्भव ॥ १४ ॥

yathaiva mithyāpuruṣo rakṣanvyomātmaśaṅkayā | ghaṭākāśādiṣu kliṣṭa evaṃ mā kleśavānbhava || 14 ||

Just as a false person protects the sky with the doubt of the self, so he is afflicted in the space within a pot and so forth; thus, do not be afflicted.

जैसे एक झूठा व्यक्ति आत्मा के संदेह से आकाश की रक्षा करता है, वैसे ही वह घड़े के अंदर के आकाश में पीड़ित होता है; इस प्रकार, पीड़ित मत हो।

6.113.15

आकाशादपि विस्तीर्णः शुद्धः सूक्ष्मः शिवः शुभः । य आत्मा स कथं केन गृह्यते रक्ष्यतेऽथवा ॥ १५ ॥

ākāśādapi vistīrṇaḥ śuddhaḥ sūkṣmaḥ śivaḥ śubhaḥ | ya ātmā sa kathaṃ kena gṛhyate rakṣyate'thavā || 15 ||

That self, which is more expansive than space, pure, subtle, auspicious, and benevolent, how can it be grasped or protected by anyone?

वह आत्मा, जो आकाश से भी अधिक विस्तृत, शुद्ध, सूक्ष्म, कल्याणकारी और मंगलमय है, किसी द्वारा कैसे ग्रहण किया जा सकता है या सुरक्षित किया जा सकता है?

6.113.16

हृदयाकाशमात्रस्य शरीरक्षयसंक्षये । व्यर्थं भूतानि शोचन्ति नष्ट आत्मेति शङ्कया ॥ १६ ॥

hṛdayākāśamātrasya śarīrakṣayasaṃkṣaye | vyarthaṃ bhūtāni śocanti naṣṭa ātmeti śaṅkayā || 16 ||

When the body, which is merely the space of the heart, decays and perishes, beings mourn in vain, fearing that the self is lost.

जब शरीर, जो केवल हृदय का आकाश है, नष्ट हो जाता है, तब प्राणी व्यर्थ ही शोक करते हैं, सोचते हुए कि आत्मा नष्ट हो गई है।

6.113.17

घटादिषु प्रणष्टेषु यथाकाशाद्यखण्डितम् । तथा देहेषु नष्टेषु देही नित्यमलेपकः ॥ १७ ॥

ghaṭādiṣu praṇaṣṭeṣu yathākāśādyakhāṇḍitam | tathā deheṣu naṣṭeṣu dehī nityamalepakaḥ || 17 ||

Just as the space within pots remains unaffected when the pots are destroyed, similarly, the self remains unaffected when the bodies are destroyed.

जैसे घड़ों के नष्ट होने पर भी उनके अंदर का आकाश अपरिवर्तित रहता है, उसी प्रकार शरीरों के नष्ट होने पर भी आत्मा अपरिवर्तित रहती है।

6.113.18

शुद्धश्चिन्मात्र आत्मायमाकाशादप्यणोरणुः । स्वानुभूत्यंशमात्रं हि खवद्राम न नश्यति ॥ १८ ॥

śuddhaścinmātra ātmāyamākāśādapyṇoraṇuḥ | svānubhūtyaṃśamātraṃ hi khavadrāma na naśyati || 18 ||

This pure consciousness, the self, is subtler than space and the smallest particle. Indeed, it does not perish, just as space does not perish.

यह शुद्ध चेतना, आत्मा, आकाश से भी सूक्ष्म और सबसे छोटे कण से भी छोटी है। निश्चय ही, यह नष्ट नहीं होती, जैसे आकाश नष्ट नहीं होता।

6.113.19

न जायते न म्रियते क्वचित्किंचित्कदाचन । जगद्विवर्तरूपेण केवलं ब्रह्म जृम्भते ॥ १९ ॥

na jāyate na mriyate kvacitkiñcitkadācana | jagadvivartarūpeṇa kevalaṃ brahma jṛmbhate || 19 ||

It is neither born nor dies at any time. It manifests itself in the form of the world.

यह न जन्म लेता है न मरता है, कभी भी किसी भी समय। यह दुनिया के रूप में प्रकट होता है।

6.113.20

सत्यमेकं पदं शान्तमादिमध्यान्तवर्जितम् । भावाभावविनिर्मुक्तमिति मत्वा सुखी भव ॥ २० ॥

satyamekaṃ padaṃ śāntamādimadhyāntavarjitam | bhāvābhāvavinirmuktamiti matvā sukhī bhava || 20 ||

Knowing that the one true state is peaceful, devoid of beginning, middle, and end, and free from existence and non-existence, be happy.

जानकर कि एक सत्य अवस्था शांत है, आदि, मध्य और अंत से रहित है, और अस्तित्व और अनस्तित्व से मुक्त है, सुखी हो जाओ।

6.113.21

सर्वापदां निलयमध्रुवमस्वतन्त्रमासन्नपातमविवेकमनार्यमज्ञम् । बोधादहंकृतिपदं सकलं विमुच्य शेषे सुबद्धपदमुत्तमतां प्रयासि ॥ २१ ॥

sarvāpadāṃ nilayamadhruvamasvatantramāsannapātamavivekamanāryamajñaṃ | bodhādahaṃkṛtipadaṃ sakalaṃ vimucya śeṣe subaddhapadamuttamatāṃ prayāsi || 21 ||

Abandoning all misfortunes, which are transient, dependent, imminent, lacking discernment, ignoble, and ignorant, and renouncing the ego born of knowledge, one attains the supreme state of the well-established.

सभी दुर्भाग्यों को छोड़ देता है, जो अस्थायी, निर्भर, निकट, बुद्धिहीन, अनार्य और अज्ञानी हैं, और ज्ञान से उत्पन्न अहंकार को त्याग देता है, स्थिर अवस्था की उत्तम स्थिति प्राप्त करता है।

Chapter 114

6.114.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । परस्माद्ब्रह्मणः पूर्वं मनः प्रथममुत्थितम् । मननात्मकमाभोगि तत्स्थमेव स्थितिं गतम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | parasmādbrahmaṇaḥ pūrvaṃ manaḥ prathamamutthitam | mananātmakamābhogi tatstham eva sthitiṃ gatam || 1 ||

Vasishtha said: From the Supreme Brahman, the mind first arose, characterized by contemplation, and it remained in that state.

वसिष्ठ ने कहा: परम ब्रह्म से पहले मन उत्पन्न हुआ, जो चिंतन का स्वरूप था, और वह उसी स्थिति में रहा।

6.114.2

पुष्पकोश इवामोदो महोर्मिरिव सागरे । रश्मिजालमिवादित्ये मनो ब्रह्मणि राघव ॥ २ ॥

puṣpakośa ivāmodo mahormiriva sāgare | raśmijālamivāditye mano brahmaṇi rāghava || 2 ||

O Raghava, the mind is like the fragrance in a flower bud, like a great wave in the ocean, and like the network of rays in the sun.

हे रघुवंशी, मन फूल के बीज में सुगंध की तरह है, समुद्र में एक बड़ी लहर की तरह है, और सूर्य में किरणों के जाल की तरह है।

6.114.3

तस्यादृश्यात्मतत्त्वस्य विस्मृत्यैव गतं स्थितिम् । नान्यस्मादागतं राम जगद्रज्जुभुजङ्गवत् ॥ ३ ॥

tasyādṛśyātmatattvasya vismṛtyaiva gataṃ sthitim | nānyasmādāgataṃ rāma jagadrajjubhujagavat || 3 ||

O Rama, the mind, forgetting its own invisible nature, remains in its state. The world is not different from it, just as a snake is not different from a rope.

हे राम, मन, अपनी अदृश्य प्रकृति को भूलकर, अपनी स्थिति में रहता है। संसार इससे अलग नहीं है, जैसे साँप रस्सी से अलग नहीं है।

6.114.4

आदित्यव्यतिरेकेण यो भावयति राघव । रश्मिजालमिदं ह्येतत्तस्यान्यदिव भास्वतः ॥ ४ ॥

ādityavyatirekeṇa yo bhāvayati rāghava | raśmijālamidaṃ hyetattasyānyadiva bhāsvataḥ || 4 ||

O Raghava, one who thinks of the network of rays without the sun, it appears as if it is something different from the luminous sun.

हे रघुवंशी, जो सूर्य के बिना किरणों के जाल के बारे में सोचता है, वह ऐसा लगता है जैसे यह चमकदार सूर्य से अलग है।

6.114.5

कनकव्यतिरेकेण केयूरं येन भावितम् । केयूरमेव तत्तस्य न तस्य कनकं हि तत् ॥ ५ ॥

kanakavyatirekeṇa keyūraṃ yena bhāvitam | keyūrameva tattasya na tasya kanakaṃ hi tat || 5 ||

One who thinks of the armlet without gold, for him, the armlet itself is not gold.

जो बिना सोने के बाजूबंद के बारे में सोचता है, उसके लिए, बाजूबंद खुद सोना नहीं है।

6.114.6

आदित्याव्यतिरेकेण रश्मयो येन भाविताः । आदित्य एव ते तस्य निर्विकल्पः स उच्यते ॥ ६ ॥

ādityāvyatirekeṇa raśmayo yena bhāvitāḥ | āditya eva te tasya nirvikalpaḥ sa ucyate || 6 ||

When the rays are perceived without the sun, it is called the sun itself without distinction.

जब किरणें सूर्य के बिना देखी जाती हैं, तो उसे सूर्य ही कहा जाता है बिना किसी भेद के।

6.114.7

सलिलव्यतिरेकेण तरङ्गो येन भावितः । तरङ्गबुद्धिरेवैका स्थिता तस्य न वारिधीः ॥ ७ ॥

salilavyatirekeṇa taraṅgo yena bhāvitaḥ | taraṅgabuddhirevaikā sthitā tasya na vāridhīḥ || 7 ||

When the wave is perceived without the water, the perception is only of the wave, not of the ocean.

जब लहर पानी के बिना देखी जाती है, तो समझ सिर्फ लहर की होती है, समुद्र की नहीं।

6.114.8

सलिलाव्यतिरेकेण तरङ्गो येन भाव्यते । अम्बुसामान्यताबुद्धिर्निर्विकल्पः स उच्यते ॥ ८ ॥

salilāvyatirekeṇa taraṅgo yena bhāvyate | ambusāmānyatābuddhirnirvikalpaḥ sa ucyate || 8 ||

When the wave is perceived without the water, the perception is of the general nature of water without distinction.

जब लहर पानी के बिना देखी जाती है, तो समझ पानी की सामान्य प्रकृति की होती है, बिना किसी भेद के।

6.114.9

कनकाव्यतिरेकेण केयूरं येन भाव्यते । कनकैकमहाबुद्धिर्निर्विकल्पः स उच्यते ॥ ९ ॥

kanakāvyatirekeṇa keyūraṃ yena bhāvyate | kanakaikamahābuddhirnirvikalpaḥ sa ucyate || 9 ||

When the armlet is perceived without the gold, the perception is of the greatness of gold without distinction.

जब बाजूबंद सोने के बिना देखा जाता है, तो समझ सोने की महानता की होती है, बिना किसी भेद के।

6.114.10

पावकव्यतिरेकेण ज्वालाली येन भाविता । तस्याग्निबुद्धिर्गलति ज्वालाधीरेव तिष्ठति ॥ १० ॥

pāvakavyatirekeṇa jvālālī yena bhāvitā | tasyāgnibuddhirgalati jvālādhīreva tiṣṭhati || 10 ||

When the flame is perceived without the fire, the perception of fire fades away, and only the perception of the flame remains.

जब लौ आग के बिना देखी जाती है, तो आग की समझ धुंधली हो जाती है, और सिर्फ लौ की समझ रह जाती है।

6.114.11

ज्वालाजालाभ्रलेखेव रञ्जिता सा तथा स्थितिः । तामेवास्थां समादत्ते तद्गतान्याकुला मतिः ॥ ११ ॥

jvālājālābhralekheva rañjitā sā tathā sthitiḥ| tāmevāsthāṃ samādatte tadgatānyākulā matiḥ || 11 ||

Just as the sky appears to be colored by the flames of a forest fire, so does the state of the mind become disturbed by the impressions of that state.

जैसे आग की लपटों से आकाश रंगीन दिखता है, वैसे ही मन की स्थिति उस स्थिति के संस्कारों से विचलित हो जाती है।

6.114.12

पावकाव्यतिरेकेण ज्वालाली येन भाव्यते । तस्याग्निबुद्धिरेकास्ति निर्विकल्पः स उच्यते ॥ १२ ॥

pāvakāvyatirekeṇa jvālālī yena bhāvyate| tasyāgnibuddhirekāsti nirvikalpaḥ sa ucyate || 12 ||

Just as a flame is perceived without the presence of fire, so too, there is a single cognition of fire, which is called nirvikalpa.

जैसे आग के बिना भी लपट दिखाई देती है, वैसे ही, एक ही अग्नि का बोध होता है, जिसे निर्विकल्प कहते हैं।

6.114.13

यो निर्विकल्पः सुमहान्सोऽसंक्षीणमहामतिः। प्राप्तव्यं तेन संप्राप्तं नासौ वस्तुषु मज्जति ॥ १३ ॥

yo nirvikalpaḥ sumahānso'saṃkṣīṇamahāmatiḥ| prāptavyaṃ tena saṃprāptaṃ nāsau vastuṣu majjati || 13 ||

That which is nirvikalpa is great and of unlimited intelligence. By it, what is to be attained is attained, and it does not become immersed in objects.

जो निर्विकल्प है, वह महान और असीम बुद्धि वाला है। उससे, जो प्राप्त होना चाहिए, वह प्राप्त होता है, और वह वस्तुओं में डूबता नहीं है।

6.114.14

नानातामखिलां त्यक्त्वा शुद्धचिन्मात्रकोटरे। संवेद्येन विनिर्मुक्ते संवित्तत्त्वे स्थितो भव ॥ १४ ॥

nānātāmakhilāṃ tyaktvā śuddhacinmātrakoṭare| saṃvedyena vinirmukte saṃvittattve sthito bhava || 14 ||

Abandoning all diversity, dwell in the pure consciousness, free from the knowable, and established in the essence of consciousness.

सभी विविधता को त्याग कर, ज्ञेय से मुक्त शुद्ध चेतना के कोटर में रहें, और चेतना के तत्त्व में स्थित हों।

6.114.15

स्वयमेवात्मनैवात्मा शक्तिं संकल्पनामिकाम्। यदा करोति स्फुरता स्पन्दशक्तिमिवानिलः ॥ १५ ॥

svayamevātmanaivātmā śaktiṃ saṃkalpanāmikām| yadā karoti sphuratā spandaśaktimivānilaḥ || 15 ||

When the self, by itself, manifests the power of imagination, it vibrates like the wind.

जब आत्मा, अपने आप, कल्पना की शक्ति को प्रदर्शित करता है, तो वह वायु की तरह स्पंदित होता है।

6.114.16

तदा पृथगिवाभासं संकल्पकलनामयम्। मनो भवति विश्वात्मा भावयन्स्वाकृतिं स्वयम् ॥ १६ ॥

tadā pṛthagivābhāsaṃ saṃkalpakalanāmayam | mano bhavati viśvātmā bhāvayansvākṛtiṃ svayam || 16 ||

Then, the mind, which is the cause of resolutions and calculations, appears distinctly as the universal self, contemplating its own form by itself.

तब, मन, जो संकल्प और गणना का कारण है, विश्वात्मा के रूप में अलग प्रकट होता है, अपनी स्वाकृति को स्वयं ध्यान करता हुआ।

6.114.17

तत्संकल्पात्मकं चेतो यथेदमखिलं जगत्। संकल्पयति संकल्पैस्तथैव भवति क्षणात् ॥ १७ ॥

tatsaṃkalpātmakaṃ ceto yathedamakhilaṃ jagat | saṃkalpayati saṃkalpais tathaiva bhavati kṣaṇāt || 17 ||

That mind, which is the essence of resolutions, just as this entire world, creates through its resolutions, and thus it becomes in an instant.

वह मन, जो संकल्प का सार है, जैसे यह सम्पूर्ण जगत्, अपने संकल्पों से रचता है, और इस प्रकार एक क्षण में हो जाता है।

6.114.18

कीटत्वमब्जजत्वं च मेरुत्वं मरुतां तथा। मनो जीवमहंकारबुद्धिचित्तादिनामकम् ॥ १८ ॥

kīṭatvamabjajatvaṃ ca merutvaṃ marutāṃ tathā | mano jīvamahaṃkārabuddhicitādināmakam || 18 ||

The mind is named as the ego, intellect, and consciousness, which creates the forms of insects, lotuses, mountains, and winds.

मन को अहंकार, बुद्धि और चित्त के नाम से जाना जाता है, जो कीटों, कमलों, पर्वतों और वायु के रूप को रचता है।

6.114.19

संकल्पतो द्वितैकत्वमेत्य चेतो जगत्स्थितिम्। तनोति तस्यां तदनु नानातां गच्छति स्वयम्॥ १९॥

saṃkalpato dvitaiakatvametya ceto jagatsthitim | tanoti tasyāṃ tadanu nānātāṃ gacchati svayam || 19 ||

The mind, through its resolutions, attains duality and unity, and establishes the stability of the world. Following that, it diversifies itself.

मन, अपने संकल्पों के द्वारा, द्वैत और एकता प्राप्त करता है, और जगत् की स्थिति स्थापित करता है। उसके बाद, यह स्वयं को विविधता में बदलता है।

6.114.20

संकल्पमयमेवेदं जगदाभोगि दृश्यते। न सत्यं न च मिथ्यैव स्वप्नजालमिवोत्थितम्॥ २०॥

saṃkalpamayamevedaṃ jagadābhogi dṛśyate | na satyaṃ na ca mithyaiava svapnajālamivotthitam || 20 ||

This world, which is the enjoyer, is seen to be made of resolutions. It is neither true nor false, like a dream-like illusion that has arisen.

यह जगत्, जो भोगी है, संकल्पों से बना दिखाई देता है। यह न तो सत्य है न ही मिथ्या, जैसे कि एक स्वप्न-जैसी माया जो उत्पन्न हुई है।

6.114.21

जन्तोर्यथा मनोराज्यं विविधारम्भभासुरम्। ब्राह्मं तथेदं विततं मनोराज्यं विराजते॥ २१॥

jantoryathā manorājyaṃ vividhārambhabhāsuram | brāhmaṃ tathedaṃ vitatam manorājyaṃ virājate || 21 ||

Just as the mind's kingdom of a living being is resplendent with various endeavors, so too does this Brahman's kingdom shine, spread out as the mind's kingdom.

जैसे जीव के मन का राज्य विविध प्रयासों से प्रकाशमान होता है, वैसे ही यह ब्रह्म का राज्य मन के राज्य के रूप में फैला हुआ चमकता है।

6.114.22

यथाभूतार्थभावित्वात्तदेतत्प्रविलीयते। परमार्थेन दृष्टं चेत्तदिदं नैव किंचन॥ २२॥

yathābhūtārthabhāvitvāttadetatpravilīyate | paramārtheṇa dṛṣṭaṃ cet tadidaṃ naiva kiṃcana || 22 ||

Due to the nature of reality, this dissolves. If it is seen with the ultimate truth, then this is indeed nothing.

वास्तविकता की प्रकृति के कारण, यह विलीन हो जाता है। यदि यह परम सत्य से देखा जाता है, तो यह वास्तव में कुछ नहीं है।

6.114.23

दृश्यं त्वपरमार्थेन प्रयाति शतशाखताम्। जलमूर्मितरङ्गादिकलनार्हं परिस्फुरन्॥ २३॥

dṛśyaṃ tvaparamārtheṇa prayāti śataśākhatām | jalamūrmitarāṅgādikalanārhaṃ parisphuran || 23 ||

The visible, however, with the non-ultimate truth, goes to a hundred branches. Like water with waves and ripples, it shimmers, worthy of agitation.

दृश्य, हालाँकि, परम सत्य के बिना, सौ शाखाओं में जाता है। जैसे पानी में लहरें और तरंगें होती हैं, वैसे ही यह चमकता है, हलचल के योग्य।

6.114.24

यथाम्बुधिर्वपुर्धत्ते स्वभावेन तथा चितः। कुर्वन्कर्मसहस्राणि ह्यणुचित्स्पन्दनादृते॥ २४॥

yathāmbudhirvapurdhatte svabhāvena tathā citaḥ | kurvankarmasahasrāṇi hyaṇucitsandanādṛte || 24 ||

Just as the ocean holds its form by its nature, so does the conscious being, performing thousands of actions, due to the vibration of the atom.

जैसे समुद्र अपने स्वभाव से अपना रूप धारण करता है, वैसे ही चेतन प्राणी, परमाणु की स्पंदन के कारण, हजारों कार्य करता है।

6.114.25

नापूर्वं कुरुते किंचित्किंचिद्भेदमतस्त्यजन्। गच्छन्शृण्वन्स्पृशन्जिघ्रन्वदन्व्यवहरन्स्वपन्॥ २५॥

nāpūrvaṃ kurute kiṃcit kiṃcidbhedamatastyajan | gacchanśṛṇvan spṛśan jighran vadan vyavaharan svapan || 25 ||

It does not do anything new, abandoning some difference from that. Going, hearing, touching, smelling, speaking, behaving, sleeping.

यह कुछ नया नहीं करता, उससे कुछ अंतर छोड़कर। जाना, सुनना, छूना, सूँघना, बोलना, व्यवहार करना, सोना।

6.114.26

नापूर्वं विद्यते किंचित्सत्यमित्येव भावयन्। यद्यत्करोषि तद्विद्धि चिन्मात्रममलं ततम्॥ २६॥

nāpūrvaṃ vidyate kiṃcit satyamityeva bhāvayan | yadyatkaroṣi tadviddhi cinmātramamalaṃ tatam || 26 ||

There is nothing that is not new, knowing this as the truth | Whatever you do, know that it is pure consciousness, untainted and pervasive

कुछ भी ऐसा नहीं है जो नया न हो, इसे सत्य के रूप में समझो | जो भी करते हो, उसे शुद्ध, अमल और व्यापक चेतना के रूप में जानो

6.114.27

ब्रह्म प्रबृंहिताकारं तस्मादन्यन्न विद्यते। पदार्थजाते सर्वस्मिन्संवित्सारमये स्थिते॥ २७॥

brahma prabṛṃhitākāraṃ tasmādanyanna vidyate | padārthajāte sarvasmin saṃvitsāramaye sthite || 27 ||

Brahman is of an expanded form, nothing else exists besides it | In all objects, it is present as the essence of consciousness

ब्रह्म एक विस्तृत रूप है, उसके अलावा कुछ और नहीं है | सभी पदार्थों में, यह चेतना के सार के रूप में मौजूद है

6.114.28

संविदेवेदमखिलं जगन्नान्यास्ति कल्पना। संवित्स्फुरणमात्रेऽस्मिञ्जगज्जालकनामनि॥ २८॥

saṃvidevedamakhilaṃ jagannānyāsti kalpanā | saṃvitsphuraṇamātre'smiñjagajjālakanāmani || 28 ||

Consciousness alone is this entire universe, there is no other imagination | In the mere flickering of consciousness, this world is known by various names

चेतना ही यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड है, कोई और कल्पना नहीं है | चेतना के मात्र स्फुरण में, यह जगत अलग-अलग नामों से जाना जाता है

6.114.29

इदमन्यदिदं चान्यदिति मिथ्याग्रहः कुतः। संभवादखिलाकारेष्वेकस्या एव संविदः। संवेद्यमपि नास्त्येव बन्धमोक्षावतः कथम्॥ २९॥

idamanyadidaṃ cānyaditi mithyāgrahaḥ kutaḥ | saṃbhavādakhilākāreṣvekasyā eva saṃvidaḥ | saṃvedyamapi nāstyeva bandhamokṣāvataḥ katham || 29 ||

How can there be a false notion that this is different and that is different? | Since consciousness alone exists in all forms, how can there be bondage and liberation?

यह भी अलग है और वह भी अलग है, ऐसा गलत विचार कैसे हो सकता है? | चूँकि चेतना ही सभी रूपों में मौजूद है, बंधन और मुक्ति कैसे हो सकते हैं?

6.114.30

मोक्षोऽयमेष खलु बन्ध इति प्रसह्य चिन्तां निरस्य सकलां विफलाभिमानाम्। मौनी वशी विगतमानमदो महात्मा कुर्वन्स्वकार्यमनहंकृतिरेव तिष्ठ ॥ ३० ॥

mokṣo'yameṣa khalu bandha iti prasahya cintāṃ nirasya sakalāṃ viphalaābhimānām | maunī vaśī vigatamānamado mahātmā kurvansvakāryamanahaṃkṛtireva tiṣṭha || 30 ||

This liberation is indeed bondage, forcefully abandon all thoughts of vain pride | Being silent, self-controlled, free from arrogance, the great soul performs his duties without ego

यह मुक्ति वास्तव में बंधन है, सभी व्यर्थ अहंकार के विचारों को जबरन छोड़ दो | मौन, स्वयं नियंत्रित, अहंकार से मुक्त, महात्मा अपने कर्तव्य को अहंकार के बिना करता है

Chapter 115

6.115.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । महाकर्ता महाभोक्ता महात्यागी भवानघ । सर्वाः शङ्काः परित्यज्य धैर्यमालम्ब्य शाश्वतम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mahākartā mahābhoktā mahātyāgī bhavāngha | sarvāḥ śaṅkāḥ parityajya dhairyamālambya śāśvatam || 1 ||

Vasishtha said: Be a great doer, a great enjoyer, and a great renouncer, O sinless one. Abandoning all doubts, take refuge in eternal courage.

वसिष्ठ ने कहा: हे निष्पाप, महान कर्ता, महान भोक्ता और महान त्यागी बनो। सभी शंकाओं को त्यागकर, सनातन धैर्य में आश्रय लो।

6.115.2

श्रीराम उवाच । किमुच्यते महाकर्ता महात्यागी किमुच्यते । किमुच्यते महाभोक्ता सम्यक्कथय मे प्रभो ॥ २ ॥

śrīrāma uvāca | kimucyate mahākartā mahātyāgī kimucyate | kimucyate mahābhoktā samyakkathaya me prabho || 2 ||

Rama said: What is meant by a great doer, a great renouncer, and a great enjoyer? Please explain it to me correctly, O Lord.

राम ने कहा: महान कर्ता, महान त्यागी और महान भोक्ता क्या है? कृपया मुझे ठीक से बताएं, हे प्रभु।

6.115.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतद्व्रतत्रयं राम पुरा चन्द्रार्धमौलिना । भृङ्गीशाय तु संप्रोक्तं येनासौ विज्वरः स्थितः ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etadvratatrayaṃ rāma purā candrārdhamaulinā | bhṛṅgīśāya tu saṃproktaṃ yenāsau vijvaraḥ sthitaḥ || 3 ||

Vasishtha said: O Rama, this triad of vows was previously told to Bhrngi by the one who wears the crescent moon on his head, by which he became free from afflictions.

वसिष्ठ ने कहा: हे राम, यह व्रत त्रय पहले चन्द्रार्धमौलिना (चन्द्रमा के अर्धचंद्र धारण करने वाले) द्वारा भृंगी को बताया गया था, जिससे वह विज्वर (बीमारी से मुक्त) हो गया।

6.115.4

सुमेरावुत्तरे श्रृङ्गे पूर्वं शशिकलाधरः । अतिष्ठदग्निसंकाशे समग्रपरिवारवान् ॥ ४ ॥

sumerāvuttare śṛṅge pūrvaṃ śaśikalādharaḥ | atiṣṭhadagnisaṃkāśe samagraparivāravān || 4 ||

Previously, the one who wears the crescent moon (Lord Shiva) stayed on the northern peak of Mount Meru, surrounded by his entire retinue, shining like fire.

पहले, चन्द्रमा के अर्धचंद्र धारण करने वाले (भगवान शिव) मेरु पर्वत के उत्तरी शिखर पर रहे, अपने पूरे परिवार के साथ, अग्नि के समान चमकते हुए।

6.115.5

तमपृच्छन्महातेजास्तनुविज्ञानवान्स्थितः । भृङ्गीशः प्रणतो राम बद्धाञ्जलिरुमापतिम् ॥ ५ ॥

tamapṛcchannmahātejāstanuvijñānavānsthitaḥ | bhṛṅgīśaḥ praṇato rāma baddhāñjalirumāpatim || 5 ||

O Rama, the greatly radiant Bhrngi, endowed with self-knowledge, stood with folded hands and asked Lord Shiva, the husband of Uma, with reverence.

हे राम, महातेजस्वी भृंगी, जिसमें आत्मज्ञान था, हाथ जोड़कर खड़े होकर उमा के पति भगवान शिव से पूछा।

6.115.6

भृङ्गीश उवाच । भगवन्देवदेवेश सर्वज्ञ परमेश्वर । यदहं परिपृच्छामि कृपया तद्वदाशु मे ॥ ६ ॥

bhṛṅgīśa uvāca | bhagavandevadeveśa sarvajña parameśvara | yadahaṃ paripṛcchāmi kṛpayā tadvadāśu me || 6 ||

Bhringi said: O Lord of the gods, O all-knowing supreme Lord, please tell me what I ask out of compassion.

भृंगी ने कहा: हे देवों के देव, हे सर्वज्ञ परमेश्वर, कृपा करके मेरे प्रश्न का उत्तर दें।

6.115.7

संसाररचनां नाथ तरङ्गतरलामिमाम् । अवलोक्य विमुह्यामि तत्त्वविश्रान्तिवर्जितः ॥ ७ ॥

saṃsāraracanāṃ nātha taraṅgataralāmimām | avalokya vimuhyāmi tattvaviśrāntivarjitaḥ || 7 ||

O Lord, looking at this ever-changing world, I am confused, lacking rest in the ultimate truth.

हे नाथ, इस लहराती हुई संसार रचना को देखकर मैं भ्रमित हूँ, परम सत्य में विश्राम के बिना।

6.115.8

कमन्तर्निश्चयं कान्तमुररीकृत्य सुस्थितम् । अस्मिञ्जगज्जीर्णगृहे तिष्ठामि विगतज्वरम् ॥ ८ ॥

kamantarniścayaṃ kāntamurarīkṛtya susthitam | asmiñjagajjīrṇagṛhe tiṣṭhāmi vigatajvaram || 8 ||

Having made a firm resolution within, I stand steadfast in this decaying world, free from distress.

अंतर में दृढ़ निश्चय करके, मैं इस जीर्ण-शीर्ण जगत में स्थिर खड़ा हूँ, चिंता से मुक्त।

6.115.9

ईश्वर उवाच । सर्वाः शङ्काः परित्यज्य धैर्यमालम्ब्य शाश्वतम् । महाभोक्ता महाकर्ता महात्यागी भवानघ ॥ ९ ॥

īśvara uvāca | sarvāḥ śaṅkāḥ parityajya dhairyamālambya śāśvatam | mahābhoktā mahākartā mahātyāgī bhavānagha || 9 ||

Lord Shiva said: Abandon all doubts, take refuge in eternal patience. Be a great enjoyer, a great doer, and a great renouncer, O sinless one.

भगवान शिव ने कहा: सभी शंकाओं को त्याग दो, शाश्वत धैर्य का आश्रय लो। हे निष्पाप, महान भोगी, महान कर्ता और महान त्यागी बनो।

6.115.10

भृङ्गीश उवाच । किमुच्यते महाकर्ता महाभोक्ता किमुच्यते । किमुच्यते महात्यागी सम्यक्कथय मे प्रभो ॥ १० ॥

bhṛṅgīśa uvāca | kimucyate mahākartā mahābhoktā kimucyate | kimucyate mahātyāgī samyakkathaya me prabho || 10 ||

Bhringi said: What is meant by a great doer, what is meant by a great enjoyer, and what is meant by a great renouncer? Please explain this to me, O Lord.

भृंगी ने कहा: महान कर्ता का क्या अर्थ है, महान भोगी का क्या अर्थ है, और महान त्यागी का क्या अर्थ है? हे प्रभु, कृपया मुझे यह समझाएँ।

6.115.11

ईश्वर उवाच । धर्माधर्मौ महाभाग शङ्काविरहिताक्षयः । यः करोति यथाप्राप्तौ महाकर्ता स उच्यते ॥ ११ ॥

īśvara uvāca | dharmādharmau mahābhāga śaṅkāvirahitākṣayaḥ | yaḥ karoti yathāprāptau mahākartā sa ucyate || 11 ||

The Lord said: One who performs actions without doubt, whether they are virtuous or not, is called a great doer.

ईश्वर ने कहा: जो धर्म और अधर्म के कार्यों को शंका के बिना करता है, वह महान कर्ता कहलाता है।

6.115.12

रागद्वेषौ सुखं दुःखं धर्माधर्मौ फलाफले । यः करोत्यनपेक्षेण महाकर्ता स उच्यते ॥ १२ ॥

rāgadveṣau sukhaṃ duḥkhaṃ dharmādharmau phalāphale | yaḥ karotyanapekṣeṇa mahākartā sa ucyate || 12 ||

One who performs actions without attachment to desire, aversion, pleasure, pain, virtue, vice, or results, is called a great doer.

जो राग, द्वेष, सुख, दुःख, धर्म, अधर्म, और फलों की अपेक्षा के बिना कार्य करता है, वह महान कर्ता कहलाता है।

6.115.13

मौनवान्निरहंभावो निर्मलो मुक्तमत्सरः । यः करोति गतोद्वेगं महाकर्ता स उच्यते ॥ १३ ॥

maunavānnirahaṃbhāvo nirmalo muktamatsaraḥ | yaḥ karoti gatodvegaṃ mahākartā sa ucyate || 13 ||

One who performs actions with silence, humility, purity, and without envy, and who is free from anxiety, is called a great doer.

जो मौन, निरहंकार, निर्मलता, और ईर्ष्या रहित होकर कार्य करता है और जो चिंता से मुक्त है, वह महान कर्ता कहलाता है।

6.115.14

शुभाशुभेषु कार्येषु धर्माधर्मैः कुशङ्कया । मतिर्न लिप्यते यस्य महाकर्ता स उच्यते ॥ १४ ॥

śubhāśubheṣu kāryeṣu dharmādharmaiḥ kuśaṅkayā | matirna lipyate yasya mahākartā sa ucyate || 14 ||

One whose mind is not affected by good or bad actions, virtue or vice, and doubts, is called a great doer.

जिसका मन अच्छे या बुरे कार्यों, धर्म या अधर्म, और शंकाओं से प्रभावित नहीं होता, वह महान कर्ता कहलाता है।

6.115.15

सर्वत्र विगतस्नेहो यः साक्षिवदवस्थितः । निरिच्छं वर्तते कार्ये महाकर्ता स उच्यते ॥ १५ ॥

sarvatra vigatasneho yaḥ sākṣivadavasthitaḥ | niricchaṃ vartate kārye mahākartā sa ucyate || 15 ||

One who is detached from all, stands as a witness, and performs actions without desire, is called a great doer.

जो सबसे अलग है, साक्षी की तरह खड़ा है, और इच्छा के बिना कार्य करता है, वह महान कर्ता कहलाता है।

6.115.16

उद्वेगानन्दरहितः समया स्वच्छया धिया । न शोचते यो नोदेति महाकर्ता स उच्यते ॥ १६ ॥

udvegānandarahitaḥ samayā svacchayā dhiyā | na śocate yo nodeti mahākartā sa ucyate || 16 ||

One who is devoid of anxiety and joy, who is always calm and clear-minded, who does not grieve or rejoice, is called a great doer.

जो उद्वेग और आनंद से रहित है, जो समय और स्वच्छ बुद्धि से युक्त है, जो न शोक करता है न आनंद करता है, वह महाकर्ता कहलाता है।

6.115.17

यथार्थकाले मतिमानसंसक्तमना मुनिः । कार्यानुरूपवृत्तस्थो महाकर्ता स उच्यते ॥ १७ ॥

yathārthakāle matimānasamsktamanā muniḥ | kāryānurūpavṛttastho mahākartā sa ucyate || 17 ||

A wise person who is engaged in the right time, with a mind focused on the task, and who acts according to the nature of the work, is called a great doer.

जो यथार्थ काल में मतिमान, संसक्त मन से मुनि है, जो कार्य के अनुरूप वृत्ति से स्थित है, वह महाकर्ता कहलाता है।

6.115.18

उदासीनः कर्तृतां च कर्माकर्माचरंश्च यः । समं यात्यन्तरत्यन्तं महाकर्ता स उच्यते ॥ १८ ॥

udāsīnaḥ kartṛtāṃ ca karmākarmācaraṃśca yaḥ | samaṃ yātyantaratyantaṃ mahākartā sa ucyate || 18 ||

One who is detached, performs actions without attachment to results, and remains balanced in all situations, is called a great doer.

जो उदासीन है, कर्तृता और कर्माकर्माचरंश करता है, और समं यात्यन्तरत्यन्तं है, वह महाकर्ता कहलाता है।

6.115.19

स्वभावेनैव यः शान्तः समतां न जहाति वै । शुभाशुभं ह्याचरन्यो महाकर्ता स उच्यते ॥ १९ ॥

svabhāvenaiva yaḥ śāntaḥ samatāṃ na jahāti vai | śubhāśubhaṃ hyācaranyo mahākartā sa ucyate || 19 ||

One who is naturally calm and does not abandon equanimity, performing both good and bad deeds, is called a great doer.

जो स्वभाव से शांत है और समता को नहीं छोड़ता, शुभ और अशुभ कर्म करता है, वह महाकर्ता कहलाता है।

6.115.20

जन्मस्थितिविनाशेषु सोदयास्तमयेषु च । सममेव मनो यस्य महाकर्ता स उच्यते ॥ २० ॥

janmasthitivināśeṣu sodayāstamayeṣu ca | samameva mano yasya mahākartā sa ucyate || 20 ||

One whose mind remains balanced in birth, existence, and destruction, as well as in rise and fall, is called a great doer.

जिसका मन जन्म, स्थिति, विनाश, उदय और अस्तमय में समान रहता है, वह महाकर्ता कहलाता है।

6.115.21

न किंचन द्वेष्टि तथा न किंचिदभिकाङ्क्षति । भुङ्क्ते च प्रकृतं सर्वं महाभोक्ता स उच्यते ॥ २१ ॥

na kiṃcana dveṣṭi tathā na kiṃcidabhikāṅkṣati | bhuṅkte ca prakṛtaṃ sarvaṃ mahābhoktā sa ucyate || 21 ||

One who neither hates anything nor desires anything, and who enjoys everything as it is, is called a great enjoyer.

जो किसी चीज से द्वेष नहीं करता और न ही किसी चीज की इच्छा करता है, और जो सब कुछ को प्राकृतिक रूप से भोगता है, उसे महाभोक्ता कहते हैं।

6.115.22

नादत्तेऽप्याददानश्च नाचरत्याचरन्नपि । भुञ्जानोऽपि न यो भुङ्क्ते महाभोक्ता स उच्यते ॥ २२ ॥

nādatte'pyādadānaśca nācaratyācarannapi | bhuñjāno'pi na yo bhuṅkte mahābhoktā sa ucyate || 22 ||

One who does not take even when given, does not follow even when following, and does not enjoy even when enjoying, is called a great enjoyer.

जो दिए जाने पर भी नहीं लेता, अनुसरण करने पर भी नहीं अनुसरण करता, और भोग करने पर भी नहीं भोग करता, उसे महाभोक्ता कहते हैं।

6.115.23

साक्षिवत्सकलं लोकव्यवहारमखिन्नधीः । पश्यत्यपगतेच्छं यो महाभोक्ता स उच्यते ॥ २३ ॥

sākṣivatsakalaṃ lokavyavahāramakhinnadhīḥ | paśyatyapagatecchaṃ yo mahābhoktā sa ucyate || 23 ||

One who witnesses all worldly activities with an untroubled mind and without any desire, is called a great enjoyer.

जो अपने मन को उदासीन रखते हुए सभी लोक व्यवहारों को देखता है और जिसकी कोई इच्छा नहीं होती, उसे महाभोक्ता कहते हैं।

6.115.24

सुखैर्दुःखैः क्रियायोगैर्भावाभावैर्भ्रमप्रदैः । यस्य नोत्क्रामति मतिर्महाभोक्ता स उच्यते ॥ २४ ॥

sukhairduḥkhaiḥ kriyāyogairbhāvābhāvairbhramapradaiḥ | yasya notkrāmati matirmahābhoktā sa ucyate || 24 ||

One whose mind does not waver due to happiness, sorrow, actions, presence or absence, or delusions, is called a great enjoyer.

जिसका मन सुख, दुःख, क्रियाओं, उपस्थिति या अनुपस्थिति, या भ्रमों से विचलित नहीं होता, उसे महाभोक्ता कहते हैं।

6.115.25

जरा मरणमापच्च राज्ये दारिद्र्यमेव च । रम्यमित्येव यो वेत्ति महाभोक्ता स उच्यते ॥ २५ ॥

jarā maraṇamāpacca rājye dāridryameva ca | ramyamityeva yo vetti mahābhoktā sa ucyate || 25 ||

One who considers old age, death, kingdom, and poverty as delightful, is called a great enjoyer.

जो बुढ़ापा, मृत्यु, राज्य, और गरीबी को रमणीय मानता है, उसे महाभोक्ता कहते हैं।

6.115.26

महान्ति सुखदुःखानि यः पयांसीव सागरः । समं समुपगृह्णाति महाभोक्ता स उच्यते ॥ २६ ॥

mahānti sukhaduḥkhāni yaḥ payāṃsīva sāgaraḥ| samaṃ samupagṛhṇāti mahābhoktā sa ucyate || 26 ||

One who accepts great happiness and sorrow equally, like the ocean accepts rivers, is called a great enjoyer.

जो महान सुख-दुःख को समान रूप से स्वीकार करता है, जैसे सागर नदियों को स्वीकार करता है, वह महाभोक्ता कहलाता है।

6.115.27

अहिंसा समता तुष्टिश्चन्द्रबिम्बादिवांशवः । नोप यस्माच्चोपयाता महाभोक्ता स उच्यते ॥ २७ ॥

ahiṃsā samatā tuṣṭiścandrabimbādivāṃśavaḥ| nopa yasmāccopayātā mahābhoktā sa ucyate || 27 ||

One who is non-violent, equanimous, and content, and from whom these qualities never depart, is called a great enjoyer.

जो अहिंसा, समता और संतोष से युक्त है, और जिससे ये गुण कभी नहीं छूटते, वह महाभोक्ता कहलाता है।

6.115.28

कट्वम्ललवणं तिक्तममृष्टं मृष्टमुत्तमम् । अधमं योऽत्ति साम्येन महाभोक्ता स उच्यते ॥ २८ ॥

kaṭvamlamalaṇaṃ tiktamamṛṣṭaṃ mṛṣṭamuttamam| adhamaṃ yo'tti sāmyena mahābhoktā sa ucyate || 28 ||

One who eats bitter, sour, salty, pungent, unpalatable, palatable, and excellent foods with equanimity is called a great enjoyer.

जो कड़वा, खट्टा, नमकीन, तीखा, बेस्वाद, स्वादिष्ट और उत्तम भोजन को समान भाव से खाता है, वह महाभोक्ता कहलाता है।

6.115.29

सरसं नीरसं चैव सुरतं विरतं तथा । यः पश्यति समं सौम्यो महाभोक्ता स उच्यते ॥ २९ ॥

sarasaṃ nīrasaṃ caiva surataṃ virataṃ tathā| yaḥ paśyati samaṃ saumyo mahābhoktā sa ucyate || 29 ||

One who views both the pleasant and the unpleasant, the enjoyable and the non-enjoyable, with equanimity is called a great enjoyer.

जो सुखद और दुःखद, भोग्य और अभोग्य, को समान भाव से देखता है, वह महाभोक्ता कहलाता है।

6.115.30

क्षारे खण्डप्रकारे च शुभे वाप्यशुभे तथा। समता सुस्थिरा यस्य महाभोक्ता स उच्यते॥ ३०॥

kṣāre khaṇḍaprakāre ca śubhe vāpyaśubhe tathā| samatā susthirā yasya mahābhoktā sa ucyate || 30 ||

One whose equanimity is steady in both good and bad, in fragmented and whole, is called a great enjoyer.

जिसकी समता अच्छे और बुरे, टूटे-फूटे और पूर्ण में स्थिर है, वह महाभोक्ता कहलाता है।

6.115.31

इदं भोज्यमभोज्यं चेत्येवं त्यक्त्वा विकल्पितम्। गताभिलाषं यो भुङ्क्ते महाभोक्ता स उच्यते॥ ३१॥

idaṃ bhojyamabhojyaṃ cetyevaṃ tyaktvā vikalpitam | gatābhilāṣaṃ yo bhuṅkte mahābhoktā sa ucyate || 31 ||

One who eats, having abandoned the distinction between what is edible and what is not, and who has no desires, is called a great eater.

जो खाने योग्य और अयोग्य का भेद छोड़कर, और जिसकी कोई इच्छा नहीं है, वह महाभोक्ता कहलाता है।

6.115.32

आपदं संपदं मोहमानन्दमपरं परम्। यो भुङ्क्ते समया बुद्ध्या महाभोक्ता स उच्यते॥ ३२॥

āpadaṃ saṃpadaṃ mohamānandamaparaṃ param | yo bhuṅkte samayā buddhyā mahābhoktā sa ucyate || 32 ||

One who consumes both adversity and prosperity, delusion and bliss, and other such experiences with equanimity and wisdom is called a great eater.

जो संकट और समृद्धि, मोह और आनंद, और अन्य ऐसे अनुभवों को समता और बुद्धि से खाता है, वह महाभोक्ता कहलाता है।

6.115.33

धर्माधर्मौ सुखं दुःखं तथा मरणजन्मनी। धिया येनेति संत्यक्तं महात्यागी स उच्यते॥ ३३॥

dharmādharmau sukhaṃ duḥkhaṃ tathā maraṇajanmanī | dhiyā yeneti saṃtyaktaṃ mahātyāgī sa ucyate || 33 ||

One who has renounced the concepts of virtue and vice, pleasure and pain, and even life and death with the intellect is called a great renouncer.

जो पुण्य और पाप, सुख और दुःख, और जन्म और मृत्यु के विचारों को बुद्धि से त्याग देता है, वह महात्यागी कहलाता है।

6.115.34

सर्वेच्छाः सकलाः शङ्काः सर्वेहाः सर्वनिश्चयाः। धिया येन परित्यक्ता महात्यागी स उच्यते॥ ३४॥

sarvecchāḥ sakalāḥ śaṅkāḥ sarvehāḥ sarvaniścayāḥ | dhiyā yena parityaktā mahātyāgī sa ucyate || 34 ||

One who has renounced all desires, doubts, aspirations, and resolutions with the intellect is called a great renouncer.

जो सभी इच्छाओं, शंकाओं, अभिलाषाओं और निश्चयों को बुद्धि से त्याग देता है, वह महात्यागी कहलाता है।

6.115.35

देहस्य मनसो दुःखैरिन्द्रियाणां मनःस्थितेः। नूनं येनोज्झिता सत्ता महात्यागी स उच्यते॥ ३५॥

dehasya manaso duḥkhairindriyāṇāṃ manaḥsthitēḥ | nūnaṃ yenojjhitā sattā mahātyāgī sa ucyate || 35 ||

One who has abandoned the existence of the body, mind, and senses, along with their sufferings, is called a great renouncer.

जो शरीर, मन, और इन्द्रियों के दुःखों सहित उनकी सत्ता को त्याग देता है, वह महात्यागी कहलाता है।

6.115.36

न मे देहो न जन्मापि युक्तायुक्ते न कर्मणी । इति निश्चयवानन्तर्महात्यागी स उच्यते ॥ ३६ ॥

na me deho na janmāpi yuktāyukte na karmaṇī | iti niścayavānantarmahātyāgī sa ucyate || 36 ||

I have no body, no birth, no right or wrong actions. One who is firmly convinced of this is called a great renunciate.

मेरा कोई शरीर नहीं है, कोई जन्म नहीं है, कोई शुभ या अशुभ कर्म नहीं है। जो इस बात का दृढ़ विश्वास रखता है, वह महात्यागी कहलाता है।

6.115.37

येन धर्ममधर्मं च मनोमननमीहितम् । सर्वमन्तः परित्यक्तं महात्यागी स उच्यते ॥ ३७ ॥

yena dharmamadharmaṃ ca manomananamīhitam | sarvamantaḥ parityaktaṃ mahātyāgī sa ucyate || 37 ||

By whom dharma and adharma, and all mental deliberations are completely abandoned, he is called a great renunciate.

जिसने धर्म और अधर्म, और सभी मानसिक विचारों को पूर्ण रूप से त्याग दिया है, वह महात्यागी कहलाता है।

6.115.38

यावती दृश्यकलना सकलेयं विलोक्यते । सा येन सुष्ठु संत्यक्ता महात्यागी स उच्यते ॥ ३८ ॥

yāvatī dṛśyakalanā sakaleyaṃ vilokyate | sā yena suṣṭhu saṃtyaktā mahātyāgī sa ucyate || 38 ||

Whatever is seen in this world, he who has completely renounced it is called a great renunciate.

जो कुछ भी इस संसार में दिखाई देता है, जिसने उसे पूर्ण रूप से त्याग दिया है, वह महात्यागी कहलाता है।

6.115.39

इत्युक्तं देवदेवेन भृङ्गीशाय पुरानघ । एतां दृष्टिमवष्टभ्य तिष्ठ राम गतज्वरः ॥ ३९ ॥

ityuktaṃ devadevena bhṛṅgīśāya purānagha | etāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya tiṣṭha rāma gatajvaraḥ || 39 ||

Thus spoken by the Lord of the gods to Bhrngisha, O sinless one, abide by this vision, O Rama, free from fever.

इस प्रकार देवाधिदेव ने भृंगीश से कहा, हे निष्पाप! इस दृष्टि को धारण कर, हे राम! ज्वरमुक्त होकर स्थित रहो।

6.115.40

नित्योदितं विमलरूपमनन्तमाद्यं ब्रह्मास्ति नेतरकलाकलनं हि किंचित् । इत्येव भावय निरञ्जनतामुपेतो निर्वाणमेहि सकलामलशान्तवृत्तिः ॥ ४० ॥

nityoditaṃ vimalarūpamanantamādyaṃ brahmāsti netarakalākalaṇaṃ hi kiñcit | ityeva bhāvaya nirañjanatāmupeto nirvāṇamehi sakalāmalśāntavṛttiḥ || 40 ||

Meditate on the eternal, pure, formless, infinite, and primordial Brahman, which is the only reality, free from any other manifestations. Thus, attain the state of purity and achieve liberation, free from all impurities and peaceful in nature.

नित्य, शुद्ध, निराकार, अनंत और आदिम ब्रह्म पर ध्यान करो, जो एकमात्र वास्तविकता है, जिसमें कोई अन्य रूप नहीं है। इस प्रकार, शुद्धता की अवस्था को प्राप्त करो और सभी दोषों से मुक्त और शांत स्वभाव वाले मुक्ति को प्राप्त करो।

6.115.41

अनामयं ब्रह्म समस्तकल्प कार्यैकबीजं परमात्मरूपम् । बृहच्च तद्ब्रंहितसर्वभावं खमस्ति भातीह यदङ्ग किंचित् ॥ ४१ ॥

anāmayaṃ brahma samastakalpa kāryaikabījaṃ paramātmarūpam | bṛhacca tadbraṃhitasarvabhāvaṃ khamasti bhātīha yadaṅga kiṃcit || 41 ||

Brahman, the flawless, is the seed of all actions and the form of the Supreme Self. That vast Brahman, which is the cause of all beings, is the space that appears here as everything.

ब्रह्म, जो दोषरहित है, सभी कार्यों का बीज और परमात्मा का रूप है। वह विशाल ब्रह्म, जो सभी भावों का कारण है, वह अंतरिक्ष है जो यहाँ हर चीज के रूप में प्रकट होता है।

6.115.42

अन्यत्क्वचित्किंचिदिदं कदाचिन्न संभवत्येव सदप्यसच्च । इत्येव साधो दृढनिश्चयोऽन्तः स्थित्वा गताशङ्कविलासमास्स्व ॥ ४२ ॥

anyatkvacitkiṃcididaṃ kadācinnna saṃbhavatyeva sadapyasacc | ityeva sādho dṛḍhaniścayo'ntaḥ sthitvā gatāśaṅkavilāsamāssva || 42 ||

Nothing else exists anywhere at any time, whether real or unreal. Therefore, O virtuous one, be firmly convinced of this and live without doubt or anxiety.

कहीं भी, कभी भी, कुछ भी अस्तित्व में नहीं है, चाहे वह सत्य हो या असत्य। इसलिए, हे साधु, इस बात का दृढ़ विश्वास करो और संदेह या चिंता के बिना जीवन व्यतीत करो।

6.115.43

अन्तर्मुखः सन्सतं समस्तं कुर्वन्बहिष्ठं खलु कार्यजातम् । न खेदमायासि कदाचिदेव निराकृताहंकृतितामुपैषि ॥ ४३ ॥

antarmukhaḥ sansataṃ samastaṃ kurvanbahiṣṭhaṃ khalu kāryajātam | na khedamāyāsi kadācideva nirākṛtāhaṃkṛtitāmupaiṣi || 43 ||

Being inward-focused, always performing all actions externally, indeed you do not feel tired at any time. You attain a state free from ego.

अंतर्मुख होकर, हमेशा सभी कार्यों को बाहरी रूप से करते हुए, आप कभी भी थके नहीं हैं। आप एक अहंकार-मुक्त अवस्था को प्राप्त करते हैं।

Chapter 116

6.116.1

श्रीराम उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ चित्तेऽहंकारनामनि । गलिते वा गलद्रूपे लिङ्गं सत्त्वस्य किं भवेत् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansarvadharmajña cittē'haṃkāranāmani | galite vā galadrūpe liṅgaṃ sattvasya kiṃ bhavet || 1 ||

Shri Ram said: O Lord, knower of all dharmas, what happens to the characteristic of the mind when the ego dissolves or its form melts?

श्री राम ने कहा: हे भगवन्, सभी धर्मों के ज्ञाता, जब अहंकार घुल जाता है या उसका रूप घुल जाता है, तब मन के लक्षण क्या होते हैं?

6.116.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । बलादपि हि संजाता न लिम्पन्त्याशयं सितम् । लोभमोहादयो दोषाः पयांसीव सरोरुहम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | balādapi hi saṃjātā na limpantyāśayaṃ sitam | lobhamohādayo doṣāḥ payāṃsīva saroruhama || 2 ||

Vasishtha said: Even if they are born forcefully, defects like greed and delusion do not tarnish the pure mind, just as water does not stain a lotus leaf.

वसिष्ठ ने कहा: भले ही वे बलपूर्वक उत्पन्न हों, लोभ और मोह जैसे दोष शुद्ध मन को नहीं दूषित करते, जैसे जल कमल के पत्ते को नहीं दागता।

6.116.3

मुदिताद्याः श्रियो वक्रं न मुञ्चन्ति कदाचन । गलत्यहंकारमये चित्ते गलति दुष्कृते ॥ ३ ॥

muditādyāḥ śriyo vakraṃ na muñcanti kadācana | galatyahaṃkāramaye cittē galati duṣkṛtē || 3 ||

Joy and other virtues do not abandon the mind even when the ego dissolves or when it is tainted by evil deeds.

आनंद और अन्य गुण मन को छोड़ते नहीं हैं, भले ही अहंकार घुल जाए या बुरे कर्मों से दूषित हो जाए।

6.116.4

वासनाग्रन्थयश्छिन्ना इव त्रुट्यन्त्यलं शनैः । कोपस्तानवमायाति मोहो मान्द्यं हि गच्छति ॥ ४ ॥

vāsanāgranthayaśchinnā iva truṭyantyalam śanaiḥ | kopastānavamāyāti moho māndyaṃ hi gacchati || 4 ||

The knots of desires are cut as if they are breaking gradually. Anger diminishes, and delusion turns into dullness.

इच्छाओं के गाँठ कट जाते हैं जैसे वे धीरे-धीरे टूट रहे हों। क्रोध कम हो जाता है, और मोह मंदता में बदल जाता है।

6.116.5

कामः क्लमं गच्छति च लोभः क्वापि पलायते । नोल्लसन्तीन्द्रियाण्युच्चैः खेदः स्फुरति नोच्चकैः ॥ ५ ॥

kāmaḥ klamam gacchati ca lobhaḥ kvāpi palāyate | nollasantīndriyāṇyuccaiḥ khedaḥ sphurati noccakaiḥ || 5 ||

Desire turns into fatigue, and greed disappears somewhere. The senses do not rejoice excessively, and sorrow does not manifest intensely.

कामना थकान में बदल जाती है, और लोभ कहीं गायब हो जाता है। इंद्रियाँ अधिक नहीं खुश होती हैं, और दुःख अधिक प्रकट नहीं होता।

6.116.6

न दुःखान्यपब्रंहन्ति न वल्गन्ति सुखानि च । सर्वत्र समतोदेति हृदि शैत्यप्रदायिनी ॥ ६ ॥

na duḥkhānyapabraṃhanti na valganti sukhāni ca | sarvatra samatodeti hṛdi śaityapradāyinī || 6 ||

Neither sorrows overwhelm nor pleasures entice | Equanimity arises in the heart, bringing coolness || 6 ||

न दुःख ओढ़ते हैं न सुख लुभाते हैं | सब जगह समता उत्पन्न होती है, हृदय में शीतलता देने वाली || ६ ||

6.116.7

सुखदुःखादयस्त्वेते दृश्यन्ते यदि वा मुखे । दृश्यन्त एव तुच्छत्वान्नानुलिम्पन्ति ते मनः ॥ ७ ॥

sukhaduḥkhādayaste dṛśyante yadi vā mukhe | dṛśyante eva tucchatvānnānulimpati te manaḥ || 7 ||

Pleasures and sorrows may appear on the face | But they are seen as insignificant, they do not taint the mind || 7 ||

सुख-दुःख आदि यदि मुख पर दिखाई देते हैं | पर वे तुच्छ होने के कारण दिखाई देते हैं, वे मन को लिपटाते नहीं || ७ ||

6.116.8

चित्ते गलति गीर्वाणगणस्य स्पृहणीयताम् । साधुर्गच्छत्युदेत्यस्य समता शीतचन्द्रिका ॥ ८ ॥

citte galati gīrvāṇagaṇasya spṛhaṇīyatām | sādhurgacchatyudetyasya samatā śītacandrikā || 8 ||

In the mind, the desire for the praise of the learned fades away | The virtuous one attains equanimity, like the cool moonlight || 8 ||

मन में, विद्वानों की प्रशंसा की इच्छा गलती जाती है | साधु पुरुष समता प्राप्त करता है, जैसे ठंडी चाँदनी || ८ ||

6.116.9

उपशान्तं च कान्तं च सेव्यमप्रतिरोधि च । निभृतं चोर्जितं स्वच्छं वहतीत्थं महद्वपुः ॥ ९ ॥

upaśāntaṃ ca kāntaṃ ca sevyamapratirodhi ca | nibhṛtaṃ corjitaṃ svacchaṃ vahatītthaṃ mahadvapuḥ || 9 ||

That which is peaceful, beautiful, worthy of service, non-obstructive | Secluded, powerful, pure, carries such a great form || 9 ||

जो शांत, सुंदर, सेवा योग्य, अवरोधक नहीं है | एकांत, शक्तिशाली, शुद्ध, ऐसा महान रूप धारण करता है || ९ ||

6.116.10

भावाभावविरुद्धोऽपि विचित्रोऽपि महानपि । नानन्दाय न खेदाय सतां संसृतिविभ्रमः ॥ १० ॥

bhāvābhāvaviruddho'pi vicitro'pi mahānapi | nānandāya na khedāya satāṃ saṃsṛtivibhramaḥ || 10 ||

Though contradictory in existence and non-existence, varied, and great | It is neither for joy nor for sorrow, the delusion of the wise in transmigration || 10 ||

अस्तित्व और अनस्तित्व में विरोधी, विविध, और महान होने पर भी | यह न आनंद के लिए है न दुःख के लिए, ज्ञानियों का परिवर्तन में भ्रम || १० ||

6.116.11

बुद्ध्यालोकेन साध्येऽस्मिन्वस्तुन्यस्तमितापदि । प्रवर्तते न यो मोहात्तं धिगस्तु नराधमम् ॥ ११ ॥

buddhyālokena sādhye'sminvastunyastamitāpadi | pravartate na yo mohāttad dhigastu narādhamam || 11 ||

In this world, which is achievable through the light of wisdom, where all desires are fulfilled, one who does not act due to delusion is indeed the lowest of men.

इस दुनिया में, जो बुद्धि के प्रकाश से प्राप्त हो सकती है, जहाँ सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं, जो मोह के कारण काम नहीं करता, वह सबसे निम्न मनुष्य है।

6.116.12

विश्रान्तिमाप्तुमुचितां चिरमंग दुःखरत्नाकरं जननसागरमुत्तितीर्षोः । कोऽहं कथं जगदिदं च परं च किं स्यात्किं भोगकैरिति मतिः परमोऽभ्युपायः ॥ १२ ॥

viśrāntimāptumucitāṃ ciramaṅga duḥkharatnākaraṃ jananasāgaramuttitīrṣoḥ | ko'haṃ kathaṃ jagadidaṃ ca paraṃ ca kiṃ syātkim bhogakairiti matiḥ paramo'bhyupāyaḥ || 12 ||

To attain the appropriate rest after a long time, to cross the ocean of birth which is a mine of sorrows, one should contemplate: Who am I? How is this world? What is the supreme reality? What is the purpose of enjoyment? This is the supreme means.

लंबे समय के बाद उचित विश्राम प्राप्त करने के लिए, दुःखों की खान जन्म के सागर को पार करने के लिए, एक व्यक्ति को सोचना चाहिए: मैं कौन हूँ? यह दुनिया कैसे है? परम वास्तविकता क्या है? भोग का उद्देश्य क्या है? यह सर्वोच्च उपाय है।

Chapter 117

6.117.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । भवतामादिपुरुष इक्ष्वाकुर्नाम भूपतिः । इक्ष्वाकुवंशप्रभव यथा मुक्तस्तथा श्रृणु ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | bhavatāmādipuruṣa ikṣvākurnāma bhūpatiḥ | ikṣvākuvaṃśaprabhava yathā muktaḥ tathā śṛṇu || 1 ||

Vasishtha said: Listen to how Ikshvaku, the first king of your lineage, was liberated.

वसिष्ठ ने कहा: सुनो, कैसे इक्ष्वाकु, तुम्हारे वंश का प्रथम राजा, मुक्त हुआ।

6.117.2

इक्ष्वाकुर्नाम भूपालः स्वराज्यं परिपालयन् । कदाचिदेकान्तगतो मनसा समचिन्तयत् ॥ २ ॥

ikṣvākurnāma bhūpālaḥ svarājyaṃ paripālayan | kadācidekāntagato manasā samacintayat || 2 ||

King Ikshvaku, while ruling his kingdom, once went to a secluded place and contemplated with his mind.

राजा इक्ष्वाकु अपने राज्य का शासन करते हुए, एक बार एकांत में चले गए और मन से सोचने लगे।

6.117.3

जरामरणसंक्षोभसुखदुःखभ्रमस्थितेः । अस्य दृश्यप्रपञ्चस्य को हेतुः स्यादिति स्वयम् ॥ ३ ॥

jarāmaraṇasaṃkṣobhasukhaduḥkhabhramasthiteḥ | asya dṛśyaprapañcasya ko hetuḥ syāditi svayam || 3 ||

He wondered, 'What could be the cause of this visible universe, which is filled with the agitations of old age, death, happiness, and sorrow?'

उन्होंने सोचा, 'इस दृश्य प्रपंच का कारण क्या हो सकता है, जो बुढ़ापे, मृत्यु, सुख और दुःख से भरा हुआ है?'

6.117.4

जगतो न विवेदासौ कारणं चिन्तयन्नपि । अथैकदा पृच्छदसौ ब्रह्मलोकागतं मनुम् ॥ ४ ॥

jagato na vivedāsau kāraṇaṃ cintayannapi | athaikadā pṛcchadasau brahmalokāgataṃ manum || 4 ||

Though he could not understand the cause of the world, he once asked Manu, who had come from Brahmaloka.

यद्यपि उन्होंने जगत के कारण को नहीं समझा, फिर भी एक बार उन्होंने ब्रह्मलोक से आए मनु से पूछा।

6.117.5

पूजितं स्वसभासंस्थं भगवन्तं प्रजापतिम् । इक्ष्वाकुरुवाच । मां योजयति धार्ष्ट्येन भगवन्करुणानिधे ॥ ५ ॥

pūjitaṃ svasabhāsaṃsthaṃ bhagavantaṃ prajāpatim | ikṣvākuruvāca | māṃ yojayati dhārṣṭyena bhagavankaruṇānidhe || 5 ||

Ikshvaku said: O Lord, full of compassion, you have honored me by your presence in my assembly. Please enlighten me with your wisdom.

इक्ष्वाकु ने कहा: हे भगवान, दया के भंडार, आपने मेरी सभा में अपनी उपस्थिति से मुझे सम्मानित किया है। कृपया मुझे अपनी बुद्धिमत्ता से प्रकाशित करें।

6.117.6

भवत्प्रसाद एवायं भवन्तं प्रष्टुमञ्जसा । कुतः सर्गोऽयमायातः स्वरूपं चास्य कीदृशम् ॥ ६ ॥

bhava tpra sāda evāyaṃ bhavantaṃ praṣṭumañjasā | kutaḥ sargo'yamāyātaḥ svarūpaṃ cāsya kīdṛśam || 6 ||

By your grace alone, I am able to ask you without hesitation: From where has this creation come, and what is its nature?

आपकी कृपा से ही मैं बिना किसी हिचकिचाहट के आपसे पूछ सकता हूँ: यह सृष्टि कहाँ से आई है और इसका स्वरूप कैसा है?

6.117.7

कियदेतज्जगत्कस्य कदा केनेति कथ्यते । अहं कथं च विषमादस्मात्संसृतिविभ्रमात् ॥ ७ ॥

kiyadetajjagatkasya kadā kene'ti kathyate | ahaṃ kathaṃ ca viṣamādasmātsaṃsṛtivibhramāt || 7 ||

How much is this world, to whom does it belong, when and by whom is it said? And how can I be freed from this confusing cycle of transmigration?

यह जगत कितना है, किसका है, कब और किसने कहा है? और मैं इस उलझन भरे संसार चक्र से कैसे मुक्त हो सकता हूँ?

6.117.8

विमुच्येय घनास्तीर्णाज्जालादिव विहंगमः । मनुरुवाच । अहो नु चिरकालेन विवेके सुविकासिनि ॥ ८ ॥

vimucyeya ghanāstīrṇājjālādiva vihaṅgamaḥ | manuruvāca | aho nu cirakālena viveke suvikāsini || 8 ||

How can I be freed like a bird from a tightly woven net? Manu said: Indeed, after a long time, discrimination has blossomed.

मैं कैसे एक पक्षी की तरह एक कसे हुए जाल से मुक्त हो सकता हूँ? मनु ने कहा: वास्तव में, लंबे समय के बाद, विवेक खिल गया है।

6.117.9

यदिदं दृश्यते किंचित्तन्नास्ति नृप किंचन । यथा गन्धर्वनगरं यथा वारि मरुस्थले ॥ ९ ॥

yadidaṃ dṛśyate kiñcit tannāsti nṛpa kiñcana | yathā gandharvanagaraṃ yathā vāri marusthale || 9 ||

Whatever is seen here is not real, O king, just like a mirage city or water in a desert.

जो कुछ भी यहाँ दिखाई देता है, वह वास्तव में नहीं है, हे राजा, जैसे एक मृगतृष्णा नगर या रेगिस्तान में पानी।

6.117.10

यत्तु नो दृश्यते किंचित्तन्न किंचिदिव स्थितम् ॥ १० ॥

yattu no dṛśyate kiñcit tanna kiñcidiva sthitam || 10 ||

That which is not seen is as if it does not exist.

जो नहीं दिखाई देता, वह मानो अस्तित्व में नहीं है।

6.117.11

मनःषष्ठेन्द्रियातीतं यत्स्यादपि न किंचन । अविनाशं तदस्तीह तत्सदात्मेति कथ्यते ॥ ११ ॥

manaḥṣaṣṭhendriyātītaṃ yatsyādapi na kiṃcana | avināśaṃ tadastīha tatsadātmeti kathyate || 11 ||

That which is beyond the mind and senses, even if it seems to be nothing, is indestructible and exists here. It is called the eternal self.

जो मन और इन्द्रियों से परे है, चाहे वह कुछ न लगे, वह अविनाशी है और यहाँ मौजूद है। उसे सनातन आत्मा कहते हैं।

6.117.12

इयं तु सर्वदृश्याढ्या राजन्सर्गपरंपरा । तस्मिन्नेव महादर्शे प्रतिबिम्बमुपागता ॥ १२ ॥

iyam tu sarvadṛśyāḍhyā rājansargaparaṃparā | tasmineva mahādarśe pratibimbamupāgatā || 12 ||

O King, this entire series of creations is filled with all visible objects. It is a reflection in that great mirror.

हे राजन्, यह सम्पूर्ण सृष्टि की श्रृंखला सभी दृश्य वस्तुओं से भरी हुई है। यह उस महान दर्पण में प्रतिबिम्ब है।

6.117.13

भाः स्वभावसमुत्पन्ना ब्रह्मस्फुरणशक्तयः । काश्चिद्ब्रह्माण्डतां यान्ति काश्चिद्गच्छन्ति भूतताम् ॥ १३ ॥

bhāḥ svabhāvasamutpannā brahmasphuraṇaśaktayaḥ | kāścibbrahmāṇḍatāṃ yānti kāścigacchanti bhūtatām || 13 ||

The rays that arise from the nature of Brahman's vibration, some attain the state of the cosmic egg, while others become elements.

ब्रह्म के स्पंदन की शक्तियाँ जो स्वभाव से उत्पन्न होती हैं, कुछ ब्रह्माण्ड की स्थिति को प्राप्त होती हैं, और कुछ भूतों की स्थिति को प्राप्त होती हैं।

6.117.14

अन्यास्त्वन्यत्वमायान्ति भवत्येवं जगत्स्थितिः । न बन्धोऽस्ति न मोक्षोऽस्ति ब्रह्मैवास्ति निरामयम् । नैकमस्ति न च द्वित्वं संवित्सारं विजृम्भते ॥ १४ ॥

anyāstvananyatvamāyānti bhavatyevaṃ jagatsthitiḥ | na bandho'sti na mokṣo'sti brahmaivāsti nirāmayam | naikamasti na ca dvitvaṃ saṃvitsāraṃ vijṛmbhate || 14 ||

Others attain different states, and thus the world exists. There is no bondage, no liberation, only the flawless Brahman exists. There is neither one nor two, the essence of consciousness shines forth.

अन्य अलग स्थितियों को प्राप्त होते हैं, और इस प्रकार संसार का अस्तित्व होता है। न बंधन है, न मुक्ति, केवल दोषरहित ब्रह्म ही है। न एक है, न दो, चेतना का सार प्रकट होता है।

6.117.15

एकं यथा स्फुरति वारि तरङ्गभङ्गैरेवं परिस्फुरति चिन्न च किंचिदेव । त्वं बन्धमोक्षकलने प्रविमुच्य दूरे स्वस्थो भवाऽभवभयोऽभयसार एव ॥ १५ ॥

ekaṃ yathā sphurati vāri taraṅgabhaṅgairevaṃ parisphurati cinna ca kiṃcideva | tvaṃ bandhamokṣakalane pravimucya dūre svastho bhavā'bhavabhayo'bhayasāra eva || 15 ||

Just as water shines with the breaking of waves, so does consciousness shine with something. You, freeing yourself from the calculations of bondage and liberation, remain content, fearless of existence and non-existence.

जैसे पानी लहरों के टूटने से चमकता है, वैसे ही चेतना कुछ के साथ चमकती है। तुम, बंधन और मुक्ति के हिसाब से दूर होकर, संतुष्ट रहो, अस्तित्व और अनस्तित्व से निर्भय।

Chapter 118

6.118.1

मनुरुवाच । संकल्पोन्मुखतां याताः सत्यश्चिन्मात्रसंविदः । आपस्तरङ्गत्वमिव यान्ति भूमिप जीवताम् ॥ १ ॥

manuruvāca | saṃkalponmukhatāṃ yātāḥ satyaścinmātrasaṃvidaḥ | āpastaraṅgatvamiva yānti bhūmipa jīvatām || 1 ||

Manu said: Having attained the state of determination, the true consciousnesses, like waves in water, move towards the state of being alive.

मनु ने कहा: संकल्प की अवस्था को प्राप्त करने वाले, सत्य चेतना के रूप में, जैसे पानी में तरंगें, जीवन की अवस्था की ओर बढ़ते हैं।

6.118.2

ते जीवाः संसरन्तीह संसारे पूर्वमुत्थिते । सुखदुःखदशामोहो मनस्येवास्ति नात्मनि ॥ २ ॥

te jīvāḥ saṃsarantīha saṃsāre pūrvamutthite | sukhaduḥkhadaśāmoho manasyevāsti nātmani || 2 ||

Those living beings wander in this world, which has arisen previously. The states of happiness and sorrow are in the mind, not in the self.

वे जीव इस संसार में भटकते हैं, जो पहले उत्पन्न हुआ है। सुख और दुःख की अवस्थाएँ मन में हैं, आत्मा में नहीं।

6.118.3

अदृश्यो दृश्यते राहुर्गृहीतेन यथेन्दुना । तथानुभवमात्रात्मा दृश्येनात्मावलोक्यते ॥ ३ ॥

adṛśyo dṛśyate rāhurgṛhītena yathendunā | tathānubhavamātrātmā dṛśyenātmāvalokyate || 3 ||

Just as the invisible Rahu is seen by the eclipsed moon, similarly, the self, which is pure experience, is perceived through the visible.

जैसे अदृश्य राहु ग्रहण में चंद्रमा द्वारा दिखाई देता है, उसी प्रकार, जो शुद्ध अनुभव है, वह आत्मा दृश्य द्वारा देखा जाता है।

6.118.4

न शास्त्रैर्नापि गुरुणा दृश्यते परमेश्वरः । दृश्यते स्वात्मनैवात्मा स्वया सत्त्वस्थया धिया ॥ ४ ॥

na śāstrairnāpi guruṇā dṛśyate parameśvaraḥ | dṛśyate svātmanaivātmā svayā sattvasthayā dhiyā || 4 ||

The Supreme Lord is not seen through scriptures or even by a guru. The self is seen by one's own self through the intellect situated in goodness.

परमेश्वर शास्त्रों या गुरु द्वारा नहीं देखे जाते। आत्मा अपने आप द्वारा, सत्व गुण में स्थित बुद्धि द्वारा देखी जाती है।

6.118.5

पथिकाः पथि दृश्यन्ते रागद्वेषविमुक्तया । यथा धिया तथवते द्रष्टव्याः स्वेन्द्रियादयः ॥ ५ ॥

pathikāḥ pathi dṛśyante rāgadveṣavimuktayā | yathā dhiyā tathavate draṣṭavyāḥ svenindriyādayaḥ || 5 ||

Travelers on the path are seen with detachment from likes and dislikes. As the intellect is, so should the senses be perceived.

पथ पर यात्री राग-द्वेष से मुक्त होकर दिखाई देते हैं। जैसी बुद्धि है, वैसे ही इंद्रियों को देखना चाहिए।

6.118.6

एतेषु नादरः कार्यः सता नैवावधीरणम्। पदार्थमात्रताविष्टास्तिष्ठन्त्वेते यथासुखम्॥ ६॥

eteṣu nādaraḥ kāryaḥ satā naivāvadhīraṇam | padārthamātratāviṣṭāstiṣṭhantvete yathāsukham || 6 ||

One should not be indifferent to these, nor should one be overly anxious. Let them remain as they are, in their material state, as they wish.

इनके प्रति उदासीनता नहीं करनी चाहिए, न ही अत्यधिक चिंतित होना चाहिए। ये अपने पदार्थ रूप में अपने सुख के अनुसार रहें।

6.118.7

पदार्थमात्रं देहादि धिया संत्यज्य दूरतः। आशीतलान्तःकरणो नित्यमात्ममयो भव॥ ७॥

padārthamātraṃ dehādi dhiyā saṃtyajya dūrataḥ | āśītalāntaḥkaraṇo nityamātmamayo bhava || 7 ||

Giving up the material body and other objects with the mind, become one with the eternal self, with a calm inner being.

पदार्थों और शरीर आदि को मन से दूर करके, शांत अंतःकरण के साथ नित्य आत्मा में एक हो जाएं।

6.118.8

देहोऽहमिति या बुद्धिः सा संसारनिबन्धनी। न कदाचिदियं बुद्धिरादेया हि मुमुक्षुभिः॥ ८॥

deho'hamiti yā buddhiḥ sā saṃsāranibandhanī | na kadācidiyam buddhirādeyā hi mumukṣubhiḥ || 8 ||

The thought 'I am the body' is the cause of bondage to the world. This thought should never be accepted by those seeking liberation.

यह विचार कि 'मैं शरीर हूँ' संसार के बंधन का कारण है। मुक्ति की इच्छा रखने वालों को इस विचार को कभी नहीं स्वीकार करना चाहिए।

6.118.9

नकिंचिन्मात्रचिन्मात्ररूपोऽस्मि गगनादणुः। इति या शाश्वती बुद्धिः सा न संसारबन्धनी॥ ९॥

nakimcinnmātracinnmātrarūpo'smi gaganādaṇuḥ | iti yā śāśvatī buddhiḥ sā na saṃsārabandhanī || 9 ||

The eternal thought 'I am not the body, but pure consciousness, like a particle of the sky' is not the cause of bondage to the world.

यह नित्य विचार कि 'मैं शरीर नहीं हूँ, बल्कि परम चेतना हूँ, जैसे आकाश का एक कण' संसार के बंधन का कारण नहीं है।

6.118.10

यथा विमलतोयानां बहिरन्तश्च भावनम्। तेजस्तिष्ठति सर्वत्र तथात्मा सर्ववस्तुषु॥ १०॥

yathā vimalatoyānāṃ bahirantaśca bhāvanam | tejastiṣṭhati sarvatra tathātmā sarvavastuṣu || 10 ||

Just as the radiance of clear water pervades both inside and outside, so does the self pervade all things.

जैसे स्वच्छ जल की चमक बाहर और अंदर दोनों जगह फैली हुई है, उसी प्रकार आत्मा सभी चीजों में फैली हुई है।

6.118.11

संनिवेशांशवैचित्र्यं यथा हेम्नोऽङ्गदादिता। आत्मनस्तदतद्रूपा तथैव जगदादिता॥ ११॥

sanniśeṣāṃśavaicītryaṃ yathā hemno'ṅgadāditā | ātmanastadatadrūpā tathaiva jagadāditā || 11 ||

Just as gold takes various forms like ornaments, similarly, the self takes various forms in the world.

जैसे सोना आभूषणों के रूप में विविध रूप लेता है, वैसे ही आत्मा जगत में विविध रूप लेता है।

6.118.12

विनाशवाडवाक्रान्तं भीमं काममहार्णवम्। जगज्जालतरङ्गिण्यो यान्ति भूततरङ्गिकाः ॥ १२ ॥

vināśavāḍavākrāntaṃ bhīmaṃ kāmamahārṇavam | jagajjālataraṅgiṇyo yānti bhūtataraṅgikāḥ || 12 ||

The terrifying ocean of desires, which is full of destructive waves, is crossed by those who are like the waves of the world.

विनाशकारी लहरों से भरा भयानक इच्छाओं का समुद्र, जगत की लहरों के समान लोगों द्वारा पार किया जाता है।

6.118.13

तथाप्यद्याप्यपूर्णस्य यः पाता कालवारिधेः। तमात्मानं महागस्त्यं राजन्भावय सर्वदा ॥ १३ ॥

tathāpyadyāpyapūrṇasya yaḥ pātā kālavāridheḥ | tamātmānaṃ mahāgastyam rājanbhāvaya sarvadā || 13 ||

Even now, the one who is the savior of the ever-full ocean of time, always meditate on that self, O king, as the great sage.

अभी भी, जो समय के सदा पूर्ण समुद्र का रक्षक है, उस आत्मा को, हे राजन, सदा महान ऋषि के रूप में ध्यान करो।

6.118.14

अनात्मन्यात्मतामस्मिन्देहादौ दृश्यजालके। त्यक्त्वा सत्त्वमुपारूढो गूढस्तिष्ठ यथासुखम् ॥ १४ ॥

anātmanyātmatāmasmindēhādau dṛśyajālakē | tyaktvā sattvamupārūḍho gūḍhasthiṣṭha yathāsukham || 14 ||

In this visible world, which is not the self, abandoning the sense of self in the body, remain hidden and dwell happily.

इस दृश्य जगत में, जो आत्मा नहीं है, शरीर में आत्मा की भावना को त्यागकर, छिपकर सुखपूर्वक रहो।

6.118.15

कुचकोटरसंसुप्तं विस्मृत्य जननी सुतम्। यथा रोदिति पुत्रार्थं तथात्मार्थमयं जनः ॥ १५ ॥

kucakoṭarasaṃsuptaṃ vismṛtya jananī sutam | yathā roditi putrārthaṃ tathātmārthamayaṃ janaḥ || 15 ||

Just as a mother, forgetting her son sleeping in her lap, cries for him, so do people cry for the self.

जैसे माँ, अपने गोद में सोए बेटे को भूलकर, उसके लिए रोती है, वैसे ही लोग आत्मा के लिए रोते हैं।

6.118.16

अजरामरमात्मानमबुद्ध्वा परिरोदिति। हा हतोऽहमनाथोऽहं नष्टोऽस्मीति वपुर्व्यये ॥ १६ ॥

ajarāmaramātmānamabuddhvā pariroditi| hā hato'hamanātho'haṃ naṣṭo'smīti vapurvyaye || 16 ||

Not knowing the imperishable and immortal Self, one laments, saying, 'Alas, I am ruined, I am helpless, I am lost,' even though the body is perishable.

अजर-अमर आत्मा को न जानकर, मनुष्य शोक करता है, 'हाय, मैं नष्ट हो गया, मैं अनाथ हूँ, मैं खो गया,' यद्यपि शरीर नाशवान है।

6.118.17

यथा वारि परिस्पन्दान्नानाकारं विलोक्यते। तथा संकल्पवशतश्चिद्ब्रह्म परिबृंहति ॥ १७ ॥

yathā vāri parispadānnānākāraṃ vilokyate| tathā saṃkalpavaśataścidbrahma paribṛṃhati || 17 ||

Just as water takes on various forms due to its movement, so does the conscious Brahman expand according to one's will.

जैसे जल अपनी गति से विभिन्न रूपों में दिखाई देता है, वैसे ही संकल्प के अनुसार चेतन ब्रह्म फैलता है।

6.118.18

संस्थाप्य संकल्पकलङ्कमुक्तं चित्तं त्वमात्मन्युपशान्तकल्पः। स्पन्देऽप्यसंस्पन्दमिवेह तिष्ठ स्वस्थः सुखी राज्यमिदं प्रशाधि ॥ १८ ॥

saṃsthāpya saṃkalpakalaṅkamuktaṃ cittaṃ tvamātmanyupaśāntakalpaḥ| spande'pyasaṃspandamiveha tiṣṭha svasthaḥ sukhī rājyamidaṃ praśādhi || 18 ||

Establishing the mind, freed from the blemishes of will, in the Self, you are of a tranquil nature. Remain steadfast even in activity, being healthy and happy, and rule this kingdom.

संकल्प के दोषों से मुक्त चित्त को आत्मा में स्थापित करके, तुम शांत स्वभाव के हो। गतिविधि में भी अचल रहो, स्वस्थ और सुखी रहकर इस राज्य का शासन करो।

Chapter 119

6.119.1

मनुरुवाच । सर्गात्मभिर्विभुः स्पन्दैः क्रीडते बालवत्स्वयम् । संहारात्मकशक्त्याथ संहृत्यात्मनि तिष्ठति ॥ १ ॥

manuruvāca | sargātmabhirvibhuḥ spandaiḥ krīḍate bālavatsvayam | saṃhārātmakaśaktyātha saṃhṛtyātmani tiṣṭhati || 1 ||

Manu said: The all-pervading Lord plays with the movements of creation as if He were a child. Then, with His power of destruction, He withdraws into Himself.

मनु ने कहा: सर्वव्यापी भगवान सृष्टि की गतिविधियों से बच्चों की तरह खेलते हैं। फिर, अपनी विनाश शक्ति से, वे अपने में ही समा जाते हैं।

6.119.2

स्वयमस्य तथा शक्तिरुदेत्याबध्यते यया । स्वयमस्य तथा शक्तिरुदेत्युन्मुच्यते यया ॥ २ ॥

svayamasya tathā śaktirudetyābadhyate yayā | svayamasya tathā śaktirudetyunmucyate yayā || 2 ||

Similarly, His own power arises and is bound by which it arises, and similarly, His own power arises and is liberated by which it arises.

इसी प्रकार, उसकी अपनी शक्ति उत्पन्न होती है और उसी से बंधी होती है, जिससे वह उत्पन्न होती है, और इसी प्रकार, उसकी अपनी शक्ति उत्पन्न होती है और उसी से मुक्त होती है, जिससे वह उत्पन्न होती है।

6.119.3

चन्द्रार्कवह्नितप्तायोरत्नादीनां यथार्चिषः । यथा पत्रादि वृक्षाणां निर्झराणां यथा कणाः ॥ ३ ॥

candrārkavahnitaptāyoratnādīnāṃ yathārciṣaḥ | yathā patrādi vṛkṣāṇāṃ nirjharāṇāṃ yathā kaṇāḥ || 3 ||

Just as the rays of the moon, sun, and fire, the brilliance of gems, the leaves of trees, and the drops of waterfalls.

जैसे चंद्रमा, सूर्य और अग्नि की किरणें, रत्नों की चमक, पेड़ों के पत्ते, और झरनों की बूंदें।

6.119.4

तथेदं ब्रह्मणि स्फारे जगद्बुद्ध्यादि कल्पितम् । दुःखप्रदमतज्ज्ञानां तदेवातदिव स्थितम् ॥ ४ ॥

tathedaṃ brahmaṇi sphāre jagadbuddhyādi kalpitam | duḥkhapradamatajjñānāṃ tadevātadiva sthitam || 4 ||

Thus, this world, imagined with intelligence and so on, exists in the expanded Brahman. For those who have the knowledge of the self, it is the cause of suffering, and it is both that and not that.

इस प्रकार, यह संसार, जो बुद्धि आदि से कल्पित है, विस्तृत ब्रह्म में स्थित है। आत्मज्ञान वालों के लिए, यह दुःख का कारण है, और यह वह और वह नहीं है।

6.119.5

अहो नु चित्रा मायेयं तात विश्वविमोहिनी । सर्वाङ्गप्रोतमप्यात्मा यदात्मानं न पश्यति ॥ ५ ॥

aho nu citrā māyeyaṃ tāta viśvavimohinī | sarvāṅgaprotamapyātmā yadātmānaṃ na paśyati || 5 ||

Oh, how wonderful is this illusion, O father, which deludes the whole world! Even the self, which is present in all beings, does not see itself.

ओह, कितनी अद्भुत है यह माया, हे पिता, जो सारे संसार को मोहित करती है! सभी प्राणियों में उपस्थित आत्मा भी अपने आप को नहीं देखती।

6.119.6

चिदादर्शमयं सर्वं जगदित्येव भावयन्। यस्तिष्ठत्युपशान्तेच्छं स ब्रह्मकवचः सुखी ॥ ६ ॥

cidādarśamayaṃ sarvaṃ jagadityeva bhāvayan| yastiṣṭhatyupaśāntecchaṃ sa brahmakavacaḥ sukhī|| 6 ||

One who contemplates the entire universe as a reflection of pure consciousness, and remains calm and content, is truly blessed and protected by the armor of Brahman.

जो पूरे ब्रह्माण्ड को चेतना का प्रतिबिंब मानता है और शांत और संतुष्ट रहता है, वह वास्तव में ब्रह्म के कवच से सुरक्षित और सुखी है।

6.119.7

अहमर्थविमुक्तेन भावेनाभावरूपिणा। सर्वं शून्यं निरालम्बं चिद्रूपमिति भावयेत् ॥ ७ ॥

ahamarthavimuktena bhāvenābhāvarūpiṇā| sarvaṃ śūnyaṃ nirālambaṃ cidrūpamiti bhāvayet|| 7 ||

One should contemplate that everything is empty, without support, and of the nature of pure consciousness, with a mind free from the sense of 'I' and 'mine'.

मन में 'मैं' और 'मेरा' की भावना से मुक्त होकर, सब कुछ शून्य, असहाय और चेतना के रूप में सोचना चाहिए।

6.119.8

इदं रम्यमिदं नेति बीजं ते दुःखसंततेः। तस्मिन्साम्याग्निना दग्धे दुःखस्यावसरः कुतः ॥ ८ ॥

idaṃ ramyamidaṃ neti bījaṃ te duḥkhasaṃtateḥ| tasminsāmyāgninā dagdhe duḥkhasyāvasaraḥ kutaḥ|| 8 ||

The seed of continuous suffering is the thought 'this is pleasant, this is not'. When that is burned by the fire of equanimity, where is the scope for suffering?

दुःख की निरंतरता का बीज है 'यह सुंदर है, यह नहीं' की सोच। जब उसे समता की अग्नि से जला दिया जाता है, तो दुःख के लिए कोई स्थान नहीं रहता।

6.119.9

राजन्नभावनास्त्रेण रम्यारम्यविभागिता। पौरुषातिशयेनाशु स्वेनैवान्तर्विलूयताम् ॥ ९ ॥

rājannabhāvanāstreṇa ramyāramyavibhāgitā| pauruṣātiśayenāśu svenaivāntarvilūyatām|| 9 ||

O King, with the weapon of non-attachment, distinguish between the pleasant and the unpleasant. By the supreme human effort, let it quickly dissolve within itself.

हे राजन्, अनासक्ति के अस्त्र से सुंदर और असुंदर को अलग करें। उच्च मानवीय प्रयास से, इसे शीघ्र ही अपने अंदर विलीन कर लें।

6.119.10

अभावनेन भावनं विलूय कर्मकाननम्। परं समेत्य तानवं विशोक एव तिष्ठ भोः ॥ १० ॥

abhāvanena bhāvanaṃ vilūya karmakānanam| paraṃ sametya tānavaṃ viśoka eva tiṣṭha bhoḥ|| 10 ||

By non-attachment, dissolve the forest of actions. Having reached the supreme state, remain free from sorrow, O friend.

अनासक्ति से कर्म के जंगल को विलीन करें। उच्च अवस्था प्राप्त करके, दुःख से मुक्त रहें, हे मित्र।

6.119.11

भरितभुवनाभोगो भूत्वा विभागबहिष्कृतो गलितकलनाभासोल्लासो विवेकविलासवान्। अधिगतपरानन्दस्पन्दश्चिराय निरामयः। शमसमसितस्वच्छाभोगो भवाभयचिद्वपुः ॥ ११ ॥

bhari tabhuvanābhogo bhūtvā vibhāgabahiṣkṛto galitakalanābhāsollāso vivekavilāsavān |
adhigataparānandaspandaścirāya nirāmayaḥ | śamasamasitasvacchābhogo bhavābhayacidvapuḥ || 11 ||

Having enjoyed the pleasures of the world, one becomes devoid of divisions, with the radiance of dissolved imagination, full of the play of discrimination, attaining the supreme bliss, ever free from disease, with the pure enjoyment of peace and tranquility, the body of consciousness fearless of existence.

भुवन के भोगों का आनंद लेकर, विभाजन से रहित हो जाता है, कल्पना के विलीन होने की चमक से भरपूर, विवेक के खेल से परिपूर्ण, परम आनंद को प्राप्त करके, सदा रोगमुक्त, शांति और शांत स्वच्छ आनंद से भरपूर, अस्तित्व से निर्भय चेतना का शरीर।

Chapter 120

6.120.1

मनुरुवाच । शास्त्रसज्जनसंपर्कैः प्रज्ञामादौ विवर्धयेत् । प्रथमा भूमिकैषोक्ता योगस्यैव च योगिनः ॥ १ ॥

manuruvāca | śāstrasajjanasaṃparkaiḥ prajñāmādau vivardhayet | prathamā bhūmikaiṣoktā yogasyaiva ca yoginaḥ || 1 ||

Manu said: One should first increase wisdom through association with scriptures and wise people. This is the first stage of yoga for the yogi.

मनु ने कहा: पहले शास्त्रों और सज्जनों के संपर्क से बुद्धि को बढ़ाना चाहिए। यह योगी के योग की पहली अवस्था है।

6.120.2

विचारणा द्वितीया स्यात्तृतीयाऽसङ्गभावना । विलापनी चतुर्थी स्याद्वासनाविलयात्मिका ॥ २ ॥

vicāraṇā dvitīyā syāttṛtīyā'saṅgabhāvanā | vilāpanī caturthī syādvāsanāvilayātmikā || 2 ||

The second stage is contemplation, the third is detachment, and the fourth is the dissolution of desires.

दूसरी अवस्था विचारणा है, तीसरी असंगभावना है, और चौथी वासना विलयात्मिका है।

6.120.3

शुद्धसंविन्मयानन्दरूपा भवति पञ्चमी । अर्धसुप्तप्रबुद्धाभो जीवन्मुक्तोऽत्र तिष्ठति ॥ ३ ॥

śuddhasaṃvinmayānandarūpā bhavati pañcamī | ardhasuptaprabuddhābho jīvanmukto'tra tiṣṭhati || 3 ||

The fifth stage is pure bliss, where one exists in a state of pure consciousness. Here, the liberated one (jīvanmukta) resides in a state between sleep and wakefulness.

पाँचवीं अवस्था शुद्ध आनंद है, जहाँ एक शुद्ध चेतना की अवस्था में रहता है। यहाँ, मुक्त व्यक्ति (जीवन्मुक्त) नींद और जागृति के बीच की अवस्था में रहता है।

6.120.4

स्वसंवेदनरूपा च षष्ठी भवति भूमिका । आनन्दैकघनाकारा सुषुप्तसदृशस्थितिः ॥ ४ ॥

svasaṃvedanarūpā ca ṣaṣṭhī bhavati bhūmikā | ānandaikaghanākārā suṣuptasadṛśasthitiḥ || 4 ||

The sixth stage is self-awareness, which is characterized by pure bliss and a state similar to deep sleep.

छठी अवस्था स्वयं की चेतना है, जो शुद्ध आनंद और गहरी नींद जैसी अवस्था से चिह्नित है।

6.120.5

तुर्यावस्थोपशान्ताथ मुक्तिरेवेह केवलम् । समता स्वच्छता सौम्या सप्तमी भूमिका भवेत् ॥ ५ ॥

turyāvasthopaśāntātha mukttireveha kevalam | samatā svacchatā saumyā saptamī bhūmikā bhavet || 5 ||

After the fourth state is pacified, there is only liberation here. The seventh stage is characterized by equanimity, purity, and gentleness.

चौथी अवस्था शांत होने पर, यहाँ केवल मुक्ति ही है। सातवीं अवस्था समता, शुद्धता और सौम्यता से चिह्नित है।

6.120.6

तुर्यातीता तु यावस्था परा निर्वाणरूपिणी। सप्तमी सा परिप्रौढा विषयः स्यान्न जीवताम्॥ ६॥

turyātītā tu yāvasthā parā nirvāṇarūpiṇī | saptamī sā paripraudḍhā viṣayaḥ syānna jīvatām || 6 ||

The state beyond the fourth is the supreme form of Nirvana. The seventh state is the most mature, and it is not an object for the living.

चौथे से परे की अवस्था परम निर्वाण रूप है | सातवीं अवस्था सबसे परिपक्व है, और यह जीवित लोगों के लिए विषय नहीं है |

6.120.7

पूर्वावस्थात्रयं त्वत्र जाग्रदित्येव संस्थितम्। चतुर्थी स्वप्न इत्युक्ता स्वप्नाभं यत्र वै जगत्॥ ७॥

pūrvāvasthātrayaṃ tvatra jāgradityeva saṃsthitam | caturthī svapna ityuktā svapnābhaṃ yatra vai jagat || 7 ||

The three previous states are established here as the waking state. The fourth is called the dream state, where the world appears like a dream.

यहाँ तीन पूर्व अवस्थाएँ जाग्रत अवस्था के रूप में स्थापित हैं | चौथी अवस्था स्वप्न कहलाती है, जहाँ संसार स्वप्न की तरह प्रतीत होता है |

6.120.8

आनन्दैकघनीभावात्सुषुप्ताख्या तु पञ्चमी। असंवेदनरूपाथ षष्ठी तुर्यपदाभिधा॥ ८॥

ānandaikaghanībhāvātsuṣuptākhyā tu pañcamī | asaṃvedanarūpātha ṣaṣṭhī turyapadābhidhā || 8 ||

The fifth state is known as deep sleep due to the experience of pure bliss. The sixth state is called Turiya, characterized by the lack of consciousness.

पाँचवीं अवस्था शुद्ध आनंद के कारण सुषुप्ति कहलाती है | छठी अवस्था तुरीय कहलाती है, जो चेतना की अनुपस्थिति से चिह्नित है |

6.120.9

तुर्यातीतपदावस्था सप्तमी भूमिकोत्तमा। मनोवचोभिरग्राह्या स्वप्रकाशपदात्मिका॥ ९॥

turyātītapadāvasthā saptamī bhūmikottamā | manovacobhiragrāhyā svaprakāśapadātmikā || 9 ||

The state beyond Turiya, the seventh, is the highest level. It is not graspable by the mind or words and is self-luminous.

तुरीय से परे की अवस्था, सातवीं, सबसे उच्च स्तर है | यह मन और शब्दों से ग्रहण नहीं की जा सकती और स्वयं प्रकाशमान है |

6.120.10

अन्तः प्रत्याहृतिवशाच्चेत्यं चेन्न विभावितम्। मुक्त एवास्य संदेहो महासमतया तया॥ १०॥

antaḥ pratyāhṛtivśāccetyaṃ cenna vibhāvitam | mukt evāsya saṃdeho mahāsamatayā tayā || 10 ||

Due to the withdrawal of the inner senses, if consciousness is not contemplated, then doubt is indeed removed by that great equanimity.

अंतर्मन के वापस ले जाने से, यदि चेतना पर ध्यान नहीं दिया जाता, तो संदेह उस महान समता से दूर हो जाता है |

6.120.11

यद्भोगसुखदुःखांशैरपरामृष्टपूर्णधीः। सशरीरोऽशरीरो वा भवत्येवंमतिः पुमान्॥ ११॥

yadbhogasukhaduḥkhāṃśairaparāmṛṣṭapūrṇadhīḥ | saśarīro'śarīro vā bhavatyevaṃmatiḥ pumān || 11 ||

One who is fully satisfied and content with the experiences of pleasure and pain, whether embodied or disembodied, remains in such a state of mind.

जो भोग सुख और दुःख के अंशों से पूर्णतः तृप्त है, वह शरीर सहित या शरीर रहित ऐसे ही मन की स्थिति में रहता है।

6.120.12

न म्रिये न च जीवामि नाहं सन्नाप्यसन्नयम्। आत्मारामो नरस्तिष्ठेत्तनमुक्तत्वमुदाहृतम्॥ १२॥

na mriye na ca jīvāmi nāhaṃ sannāpyasannayam | ātmārāmo narastiṣṭhettanamuktatvamudāhṛtam || 12 ||

I neither die nor live, I am neither existent nor non-existent. One should remain self-content, that is called liberation.

मैं न मरता हूँ न जीता हूँ, न मैं अस्तित्व में हूँ न अनस्तित्व में। मनुष्य को आत्माराम रहना चाहिए, वही मुक्ति कहलाती है।

6.120.13

व्यवहार्युपशान्तो वा गृहस्थो वाथवैककः। अहं न किंचिच्चिदिति मत्वा जीवो न शोचति॥ १३॥

vyavahāryupaśānto vā gṛhastho vāthavaikakaḥ | ahaṃ na kiṃcicciditi matvā jīvo na śocati || 13 ||

Whether engaged in worldly activities or in solitude, a householder or a solitary person, thinking 'I am nothing,' the living being does not grieve.

चाहे व्यक्ति व्यवहारिक गतिविधियों में लगा हो या एकान्त में, गृहस्थ हो या एकाकी, 'मैं कुछ नहीं हूँ' ऐसा सोचकर जीव शोक नहीं करता।

6.120.14

अलेपकोऽहमजरो नीरागः शान्तवासनः। निर्मलोऽस्मि चिदाकाश इति मत्वा न शोचति॥ १४॥

alepako'hamajaro nīrāgaḥ śāntavāsanaḥ | nirmalo'smi cidākāśa iti matvā na śocati || 14 ||

I am untainted, ageless, free from desires, with peaceful thoughts. I am pure, the sky of consciousness. Thinking thus, one does not grieve.

मैं अलेपक, अजर, नीराग, शान्तवासना वाला हूँ। मैं निर्मल, चिदाकाश हूँ। ऐसा सोचकर शोक नहीं करता।

6.120.15

अहमन्तादिरहितः शुद्धो बुद्धोऽजरामरः। शान्तः समासमाभास इति मत्वा न शोचति॥ १५॥

ahamantādirahitaḥ śuddho buddho'jarāmaraḥ | śāntaḥ samāsamābhāsa iti matvā na śocati || 15 ||

I am devoid of the ego and its attributes, pure, wise, ageless, and immortal. I am peaceful, equanimous, and radiant. Thinking thus, one does not grieve.

मैं अहंकार और उसके गुणों से रहित हूँ, शुद्ध, बुद्धिमान, अजर, अमर हूँ। मैं शान्त, समान, प्रकाशमान हूँ। ऐसा सोचकर शोक नहीं करता।

6.120.16

तृणाग्रेष्वम्बरे भानौ नरनागामरेषु च। यत्तदस्ति तदेवेति मत्वा भूयो न शोचति॥ १६॥

tṛṇāgreṣvambare bhānau naranāgāmareṣu ca | yattadasti tadeveti matvā bhūyo na śocati || 16 ||

In the tips of grasses, in the sky, in the sun, in humans, elephants, and gods, whatever exists is the same; realizing this, one does not grieve anymore.

घास की नोकों में, आकाश में, सूर्य में, मनुष्यों में, हाथियों में और देवताओं में जो कुछ भी है वही है; इसे समझकर फिर शोक नहीं करता।

6.120.17

तिर्यगूर्ध्वमधस्तान्मे व्यापको महिमा चितः। तस्यानन्तविलासस्य ज्ञात्वेति क इव क्षयी॥ १७॥

tiryagūrdhvamadhastānmē vyāpako mahimā citaḥ | tasyānantavilāsasya jñātveti ka iva kṣayī || 17 ||

My glory is all-pervading, above, below, and across. Knowing the infinite manifestations of that glory, who can be destroyed?

मेरी महिमा सर्वव्यापी है, ऊपर, नीचे और चारों ओर। उस अनंत विलास को जानकर, कौन नष्ट हो सकता है?

6.120.18

बद्धवासनमर्थो यः सेव्यते सुखयत्यसौ । यत्सुखाय तदेवाशु वस्तु दुःखाय नाशतः ॥ १८ ॥

baddhavāsanamartho yaḥ sevyate sukhayatyasau | yatsukhāya tadevāśu vastu duḥkhāya nāśataḥ || 18 ||

That which is pursued with attachment brings happiness. But that very thing, which was meant for happiness, quickly becomes a source of sorrow when it perishes.

जो वस्तु आसक्ति के साथ सेवित की जाती है, वह सुख देती है। परन्तु वही वस्तु, जो सुख के लिए थी, जब नष्ट हो जाती है तो शीघ्र ही दुःख का कारण बन जाती है।

6.120.19

अविनाभावनिष्ठत्वं प्रसिद्धं सुखदुःखयोः । तनुवासनमर्थो यः सेव्यते वा विवासनम् ॥ १९ ॥

avināBhāvanniṣṭhatvaṃ prasiddhaṃ sukhaduḥkhayoḥ | tanuvāsanamartho yaḥ sevyate vā vivāsanam || 19 ||

It is well-known that happiness and sorrow are inseparable. Whether one pursues objects with attachment or without attachment, the result is the same.

यह बहुत प्रसिद्ध है कि सुख और दुःख अविभाज्य हैं। चाहे कोई वस्तुओं को आसक्ति के साथ सेवित करे या आसक्ति के बिना, परिणाम वही होता है।

6.120.20

नासौ सुखायते नासौ नाशकाले न दुःखदः । क्षीणवासनया बुद्ध्या यत्कर्मक्रियतेऽनघ ॥ २० ॥

nāsau sukhāyate nāsau nāśakāle na duḥkhadaḥ | kṣīṇavāsanayā buddhyā yatkarmakriyate'nagha || 20 ||

It does not bring happiness, nor does it cause sorrow at the time of destruction. With a mind free from attachment, whatever action is performed, O sinless one.

यह सुख नहीं देता, न ही नष्ट होने पर दुःख देता है। आसक्ति से मुक्त मन से जो कार्य किया जाता है, हे निष्पाप।

6.120.21

तद्दग्धबीजवद्भूयो नाङ्कुरं प्रविमुञ्चति । देहेन्द्रियादिना कर्म करणौघेन कल्प्यते ॥ २१ ॥

taddagdhabījavadbhūyo nāṅkuraṃ pravimuñcati | dehendriyādinā karma karaṇaughena kalpyate || 21 ||

Just as a seed that has been burnt does not sprout again, similarly, actions performed through the body, senses, and other means are not repeated.

जैसे जला हुआ बीज फिर से अंकुरित नहीं होता, वैसे ही शरीर, इन्द्रियों और अन्य साधनों द्वारा किए गए कर्म दोहराए नहीं जाते।

6.120.22

एकः कर्ता च भोक्ता च क इवाङ्गोपपद्यते । भावनां सर्वभावेभ्यः समुत्सृज्य समुत्थितः ॥ २२ ॥

ekaḥ kartā ca bhoktā ca ka ivāṅgopapadyate | bhāvanāṃ sarvabhāvebhyaḥ samutsṛjya samutthitaḥ || 22 ||

How can one be both the doer and the experiencer? By renouncing all worldly attachments, one arises from within.

एक ही व्यक्ति कर्ता और भोक्ता कैसे हो सकता है? सभी संसारिक आसक्तियों को त्यागकर, वह अंतर से उत्पन्न होता है।

6.120.23

शशाङ्कशीतलः पूर्णो भाति भासेव भास्करः । क्रियमाणा कृता कर्मतूलश्रीर्देहशाल्मलेः ॥ २३ ॥

śaśāṅkaśītalaḥ pūrṇo bhāti bhāseva bhāskaraḥ | kriyamāṇā kṛtā karmatūlaśrīrdehaśālmaleḥ || 23 ||

Just as the cool moon shines brightly like the sun, the glory of actions performed by the body is like the silk-cotton tree.

जैसे ठंडा चंद्रमा सूर्य की तरह चमकता है, वैसे ही शरीर द्वारा किए गए कर्मों की शोभा रेशम के पेड़ की तरह होती है।

6.120.24

ज्ञानानिलसमुद्भूता प्रोड्डीय क्वापि गच्छति। सर्वैव हि कला जन्तोरनभ्यासेन नश्यति॥ २४॥

jñānānilasamudbhūtā proḍḍīya kvāpi gacchati | sarvaiva hi kalā jantoranabhyāsena naśyati || 24 ||

The wind of knowledge arises and goes somewhere. Indeed, all the arts of a living being perish without practice.

ज्ञान की हवा उठती है और कहीं चली जाती है। वास्तव में, एक जीव की सभी कलाएँ अभ्यास के बिना नष्ट हो जाती हैं।

6.120.25

एषा ज्ञानकला त्वन्तः सकृज्जाता दिने दिने। वृद्धिमेति बलादेव सुक्षेत्रव्युप्तशालिवत्॥ २५॥

eṣā jñānakalā tvantaḥ sakṛjjātā dine dine | vṛddhimeti balādeva sukṣetravyuptaśālivat || 25 ||

This art of knowledge, once born within, grows day by day. It flourishes forcefully like rice in a good field.

यह ज्ञान की कला, एक बार अंतर में उत्पन्न होने पर, दिन-प्रतिदिन बढ़ती है। यह अच्छे खेत में धान की तरह बलपूर्वक विकसित होती है।

6.120.26

एकः स्फुरत्यखिलवस्तुषु विश्वरूप आत्मा सरःसु जलधिष्विव तोयमच्छम्। संशान्तसंकलनभूरिकलापमेकं सत्तांशमात्रमखिलं जगदङ्ग विद्धि॥ २६॥

ekaḥ sphuratyakhilavastuṣu viśvarūpa ātmā saraḥsu jaladhiṣviva toyamaccham |
saṃśāntasaṃkalanabhūrikalāpamekaṃ sattāṃśamātramakhilaṃ jagadaṅga viddhi || 26 ||

The one self shines in all things, having the form of the universe, like water in lakes and oceans. Know the entire world, O Arjuna, as a mere part of the existence, which is the peaceful, thought-free, and manifold play.

एक आत्मा सभी वस्तुओं में चमकता है, विश्व के रूप में, झीलों और समुद्रों में पानी की तरह। हे अर्जुन, जानो कि पूरा संसार एक शान्त, विचार-रहित, और बहुरूपी खेल का एक अंश मात्र है।

Chapter 121

6.121.1

मनुरुवाच । यावद्विषयभोगाशा जीवाख्या तावदात्मनः । अविवेकेन संपन्ना साप्याशा हि न वस्तुतः ॥ १ ॥

manuruvāca | yāvadvishayabhogāśā jīvākhyā tāvadātmanaḥ | avivekena saṃpannā sāpyāśā hi na vastutaḥ || 1 ||

Manu said: As long as there is a desire for sensual pleasures, the soul is known as Jiva. This desire, born out of ignorance, is not real.

मनु ने कहा: जब तक इंद्रियों के भोगों की इच्छा है, तब तक आत्मा जीव कहलाती है। यह इच्छा, जो अज्ञान से उत्पन्न होती है, वास्तविक नहीं है।

6.121.2

विवेकवशतो याता क्षयमाशा यदा तदा । आत्मा जीवत्वमुत्सृज्य ब्रह्मतामेत्यनामयः ॥ २ ॥

vivekavaśato yātā kṣayamāśā yadā tadā | ātmā jīvatvamutsṛjya brahmatāmetyanāmayaḥ || 2 ||

When the desire is destroyed through discrimination, the soul, abandoning the state of Jiva, attains the state of Brahman, free from all afflictions.

जब इच्छा विवेक के द्वारा नष्ट हो जाती है, तब आत्मा, जीव की अवस्था को छोड़कर, सभी पीड़ाओं से मुक्त ब्रह्म की अवस्था को प्राप्त होती है।

6.121.3

ऊर्ध्वादधस्तथाधस्तात्पुनरूर्ध्वं व्रजंश्चिरम् । मा संसारारघट्टस्य चिन्तारज्ज्वां घटीभव ॥ ३ ॥

ūrdhvādadhastathādhaḥstātpunarūrdhvaṃ vrajaṃściram | mā saṃsārāraghaṭṭasya cintārajjvāṃ ghaṭībhava || 3 ||

Do not become the rope of the churning wheel of samsara, moving up and down, again and again for a long time.

संसार के मथनी चक्के की रस्सी मत बनो, जो ऊपर और नीचे, फिर से ऊपर, लंबे समय तक घूमती रहती है।

6.121.4

इदं ममाहमस्येति व्यवहारघनभ्रमम् । ये मोहात्परिसेवन्ते अधस्ताद्यान्त्यधः शठाः ॥ ४ ॥

idaṃ mamāhamasyeti vyavahāraghanabhramam | ye mohātparisevante adhastādyāntyadhaḥ śaṭhāḥ || 4 ||

Those who, out of delusion, serve the dense illusion of 'This is mine, I am this,' fall down and reach the lowest state, being deceitful.

जो लोग भ्रम में पड़कर 'यह मेरा है, मैं ही यह हूँ' के घने भ्रम की सेवा करते हैं, वे नीचे गिरकर सबसे नीचे तक पहुँच जाते हैं, और धोखेबाज होते हैं।

6.121.5

अस्याहमेष मे सोऽयमहमेवं तु यैः किल । मोहो बुद्ध्या परित्यक्त ऊर्ध्वादूर्ध्वं प्रयान्ति ते ॥ ५ ॥

asyāham eṣa me so'yamahamevaṃ tu yaiḥ kila | moho buddhyā parityakta ūrdhvādūrdhvaṃ prayānti te || 5 ||

Those who, by intelligence, abandon the delusion of 'I am this, this is mine, I am such,' rise higher and higher.

जो लोग बुद्धि से यह भ्रम छोड़ देते हैं कि 'मैं यह हूँ, यह मेरा है, मैं ऐसा हूँ,' वे ऊपर और ऊपर उठते जाते हैं।

6.121.6

स्वप्रकाशं स्वमात्मानमवलम्ब्याविलम्बितम्। आस्स्व संपूरिताकाशं जगन्ति नृप पश्य हे ॥ ६ ॥

svaprakāśaṃ svamātmānamavalambyāvilambitam | āssva saṃpūritākāśaṃ jaganti nṛpa paśya he || 6 ||

Be established in your own self-luminous Self, without delay | See the world filled with space, O king

अपने स्वयं प्रकाशित आत्मा में स्थित हों, बिना किसी देरी के | हे राजा, अंतरिक्ष से भरे जगत को देखो

6.121.7

यदैवैवं चितो रूपं ततं बुद्धमखण्डितम्। तदैव तीर्णः संसारः परमेश्वरतां गतः ॥ ७ ॥

yadaivevaṃ cito rūpaṃ tataṃ buddhamakhṇḍitam | tadaiva tīrṇaḥ saṃsāraḥ parameśvaratāṃ gataḥ || 7 ||

When the form of consciousness is thus pervaded, awakened, and unbroken | Then one has crossed over the worldly existence and attained the state of the Supreme Lord

जब चेतना का रूप इस प्रकार व्याप्त, जाग्रत और अखंडित होता है | तब संसार पार कर लिया जाता है और परमेश्वर की स्थिति प्राप्त होती है

6.121.8

ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरुणा यद्यत्कर्तुं समुद्यताः। तदहं चिद्वपुः सर्वं करोमीत्येव भावयेत् ॥ ८ ॥

brahmendraviṣṇuvaruṇā yadyatkartuṃ samudyatāḥ | tadahaṃ cidvapuḥ sarvaṃ karomītyeva bhāvayet || 8 ||

Whatever Brahma, Indra, Vishnu, and Varuna are ready to do | One should contemplate that all of that is done by the form of consciousness itself

ब्रह्मा, इंद्र, विष्णु और वरुण जो भी करने के लिए तैयार हों | उसे चेतना के रूप द्वारा ही किया जाता है, ऐसा सोचना चाहिए

6.121.9

येषु येषु यदा यद्यद्दर्शनेषु निगद्यते। सर्वमेवाङ्ग तत्सत्यं चिद्विलासो ह्यनङ्कुशः ॥ ९ ॥

yeṣu yeṣu yadā yadyaddarśaneṣu nigadyate | sarvamevāṅga tatsatyaṃ cidvilāso hyanaṅkuśaḥ || 9 ||

In whatever philosophies or views, whatever is stated | All that is indeed true, it is the play of consciousness, unrestrained

जिन-जिन दर्शनों में, जब-जब जो-जो कहा जाता है | वह सब सच है, यह चेतना का अनियंत्रित विलास है

6.121.10

चिन्मात्रत्वं प्रयातस्य तीर्णमृत्योरचेतसः। यो भवेत्परमानन्दः केनासावुपमीयते ॥ १० ॥

cinmātratvaṃ prayātasya tīrṇamṛtyoracetasaḥ | yo bhavetparamānandaḥ kenāsāvupamīyate || 10 ||

For one who has attained the state of pure consciousness, having crossed over death and ignorance | What is that supreme bliss? With what can it be compared?

जो पूर्ण चेतना की अवस्था को प्राप्त हो गया है, मृत्यु और अज्ञान को पार करके | वह परम आनंद क्या है? उससे किससे तुलना की जा सकती है?

6.121.11

नाप्यशून्यं न शून्यं च नाचिद्रूपं न चिन्मयम्। नात्मरूपं नान्यरूपं भुवनं भावयन्भव ॥ ११ ॥

nāpyaśūnyaṃ na śūnyaṃ ca nācidrūpaṃ na cinmayam | nātmarūpaṃ nānyarūpaṃ bhuvanaṃ bhāvayanbhava || 11 ||

The world is neither non-existent nor existent, neither of the nature of consciousness nor of the nature of the self, nor of any other form. Meditate on this and be.

यह संसार न तो असत् है न सत्, न चेतना का स्वरूप है न आत्मा का स्वरूप, न किसी अन्य रूप का है। इस पर ध्यान करो और हो जाओ।

6.121.12

एतत्स्वरूपमासाद्य प्रकृतिः परिशाम्यति । न देशो मोक्षनामास्ति न कालो नेतरा स्थितिः ॥ १२ ॥

etatsvarūpamāsādya prakṛtiḥ pariśāmyati | na deśo mokṣanāmāsti na kālo netarā sthitiḥ || 12 ||

Having attained this true nature, the primordial nature is pacified. There is no place called liberation, no time, nor any other state.

इस स्वरूप को प्राप्त करके, प्रकृति शान्त हो जाती है। मोक्ष नाम का कोई स्थान नहीं है, न कोई समय, न कोई अन्य स्थिति।

6.121.13

अहंकृतेर्विमोहस्य क्षयेणेयं विलीयते । प्रकृतिर्भावनानाम्नी मोक्षः स्यादेष एव सः ॥ १३ ॥

ahaṃkṛtervimohasya kṣayeṇeyaṃ vilīyate | prakṛtirbhāvanānāmnī mokṣaḥ syādeṣa eva saḥ || 13 ||

With the destruction of the delusion of ego, this (prakṛti) dissolves. This very dissolution of the primordial nature is liberation.

अहंकार के भ्रम के नाश से यह (प्रकृति) विलीन हो जाती है। यही प्रकृति का विलयन मोक्ष है।

6.121.14

प्रशान्तशास्त्रार्थविचारचापलो निवृत्तनानारसकाव्यकौतुकः । निरस्तनिःशेषविकल्पविप्लवः समः सुखं तिष्ठति शाश्वतात्मकः ॥ १४ ॥

praśāntaśāstrārthavicāracāpalo nivṛttanānārasakāvyakautukaḥ | nirastaniḥśeṣavikalpaviplavaḥ samaḥ sukhaṃ tiṣṭhati śāśvatātmakaḥ || 14 ||

One who is free from the restlessness of scriptural debates, who has ceased to enjoy various poetic pleasures, who has eliminated all doubts and fluctuations, remains in eternal bliss.

जो शास्त्रार्थ के विचार की चापल से मुक्त है, जिसने विविध रसों के काव्य कौतुक से निवृत्ति कर ली है, जिसने सभी विकल्पों और विप्लवों को निरस्त कर दिया है, वह समता में सुख से शाश्वत आत्मा के रूप में स्थित रहता है।

Chapter 122

6.122.1

मनुरुवाच । येन केनचिदाच्छन्नो येन केनचिदाशितः । यत्रक्वचनशायी च स सम्राडिव राजते ॥ १ ॥

manuruvāca | yena kenacidācchanno yena kenacidāśitaḥ | yatrakvacaśāyī ca sa samrāḍiva rājate || 1 ||

Manu said: One who is covered by anything, who eats anything, and who sleeps anywhere, he shines like an emperor.

मनु ने कहा: जो किसी भी चीज से ढका हुआ है, जो किसी भी चीज को खाता है, और जो कहीं भी सोता है, वह सम्राट की तरह चमकता है।

6.122.2

वर्णधर्माश्रमाचारशास्त्रयन्त्रणयोज्झितः । निर्गच्छति जगज्जालात्पञ्जरादिव केसरी ॥ २ ॥

varṇadharmāśramācāraśāstrayantrayojjhitaḥ | nirgacchati jagajjālātpañjarādiva kesarī || 2 ||

One who is free from the constraints of caste duties, stages of life, scriptural injunctions, and social norms, escapes from the worldly net like a lion from a cage.

जो जाति के कर्तव्यों, आश्रमों, शास्त्रीय नियमों और सामाजिक नियमों से मुक्त है, वह सिंह की तरह पिंजरे से बाहर निकलता है।

6.122.3

वाचामतीतविषयो विषयाशादशोज्झितः । कामप्युपगतः शोभां शरदीव नभस्तलम् ॥ ३ ॥

vācāmatītaviṣayo viṣayāśādaśojjhitaḥ | kāmapyupagataḥ śobhāṃ śaradīva nabhastalam || 3 ||

One who is beyond the reach of words, free from desires and attachments, and even if engaged in desires, shines with beauty like the autumn sky.

जो शब्दों की पहुंच से परे है, इच्छाओं और आसक्तियों से मुक्त है, और यदि इच्छाओं में लगा हुआ है तो भी शरद ऋतु के आकाश की तरह सुंदरता से चमकता है।

6.122.4

गम्भीरश्च प्रसन्नश्च गिराविव महाह्रदः । परानन्दरसाक्षुब्धो रमते स्वात्मनात्मनि ॥ ४ ॥

gambhīraśca prasannaśca girāviva mahāhradaḥ | parānandarasākṣubdho ramate svātmanātmani || 4 ||

One who is deep and serene like a great lake, and who is immersed in the bliss of the supreme joy, enjoys in the self by the self.

जो एक महान झील की तरह गहरा और शांत है, और जो परम आनंद के रस में डूबा हुआ है, वह अपने आप में अपने आप से आनंद लेता है।

6.122.5

सर्वकर्मफलत्यागी नित्यतृप्तो निराश्रयः । न पुण्येन न पापेन लिप्यते नेतरेण च ॥ ५ ॥

sarvakarmaphalatyāgī nityatṛpto nirāśrayaḥ | na puṇyena na pāpena lipyate netareṇa ca || 5 ||

One who has renounced the fruits of all actions, is always content, and has no support, is not affected by merit or demerit, nor by anything else.

जो सभी कर्मों के फलों का त्याग कर चुका है, हमेशा संतुष्ट है, और किसी भी सहारे के बिना है, वह पुण्य या पाप से प्रभावित नहीं होता, न ही किसी और चीज से।

6.122.6

स्फटिकः प्रतिबिम्बेन यथा याति न रञ्जनम् । तज्ज्ञः कर्मफलेनान्तस्तथा नायाति रञ्जनम् ॥ ६ ॥

sphaṭikaḥ pratibimbena yathā yāti na rañjanam | tajjñaḥ karmaphalena antastathā nāyāti rañjanam || 6 ||

Just as a crystal does not get colored by its reflection, similarly, the wise one does not get attached to the results of actions.

जैसे स्फटिक अपने प्रतिबिम्ब से रंगीन नहीं होता, वैसे ही ज्ञानी पुरुष कर्मफल से आसक्त नहीं होता।

6.122.7

विहरञ्जनतावृन्दे देहकर्तनपूजनैः । खेदाह्लादौ न जानाति प्रतिबिम्बगतैरिव ॥ ७ ॥

viharjanatāvṛnde dehakartanapūjanaiḥ | khedāhlādau na jānāti pratibimbagatairiva || 7 ||

While enjoying in the company of people, through bodily actions and worship, he does not experience sorrow or joy, just like reflections.

जब वह लोगों के साथ विहार करता है, शरीर के कर्मों और पूजा से, वह दुःख या सुख का अनुभव नहीं करता, जैसे प्रतिबिम्ब होते हैं।

6.122.8

निःस्तोत्रो निर्विकारश्च पूज्यपूजाविवर्जितः । संयुक्तश्च वियुक्तश्च सर्वाचारनयक्रमैः ॥ ८ ॥

niḥstotro nirvikāraśca pūjyapūjāvivarjitaḥ | saṃyuktaśca viyuktaśca sarvācāranayakramaiḥ || 8 ||

He is without praise, without modifications, devoid of worship and being worshipped, united and separated, by all conducts and methods.

वह स्तुति से रहित है, विकार से रहित है, पूजा और पूजा करने से रहित है, सभी आचारों और नयक्रमों से संयुक्त और वियुक्त है।

6.122.9

तस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च सः । रागद्वेषभयानन्दैस्त्यज्यतेऽपि च युज्यते ॥ ९ ॥

tasmānnodvijate loko lokānnodvijate ca saḥ | rāgadveṣabhayānandais tyajyate'pi ca yujyate || 9 ||

Therefore, the world does not disturb him, nor does he disturb the world. He renounces attachment, aversion, fear, and joy, yet he is engaged.

इसलिए, दुनिया उसे विचलित नहीं करती, न ही वह दुनिया को विचलित करता है। वह आसक्ति, घृणा, भय और आनंद को त्याग देता है, लेकिन फिर भी वह लगा हुआ है।

6.122.10

प्रमेये कस्यचिदपि न रोहति महाशयः । प्रमेयीक्रियते चापि बालेनाप्यदुराशयः ॥ १० ॥

prameye kasyacidapi na rohati mahāśayaḥ | prameyīkriyate cāpi bālenāpyadurāśayaḥ || 10 ||

The wise one does not get entangled in any object of knowledge. Even a child with a pure heart can perform actions without attachment.

ज्ञानी पुरुष कोई भी ज्ञेय वस्तु में उलझा नहीं होता। एक पवित्र हृदय वाला बच्चा भी आसक्ति से रहित कर्म कर सकता है।

6.122.11

तनुं त्यजतु वा तीर्थे श्वपचस्य गृहेऽपि वा । मा कदाचन वा राजन्वर्तमानेऽपि वा क्षणे ॥ ११ ॥

tanuṃ tyajatu vā tīrthe śvapacasya gṛhe'pi vā | mā kadācana vā rājanvartamāne'pi vā kṣaṇe || 11 ||

Whether one gives up the body in a holy place or in the house of a dog-eater, O king, one should never do so even for a moment.

चाहे कोई शरीर को तीर्थ में छोड़े या कुत्ते खाने वाले के घर में, हे राजा, कोई भी क्षण में भी ऐसा न करे।

6.122.12

ज्ञानसंप्राप्तिसमये मुक्तोऽसौ विगताशयः । अहंभ्रान्तिर्हि बन्धाय मोक्षो ज्ञानेन तत्क्षयः ॥ १२ ॥

jñānasampāptisamaye mukto'sau vigatāśayaḥ | ahaṃbhrāntirhi bandhāya mokṣo jñānena tatkṣayaḥ || 12 ||

At the time of attaining knowledge, one becomes free from desires. The delusion of 'I' is the cause of bondage, and liberation is the destruction of that delusion through knowledge.

ज्ञान प्राप्त होने के समय, वह इच्छाओं से मुक्त हो जाता है। 'मैं' की भ्रान्ति बंधन का कारण है, और मोक्ष उस भ्रान्ति का ज्ञान द्वारा नाश है।

6.122.13

स पूजनीयः स स्तुत्यो नमस्कार्यः स यत्नतः । स निरीक्ष्योऽभिवाद्यश्च विभूतिविभवैषिणा ॥ १३ ॥

sa pūjanīyaḥ sa stutyo namaskāryaḥ sa yatnataḥ | sa nirīkṣyo'bhivādyaśca vibhūtivibhavaiṣiṇā || 13 ||

He is to be worshipped, praised, and bowed down to with effort. He is to be looked upon and greeted by those who seek prosperity and glory.

उसकी पूजा की जानी चाहिए, उसकी स्तुति की जानी चाहिए, और उसे प्रयास से नमन किया जाना चाहिए। उसे देखा जाना चाहिए और उसे सम्मान से अभिवादन किया जाना चाहिए उन लोगों द्वारा जो समृद्धि और विभूति चाहते हैं।

6.122.14

न यज्ञतीर्थैर्न तपःप्रदानैरासाद्यते तत्परमं पवित्रम् । आसाद्यते क्षीणभवामयानां भक्त्या सतामात्मविदां यदङ्ग ॥ १४ ॥

na yajñatīrthairna tapḥpradānairāsādyate tatparamaṃ pavitram | āsādyate kṣīṇabhavāmayānāṃ bhaktyā satāmātmavidāṃ yadaṅga || 14 ||

That supreme purity cannot be attained by sacrifices, pilgrimages, austerities, or charities. It can only be attained by the devotion of those who are free from worldly desires and who are self-realized.

वह परम पवित्रता यज्ञों, तीर्थों, तपस्या या दान द्वारा नहीं प्राप्त होती। यह तब ही प्राप्त होती है जब संसारिक इच्छाओं से मुक्त होने वाले और आत्मज्ञानी लोगों की भक्ति से प्राप्त होती है।

6.122.15

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवमुक्त्वा स भगवान्मनुर्ब्रह्मगृहं ययौ । इक्ष्वाकुरपि तां दृष्टिमवष्टभ्य स्थिरोऽभवत् ॥ १५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evamuktvā sa bhagavānmanurbrahmagṛhaṃ yayau | ikṣvākurapi tāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya sthiro'bhavat || 15 ||

Vasishtha said: Having spoken thus, that blessed Lord Manu went to the abode of Brahma. Ikshvaku also, having fixed his gaze, became steady.

वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर, वह भगवान् मनु ब्रह्मा के घर चले गए। इक्ष्वाकु भी, अपनी दृष्टि को स्थिर करके, स्थिर हो गए।

Chapter 123

6.123.1

श्रीराम उवाच । एवं स्थिते हि भगवञ्जीवन्मुक्तस्य सन्मतेः । अपूर्वोऽतिशयः कोऽसौ भवत्यात्मविदां वर ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | evaṃ sthite hi bhagavañjīvanmuktasya sanmateḥ | apūrvo'tiśayaḥ ko'sau bhavatyātmavidāṃ vara || 1 ||

Shri Rama said: In this state, O Lord, what is the unprecedented excellence of the wise one who is liberated while living?

श्री राम ने कहा: इस अवस्था में, हे भगवन्, जीवन्मुक्त की जो अपूर्व श्रेष्ठता है, वह क्या है?

6.123.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । ज्ञस्य कस्मिंश्चिदेवांशे भवत्यतिशयेन धीः । नित्यतृप्तः प्रशान्तात्मा स आत्मन्येव तिष्ठति ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jñasya kasmiṃścidevāṃśe bhavatyatiśayena dhīḥ | nityatṛptaḥ praśāntātmā sa ātmanyeva tiṣṭhati || 2 ||

Vasistha said: The intellect of the knower becomes supreme in some aspect. Being eternally content and having a peaceful mind, he remains established in the Self.

वसिष्ठ ने कहा: ज्ञानी की बुद्धि किसी एक अंश में अतिशय हो जाती है। वह नित्य तृप्त और शांत मन वाला होता है, और आत्मा में ही स्थित रहता है।

6.123.3

मन्त्रसिद्धैस्तपःसिद्धैस्तन्त्रसिद्धैश्च भूरिशः । कृतमाकाशयानादि का तत्र स्यादपूर्वता ॥ ३ ॥

mantrasiddhais tapasiddhais tantasiddhaiśca bhūriśaḥ | kṛtamākāśayānādi kā tatra syādapūrvatā || 3 ||

What is the uniqueness in that which has been accomplished through mantras, tapas, and tantras, such as flying in the sky?

मन्त्र, तप और तन्त्र द्वारा जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, जैसे आकाश में उड़ना, उसमें क्या अनोखापन है?

6.123.4

अणिमाद्यपि संप्राप्तं तादृशैरेव भूरिशः । यत्नेन साधितत्वात्तैर्नेतरेणात्मदर्शिना ॥ ४ ॥

aṇimādyapi saṃprāptaṃ tādṛśaireva bhūriśaḥ | yatnena sādhitatvāttairnetareṇātmadarśinā || 4 ||

Even the power of becoming as small as an atom (aṇimā) is attained by such means with great effort. It is not attained by the self-realized one in any other way.

अणिमा जैसी शक्ति भी ऐसे ही साधनों द्वारा बहुत प्रयास से प्राप्त होती है। आत्मदर्शी द्वारा और किसी तरीके से यह प्राप्त नहीं होती।

6.123.5

एष एव विशेषोऽस्य न समो मूढबुद्धिभिः । सर्वत्रास्थापरित्यागान्नीरागममलं मनः । भवेत्तस्य महाबुद्धेर्नासौ वस्तुषु मज्जति ॥ ५ ॥

eṣa eva viśeṣo'sya na samo mūḍhabudhibhiḥ | sarvatrāsthāparityāgānnīrāgamamalaṃ manaḥ | bhavettasya mahābuddhernāsau vastuṣu majjati || 5 ||

This alone is the special quality of the wise one, not comparable to the foolish. By giving up attachment to everything, his mind becomes pure and free from desire. He does not get immersed in worldly objects.

यही महाबुद्धिमान की विशेषता है, जो मूढ़ बुद्धि वालों से असमान है। सबकुछ छोड़कर, उसका मन निर्लिप्त और निर्मल हो जाता है। वह वस्तुओं में नहीं डूबता।

6.123.6

एतावदेव खलु लिंगमलिंगमूर्तेः संशान्तसंसृतिचिरभ्रमनिर्वृतस्य । तज्ज्ञस्य यन्मदनकोपविषादमोहलोभापदामनुदिनं निपुणं तनुत्वम् ॥ ६ ॥

etāvadeva khalu liṅgamaliṅgamūrteḥ saṃśāntasaṃsṛticirabhramanirvṛtasya | tajjñasya yanmadanakopaviṣādamohalobhāpadāmanudinaṃ nipuṇaṃ tanutvam || 6 ||

This alone is the characteristic of the form of the Supreme Being, who is free from the long-lasting delusion of the cycle of birth and death. The wise one who knows this, skillfully avoids the daily afflictions of lust, anger, sorrow, delusion, and greed.

यही परमात्मा के रूप का लक्षण है, जो जन्म और मृत्यु के चक्र के दीर्घकालीन भ्रम से मुक्त है। जो इसे जानता है, वह बुद्धिमान व्यक्ति प्रतिदिन काम, क्रोध, शोक, मोह और लोभ के क्लेशों से कुशलतापूर्वक बचता है।

Chapter 124

6.124.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथा सत्त्वमुपेक्ष्य स्वं शनैर्विप्रो दुरीहया । अङ्गीकरोति शूद्रत्वं तथा जीवत्वमीश्वरः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathā sattvamupekṣya svaṃ śanairvipro durīhayā | aṅgīkaroti śūdratvaṃ tathā jīvatvamīśvaraḥ || 1 ||

Vasishtha said: Just as a Brahmin, neglecting his own nature, gradually accepts the status of a Shudra due to his wickedness, similarly, the Supreme Lord accepts the state of a living being.

वसिष्ठ ने कहा: जैसे एक ब्राह्मण, अपनी सत्ता को उपेक्षित करके, धीरे-धीरे अपने दुराचार के कारण शूद्र की स्थिति स्वीकार करता है, उसी प्रकार परमेश्वर जीव की स्थिति स्वीकार करता है।

6.124.2

भूतानि द्विविधान्येव प्रतिसर्गे स्फुरन्ति वै । आद्यविस्पन्दजातानि तानि निष्कारणानि वै ॥ २ ॥

bhūtāni dvividhānyeva pratisarge sphuranti vai | ādyavispaṃdajātāni tāni niṣkāraṇāni vai || 2 ||

Beings are of two kinds, manifesting in creation. The first are born of the initial vibration and are without cause.

प्राणी दो प्रकार के हैं, जो सृष्टि में प्रकट होते हैं। पहले वे हैं जो आद्य विस्पन्द से उत्पन्न होते हैं और कारण से रहित हैं।

6.124.3

ईश्वरात्समुपागत्य पुनर्जन्मान्तराणि च । भूतान्यनुभवत्यङ्ग स्वकृतैरेव कर्मभिः ॥ ३ ॥

īśvarātsamupāgatya punarjanmāntarāṇi ca | bhūtānyanubhavatyaṅga svakṛtaireva karmabhiḥ || 3 ||

Having attained the state of the Lord, beings experience various births again due to their own actions.

परमेश्वर की स्थिति प्राप्त करने के बाद, प्राणी अपने कर्मों के कारण फिर से विभिन्न जन्मों का अनुभव करते हैं।

6.124.4

कार्यकारणभावोऽयमीदृशो जन्मकर्मणोः । अकारणमुपायान्ति सर्वे जीवा परात्पदात् ॥ ४ ॥

kāryakāraṇabhāvo'yamīdṛśo janmakarmaṇoḥ | akāraṇamupāyānti sarve jīvā parātpadāt || 4 ||

This is the nature of cause and effect in birth and action. All beings ultimately attain the causeless state from the Supreme.

यह जन्म और कर्म के कार्य-कारण का स्वभाव है। सभी प्राणी अंततः परमात्मा से कारणरहित अवस्था प्राप्त करते हैं।

6.124.5

पश्चात्तेषां स्वकर्माणि कारणं सुखदुःखयोः । आत्मज्ञानात्समुत्पन्नः संकल्पः कर्मकारणम् ॥ ५ ॥

paścātteṣāṃ svakarmāṇi kāraṇaṃ sukhaduḥkhayoḥ | ātmajñānātsamutpannaḥ saṃkalpaḥ karmakāraṇam || 5 ||

Afterwards, their own actions become the cause of happiness and sorrow. The resolution born of self-knowledge is the cause of action.

बाद में, उनके अपने कर्म ही सुख और दुःख का कारण बन जाते हैं। आत्मज्ञान से उत्पन्न संकल्प ही कर्म का कारण है।

6.124.6

संकल्पित्वं हि बन्धस्य कारणं तत्परित्यज । मोक्षस्तु निःसंकल्पित्वं तदभ्यासपरो भव ॥ ६ ॥

saṃkalpitvaṃ hi bandhasya kāraṇaṃ tatparityaja | mokṣastu niḥsaṃkalpitvaṃ tadabhyāsaparo bhava || 6 ||

Desire is the cause of bondage, abandon it | Freedom is the absence of desire, be devoted to that practice

इच्छा बंधन का कारण है, उसे त्याग दो | मुक्ति इच्छा के अभाव में है, उस अभ्यास में लगे रहो

6.124.7

सावधानो भव त्वं च ग्राह्यग्राहकसंभ्रमे । अजस्रमेव संकल्पदशाः परिहरञ्छनैः ॥ ७ ॥

sāvadhāno bhava tvaṃ ca grāhyagrāhakasaṃbhame | ajasrameva saṃkalpadaśāḥ pariharañchanaiḥ || 7 ||

Be vigilant and aware of the confusion between the perceiver and the perceived | Always avoid the states of desire gradually

ग्राहक और ग्राह्य की उलझन के प्रति सावधान रहो | हमेशा धीरे-धीरे इच्छा की अवस्थाओं से बचो

6.124.8

मा भव ग्राह्यभावात्मा ग्राह्यकात्मा च मा भव । भावनामखिलां त्यक्त्वा यच्छिष्टं तन्मयो भव ॥ ८ ॥

mā bhava grāhyabhāvātmā grāhyakātmā ca mā bhava | bhāvanāmakhilāṃ tyaktvā yacchiṣṭaṃ tanmayo bhava || 8 ||

Do not become identified with the perceived or the perceiver | Abandon all feelings and become one with the remaining essence

ग्राह्य या ग्राहक के साथ पहचान मत बनाओ | सभी भावनाओं को छोड़कर शेष तत्व के साथ एक हो जाओ

6.124.9

अजस्रं यं यमेवार्थं पतत्यक्षगणोऽनघ । बध्यते तत्र रागेण तत्रारागेण मुच्यते ॥ ९ ॥

ajasraṃ yaṃ yamevārthaṃ patatyakṣagaṇo'nagha | badhyate tatra rāgeṇa tatrārāgeṇa mucyate || 9 ||

Whatever object the senses fall upon, one becomes bound by attachment to it | One is liberated by detachment from it

जिस भी वस्तु पर इंद्रियाँ पड़ती हैं, उससे आसक्ति हो जाती है | उससे विरक्ति होने पर मुक्ति मिलती है

6.124.10

किंचिद्यद्रोचते तुभ्यं तद्बद्धोऽसि भवस्थितौ । न किंचिद्रोचते चित्ते तन्मुक्तोऽसि भवस्थितौ ॥ १० ॥

kiṃcidyadrocate tubhyaṃ tadbaddho'si bhavasthitau | na kiṃcidrocate citte tanmukto'si bhavasthitau || 10 ||

Whatever appeals to you, you are bound by it in the worldly state | If nothing appeals to you, you are liberated in the worldly state

जो भी तुम्हें आकर्षित करता है, तुम उससे बंधे हो संसार में | अगर कुछ भी तुम्हें आकर्षित नहीं करता, तो तुम संसार में मुक्त हो

6.124.11

तस्मात्पदार्थनिचयात्सह स्थावरजङ्गमात्तृणादेर्देवकायान्तान्मा किंचित्तव रोचताम् ॥ ११ ॥

tasmātpadārthanicayātsaha sthāvarajaṅgamāttṛṇāderdevakāyāntānmā kiṃcittava rocatām || 11 ||

Therefore, from the collection of objects, including immovable and movable things, grass, etc., up to the divine body, nothing appeals to you.

इसलिए, चल और अचल वस्तुओं, घास, आदि से लेकर देव शरीर तक किसी भी चीज को आपको आकर्षित नहीं करता।

6.124.12

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्न कर्तासि न भोक्तासि तत्र मुक्तमतिः शमी ॥ १२ ॥

yatkaroṣi yadaśnāsi yajjuhoṣi dadāsi yatna kartāsi na bhoktāsi tatra muktamatiḥ śamī || 12 ||

Whatever you do, whatever you eat, whatever you sacrifice, whatever you give, whatever effort you make, you are not the enjoyer of the results. The mind is free from attachment.

जो कुछ भी आप करते हैं, जो कुछ भी आप खाते हैं, जो कुछ भी आप बलिदान करते हैं, जो कुछ भी आप दान करते हैं, जो कुछ भी प्रयास आप करते हैं, आप उसके फल के भोक्ता नहीं हैं। मन आसक्ति से मुक्त है।

6.124.13

सन्तोऽतीतं न शोचन्ति भविष्यच्चिन्तयन्ति नो वर्तमानं च गृह्णन्ति कर्म प्राप्तमखण्डितम् ॥ १३ ॥

santo'tītaṃ na śocanti bhaviṣyaccintayanti novartamānaṃ ca gṛhṇanti karma prāptamakhaṇḍitam || 13 ||

The wise do not grieve for the past, do not worry about the future, and do not cling to the present. They accept the actions that come to them without fragmentation.

ज्ञानी लोग अतीत पर शोक नहीं करते, भविष्य की चिंता नहीं करते, और वर्तमान पर आसक्त नहीं होते। वे जो कर्म उन्हें मिलते हैं, उन्हें बिना टूटे स्वीकार करते हैं।

6.124.14

मनसि ग्रथिता भावास्तृष्णामोहमदादयःमनसैव मनो राम च्छेदनीयं विजानता ॥ १४ ॥

manasi grathitā bhāvāstṛṣṇāmohamadādayaḥmanasaiva mano rāma cchedanīyaṃ vijānatā || 14 ||

The feelings tied in the mind, such as desire, delusion, and pride, O Rama, should be cut off by the mind itself, knowing this.

मन में बंधे हुए भाव, जैसे इच्छा, भ्रम, और अहंकार, हे राम, मन ही इन्हें काट देना चाहिए, इसे जानकर।

6.124.15

विवेकेनातितीक्ष्णेन बलादय इवायसामनसैव मनश्चिन्धि सर्वभ्रमस्य शान्तये ॥ १५ ॥

vivekenātitīkṣṇena balādaya ivāyasāmanasaiva manaśchindhi sarvabhramasya śāntaye || 15 ||

With the sharp sword of discrimination, like a strong weapon, cut off the mind with the mind itself for the peace of all delusions.

विवेक की तीक्ष्ण तलवार से, जैसे एक मजबूत हथियार, मन ही मन को काट दें सभी भ्रमों के शांति के लिए।

6.124.16

क्षालयन्ति मलेनैव मलं क्षालनकोविदाःवारयन्त्यस्त्रमस्त्रेण विषं प्रति विषेण च ॥ १६ ॥

kṣālayanti malenaiva malaṃ kṣālanakovidāḥvārayantyastramastreṇa viṣaṃ prati viṣeṇa ca || 16 ||

The ignorant try to wash away impurity with impurity itself. They ward off weapons with weapons and counteract poison with poison.

अज्ञानी मल से ही मल को धोने का प्रयास करते हैं। वे अस्त्रों से अस्त्रों को रोकते हैं और विष से विष का प्रतिकार करते हैं।

6.124.17

जीवस्य त्रीणि रूपाणि स्थूलसूक्ष्मपराणि चत्रास्य यत्परं रूपं तद्भज द्वे परित्यज ॥ १७ ॥

jīvasya trīṇi rūpāṇi sthūlasūkṣmaparāṇi catatrāsya yatparaṃ rūpaṃ tadbhaja dve parityaja || 17 ||

The soul has three forms: gross, subtle, and supreme. Among these, worship the supreme form and renounce the other two.

आत्मा के तीन रूप हैं: स्थूल, सूक्ष्म और परम। इनमें से, परम रूप की पूजा करें और दूसरे दो को त्याग दें।

6.124.18

पाणिपादमयो योऽयं देहो भोगाय वल्गतिभोगार्थमेतज्जीवस्य रूपं स्थूलमिहास्थितम् ॥ १८ ॥

pāṇipādamayo yo'yaṃ deho bhogāya valgatibhogārthametajjīvasya rūpaṃ sthūlamihāsthitam || 18 ||

This body, made of hands and feet, is meant for enjoyment and is the gross form of the soul present here.

यह हाथ और पैरों से बना शरीर भोग के लिए है और यह आत्मा का यहाँ उपस्थित स्थूल रूप है।

6.124.19

स्वसंकल्पमयाकारं यावत्संसारभावि यत्चित्तं तद्विद्धि जीवस्य रूपं रामातिवाहिकम् ॥ १९ ॥

svasaṃkalpamayākāraṃ yāvatsaṃsārabhāvi yatcittaṃ tadviddhi jīvasya rūpaṃ rāmātivāhikam || 19 ||

Know that the mind, which is of the nature of one's own resolve and exists as long as the worldly existence, is the subtle form of the soul, beyond the gross.

जानें कि मन, जो अपने संकल्प की प्रकृति का है और जब तक संसारिक अस्तित्व है, तब तक रहता है, यह आत्मा का सूक्ष्म रूप है, स्थूल से परे।

6.124.20

आद्यन्तरहितं सत्यं चिन्मात्रं निर्विकल्पकम्यत्तद्विद्धि परं रूपं तृतीयं विश्वरूपकम् ॥ २० ॥

ādyantarahitaṃ satyaṃ cinmātraṃ nirvikalpakamyattadviddhi paraṃ rūpaṃ tṛtīyaṃ viśvarūpakam || 20 ||

Know that the supreme form, which is beyond beginning and end, is the truth, pure consciousness, without any differentiation. This is the third form, the universal form.

जानें कि जो आदि और अंत से परे है, वह सत्य है, शुद्ध चेतना, बिना किसी भेदभाव के। यह तीसरा रूप है, विश्व रूप।

6.124.21

एतत्तुर्यपदं शुद्धमत्र बद्धपदो भवसंपरित्यज्य पूर्वे द्वे मा तत्रात्ममतिर्भव ॥ २१ ॥

etatturyapadaṃ śuddhamatra baddhapado bhavasaṃparityajya pūrve dve mā tatrātmamatirbhava || 21 ||

This is the pure state of the fourth, leaving behind the bondage of existence, do not let the mind dwell on the previous two states.

यह चौथे पद की शुद्ध अवस्था है, अस्तित्व की बंधन को छोड़कर, मन को पिछले दो अवस्थाओं पर न लगाएं।

6.124.22

श्रीराम उवाचजाग्रत्स्वप्नसुषुप्तेषु स्थितं त्रिष्वप्यलक्षितम्तुर्यं ब्रूहि विशेषेण विविच्य मुनिनायक ॥ २२ ॥

śrīrāma uvācajāgratsvapnasuṣupteṣu sthitaṃ triṣvapyalakṣitamturyaṃ brūhi viśeṣeṇa vivicya munināyaka || 22 ||

Sri Rama said: Explain in detail the special nature of the fourth state, which is unperceived in the three states of waking, dreaming, and deep sleep.

श्री राम ने कहा: जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति में अनुभव न होने वाले चौथे पद की विशेष प्रकृति का विस्तार से वर्णन करें।

6.124.23

श्रीवसिष्ठ उवाचहंभावानहंभावौ त्यक्त्वा सदसती तथायदसक्तं समं स्वच्छं स्थितं तत्तुर्यमुच्यते ॥ २३ ॥

śrīvasiṣṭha uvācahaṃbhāvānahaṃbhāvau tyaktvā sadasatī tathāyadasaktaṃ samaṃ svacchaṃ sthitaṃ tatturyamucyate || 23 ||

Sri Vasiṣṭha said: Abandoning the sense of 'I' and 'mine', as well as the concepts of existence and non-existence, that which is unattached, equanimous, pure, and established is called the fourth state.

श्री वसिष्ठ ने कहा: 'मैं' और 'मेरा' की भावना को त्यागकर, अस्तित्व और अनस्तित्व की अवधारणाओं को भी छोड़कर, जो अनासक्त, समतापूर्ण, शुद्ध और स्थिर है, उसे चौथा पद कहते हैं।

6.124.24

या स्वच्छा समता शान्ता जीवन्मुक्तव्यवस्थितिःसाक्ष्यवस्था व्यवहृतौ सा तुर्यकलनोच्यते ॥ २४ ॥

yā svacchā samatā śāntā jīvanmuktavyavasthitiḥsākṣyavasthā vyavahṛtau sā turyakalanocyate || 24 ||

That which is pure, equanimous, and peaceful is the state of a liberated being in life. This witnessing state in worldly activities is called the moment of the fourth state.

जो शुद्ध, समतापूर्ण और शांत है, वह जीवन्मुक्त की अवस्था है। लौकिक गतिविधियों में यह साक्षी अवस्था चौथे पद का क्षण कहलाता है।

6.124.25

नैतज्जाग्रन्न च स्वप्नं संकल्पानामसंभवात्सुषुप्तभावो नाप्येतदभावाज्जडता स्थितेः ॥ २५ ॥

naitajjāgranna ca svapnaṃ saṃkalpānāmasaṃbhavātsuṣuptabhāvo nāpyetadabhāvājjaḍatā sthiteḥ || 25 ||

This is neither the waking state nor the dream state, nor is it the state of deep sleep due to the absence of mental constructs. It is not even inertness due to the absence of this state.

यह न जाग्रत अवस्था है, न स्वप्न अवस्था, न मानसिक निर्माणों की अनुपस्थिति के कारण सुषुप्ति की अवस्था। न ही इस अवस्था की अनुपस्थिति के कारण जड़ता है।

6.124.26

शान्तं सम्यक्प्रबुद्धानां यथास्थितमिदं जगत्विलीनं तुर्यमेवाहुरबुद्धानां स्थिरं स्थितम् ॥ २६ ॥

śāntaṃ samyakprabuddhānāṃ yathāsthitamidaṃ jagatvilīnaṃ turyamevāhurabuddhānāṃ sthiraṃ sthitam || 26 ||

The world appears calm to the fully enlightened, dissolved in the fourth state, but stable to the unenlightened.

पूर्ण रूप से जागृत लोगों के लिए यह जगत शांत प्रतीत होता है, चौथी अवस्था में विलीन, लेकिन अज्ञानी लोगों के लिए स्थिर प्रतीत होता है।

6.124.27

अहंकारकलात्यागे समतायाः समुद्भवेविशरारौ कृते चित्ते तुर्यावस्थोपतिष्ठते ॥ २७ ॥

ahaṃkārakalātyāge samatāyāḥ samudbhaveviśarārau kṛte citte turyāvasthopatiṣṭhate || 27 ||

When the ego is abandoned and equanimity arises, the mind becomes pure and the fourth state is attained.

जब अहंकार त्याग दिया जाता है और समता उत्पन्न होती है, तो मन शुद्ध हो जाता है और चौथी अवस्था प्राप्त होती है।

6.124.28

अथेमं शृणु दृष्टान्तं कथ्यमानं मयाधुनाप्रबुद्धोऽपि यथा बोधमुपैषि विबुद्धोपम ॥ २८ ॥

athemaṃ śṛṇu dṛṣṭāntaṃ kathyamānaṃ mayādhunāprabuddho'pi yathā bodhamupaiṣi vibudhopama || 28 ||

Now listen to this example being told by me, how even the unenlightened can attain enlightenment like the wise.

अब इस उदाहरण को सुनो जो मैं बता रहा हूँ, कि कैसे अज्ञानी भी ज्ञानी की तरह ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

6.124.29

कस्मिंश्चित्काननाभोगे महामौनं व्यवस्थितम्दृष्ट्वाद्भुतमिदं किंचिन्मुनिं पप्रच्छ लुब्धकः ॥ २९ ॥

kasmiṃścitkānanābhoge mahāmaunaṃ vyavasthitamdṛṣṭvādbhutamidaṃ kiṃcinmuniṃ papraccha lubdhakaḥ || 29 ||

In a certain part of the forest, seeing the sage established in great silence, the hunter, amazed, asked the sage.

जंगल के एक भाग में, महामौन में स्थित ऋषि को देखकर, शिकारी ने आश्चर्यचकित होकर ऋषि से पूछा।

6.124.30

पश्चादुपगतो बाणभिन्नं मृगमभिद्रुतम्मुने मदीयबाणेन विद्धो मृग इहागतः ॥ ३० ॥

paścādupagato bāṇabhinnaṃ mṛgamabhidrutammune madīyabāṇena viddho mṛga ihāgataḥ || 30 ||

Later, approaching the sage, the hunter said, 'O sage, the deer struck by my arrow has come here.'

बाद में, ऋषि के पास आकर, शिकारी ने कहा, 'हे ऋषि, मेरे तीर से घायल हुआ हिरण यहाँ आया है।'

6.124.31

क्व प्रयातो मृग इति प्रत्युवाच स तं मुनिःसमशीला वयं साधो मुनयो वनवासिनः ॥ ३१ ॥

kva prayāto mṛga iti pratyuvāca sa taṃ muniḥsamaśīlā vayaṃ sādho munayo vanavāsinaḥ || 31 ||

Where has the deer gone? Thus the sage replied to him: We are sages living in the forest, O virtuous one, we have similar conduct.

कहाँ गया है वह मृग? इस प्रकार उस मुनि ने उसे उत्तर दिया: हे साधु, हम वनवासी मुनि हैं, हमारा आचरण एक समान है।

6.124.32

नास्माकमस्त्यहंकारो व्यवहारेषु यः क्षमःसर्वाणीन्द्रियकर्माणि करोति हि सखे मनः ॥ ३२ ॥

nāsmākamastyahaṃkāro vyavahāreṣu yaḥ kṣamaḥsarvāṇīndriyakarmāṇi karoti hi sakhe manaḥ || 32 ||

We do not have ego in our dealings, O friend, the mind performs all the actions of the senses.

हमारे व्यवहारों में अहंकार नहीं है, हे मित्र, मन सभी इन्द्रियों के कार्यों को करता है।

6.124.33

अहंकारमयं तन्मे नूनं प्रगलितं चिरम्जाग्रत्स्वप्नसुषुप्ताख्या दशा वेद्मि न काश्चन ॥ ३३ ॥

ahaṃkāramayaṃ tanme nūnaṃ pragalitaṃ ciramjāgratsvapnasuṣuptākhyā daśā vedmi na kāścana || 33 ||

This ego of mine has certainly been dissolved for a long time. I do not know the states called waking, dreaming, and deep sleep.

मेरा यह अहंकार निश्चित रूप से लंबे समय से विलीन हो चुका है। मैं जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति कहलाने वाली अवस्थाओं को नहीं जानता।

6.124.34

तुर्य एव हि तिष्ठेऽहं तत्र दृश्यं न विद्यतेइति तस्य वचः श्रुत्वा मुनिनाथस्य राघव ॥ ३४ ॥

turya eva hi tiṣṭhe'haṃ tatra dṛśyaṃ na vidyateiti tasya vacaḥ śrutvā munināthasya rāghava || 34 ||

I indeed abide in the fourth state, where there is nothing to be seen. Having heard these words of the sage, O Raghava.

मैं वास्तव में चौथी अवस्था में रहता हूँ, जहाँ कुछ भी दिखाई नहीं देता। मुनि के इन शब्दों को सुनकर, हे रघुवंशी।

6.124.35

लुब्धकोऽर्थमविज्ञाय जगामाभिमतां दिशमतो वच्मि महाबाहो नास्ति तुर्येतरा दशा ॥ ३५ ॥

lubdhako'rthamavijñāya jagāmābhimatāṃ diśamato vacmi mahābāho nāsti turyetarā daśā || 35 ||

Not understanding the meaning, the hunter went in his desired direction. O mighty-armed one, I say there is no state other than the fourth.

अर्थ को न समझकर, शिकारी अपनी इच्छित दिशा में चला गया। हे महाबाहु, मैं कहता हूँ कि चौथी अवस्था के अलावा कोई अवस्था नहीं है।

6.124.36

निर्विकल्पा हि चित्तुर्यं तदेवास्तीह नेतरत्जाग्रत्स्वप्नसुषुप्ताख्यं त्रयं रूपं हि चेतसः ॥ ३६ ॥

nirvikalpā hi citturyaṃ tadevāstīha netaratjāgratsvapnasuṣuptākhyaṃ trayaṃ rūpaṃ hi cetasaḥ || 36 ||

Indeed, the mind is without distinctions, and that alone exists here, not anything else. The three states of waking, dreaming, and deep sleep are the forms of the mind.

निश्चय ही, मन बिना किसी भेदभाव के है, और यही यहाँ है, कुछ और नहीं। जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति के तीन रूप मन के हैं।

6.124.37

घोरं शान्तं च मूढं च आत्मचित्तमिहास्थितम्घोरं जाग्रन्मयं चित्तं शान्तं स्वप्नमयं स्थितम् ॥ ३७ ॥

ghoraṃ śāntaṃ ca mūḍhaṃ ca ātmacittamihāsthitamghoraṃ jāgranmayaṃ cittaṃ śāntaṃ svapnamayaṃ sthitam || 37 ||

The mind, which is the self, is established here as terrible, peaceful, and dull. The terrible mind is in the waking state, the peaceful mind is in the dreaming state, and the dull mind is in the deep sleep state.

मन, जो आत्मा है, यहाँ भयानक, शांत और मूढ़ के रूप में स्थापित है। भयानक मन जाग्रत अवस्था में है, शांत मन स्वप्न अवस्था में है, और मूढ़ मन सुषुप्ति अवस्था में है।

6.124.38

मूढं सुषुप्तभावस्थं त्रिभिर्हीनं मृतं भवेत्यच्च चित्तं मृतं तत्र सत्त्वमेकं स्थितं समम्तदेव योगिनः सर्वे यत्नात्संपादयन्ति हि ॥ ३८ ॥

mūḍhaṃ suṣuptabhāvasthaṃ tribhirhīnaṃ mṛtaṃ bhavetyacca cittaṃ mṛtaṃ tatra sattvamekaṃ sthitaṃ samamtadeva yoginaḥ sarve yatnātsaṃpādayanti hi || 38 ||

The dull mind in the state of deep sleep is devoid of the three states and is considered dead. And the mind that is dead there, the pure existence alone remains. This is what all yogis strive to attain with effort.

सुषुप्ति अवस्था में मूढ़ मन तीन अवस्थाओं से रहित है और मृत माना जाता है। और वहाँ मृत मन, शुद्ध अस्तित्व अकेला रह जाता है। यही सब योगी प्रयास से प्राप्त करने की कोशिश करते हैं।

6.124.39

समस्तसंकल्पविलासमुक्तं तुर्ये पदे तिष्ठ निरामयात्मायत्र स्थिताः साधु सदैव मुक्ताः प्रशान्तमेदा मुनयो महान्तः ॥ ३९ ॥

samastasaṃkalpavilāsamuktaṃ turye pade tiṣṭha nirāmayātmāyatra sthitāḥ sādhu sadaiva muktāḥ praśāntamedā munayo mahāntaḥ || 39 ||

Free from all mental constructs, abide in the fourth state, the pure self. Those who are established there are always good and liberated. These great sages are peaceful.

सभी मानसिक निर्माणों से मुक्त, चौथी अवस्था में, शुद्ध आत्मा में रहो। जो वहाँ स्थित हैं, वे हमेशा अच्छे और मुक्त हैं। ये महान मुनि शांत हैं।

Chapter 125

6.125.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । सिद्धान्तोऽध्यात्मशास्त्राणां सर्वापह्नव एव हि । नाविद्यास्तीह नो माया शान्तं ब्रह्मेदमक्रमम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | siddhānto'dhyātmaśāstrāṇāṃ sarvāpahnava eva hi | nāvidyāstīha no māyā śāntaṃ brahmedamakramam || 1 ||

Vasishtha said: The ultimate conclusion of all spiritual scriptures is the negation of everything. There is no ignorance here, nor is there any illusion. This Brahman is peaceful and motionless.

वसिष्ठ ने कहा: सभी आध्यात्मिक शास्त्रों का अन्तिम निष्कर्ष सब कुछ का नकार है। यहाँ कोई अज्ञान नहीं है, न ही कोई माया है। यह ब्रह्म शान्त और अचल है।

6.125.2

शान्त एव चिदाभासे स्वच्छे समसमात्मनि । समग्रशक्तिखचिते ब्रह्मेति कलिताभिधे ॥ २ ॥

śānta eva cidābhāse svacche samasamātmani | samagraśaktikhacite brahmeti kalitābhidhe || 2 ||

Peaceful indeed, in the pure reflection of consciousness, in the equanimous self, in the complete power of awareness, this is called Brahman.

शान्त ही, चेतना के शुद्ध प्रतिबिम्ब में, समतापूर्ण आत्मा में, पूर्ण चेतना शक्ति में, इसे ब्रह्म कहते हैं।

6.125.3

निर्णीय केचिच्छून्यत्वं केचिद्विज्ञानमात्रताम् । केचिदीश्वररूपत्वं विवदन्ते परस्परम् ॥ ३ ॥

nirṇīya kecicchūnyatvaṃ kecidvijñānamātratām | kecidīśvararūpatvaṃ vivadante parasparam || 3 ||

Some determine it to be emptiness, some determine it to be pure consciousness, and some determine it to be the form of the Lord. They argue with each other.

कुछ लोग इसे शून्यता मानते हैं, कुछ लोग इसे शुद्ध चेतना मानते हैं, और कुछ लोग इसे ईश्वर का रूप मानते हैं। वे एक-दूसरे से बहस करते हैं।

6.125.4

सर्वमेव परित्यज्य महामौनी भवानघ । निर्वाणवान्निर्मननः क्षीणचित्तः प्रशान्तधीः ॥ ४ ॥

sarvameva parityajya mahāmaunī bhavānagha | nirvāṇavānnirmananaḥ kṣīṇacittaḥ praśāntadhīḥ || 4 ||

Abandoning everything, become a great silent one, O sinless one. Be free from desires, with a diminished mind, and a peaceful intellect.

सब कुछ छोड़कर, महान मौनी बन जाओ, हे निष्पाप। इच्छाओं से मुक्त होओ, मन को शान्त करो, और बुद्धि को शान्त करो।

6.125.5

आत्मन्येवास्व शान्तात्मा मूकान्धबधिरोपमः । नित्यमन्तर्मुखो भूत्वा स्वात्मनान्तः प्रपूर्णधीः ॥ ५ ॥

ātmanyevāssva śāntātmā mūkāndhabadhiroopamaḥ | nityamantarmukho bhūtvā svātmanāntaḥ prapūrṇadhīḥ || 5 ||

Remain in the self, be a peaceful self, like one who is mute, blind, and deaf. Always be inward-looking and be completely fulfilled within the self.

आत्मा में ही रहो, शान्त आत्मा बनो, जैसे कोई गूँगा, अन्धा और बहरा हो। हमेशा अन्तर्मुखी बनो और आत्मा में ही पूर्णता पाओ।

6.125.6

जाग्रत्येव सुषुप्तस्थः कुरु कर्माणि राघव अन्तः सर्वपरित्यागी बहिः कुरु यथागतम् ॥ ६ ॥

jāgratyeva suṣuptasthaḥ kuru karmāṇi rāghava antaḥ sarvaparityāgī bahiḥ kuru yathāgatam || 6 ||

O Raghava, even while awake, be as if in deep sleep; perform your duties externally, but internally renounce everything.

हे रघुवंशी, जाग्रत अवस्था में भी गहरी नींद में रहो, अपने कर्म करो लेकिन अंतर्मन से सब कुछ त्याग दो।

6.125.7

चित्तसत्ता परं दुःखं चित्तासत्ता परं सुखम् अतश्चित्तं चिदेकात्मा नय क्षयमवेदनात् ॥ ७ ॥

cittasattā paraṃ duḥkhaṃ cittāsattā paraṃ sukham ataścittaṃ cidekātmā naya kṣayamavedanāt || 7 ||

Attachment to the mind is the greatest sorrow, detachment from the mind is the greatest happiness. Therefore, lead the mind, which is pure consciousness, to dissolution through non-perception.

मन की आसक्ति सबसे बड़ा दुःख है, मन से अलग होना सबसे बड़ा सुख है। इसलिए, मन को, जो शुद्ध चेतना है, अनुभव के अभाव से विलीनता की ओर ले जाएँ।

6.125.8

दृष्टा रम्यमरम्यं वा स्थेयं पाषाणवत्समम् एतावतात्मयत्नेन जिता भवति संसृतिः ॥ ८ ॥

dṛṣṭā ramyamaranyaṃ vā stheyaṃ pāṣāṇavatsamam etāvatātmayatnena jitā bhavati saṃsṛtiḥ || 8 ||

Whether one sees pleasant or unpleasant things, one should remain steadfast like a stone. With this much effort, the cycle of rebirth is conquered.

चाहे कोई रमणीय या अरमणीय चीजें देखे, वह पत्थर की तरह स्थिर रहे। इस प्रयास से, पुनर्जन्म का चक्र जीता जाता है।

6.125.9

संवेदनीयं न सुखं नासुखं न च मध्यमम् एतावतात्मयत्नेन दुःखान्तोऽनन्त आप्यते ॥ ९ ॥

saṃvedanīyaṃ na sukhaṃ nāsukhaṃ na ca madhyamam etāvatātmayatnena duḥkhānto'nantha āpyate || 9 ||

That which is perceived is neither happiness nor unhappiness, nor is it neutral. With this much effort, the end of suffering, which is endless, is attained.

जो अनुभव किया जाता है, वह न तो सुख है, न ही दुःख है, न ही मध्यम है। इस प्रयास से, दुःख का अंत, जो अनंत है, प्राप्त होता है।

6.125.10

आपीनमण्डलशशाङ्कवदन्तरेव श्रीमद्रसायनमयः सुखमेति तज्ज्ञः विज्ञातसर्वभुवनत्रयवस्तुसारः कुर्वन्न नाम कुरुते परमभ्युपेतः ॥ १० ॥

āpīnamaṇḍalaśaśāṅkavadantareva śrīmadrasāyanamayaḥ sukhameti tajjñaḥ
vijñātasarvabhuvanatrayavastusāraḥ kurvannanāma kurute paramabhyupetaḥ || 10 ||

The one who knows the essence of the three worlds, like the full moon in the sky, attains happiness. Being fully aware of the essence of all things, he performs actions without attachment, having attained the supreme state.

जो तीनों लोकों के सार को जानता है, वह आकाश में पूर्ण चंद्रमा की तरह सुख प्राप्त करता है। सभी चीजों के सार को जानकर, वह अनासक्ति से कार्य करता है, परम अवस्था प्राप्त करने के बाद।

Chapter 126

6.126.1

श्रीराम उवाच । सप्तानां योगभूमीनामभ्यासः क्रियते कथम् । कीदृशानि च चिह्नानि भूमिकां प्रति योगिनः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | saptānāṃ yogabhūmīnāmabhyāsaḥ kriyate katham | kīdṛśāni ca cihnāni bhūmikāṃ prati yoginaḥ ||1||

Shri Rama said: How is the practice of the seven stages of yoga performed? And what are the signs of each stage for the yogis?

श्री राम ने कहा: सात योग भूमियों का अभ्यास कैसे किया जाता है? और योगियों के लिए प्रत्येक भूमि के क्या-क्या चिह्न हैं?

6.126.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । प्रवृत्तश्च निवृत्तश्च भवति द्विविधः पुमान् । स्वर्गापवर्गोन्मुखयोः शृणु लक्षणमेतयोः ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | pravṛttaśca nivṛttaśca bhavati dvividhaḥ pumān | svargāpavargonmukhayoḥ śṛṇu lakṣaṇametayoḥ ||2||

Shri Vasistha said: A person is of two kinds, engaged and disengaged. Listen to the characteristics of those inclined towards heaven and liberation.

श्री वसिष्ठ ने कहा: मनुष्य दो प्रकार का होता है, प्रवृत्त और निवृत्त। स्वर्ग और मुक्ति की ओर उन्मुख लोगों के लक्षणों को सुनो।

6.126.3

कियत्तन्नाम निर्वाणं वरं संसृतिरेव मे । इतिकर्तव्यकर्ता यः स प्रवृत्त इति स्मृतः ॥ ३ ॥

kiyattannāma nirvāṇaṃ varaṃ saṃsṛtireva me | itikartavyakartā yaḥ sa pravṛtta iti smṛtaḥ ||3||

How much is that liberation? Indeed, the cycle of existence is better for me. One who thinks 'I have to do this' is called engaged.

उस मुक्ति का क्या है? मुझे तो संसार का चक्र ही बेहतर लगता है। जो सोचता है 'मुझे यह करना है', वह प्रवृत्त कहलाता है।

6.126.4

चलार्णवयुगच्छिद्रकूर्मग्रीवाप्रवेशवत् । अनेकजन्मनामन्ते विवेकी जायते पुमान् ॥ ४ ॥

calārṇavayugacchidrakūrmagrīvāpraveśavat | anekajanmanāmante vivekī jāyate pumān ||4||

Like a tortoise entering the small opening of a moving ocean, after many births, a discerning person is born.

जैसे कछुआ चलते समुद्र के छोटे छिद्र में प्रवेश करता है, वैसे ही अनेक जन्मों के बाद एक विवेकी पुरुष जन्म लेता है।

6.126.5

असारा बत संसारव्यवस्थालं ममैतया । किं कर्मभिः पर्युषितैर्दिनं तैरेव नीयते ॥ ५ ॥

asārā bata saṃsāravyavasthālaṃ mamaitayā | kiṃ karmabhiḥ paryuṣitairdinaṃ taireva nīyate ||5||

Alas, this worldly arrangement is useless to me. What is the use of actions that are worn out? One is led by those very actions day by day.

हाय, यह संसारिक व्यवस्था मेरे लिए निरर्थक है। पुराने कर्मों का क्या लाभ? व्यक्ति उन्हीं कर्मों से दिन-प्रतिदिन नियंत्रित होता है।

6.126.6

क्रियातिशयनिर्मुक्तं किं स्याद्विश्रमणं परम्। इति निश्चयवान्योऽन्तः स निवृत्त इति स्मृतः ॥ ६ ॥

kriyātiśayanirmuktaṃ kiṃ syādviśramaṇaṃ param | iti niścayavānyo'ntaḥ sa nivṛtta iti smṛtaḥ || 6 ||

What is the ultimate rest that is free from excessive activity? One who is determined and has withdrawn from the world is known as nivṛtta.

जो अतिशय क्रिया से मुक्त है वह परम विश्राम क्या है? जो निश्चयवान और अन्तः से निवृत्त है वह निवृत्त कहलाता है।

6.126.7

कथं विरागवान्भूत्वा संसाराब्धिं तराम्यहम्। एवंविचारणपरो यदा भवति सन्मतिः ॥ ७ ॥

kathaṃ virāgavānbhūtvā saṃsārābdhiṃ tarāmyaham | evaṃvicāraṇaparo yadā bhavati sanmatiḥ || 7 ||

How can I cross the ocean of worldly existence by becoming detached? When one's mind is engaged in such contemplation, it is considered wise.

संसार के सागर को कैसे पार करूँ विराग होकर? जब कोई ऐसा विचार करता है, तब उसका मन समझदार कहलाता है।

6.126.8

विरागमुपयात्यन्तर्भावनास्वनुवासरम्। क्रियासूदाररूपासु क्रमते मोदतेऽन्वहम् ॥ ८ ॥

virāgamupayātyantarbhāvanāsvanuvāsaram | kriyāsūdārarūpāsu kramate modate'nvaham || 8 ||

One attains detachment by constantly contemplating on it. One progresses and rejoices in noble actions.

विराग निरंतर भावना में लगे रहने से प्राप्त होता है। उत्तम कर्मों में विकास होता है और आनंद आता है।

6.126.9

ग्राम्यासु जडचेष्टासु सततं विचिकित्सति। नोदाहरति मर्माणि पुण्यकर्माणि सेवते ॥ ९ ॥

grāmyāsu jaḍaceṣṭāsu satataṃ vicikitsati | nodāharati marmāṇi puṇyakarmāṇi sevate || 9 ||

One constantly doubts worldly, materialistic activities. One does not reveal secrets and engages in virtuous deeds.

कोई निरंतर सांसारिक, मायावी क्रियाओं पर संदेह करता है। वह रहस्य नहीं बताता और पुण्य कर्मों में लगा रहता है।

6.126.10

मनोनुद्वेगकारीणि मृदुकर्माणि सेवते। पापाद्बिभेति सततं न च भोगमपेक्षते ॥ १० ॥

manonudvegakārīṇi mṛdukarmāṇi sevate | pāpādbibheti satataṃ na ca bhogamapekṣate || 10 ||

One engages in gentle actions that do not disturb the mind. One constantly fears sin and does not seek pleasure.

कोई मन को विचलित नहीं करने वाले कोमल कर्मों में लगा रहता है। वह निरंतर पाप से डरता है और भोग नहीं चाहता।

6.126.11

स्नेहप्रणयगर्भाणि पेशलान्युचितानि च। देशकालोपपन्नानि वचनान्यभिभाषते ॥ ११ ॥

sneha-praṇaya-garbhāṇi peśalānyucitāni ca | deśa-kāla-upapannāni vacanānyabhibhāṣate || 11 ||

He speaks words that are filled with affection and love, appropriate, pleasant, and suitable for the time and place.

वह ऐसे शब्द बोलता है जो स्नेह और प्रेम से भरे होते हैं, उचित, मधुर और समय और स्थान के अनुकूल होते हैं।

6.126.12

तदासौ प्रथमामेकां प्राप्तो भवति भूमिकाम्। मनसा कर्मणा वाचा सज्जनानुपसेवते ॥ १२ ॥

tadāsau prathamāmekāṃ prāpto bhavati bhūmikām | manasā karmaṇā vācā sajjana-anupasevate || 12 ||

Then he attains the first stage and serves the noble ones with his mind, actions, and speech.

तब वह पहले चरण को प्राप्त होता है और अपने मन, कर्म और वाणी से श्रेष्ठ लोगों की सेवा करता है।

6.126.13

यतः कुतश्चिदानीय ज्ञानशास्त्राण्यवेक्षते। एवंविचारवान्यः स्यात्संसारोत्तारणं प्रति ॥ १३ ॥

yataḥ kutaścidānīya jñāna-śāstrāṇyavekṣate | evaṃvicāravānyaḥ syātsaṃsārottāraṇaṃ prati || 13 ||

From wherever he brings the scriptures of knowledge and examines them, thus he becomes one who is engaged in such contemplation for the liberation from the worldly cycle.

जहां से भी वह ज्ञान के शास्त्रों को लाकर उनका अवलोकन करता है, वह ऐसा विचारक बन जाता है जो संसार से उत्तारण (मुक्ति) के लिए ऐसे विचारों में लगा होता है।

6.126.14

स भूमिकावानित्युक्तः शेषः स्वार्थ इति स्मृतः। विचारनाम्नीमितरामागतो योगभूमिकाम् ॥ १४ ॥

sa bhūmikāvānityuktaḥ śeṣaḥ svārtha iti smṛtaḥ | vicāranāmnīmitarāmāgato yogabhūmikām || 14 ||

He is called one who has attained the stages, the rest is known as self-interest, he reaches another stage of yoga called Vicāra.

वह भूमिकाओं को प्राप्त करने वाला कहा जाता है, शेष स्वार्थ के रूप में जाना जाता है, वह विचार नामक दूसरी योग भूमिका तक पहुंचता है।

6.126.15

श्रुतिस्मृतिसदाचारधारणाध्यानकर्मणाम्। मुख्यया व्याख्यया ख्याताञ्श्रयते श्रेष्ठपण्डितान् ॥ १५ ॥

śrutismṛtisadācāradhāraṇādhyānakarmaṇām | mukhyayā vyākhyayā khyātāñśrayate śreṣṭhapaṇḍitān || 15 ||

He takes refuge in the best scholars who are known for their primary explanations of the scriptures, traditions, good conduct, meditation, and actions.

वह उन श्रेष्ठ पंडितों की शरण लेता है जो शास्त्रों, परंपराओं, सदाचार, ध्यान और कर्मों की मुख्य व्याख्याओं के लिए जाने जाते हैं।

6.126.16

पदार्थप्रविभागज्ञः कार्याकार्यविनिर्णयम्। जानात्यधिगतश्रव्यो गृहं गृहपतिर्यथा ॥ १६ ॥

padārthapravibhāgajñaḥ kāryākāryavinirṇayam | jānātyadhigataśravyo gṛhaṃ gṛhapatiryathā || 16 ||

One who understands the classification of objects and determines what should and should not be done, knows the essence of sound, like the head of a household knows his home.

जो पदार्थों के विभाजन को समझता है और क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए, इसका निर्णय लेता है, वह शब्द की आत्मा को जानता है, जैसे गृहस्थ अपने घर को जानता है।

6.126.17

मदाभिमानमात्सर्यमोहलोभातिशायिताम्। बहिरप्याश्रितामीषत्त्यजत्यहिरिव त्वचम् ॥ १७ ॥

madābhimānamātsaryamohalobhātiśāyitām | bahirapyāśritāmīṣattyajatyahiriv tvacam || 17 ||

He gradually abandons pride, arrogance, envy, delusion, and excessive greed, even if they are deeply ingrained, like a snake sheds its skin.

वह धीरे-धीरे अहंकार, घमंड, ईर्ष्या, भ्रम और अति लोभ को त्याग देता है, भले ही वे गहरे बैठे हों, जैसे साँप अपनी केंचुल को छोड़ता है।

6.126.18

इत्थंभूतमतिः शास्त्रगुरुसज्जनसेवनात्। सरहस्यमशेषेण यथावदधिगच्छति ॥ १८ ॥

itthaṃbhūtamatiḥ śāstragurusajjanasevanāt | sarahasyamaśeṣeṇa yathāvadadhigacchati || 18 ||

One who has such a mindset attains complete knowledge, including secrets, through the service of scriptures, teachers, and noble people.

जिसका ऐसा मनोभाव है, वह शास्त्रों, गुरुओं और सज्जनों की सेवा से सम्पूर्ण ज्ञान, रहस्यों सहित, प्राप्त करता है।

6.126.19

असंसङ्गाभिधामन्यां तृतीयां योगभूमिकाम्। ततः पतत्यसौ कान्तः पुष्पशय्यामिवामलाम् ॥ १९ ॥

asaṃsaṅgābhidhāmanyāṃ tṛtīyāṃ yogabhūmikām | tataḥ patatyasau kāntaḥ puṣpaśayyāmivāmalām || 19 ||

Then, he reaches the third stage of yoga, known as non-attachment, as if falling into a pure bed of flowers.

तब, वह असंगता के रूप में ज्ञात तीसरे योग के स्तर तक पहुँचता है, जैसे कि वह एक शुद्ध फूलों के बिस्तर पर गिरता है।

6.126.20

यथावच्छास्त्रवाक्यार्थे मतिमाधाय निश्चलम्। तापसाश्रमविश्रामैरध्यात्मकथनक्रमैः ॥ २० ॥

yathāvacchāstravākyārthe matimādhāya niścalam | tāpasāśramaviśrāmairadhyātmakathanakramaiḥ || 20 ||

Having firmly established the mind in the true meaning of the scriptures, one finds rest in the hermitage of ascetics through the sequence of spiritual discourses.

शास्त्रों के वाक्यार्थ में मन को स्थिर करके, वह तपस्वियों के आश्रम में आध्यात्मिक कथनों के क्रम से विश्राम पाता है।

6.126.21

संसारनिन्दकैस्तद्वद्वैराग्यकरणक्रमैः। शिलाशय्यासमासीनो जरयत्यायुरातताम् ॥ २१ ॥

saṃsāranindakais tadvad vairāgyakaraṇakramaiḥ | śilāśayyāsamāsīno jarayatyāyurātatam || 21 ||

Those who criticize the world and practice detachment in stages, lie on a stone bed and waste their life.

जो संसार की निन्दा करते हैं और वैराग्य के क्रम से अभ्यास करते हैं, वे पत्थर की शय्या पर लेटे रहते हैं और अपना जीवन बर्बाद करते हैं।

6.126.22

वनवासविहारेण चित्तोपशमशोभिना। असङ्गसुखसौम्येन कालं नयति नीतिमान् ॥ २२ ॥

vanavāsavihāreṇa cittopaśamaśobhinā | asaṅgasukhasaumyena kālaṃ nayati nītimān || 22 ||

The wise one, through the enjoyment of forest life and the beauty of mental peace, leads time with the serenity of detached happiness.

बुद्धिमान व्यक्ति वनवास के आनंद और मानसिक शांति की सुंदरता के द्वारा, असंग सुख की शांति से समय को आगे बढ़ाता है।

6.126.23

अभ्यासात्साधुशास्त्राणां करणात्पुण्यकर्मणाम्। जन्तोर्यथावदेवेयं वस्तुदृष्टिः प्रसीदति ॥ २३ ॥

abhyāsātsādhuśāstrāṇāṃ karaṇātpunyakarmaṇām | jantoryathāvadeveyaṃ vastudṛṣṭiḥ prasīdati || 23 ||

Through the practice of good scriptures and the performance of virtuous deeds, the true vision of reality is revealed to the individual.

सदाचारी शास्त्रों के अभ्यास और पुण्य कर्मों के करने से, व्यक्ति को वास्तविकता का सही दृष्टिकोण प्राप्त होता है।

6.126.24

तृतीयां भूमिकां प्राप्य बुधोऽनुभवति स्वयम्। द्विःप्रकारमसंसङ्गं तस्य भेदमिमं शृणु॥ २४॥

tṛtīyāṃ bhūmikāṃ prāpya budho'nubhavati svayam | dviḥprakāramasaṃsaṅgaṃ tasya bhedamimaṃ śṛṇu || 24 ||

Having attained the third stage, the wise one experiences two kinds of detachment; listen to this distinction.

तीसरी अवस्था प्राप्त करने पर, बुद्धिमान व्यक्ति दो प्रकार के वैराग्य का अनुभव करता है; इस भेद को सुनो।

6.126.25

द्विविधोऽयमसंसङ्गः सामान्यः श्रेष्ठ एव च। नाहं कर्ता न भोक्ता च न बाध्यो न च बाधकः॥ २५॥

dvividho'yamasasaṃsaṅgaḥ sāmānyaḥ śreṣṭha eva ca | nāhaṃ kartā na bhoktā ca na bādhyo na ca bādhakaḥ || 25 ||

This detachment is of two kinds: ordinary and superior. I am neither the doer, the enjoyer, the afflicted, nor the afflicter.

यह वैराग्य दो प्रकार का है: सामान्य और श्रेष्ठ। मैं न कर्ता हूँ, न भोक्ता हूँ, न पीड़ित हूँ, न पीड़नकर्ता हूँ।

6.126.26

इत्यसञ्जनमर्थेषु सामान्यासङ्गनामकम्। प्राक्कर्मनिर्मितं सर्वमीश्वराधीनमेव च॥ २६॥

ityasañjanamartheṣu sāmānyāsaṅganāmakam | prākkarmanirmitaṃ sarvamīśvarādhīnameva ca || 26 ||

Thus, the attachment to worldly objects is called general attachment | All is created by past actions and is dependent on the Lord

इस प्रकार, विषयों में आसक्ति सामान्य आसक्ति कहलाती है | सब कुछ पिछले कर्मों द्वारा बनाया गया है और ईश्वर पर निर्भर है

6.126.27

सुखं वा यदि वा दुःख कैवात्र मम कर्तृता। भोगाभोगा महारोगाः संपदः परमापदः॥ २७॥

sukhaṃ vā yadi vā duḥkha kaivātra mama kartṛtā | bhogābhogā mahārogāḥ saṃpadaḥ paramāpadaḥ || 27 ||

Whether it is happiness or sorrow, what is my agency here | Enjoyments and sufferings are great diseases, prosperities are great calamities

चाहे सुख हो या दुःख, यहाँ मेरी क्या कर्तृता है | भोग और अभोग महान रोग हैं, समृद्धियाँ महान आपदाएँ हैं

6.126.28

वियोगायैव संयोगा आधयो व्याधयो धियः। कालः कवलनोद्युक्तः सर्वभावाननारतम्॥ २८॥

viyogāyaiva saṃyogā ādhayo vyādhayo dhiyaḥ | kālaḥ kavalanodyuktaḥ sarvabhāvānanāratam || 28 ||

Union is only for separation, diseases are for the intellect | Time, driven by the urge to swallow, is relentless towards all beings

संयोग केवल वियोग के लिए है, रोग बुद्धि के लिए हैं | समय, निगलने की इच्छा से प्रेरित, सभी प्राणियों के प्रति निरंतर है

6.126.29

अनास्थयेति भावानां यदभावनमान्तरम्। वाक्यार्थलग्नमनसः सामान्योऽसावसंगमः॥ २९॥

anāsthayeti bhāvānāṃ yadabhāvanamāntaram | vākyārthalagnamanasaḥ sāmānyo'sāvasaṅgamaḥ || 29 ||

Thus, the non-existence of states is the interval of non-existence | The mind engaged in the meaning of words is the general non-attachment

इस प्रकार, भावों का अभाव अभाव का अंतराल है | शब्दों के अर्थ में लगा मन सामान्य असंग है

6.126.30

अनेकक्रमयोगेन संयोगेन महात्मनाम् । वियोगेनासतामन्तः प्रयोगेणात्मसंविदाम् ॥ ३० ॥

anekakramayogena saṃyogena mahātmanām | viyogena'sātāmanthaḥ prayogena'tmasaṃvidām || 30 ||

By the union of various sequences, the union of great souls | By the separation of the non-existent, the practice of self-awareness

विविध क्रमों के योग से, महात्माओं का संयोग | असत् के वियोग से, आत्म-संविद की अभ्यास

6.126.31

पौरुषेण प्रयत्नेन संततााभ्यासयोगतः । करामलकवद्वस्तुन्यागते स्फुटतां दृढम् ॥ ३१ ॥

pauruṣeṇa prayatnena santatābhyāsayogataḥ | karāmalakavadvastunyāgate sphuṭatāṃ dṛḍham || 31 ||

Through human effort, continuous practice, and the union of yoga, the essence of things, like the ripeness of a fruit, clearly manifests.

मानव प्रयास, निरंतर अभ्यास और योग के संयोग से, फल की पकने की तरह, वस्तुओं का सार स्पष्ट रूप से प्रकट होता है।

6.126.32

संसाराम्बुनिधेः पारे सारे परमकारणे । नाहं कर्तेश्वरः कर्ता कर्म वा प्राकृतं मम ॥ ३२ ॥

saṃsārāmbunidheḥ pāre sāre paramakāraṇe | nāhaṃ karteśvaraḥ kartā karma vā prākṛtaṃ mama || 32 ||

On the other shore of the ocean of worldly existence, in the essence which is the supreme cause, I am not the doer, nor is the action mine.

संसार के सागर के पार, जो परम कारण है, उस सार में, मैं कर्ता नहीं हूँ, न ही कर्म मेरा है।

6.126.33

कृत्वा दूरतरे नूनमिति शब्दार्थभावनम् । यन्मौनमासनं शान्तं तच्छ्रेष्ठासङ्ग उच्यते ॥ ३३ ॥

kṛtvā dūratare nūnamiti śabdārthabhāvanam | yanmaunamāsanaṃ śāntaṃ tacchreṣṭhāsaṅga ucyate || 33 ||

Having made distant, indeed, the contemplation of the meaning of words, that silence which is seated and peaceful is called the best association.

शब्दों के अर्थ की चिंतन को दूर करके, वह शान्त और स्थिर मौन श्रेष्ठ संग कहलाता है।

6.126.34

यन्नान्तर्न बहिर्नाधो नोर्ध्वं नाशासु नाम्बरे । न पदार्थे नापदार्थे न जडे न च चेतने ॥ ३४ ॥

yannāntar na bahir nādho nourdhvaṃ nāśāsu nāmbare | na padārthe nāpadārthe na jaḍe na ca cetane || 34 ||

That which is not inside, not outside, not below, not above, not in the sense organs, not in the elements, not in the inanimate, nor in the conscious.

जो अंतर नहीं है, बाहर नहीं है, नीचे नहीं है, ऊपर नहीं है, इंद्रियों में नहीं है, तत्वों में नहीं है, जड़ में नहीं है, और चेतन में भी नहीं है।

6.126.35

आसितं भासनं शान्तमभासं नभसा समम् । अनाद्यन्तमजं कान्तं तच्छ्रेष्ठासङ्ग उच्यते ॥ ३५ ॥

āsitaṃ bhāsanaṃ śāntamabhāsaṃ nabhasā samam | anādyantamajaṃ kāntaṃ tacchreṣṭhāsaṅga ucyate || 35 ||

That which is seated, shining, peaceful, non-shining, and equal to the sky, which is without beginning or end, unborn, and beautiful, is called the best association.

जो स्थिर है, चमकता है, शान्त है, चमकीला नहीं है, और आकाश के समान है, जिसका न आदि है न अंत, जो अजन्मा और सुंदर है, वह श्रेष्ठ संग कहलाता है।

6.126.36

संतोषामोदमधुरः सत्कार्यामलपल्लवः । चित्तनालाग्रसंलीनो विघ्नकण्टकसंकटः ॥ ३६ ॥

santoṣāmodamadhuraḥ satkāryāmalapallavaḥ | cittanālāgrasaṃlīno vighnakaṇṭakasaṃkaṭaḥ || 36 ||

The one who is sweet with the joy of contentment, with pure and tender actions, absorbed in the tip of the mind, and surrounded by obstacles and thorns.

जो संतोष की मिठास से भरा है, पवित्र और कोमल कार्यों से युक्त है, मन की नाल के अंत में स्थित है, और बाधाओं और कंटकों से घिरा है।

6.126.37

विवेकपद्मो रूढोऽन्तर्विचारार्कविलासितः । फलं फलत्यसंसङ्गां तृतीयां भूमिकामिमाम् ॥ ३७ ॥

vivekapadmo rūḍho'ntarvicārārkavilāsitaḥ | phalaṃ phalatyasaṃsaṅgāṃ tṛtīyāṃ bhūmikāmimām || 37 ||

The one who is established in the lotus of discrimination, adorned with the splendor of inner reflection, and bears fruit without attachment to this third stage.

जो विवेक के कमल में स्थित है, अंतर्विचार के सौंदर्य से अलंकृत है, और इस तीसरे चरण में आसक्ति के बिना फल देता है।

6.126.38

समवायाद्विशुद्धानां संचयात्पुण्यकर्मणाम् । काकतालीययोगेन प्रथमोदेति भूमिका ॥ ३८ ॥

samavāyādviviśuddhānāṃ saṃcayātpuṇyakarmaṇām | kākatālīyayogena prathamodeti bhūmikā || 38 ||

From the union of the pure and the accumulation of meritorious deeds, the first stage arises like the Kakataliya yoga.

पवित्र के संयोग और पुण्य कर्मों के संचय से, पहला चरण काकतालीय योग की तरह उभरता है।

6.126.39

भूमिः प्रोदितमात्रा तैरमृताङ्कुरिकेव सा । विवेकेनाम्बुसेकेन रक्ष्या पाल्या प्रयत्नतः ॥ ३९ ॥

bhūmiḥ proditamātrā tairamṛtāṅkurikeva sā | vivekenāmbusekena rakṣyā pālyā prayatnataḥ || 39 ||

The stage, once it has just arisen, should be protected and nurtured with the water of discrimination, like a tender sprout of nectar.

चरण, जब यह अभी-अभी उभरा है, अमृत के कोमल अंकुर की तरह, विवेक के जल से सुरक्षित और पालन किया जाना चाहिए।

6.126.40

येनांशेनोल्लसत्येषा विचारेणोदयं नयेत् । तमेवानुदिनं यत्नात्कृषीवल इवाङ्कुरम् ॥ ४० ॥

yenāṃśenaullasatyēṣā vicāreṇodayaṃ nayet | tamevānudinaṃ yatnātkṛṣīvala ivāṅkuram || 40 ||

By the part that makes it shine, one should lead it to rise through reflection, just as a farmer nurtures a sprout with daily effort.

जिस अंश से यह चमकता है, उसे विचार से उभरने के लिए ले जाना चाहिए, जैसे किसान प्रतिदिन प्रयास से अंकुर का पालन करता है।

6.126.41

एषा हि परिमृष्टान्तरन्यासां प्रसवैकभूः । द्वितीयां भूमिकां यत्नात्तृतीयां प्राप्नुयात्ततः ॥ ४१ ॥

eṣā hi parimṛṣṭāntaranyāsāṃ prasavaikabhūḥ | dvitīyāṃ bhūmikāṃ yatnāttṛtīyāṃ prāpnuyāttataḥ || 41 ||

This indeed is the single source of the birth of the various purified states | One should strive to attain the second stage and then the third || 41 ||

यह वास्तव में विभिन्न शुद्ध अवस्थाओं के जन्म का एकमात्र स्रोत है | एक को दूसरे चरण को प्राप्त करने के लिए प्रयास करना चाहिए और फिर तीसरे चरण को || 41 ||

6.126.42

श्रेष्ठा संसङ्गता ह्येषा तृतीया भूमिकात्र हि । भवति प्रोज्झिताशेषसंकल्पकलनः पुमान् ॥ ४२ ॥

śreṣṭhā saṃsaṅgatā hyeṣā tṛtīyā bhūmikātra hi | bhavati projjhitāśeṣasaṅkalpakalanaḥ pumān || 42 ||

This indeed is the best association, the third stage here | One becomes a man who has abandoned all intentions and calculations || 42 ||

यह वास्तव में सर्वोत्तम संगति है, यहाँ तीसरा चरण | एक व्यक्ति सभी इरादों और गणनाओं को त्याग देता है || 42 ||

6.126.43

श्रीराम उवाच । मूढस्यासत्कुलोत्थस्य प्रवृत्तस्याधमस्य च । अप्राप्तयोगिसङ्गस्य कथमुत्तरणं भवेत् ॥ ४३ ॥

śrīrāma uvāca | mūḍhasyāsatkulotthasya pravṛttasyādhamasya ca | aprāptayogisaṅgasya kathamuttaraṇaṃ bhavet || 43 ||

Sri Rama said | How can there be liberation for a foolish person born in a bad family, engaged in inferior activities, and not having the company of yogis? || 43 ||

श्री राम ने कहा | एक मूर्ख व्यक्ति जो एक बुरे परिवार में पैदा हुआ है, निम्न गतिविधियों में लगा हुआ है, और योगियों के साथ नहीं है, उसका मुक्ति कैसे हो सकती है? || 43 ||

6.126.44

एकामथ द्वितीयां वा तृतीयां चेतरा च वा । आरूढस्य मृतस्याथ कीदृशी भगवन्गतिः ॥ ४४ ॥

ekāmatha dvitīyāṃ vā tṛtīyāṃ cetarā ca vā | ārūḍhasya mṛtasyātha kīdṛśī bhagavangatiḥ || 44 ||

Whether one has attained the first, second, third, or any other stage, what kind of destiny does one have after death, O Lord? || 44 ||

चाहे कोई पहले, दूसरे, तीसरे, या किसी अन्य चरण तक पहुंचा हो, मृत्यु के बाद उसका कैसा भाग्य होता है, हे भगवान्? || 44 ||

6.126.45

श्रीवसिष्ठ उवाच । मूढस्यारूढदोषस्य तावत्संसृतिराततता । यावज्जन्मान्तरशतैः काकतालीययोगतः ॥ ४५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mūḍhasyārūḍhadoṣasya tāvatsaṃsṛtirātatā | yāvajjanmāntaraśataiḥ kākatālīyayogataḥ || 45 ||

Sri Vasistha said | For a foolish person who has attained faults, the cycle of rebirth continues for hundreds of lifetimes due to the fickle nature of the mind || 45 ||

श्री वसिष्ठ ने कहा | एक मूर्ख व्यक्ति जिसने दोष प्राप्त किए हैं, उसके लिए मन की चंचल प्रकृति के कारण सौ जन्मों तक पुनर्जन्म का चक्र चलता रहता है || 45 ||

6.126.46

अथवा साधुसंगत्या वैराग्यं नाभ्युदेति हि । वैराग्येऽभ्युदिते जन्तोरवश्यं भूमिकोदयः ॥ ४६ ॥

athavā sādhusaṅgatyā vairāgyaṃ nābhyudeti hi | vairāgye'bhyudite jantoravaśyaṃ bhūmikodayaḥ || 46 ||

Or, through the association with the wise, detachment arises. When detachment arises, the elevation of the spiritual stages of the individual is inevitable.

या फिर, साधुओं के संग से वैराग्य उत्पन्न होता है। जब वैराग्य उत्पन्न होता है, तब जीव के आध्यात्मिक चरणों का उदय अवश्यंभावी है।

6.126.47

ततो नश्यति संसार इति शास्त्रार्थसंग्रहः । योगभूमिकयोत्क्रान्तजीवितस्य शरीरिणः ॥ ४७ ॥

tato naśyati saṃsāra iti śāstrārthasaṃgrahaḥ | yogabhūmikayotkrāntajīvitasya śarīriṇaḥ || 47 ||

Then, the worldly existence is destroyed. This is the essence of the scriptures. For one who has transcended the stages of yoga and is embodied,

तब, संसार नष्ट हो जाता है। यह शास्त्रों का अर्थ है। जो योग के चरणों को पार कर चुका है और शरीर धारण करता है,

6.126.48

भूमिकांशानुसारेण क्षीयते पूर्वदुष्कृतम् । ततः सुरविमानेषु लोकपालपुरेषु च ॥ ४८ ॥

bhūmikāṃśānusāreṇa kṣīyate pūrvaduṣkṛtam | tataḥ suravimāneṣu lokapālapureṣu ca || 48 ||

According to the stages, the past sins are destroyed. Then, one enjoys in the celestial chariots and in the cities of the guardians of the world.

चरणों के अनुसार, पूर्व के पाप नष्ट हो जाते हैं। तब, वह स्वर्गीय विमानों और लोकपालों के नगरों में आनंद लेता है।

6.126.49

मेरूपवनकुञ्जेषु रमते रमणीसखः । ततः सुकृतसंभारे दुष्कृते च पुरा कृते ॥ ४९ ॥

merūpavana kuñjeṣu ramate ramaṇīsakhaḥ | tataḥ sukṛtasaṃbhāre duṣkṛte ca purā kṛte || 49 ||

He enjoys in the groves of Meru's garden with his beloved. Then, with the accumulation of good deeds and the past sins,

वह मेरु के उपवन के कुंजों में अपनी प्रिय के साथ आनंद लेता है। तब, पुण्य के संचय और पूर्व के पापों के साथ,

6.126.50

भोगजाले परिक्षीणे जायन्ते योगिनो भुवि । शुचीनां श्रीमतां गेहे गुप्ते गुणवतां सताम् ॥ ५० ॥

bhogajāle parikṣīṇe jāyante yogino bhuvi | śucīnāṃ śrīmatāṃ gehe gupta guṇavatāṃ satām || 50 ||

When the web of enjoyments is exhausted, the yogis are born on earth in the homes of the pure, prosperous, virtuous, and wise.

जब भोग का जाल खत्म हो जाता है, तब योगी पृथ्वी पर पुनर्जन्म लेते हैं पवित्र, समृद्ध, गुणवान और बुद्धिमान लोगों के घरों में।

6.126.51

जनित्वा योगमेवैते सेवन्ते योगवासिताः । तत्र प्राग्भावनाभ्यस्तयोगभूमिक्रमं बुधाः । स्मृत्वा परिपतन्त्युच्चैरुत्तरं भूमिकाक्रमम् ॥ ५१ ॥

janitvā yogamevaita sevante yogavāsitāḥ | tatra prāgbhāvanābhyastyogabhūmikramaṃ budhāḥ | smṛtvā paripatantyuccairuttaraṃ bhūmikākramaṃ || 51 ||

Those who have attained the state of yoga, they practice yoga itself | The wise, remembering the sequence of yoga stages practiced with prior contemplation, attain the higher stages of yoga || 51 ||

जो योग की अवस्था को प्राप्त हुए हैं, वे योग ही का अभ्यास करते हैं | बुद्धिमान लोग, पूर्व ध्यान से अभ्यस्त योग के चरणों की क्रम को याद करके, योग के उच्चतर चरणों को प्राप्त करते हैं || ५१ ||

6.126.52

भूमिकात्रितयं त्वेतद्राम जाग्रदिति स्मृतम् । यथावद्भेदबुद्ध्येदं तज्जाग्रदिति दृश्यते ॥ ५२ ॥

bhūmikātritayaṃ tvetadrāma jāgraditi smṛtam | yathāvadbhedabuddhyedaṃ tajjāgraditi dṛśyate || 52 ||

O Rama, this triad of stages is known as the waking state | This is correctly understood as the waking state due to the perception of differences || 52 ||

हे राम, यह तीनों चरणों का त्रितय जाग्रत अवस्था के रूप में जाना जाता है | यह भेद बुद्धि के कारण जाग्रत अवस्था के रूप में ठीक से देखा जाता है || ५२ ||

6.126.53

उदेति योगयुक्तानामत्र केवलमार्यता । यां दृष्ट्वा मूढबुद्धीनामभ्युदेति मुमुक्षुता ॥ ५३ ॥

udeti yogayuktānāmatra kevalamāryatā | yāṃ dṛṣṭvā mūḍhabuddhīnāmabhyudeti mumukṣutā || 53 ||

Here, only nobility arises in those who are engaged in yoga | Seeing which, the desire for liberation arises in those with dull intellect || 53 ||

यहाँ, योग में लगे हुए लोगों में केवल आर्यता उत्पन्न होती है | जिसे देखकर, मंदबुद्धि वालों में मुक्ति की इच्छा उत्पन्न होती है || ५३ ||

6.126.54

कर्तव्यमाचरन्काममकर्तव्यमनाचरन् । तिष्ठति प्राकृताचारो यः स आर्य इति स्मृतः ॥ ५४ ॥

kartavyamācarankaṃmamakartavyamanācaran | tiṣṭhati prākṛtācāro yaḥ sa ārya iti smṛtaḥ || 54 ||

One who performs desirable actions and avoids undesirable actions, stands by natural conduct, is called noble || 54 ||

जो कर्तव्य कामनाओं का अनुसरण करता है और अकर्तव्य कामनाओं का अनुसरण नहीं करता, प्राकृतिक आचरण पर खड़ा रहता है, वह आर्य कहलाता है || ५४ ||

6.126.55

यथाचारं यथाशास्त्रं यथाचित्तं यथास्थितम् । व्यवहारमुपादत्ते यः स आर्य इति स्मृतः ॥ ५५ ॥

yathācāraṃ yathāśāstraṃ yathācittaṃ yathāsthitam | vyavahāramupādatte yaḥ sa ārya iti smṛtaḥ || 55 ||

One who adopts conduct according to customs, scriptures, mind, and situation, is called noble || 55 ||

जो आचार, शास्त्र, मन और स्थिति के अनुसार व्यवहार को अपनाता है, वह आर्य कहलाता है || ५५ ||

6.126.56

प्रथमायामङ्कुरितं द्वितीयायां विकासितम्फलीभूतं तृतीयायामार्यत्वं योगिनो भवेत् ॥ ५६ ॥

prathamāyāmaṅkuritaṃ dvitīyāyāṃ vikāsitamphalībhūtaṃ tṛtīyāyāmāryatvaṃ yogino bhavet || 56 ||

In the first stage, the yogi's practice is like a sprout; in the second stage, it blossoms; and in the third stage, it bears fruit, leading to nobility.

पहले चरण में, योगी की साधना अंकुरित होती है; दूसरे चरण में, वह खिलती है; और तीसरे चरण में, वह फलीभूत होती है, जिससे आर्यत्व प्राप्त होता है।

6.126.57

आर्यतायां मृतो योगी शुभसंकल्पसंभृतान्भोगान्भुक्त्वा चिरं कालं योगवाञ्जायते पुनः ॥ ५७ ॥

āryatāyāṃ mṛto yogī śubhasaṃkalpasaṃbhṛtānbhogānbhuktvā ciraṃ kālaṃ yogavāñjāyate punaḥ || 57 ||

If a yogi dies in the state of nobility, endowed with virtuous resolutions, he enjoys the fruits of his actions for a long time and is born again as a yogi.

यदि एक योगी आर्यत्व की अवस्था में मरता है, पुण्य संकल्पों से सम्पन्न, तो वह अपने कर्मों के फलों का आनंद लंबे समय तक लेता है और फिर से योगी के रूप में जन्म लेता है।

6.126.58

भूमिकात्रितयाभ्यासादज्ञाने क्षयमागतेसम्यग्ज्ञानोदये चित्ते पूर्णचन्द्रोदयोपमे ॥ ५८ ॥

bhūmikātritayābhyāsādajñāne kṣayamāgatesamyagjñānodaye citte pūrṇacandrodayopame || 58 ||

Through the practice of the three stages, ignorance is destroyed, and right knowledge arises in the mind, like the rising of the full moon.

तीन चरणों की साधना से, अज्ञान नष्ट हो जाता है, और सही ज्ञान मन में उत्पन्न होता है, जैसे पूर्णिमा का चंद्रमा उगता है।

6.126.59

निर्विभागमनाद्यन्तं योगिनो युक्तचेतसःसमं सर्वं प्रपश्यन्ति चतुर्थी भूमिकामिताः ॥ ५९ ॥

nirvibhāgamanādyantaṃ yogino yuktacetasaḥsamaṃ sarvaṃ prapaśyanti caturthī bhūmikāmitāḥ || 59 ||

With a focused mind, yogis see everything as one, without division, from beginning to end, having attained the fourth stage.

एकाग्र मन से, योगी चतुर्थ चरण प्राप्त करके, आरंभ से अंत तक, सब कुछ एक के रूप में, विभाजन के बिना देखते हैं।

6.126.60

अद्वैते स्थैर्यमायाते द्वैते प्रशममागतेपश्यन्ति स्वप्नवल्लोकांश्चतुर्थीं भूमिकामिताः ॥ ६० ॥

advaite sthairyamāyāte dvaite praśamamāgatepaśyanti svapnavallokāṃścaturthīṃ bhūmikāmitāḥ || 60 ||

When non-duality is established and duality has subsided, they see the world as a dream and attain the fourth state.

जब अद्वैत स्थिर हो जाता है और द्वैत शांत हो जाता है, तब वे संसार को स्वप्न की तरह देखते हैं और चौथी अवस्था को प्राप्त होते हैं।

6.126.61

भूमिकात्रितयं जाग्रच्चतुर्थी स्वप्न उच्यते । विच्छिन्नशरदभ्रांशविलयं प्रविलीयते ॥ ६१ ॥

bhūmikātritayaṃ jāgraccaturthī svapna ucyate | vicchinnaśaradabhrāṃśavilayaṃ pravilīyate || 61 ||

The three states of consciousness are wakefulness, the fourth is dream, and the dissolution of the fragmented autumn cloud is dissolved.

चेतना की तीन अवस्थाएँ हैं: जाग्रत, चौथी स्वप्न, और टूटे हुए शरद बादल का विलय विलीन हो जाता है।

6.126.62

सत्तावशेष एवास्ते पञ्चमीं भूमिकां गतः । पञ्चमीं भूमिकामेत्य सुषुप्तपदनामिकाम् ॥ ६२ ॥

sattāvaśeṣa evāste pañcamīṃ bhūmikāṃ gataḥ | pañcamīṃ bhūmikāmetya suṣuptapadanāmikām || 62 ||

Only the residue of existence remains, having reached the fifth state, which is called the state of deep sleep.

केवल अस्तित्व का अवशेष शेष रहता है, जो पांचवीं अवस्था में पहुंच गया है, जिसे गहरी नींद की अवस्था कहा जाता है।

6.126.63

शान्ताशेषविशेषांशस्तिष्ठत्यद्वैतमात्रके । गलितद्वैतनिर्भासमुदितोऽन्तः प्रबुद्धवान् ॥ ६३ ॥

śāntāśeṣaviśeṣāṃśastiṣṭhatyadvaitamātrake | galitadvaitanirbhāsamudito'ntaḥ prabuddhavān || 63 ||

The residual distinct aspects are calm, abiding in non-duality alone, having melted the duality, arising within, fully awakened.

शेष विशिष्ट पहलू शांत हैं, केवल अद्वैत में निवास करते हैं, द्वैत को पिघला देते हैं, अंदर उठते हैं, पूर्ण रूप से जाग्रत।

6.126.64

सुषुप्तघन एवास्ते पञ्चमीं भूमिकामितः । अन्तर्मुखतया तिष्ठन्बहिर्वृत्तिपरोऽपि सन् ॥ ६४ ॥

suṣuptaghan evāste pañcamīṃ bhūmikāmitaḥ | antarmukhatayā tiṣṭhanbahirvṛttiparo'pi san || 64 ||

He remains in the dense state of deep sleep, having reached the fifth state, being inward-focused, yet engaged in external activities.

वह गहरी नींद की घन अवस्था में रहता है, पांचवीं अवस्था तक पहुंच गया है, अंतर्मुखी होकर, फिर भी बाहरी गतिविधियों में लगा हुआ है।

6.126.65

परिशान्ततया नित्यं निद्रालुरिव लक्ष्यते । कुर्वन्नभ्यासमेतस्यां भूमिकायां विवासनः ॥ ६५ ॥

pariśāntatayā nityaṃ nidrāluriva lakṣyate | kurvannabhyāsame tasyāṃ bhūmikāyāṃ vivāsanaḥ || 65 ||

He is always seen as if sleepy due to complete tranquility, practicing in this state, free from desires.

वह पूर्ण शांति के कारण हमेशा नींद में डूबा हुआ दिखाई देता है, इस अवस्था में अभ्यास करते हुए, इच्छाओं से मुक्त।

6.126.66

षष्ठीं तुर्याभिधामन्यां क्रमात्क्रमति भूमिकाम् । यत्र नासन्न सद्रूपो नाहं नाप्यनहंकृतिः ॥ ६६ ॥

ṣaṣṭhīṃ turyābhidhāmanyāṃ kramātkramati bhūmikām | yatra nāsanna sadrūpo nāhaṃ nāpyanahaṃkṛtiḥ || 66 ||

In the sixth stage, known as Turiya, one gradually progresses to a state where there is neither existence nor non-existence, neither 'I' nor 'not I'.

छठे चरण में, जिसे तुरीया कहते हैं, मनुष्य धीरे-धीरे उस अवस्था की ओर बढ़ता है जहाँ न अस्तित्व है न अनस्तित्व, न 'मैं' है न 'मैं नहीं'।

6.126.67

केवलं क्षीणमननमास्ते द्वैतैक्यनिर्गतः । निर्ग्रन्थिः शान्तसंदेहो जीवन्मुक्तो विभावनः ॥ ६७ ॥

kevalaṃ kṣīṇamananamāste dvaitekyanirgataḥ | nirgranthiḥ śāntasaṃdeho jīvanmukto vibhāvanaḥ || 67 ||

One remains in a state of diminished thought, free from the duality of unity and separation, without attachments, with doubts resolved, and liberated while living.

मनुष्य कम विचारों की अवस्था में रहता है, एकता और अलगाव की द्वैतता से मुक्त, आसक्तियों से रहित, संदेहों से मुक्त, और जीवन में ही मुक्त।

6.126.68

अनिर्वाणोऽपि निर्वाणश्चित्रदीप इव स्थितः । अन्तःशून्यो बहिःशून्यशून्यः कुम्भ इवाम्बरे ॥ ६८ ॥

anirvāṇo'pi nirvāṇaścitradīpa iva sthitaḥ | antaḥśūnyo bahiḥśūnyaśūnyaḥ kumbha ivāmbare || 68 ||

Even without attaining Nirvana, one remains like a flickering lamp, empty within and empty without, like a pot in the sky.

निर्वाण प्राप्त किए बिना भी, मनुष्य एक झिलमिलाती दीपक की तरह रहता है, अंदर से खाली और बाहर से खाली, आकाश में एक घड़े की तरह।

6.126.69

अन्तःपूर्णो बहिःपूर्णः पूर्णकुम्भ इवार्णवे । किंचिदेवैष संपन्नस्त्वथ वैष न किंचन ॥ ६९ ॥

antaḥpūrṇo bahiḥpūrṇaḥ pūrṇakumbha ivārṇave | kiṃcidevaiṣa saṃpannastvatha vaiṣa na kiṃcana || 69 ||

Full within and full without, like a full pot in the ocean, one is complete in every way, yet one is nothing.

अंदर से पूर्ण और बाहर से पूर्ण, समुद्र में एक भरे हुए घड़े की तरह, व्यक्ति हर तरह से पूर्ण होता है, फिर भी वह कुछ नहीं होता।

6.126.70

षष्ठ्यां भूम्यामसौ स्थित्वा सप्तमीं भूमिमाप्नुयात् । विदेहमुक्तता तूक्ता सप्तमी योगभूमिका ॥ ७० ॥

ṣaṣṭhyāṃ bhūmyāmasau sthitvā saptamīṃ bhūmimāpnuyāt | videhamuktatā tūktā saptamī yogabhūmikā || 70 ||

Having established oneself in the sixth stage, one attains the seventh stage, known as Videha Mukta, the ultimate state of yoga.

छठे चरण में स्थिर होकर, व्यक्ति सातवें चरण को प्राप्त करता है, जिसे विदेह मुक्त कहते हैं, योग की अंतिम अवस्था।

6.126.71

अगम्या वचसां शान्ता सा सीमा भवभूमिषु । कैश्चित्सा शिवमित्युक्ता कैश्चिद्ब्रह्मेत्युदाहृता ॥ ७१ ॥

agamyā vacasāṃ śāntā sā sīmā bhavabhūmiṣu | kaiścitsā śivamityuktā kaiścidbrahmetyudāhṛtā || 71 ||

That peaceful boundary of words is unattainable in the realms of existence. Some call it Shiva, others call it Brahma.

वह शान्त शब्दों की सीमा अस्तित्व के क्षेत्रों में अगम्य है | कुछ लोग उसे शिव कहते हैं, कुछ लोग ब्रह्म कहते हैं।

6.126.72

कैश्चित्प्रकृतिपुंभावविवेक इति भाविता । अन्यैरप्यन्यथा नानाभेदैरात्मविकल्पितैः ॥ ७२ ॥

kaiścitprakṛtipuṃbhāvaviveka iti bhāvitā | anyairapyanyathā nānābhedairātmavikalpitaiḥ || 72 ||

Some consider it as the discernment between Prakriti and Purusha. Others conceive it differently with various distinctions of the self.

कुछ लोग इसे प्रकृति और पुरुष के विवेक के रूप में मानते हैं। दूसरे लोग इसे आत्मा के विभिन्न भेदों के साथ अलग-अलग तरीके से समझते हैं।

6.126.73

नित्यमव्यपदेश्यापि कथंचिदुपदिश्यते । सप्तैता भूमिकाः प्रोक्ता मया तव रघूद्वह ॥ ७३ ॥

nityamavyapadeśyāpi kathaṃcidupadiśyate | saptaitā bhūmikāḥ proktā mayā tava raghūdvaha || 73 ||

Although it is eternal and indescribable, it is somehow taught. These seven stages have been explained by me to you, O Raghava.

यद्यपि यह नित्य और अवर्णनीय है, फिर भी इसे किसी तरह सिखाया जाता है। ये सात चरण मैंने तुम्हें समझाए हैं, हे रघुवंशी।

6.126.74

आसामभ्यासयोगेन न दुःखमनुभूयते । अस्त्यत्यन्तमदोन्मत्ता मृदुमन्थरचारिणी ॥ ७४ ॥

āsāmabhyāsayogena na duḥkhamanubhūyate | astyatyantamadonmattā mṛdumantharacāriṇī || 74 ||

By practicing these stages, one does not experience suffering. There is an intoxicating pride that moves gently and slowly.

इन चरणों के अभ्यास से, कोई दुःख नहीं अनुभव करता। एक नशीली घमंड है जो धीरे-धीरे और सौम्य रूप से चलती है।

6.126.75

करिणी विग्रहव्यग्रा महादशनशंसिनी । सा चेन्निहन्यते नूनमनन्तानर्थकारिणी ॥ ७५ ॥

kariṇī vigrahavyagrā mahādaśanaśaṃsinī | sā cennihanyate nūnamanantānarthakāriṇī || 75 ||

If that elephant, eager for battle, praised for its great tusks, is killed, it will surely cause endless harm.

अगर वह युद्ध के लिए उत्सुक हाथी, जिसके बड़े दाँतों की प्रशंसा की जाती है, मारा जाता है, तो यह निश्चित रूप से अनंत नुकसान पहुँचाएगा।

6.126.76

तदेतासु समग्रासु भूमिकासु नरो जयीकरिणी मदमत्ता सा यावन्न विजितौजसा ॥ ७६ ॥

tadetāsu samagrāsu bhūmikāsu naro jayīkariṇī madamattā sā yāvanna vijitaujasā || 76 ||

Therefore, in all these complete stages, a man conquers the elephant of pride, intoxicated with arrogance, until he is victorious.

इसलिए, इन सभी पूर्ण चरणों में, एक व्यक्ति अहंकार से मतवाले हाथी को जीतता है, जब तक कि वह विजयी नहीं हो जाता।

6.126.77

को नाम सुभटस्तावत्संपत्समरभूमिषुश्रीराम उवाचकासौ प्रमत्ता करिणी काश्च ता रणभूमयः ॥ ७७ ॥

ko nāma subhaṭastāvatsaṃpatsamarabhūmiṣuśrīrāma uvācakāsau pramattā kariṇī kāśca tā raṇabhūmayaḥ || 77 ||

Who is that brave warrior, praised in the battlefield? Sri Rama said, 'Who is that intoxicated elephant, and what are those battlefields?'

वह कौन सा बहादुर योद्धा है, जो युद्धक्षेत्र में प्रशंसित है? श्री राम ने कहा, 'वह कौन सा मतवाला हाथी है, और वे कौन से युद्धक्षेत्र हैं?'

6.126.78

कथं निहन्यते चैषा क्व चैषा रमते चिरम्श्रीवसिष्ठ उवाचरामेच्छा नाम करिणी इदं मेऽस्त्वितिरूपिणी ॥ ७८ ॥

kathaṃ nihanyate caiṣā kva caiṣā ramate ciramśrīvasiṣṭha uvācarāmecchā nāma kariṇī idaṃ me'stvitirūpiṇī || 78 ||

How is this one destroyed, and where does this one enjoy for a long time? Sri Vasistha said, 'This desire, named elephant, may it be so, in this form.'

यह कैसे नष्ट होता है, और यह कहाँ लंबे समय तक आनंद लेता है? श्री वसिष्ठ ने कहा, 'यह इच्छा, जिसे हाथी कहते हैं, ऐसा हो, इस रूप में।'

6.126.79

शरीरकानने मत्ता विविधोल्लासकारिणीमत्तेन्द्रियोग्रकलभा रसनाकलभाषिणी ॥ ७९ ॥

śarīrakānane mattā vividhollāsakāriṇīmattendriyograkalabhā rasanākalabhāṣiṇī || 79 ||

Intoxicated in the forest of the body, causing various enjoyments, with fierce senses, speaking with the tongue of taste.

शरीर के वन में मतवाला, विविध आनंद पैदा करने वाला, तीव्र इंद्रियों के साथ, स्वाद की जीभ से बोलने वाला।

6.126.80

मनोगहनसंलीना कर्मदन्तद्वयान्विता‌मदोऽस्या वासनाव्यूहः सर्वतः प्रसरद्वपुः ॥ ८० ॥

manogahanasaṃlīnā karmadantadvayānvitāmado'syā vāsanāvyūhaḥ sarvataḥ prasaradvapuḥ || 80 ||

The mind, deeply immersed in the dense forest of desires, is equipped with the two tusks of action and inaction. The pride of this mind spreads its tendencies everywhere, pervading the entire body.

मन, इच्छाओं के घने जंगल में गहराई तक डूबा हुआ है, कर्म और अकर्म के दो दाँतों से सुसज्जित है। इस मन का अहंकार अपनी प्रवृत्तियों को सब ओर फैलाता है, पूरे शरीर में व्याप्त होता है।

6.126.81

संसारदृष्टयो राम तस्याः समरभूमयः । भूयो यत्रानुभवति नरो जयपराजयौ ॥ ८१ ॥

saṃsāradṛṣṭayo rāma tasyāḥ samarabhūmayaḥ | bhūyo yatrānubhavati naro jayaparājayau || 81 ||

O Rama, the worldly perspectives are the battlefields where a person repeatedly experiences victory and defeat.

हे राम, संसार की दृष्टियाँ समर के मैदान हैं, जहाँ मनुष्य बार-बार विजय और पराजय का अनुभव करता है।

6.126.82

इच्छानागी निहन्त्येषा कृपणाञ्जीवसंचयान् । वासनेहा मनश्चित्तं संकल्पो भावनं स्पृहा ॥ ८२ ॥

icchānāgī nihantyeṣā kṛpaṇāñjīvasaṃcayān | vāsanāhā manaścittaṃ saṃkalpo bhāvanaṃ spṛhā || 82 ||

This desire, like a serpent, destroys the accumulated lives of the miserable. It is the longing, the mind, the intellect, the resolve, the contemplation, and the craving.

यह इच्छा, सर्प की तरह, दीनों के जीवन को नष्ट कर देती है। यह वासना, मन, चित्त, संकल्प, भावना और स्पृहा है।

6.126.83

इत्यादिनिवहो नाम्नामस्यास्त्वाशयकोशगः । धैर्यनाम्ना वरास्त्रेण प्रसृतामवहेलया ॥ ८३ ॥

ityādinivaho nāmnāmasyāstvāśayakośagaḥ | dhairyānāmā varāstreṇa prasṛtāmavahalayā || 83 ||

Thus, the flow of desires and other such things is stored in the treasure chest of the mind. With the weapon of courage, one should remove this flow with determination.

इस प्रकार, इच्छाओं और अन्य ऐसी चीजों का प्रवाह मन के खजाने में संग्रहीत होता है। साहस के अस्त्र से, एक को इस प्रवाह को दृढ़ता से दूर करना चाहिए।

6.126.84

नागीं सर्वात्मिकामेतामिच्छां सर्वात्मना जयेत् । यावद्वस्त्विदमित्येवमियमन्तर्विजृम्भते ॥ ८४ ॥

nāgīṃ sarvātmikāmetāmicchāṃ sarvātmanā jayet | yāvadvastvidamityevamiyamantravijṛmbhate || 84 ||

One should conquer this all-encompassing desire with the entire self, as long as this thought 'this is mine' arises within.

एक को इस सर्वव्यापी इच्छा को पूरे आत्मा से जीतना चाहिए, जब तक यह विचार 'यह मेरा है' अंदर उठता है।

6.126.85

तावदुग्रा कुसंसारमहाविषविषूचिका । एतावानेव संसार इदमस्त्विति यन्मनः ॥ ८५ ॥

tāvadugrā kusaṃsāramahāviṣaviṣūcikā | etāvāneva saṃsāra idamastviti yanmanaḥ || 85 ||

Until then, this fierce, poisonous scorpion of the bad world remains. This is the extent of the world, as long as the mind thinks 'this is mine'.

तब तक, यह भयानक, विषैला बिच्छू बुरे संसार का बना रहता है। यही संसार की सीमा है, जब तक मन सोचता है 'यह मेरा है'।

6.126.86

अस्य तूपशमो मोक्ष इत्येवं ज्ञानसंग्रहः । प्रसादकारिणी स्वच्छा निरिच्छे विमलाकृतौ ॥ ८६ ॥

asya tūpaśamo mokṣa ityevaṃ jñānasangrahaḥ | prasādakāriṇī svacchā niricche vimalākṛtau || 86 ||

The cessation of this is liberation, thus is the summary of knowledge | The pure, desireless, and stainless state brings clarity

इसका उपशम मोक्ष है, इस प्रकार ज्ञान का संग्रह है | प्रसन्नता करने वाली, स्वच्छ, निरिच्छा और विमल अवस्था

6.126.87

तैलबिन्दुरिवादर्शे विश्राम्यत्युपदेशवाक् । असंवेदनमात्रेण नोदेतीच्छाभवाङ्कुरः ॥ ८७ ॥

tailabindurivādarśe viśrāmyatyupadeśavāk | asaṃvedanamātreṇa nodetīcchābhavāṅkuraḥ || 87 ||

Just as a drop of oil rests on a mirror, the teaching settles | By mere non-perception, the sprout of desire does not arise

जैसे तेल की बूँद दर्पण पर विश्राम करती है, वैसे ही उपदेश विश्राम करता है | केवल असंवेदन से, इच्छा का अंकुर नहीं उगता

6.126.88

मनागभ्युदितैवेच्छा छेत्तव्यानर्थकारिणी । असंवेदनशस्त्रेण विषस्येवाङ्कुरावली ॥ ८८ ॥

manāgabhyuditaivaicchā chettavyānarthakāriṇī | asaṃvedanaśastreṇa viṣasyevāṅkurāvalī || 88 ||

Desire that arises even slightly should be cut off, as it causes harm | With the weapon of non-perception, like the sprout of poison

जो इच्छा थोड़ी भी उत्पन्न होती है, उसे काट देना चाहिए, क्योंकि वह हानिकारक है | असंवेदन के अस्त्र से, जैसे विष का अंकुर

6.126.89

इच्छाविच्छुरितो जीवो विजहाति न दीनताम् । स्वसंवेदनयत्नस्तु तूष्णीमेवान्तरासनम् ॥ ८९ ॥

icchāvicchurito jīvo vijahāti na dīnatām | svasaṃvedanayatnastu tūṣṇīmevāntarāsanam || 89 ||

The being tormented by desire does not abandon misery | The effort of self-awareness is indeed silent inner dwelling

इच्छा से व्याकुल जीव दुःख नहीं छोड़ता | स्वयं के संवेदन का प्रयास वास्तव में शांत अंतरात्मा है

6.126.90

अवधानविनिर्मुक्तं सुप्तं शवशतं यथा । तां प्रत्याहारबडिशेनेच्छामत्सीं नियच्छत ॥ ९० ॥

avadhānavinirmuktaṃ suptaṃ śavaśataṃ yathā | tāṃ pratyāhārabadiśenaicchāmatsīṃ niyacchat || 90 ||

Free from attention, sleeping like a hundred corpses | With the sword of withdrawal, restrain that desire

ध्यान से मुक्त, सौ शवों की तरह सोया हुआ | प्रत्याहार की तलवार से, उस इच्छा को रोको

6.126.91

इदं मेऽस्त्विति संवेगमाहुः कल्पनमुत्तमाः । अर्थस्याभावनं यत्तत्कल्पनात्याग उच्यते ॥ ९१ ॥

idaṃ me'stviti saṃvegamāhuḥ kalpanamuttamāḥ | arthasyābhāvanaṃ yattatkalpanātyāga ucyate || 91 ||

The wise call the attachment to 'this is mine' as the highest delusion. The abandonment of that delusion is known as the renunciation of imagination.

बुद्धिमान लोग 'यह मेरा है' की आसक्ति को सबसे बड़ी भ्रांति कहते हैं। उस भ्रांति का त्याग कल्पना का त्याग कहलाता है।

6.126.92

स्मरणं विद्धि संकल्पं शिवमस्मरणं विदुः । तत्र प्रागनुभूतं च नानुभूतं च भाव्यते ॥ ९२ ॥

smaraṇaṃ viddhi saṃkalpaṃ śivamasmaraṇaṃ viduḥ | tatra prāganubhūtaṃ ca nānubhūtaṃ ca bhāvyate || 92 ||

Know that remembrance is resolution. They know the non-remembrance of Shiva. There, both the previously experienced and the not experienced are imagined.

याद करना संकल्प है, यह जानो। शिव का न याद करना, यह जाना जाता है। वहाँ, पहले अनुभव किया हुआ और अनुभव नहीं किया हुआ, दोनों कल्पना किया जाता है।

6.126.93

अनुभूतां नानुभूतां स्मृतिं विस्मृत्य काष्ठवत् । सर्वमेवाशु विस्मृत्य गूढस्तिष्ठ महामतिः ॥ ९३ ॥

anubhūtāṃ nānubhūtāṃ smṛtiṃ vismṛtya kāṣṭhavat | sarvamevāśu vismṛtya gūḍhastiṣṭha mahāmatiḥ || 93 ||

Forgetting the memory of the experienced and the not experienced like a piece of wood, forget everything quickly, O wise one, remain hidden.

अनुभव किए हुए और अनुभव नहीं किए हुए की स्मृति को लकड़ी की तरह भूल जाओ, सब कुछ जल्दी भूल जाओ, हे महामति, छिपा रहो।

6.126.94

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति तत् । असंकल्पः परं श्रेयः स किमन्तर्न भाव्यते ॥ ९४ ॥

ūrdhvabāhurviraumyeṣa na ca kaścicchṛṇoti tat | asaṃkalpaḥ paraṃ śreyaḥ sa kimantarnabhāvyate || 94 ||

With arms raised, I roar, but no one hears that. Without resolution, the supreme good, what else is to be imagined?

हाथ ऊपर उठाकर मैं गर्जता हूँ, पर कोई भी उसे नहीं सुनता। संकल्प के बिना, परम कल्याण, फिर क्या कल्पना की जाए?

6.126.95

किल तूष्णीं स्थितेनैव तत्पदं प्राप्यते परम् । परमं यत्र साम्राज्यमपि राम तृणायते ॥ ९५ ॥

kila tūṣṇīṃ sthitenaiva tatpadaṃ prāpyate param | paramaṃ yatra sāmrājyamapi rāma tṛṇāyate || 95 ||

Indeed, by remaining silent, that supreme state is attained. Where even the supreme sovereignty, O Rama, is considered as a blade of grass.

निश्चय ही, मौन रहकर वह परम पद प्राप्त होता है। जहाँ परम साम्राज्य भी, हे राम, एक तिनके के समान माना जाता है।

6.126.96

गम्यदेशैकनिष्ठस्य यथा पान्थस्य पादयोः । स्पन्दो विगतसंकल्पस्तथा स्पन्दः स्वकर्मसु ॥ ९६ ॥

gamyadeśaikaniṣṭhasya yathā pānthasya pādayoḥ | spando vigatasaṅkalpastathā spandaḥ svakarmasu || 96 ||

Just as the feet of a traveler focused on his destination move without conscious effort, so should one's actions be performed without attachment.

जैसे एक यात्री के पैर अपने गन्तव्य पर ध्यान केन्द्रित करते हुए बिना किसी संकल्प के चलते हैं, वैसे ही अपने कर्मों में स्पन्दन होना चाहिए।

6.126.97

बहुनात्र किमुक्तेन संक्षेपादिदमुच्यते । संकल्पनं परो बन्धस्तदभावो विमुक्तता ॥ ९७ ॥

bahunātra kimukthena saṅkṣepādidamucyate | saṅkalpanaṃ paro bandhastadabhāvo vimuktatā || 97 ||

What more needs to be said? In brief, this is stated: Desire is the greatest bondage; its absence is liberation.

इसमें और क्या कहना है? संक्षेप में यह कहा जाता है: इच्छा सबसे बड़ा बन्धन है; उसका अभाव ही मुक्ति है।

6.126.98

सर्वमेवमजं शान्तमनन्तं ध्रुवमव्ययम्। पश्यन्भूतार्थचिद्रूपं शान्तमास्व यथासुखम्॥ ९८॥

sarvamevamajaṃ śāntamanantaṃ dhruvamavyayam | paśyanbhūtārthacidrūpaṃ śāntamāsva yathāsukham || 98 ||

Everything is thus unborn, peaceful, infinite, eternal, and imperishable. Seeing the true nature of reality, abide in peace as you wish.

सब कुछ इस प्रकार अजन्मा, शान्त, अनन्त, स्थायी और अविनाशी है। वास्तविकता की सच्चाई को देखकर, अपनी इच्छा के अनुसार शान्ति में रहो।

6.126.99

अवेदनं विदुर्योगं शान्तमासितमक्षयम्। योगस्थः कुरु कर्माणि निर्वासनोऽथ मा कुरु॥ ९९॥

avedanaṃ viduryogaṃ śāntamāsitamakṣayam | yogasthaḥ kuru karmāṇi nirvāsano'tha mā kuru || 99 ||

They know yoga as the absence of suffering, peaceful, eternal, and imperishable. Established in yoga, perform actions without attachment; otherwise, do not act.

उन्हें योग को दुःख की अनुपस्थिति, शान्त, सनातन और अविनाशी के रूप में जाना जाता है। योग में स्थित होकर, आसक्ति के बिना कर्म करें; अन्यथा, कर्म न करें।

6.126.100

अवेदनं विदुर्योगं चित्तक्षयमकृत्रिमम्। अत्यन्तं तन्मयो भूत्वा तथा तिष्ठ यथासि भो॥ १००॥

avedanaṃ viduryogaṃ cittakṣayamakṛtrimam | atyantaṃ tanmayo bhūtvā tathā tiṣṭha yathāsi bho || 100 ||

They know yoga as the absence of suffering, the natural destruction of the mind. Being completely absorbed in that, remain as you are, O friend.

उन्हें योग को दुःख की अनुपस्थिति, मन का स्वाभाविक विनाश के रूप में जाना जाता है। उसमें पूरी तरह से डूबकर, हे मित्र, जैसे हो वैसे ही रहो।

6.126.102

अहंममेति संविदन्न दुःखतो विमुच्यते। असंविदन्विमुच्यते यदीप्सितं समाचर॥ १०२॥

ahaṃmameti saṃvidann duḥkhato vimucyate | asaṃvidanvimucyate yadīpsitaṃ samācara || 102 ||

One who knows 'I am' is liberated from sorrow. One who does not know this remains in sorrow. Therefore, do what is desired.

जो 'मैं हूँ' को जानता है, वह दुःख से मुक्त होता है। जो इसे नहीं जानता, वह दुःख में रहता है। इसलिए, जो इच्छा है, वही करो।

Chapter 127

6.127.1

भरद्वाज उवाच इति वरमुनिनोक्तं ज्ञानसारं पुराणं सकलमनुनिशम्य श्रीरघूणां कुलाग्र्यः विमलमतिरपृच्छत्किंचिदन्यत्स्वयं वा समसुखपरिपूर्णः पूर्णबोधस्थितोऽसौ ॥ १ ॥

bhāradvāja uvāca iti varamuninoktaṃ jñānasāraṃ purāṇaṃ sakalamanuniśamya śrīraghūṇāṃ kulāgryaḥ vimalamatirapṛcchatkiṃcidanyatsvayaṃ vā samasukhaparipūrṇaḥ pūrṇabodhasthito'sau || 1 ||

Bharadvaja said: Having heard the ancient essence of knowledge spoken by the great sage, the foremost of the Raghu dynasty, with a pure mind, asked something else himself, being fully content and established in complete knowledge.

भरद्वाज ने कहा: महान ऋषि द्वारा कहे गए पुरातन ज्ञान के सार को सुनकर, रघुवंश के श्रेष्ठ, निर्मल मन से, स्वयं कुछ और पूछा, पूर्ण संतुष्ट और पूर्ण ज्ञान में स्थित।

6.127.2

स खलु परमयोगी विश्ववन्द्यः सुरेशो जननमरणहीनः शुद्धबोधस्वभावः सकलगुणनिधानं संनिधानं रमायास्त्रिजगदुदयरक्षानुग्रहाणामधीशः ॥ २ ॥

sa khalu paramayogī viśvavandyaḥ sureśo jananamarṇahīnaḥ śuddhabodhasvabhāvaḥ sakalaguṇanidhānaṃ sannidhānaṃ ramāyāstrijagadudayarakṣānugrahāṇāmadhīśaḥ || 2 ||

He is indeed the supreme yogi, worshipped by the world, the lord of the gods, beyond birth and death, of the nature of pure consciousness, the abode of all virtues, the presence of Lakshmi, the lord of the creation, protection, and grace of the three worlds.

वह वास्तव में परम योगी है, विश्व द्वारा पूजित, देवताओं का स्वामी, जन्म और मृत्यु से परे, शुद्ध चेतना के स्वभाव वाला, सभी गुणों का निधान, लक्ष्मी की उपस्थिति, तीनों लोकों के उत्पत्ति, संरक्षण और अनुग्रह का स्वामी।

6.127.3

श्रीवाल्मीकिरुवाच इति श्रुत्वा वसिष्ठस्य वाक्यं वेदान्तसंग्रहम् विदिताखिलविज्ञानो रामः कमललोचनः ॥ ३ ॥

śrīvālmīkiruvāca iti śrutvā vasiṣṭhasya vākyaṃ vedāntasaṃgraham viditākhilavijñāno rāmaḥ kamalalocanaḥ || 3 ||

Sri Valmiki said: Having heard the words of Vasistha, the essence of Vedanta, Rama, the knower of all knowledge, with lotus-like eyes,

श्री वाल्मीकि ने कहा: वसिष्ठ के शब्दों को, वेदान्त का सार, सुनकर, सभी ज्ञान के ज्ञाता, कमल जैसी आँखों वाले राम,

6.127.4

शक्तिपातवशोन्मेषप्रकटामलचिद्धनः मुहूर्तमासीदुद्बुद्धश्चैतन्यानन्दसागरः ॥ ४ ॥

śaktipātavaśonmeṣaprakaṭāmalaciddhanaḥ muhūrtamāsīdudbuddhaścaitanyānandasāgaraḥ || 4 ||

By the grace of divine awakening, he became manifest with pure consciousness, and for a moment, he was awakened, an ocean of conscious bliss.

दिव्य जागृति के अनुग्रह से, वह शुद्ध चेतना के साथ प्रकट हुआ, और एक क्षण के लिए, वह चेतना और आनंद का सागर बन गया।

6.127.5

प्रश्नोत्तरविभागादिपरिपाटीविवर्जितः आनन्दामृतपूर्णासू रोमकण्टकिताङ्गकः ॥ ५ ॥

praśnottaravibhāgādiparipāṭīvivarjitaḥ ānandāmṛtapūrṇāsū romakaṇṭakitāṅgakaḥ || 5 ||

Beyond the divisions of questions and answers, filled with the nectar of bliss, his body covered with goosebumps.

प्रश्न और उत्तर के विभाजन से परे, आनंद के अमृत से भरा हुआ, उसका शरीर रोमांच से भरा हुआ।

6.127.6

महासामान्यरूपत्वाच्छिद्व्यापकतया स्थितः नित्यमष्टगुणैश्वर्यतृणप्रायमनोरथः ॥ ६ ॥

mahāsāmānyarūpatvācchidvyāpakatayā sthitaḥ nityamaṣṭaguṇaiśvaryatṛṇaprāyamanorathaḥ || 6 ||

Due to the great commonality and pervasiveness of consciousness, the desire for the eight divine qualities is always present.

चेतना की महान सामान्यता और व्यापकता के कारण, आठ दिव्य गुणों की इच्छा हमेशा मौजूद रहती है।

6.127.7

न किंचिदूचे संपन्नः शिवे परिणतः पदे भरद्वाज उवाच अहो खलु ममाश्चर्यं रामः प्राप्तो महत्पदम् ॥ ७ ॥

na kiṃcicūce saṃpannaḥ śive pariṇataḥ pade bharadvāja uvāca aho khalu mamāścaryaṃ rāmaḥ prāpto mahatpadam || 7 ||

He said nothing, having attained the state of Shiva. Bharadvaja said, 'Ah, indeed it is wonderful that Rama has attained the great state.'

उसने कुछ नहीं कहा, शिव की स्थिति प्राप्त करने के बाद। भरद्वाज ने कहा, 'अहो, यह आश्चर्य है कि राम ने महान स्थिति प्राप्त की है।'

6.127.8

कथमेतादृशी प्राप्तिरस्माकं मुनिनायक मूर्खाः स्तब्धाश्च किंचिज्ज्ञा मादृशाः क्व च पापिनः क्व च ब्रह्मादिभिः प्रार्थ्या दुर्लभा रामसंस्थितिः ॥ ८ ॥

kathametādṛśī prāptirasmākaṃ munināyaka mūrkhāḥ stabdhāśca kiṃcijjñā mādṛśāḥ kva ca pāpinaḥ kva ca brahmādibhiḥ prārthyā durlabhā rāmasaṃsthitiḥ || 8 ||

How is it possible for us to attain such a state, O leader of sages? We are fools, ignorant, and sinners. How can we, who are like this, attain the rare state of Rama, which is sought even by Brahma and others?

ऐसी स्थिति प्राप्त करना हमारे लिए कैसे संभव है, हे मुनिनायक? हम मूर्ख, अज्ञानी और पापी हैं। हम जैसे लोग ब्रह्मा और अन्यों द्वारा भी चाही गई राम की दुर्लभ स्थिति कैसे प्राप्त कर सकते हैं?

6.127.9

अहो मुनीश्वरगुरो कथं विश्राम्यते मया दुष्पारस्य भवाम्भोधेस्तीर्यते तद्वदाशु मे ॥ ९ ॥

aho munīśvaraguro kathaṃ viśrāmyate mayā duṣpārasya bhavāmbhodhestīryate tadvadāśu me || 9 ||

Ah, O great sage, how can I rest? Please tell me how to cross this difficult ocean of existence quickly.

अहो, हे मुनिश्वरगुरु, मैं कैसे विश्राम कर सकता हूँ? कृपया मुझे बताएँ कि मैं इस कठिन संसार सागर को कैसे जल्दी पार कर सकता हूँ।

6.127.10

श्रीवाल्मीकिरुवाच श्रीरामवृत्तान्तमशेषमादितो वसिष्ठवाक्यानुगतं निरूपितम् धिया विचार्यानु परामृश प्रभो मयापि तादृक्कथनीयमत्र ते ॥ १० ॥

śrīvālmīkiruvāca śrīrāmavṛttāntamaśeṣamādito vasiṣṭhavākyānugataṃ nirūpitam dhiyā vicāryānu parāmṛśa prabho mayāpi tādṛkkathanīyamatra te || 10 ||

Valmiki said, 'The complete story of Rama, from the beginning, has been explained according to the words of Vasishtha. Reflect on it with your mind, O Lord, and understand it. I too have something similar to say to you here.'

वाल्मीकि ने कहा, 'श्री राम की पूरी कथा, शुरुआत से, वसिष्ठ के शब्दों के अनुसार समझाई गई है। इस पर अपने मन से विचार करें, हे प्रभु, और इसे समझें। मैं भी यहाँ आपको कुछ ऐसा ही कहना चाहता हूँ।'

6.127.11

अविद्यायाः प्रपञ्चोऽयं नास्ति सत्यमिहाण्वपि । विवेचयन्ति विबुधा विवदन्त्यविवेकिनः ॥ ११ ॥

avidyāyāḥ prapañco'yaṃ nāsti satyamihāṇvapi | vivecayanti vibudhā vivadantyavivekinaḥ || 11 ||

This world is an illusion due to ignorance; there is no truth here, not even an atom. The wise discern this, but the ignorant argue.

यह संसार अविद्या के कारण भ्रम है; यहाँ कोई सत्य नहीं है, न तो एक अणु भी। विद्वान इसे समझते हैं, लेकिन अविवेकी लोग बहस करते हैं।

6.127.12

नास्ति भिन्नं चितः किंचित्किं प्रपञ्चेन रुध्यसे । अभ्यासेन रहस्यानां वयस्य विशदो भव ॥ १२ ॥

nāsti bhinnaṃ citaḥ kiṃcitkiṃ prapañcena rudhyase | abhyāsena rahasyānāṃ vayasya viśado bhava || 12 ||

There is nothing different from consciousness; why do you grieve over the world? Through the practice of secrets, become clear-minded, O friend.

चेतना से भिन्न कुछ भी नहीं है; संसार के लिए तुम क्यों दुखी होते हो? रहस्यों के अभ्यास से, हे मित्र, स्पष्ट मन बनो।

6.127.13

प्रपञ्चविषया वृत्तिर्जाग्रन्निद्रेति कीर्तिता । संप्रबुद्धस्तु यस्यान्तश्चित्प्रदीपो निरञ्जनः ॥ १३ ॥

prapañcaviṣayā vṛttirjāgrannidreti kīrtitā | saṃprabuddhastu yasyāntaścitpradīpo nirañjanaḥ || 13 ||

The activity related to the world is called the waking state; one who is fully awake has the pure light of consciousness within.

संसार से संबंधित वृत्ति जाग्रत अवस्था कहलाती है; जो पूरी तरह से जाग्रत है, उसके अंदर शुद्ध चेतना का प्रकाश है।

6.127.14

शून्यमूलः प्रपञ्चोऽयं शून्यताशिखरः सखे । सारशून्यतया मध्येऽप्यनास्था सन्मनीषिणाम् ॥ १४ ॥

śūnyamūlaḥ prapañco'yaṃ śūnyatāśikharaḥ sakhe | sāraśūnyatayā madhye'pyanāsthā sanmanīṣiṇām || 14 ||

This world is rooted in emptiness and is the peak of emptiness, O friend. Even in the midst of it, the wise have no attachment due to its emptiness of essence.

यह संसार शून्यता में जड़ा है और शून्यता का शिखर है, हे मित्र। इसके बीच में भी, विद्वान लोग इसकी सार की शून्यता के कारण कोई आसक्ति नहीं रखते।

6.127.15

अनादिवासनादोषादसन्नेवायमीक्ष्यते । गन्धर्वनगराकारः संसारो बहुविभ्रमः ॥ १५ ॥

anādivāsanādoṣādasannevāyamīkṣyate | gandharvanagarākāraḥ saṃsāro bahuvibhramaḥ || 15 ||

Due to the fault of beginningless desires, this world is seen as non-existent. The world is like a mirage, full of many illusions.

अनादि वासना के दोष के कारण, यह संसार असत्य दिखाई देता है। संसार गंधर्व नगर के समान है, जो अनेक भ्रमों से भरा हुआ है।

6.127.16

त्वमनभ्यस्य कल्याणीं चैतन्यामृतकन्दलीम् । संमुह्यसि किमध्यास्य वासनाविषवीरुधः ॥ १६ ॥

tvamanabhyasya kalyāṇīṃ caitanyāmṛtakandalīm | sammuhyasi kimadhyāsya vāsanāviṣavīrudhaḥ || 16 ||

Why are you confused, O ignorant one, without practicing the auspicious root of the nectar of consciousness? You are entangled in the poisonous tree of desires.

हे अज्ञानी, तुम चेतना के अमृत की कल्याणमयी जड़ का अभ्यास न करके क्यों भ्रमित हो? तुम वासना के विषैले वृक्ष में उलझे हो।

6.127.17

जाग्रदेतन्न पतितं ज्ञानालम्बग्रहादधः । न सन्त्युपरि सर्वेषां ये निरालम्बसंविदः ॥ १७ ॥

jāgradetanna patitaṃ jñānālambagrahādadhaḥ | na santyupari sarveṣāṃ ye nirālambasaṃvidaḥ || 17 ||

This awakened state has not fallen from the grasp of knowledge. There are no higher realities for those who have non-dependent consciousness.

यह जाग्रत अवस्था ज्ञान के ग्रहण से गिरी नहीं है। जिनकी अनाश्रित चेतना है, उनके लिए ऊपर कोई वास्तविकता नहीं है।

6.127.18

तावद्रूढा सुधाकाररसा संविन्महानदी । न यावदात्मरूपेण निपुणैरवगाह्यते ॥ १८ ॥

tāvadrūḍhā sudhākārarasā saṃvinmahānadī | na yāvadātmarūpeṇa nipuṇairavagāhyate || 18 ||

The great river of consciousness, full of the essence of nectar, remains firm until it is deeply understood by the wise in the form of the Self.

अमृत के रस से भरी चेतना की महान नदी तब तक स्थिर रहती है जब तक कि ज्ञानी लोग आत्मरूप में इसे गहराई से नहीं समझ लेते।

6.127.19

प्राङ्नास्ति चरमे नास्ति वस्तु सर्वमिदं सखे । विद्धि मध्येऽपि तन्नास्ति स्वप्नवृत्तमिदं जगत् ॥ १९ ॥

prāṅnāsti carame nāsti vastu sarvamidaṃ sakhe | viddhi madhye'pi tannāsti svapnavṛttamidaṃ jagat || 19 ||

O friend, there is no substance in the beginning, nor in the end. Know that even in the middle, this world is like a dream.

हे सखे, आदि में कोई वस्तु नहीं है, न अंत में। जान लो कि बीच में भी यह जगत स्वप्न की तरह है।

6.127.20

अविद्यायोनयो भेदाः सर्वेऽमी बुद्बुदा इव । क्षणमुद्भूय गच्छन्ति ज्ञानैकजलधौ लयम् ॥ २० ॥

avidyāyonayo bhedāḥ sarve'mī budbudā iva | kṣaṇamudbhūya gacchanti jñānaikajaladhau layam || 20 ||

All differences arising from ignorance are like bubbles. They arise for a moment and then dissolve into the single ocean of knowledge.

अज्ञान से उत्पन्न सभी भेद बुदबुदों की तरह हैं। वे एक क्षण के लिए उभरते हैं और फिर ज्ञान के एकमात्र सागर में विलीन हो जाते हैं।

6.127.21

सुशीतलोदकनदीं विदित्वाथ विगाह्य ताम्। बहिर्भ्रान्तिनिदाघास्ते निर्यान्तु कलितासुखम्॥ २१॥

suśītalodakanadīṃ viditvātha vigāhya tām | bahirbhrāntinidāghāste niryāntu kalitāsukham || 21 ||

Having known the river with cool water, one should enter it | The external wandering heat should cease, and one should emerge with bliss

सुशीतल जल की नदी को जानकर उसमें प्रवेश करें | बाहरी भ्रमण का ताप समाप्त हो जाए और आनंद से निकलें

6.127.22

एकश्चाज्ञानजलधिर्जगदाप्लाव्य तिष्ठति। ज्येष्ठोऽयमहमित्यूर्मिरविद्यावातसंभवः॥ २२॥

ekaścājñānajaladhirjagadāplāvya tiṣṭhati | jyeṣṭho'yamahamityūrmiravidyāvātasaṃbhavaḥ || 22 ||

One ocean of ignorance floods the world and stands | The wave of 'I am the greatest' arises from the wind of ignorance

एक अज्ञान का जलधि जगत् को डुबाकर खड़ा है | मैं सबसे बड़ा हूँ इस लहर का उत्पत्ति अविद्या के वायु से होती है

6.127.23

चित्तस्खलनभेदाली रागाद्याश्च प्रकल्पिताः। ममतोत्कलितावर्तः स्वतः स्वैरं प्रवर्तते॥ २३॥

cittaskhalanabhedālī rāgādyāśca prakalpitāḥ | mamatotkalitāvartaḥ svataḥ svairaṃ pravartate || 23 ||

The waves of attachment and other emotions are created by the mind's fluctuations | The whirlpool of 'mine' arises spontaneously

मन के विचलन से राग और अन्य भावनाओं की लहरें उत्पन्न होती हैं | मेरा इस विचार का भँवर स्वतः ही उत्पन्न होता है

6.127.24

रागद्वेषावतिग्राहौ गृहीतसमनन्तरः। ततश्चानर्थपातालप्रवेशः केन वार्यते॥ २४॥

rāgadveṣāvatigrāhau gṛhītasamanantaraḥ | tataścānarthapātālapraveśaḥ kena vāryate || 24 ||

Attachment and aversion are firmly grasped and followed by misfortune | How can one avoid falling into the pit of misfortune?

राग और द्वेष को दृढ़ता से पकड़ा जाता है और उसके बाद दुर्भाग्य आता है | अनर्थ की गहराई में गिरने से कैसे बचा जा सकता है?

6.127.25

प्रशान्तामृतकल्लोले केवलामृतवारिधौ। मज्ज मज्जसि किं द्वैतग्रहक्षाराब्धिवीचिषु॥ २५॥

praśāntāmṛtakallole kevalāmṛtavāridhau | majja majjasikim dvaitagrahakṣārābdhivīciṣu || 25 ||

In the peaceful ocean of immortal nectar, why do you immerse yourself in the waves of duality?

शांत अमृत की लहरों में केवल अमृत के समुद्र में, क्यों तुम द्वैत के खारे समुद्र की लहरों में डूबते हो?

6.127.26

कस्तिष्ठति गतः को वा कस्य केन किमागतम्। किं नु मज्जसि मायायां पत मा त्वमतन्द्रितः॥ २६॥

kastiṣṭhati gataḥ ko vā kasya kena kimāgatam| kiṃ nu majjasi māyāyāṃ pata mā tvamatandritaḥ || 26 ||

Who stands and who has gone? Who has come from whom and by what means? Why do you immerse yourself in illusion? Fall, do not be lazy.

कौन खड़ा है और कौन चला गया? किससे किसने क्या लाया? तुम माया में क्यों डूब रहे हो? गिर जाओ, आलस्य मत करो।

6.127.27

तत्त्वमेकं यदात्मेति जगदेतत्प्रचक्षते । ततोऽन्यः कस्तवातीतो यस्तात विषयः शुचाम् ॥ २७ ॥

tattvamekaṃ yadātmeti jagadetatpracakṣate| tato'nyaḥ kastavātīto yastāta viṣayaḥ śucām || 27 ||

That truth is one which is called the self. This world is explained from that. Other than that, who is beyond that which is the object of the pure?

वह सत्य एक है जिसे आत्मा कहते हैं। यह दुनिया उससे व्याख्यायित है। उसके अलावा, कौन है जो उस शुद्ध का विषय है?

6.127.28

बालान्प्रति विवर्तोऽयं ब्रह्मणः सकलं जगत् । अविवर्तितमानन्दमास्थिताः कृतिनः सदा ॥ २८ ॥

bālānprati vivarto'yaṃ brahmaṇaḥ sakalaṃ jagat| avivartitamānandamāsthitāḥ kṛtinaḥ sadā || 28 ||

This transformation is for the ignorant. The entire world is of Brahman. Those who are wise always abide in unchanged bliss.

यह परिवर्तन अज्ञानी के लिए है। पूरी दुनिया ब्रह्म की है। जो बुद्धिमान हैं, वे हमेशा अपरिवर्तित आनंद में रहते हैं।

6.127.29

अविविक्तो जनः शोचत्यकस्माच्च प्रहृष्यति । तत्त्ववित्तु हसन्नास्ते तस्य मोहो विडम्बनम् ॥ २९ ॥

avivikto janaḥ śocatyakasmācca prahṛṣyati| tattvavittu hasannāste tasya moho viḍambanaṃ || 29 ||

The undiscerning person grieves and rejoices without reason. But the knower of truth laughs and remains calm, for his delusion is a mere illusion.

अविवेकी व्यक्ति बिना कारण शोक और हर्ष करता है। लेकिन सत्य का ज्ञाता हँसता है और शांत रहता है, क्योंकि उसका भ्रम एक भ्रम मात्र है।

6.127.30

तच्च सूक्ष्ममिदं तत्त्वं तिरोहितमविद्यया । यथा स्थलेषु लोकानां जलेष्वात्मसु संशयः ॥ ३० ॥

taccasūkṣmamidaṃ tattvaṃ tirohitamavidyayā| yathā sthaleṣu lokānāṃ jaleṣvātmasu saṃśayaḥ || 30 ||

This truth is subtle and hidden by ignorance, just as there is doubt about the self in the waters of the world.

यह सत्य सूक्ष्म है और अज्ञान से छिपा हुआ है, जैसे दुनिया के पानी में आत्मा के बारे में संदेह होता है।

6.127.31

पृथिव्यादिमहाभूतपरमाणुमयं जगत् । स्थितं यदा तदापीह को गतो योऽनुशोच्यते ॥ ३१ ॥

pṛthivyādimahābhūtaparamāṇumayaṃ jagat| sthitaṃ yadā tadāpīha ko gato yo'nuśocyate || 31 ||

When the universe, which is composed of the subtle particles of the great elements starting with earth, exists, then who has gone that you should grieve for?

जब पृथ्वी आदि महाभूतों के परमाणुओं से बना यह जगत स्थित है, तब ऐसा कौन चला गया है जिसके लिए शोक किया जाए?

6.127.32

असतः संभवो नास्ति नास्त्वभावः सतः सखे । आविर्भावतिरोभावाः संस्थानानाममी परम् ॥ ३२ ॥

asataḥ saṃbhavaḥ nāsti nāstvabhāvaḥ sataḥ sakhe| āvirbhāvatirbhāvāḥ saṃsthānānāmamī param || 32 ||

There is no existence of the non-existent, nor is there non-existence of the existent, O friend. The manifestation and disappearance of things are merely transformations.

असत का अस्तित्व नहीं है, न ही सत का अभाव है, हे मित्र। चीजों का प्रकट होना और अदृश्य होना केवल परिवर्तन हैं।

6.127.33

किंत्वनेकपुरोत्साहाद्विषतामुपगच्छति । भज संभरिताभोगं परमेशं जगद्गुरुम् ॥ ३३ ॥

kintvanekapurotsāhādviṣatāmupagacchati| bhaja saṃbharitābhogaṃ parameśaṃ jagadgurum || 33 ||

However, due to the enthusiasm of many, it reaches the poisonous. Worship the Supreme Lord, the teacher of the universe, who is endowed with all enjoyments.

फिर भी, बहुत से लोगों के उत्साह के कारण, यह विषैले तक पहुँचता है। समस्त भोगों से युक्त परमेश्वर, जगत के गुरु की आराधना करो।

6.127.34

दुरितानि समस्तानि पच्यन्तेऽद्यापि न ध्रुवम् । कृतमेवास्य देवस्य पाशा विश्रवतां गताः ॥ ३४ ॥

duritāni samastāni pacyante'dyāpi na dhruvam| kṛtamevāsya devasya pāśā viśravatāṃ gatāḥ || 34 ||

All sins are being cooked even today, but not certainly. The bonds of this god have indeed been loosened by the resplendent ones.

सभी पाप आज भी पक रहे हैं, लेकिन निश्चित रूप से नहीं। इस देवता के बंधन वास्तव में चमकीले लोगों द्वारा ढीले कर दिए गए हैं।

6.127.35

साकारं भज तावत्त्वं यावत्सत्त्वं प्रसीदति । निराकारे परे तत्त्वे ततः स्थितिरकृत्रिमा ॥ ३५ ॥

sākāraṃ bhaja tāvattvaṃ yāvatsattvaṃ prasīdati| nirākāre pare tattve tataḥ sthitirakṛtrimā || 35 ||

Worship the form as long as the essence is pleased. In the formless supreme reality, there is a natural state of being.

जब तक सत्ता प्रसन्न है, तब तक रूप की आराधना करो। निराकार परम तत्त्व में एक स्वाभाविक स्थिति है।

6.127.36

इमामुद्दामतमसो जित्वा सत्त्वबलाद्ध्रुवम् यमस्यानुसराध्वानं विश्वस्तेनान्तरात्मना ॥ ३६ ॥

imāmuddāmatamoso jitvā sattvabalāddhruvam yamasyānusarādhvānaṃ viśvastenāntarātmanā || 36 ||

Having conquered this great darkness by the power of goodness, one should follow the path of Yama with a trusting inner self.

इस महान अंधकार को सत्त्व की शक्ति से जीतकर, यम के पथ का अनुसरण विश्वासपूर्वक अंतरात्मा के साथ करें।

6.127.37

समाधाय क्षणं पश्य प्रत्यगात्मानमात्मना इयं विभातु सा व्यक्तं प्राग्बुद्धिरजनी तव ॥ ३७ ॥

samādhāya kṣaṇaṃ paśya pratyagātmānamātmanā iyaṃ vibhātu sā vyaktaṃ prāgbuddhirajanī tava || 37 ||

Meditate for a moment and see the inner self with the self. May this clear understanding, which is the primordial wisdom, manifest to you.

एक क्षण के लिए ध्यान करें और अपने अंतरात्मा को अपने स्वयं से देखें। यह स्पष्ट बोध, जो आदिम बुद्धि है, आपको प्रकट हो।

6.127.38

कृतं पुरुषकारेण केवलेन च कर्मणा महेशानुग्रहादेव प्राप्तव्यं प्राप्यते नरैः ॥ ३८ ॥

kṛtaṃ puruṣakāreṇa kevalena ca karmaṇā maheśānugrahādeva prāptavyaṃ prāpyate naraiḥ || 38 ||

That which is done by human effort alone and by action, is attained by the grace of Mahesha (Shiva).

जो मानव प्रयास और कर्म से होता है, वह महेश (शिव) की कृपा से प्राप्त होता है।

6.127.39

नाभिजात्यं न चारित्र्यं न नयो न च विक्रमः बलवन्ति पुराणानि सखे कर्माणि केवलम् ॥ ३९ ॥

nābhijātyaṃ na cāritryaṃ na nayo na ca vikramaḥ balavanti purāṇāni sakhe karmaṇi kevalam || 39 ||

Neither birth, nor character, nor policy, nor valor are powerful; only actions, O friend, are powerful.

न जन्म, न चरित्र, न नीति, न शौर्य शक्तिशाली हैं; केवल कर्म, हे मित्र, शक्तिशाली हैं।

6.127.40

अप्रतर्क्यात्प्रतीकारात्किमेवमवसीदसि न लुम्पति ललाटस्थामीश्वरोऽप्यक्षरावलिम् ॥ ४० ॥

apratarkyātpratīkārātkimevamavasīdasi na lumpati lalāṭasthāmīśvaro'pyakṣarāvalim || 40 ||

Why do you despair from an unforeseen calamity? Even Ishvara (God) cannot erase the syllable 'Om' inscribed on the forehead.

एक अप्रत्याशित आपदा से क्यों निराश हो रहे हो? even Ishvara (God) ललाट पर लिखी अक्षरावली 'ओम' को नहीं मिटा सकता।

6.127.41

क्व चिद्वक्ता क्व वैदग्ध्यं क्व चेयं मोहवल्लरी । अचिन्तनीया नियतिर्यदियं द्वन्द्वमाहिता ॥ ४१ ॥

kva cidvaktā kva vaidagdhyam kva ceayam mohavallarī | acintanīyā niyatiryadiayam dvandvamāhitā || 41 ||

Where is the speaker, where is the skill, where is this creeper of delusion? The unthinkable destiny is placed in this duality.

वक्ता कहाँ है, कौशल कहाँ है, यह मोह की लता कहाँ है? अचिन्तनीय नियति इस द्वन्द्व में स्थित है।

6.127.42

हे भरद्वाज मोहं त्वं विवेकेन जहि स्फुटम् । असामान्यमिदानीं त्वं ज्ञानं प्राप्स्यस्यसंशयम् ॥ ४२ ॥

he bharadvāja moham tvam vivekena jahi sphutam | asāmānyamidānīm tvam jñānam prāpsyasyasamśayam || 42 ||

O Bharadvaja, you should clearly destroy this delusion with discrimination. You will undoubtedly attain extraordinary knowledge now.

हे भरद्वाज, तुम इस मोह को विवेक से स्पष्ट रूप से नष्ट करो। तुम अब निश्चित रूप से असामान्य ज्ञान प्राप्त करोगे।

6.127.43

दूरमुत्सहते राजा महासत्त्वो महापदि । अल्पसत्त्वो जनः शोचत्यल्पेऽपि हि परिक्षते ॥ ४३ ॥

dūramutsahate rājā mahāsattvo mahāpadi | alpasattvo janaḥ śocatyalpe'pi hi parikṣate || 43 ||

A great-minded king endures great calamities. A small-minded person laments even in small difficulties.

एक महान विचारों वाला राजा बड़ी विपत्तियों में भी सहन करता है। एक छोटे विचारों वाला व्यक्ति छोटी सी कठिनाइयों में भी शोक करता है।

6.127.44

बोधः पुण्यपराधीनः प्रथते बहुजन्मभिः । अनुमीयेत धीरेषु जीवन्मुक्तेषु कार्यतः ॥ ४४ ॥

bodhaḥ puṇyaparādhīnaḥ prathate bahujanmabhiḥ | anumīyet dhīreṣu jīvanmukteṣu kāryataḥ || 44 ||

Enlightenment is dependent on merit and manifests through many births. It should be inferred from the wise who are liberated while living.

बोध पुण्य पर निर्भर करता है और कई जन्मों के द्वारा प्रकट होता है। यह बुद्धिमान और जीवन मुक्त लोगों से अनुमान लगाया जाना चाहिए।

6.127.45

द्विषद्भूतेन येनैव कर्मणा बन्ध ईदृशः । सुहृद्भूतेन तेनैव मोक्षमाप्स्यसि पुत्रक ॥ ४५ ॥

dviṣadbhūtena yenaiva karmaṇā bandha īdṛśaḥ | suhṛdbhūtena tenaiva mokṣamāpsyasi putraka || 45 ||

By the very action that binds you as an enemy, you will attain liberation by the same action as a friend, O son.

उसी कर्म से जो तुम्हें शत्रु के रूप में बाँधता है, तुम उसी कर्म से मित्र के रूप में मुक्ति प्राप्त करोगे, हे पुत्र।

6.127.46

सतां सत्कर्मसंवेगः पुराणं प्रणुदन्नयम् । वर्षौघ इव भूतानां दवानलमसेचयत् ॥ ४६ ॥

satāṃ satkarmasaṃvegaḥ purāṇaṃ praṇudannayam | varṣaugha iva bhūtānāṃ davānalamasecayat || 46 ||

The enthusiasm of the virtuous for good deeds, like a torrential rain, extinguishes the ancient fire of afflictions.

सज्जनों का सत्कर्मों में उत्साह, प्राचीन दुःखों की आग को बुझाता है, जैसे वर्षा का जल आग को बुझाता है।

6.127.47

सखे संन्यस्य कर्माणि ब्रह्मणः प्रणयी भव । नेष्यसे यदि संसारचक्रावर्तभ्रमः शमम् ॥ ४७ ॥

sakhe saṃnyasya karmāṇi brahmaṇaḥ praṇayī bhava | neṣyase yadi saṃsāracakrāvartabhramaḥ śamam || 47 ||

O friend, renounce your actions and become devoted to Brahman. You will not be caught in the whirlpool of the worldly cycle if you find peace.

हे मित्र, अपने कर्मों का त्याग करो और ब्रह्म के प्रेम में डूब जाओ। अगर तुम शांति पा लो, तो तुम संसार के चक्र के भँवर में नहीं फँसोगे।

6.127.48

तावदेतद्विकल्पोत्थमिदं यावद्बहिर्ग्रहः । प्रतिकूलोऽब्धिरुल्लोले केवलं निश्चले जले ॥ ४८ ॥

tāvadetadvikalpotthamidaṃ yāvadbahirgrahaḥ | pratikūlo'bdhirullole kevalaṃ niścale jale || 48 ||

As long as there is an external grasp, this is the cause of duality. The ocean is unfavorable when it is turbulent, but it is calm when the water is still.

जब तक बाहरी आसक्ति है, यह द्वैत का कारण है। समुद्र अनुकूल नहीं होता जब वह उथला होता है, लेकिन जब पानी शांत होता है, तो वह शांत होता है।

6.127.49

अयं किमन्धकरणस्त्वया शोकोऽवलम्ब्यते । निर्वाहयतु सैव त्वां प्रज्ञायष्टिरभङ्गुरा ॥ ४९ ॥

ayaṃ kimandhakaraṇastvayā śoko'valambyate | nirvāhayatu saiva tvāṃ prajñāyaṣṭirabhaṅgurā || 49 ||

Why do you cling to this sorrow that causes blindness? Let that very wisdom, which is firm and unbreakable, guide you.

तुम इस अंधकार पैदा करने वाले शोक को क्यों पकड़े हुए हो? वही दृढ़ और अटूट बुद्धि तुम्हें मार्गदर्शन करे।

6.127.50

न जातु ते विगण्यन्ते गणनासु गरीयसाम् । ये तरङ्गैस्तृणानीव ह्रियन्ते हर्षशोकयोः ॥ ५० ॥

na jātu te vigṇyante gaṇanāsu garīyasām | ye taraṅgais tṛṇānīva hriyante harṣaśokayoḥ || 50 ||

Those who are carried away by the waves of joy and sorrow are never counted among the great.

जो हर्ष और शोक की लहरों से बहे जाते हैं, वे कभी महान लोगों में गिने नहीं जाते।

6.127.51

समारूढं दशादोलामहोरात्रमिदं जगत् । क्रीड्यते षड्विधैः प्रेङ्खैः सखे किमिति खिद्यते ॥ ५१ ॥

samārūḍhaṃ daśādolāmahorātramidaṃ jagat | krīḍyate ṣaḍvidhaiḥ preṅkhaiḥ sakhe kimiti khidyate || 51 ||

This world, mounted on the swing of the ten states, day and night, plays with six types of swings, O friend, why do you grieve?

यह जगत् दश अवस्थाओं के झूले पर चढ़ा हुआ है, दिन-रात छह प्रकार के झूलों पर खेलता है, हे मित्र, तुम दुःखी क्यों हो?

6.127.52

सूते संहरति क्षिप्रं पुनः सृजति हन्ति च । जगन्ति बहुपर्यायैः काल एव कुतूहली ॥ ५२ ॥

sūte saṃharati kṣipraṃ punaḥ sṛjati hanti ca | jaganti bahuparyāyaiḥ kāla eva kutūhalī || 52 ||

Time, being playful, creates, destroys, quickly absorbs, and kills the world in many ways.

समय, जो खेलने में लगा है, जगत को बहुत से तरीकों से उत्पन्न करता है, नष्ट करता है, तेजी से समाहित करता है, और मारता है।

6.127.53

न विशेषग्रहः कश्चिन्न च कश्चिन्न कश्चन । जन्तुष्वभ्यवहार्येषु प्राक्रम्य कालभोगिनः ॥ ५३ ॥

na viśeṣagrahaḥ kaścinna ca kaścinna kaścana | jantuṣvabhyavahāryeṣu prākramya kālabhoginaḥ || 53 ||

There is no special attachment to anyone, nor is there any distinction among beings who are engaged in their activities, as they are all enjoyers of time.

किसी के साथ कोई विशेष आसक्ति नहीं है, न ही उन जीवों में कोई भेद है जो अपनी गतिविधियों में लगे हुए हैं, क्योंकि वे सभी समय के भोगी हैं।

6.127.54

का कथा मर्त्यपिण्डानां निमेषान्तरवासिनाम् । अपि देवनिकाया ये तेऽपि दुष्कालगोचराः ॥ ५४ ॥

kā kathā martyapiṇḍānāṃ nimeṣāntaravāsinām | api devanikāyā ye te'pi duṣkālagocarāḥ || 54 ||

What to say of mortal beings who live for a moment? Even the celestial beings are subject to difficult times.

मर्त्य पिंडों की क्या कथा है जो पल के बीच रहते हैं? यहाँ तक कि देवताओं के शरीर भी कठिन समय के अधीन हैं।

6.127.55

स्वयं नृत्यसि किं प्रीतो विपत्तौ विकलेन्द्रियः । क्षणं निश्चलमासीनः पश्य संसारनाटकम् ॥ ५५ ॥

svayaṃ nṛtyasi kiṃ prīto vipattau vikalendriyaḥ | kṣaṇaṃ niścalamāsīnaḥ paśya saṃsāranāṭakam || 55 ||

Why do you dance yourself, being pleased in distress with disturbed senses? Sit calmly for a moment and watch the drama of the world.

तुम खुद क्यों नाचते हो, विपत्ति में प्रसन्न होकर विकल इंद्रियों के साथ? एक पल के लिए शांत बैठो और संसार के नाटक को देखो।

6.127.56

अस्यानेकतरङ्गस्य जगतः क्षणभङ्गिनः । न विषीदति मनस्वी भरद्वाज मनागपि ॥ ५६ ॥

asyānekataraṅgasya jagataḥ kṣaṇabhaṅginaḥ | na viṣīdati manasvī bharadvāja manāgapi || 56 ||

The wise person does not grieve over this world, which is full of countless waves and is momentary.

इस अनेक तरंगों से भरे और क्षणभंगुर जगत पर मनस्वी व्यक्ति शोक नहीं करता।

6.127.57

त्यज शोकममङ्गल्यं मङ्गलानि विचिन्तय । चिदानन्दघनं स्वच्छमात्मानं च विभावय ॥ ५७ ॥

tyaja śokamamaṅgalyaṃ maṅgalāni vicintaya | cidānandaghanaṃ svacchamātmānaṃ ca vibhāvaya || 57 ||

Abandon the inauspicious grief and think of auspicious things. Contemplate the pure self, which is full of bliss and consciousness.

अमंगल शोक को त्याग दो और मंगलमय विचार करो। आनंद और चेतना से भरे शुद्ध आत्मा पर ध्यान करो।

6.127.58

देवद्विजगुरुश्रद्धाभरबन्धुरचेतसाम् । सदागमप्रमाणानां महेशानुग्रहो भवेत् ॥ ५८ ॥

devadvijaguruśraddhābharabandhuracetasām | sadāgamapramāṇānāṃ maheśānugraho bhavet || 58 ||

The grace of Mahesha (Shiva) will be upon those whose minds are filled with devotion to gods, Brahmins, and gurus, and who always follow the scriptures.

उन लोगों पर महेश (शिव) की कृपा होगी, जिनके मन देवताओं, ब्राह्मणों और गुरुओं के प्रति श्रद्धा से भरे हों, और जो हमेशा शास्त्रों का पालन करें।

6.127.59

भरद्वाज उवाच । ज्ञातं तव प्रसादेन सर्वमेतदशेषतः । न वैराग्यात्परो बन्धुर्न संसारात्परो रिपुः ॥ ५९ ॥

bharadvāja uvāca | jñātaṃ tava prasādena sarvametadayeṣataḥ | na vairāgyātparo bandhurna saṃsārātparo ripuḥ || 59 ||

Bharadvaja said: By your grace, I have known all this completely. There is no greater friend than dispassion, and no greater enemy than worldly attachment.

भरद्वाज ने कहा: आपकी कृपा से मैंने इस सबको पूरी तरह से जान लिया है। वैराग्य से बढ़कर कोई बन्धु नहीं है, और संसार से बढ़कर कोई शत्रु नहीं है।

6.127.60

इदानीं श्रोतुमिच्छामि वसिष्ठेनोपपादितम् । ज्ञानसारमशेषेण ग्रन्थेनोक्तं पदात्मना ॥ ६० ॥

idānīṃ śrotumicchāmi vasiṣṭhenopapāditam | jñānasāramayeṣeṇa granthenaektam padātmanā || 60 ||

Now I wish to hear the essence of knowledge, as explained by Vasistha, completely expressed in the text word by word.

अब मैं वसिष्ठ द्वारा व्याख्यायित ज्ञान का सार, पूरी तरह से शब्दों में व्यक्त ग्रंथ सुनना चाहता हूँ।

6.127.61

श्रीवाल्मीकिरुवाच । भरद्वाज शृणुष्वेदं महाज्ञानं विमुक्तिदम् । यस्य श्रवणमात्रेण भवाब्धौ न निमज्जसि ॥ ६१ ॥

śrīvālmīkiruvāca | bharadvāja śr̥ṇuṣvedaṃ mahājñānaṃ vimuktidam | yasya śravaṇamātreṇa bhavābdhau na nimajjasi || 61 ||

Śrī Vālmīki said: O Bharadvāja, listen to this great knowledge that leads to liberation. By merely hearing it, one does not drown in the ocean of worldly existence.

श्री वाल्मीकि ने कहा: हे भरद्वाज, इस महाज्ञान को सुनो जो मुक्ति का कारण है। इसके सुनने मात्र से ही भवसागर में नहीं डूबता।

6.127.62

संहृतिस्थितिसंभूतिभेदैर्योऽनेकधा स्थितः । एकोऽपि सन्नमस्तस्मै सच्चिदानन्दमूर्तये ॥ ६२ ॥

saṃhṛtisthitisambhūtibhedairyo'nekadhā sthitaḥ | eko'pi sannamastasmai saccidānandamūrtaye || 62 ||

The one who is established in various forms through the differences of creation, preservation, and dissolution, even though He is one, I bow to Him who is the embodiment of truth, consciousness, and bliss.

जो सृष्टि, स्थिति और संहार के भेदों से अनेक रूपों में स्थित है, वह एक ही है, मैं उस सच्चिदानन्द मूर्ति को नमस्कार करता हूँ।

6.127.63

कृते प्रपञ्चविलये यथा तत्त्वं प्रकाशते । तवोपायं प्रवक्ष्यामि संक्षेपाच्छ्रुतिशासनात् ॥ ६३ ॥

kṛte prapañcavilaye yathā tattvaṃ prakāśate | tavopāyaṃ pravakṣyāmi saṃkṣepācchruitiśāsanāt || 63 ||

As the truth is revealed when the universe dissolves, I will explain the means to you in brief, according to the scriptures.

जैसे ब्रह्मांड के विलय होने पर तत्त्व प्रकट होता है, वैसे ही मैं शास्त्रों के अनुसार तुम्हें संक्षेप में उपाय बताऊँगा।

6.127.64

पूर्वापरविचारार्हा कथं नष्टा तव स्मृतिः । तयैव ज्ञायते सर्वं करामलकवत्स्वयम् ॥ ६४ ॥

pūrvāparavicārārha kathaṃ naṣṭā tava smr̥tiḥ | tayaiva jñāyate sarvaṃ karāmalakavatsvayam || 64 ||

How is your memory lost, which is worthy of considering the past and future? By that very memory, everything is known, just as a fruit is known by tasting it.

आपकी स्मृति कैसे खो गई जो पूर्व और अपर के विचार करने योग्य है? उसी स्मृति से सब कुछ जाना जाता है, जैसे फल को खाकर ही जाना जाता है।

6.127.65

स्वयं विचार्यं स्वयमेव चेतसा तत्प्राप्यते येन न शोचते पुनः । सत्संगसच्छास्त्रविवेकतः पुनर्वैराग्ययुक्तेन विभाव्यमेतत् ॥ ६५ ॥

svayaṃ vicāryaṃ svayameva cetasā tatprāpyate yena na śocate punaḥ | satsaṅgasacchāstravivekataḥ punarvairāgyayuktena vibhāvyametat || 65 ||

One should reflect on this by oneself with the mind, by which one attains that and does not grieve again. This should be contemplated with detachment, arising from the company of the good, sacred scriptures, and discrimination.

इस पर अपने मन से स्वयं विचार करें, जिससे वह प्राप्त हो और फिर शोक नहीं करता। यह सत्संग, शास्त्रों और विवेक से उत्पन्न वैराग्य के साथ विचार किया जाना चाहिए।

Chapter 128

6.128.1

श्रीवाल्मीकिरुवाच । शान्तो दान्तश्चोपरतो निषिद्धात्काम्यकर्मणः । विषयेन्द्रियसंश्लेषसुखाच्च श्रद्धयान्वितः ॥ १ ॥

śrīvālmīkiruvāca | śānto dāntaścoparato niṣiddhātkāmyakarmaṇaḥ | viṣayendriyasaṃśleṣasukhācca śraddhayānvitaḥ || 1 ||

Sage Valmiki said: One should be calm, self-controlled, and withdrawn from forbidden actions. One should be endowed with faith and detached from the pleasures of the senses.

श्री वाल्मीकि ने कहा: एक व्यक्ति शांत, संयमी और निषिद्ध कर्मों से दूर रहे. वह विश्वास से युक्त हो और इंद्रियों के सुखों से अलग हो.

6.128.2

मृद्वासने समासीनो जितचित्तेन्द्रियक्रियः । ओमित्युच्चारयेत्तावन्मनो यावत्प्रसीदति ॥ २ ॥

mṛdvāsane samāsīno jitacittendriyakriyaḥ | omityuccārayettāvanmano yāvatprasīdati || 2 ||

Sitting on a soft seat, with the mind and senses controlled, one should chant 'Om' until the mind becomes calm.

एक नरम आसन पर बैठकर, मन और इंद्रियों को वश में करके, तब तक 'ॐ' का उच्चारण करें जब तक मन शांत न हो जाए.

6.128.3

प्राणायामं ततः कुर्यादन्तःकरणशुद्धये । इन्द्रियाण्याहरेत्पश्चाद्विषयेभ्यः शनैःशनैः ॥ ३ ॥

prāṇāyāmaṃ tataḥ kuryādantaḥkaraṇaśuddhaye | indriyāṇyāharetpaścādviṣayebhyaḥ śanaiḥśanaiḥ || 3 ||

Then, one should practice pranayama for the purification of the inner self. After that, one should gradually withdraw the senses from their objects.

फिर, अंतःकरण की शुद्धि के लिए प्राणायाम का अभ्यास करें. उसके बाद, धीरे-धीरे इंद्रियों को उनके विषयों से वापस लें.

6.128.4

देहेन्द्रियमनोबुद्धिक्षेत्रज्ञानां च संभवः । यस्माद्भवति तज्ज्ञात्वा तेषु पश्चाद्विलापयेत् ॥ ४ ॥

dehendriyamanobuddhikṣetrajñānāṃ ca saṃbhavaḥ | yasmādbhavati tajjñātvā teṣu paścādvilāpayet || 4 ||

Understanding the origin of the body, senses, mind, intellect, and the knower of the field, one should then dissolve them.

शरीर, इंद्रियाँ, मन, बुद्धि और क्षेत्रज्ञ की उत्पत्ति को समझकर, उन्हें विलीन कर देना चाहिए.

6.128.5

विराजि प्रथमं स्थित्वा तत्रात्मनि ततः परम् । अव्याकृते स्थितः पश्चात्स्थितः परमकारणे ॥ ५ ॥

virāji prathamaṃ sthitvā tatrātmani tataḥ param | avyākṛte sthitaḥ paścātsthitaḥ paramakāraṇe || 5 ||

First, abide in the Viraj, then in the self, and finally in the unmanifest. Remain in the supreme cause.

पहले विराज में स्थित होकर, फिर आत्मा में, और अंत में अव्याकृत में स्थित हों. परम कारण में स्थित रहें.

6.128.6

मांसादिपार्थिवं भागं पृथिव्यां प्रविलापयेत्। आप्यं रक्तादिकं चाप्सु तैजसं तेजसि क्षिपेत्॥ ६॥

māṃsādipārthivaṃ bhāgaṃ pṛthivyāṃ pravilāpayet | āpyaṃ raktādikaṃ cāpsu taijasaṃ tejasi kṣipet || 6 ||

One should dissolve the earthly part starting from flesh into the earth | The watery part starting from blood into water | The fiery part into fire

मांस से शुरू होने वाले पृथ्वी के भाग को पृथ्वी में विलीन करें | रक्त से शुरू होने वाले जल के भाग को जल में विलीन करें | अग्नि के भाग को अग्नि में विलीन करें

6.128.7

वायव्यं च महावायौ नाभसं नभसि क्षिपेत्। पृथिव्यादिषु विन्यस्य चेन्द्रियाण्यात्मयोनिषु॥ ७॥

vāyavyaṃ ca mahāvāyau nābhasaṃ nabhasi kṣipet | pṛthivyādiṣu vinyasya cendriyāṇyātmayoniṣu || 7 ||

One should dissolve the airy part into the great wind | The ethereal part into the ether | Having placed the senses in their respective sources starting from the earth

वायवी भाग को महान वायु में विलीन करें | आकाशीय भाग को आकाश में विलीन करें | पृथ्वी से शुरू होने वाले इंद्रियों को उनके संबंधित स्रोतों में रखें

6.128.8

श्रोत्रादिलक्षणोपेतां कर्तुर्भोगप्रसिद्धये। दिक्षु न्यस्यात्मनः श्रोत्रं त्वचं विद्युति निक्षिपेत्॥ ८॥

śrotrādilakṣaṇopetāṃ karturbhogaprasiddhaye | dikṣu nyasyātmanaḥ śrotraṃ tvacaṃ vidyuti nikṣipet || 8 ||

For the manifestation of the enjoyer's experience | One should place one's ear in the directions | The skin in the lightning

भोगी के अनुभव की प्रसिद्धि के लिए | अपने कान को दिशाओं में रखें | त्वचा को बिजली में विलीन करें

6.128.9

चक्षुरादित्यबिम्बे च जिह्वामप्सु विनिक्षिपेत्। प्राणं वायौ वाचमग्नौ पाणिमिन्द्रे विनिक्षिपेत्॥ ९॥

cakṣurādityabimbe ca jihvāmāpsu vinikṣipet | prāṇaṃ vāyau vācamagnau pāṇimindre vinikṣipet || 9 ||

One should dissolve the eye in the orb of the sun | The tongue in water | The breath in the wind | Speech in fire | The hand in Indra

आँख को सूर्य के मंडल में विलीन करें | जीभ को जल में विलीन करें | प्राण को वायु में विलीन करें | वाणी को अग्नि में विलीन करें | हाथ को इंद्र में विलीन करें

6.128.10

विष्णौ तथात्मनः पादौ पायुं मित्रे तथैव च। उपस्थं कश्यपे न्यस्य मनश्चन्द्रे निवेशयेत्॥ १०॥

viṣṇau tathātmanaḥ pādau pāyuṃ mitre tathaiva ca | upasthaṃ kaśyape nyasya manaścandre niveśayet || 10 ||

One should place one's feet in Vishnu | The anus in Mitra | The genitals in Kashyapa | The mind in the moon

अपने पैर को विष्णु में रखें | गुदा को मित्र में रखें | जननांग को कश्यप में रखें | मन को चंद्रमा में रखें

6.128.11

बुद्धिं ब्रह्मणि संयच्छेदेताः करणदेवताःइन्द्रियव्यपदेशेन व्यादिश्यन्ते च देवताः ॥ ११ ॥

buddhiṃ brahmaṇi saṃyacchedetāḥ karaṇadevatāḥindriyavyapadeśena vyādiśyante ca devatāḥ || 11 ||

One should fix the intellect in Brahman, the senses are the deities, the senses are indicated by the senses, and the deities are also indicated.

बुद्धि को ब्रह्म में स्थिर करें, इन्द्रियाँ देवताएँ हैं, इन्द्रियों द्वारा इन्द्रियों का वर्णन किया जाता है, और देवताएँ भी इंगित की जाती हैं।

6.128.12

श्रुतिवाक्यमनुस्मृत्य न स्वतः प्रकटीकृताःएवं न्यस्यात्मनो देहं विराडस्मीति चिन्तयेत् ॥ १२ ॥

śrutivākyamanusmṛtya na svataḥ prakaṭīkṛtāḥevaṃ nyasyātmano dehaṃ virāḍasmīti cintayet || 12 ||

Remembering the words of the Vedas, not revealed by themselves, one should thus place one's body, thinking 'I am the universe.'

वेदों के शब्दों को याद करते हुए, जो स्वयं प्रकट नहीं होते, ऐसे ही अपने शरीर को रखें, सोचें 'मैं ब्रह्मांड हूँ।'

6.128.13

ब्रह्माण्डान्तः स्थितो योऽसावर्धनारीश्वरः प्रभुःआधारः सर्वभूतानां कारणं तदुदाहृतम् ॥ १३ ॥

brahmāṇḍāntaḥ sthito yo'sāvardhanārīśvaraḥ prabhuḥādhāraḥ sarvabhūtānāṃ kāraṇaṃ tadudāhṛtam || 13 ||

He who is situated within the universe, the lord of wealth and prosperity, the support of all beings, is said to be the cause of all.

जो ब्रह्मांड के भीतर स्थित है, धन और समृद्धि का स्वामी, सभी प्राणियों का आधार, वह सबका कारण कहा जाता है।

6.128.14

स यज्ञसृष्टिरूपोऽसौ जगद्वृत्तौ व्यवस्थितःद्विगुणाण्डाद्वहिः पृथ्वी पृथिव्या द्विगुणं जलम् ॥ १४ ॥

sa yajñasṛṣṭirūpo'sau jagadvṛttau vyavasthitaḥdviguṇāṇḍādvahiḥ pṛthvī pṛthivyā dviguṇaṃ jalam || 14 ||

He, in the form of the creator of the sacrifice, is established in the course of the world. From the double-sized egg, the earth; from the earth, the double-sized water.

वह, यज्ञ के सृष्टिकर्ता के रूप में, दुनिया के चलन में स्थापित है। दोगुनी आकार के अंडे से पृथ्वी; पृथ्वी से दोगुनी आकार का जल।

6.128.15

सिद्धादय ऊचुःरामैवमेव सर्वेषां मनसि स्थितिमागतम्त्वत्प्रसादाच्च सकलं संवादेन दृढीकृतम् ॥ १५ ॥

siddhādaya ūcuḥrāmaivameva sarveṣāṃ manasi sthitimāgatamtvatprasādācca sakalaṃ saṃvādena dṛḍhīkṛtam || 15 ||

The sages said: O Rama, in this way, the minds of all have attained steadiness by your grace, and everything has been firmly established through conversation.

ऋषियों ने कहा: हे राम, इस प्रकार से, आपकी कृपा से सभी के मन में स्थिरता आ गई है, और सभी कुछ वार्तालाप द्वारा दृढ़तापूर्वक स्थापित हो गया है।

6.128.16

व्यस्तेन च समस्तेन व्यापिना ग्रथितं जगत् क्षितिं चाप्सु समावेश्य सलिलं चानले क्षिपेत् ॥ १६ ॥

vyastena ca samastena vyāpinā grathitaṃ jagat kṣitiṃ cāpsu samāveśya salilaṃ cānale kṣipet || 16 ||

The entire universe is interwoven with the pervading element, both in its individual and collective forms. One should merge the earth into water and water into fire.

पूरा ब्रह्माण्ड व्यापक तत्व से गुँथा हुआ है, जो व्यक्तिगत और सामूहिक रूपों में भी है। पृथ्वी को जल में और जल को अग्नि में मिलाना चाहिए।

6.128.17

अग्निं वायौ समावेश्य वायुं च नभसि क्षिपेत् नभश्च महदाकाशे समस्तोत्पत्तिकारणे ॥ १७ ॥

agniṃ vāyau samāveśya vāyuṃ ca nabhasi kṣipet nabhaśca mahadākāśe samastotpattikāraṇe || 17 ||

One should merge fire into air and air into space, and space into the great ether, which is the cause of all creation.

अग्नि को वायु में और वायु को आकाश में मिलाना चाहिए, और आकाश को महान आकाश में, जो सब सृष्टि का कारण है।

6.128.18

स्थित्वा तस्मिन्क्षणं योगी लिङ्गमात्रशरीरधृक् वासना भूतसूक्ष्माश्च कर्माविद्ये तथैव च ॥ १८ ॥

sthitvā tasminkṣaṇaṃ yogī liṅgamātraśarīradhṛk vāsanā bhūtasūkṣmāśca karmāvidye tathaiva ca || 18 ||

Remaining in that state for a moment, the yogi, who holds the subtle body, should contemplate on the subtle elements, desires, actions, and ignorance.

उस अवस्था में एक क्षण के लिए रहते हुए, योगी, जो सूक्ष्म शरीर का धारण करता है, सूक्ष्म तत्वों, वासनाओं, कर्मों और अविद्या पर ध्यान करें।

6.128.19

दशेन्द्रियमनोबुद्धिरेतल्लिङ्गं विदुर्बुधाः ततोऽर्धोण्डाद्बहिर्यातस्तत्रात्मास्मीति चिन्तयेत् ॥ १९ ॥

daśendriyamanobuddhiretalliṅgaṃ vidurbudhāḥ tato'rdhoṇḍādbahiryātastatrātmāsmīti cintayet || 19 ||

The wise know that the subtle body consists of the ten senses, the mind, and the intellect. From there, one should go beyond the half-egg and contemplate, 'I am the Self.'

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि सूक्ष्म शरीर दस इंद्रियों, मन और बुद्धि से बना है। वहाँ से, उसे अर्ध-अंडे से परे जाना चाहिए और सोचना चाहिए, 'मैं आत्मा हूँ।'

6.128.20

चतुर्मुखोऽग्रके चायं भूतसूक्ष्मव्यवस्थितः लिङ्गमव्याकृते सूक्ष्मे न्यस्याव्यक्ते च बुद्धिमान् ॥ २० ॥

caturmukho'grake cāyaṃ bhūtasūkṣmavyavasthitaḥ liṅgamavyākṛte sūkṣme nyasyāvyakte ca buddhimān || 20 ||

The four-faced one is established in the subtle elements at the beginning. The wise one places the subtle body in the unmanifest and the unmanifest in the subtle.

चार मुखों वाला शुरुआत में सूक्ष्म तत्वों में स्थित है। बुद्धिमान व्यक्ति सूक्ष्म शरीर को अव्यक्त में और अव्यक्त को सूक्ष्म में रखता है।

6.128.21

नामरूपविनिर्मुक्तं यस्मिन्संतिष्ठते जगत्। तमाहुः प्रकृतिं केचिन्मायामेके परे त्वणून् ॥ २१ ॥

nāmarūpavinirmuktaṃ yasminstantiṣṭhate jagat| tamāhuḥ prakṛtiṃ kecinmāyāmeke pare tvaṇūn || 21 ||

That in which the universe rests, free from names and forms, is called Prakriti by some, Maya by others, and atoms by yet others.

जिसमें नाम और रूप से मुक्त होकर जगत् स्थित है, उसे कुछ लोग प्रकृति कहते हैं, कुछ माया और दूसरे अणु।

6.128.22

अविद्यामपरे प्राहुस्तर्कविभ्रान्तचेतसः। तत्र सर्वे लयं गत्वा तिष्ठन्त्यव्यक्तरूपिणः ॥ २२ ॥

avidyāmapare prāhustarkavibhrāntacetasaḥ| tatra sarve layaṃ gatvā tiṣṭhantyavyaktarūpiṇaḥ || 22 ||

Others, with minds confused by logic, call it ignorance. There, all beings, having attained dissolution, remain in an unmanifest form.

दूसरे, जिनके मन तर्क से भ्रांत हैं, उसे अविद्या कहते हैं। वहाँ, सभी प्राणी, लय प्राप्त करके, अव्यक्त रूप में रहते हैं।

6.128.23

निःसंबन्धा निरास्वादाः संभवन्ति ततः पुनः। तत्स्वरूपा हि तिष्ठन्ति यावत्सृष्टिः प्रवर्तते ॥ २३ ॥

niḥsaṃbandhā nirāsvādāḥ saṃbhavanti tataḥ punaḥ| tatsvarūpā hi tiṣṭhanti yāvatsṛṣṭiḥ pravartate || 23 ||

They become free from attachments and tastes, and then they arise again. Indeed, they remain in their true form until creation begins.

वे अनासक्त और स्वादहीन हो जाते हैं, और फिर वे पुनः उत्पन्न होते हैं। वास्तव में, वे अपने सच्चे रूप में तब तक रहते हैं जब तक सृष्टि नहीं शुरू होती।

6.128.24

आनुलोम्यात्स्मृता सृष्टिः प्रातिलोम्येन संहृतिः। अतः स्थानत्रयं त्यक्त्वा तुरीयं पदमव्ययम्॥ २४ ॥

ānulomyātsmṛtā sṛṣṭiḥ prātilomyena saṃhṛtiḥ| ataḥ sthānatrayaṃ tyaktvā turīyaṃ padamavyayam || 24 ||

Creation is remembered in the order of manifestation, and dissolution in the reverse order. Therefore, leaving behind the three states, one attains the fourth, imperishable state.

सृष्टि को उत्पत्ति के क्रम में याद किया जाता है, और लय को उलटे क्रम में। इसलिए, तीन अवस्थाओं को छोड़कर, एक चौथी, अविनाशी अवस्था प्राप्त करता है।

6.128.25

ध्यायेत्तत्प्राप्तये लिङ्गं प्रविलाप्य परं विशेत्। भूतेन्द्रियमनोबुद्धिवासनाकर्मवायवः ॥ २५ ॥

dhyāyettatprāptaye liṅgaṃ pravilāpya paraṃ viśet| bhūtendriyamanobuddhivāsanākarmavāyavaḥ || 25 ||

One should meditate on the symbol to attain that state, dissolving the elements, senses, mind, intellect, desires, actions, and vital airs.

उस अवस्था को प्राप्त करने के लिए, एक चिह्न पर ध्यान करना चाहिए, तत्वों, इंद्रियों, मन, बुद्धि, वासनाओं, कर्मों और प्राण वायुओं को विलीन करके।

6.128.26

भरद्वाज उवाच। अज्ञानं च प्रतिष्ठाः स्युर्लिङ्गमव्याकृते सति। इदानीं लिङ्गनिगडान्मुक्तोऽहं सर्वथा यतः ॥ २६ ॥

bharadvāja uvāca | ajñānaṃ ca pratiṣṭhāḥ syurliṅgamavyākṛte sati | idānīṃ liṅganigadānmukto'haṃ sarvathā yataḥ || 26 ||

Bharadvaja said: Ignorance and its manifestations exist in the unmanifested state | Now I am completely free from the bondage of the linga (subtle body) || 26 ||

भरद्वाज ने कहा: अज्ञान और उसकी स्थितियाँ अव्याकृत अवस्था में होती हैं | अब मैं लिंग शरीर के बंधन से पूर्ण रूप से मुक्त हूँ || २६ ||

6.128.27

चिदंशत्वात्प्रविष्टोऽहं चैतन्यानन्दसागरे। अभेदात्परमात्मास्मि सर्वोपाधिविवर्जितः ॥ २७ ॥

cidāṃśatvātpraviṣṭo'haṃ caitanyānandasāgare | abhedātparamātmāsmi sarvopādhivivarjitaḥ || 27 ||

Due to the nature of consciousness, I have entered the ocean of blissful consciousness | Due to non-difference, I am the Supreme Self, devoid of all limitations || 27 ||

चेतना के अंश होने के कारण, मैं आनंदमय चेतना के सागर में प्रविष्ट हूँ | अभेद के कारण, मैं सभी उपाधियों से रहित परमात्मा हूँ || २७ ||

6.128.28

कूटस्थः केवलो व्यापी चिदचिच्छक्तिमानहम्। घटाभावे घटाकाशकलशाकाशयोर्यथा ॥ २८ ॥

kūṭasthaḥ kevalo vyāpī cidacicchaktimānahaṃ | ghaṭābhāve ghaṭākāśakalaśākāśayoryathā || 28 ||

I am the immutable, pure, all-pervading, and possessor of the power of consciousness and unconsciousness | Just as the space within a pot merges with the universal space when the pot is destroyed || 28 ||

मैं अपरिवर्तनीय, शुद्ध, व्यापक और चेतना और अचेतना की शक्ति का धारक हूँ | जैसे घड़े के नष्ट होने पर घड़े का आकाश सार्वभौमिक आकाश में विलीन हो जाता है || २८ ||

6.128.29

तमाहुः श्रुतयो बह्व्य एवमेवैक्यमादरात्। यथाग्निरग्नौ संक्षिप्तः समानत्वमनुव्रजेत् ॥ २९ ॥

tamāhuḥ śrutayo bahvya evamevaikyamādarāt | yathāgniragne saṃkṣiptaḥ samānatvamanuvrajet || 29 ||

Many scriptures declare this unity with reverence | Just as fire merges into fire and attains sameness || 29 ||

बहुत सी श्रुतियाँ इस एकता को आदर से घोषित करती हैं | जैसे अग्नि अग्नि में विलीन होकर समानता प्राप्त करती है || २९ ||

6.128.30

तदाख्यस्तन्मयो भूत्वा गृह्यते न विशेषतः। यथा तृणादिकं क्षिप्तं रुमायां लवणं भवेत् ॥ ३० ॥

tadākhyastanmayo bhūtvā gṛhyate na viśeṣataḥ | yathā tṛṇādikaṃ kṣiptaṃ rumāyāṃ lavaṇaṃ bhavet || 30 ||

Becoming one with that, it is not perceived distinctly | Just as grass, etc., thrown into salt, becomes salt || 30 ||

उसके साथ एक होकर, वह अलग से ग्रहण नहीं किया जाता | जैसे घास आदि नमक में डाला जाता है, वह नमक बन जाता है || ३० ||

6.128.31

अचेतनं जगन्न्यस्तं चैतन्ये चेतनी भवेत्। यथा वै लवणग्रन्थिः समुद्रे सैन्धवो यथा ॥ ३१ ॥

acetanaṃ jagannyastaṃ caitanye cetanī bhavet | yathā vai lavaṇagranthiḥ samudre saindhavo yathā || 31 ||

The insentient world, when placed in consciousness, becomes sentient. Just as a lump of salt, when placed in the ocean, becomes the ocean itself.

अचेतन जगत्, जब चेतना में रखा जाता है, तब चेतन बन जाता है। जैसे नमक का ढेला, जब समुद्र में रखा जाता है, तब समुद्र बन जाता है।

6.128.32

नामरूपाद्विनिर्मुक्तः प्रविश्यैति समुद्रताम्। यथा जले जलं न्यस्तं क्षीरे क्षीरं घृते घृतम् ॥ ३२ ॥

nāmarūpādvimuktastu praviśyaiti samudratām | yathā jale jalaṃ nyastaṃ kṣīre kṣīraṃ ghṛte ghṛtam || 32 ||

Freed from name and form, one enters the state of the ocean. Just as water merges with water, milk with milk, and ghee with ghee.

नाम और रूप से मुक्त होकर, वह समुद्र की अवस्था में प्रवेश करता है। जैसे जल जल में मिल जाता है, दूध दूध में और घी घी में।

6.128.33

अविनष्टा भवन्त्येते गृह्यन्ते न विशेषतः। तथाहं सर्वभावेन प्रविष्टश्चेतने सति ॥ ३३ ॥

avinaṣṭā bhavantyete gṛhyante na viśeṣataḥ | tathāhaṃ sarvabhāvena praviṣṭaścetane sati || 33 ||

These do not perish; they are not grasped distinctly. Thus, I, in all aspects, enter the conscious being.

ये नष्ट नहीं होते; ये विशेष रूप से नहीं ग्रहण किए जाते। इस प्रकार, मैं सभी प्रकार से चेतन प्राणी में प्रवेश करता हूँ।

6.128.34

नित्यानन्दे समस्तज्ञे परे परमकारणे। नित्यं सर्वगतं शान्तं निरवद्यं निरञ्जनम्॥ ३४॥

nityānande samastajñe pare paramakāraṇe | nityaṃ sarvagataṃ śāntaṃ niravadyaṃ nirañjanam || 34 ||

In the eternal bliss, the all-knowing, the supreme, the ultimate cause, the ever-present, the peaceful, the flawless, the pure.

नित्य आनंद में, सर्वज्ञ, परम, परम कारण में, सदा विद्यमान, शांत, निर्दोष, निर्मल।

6.128.35

निष्कलं निष्क्रियं शुद्धं तद्ब्रह्मास्मि परं परम्। हेयोपादेयनिर्मुक्तं सत्यरूपं निरिन्द्रियम्॥ ३५॥

niṣkalaṃ niṣkriyaṃ śuddhaṃ tadbrahmāsmi paraṃ param | heyopādeyanirmuktaṃ satyarūpaṃ nirindriyam || 35 ||

I am that Brahman, the supreme of the supreme, without parts, without action, pure, free from acceptance and rejection, true in form, without senses.

मैं वह ब्रह्म हूँ, परम का परम, अखंड, निष्क्रिय, शुद्ध, ग्रहण और त्याग से मुक्त, सत्य रूप, इंद्रियों से रहित।

6.128.36

केवलं सत्यसंकल्पं शुद्धं ब्रह्मास्म्यहं परम्। पुण्यपापविनिर्मुक्तं कारणं जगतः परम्॥ ३६॥

kevalaṃ satyasaṃkalpaṃ śuddhaṃ brahmāsmyahaṃ param | puṇyapāpavinirmuktaṃ kāraṇaṃ jagataḥ param || 36 ||

I am the pure Brahman, the supreme truth, free from merits and demerits, the ultimate cause of the universe.

मैं शुद्ध ब्रह्म हूँ, परम सत्य, पुण्य और पाप से मुक्त, विश्व का परम कारण।

6.128.37

अद्वितीयं परं ज्योतिर्ब्रह्मास्म्यानन्दमव्ययम्। एवमादिगुणैर्युक्तं सत्त्वादिगुणवर्जितम्॥ ३७॥

advitīyaṃ paraṃ jyotirbrahmāsmyānandamavyayam | evamādiguṇairyuktaṃ sattvādiguṇavarjitam || 37 ||

I am the non-dual, supreme light, the blissful, imperishable Brahman, endowed with such qualities and devoid of the qualities of sattva, etc.

मैं अद्वितीय, परम ज्योति, आनंदमय, अविनाशी ब्रह्म हूँ, जो ऐसे गुणों से युक्त है और सत्त्व आदि गुणों से रहित है।

6.128.38

प्रविष्टं सकलं ब्रह्म सदा ध्यायेत्स्वकर्मकृत्। एवमभ्यसतः पुंसो मनोऽस्तं याति तत्र वै॥ ३८॥

praviṣṭaṃ sakalaṃ brahma sadā dhyāyetsvakarmakṛt | evamabhyasataḥ puṃso mano'staṃ yāti tatra vai || 38 ||

One should always meditate on the all-pervading Brahman, the doer of one's own actions. By such practice, the mind of the person reaches that state.

एक को हमेशा सर्वव्यापी ब्रह्म पर ध्यान करना चाहिए, जो अपने कर्मों का कर्ता है। ऐसी अभ्यास से, व्यक्ति का मन उस अवस्था में पहुँच जाता है।

6.128.39

मनस्यस्तं गते तस्य स्वयमात्मा प्रकाशते । प्रकाशे सर्वदुःखानां हानिः स्यात्सुखमात्मनि ॥ ३९ ॥

manasyastaṃ gate tasya svayamātmā prakāśate | prakāśe sarvaduḥkhānāṃ hāniḥ syātsukhamātmani || 39 ||

When the mind reaches that state, the self reveals itself. In this revelation, all sorrows are destroyed, and there is bliss in the self.

जब मन उस अवस्था में पहुँच जाता है, तो आत्मा स्वयं प्रकट होता है। इस प्रकटीकरण में, सभी दुःख नष्ट हो जाते हैं, और आत्मा में आनंद होता है।

6.128.40

स्वयमेवात्मनात्मानमानन्दं प्रतिपद्यते । न मत्तोऽस्त्यपरः कश्चिच्चिदानन्दमयः प्रभुः ॥ ४० ॥

svayamevātmanātmānamānandaṃ pratipadyate | na matto'styaparaḥ kaściccidānandamayaḥ prabhuḥ || 40 ||

The self attains bliss by itself. There is no other supreme being besides me, who is the lord of consciousness and bliss.

आत्मा स्वयं आनंद प्राप्त करता है। मेरे अलावा कोई और परम प्रभु नहीं है, जो चेतना और आनंद का स्वामी है।

6.128.41

अहमेकः परं ब्रह्म इत्यात्मान्तः प्रकाशते । श्रीवाल्मीकिरुवाच । सखे संन्यस्य कर्माणि ब्रह्मणः प्रणयी भव ॥ ४१ ॥

ahamekaḥ paraṃ brahma ityātmāntaḥ prakāśate | śrīvālmīkiruvāca | sakhe saṃnyasya karmāṇi brahmaṇaḥ praṇayī bhava || 41 ||

I alone shine within as the supreme Brahman | Shri Valmiki said | O friend, renouncing all actions, become devoted to Brahman

मैं अकेला ही अंतर में परम ब्रह्म के रूप में प्रकाशित होता हूँ | श्री वाल्मीकि ने कहा | हे मित्र, सभी कर्मों को त्यागकर ब्रह्म के प्रति भक्त बनो

6.128.42

नेष्यसे यदि संसारचक्रावर्तभ्रमः शमम् । भरद्वाज उवाच । त्वयोक्तं सर्वमेवेदं ज्ञानं बुद्धं मया गुरो ॥ ४२ ॥

neṣyase yadi saṃsāracakrāvartabhramaḥ śamam | bharadvāja uvāca | tvayoktaṃ sarvamevedaṃ jñānaṃ buddhaṃ mayā guro || 42 ||

If you do not calm the whirlpool of the cycle of worldly existence | Bharadvaja said | O Guru, all this knowledge that you have spoken has been understood by me

यदि आप संसार चक्र के भ्रम को शांत नहीं करते | भरद्वाज ने कहा | हे गुरु, आपने जो कुछ भी कहा है, वह सब ज्ञान मैंने समझ लिया है

6.128.43

बुद्धिश्च निर्मला जाता संसारो न विलम्बते । इदानीं ज्ञातुमिच्छामि ज्ञानिनः कर्म कीदृशम् ॥ ४३ ॥

buddhiśca nirmalā jātā saṃsāro na vilambate | idānīṃ jñātumicchāmi jñāninaḥ karma kīdṛśam || 43 ||

The intellect has become pure, and the worldly existence does not delay | Now I wish to know what kind of action a wise person performs

बुद्धि शुद्ध हो गई है, और संसार विलंब नहीं करता | अब मैं जानना चाहता हूँ कि एक ज्ञानी किस प्रकार का कर्म करता है

6.128.44

प्रवृत्तं वा निवृत्तं वा कर्तव्यं च न वा प्रभो । श्रीवाल्मीकिरुवाच । तस्माद्यन्न कृते दोषस्तत्कर्तव्यं मुमुक्षुभिः ॥ ४४ ॥

pravṛttaṃ vā nivṛttaṃ vā kartavyaṃ ca na vā prabho | śrīvālmīkiruvāca | tasmādyanna kṛte doṣastatkartavyaṃ mumukṣubhiḥ || 44 ||

Whether it is engaged in action or disengaged, or whether it is to be done or not, O Lord | Shri Valmiki said | Therefore, that which does not cause fault should be done by those seeking liberation

चाहे यह कर्म में लगा हो या नहीं, या चाहे यह किया जाए या नहीं, हे प्रभु | श्री वाल्मीकि ने कहा | इसलिए, जो दोष नहीं पैदा करता, वह मुक्ति चाहने वालों द्वारा किया जाना चाहिए

6.128.45

काम्यं कर्म निषिद्धं च न कर्तव्यं विशेषतः । यदा ब्रह्मगुणैर्जीवो युक्तस्त्यक्त्वा मनोगुणान् ॥ ४५ ॥

kāmyaṃ karma niṣiddhaṃ ca na kartavyaṃ viśeṣataḥ | yadā brahmaguṇairjīvo yuktastyaktvā manoguṇān || 45 ||

Desirable actions and forbidden actions should not be performed, especially | When the individual, united with the qualities of Brahman, abandons the qualities of the mind

इच्छानुसार कर्म और निषिद्ध कर्म विशेष रूप से नहीं करने चाहिए | जब व्यक्ति ब्रह्म के गुणों से युक्त होकर मन के गुणों को त्याग देता है

6.128.46

संशान्तकरणग्रामस्तदा स्यात्सर्वगः प्रभुः । देहेन्द्रियमनोबुद्धेः परस्तस्माच्च यः परः ॥ ४६ ॥

saṃśāntakaraṇagrāmastadā syātsarvagaḥ prabhuḥ| dehendriyamanobuddheḥ parastasmācca yaḥ paraḥ || 46 ||

When the senses, mind, and intellect are completely calmed, one becomes the omnipresent Lord, who is beyond the body, senses, mind, and intellect.

जब इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि पूरी तरह शांत हो जाती हैं, तब मनुष्य सर्वव्यापी प्रभु बन जाता है, जो शरीर, इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि से परे है।

6.128.47

सोऽहमस्मि यदा ध्यायेत्तदा जीवो विमुच्यते । कर्तृभोक्त्रादिनिर्मुक्तः सर्वोपाधिविवर्जितः ॥ ४७ ॥

so'hamasmi yadā dhyāyettadā jīvo vimucyate| kartṛbhoktrādinirmuktaḥ sarvopādhibivarjitaḥ || 47 ||

When one meditates on 'I am That,' the individual soul is liberated, freed from the roles of doer and enjoyer, and devoid of all limitations.

जब कोई 'मैं वही हूँ' पर ध्यान करता है, तब जीवात्मा मुक्त हो जाता है, कर्ता और भोक्ता की भूमिकाओं से मुक्त हो जाता है, और सभी सीमाओं से रहित हो जाता है।

6.128.48

सुखदुःखविनिर्मुक्तस्तदानीं विप्रमुच्यते । सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ॥ ४८ ॥

sukhaduḥkhvinirmuktastadānīṃ vipramucyate| sarvabhūteṣu cātmānaṃ sarvabhūtāni cātmani || 48 ||

Freed from pleasure and pain, one is liberated at that very moment, seeing the self in all beings and all beings in the self.

सुख और दुःख से मुक्त होने पर, वह उसी क्षण मुक्त हो जाता है, सभी जीवों में आत्मा को देखता है और आत्मा में सभी जीवों को देखता है।

6.128.49

यदा पश्यत्यभेदेन तदा जीवो विमुच्यते । जाग्रत्स्वप्नसुषुप्ताख्यं हित्वा स्थानत्रयं यदा ॥ ४९ ॥

yadā paśyatyabhedena tadā jīvo vimucyate| jāgratsvapnasuṣuptākhyam hitvā sthānatrayaṃ yadā || 49 ||

When one sees without distinction, the individual soul is liberated, abandoning the three states of waking, dreaming, and deep sleep.

जब कोई भेद के बिना देखता है, तब जीवात्मा मुक्त हो जाता है, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति की तीन अवस्थाओं को छोड़कर।

6.128.50

विशेत्तुरीयमानन्दं तदा जीवो विमुच्यते । जीवस्य च तुरीयाख्या स्थितिर्या परमात्मनि ॥ ५० ॥

viśetturīyamānandaṃ tadā jīvo vimucyate| jīvasya ca turīyākhyā sthitiryā paramātmani || 50 ||

When one enters the bliss of the fourth state, the individual soul is liberated. The state of the individual soul known as the fourth is in the supreme self.

जब कोई चौथी अवस्था के आनंद में प्रवेश करता है, तब जीवात्मा मुक्त हो जाता है। जीवात्मा की चौथी अवस्था परमात्मा में है।

6.128.51

अवस्थाबीजनिद्रादिनिर्मुक्ता चित्सुखात्मिका । योगस्य सेयं वा निष्ठा सुखं संवेदनं महत् ॥ ५१ ॥

avasthābījanidrādinirmuktā cittasukhātmikā | yogasya seyaṃ vā niṣṭhā sukhaṃ saṃvedanaṃ mahat || 51 ||

Freed from states, seeds, sleep, etc., the nature of consciousness is bliss. This is the culmination of yoga, a great experience of happiness.

अवस्था, बीज, निद्रा आदि से मुक्त, चेतना का स्वभाव सुख है| यह योग की पराकाष्ठा है, एक महान सुख का अनुभव|

6.128.52

मनस्यस्तं गते पुंसां तदन्यन्नोपलभ्यते । प्रशान्तामृतकल्लोले केवलामृतवारिधौ ॥ ५२ ॥

manasyastam gate puṃsāṃ tadanyannopalabhyate | praśāntāmṛtakallole kevalāmṛtavāridhau || 52 ||

When the mind is dissolved in the supreme, nothing else is perceived. In the tranquil ocean of immortal nectar, there is only the pure nectar.

जब मन परम में विलीन हो जाता है, तब कुछ और नहीं दिखाई देता| शांत अमृत के तरंगों में, केवल शुद्ध अमृत ही है|

6.128.53

मज्ज मज्जसि किं द्वैतग्रहक्षाराब्धिवीचिषु । भज संभरिताभोगं परमेशं जगद्गुरुम् ॥ ५३ ॥

majja majjasi kiṃ dvaitagrahakṣārābdhivīciṣu | bhaja saṃbhritābhogaṃ parameśaṃ jagadgurum || 53 ||

Why do you immerse yourself in the waves of the ocean of duality and attachment? Worship the supreme lord, the teacher of the world, who is full of enjoyment.

आप द्वैत और आसक्ति के समुद्र की लहरों में क्यों डूबते हैं? पूर्ण आनंद से भरे परमेश्वर, जगत् के गुरु की उपासना करें|

6.128.54

इति ते वर्णितं सर्वं वसिष्ठस्योपदेशनम् । अनेन ज्ञानमार्गेण योगमार्गेण पुत्रक ॥ ५४ ॥

iti te varṇitaṃ sarvaṃ vasiṣṭhasyopadeśanam | anena jñānamārgeṇa yogamārgeṇa putraka || 54 ||

Thus, everything has been described to you as the teaching of Vasistha. Through this path of knowledge and yoga, O son.

इस प्रकार, तुम्हें सब कुछ वसिष्ठ के उपदेश के रूप में बताया गया है| इस ज्ञान और योग के मार्ग से, हे पुत्र|

6.128.55

भरद्वाज महाप्राज्ञ सर्वं ज्ञास्यसि निश्चितम्। परामर्शेन शास्त्रस्य गुरुवाक्यार्थबोधनात्॥ ५५॥

bharadvāja mahāprājña sarvaṃ jñāsyasi niścitam | parāmarśena śāstrasya guruvākyārthabodhanāt || 55 ||

O Bharadvaja, wise one, you will surely know everything through the reflection on the scriptures and understanding the meaning of the guru's words.

हे भरद्वाज, महान बुद्धिमान, तुम शास्त्रों पर चिंतन और गुरु के वचनों के अर्थ को समझकर निश्चित रूप से सब कुछ जान लोगे|

6.128.56

अभ्यासात्सर्वसिद्धिः स्यादिति वेदानुशासनम्। तस्मात्त्वं सर्वमुत्सृज्य कुर्वभ्यासे स्थिरं मनः॥ ५६॥

abhyāsātsarvasiddhiḥ syāditi vedānuśāsanam| tasmāttvaṃ sarvamutsṛjya kurvabhyāse sthiraṃ manaḥ || 56 ||

Through practice, all accomplishments can be achieved, as per the Vedic teachings. Therefore, you should abandon everything and focus your mind steadfastly on practice.

अभ्यास से सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, यह वेदों का उपदेश है| इसलिए तुम सब कुछ छोड़कर अभ्यास में स्थिर मन से लगे रहो|

6.128.57

भरद्वाज उवाच। रामः प्राप्तः परं योगं स्वात्मनात्मनि हे मुने। कथं वसिष्ठदेवेन व्यवहारपरः कृतः॥ ५७॥

bharadvāja uvāca| rāmaḥ prāptaḥ paraṃ yogaṃ svātmanātmani he mune| kathaṃ vasiṣṭhadevena vyavahāraparaḥ kṛtaḥ || 57 ||

Bharadvaja said: O Sage, how did Rama, who attained the supreme yoga within his own self, become engaged in worldly affairs by Vasistha?

भरद्वाज ने कहा: हे मुनि, राम ने जो अपने आत्मा में परम योग प्राप्त किया, वसिष्ठ देव द्वारा कैसे व्यवहार (worldly affairs) में लगा दिया गया?

6.128.58

इति ज्ञात्वाहमप्येवमभ्यासार्थं यते यथा। तथैव व्यवहारोऽपि व्युत्थाने मे भविष्यति॥ ५८॥

iti jñātvāhamapyevamabhyāsārthaṃ yate yathā| tathaiva vyavahāro'pi vyutthāne me bhaviṣyati || 58 ||

Having known this, I too will strive for practice in the same way. Similarly, my worldly affairs will also be in accordance with my spiritual practice.

इसे जानकर, मैं भी इसी प्रकार अभ्यास के लिए प्रयास करूँगा| इसी प्रकार, मेरे व्यवहार भी मेरे आध्यात्मिक अभ्यास के अनुसार होंगे|

6.128.59

श्रीवाल्मीकिरुवाच। यदा परिणतः साधुः स्वस्वरूपे महामनाः। विश्वामित्रस्तदोवाच वसिष्ठमृषिसत्तमम्॥ ५९॥

śrīvālmīkiruvāca| yadā pariṇataḥ sādhuḥ svasvarūpe mahāmanāḥ| viśvāmitrastadovāca vasiṣṭhamṛṣisattamam || 59 ||

Valmiki said: When the great-minded sage Visvamitra was fully realized in his own true nature, he spoke to Vasistha, the best among sages.

वाल्मीकि ने कहा: जब महामना साधु विश्वामित्र अपने स्वरूप में पूर्णतः परिणत हुए, तब उन्होंने ऋषियों में श्रेष्ठ वसिष्ठ से कहा|

6.128.60

विश्वामित्र उवाच । हे वसिष्ठ महाभाग ब्रह्मपुत्र महानसि । गुरुत्वं शक्तिपातेन तत्क्षणादेव दर्शितम् ॥ ६० ॥

viśvāmitra uvāca| he vasiṣṭha mahābhāga brahmaputra mahānasi| gurutvaṃ śaktipātena tatkṣaṇādeva darśitam || 60 ||

Visvamitra said: O Vasistha, greatly fortunate, son of Brahma, you have instantly shown your guruhood through the descent of grace.

विश्वामित्र ने कहा: हे वसिष्ठ, महाभाग, ब्रह्मा के पुत्र, महान हो, आपने अनुग्रह के अवतरण से तत्काल ही अपना गुरुत्व दिखाया है|

6.128.61

दर्शनात्स्पर्शनाच्छब्दात्कृपया शिष्यदेहके । जनयेद्यः समावेशं शांभवं स हि देशिकः ॥ ६१ ॥

darśanātsparśanācchabdātkṛpayā śiṣyadehake | janayedyāḥ samāveśaṃ śāṃbhavaṃ sa hi deśikaḥ || 61 ||

One who, through sight, touch, and sound, graciously brings about the absorption of the disciple's body into the state of Śāmbhava, is indeed the true teacher.

जो दर्शन, स्पर्श और शब्द से कृपा करके शिष्य के शरीर में शांभव समावेश उत्पन्न करता है, वही सच्चा गुरु है।

6.128.62

रामोऽप्ययं विशुद्धात्मा विरक्तः स्वात्मनैव हि । विभ्रान्तिमात्राकाङ्क्षी च संवादात्प्राप्तवान्पदम् ॥ ६२ ॥

rāmo'pyayaṃ viśuddhātmā viraktaḥ svātmanaiva hi | vibhrāntimātrākāṅkṣī ca saṃvādātprāptavānpadam || 62 ||

This Rama, with a pure soul, is detached from his own self and desires only to be free from delusion. Through dialogue, he has attained the supreme state.

यह राम, शुद्ध आत्मा वाला, अपने स्वयं से विरक्त है और केवल भ्रांति से मुक्ति चाहता है। संवाद से उसने परम पद प्राप्त किया है।

6.128.63

शिष्यप्रज्ञैव बोधस्य कारणं गुरुवाक्यतः । मलत्रयमपक्वं चेत्कथं बुद्ध्यति पक्ववत् ॥ ६३ ॥

śiṣyaprajñāiva bodhasya kāraṇaṃ guruvākyataḥ | malatrayamapakvaṃ cetkathaṃ buddhyati pakvavat || 63 ||

The disciple's wisdom is indeed the cause of enlightenment through the guru's words. If the three impurities are not ripe, how can one understand as if they are ripe?

शिष्य की बुद्धि ही गुरु के वचनों से बोध का कारण है। यदि तीनों मल पके नहीं हैं, तो पके हुए की तरह कैसे समझ सकता है?

6.128.64

ज्ञानं प्रत्यक्षमेवेदं गुरुशिष्यप्रयोजनम् । उभावपि यतो योग्यौ सर्वेषामीदृशामपि ॥ ६४ ॥

jñānaṃ pratyakṣamevedaṃ guruśiṣyaprayojanam | ubhāvapi yato yogyau sarveṣāmīdṛśāmapi || 64 ||

This knowledge is direct and is the purpose of the guru and the disciple. Both are capable because they are suitable for all such.

यह ज्ञान प्रत्यक्ष है और गुरु और शिष्य का उद्देश्य है। दोनों योग्य हैं क्योंकि वे ऐसे सभी के लिए उपयुक्त हैं।

6.128.65

इदानीं कृपया रामव्युत्थानं कर्तुमर्हसि । पदे परिणतस्त्वं हि कार्याविष्टा वयं यतः ॥ ६५ ॥

idānīṃ kṛpayā rāmavyutthānaṃ kartumarhasi | pade pariṇatastvaṃ hi kāryāviṣṭā vayaṃ yataḥ || 65 ||

Now, please, you should perform the rite of Rama's departure. You have attained the supreme state, and we are engaged in our duties, therefore.

अब, कृपा करके, आपको राम के प्रस्थान का संस्कार करना चाहिए। आप परम पद प्राप्त कर चुके हैं, और हम अपने कर्तव्यों में व्यस्त हैं, इसलिए।

6.128.66

स्मरन्कार्यं मम विभो यदुद्दिश्याहमागतः । प्रार्थितश्चातिकष्टेन राजा दशरथः स्वयम् ॥ ६६ ॥

smarankāryaṃ mama vibho yaduddiśyāhamāgataḥ | prārthitaścātikṣṭena rājā daśarathaḥ svayam || 66 ||

O Lord, I remember the task for which I have come here. King Dasharatha himself has requested me with great difficulty.

हे प्रभु, मैं उस कार्य को याद करता हूँ जिसके लिए मैं यहाँ आया हूँ। राजा दशरथ ने स्वयं बहुत कठिनाई से मुझसे अनुरोध किया है।

6.128.67

तद्वृथा मा कृथाः सर्वं शुद्धेन मनसा मुने । देवकार्यं चरामान्यदवतारप्रयोजनम् ॥ ६७ ॥

tadvṛthā mā kṛthāḥ sarvaṃ śuddhena manasā mune | devakāryaṃ carāmānyadavatāraprayojanam || 67 ||

Do not make all this effort in vain, O sage, with a pure mind. I am performing this divine task for the purpose of the incarnation.

हे मुनि, शुद्ध मन से इस प्रयास को व्यर्थ न करो। मैं इस देवकार्य को अवतार के प्रयोजन के लिए कर रहा हूँ।

6.128.68

सिद्धाश्रमं मया नीतो रामो राक्षसमर्दनम् । करिष्यति ततोऽहल्यामुक्तिं च जनकात्मजाम् ॥ ६८ ॥

siddhāśramaṃ mayā nīto rāmo rākṣasamardanam | kariṣyati tato'halyāmuktiṃ ca janakātmajām || 68 ||

Rama, the destroyer of demons, has been brought by me to the hermitage of the perfected beings. He will then grant liberation to Ahalya, the daughter of Janaka.

मैंने राम, राक्षसों के नाशक, को सिद्धों के आश्रम में लाया है। वह तब जनक की पुत्री अहल्या को मुक्ति देगा।

6.128.69

परिणेष्यति कोदण्डभङ्गेन कृतनिश्चयः । रामस्य जामदग्न्यस्य कर्ता नष्टां गतिं ध्रुवम् ॥ ६९ ॥

pariṇeṣyati kodaṇḍabhaṅgena kṛtaniścayaḥ | rāmasya jāmadagnyasya kartā naṣṭāṃ gatiṃ dhruvam || 69 ||

Rama, the son of Jamadagni, with a determined resolve, will complete the task by breaking the bow. He will certainly restore the lost status.

जमदग्नि के पुत्र राम, दृढ़ संकल्प के साथ, धनुष को तोड़कर कार्य को पूरा करेंगे। वह निश्चित रूप से खोई हुई स्थिति को बहाल करेंगे।

6.128.70

पितृपैतामहं राज्यं विगतोऽभयनिस्पृहः । वनवासच्छलेनेह दण्डकारण्यवासिनः ॥ ७० ॥

pitṛpaitāmahaṃ rājyaṃ vigato'bhayanispṛhaḥ | vanavāsacchaleneha daṇḍakāraṇyavāsinaḥ || 70 ||

Having given up the ancestral kingdom without any fear, he will live in the Dandaka forest due to the pretext of exile.

पिता-पैतामह राज्य को भय के बिना छोड़कर, वह वनवास के बहाने दंडकारण्य में रहेगा।

6.128.71

उद्धरिष्यति तीर्थानि प्राणिनो विविधानि हि । सीताहरणदौर्गत्यच्छलेन भुवि शोच्यताम् ॥ ७१ ॥

uddhariṣyati tīrthāni prāṇino vividhāni hi | sītāharaṇadaurgatyacchalena bhuvi śocyatām || 71 ||

He will uplift various beings and holy places | By the deceit of Sita's abduction, he will be pitied on earth || 71 ||

वह विभिन्न प्राणियों और तीर्थों को उबारेगा | सीता हरण के दौर्गत्य के छल से वह पृथ्वी पर शोचनीय होगा || ७१ ||

6.128.72

दर्शयिष्यति सर्वेषां रावणादिवधादपि । स्त्रीसङ्गिनामथास्वास्थ्यं वानरादेः परावृतिम् ॥ ७२ ॥

darśayiṣyati sarveṣāṃ rāvaṇādivadhādapi | strīsaṅgināmathāsvāsthyaṃ vānarādeḥ parāvṛtim || 72 ||

He will demonstrate to all by killing Ravana and others | The well-being of those associated with women and the protection of the monkeys || 72 ||

वह सभी को रावण और दूसरों को मारकर दिखाएगा | स्त्रियों से संबंधित लोगों का कल्याण और वानरों की रक्षा || ७२ ||

6.128.73

सीताविशुद्धिमन्विच्छँल्लोकानुमतिमात्मनः । जीवन्मुक्तो निस्पृहोपि क्रियाकाण्डपरायणः ॥ ७३ ॥

sītāviśuddhimanvicchañllokānumatimātmanaḥ | jīvanmukto nispṛhopi kriyākāṇḍaparāyaṇaḥ || 73 ||

Desiring the purity of Sita and the approval of the world for himself | Though liberated in life and without desire, he will be devoted to ritual actions || 73 ||

सीता की शुद्धता और स्वयं के लिए लोक की अनुमति चाहते हुए | जीवन में मुक्त और इच्छारहित होने के बावजूद, वह क्रियाकाण्ड के प्रति समर्पित होगा || ७३ ||

6.128.74

भविष्यति गतिं द्रष्टुं ज्ञानकर्मसमुच्चयौ । यैर्दृष्टो यैः स्मृतो वापि यैः श्रुतो बोधितस्तु यैः ॥ ७४ ॥

bhaviṣyati gatiṃ draṣṭuṃ jñānakarmasamuccayau | yairdṛṣṭo yaiḥ smṛto vāpi yaiḥ śruto bodhitastu yaiḥ || 74 ||

He will attain the path to see the union of knowledge and action | By those who see him, remember him, hear him, or are enlightened by him || 74 ||

वह ज्ञान और कर्म के संयोग को देखने के लिए मार्ग प्राप्त करेगा | उन लोगों द्वारा जो उसे देखते हैं, याद करते हैं, सुनते हैं, या उससे प्रबुद्ध होते हैं || ७४ ||

6.128.75

सर्वावस्थागतानां तु जीवन्मुक्तिं प्रदास्यति । इति कार्यमशेषेण त्रैलोक्यस्य ममापि हि ॥ ७५ ॥

sarvāvasthāgatānāṃ tu jīvanmuktiṃ pradāsyati | iti kāryamaśeṣeṇa trailokyasya mamāpi hi || 75 ||

He will grant liberation in life to all beings in every state | Thus, he will completely fulfill the task of the three worlds and mine as well || 75 ||

वह सभी अवस्थाओं में सभी प्राणियों को जीवन में मुक्ति प्रदान करेगा | इस प्रकार, वह तीनों लोकों और मेरे कार्य को पूर्ण रूप से पूरा करेगा || ७५ ||

6.128.76

अनेन रामचन्द्रेण पुरुषेण महात्मना । नमोऽस्मै जितमेवैते कोऽप्येवं चिरमेधताम् ॥ ७६ ॥

anena rāmacandreṇa puruṣeṇa mahātmanā | namo'smai jitamevaite ko'pyevaṃ ciramedhatām || 76 ||

By this great soul, Rama, I bow to him who has conquered all this. Who else could meditate for so long?

इस महात्मा रामचन्द्र पुरुष द्वारा, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ जिन्होंने इसे जीत लिया है। और कौन इतने लंबे समय तक ध्यान कर सकता है?

6.128.77

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इति श्रुत्वा च ते सर्वे विश्वामित्रेण भाषितम् । सिद्धाश्च वरयोगीन्द्रा वसिष्ठप्रमुखाः पुनः ॥ ७७ ॥

śrīvālmīkiruvāca | iti śrutvā ca te sarve viśvāmitreṇa bhāṣitam | siddhāśca varyogīndrā vasiṣṭhapramukhāḥ punaḥ || 77 ||

Valmiki said: Hearing this spoken by Vishvamitra, all those perfected sages, the great yogis led by Vasistha, again...

वाल्मीकि ने कहा: विश्वामित्र द्वारा कहे गए इसे सुनकर, वे सभी सिद्ध ऋषि, वसिष्ठ के नेतृत्व में महान योगी, फिर से...

6.128.78

रामाङ्घ्रिपद्मरजसामादरस्मरणास्थिताः । दूरश्रुतोत्तरकथाः कथया मैथिलीपतेः ॥ ७८ ॥

rāmāṅgipadmarajasāmādarasmaraṇāsthitāḥ | dūraśrutottarakathāḥ kathayā maithilīpateḥ || 78 ||

Remembering the dust of Rama's feet with reverence, they narrated the stories heard from afar about the lord of Mithila.

राम के चरणों की धूल को आदर से याद करते हुए, वे मिथिला के स्वामी के बारे में दूर से सुनी कथाएँ सुनाते हैं।

6.128.79

न संतुतोष भगवान्वसिष्ठोऽन्ये महर्षयः । गुणान्गुणनिधेस्तस्य ब्रुवन्नाकर्णयञ्छ्रुतम् ॥ ७९ ॥

na santutoṣa bhagavānvasiṣṭho'nye maharṣayaḥ | guṇānguṇanidhestasya bruvannākarṇayañchrutam || 79 ||

The blessed Vasistha and other great sages were not satisfied, speaking and listening to the qualities of that ocean of virtues.

धन्य वसिष्ठ और अन्य महर्षि संतुष्ट नहीं थे, उस गुणों के समुद्र के गुणों के बारे में बात करते और सुनते हुए।

6.128.80

श्रीवसिष्ठ उवाच । विश्वामित्रमुनिं प्राह वसिष्ठो भगवानृषिः । ब्रूहि विश्वामित्र मुने रामो राजीवलोचनः । कोऽयमभूद्बुधः किं वा मनुष्यो वाथ राघवः ॥ ८० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | viśvāmitramuniṃ prāha vasiṣṭho bhagavānṛṣiḥ | brūhi viśvāmitra mune rāmo rājīvalocanaḥ | ko'yamabhūdbudhaḥ kiṃ vā manuṣyo vātha rāghavaḥ || 80 ||

Vasistha said: The blessed sage Vasistha said to the sage Vishvamitra, 'Tell me, O sage Vishvamitra, who is this lotus-eyed Rama? Is he a wise man or a human being or Raghava?'

वसिष्ठ ने कहा: धन्य ऋषि वसिष्ठ ने मुनि विश्वामित्र से कहा, 'बताओ, हे मुनि विश्वामित्र, यह कमलनयन राम कौन है? क्या यह एक बुद्धिमान व्यक्ति है या एक मनुष्य या रघुवंशी?'

6.128.81

विश्वामित्र उवाच । अत्रैव कुरु विश्वासमयं स पुरुषः परः । विश्वार्थमथिताम्भोधिर्गम्भीरागमगोचरः ॥ ८१ ॥

viśvāmitra uvāca | atraiva kuru viśvāsamayaṃ sa puruṣaḥ paraḥ |
viśvārthamathitāmbhodhirgambhīrāgamagocaraḥ || 81 ||

Vishvamitra said: Have faith here, this is the supreme person. He is the ocean of universal meaning, deep and mysterious.

विश्वामित्र ने कहा: यहीं विश्वास करो, यह वह परम पुरुष है। वह विश्व के अर्थ का समुद्र है, गहरा और रहस्यमय।

6.128.82

परिपूर्णपरानन्दः समः श्रीवत्सलाञ्छनः । सर्वेषां प्राणिनां रामः प्रदाता सुप्रसादितः ॥ ८२ ॥

paripūrṇaparānandaḥ samaḥ śrīvatsalāñchanaḥ | sarveṣāṃ prāṇināṃ rāmaḥ pradātā suprasāditaḥ || 82 ||

He is fully blissful, equal to all, marked with the sign of Shrivatsa. He is the giver of life to all beings, highly gracious.

वह पूर्ण आनंद से भरा हुआ है, सभी के लिए समान है, श्रीवत्स चिह्न से चिह्नित है। वह सभी प्राणियों को जीवन देने वाला, अत्यंत कृपालु है।

6.128.83

अयं निहन्ति कुपितः सृजत्ययमसत्सकान् । विश्वादिर्विश्वजनको धाता भर्ता महासखः ॥ ८३ ॥

ayaṃ nihati kupitaḥ sṛjatyayamasatsakān | viśvādirviśvajanako dhātā bhartā mahāsakhaḥ || 83 ||

He destroys when angry and creates the unreal. He is the origin of the universe, the creator, the sustainer, and the great friend.

वह क्रोधित होकर नष्ट करता है और असत्य को सृजित करता है। वह विश्व का आदि, सृष्टिकर्ता, पालनकर्ता और महान मित्र है।

6.128.84

अयं व्युत्क्रान्तनिःसारमृदुसंसारधूर्तकैः । आनन्दसिन्धुर्विततो वीतरागैर्विगाह्यते ॥ ८४ ॥

ayaṃ vyutkrāntanihsāramṛdusaṃsāradhūrtakaiḥ | ānandasindhurvitato vītarāgairvigāhyate || 84 ||

He is the ocean of bliss, free from desires, and is realized by those who are free from the deceitful and soft worldly attachments.

वह आनंद का समुद्र है, इच्छाओं से मुक्त है, और उन लोगों द्वारा जाना जाता है जो छली और नरम संसारिक आसक्तियों से मुक्त हैं।

6.128.85

क्वचिन्मुक्त इवात्मस्थः क्वचित्तुर्यपदाभिधः । क्वचित्प्रणीतप्रकृतिः क्वचित्तत्स्थः पुमानयम् ॥ ८५ ॥

kvacinmukta ivātmasthaḥ kvacitturyapadābhidaḥ | kvacitpraṇītaprakṛtiḥ kvacittatsthaḥ pumānayam || 85 ||

Sometimes he appears as if liberated and self-realized, sometimes he is known as the fourth state, sometimes he is the one who leads the nature, and sometimes he is established in that state.

कभी वह मुक्त और आत्मस्थ प्रतीत होता है, कभी वह चतुर्थ अवस्था के रूप में जाना जाता है, कभी वह प्रकृति को मार्गदर्शन करने वाला होता है, और कभी वह उस अवस्था में स्थित होता है।

6.128.86

अयं त्रयीमयो देवस्त्रैगुण्यगहनातिगः । जयत्यङ्गैरयं षड्भिर्वेदात्मा पुरुषोऽद्भुतः ॥ ८६ ॥

ayaṃ trayīmayo devastrai guṇyagahanātigaḥ | jayatyangairayaṃ ṣaḍbhirvedātmā puruṣo'dbhutaḥ || 86 ||

This divine being, composed of the three Vedas, transcends the three gunas. He conquers with his six limbs, the wonderful Purusha, the soul of the Vedas.

यह त्रयीमय देवता तीनों गुणों से परे है | यह अपने छह अंगों से विजय पाता है, यह वेदात्मा, अद्भुत पुरुष है ||

6.128.87

अयं चतुर्बाहुरयं विश्वस्रष्टा चतुर्मुखः । अयमेव महादेवः संहर्ता च त्रिलोचनः ॥ ८७ ॥

ayaṃ caturbāhurayaṃ viśvasraṣṭā caturmukhaḥ | ayameva mahādevaḥ saṃhartā ca trilocanaḥ || 87 ||

This four-armed being is the creator of the universe with four faces. He himself is the great god, the destroyer with three eyes.

यह चार भुजाओं वाला पुरुष चार मुखों वाला विश्व का स्रष्टा है | यही महादेव, तीन नेत्रों वाला संहारक है ||

6.128.88

अजोऽयं जायते योगाज्जागरूकः सदा महान् । बिभर्ति भगवानेतद्विरूपो विश्वरूपवान् ॥ ८८ ॥

ajo'yaṃ jāyate yogājjāgarūkaḥ sadā mahān | bibharti bhagavānetadvirūpo viśvarūpavān || 88 ||

This unborn being is born through yoga, always awake and great. The lord bears this diverse form, the form of the universe.

यह अजन्मा पुरुष योग से जन्म लेता है, सदा जाग्रत और महान है | भगवान इस विरूप को, विश्व के रूप को धारण करते हैं ||

6.128.89

विजयो विक्रमेणेव प्रकाश इव तेजसा । प्रज्ञोत्कर्षः श्रुतेनेव सुपर्णेनायमुह्यते ॥ ८९ ॥

vijayo vikrameṇeva prakāśa iva tejasā | prajñotkarṣaḥ śrutene'va suparṇenāyamuhyate || 89 ||

He is victorious like valor, shining like radiance, superior in wisdom like knowledge, and he is carried by Garuda.

वह वीरता की तरह विजयी है, तेज की तरह प्रकाशमान है, ज्ञान की तरह बुद्धिमान है, और गरुड़ द्वारा वहन किया जाता है ||

6.128.90

अयं दशरथो धन्यः सुतो यस्य परः पुमान् । धन्यः स दशकण्ठोऽपि चिन्त्यश्चित्तेन योऽमुना ॥ ९० ॥

ayaṃ daśaratho dhanyaḥ suto yasya paraḥ pumān | dhanyaḥ sa daśakaṇṭho'pi cintyaścittena yo'munā || 90 ||

Blessed is King Dasharatha, whose son is the supreme being. Even Ravana, the ten-headed one, is blessed to be thought of by him.

धन्य है राजा दशरथ, जिसका पुत्र परम पुरुष है | धन्य है वह दशकण्ठ रावण भी, जिसे इसने चिंतन किया है ||

6.128.91

हा स्वर्गममुना शून्यं हा पातालादिहागतः । तस्यागमादयं लोको मध्यमः श्रेष्ठतां गतः ॥ ९१ ॥

hā svargamamunā śūnyaṃ hā pātālādihaāgataḥ | tasyāgamādayaṃ loko madhyamaḥ śreṣṭhatāṃ gataḥ || 91 ||

Alas, heaven is empty now, and alas, one has come from the underworld. Due to his arrival, this world has attained a middle state of excellence.

हाय, स्वर्ग अब खाली है, और हाय, कोई पाताल से आया है। उसके आने से यह लोक मध्यम श्रेष्ठता को प्राप्त हो गया है।

6.128.92

राम इत्यवतीर्णोऽयमर्णवान्तःशयः पुमान् । चिदानन्दघनो रामः परमात्मायमव्ययः ॥ ९२ ॥

rāma ityavatīrṇo'yamarṇavāntaḥśayaḥ pumān | cidānandaghano rāmaḥ paramātmāyamavyayaḥ || 92 ||

Rama, who has descended, is the one who resides within the ocean. He is the embodiment of consciousness and bliss, the supreme soul, and is imperishable.

राम, जो अवतरित हुए हैं, वे समुद्र में निवास करने वाले हैं। वे चेतना और आनंद के स्वरूप हैं, परमात्मा हैं, और अविनाशी हैं।

6.128.93

निगृहीतेन्द्रियग्रामा रामं जानन्ति योगिनः । वयं त्ववरमेवास्य रूपं रूपयितुं क्षमाः ॥ ९३ ॥

nigṛhītendriyagrāmā rāmaṃ jānanti yoginaḥ | vayaṃ tvavaram evāsya rūpaṃ rūpayituṃ kṣamāḥ || 93 ||

Those who have controlled their senses know Rama. We, however, are only capable of visualizing his lesser form.

जिन्होंने अपनी इंद्रियों को नियंत्रित किया है, वे राम को जानते हैं। हम तो बस उनके कम रूप को ही देखने में सक्षम हैं।

6.128.94

रघोरघोच्छेदकरो भगवानिति शुश्रुम । वसिष्ठ कृपया त्वं हि व्यवहारपरं कुरु ॥ ९४ ॥

raghoraghocchedakaro bhagavāniti śuśruma | vasiṣṭha kṛpayā tvaṃ hi vyavahāraparaṃ kuru || 94 ||

We have heard that the Lord is the destroyer of the darkness of passion. O Vasistha, with your compassion, please engage in worldly affairs.

हमने सुना है कि भगवान राग के अंधकार का नाश करने वाले हैं। हे वसिष्ठ, आपकी कृपा से, कृपया संसारिक कार्यों में लगें।

6.128.95

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्युक्त्वावस्थितस्तूष्णीं विश्वामित्रो महामुनिः । वसिष्ठस्तु महातेजा रामचन्द्रमभाषत ॥ ९५ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityuktvāvasthitastūṣṇīṃ viśvāmitro mahāmuniḥ | vasiṣṭhastu mahātejā rāmacandramabhāṣata || 95 ||

Sri Valmiki said: Having said this, the great sage Visvamitra remained silent. Then the radiant Vasistha addressed Rama.

श्री वाल्मीकि ने कहा: ऐसा कहकर महामुनि विश्वामित्र चुप हो गए। तब तेजस्वी वसिष्ठ ने रामचंद्र से कहा।

6.128.96

श्रीवसिष्ठ उवाच । राम राम महाबाहो महापुरुष चिन्मय । नायं विश्रान्तिकालो हि लोकानन्दकरो भव ॥ ९६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rāma rāma mahābāho mahāpuruṣa cinmaya | nāyaṃ viśrāntikālo hi lokānandakaro bhava || 96 ||

Vasishtha said: O Rama, O mighty-armed one, O supreme being, O embodiment of consciousness, this is not the time for rest; be the cause of joy in the world.

वसिष्ठ ने कहा: हे राम, हे महाबाहु, हे महापुरुष, हे चिन्मय, यह विश्राम का समय नहीं है, लोकों को आनंद देने वाले बनो।

6.128.97

यावल्लोकपरामर्शो निरूढो नास्ति योगिनः । तावद्रूढसमाधित्वं न भवत्येव निर्मलम् ॥ ९७ ॥

yāvallokaparāmarśo nirūḍho nāsti yoginaḥ | tāvadrūḍhasamādhitvaṃ na bhavatyeva nirmalam || 97 ||

As long as the yogi does not have a firm grasp of worldly affairs, he cannot attain pure and steady concentration.

जब तक योगी संसार के मामलों का ठीक से समझ नहीं रखता, तब तक उसे शुद्ध और स्थिर समाधि नहीं मिलती।

6.128.98

तस्माद्राज्यादिविषयान्पर्यालोक्य विनश्वरान् । देवकार्यादिभारांश्च भज पुत्र सुखी भव ॥ ९८ ॥

tasmādrājyādiviṣayān paryālokya vinaśvarān | devakāryādibhārāṃśca bhaja putra sukhī bhava || 98 ||

Therefore, having considered the transient nature of kingdoms and other worldly matters, engage in divine duties and be happy, O son.

इसलिए, राज्य और अन्य संसारिक मामलों की अस्थायी प्रकृति को समझकर, दिव्य कर्तव्यों में लग जाओ और सुखी रहो, हे पुत्र।

6.128.99

श्रीवाल्मीकिरुवाचैत्युक्तोऽपि यदा रामः किंचिन्नोचे लयं गतःतदा सुषुम्नया सोऽपि विवेश हृदयं शनैः ॥ ९९ ॥

śrīvālmīkiruvācaityukto'pi yadā rāmaḥ kiṃcinnoce layaṃ gataḥtadā suṣumnayā so'pi viveśa hṛdayaṃ śanaiḥ || 99 ||

Sri Valmiki said: Even though addressed thus, when Rama did not respond and became absorbed in thought, he then entered his heart through the Suṣumnā channel.

श्री वाल्मीकि ने कहा: इस प्रकार कहने पर भी, जब राम ने कोई जवाब नहीं दिया और विचारों में डूब गए, तब वे सुषुम्ना नाड़ी द्वारा धीरे-धीरे हृदय में प्रवेश कर गए।

6.128.100

शक्तिप्राणमनःप्रसक्तिकरणो जीवः प्रकाशात्मको नाडीरन्ध्रसुपुष्टसर्वकरणः प्रोन्मील्य नेत्रे शनैः । दृष्ट्वोत्कृष्टवसिष्ठमुख्यविदुषो निर्मुक्तसर्वैषणः कृत्याकृत्यविचारणादिरहितः सर्वान्प्रतीक्ष्य स्थितः ॥ १०० ॥

śaktiprāṇamanḥprasaktikaraṇo jīvaḥ prakāśātmako nāḍīrandhrasupuṣṭasarvakaraṇaḥ pronmīlya netre śanaiḥ | dṛṣṭvotkṛṣṭavasiṣṭhamukhyaviduṣo nirmuktasarvaiṣaṇaḥ kṛtyākṛtyavicāraṇādirahitaḥ sarvānpratīkṣya sthitaḥ || 100 ||

The living being, endowed with the power of prana, mind, and senses, is of the nature of pure consciousness. With all senses fully nourished through the subtle channels, he gradually opened his eyes. Seeing the eminent sage Vasishtha, free from all desires, devoid of thoughts of duty and non-duty, he waited for all.

प्राण, मन और इंद्रियों की शक्ति से युक्त जीव प्रकाशात्मक स्वभाव का होता है। सूक्ष्म नाड़ियों द्वारा सभी इंद्रियों को पूर्ण रूप से पोषित करके, उसने धीरे-धीरे अपनी आँखें खोलीं। सभी इच्छाओं से मुक्त, कर्तव्य और अकर्तव्य के विचारों से रहित, उत्कृष्ट ऋषि वसिष्ठ को देखकर, उसने सभी का इंतजार किया।

6.128.101

श्रुत्वा वसिष्ठवचनं गुरुवाक्यमिति स्वयम् । श्रुत्वा प्रोवाच भगवान्रामचन्द्रः समाहितः ॥ १०१ ॥

śrutvā vasiṣṭhavacanaṃ guruvākyamiti svayaṃ | śrutvā provāca bhagavānrāmacandraḥ samāhitaḥ || 101 ||

Having heard the words of Vasistha, considering them as the words of his guru, the composed Lord Rama spoke.

वसिष्ठ के वचन को गुरु के वचन समझकर स्वयं सुनकर, समाहित भगवान रामचन्द्र ने कहा।

6.128.102

श्रीराम उवाच । न विधेर्न निषेधस्य त्वत्प्रसादादयं प्रभुः । तथापि तव वाक्यं तु करणीयं हि सर्वदा ॥ १०२ ॥

śrīrāma uvāca | na vidherna niṣedhasya tvatprasādādayaṃ prabhuḥ | tathāpi tava vākyaṃ tu karaṇīyaṃ hi sarvadā || 102 ||

Sri Rama said: Neither by injunction nor by prohibition, by your grace, this Lord. Still, your words must be followed always.

श्रीराम ने कहा: न विधि से न निषेध से, आपकी कृपा से यह प्रभु। फिर भी, आपके वचन को हमेशा मानना चाहिए।

6.128.103

वेदागमपुराणेषु स्मृतिष्वपि महामुने । गुरुवाक्यं विधिः प्रोक्तो निषेधस्तद्विपर्ययः ॥ १०३ ॥

vedāgamapurāṇeṣu smṛtiṣvapi mahāmune | guruvākyaṃ vidhiḥ prokto niṣedhastadviparyayaḥ || 103 ||

In the Vedas, Agamas, Puranas, and Smritis, O great sage, the words of the guru are said to be the injunction, and the prohibition is its opposite.

वेद, आगम, पुराण और स्मृतियों में, हे महामुनि, गुरु के वचन विधि कहे गए हैं, और निषेध उसका विपरीत है।

6.128.104

इत्युक्त्वा चरणौ तस्य वसिष्ठस्य महात्मनः । शिरसा धार्य सर्वात्मा सर्वान्प्राह घृणानिधिः ॥ १०४ ॥

ityuktvā caraṇau tasya vasiṣṭhasya mahātmanaḥ | śirasā dhārya sarvātmā sarvānprāha ghṛṇānidhiḥ || 104 ||

Having said this, bowing down to the feet of the great-souled Vasistha with his head, the all-knowing, compassionate one spoke to all.

ऐसा कहकर, महात्मा वसिष्ठ के चरणों में सिर झुकाकर, सर्वज्ञ, दयालु ने सबसे कहा।

6.128.105

श्रीराम उवाच । सर्वे श्रृणुत भद्रं वो निश्चयेन सुनिश्चितम् । आत्मज्ञानात्परं नास्ति गुरोरपि च तद्विदः ॥ १०५ ॥

śrīrāma uvāca | sarve śṛṇuta bhadraṃ vo niścayena suniścitam | ātmajñānātparaṃ nāsti gurorapi ca tadvidaḥ || 105 ||

Sri Rama said: Listen, all of you, to this auspicious and well-ascertained truth. There is nothing higher than self-knowledge, even for the guru who knows that.

श्रीराम ने कहा: सुनो, सब लोग, इस मंगलमय और पूरी तरह से निश्चित सत्य को। आत्मज्ञान से बढ़कर कुछ नहीं है, चाहे वह गुरु हो जो उसे जानता है।

6.128.107

सुखी भव महाराज रामचन्द्र नमोऽस्तु ते । वसिष्ठेनाप्यनुज्ञाता गच्छामोऽद्य यथागतम् ॥ १०७ ॥

sukhī bhava mahārāja rāmacandra namo'stu te | vasiṣṭhenāpyanujñātā gacchāmo'dya yathāgatam || 107 ||

Be happy, O great king Rama, I bow to you. With the permission of Vasistha, we shall now depart as we came.

सुखी रहो, हे महाराज रामचन्द्र, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। वसिष्ठ की अनुमति से हम अब जैसे आए थे वैसे ही चले जाएँगे।

6.128.108

श्रीवाल्मीकिरुवाच । एवमुक्त्वा गताः सर्वे रामसंस्तवने रताः । रामचन्द्रस्य शिरसि पौष्पी वृष्टिः पपात ह ॥ १०८ ॥

śrīvālmīkiruvāca | evamuktvā gatāḥ sarve rāmasaṃstavane ratāḥ | rāmacandrasya śirasi pauṣpī vṛṣṭiḥ papāta ha || 108 ||

Sri Valmiki said: Having said this, all of them, engaged in praising Rama, departed. A shower of flowers fell on Rama's head.

श्री वाल्मीकि ने कहा: ऐसा कहकर, वे सभी, राम की स्तुति में लगे हुए, चले गए। रामचन्द्र के सिर पर फूलों की वर्षा हुई।

6.128.109

एतत्ते सर्वमाख्यातं रामचन्द्रकथानकम् । अनेन क्रमयोगेन भरद्वाज सुखी भव ॥ १०९ ॥

etatte sarvamākhyātaṃ rāmacandrakathānakam | anena kramayogena bharadvāja sukhī bhava || 109 ||

All this has been narrated to you, the story of Rama. By this sequence, O Bharadvaja, be happy.

यह सब तुम्हें बताया गया है, रामचन्द्र की कथा। इस क्रम से, हे भरद्वाज, सुखी रहो।

6.128.110

इति रघुपतिसिद्धिः प्रोदिता या मया ते वरमुनिवचनालीरत्नमालाविचित्रा । निखिलकविकुलानां योगिनां सेव्यरूपा परमगुरुकटाक्षान्मुक्तिमार्गं ददाति ॥ ११० ॥

iti raghupatisiddhiḥ proditā yā mayā te varamunivacanālīratnamālāvicitrā | nikhilakavikulānāṃ yoginām sevyarūpā paramagurukatākṣānmmuktimārgaṃ dadāti || 110 ||

Thus, the accomplishment of Raghupati (Rama) has been narrated by me to you, which is a beautiful garland of the words of great sages. It is revered by all poets and yogis and bestows the path of liberation through the glance of the supreme guru.

इस प्रकार, रघुपति (राम) की सिद्धि मैंने तुम्हें बताई है, जो महान ऋषियों के शब्दों की सुंदर माला है। यह सभी कवियों और योगियों द्वारा पूज्य है और परम गुरु की दृष्टि से मुक्ति का मार्ग देती है।

6.128.111

य इमं श्रृणुयान्नित्यं विधिं रामवसिष्ठयोः । सर्वावस्थोऽपि श्रवणान्मुच्यते ब्रह्म गच्छति ॥ १११ ॥

ya imaṃ śṛṇuyān nityaṃ vidhiṃ rāmavasiṣṭhayoḥ | sarvāvastho'pi śravaṇān mucyate brahma gacchati || 111 ||

Whoever listens to this dialogue between Rama and Vasistha regularly, in all circumstances, will be liberated and attain Brahman.

जो भी इस राम और वसिष्ठ के संवाद को नियमित रूप से सुनता है, सभी अवस्थाओं में, वह मुक्त होगा और ब्रह्म को प्राप्त करेगा।